Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

-130986

130985

130986

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ISSN - 090678 X

सचित्र आयुर्वेद

SACHITRA AYURVED

A JOURNAL ON AYURVED AND HEALTH

Central Library
Gurukul Kangri University
(U.A.)

वर्ष 56 अंक - 1 जूलाई - 2003

एरण्ड तैलं मधुरमुष्णं तीक्ष्णं दीपनं कटु कषायानुरसं सूक्ष्मं स्रोतोविशोधनं खच्चं वृष्यं मधुरविपाकं वयः स्थापनं योनि शुक्र विशोधनमारोग्यमेधा कान्तिस्मृतिबल करं वातकफहरमधोभाग दोषहरं च ।

एरण्ड का तैल - मधुर, उष्णवीर्य, तीक्ष्ण, अग्निदीपक, कटु-कषाय-अनुरसं, सूक्ष्म (सूक्ष्म स्रोतों में घुसने वाला), स्रोतों का शोधक, त्वचा के लिए हितकारी, वृष्ण (शुक्रवर्धक), विपाक में मधुर, वयः स्थापक, योनि (रज) एवं शुक्र का शोधक, आरोग्य मेधा, कान्ति (प्रभा), स्मृति एवं बलकारक, वात-कफ-नाशक और अधोभाग (विरेचन) द्वारा दोष नाशक है ।

प्रकाशक :
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०
बैद्यनाथ भवन रोड, पटना—800001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बैद्यनाथ

च्यवनप्राश स्पेशल

मुफ़्त उपहार

हर पैक* पर निश्चित उपहार

* 2किलो बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल पर एक २०० ग्रा. दन्त मंजन लाल और एक १०० ग्रा. बैद्यनाथ मधु
* 1किलो बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल पर एक १०० ग्रा. दन्त मंजन लाल और एक ५० ग्रा. बैद्यनाथ मधु
* 500 ग्रा. बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल पर एक ५० ग्रा. बैद्यनाथ मधु और एक २५ग्रा. बैद्यनाथ दन्त मंजन लाल
* 250 ग्रा. बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल पर एक ५० ग्रा. बैद्यनाथ मधु

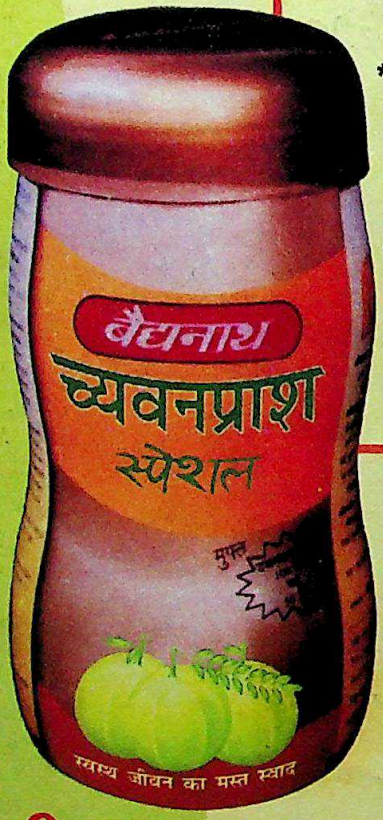

स्वस्थ जीवन का मस्त स्वाद

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन (प्रा०) लि०, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना - ८००००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुझाव / सम्मति / राय आमंत्रित

सचित्र आयुर्वेद के पाठकों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि प्रबन्धन ने पत्रिका के रूप-रंग, विषय-वस्तु कलेवर सहित सभी पक्षों में सुधार लाने का निर्णय लिया है । निर्णय के लिए निम्नलिखित सिद्धान्तों को अपनाया गया है :-

1. पत्रिका में आम पाठकों के लिए भरपूर सामग्री हो । हमारे, अधिकांश पाठक कम पढ़े लिखे हैं । उन्हें शोधपूर्ण लेखों के क्लिष्ट शब्द समझ में नहीं आते हैं । अतः लेखों को बोध गम्य बनाने के लिए सरल भाषा में लिखा जाय ।

2. शोधपूर्ण एवं विद्वतापूर्ण लेखों को पूर्व की भांति प्रकाशन में प्राथमिकता दी जायगी, किन्तु लेखों की संख्या कम कर दी जायेगी ।

3. प्रकाशित लेखों पर दी जाने वाली सम्मान-राशि (पत्र-पुष्प) में भारी वृद्धि की जायगी ।

4. पत्रिका को आम पाठकों तक पहुंचाने में बाजार-प्रक्रिया में सुधार लाया जायगा ।

विद्वान लेखकों एवं पाठकों से अनुरोध है कि प्रबन्धन द्वारा प्रस्तुत सुझाव से कहां तक वे सहमत हैं, पत्र के द्वारा हमें सूचित करें । यदि कोई सुझाव देना चाहें, उसे भी कृपया निम्न पते पर भेजें ।

व्यवस्थापक
सचित्र आयुर्वेद
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०
बैद्यनाथ भवन रोड, पटना - 800 001

आवश्यकता है

बैद्यनाथ आयुर्वेद शोध संस्थान की ओर से जयपुर (राजस्थान) के नजदीक वनौषधियों (जड़ी-बूटियों) के कृषिकरण के लिए एक विशेषज्ञ की आवश्यकता है । विशेषज्ञ को खेती-कार्य (जड़-बूटियों की खेती) का पर्याप्त अनुभव होना चाहिए । आवेदक पूर्ण बायोडाटा के साथ निम्नलिखित पते पर आवेदन करें -

प्रबन्ध न्यासी
बैद्यनाथ आयुर्वेद शोध संस्थान,
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०
बैद्यनाथ भवन रोड
पटना - 800001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय - सूची

वर्ष - 56 अंक-1 जुलाई - 2003

सम्पादक : विमल चन्द्र झा

सम्पादकीय पता :-

सम्पादक
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लिमिटेड
बैद्यनाथ भवन रोड
पटना- 800 001

फोन न०-(91)-(0612) 353048, 353134
फैक्स न०-(91)-(0612) 368571, 351843
ई-मेल न० - baidyanath_ayurved@vsnl.com

एक प्रति मुल्य - 10 रुपये प्रति
वार्षिक मूल्य - 100/- रू०
आजीवन शुल्क - 1000/-रु०प्रति (व्यक्ति)
आजीवन शुल्क - 2000/-रु०प्रति (संस्था)

1. सम्पादकीय 03
2. आयुर्वेद का इतिहास-46 04
पं०बनवारी लाल शर्मा, विमल चन्द्र झा
3. विद्युत एवं अशनिकृत व्याधि विचार 10
वैद्य पी.एस. अंशुमान
4. भारतीय वनौषधियों के अल्पज्ञात विदेशी प्रयोग 11
डा० सुधांशु कुमार जैन
5. अंशुघात (लू लगना) 16
डा०एस०के० श्रीवास्तव
6. 'वोर ठेकेरा' आसाम क्षेत्र की प्रवाहिका एवं ग्रहणी रोग की निवारण औषधि एवं वानस्पतिक अध्ययन 17
डॉ० राजेश कुमार मुड़ईया, डॉ०राजेन्द्र मजुमदार
7. काली खाँसी एवं उपचार 19
डॉ० एस०डी०शर्मा, डॉ० विवेक शर्मा
8. बौद्ध युग के महान वैद्य जीवक 'कौमार भृत्य' 21
वैद्य रमाकान्त मणि
9. अधरंग (पक्षाघात) 25
वैद्य राम कुमार बिन्दल, वैद्य रमेश कुमार बिन्दल
10. भारतीय वैदिक विचाराधारा व वैदिक चिकित्सा 27
वैद्य कुलदीप सोहल
11. मिर्गी रोग - कारण एवं निवारण 32
डॉ० रविकान्त श्रीवास्तव
12. गर्भावस्था के उपसर्ग:सावधानी और आयुर्वेदीक उपचार 34
वैद्य चन्द्रदेव मंडल
13. एक सेब रोज खाइये..डॉक्टर को घर न बुलाइये 38
डॉ० अनामिका प्रकाश
14. मनोविज्ञान और आयुर्वेद 40
वैद्य आर.के. जोशी
15. शिशु स्वास्थ्य 43
डा० रंजना रस्तोगी
16. हिमाचल प्रदेश की सराहन घाटी में बहुतायत में स्थित दारूहरिद्र तथा पाषाण भेद का औषधिय महत्व 46
डा० राजेश शर्मा
17. Study on effect of Abhraka satva bhasma in allaxon induced Hyperglycemia 48
Dr. Ajit Kadam, Dr. T. Maheshwar, Dr. C.B.Jha
18. Obesity - A critical condition 54
Dr. Nidhi Bhatt, Dr. Manohar Ram, Prof.B.L.Gaur
19. Quality Diabetic Care & Basic concept of Ayurveda 55
Dr. Mukesh B. Shukla

स्थाई स्तम्भ

20. परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी 58
डा० अनूप कु. गक्खड़, सीमा चोपड़ा
21. आपके अनुभूत प्रयोग 60
22. सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व 62
23. आरोग्य समाचार अखबार की कतरनों से 63
24. अनुसंधान के बढ़ते कदम 68
25. आपके पत्र 69
26. आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां 70

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय - सूची

वर्ष - 56 अंक-2 अगस्त - 2003

सम्पादक : विमल चन्द्र झा

सम्पादकीय पता :-

सम्पादक
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लिमिटेड
बैद्यनाथ भवन रोड
पटना- 800 001

फोन न०-(91)-(0612) 353048, 353134
फैक्स न०-(91)-(0612) 368571, 351843
ई-मेल न० - baidyanath_ayurved@vsnl.com

एक प्रति मुल्य - 10 रुपये प्रति
वार्षिक मूल्य - 100/- रू०
आजीवन शुल्क - 1000/-रु०प्रति (व्यक्ति)
आजीवन शुल्क - 2000/-रु०प्रति (संस्था)

1. सम्पादकीय 83
2. आयुर्वेद का इतिहास-47 85
पं०बनवारी लाल शर्मा
विमल चन्द्र झा
3. अतिशुक्लता 92
वैद्य पी.एस. अंशुमान
4. गोबर-विवेचनात्मक अध्ययन 96
डा० मोहन लाल पाठक
डा० आदर्श कुमार
5. मधुमेह-कारण एवं निदान 106
डॉ० नरेन्द्र शंकर त्रिपाठी
6. प्रमेह और मधुमेह-एक शास्त्रीय विवेचन 110
डा० नितिन कु० अरोरा
डा० जगदीश कुमार अरोरा
7. कुष्ठ में श्रेष्ठ खदिर 116
प्रो०यु०डी०रावल
8. शैशवीय उदर रोग का निदान एवं चिकित्सा 120
डा०चंचल शर्मा
डा०राकेश शर्मा
डा०जय पाल गर्ग
9. बरसाती रोगों का सामान्य उपचार 124
कविराज डा० दिवाकर ठाकुर
10. वर्षा ऋतु में उपयोगी आहार-विहार 126
डॉ०अनिता चौधरी
डॉ० शम्भु दयाल शर्मा
11. परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी 128
डा० अनूप कु. गक्खड़
सीमा चोपड़ा
12. Shushruta's Dashamula and its Application in Diabetic Neuropathy 130
K.N. Dwivedi
13. Concepts of Ayurvedic Drug Research 133
Prof. P.P. Sharma
14. Microbial Study of Urine In Mutrakrcchra 136
Dr. Srikanth MR., Dr. P.K. Godatwar
Prof. L.N. Sharma, Dr. Ashwini kr. Sharma
15. Herbo Cauterisation - A therapeutic measure to cervical erosion 138
Dr. Dinesh K.S., Dr. K.S. Patel
Prof. I.U.Mistry
16. Standardization of Herbal Formulation: Chyavanprash 142
M.Gupta
Swarnlata Saraf
S. Saraf
17. Therapeutic value of Herbo-mineral Ayurvedic drugs for Irritative Bowels Syndrome; (IBS) 145
Dr. M.M. Pandya

स्थाई स्तम्भ

18. आपके पत्र 148
19. सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व 153
20. आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां 154

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुझाव / सम्मति / राय आमंत्रित

सचित्र आयुर्वेद के पाठकों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि प्रबन्धन ने पत्रिका के रूप-रं विषय-वस्तु कलेवर सहित सभी पक्षों में सुधार लाने का निर्णय लिया है । निर्णय के लिए निम्नलिखि सिद्धान्तों को अपनाया गया है :-

1. पत्रिका में आम पाठकों के लिए भरपूर सामग्री हो । हमारे, अधिकांश पाठक कम पढ़े लिख हैं । उन्हें शोधपूर्ण लेखों के क्लिष्ट शब्द समझ में नहीं आते हैं । अत: लेखों को बो गम्य बनाने के लिए सरल भाषा में लिखा जाय ।

2. शोधपूर्ण एवं विद्वतापूर्ण लेखों को पूर्व की भांति प्रकाशन में प्राथमिकता दी जायगी, किन्तु लेखों की संख्या कम कर दी जायेगी ।

3. प्रकाशित लेखों पर दी जाने वाली सम्मान-राशि (पत्र-पुष्प) में भारी वृद्धि की जायगी।

4. पत्रिका को आम पाठकों तक पहुंचाने में बाजार-प्रक्रिया में सुधार लाया जायगा ।

विद्वान लेखकों एवं पाठकों से अनुरोध है कि प्रबन्धन द्वारा प्रस्तुत सुझाव से कहां तक वे सहमत हैं, पत्र के द्वारा हमें सूचित करें । यदि कोई सुझाव देना चाहें, उसे भी कृपया निम्न पते पर भेजें।

व्यवस्थापक
सचित्र आयुर्वेद
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा0लि0
बैद्यनाथ भवन रोड, पटना - 800 001

आवश्यकता है

बैद्यनाथ आयुर्वेद शोध संस्थान की ओर से जयपुर (राजस्थान) के नजदीक वनौषधियों (जड़ी-बूटियों) के कृषिकरण के लिए एक विशेषज्ञ की आवश्यकता है । विशेषज्ञ को खेती-कार्य (जड़-बूटियों की खेती) का पर्याप्त अनुभव होना चाहिए । आवेदक पूर्ण बायोडाटा के साथ निम्नलिखित पते पर आवेदन करें -

प्रबन्ध न्यासी
बैद्यनाथ आयुर्वेद शोध संस्थान,
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०
बैद्यनाथ भवन रोड
पटना - 800001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय - सूची

वर्ष - 56 अंक-3 सितम्बर - 2003

सम्पादक : विमल चन्द्र झा

सम्पादकीय पता :-

सम्पादक
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लिमिटेड
बैद्यनाथ भवन रोड
पटना- 800 001

फोन न०-(91)-(0612) 353048, 353134
फैक्स न०-(91)-(0612) 368571, 351843
ई-मेल न० - baidyanath_ayurved@vsnl.com

एक प्रति मुल्य - 10 रुपये प्रति.
वार्षिक मूल्य - 100/- रू०
आजीवन शुल्क - 1000/-रु०प्रति (व्यक्ति)
आजीवन शुल्क - 2000/-रु०प्रति (संस्था)

1. सम्पादकीय 163

2. आयुर्वेद का इतिहास-48 166
पं०बनवारी लाल शर्मा, विमल चन्द्र झा

3. सर्षप तेल का मानकीकरण एवं उपयोगिता 172
डॉ०आर.बी. सक्सेना, डॉ०जी.के. जैन

4. एड्स एवं ओजक्षय में तुलनात्मक प्रस्तुति 185
सुरेश चन्द्र वैद्य

5. जानु सन्धिवात की चिकित्सा में सिंहनाद 189
गुग्गुलु एवं मुरीवन्ना तैल की कार्मुकता का अध्ययन
डॉ० लाल जी, प्रो० श्याम सुन्दर शर्मा
डॉ० पूनम

6. अच्छे स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है-व्यायाम 195
प्रो० लोकनाथ शर्मा
डॉ० अश्विनी कुमार शर्मा, विश्राम प्र०अग्रहरि

7. रस (रस शास्त्र) 198
डा० खेम चन्द्र शर्मा

8. प्रतिश्याय एवं हृदय रोग 200
डा० शरद चन्द्र द्विवेदी

9. नाड़ी एवं पाचन संस्थान पर कुचला का सुप्रभाव 201
कविराज डा० दिवाकर ठाकुर

10. अब मलेरिया व एड्स रोकेगा-ड्रेगन फ्लाई 203
मधुसूदन भार्गव

11. छात्रोपयोगी 205
डा० अनूप कु० गक्खड़, मांका रयात

12. परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी 209
डा० अनूप कु. गक्खड़, सीमा चोपड़ा

13. Eleventh constituent of Dasamula 212
Dwivedi. K.N., Dixit, Ranu

14. Etiopathological Study of Hyperlipidaemia with special reference to sthaulya 216
Dr. Ashwini Kumar Sharma,
Prof. Lok Nath Sharma

15. Importance of Diet and Exercise for the patient of Diabetes mellitus : An overview 224
Ajal Kumar Pandey
R.H. Singh

16. Method of Adopting Laboratory Investigation in Diagnosing Kamala 229
Dr. Aruna

स्थाई स्तम्भ

17. सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व 236

18. आरोग्य समाचार अखबार की कतरनों से 237

19. आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां 238

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुझाव / सम्मति / राय आमन्त्रित

सचित्र आयुर्वेद के पाठकों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि प्रबन्धन ने पत्रिका के रूप-रंग, विषय-वस्तु कलेवर सहित सभी पक्षों में सुधार लाने का निर्णय लिया है । निर्णय के लिए निम्नलिखित सिद्धान्तों को अपनाया गया है :-

1. पत्रिका में आम पाठकों के लिए भरपूर सामग्री हो । हमारे, अधिकांश पाठक कम पढ़े लिखे हैं । उन्हें शोधपूर्ण लेखों के क्लिष्ट शब्द समझ में नहीं आते हैं । अत: लेखों को बोध गम्य बनाने के लिए सरल भाषा में लिखा जाय ।

2. शोधपूर्ण एवं विद्वतापूर्ण लेखों को पूर्व की भांति प्रकाशन में प्राथमिकता दी जायगी, किन्तु लेखों की संख्या कम कर दी जायेगी ।

3. प्रकाशित लेखों पर दी जाने वाली सम्मान-राशि (पत्र-पुष्प) में भारी वृद्धि की जायगी ।

4. पत्रिका को आम पाठकों तक पहुंचाने में बाजार-प्रक्रिया में सुधार लाया जायगा ।

विद्वान लेखकों एवं पाठकों से अनुरोध है कि प्रबन्धन द्वारा प्रस्तुत सुझाव से कहां तक वे सहमत हैं, पत्र के द्वारा हमें सूचित करें । यदि कोई सुझाव देना चाहें, उसे भी कृपया निम्न पते पर भेजें।

व्यवस्थापक
सचित्र आयुर्वेद
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा0लि0
बैद्यनाथ भवन रोड, पटना - 800 001

आवश्यकता है

बैद्यनाथ आयुर्वेद शोध संस्थान की ओर से जयपुर (राजस्थान) के नजदीक वनौषधियों (जड़ी-बूटियों) के कृषिकरण के लिए एक विशेषज्ञ की आवश्यकता है । विशेषज्ञ को खेती-कार्य (जड़-बूटियों की खेती) का पर्याप्त अनुभव होना चाहिए । आवेदक पूर्ण बायोडाटा के साथ निम्नलिखित पते पर आवेदन करें -

प्रबन्ध न्यासी
बैद्यनाथ आयुर्वेद शोध संस्थान,
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०
बैद्यनाथ भवन रोड
पटना - 800001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय - सूची

वर्ष - 56 अंक-1 जुलाई - 2003

सम्पादक : विमल चन्द्र झा

सम्पादकीय पता :-

सम्पादक
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लिमिटेड
बैद्यनाथ भवन रोड
पटना- 800 001

फोन न०-(91)-(0612) 353048, 353134
फैक्स न०-(91)-(0612) 368571, 351843
ई-मेल न० - baidyanath_ayurved@vsnl.com

एक प्रति मुल्य - 10 रुपये प्रति
वार्षिक मूल्य - 100/- रू०
आजीवन शुल्क - 1000/-रु०प्रति (व्यक्ति)
आजीवन शुल्क - 2000/-रु०प्रति (संस्था)

1. सम्पादकीय 243
2. आयुर्वेद के प्रवर्त्तक भगवान धन्वन्तरि 244
3. आयुर्वेद का इतिहास-49 247
पं०बनवारी लाल शर्मा, विमल चन्द्र झा
4. अर्धावभेदक-कारण एवं उपचार 252
प्राध्यापक हरिभाई के० त्रिवेदी
5. पञ्चाज का चिकित्सा में महत्व 256
डा० मोहन लाल पाठक, डा० आदर्श कु०
6. गुलाब : सुगंध ही नहीं औषधि भी 273
डा० अशोक कुमार श्रीवास्तव, डा० अजय मिश्रा
ए०खान
7. रोमान्तिका 275
प्रोफेसर महेन्द्र सिंह मीणा, दिनेश चन्द्र शर्मा
8. क्यों थकते हैं आप ? 278
कैलाश जैन
9. मधुमेह की सफल अनुभूत घरेलू औषधि 280
डा० राजीव कु०राय, डा०सी०बी०झा
10. क्यों पड़ता है दिल का दौरा 282
कविराज डा० दिवाकर ठाकुर
11. बालकों में प्रगति निर्धारण के मापदण्ड 284
डा० चंचल शर्मा, डा० राकेश शर्मा
12. केशर एवं लौंग - एक विवेचर 287
वैद्य इन्द्र देव भट्ट
13. स्वास्थ्य संरक्षण में ऋतु अनुसार पंचकर्म 291
की उपादेयता
डॉ० श्रीमती विभा द्विवेदी, डॉ०डी.के.द्विवेदी
14. Rajasthan - the Land of Mineral wealth 295
Dr. Vadeyar Shrinivas, Dr. P. Suresh
Prof. Laxmikant Dwivedi
15. Herbal Drugs as wound healers 297
Sachin Dubey, P. Sabala,
V. Mallurwar, S. Nayak
16. The Salacia Controversy 304
Dr. Sastry, Dr. Nishteswar
Dr. Venugopal
17. Role of Unani Medicine in Management 308
of AIDS
Dr. S.M.Hussain

स्थाई स्तम्भ

18. परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी 310
डा० अनूप कु. गक्खड़, सीमा चोपड़ा
19. आरोग्य समाचार अखबार की कतरनों से 313
20. आपके पत्र 316
21. आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां 317

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धन्वन्तरि वन्दन

अनादिमजमव्यक्तमम्बुजाक्षमधोक्षजम् ।
अलंकृतमलंकारैः वन्देजलधिनन्दनम् ।। 1 ।।

कांचीकेलिकलालापं केयूरांगदकंकणम् ।
करूणावरूणंकान्तं वन्देजलधिनन्दनम् ।। 2 ।।

खजलानलभूवायु प्रकृतपंचतत्वक ।
व्याधिव्याधत्रिदोषघ्नं वन्देजलधिनन्दनम् ।। 3 ।।

तरूणं तुलसीमालं तरणिस्थितमण्डलम् ।
तापसन्तापहं तान्तं वन्देजलधिनन्दनम् ।। 4 ।।

धृतचक्रसुधाधारदराम्बुज चतुर्भुजम् ।
इन्दिरामन्दिरानन्दं वन्देजलधिनन्दनम् ।। 5 ।।

पूर्णं पूर्णतमं प्राज्ञं प्रभाततपनाम्वरम् ।
पतितालम्बनं प्रेष्टं वन्देजलधिनन्दनम् ।। 6 ।।

मणि मौक्तिकमाणिक्यमहामहिममन्दिरम् ।
मदनोन्मदमाधुर्यं वन्देजलधिनन्दनम् ।। 7 ।।

शरणागतदीनार्तशरण्यं श्यामसुन्दरम् ।
श्रीदं शिक्षणकश्रेष्टं वन्देजलधिनन्दनम् ।। 8 ।।

डा० आचार्य गौरकृष्ण गोस्वामी शास्त्री
आयुर्वेदशिरोमणि, काव्य पुराण दर्शनतीर्थ, अभिनव चैतन्य
आयुर्वेदिक औषधालय, श्रीराधारमण परिसर, वृन्दावन - 281121
फोन न.- (0565) 2442401, 2445663

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

वर्ष - 56 अंक - 6 दिसम्बर - 2003

सम्पादक : विमल चन्द्र झा

सम्पादकीय पता :-

सम्पादक

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लिमिटेड

बैद्यनाथ भवन रोड

पटना - 800 001

फोन न०-(91)-(0612)-2353048, 2353134

फैक्स न०-(91)-(0612)-2368571,2351843

ई०मेल न०-baidyanath_ayurved@vsnl.com

एक प्रति मुल्य -10 रुपये प्रति

वार्षिक मुल्य - 100/-रु०

आजीवन शुक्ल - 1000 रु०प्रति (व्यक्ति)

आजीवन शुक्ल -2000 रु०प्रति (संस्था)

1. सम्पादकीय 403

2. पंचकर्म चिकित्सा में काल तथा व्यय (खर्च) कितना हो सकता है ? 405
वैद्य हरिदास श्रीधर कस्तुरे

3. म्याँमार (बर्मा) में उपलब्ध लोक प्रचलित उपयोगी वनौषधियाँ 408
डा० मायाराम उनियाल

4. खदिरादि गुटिका का मानकीकरण 416
डॉ०आर०बी०सक्सेना
एम०वी० धौलकिया

5. हृदयरोगियों के लिए आहार का महत्व 422
डा० अरूण कुमार त्रिपाठी

6. उर्ध्व श्वसन संस्थान की प्रमुख व्याधियाँ का निदान एवं चिकित्सा 425
डा० चंचल शर्मा, डा० राकेश शर्मा
डा० गीतांजलि सूद

7. लोक वनौषधियाँ की विश्वसनीयता और भावी शोधकार्य 427
डा० सुधांशु कुमार जैन

8. वसंतकुसुमाकर रस 430
वैद्य रमण बेलगे

9. अम्लपित्त : एसीडिटी : कारण और निवारण 434
वैद्य पं० परमानंद शर्मा नंद

10. आयुर्वेद शिक्षण-प्रशिक्षण की एकरूपता : आयुर्वेदीय तकनीकी शब्दावली के सन्दर्भ में 435
आचार्य राजकुमार जैन

11. शीत (हिम) दग्ध या शीतजन्य शोथ 438
वैद्य पी.एस. अंशुमान

12. नवजात शिशु की परिचर्या 440
डॉ०एस०डी०शर्मा
डॉ० प्रियंका मस्तान

13. वाजीकरण अध्याय 442
डा० अनुप कु गक्खड़
सीमा चोपड़ा

14. Rasa Medicine Activity in Nepal 444
Dr. C.R. Sapkota

15. Contribution of Charaka in the field of Dravyaguna 446
Dr. P.P. Gupta, Dr. K.N. Dwivedi
Dr. Ram Milan, Dr.S.D. Dubey

16. Pottali Rasayanas with Special Reference to Hemagarbha Pottali 450
Dr. Pradeep Kumar Prajapati

17. Preliminary Phytochemical Studies on the roots of Baliospormum montanum Linn 455
S.Nayak, A.K. Singhal

18. Pottali Kalpana-A prestigious preparation of rasa shastra 459
Dr. Sridurga, Dr. C.B. Jha

19. आपके अनुभूत प्रयोग 463

20. सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्षपूर्व 465

21. आपके पत्र 466

22. अखबार की कतरनों से 467
आरोग्य समाचार

23. आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां 390

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सचित्र आयुर्वेद' के ग्राहक कृपया ध्यान दें ।

'सचित्र आयुर्वेद' के ग्राहकों से हमारा विनम्र निवेदन है कि जिनका चन्दा दिसम्बर' 2003 तक जमा है, दिसम्बर' 2003 का अंक मिलने के बाद उनका वार्षिक शुल्क समाप्त हो जायेगा । अतः निवेदन है कि अब यथाशीघ्र जनवरी, 2004 से दिसम्बर' 2004 तक की अवधि के लिए वार्षिक शुल्क 100 रुपया मनीआर्डर से निम्न पते पर भेज दें । इस प्रकार जिन ग्राहकों का वार्षिक शुल्क हमें प्राप्त हो जायेगा, उन्हें हम अलग से कोई कार्ड अथवा वी.पी. नहीं भेजेंगे । स्मरणीय है कि मनीआर्डर से चंदा भेजने पर केवल 100 रुपया ही देने पड़ेंगे जबकि वी.पी. भेजने पर वी. पी. चार्ज सहित कुल रकम 130 रुपये देने पड़ जायेंगे । इन अनावश्यक एवं अतिरिक्त खर्च से बचने का एकमात्र तरीका मनीआर्डर द्वारा वार्षिक चंदा यथाशीघ्र भेज देना है । अगर किसी ग्राहक महानुभाव को किसी कारणवश अग्रिम वर्ष 2003 से ग्राहक नहीं बनना हो तो वैसी सूचना वे तत्काल महानुभाव हमारी प्रार्थना पर तत्काल ध्यान देकर अपने निर्णय की सूचना इस कार्यालय को शीघ्र देंगे । यदि किसी कारणवश वार्षिक शुल्क में वृद्धि हुयी, तो यह वृद्धि उन ग्राहकों पर लागू नहीं होगी, जिन्होंने शुल्क भेज दिया है ।

नोट - जो ग्राहक छात्र हैं, वे अपने संस्थान से प्राप्त प्रमाण-पत्र के साथ रियायती वार्षिक शुल्क मात्र 75.00 रु. मनीआर्डर से भेज सकते हैं ।

व्यवस्थापक

सचित्र आयुर्वेद

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना - 800 001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

वर्ष - 56 अंक - 7 जनवरी - 2004

सम्पादक : विमल चन्द्र झा

सम्पादकीय पता :-

सम्पादक

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लिमिटेड

बैद्यनाथ भवन रोड

पटना - 800 001

फोन न०-(91)-(0612)-2353048, 2353134

फैक्स न०-(91)-(0612)-2368571,2351843

ई०मेल न०-baidyanath_ayurved@vsnl.com

एक प्रति मुल्य -10 रुपये प्रति

वार्षिक मुल्य - 100/-रु०

आजीवन शुक्ल - 1000 रु०प्रति (व्यक्ति)

आजीवन शुक्ल -2000 रु०प्रति (संस्था)

1. सम्पादकीय 483

2. आयुर्वेद का इतिहास 485
पं० बनवारी लाल शर्मा
विमल चन्द्र झा

3. वृद्धावस्था में स्वस्थ रहने के मौलिक सिद्धान्त एवं उत्पन्न होने वाली व्याधियों की चिकित्सा 488
प्रो० हरिभाई के० द्विवेदी

4. आयुर्वेद मतानुसार आयुष्मान बालकों का परिज्ञान 492
डॉ० चन्द्र शेखर सिंह
डॉ० अभिमन्यु कुमार

5. बाल-मनोविकार-उत्पत्ति, स्वरूप एवं निदान 498
डा० अयोध्या प्रसाद अचल

6. वरदान वनस्पति है हरड़ 501
डॉ० विनोद बिहारी श्रीवास्तव

7. सेब खाइये - स्वस्थ रहिये 502
कैलाश जैन

8. तुलसी-औषध एक गुण अनेक 503
डा० गोविन्द गुप्ता
डा० (श्रीमती) कुसुम गुप्ता

9. बुद्धिवर्धक वटी वच अथवा उग्रगंधा 507
डॉ० मदन गोपाल वाजपेयी

10. उत्तराखंड हिमालय के परिप्रेक्ष्य में जैव विविधता संरक्षण पर एक नीतिगत अध्ययन 508
डा० गिरीश चन्द्र जोशी

11. सौंफ,जीरा,अजवायन,कालीमिर्च के औषधीय प्रयोग 512
डॉ० रविकुमार श्रीवास्तव
डॉ० निधि श्रीवास्तव

12. पौष्टिकता से भरपूर : गुड़ 515
राजकुमार जैन

13. अर्श की चिकित्सा में सूरणकन्द की कार्मुकता का अध्ययन 517
डा० लाल जी, डा० पूनम

14. मधुमेह-विकार और सफल उपचार 520
वैद्य चन्द्रदेव मंडल

15. VACHA 523
Dr. M. Paramkush Rao
Prof. Vaidya Mahesh Chandra Sharma

16. Folk Medicine of Patiala for Arsha 525
Dr. Rajesh Sannd, Dr. Parveen Bansal
Dr. R.M.S.Bajwa, Dr. M.V. Acharya

17. A clinical study of shankha bhasma alone and along with Amalaki Churna in the management of Amlapitta 530
Z.G.Tank, P.R.Joorawon, A.K.Choudhary
Prof. D. Pande

18. Clinical & Diagnostic Study of Jaundice 536
Dr.Avadhesh Kr. Dr. Ashwini Kr.
Prof. Lok Nath Sharma

19. परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी 539
डा० अनूप कु० गक्खड़
डा० अनिल गक्खड़

20. सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व 541

21. आलोचक की दृष्टि में 542

22. आपके अनुभूत प्रयोग 544

23. आपके पत्र 545

24. अखबार की कतरनों से आरोग्य समाचार 547

25. आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां 549

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नववर्ष की हार्दिक शुभकामनाएं ।

हम समस्त विश्व के प्राणियों के सौभाग्य, आरोग्य, समृद्धि एवं शान्ति की हार्दिक कामना करते हैं । हमें अपने प्राचीन महर्षियों के ज्ञान-विज्ञान पर गौरव है जिन्होंने अपनी कृतियों से अज्ञानमयी अन्धकार को दूरकर ज्ञानरूपी प्रकाश से समस्त विश्व को आलोकित किया । हम आयुर्वेद जगत् के उन महापुरुषों के प्रति भी कृतज्ञ हैं जिन्होंने आयुर्वेद के संदेश को जन-जन तक पहुंचाने का महान कार्य सम्मादित किया है एवं जो आज भी कर रहे हैं । वर्ष 2004 समस्त प्राणियों के आरोग्यकारी एवं मंगलमय हों - इन्हीं शुभकामनाओं के साथ ।

सचित्र आयुर्वेद

एवं

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० परिवार

आजीवन सदस्य बनकर लगभग डेढ़ सौ रुपये मूल्य के पुस्तकों को निःशुल्क प्राप्त करें

मुद्रण-सामग्री एवं कागजों के मूल्य में इन दिनों अप्रत्याशित वृद्धि हो रही है । फिर भी जो व्यक्ति आजीवन ग्राहक बनना चाहते हैं, वे सम्प्रति 1000/- रुपये 'सचित्र आयुर्वेद' के नाम से बैंक ड्राफ्ट अथवा मनीआर्डर से निम्नलिखित पते पर भेज दें । यदि कोई संस्थान ग्राहक बनना चाहता है, तो 2000/- दो हजार रुपये का बैंक ड्राफ्ट या मनीआर्डर से निम्नलिखित पते पर भेज दें । उन्हें अविलम्ब आजीवन ग्राहक बना लिया जायेगा एवं उपहार स्वरूप 'सचित्र आयुर्वेद' के उपलब्ध सभी विशेषांक एवं 'कर्मयोगी एवं रामदयाल जोशी : कृतित्व एवं व्यक्तित्व' नामक पुस्तक निबन्धित डाक से निःशुल्क भेज दिये जायेंगे ।

ग्राहक अविलम्ब आजीवन सदस्यता शुल्क भेजकर इस आकर्षक उपहार-योजना का लाभ अवश्य उठावें ।

निवेदक :-

संपादक

सचित्र आयुर्वेद

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि०, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना - 800 001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

वर्ष - 56 अंक - 8 फरवरी - 2004

सम्पादक : विमल चन्द्र झा

सम्पादकीय पता :-

सम्पादक

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लिमिटेड

बैद्यनाथ भवन रोड

पटना - 800 001

फोन न०-(91)-(0612)-2353048, 2353134

फैक्स न०-(91)-(0612)-2368571,2351843

ई०मेल न०-baidyanath_ayurved@vsnl.com

एक प्रति मुल्य -10 रुपये प्रति

वार्षिक मुल्य - 100/-रु०

आजीवन शुक्ल - 1000 रु०प्रति (व्यक्ति)

आजीवन शुक्ल -2000 रु०प्रति (संस्था)

1. सम्पादकीय 563

2. आयुर्वेद का इतिहास - 52 565
पं० बनवारी ला शर्मा
विमल चन्द झा

3. अतिस्थौल्य-एक संक्षिप्त परिचय 571
वैद्य पी०एस०अंशुमान

4. आयुर्वेदीय ग्रन्थों में गोदधि 577
डा० मोहनलाल पाठक
डा० आदर्श कुमार

5. औषधियों का सागर-समुद्र 599
सुभाष चन्द्र

6. युवानपीडिका (मुँहासा) 602
डॉ० रविकुमार श्रीवास्तव
डॉ० निधि श्रीवास्तव

7. स्वास्थ्य संरक्षण में ऋतुचर्या का महत्व 605
डा० योगेश दत्त शर्मा

8. बाल रोग एवं बाल ग्रह की आयुर्वेदीय चिकित्सा 608
डा० आशुतोष कुमार

9. आरोग्यरक्षक आरोग्यवर्धनी 613
श्री रमणभाई आर.मिस्त्री

10. तुलसी 615
डा०एस०के० श्रीवास्तव

11. वसन्त ऋतु में स्वास्थ्य की सुरक्षा 617
कविराज डा० दिवाकर ठाकुर

12. Evidence of DNA/Nucleoproteins in Ayurveda 618
Dr. Prasad
Dr. Rao

13. Fracture Management - An Analytical and Retrospective study 620
Dr. Umesh Chand Sharma
Dr. Shyam Sunder Sharma
Dr. Amanpreet K. Broca

14. Abhraka Satva Bhasma - A magic Medicine 627
Dr. Ajit Kadam
Dr. C.B. Jha

15. परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी 630

16. आरोग्य समाचार 632

17. आपके पत्र 635

18. सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्षपूर्व 636

19. आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां 637

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आजीवन सदस्य बनकर लगभग डेढ़ सौ रुपये मूल्य के पुस्तकों को निःशुल्क प्राप्त करें

मुद्रण-सामग्री एवं कागजों के मूल्य में इन दिनों अप्रत्याशित वृद्धि हो रही है । फिर भी जो व्यक्ति आजीवन ग्राहक बनना चाहते हैं, वे सम्प्रति 1000/- रुपये 'सचित्र आयुर्वेद' के नाम से बैंक ड्राफ्ट अथवा मनीआर्डर से निम्नलिखित पते पर भेज दें । यदि कोई संस्थान ग्राहक बनना चाहता है, तो 2000/- दो हजार रुपये का बैंक ड्राफ्ट या मनीआर्डर से निम्नलिखित पते पर भेज दें । उन्हें अविलम्ब आजीवन ग्राहक बना लिया जायेगा एवं उपहार स्वरूप 'सचित्र आयुर्वेद' के उपलब्ध सभी विशेषांक एवं 'कर्मयोगी एवं रामदयाल जोशी : कृतित्व एवं व्यक्तित्व' नामक पुस्तक निबन्धित डाक से निःशुल्क भेज दिये जायेंगे ।

ग्राहक अविलम्ब आजीवन सदस्यता शुल्क भेजकर इस आकर्षक उपहार-योजना का लाभ अवश्य उठावें ।

निवेदक :-
संपादक
सचित्र आयुर्वेद

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि०, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना - 800 001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

वर्ष - 56 अंक - 7 जनवरी - 2004

सम्पादक : विमल चन्द्र झा

सम्पादकीय पता :-

सम्पादक

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लिमिटेड

बैद्यनाथ भवन रोड

पटना - 800 001

फोन न०-(91)-(0612)-2353048, 2353134

फैक्स न०-(91)-(0612)-2368571,2351843

ई०मेल न०-baidyanath_ayurved@vsnl.com

एक प्रति मुल्य -10 रुपये प्रति

वार्षिक मुल्य - 100/-रु०

आजीवन शुक्ल - 1000 रु०प्रति (व्यक्ति)

आजीवन शुक्ल -2000 रु०प्रति (संस्था)

1. सम्पादकीय 643

2. आयुर्वेद का इतिहास-53 644
पं० बनवारी लाल शर्मा
विमल चन्द्र झा

3. बर्ड फ्लू 649
डॉ० गोविन्द शुक्ला, डॉ० प्रेम चन्द मंगल

4. थायरॉइड ग्रंथि और उसके शारीरिक प्रभाव 651
डॉ० महेन्द्र सिंह मीनाण प्रमोद मिश्र

5. पंचकर्म चिकित्सा 659
डॉ० डी०टी० बोम्बार्डे

6. आर्थराइटिस 662
डा० चैतन्य स्वरूप अग्रवाल

7. टमाटर - कितना गुणकारी है । 664
डा० इन्द्रमोहन झा 'सच्चन'

8. पञ्चकर्म विवेचन भेषज चतुष्क के 665
सन्दर्भ में
डा० अनूप कु० गक्खड़
सीमा चोपड़ा

9. पुनर्जन्म की पृष्ठभूमि में त्रिदोष 668
की भूमिका
दिवाकर ठाकुर

10. उदर रोग और आयुर्वेद 670
वैद्य चन्द्रदेव मंडल

11. मृत्तिकाभक्षणजन्य व्याधियाँ एवं चिकित्सा 673
डॉ० शम्भु दयाल शर्मा

12. लोध्र के गुणकर्म का तुलनात्मक अध्ययन 675
श्वेतप्रदर एवं रक्त प्रदर के परिप्रेक्ष्य में
डा० पूनम, डा० लालजी
डा० ए.के. सिंह

13. अनुपान 680
डॉ० पुष्पेन्द्र शर्मा, अनुप्रिया

14. अम्लपित्त एक व्यापक रोग 683
डा० विनय शौनक

15. Classical description of Aam-vata; 684
Role of Aam-vish in its production and concept of Treatment
Dr. Manjot Kaur, Dr. S.V. Tripathi

16. Development of Medical System 691
through sanskrit : A Scientific insight
Dr. G.C. Nanda, Dr. M.K. Chaturvedi

17. A Comparative clinical study with 694
Rajani vidangadi yogam and Nishamaki in Madhumeha (Diabetes Mellitus)
Dr. V. Bindu Madhavi
Dr. S. Suresh Babu
Dr. Prakash Chander

18. Dose Schedule of Rasa Aushadhi 696
- A Critical Study

19. Relvevance of Dinacharya to the 701
present day
Dr. Guruprasad K
Dr. Ramana G.V., Dr. Sajitha

20. A clinical study on grahani sardula 704
vati in the management of chronic diarrhoe in children
Dr. Subash Sahu, Dr. P.K. Sahu

21. परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी 707
डा० अनूप कु० गक्खड़
डा० अनिल गक्खड़

22. सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व 709

23. अखबार की कतरनों से 710

24. आपके पत्र 711

25. आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां 716

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रजिस्ट्रार ऑफ न्यूज पेपर्स सेन्ट्रल रूल्स, 1956 के 9 वें नियम के अन्तर्गत (सचित्र आयुर्वेद) मासिक पत्रिका के स्वामित्व एवं अन्य विषयों के सम्बन्ध में विवरण ।

फार्म - 6

1.	प्रकाशन का स्थान	:	बैद्यनाथ भवन रोड, पटना - 1
2.	प्रकाशन का अधिक्रम	:	प्रतिमास
3.	मुद्रक का नाम	:	आदर्श प्रेस
	राष्ट्रीयता	:	भारतीय
	पता	:	हिन्दुस्तान ब्लॉक कम्पाउंड, नया टोला, पटना - 4
4.	सम्पादक का नाम	:	विमलचन्द्र झा
	पता	:	बैद्यनाथ भवन रोड, पटना - 800 001

उन शेयर होल्डरों के नाम और पते जिनके पास कुल पूंजी का 1 प्रतिशत से अधिक शेयर है ।

1. श्री अनिरूद्ध शर्मा, गुसाईंपुरा, झांसी
2. श्री अरुण शर्मा, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-1
3. श्री अरविन्द शर्मा, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-1
4. श्री अतुल कुमार शर्मा, सिविल लाईन, झांसी
5. मास्टर हर्ष शर्मा, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-1
6. श्रीमती मधु शर्मा, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-1
7. श्रीमती नीता शर्मा, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-1
8. प्रणय सुरेश शर्मा, ग्रेट नाग रोड, पटना-1
9. मास्टर प्रण शर्मा, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-1
10. रामकृष्ण शर्मा, 95, बी. श्री अरविन्द रोड, सलकिया, हावड़ा
11. मास्टर विक्रम शर्मा, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-1
12. श्रीमती भूरी देवी, जोशी वाटिका, चिरैयाटाड़,पटना-1
13. श्री हीरालाल शर्मा, हीरालाल रामेश्वर प्रसाद, पो. ओलन गंज, जौनपुर
14. श्री बनवारी लाल शर्मा, 156/सी, महात्मा गांधी रोड, कोलकाता
15. एस.एन.जोशी हाई स्कूल, कांसली, पो.कोटपुतली, जि. जयपुर
16. श्रीमती विमला देवी शर्मा, राष्ट्रदूत प्रेस, जयपुर
17. श्री घनश्याम ज्योतिषी, मु.पो. प्रागपुर, जि. जयपुर
18. शिवशक्ति प्रेस (प्रा.)लि., ग्रेट नागपुर रोड, नागपुर
19. श्रीमती सुशीला देवी शर्मा, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-1
20. श्री शिवलाल शर्मा, पुरानी मंडी, नारनौल - 1
21. श्री रामावतार शर्मा, 178, अपर चितपुर रोड, कोलकाता-1
22. श्री रमाकान्त शर्मा, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-1
23. श्रीमती कमला देवी, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-1
24. स्व०हजारीलाल शर्मा, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-1
25. श्री राजेश्वर प्रसाद शर्मा, राष्ट्रदूत प्रेस, जयपुर
26. श्री विश्वनाथ शर्मा, गुसाईंपुरा, झांसी
27. श्री बृजेन्द्र कुमार शर्मा, गुसाईंपुरा, झांसी
28. श्री शिवनाथ शर्मा, महाल, नागपुर
29. श्री रामकृष्ण शर्मा, 1 गुप्ता लेन, कोलकाता-700006
30. श्रीमती स्नेहलता देवी शर्मा, गुसाईंपुरा, झांसी
31. श्री सुरेश कुमार शर्मा, ग्रेट नाग रोड, नागपुर
32. श्री रमेश कुमार शर्मा, गुसाईंपुरा, झांसी
33. श्री राकेश कुमार शर्मा, राष्ट्रदूत प्रेस, जयपुर
34. श्री प्रमोद शर्मा, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना-1
35. श्रीमती मंजुशर्मा, 15-बी, सरोजनी नायडू मार्ग, इलाहाबाद
36. श्रीमती रश्मि शर्मा, 7 सी, पैरामाउण्ड एपार्टमेन्ट, 25 बालीगंज रोड, कोलकाता-700019
37. श्रीमती गीता शर्मा, गुसाईंपुरा, झांसी
38. श्री आनन्द शर्मा, गुसाईंपुरा, झांसी
39. मास्टर आमेव शर्मा, 7 सी पैरामाउण्डट एपार्टमेन्ट, 25 बालीगंज रोड, कोलकाता - 700019
40. श्री अक्षय कुमार शर्मा, गुसाईंपुरा, झांसी

मैं 'विमलचन्द्र झा' घोषित करता हूं कि ऊपर दिये गये सभी विवरण, जहां तक में जानता हूँ तथा विश्वास है सत्य है ।

दिनांक - 01-03-2004

(विमलचन्द्र झा)
प्रकाशक का हस्ताक्षर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

वर्ष - 56 अंक - 10 अप्रैल - 2004

सम्पादक : विमल चन्द्र झा

सम्पादकीय पता :-

सम्पादक

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लिमिटेड

बैद्यनाथ भवन रोड

पटना - 800 001

फोन न०-(91)-(0612)-2353048, 2353134

फैक्स न०-(91)-(0612)-2368571,2351843

ई०मेल न०-baidyanath_ayurved@vsnl.com

एक प्रति मुल्य -10 रुपये प्रति

वार्षिक मुल्य - 100/-रु०

आजीवन शुक्ल - 1000 रु०प्रति (व्यक्ति)

आजीवन शुक्ल -2000 रु०प्रति (संस्था)

1. सम्पादकीय 723

2. आयुर्वेद का इतिहास - 54 725
पं० बनवारी ला शर्मा
विमल चन्द्र झा

3. अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में साइटिस के तहत संकटापन्न उपयोगी आयुर्वेदिक वनौषधियां 731
डा० मायाराम उनियाल

4. डेङ्गयू ज्वर 737
वैद्य पी०एस० अंशुमान

5. अच्छे स्वास्थ्य के लिये आयुर्वेदिक दृष्टिकोण 740
वैद्य हरिभाई के० त्रिवेदी

6. हवन में प्रयुक्त औषधियों का वैज्ञानिकता 743
डा० शरद चन्द्र त्रिवेदी

7. अम्लपित्त : एक निदान चिकित्सापरक अध्ययन 745
डा० ईश शर्मा

8. फलों का औषधीय महत्व 747
सुभाष चन्द्र एवं प्रेमनाथ शुक्ला

9. सर्वसुलभ खीरा (त्रपुस) 753
डा० इन्द्रमोहन झा 'सच्चन'

10. गर्भपात अर्थात् भ्रूण हत्या 754
डा० चैतन्य स्वरूप अग्रवाल

11. प्रवाहिका रोग - एक विवेचन 756
डा० मनमोहन शर्मा, प्रो० लोकनाथ शर्मा
डा० अश्विनी कुमार शर्मा

12. प्रमेह और मधुमेह - एक शास्त्रीय विवेचन 761
डा० नितीन कुमार अरोरा
डा० जगदीश कुमार अरोरा

13. पुरुषोऽपि बंध्यो भवति तस्य निदान चिकित्सा 768
वैद्य पं० महावीर प्रसाद मिश्र

14. Ayurvedic education - An Analytic Review 770
Dr. Gupta Gaurish Kr. & Prof. Sharma Ajay Kr.

15. Clinical effect of ustookhudus Churana on migraine (Vatic Shirahshool) 772
Dr. Sanjiv Kr., Dr. Sanjay Sharma
Dr. Parveen Bansai, Dr. M.V. Acharya

16. Study of urinary disorder and premeha (Diabetes) in brihatrayee "Searching for probable risk - factors" 774
Dr. O.P. Gupta, Dr. Sangram mishra

17. परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी 780

18. आरोग्य समाचार 782

19. आपके पत्र 786

20. सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्षपूर्व 787

21. आपके अनुभूत प्रयोग 788

22. आयुर्वेद-जगत् की गतिविधियां 792

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सचित्र आयुर्वेद' के ग्राहक कृपया ध्यान दें ।

'सचित्र आयुर्वेद' के ग्राहकों से हमारा विनम्र निवेदन है कि जिनका चन्दा जून' 2004 तक ... है, जून' 2004 का अंक मिलने के बाद उनका वार्षिक शुल्क समाप्त हो जायेगा । अतः ...दन है कि अब वे यथाशीघ्र जुलाई, 2004 से जून' 2005 तक की अवधि के लिए वार्षिक ...क 100 रुपया मनीआर्डर से निम्न पते पर भेज दें । इस प्रकार जिन ग्राहकों का वार्षिक शुल्क ...प्राप्त हो जायेगा, उन्हें हम अलग से कोई कार्ड अथवा वी.पी. नहीं भेजेंगे । स्मरणीय है कि मनीआर्डर से चंदा भेजने पर केवल 100 रुपया ही देने पड़ेंगे जबकि वी.पी. भेजने पर वी.पी. ...र्ज सहित कुल रकम 130 रुपये देने पड़ जायेंगे । इन अनावश्यक एवं अतिरिक्त खर्च से बचने ...एकमात्र तरीका मनीआर्डर द्वारा वार्षिक चंदा यथाशीघ्र भेज देना है । अगर किसी ग्राहक ...नुभाव को किसी कारणवश अग्रिम वर्ष 2004 से ग्राहक नहीं बनना हो तो वैसी सूचना वे ...काल महानुभाव हमारी प्रार्थना पर तत्काल ध्यान देकर अपने निर्णय की सूचना इस कार्यालय ...शीघ्र देंगे । यदि किसी कारणवश वार्षिक शुल्क में वृद्धि हुयी, तो यह वृद्धि उन ग्राहकों पर ...गू नहीं होगी, जिन्होंने शुल्क भेज दिया है ।

नोट - जो ग्राहक छात्र हैं, वे अपने संस्थान से प्राप्त प्रमाण-पत्र के साथ रियायती ...र्षिक शुल्क मात्र 75.00 रु. मनीआर्डर से भेज सकते हैं ।

व्यवस्थापक
सचित्र आयुर्वेद
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना - 800 001

...ाजावन सदस्य बनकर लगभग डढ़ सा रुपय मूल्य क पुस्तका का न:शुल्क प्राप्त कर

मुद्रण-सामग्री एवं कागजों के मूल्य में इन दिनों अप्रत्याशित वृद्धि हो रही है । फिर भी ...व्यक्ति आजीवन ग्राहक बनना चाहते हैं, वे सम्प्रति 1000/- रुपये 'सचित्र आयुर्वेद' के नाम ...बैंक ड्राफ्ट अथवा मनीआर्डर से निम्नलिखित पते पर भेज दें । यदि कोई संस्थान ग्राहक बनना ...हता है, तो 2000/- दो हजार रुपये का बैंक ड्राफ्ट या मनीआर्डर से निम्नलिखित पते पर भेज दें । उन्हें अविलम्ब आजीवन ग्राहक बना लिया जायेगा एवं उपहार स्वरूप 'सचित्र आयुर्वेद' के ...पलब्ध सभी विशेषांक एवं 'कर्मयोगी एवं रामदयाल जोशी : कृतित्व एवं व्यक्तित्व' नामक ...नक निबन्धित डाक से नि:शुल्क भेज दिये जायेंगे ।

ग्राहक अविलम्ब आजीवन सदस्यता शुल्क भेजकर इस आकर्षक उपहार-योजना का लाभ अवश्य उठावें ।

निवेदक :-
संपादक
सचित्र आयुर्वेद
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि०, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना - 800 001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

130986

सम्पादकीय

कृत्रिम रंग, खाद्य पदार्थ तथा क...

आमतौर पर जब रोगी चिकित्सक के पास पहुंचता है, तो उसे हरी सब्जियों के प्रयोग करने की सलाह दी जाती है । रोगी के परिजन बाजार से हरी शाक-सब्जी जैसे परवल, बैंगन, भिण्डी आदि पदार्थ खरीद कर ले जाते हैं, किन्तु उन्हें यह पता नहीं है कि वे सब्जियों का सेवन नहीं करके विष का सेवन कर रहे हैं । हरी सब्जियों में खुले आम कपड़ों को रंगने वाले रंग का उपयोग किया जाता है । उन सब्जियों के खाने से कैन्सर, उच्च रक्त-चाप एवं हृदय रोग उत्पन्न होने की प्रबल सम्भावना रहती है । पटना शहर में तो यह कार्य सब्जी विक्रेता खुले आम करते हैं । दूरदर्शन के एक प्रसिद्ध चैनेल में इस सम्बन्ध में एक विशेष रिर्पोट दिखलायी गयी थी । दिल्ली शहर की एक प्रख्यात् सब्जी मंडी में बिक्रेता कैमरों की नजरों के सामने सब्जियों को रंग रहे थे । उन्हें अपने दुष्कर्म का कोई पाश्चाताप् नहीं था । विदित है कि कृत्रिम रंगों का प्रयोग खाद्य पदार्थों के लिए वर्जित है । यदि कोई व्यक्ति या व्यापारी खाद्य पदार्थों में रंग मिलाना ही चाहे, तो वह खाद्य रंग मिला सकता है । लेकिन यह महंगा है । इसलिए दुकानदार सस्ते रंगों का प्रयोग ही खाद्य पदार्थों में करते हैं । न केवल सब्जियों में, बल्कि जलेबी, मिठाई, दाल आदि खाद्य पदार्थों में भी कृत्रिम रंगों का प्रयोग धड़ल्ले से किया जा रहा है । इसे रोकने के लिए कोई सक्षम उपाय सरकार नहीं कर रही है ।

प्रश्न यह है कि जो प्रणाली खुलेआम जन स्वास्थ्य को नुकसान पहुंचा रही है, उस पर कैसे काबू पाया जाय ? क्या इसके लिए कानून है ? विदित है कि यदि सरकार चाहे, तो वर्तमान कानून के जरिये ही मिलावट पर काबू पाया जा सकता है । केन्द्रीय सरकार एवं विभिन्न राज्य सरकार अपने प्रशासनिक तंत्र के बल पर कृत्रिम रंग मिलाने वालों को या अन्य प्रकार की मिलावट करने वालों पर कार्रवाई कर सकती है । विभिन्न जिलों में खाद्य निरीक्षक भी होते हैं । पता नहीं, उनकी नजर बाजार पर पड़ती है या नहीं । इन निरीक्षकों का कानूनी दायित्व है कि मिलावट करने वालों पर कानूनी कार्रवाई करें ।

मिलावट करने वाले व्यापारियों का क्षेत्र काफी व्यापक है । वे चाय की पत्तियों में चमड़े का बुरादा मिलाते हैं । हल्दी के चूर्ण में घोड़े की लीद मिलाते हैं । यहां तक कि चावल में एक विशेष प्रकार के पत्थर मिलाते हैं जिनका रंग चावल से मिलता-जुलता है । ये व्यापारी जन स्वास्थ्य के दुश्मन हैं । सरकार को चाहिए कि वे अपने तंत्र के बल पर उपलब्ध कानून का सहारा लेते हुए मिलावट करने वालों पर कठोर कार्रवाई करे ।

जहां तक आयुर्वेद का प्रश्न है, आयुर्वेद ने हमेशा आहार-विहार पर बल दिया है । चरक संहिता में भी जिक्र है-

तच्च नित्यं प्रचुञ्जीत स्वास्थ्यं येनानुवर्तते ।
अजातानां विकाराणामनुत्पत्ति करं च यत् ॥

अर्थात् जिस आहार-विहार आदि द्वारा स्वास्थ्य की अनुवृत्ति अर्थात् पालन होता है ओर जो आहार-विहार अजात (जो अभी उत्पन्न नहीं हुए) विकारों को उत्पन्न नहीं होने देते, उनका नित्य प्रयोग करें । चरक संहिता के सूत्र स्थान (अध्याय 29) में अहितकर आहार की विस्तृत चर्चा है । देश विरुद्ध, काल-विरूद्ध, संस्कार विरूद्ध, वीर्य विरूद्ध, कोष्ठ विरूद्ध, अवस्था विरूद्ध, क्रम विरूद्ध, परिहार विरूद्ध, उपचार विरूद्ध, पाक विरूद्ध, संयोग विरूद्ध, हृद् विरूद्ध, सम्यक् विरूद्ध, विधि विरूद्ध सहित अनेक नियमों की चर्चा है । न केवल चरक संहिता में बल्कि लगभग समस्त आयुर्वेदिक ग्रन्थों में आहार-विहार का वर्णन है, तब मिलावटी खाद्य पदार्थों से स्वास्थ्य पर होने वाले दुष्प्रभाव की सहज कल्पना की जा सकती है ।

अतः केन्द्रीय सरकार एवं राज्य सरकारों से अनुरोध है कि वे अपने प्रशासनिक तंत्रों को दुरूस्त करके मिलावटी करने वालों पर अंकुश लगावें ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारावाहिक

आयुर्वेद का इतिहास - 46

1. पं० बनवारी लाल शर्मा
2. विमल चन्द्र झा

चरक संहिता

जैसा कि नाम से स्पष्ट है कि आचार्य चरक ने संहिता बनायी । अर्थात् उपलब्ध सामग्रियों का संकलन करके इन्होंने एक पुस्तक का रूप दिया जो चरक संहिता के नाम से प्रसिद्ध है । एक पुस्तक[1] में चरक संहिता के सम्बन्ध में निम्नलिखित वर्णन है :-

1. यह पुस्तक प्रथम शती के आसपास लिखी गयी है ।
2. चरक संहिता आत्रेय तंत्र के नाम से प्रख्यात् है ।
3. चरक संहिता में सांख्य और वैशेषिक सिद्धान्तों की बहुलता है ।
4. चरक संहिता केवल चिकित्सा-विज्ञान नहीं है, बल्कि वास्तविक अर्थ में हिन्दू संस्कृति का प्रतीक है ।
5. इसकी रचना 100 ई० के आसपास संभवतः हुयी है ।
6. चरक संहिता में तीन प्रकार की परिषद् की चर्चा है ।

इसी पुस्तक[2] के द्वितीय खंड में कहा गया है कि चरक संहिता अग्निवेश तंत्र पर आधारित है ।

इसमें पुस्तक[3] में निम्नलिखित वर्णन है :-

1. चरक द्वारा चरक संहिता का निर्माण प्रथम शती में हुआ है ।
2. 8 वीं या 9वीं शती में दृढ़बल और कासमिरक द्वारा इसका संशोधन (Redacted) किया गया ।
3. आत्रेय शिष्य और भेल के छात्र, अग्निवेश की कृति का यह संशोधित रूप था ।
4. कुछ विद्वानों के अनुसार भेल संहिता का अस्तित्व चरक संहिता से पूर्व था ।
5. बावर पाण्डुलिपि में आत्रेय, हारीत और सुश्रुत का जिक्र है, किन्तु चरक का नहीं है ।
6. चरक संहिता पर कई भाष्य लिखे गये हैं जिनमें प्रमुख हैं.- चक्रपाणि के उपदेशक, नरदत्त, चक्रपाणि विरचित आयुर्वेद-दीपिका, शिवदास विरचित चरक-तत्व-दीपिका, गंगाधर कविराज विरचित जल्प-कल्पतरु ईश्वरसेन, ज्ञान दास एवं योगेन्द्रनाथ सेन विरचित पुस्तक ।

श्री हेमराज शर्मा[4] के द्वारा प्रस्तुत विचार को क्रमबद्ध नहीं करके विस्तार से यहां प्रस्तुत कर रहे हैं । इस विस्तार में केवल मूल तथ्यों का ही समावेश किया गया है ।

बहुत से प्राचीन ग्रन्थों के विलोप के कारण क्षतिग्रस्त आयुर्वेद की बची हुयी महिमा को स्थिर रखने के लिए अत्यन्त प्राचीन काल से आत्रेय तथा धन्वन्तरि की संहिताएं क्रमशः चरक तथा सुश्रुत संहिता के नाम से प्रसिद्ध होने के कारण सूर्य तथा चन्द्रमा के लिए अन्य प्रकाश के समान इनके परिचय की आवश्यकता नहीं है । इसका आशय है कि आत्रेय संहिता, चरक संहिता के नाम से प्रसिद्ध हुआ । वर्तमान में उपलब्ध प्रतिसंस्कृत चरक संहिता में भी अधिकांश रूप में प्राचीन सांख्य दर्शन को लेने से ही, बौद्ध मत की छाया न होने से तथा प्रतिसंस्कार के समय संभावित रूप से प्रविष्ट लेखों में भी प्राचीन एवं प्रौढ़ रचना के दिखाई देने से प्रतिसंस्कर्ता चरक भी अर्वाचीन प्रतीत नहीं होता । चरक संहिता की प्राचीनता के सम्बन्ध में कुछ विद्वानों का तर्क है कि 'यदि चरक कनिष्क का समकालीन हो तथा उसका राजवैद्य हो तो उसके लेखों में कहीं तो बौद्ध सम्प्रदाय की छाया (झलक) मिलनी चाहिए थी, परन्तु इसके विपरीत चरक संहिता में वैदिक मंत्रों द्वारा वैदिक प्रक्रिया का ही प्रयोग क्यों किया गया है । कुछ लोग इसके प्रत्युत्तर में कहते हैं कि प्राचीन अग्निवेश संहिता में सांख्य दर्शन तथा वैदिक प्रक्रिया पहले से ही विद्यमान थी, चरक तो इस संहिता का केवल प्रतिसंस्कर्ता मात्र था । इसलिये उसमें बौद्ध विचारों का प्रवेश नहीं हो सकता था । कुछ लोग कहते हैं कि चरक संहिता के कुछ स्थलों में स्वभाववाद का उल्लेख है जिसकी टीका में चक्रपाणि ने बौद्धमत का संकेत दिया है । इसलिए इसमें बौद्धमत का प्रवेश है । परन्तु इसके

1. प्रबन्ध निदेशक, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० 2. सम्पादक, सचित्र आयुर्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रत्युत्तर में कुछ लोग कहते हैं कि इतने मात्र से ही बौद्ध मत का प्रवेश नहीं कहा जा सकता क्योंकि स्वभाववाद केवल बौद्धों का ही नहीं है । इससे पहले भी विद्यमान था । चरक संहिता के विषय में कुछ लोग कहते हैं कि चरक नाम से प्रसिद्ध संहिता चरकाचार्य की अपनी ही कृति (रचना) है । कुछ लोगों का विचार है कि संक्षेप से विद्यमान पूर्वतंत्र को पूर्णरूप से परिवर्तित एवं परिवर्धित करके चरकाचार्य ने एक नयी ही रचना बना दी है, तथा कुछ लोगों का यह भी मत है कि आयुर्वेद के ज्ञाता ऋषियों द्वारा परस्पर एकत्रित होकर किये गये संभाषणों एवं संवादों के सारांश को लेकर चरकाचार्य ने उसे चरक संहिता के रूप में उपस्थित किया (वसुमती वर्ष 9 पृष्ठ 378)- इत्यादि अनेक विभिन्न मत दिखाई देते हैं । परन्तु पूर्वोक्त वर्णन के अनुसार मूलभूत आत्रेय संहिता तथा उसी के आधार पर बनाये हुए अग्निवेश तंत्र की पूर्व स्थिति का स्पष्ट ज्ञान होने से तथा 'अग्निवेशकृते तंत्रे चरक प्रतिसंस्कृते' चरक की इस स्पष्टोक्ति का आधार पर यह कहा जा सकता है कि तंत्र का रचयिता अग्निवेश ही हैं तथा चरक ने तो दूसरे तंत्रों तथा अपने विचार के कुछ अन्य भी संस्कारोपयोगी विशेषताओं को मिलाकर इस अग्निवेशतंत्र का प्रतिसंस्कार ही किया है । यदि चरक ही स्वयं इस तंत्र का रचयिता होता तो वह उस रूप में अपने नाम का उल्लेख क्यों करता । ग्रन्थ में संबोधन आदि के रूप में अग्निवेश का नाम अनेक स्थानों पर मिलता है, परन्तु चरक का नाम 'चरकप्रतिसंस्कृते' इस उल्लेख के अतिरिक्त ग्रन्थ में और कहीं नहीं मिलता है । चरक के उत्तरभाग को पूर्ण करने वाले दृढ़बल ने भी निम्न श्लोक के द्वारा चरक का केवल संस्कर्त्ता के रूप में तथा द्वादशसाहस्त्र संहिता का अग्निवेश की कृति के रूप में स्पष्ट निर्देश किया है -

अतस्तन्त्रोत्तममिदं चरकेणातिबुद्धिना ।
संस्कृतं तत्तु संस्टष्टं विभागे नोपलक्ष्यते ।
यस्य द्वादशसाहस्त्री हृदितिष्ठति संहिता ।
चिकित्सा वह्निवेशस्य स्वस्थातुरहितं प्रति ॥

यदि चरक ही इस ग्रन्थ का रचयिता होता तो उसके बाद का तथा उसके ग्रन्थ को पूर्ण करने वाला दृढ़बल भी अग्निवेश को ही ग्रन्थकर्त्ता तथा चरक को संस्कर्त्ता के रूप में क्यों निर्देश करता ।

आचार्य प्रियव्रतजी[5] द्वारा चरक संहिता के सम्बन्ध में व्यक्त मत को हम यहां प्रस्तुत कर रहे हैं :-

चरक द्वारा भाष्यात्मक प्रतिसंस्कार होने पर अग्निवेशतंत्र चरक संहिता के रूप में परिणत हुआ, किन्तु उसका मूलरूप भी अग्निवेश तंत्र के रूप में सुरक्षित रहा और काफी दिनों तक समानान्तर चलता रहा । उपलब्ध चरकसंहिता में जो मध्यकालीन (अग्निवेश तथा दृढ़बल के बीच का) अंश है, वह चरक की देन है । इस काल की प्रसिद्ध घटना है बुद्ध का आविर्भाव तथा बौद्ध दर्शन का प्रसार किन्तु चरक संहिता में बौद्ध दर्शन का निर्देश यत्र-तत्र तो मिलता है, किन्तु वह अधिक विकसित अवस्था में नहीं है । इसके अतिरिक्त ब्राह्मण धर्म की प्रमुखता दृष्टिगोचर होती है, क्योंकि सर्वत्र गो, ब्राह्मण, देवता आदि की पूजा का विधान है । अवलोकितेश्वर आदि बौद्ध देवी-देवताओं का उल्लेख नहीं है । शिव, विष्णु, कार्तिकेय आदि देवताओं की पूजा का भी विधान किया गया है । ज्वर, महेश्वर के कोप से उत्पन्न बताया गया है जिसके लिए शिवार्चन का विधान है । पुराण की कथा का निर्देश मिलने से ऐसा पता चलता है कि पुराण अस्तित्व में आ चुके थे और लोक में प्रचलित थे । चरक संहिता का सद्वृत्त धर्मसूत्रों पर आधारित है । चरक संहिता में धन्वन्तरि को आहुति देने का निर्देश है । इससे स्पष्ट होता है कि चरक के काल में धन्वन्तरि देवरूप में पूजित थे । उपलब्ध चरक संहिता में निम्नलिखित अंश चरक की देन हैं :-

1. आयुर्वेदातरण, 2. शैली, 3. क्षणिक विज्ञानवार तथा स्वभावोपरमवाद, 4. नास्तिकमत, 5. वादमार्ग तथा संनाषाविधि, 6. तर्क तथा प्रमाण, 7. पदार्थ, 8. अष्टांग विभाग, 9. आतुरालय, 10, देश, 11. धार्मिक स्थिति, 12. वर्णाश्रम व्यवस्था, 13. संस्कार, 14. सद्वृत्त, 15. राजनीतिक स्थिति, 16. चिकित्सा कर्म, 17. कुछ विशिष्ट द्रव्य एवं योग ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चरक संहिता का काल (यह) सूत्र रचना का ही काल था जिसमें संस्कृत वाङ्मय में वैदिक ज्ञान के आधार पर अनेक सूत्रों का निर्माण हो रहा था । सूत्ररूप अग्निवेश तंत्र पर आगे चलकर चरक ने संग्रह तथा भाष्य लिखा जो चरक संहिता के नाम से प्रसिद्ध हुयी । कालान्तर में दृढ़बल ने इसका पुनः प्रतिसंस्कार किया । इन तीनों स्थितियों का संकेत सूत्रभाष्य संग्रह क्रम के द्वारा किया गया है । अग्निवेश तंत्र, सूत्र, संग्रह तथा भाष्य के क्रम से परिणत होकर अद्यतन चरक संहिता के रूप में विद्यमान है । काल की दृष्टि से वर्तमान चरक संहिता में तीन स्तर मिले हुए हैं :-

1. उपदेष्टा आत्रेय तथा तंत्रकर्ता अग्निवेश ।
2. भाष्यकार चरक ।
3. प्रतिसंस्कर्त्ता दृढ़बल ।

उन्होंने लिखा है कि चरक संहिता में कहीं भी तक्षशिला का उल्लेख नहीं मिलता । यदि पुनर्वसु आत्रेय का सम्बन्ध वहां से रहता, तो अवश्य उसका कोई उल्लेख या संकेत होता ।

चरक संहिता की रचना के बाद अग्निवेश तंत्र का अस्तित्व रहा या नहीं - यह प्रश्न भी विचारणीय है । दूसरे शब्दों में अग्निवेश तंत्र ने ही परिष्कृत एवं उपबृंहित होकर चरक संहिता का रूप ले लिया या चरक संहिता भाष्य बनने के बाद भी अग्निवेश तंत्र अपने मूल में बना रहा । शिवदास सेन (15वीं शती) और वाग्भट ने भी अग्निवेश को उद्धृत किया है । इससे स्पष्ट है कि अग्निवेश तंत्र अपने मूल रूप में बाद तक प्रचलित रहा । जहां तक दृढ़बल का प्रश्न है, आचार्य प्रियव्रतजी ने इन्हें चौथी शती में रखा है । विदित है कि दृढ़बल के काल के विषय में विभिन्न विद्वानों में मतभेद है, लेकिन यह सत्य है कि चरक संहिता के तृतीयांश को इन्होंने प्रतिसंस्कार किया । आचार्यजी ने लिखा है -"कुछ लोगों की मान्यता है कि चरक आधी संहिता लिखकर ही दिवंगत हो गये और शेष अपूर्ण अंश को दृढ़बल ने पूरा किया जिस प्रकार कादम्बरी का उत्तरार्ध वाणभट्ट के पुत्र ने लिखा । किन्तु, यह मत समीचीन प्रतीत नहीं होता, क्योंकि :-

1. दृढ़बल ने स्वतः लिखा है कि उसने त्रिभाग (तृतीयांश) की पूर्त्ति की धा आये की नहीं ।
2. दृढ़बल ने संहिता की पूर्त्ति नहीं की प्रतिसंस्कार किया ।
3. जैसा पहले कहां जा चुका है, चरककृत अंशों में सम्पूर्ण संहिता की योजना की हुयी है ।

दृढ़बल ने चरक संहिता के खण्डित अंश की पूर्त्ति अन्य उपलब्ध तंत्रों से आवश्यक सामग्रियां शिलोच्छवृत्ति से ग्रहण की । इसके अतिरिक्त, उन्होंने ग्रन्थ को आद्योपारान्त संवारा भी । गुप्तकाल सांस्कृतिक पुनरुत्थान का युग था । तब तक चिकित्सा जगत् में भी पर्याप्त विकास हो चुका था, देश के विभिन्न भागों में उत्तम सर्वसाधन सम्पन्न आतुरालय स्थापित हो चुके थे । इससे निश्चय ही इस क्षेत्र में नये अनुभव हुये होंगे । इन सबका उपयोग दृढ़बल ने संहिता के प्रतिसंस्कार में किया है । अनेक नवीन द्रव्यों का समावेश दृढ़बल ने किया है । सारांश के रूप में उन्होंने लिखा है :-

1. चरक संहिता में निर्माण के तीन स्तर हैं :- अग्निवेश, चरक और दृढ़बल ।
2. मूल तंत्रकार अग्निवेश का काल 1000 ई०पू० है ।
3. प्रतिसंस्कर्ता चरक शुङ्गकाल और मौर्य शुङ्गकाल की संधि-रेखा पर रखे जा सकते हैं । इनका काल 2री शती ई०पू० है ।
4. दृढ़बल गुप्तकालीन हैं । इनका काल 4थी शती है । इसके द्वारा चरकसंहिता का अतिम प्रतिसंस्कार हुआ ।

श्री अत्रिदेव विद्यालंकार[6] की राय में दृढ़बल ने चरक संहिता को पूर्ण किया । इस तर्क के अनुसार दृढ़बल के पूर्व चरकसंहिता अपूर्ण थी । उनके द्वारा व्यक्त किये गये मत को यहां प्रस्तुत कर रहे हैं :-

"उपलब्ध आयुर्वेद संहिताओं में सबसे प्रथम (दृढ़बल के भाग को छोड़कर) अग्निवेश संहिता का निर्माण हुआ । इसके आस-पास भेल संहिता बनी, उसके अनन्तर सुश्रुत संहिता की रचना हुयी । फिर **दृढ़बल ने चरक संहिता को पूर्ण किया ।** इसके बाद वाग्भट ने संग्रह और हृदय बनाये । काश्यप संहिता की रचना को सुश्रुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के बाद और दृढ़बल द्वारा समावेशित भाग के पूर्व रख सकते हैं क्योंकि काश्यप संहिता और चरक संहिता के जिन वचनों में समानता मिलती है, वे उक्त भाग से पूर्व के हैं । ये रचनाएं ईसवी प्रथम शताब्दी के आस-पास प्रारम्भ होकर पांचवी-छठी शती तक पूर्ण हो गयी थी ।

श्री दुर्गाशंकर शास्त्री की मान्यता है कि प्रथम दृढ़बल के प्रतिसंस्कार द्वारा समावेशित भाग से रहित चरक संहिता बनी, इसके बाद उत्तर स्थान से रहित सुश्रुत संहिता, तदनन्तर उसके उत्तर स्थान और भेल संहिता की रचना हुई । इसके पश्चात् नावनीतक बना और अन्त में दृढ़बल ने चरकसंहिता पूर्ण की । दृढ़बल का समय 400 ईसवी के आस-पास है । इस प्रकार से देखने पर भेल संहिता का प्रतिसंस्कार होना नहीं पाया जाता, परन्तु हरिप्रसन्नजी इसका भी प्रतिसंस्कार मानते हैं ।''

उन्होंने पुनः लिखा है :-

''दृढ़बल से समावेशित चरक संहिता के भाग में और सुश्रुत संहिता के वचनों में जो समानता है, उसमें यह सम्भावना है कि ये वचन दृढ़बल ने सुश्रुत से लिये होंगे । इनमें अधिक वचन उत्तर तंत्र के हैं, यथा -

चरक -

आनहाते यस्थ विशुष्यते त प्रक्लिद्यते धूरयते चापि नासा ।
न वेत्ति यो गन्धरसांश्च जन्तुः जुष्टं व्यवस्येत्तम मीन सेन॥

च०चि० 26/114

मिथ्याचारेण ताः स्त्रीणां प्रदुष्टेनार्त्तवेन च ।
जायन्ते बीज दोषाच्च देवाच्च श्रृणु ताः पृथक् ॥

सुश्रुत -

आनह्यते यस्य विधूष्यते च प्रक्लिद्यते शुष्यति चापा नासा ।
न वेत्ति यो गन्धरसांश्च जन्तुः जुष्टं व्यवस्येत्तमपीन सेनं ॥

उत्तर अ० 22/6

मिथ्या चारेण याः स्त्रीणां प्रदुष्टेनार्त्तवेन च ।
जायन्ते बीज दोषाच्च दैवाच्च श्रृणु ताः पृथक् ॥

उत्तर - अ० 38/5

चरक संहिता में ये विषय ग्रन्थ को पूर्ण करने के लिए दृढ़बल को अन्य स्थानों से लेने पड़े, जैसा कि उसने स्वयं कहा है - ''बहुत से तंत्रों में से शिलोञ्छ वृत्ति द्वारा वचनों को लेकर यह ग्रन्थ पूरा किया गया है'' (नि०अ०12/39) । शिल वृत्ति में अनाज की पूरी बाल उठायी जाती है । उञ्छ वृत्ति में - भूमि पर गिरा हुआ अनाज का दाना चुना जाता है । इस प्रकार से उसने कहीं तो सम्पूर्ण पद या श्लोक उद्धृत किया और कहीं पर वाक्यांश उद्धृत किया; यह स्पष्ट है । सुश्रुत में भी चरक के वचन उद्धृत हुए हैं यह बात दोनों की भाषा भिन्नता से स्पष्ट है ।''

कविराज सूरम चन्द्र जी[6] ने ज्यादा प्रकाश चरक संहिता पर नहीं डाला है । उनके अनुसार वैशम्पायन ने चरक संहिता का संस्कार किया । यह काल कलि का आरम्भ था । उन्होंने चरक संहिता का उद्धरण भी इस सम्बन्ध में दिया है - वर्षशतं खल्वायुषः प्रमाणमस्मिन् काले ।

श्री मुखोपाध्याय[7] ने चरक संहिता का उद्गम-स्थल भारद्वाज, पुनर्वसु, आत्रेय सहित अन्य शिष्य, आत्रेय के शिष्य जैसे अग्निवेश, भेल, जतूकर्ण, पराशर, हारीत और क्षीरपाणि आदि विद्वानों को माना है । इस तरह अग्निवेश की कृति का संशोधित एवं उन्नत स्वरूप चरक संहिता के रूप में आयुर्वेद-जगत् के समक्ष उपस्थित हुआ ।

उन्होंने चरक संहिता के प्रस्तुत उद्धरण के आधार पर इसे सर्वोत्तम कृति मानी है :-

अथ मैत्री परः पुण्यमायुर्वेदं पुनर्वसुः ।
शिष्येभ्यो दत्तवान् षड्भ्यः सर्वभूतानुकम्पया ॥
अग्निवेश्च भेडश्च जतूकर्णः पराशरः ।
हारीतः क्षारपाणिश्च जगृऽस्तन्मुनेर्वचः ॥
बुद्धेर्विशेषस्तत्रासान्नोपदेशान्तर मुनेः ।
तंत्रस्य कर्त्ता प्रथमग्नि वेशो यतोऽमवत् ॥
अथ भेडादयश्चकुः स्वं स्वं तंत्रं कृताग्नि च ।
श्रावयामासुरात्रेयं सर्षिसंघं सुमेधसः ।

च०सू० 1/29-32

किन्तु, उपर्युक्त उद्धरणों से यह प्रमाणित नहीं होता है कि चरक संहिता के प्रणयन में उपर्युक्त विद्वानों का हाथ है, बल्कि श्लोकों के अर्थ से स्पष्ट है कि भेल सहित सभी शिष्यों ने अपने-अपने नाम से तंत्र रचे । इन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संहिताओं में से अधिकांश आज भी किसी न किसी रूप में उपस्थित हैं । हां, अग्निवेश प्रमुख शब्द का प्रयोग संशय उपस्थित करता है –

अथाग्निवेश प्रमुखान् विविशुर्ज्ञानदेवताः ।
बुद्धि सिद्धिः स्मृतिर्मेधा धृतिः कीर्त्ति क्षमा दया ॥

च०सू० 1/38

इसका आशय यह भी हो सकता है कि शिष्यों में प्रमुख अग्निवेश थे । अतः अग्निवेश प्रमुख शब्द का प्रयोग किया गया । श्री मुखोपाध्याय के अनुसार 44 अध्याय दृढ़बल द्वारा सम्पादित किये गये थे । उनके कथन का आधार हार्नले की कृति Studies in Ancient Indian Medicine है । चरक संहिता में दृढ़बल के योगदान की चर्चा हम आगे करेंगे ।

श्री मुखोपाध्याय द्वारा चरक संहिता के सम्बन्ध में निकाले गये निष्कर्षों को निम्नानुसार क्रमबद्ध कर सकते हैं –

1. पतंजलि के महाभाष्य के आधार पर यह कहा जा सकता है कि चरक द्वितीय शती ई०पू० के समय रहे होंगे ।
2. आधुनिक संहिताओं में देवी-देवताओं के प्रति पुस्तक के प्रारम्भ में प्रार्थना रहती है जिसका पूर्ण अभाव चरक संहिता में है । इसी तरह शाक्य मुनि और उसके धर्म के बारे में कोई चर्चा नहीं है ।
3. पौराणिक कथाओं में वर्णित देवी-देवताओं की चर्चा चरक संहिता में नहीं है । इसका आशय है कि पुराणों से पूर्व ही चरक संहिता का अस्तित्व था ।
4. गोमांस उन दिनों प्रतिबन्धित नहीं था । इसे आहार का एक रूप बताया गया है, किन्तु इसका प्रतिदिन प्रयोग करने से मना किया गया है । साथ ही यह वातरक्त और कुष्ठ रोग में हानि पहुंचाता है ।
5. चरक संहिता की शैली प्राचीन है और ब्राह्मण ग्रन्थों का इस पर प्रभाव है ।

न्याय और वैशेषिक सूत्रों का भी इसमें समावेश है । इसका अर्थ हुआ कि इन सूत्रों के संग्रह के पूर्व ही चरक संहिता अस्तित्व में आ चुकी थी ।

श्री मुखोपाध्यायजी का यह मत विवादास्पद हो सकता है । यह क्यों नहीं सम्भव है कि न्याय और वैशेषिक सूत्र चूंकि पहले ही अस्तित्व में आ चुके थे, इसलिए चरक संहिता में इन सूत्रों का प्रभाव परिलक्षित होता है । अतः केवल सूत्रों के आधार पर विवेचन करना उचित नहीं है ।

डा० दासगुप्ता[8] ने चरक संहिता के सम्बन्ध में जो मत व्यक्त किये हैं, वे इस प्रकार हैं :-

1. चरक संहिता अग्निवेश संहिता का संशोधित रूप है ।
2. चरक ने जिस अग्निवेश संहिता को संशोधित किया, वह चक्रपाणि के समय तक उपलब्ध थी ।
3. चरक ने अपनी संहिता पूर्ण नहीं की । चिकित्सास्थान के 17 अध्याय, सिद्धिस्थान और कल्पस्थान को दृढ़बल ने 9 वीं शती में पूर्ण किया । दृढ़बल कपिलबल के सुपुत्र एवं पंचनद निवासी थे ।
4. रत्नप्रभा के रचयिता निश्चयकर ने दृढ़बल को चरक परिशिष्ट का रचयिता बताया है, इसी तरह चक्रपाणि, विजयरक्षित और अरूणदत्त ने भी चरक संहिता के शेषभाग का रचयिता दृढ़बल को बताया है ।
5. दृढ़बल के किन शेष भागों को चरक संहिता में जोड़े – इस सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों के ग्रन्थों में मतभेद है । उदाहरण के लिए जीवानन्द के ग्रन्थ में अर्श, अतिसार, विसर्प, महाव्यप (महालय) और द्विव्रणीय अध्ययन को क्रमशः नवां, दसवां, ग्यारहवां, बारहवां एवं तेरहवां अध्याय माना गया है जो मूल चरक संहिता से सम्बन्धित हैं । गंगाधर के ग्रन्थ में उन्माद, अपस्मार, क्षतक्षीण, श्वयथु और उदर को क्रमशः नवां, दसवां, ग्यारहवां, बारहवां एवं तेरहवां अध्याय कहा गया है । इस तरह अध्यायों एवं रोगों के क्रम में अन्तर है । हार्नले ने इसकी विशद व्याख्या की है ।
6. चरक संहिता के लेखक पतंजलि थे – इस बात की चर्चा भोज (ग्यारहवीं शती) को छोड़कर किसी विद्वान ने नहीं की है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

7. राय भद्र दीक्षित (संभवत: 17 वीं या 18 वीं शती) ने भी पतंजलि को चिकित्सा-शास्त्र का रचयिता कहा है । किन्तु कौन-सा पतंजलि ? पतंजलि कई हुए हैं । चिकित्सा-विज्ञानी पतंजलि और वैयाकरण पतंजलि पृथक्-पृथक् व्यक्तित्व के स्वामी थे ।
8. अग्निवेश की मूलकृति, अग्निवेश-संहिता चक्रपाणि के समय तक उपलब्ध थी । विजय रक्षित और श्रीकान्तदत्त ने भी इसका समर्थन किया है ।

श्री श्रीवास्तव[9] ने चरक को प्रथम फार्मेसिस्ट इस आधार पर कहा है कि उन दिनों चिकित्सक स्वयं औषधियों का निर्माण करते थे ।

लेखकद्वय[10] के अनुसार चरक संहिता और सुश्रुत संहिता का निर्माण 7वीं ई०पू० शती में हुआ था ।

डा० ज्योतिर्मित्र[11] जी के अनुसार "चरक शाखा का अष्टाध्यायी एवं उपनिषद् में उल्लेख होने से चरक संहिता के संस्कृत भाग को पाणिनि से पूर्व का कम से कम मान ही सकते हैं ।" डा० ज्योतिर्मित्रजी ने इसके आधार के सम्बन्ध में कहा है, " पाणिनि का समय ईसा से आठवीं शताब्दी पूर्व है, अतएव उससे पूर्व 1000 ई० के लगभग चरक का काल माना जा सकता है ।"

हिस्ट्री ऑफ इण्डियन लाजिक के रचयिता, डा० विद्याभूषण के अनुसार न्यायसूत्र से पूर्व भी अनेक लेखकों का भारतीय न्यायशास्त्र में योगदान रहा है । इन लेखकों में दत्तात्रेय, **पुनर्वसु आत्रेय** सुलभा वैरागिनी और अष्टावक्र का नाम लेते हैं । विदित है कि पुनर्वसु आत्रेय का सम्बन्ध आयुर्वेद से है ।

कौटिल्य ने बत्तीस पारिभाषिक शब्दों का वर्णन किया है जिन्हें तंत्रयुक्ति संज्ञा दी गयी है । यह सूची चरक संहिता सिद्धि स्थान 12 और सुश्रुत संहिता के आन्वीक्षिकी भाग में विवाद के नियमों का विस्तार के साथ प्रतिपादन किया गया है (विमान स्थान 8) ।

प्रख्यात् विद्वान डा० राधाकृष्णन[12] के अनुसार प्राचीन बौद्ध ग्रन्थों में ऐसी कोई सामग्री नहीं पायी जाती जिससे न्यायसूत्र के निर्माण का पता चल सके । डा० विद्याभूषण के हवाले से उन्होंने लिखा है कि " गौतम के असली विचार वे हैं जो 'चरक संहिता' में हैं (विमान स्थान 8)। न्यायसूत्र और चरक संहिता में बहुत-सी बातें एक समान हैं ।"

(निरन्तर जारी)

संदर्भ :-

1. The Cultural Heritage of India- Vol. III- The Ramkrishna Mission, Institute of Culture- Calcutta.
2. Do. Vol. II
3. Do. Vol. II
4. काश्यपसंहिता (वृद्धजीवकीयं तंत्र वा) - नेपालराजगुरु-पं० हेमराज शर्मा - चौखम्बा-संस्कृत-सीरिज, बनारस - 1
5. आयुर्वेद का वैज्ञानिक इतिहास - आचार्य प्रियव्रत शर्मा - चौखम्बा ओरियन्टालिया-वाराणसी ।
6. आयुर्वेद का बृहत् इतिहास - अत्रिदेव विद्यालंकार - प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग, उ०प्र० ।
7. History of Indian Medicine - Girindra Nath Mukhopadhyaya, Bhisagachrya - Vol.III - University of Calcutta - 1929.
8. A History of Indian Philosophy - Vol. III- S.N. Dasgupta - Cambridge University Press, London.
9. History of Indian Pharmacy - G.P. Srivastava Vol. I, Pindars Limited, 7 Lower Rawdon Street, Calcutta - 20
10. Basic Principles of Ayurveda - Page 3 - Vaidya Bhagwan Dash and Vaidya Lalitesh Kashyap- concept Publishing Company, New Delhi.
11. चरक एवं सुश्रुत के दार्शनिक विषय का अध्ययन- डा० ज्योतिमित्र आचार्य - श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि० ।
12. भारतीय दर्शन-I डा० सर्वेपल्लिम राधाकृष्णन्, प्रसिद्ध दार्शनिक एवं भारत के प्रथम राष्ट्रपति - राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली - 9

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्युत एवं अशनिकृत व्याधि विचार

वैद्य पी०एस० अंशुमान, एच०पी०ए०

परिचय

आयुर्वेद साहित्य में प्राप्त रोगों के वर्गीकरणों में दैवबलप्रवृत्ता व्याधियों के अन्तर्गत दैविक शक्तियों से उत्पन्न रोगों का समावेश किया गया है । देवता, गुरु, सिद्ध पुरुष के साथ द्रोह करने से या गुरुओं के अभिशाप से उत्पन्न या अथर्वप्रणीत अभिचार प्रयोगों से उत्पन्न तथा उपसर्ग (सम्पर्क में आने से) जन्य रोगों को इसी श्रेणी में रखा गया है । इनको पुनः दो प्रकारों में विभक्त किया गया है यथा (1) विद्युत जन्य एवं अशनि जन्य तथा (।।) पिशाचादि जन्य । पिशाचादि जन्य को पुनः दो विभागों में विभक्त किया गया है यथा (1) संसर्गज एवं आकस्मिक ।

यहां विद्युत एवं अशनि दोनों ही आकाशीय विद्युत के लिये प्रयुक्त शब्द होने पर भी व्याख्याकारों के अनुसार दोनों की अपनी कुछ विशिष्टतायें कही गई हैं । विद्युत को आकाश में चमकने वाली ऐसी बिजली कहा गया है जिसके प्रकाश की आकृति लतावत, तिरछी एवं आग के समान गिरने वाला विद्युत कहा गया है जबकि अशनि को मूसल के समान नीचे गिरने वाली विद्युत-बिजली के रूप में माना गया है । दोनों को ही अग्नि के सामान दाहक एवं विनाशक-मारक माना है ।

विद्युत (दामिनी)

आकाशीय विद्युत की उत्पत्ति बादलों में विद्यमान ऋण (-) एवं धन (+) कण युक्त होने के कारण होती है ।

ऋण एवं धन विद्युत भार युक्त कण एक दूसरे को आकर्षित करते हैं । बादलों के नीचे के भाग में एकत्र ऋण विद्युत (-), जमीन पर या पानी की सतह पर की धन विद्युत (+) द्वारा आकर्षित किया जाना, इसको उत्पन्न करता है । अतः ऋण विद्युत प्रवाह, ऊपर से नीचे की ओर प्रवाहित होता है तथा नीचे से ऊपर की ओर धन (+) विद्युत प्रवाह बहता है ।

इन दोनों विद्युत प्रवाहों के मिलने से तीव्र विद्युत भार पोजिटिव चार्ज, प्रकाश की गति से 1/3 भाग की गति से (100000 कि०मी०प्र०से०) प्रवाहित होता है, जिसके कारण आकाश में तीव्र प्रकाश रेखा (दामिनी) दिखाई देती है । इसकी एक चमक में 20000 से 40000 एम्पीयर का विद्युत प्रवाह प्रवाहित होता है, जो 20 करोड़ वोल्ट दबाव जैसा होता है या 1/1000 से० समय भर के लिये होता है । अतः कुछ कम हानि होती है अन्यथा सब कुछ जल कर भस्म हो जा सकता है ।

बिजली गिरने की घटना वर्षा ऋतु में, मेघ की गर्जना के साथ वर्षा में, ऊंची इमारत पर, या उसके आश्रय पर, खुले पानी की सतह पर (उस पर स्थित नौका पर) या जिसका अर्थिंग न किया गया है, आदि पर पड़ती है ।

आयुर्वेद के ग्रंथों में बादलों के गरजने को तथा बिद्युत गिरना आदि बाह्य वायु प्रकोप जन्य उपद्रव के रूप में निरूपित किया गया है ।

लक्षणोत्पत्ति

किसी प्राणी या मानव पर बिजली गिरने पर जो लक्षण उत्पन्न होते है उन्हें निम्नानुसार रखा जा सकता है :-

(क) तीव्र विद्युत प्रवाह के शरीर में प्रवेश/प्रसारित होने पर -

। तात्कालिक

- हृदय गति रुक जाना (जो कुछ में, बाद में स्वतः चालू हो सकती हैं)। अतः नाड़ी बंद पड़ जाती है ।
- श्वांस बंद हो जाना (मस्तिष्क पर प्रभाव के कारण)
- इसके पुनः शुरू होने में समय लग सकता है और पुनः चालू न होनें पर मृत्यु हो जाती है।
- कान में बधिरता आना ।
- चक्कर आना ।
- आंख की रोशनी चली जाना (लिंगनाश) ।

।। कालान्तर

- वाणी व्यवहार में अन्तर रहना ।

1497, ए 2/1, रूपाणिसर्कल, कृष्णनगर, भावनगर (गुज0)- 364001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

- विचारों की अस्थिरता ।
- कुछ लक्षणों का स्थायी रूप में बने रहना यथा -
  - निद्राविक्षेप
  - उत्तेजित रहना
  - हताश (विषादग्रस्तता)
  - भय ग्रस्तता

(ख) अतितीव्र विद्युत प्रवाह लगने पर, न्युरोन विनष्ट होने के फल स्वरूप 'घात' के लक्षण होते हैं । कई बार यह लक्षण शुरू में नहीं होते परन्तु बाद में प्रगट हो जाते हैं ।

- कई बार न्युरोन नष्ट न हो छिद्रित हो जाते हैं तब उन में से जीव रस प्रवाहित हो जाने से कई वात विकार उत्पन्न हो जाते हैं ।
- कभी ठंडी, कभी गरमी लगना, बार-बार मूर्च्छा आना, घबराहट होना, चित्त विभ्रम होना, विस्मरण होना, स्मृति दोष, शरीर दुखना (अंगमर्द) होना (आदि होना) ।
- ऐच्छिक क्रिया दोष होने पर हलन, चलन, उठना, बैठना, खाने-पीने की क्रिया प्रभावित होना ।
- स्वतः तंत्र के प्रभावित होने पर-श्वसन, हृदय स्पंदन, अंत्रगति, ताप नियमन, प्रजनन अवयव क्रिया में दोष या हानि होना ।
- अचानक रक्त दबाब घटना, शून्य होने पर मृत्यु होना या हृदय स्पंदन बढ़ना, पसीना आना । शिरःशून्यता की प्रतीति, तनाव एवं भयग्रस्तता ।
- विद्युत जन्य पक्षम चिन्ह युक्त त्वचा होना (लिष्टेन वर्ग की आकृति में) दग्धव्रण होना, कालांतर में व्रण का भर जाना) ।

ऐसा भी देखा गया है कि रोगी स्वतः या चिकित्सा करने पर विद्युत आक्रमण के बाद भी बच जाता है । परन्तु बाद में मृत्यु ग्रस्त हो जाती है । तथापि कुछ लोग बच भी सकते हैं ।

चिकित्सा

(क) बिजली पड़ने से बचने के उपाय (अनागतबाधा प्रतिषेध)

। - बिजली पड़ने पर गड्ढे में नीचे झुककर बैठें ।
- मकान में अन्दर ही रहें ।
- वाहन (कारादि) में होने पर अन्दर ही रहें ।

।। कुछ अन्य सावधानियां (बिजली चलती हो तब)

- खुले में रहें (पेड़ादिक के नीचे न रहें)
- पानी की सतह पर न रहें ।
- अर्थिंग बिना वाले/घर में न रहें ।
- मकान के ऊपर छत पर न रहें ।
- धातु के तार, पाईप आदि न पकड़ें ।
- नीचे बैठें, कानों को हाथों से ढकें ।
- एक दूसरे को न पकड़ें ।

(ख) आगत व्याधि चिकित्सा

(क) तत्काल

1. हृदय बंद होने पर कृत्रिम हृदय स्पन्दन कराने की चेष्टा ।
2. श्वास बंद होने पर कृत्रिम श्वास ।
3. रोगी को सम्पूर्ण विश्राम एवं आश्वासन देना ।
4. मूर्च्छा ग्रस्त में मूर्च्छानाशक उपक्रम ।

रक्तचाप घटने पर हृदयबल्य रक्तचापवर्धक उपाय।

(ख) लक्षणानुसारी चिकित्सा

- चक्कर आने पर भ्रमघ्न उपचार/कल्प ।
- वाक दोष में अर्दितवत उपचार, घात में पक्षवघवत ।
- तापकम नियंत्रणार्थ शीत या उष्ण उपक्रम ।
- वेदना में वेदना शामक ।

(ग) मानसिक लक्षणों के शमनार्थ दोष, लक्षण, रोगानुसारी चिकित्सा करें यथा -

- निद्रा विक्षेप में शामक ।
- उत्तेजना, व्यग्रता में प्रसादन ।
- हताश (विषाद), भय में विषादघ्न उपचार ।
- चित्तविभ्रम,
- स्मृति दोष, विस्मरण में मेध्यकल्प ।

(घ) विद्युत दग्ध में दग्धव्रणवत उपचार करना होता है । आयुर्वेद के ग्रंथों में ऐसी स्थिति में निम्नलिखित उपक्रम कहे गये हैं -

- स्नेहाभ्यंग
- परिषेक
- प्रदेह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुश्रुत के कथनानुसार अतितेजस (वज्राग्नि या दामिनी) से दग्ध होने पर मनुष्य समान्यत: बचता नहीं है, तथापि इन्द्राग्नि (बिजली पड़ने) या वज्राग्नि से जलने या आहत होने पर यदि मनुष्य जीवित हो तो उसकी चिकित्सा उपरोक्त स्नेह, अभ्यङ्ग, परिषेक, प्रदेह आदि द्वारा करने का आदेश है ।

(ड़) दग्ध चिकित्सा में कहे अनुसार चिकित्सा की जा सकती है यथा -

1. **प्लुष्ट दग्ध** - अग्नि द्वारा प्रतपन मात्र (तपना मात्र) होने पर ऊष्ण औषधोपचार कहे हैं क्योंकि प्लुष्ट दग्ध के कारण शरीर स्विन्न होने के कारण रक्त भी स्विन्न हो जाता है । अत: शीत उपचार करने पर रक्त घट्टन होने से उपद्रव करता है । अत: शीतक्रिया उपयोगी या सुखकर नहीं होती ।

2. **दुर्दग्ध** - इस अवस्था में शीत एवं उष्ण क्रिया द्वारा चिकित्सा कही गई है । मूल भाग जलने पर स्विन्न रक्त को निर्वापण के लिये शीत क्रिया से करनी चाहिए । यदि अत्यधिकदग्ध हो तो स्विन्न रक्त को एकत्रित होने पर स्वेदित आदि उष्ण उपचार हितकर कहे गये हैं । घृत एवं शीतलेप उपयोगी कहे गये हैं ।

3. **सम्यक दग्ध** - वंशलोचन, पिलाखन, चन्दन, गेरु, गिलोय एवं घी का लेप, वात (जन्य लक्षण) शान्ति के लिये अश्वादि (आनूप) मांस लेप, पित्त जन्य लक्षण दाहादि । शान्ति के लिये पैत्तिक विद्रधिवत चिकित्सा का निर्देश है ।

4. **अतिदग्ध** - अतिदग्ध मांस छेदन पूर्वक, धान्य पिष्टी, तिन्दुकीत्वक, खर्पर, घृत का लेप तथा वाद में-व्रण को गिलोय का कमल पत्र से ढक दें । इस अवस्था में पैत्तिक विसर्प की चिकित्सा करने का निर्देश है ।

5. **अन्य निर्देश** -

1. मोम, यष्टि, लोध्र, राल, मंजीष्ठ, रक्तचंदन, मूर्वाकृत सिद्ध घृत प्रलेप सर्वदाह पर हितकर कहा है ।
2. स्निग्ध दग्ध में रूक्ष क्रिया (अवचूर्णन) हितकर है ।
3. रूक्षदग्ध (अति, दामिनी आदि से) पर स्निग्ध क्रिया (घृत, तैलादि) का प्रयोग हितकर है ।

संदर्भ :-

1. दैवबलप्रवृत्ता ये देवदोहादभिशप्तका अर्थवणकृता उपसर्गजाश्च, तेऽपि द्विविधा: -विद्युदशनिकृता: पिशाचादिकृताश्च पुनश्च, द्विविधा:-संसर्गजा:, आकस्मिकाश्च । सु०सू० 24/7
2. तथाऽतितेजसा दग्धे सिद्धिर्नास्ति कथंचन, इन्दवज्राग्निदग्धऽपि जीवति प्रतिकारयेत् । स्नेहाभ्यङ्गपरीषेक: प्रदेहैश्च तथा भिषक् । सु०सू० 12/39
3. XXXX आधमनमम्बुदानां XX निर्ह्लाद XX XX अशनिविसर्ग: XX XX मेघसूर्यानलानिलानां विसर्ग: । च०सू० 12/10
4. XX
प्लुष्टस्याग्निप्रतपनं कार्यमुष्णं तथौषधम् ।
शरीरेस्विन्नभूमिष्ठे स्विन्नं भवति शोणितम् ।
प्रकृत्या हयुदकं शीतं स्कन्दयत्यति शोणितम् ।
तस्मात् सुखयति हयुष्णं ननु शीतं कथंचन ।
--- शीतामुष्णां च दुर्दग्धे क्रिया कुर्याद्भिषक् पुन: ।
घृतालेपनसेकांस्तु शीतानेवास्य कारयेत् ।
--- सम्यग्दग्धे तुगाक्षीरीप्लक्षचन्दनगैरिकै: ।
सामृत: सर्पिषा स्निग्धरालेपं कारयेभ्दिषक् ।
ग्राम्यानूपौदकश्चैनं पिष्टमांसै: प्रलेपयेत् ।
पित्तविद्रधिवच्चैनं संततोष्माणमाचरेत् ।
--- अतिदग्धे विशीर्णानि मांसा-न्युधृत्य शीतलाम् ।
क्रियां कुर्याभ्दिषक्-पश्चाच्छालितण्डुलकण्डनै: ।
तिन्दुकीत्वक्कपालैर्वा घृतमिश्रै: प्रलेपयेत् ।
व्रणं गुडुचीपत्रैर्वा छाययेदपतौदकै: ।
क्रियां च निखिलां कर्माभ्दिषक् पित्त विसर्पवत् ।
---मधूच्छिष्टं समधुकं रोध्रं सर्जरसं तथा ।
मंजिष्ठां चन्दनं मूर्वां पिष्ट्वा सर्पिर्विपाचयेत् ।
सर्वेषामग्निदग्धानामे तदोपण मुत्तमम् ।
स्नेहदग्धे क्रियां रूक्षां विशेषावचारयेत् ।
सु०सू० 12/19-29

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय वनौषधियों के अल्पज्ञात विदेशी प्रयोग

डा० सुधांशु कुमार जैन

औषधीय पौधों पर भारत में जन्मा पारंपरिक ज्ञान आज दो प्रमुख अंगों में बंटा है । एक वह जो अनुभव, उपयोग तथा बाहुल्य में प्रयुक्त, प्रचलित तथा प्रमाणित होकर पद्धति बद्ध होकर आयुर्वेद एवं सिद्ध का आधार बन गया, दूसरा वह जो अभी भी मौखिक परंपरा पर ही आधारित रहकर उपयोग में तो आता रहा, किन्तु उसका न तो अधिक क्षेत्रों में प्रसार हुआ न वह लिपिबद्ध होकर शोध, विश्लेषण तथा किसी पद्धति या चिकित्सा प्रणाली का भाग बना । किन्तु यह ज्ञान प्राय: सीमित क्षेत्रों में, स्थानीय जनजातियों के रोग निवारण का प्रमुख आधार रहा, और आज भी है ।

इस लोक पारंपरिक ज्ञान को आज के वैज्ञानिक प्राय: ही कम विश्वसनीय मानते हैं । अब संसार भर में इस ज्ञान की ओर न केवल आंख लगी है, वरन विकसित देशों तक में इस पर आधारित नये उपयोगी औषधीय द्रव्य खोजने की होड़-सी लगी हैं ।

लोकवनौषधियों में विश्वसनीयता अथवा उनकी प्रमाणिकता सिद्ध करने के अनेक प्रयास हो रहे हैं । कुछ तो आधुनिक यंत्रों द्वारा उनमें विद्यमान रसायनों की खोज पर, कुछ उनको परीक्षणों द्वारा रोगियों पर अध्ययन करके तथा कुछ अन्य विधियों से उन्हें उपयोगी सिद्ध करने पर आधारित है ।

भारत में पाये जाने वाले अनेक पौधे विदेशों में भी मिलते हैं । बहुत से पौधों के औषधीय गुण वहां की जनजातियों ने अपनी आवश्यकता के अनुसार वहां होने वाले रोगों की दृष्टि से तथा अपने अनुभव के आधार पर स्वतंत्र रूप से वहां खोज निकाले । ऐसे औषधीय गुणों पर कुछ साहित्य भी प्रकाशित हुए । उसके अध्ययन से तीन रोचक और उपयोगी तथ्य सामने आए :-

1. कुछ पौधों के संभावित नये गुण उन्होंने खोज लिये । यह उपयोग भारत में प्राय: ज्ञात नहीं हैं ।
2. कुछ पौधे उसी प्रकार वहां प्रयोग होते हैं, जैसे भारत में । यह उनके औषधीय गुणों की विश्वसनीयता को बल देते हैं ।
3. कुछ पौधे अमुक रोगों के निवारण में भारत की जनजातियों में तो प्रचलित हैं, किन्तु विदेशों में उन गुणों का ज्ञान नहीं है । संभव है, वह रोग वहां कम हो, अथवा कोई अन्य पौधे जो वहीं उगते हैं, अधिक उपयोगी हों ।

इस लेख में केवल पहले वर्ग के कुछ पौधों का तथा उनके प्रयोग का उल्लेख है । आशा है, शोधकर्त्ता आवश्यक शोध द्वारा भारत में इनकी उपयोगिता की संभावनाएं खोजने में रुचि लेंगे, तथा वैद्यगण जिन्हें चिकित्सालयों की प्रयोगशाला में अथवा रोगियों पर, आवश्यक सावधानी बरतते हुए परीक्षण करेंगे ।

पौधे वैज्ञानिक नामों के वर्णक्रमानुसार दिये हैं । पौधे का लैटिन (अर्थात् वैज्ञानिक नाम) देवनागरी में, तदुपरांत रोमन लिपि में, कुछ स्थानीय नाम तथा संक्षिप्त वर्णन दिये गये हैं ।

अगले पैरा में औषधीय गुणों का विवरण है । संभव है, इनमें से कुछ प्रयोग आयुर्वेद में विद्यमान हैं, तब भी यह सूचना इस बात की द्योतक तो है ही, कि दूर स्थित देशों की जन-जातियां भी उन्हें उसी प्रकार प्रयोग करती हैं, जैसे उनका आयुर्वेद में प्रयोग है ।

1. **अलोए बार्बार्डेंसिस** -Aloe barbadensis Mill. (A.vera)
   घीकुंवार, ग्वारपाठा, घृतकुमारी ।
   गूदेदार पत्तों वाला पौधा है, पत्तों के किनारे कंटीले होते हैं । फल पीला रंग लिये सिंदूरी रंग के ।
   वेस्टइंडीज से इसका रस गर्भ पातक हेतु तथा पौधा मधुमेह में प्रयोग होता है ।
2. **आंडोग्राफिस पानीकुलाटा** - Andrographis

भूतपूर्व संस्थापक-निदेशक, लोक जैव विज्ञान संस्थान
ए-26 आवास विकास कॉलोनी, माल एवेन्यू, लखनऊ- 226001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

paniculata Wall.

कालमेघ, किरयात, कुलुफानाथ ।

बहुशाखित पौधा है, शाखाएं चतुर्कोणीय होती हैं । पत्ते आमने-सामने लगे होते हैं । फूल श्वेत-गुलाबी पत्तों के कक्ष में अथवा शाखाओं के शीर्ष पर लंबे गुच्छों में लगते हैं । उन पर फालसई रंग के दाग होते हैं ।

वेस्ट-इंडीज में मधुमेह में प्रयोग होता है ।

3. **आइलांथुस एक्सेलसा** - Ailanthus excelsa Wall

महानीम, अरुआ, महारूरव ।

पर्णपाती वृक्ष, इसमें दुर्गंध आती है । पर्णाक दंतुर होते हैं । फूल केलई-पीले, बड़े फैले पुष्पंपुजों में होते हैं । फल लाल चपटे होते हैं ।

अफ्रीका में पत्ते मलेरिया में प्रयोग होते हैं ।

4. **आल्लिउम सेपा** - Allium cepa

प्याज, कांदा, गंठा ।

सुपरिचित प्याज का पौधा है । कंद प्याज होता है, इसके पत्ते लंबे, पतले और फूल सफेद होते हैं ।

अफ्रीका में कंद मधुमेह में तथा रक्तचाप अधिक होने में प्रयोग होता है ।

5. **आल्टरनांथेरा सेस्सिलिस**- Alternanthera Sessilis DC

गरंडी शाक, गैटिवार, कंचारी, जलजबे ।

भूमि पर फैलता बहुशाखित छोटा पौधा है । इसके फूल श्वेत या गुलाबी, पत्तों के कक्ष में छोटी-छोटी गुच्छियों में लगते हैं ।

अफ्रीका में पत्ते कच्चा गर्भ गिरने से रोकने हेतु प्रयोग होते हैं ।

6. **कान्नाबिस साटीवा** - Cannabis sativa L.

भांग, गांजा, चरस, विजया, सिद्धि ।

रोमिल पौधा, प्राय: एक-डेढ़ मीटर ऊंचा, किन्तु बढ़कर छोटा वृक्ष जैसा भी हो जाता है । पत्ते हस्ताकार, फूल छोटे, एकलिंगी । अफ्रीका में पौधा मलेरिया ज्वर में प्रयोग होता है । पत्ते बढ़े रक्तचाप में तथा मधुमेह में प्रयोग होते हैं । गर्भ निरोधक के रूप में भी प्रयोग होता है ।

7. **कालोट्रोपिस मोसेरा**- Calotropis procera Br.

आक, आकड़ा, मदार, रूई ।

यह परिचित क्षुप है । पौधे के हर अंग में दूध होता है । पत्ते मोटे, आमने-सामने लगते हैं । फूल मोटे दल के सफेद होते हैं । बीज पकने पर फल से निकल कर रूई की भांति उड़ते हैं ।

अफ्रीका में पत्ते बढ़े हुए रक्तचाप के उपचार देते हैं ।

8. **कास्सिआ ऑक्सीडेंटालिस**- Cassia occidentalis Linn.

कसोंदी, चकुंडा ।

ये छोटे क्षुप होते हैं; पत्ते चिकने अनेक पर्णकों के होते हैं तथा फूल पीले बाहुल्य में लगते हैं । फली चपटी सेम जैसी होती है ।

अफ्रीका में पत्ते कुष्ठ रोग, पीलिया तथा मलेरिया में प्रयोग होते हैं ।

वेस्ट इंडीज में पत्ते एवं मूल पीलिया में, बीज मलेरिया एवं रक्तचाप में तथा मूल गर्भपात हेतु प्रयोग होते हैं ।

9. **जीजीबेर ऑफ्फीसिनाले**- Zingiber officinale Res

अदरक, आदी, आल, सोंठ ।

यह सुपरिचित पौधा है । कंद सुगंधित अदरक अथवा सोंठ है । पत्ते लंबे बड़े-बड़े होते हैं । फूल केलई बालियों में लगते हैं, फूल का ओष्ट फालसई रंग का होता है ।

अफ्रीका में अदरक हृदय रोग (एंजाइना) में प्रयोग होता है । वेस्ट इंडीज में अदरक मलेरिया में देते हैं ।

10. **ट्रीडाक्स प्रोकुंबेंस** - Tridax procumbens Linn.

टिक्कीटोपला, कुल बुस्कड ।

रूईदार, भूमि पर फैलता पौधा, पत्ते दंतुर, फूल पीले, शाखाओं के शीर्ष पर गुच्छों में लगते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अफ्रीका में पत्ते मलेरिया में तथा समूचा पौधा रक्तचाप में प्रयोग होता है ।

11. **बालानीटेस रॉक्सबर्गिई** - Balanites roxburghic Pl. (B. aegyptiaca)
हिंगोट, इंगुदी, हींगन, हिंगो ।

कंटीले छोटे वृक्ष अथवा क्षुप, पत्ते दो पर्णक वाले, फूल केलई जैसे रंग के तथा फल भूरे गूदेदार होते हैं ।

अफ्रीका में पौधा मलेरिया में और छाल एंजाइ हृदयरोग में प्रयोग होता है ।

12. **बोएरहाविआ डीफ्फूसा** -Boerhaavia diffusa Linn.
विषखोपरा, ठीकरी, पुनर्नवा, सांठी ।

भूमि पर फैला बहुशाखित पौधा है । पौधे पर ग्रंथियां होती हैं । शाखाएं फालसई रंग की होती हैं। फूल फालसाई रंग के, कई-कई एक साथ गुच्छों में लगते हैं ।

13. **मांगीफेरा इंडिका** - Mangifera indica Linn.
आम, कैरी, रसाल ।

आम सुपरिचित वृक्ष है । पत्ते लंबोतरे; फूल केलई, बड़े-बड़े गुच्छों में लगते हैं । फल गूदेदार सुपरिचित फल है ।

अफ्रीका में पत्ते रक्तस्राव हेतु तथा मूल और पत्ते मधुमेह में उपयोगी मानते हैं ।

14. **मेलिआ आजेडाराक**- Melia azedarach Linn.
बकायन-नीम, महानीम, डेकना, नीम ।

यह बड़ा वृक्ष है । फूल गुलाबी-हल्के फालसई से बड़े गुच्छों में लगते हैं । फल छोटे लगभग 1.2 से 2 सेमी व्यास के गूदेदार होते हैं ।

15. **सीस्साम्पेलॉस पारेइरा** -Cissampelos pareira Linn.
काली-पहाड़, अकौदि, दुखनिर्बिसी, हड़जोरी ।

रोंएदार, वल्लरी पौधा है । पत्ते हृदयाकार, लंबे-डंठलों पर लगते हैं । फूल केलई, पीले तथा फल लाल, घनके रोएंदार होते हैं ।

16. **सेसालपीनिआ बोन्डुक**-Caesalpinia bonduc Roxb.
करंजुवा, कटकरंज ।

यह कंटीली मोटी लता है, शाखाओं पर कांटे होते हैं । फूल पीले होते हैं । पके फलों पर छोटे-छोटे अनेक कांटे होते हैं । पौधा कभी-कभी क्षुप का आकार भी ले लेता है ।

वेस्ट इंडीज में इसके बीज मधुमेह में तथा बढ़े रक्तचाप में प्रयोग करते हैं ।

ऊपर जिन रोगों की चर्चा पर टिप्पणी की गई है उनकी वर्णक्रमानुसार सूची नीचे दी है । पौधों की संख्या भी दी गई है :-

कुष्ठरोग : 8, गर्भधारण : 5, गर्भनिरोधक : 6, गर्भपातक : 1,8, पीलिया : 8, मधुमेह : 1,2,4,6,12,13, 15, 16, मलेरिया : 3,6,8,9,10,11,14, यकृत : 14, रक्तचाप : 4, 6, 7, 8, 10, 13, 15, हृदय रोग : 9, 11

कुछ पौधों के प्रयोग पर मूल साहित्य में उनकी मात्रा आदि का ब्यौरा भी मिलता है । जिन पाठकों को शोध के लक्ष्य से इसकी आवश्यकता होगी, दो-चार पौधों पर वह जानकारी भेजी जा सकती है (फोटोकापी आदि का व्यय देय होगा) ।

आभार :- भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, नई दिल्ली ने इस शोध हेतु कुछ सहायता दी है । लेखक अकादमी का आभारी है ।

मुख्य संदर्भ :-

1. Ayensu, A.E. 1978, Med, Pl.W. Alrica
2. Ayensu, A.E. 1981, Med.Pl. W. Indies.
3. Boulos, L. 1983, Med.Pl.N.Africa.
4. Jain, S.K., 1991, Diction Indian Folkmedicine & Ethnobotany.
5. Jain, S.K., & Da Filipps, R.A., Med. Pl. India (2 vols).
6. Newinger, H.D., 2000, African Trad. Med.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंशुघात (लू लगना)

डा० एस०के० श्रीवास्तव, बी.ए.एम.एस. आयुर्वेदरत्न

आधुनिक चिकित्सक इसे सनस्ट्राक या हीटस्ट्राक कहते हैं । लू प्राय: उन व्यक्तियों को आक्रान्त करता है जो उष्ण प्रदेशों में रहते हैं और निरन्तर बिना जूते तथा छाते के घूमते हैं, दुर्बल व्यक्ति धूप में अधिक चलते हैं खासकर जो उष्ण प्रदेशों में कैदी होते या पहरेदारी करते हैं । ऐसे लोगों पर लू का प्रकोप अधिक होता है । साथ ही जो व्यक्ति खस के पर्दे लगे कारों, कूलर आदि अन्य प्रकार से ठंड किये गये स्थान से एकाएक तेज धूप में बाहर निकल पड़ते उन्हें भी लू लग जाती है । लू लगने का अर्थ है शरीर की तरलता एवं स्निग्धता का एकाएक सूख जाना । सूर्य की किरणों के आघात से शरीर का जलीय अंश शोषित हो जाना ही लू लगना कहा जाता है ।

उष्ण कालीन सूर्य की किरणों से वायु संतप्त होकर पित्त का उल्वण (वृद्धि) करता है, और शरीर का प्रधान अङ्ग उत्तमाङ्ग (सिर) सन्तप्त हो जाता है । फलत: विनाशकारी लू मानव शरीर को आक्रान्त करता है, इसे आयुर्वेदीय शास्त्रों में अंशुरातज ज्वर कहा गया है ।

अंशुघात के लक्षणों को तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है –

1. प्रथमावस्था- इसे शीतावस्था भी कहते हैं ।

इसमें त्वचा विवर्ण, मूर्च्छा, काम, दौर्बल्य, नाड़ीगति तीव्र होना आदि लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं । इस अवस्था में प्रतिकार होने से रोगी बच सकता है ।

2. द्वितीयावस्था - इसे साधारण भी कहते है । इसमें रोगी में अत्यधिक पीड़ा, त्वचा की शुष्कता, शरीर में तीव्र संताप, नाड़ी की गति अति चंचल साथ ही हृदय और श्वांस की गति दुर्बल एवं क्षीण मिलती है ।

3. तृतीयावस्था - यह अवस्था तीव्रावस्था से जानी जाती है । इसमें अत्यधिक श्वास कष्ट, प्रलाप, मुखाकृति श्वास संयास, नाड़ी स्पन्दन क्षण-क्षण लुप्त होना, हाथ पैर का भी नीला होना - आक्षेप आदि लक्षण मिलने लगे तो समझना चाहिए कि रोगी प्राय: शायद ही बचेगा ।

आधुनिक मतानुसार मूत्र में अल्ब्युमिन इण्डिकेन और कीटोन, अधिक आने लगते हैं । साथ ही गुदा प्रदेश में 108 से 112 डिग्री फारनहाइट तापक्रम मिलता है । कभी-कभी उग्र वमन, अतिसार जो कालरा का भ्रम करता है आदि-आदि लक्षण उपस्थित होते हैं ।

उपचार :- लू से अक्रान्त रोगी को सर्व प्रथम वस्त्रादि से अनावृत कर सुखद मुलायम गुदगुदे शैय्या पर शीघ्र लिटा देना ही उचित है, तदोपरान्त जल सिचिंत कर खस के पंखे या ताड़ के पंखे से हवा देते हुए शीतल जल अथवा नारियल के पानी से परिषेक/देह पोंछना आदि करना चाहिये । प्यास लगने पर सहसा शीतल जल नहीं देना चाहिये, अपितु चन्दन, उशीर, खस आदि से युक्त शीतल जल का प्रयोग किया जाय । यदि रोगी को कोष्ठबद्धता (कब्ज) हो तो उसे तत्क्षण दूर करें ।

चिकित्सा :-

1. नीबू का शर्बत और संतरे का शर्बत समान भाग जल में मिलाकर दिया जा सकता है ।
2. एलादि चूर्ण 4 माशा मिश्री 2 माशा शहद में मिलाकर चटाएं । ऊपर से गुलाब का शर्बत पिलायें ।
3. रतनेश्वर रस - 1 गोली शहद में मिलाकर चटायें । ऊपर से कपूरासव दिया जाय, इससे शीघ्र लाभ मिलता है ।
4. पित्त पापड़ा अर्क एवं केबड़ा शर्बत समान भाग तीनगुने जल में मिलाकर दिया जा सकता है ।
5. अर्क गुलबनफ्शा एवं चन्दन अर्क प्यास लगने पर बराबर भाग में मिलाकर देना श्रेयकर है ।
6. प्याज का रस निकालकर तत्काल रोगी को देना चाहिए ।
7. कच्चे आम कों आग में भूनकर ठंडा होने पर हाथ से मसलकर मीठा या सैंधानमक, कालीमिर्च डालकर शर्बत बनायें, फिर पिलायें ।
8. पके मीठे अनार को अग्नि पर पकावें, जब रस शेष रहे तो उसके समभाग जल और 1/2 गुना चीनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिला कर शर्बत बना लें, इस शर्बत से दाह एवं प्यास शान्त हो जाती है ।

9. पके मीठे अनार को अग्नि पर पकावें । जब स्वयं शीतल हो जाय तो उसका रस निकाल लें । इस रस में दस गुना शहद मिला कर पिलायें ।
10. लहसुन के एक जवे को कुचलकर एक पाव दूध में उबाल लें । धीरे-धीरे पीने से लू समाप्त हो जाती है ।
11. 60 ग्राम नीबू का रस, 30 ग्राम शहद, 30 ग्राम पानी मिलाकर पिलाने से लू समूल नष्ट हो जाती है ।
12. ककड़ी के बीज, सेन्धा नमक, त्रिफला समान मात्रा लेकर चूर्ण बना लें, आवश्यकतानुसार ताजे पानी के साथ एक माशा सुबह शाम दें ।
13. मुखमंडल, गले एवं सीने पर श्रीखण्ड चन्दन का लेप करते रहें, साथ ही नारियल का पानी का सिंचन भी करते रहना चाहिये ।
14. खस का शर्बत तथा गिलोय का शर्बत एवं कपूरासव तीनों को समभाग मिलाकर ऊपर से दो गुना जल डालकर पिलायें । दाह प्यास तुरन्त शान्त हो जाती है ।
15. अनन्त मूल, चोपचीनी, मजीठ, गिलोय 6 माशा रक्त चन्दन, गुलबनप्सा, गोरखमुण्डी, शाहतरा, कमल के फूल, गुमा, पद्माख और शखाहूली, प्रत्येक समान भाग लेकर इनका जौ कूट चूर्ण बना लिया जाय । इसमें से एक तोला लेकर रात में क्वाथ बना लिया जाय, इस क्वाथ को मिट्टी के बर्तन में डालकर एक सुरक्षित स्थान में बालू रखकर ऊपर से क्वाथ वाले मिट्टी के बर्तन को रख दिया जाय । तत्पश्चात् प्रातः उसे रोगानुसार दिया जाय ।
16. कालीमिर्च, जीरा, धनिया, पुदीने की पत्तियां, काला एव सैंधानमक, 5-5 ग्राम लेकर चूर्ण बना लें । इस चूर्ण को आधा लीटर दूध, कागजी नींबू एवं लौंग 2-2 और जरा सी हींग सब को अच्छी तरह फैंटकर पी लेंवे तो लू तत्काल समाप्त हो जायेगी ।

जहां तक हो तेज धूप से बचना चाहिये ।

परीक्षा के समय आपके लाड़ले को जरूरत है एकाग्रता और अधिक कार्यक्षमता की

आपके लाड़ले का उज्जवल भविष्य आपका सपना है । पर आज की तीव्र प्रतिस्पर्धा व पढ़ाई का बोझ आपके लिए चिंता का विषय भी है । ऐसे माहौल में आपके बच्चे को जरूरत है एकाग्रता व समझने की क्षमता की, उसे जरूरत है बैद्यनाथ शंखपुष्पी की, तो आज ही से अपने लाड़ले को दीजिए ...

बैद्यनाथ

शंखपुष्पी

शरबत

आज हररोग और वर्षभर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"वोर ठेकेरा" आसाम क्षेत्र की प्रवाहिका एवं ग्रहणी रोग की निवारण औषधि एवं वानस्पतिक अध्ययन

डॉ० राजेश कुमार मुड़ईया
डॉ० राजेन्द्र मजुमदार

आसाम पूर्वोतर क्षेत्र में स्थित एक प्रदेश, जिसकी राजधानी दिसपुर है । वोर ठेकेरा का वृक्ष खासतौर पर आसाम के निचले हिस्से में पाया जाता है मुख्यतया: जिला कामरूप, जिला नलवाड़ी, जिला वारपेटा में । आसाम के जनजाति वर्ग प्राय: अपने घर में लगाते हैं । इसके लगाने का मुख्य उद्देश्य इसके फल का सेवन करना, साथ ही प्रवाहिका एवं ग्रहणी दोष होने पर इसका सेवन कर दोष मुक्त होना है । लेखक को यहाँ एक वर्ष के वनौषधि सर्वेक्षण के दौरान इस विलक्षण औषधि की जानकारी मिली, जिसका विस्तृत वर्णन इस प्रकार है ।

वानस्पतिक अध्ययन से पता चला कि यह वृक्ष गट्टीफेरी कुल (Guttiferae) का है तथा इसका वानस्पतिक नाम गारसीनिया पेडंनक्यूलेटा रोक्स (Garcinia pedunculata Roxb.) है । यह एक बहुवर्षीय वृक्ष है । इसकी लम्बाई 40-60 फुट तक होती है, इसकी पत्तियाँ 6-12 इंच तक लम्बी एवं लट्वाकर होती हैं । पुष्प हल्के हरे-पीले रंग के होते हैं, फल 3-4.5 इंच के वृत्ताकार, अंडकार एवं गूदेदार होते हैं । प्रत्येक फल में 8-10 बीज होते हैं । इसका पुष्पकाल दिसम्बर से फरवरी तक का होता है, जब कि फल का कार्यकाल मार्च से जुलाई तक का होता है ।

ठेकेरा का फल मई-जून में पककर तैयार हो जाता है, फल को तोड़कर इसके लम्बे-लम्बे टुकड़े कर लिये जाते हैं, उन्हें धूप में सुखाकर बन्द डिब्बे में संग्रह कर लिया जाता है । संग्रह करने से पहले सूखे हुये फल को सरसों का तेल एवं नमक लगा देते हैं, जिससे फफूंदी न लगे । जितना पुराना सूखा हुआ फल होगा उतना लाभदायक होगा ।

बाजार में दो प्रकार के सूखे हुये फल मिलते हैं, पहला वोर ठेकेरा (Garcinia pedunculata Roxb.) और दूसरी कुजी ठेकेरा (Garcinia cowa Roxb.), दोनों ही फल लाभदायक हैं, लेकिन वोर ठेकेरा का फल ज्यादा लाभदायक है, और इसे का दवाई के रूप में प्रयोग किया जाता है ।

सूखे हुये फल का पहला उपयोग आसाम में सब्जी के रूप में किया जाता है । मछली के साथ पकाने से यह काफी स्वादिष्ट होता है । दूसरा उपयोग जीर्ण प्रवाहिका एवं ग्रहणी दोष में इसका उपयोग किया जाता है । खासतौर से बच्चों की प्रवाहिका एवं ग्रहणी दोष होने पर ।

सूखे हुये फल का एक टुकड़ा रात में एक गिलास स्वच्छ पानी में डुबाकर रख दें, प्रात:काल इस पानी का रंग हल्का पीला हो जायेगा । बिना कुछ खाये इस पानी का सेवन करने से जीर्ण प्रवाहिका एवं ग्रहणी दोष शत-प्रतिशत ठीक हो जाता है । इस पानी का सेवन पन्द्रह दिन तक लगातार करना है । इसके बाद पानी नहीं पीना है ।

आवश्यकता इस बात की है कि इस औषधि का पूर्ण रासायनिक विश्लेषण किया जाय ताकि इसके फल में पाये जाने वाले रासायनिक तत्व को पहचान कर इसकी दवा बाजार में लाई जा सके जिससे इस देश में ग्रस्त जीर्ण प्रवाहिका एवं ग्रहणी दोष मरीजों का इलाज सम्भव हो सके ।

उपरोक्त जानकारी संग्रहित करने हेतु लेखक डा०जी०एस०लवेकर, निर्देशक, केन्द्रीय आयुर्वेदिक एवं सिद्ध अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली का आभार व्यक्त करता है ।

क्षेत्रीय आयुर्वेद अनुसंधान संस्थान, वोरसोजाई, वेलतला, गुवाहाटी - 28

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काली खाँसी एवं उपचार (Whooping Cough & Treatment)

*डॉ० एस०डी० शर्मा, एम.डी.(कौमारभृत्य)पीएच.डी.
**डॉ० विवेक राणा

यह बालकों में पाई जानेवाली एक प्रमुख व्याधि है । यह रोग अपने विशिष्ट लक्षण ''कास के दौरे एवं विशिष्ट ध्वनि कुत्ते के भौंकने के समान आवाज (Whoop) से पहचाना जाता है ।''

इसे ''Cough of hundred days'' भी कहा गया है ।

आयुर्वेद विज्ञान में इस व्याधि का वर्णन बाल ग्रह रोगों के अन्तर्गत श्वग्रह के रूप में मिलता है जिसके लक्षण आचार्य वाग्भट्ट ने निम्नवत बताये हैं :-

''कम्पो हृषितरोमत्वं स्वेदश्चक्षुर्निमीलनम ।
बहिरायामनं जिह्वादशोऽन्तः कण्ठकूजनम् ॥
धावनं विट्सगन्धत्वं क्रोशनं च श्वच्छुनि ।''

(अ.हृ.उ. 3/15-16)

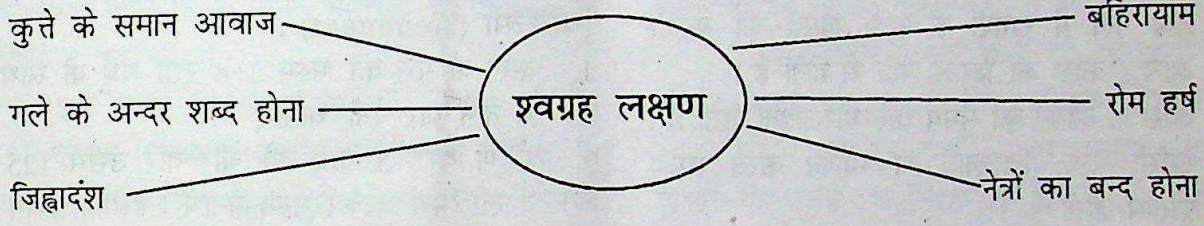

आधुनिक मतानुसार यह श्वसनवह संस्थान की तीव्र संक्रमणजन्य व्याधि है । रोगोत्पत्ति का मुख्य कारण Bordetella Purtusis माना गया है । इससे ग्रसित बालक में नाक, गला, स्वरयंत्र एवं श्वसनिका श्लेष्मकला का शोथ तथा श्लेष्मा का स्राव मिलता है । घर में एक बालक को यह रोग होने पर अन्य भी इससे ग्रसित हो सकते हैं । रोग का प्रसार खांसने, छींकने व थूकने से होता है ।

यह व्याधि किसी भी वय में हो सकती है परन्तु 1 से 5 वर्ष तक की आयु वाले बच्चों में अधिक पाई जाती है । शीत एवं बसन्त ऋतु में यह रोग अधिक होता है । संक्रमण होने के 8 दिन बाद लक्षण प्रारम्भ होते हैं । खांसी प्रारम्भ होने के 20 दिन बाद तक इसका रोगी दूसरे को संक्रमित कर सकता है ।

सामान्य लक्षण :Clinical Feature

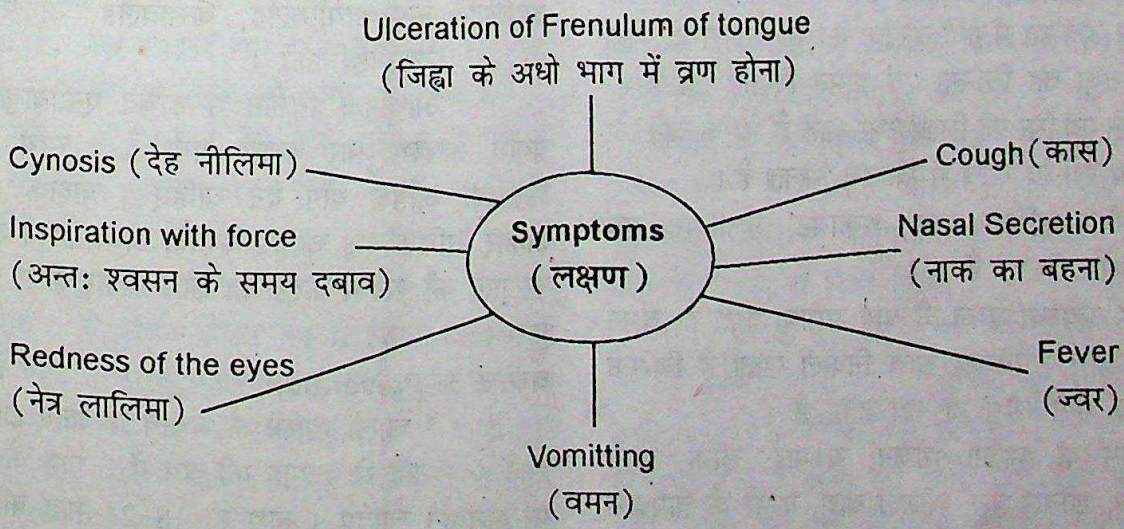

* रीडर एवं विभागाध्यक्ष, कौमार भृत्य विभाग ** तृतीय व्यावसायिक (अध्येता)
श्री बाबा मस्तनाथ आयुर्वेद महाविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लक्षण के आधार पर इस व्याधि को 3 भागों में विभक्त किया गया है :-

1. प्रसेकी अवस्था (Catarrhal Phase)
2. आवेग अवस्था (Proxymal or Spasmodic Phase)
3. प्रशमा अवस्था (Convulscent Stage)

1. **प्रसेकी अवस्था** - यह अवस्था 10-12 दिन की मानी गयी है । इस अवस्था में संक्रमण होने की सम्भावना सबसे अधिक होती है । इस अवस्था के निम्न लक्षण होते हैं :-
   * नाक का बहना (प्रतिश्याय), अश्रुस्राव, ज्वर, वमन तथा गले में खराश के साथ खांसी का बराबर आना । कास का प्रारम्भ रात्रि से होता है ।
   * कास के आवेग का समय धीरे-धीरे बढ़ता जाता है ।
   * खांसी प्रायः चिल्लाने या भोजन करते समय प्रारम्भ होती है ।
2. **आवेग अवस्था** - यह अवस्था 2-4 सप्ताह की मानी गयी है ।
   * इस अवस्था में खांसी के वेग का समय व तीव्रता बढ़ जाती है ।
   * खांसी के 5-10 वेग आने के कारण फेफड़ों में संचित वायु बाहर निकल जाती है, परिणामस्वरूप रोगी का दम घुटने लगता है । तदुपरांत रोगी द्वारा दीर्घ श्वास खींचने के कारण स्वर यंत्र (Larynx) में संकोच होने से विशिष्ट ध्वनि Whoop निकलती है ।
   * इस अवस्था में रोगी बालक का मुख लाल हो जाता है तथा वह चिन्तित एवं भ्रमित दिखाई देता है ।
   * गर्दन एवं सिर की सिराएं उभर आती हैं, नेत्र के चारों ओर शोथ एवं नेत्र कला में रक्तस्राव मिलता है ।
   * पसीना अधिक आना, थकावट, जलाल्पता एवं आक्षेप मिलते हैं ।
   * यह अवस्था वमन के बाद समाप्त होती है, वमन के द्वारा श्लैष्मिक स्राव निकल जाता है जिसके द्वारा मार्गावरोध हो रहा होता है ।
   * कास के आवेग भोजन, जम्भाई, छींक, पानी पीने, शीतल पेय, शीतल वायु, कमरे के तापक्रम में बदलाव आदि से प्रारम्भ होते हैं ।
3. **प्रशमावस्था**- यह अवस्था भी 2-4 सप्ताह की होती है । प्राणवह स्रोतस के उपद्रव होने पर इस अवस्था की अवधि बढ़ भी सकती है ।
   * कास एवं वमन के वेग क्रमशः कम होने लगते हैं।
   * बालक को भोजन में रुचि होने लगती है ।

रोग विनिश्चय (Diagnosis) :

1. रक्त में श्वेत रक्त कणिकाएं (WBC) बढ़ी हुई मिलती हैं तथा ESR कम मिलता है ।
2. शीघ्र रोग विनिश्चय के लिए फ्लोरसेन्ट एन्टीबाडी जांच करवाते हैं ।

चिकित्सा (Treatment) :

1. केले के पत्ते की भस्म 2-4 रत्ती मधु के साथ दिन में तीन बार देनी चाहिए ।
2. सेहुण दण्ड 5 ग्राम को चीर कर उसमें 125 ग्राम काली मिर्च भरकर भस्म बनायें । इसका प्रयोग 2-2 रत्ती की मात्रा में मधु के साथ दिन में 3 बार करायें।
3. इसके अतिरिक्त निम्न औषध योगों का प्रयोग चिकित्सक की देखरेख में करना चाहिए:-

चुर्ण - बालचर्तुभद्र चूर्ण, मुलेहठी चूर्ण, पुष्करादि चूर्ण, सितोपलादि चूर्ण, तालीशादि चूर्ण ।

भस्म - टंकण भस्म, स्फटिक भस्म, गोदन्ती भस्म, अभ्रक भस्म, श्रृंग भस्म ।

रस - बालार्क रस, बालरोगांतक ।

क्षार - अपामार्ग या यवक्षार ।

अवलेह- कण्टकार्याविलेह, वासावलेह, अगस्तहरीतकी, व्याघ्रीहरीतकी ।

आधुनिक विज्ञान में उचित एन्टीबायोटिक का प्रयोग अवस्थानुसार बताया गया है । साथ ही कफ निसारक औषध योग देने चाहिए । बालक को तरल आहार अधिक देना चाहिए क्योंकि अर्धघन/घन आहार देने पर गले की श्लेष्म कला का क्षोभ होकर कास के आवेग प्रारम्भ हो सकते हैं ।

बचाव :- Prevention

* काली खांसी के बचाव के लिए DPT के 3 टीकें 6 सप्ताह से 9 माह की वय में 1 माह के अन्तराल पर लगवाने चाहिए । साथ ही 18-24 माह की उम्र पर एक खुराक और देते हैं जिसे बूस्टर मात्रा कहते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बौद्ध युग के महान वैद्य जीवक "

130986

वैद्य दक विभूषित

130986

जीवक नामक महान आयुर्वेदज्ञ एवं चिकित्सक बौद्धकाल का माना जाता है जो दो हजार वर्ष पूर्व का है। आज कल जिसे बिहार प्रान्त कहा जाता है, उस समय मगध के राजाओं के अधीन था। वहां गण राज्य था। लगभग सोलह जनपदों को मिलाकर मगधगणराज्य बना था। उन्हीं में एक राजगृह (राजगिरि) था, जिसके राजा (सम्राट) बिम्बिसार थे। राजा बिम्बिसार की राजधानी राजगृह थी। उनके ही समय में गौतम सिद्धार्थ (गौतमबुद्ध) भी बोधिसत्व प्राप्त करके अपने धर्मचक्र का प्रवर्तन करते हुए विचरण कर रहे थे।

उस समय मगधगणराज्य की परम्परा थी कि राज्य में जनपद कल्याणी अर्थात् एक प्रधान गणिका के चुनाव करने की। उस चुनी हुई गणिका को ही जनपद कल्याणी कहा जाता था। उक्त समय की जनता ने 'सालवती' नाम की जो अपूर्व सुन्दरी होते हुए भी नृत्य, संगीत तथा वाद्यों के प्रयोग में अद्वितीय थी, को चुना। वह गणिका थी ही गर्भवती हो गई। अपने गर्भवती होने की बात उसने गोपनीय रखी। अपने आप को अस्वस्थ बताकर लोगों से मिलना-जुलना बन्द कर दिया। समय-आने पर उसने एक पुत्र (लड़का) पैदा किया। उस नवजात शिशु को 'सालवती' ने दासी के द्वारा बाहर फिकवा दिया। कहा जाता है -

जाको, राखे साइयाँ मार सके ना कोय।
बाल न बाँका कर सके जो जग बैरी होय॥

संयोग की बात है कि उस समय उसी पथ से ही होकर राजकुमार युवराज अभय गुजर रहे थे। अकस्मात उनकी दृष्टि से बच्चा बच न सका- आश्चर्य से उन्होंने देखा कि एक सुन्दर नवजात शिशु गर्भ में पड़ा है। दया ने जोर मारा। वे द्रवित होकर नवजात शिशु को अपने साथ उठा लाए। उसके पालन का पूर्ण प्रबन्ध किया। बच्चे का व्यवस्थित पालन-पोषण होने लगा। होनहार विरवान के होत चिकने पात। बोली किंवदन्ती चरितार्थ हुई, वह बालक दिन दूना रात चौगुना बढ़ने लगा। राजकुमारों की तरह पालन-पोषण होने के कारण उसमें विलक्षणता आने लगी।

राजकुमार अभय ने उसका नामकरण किया। उस बालक का नाम "जीवक" रखा गया। संस्कृत में जीवक का अर्थ है - उत्सृष्टो विजीवति अर्थात् असहाय छोड़ दिये जाने पर भी जीवित रहता है उसे जीवक कहते हैं। इस प्रकार उस शिशु का नाम जीवक सिद्ध हुआ। उसका पालन-पोषण एक राजकुमार द्वारा हुआ। इस कारण उसका उपनाम "कौमारभृत्य हो गया" और उसे लोग जीवक कौमार भृत्य नाम से जानने लगे।

उस समय गान्धार राज्य की राजधानी तक्षशिला थी, जो कला कौशल और विद्या के क्षेत्र में सर्वश्रेष्ठ मानी जाती थी। दूर-दूर देशों से राजकुमार और ब्राह्मण कुमार-वेदाभ्यास, धनुर्विद्याभ्यास एवं शासन सीखने हेतु तक्षशिला आते थे। तरूण वैश्यपुत्र, शिल्पकला तथा अन्य व्यवसाय की उच्च शिक्षा के लिए तक्षशिला आते थे।

समय आने पर जीवक को भी शिक्षा प्राप्त करने के लिए तक्षशिला भेजा गया। जीवक कौमारभृत्य ने आयुर्वेद का अध्ययन तक्षशिला विश्वविद्यालय में किया। शिक्षा समाप्त होने के पश्चात् "जीवक" के आचार्य ने उनकी परीक्षा लेने का विचार किया और उन्होंने जीवक की परीक्षा ली। आचार्य ने जीवक से कहा कि तक्षशिला के चारो ओर पाँच-पाँच मील जाकर देखो कि कौन-सी औषधि अनुपयोगी है, अर्थात् किस औषधि में औषधीय गुण नहीं है। उस औषधि को लाकर मुझे दो। जीवक ने आचार्य के आज्ञानुसार सब क्षेत्र घूम-घूम कर देखा और आकर गुरु (आचार्य) से कहा कि मुझे कोई भी वनस्पति ऐसी नहीं मिली जो अनुपयोगी हो। आचार्य प्रसन्न होकर उन्हें शिक्षाश्रम से विदा किया।

जीवक जब शिक्षा पूर्ण कर मगध लौट रहे थे तो मार्ग में साकेत नगरी पड़ी। साकेत को ही आज अयोध्या कहा जाता है। जीवक को शाकेत में ठहरना पड़ा। वहाँ के एक प्रसिद्ध श्रेष्ठ की पत्नी कई वर्षों से बीमार थी और उसके शिर की पीड़ा असाध्य हो गई थी। जीवक को पता चला तो वे उसके उपचार करने के लिए श्रेष्ठी

46/11, विष्णुपुरी, नवाबगंज, कानपुर - 208002

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के घर स्वयं गए । उन्होंने श्रेष्ठी की पत्नी को देखा और एक घृत तैयार किया । श्रेष्ठी की पत्नी को नाक द्वारा वह घृत पिलाया गया । मात्र तीन दिन के प्रयोग करने से श्रेष्ठी की पत्नी को आराम मिल गया । श्रेष्ठी अतीव प्रसन्न हुआ और वैद्य जीवक को सोलह हजार कार्षापण, (वहां का सिक्का) रथ, दास, दासी, भेंट (उपहार) के रूप में दिये । वैद्य जीवक को यह प्रथम चिकित्सा थी ।

आगे चलकर अत्यन्त असाध्य रोगों के उपचार (चिकित्सा) किए । उन्होंने जिनका उपचार किया उनमें सम्राट बिम्बिसार अवन्ती के नरेश चण्ड प्रद्योत और भगवान बुद्ध का नाम भी उल्लेखनीय है, तथा अन्य कई मुख्य-मुख्य लोगों की उन्होंने सफल चिकित्सा की थी ।

सम्राट बिम्बिसार को भगंदर रोग हो गया था । रक्तस्राव के कारण राजा का अर्न्तवासक खराब हो जाते थे जिसके कारण अन्त:पुर में रानियां परिहास करती थीं । एक तो असाध्य रोग, उस पर परिहास के कारण अपने को राजा अपमानित समझते थे और दु:खी रहते थे । राजकुमार अभय को पता चला तो उन्होंने अपने वैद्य जीवक को सम्राट की चिकित्सा के लिये कहा । जीवक द्वारा निर्मित औषधि के एक ही बार के लेप से सम्राट पूर्ण रूप से रोग मुक्त हो गये । प्रसन्न होकर सम्राट ने वैद्य जीवन कौमारभृत्य को राजवैद्य नियुक्त कर अभूत अचल सम्पत्ति देकर सम्मानित किया । राजगिरि का नगरश्रेष्ठी काफी लम्बे समय से अस्वस्थ था । उसने सुयोग्य चिकित्सकों से उपचार कराया परन्तु उनकी चिकित्सा से वह निरोग न हो सका । जिन वैद्यों ने उसकी चिकित्सा की उनमें से किसी ने कहा कि श्रेष्ठी केवल पाँच दिन जिन्दा रहेगा, किसी ने कहा कि मात्र सात दिन ही श्रेष्ठी जीवित रहेंगे ।

अन्त में सम्राट ने अपने नगरश्रेष्ठी की चिकित्सा के लिए युवा राजवैद्य जीवक से श्रेष्ठी की चिकित्सा के लिए कहा । वैद्य जीवक ने रोगी से कहा कि यदि आप को स्वास्थ्य लाभ हो जाय तो मेरा पारश्रमिक क्या दोगे ? दु:खी और हताश नगर श्रेष्ठी अपने जीवन के बदले में, अपनी समस्त सम्पत्ति राजवैद्य को बतौर पारश्रमिक देने का वचन दिया ।

उसके पश्चात् वैद्य जीवक ने कहा, श्रेष्ठी जी चिकित्सा करते समय क्या आप सात माह तक एक करवट लेटे रह सकेंगे और फिर सात माह उत्तान लेट रहना पड़ेगा । नगर श्रेष्ठी ने कहा आप जो कहेंगे, जैसे भी कहेंगे वैसा ही उतने दिन लेटा रहूँगा । जब श्रेष्ठी ने सात माह एक करवट तथा सात माह उत्तान या चित्त लेटे रहने का वचन दिया, उसके बाद जीवक ने चिकित्सा प्रारम्भ की ।

चिकित्सक जीवक ने नगर श्रेष्ठी को खाट पर लिटाकर बाँध दिया और अपने अनुसार उसकी खोपड़ी चीर कर दो कीड़े निकाले और सामने रख दिये; फिर मस्तिष्क साफ करके पुन: यथावत सिल दिया और औषधि लेप कर पट्टी कर दिया । श्रेष्ठी को दोनों कीड़े दिखाकर राजवैद्य ने कहा कि जिस वैद्य ने कहा था कि तुम केवल पाँच दिन ही जिन्दा रहोगे उसने ठीक कहा था क्योंकि उस चिकित्सक को केवल बड़े कीड़े का ज्ञान हो सका था और जिसने सात दिन की आयु बताई थी वह भी ठीक था क्योंकि उसे छोटे कीड़े का ही पता चल सका था ।

सात माह के स्थान पर केवल सात दिन के हिसाब से मात्र इक्कीस दिन में ही श्रेष्ठी निरोग हो गया। वायदे के अनुसार जब उसने राज्यवैद्य को अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति देनी चाही तो जीवक ने केवल एक लाख मुद्राये ही लीं ।

राजवैद्य जीवक कौमारभृत्य की शल्य क्रिया का प्रमाण और भी मिलता है । काशी नगरी में एक श्रेष्ठीपुत्र के उदर की आतों में गाँठे पड़ गईं । बहुत उपचार कराया परन्तु आराम न हुआ । जीवक ने उसे देखा । उदर को चीर कर आँतें बाहर निकाली, गाठों को काटकर निकाल दिया और आतों को पुन: यथावत रखकर सी दिया और श्रेष्ठीपुत्र स्वस्थ हो गया ।

वैद्य जीवक अपने समय के महान आयुर्वेदज्ञ माने जाते थे । कहा जाता है कि जीवक के पास दो ऐसी लकड़िया थीं जो वर्तमान समय में एक्स-रे (X-Ray)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि तरह काम करती थीं । उन लकड़ियों से ही उन्हें बहुत-कुछ मालूम हो जाता था । एक बार मगध सम्राट के शिर में पीड़ा हो रही थी । राजवैद्य ने परीक्षा की और उन्हें स्पष्ट पता चल गया कि अनजाने में कोई कनखजूरा का बच्चा नाक में घुस गया होगा और वहाँ का रक्त धीरे-धीरे पी रहा है । निदान हो गया । रोग को हटाने में कोई कठिनाई नहीं थी । वैद्य जीवक जान रहे थे कि जो भी दवा राजा की नासिका में डाली जायगी उससे कनखजूरा तो मर जायगा परन्तु राजा को अत्यन्त कष्ट होगा, जिसका प्रतिफल होगा, राजा चिकित्सक के ऊपर क्रोध करेगा और क्रोधित होकर उस वैद्य को दण्डित अवश्य कर देगा अत: वैद्य जीवक ने तत्काल एक युक्ति सोच ली और राजा से कहा-राजन् आप अपने यहाँ के सबसे तेज दौड़ने वाले घोड़े को मुझे देने की कृपा करें, मैं एक अत्यन्त आवश्यक कार्य हेतु जाना चाहता हूँ । एक घन्टे में मैं वापस आ जाऊंगा, तब तक आप दवा के प्रयोग से ठीक हो जायेंगे । राजा ने तुरन्त ही एक घोड़े की व्यवस्था कर दी । जाते समय कह दिया कि मेरे जाने के थोड़ी देर बाद यह दवा नासिका में डालियेगा और यह कहकर वैद्य जीवक घोड़े पर सवार होकर तेजी से भागा और अपने गन्तव्य स्थान पर पहुँच गया । घोड़े को एक सुरक्षित स्थान पर बाँधा और वहीं बैठ गया ।

वैद्य जीवक ने अपने पास से एक सेब निकाल कर उसके कई टुकड़े किये । एक टुकड़े में रोगोत्पादक (रोग पैदा करने वाला) दवा मिलायी और एक दूसरा टुकड़ा लेकर उसमें रोग शामक (नाशक) दवा मिलाकर रख लिया और अन्य टुकड़ों को धीरे-धीरे स्वयं खाना प्रारम्भ कर दिया और देखता जा रहा था कि कोई मेरे पीछे आ रहा है या नहीं ।

थोड़ी ही देर पश्चात् राजा का सेनापति स्वयं आ पहुँचा । वह अत्यन्त क्रोधित था । उसका कठोर रूख देख कर जीवक उसको देखने लगा । सेनापति क्रोध में वैद्य को डांटने लगा और बोला :- सम्राट को तुम कौन-सा विष (जहर) दिया है, वे बहुत ही छपपटा रहे हैं । चलो तुम्हें फाँसी अवश्य लगायी जायेगी । वैद्य जीवक ने कहा सेनापति जी ! जल्दी क्या है ? आप थोड़ा फल खा लीजिये तब चलेंगे । सेनापति को वैद्य की राय पसन्द आई और वैद्य से फल लेकर खाने के लिए मुख में डाला, परन्तु फल के टुकड़े को लेकर मुख में रखते ही सेनापति के हाथ-पाँव सुन्न पड़ गये, बोलती बन्द हो गई वह निढ़ाल होकर लेट गये । बेचारे की आंखों से आंसू बहने लगे । जीवक ने उन्हें शान्तिपूर्वक समझाया और प्रेमपूर्वक कहा । सेनापति जी मैंने आप को कोई हानि नहीं पहुँचायी, आप बहुत ही तैश और क्रोध में आये थे, मुझे मारते, पीटते चलते और इसके बाद आप को भी बहुत पछताना पड़ता । आप कुछ क्षण और विश्राम कीजिये । मैं जो कह रहा हूँ उसका प्रमाण आपको अभी मिल जायगा ।

आप के आने के बाद ही सम्राट स्वस्थ हो गए हैं और हमारे स्वागत के लिए उन्होंने कई प्रधान-प्रधान राज पुरुषों को भेजा है जो शान्ति पाठ करते हुए हम ले चलेगे । यह देखकर आप को अपनी अशिष्टता के कारण तकलीफ होती । आप को तकलीफ न होवे, इसलिये मैंने थोड़ी देर के लिए एक ऐसे रोग को उत्पन्न कर दिया है, जिससे आप किसी प्रकार की अशिष्टता न कर सके ।

इतने में सचमुच जीवक के स्वागत के लिए बहुत बड़ा समूह आ पहुंचा, तब जीवक ने दूसरा सेब का टुकड़ा सेनापति के मुख में डाल दिया जिसमें रोग शमन की शक्ति थी । सेनापति तुरन्त चंगा (ठीक) हो गये । हमने इस उदाहरण से देखा और इस निष्कर्ष पर आए कि औषधि को जीवनदायिनी और हानिकारक बनाने में वैद्य कितना सक्षम होता है और आवश्यकता पड़ने पर निर्माण करने में नहीं चूकता ।

इस प्रकार जीवक कौमारमृत्य का यश मगध के बाहर सभी जनपदों में फैलने लगा । बौद्ध ग्रन्थों एवं जातकों में जीवक के यश का विशद वर्ण मिलता है ।

बौद्ध ग्रन्थ महावग्ग की रचना आठ भागों में है । इस ग्रन्थ के आठवें भाग में उल्लिखित है कि अवन्ती का राजा चन्द्रप्रद्योत अस्वस्थ हो गया उसके निमंत्रण से मगध देश का प्रसिद्ध वैद्य जीवक कौमार भृत्य उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वास्थ्य प्रदान करने हेतु उज्जैन गया ।

प्रद्योत् अत्यन्त क्रोधी स्वभाव का था । उसके क्रोधी स्वभाव के कारण ही उसके नाम के आगे 'चन्द्र' विशेषण लगाया जाता था । इस बात से जीवक भी पूर्ण परिचित थे । राजा चन्द्रप्रद्योत को दवा देने से पहले जीवक जंगल में जाकर दवायें लाने के बहाने भगवती नाक की एक हथिनी पर बैठ कर वहाँ से भाग गया । इधर दवा के लेते (खाते) ही राजा प्रद्योत को भयानक उल्टी (कै) होने लगी । इससे उसे अत्यन्त क्रोध आया और उसने जीवक को पकड़ कर लाने की आज्ञा दी । परन्तु जीवक तो वहां से निकल चुका था । उसका पीछा करने के लिए राजा ने अपने काक नामक दास को भेजा । काक ने कौशाम्बी तक दौड़धूप कर जीवक को पकड़ लिया । तब जीवक ने उसे एक औषधियुक्त आँवला खाने को दिया जिससे काक की बड़ी दुर्गति हुई । फिर जीवक भद्दवती पर बैठ कर सकुशल राजगृह पहुंच गया । इधर प्रद्योत पूर्ण रूप से स्वस्थ हो गया । दास काक भी एक दम चंगा होकर उज्जैन पहुँच गया । बीमारी दूर हो जाने तथा पहले की तरह स्वस्थ होने के कारण प्रद्योत वैद्य जीवक से अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उसे उपहार स्वरूप देने के लिए शिवेयक नाम बहुमूल्य वस्त्रों का जोड़ा राजगृह भेजा ।

चिकित्सा के क्षेत्र में अपने अद्‌भुत गुणों के कारण सम्राट बिम्बिसार के बाद उनके पुत्र अजातशत्रु पर भी जीवक का प्रभाव यथावत बनाए रहे । जीवक के परामर्श से अजातशत्रु भगवान बुद्ध के प्रति सद्‌भाव बनाकर उनके दर्शनार्थ गए थे ।

दीग्घ निकाय, के सामन्नफल सुत्त में इस प्रकार वर्णत है कि : भगवान बुद्ध राजगृह में जीवक कौमारभृत्य के आम्रवन में बड़े भिक्षु संघ के साथ रहते थे । उस समय कार्तिक पूर्णिमा की रात्रि में अजातशत्रु अपने अमात्यों के साथ प्रसाद के उपरी कक्ष पर बैठे थे । वह बोले कि कितनी सुन्दर रात है । क्या यहाँ कोई ऐसा श्रवण या ब्राह्मण है जो अपने उपदेशों से हमारे चित्त को प्रसन्न कर दें ।

उस समय पूरणकस्सप, मकरवलिगोशाल, अजितकेशकंवल, वकुधकच्चायन, संजयवेलहयुत्त और विगंठनायपुत्त , ये सब प्रसिद्ध श्रवण अपने संघों के साथ राजगृह के आस-पास रहते थे । अजातशत्रु के अमात्यों ने क्रमशः उनकी स्तुति करके उनसे मिलने जाने के लिए राजा को राजी करने का प्रयत्न किया, परन्तु अजातशत्रु कुछ उत्तर न देकर चुप रह गए । उस समय जीवक कौमारभृत्य अजातशत्रु से बोले कि बुद्ध भगवान हमारे आम्रवन में बड़े भिक्षु संघ के साथ रहते है । आज महाराज उनमें भेट करें । उससे आप का चित्त प्रसन्न होगा ।

अजातशत्रु ने वाहन तैयार करने को जीवक को आज्ञा दी । उसके अनुसार जीवक ने सारी तैयारी की । तब राजा अजातशत्रु अपने हाथी पर बैठकर और अन्तःपुर की स्त्रियों को विभिन्न हाथियों पर बैठा कर बड़े-दल-बल-के साथ भगवान बुद्ध के दर्शन को चले ।

विनय पिटक के महावग्ग में ऐसा उल्लेख है कि भगवान बुद्ध कुछ अस्वस्थ थे और जीवक कौमारभृत्य ने उन्हें विरेचक औषधियों से स्वस्थ किया था ।

उपरोक्त उदाहरणों एवं प्रसंगों द्वारा वैद्य जीवक के असाधारण व्यक्तित्व पर प्रकाश पड़ता है । वैद्य जीवक को अपने जीवन में अनेक ऐतिहासिक पुरुषों का उपचार करने का अवसर मिला । यह उनके अद्वितीय गुण और अप्रतिम योग्यता का प्रमाण है ।

एक अनाथ जीवक लेकर ऐतिहासिक व्यक्तित्व बन जाने वाले वैद्य जीवक जैसा उदाहरण इतिहास में कम होंगे । आचार्य जीवक विरचित कोई संहिता उपलब्ध नहीं है, परन्तु स्वयं के अद्‌भुत चिकित्सा कौशल से उन्होंने अनगिनत मानवों को जीवन प्रदान किया । बौद्ध ग्रंथों में उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की गयी है । जातक कथाओं में उनके चिकित्सक जीवन और विलक्षण वृत्तान्त प्राप्त होता है । उनके अद्‌भुत व्यक्तित्व, औषधीय, चिकित्सकीय कौशल, शल्यदक्षता, मेधाविता, उदारता, धर्मप्रवणता आदि विशिष्ट गुणों की पहचान होती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधरंग (पक्षाघात, PARALYSIS)

वैद्य राम कुमार बिन्दल, वैद्याचार्य एम.डी.पी.एच.डी. (ए.एम.)
वैद्य रमेश कुमार बिन्दल, आयुर्वेद रत्न, एम.डी.एच.

सम्प्राप्ति : मिथ्याहार विहाराभ्याम, दोषाह्यामशाश्रमः बहिर्निरस्यकोष्ठाग्नि ज्वरदा स्य रसानुगा ।

यह रोग उपरोक्त मिथ्या आहार-विहार के कारण से व वायु तथा कफ की वृद्धि से वात कफ कुपति होकर और कभी-कभी वातपित्त कुपित होकर भी होता है । गीले, नमी युक्त व ठण्डे स्थानों में रहने से, अधिक ठण्डे पानी में काम करने से, गीले वस्त्र पहनने से, अधिक वात व कफ कारक भोजन करने से, नाड़ियों की कमजोरी से, दिमागी संतुलन बिगड़ने से, नसों व पट्ठों (स्नायु मण्डल) की शिथिलता से अथवा पान मसाला, गुटका, तम्बाकू आदि चबाने से वात कुपित होकर मस्तिष्क से संचालन अंगों का ठीक प्रकार से संचालन न होने के कारण अथवा मस्तिष्क में रक्त का दाब बढ़ने (ब्रेन हैमरेज) होने से अथवा मिरगी या आतशक के उपद्रव से भी यह रोग हो सकता है । अर्थात् उपरोक्त वर्णित अनेक कारणों में से किसी एक या दो-तीन कारणों से यह रोग हो सकता है । यह प्रायः अधेड़ावस्था व वृद्धावस्था में ही अधिकतर होता है । युवकों व बालकों में प्रायः कम होता है ।

लक्षण :-

अधरंग अथवा पक्षाघात में कई स्थितियां हो सकती हैं । रोग का प्रभाव अति तीव्र, मध्यम व हल्का हो सकता है व आंशिक हो सकता है अर्थात् केवल मुख मण्डल (चेहरा), या केवल आँख या केवल जबड़ा या केवल बाजू, बायां या दायां, केवल टाँग बाईं या दाईं अथवा सम्पूर्ण अर्धांग का अर्थात् पूरे बायें या दायें अंग का हो सकता है । इसमें भी उपरोक्त तीन प्रकार का तीव्र, मध्यम या हल्के प्रभाव का हो सकता है ।

तीव्र प्रभाव वाले में रोगी चल फिर नहीं सकता, चारपाई पर लेटे रहना पड़ता है, आवाज ठीक नहीं रहती, होती है । जबान तुतलाती है, पानी अथवा भोजन निगलने में कठिनाई, मुँह से बाहर निकल जाता है । प्रभावित अंगों में दर्द व शिथिलता होती है, नसों में तनाव, खिंचाव होता है, कम्पन होता है, स्मृति कम अथवा नाश हो जाती है, स्पर्श ज्ञान शक्ति कम अथवा नष्ट हो जाती है, अंगों में सुन्नता होती है, (कई रोगियों में दर्द नहीं होता । ये आमतौर पर असाध्य होते हैं ।) कभी-कभी प्रभावित अंग वाला भाग अत्यन्त ठण्डा व दूसरा भाग अत्यन्त गर्म हो जाता है, यह रक्त संचार की गड़बड़ी से होता है । प्रभावित अंग में रक्त संचार कम होता है और दूसरे अंग में बढ़ जाता है, इस कारण उपरोक्त स्थिति होती है । माध्यम व हल्के प्रभाव वाले व्यक्ति सहारे से या लाठी से या लंगड़ाकर चल पाते हैं, बाकी लक्षण रहते हैं, पाचन तंत्र बिगड़ा होता है, कब्ज रहती है, किसी-किसी को दस्त भी लग जाते हैं, किसी-किसी को मल का पता नहीं रहता । स्वतः कपड़ों में निकल जाता है । भोजन खाने में कठिनाई होती है, अधिक प्रभाव वाले भोजन नहीं खा पाते हैं, किसी तरह भोजन को कठिनाई से पिलाना पड़ता है । अत्यधिक प्रभाव वाले रोगियों को नाक से नली द्वारा तरल भोजन देना पड़ता है या गुदा से बस्ती द्वारा तरल भोजन देना पड़ता है । यदि तीव्र प्रभाव का रोग बाईं ओर हो तो इसका प्रभाव हृदय पर पड़ने के कारण रोग आमतौर पर असाध्य होता है और शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त होती है । दाईं ओर होने वाले मध्यम व हल्के प्रभाव वाले रोगी कष्ट साध्य होते हैं । अत्यन्त कमजोर, रुधिर, क्षय वाले, गर्भवती, प्रसूता व अत्यन्त बूढ़े कमजोर व्यक्तियों का अध रंग असाध्य होता है ।

आयुर्वेद में अधरंग की उत्तम चिकित्सा है । अनेक वैद्य इसकी उत्तम चिकित्सा करते हैं ।

सावधानियां :-

रोगी को ठण्ड व सीलन से पूरी तरह बचाना चाहिए, गर्म कमरे व गर्म शुष्क स्थान में रहना चाहिए, गर्म बिस्तर में सुलाना चाहिए, नहलाने का प्रयास न करना चाहिए, यदा-कदा कमरा बन्द करके हीटर लगाकर गर्म पानी के तौलिये से स्पंज करना चाहिए । अत्यावश्यक होने पर तेज गर्म पानी से नहलाना चाहिए । यदि रोगी बिस्तर पर ही रहता हो तो सावधानीपूर्वक करवट दिलवाना,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कपड़े साफ करना, कपड़े बदलना और अच्छी धूप में बिस्तर लगा देना चाहिए ।

अपथ्यः

दूध, दही, लस्सी, ठण्डी वस्तुऐं, शीतल पेय, आलू, उड़द, अरबी, चना, राजमाह, मटर, फूलगोभी, कढ़ी, चावल आदि नहीं देना चाहिए । रोगी को तनाव व मानसिक आघात से मुक्त रखना चाहिए ।

पथ्य :

मूँग, मसूर की पतली दाल, मूँग या बाजरे की खिचड़ी देसी घी के साथ, घिया, तोरी, पालक, मेथी, टिंडा, मूली, गाजर, शलगम, बैंगन आदि और फुलका सब्जी में भिगोकर अथवा चाय से ब्रैड या रस अथवा दूध में आयुर्वेदिक चाय डालकर साथ दें । इस रोग में देसी घी का प्रयोग लाभदायक रहता है ।

जब तक भूख, प्यास न हों तब तक खाना व पानी देना हानिकारक होता है ।

चिकित्सा :

यह रोग बड़ा कठिन कष्ट साध्य है । अतः सुयोग्य वैद्य की देखरेख व निर्देशन में ही चिकित्सा करनी चाहिए ।

यदि नये रोग में ज्वर हो तो पहले ज्वर की चिकित्सा करनी चाहिए ।

इस रोग में मल की आंतड़ियों में रूकने का लक्षण आमतौर पर होता है और मल के कारण मस्तिष्क व स्नायु मण्डल पर दबाव रहता है । अतः पेट साफ करने वाली औषधियां देनी आवश्यक है । परन्तु यह ध्यान रखना भी आवश्यक है कि दस्त न लगे और वृद्धों को तो दस्त लग कर अत्यन्त कमजोरी हो जाती है । पेट साफ करने हेतु शुद्ध एरण्ड तेल (कैस्टर ऑयल) 10 से 30 मिली (2 से 6 छोटे चम्मच) चाय में मिलाकर या दूध से देना चाहिए । जहां रोगी को पित्त वात के कारण कष्ट हो तो अमलतास की फली 100 ग्राम लें, इसका गुदा निकाल लें या ऐसे ही कूटकर 500 ग्राम जल में उबालकर जब 100 ग्राम रहे तो छान कर पिला दें अथवा महानारायण तेल 20 मिली उपरोक्त दूध या चाय में मिलाकर पिलाने से अत्यन्त लाभ होता है । महानारायण तेल पिलाना अधरंग में अमृत समान गुण करता है अथवा जब वैद्य के पास रोगी आवे और शीघ्र ही मल साफ करने की आवश्यकता हो तो तुरन्त लाभ हेतु रोगी को महानारायण तेल की बस्ती (अनिमा) देना चाहिए । इस हेतु 20/50 मिली महानारायण तेल पिचकारी से (सिरिंज) से गुदा में डालकर ऊपर से गर्म जल 200/500 मिली गुदा में चढ़ाना चाहिए । इस प्रकार शीघ्र ही पेट साफ होकर रोगी को अत्यन्त आराम मिलता है । यह प्रक्रिया कई दिनों तक कराई जा सकती है अथवा तेल के पश्चात् दशमूल क्वाथ का अनिमा देना चाहिए । यदि महानारायण तेल मूल्य के कारण प्रयोग न कर सकते हों तो शुद्ध एरण्ड तेल का प्रयोग करें । यदि रोगी वात पित स्वभाव वाला है जैसा कि ऊपर कहा गया है इस रोगी को अंगों- हाथ, पांव, सिर, कलेजे, शरीर अथवा मूत्र में दाह होती है तो उपरोक्त दस्तावर दवाऐं दूध से दें ।

इस रोग में मस्तिष्क की सफाई (तन की शिरोविरेचन) करना आवश्यक है । इससे दिमाग से विषैले द्रव्य निकलकर मस्तिष्क का संचालन ठीक होता है । इस हेतु इत्रिफल उस्तेखद्दूस 1-1 चम्मच (10 ग्राम) प्रातः-सायं गर्म जल से दें या अपामार्ग 10 ग्राम क्वाथ दें और कटफलादि नस्य देकर छींक देवें व रात्रि में षड्बिन्दु तेल नाक में डालें अथवा वचा, अपामार्ग की जड़ व मरिच तीनों लगभग 1-1 रत्ती (100-100 मिलीग्राम) बकरी के दूध में घिसकर नाक में टपकावें । इससे शिरोविरेचन होकर अधरंग में उत्तम लाभ होता है ।

आनन्द भैरव रस 1-1 गोली दो बार चूसने को दें ।

स्वर्ण महायोगराज गुग्गुलु 1-1 गोली दो बार खिलावें ।

स्वर्ण समीरपन्नगरस 1/2 रत्ती व सिद्धमकरध्वज स्पेशल (सोना मोती युक्त) 1/2 रत्ती मिलाकर एक बार प्रातः शहद से दें अथवा केवल स्वर्ण समीरपन्नगरस 1 रत्ती एक बार शहद से दें ।

अग्नि तुण्डी बटी 1-2 रत्ती भोजन के बाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दशमूलारिष्ट 25 मिली को जल में मिलाकर के साथ दें।

उपरोक्त सब दवाई साथ-साथ चलानी है न कि केवल कोई एक दवा। उपरोक्त दवायें इस रोग में सम्पूर्ण आराम कर देती हैं। अधिक दर्द रहने पर महावातविध्वंसन रस या वात विध्वंसन रस 2-4 रत्ती एक दो बार शहद या गर्म जल से दें या वृहत वात चिन्तामणि रस 1 रत्ती एक बार शहद से दें या रसराज रस शहद से दें। प्रभावित अंगों पर महानारायण तेल अथवा महामाष तेल अथवा विषगर्भ तेल की मालिश एक बार रात को करने से लाभ होता है।

इसके अतिरिक्त आवश्यकता होने पर विद्वान वैद्य अपने विवेक से माजून सुरंजान, अष्ट मूर्ति रसायन, योगराज गुग्गुलु, महायोगराज गुग्गुलु, सिंहनाद गुग्गुलु, रासनादि गुग्गुलु, अश्वगंधा पाक, शुद्ध कपिलु, वात कुलान्तक रस, वात गजांकुश रस, माजून योगराज, एकांगवीर रस, सर्वसिद्धिप्रद रस आदि-आदि औषधियां आवश्यकतानुसार प्रयोग कर सकते हैं।

यदि रोगी वातज-पितज है तो अधिक गर्म खुश्क दवा का सेवन नहीं करें। स्नेहन का प्रयोग करना चाहिए। अधिक दाह होने पर लाजामण्ड (चावल की खीलों का यूष) से दवायें दें अथवा चारों मगज 10 ग्राम, बादाम 10 ग्राम, खशखास 5 ग्राम, सौंफ 1 ग्राम, काली मिर्च 1/2 ग्राम, बीज कासनी 5 ग्राम, गोखरू 5 ग्राम को कूटकर पानी में घोंटकर कपड़े में छान कर दूध डाल उबालकर दवायें दो बार खिलायें या इसका काढ़ा बनाकर उससे दवायें खिलायें या शर्बतबजूरी गर्म जल में मिलाकर के साथ दवा खिलायें। इसके साथ-साथ माजून सुरंजान खिलाने से वात पितज रोगी में बड़ा लाभ होता है। मल मूत्र खुलकर आता है, दिमाग व शरीर की सफाई होती है, सब प्रकार के दर्दों यथा जोड़ों के दर्द, गठिया आदि में भी बड़ा लाभ होता है। ब्रेन हैमरेज होने पर इसकी चिकित्सा आवश्यक होती है। इसमें उपरोक्त शर्बतबजूरी पिलाने से अथवा मुरब्बा आंवला खिलाने से लाभ होता है और उपरोक्त सुवर्णसमीरपन्नगरस को मलाई या शर्बत आंवला या मुरब्बा आंवला के रस से देने पर उत्तम गुण होता है।

चिकित्सा में रोगी के बलाबल, आयु, स्थान, ऋतु के अनुसार विद्वान वैद्य को औषध की मात्रा का निर्धारण करना चाहिए और अपनी समझ बूझ से रोगी का निर्देशन करना चाहिए।

बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल विटामीन-सी और कैल्सियम युक्त एक संपूर्ण स्वास्थ्य टॉनिक

बैद्यनाथ

च्यवनप्राश

माँ से बढ़कर बच्चों की देखरेख और कौन कर सकता है ? इसीलिए हर माँ अपने नन्हे-मुन्ने के लिए स्वास्थ्य-वर्धक व पौष्टिक आहार की कामना करती है।

परन्तु केवल स्वादिष्ट भोजन आपके बच्चों की विटामीन व पोषण संबंधी जरूरतों को पूरा नहीं कर सकता। उनके अनुकूल विकास के लिए आपको चाहिए एक उत्कृष्ट स्वास्थ्य टॉनिक। जैसे बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल जिसमें हैं 52 (परखी हुई) जड़ी-बूटियाँ और केसर। अनेक विटामिन व हर्बो-मिनरल्स से युक्त, इसमें विशेष मात्रा में है, प्राकृतिक विटामिन-सी और कैल्सियम, जो आपके शरीर में जरूरी पोषक तत्वों की कमी को पूर्ण करते हैं।

स्वस्थ दिमाग और शरीर के लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय वैदिक विचारधारा व वैदिक चिकित्सा

वैद्य कुलदीप सोहल, आयुर्वेदाचार्य

वेदों में जिन विचारों का प्रतिपादन किया गया है, वे हमारे वैदिक साहित्य की अमर निधि हैं, हमारे जीवन के लिये प्रेरणा सूत्र हैं, वेदों की विचारधारा त्रिकाल सत्य है, इनमें दशार्ये गये बुनियादी आदर्श हर परिस्थिति तथा हर काल में अपनाने योग्य है ।

वैदिक विचारधारा का सार क्या है ? इसका सार यह है कि व्यक्ति भौतिक दृष्टि से कितना ही उन्नत हो जाये, यह विश्व भी भौतिक दृष्टि से कितनी ही उन्नति कर ले, संसार में सम्पत्ति का इतना ढेर लग जाये कि बांटे न बटे, परन्तु अगर व्यक्ति आध्यात्मिक दृष्टि से दरिद्र रहा विश्व आध्यात्मिकता से शून्य रहा तो इस पृथ्वी का मानव और सम्पूर्ण विश्व कहने को उन्नत तथा समृद्ध होता हुआ भी दरिद्र का दरिद्र ही रहेगा । आध्यात्मिक दृष्टि का यह अर्थ नहीं है कि संसार को हम मिथ्या कहें, धन सम्पत्ति को बेकार कहें । इसका इतना ही अर्थ है कि मानव में शरीर यथार्थ है, परन्तु शरीर के साथ शरीरोत्तर आत्मा भी यथार्थ है, चराचर जगत में यह भौतिक जगत यथार्थ है, परन्तु इस पंचभौतिक जगत् के साथ-साथ इसमें जीवन का संचार करने वाला परमात्मा भी यथार्थ है । शरीर से चलकर शरीर तक रुक जाना, इस सृष्टि से प्रारम्भ कर इस सृष्टि में भी अटक जाना, यह दृष्टि अयथार्थ है, और जब हम इसके अटक जाते हैं, तब यह कहने की जरूरत पड़ जाती है कि जो दीख रहा है, जिसमें प्राणी उलझ जाता है यथार्थ होता हुआ भी अयथार्थ है, सत्य होता हुआ भी मिथ्या है । यह इसलिये अयथार्थ है क्योंकि हम इसमें प्राण डालनेवाली सत्ता को भूलकर इसी को यथार्थ मान बैठते हैं ।

वैदिक दृष्टिकोण एक कदम और भी आगे बढ़ता है । वह दृष्टिकोण यह है कि मानव का यह शरीर उस अशरीरी का साधन है जो किसी सत्य की तरफ बढ़ता हुआ इसमें वास करता है, यह दृश्य जगत किसी अदृश्य चेतन शक्ति के प्रयोजन को निर्वाह कर रहा है अगर अपने में देह को और विश्व में इस पंचभूतात्मक जगत को ही आदि और अन्त मान लिया जाय, जीवन का लक्ष्य खाने-पीने, मौज बहार के सिवाय दूसरा कुछ भी न माना जाये तो इसका अवश्यंभावी परिणाम चोरी, डाका, लूट खसोट, मार-काट, अनाचार, दुराचार के सिवाय क्या रह जाता है, वैदिक विचारधारा का कहना है, नहीं, ऐसा करने तो यह दुनिया भी सिद्ध नहीं होती । यह तो है ही, वह भी है जो दीखता नही है, उससे कौन इंकार कर सकता है । समझने की बात यह है कि जो नहीं दीखता, वह भी है और अगर गहरी दृष्टि से देखा जाये तो वही है, क्योंकि उसी के लिये यह सब कुछ है । वैदिक विचारधारा जिस सत्य का आधार बनकर खड़ी है, वह व्यावहारिक सत्य उस जगत को मिथ्या नहीं कहता । इसे ही अन्तिम सत्य भी नहीं कहता, वह इन दोनों के समन्वय को लेकर मध्यमार्ग पर चलता है, जगत को सत्य मानते हुये उसे मानो मुट्ठी में भरकर आत्मा की झोली में डाल देता है, जिसे सत्यों का परम सत्य जानता है ।

आज का युग संघर्ष का युग है । इस युग में भौतिक तथा आध्यात्मिक विचारों का टकराव हो रहा है। भौतिक विज्ञान का सच्चा अर्थ है सत्य की खोज, मनुष्य की आन्तरिक आंखें खुले, हृदय खुले और यही उद्देश्य धर्म का है । जो लोग धर्म के नाम पर अंधविश्वास को भी धर्म के समान मान्यता देते हैं उन्हें सोचना होगा कि अन्धविश्वास धर्म नहीं है । बिना विज्ञान के धर्म अधूरा है; बिना धर्म के विज्ञान अधूरा है । इन दोनों को साथ मिलकर चलना होगा । आज के युग में धर्म की वही मान्यता टिक सकती है, जिन्हें वैज्ञानिक दृष्टि से पुष्ट किया जा सके । धर्म की इन मान्यताओं में जो विज्ञान सम्मत है उसमें इतना बल है कि वे जीवन को सशक्त बना सकता है ।

125 साऊथ अनारकली, दिल्ली-110051

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राणी वर्ग के शरीरों के सम्बन्ध में विभिन्न देशों में बड़े-बड़े प्रयोग हुये हैं और इनके बड़े-बड़े चिकित्सालय भी स्थापित हैं। परन्तु प्राणी का जीवन केवल स्थूल शरीर तक ही सीमित नहीं है। इनका सम्बन्ध जन्मजन्मान्तरों से जो संस्कार बनते हैं और सूक्ष्म शरीर जिन-जिन योनियों में होकर गुजरता है उनका भी प्रभाव उसके जीवन पर पड़ता है और मण्डल विशेष कर ग्रह मण्डल भी अपना प्रभाव डालते हैं। कभी-कभी प्राणियों को स्थान व समय से भी प्रभावित होना पड़ता है जिसकी प्रत्यक्ष जानकारी नहीं हो पाती, कभी-कभी स्वयं प्राणी पर उसके पूर्वज अथवा अपने आस-पास के रहने वाले मृत प्राणियों द्वारा अपने जीवन में किये गये कर्मों का भी प्रभाव पड़ता है, जिसके फलस्वरूप दैवी प्रकोप या दैवी कृपा का भी पात्र बनना पड़ जाता है। अथर्ववेद में इस विषय पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला गया है।

अथर्ववेद यह नाम भी चित्रवृत्तियों के निरोध एवं स्थितप्रज्ञता का अर्थ रखता है। अथर्वा शब्द का निर्वचन करने से स्पष्ट ज्ञात होता है कि -

धर्वतिश्चरतिकर्मातत्प्रतिषेधः अर्थात् चंचलता चित्त वृत्तियों का निरोध एवं स्थितप्रज्ञता की अवस्था और इन साधनों का प्रतिपादक वेद-अथर्ववेद है।

इस वेद में आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक सभी प्रकार की कर्मत व्याधियों, आधियों के निवारण संबंधी सूक्त हैं।

भैषज प्रधान होने से अथवर्वेद आयुर्वेद का उद्गम स्थल माना जाता है।

इत खल्वायुर्वेदोनाम यदुपाङ्मथर्ववेदस्य

(सुश्रुत सूत्र स्थान अ० 10)

शरीर को आरोग्य रखने के लिये जरा व्याधि से मुक्त रखने के लिये भारतीय वैदिक चिकित्सा पद्धति तीन प्रकार की है :

1. आसुरी चिकित्सा- शल्य क्रिया
2. मानुषी चिकित्सा- काष्ठादि औषधियों द्वारा
3. दैवी चिकित्सा - प्राणायाम, योग, हवन, जप अनुष्ठान द्वारा

आसुरी चिकित्सा विधि द्वारा यौवन की प्राप्ति (Rejuvenation) अच्छी नहीं मानी गई है। इस आसुरी चिकित्सा को आजकल शल्य क्रिया कहा जाता है।

काष्ठ औषधियों के सेवन से शरीरस्थ रसों की जीर्णता दूर होती है। उनमें नवशक्ति का संचार होता है और स्थायी प्रभाव पड़ता है। इसलिये यह पद्धति उत्तम मानी जाती है क्योंकि इस चिकित्सा पद्धति से शरीर ही शुद्ध नहीं होता बल्कि रोगी के मन का भी संस्कार होता है। मन जब सुस्कृत और शक्तिशाली बनता है तभी शरीर के स्वास्थ्य और शरीरस्थ रसों की पवित्रता होती है।

क्रोध, चिन्ता, भय, शंका आदि मानसिक विकारों से शरीर में कई प्रकार के विष उत्पन्न होते हैं। इन विषों को दूर करके शरीर की नसों-नाड़ियों को विशुद्ध विषरहित बनाना दैवी चिकित्सा योग यज्ञ जप अनुष्ठान विधि का काम है। नाड़ियों को निर्विष और शुद्ध बनाने के लिये आसन और प्राणायाम गुणकारी उपाय बताये गये हैं। इसलिये इसे प्राणविद्या और देवी चिकित्सा प्रणाली कहा गया है क्योंकि मरने वाले शरीर को अमर बनाने वाले प्राण ही है।

वेदों में अश्विद्वय (अश्विनों कुमार) को देवभिषक् देवताओं का वैद्य कहा गया है।

प्रत्योहतामश्विना मृत्युमस्पद् देवानाग्ने भिषजा शचीभिः

अथर्व० 7/53/1

- हे देवभिषक् अश्विनोंकुमार ! अपनी शक्ति द्वारा हमें मृत्यु से रक्षित रखो।

ये दो देव भिषक् कौन हैं ? इसका परिचय देते हुये अथर्ववेद कहता है -

संक्रामतं मा जहीतं शरीरं प्राणापानौ ते सयुजाविह स्ताम्।
शतं जीव शरदो वर्धमानोऽभिष्टेगोपा अधिया वशिष्ठः॥

अथर्व० 7/53/2

हे प्राण और अपान तुम इस शरीर में बराबर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संचरण करते रहो । शरीर को छोड़कर मत जाओ । तुम दोनों सयुजौ (जोड़ीदार) बनकर संयुक्त सखा की तरह रहो । हे मनुष्यो तुम निस्तरवर्धिष्णु होते हुये सौ वर्षों तक जीवित रहो । वशिष्ठ अग्नि तुम्हारा रक्षक है ।

उपर्युक्त मंत्र में अथर्ववेद के प्राण और अपान को ही अश्विद्वय माना है । ये दोनों जोड़ीदार सदा साथ रहते हैं ।

पुराणों व ब्राह्मण ग्रन्थों में एक कथा है । च्यवन ऋषि की जवानी से संबंधित । कथा लंबी है उसका सारांश यह है कि वृद्ध च्यवन ऋषि ने अश्विनों कुमारों से प्रार्थना की कि वह अपने उपचार से उन्हें जवान बना दे । अश्विनों कुमार ने भी च्यवन ऋषि के सामने यह शर्त रखी कि तुम हमें यज्ञ में सोम पान कराओ तो हम तुम्हें यौवन दे सकते हैं ।

अश्विनी कुमार प्राण और अपान हैं यह बताया जा चुका है । सोम क्या है जिसे पीने की शर्त अश्विनी कुमार ने च्यवन ऋषि के सामने रखी और च्यवन का तात्पर्य क्या है ?

शरीर के अन्दर जो प्राणशक्ति रहती है उसी का प्रभाव मनुष्य के स्वास्थ्य पर पड़ता है । प्राणोत्पादिनी जीवनी शक्ति ही सब कुछ है । यह शक्ति बचपन और जवानी में वर्धिष्णु रहती है और बुढ़ापे में क्षयिष्णु रहती है। इस शक्ति के क्षीण होने पर मृत्यु घेरती है । वृद्धावस्था की क्षीणता का प्रभाव शरीरगत धातु, रस, स्नायु, मज्जा आदि सभी पर पड़ता है । सब क्षीण होने लगती है । इसी क्षयशील स्थिति का नाम च्यवन है । च्यवन स्थिति आने पर शरीर छीजने लगता है । व्याधि, जरा, मृत्यु आदि सब च्यवन के विभिन्न रूप हैं ।

शरीर के अन्दर जो वीर्य, रेत रस है उसका नाम सोम रस है । यह सोम रस शरीर के अन्दर सुषुम्नाजल या मेरूदण्ड रूप वानस्पत्यथूप रहता है । उसी में भरा रहता है जो अधोभाग स्थित सुषुम्ना नाड़ी की शाखाओं-प्रशाखाओं को सींचता है । इस सोम रस से ही मस्तिष्क चेतनाशील बना रहता है । मस्तिष्क को सींचता हुआ यह सोमरस उसे विशुद्ध विवेकी और शक्तिशाली बनाता है । यह सोम रस वीर्य के रूप में शरीर में संचित होता है । जब मनुष्य संयम नहीं बरतता तो यह शरीर से बाहर निकल कर नष्ट हो जाता है । जब तक प्राण और अपान रस अश्विद्वय इस सोम को पीते रहते हैं तब तक शरीर बूढ़ा नहीं होता ।

इसी आशय से अथर्ववेद का एक दृष्टा ऋषि प्रार्थना करता है ।

प्रविशतं प्राणापानावनमड्वाहाविव ब्रजम् ।
अथं जरिम्णः शेवधिरष्ट इहवर्द्धताम् ॥

अथर्व० 7/5/3/5

प्राणापान इसके शरीर में प्रविष्ट होते रहें-जैसे गौष्ठ में दो वृषभ रहते हैं । स्तोता की यह आयुस्य निधि अरिष्ट (अक्षम) रूप में बढ़ती रहे ।

फिर यह सतत कामना की गई- मेरे शरीर में प्राण, आत्मा, चक्षु और जीवन की पुनः प्रतिष्ठा हो शरीर रक्षक तनुपा अग्नि अघृष्य रहकर सब दुरितों को हटाता रहे । वर्चस्, प्राण, रस और तनु के साथ हमारा मेल रहे। हमारे शरीर में तो जीर्णता का अंश विशिष्ट हो, उसे त्वष्टा या शरीर के निर्माता प्राण धो डालें ।

हमारे शरीर के भीतर और बाहर अपरिमेय दिव्य अमृतसागर भरा हुआ है । विराट शक्तियों का निवास हमारे शरीर में है । यह शरीर देवताओं की नगरी अयोध्या है ।

देवानांपूरयोध्या ।

इसलिये इसे आधि-व्याधि से सर्वदा मुक्त रखने के लिये वैदिक चिकित्सा करनी चाहिए ।

शरीर में मृत्यु और अमृत कैसे रखा हुआ है। मरने का नाम मृत्यु है किन्तु अमृत के दो अर्थ हैं । एक दीर्घ जीवन और दूसर अमर आत्मा जीवात्मा । रस-रसायन के प्रयोग से मनुष्य दीर्घजीवी हो सकता है और शरीर में स्थित अमृत (जीवात्मा) को जरामरण के भय से बचाने के लिये आत्म ज्ञान महाऔषधि बताई गई है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्य की कायिक, वाचिक, मानसिक व बौद्धिक पापवृतियां ही रोग, दुख, मृत्यु और नाश का मूल कारण है। इनके लिये औषधि सेवन लाभप्रद है। औषधियां पाप से रक्षा करती हैं, पाप न होने से रोग से बचते हैं। समूल पाप दूर होने से मृत्यु से रक्षा होती है।

वेद में प्राय: एक ही औषधि सेवन पर बल दिया है। मिश्रित औषधि सेवन का उल्लेख है। परन्तु न के बराबर ही है।

शरीर की आधि व्याधियां मूलत: दो प्रकार की हैं। प्रथम मिथ्या आहार-विहार जन्य है-उसके लिये अथर्ववेद की नवीं शाखा भैषज्यवेद है, जिसे आयुर्वेद कहते हैं। इसका निदान तथा उपचार अत्यन्त गम्भीरता पूर्वक चरक-सुश्रुत और वाग्भट्टादि में वर्णित है। यह औषधि का विषय है। दूसरी व्याधि पाप, पाप जनन अशुभ निमित्त है। अर्थात जो उपर्युक्त आयुर्वेद की चिकित्सा से शान्त हो वे सभी व्याधियां तथा अन्य वे सभी शास्त्र वर्णित या अवर्णित प्रसिद्ध या अप्रसिद्ध पाप, शाप, कृत्या, नैऋति अभिचार भूस्खलन, उलकापात आदि-आदि अन्य सभी पापसूचक, पाप जनित व्याधियों की चिकित्सा-विधि मंत्रसाध्य है। शौनकीय शाखा अर्थात् कौशिक सूत्र-वैतान सूत्र, गोपथ ब्राह्मण, शान्ति कल्प, अगङ्गिरसकल्प, नक्षत्रकल्प, अथर्वपरिशिष्ट आधर्वणी उपनिषद आदि के रूप में वर्णित हैं। यह द्वितीय व्याधि शमन विधि है।

खिलते यौवन के निशान भला चेहरे पर आए क्योंकर ?

यौवन के साथ-साथ मुहासों का आना भी स्वाभाविक है, पर इनके इलाज के लिए क्रीम आदि से भी पूरी बात नहीं बनती। ये त्वचा की सतह पर ही काम करती हैं, समस्या की जड़ तक नहीं पहुंच पातीं और इसके कारण कभी-कभी रह जाते हैं भद्दे निशान। बैद्यनाथ सुरक्ता रक्त साफ कर, त्वचा में निखार लाती है और आपके चेहरे की दमक बन जाती है खिलते यौवन की निशानी।

बैद्यनाथ सुरक्ता

कील मुहांसों के लिए

हर्बल रक्त शोधक

सुन्दर त्वचा भीतर से निखरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिर्गी रोग - कारण एवं निवारण

डॉ० रविकान्त श्रीवास्तव, एम०डी० (आयु०

जब किसी व्यक्ति को बार-बार आक्षेप (convulsions) पड़ते हैं तब उस अवस्था को मिर्गी कहा जाता है। यह एक अस्थाई अवस्था है जिसमे थोड़े समय के लिए मस्तिष्क में विद्युत असमानता हो जाती है। यह विद्युत असमानता मस्तिष्क के एक भाग में या पूरे मस्तिष्क में हो सकती है। इसी असमानता के परिणामस्वरूप शरीर में असमान्य क्रियाएं उत्पन्न हो जाती हैं। आयुर्वेद में इसे मानसिक व्याधियों के अन्तर्गत अपस्मार माना गया है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में इसे epilepsy कहते हैं तथा इसे Neurological disorder माना गया है।

मिर्गी रोग एक सामाजिक समस्या है तथा इसके रोगी को हेय दृष्टि से देखा जाता है। इस रोग से ग्रस्त रोगियों में 55 से 70 प्रतिशत रोगी 20 वर्ष से पहले की उम्र के होते हैं। केवल भारतवर्ष में ही इस समय लगभग 45 लाख मिर्गी के रोगी हैं।

कारण - अधिकतर मरीजों में मिर्गी के किसी कारण नहीं पता नहीं चलता है। आयुर्वेद विज्ञान में इस रोग का मुख्य कारण अनियमित आहार, अपवित्र भोजन, कटु, अम्ल, लवण, विदाही एवं विष्टम्भी आहार का अधिक सेवन, लोभ, भय, ईश्वर में श्रद्धा का न होना तथा गुरूजनों का अपमान आदि को माना गया है।

आधुनिक विज्ञान के अनुसार, मस्तिष्क में अर्बुद (tumor), मस्तिष्क की सिराओं में खून का जम जाना, मस्तिष्क में पानी का भरना, चयापचय क्रियाओं का ठीक प्रकार से न होना, मस्तिष्क में संक्रमण (infection), मस्तिष्क में चोट लगना, मस्तिष्क की संरचना में विकृति, विषाक्त पदार्थों का सेवन करना तथा वंशानुगत कारण माने जाते हैं। नवजात शिशु में आक्षेप के कारण रक्त में ग्लूकोज एवं कैल्शियम की कमी होना हो सकता है।

प्रकार - आयुर्वेद में अपस्मार के चार प्रकार माने गये हैं :-

1. वातज
2. कफज
3. पित्तज
4. सन्निपाजत

वातज- वातज अपस्मार में रोगी आक्षेप से पू आंखों के सामने अरूण या काले वर्ण को देखता है बेहोश होने पर शरीर का कपकंपाना, दांतों का किटकिटा मुख से झाग निकलना आदि लक्षण मिलते हैं।

पित्तज- पित्तज अपस्मार में रोगी आक्षेप से पू आंखों के सामने पीले हरे वर्ण को देखता है। शरीर ए आंखों का वर्ण पीला हो जाता है, साथ ही तृष्णा, दाह जलन आदि लक्षण मिलते हैं।

कफज- कफज अपस्मार में रोगी आक्षेप से पू आंखों के सामने श्वेत वर्ण को देखता है। शरीर श्वेत पाण्डु वर्ण का हो जाता है, साथ ही शरीर में भारीपन शीतलता, स्निग्धता आदि लक्षण मिलते हैं।

सन्निपातज- सन्निपातज अपस्मार में तीनों दोष के मिले जुले लक्षण मिलते हैं। रोगी को बार-बार आक्षे (status epilepticus) आते हैं। सन्निपातज को असाध माना जाता है।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में मिर्गी रोग के प्रकार बताये गये हैं :-

1. Grand Mal
2. Petit Mal

Grand Mal epilepsy में पूरा मस्तिष्क प्रभावि होता है। दौरा पड़ने पर रोगी अचेत होकर गिर पड़ता तथा पूरे शरीर के अंगों में कंपकपाहट होती है। रोग 2-3 मिनट के लिए बेहोश हो जाता है। होश आने प धीरे-धीरे वह सामान्य हो जाता है।

Petit Mal epilepsy में दौरा बहुत ही कम समय के लिए होता है। रोगी कुछ क्षणों के लिए स्थि हो जाता है किन्तु कुछ समय पश्चात् सामान्य हो जात है। कई बार यह इतने कम समय के लिए होता है कि रोगी को पता ही नहीं चलता।

इन दो प्रकारों के अतिरिक्त आंशिक दौरा (Par tial seizure) भी पड़ता है। जिसमें विद्युत असमानत मस्तिष्क के एक भाग से शुरू होकर दूसरे भाग में फैल जाती है। इससे रोगी के कुछ अंगों जैसे एक हाथ य

रीडर, श्री बाबा मस्तनाथ आयुर्वेदिक कॉलेज, अस्थल बोहर, रोहतक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक पैर आदि में आक्षेप आ सकते हैं । शरीर का वह हिस्सा सुन्न पड़ जाता है ।

चिकित्सीय निदान परीक्षण :-

रक्त का विस्तृत परीक्षण करवाना चाहिए । विशेषकर Blood Sugar, Blood urea, S. Calcium, S. Sodium & Potassium, HB%, TLC, DLC, ESR etc । इसके अतिरिक्त मिर्गी के दौरों के लिए किसी विशेषज्ञ से EEG (Electro encephalography), CT scan एवं MRI करवाना चाहिए । ज्यादातर रोगियों में इन परीक्षणों से निदान में अत्यन्त सहायता मिलती है तथा किस कारण से दौरे पड़ रहे हैं इसका पता चल जाता है । इसके अतिरिक्त रोगी का विस्तृत इतिहास भी निदान में सहायक होता है ।

मिर्गी का दौरा पड़ने पर क्या करें ?

1. रोगी को गिरने से रोकें तथा उसे स्वच्छ एवं हवादार स्थान पर एक करवट लिटा दें ।
2. आसपास एकत्रित भीड़ को हटा दें ।
3. कपड़ों को ढीला कर दें ।
4. रोगी के होश में आने पर उसे सांत्वना देना चाहिए ।

मिर्गी का दौरा पड़ने पर क्या न करें -

1. रोगी को पकड़कर या दबा कर दौरों को रोकने की कोशिश नहीं करें ।
2. रोगी के मुख में पानी, दवा इत्यादि न डालें ।
3. दौरों के समय रोगी को उठाकर बैठाने की चेष्टा न करें ।
4. रोगी के मुख के अन्दर कपड़ा, लकड़ी आदि फसाने की चेष्टा न करें ।

चिकित्सा - आयुर्वेदीय चिकित्सा- आयुर्वेद में बाह्य उपचार हेतु नस्य एवं अंजन का विधान है । ऐसा दौरों के पश्चात् रोगी को होश में लाने के लिए करते हैं ।

1. चूना एवं नौसादर समभाग शीशी में डालकर नस्य हेतु प्रयोग करते हैं ।
2. मुलेठी, हींग, वच, लहसुन, नागर एवं कूठ के चूर्ण को बकरी के मूत्र की भावना देकर सुखा लेते हैं । इसका प्रयोग नस्य एवं अंजन हेतु करते हैं ।

आभ्यान्तर प्रयोग हेतु :-

1. ब्राह्मी स्वरस एवं मण्डूकपर्णी स्वरस 10-20 ग्राम मधु के साथ दें ।
2. कूष्माण्ड बीज एवं मुलेठी चूर्ण समभाग दूध से ।
3. मांस्यादि क्वाथ 20-40 मिली सुबह शाम ।
4. सारस्वतारिष्ट एवं अश्वगंधारिष्ट समभाग प्रातः शाम 20-40 मिली ।
5. ब्राह्मीघृत, महाकल्याण घृत, पंचगव्यघृत, चैतस घृत आदि में से किसी एक का प्रयोग 10-15 मिग्रा प्रातः सायं गौदूध से ।
6. इसके अतिरिक्त, स्मृतिसागर रस, वातकुलान्तक रस, ब्राह्मी वटी, वचा चूर्ण अपस्मारनाशनी वटी, भूतभैरव रस, प्रवालपिष्टी, चतुर्भुजरस आदि औषधियों का प्रयोग युक्ति पूर्वक करना चाहिए ।

मिर्गी रोग की चिकित्सा में प्रयुक्त औषधियों का प्रयोग काफी लम्बे समय तक करना पड़ता है । अतः जब तक दौरे रूक न जाएं या इनमें कमी न आ जाए तब औषधि को रोकना नहीं चाहिए । साथ ही बीच-बीच में चिकित्सक से अवश्य परामर्श लेते रहना चाहिए ।

Central Library Gurukul Kangri (U.A.)

वैद्यनाथ
बसन्तकुसुमाकर रस
बल, स्मृति-वर्द्धक शास्त्रीय रसायन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारी स्वास्थ्य

गर्भावस्था के उपसर्ग : सावधानी और आयुर्वेदिक उपचार

वैद्य चन्ददेव मंडल

विवाह हर कुमारी का सपना होता है । जब विवाह हो जाता है, तो गर्भ का संचार भी होता है । माँ बनना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है । इसी में नारीत्व की पूर्णता भी है । समाज मातृत्व को महत्व देता है । बांझ स्त्री समाज में मान नहीं पाती, संतान वती समादरित होती है ।

मातृत्व का अहसास सुखद होता है, पर अपने साथ कुछ परेशानियाँ भी लाता है । सच कहें तो मातृत्व सुख-दु:ख का संगम होता है । जब भी कोई स्त्री अपनी कोख में संतान धारण करती है, उसे कुछ-न-कुछ कष्टमय उपसर्गों का सामना करना पड़ता है । इसके चलते जीवन में कडुवाहट आती है । गर्भावस्था में मिचली और उल्टी आने की शिकायत आम होती है । किसी को सिर दर्द, पेचिश या अधिक लार आना परेशान करता है, किसी को पेट-दर्द, दिल की धड़कन, खाँसी की शिकायत होती है । कोई बार-बार पेशाब आने, स्तन-दर्द और योनि में खुजली से तंग होती है । स्त्री को गर्भावस्था में और भी उपसर्ग, जैसे, पेशाब बन्द हो जाना, चेहरे पर सूजन आ जाना, जननेन्द्रिय से सफेद तरल का बहना, ज्वर आ जाना, पेट हाँड़ी-सी लटक जाना, पेट-स्तन और जाँघ पर कुत्सित धारियों का पड़ना तथा गर्भपात की आशंका का होना इत्यादि सताते हैं ।

उपसर्गों के प्रत्यक्ष और दूरगाभी प्रभाव

* कष्टकर उपसर्गों के चलते गर्भावस्था में स्त्री को बहुत परेशानी झेलनी पड़ती है । एक तो गर्भावस्था ऐसे ही परेशानी भरी होती है । दूजे, अपने अन्दर पल रहे जीव की अलग मुसीबतें होती हैं । ऐसे में आए दिन होने वाले कष्टकर उपसर्ग उसे और प्रताड़ित करते हैं ।
* गर्भवती महिला की हालत अपने आप बहुत खुशहाल नहीं होती । उस पर उपसर्ग सताते हैं तो वह गर्भस्थ शिशु का समुचित ख्याल नहीं रख पाती, जिसका बुरा प्रभाव अन्दर पल रहे शिशु पर पड़ता है ।
* उसकी व्यथा को देखकर परिवार के सदस्यों को उससे सहानुभूति हो सकती है । पर व्यथा तो उस बेचारी को अकेले भोगनी पड़ती है । इसमें उसका कोई भागीदार नहीं होता ।
* यदि सम्मिलित परिवार हुआ और सहयोगी एवं संवेदनशील सास-ननद, देवर आदि हुए तो फिर भी निर्वाह हो जाता है । गर्भवती पीड़ित स्त्री की हालत खराब हो जाती है ।
* अगर नौकरी शुदा कामकाजी पत्नी हुई या परदेश में अकेली पति-संग रहने की स्थिति रहती है, तब तो बुरीगत बनती है स्त्री की, यदि पड़ोस हमदर्द नहीं मिलता या नर्सिंग होम आदि की सुविधा नहीं होती ।
* कई पति पत्नी से ऐश-मौज भर का नाता रखते हैं, पत्नी से सच्ची हमदर्दी नहीं रखते । न दु:ख में पूरी तरह साथ देते हैं । ऐसे में पत्नी एकाकी पड़ जाती है । अपने बुरे दिन को कोसती है, रोती है, पछताती है ।
* गर्भावस्था के कष्ट कर उपसर्ग स्त्री के काम-जीवन को भी दुष्प्रभावित करते हैं । कह इस अवस्था में पति को प्यार नही दे पाती । तब कई अधीर पति सुख की तलाश में भटक जाते हैं ।
* पत्नी को रोज-रोज उपसर्गों से पीड़ित देख-देख कुछ असहनशील पति खीझ से भर जाते हैं, ऊब जाते हैं । छोड़ देते हैं कि अब जो होना हो, हो, वह क्या करे ।
* पति की तटस्थता देख कुछ पत्नियां अन्तर से दु:खी होती हैं । केवल सुख में भागीदारी रखने वाले पति से घृणा करने लगती हैं । कई का तो दांपत्य जीवन भी बाद में विवादमय हो जाता है ।

गर्भावस्था में काम-संबंधी उत्पीड़न

* परम्परागत धारणा के अनुसार पति-पत्नी को गर्भावस्था में सहवास के अलग रहना चाहिए, क्योंकि मान्यता है कि इससे भावी संतान पर बुरा असर पड़ता है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्नी में कमजोरी आती है और पति के स्वास्थ्य को भी हानि पहुँचती है ।

फिर भी आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान गर्भावस्था में संभोग की मनाही नहीं करता । केवल अंतिम दो माह में संभोग करना अनुचित बताता है, क्योंकि इन्हीं माहों में जच्चा-बच्चा को सर्वाधिक नुकसान का भय होता है ।

प्रारंभिक सात माह सहवास के उपयुक्त होते हैं, मानकर अपनी यह सह-इच्छानुसार दंपति सहवास रत होने को हानि रहित जान ऐसा कर बैठते हैं । पर ज्ञातव्य है कि ऐसा होना सिर्फ उन्हीं के मामले में निरापद होता है, जिन गर्भवतियों का स्वास्थ्य अच्छा रहता है, जिनके गर्भस्थ शिशु का विकास स्वाभाविक और विकासोन्मुख होता है और जिनके पति को भी यह कार्य उस हाल में स्वाभाविक तथा रोचक लगता है ।

स्थिति चाहे कितनी भी अच्छी क्यों न हो गर्भावस्था में संभोग कम, आवश्यकतावश और सावधानी पूर्वक करना चाहिए, नहीं तो हानि उठानी पड़ती है ।

यदि गर्भवती स्त्री का पहले गर्भपात हुआ हो, तो सहवास से प्रारंभिक सात माहों में भी बचना चाहिए । ऐसा न हो कि सोचते रहें, अभी तो अंतिम दो माह नहीं आए । ऐसे में गर्भपात पुनः संभव हो जाता है ।

यदि गर्भवती स्त्री को 'खून जारी' हो जाता हो, तो संभोग से विमुख हो जाना ही अच्छा रहता है । चिकित्सीय जाँच करा लेना भी जरूरी होता है । नहीं तो परेशानी झेलनी पड़ती है ।

मधुकर प्रवृत्ति के कई पति यौन-रोग से आक्रान्त हो जाते हैं, फिर भी गर्भावस्था में पत्नी से एकजुट होकर उसे तो उसे, गर्भस्थ शिशु को भी रोग लगा देते हैं, जबकि उन्हें समुचित इलाज करना चाहिए ।

प्रायः स्त्रियाँ गर्भावस्था में समागम से अनिच्छा, बेचैनी, कष्ट या असहिष्णुता, गर्भाशय पर भार महसूस करती है । ऐसी स्थिति में उनके पतियों को समागम से वंचित रहकर चिकित्सीय परामर्श पर ध्यान करना चाहिए ।

* जरा-सा सावधानी रहकर गर्भावस्था के कष्टमय उपसर्गों से बचा जा सकता है । उनसे होने वाली स्वास्थ्य की हानि, शारीरिक-मानसिक कष्टों का परेशानी से मुक्ति पाई जा सकती है । जरूरत होती है सिर्फ जानने की । जानकारी के अभाव में ये उपसर्ग धर दबाते है ।
* साधारण-सा इलाज, महज छोटे-छोटे मामूली आयुर्वेदिक उपचार, अगर सावधान रहकर किए जायँ तो गर्भवती स्त्री इनसे बची रहकर सुखी रह सकती है और न केवल अपना स्वास्थ्य भंग होने से बचा सकती है, बल्कि स्वस्थ संतान को जन्म देकर अपने दांपत्य जीवन को कड़ुवाहट से परित्राण दिला सकती है । आवश्यक है, जरा-सा उद्योग करने की ।

सावधानी और उपचार

* **मिचली और उल्टी की शिकायत :-** लगभग सभी स्त्रियाँ गर्भावस्था में मिचली और उल्टी की स्थिति से गुजरती हैं और परेशानी उठाती हैं । बहुतों में तो यह पहचान होती है, गर्भ ठहरने की । इससे सहज ही पीछा छुड़ाया जाना संभव है । उपाय यह है कि एक ऐसी महिला सुबह उठकर जरा देर स्वच्छ वायु में धुम-फिर ले फिर शौचादि से निवृत हो हल्का नाश्ता कर लगभग एक घंटा लेट कर आराम कर ले । इससे बहुत लाभ होगा । रही-सही कसर सुबह-दोपहर और शाम को एक-एक तोला गुलकन्द और मक्खन के सेवन से पूरी हो जाती है । यदि उपलब्ध हो तो अनार या संतरे का रस भी चूसें । आशातीत लाभ होगा ।
* **गर्भवती स्त्री को सिर का दर्द होना :-** प्रायः गर्भवतियों को सिर-दर्द सताता है । वह परेशान रहती है रात-दिन, पर उनका ध्यान इस ओर नहीं जाता कि इसकी वजह उसकी कब्जियत है, जो गर्भावस्था में अक्सर महिलाओं को रहती है । कब्जियत दूर करने से सिर-दर्द भी दूर हो जाता है । हरड़ का एक मुरब्बा रोज खा लेना कब्ज और सिर दर्द दोनों से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बचाता है। दो तोले गुलकन्द का सेवन भी लाभदायक होता है। अगर यह भी सुलभ न हो तो रबा गुड़ दूध में डाल कर पिया करें, बहुत लाभ होगा। यदि कसर रह जाए, तो धनिया पीसकर कपाल पर लगावें।

* **कोयला, मिट्टी, राख, खल्ली आदि खाना**- गर्भावस्था में अनेक स्त्रियाँ, जिनमें पढ़ी-लिखी-अनपढ़ सभी शामिल हैं, अदम्य इच्छा के वशीभूत ये चीजें खाती हैं। चूंकि वे जानती हैं कि ऐसा करना अनुचित है, इसलिए छिपा कर ऐसा करती हैं। देखी जाने पर बहाना करती हैं, झूठ बोलती हैं। पर इन चीजों के पेट में जाने से गर्भस्थ शिशु और महिला की बड़ी हानि होती है। इसके लिए गर्भवती को डेढ़-दो तोला एरण्ड का तेल पिलायें। इसे खाली न पी सकें तो दूध में मिलाकर पिलायें। अनर्गल वस्तुओं का त्यागने का संकल्प भी स्त्री करे। फिर भी जी न माने तो इसके बदले वंशलोचन खायें या भुने चने से जी बहलाएँ।

* **गर्भावस्था में होने वाली पेचिश** - किसी-किसी को तो गर्भावस्था में पेचिश बुरी तरह परेशान करती है, स्त्री आजिज आ जाती है। अगर ऐसा हो तो स्त्री खिचड़ी-दही का आहार ले, ठीक हो जाएगी। कभी-कभी आंत में कीड़े होने पर भी ऐसा हो जाता है। इसके लिए अंडी-तेल का जुलाब लेना अच्छा रहता है। इसके बाद दही में ईसबगोल मिलाकर खायें। जब वह दही में भली-भांति फुल जाय तो चम्मच से उठाकर खायें। ध्यान रखें इसे दाँतों से न चबाना हो। पेचिश जल्दी ही पीछा छोड़ देगी।

* **गर्भवती को दस्त लगाना** - प्राय: दस्त बदहजमी से लगते हैं। दिनभर में एक बार भोजन लेने लगने से स्वत: सुधार हो जाता है। दस्त ज्यादा आने लगने से खिचड़ी-दही का आहार सुपथ्य होता है। दही न मिले तो छाछ ही सही। कुछ को आँवले का चूर्ण अनुकूल आता है। स्वच्छ सूखे आँवले को कूट-छान कर चूर्ण बना रख लें और तीन माशे की खुराक पानी के साथ फक्की लें। दस्त भी इससे बंद हो और दुर्बलता भी दूर होगी।

* **गर्भावस्था में खाँसी का होना** - गर्भावस्था में खाँसी प्राय: अंतिम दिनों में होती है, जो दुराग्रह और कष्ट कर सिद्ध होती है। मुलहठी और फूला हुआ सुहागा दोनों एक-एक तोला और बबूल-गोंद छह माशे लेकर पीस लें। ऐसा मिश्रण सुबह-दोपहर-शाम चार-चार रत्ती शहद के साथ लें। खाँसी चली जाएगी।

* **गर्भावस्था में दिल की धड़कन बढ़ना** - धड़कन बढ़ने पर स्त्री को घबड़ाहट होती है। कमजोरी आती है। इस उपसर्ग की हालत में गर्भवती को आराम से लेट कर रहना हितकर होता है। दो तोले सेब का मुरब्बा चाँदी के बर्फ में लपेट कर खाने से बड़ी राहत महसूस होती है। कोई अन्य कारण परिलक्षित हो तो उसे भी दूर करने का उपाय करें।

* **पेट का दर्द** - पाचन की खराबी के चलते पेट का दर्द गर्भावस्था में स्त्री को बहुत झेलना पड़ता है। जीरा सफेद एक तोला, सोंठ एक माशा और काला नमक तीन-तीन माशे की खुराक स्त्री ले तो वह पेट दर्द की शिकायत से जल्दी ही छुटकारा पा लेती है।

* **थूक या लार का अधिक आना** - खासकर गर्मियों में गर्भवती को थूक या लार अधिक आने लगती है। इसके लिए पोस्त, अनार की छाल लेकर आधा किलो पानी में औंटाते हैं, काढ़ा बना लेते हैं। इस काढ़े से बार-बार कुल्ला करने से बहुत लाभ होता है। यही लाभ बबूल की छाल का काढ़ा करता है। भोजनोपरान्त तीन माशे जीरे का महीन पीसा शहद के साथ सेवन करने से भी खासा लाभ होता है।

* **पेशाब का बन्द हो जाना** - अक्सर गर्मियों में गर्भवतियों की पेशाब रूक-सी जाती है और वे बेचैन-सी हो जाती हैं। इस परेशानी और तकलीफ में दूध-भात खाना या दूध में चीनी मिलाकर पीना लाभ करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* **योनि की खुजली का खराश का मामला-** स्त्री-योनि में कमी साधारण, कभी असह्य खुजली उठती है। कुछ दिनों तक मशाले, गुड़-शक्कर और नमक का प्रयोग बन्द कर देने पर यह उपसर्ग शान्त हो जाता है। शीघ्र लाभ के लिए योनि का प्रक्षालन गर्म जल से करना होता है। गुलाब-जल में कपूर घोलकर लगाना भी खराश को शान्त करता है। रसौत को पानी में घोलकर लगाने से भी लाभ होता है।

* **जननेन्द्रिय से सफेद तरल के बहने का उपसर्ग-** ऐसा कम होता है, मगर होता है, तो गर्भावस्था के अन्त तक होता है। रोजाना योनि को ठंडे पानी से धोने और कब्ज न रहने देने से इसमें कमी लाई जा सकती है। लगभग आधा किलो पानी में तीन माशे फिटकरी डालकर योनि-धोना भी असरदार उपचार होता है।

* **गर्भावस्था में स्तन में होनेवाला दर्द** - यह दर्द अधिक तकलीफ देता है। चैन नहीं मिलता। मगर सेंक देना राहत पहुँचाता है। पोस्त खसखस एक तोला, ढाक के फूल दो तोले को पानी में उबाल कर रखें। इसमें साफ कपड़े की गद्दी भिंगोंकर सेंक करें।

* **पेशाब में दोष दिखाई पड़ना और चेहरे का सूजन-** गर्भावस्था के अंतिम दिनों में प्राय: ही स्त्रियों को पेशाब के साथ अंडे की सफेदी जैसी तरलता निकलने लगती है और उसके चेहरे पर सूजन आ जाती है। गर्भवती बहुत कमजोरी महसूस करने लगती है। ऐसे में उसे नमकीन खाना त्याग देना चाहिए। जीरा सफेद और मकोई दोनों छह-छह माशे पानी में थोड़ा उबाल थोड़ा-थोड़ा पिया करे तो गर्भवती के दोनों उपसर्ग ठीक हो जाते हैं।

* **गर्भावस्था में होने वाला ज्वर** - कभी तेज असरकारक दवा न दें। कुनीन सेवन तो हर्गिज न करें। पेट की सफाई पर जरूर ध्यान दें। पाचन-क्रिया बिगड़ने न दें। सुपाच्य आहार लें। इतने से ही ज्वर भाग जाएगा, नहीं तो पूरी बात-बता कर चिकित्सक से परामर्श करें।

* **पेट का बढ़ना और नीचे लटक जाना** - गर्भावस्था में प्राय: ऐसा होता है। बाद में भी भद्देपन का असर रह जाता है। इससे बचने के लिए फ्लानेल या खादी के कपड़े की तीन-चार गिरह की पट्टी द्वारा बढ़े और लटके पेट को सहारा देकर पीठ पर बाँध रखना अच्छा होता है।

* **पेट, छाती, जाँघ आदि पर कुत्सित धारियाँ पड़ना** - प्रतिदिन सरसों तेल की मालिश करने से धारियाँ नहीं पड़ती। यदि पड़ गई हों तो मालिश से वे दूर होती हैं।

* **गर्भ गिरने की स्थिति** - कई स्त्रियों का गर्भ तीसरे-चौथे माह गिर पड़ता है। गर्भपात भय, दु:ख आदि से भी होता है। गर्भपात घातक होता है, यह स्त्री को बहुत कमजोर बनाता है। आमले का मुरब्बा सेवन करते रहने से गर्भ की सुरक्षा होती है। यदि ऐसा लगे कि गर्भपात रोके न रूकेगा तो स्त्री बिस्तर पर आराम से रहे। हरड़ का मुरब्बा और गुलकंद खाए, ताकि कब्ज न हो, ताकत न घटे। योग्य चिकित्सक को दिखाएँ।

बैद्यनाथ
बाम
सर्दी, जुकाम,
सिरदर्द, पसली दर्द,
गर्दन की मोच में
तुरंत आराम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक सेब रोज खाइये...डॉक्टर को घर न बुलाइये

डॉ० अनामिका प्रका

"एक सेब नित्य खाइये और कभी वैद्य-डॉक्टर को घर न बुलाइये" - यह कहावत ही इतना सिद्ध कर देने के लिए पर्याप्त है कि सेब बड़ा गुणकारी फल है ।

चीन बैबीलोनिया तथा मिस्र के साहित्य में अति प्राचीनकाल से सेब का उल्लेख मिलता है । बाइबिल में भी कई स्थलों पर इसका उल्लेख आया है तथा प्रस्तर काल के कुछ शिल्पों में भी इस फल का अच्छा चित्रण किया गया है ।

वनस्पति शास्त्र में एक अंग्रेज विद्वान ने इस फल की दो हजार किस्में बताई हैं । उनका कहना है कि हर किस्म के सेब अपने माप, रूप, स्वाद, रंग और गंध में एक दूसरे से भिन्न होते हैं । यों तो साधारण सेब लाल होते हैं, लेकिन हरे और पीले रंग के भी पाये जाते हैं ।

वैज्ञानिकों द्वारा इस फल के रासायनिक विश्लेषण से ज्ञात हुआ है कि इसमें 0.3 प्रतिशत प्रोटीन 0.1 प्रतिशत कैल्शियम 0.1 प्रतिशत चूना 0.02 प्रतिशत फास्फेट तथा 1.6 प्रतिशत लौह होता है । इनके अतिरिक्त सेब में शर्करा, पोटैशियम, सोडियम, मैग्नीशियम, सल्फर, केरोटीन, थियामीन, रिबोफलैविन तथा विटामीन-सी भी पाये जाते हैं । पर शर्करा को छोड़कर अन्य रासायनिक तत्वों की मात्रा अत्यल्प है ।

सेब का भोज्य तत्व वस्तुतः उसकी शर्करा में है, क्योंकि सेब में 9 से 12 प्रतिशत शर्करा का अंश पाया जाता है, जिसमें फन शर्करा 60 प्रतिशत और ग्लूकोज 25 प्रतिशत होता है । साधारण गन्ने वाली शर्करा (सुक्रोज) सेब में बहुत कम होती है । सिर्फ 15 प्रतिशत । कच्चे सेब में स्टार्च का तत्व अधिक होता है, लेकिन जब सेब पकने लगता है, तो उसका यह सारा स्टार्च शर्करा में परिवर्तित हो जाता है ।

सेब में एक प्रकार का एसिड भी होता है, जिसकी मात्रा शर्करा के साथ बढ़ती है । सेब में प्राप्त होने वाले एसिड में यह गुण है कि वह शरीर में शर्करा के समान ही ईंधन के रूप में प्रयुक्त होता है । यह अम्ल तत्व सेब में 0.19 से 1.11 प्रतिशत तक पाया जाता है । उसे अम्ल तत्व में गुण यह भी है कि, यदि सेब को खू चबाकर खाया जाये तो वह दांत और मसूढ़ों के लि 'ऐंटीसेप्टिक (कीटाणुनाशक) का भी कार्य करता है ।

सेब विटामीन तथा क्षार तत्व प्राप्त करने के लि भी बड़ा अच्छा साधन है । इस फल में पेट साफ क का अद्भुत गुण है । यदि खाली पेट दो सेब प्रतिदि खाये जायें तो कभी कब्ज की शिकायत और अग्निमां का रोग नहीं होता ।

बच्चों की पेचिश में भी यह फल बड़ा हितकार सिद्ध हुआ है । पुरानी पेचिश के रोगी बच्चों को मीठ तथा पका सेब पकाकर तथा उसे मलकर अवलेह के रू में बनाकर देना चाहिए । अक्सर ऐसा देखा गया है कि इसके सेवन से 48 घण्टे में ही पेचिश का कष्ट दूर हो जाता है । जर्मनी में तो इस प्रकार की चिकित्सा के रू में इसका प्रयोग चला आ रहा है ।

कच्चा सेब खाते समय लो अक्सर उसका छिलक फेंक देते हैं, लेकिन छिलके में तथा छिलके के ठीक नीचे के गूदे में विटामीन सी प्रचुर मात्रा में होता है । छिलके से दूर के अन्दर के भाग में विटामीन सी का अंश क्रमश कम होता जाता है । अतः छिलके सहित सेब खाने वा को मसूढ़े से खून निकलने (स्कीब) का रोग नहीं होत है । केवल विटामीन सी ही नहीं सेव के गूदे की अपेक्ष छिलके में विटामिन ए भी पांच गुना अधिक होता है अतः छिलके का फेंकना किसी भी रूप में हितकर नहीं कहा जा सकता ।

सेब केवल रोगियों के लिए ही नहीं, स्वस्थ व्यक्ति के लिए भी उतना ही स्वास्थ्यकर है । शरीर की सारी कमजोरियों को दूर करने में उसमें अद्भुत क्षमता है

जी-9, सूर्यपुरम्, नन्दनपुरा, झाँसी - 284003

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फास्फोरस और लौह तत्व प्रधान होने के कारण यह मस्तिष्क और शरीर की मांसपेशियों में शक्ति का संचार कर, उन्हें सुदृढ़ बनाता है ।

सेब के उपयोग की एक अच्छी विधि यह है कि दो तीन पके सेब के टुकड़े करके एक तश्तरी में सजाकर रात में किसी ऐसे खुले और सुरक्षित स्थान में रख दें कि उस पर चन्द्र किरणें और ओस पड़ सके । प्रात:काल उठकर उसका नाश्ता करने वाला व्यक्ति कुछ ही दिनों में अपने स्वास्थ्य में आश्चर्यजनक परिवर्तन अनुभव करने लग जाता है ।

कई बार ऐसा भी देखा गया है कि अनिद्रा के रोगी को सेब खिलाने से नींद आने लगी है । इस प्रकार यह अनिद्रा नाशक औषधि भी है ।

दिमागी काम करने वाले बहुत से लोगों को ग्रीष्म ऋतु में सेब का मुरब्बा प्रयोग करते देखा गया है । उनके अनुभव के आधार पर मस्तिष्क दुर्बल एवं हृदय की कमजोरी की यह अचूक दवा है ।

सेब में विटामीन "बी" की काफी मात्रा में रहता है । अत: स्वस्थ दशा में सेब का प्रयोग करने से विटामीन "बी" की कमी से होने वाले अनेक रोगों, जैसे स्नायु रोग, बैरी, अजीर्ण, शारीरिक दौर्बल्य तथा दृष्टिमांध के आक्रमणों से बचा जा सकता है ।

पल-पल जीवन में आनन्द अविरल

जब उत्साह हो जीने का,
जब हर पल आप जीना चाहें भरपूर
बैद्यनाथ का वीटा-एक्स गोल्ड ।
स्वर्ण भस्म (शुद्ध सोना) की ताकत से भरपूर ।
जोश के लिए, उमंग के लिए
आनंद से भरपूर जीवन के लिए ।

बैद्यनाथ
वीटा-एक्स
गोल्ड
स्वर्ण भस्म की ताकत से भरपूर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनोविज्ञान और आयुर्वेद

वैद्य आर.के.जोशी, एम.डी. (आयु.) पीएच.डी

आयुर्वेद चिकित्सा विज्ञान में मनोविज्ञान का विशेष महत्व है । शारीरिक दोषों वात, पित्त, कफ के अतिरिक्त दो गुण रज एवं तम दोष मानसिक दोष उत्पत्तिकर माने जाते हैं । कोई भी मानसिक व्याधि रज एवं तम के बिना उत्पन्न नहीं हो सकती । वायु दोष ही सभी रोगों की उत्पत्ति का प्रेरक माना जाता है । वायु में जब तक रज गुण की प्रवृत्ति नहीं होती तक तक रोग की वृद्धि नहीं हो सकती । इस लेख में आयुर्वेद सम्मत एवं आधुनिक मानस रोग विज्ञान द्वारा प्रस्तुत मानसिक रोगों के कारणों का सामन्जस्य स्थापित करने का प्रयत्न किया है ।

साइकोसोमेटिक मेडिसन आधुनिक चिकित्सा शास्त्र की अपेक्षा कृत नवीन शाखा है । इसमें व्याधि की समस्याओं को शारीरिक व मनोवैज्ञानिक दोनों दृष्टियों में देखा जाता है । यह ज्ञात हुआ है कि आदिम भावात्मक प्रेरणाओं (Primitive emotional drives) की अभिव्यक्ति शरीर और मन दोनों में हो सकती है । अनेक ऐसे भावात्मक तनाव होते हैं जो स्थूलनाड़ी मण्डल पर प्रभाव डालते रहते हैं । किन्तु जिनका ज्ञान प्राणी को सामान्यतया नहीं रहता । ऐसे प्रभावों या प्रतिक्रियाओं का अध्ययन यह शाखा करती है अर्थात् जब परिस्थिति एवं मानसिक भाव शारीरिक लक्षण निर्माण करने में हिस्सा बटाते हैं । तब उनका अन्तर्भाव इस मन शरीर चिकित्सा शास्त्र में किया जाता है, अनेक बार शारीरिक रोगों से पीड़ित रोगी में बाद में मानस लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं । वे लक्षण रोगों के लिये कितने ही महत्व के क्यों न हों उनका अध्ययन करना इस शाखा का काम नहीं है । अतः यह शाखा निम्न प्रकार के रोगियों का अध्ययन करती है ।

(1) ऐसे रोगियों का, जो शारीरिक लक्षणों से पीड़ित तो होते हैं, किन्तु उनमें कोई शारीरिक विकृति नहीं होती । उनमें कोई मानसिक कारण होता है । किन्तु यह अज्ञात होता है । अतः ऐसे रोगों को (Functional) (क्रिया सम्बन्धी) नाम दे दिया जाता है ।

(2) ऐसे रोगियों का, जिनमें शारीरिक लक्षणों के साथ शारीरिक विकृति भी होती है । किन्तु उसका कारण मानसिक होता है ।

(3) ऐसे रोगियों का जिनमें शारीरिक विकृति के साथ शारीरिक लक्षण तो होते हैं किन्तु कुछ लक्षण उस विकृति से उत्पन्न नहीं होते अपितु मानसिक कारण से होते हैं । इस प्रकार के रोग में रोग गाम्भीर्य की अपेक्षा अशक्ति या वेदना अधिक होती है । अतः चिकित्सक को शारीरिक विकृति के अतिरिक्त अन्य कारणों के बारे में भी सोचना चाहिये ।

आयुर्वेद शास्त्र में रोगों का वर्णन करते समय मानस रोगों का एक पृथक वर्गीकरण किया गया है । "**त्रयो रोगा इति निजागन्तुज मानसा** (च०सूत्र 1/45) दूसरे स्थान में चरक ने मानस रोगों की गणना आगन्तुक रोगों में की है । यथा

आगन्तवस्तु ये रोगास्ते द्विधा निपतन्ति हि ।
मनस्यन्ये शरीरेऽन्ये तेषां तु द्विविधा क्रिया ॥

वस्तुतः शरीर व मानस यह वर्गीकरण या भेद आश्रय अथवा अधिष्ठान भेद से है । इन दोनों प्रकार के रोगों का परस्पर अनुबन्ध हो सकता है यह बात आयुर्वेद शास्त्र में निज और आगन्तुज रोगों के परस्पर अनुबन्ध से स्पष्ट की गयी है । जिस प्रकार पहले से स्थित किसी शारीरिक रोग में अन्य शारीर रोग का अनुबन्ध हो सकता है । उसी प्रकार मानस रोगों में अन्य मानस रोगों का एवं शारीर रोगों में मानस रोगों का तथा मानस रोगों में शारीर रोगों का अनुबन्ध हो सकता है । इस अन्तिम विकल्प की तुलना साम्य साइकोसोमेटिक मेडिसिन (Psychosomatic Medicine) से है । इसके उदाहरण आयुर्वेद शास्त्र में पर्याप्त मिलते हैं ।

लक्षणोत्पत्ति की प्रक्रिया (Process of Origin Symptoms)

एक विद्वान का कथन है कि साइकोसोमेटिक (मनः शरीरात्मक) लक्षण भावात्मक स्थिति के साथ होने वाले शारीरिक लक्षण होते हैं । जैसे क्रोध की स्थिति में रक्तभार (Blood Pressure) बढ़ जाता है किन्तु यदि कुछ व्यक्ति शारीरिक या शाब्दिक चेष्टा या आक्रमण के द्वारा भावात्मक दबाव को मुक्त कर दें, तो रक्त भार फिर

सहायक प्रोफेसर, कायचिकित्सा विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कम हो जाता है । यदि भावात्मक दबाव बार-बार हो, वह जीर्ण रूप धारण कर ले तो फिर रक्त भार कम नहीं होगा । भले ही व्यक्ति चेष्टा या आक्रमण के द्वारा दबाव को मुक्त करने का प्रयत्न करे । वस्तुतः जीर्ण भावात्मक दबाव ऐसे शारीरिक परिवर्तन कर देता है जिसका परिणाम Vascular hypertension (प्रणालीय रक्तभारधिक्य) होता है । अतः इस लक्षण को साइकोसोमेटिक माना जाता है । यह लक्षण मूलतः मानसिक होता है । यदि भावात्मक तनाव अनेक बार वातनाड़ी संस्थान द्वारा आमाशय एत्रजाइम या मांसपेशीगत क्रिया को उत्तेजित करे तो लक्षण उस संस्थान से संबंधित होंगे । व्यग्रता (Anxiety) की अभिव्यक्ति रोगी सदा 'उर' या 'हृदय' विकार के रूप में करता है । इसमें प्रायः अत्युक्ति रहती है ।

कुछ मानस चिकित्सकों का ऐसा विश्वास है कि विशेष भावात्मक स्थिति विशेष शरीरसंस्थान के ही लक्षण उत्पन्न करती है । जिस रोगी के हृदय (रक्त संस्थान) के लक्षण होंगे, उनका कारण भावात्मक दृष्टि से दूसरा होगा । ऐसा भी प्रतीत होता है कि एक विशेष प्रकार के व्यक्तित्व में एक विशेष प्रकार के लक्षण उत्पन्न होने की प्रवृति होती है ।

किन्तु दूसरे मानस चिकित्सकों का विचार है कि कोई भी भाव किसी भी संस्थान को प्रभावित कर सकता है । उदाहरणतया जिस रोगी का आमाशय दुर्बल है उसमें क्रोध आने पर आमाशय या उदर संबंधी लक्षण हो सकते हैं । यदि श्वास संस्थान दुर्बल है या उसमें पहले से कोई संक्रमण है तो उसमें तत्सन्बन्धी अर्थात् श्वास वेग आदि लक्षण उत्पन्न हो सकते हैं ।

साइकोसोमेटिक (मानस शरीर) लक्षण भावात्मक प्रभाव, विरोध तथा तनाव एक प्रकार की व्यग्रता (Anxiety) उत्पन्न कर देते हैं, जो नाड़ी संस्थान पर अधिक समय तक क्रिया करके शरीर की स्वाभाविक नियमितता को विकृत कर देती है । परिणामस्वरूप विभिन्न संस्थानों के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं । आयुर्वेद में वायु को मन तथा इन्द्रियों का प्रेरक व नियामक माना गया है । काम, क्रोध, शोक, मद आदि मानस विकारों से वायु का प्रकोप तथा क्रोध से पित्त का प्रकोप होता है । इस प्रकार का उल्लेख चरक आदि आचार्यों ने किया है, काम शोक भयाद वायुः क्रोधात पित्तम (च.चि. 3/115) हृदय का सम्बन्ध साधक पित्त और कफ से बतलाया गया है । तर्पक कफ इन्द्रियों का तर्पक है और उसका सम्बन्ध इन्द्रियों व मन के साथ आता है । इस प्रकार भाव दशाओं का प्रभाव त्रिदोषों तथा तद्द्वारा शरीर पर पडे, यह स्वाभाविक है ।

(1) **रक्तवह संस्थान** (Cardio Vascular System) :- व्यग्रता (Anxiety) यदि लम्बे समय तक तनाव की स्थिति उत्पन्न करती रहे तो वह हृदय के लक्षणों में अधिक व्यक्त होती है । हृदय प्रदेश का शूल, तीव्रगति श्वासकृच्छता, क्लान्ति, मूर्च्छा अनिद्रा-ये लक्षण प्रायः होते हैं । पहले कहा जा चुका है कि आन्तरिक भावात्मक तनाव यदि मुक्त न हो तो वह रक्तभार बढ़ा देता है जिसका एक लक्षण भ्रम होता है । प्रारम्भिक रक्ताभार (सिरापूर्णता) से पीड़ित रोगियों में पाचन संस्थान के लक्षण, शिरों में विकार तथा क्लान्ति आदि लक्षण भी होते हैं जो उन्हीं मानसिक कारणों से होते हैं । जिनसे रक्तभाराधिक्य होता है । आयुर्वेद के अनुसार भ्रम का कारण वायु व पित्त प्रकोप दोनो होते हैं । भय और चिन्ता से वायु का प्रकोप होकर उससे रक्त प्रकोप होता है और भ्रम (Vertigo Hypertension) उत्पन्न होता है । सुश्रुत ने 'रजः पित्ता निलाद् भ्रमः (सु-शा. 4/56) कह कर भ्रम के कारणों से रजोगुण का वर्णन किया है । अर्थात् भ्रम का एक मूल कारण मानसिक भी है यह संकेत किया है जो आधुनिक चिकित्सा शास्त्रों में भी कहा गया है । इसका अर्थ यह नहीं है कि मानस चिकित्सा से शारीरिक क्रिया को बदला जा सकता है किन्तु यह अवश्य है कि इन कारणों की खोज और चर्चा से रोगी को अधिक संतुष्ट किया जा सकता है ।

(2) **पाचन संस्थान** (Gastro Intestinal System) :- इस संस्थान के लक्षणों में अरुचि, उत्क्लेश, अजीर्ण (वातिक nervous) वान्ति, उद्गार बाहुल्य, आध्मान, आमाशयशूल मुख्य है । अनेक बार उदर शूल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को जीर्ण अन्त्रपुच्छ शोथ (Chronic appendicitis) मानकर शल्यकर्म कर दिया जाता है। कभी-कभी पित्ताशय भी निकाल दिया जाता है। किन्तु उससे रोगोपशम नहीं होता, प्रवाहिका ग्रहणी रोग भी भावात्मक कारणों से हो सकते हैं। ग्रहणी व्रण (Peptic ulcer) शारीरिक व मानसिक दोनों कारणों से होता है। वृहदंत्रश्लेष्मिक कलाशोथ (Mucous Colitis) के कारणों में भी बार-बार व्यग्रता क्षोभ या अपराधभावना कारणीभूत होते हैं।

(3) **श्वसन संस्थान** (Respiratory System) :- इस रोग को अनूर्जतानन्य श्वास (Allergy asthma) माना जाता है किन्तु इस रोग की उत्पत्ति प्राय: मानसिक कारणों व्यग्रता आदि से मानी जाती है। वस्तुत: एलर्जिक व मानसिक दोनों कारण एक दूसरे के पूरक हैं। सहसा तीव्र भयोदय के समय श्वास का वेग आ सकता है। 50 एलार्जिक श्वास रोगियों में से 37 रोगियों में वेग का कारण भावात्मक पाया गया है।

(4) **प्रजनन एवं मूत्र संस्थान** (Genito urinary System) :- यह संस्थान इतना महत्वपूर्ण है कि इसके रोगों में मनोविकारों का कारणीभूत होना आश्चर्य का विषय नहीं मानना चाहिये। त्रुटिपूर्ण शिक्षा के कारण अनेक भ्रामक कल्पनाएं इस संस्थान के विषय में युवक युवतियों में भर जाती हैं। प्राय: विरोधात्मक (Conflicting) तथा भावों की दृष्टि से असामन्जस्यपूर्ण (Unreconcilable) स्थिति के कारण इस संस्थान के विकार होते हैं। वस्तिशूल, कष्टार्तव, स्त्री में कामाभाव तथा पुरुष में नपुंसकत्व प्राय: मानसजन्य होता है। यह स्मरण रखना चाहिए कि मानसिक समस्या के हल के लिये विवाह या गर्भ की सिफारिश करना उचित नहीं है। इस प्रकार अनेक संस्थानों से सम्बन्धित रोग मूलत: मानसिक कारणों से होते हैं जिनका वर्णन इस चिकित्सा शाखा में किया जाता है।

पहले कहा जा चुका है कि मानसिक व्यग्रता अनेक शारीरिक लक्षणों में व्यक्त होती हैं। रोगी इन्हीं लक्षणों को रोग समझता है, उसे यह ध्यान में नहीं आता कि उसकी मुख्य कठिनाइयां हैं उसके आन्तरिक विरोध (Conflicts) तथा व्यक्तिगत जीवन में व्यवस्था, शान्ति तथा सुरक्षा स्थापित करने की अयोग्यता व असमर्थता है। रोगी भले ही यह न समझे किन्तु चिकित्सक को यह नहीं भूलना चाहिये कि शरीर के अवयव मानसिक व्यग्रता के प्रति अनेक प्रकार से प्रतिक्रिया करते हैं। यह तथ्य न समझ पाने से ही निदान व चिकित्सा में अनेक त्रुटियां होती है। 'Sick man's personality must be judged along with the physical and laboratory date' अर्थात भौतिक व रसायन शालीय परीक्षणों के साथ-साथ रोगी के व्यक्तित्व को समझने की अवश्य चेष्टा करनी चाहिये। चरक ने आतुर परीक्षा वर्णन करते समय प्रकृति व सत्व परीक्षा का भी वर्णन किया है। "तस्मादातुरं परीक्षेत-प्रकृतितश्च, विकृतितश्च, सारतश्च, संहननतश्च, प्रमाणतश्च सात्म्यतश्च, सत्वतश्च, आहरशक्तितश्च, व्यायामशक्तितश्च, वयस्तश्चेति बल प्रमाण विशेषग्रहण: हेतो: ।। (च.वि. 8/105)

इन प्रकृति व सत्व शब्दों को सम्यक् समझकर गहरा अर्थ लेना चाहिये और रोगी के सम्पूर्ण व्यक्तित्व उसके मानसिक भावों, संघर्षों और विरोधों को समझने की चेष्टा करनी चाहिए। ऐसा करने से रोग निदान विनिश्चय में सरलता होगी और तदुनसार चिकित्सा से सफलता भी मिलेगी। यह स्मरण रखना चाहिये कि आयुर्वेदीय कल्पना एकाकी नहीं सर्वांगीण है। आयुर्वेद रोगी को केवल मन या शरीर नहीं समझता अपितु आत्मा, मन और भौतिक शरीर या पंचभूत समुदाय इन सबसे निर्मित एक संश्लिष्ट प्राणी समझता है। आयुर्वेद में आधुनिक विज्ञान के समान एकांश को लेकर भले ही विज्ञान की शाखाओं का विकास उपलब्ध न हो किन्तु सर्वांगीण समन्वित व्यक्तित्व उसकी आंखों से ओझल नहीं होने दिया जिस समन्वित व्यक्तित्व के प्रति अब आधुनिक विज्ञान की दृष्टि तीव्रता से सजग हुई है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बच्चों के सर्वांगीण विकास में आयुर्वेद की भूमिका

डा० रंजना रस्तोगी

बाल्यावस्था आयु की सर्वाधिक महत्वपूर्ण अवस्था होती है । जन्म से लेकर युवावस्था आने से पूर्व तक की इस अवस्था में डाले गये अच्छे-बुरे गुणों तथा संस्कारों के आधार पर ही बहुधा भविष्य के जीवन की रूपरेखा निर्भर करती है । यह भविष्य न केवल सामाजिक तथा आर्थिक दृष्टि से बल्कि स्वास्थ्य की दृष्टि से भी सबल हो सकता है यदि बाल्यावस्था में हमने इसके लिये उपयुक्त नींव डाल ली हो ।

आयुर्वेद को यदि इसके विशिष्टीकृत रूप में देखें तो उसमें बाल स्वास्थ्य का विशेष उल्लेख नहीं है और जो है वह कई अर्थों में बाल्यावस्था का परिपूर्ण रूप में प्रतिनिधित्व नहीं कर पाता । काश्यप संहिता आयुर्वेद के प्राचीनतम ग्रंथों में से एक है जिसे स्त्री, प्रसूति तथा बालरोग विषय पर आधिकारिक पुस्तक कहा जा सकता है । मूलतः चिकित्सा विज्ञान की पुस्तक होने के नाते इसकी विषय वस्तु बाल्यवस्था में होने वाले रोगों व उनके प्रतिषेध तथा उपचार को लेकर है । इसके अतिरिक्त इसकी विशेषज्ञता का क्षेत्र नवजात शिशु परिचर्या तथा नवजात में रोगों की पहचान व चिकित्सा है । बच्चों के सर्वांगीण विकास में आयुर्वेद को यहां पर उसके बृहत्तर रूप में प्रयोग में लाना समीचीन है । प्राचीन भारतीय दर्शन, संस्कृति तथा आयुर्वेद का समन्वित रूप यदि समुचित ढंग से समझा जा सके तथा प्रयोग में लाया जा सके तो सम्भवतः यह इस समय के मानव के लिये सर्वाधिक लाभ का सौदा होगा ।

सबसे पहले बात करते हैं शिशु के जन्म से पहले भावी माता-पिता के मन में उसकी मानसिक तैयारी की । आधुनिक समाज में इस दृष्टिकोण को लेकर काफी परिवर्तन हुआ है तथा अब शिक्षित वर्ग इसकी आवश्यकता को महसूस करने लगा है । विवाह योग्य आयु का निर्धारण इस दृष्टिकोण से सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथा प्रारम्भिक बिन्दु कहा जा सकता है । पुरुष की आयु पच्चीस वर्ष तथा स्त्री की आयु अठ्ठारह वर्ष से अधिक होने पर ही विवाह को उपयुक्त माना जा सकता है । आयुर्वेद में विवाह की आयु के निरीक्षण के उपरान्त सगोत्रीय विवाह का स्पष्ट प्रतिषेध किया गया है । आधुनिक आनुवंशिकी विज्ञान की पृष्ठ भूमि में यह स्पष्ट है कि सगोत्रीय विवाह बहुधा मानसिक तथा शारीरिक रूप से अस्वस्थ संततियों का कारण बनते हैं क्योंकि ऐसे संयोगों में खराब गुणों वाले अप्रभावी जीनों के आपस में एकत्र हो जाने से उनके लक्षण प्रभावी होकर संतति में प्रकट हो जाते हैं ।

आधुनिक मातृ व शिशु परिचर्या काफी परिष्कृत तथा समन्वित हो चुकी है । आयुर्वेद में न केवल प्रसव बल्कि प्रसव पूर्व की परिचर्या का भी विशद उल्लेख है । गर्भ के समुचित विकास के लिये आवश्यक पोषण, दिनचर्या में समाविष्ट किये जाने तथा प्रतिबंधित कार्यों का उल्लेख तथा सामान्य कठिनाइयों का सुलभ उपचार, यह सभी अपने आप में आवश्यक व महत्वपूर्ण है । गर्भ के मासानुमासिक विकास क्रम के अनुरूप भावी माता के भोजन में मासानुमासिक परिवर्तन आयुर्वेदीय दर्शन का मौलिक चिन्तन है जो गर्भ के समुचित विकास को सुनिश्चित करता है । निश्चय ही इस प्रकार की परिचर्या का पालन करने से न केवल मां बल्कि बच्चे को भी भविष्य में होने वाली अनेक बीमारियों से बचाया जा सकता है ।

जातकर्म संस्कार अर्थात् बच्चे के जन्म के उपरान्त किये जाने वाले संस्कारों का न केवल हिन्दू कर्मकाण्ड की दृष्टि से बल्कि स्वास्थ्य की दृष्टि से भी अत्यधिक महत्व है । जन्म के उपरान्त बच्चे को विषम भाग में मधु तथा घृत व स्वर्णभस्म तथा वचा आदि चटवाने का विधान

लेक्चर व परामर्श विशेषज्ञ, स्त्री प्रसूति एवं बाल रोग निवारण, राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय एवं चिकित्सालय, लखनऊ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है । स्वर्ण जहां एक ओर श्रेष्ठ मेधा कारक व प्रभाकारक माना गया है वहीं इसकी उपस्थिति नवजात के फेफड़ों तथा हृदय की सम्यक क्रियाशीलता लाने में सहायक सिद्ध होती है । बहुधा प्रसव की अवधि लम्बी खिंच जाने पर गर्भस्थ शिशु को समुचित पोषण नहीं मिल पाता है जिससे प्रसव के उपरान्त उसका शारीरिक कफ का स्तर गिर जाता है । मधु तथा घृत का विषम योग इसे पुनः सामान्य स्तर तक लाने, अग्नि को प्रदीप्त करने तथा रोगप्रतिरोधक शक्ति को बढ़ाने में सहायक होता है । जन्म के तुरन्त पश्चात् बहुधा फेफड़े तथा श्वास नली एक दम से सक्रिय नहीं हो पाते और श्वास नली में कफ के जमा रहने के कारण श्वसन में परेशानी उत्पन्न हो सकती है । ऐसे में बच्चा कण्ठगत कफ का विगलन कर सम्यक श्वसन को सुनिश्चित करता है ।

बच्चे को जन्म के उपरान्त तुरन्त ही मां के पास रखना चाहिये तथा जितना शीघ्र हो सके उसे मां का दूध पिलाना चाहिये । ये दो तथ्य आयुर्वेद के चिर प्राचीन तथा प्रमाणित व परीक्षित तथ्य हैं यद्यपि आधुनिक विज्ञान ने इस सामान्य से सिद्धान्त को भी बहुत समय संशय में घेरे रखा । इस संदर्भ में वर्तमान का सबसे महत्वपूर्ण तथ्य हैं, मातृ दुग्ध में आवश्यक वसा अम्लों की उपस्थिति जो शिशु के तंत्रिका तंत्र व मस्तिष्क के समुचित विकास के लिये आवश्यक है । मातृदुग्ध के अनावश्यक परहेज से शिशु में इन आवश्यक तत्वों की कमी के कारण मस्तिष्क के समुचित विकास में बाधा पहुंच सकती है । कई बार कुछ विशेष परिस्थितियों में माता के विशेष रूप से रुग्ण होने पर या दुग्ध की मात्रा पर्याप्त न होने पर किसी सहायक उपादान की आवश्यकता पड़ सकती है । ऐसे में डिब्बा बंद दूध के स्थान पर आयुर्वेद में एक विशिष्ट उपाय धात्री के रूप में बतलाया गया है । लोक में प्रचलित धाय या धाय मां के नाम से जाने वाले इस पात्र का विशेषार्थक कार्य है नवजात शिशु का धारण करना तथा भरण-पोषण करना । आधुनिक समाज में जहां अब निस्संतान दंपत्तियों के लिये 'सरोगेट मदर' जैसी विचार धारा का प्रचलन बढ़ रहा है जिसमें निषेचित अण्डाणु को किसी अन्य स्वस्थ स्त्री के गर्भाशय में रोपित कर दिया जाता है, धात्री की विचारधारा आयुर्वेद की मौलिकता तथा समकालीन आधुनिकता को इंगित करती है । बाल स्वास्थ्य की दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथ्य इसमें यह है कि मां के द्वारा समुचित रूप से दुग्ध प्रदान न किये जाने की स्थिति में भी बच्चे को पूर्ण पोषण उपलब्ध होता रहता है । धात्री का चयन भी खासे कड़े स्वास्थ्य निर्देशकों के अनुरूप किया जाता है । स्वास्थ्य, शुचिता, बच्चे के प्रति अनुरागी, जीवित वत्सा आदि इसके महत्वपूर्ण बिन्दु हैं ।

संक्रामक रोगों से बचाव के लिये जहां आधुनिक विज्ञान टीकाकरण पर जोर देता है आयुर्वेद इसके विपरीत शरीर की प्रतिरोधक शक्ति को बढ़ाने तथा विसंक्रमण पर जोर देता है । बच्चे तथा मां के निवास के स्थान का चयन इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है । स्वच्छ, हवादार कमरे जिसमें सीधी हवा का प्रवेश न होता हो पर हवा तथा धूप का पर्याप्त आवागमन होता हो, अच्छी तरह से पुता हुआ तथा रसोध्न औषधियों से अभिमंत्रित कमरा इस दृष्टि से अभिप्रेत है । रसोध्न कर्म/आयुर्वेद में विसंक्रमण की विशिष्ट पद्धति है । नीम, गुग्गुल, रास्ना, वचा, एरंड, जटामांसी, तगर आदि इस दृष्टि से महत्वपूर्ण औषधियां हैं । अधिकांश संक्रामक व्याधियों के जनक कारण विषाणु अथवा जीवाणु बहुधा नम व समशीतोष्ण वातावरण में अधिक पनपते हैं । इस तरह अधिकांश संक्रामक व्याधियों का जनन, आयुर्वेद मतानुसार वात कफज वातावरण में होता है । उपरोक्त औषधियां मूल रूप से वात-कफ शामक हैं तथा आश्चर्य जनक रूप में न केवल शरीरगत दोषों के साम्य को स्थापित करने में सहायक हैं बल्कि वातावरण के त्रिदोष साम्य को स्थापित करने में भी सहायक होते हैं । आयुर्वेद के सिद्धान्त लोक पुरूष साम्य अर्थात् वातावरण व हमारे शरीर की आंतरिक कार्यिकी के तालमेल का यह अद्‌भुत उदाहरण है । भारत में नीम,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसी आदि के विषोघ्न गुणों के बारे में जानकारी सर्वत्र उपलब्ध है तथा रोगों के बचाव के लिये इनके पौधों का घरों के आस-पास लगा होना ही काफी माना जाता है । उपरोक्त औषधियों को कमरे व निवास स्थान में यत्र-तत्र रख लेने से संक्रमण की समस्या समाप्त हो सकती है ।

नवजात की परिचर्या से संदर्भित अन्य संस्कार तथा सूतिका की विचारधारा भी बाल स्वास्थ्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण है । प्रसव के उपरान्त लगभग पैंतालीस दिनों का समय सूतिका काल कहा गया है जिसमें प्रसूता स्त्री के आहार-विहार को लेकर कुछ विशेष नियम रखे गये हैं । इसका उद्देश्य भी प्रसूति के उपरान्त आरम्भिक काल में संक्रामक रोगों से बचाव तथा नष्ट हुये बल को पुनः प्राप्त कर लेना है । गर्भाशय को प्रसव के उपरान्त अपनी सामान्य अवस्था में आने में भी लगभग इतना ही समय लग जाता है ।

अन्नप्राशन संस्कार नवजात शिशु के संस्कारों में एक अन्य महत्वपूर्ण संस्कार है । लगभग छह मास की आयु के उपरान्त शिशु की पोषण आवश्यकतायें मात्र दुग्ध से पूरी नहीं पड़ पातीं । ऐसे में उसे आंशिक रूप से अन्न व फल, सब्जियां आदि देना शुरू किया जा सकता है ।

भवन का स्वरूप कैसा होगा यह बहुत कुछ इस पर निर्भर करता है कि उसकी नींव कैसी डाली गई है कुछ इस प्रकार से भविष्य का स्वास्थ्य बचपन में समुचित लालन-पालन पर निर्भर करता है । आयुर्वेद के सिद्धान्तों का अनुपालन कर स्वदेशी तरीकों से, कम खर्च में ही उत्तम शिशु परिचर्या कर एक सुन्दर तथा स्वस्थ युवा पीढ़ी की नींव रखी जा सकती है ।

अब भूल जाइये
महीने की चिंता

सुन्दरी कल्प के नियमित सेवन से सिर्फ आपका मासिक तनाव दूर नहीं होता है बल्कि आपके शरीर को मिलती है :

* मासिक धर्म की अनियमितता एवं दर्द से राहत । * रक्त शुद्धिकरण से कान्तियुक्त त्वचा ।
* पोषण से सम्बन्धित विकारों का समाधान ।

आज ही सुन्दरी कल्प अपनाएँ और अपने शरीर को रखें स्वस्थ एवं निरोग, महीने भर ।

बैद्यनाथ

सुन्दरीकल्प फोर्ट

"अब आप भी अपना ख्याल रखिए"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिमाचल प्रदेश की सराहन घाटी में बहुतायत में स्थित दारूहरिद्रा तथा पाषाण भेद का औषधिय महत्व

डा० राजेश शर्मा

यद्यपि तो प्रकृत्ति का सौन्दर्य जगह-जगह बिखरा पड़ा है, पर जहाँ नैसर्गिक सौन्दर्य के साथ धार्मिक आस्था भी जुड़ जाय तो वह स्थान निश्चित ही विशिष्ट हो जाता है, ऐसा एक रमणीय स्थल सराहन बुशैहर है जो कि ज्यूरी से 17 कि.मी. की दूरी पर स्थित है । यहाँ पर हिमाचल प्रदेश का प्रसिद्ध तीर्थ स्थल माँ शीभाकाली का प्राचीन एवं आकर्षक मन्दिर स्थित है । सराहन बुशैहर शिमला जिला में स्थित है । यहाँ पर यात्रियों के ठहरने के लिए मन्दिर ट्रस्ट का यात्री निवास तथा हिमाचल प्रदेश टूरिज्म वालों का भव्य होटल श्री खण्ड भी स्थित है । सराहन घाटी पर्यटन, धार्मिक महत्व के साथ-साथ वनस्पतियों के लिये भी उतनी ही आवश्यक है । यहाँ पर विभिन्न प्रकार की वनस्पतियाँ पाई जाती हैं जिनमें दारूहरिद्रा, पाषाणभेद, वनककड़ी, वन्यगुलाब, वनतुलसी, वनयवानी, मंजिष्ठा, चिरायता, बिच्छुबुरी, धतूरा, विजया, ब्राह्मी, चिरायता, एरण्ड, बनफ्शा इत्यादि । इनमें मुख्य रूप से दारूहरिद्रा तथा पाषाणभेद तो कदम-कदम पर बहुत ही अधिक मात्रा में उपलब्ध हैं । यदि इसे दारुहरिद्रा घाटी कहें तो कोई हैरानी ना होगी । समय के अभाव तथा संसाधनों की कमी के कारण लेखक सराहन घाटी के उपर स्थित दुर्गम तथा पैदल घाटीयों में नहीं जा सका । परन्तु लेखक का विश्वास है कि यहाँ की दुर्गम घाटियों में अष्टवर्ग तथा अन्य कई दुर्लभ वनौषधियाँ पाई जाती हैं ।

दारुहरिद्रा Berberis aristata

भाषा भेद नाम :- दारुहरिद्रा के पर्याय में दारुहल्दी, दारहल्दी, काशमोई, किंगोरा, दारुहलद, दारुहलदर, कस्तूरी पुष्प, दारचोबा, कटंककेरी, इत्यादि है । यहाँ स्थानीय भाषा में इसे चुतरम कहते हैं तथा इसके काले बैंगली पके हुए फलों को चिड़ियाघर के पक्षियों को खिलाते हैं ।

रस :- इसमें तिक्त तथा कषाय रस हैं ।

वीर्य :- उष्ण

विपाक :- मधुर

तिक्त कषाय होने से यह कफ पैत्तिक विकारों में प्रयुक्त होता है । शोथ वेदनायुक्त स्थानों पर लेप के रूप में प्रयुक्त होता है । नेत्रों की तो यह प्रसिद्ध औषध है । नेत्राभिष्यन्द में रसौंत को गुलाब जल में मिलाकर नेत्र में डालते हैं । यदि नेत्रशोथ हो तो पलकों पर लेप करते हैं । नेत्रों के साथ-साथ कर्णशूल या कर्णस्राव में इसके द्रव को कानों में डालते हैं । यकृत् पर कार्य करने वाले द्रव्यों में यह सर्वश्रेष्ठ है । कामला रोग में तो दारुहरिद्रा का सेवन प्राचीन काल से हो रहा है । अर्श रोग में विशेषतः रक्तार्श में रक्त बन्द करने के लिए इससे श्रेष्ठ औषधि आयुर्वेद में कोई नहीं है । रसौंत कई बहुमूल्य नुस्खों में डाला जाता है जिनमें रसांजनवटी, दार्ण्यादिक्वाथ, दार्ण्यादि लेह, दार्ण्यादि तैल प्रमुख हैं । इसके फल का प्रयोग अरुचि तथा तृष्णा रोग में करते है । स्त्रियों रक्त प्रदर व श्वेतप्रदर में इसका प्रयोग करती हैं । फिरंग (Syphilis) में इसके क्वाथ का प्रयोग करते है ।

रसाजंन निर्माण विधि :- दारुहरिद्रा के मूल भाग (जड़) तथा मोटी मिचली स्थूल काण्ड को साफ करके 16 गुणा जल में अच्छी तरह उबाल ले । स्थूल काण्ड को तेजदार हथियार के साथ छोटे-छोटे टुकड़ों में काट लें । इससे रसौंत अच्छी बनती है । जब चर्तुथांश शेष रहे तो नीचे उतारकर छान लें । अब इसमें सममात्रा युक्त गाय का दूध मिलाकर पुनः मन्दाग्नि पर पाक करें (आग मंद रखनी हैं) जब गाढ़ा हो जाय तो उतारकर

आयुर्वेदिक चिकित्सा अधिकारी, राजकीय आयुर्वेदिक स्वास्थ्य केन्द्र, कटगाँव, जिला-किन्नौर (हि0प्र0) - 172118

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रयोग करें।

पाषाण भेद Bergenia ligulata

भाषाभेद नाम :- अश्यघ्न, पत्थरफोड़, परवान भेद, पत्थरचूर, सिलफड़ा इत्यादि नामों से प्रचलित है।

रस :- कषाय और तिक्त।

वीर्य :- शीत्त।

विपाक :- कटु

यह त्रिदोष का शमन करता है। आयुर्वेद विशाल समुद्र की तरह है जिसके गर्भ में क्या-क्या छिपा है कुछ नहीं कह सकते हैं। पाषाण भेद ऐसा ही एक वानस्पतिक द्रव्य है। इसके मूल का चूर्ण 3-6 ग्राम कुलत्थी के क्वाथ से देने से गुर्दे की पथरी टूट-टूट कर बाहर आ जाती है। विभिन्न आयुर्वेदिक औषध निर्माता कम्पनिया ने अश्मरी के लिए अपनी Patent औषधियों में पाषाणभेद का प्रमुखता से प्रयोग किया है। मूत्रकृच्छ्र श्वेत व रक्त प्रदर में इसका प्रयोग किया जाता है।

नेत्राभिष्यन्द में इसका लेप करते हैं। बच्चों के दाँत निकलते समय इसे मधु के साथ पीसकर लगाते हैं। दाँत आसानी से निकल आते हैं। कफ को बाहर निकालने के लिए इसका प्रयोग करते हैं। इसके अतिरिक्त अहिफेन विष में इसका प्रयोग करते हैं। इसका क्वाथ 50-100 मिली की मात्रा में प्रयोग करते हैं।

अश्मध्नकषाय, पाषाणभेदादि क्वाथ तथा पाषाण भेदादि घृत इसके प्रमुख योग हैं।

बैद्यनाथ
दादुरिन
यह त्वचा के भीतर पहुंचकर दाद के कीड़ों को नष्ट कर देती है।

बैद्यनाथ
ऱ्यूमार्थो
जोडों के दर्द से आराम देने वाली सुरक्षित दवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Best paper prize was awarded to this paper at the seminar on Ayurveda, at Govt. Ayurvedic college, Patna on 25th December 2001. Valedictory ceremony was graced by Dr. C.P. Thakur, The then Health Minister, Govt. of India.

STUDY ON EFFECT OF ABHRAKA SATVA BHASMA IN ALLAXON INDUCED HYPERGLYCEMIA

Dr. Ajit Kadam[1]
Dr. T. Maheshwar[2]
Dr. C.B. Jha[3]

INTRODUCTION :

If we see the chronological development of Bhaishajya Kalpana & Rasa-Shastra, these branches were in the first stage of development during classical Ayurvedic period. At that time mainly herbal & few mineral medicines were in use. With the development of Rasa Shastra the byproducts produced during alchemical processes were found to be highly useful in preventing & curing diseases. Being highly efficacious in small doses & having long shelf life, mineral medicines became very popular among Ayurvedic physicians in short period of time. In the later period, the scholars observed that, the metal extracted from the minerals were many times effective than original material for Alchemical as well as therapeutic purpose. Keeping this in view they developed metal extraction method, denoted as 'Satvapatana' and the metal extracted as "Satva". Actually the history of satvapatana is as old as history of metals. In "Yajurveda" the origin of metals has been claimed through yajnya karma. Because of continuous heating at high temperature during yajnya karma metallic compounds in the earth crust reduced to metal. Here we are dealing with Abhraka Satva patana & Abhraka Satva.

DESCRIPTION OF ABHRAKA :

Abhraka is the second most important drug of Rasa Shastra (R.S.). In the texts of Rasa-Shastra it is claimed that medicines prepared from Abhraka are very efficacious & highly potent. Gautam 2nd cen. A.D. in Nyaya Sutra has mentioned Abhraka for the first time. India during 1st country started use of Abhraka for various Alchemical & therapeutic purpose. All the Rasa texts have placed Abhraka next to Mercury on the basis of its role in mercurial processings. Chakradatt was the first physician who started internal use of Abhraka. Out of various types of Abhraka, Krishna Vajra Abhraka is said to be the best variety for therapeutic and alchemical processes.

Abhraka in Modern Science : It is known as MICA.

(i) Definition : "MICA is a particular family of mineral, consisting essentially silicates of Aluminum with varying proportion of Alkalis, Iron oxide, Magnesia etc. and are characterized by a highly natural crystal to be readily split into very thin plates."

(ii) Chemically : Micas are silicates & in most cases cause orthosilicates of Aluminum with potassium & Hydrogen etc.

Abhraka Satva (A.S.) : Abhraka Satva is a metallic extract of Abhraka. According to R.R.S. no other substance in the world is better than Abhraka Satva for making Hg thermo stable. It is said that Abhraka Satva Bhasma is 8 times (Ref. R.H.T.)/10 times (Ref. Rasarnava) more potent than Abhraka bhasma (Abhraka Bhasma). About 10 methods and 40 various drugs are described for this process. Here for extraction of Abhraka Satva, the standard procedure was adopted from the thesis "Study on satvapatana with special reference to Abhraka & Makshika" by Dr. C.B. Jha et al. (1990).

AIM & OBJECT :

Though being a highly effective & potent medicine Abhraka Satva Bhasma (A.S.B.) is hardly used in routine practice. The reasons behind this seem to be a tedious process of satvapatana and small amout of satva recovery. The present study was undertaken to reveal the facts & figures for the users of this drug on the

1. B.A.M.S. (Pune), M.D. (Scholar), 2. M.D. (Rasa-shastra), 3. Reader & Head.
All from Dept. of Rasa-Shastra, Institute of Medical Sciences, B.H.U., Varanasi.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

basis of scientific up-to-date knowledge. The problem has been studied at its literary level, pharmaceutical standardization, chemical analysis and at the level of experimental study.

Pharmaceutical Study : (Abhraka Satva Patana)

Material -

1. Krishna Vajra Abhraka
2. Musali
3. Furnace
4. Graphite Crucible
5. Lining Material
6. Tankana

Methods -

1. Shodhana
2. Dhanyabhrakikaran
3. Pelletization
4. Preparation of crucible
5. Smelting
6. Collection of Satva
7. Satva Marana

DISCUSSION :

1. Preparation of Charge Material and Pelletization :

Krishna vajrabhraka was taken for satva patana. Its shodhana was done by heating to red hot & quenching into decoction of Triphala for seven times. After that Dhanyabhraka was made to get homogeneous Abhraka particles & to remove impurities Dhanyabhraka was mixed with ¼th part of Tankana & decoction of ¼th part of Musali powder, triturated and small spherical balls were made & dried in sun.

2. Crucible Preparation :

Instead of musa, standard graphite crucible, obtained from local market was used. The inner & outer surface of the crucible were lined with a mixture of Alumina, 3% sodium silicate & water. After lining it was dried, first in sun & then kept in drying oven at 200°C for 6 hours. Lining was given to resist high temperature and to prevent the reaction between graphite & charge material during smelting.

3. Heating Schedule :

Temperature was given in electric muffle furnace (Silicon Carbide electric Muffle furnace) having capacity to raise the temperature upto 1700°C. The prepared spherical balls were kept in a crucible & it was kept inside the electric furnace.

The temperature was raised slowly 5°C/min. & maintained at 1000°C for 3 hours after the temperature raised upto 1400°C and maintained for 1 hour. The furnace was put off to allow the charge material to cool in the furnace by itself. On next day slag & metal were separated from curcible.

4. Preparation of Abhraka Satva Bhasma:

The pharmaceutical process of ASB may be divided into three parts :

(i) Mridukarana (Softening)
(ii) Shodhana
(iii) Marana (incineration)

A) Abhraka Satva Mridukarana -

For this the hard satva material was heated to red hot in a big iron spoon & was dipped into Honey, Oil, Fat (vasa) & Ghee for 10 times in each liquid. After Completion of the process the hard metal in button form turned into soft & brittle material.

B) Abhraka Satva Shodhana -

It includes samanya & vishesha shodhana.

(a) Samanya Shodhana - In this process, softened satva heated to red hot & dipped in freshly prepared decoction of triphala. This process was repeated for 7 times. (R.T.).

(b) Vishesha Shodhana - The samanya shodhita Abhraka Satva was again heated to red hot in a big iron spoon & dipped in Kanji containing grass & immediately crushed in an iron mortar. This process was repeated for several times till it gets converted into fine powder. This powder was fried with Ghee & Amalaki Swarasa for 3 times. After each frying the powder was ground well.

5. Abhraka Satva Marana :

There are two method for Abhraka Satva Marana (i) Putapaka (ii) Kupipakva Vidhi. Of which Kupipakva Vidhi was selected. Abhraka Satva was mixed with ½part samaguna kajjali &

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

triturated well with Kanji, after drying the powder was filled in kachakupi having seven coatings of cloth smeared with mud. Then it was subjected to heat through electric furnace. Temp. was given upto 700°C. The whole process was repeated for 7 times, Bhasma shows all character of good bhasma e.g. Rekhapurnata, Varitaratva, Nischandratva, Apunarbhava.

Physical properties of Abhraka Satva Bhasma it is said that :

अभ्रसत्वं सुषिषिरं मधुरं रूचीरं परमं ।
सुस्निग्धं केश्यं आयुष्यं त्रिदोषघ्नं रसायनं् ॥ र.त.

Colour of Abharaka satva :

Ras Hriday Tantra - Lohanibha, Suwarvarna Devamukhtulya

Ras Prakasha Sudhakara - Kamsyanibha

Properties of Abhraka Satva Bhasma -

Rasa - Madhura,
Vipaka - Madhura
Virya - Atisheeta
Doskarma - Tridoshaghna
Karma - Rasayan, Vajikarana, Keshya Ayushya, Santanakara, Punsatva Janana, Vayasthaapana.

Chemical Analysis of Abhraka Satva Bhasma

Table showing the chemical composition of Abhraka Satva & Slag :

Abhraka Satva		Slag	
Fe	98.2%	Fe	10.7%
Al	0.8	Al_2O_3	87.3
Si	0.45	SiO_2	40.2
Mg	Nil	MgO	7.2
Ca	Nil	Cao	0.8
Ti	0.1	TiO	0.3%

Trace Elements in Abhraka Satva & Slag - (in ppm)

	Cu	Co	Ni	Mg	Al	Sn	K	V
Satva	3+	60	Trace+	+	+	+	Trace	12.5 ppm
Slag	260	nil	nil	trace	nil	nil	+	nil

EXPERIMENTAL STUDY :

Introduction :

The present day trend demands the scientific research for the drug effects. Experimental model is the tool of research and it is scientific approach to investigate effects of a drug. So in order to verify the claims on scientific lines the animal experimentation is prima-facie necessary to be supplemented by clinical research for a valid conclusion.

Materials :

Animals - Albino rats of either sex weighing 150-200 gm.

Drugs - Abhraka Bhasma
Abhraka Satva Bhasma
Glibenclemide
Gum acacia powder
Chemical - For blood sugar estimation SPAN blood sugar estimatio locks.
For induction of Diabetes Allaxon monohydrate.

Method :

The present study has been divided int following three experiments -

I- (a) Study on the effect of Abhraka Bhasm on normo-glycemic Albino rats
(b) Study on the effect of Abhraka Satv Bhasma in normo-glycemic Albino rat
II. (a) Study on the prophylactic effect Abhraka Bhasma in albino rats
(b) Study on the prophylactic effect Abhraka Satva Bhasma in albino rats

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

III. (a) Study on the effect of Abhraka Bhasma on allaxon induced hyperglycemia in albino rats

(b) Study on the effect of Abhraka Satva Bhasma on allaxon induced hyperglycemia in albino rats

Dosage Schedule - Minimum 25mg/Kg & maximum 50 mg/kg of animal

Exp. 1

Evaluation of effect of AB&ASB in normo-glycemic rates:

5 groups were made, 6 animals each

Group A = Control-treated with gumacacia mucilage

Group B = Treated with 25 mg/kg A.B.

Group C = Treated with 25 mg/kg A.S.B.

Group D = Treated with 50 mg/kg A.B.

Group E = Treated with 50 mg/kg A.S.B.

The Blood Sugar Level was estimated before starting treatment & on 3rd, 6th & 10th day after treatment.

Table : Showing effect of drugs on normo-glycemic Rates (Data represent mean BSL, ± SE, 't', 'p' values.)

Gr.	Initial	3rd day	6th day	10th day	't' 'p' value
Control	92.33±3 A_1	90.66±2.47 A_2	91.33±2.47 A_3	91.5±2.14 A_4	$A_1:A_2 = 0.49$ >0.05 NS $A_1:A_3 = 0.225$ >0.05 NS $A_1:A_4 = 0.22$ >0.05 NS
AB 25mg/kg	86.5±4.58 B_1	92.33±3 B_2	89.0±3.16 B_3	89.0±3.16 B_4	$B_1:B_2 = 1.06$ >0.05 NS $B_1:B_3 = 0.45$ >0.05 NS $B_1:B_4 = 0.45$ >0.05 NS
ASB 25mg/kg	80.6±4.58 C_1	92.31±3 C_2	89.0±3.16 C_3	84.83±4.72 C_4	$C_1:C_2 = 2.02$ >0.05 NS $C_1:C_3 = 1.43$ >0.05 NS $C_1:C_4 = 0.60$ >0.05 NS
AB 50mg/kg	76.5±3.8 D_1	89±3.16 D_2	79±4.83 D_3	79.1±4.82 D_4	$D_1:D_2 = 2.53$ >0.05 NS $D_1:D_3 = 0.40$ >0.05 NS $D_1:D_4 = 0.42$ >0.05 NS
ASB 50mg/kg	77.6±3.8 E_1	79±4.83 E_2	84.0±4.72 E_3	83.16±4.36 E_4	$E_1:E_2 = 0.22$ >0.05 NS $E_1:E_3 = 1.05$ >0.05 NS $E_1:E_4 = 0.91$ >0.05 NS

Exp No. 2

Evaluation of prophylactic effect of AB & ASB in albino rats.

3 groups were made each containing 6 rats.

Gr. 1 = Control

Gr. 2 = Treated with 50 mg/kg AB

Gr. 3 = Treated with 50 mg/kg ASB

Treatment was given for 10 days. Then allaxon was administered & BSL was estimated before starting treatment, 24 hr., 48 hr. & 10 days after allaxon administration.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Table : Showing prophylactic effect of Abhraka Bhasma & Abhraka Satva Bhasma (Data represent means BSL ± SE 't', 'p' values on 1,2, 10 days after allaxon administration)

Gr.	Initial B.S.L.	after pre treatment	After 24 hr	After 48 hr	After 10 days	't'	'p' value
Control	79.0 ±4.83 A_1	78.04 ±4.72 A_2	236.14 ±0.97 A_3	286.9 ±0.86 A_4	290 ±12.96 A_5	$A_1:A_2 = 0.14$ $A_1:A_3 = 81.93$ $A_1:A_4 = 42.25$ $A_1:A_5 = 15.25$	<0.05 NS <0.001NS <0.001NS <0.001NS
AB 50mg/kg	74.83 ±2.38 B_1	76.45 ±3.8 B_2	234.0 ±0.63 B_3	284.5 ±0.63 B_4	288.2 ±15.86 B_5	$B_1:B_2 = 0.36$ $B_1:B_3 = 66.87$ $B_1:B_4 = 85.23$ $B_1:B_5 = 13.9$	<0.05 NS <0.001NS <0.001NS <0.001NS
ASB 50mg/kg	83.16 ±4.36 C_1	80.56 ±4.81 C_2	234.5 ±0.37 C_3	285.6 ±0.57 C_4	284.1 ±13.0 C_5	$C_1:C_2 = 0.40$ $C_1:C_3 = 34.63$ $C_1:C_4 = 46.21$ $C_1:C_5 = 14.65$	<0.05 NS <0.001HS <0.001HS <0.001HS

Exp. No. 3

Evaluation of effect of AB & ASB on allaxon induced hyperglycemia in albino rates. 6 groups were made each consisting 6 rats.

Gr. A = Control, Gr. B = Treated with 25 mg/kg A.B.. Gr. C = Treated with 25 mg/kg A.S.B., Gr. D = Treated with 50 mg/kg A.B.,Gr. E = Treated with 50 mg/kg A.S.B., Gr. F = Treated with Glibenclamide 2 mg/kg.

The BSL was estimated before starting experiment, then the rats were kept under fasting for 24 hrs, after that the diabetes was induced in usual manner. BSL was estimated after 2,7,14,21 days of allaxon administration.

Table : Showing prophylactic effect of Abhraka Bhasma & Abhraka Satva Bhasma (Data represent means BSL ± SE 't', 'p' values on 0,2,14,21 days after allaxon administration)

Gr.	Initial	2nd day	7th day	14th day	21sr dyas	't'	'p' value
Control	75.0 ±2.38 A_1	274.0 ±15.03 A_2	283.4 ±4.13 A_3	278.5 ±12.89 A_4	269 ±14.03 A_5	$A_1:A_2 = 13.0$ $A_1:A_3 = 0.47$ $A_1:A_4 = 0.22$ $A_1:A_5 = 0.23$	<0.001HS >0.05 NS >0.05 NS >0.05 NS
AB 25mg/kg	77.13 ±4.2 B_1	281.8 ±15.8 B_2	284.4 ±12.94 B_3	268.2 ±12.20 B_4	251.9 ±10.00 B_5	$B_1:B_2 = 12.52$ $B_1:B_3 = 0.27$ $B_1:B_4 = 0.68$ $B_1:B_5 = 1.59$	<0.001HS >0.05 NS >0.05 NS >0.05 NS
ASB 25mg/kg	78.45 ±4.83 C_1	285.85 ±17.45 C_2	272.0 ±12.22 C_3	264.8 ±13.86 C_4	241.4 ±12.89 C_5	$C_1:C_2 = 11.45$ $C_1:C_3 = 0.65$ $C_1:C_4 = 0.94$ $C_1:C_5 = 2.04$	<0.001HS >0.05 NS >0.05 NS >0.05 NS
AB 50mg/kg	75.62 ±2.4 D_1	302.5 ±14.08 D_2	301.45 ±15.77 D_3	284.9 ±16.08 D_4	220 ±8.27 D_5	$D_1:D_2 = 15.92$ $D_1:D_3 = 0.64$ $D_1:D_4 = 0.82$ $D_1:D_5 = 5.42$	<0.001HS >0.05 NS >0.05 NS >0.001HS

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ASB 50mg/kg	76.52 ±3.8 E_1	289.9 ±13.0 E_2	285.88 ±15.86 E_3	241.3 ±12.37 E_4	191.4 ±4.99 E_5	$E_1:E_2 = 15.75$ $E_1:E_3 = 0.48$ $E_1:E_4 = 2.71$ $E_1:E_5 = 7.2$	<0.001HS >0.05 NS <0.001HS <0.001HS
Glibencl amide 2mg/kg	78.07 ±4.72 F_1	296.3 ±12.96 F_2	251.0 ±15.16 F_3	243.0 ±13.23 F_4	212.82 ±8.27 F_5	$F_1:F_2 = 15.82$ $F_1:F_3 = 2.27$ $F_1:F_4 = 2.88$ $F_1:F_5 = 5.42$	<0.001HS >0.05 NS <0.001HS <0.001HS

CONCLUSION OF EXPERIMENT :

(i) In normoglycemic animals none of the two bhasmas showed any significant hypoglycemic effect in 25 mg/kg to 50 mg/kg dose.

(ii) Both Abhraka Bhasma & Abhraka Satva B. do not show prophylactic effect when given in 50mg/kg for 10 days prior to allaxon administration.

(iii) For curative study AB & ASB were administered for 21 days in allaxon induced hyperglycemic rats, in two doses i.e., 25 mg/kg & 50 mg/kg. After 14 days of treatment significant fall is BSL was observed in group treated with ASB 50mg/kg & reference group. Also significant hypoglycemia was observed in the Gr. treated with AB 50mg/kg on 21st day.

The results suggest that the claim of our ancient physicians seems to be more correct. However, this experiment was of preliminary in nature, hence extensive studies at the level of mechanism of action and clinical studies are required.

References & Abbreviations :

R.T. = Rasa Tarangini, RRS = Rasa Ratna Samucchaya R.Chu. = Rasendra Chudamani,
A.K. = Anand Kand, R.Chi. = Rasendra Chintamani RHT = Rasa Hriday Tantra.

बैद्यनाथ
आयुसिड
अम्लपित्त, उदरशूल एवं कब्जियत दूर करने की दवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

OBESITY - A CRITICAL CONDITION

Dr. Nidhi Bhatt, Ph.D. Scholar
Dr. Manohar Ram, M.D. Scholar
Prof. B.L. Gaur, H.O.D.

INTRODUCTION :-

Obesity is a condition where in there is accumulation of excessive fat in the body. In Ayurveda this condition is named "Medo-Roga".

Generally, even in normal individual, there will be accumulation of fat in the breast, buttocks and abdoman. An excessive accumulation of fat will also occur in the above places. Man is in the habit of taking fat in order to get energy and heat. This will be produced after the fat is metabolised in the body. The fat is obtained from ghee, oil and other fatty substances, which are mainly used either as a drink or as a food. It may be noted here that even nerve fibre contains a fatty material. The major portion of brain and also of muscles is derived from fat. Fat is also present in some joints in order to avoid friction and damage to the part at the time of the movement. Whenever we take fat or starchy materials in excess, they will be deposited in the above mantioned places of the body. The danger of fat accumulation is that it produces cholesterol, which circulate through the blood stream, in the blood vessels and some times it is deposited in the walls of the vessels producing a disease called hypertension or high blood pressure. The liver, kidneys and heart and their functions will also get deranged there by leading to many disease.

CAUSES :-

Obesity occurs in a person who is in the habit of not doing any exercise and who eats too much of food consisting of fatty substances and carbohydrates, which produce phlegm in the body, resulting in the production of sweat because it contains fat and oily material, the medo-roga will be produced.

SYMPTOMS :-

The person will be unfit to do any work and he has difficulty in breathing on slight exertion, thirst, giddiness, excessive sleep, fatigue in his organs, excessive hunger and at times obstruction to respiration, sweating and an offensive smell from his body.

TREATMENT :-

The best treatment for obesity is to perform several exercises. The above person should also avoid sedentary habits, sleeping too much at day time and eating too much. In Ayurveda the most famous medicine for curing obesity is a resin, guggulu (latex of comniphora mukul). This gum should be purified by boiling it in the decoction (kwath) of the triphala (haritaki, vibhitak & amlaki) or cow's milk. Guggulu is present in many preparations like-Triphala guggulu, Navaka guggulu and can be given in the dose of 3 (three) tablets twice daily.

The famous decoction, which has been advocated in Ayurveda for this disease is lekhaniya mahakashaya. This can be given in the dose of 2 (two) teaspoonful twice daily.

DIET RECOMMENDED :-

One should avoid sweet, fatty things and carbohydrates in excess. All products, which contain a lot of carbohydrates like rice and potato must be avoided. Barley, ragi and maize are the better and pungent things and are useful. Bitter gourd, bitter varity of drumstick are found to be very useful and fruits should be avoided as far as possible and especially those which contain rich carbohydrates.

In Ayurveda there are sapta-dhatus with seven types of agnies or enzyme, which are responsible for digestion, metabolism and nutrition of the tissues. The digestive fire or the jatharagni is meant for digestion and metabolism of food which includes medas or fat.

So unless and untill these agnis or enzymes are brought into their normal position obesity will not be cured.

Dept. of Basic Principle and Samhita, National Institute of Ayurveda, Madhav Vilas Palace, Amer Road, Jaipur-302002 (Raj.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Quality Diabetic Care & Basic concept of Ayurveda

Dr. Mukesh B Shukla, M.D. Kayachikitsha

Diabetic Mellitus is the most common among all endocrine disease; it is characterised by metabolic abnormalities and by long term complications involving the eyes, kidney, nerves & blood vessel. It is ranked seventh among the leading cause of acquired blindness & account for over 25% of cases with end stage renal failure as well as 50% of lower limb amputation.

Rapid increse in population, socio economic changes & resulted alteration in life style together contribute to the increase in incidence of diabetes in third world Countries. Diabetes mellitus is thus an extremely important health problem that needs urgent alteration.

Diabetic Mellitus is the chronic disorder of carbohydrates, Fats & Protein. Metabolism contributed to diminish production of insulin or mounting resistance to its action. Diabetic mellitus is characterised by chronic hyperglycemia of defined degree with or without presence of glucose in the urine. Diabetic patients may also have hyper lipidemia & tendency to develop ketoacidosis.

According to Ayurveda the vitiation of catalytic forces named as tridosa viz vata, pitta. kapha tends to damage the biochemical constitution of one or more of the tissue-humeral components like meda (reserve fat) Rakta (blood cells) shukra (gonadal hormones & seminal fluid) Jala (free fluid) vasa (circularity lipids).

Laseeka (lymph) majja (marrow) Rasa (blood plasma) oja (hypothalamic & Pituitary hormones) & manas (muscle tissue) & produce different type of pramehes viz a metabolic error manifesting excess or altered consititution of urine. In madhumeha or diabetic mellitus there is breakdown in the sequence of the production of Dhatus (tissus humeral components) as a result of which the body system is deprived of essential nutrients further resulting into the lack of immunity & other complication. The factor of all pramehas including Madhumeha are sedentary life style, excess of sleep & the habits of consuming erratic recipes that throw the metabolic function out of gear. Non attendant or negligent attitude towards other metabolic error also act as predisposing factor & therefore, earlier the diagnosis, better the control of easier the treatment of diabetes.

Diagnosis of Diabetes Mellitus

Fasting blood Sugar (mg/dl)	2 hrs post prandial/glucose (mg/dl)	Random blood glucose (mg/dl)
Normal < 10	<120	<100
I.G.T. (Impaired glucose Tolerance)<120	120-180	>120-<180
Diabetes Mellitus > 120	>180	>180

An Ayurvedic physician today has to face the challenge of dealing with growing number of diabetic patient either at the stage of detection of Madhumeha or in solving day to day problem or even handling a serious emergency. In this article we try to enumerate all things that are possible to be done by Ayurvedic Physician to deliver **'Quality Diabetes Care'** to all diabetic subject in Ayurvedic practice.

Problem that can be managed to certain extent by an Ayurvedic Physician:-

1. diagnosis of diabetic mellitus.
2. investigation in diabetic subject.

Whole blood - Glucose (venous/capllay) [Fasting/ pre & post prandial/Random] Glycosylated hemoglobin [Hbal HbAlc]

Urinalysis - Volume, Specific gravity, Glucose, Ketones, Protein, Leucocytes, red cells, cast.

Plasma - Glucose, protein glucose, glycated albumin, fructosimine, triglycerides. Lipid profile, urea, creatinine, uric Acid, albumin, total protein.

Special tests - plasma/serum insulin, peptic, insulin antibodies, ketones, lactose, electrolytes, bicarbonates, free fatty acids.

Hon. Physician & Sr. Lecture Kayachikitsha Dept., Smt. K.G.M.P. Ayurvedic College & Hospital, Netaji Subhash Road, Mumbai - 400002

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Management about Ayurvedic approach

	1st visit 1st month	2nd visit 4th month	3rd visit 8th month	4th visit 12th month
Blood sugar fasting	✓	✓	✓	✓
P.P.	✓	✓	✓	✓
S. creatinine	✓	✓	✓	✓
Glycosylated hemoglobin	✓		✓	✓
Urine for micro albumin	✓			✓
Lipid profile	✓			✓
CBC	✓			✓
ECG	✓			✓
Stress test	✓			
Eye check-up	✓			
Foot care advice	If required	If required	If required	If required
Consultation with diabotologist	✓	✓	✓	✓
Group consultation with dietician	✓	✓	✓	✓
Group consultation with Physiotherapist	✓	✓	✓	✓

3] **Dietary advice for diabetic subject.**
4] **Indication of insulin therapy**
5] **Hypoglycemia**
6] **Hypertension :-** with or without nephropathy, with neuropathy
7] **Diabetic foot problem**

a) Fungal intertrigo
b) paronychia
c) trophic ulcers
d) Cellulites
e) foot abscesses
f) blisters
g) Gangrene - Dry/Wet
h) minor injuries like shoe bite nails/thorn picks, rat-bite Cut or abrasions.

Management :-

The broad objective of treatment is:

- Relief from early symptoms of Madhumeha (diabetic mellitus)
- Restoration of sense of well-being & vigour.
- Maintenance of growth in the young & disirable body weight in adults.
- Prevention of acute metabolic complication such as ketoacidosis & Hyperosmoler coma.
- Restoration of power of resistance to infection & normal wound healiy
- Correction of hyperlipidolemia if present.
- Successful management of pregnancy of achieveing good metabolic control without inducing undersirable.
- hypoglycemia &
- Prevention or postponement of neuro vascular complications.

Depending on the Physical constriction (prakri Ayurvedic Physician advocating two differer types of therapy for Madhumeha with correctin of life style, restoring to suitable food habi means Hit-vardhak Ahar-vihar & sattavritta palan paricharya.

1) **Apatarpan & Samashodhan :-**
In this type of management for obese or we built patient with Madhumahahar drug maximum stress should be to given o Apatarpan of fats & elimination of endo-toxin by way of various exercises, langhanam

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

use of various type of panchkarmas.

2) **Santarpan & bruhan :-**
For this type of madhumehar management for chronically ill & underweighted patients due to the draining of essential nutrients & immunologic ally weak Santarpanaj management helps in replenishing to easily acceptable micro nutrients to rebuild the body tissues & help strengthen the host defence mechanism without increasing the circularity level of sugar, fats, & metabolites.
Management & special Diabetes care with regard to usage of particular diet, deed including exercise, good amount of physical work, massaging of the body during the application of medicated paste & local application of Aromatic herbs & Madhumehara (ayurvedic oral hypoglycemic) drugs including various types of herbs.
Herbomineral yoga like Vasant kusumakar Rasha, Trivanga bhasma, Shilajatuyauta preparation, Goukshuradi guggul - chandraprabhavati & various combination of triphala, Swannavanga, Lohabhasma, Neem, Vijaysar, etc.

बैद्यनाथ

प्राणदा

प्राणदा से हर साल मलेरिया के लाखों रोगी प्राणदान पाते हैं। इसलिए इसका नाम प्राणदा बिल्कुल सही है। हिन्दुस्तान के गांव-गांव और कस्बे-कस्बे में यह दवा मशहूर है। इकतरा, तिजारी, चौथिया, फसली, जूड़ी-पारी का बुखार, बरवट और तिल्ली मलेरिया के ही भेद हैं। मलेरिया बुखार की हर हालत में यह तुरंत फायदा पहुंचाती है। बुखार के बाद भी दवा पीने से बुखार के फिर लौटने का भय नहीं रहता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी — चरक सूत्रस्थान अध्याय - 1 पर आधारित

[1]डा० अनूप कु० गक्खड़, एम.डी. (आयुर्वेद)
[2]सीमा चोपड़ा, बी.ए.एम.एस.

1. प्र०:- मूत्र तीनो दोषों पर क्या प्रभाव डालता है ?
   उ०:- **कफ का शमन, वायु का अनुलोमन व विकृत पित्त का अधोभाग से निर्हरण ।**
2. प्र०:- कौन-सा मूत्र लवण रस प्रधान होता है ?
   उ०:- **हस्तिमूत्र ।**
3. प्र०:- अपस्मार व उन्माद में किस मूत्र का प्रयोग होता है ?
   उ०:- **खर मूत्र (गधे का मूत्र का) ।**
4. प्र०:- हितं तु क्रिमिकुष्ठिनाम्' यह किस मूत्र के लिए कहा गया है ?
   उ०:- **हस्तिमूत्र ।**
5. प्र०:- श्वास, कास व अर्श में किस मूत्र का प्रयोग किया जाता है ?
   उ०:- **ऊंट का मूत्र ।**
6. प्र०:- क्या अतिसार में दुग्ध का प्रयोग उचित है ?
   उ०:- **हां ।**
7. प्र०:- चार प्रकार के महास्नेह कौन-से हैं ?
   उ०:- **घृत, तैल, वसा व मज्जा ।**
8. प्र०:- पांच प्रकार के नमक कौन-से हैं ?
   उ०:- **सौवर्चल, सैन्धव, विड, औद्भिद व सामुद्र ।**
9. प्र०:- प्रथम अध्याय में अम्लपित्त शब्द का उल्लेख किस सन्दर्भ में किया गया है ?
   उ०:- **दूध के गुणों के वर्णन करते समय ।**
10. प्र०:- पित्त अवरोधी मूत्र कौन-सा होता है ?
    उ०:- **अविमूत्र (भेड़ी का मूत्र) ।**
11. प्र०:- कषाय एवं मधुर रस वाला मूत्र कौन-सा होता है ?
    उ०:- **अजा मूत्र (बकरी का मूत्र)**
12. प्र०:- 'क्रिमिकुष्ठनुत्' यह किस मूत्र के लिए कहा गया है ?
    उ०:- **गाय के मूत्र के लिए ।**
13. प्र०:- पुनर्वसु आत्रेय के छः शिष्यों के नाम बताएं ?
    उ०:- **अग्निवेश, भेल, जतुकर्ण, पाराशर, हारीत व क्षारपाणि ।**
14. प्र०:- चरक में षड पदार्थों का क्रम क्या है ?
    उ०:- **सामान्य, विशेष, गुण, द्रव्य, कर्म व समवाय।**
15. प्र०:- 'किनके संयोग को आयु कहा जाता है ?
    उ०:- **शरीर, इन्द्रिय, सत्व व आत्मा के संयोग को आयु कहा जाता है ।**
16. प्र०:- त्रिदण्ड क्या है ?
    उ०:- **सत्व, आत्मा व शरीर ।**
17. प्र०:- प्रथम अध्याय में आयु के कौन-कौन से पर्याय बतलाए हैं ?
    उ०:- **धारि, जीवित, नित्यग व अनुबन्ध ।**
18. प्र०:- तीसरे अध्याय में आयु के किस पर्याय का उल्लेख नहीं किया गया ?
    उ०:- **नित्यग ।**
19. प्र०:- क्या सामान्य सदैव बुद्धि का कारण होता है ?
    उ०:- **नहीं, किसी विरोधी भाव की उपस्थिति से सामान्य सदैव वृद्धि नहीं करता ।**
20. प्र०:- रोगों के आश्रय क्या हैं ?
    उ०:- **शरीर एवं मन ।**
21. प्र०:- शारीरिक दोष कौन-से हैं ?
    उ०:- **वात, पित्त, कफ ।**
22. प्र०:- मानसिक दोष कौन से हैं ?
    उ०:- **रज एवं तम ।**
23. प्र०:- प्रथम अध्याय में वात के कौन-से गुणों का उल्लेख किया है ?
    उ०:- रूक्ष, शीत, लघु, सूक्ष्म, चल, विशद व खर ।
24. प्र०:- शोधनार्थ तीन वृक्ष कौन से हैं ?
    उ०:- स्नूही, अर्क व अश्मन्तक ।
25. प्र०:- उक्त वृक्षों में से वमन के लिए किस वृक्ष का प्रयोग करना चाहिए ?
    उ०:- अश्मन्तक ।
26. प्र०:-
    उ०:-
27. प्र०:-
    उ०:-
28. प्र०:-
    उ०:-
29. प्र०:-
    उ०:-
30. प्र०:-
    उ०:-
31. प्र०:-
    उ०:-
32. प्र०:-
    उ०:-
33. प्र०:-
    उ०:-
34. प्र०:-
    उ०:-
35. प्र०:-
    उ०:-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

26. प्र०:- वमन व विरेचन के लिए किस वृक्ष का प्रयोग बतलाया है ?
उ०:- अर्क
27. प्र०:- स्नूही का प्रयोग किस हेतु करना चाहिए ?
उ०:- विरेचन ।
28. प्र०:- शोधनोपयोगी तीनक्षीरी वृक्ष कौन-से हैं ?
उ०:- **पूतीक, कृष्णगन्धा व तिलवक ।**
29. प्र०:- तत्त्ववित् किसे कहा जाता है ?
उ०:- **औषधियों के स्वरूप को न जानने वाला पर उसके प्रयोग को जानने वाले को तत्त्ववित् कहा जाता है ।**
30. प्र०:- अविज्ञात औषध किस के समान है ?
उ०:- **विष, शस्त्र, अग्नि व वज्र के समान ।**
31. प्र०:- विज्ञात औषध किस के समान है ?
उ०:- **अमृत के समान ।**
32. प्र०:- इन्द्र का अमोघवज्र शिर पर गिर जाना व मूर्ख वैद्य से औषधि लेना दोनों में से अधिक घातक कौन है ?
उ०:- **मूर्ख वैद्य से औषधि लेना ।**
33. प्र०:- प्रथम अध्याय में 'ताम्र' शब्द का उल्लेख किस संदर्भ में हुआ है ?
उ०:- **कपटी वैद्य से चिकित्सा करवाने से ताम्र विष पी लेना उचित है ।**
34. प्र०:- इन्द्र के पास आयुर्वेद का ज्ञान लेने कौन गया था ?
उ०:- **भरद्वाज ।**
35. प्र०:- भरद्वाज ने आयुर्वेद का ज्ञान किसे दिया ?
उ०:- **पुनर्वसु आत्रेय ।**
36. प्र०:- तिक्त रस में किस-किस महाभूत की प्रधानता होती है ?
उ०:- **वायु और आकाश ।**
37. प्र०:- मधुर रस में किस-किस महाभूत की प्रधानता होती है ?
उ०:- **जल और पृथिवी ।**
38. प्र०:- अम्ल रस में किस-किस महाभूत की प्रधानता होती है ?
उ०:- **पृथिवी व अग्नि ।**
39. प्र०:- लवण रस में किस-किस महाभूत की प्रधानता होती है ?
उ०:- **जल व अग्नि ।**
40. प्र०:- कटु रस में किस-किस महाभूत की प्रधानता होती है ?
उ०:- **वायु व अग्नि ।**
41. प्र०:- कषाय रस में किस-किस महाभूत की प्रधानता होती है ?
उ०:- **वायु व पृथिवी ।**
42. प्र०:- प्रथम अध्याय में साङ्ख्य शब्द का उल्लेख किस संदर्भ में हुआ है ?
उ०:- **ऋषि के नाम के रूप में ।**
43. प्र०:- "कार्य धातु साम्यमिहोच्यते...? चोक्ता तन्त्रास्यास्य प्रयोजनम् ?"
उ०:- **धातु साम्य क्रिया ।**
44. प्र०:- "वायुः पित्तं कफश्चोक्त.....? दोष संग्रह ?
उ०:- **शारीरो ।**
45. प्र०:- अग्निवेश तंत्र का प्रयोजन क्या है ?
उ०:- **धातु साम्य क्रिया ।**

बैद्यनाथ
अर्जुनारिष्ट
हृदय की कमजोरी,
दिल की धड़कन तथा छाती
एवं फेफड़ों में लाभदायक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वाची रोग की चिकित्सा में सफल अनुभव

डॉ० मदन गोपाल बाजपेयी, बी०ए०,एम०एस०,एन०

इस रोग में एलोपैथ में क्या नाम दिया गया है अभी तक सही निर्णय नहीं हो पाया । पर आयुर्वेद में विश्वाची नाम से वर्णित रोग में -

तलं प्रत्यङ्गुलीनां याः कण्डरा बाहुपृष्ठतः ।
बाह्वोः कर्मक्षयकारी विश्वाची चेति सोच्येते ॥

के अनुसार बाहु के पृष्ठ भाग से आरम्भ होकर अंगुलियों के पृष्ठ भाग पर्यन्त तथा प्रकोष्ठ और हाथ के सामने वाले भाग की कण्डरा (नाड़ी) को दूषित करके बाहु के कर्म (Motor Function) का क्षय करने वाली व्याधि को विश्वाची कहते हैं । यह रोग एक हाथ में भी हो सकता है और दोनों हाथों में भी । वस्तुतः आकुञ्चन पेशी समूह का प्रदाह (Supply) अन्त प्रकाष्ठिका नाड़ी (Ulnar Nerve) द्वारा सम्पन्न होता है । इस नाड़ी में किसी तरह का शोथ और घात होने से हाथ की आकुञ्चन शक्ति समाप्त हो जाती है और यह प्रसारण की स्थिति में ही रहता है । विश्वाची कारण और लक्षणों की दृष्टि से तीन प्रकार की हो सकती है ।

1-बहिः प्रकोष्ठिका नाड़ी विकृति जन्य विश्वाची (Radial Neuritis) 2-अन्तः प्रकोष्ठिका नाड़ी विकृति जन्य विश्वाची (Ulnar Neuritis) 3-उभयनाड़ी विकृति जन्य विश्वाची (Radio-Ulnar Neuritis) ।

आधुनिक चिकित्सक इस रोग में प्रायः न्यूरोबियान, ऑप्टीन्यूरान यानी विटामिन बी$_1$, बी$_6$ बी$_{12}$ के इन्जेक्शन टेबलेट्स तथा दर्दनिवारक औषधियां देते हैं । पर संतोषजनक लाभ नहीं मिलता । जिसे आयुर्वेद में विश्वाची कहा है उसी तरह के लक्षणों वाले रोग को आधुनिक चिकित्सक न्यूराइटिस या पैरालाइसिस नाम देते हैं ।

इस रोग से ग्रस्त ऐसे हमें कई रोगियों की चिकित्सा का अवसर मिला जो एलोपैथ से निराश थे । ऐसे ही एक रोगी सुशील कुमार सविता निवासी बाँदा आयु 13 वर्ष को उसके चचेरे भाई ता०-28-07-2002, लेकर सायं 5 बजे "दिव्य चिकित्सा भवन" में आ सुशील के दोनों हाथों में असहदनीय दर्द था । रोगी साथी ने बताया कि इनका इलाज बाँदा के ख्याति प्र एलोपैथिक काय चिकित्सक डॉ०एन०डी०शर्मा और भारद्वाज से कराया जा चुका है पर जब तक दवा रहता है तब तक आराम रहता है । इसके बाद उँगलियों में फाड़ता हुआ दर्द शुरू हो जाता है । रोगी को धैर्य बंधाया और कहा कि चिकित्सा 3 से 6 तक चल सकती है । पर आराम कुछ न कुछ प्र सप्ताह से ही शुरू हो जाएगा ऐसी आशा करनी चाहि पथ्यापथ्य का पालन किया जाना चाहिए । इसके हमने निम्नांकित चिकित्सा व्यवस्था तैयार की -

1. विश्वाचीहर रसायन 1-1 मात्रा सुबह-शाम से ।
2. अजमोदादि चूर्ण 2-2 ग्राम भोजनोपरान्त दि 2-3 बार जल से ।
3. स्वादिष्ट विरेचन चूर्ण 3 ग्राम सोते समय दूध
4. महारास्नादि अर्क 2-2 तोला दिन में 2 बार ।
5. वातान्तक तेल - मालिश के लिए

उपरोक्त औषधि व्यवस्था से प्रथम सप्ताह को लाभ हुआ । जहां वह निरन्तर हाथों को असहनीय के कारण मलता रहता था । वही अब दर्द में भारी आयी और सहन करने योग्य स्थिति बन गई । रोगी चचेरा भाई बहुत ही प्रसन्नता पूर्वक दूसरे सप्ताह आया । उसकी उपरोक्त चिकित्सा व्यवस्था लगा चलती रही । 2 माह के लगातार औषधि सेवन से सु कुमार पूर्ण रोग मुक्त हो गया । पाठकों को बता दें यह रोगी और कोई नहीं " चिकित्सा पल्लव" के शहर के विक्रय प्रतिनिधि का भतीजा था ।

विश्वाचीहर रसायन - योगेन्द्र रस 1 ग्रा एकांगवीर रस 1 ग्राम, शु०कपीलु 2 ग्राम, रास्नादि घन 21/2 ग्राम, अश्वगन्धा घन 21/2 ग्राम प्रवाल पंचामृ

प्रधान सम्पादक-चिकित्सा पल्लव, दिव्य चिकित्सा भवन, पनगरा, बाँदा (२१०१२९) उ०प्र०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्राम सभी मिलकर एक भावना सम्भालू पत्र के क्वाथ की देकर सुखाकर रख लें । फिर 16 मात्राएं बना लें । इस योग में योगेन्द्र रस वात वाहिनी नाड़ियों के लिए बलवर्धक, वातशामक, रक्तवाहिनी नाड़ियों पर विशेष प्रभाव कारक तथा उनकी शक्ति को बढ़ाता है । शु० कपीलु वातशामक, वेदनाहर, दीपन, पाचन और शक्तिदायक है । अश्वगंधा घनसत्व बृंहण, बल्य और रसायन के साथ नाड़ी बलवर्धक पर वात शामक है, रास्नाघन का योग वेदनास्थापन और वातशामक होने से इस योग में अद्वितीय गुणों को बढ़ा देता है । प्रवाल पंचामृत कैल्सियम का उत्तम स्रोत है और अस्थिमज्जा से लेकर रस रक्तादि धातुओं को पोषण देता है । इस प्रकार यह योग विश्वाची के साथ कुछेक अन्य वात व्याधियों जैसे अर्दित, दण्डापतनंक, मन्यास्तम्भ और कटिवात पर भी लाभकारी होता है ।

वातान्तक तैल - इस तैल में प्रसारिणी तैल, महानारायण, विष गर्भ और महासैन्धवादि तैल का सम मिश्रण है । इस तैल का मर्दन सभी वात व्याधियों में उपकारक है ।

अजमोदादि चूर्ण, महारास्नादि अर्क अन्य सभी विश्वस्त फार्मेसियां तैयार करती हैं ।

स्वादिष्ट विरेचन चूर्ण - उदर शूद्धि के लिए आयुर्वेद में अनेक चूर्णों का उल्लेख है जैसे षट्सकार चूर्ण, पंचसकार नारायण, त्रिफला, हरीतकी आदि जिसके घटक द्रव्य पृथक-पृथक हैं और सबका कार्य भी अलग-अलग है । स्थूल रूप से ये चूर्ण भले ही दस्त लाने वाले हों पर घटक द्रव्यों के अनुसार सूक्ष्मतम रूप से अलग-अलग ढंग से शरीर पर क्रिया करते हैं । इनका विश्लेषण समझने की आवश्यकता है ।

बैद्यनाथ

मधु

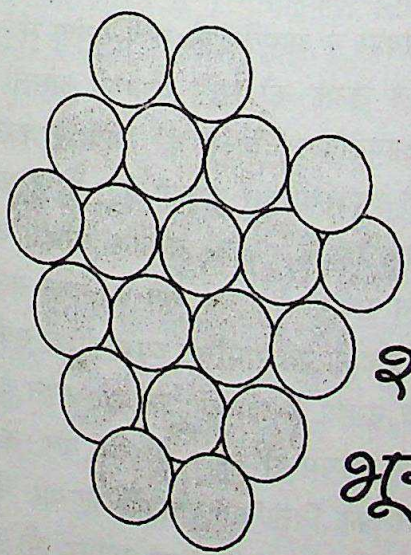

शरीर को शीतलता पहुँचाता,
भूख बढ़ाता है। आँखों के लिए
उपयोगी एवं कांतिवर्द्धक हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद की जड़ें गहरी हैं ।

जुलाई, 1963

इसमें तनिक सन्देह नहीं कि उपेक्षा तथा संरक्षण के अभाव के बावजूद आयुर्वेद आज भी शहरों तथा गाँव लाखों की सेवा कर रहा है । निस्सन्देह, शहरों की अपेक्षा गाँवों में उसकी सेवा अधिक है । यह असंदिग्ध सच्चाई कि लाखों के जीवन का सहारा तो केवल आयुर्वेद ही है । केवल यह सच्चाई कि सदियों की उपेक्षा और संरक्षण अभाव में यह आज भी जीवित है, यह प्रकट करती है कि उसमें कोई तत्व है और उसकी जड़ें इस भूमि में गह जमी हुई हैं - अन्य चिकित्सा-पद्धतियों विशेषकर एलोपैथी के मुकाबले में यह टिका हुआ है, हालाँकि एलोपैथी भारत में राज्य-शक्ति के बलपर जमायां गया है और वह संसार-व्यापी भी है । किन्तु आयुर्वेद की सर्वजीवनता लोकप्रियता आज भी अक्षुण्ण है । हाँ, आयुर्वेद की प्रगति रूक गयी है और उसको आधुनिक अनुभव तथा विज्ञान सहारे अत्याधुनिक रूप देना होगा - तभी आयुर्वेद टिक सकेगा और अपना चमत्कार भी दिखा सकेगा ।

श्री आर० आर० दिवाकर
भूतपूर्व राज्यपाल, बिहार

नकली दवाओं का व्यापार और सरकार का दायित्व

नकली और मिलावटी दवाओं का कारोबार इतना बढ़ जाने का कारण यह भी है कि बहुत-सी पेटेन्ट दवा और खासतौर से एलोपैथी दवाओं की कीमतें इतनी अधिक है कि सर्वसाधारण जनता उन्हें सुविधानुसार खरीद न पाती । अतः उसी नाम की या उससे मिलते-जुलते नाम की नकली दवा कुछ सस्ते दामों पर मिलने पर वह आस से घोखे का शिकार हो जाती है ।

आयुर्वेदीय दवाएँ विदेशी दवाओं की तुलना में सस्ती तथा गुणकारी होती हैं और उनके निर्माण करने व्यवस्था भी उतनी खर्चीली नहीं होती जितनी एलोपैथी दवाओं की । किन्तु सरकार ने आयुर्वेद के साथ सर्वदा सौतेले का व्यवहार किया है । यदि सरकार आयुर्वेद को प्रोत्साहन दे तो सर्वसाधारण जनता को सस्ते दामों में असली गुणकारी दवा सरलता से उपलब्ध हो सकती है । सरकारी अस्पतालों में आयुर्वेदिक दवाओं का व्यवहार करने प्रोत्साहन से, सरकार उन अस्पतालों में अधिक मात्रा में आयुर्वेदीय दवाओं की व्यवस्था कर सकती है । परन्तु सरक ने आयुर्वेद के प्रति उपेक्षा की नीति अपनायी और आज भी उसी नीति पर चल रही है । अतः जबतक सरकार अप नीति नहीं बदलेगी, तबतक न तो देश का औषध उद्योग इस स्थिति को पहुँच सकेगा कि वह देश की दवा सम्ब समस्त आवश्यकताओं को पूरा कर सके और न तब तक जनता के लिए सस्ती दवाओं की समुचित व्यवस्था हो सकेगी दवाओं की कमी को दूर करने और सस्ती दवाएं उपलब्ध करने का एकमात्र उपाय है आयुर्वेद को प्रोत्साहन देना

आजकल यह रोग भी बहुत बढ़ गया है कि आकर्षक विज्ञापनों के माध्यम से बहुत से लोग दवा के न पर कूड़ा-कर्कट बेच रहे हैं, इसकी भी रोक-थाम आवश्यक है । सरकार को विज्ञापित दवाओं के बारे में जाँच-पड़ताल भी कराते रहना चाहिये कि उनमें विज्ञापित गुण हैं या नहीं । इनमें जो दवाएँ बोगस साबित हों, उन तत्काल रोक लगानी चाहिये और उनके निर्माताओं को कड़ी सजा मिलनी चाहिये । ऐसा करने पर ही असली दवा के निर्माताओं को प्रोत्साहन मिल सकेगा और जनता नकली दवा बेचने वालों के घोखे से बच सकेगी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आरोग्य समाचार अखबार की कतरनों से

कॉफी से होने वाले लाभ

द हिन्दू में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार कॉफी निम्नलिखित रोगों में लाभदायक है :-

कैन्सर :- हरी चाय पत्तियों की तुलना में कॉफी में चार गुणा ज्यादा एण्टी आक्सीडेन्ट पाया जाता है । चूंकि एण्टी आक्सीडेन्ट कैन्सर से लड़ने में मदद करता है, इसलिए कॉफी कैन्सर उत्पन्न करने की प्रक्रिया को धीमी कर देती है ।

मस्तिष्क कोष :- कॉफी में पाये जाने वाले कुछ यौगिक स्नायु पर प्रभाव डालते हैं । इस प्रभाव से मस्तिष्क क्षतिग्रस्त होने से बचता है । अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि अल्झाइमर एवं पारकिन्सन रोग में भी कॉफी से लाभ पहुंचता है ।

मानसिक प्रभाव :- कॉफी में उपस्थित कैफीन उत्तेजक का कार्य करता है । अध्ययन से ज्ञात होता है कि यह खिलाड़ियों एवं बौद्धक श्रम करने वालों को राहत पहुंचती है । विषाद से मुक्ति पाने में भी कॉफी से लाभ पहुंचता है ।

वजन में कमी में लाभदायक :- कॉफी पीने से भूख कम लगती है । परिणामतः लोग खाते कम हैं । किन्तु, यदि इसके विपरीत यदि कॉफी का शोधन ठीक से नहीं किया गया हो, तो लिपिड के चलते कालेस्ट्राल में वृद्धि हो सकती है ।

आपके लाडले झेलेंगे आपके तनाव का दुष्परिणाम

दैनिक जनसत्ता में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार अगर आप अत्यधिक तनाव के शिकार रहते हैं तो अपने बच्चों पर खास तवज्जो दीजिए क्योंकि वे भी आपके इस रोग का शिकार हो सकते हैं जिसके साथ-साथ दिल के दौरे जैसी बीमारियां होने का भी खतरा आपके लाडलों को हो सकता है । मुम्बई स्थित टीएनएमसी और नायर अस्पताल की डा० सुरेखा जोशी ने भारतीय शिशु विज्ञान विषय पर किए एक अध्ययन में यह चेतावनी देते हुए कहा कि अत्यधिक तनाव का शिकार होने वाले लोगों के बच्चों, यहां तक कि उनके नाती-पोतों तक को यह रोग हो सकता है । अधिक तनावग्रस्त परिवारों के बच्चों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है और इसके लिए उनके खान-पान, रहन-सहन पर खास तवज्जो दी जानी चाहिए ।

डा०जोशी ने कहा कि बिना किसी कारण के होने वाले उच्च रक्तचाप को पहले वयस्कों का रोग माना जाता था लेकिन अब यह धीरे-धीरे बच्चों को भी अपनी चपेट में लेता जा रहा है । अध्ययन में पाया गया है कि सामान्य बच्चों की तुलना में यह रोग उन बच्चों को 30 प्रतिशत अधिक होता है जिनके माता-पिता या दादा-दादी को अत्यधिक तनाव रहता है । इसके अलावा कुछ शारीरिक, जैव रासायनिक और भोजन सम्बन्धी आदतें भी इस रोग को बढ़ाती हैं । डा०जोशी ने कहा कि अगर समय रहते इस रोग का इलाज नहीं किया जाए तो इसके कारण बच्चे को दिल का दौरा, आघात और गुर्दे खराब होने की आशंका बढ़ सकती है । अत्यधिक तनाव के शिकार रहने वाले परिवारों के बच्चों में तनाव की मौजूदगी के लिए किये गये चिकित्सकों ने तनावग्रस्त रहने वाले परिवारों के दो से 18 वर्ष तक के बच्चों पर अध्ययन किया । अध्ययन के लिए लम्बाई, वजन, त्वचा की मोटाई, खानपान सम्बंधी आदतों, हृदय गति और रक्त चाप जैसे विभिन्न कारकों के बारे में रिकार्ड दर्ज किया गया ।

अध्ययन में पाया गया कि सामान्य बच्चों की तुलना में तनावग्रस्त रहने वाले परिवारों को बच्चों को तनाव होने की आशंका 30 प्रतिशत अधिक होती है । इसके अलावा 27 प्रतिशत बच्चे तनाव पैदा होने की सीमा रेखा के एकदम नजदीक पाये गये । अध्ययन में यह भी देखा गया कि जिन बच्चों को तनाव होने की आशंका अधिक होती है, उनके शरीर में वसा की मात्रा कुछ अधिक होती है । वैज्ञानिकों का कहना है कि हमने पाया कि तनाव में रहने वाले बच्चों की त्वचा की मोटाई सामान्य बच्चों से कहीं अधिक थी । अध्ययन के निष्कर्ष के रूप में कहा गया कि अधिक वसा और नमक खाने वाले बच्चों को तनाव होने की आशंका अधिक होती है जो इस रोग की पहचान के लिए संकेत कारक बन सकते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षतिग्रस्त धमनी के कारण हृदयाघात हो सकता है

द हिन्दुस्तान टाइम्स में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार यदि आपकी धमनी क्षतिग्रस्त है, तो हृदयाघात की सम्भावना ज्यादा होती है । इसका कारण यह है कि धमनी से रक्त की आपूर्त्ति हृदय में होती है । क्षतिग्रस्त होने के कारण रक्त-आपूर्त्ति में बाधा उत्पन्न होती है । इसका असर वेस्कुलर इण्डोथेलियम पर पड़ता है । वस्तुत: यह सम्पूर्ण शरीर में धमनी की दीवार पर कोषों की सतह है ।

जीन से अण्डाशय कैन्सर रोकने में मदद मिलती है

द हिन्दुस्तान टाइम्स में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार शोधकर्मियों ने पता लगाया है कि ठीक से कार्य करने वाला जीन कैन्सर के विकास के मार्ग में बाधा उत्पन्न करता है । बीबीसी में प्रकाशित एक प्रतिवेदन के आधार पर वैज्ञानिकों का यह निष्कर्ष है कि कैन्सर कोष में कार्यरत जीन इसे बढ़ने नहीं देता है ।

कैन्सर रोगियों के लिए शुक्राणु कोष

शंघाई यूथ डेली में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार कैन्सर रोगियों को केमोथेरापी का प्रयोग किया जाता है । इसके चलते रोगी का शुक्राणु नष्ट होता है । इस समस्या मे निदान पाने के लिए शंघाई में एक वीर्य बैंक की स्थापना की गई है । वीर्य बैंक के निदेशक, श्री ली झेंग के अनुसार खतरनाक काम करने वाले जिसमें मनुष्य की वीर्य शक्ति नष्ट हो जाती है अथवा वह मारा जाता है, तो इस बैंक में जमा उसका वीर्य उसके लिए संतान की उत्पत्ति में मददगार साबित हो सकता है ।

शर्मीले व्यक्तियों में प्रतिक्रिया तुरन्त होती है

द इकोनोमिक टाइम्स में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार अमरीकी शोधकर्मियों ने पता लगाया है कि शर्मीले व्यक्ति किसी नयी चीज को देखने पर ज्याद प्रतिक्रिया करते हैं । कोई व्यक्ति यदि उसने इस कठिनाई पर काबू भी पा लिया है, तो मस्तिष्क के भावनात्मक केन्द्र-बिन्दु पर शर्मीलेपन का तेज असर होता है ।

मासिक स्राव बन्द होने की स्थिति में टेस्टोसटेरोन का स्तर कम

न्यूज वाइज में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार स्वस्थ महिलाओं का भी मासिक स्राव बन्द होने पर टेस्टोसटेरोन का स्तर कम हो जाता है । आशय यह है कि इसका सम्बन्ध महिलाओं की आयु से है । मेलबोर्न के निदेशक, श्री सुआन डेविश ने बताया कि जिन महिलाओं का मासिक स्राव या तो बन्द हो गया है, या बन्द होने के कगार पर है, उसका टेस्टोसटेरोन परीक्षण करने पर कम पाया गया ।

हृदय रोग में कुछ विटामिन्स बेकार है

द लान्सेट में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार भयंकर हृदयाघात रोकने में विटामिन ई और बीटा-केरोटीन सक्षम नहीं है । नवीनतम खोज से विशेषज्ञों के अनुसार हृदय-स्वास्थ्य के लिए एण्टी-आक्सीडेण्ट की भूमिका प्राय: समाप्त हो गयी है । विटामिन ए का एक साधन, बीटा केरोटीन हृदय को हानि भी पहुंचाता है । कुछ विशेषज्ञों का तर्क है कि प्रारम्भ में दवाई फायदा कर सकती है, किन्तु हृदयाघात एवं अकाल मृत्यु को रोकने में कोई भूमिका अदा नहीं करता है । विदित है कि कुछ वर्षों पूर्व तक एण्टी-आक्सीडेन्ट पौष्टिक तत्व, विशेषकर विटामीन ई का प्रयोग चिकित्सक समुदाय हृदय को मजबूत करने के लिए धड़ल्ले से करते थे । डबलिन, आयरलैण्ड स्थित त्रिनिटी कालेज के हृदय संस्थान के प्राध्यापक, श्री इथान ग्राहम के अनुसार " सार्वजनिक स्वास्थ्य का दृष्टिकोण यह है कि इस प्रकार के विटामिन के प्रयोग का कोई आधार नहीं है ।" 2,20,000 लोगों पर किये गये प्रयोगों का निष्कर्ष यह है कि विटामिन ई की भूमिका हृदयरोग या इससे होने वाली मृत्यु में नहीं है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मधुमेह रोगियों में होने वाले हृदय रोग में लिपिटर की भूमिका

द हिन्दुस्तान टाइम्स में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार कालेस्टेरोल विरोधी लिपिटर से मधुमेह रोगियों में होने वाले हृदयाघात से काफी लाभ होता है । लिपिटर एक औषधि का नाम है ।

सार्स का अन्तिम रोगी मुक्त

चीनी सैनिक अस्पताल विश्व का सर्वाधिक बड़ा सार्स अस्पताल है । **द हिन्दुस्तान टाइम्स** में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार बीजिंग स्थित इस अस्पताल में 680 रोगी भर्त्ती थे । इनमें से 67 काफी गम्भीर स्थिति में थे । इन रोगियों का इलाज का अस्पताल में हुआ । सम्पूर्ण रोगियों में से 672 अर्थात् 672 रोगियों को पूर्ण लाभ हुआ ।

वाहनों से कार्सिजोन स्तर में वृद्धि

जरनल ऑफ द एयर एण्ड वेस्ट मेनेजमेन्ट एसोसियेशन में प्रकाशित एक अध्ययन के अनुसार वाहनों से वातावरण में कार्सिजोन स्तर की वृद्धि हो रही है । जॉन हापकिन्स ब्लूमर्ग सार्वजनिक स्वास्थ्य विद्यालय के शोधकर्मियों ने वाहनों और कार्सिजोन संकेन्द्रक बेन्जीन, 1,3-बूटाडियेन और पाली सायक्लिक एरोमेटिक हाइड्रोकार्बन (पी.ए.एफ.) के मध्य सम्बन्ध का पता लगाने में सफलता प्राप्त की है । प्रतिवेदन के अनुसार प्रदूषण का स्तर 6-20 गुणा ज्यादा वाहनों की बनावट पर निर्भर करता है । बड़ा वाहन जिसमें दो एक्सील से ज्यादा हो, जैसे बस, ट्रक आदि में 60 गुणा ज्यादा पीएएफ निकलता है अर्थात् 1,3- बुटाडिथेन और नौ गुणा ज्यादा बेन्जीन छोटे वाहनों की अपेक्षा पाया जाता है । शोधकर्मियों के अनुसार इसका मुख्यकारण बड़ी डीजल इंजन है ।

सामुद्रिक सेवार जीवाणुओं से रक्षा प्राप्त करने के लिए रसायन का प्रयोग करता है

प्रोसिडिंग्स ऑफ द नेशनल एकेडमी ऑफ सायन्स के अनुसार सामुद्रिक सेवार, शंख आदि वेक्टरिया या अन्य जीवाणुओं से सुरक्षित रहने के लिए रसायन का प्रयोग करता है । अध्ययन से पता चला है कि सेवार में प्रतिरोधी शक्ति विद्यमान रहती है । 51 नमूनों की जांच से पता चला है कि 46 में जबरदस्त एण्टी फुंगल शक्ति विद्यमान थी । वैज्ञानिक सेवार से एण्टीबायोटिक की खोज में लगे हुए हैं ।

वाई क्रोमोजोन के रहस्य का पता चला

नेचर में प्रकाशित में 300 मिलीयन वर्ष पूर्व से आनुवंशिक रहस्य में हो रहे परिवर्त्तनों पर प्रकाश डाला गया है । एक्स क्रोमोजोन से वाई क्रोमोजोन का कैसे विघटन हुआ-इसे बताया गया है । 23 मिलीयन डीएनए अक्षरों में 78 जीन सम्मिलित हैं - यह कथन डेविड सी. पेज एवं उनके सहयोगियों का कहा ।

धूप का सेवन हड्डियों को मजबूत बनाता है

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के चिकित्सकों का कहना है कि हड्डियों के खोखलेपन (आस्टियोपोरोसिस) से बचने के लिए दूध-दही, मेथी, ज्वार का आटा, हरी सब्जी और रोहू मछली का सेवन लाभकारी है । प्रतिदिन धूप का सेवन भी हड्डियों को मजबूत बनाता है । धूम्रपान और शराब हड्डियों को कमजोर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । वेस्टर्न-पटना डॉक्टर्स क्लब द्वारा बुलाई गए अनवरत चिकित्सा शिक्षा कार्यक्रम एवं परिचर्या में भाग लेने वाले चिकित्सकों ने कहा कि हड्डियों में खनिज तत्वों का घनत्व (बीएमडी) कम हो जाने के कारण आस्टियोपोरोसिस बीमारी होती है । यह बीमारी उम्रजनित होती है । खासकर महिलाओं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में मासिक धर्म बन्द होने के बाद यह आमतौर से पाई जा रही है । चिकित्सकों का कहना है कि हड्डियों का खोखलापन कुछ खास कारणों से भी होता है । जैसे-ऐसी बीमारी जिसमें मरीज को लम्बे समय तक बिस्तर पर पड़े रहना पड़े; सिर में चोट, अंगों का शिथिल पड़ना, मेरुदण्ड में चोट के कारण अंगों का शिथिल होना, थॉयरायड की बीमारी के अलावा कार्टिजन ग्रुप की दवाओं के अधिक मात्रा में सेवन से भी आस्टियोपोरोसिस रोग होता है । उन्होंने कहा कि युवावस्था, खासकर 25-35 वर्ष में हड्डी में खनिजों का घनत्व (बीएमडी) अधिक मात्रा में तैयार होता है । जिस व्यक्ति में इसकी मात्रा अधिक रहती है उसमें आस्टियोपोरोसिस होने की आशंका कम होती है । चिकित्सकों ने कहा कि हड्डियों के बचाने के लिए जरूरी है कि धूम्रपान और शराब का सेवन न किया जाए । उन्होंने कहा कि धूमपान बन्द करने वाले आस्टियोपोरोसिस के मरीजों को विटामिन-सी की खुराक लेना अधिक लाभकारी है ।

इस बीमारी से बचाव के लिए जरूरी है कि नियमित व्यायाम किया जाए जिसमें आधे घंटे तक तीव्र गति से पैदल चलना शामिल है । परिचर्चा में शामिल चिकित्सकों ने कहा कि दुर्घटना को छोड़ कर 90 प्रतिशत हड्डियों के टूटने का कारण आस्टियोपोरोसिस की बीमारी ही है । इस बीमारी के कारण हड्डियां इतनी कमजोर हो जाती हैं कि हल्की चोट को भी सहन नहीं कर पाती । भारत में जनता की जीवन प्रत्याशा बढ़ने के साथ ही इस रोग की समस्या बढ़ रही है ।

Genes hint at HIV genesis

According to an article published in **The Hindu** further light on origins of HIV-1, the virus that causes AIDS has been shed by researchers at University of Nottingham's Institute of Genetics.

For more than 10 years, Professor Sharp has been collaborating with Professor Beatrice Hann, at the University of Alabama, on research aimed at clarifying the origins and evolution of AIDS viruses.

In 1999, this team identified the origin of HIV-1 as being transmission of a virus (SIVcpz) from chimpanzees to humans, but a mystery remained concerning how chimpanzees acquired the virus in the first place. SIVs are a large family of viruses, carried by many species of monkeys in Africa, but chimpanzees are the only apes known to be naturally infected.

The latest results, published in the *Science,* show that the chimpanzee virus is a hybrid of the SIVs naturally infecting two different species of monkeys, the red-capped mangabey and the greater spot-nosed monkey. It appears that, in the past, chimpanzees have picked up viruses from both monkeys, and then the hybrid formed from the two viruses.

This hybrid virus spread through the chimpanzee species and was later transmitted to humans to become hunt and eat monkeys and this most likely provided the route by which they acquried these monkey viruses. This is similar to the means by which humans probably first became infected, by butchering chimpanzees for 'bushment'. There are other striking parallels between SIV infection of chimpanzees and HIV infection of humans. First, just as chimpanzees appear to have acquired SIVs from two different sources, humans are infected by two distinct AIDS viruses in addition to HIV-1, there is HIV-2 which was acquired from sooty mangabeys in west Africa. Second, while monkeys may have been infected with SIVs for a very long time chimpanzees have clearly acquired SIV more recently.

Results from another part of this study which will appear in the *Journal of Virology,* show that the prevalence of SIV infection in wild chimpanzees is much lower than in monkey species and quite similar to the prevalence of HIV

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

infection in those parts of west central Africa where the AIDs epidemic seems to have first emerged. The major difference between SIV infection of chimpanzees are not known to develop any disease symptoms; given the very close genetic relationship between chimpanzees and humans, this prompts the question whether chimpanzees have co-evolved with their virus to reach this non-pathogenic association.

The implication of these results is that it will be important to broaden the study of natural SIV infection in the wild chimpanzees. For example, it would be interesting to learn whether they have picked up SIVs from any other monkey species. Because of the similarity between chimpanzees and humans any virus that successfully adapts to spreading among chimpazees would be a candidate for a further jump to humans - a potential HIV-3. It was previously known that the SiVs from red-capped mangabeys and greater spot-nosed monkeys are similar to the SIV from chimpanzees, within certain regions of their genomes.

However, the evolutionary relationships among these viruses, and SIVs from other monkey species, have been difficult to disentangle.

शुद्ध स्वर्ण भस्म से निर्मित

बैद्यनाथ

स्वर्णार्थी गोल्ड

पुराने जोड़ों के दर्द की प्रभावी दवा

स्वर्णार्थी कैप्सूल में स्वर्ण भस्म का विशेष मिश्रण होने से यह गठिया वात एवं जीर्ण जोड़ों के दर्द पर व मासपेशियों के रोगों में अत्यंत प्रभावी औषधि है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

EFFICACY OF 'TRANQUIN' (A Baidyanath Product) IN SLEEP DISORDERS

ABSRACT

Sleep disorder or Insomnia has become a menacing and hazardous problem affecting mental and psychological disturbances in normal sleep of thousands of people all over the world.

In Ayurveda sleep is considered one of the un-suppressive urges like hunger, thirst etc., and also one of the Sub-Pillars of human body.

'TRAYA UPASTAMBHA ITI'

AHARA SWAPNOHA BRAHMACHARYAM ITI

Three Upastambhas (Sub-pillars) are :-

1. Diet & Exercise (Ahara)
2. Sleep and (Nidra)
3. Discipline way of life. (Brahmacharya)

These sub-pillars hold the body physically and mentally and keep psychosomatic balance of the body. Doshik imbalances distur the functioning of sub-pillars like aggravated Vat and Pitta cause lack of sleep or insomnia.

Charaka has described severa conditions and causes of insomnia or slee disorders which is now well recognized as one o the major risk factors and to get sleep rests o synthetic Tranquillizers which are quite harmfu for the body and person gets addicted to thes drugs.

According to modern science, sleep is a result of activity in certain sleep provoking areas in the brain-stem. States and stages of sleep are defined on the basis of EEG. EOG and EMG.

The study on six medicinal plants described in Ayurvedic Text as the combinatio materials of Tranquin to combat sleep disorders contains :-

Sarpagandha Extract	Rauwolfia serpentina	150 mg.
Tagar Extract	Valerian root	100 mg.
Shankhpushpi powder	Convolvulus pluricaulis	75 mg.
Pipramool powder	Piparmool Powder	50 mg.
Brahmi Extract	Bacopa monnieri	75 mg.
Jatamansi Extract	Nordostachys jatamansi	100 mg.

Tranquin capsule acts on various conditions such as :-

Insomnia, Anxiety, Stress Symptoms, Restlessness, Mental Strain, Headache, Menstrua Cramps, Decreased Concentration.

B 6/5, Local Shopping Centre, Near HDFC Bank, Safdarjung Enclave, New Delhi - 110029

बैद्यनाथ

दशमूलारिष्ट

तेज बल एवं कान्ति बढ़ाने में प्रसिद्ध । संग्रहणी, मंदाग्नि, अरुचि, उदर रोग, खांसी, दमा, कमजोरी आदि रोगों की शास्त्रोक्त दवा है । इससे बल और कान्ति बढ़ती है तथा शरीर पुष्ट होता है । प्रसव के बाद इसके सेवन द्वारा माताएं अपने और शिशु के स्वास्थ्य की रक्षा करती है ।

बैद्यनाथ

अशोकारिष्ट

कमर दर्द, पेट दर्द, बुखार सा होना, आंखों, हाथों, पैर के तलुओं की जलन, भूख न लगना तथा ऋतु धर्म के समय होने वाली तकलीफ व बेचैनी इसके सेवन से दूर हो जाती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिहार में आयुर्वेद की स्थिति अत्यन्त दयनीय

सेवा में,

श्रीयुत् सम्पादक
सचित्र आयुर्वेद
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि0
पटना

महाशय,

आपके प्रतिष्ठित पत्र के माध्यम से मैं भारत के महामहिम राष्ट्रपति, डा० कलाम, प्रधान मंत्री, केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री एवं बिहार राज्य के मुख्यमंत्री का ध्यान बिहार राज्य में आयुर्वेद की दु:खद स्थिति की ओर आकृष्ट करना चाहता हूँ । बिहार में जो सरकारी महाविद्यालय एवं अस्पताल हैं, उसमें पर्याप्त आतुरलयी एवं औषधियों की सुविधा नहीं है । एक तो अस्पताल में मरीजों की संख्या अत्यन्त कम होती है और जो मरीज भर्ती भी होते हैं, उन्हें पर्याप्त औषधियों की सुविधा नहीं मिलती है । शिक्षकों के अनेक पद खाली हैं । उन्हें समय पर वेतन नहीं मिलते हैं । अनेक अस्पतालों का भवन जर्जर है । जिला आयुर्वेदिक अस्पतालों की स्थिति तो अत्यन्त खराब है । उनके भवनों को देखकर स्वस्थ व्यक्ति भी बीमार पड़ सकता है । बरसात के दिनों में छत से पानी गिरता है । अस्पताल तक जाने के मार्ग में भी पानी का जमाव रहता है । इसका परिणाम यह होता है कि चिकित्सक भी अस्पताल से गायब रहते हैं ।

भारत के राष्ट्रपति, महामहिम डा० कलाम जब बिहार दौरे पर आये थे, तो उन्होंने अपने भाषण में औषधि पादपों के कृषिकरण पर जोर दिया था । उनके सुझाव का स्वागत तो तालियों की गड़गड़ाहट से किया गया, किन्तु उनका सुझाव कागज पर ही सीमित रहा । राज्य सरकार इस दिशा में कोई कारगर कदम नहीं उठा रही है । जब डा० कलाम के सुझाव का यह हाल हो सकता है, तो हम तुच्छ प्राणियों के सुझाव तो उनके पास पहुंच भी नहीं पायेंगे । फिर भी, हम आशावादी हैं । हम केवल आशा कर सकते हैं कि राज्य सरकार आयुर्वेद की स्थिति को सुधारने के लिए कारगर कदम उठायेगी । एक प्रश्न यहां उपस्थित होता है । यदि राज्य सरकार सक्षम नहीं हो, तो केन्द्र सरकार का यह दायित्व नहीं बनता है कि वह अपने स्तर से एक केन्द्रीय आयुर्वेदिक महाविद्यालय एवं अस्पताल बिहार में खोले । यदि केन्द्र सरकार एलोपैथिक अस्पताल अपने खर्च पर दिल्ली में खोल सकती है, तो एक केन्द्रीय आयुर्वेद अस्पताल बिहार में क्यों नहीं खोला जा सकता है ।

आशा है, सम्बन्धित अधिकारी हमारे सुझाव पर ध्यान देंगे ।

भवदीय
निशान्त कुमार झा
नीलकंठ, कालोनी
समनपुरा रोड, पटना

बैद्यनाथ
जन्मघूंटी
जन्म के बाद से ही बच्चों को इसका सेवन कराने से उनके स्वास्थ्य में कोई गड़बड़ी नहीं होती । इससे बुखार, खांसी, सर्दी-जुकाम, अजीर्ण, उल्टी होना, टट्टी होना, पेट फूलना आदि रोग दूर होते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाराष्ट्र

बैद्यनाथ "शंखपुष्पी" उत्पाद को अन्तर्राष्ट्रीय न्यूरोलोजीकल सर्वोत्तम गुणवत्ता प्रमाण-पत्र

आयुर्वेद अकादमी, पुणे (महाराष्ट्र) ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की एक संभाषा विद्वत परिषद् इण्टरनेशनल आयुर्वेद वैज्ञानिक सेमिनार का आयोजन माघ शुदि अष्टमी शक संवत 1924 विक्रम संवत 2060 दिनांक 09 फरवरी 2003 को किया गया था । मस्तिष्क मधिकृत्य (दिमागी शक्ति स्मृति वर्धक) गुणवत्ता के संदर्भ में भारतीय चिकित्सा पद्धति द्वारा निर्मित औषधि प्रमाणित परख के लिए चर्चा का विषय था "संवेदनम्" (Neurological Health) । इस संदर्भ में बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा. लि., झांसी का प्रतिनिधित्व डॉ० एन०सी० शाह ने किया । डॉ० शाह आयुर्वेद के एक अधिकारी तथा योग्य विद्वान हैं । उन्होंने बैद्यनाथ "शंखपुष्पी" को प्रस्तुत करते हुए आयुर्वेद में वर्णित आहार, निद्रा और ब्रह्मचर्य जीवन की मूलभूत विंधा पर व्याख्यान देते हुए "शंखपुष्पी" की गुणवत्ता पर प्रमाणिक संदर्भ दर्शाते हुए सेमिनार में उपस्थित आयुर्वेद एवं आधुनिक चिकित्सा जगत के न्यूरोलोजिस्ट विशेषज्ञों को एकमत होने में सहमत करते हुए सभी का आभार व्यक्त करते हुए बैद्यनाथ रिसर्च फाउण्डेशन को निरन्तर विद्वतजनों के सहयोग की कामना के साथ आशा व्यक्त की । उन्होंने आगे बैद्यनाथ "ट्रेन्क्विन" उत्पाद के संदर्भ में बताया कि इस उत्पाद पर अभी क्लीनिकल (चिकित्सालयी) ट्रायल/परीक्षण निरंतर चल रहा है और शीघ्र ही चिकित्सा जगत् को प्रस्तुत की जायेगी जो शत-प्रतिशत हानि रहित स्वस्थ निद्रा जनक एवं संवेदनशील मस्तिष्क के ज्ञान तन्तुओं को रोग प्रतिरोधक प्राकृतिक शक्ति के लिए विशेष उपयोगी वानस्पतिक संयोजन योग/फार्मूला होगा । यह वर्ष बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० के लिए चिकित्सा जगत में एक अलग पहचान के रूप में गौरव का विषय रहा है ।

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० द्वारा निर्मित "शंखपुष्पी" उत्पाद को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सर्वोत्तम गुणवत्ता का प्रमाण पत्र (एवार्ड) प्राप्त हुआ है डॉ०एन०सी०शाह (रिसर्च फाउण्डेशन श्री बैद्यनाथ आयुर्वे भवन प्रा०लि०, झांसी) को संशोधन निबन्ध वाचनार्थ त अतिथि भाषा भाषणार्थ प्रशस्ति पत्र से सम्मानित कि गया । श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, झांसी क दिया गया ।

इस "अन्तर्राष्ट्रीय संभाषा विद्वत परिषद" क पुणे नगर (महाराष्ट्र) में निम्नलिखित आयुर्वेद मनीषि द्वारा आयोजित किया गया है :-

अध्यक्ष
प्रो०वैद्य पाण्डुरंग हरि कुलकर्णी
सह अध्यक्ष
वैद्य संजय पुण्ड
सभापति शास्त्रीय समिति
वैद्य उल्हास जोशी
संकलन प्रस्तुति :
वैद्य इन्द्र देव भट्ट
प्रभारी
वैद्य सहायता केन्द्र
बैद्यनाथ रिसर्च फाउण्डेशन
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०झांसी (उ०प्र०)

BEST PRODUCT FOR NEUROLOGICAL HEALTH

AN INTERNATIONAL SEMINAR ON NEUROLOGICAL HEALTH

Certificate of Merit is awarded to

M/s. Baidyanath Ayurveda Bhawan Ltd., Jhansi

for their Ayurveda Product

Baidyanath Shankhpushpi

As best product for NEUROLOGICAL HEALTH.

Pune
Date : 9th Feb. 2003

President
Prof. Dr. P.H. Kulkarni

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संवेदनम्

मस्तिष्कमधिकृत्य आन्ताराष्ट्रीय संधाय
सभाषार्थं विव्दत् परिषद
पुणेनगरं भारतदेशः ।
माघ शुद्ध अष्टमी शके १९२४
इदं प्रमाणीक्रियते यत्
अध्यक्षमहाभागाः तथैव
संघटनसमितिसदस्याः अमन्दानन्दमावहन्ति

गुणवत्ताप्रमाणपत्रमिदम्

वितरितुं महोदयै/महोदयायै

श्रीमान्/श्रीमती..... डा० एन०सी० शाह .....

.....

- ☐ अतिथिभाषणार्थम् अभ्यागतभाषणार्थम् ।
- ☐ सभापती/उपसभापती पदग्रहणार्थम् ।
- ☐ संशोधन निबंधवाचनार्थम् ।
- ☐ सक्रिया योगदानार्थम / पुरस्कर्ताः ।
- ☐ शास्त्रीय समिति / आयोजन समिति ।
- ☐ मार्गदर्शन समिति सदस्यता ग्रहणार्थम् ।

प्रो०वैद्य पाण्डुरंग हरि कुलकर्णी
अध्यक्ष
वैद्य संजय पुण्ड
सहआयोजक
वैद्य उल्हास जोशी
सभापति शास्त्रीय समिति

महाराष्ट्र

National Conference on Ayurved
Ayurved 2003
27th & 28th December 2003
Organised by
Bandhuta Dnyanpeed, Pune
&
Tathagat Publication

Organising Committee
Mr. Prakash Rokade
(Founder President)
Bandhuta Dnyanpeeth, Pune
Chief Patron
Hon'ble Mr. S.S. Tiwari
(President - Bhartiya Dyanvardhini Sabha)
Patron
Hon'ble Mr. Shrirang Barane
Corporator, P.C.M.C.
Hon'ble Prof. Sangamesh Bhairgond
President -
Prof. Dr. B.K. Bhagwat
Executive President -
Dr. Vijay Jadhav
Vice President -
Dr. Mrs. Manasi Deshpande
Dr. Ravindra Dhimdhime
Mr. Shankar Athare
Organising Secretary -
Dr. Mrs. Anjali Jadhav
Joint Secretary -
Dr. Rajkumar Babade
Dr. Mrs. Meenal Lad
Dr. Mrs. Ujjawala Hakkemane
Co-ordinators -
Dr. Jaymala Shirke
Dr. Suhas Herlekar
Dr. Bhim Gaikwad
Dr. Bharat Kadlaskar
Dr. Mrs. Madhuri Dalvi
Dr. Kishor Chipole
Executive Members
Mrs. Alka Kapre
Mrs. Meena Maske
Mr. B.R. Handrale
Mr. Shrikant Chougule
Mr. Pandurang Somvanshi
Mr. Narayan Salvi

Invitation

Ayurved is one of the great gifts to the sages of ancient India to Mankind. It is one of the oldest that is 5000 years old Medical systems in the world with a long record. Ayurved treats man as a 'Whole'. It is therefore truly Holistic and

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Integral Medical system.

Tathagat Publication is involved in Publishing Books for Ayurved Syllabus and Curriculum. The Publication has always belived that Books are the imperishable treasure of wisdom of Mankind through ages. They are said to be the ambassadors for cultural genius of any Nation. They are also the means of preserving and disseminating cultural heritage. So the loss of books on a particular branch of knowledge is like the wasting away of the repe-bridge connecting the two shores of an inundated river. Absence of such books especially of scientific and technical ones the wisdom accumulated through ages is lost for ever. Being in this short journey of publication now we have emerged to the platform of this, National conference on Ayurved.

There will be about 600 to 800 delegates from all over India attending this conference. Ayurved U.G. and P.G. Students will be benefitted with the plenary lectures of stalwarts in the field of Ayurved covering importance of various aspects of Ayurved.

This conference offers an opportunity to present papers in relation to theme's suggested.

We appeal to you all colleagues, that let us come together, we need your help, involvement and active participation. Let us all together join hands and let us make this conference an unique, memorable thought provoking and most important of all fruitful.

Yours Truly,

Dr. (Mrs.) Anjali Jadhav — Organising Secretary

Dr. Vijay Jadhav — Executive President

Suggested Themes

We invite the Scholars for presentation of papers on applied research on the following topics.

- Ayurved Science and philosophy.
- Facts that make Ayurveda Science.
- Ayurved & Yoga
- Clinical Trials on various subjects
- Drug Trials on various issues.
- Good manufacturing parctice.
- Drug standardization Herbal and Mineral
- Old formulations and new formulations in th treatment of new diseases.
- Ancient and Modern methods of preparatio of drugs, is the therapeutic effect unchange
- Any subject related to Ayurved Science.

Method of Presentation of the papers

Participants willing to contribute paper (s on one or more of the subjects may sen abstracts not exceeding 200 words on or befor 31st july 2003 full text of the paper in A-4 siz electronic, computer typed before 31st Aug. 2003 Typed in double space in duplicate should reac to the Executive President or Organisin Secretary, with prescribed fees. The paper shoul be in English, Hindi or in Sanskrit.

Language

The medium of the conference will b Sanskrit, Hindi and English only.

Poster Presentation

Beside Oral Presentation, Poste Presentation will also be allowed. It should b original and not published elsewhere.

Delegate Registration Fees

	Last date - 30-9-03	After 1-10-0 to 1-12-0
Reception committee Member	Rs.1000	Rs.120
Teachers, Doctor & others	Rs. 600	Rs. 90
Students U.G. And P.G.	Rs. 500	Rs. 70

Keynote Address and Guest Lectures

Keynote Address and Guest Lectures wi be presented by the highly qualified an experienced eminent personalities of Ayurve faculty.

It is a unique chance to know and lear different therapies from experts coming from a over the nation. One will take back to his practic not only important points of theory but also number of workable clinical methods to enric practice.

Registration Fee Includes :

* Registration Kit

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* Scientific Sessions, Panel Discussion
* Food during conference (Breakfast, Lunch, Dinner Tea & Coffee)
* Inaugural and Valedictory Function
* Entertainment Programme
* Free Dormitory accommodation to students on request only

No Spot Registration Please

Participants are requested to get themselves registered for the conference by transmitting to **Executive President or Organising Secretary,** the filled in registration form along with the prescribed fee through a D.D. issued in favour of "Ayurved-2003" payable at Pradhikaran, Nigdi, Pune by 30th Sept. 2003 without late fees. For Group Booking of U.G. & P.G. Students a Single D.D. is also payable.

Lodging and Boarding

The organising committee will provide free dormitory accommodation if informed on request.

Hotel accomodation will be made available on early request and on payment in advance as per category.

A- Rs. 1500 to 2000 B- Rs. 1500 to 1000
C- Rs. 1000 to 700 D- Rs. 550 to 500

Sponsorship for Events/Awards/Meals etc.

* Sponsoring conference events
  One Session Rs. 20,000/-
* Sponsoring Medals, Trophies for paper presented at the confernce and other events Rs. 10,000/-
* Sponsorship for meals and refreshments.

One Tea	Rs. 10,000/-
One Breakfast	Rs. 20,000/-
One Lunch	Rs. 50,000/-
One Dinner	Rs. 50,000/-

Tariff for advertising in special souvenir

A souvenir containing Abstracts & Papers will be published on this occasion.

Cover Page No 2	Rs. 10,000/-
Cover Page No 3	Rs. 10,000/-
Back Page	Rs. 15,000/-
Black & White full page	Rs. 4,000/-
Black & White half page	Rs. 2,000/-
Black & White Quater page	Rs. 1,000/-
Colour Insertion	Rs. 5,000/-

Tariff for stall and Banners at venue

For 2 days

Stall 6'x6'	Rs. 10,000/-
Banners	Rs. 5,000/- to Rs. 10,000/-

Dates At a Glance

Registration From	15-05-2003
Abstract	31-07-2003
Papers	31-07-2003
Stall	10-12-2003
Advertisement	10-12-2003

For further Correspondence Information & Details contact

Dr. Mrs. Anjali Jadhav — Org. Secretary
Dr. Vijay Jadhav — Exe. President

National Conference on Ayurved
"Ayurved-2003"
Sarvoday Residency, A/2, S.No. 28,
Near Jagtap Dairy, Pimple Nilakh,
Pune - 411 027
Tel : 020-7270003 (Resi.)
Mobile - 9822636058
email : ayurved_2003@yahoo.com

National Conference on Ayurved

Ayurved - 2003

27th & 28th December- 2003

REGISTRATION FORM

(Photo Copy is Also Acceptable)

Name :.....

Address For Communication :.

.....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

.....

Telephone with STD code :

Fax :

E-mail:

Accomodation Required Yes/No

If Yes category A/B/C/D

Presentation ORAL/POSTER

Topic of Presentation

.....

.....

Accomodation Advance Rs.

Registration Rs.

Total Rs.

D.D. No. and Place

Date: Signature

Note :*D.D. Drawn in favour of "Ayurved - 2003"

(* For registration under student category a certificate from HOD or Head of Institution is Necessary)

राजस्थान

INTERNATIONAL SEMINAR
ON
PLANT BASED MEDICINE
DECEMBER 15-17, 2003
Sponsored by:
WORLD HEALTH ORGANIZATION
Deptt. of ISM&H, Ministry of Health & FW
Govt. of India

Organized by
NATIONAL ISTITUTE OF AYURVEDA
Madhav Vilas Palace, Amer Road,
JAIPUR-302002

INVITATION

Dear Sir/Madam,

It is a matter of great pleasure to invite you for ***Aushadhi-2003 :*** a convention full of Research, Science, Technology, Academics Culture and much more.....

It is an honour to host the conference distinguished experts of international repute. Th conference will provide a great opportunity arrive at some much needed conclusions, whic will give a thrust forward to Ayurveda in gener and the speciality of Dravyaguna Vijanan i particular.

You will have the unique privilege not onl to attend various Scientific Programmes, but als to interact and exchange ideas with fellow experts and scholars. You can enrich yourself with th latest developments in the field of plant medicine

We do sincerely hope you will attend and participate in ***Aushadhi-2003.***

Looking forward to meet you.

Prof. B.L. Gaur
Chairman
Org. Committee

ABOUT THE SEMINAR

Date : 15-16-17 December, 2003
Official Language : English/Sanskrit
Weather : Pink city will be cool. Warm Woolens are recommended.

Visa Requirements : All international visitors except from Nepal, need a valid Visa for India.

Letter of Acceptance will be issued to facilitate the delegates. However it does not imply any financial support towards expenses for attending the conference such as registration travel and hotel accomodation.

Accomodation :

Shared Accomodation will be provided to outstation delegates on getting confirmation Modest arrangements are also being made for providing boarding facilities during the conference Hotel accomodation may be arranged on prior payment.

TENTATIVE PROGRAMME

* Plenary sessions
* Guest lectures
* Award & Free papers

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* Technical Exhibition-featuring equipment Books & Pharmaceutical Products. (Interested Companies may ask for more information from the Secretariat).
* Social events Reception, Dinner & Banquet, preceded by Cultural Programmes & Sightseeing.

SCIENTIFIC INFORMATION

Areas to be covered :

Recent advances in plant based medicine with special reference to :-

* Ethnomedicine, Ethnopharmacology,
* Standardization of Herbs & Cultivation methods.
* Mental health
* Cancer, Rediation hazards, AIDS, Pollution Hazards, Environment.
* Maternity & Child Health care.
* Geriatrics, Rejuvenation and Aphrodisiac
* Chronic ailments and Immunological disordrs.
* Veterinary medicine.
* Pesticides
* Food & Nutrition
* Promotive, preventive and curative aspects of health care.

CALL FOR PAPERS

Abstracts structured into Title, Authors Objective, Method, Result and Conclusion may be sent to the Organising Secretary, latest by 31st August 2003. Word limit-250-500 words.

The Sub-speciality of the Paper should be indicated.

FACILITIES FOR PRESENTATION

35 mm slide projector, OHP, Epidiascope and LCD projector.

REGISTRATION INFORMATION

Category	Upto 31st Aug.	After
Indian Delegate	Rs. 600	Rs. 800
Accompanying	Rs. 400	Rs. 600
PG Scholars	Rs. 400	Rs. 600
SAARC Countries	Rs. $100	Rs. $125
Other countries	US $ 200	US $ 250

Note :

1. Payments- by DD/Cheque, in favour of "The Organising Secretary" payable at Central Bank of India. NIA Branch, Jaipur. Add Rs. 25/- for out-station Cheques.
2. Delegate kits may not be available on spot registration.
3. No kits will be issued for accompanying person.
4. One form per delegate (Photo Copies allowed)

Address for communication :

Prof. Mahesh Chandra Sharma
Organizing Secretary, Aushadhi-2003
National Institute of Ayurveda
Amer Road, Jaipur- 302 002
Tel.: 91-141-2636476-77, Ext.-255
Fax: 91-141-635709 . Cell : 9414047418
e-mail : mahesh_nia@yahoo.com

INTERNATIONAL SEMINAR ON PLANT BASED MEDICINE

Registration Form

(Photo copies can be used)

1. Name of Participant.....
2. Full Address.....
   Telephone Off.:.....
   Res.:.....
   Fax :.....
   e-mail:.....
3. Age .....
4. Nationality .....
5. Present Occupation.....
   .....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

6. Field of Acitivity/Speciality.....

.....

7. Title of Paper.....

.....

Kindly enrole me as a delegate/exhibitor/ co-sponsor/advertiser for the conference. I am enclosing a cheque/bank draft No. ..... date.....for Rs..... (Rupees ..... only) on..... ***In favour of Organising Secretary for International Seminar payable at Jaipur.***

Date :
Place :

Signature

Please return to :

Prof. Mahesh Chandra Sharma
Organizing Secretary, Aushadhi-2003
National Institute of Ayurveda
Amer Road, Jaipur- 302 002
Tel.: 91-141-2636476-77, Ext.-255
Fax: 91-141-635709 . Cell : 9414047418
e-mail : mahesh_nia@yahoo.com

BIODAT FORM
(For overseas delegates)*

DELEGATE

First Name.....
Family Name.....
Date of Birth.....
Place of Birth.....
Current Address.....
.....
.....
.....
Telephone Numbers.....
Fax Numbers.....
E-mail Address.....
Permanent Address.....
Nationality.....
Details of Passport.....
Date of issue.....
Place of issue.....
Date of Expiry.....

SPOUSE

Full Name.....
Date & Place of Birth.....
Details of Passport .....
Date of issue.....
Place of issue.....
Date of Expiry.....

* for Ministry clearance purpose.

Please return to :

Prof. Mahesh Chandra Sharma
Organizing Secretary, Aushadhi-2003
National Institute of Ayurveda
Amer Road, Jaipur- 302 002
Tel.: 91-141-2636476-77, Ext.-255
Fax: 91-141-635709 . Cell : 941404741
e-mail : mahesh_nia@yahoo.com

ABOUT THE INSTITUTE

The National Institute of Ayurveda Jaipur is an apex institute under the Ministry of Health & F.W., Dept. of ISM & H engaged in teaching, research and clinical activities of the highest order in Ayurveda. The Institute offers research facilities at Ph.D. level in five specialities of Ayurveda alongwith Post Graduate Courses in nine specialities as well as undergraduate education. The Institute also renders clinical services through two attached Hospitals, a Panchakarma unit and a sophisticated pathology laboratory. It also has a full fledged pharmacy where around 12 different formulations are manufactured, besides catering to the need of drugs for research Projects.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ABOUT THE PINK CITY

Jaipur, the capital of Rajasthan is one of the world's most picturesque cities. Its popular name "Pink city" is derived from pink buildings in walled city area. Jaipur nestles amongst the hills of the Aravaly ranges, open to the plains only in the south. The crests of these hills are almost without exception adorned with forts and towers. Jaipur is also considered as shopper's paradise and is located 262 kms. from Delhi. Jaipur is well connected by air, rail and road.

PATRONS

SMT. SUSHMA SWARAJ
Hon'ble Union Minister for Health & F.W.

SHRI RADHESHUYAM GANGANAGAR
Hon'ble Minister of State for Ayurveda, Rajasthan

SMT. MALTI S. SINHA
Secretary, Department of I.S.M. & H. Govt. of India, New Delhi

SHRI L. PRASAD
Joint Secretary, Department of I.S.M. & H. Govt. of India, New Delhi

ORGANIZING COMMITTEE

Chairman
PROF. B. L. GAUR
Director, NIA

Secretary
PROF. MAHESH CHANDRA SHARMA

MEMBERS

Prof. S.K. SHARMA
Prof. J.K. BHARGAVA
Prof. S.S. SHARMA
Prof. L.N. SHARMA
Prof. L.K. DWIVEDI
Prof. A.K. SHARMA
Prof. M.S. MEENA
Dr. N.S. CHUNDAVAT
Dr. C.M. JAIN
Dr. V.K. GOTECHA
Shri G.L. AGRAWAL

Joint Secretaries
DR. NARESH KHEMANI
DR. ABHIMANYU KUMAR

नयी दिल्ली

प्रान्तीय आयुर्वेदिक/यूनानी परिषद् से पंजीकृत चिकित्सकों को भारतीय चि० केन्द्रीय परिषद्, नई दिल्ली से नामांकन शुरू

नई दिल्ली :- भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद् (सी०सी०आई०एम०), नई दिल्ली के मान्य अर्हता के आधार पर भारत के क़िसी भी राज्य के आयुर्वेदिक/ यूनानी/ भारतीय चिकित्सा परिषद से रजि० चिकित्सकों द्वारा निर्धारित आवेदन पत्र प्रस्तुत करने पर सीधे नामांकन करना शुरू कर दिया है । साथ प्रमाण पत्र में यह निर्देश साफ शब्दों में दिया है कि जिस व्यक्ति का नामांकन सी०सी०आई०एम० में हो जायेगा वह भारत के किसी भी भाग में अपनी योग्यता के अनुरूप चिकित्सा व्यवसाय कर सकता है । चिकित्सा पल्लव कार्यालय को यह जानकारी सी०सी०आई०एम० के सदस्य व चिकित्सा पल्लव के आजीवन ग्राहक वैद्य किशोर मोहन, बुलन्दशहर ने अपने प्रमाण-पत्र की छाया प्रति भेजते हुये दी । नामांकन कराने का आवेदन पत्र 10/- का टिकट भेजकर तथा अपनी चिकित्सा पल्लव ग्राहक सं० का उल्लेख करते हुये, चिकित्सा पल्लव कार्यालय, पो०-पनगरा, जिला-बाँदा 210129 (उ०प्र०) से मुफ्त मंगा सकते हैं ।

सी०सी०आई०एम० द्वारा यह सुविधा शुरू कर देने से अब मान्य अर्हित चिकित्सकों की एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त में प्रेक्टिस करने आदि से विवादों से जहाँ एक ओर मुक्ति मिलेगी वहीं दूसरी ओर चिकित्सकों को बार-बार प्रान्तीय बोर्डो से पंजीयन कराने से भी मुक्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलेगी ।

पंजाब

आज का महारोग सार्स एवं आयुर्वेद अम्बाला में एक गोष्ठी सम्पन्न

डा० गोपाल चड्ढा द्वारा आयोजित गोष्ठी में 81 आयुर्वेद चिकित्सकों ने भाग लिया । इस अवसर पर डा० शर्मा ने सार्स की भयंकरता का वर्णन करते हुए बताया कि इस रोग से मानव इतिहास में नए संक्रामक रोग समय-समय पर उत्पन्न होते रहे हैं । इस श्रृंखला में सार्स नवीनतम रोग है । इस रोग में निमोनिया का रोगी किसी भी तरह ठीक नहीं होता है । अब तक लगभग 1000 लोग विभिन्न देशों में मर चुके हैं । भारत में भी यह रोग आ चुका है । इस समय हमें थमकर सोचना चाहिए कि ऐसे रोगों के मूल कारण क्या है और हम कहां गलती कर रहे हैं । सार्स का नवीनतम रोग उत्पन्न हुआ है । इस रोग की शुरूआत चीन के हुआंगडांग राज्य में हुआ है । यह राज्य वैश्वीकरण में अगुआ है । इस राज्य में भारी संख्या में विदेशी लोग आए हैं । दूसरी तरफ रोजगार की खोज में चीन के भीतरी क्षेत्र में भारी संख्या में मजदूर भी इसी क्षेत्र में आए हैं । इन मजदूरों के वेतन बहुत कम हैं और इन्हें गंदी बस्तियों में रहना पड़ता है जहां मुर्गी तथा अन्य पशु पक्षियों को भी पाला जाता है । हुआंगडांग में विदेशी एवं भीतरी क्षेत्र से लोगों को आपस में मिलने एवं गरीबी एवं गंदगी के वातावरण में सार्स के कीटाणु का जन्म हुआ है । इससे हल्का ज्वर, गले में खारिश, छाती में दर्द, श्वास में कठिनाई होती है और छाती में जकड़न हो जाती है और रोगी की 12 से 15 दिन में मृत्यु हो जाती है । इस अवसर पर ले.डा. शारदा ने बताया कि यह रोग वातश्लेपमक रोग के अर्न्तगत आता है । इसके बचाव के लिए 5 पत्ते तुलसी, 10 पत्ते पोदिना, 5 दाने काली मिर्च का पाउडर, दो चम्मच मधु में मिलाकर दिन में दो बार लें ।

उतरान्चल

आयुर्वेदिक-महिलास्वास्थ्य एवं फिटनेश पर परिचर्चा

डा० गोपाल चड्ढा द्वारा आयोजित एक गोष्ठी 31 आयुर्वेद चिकित्सकों, 15 सौन्दर्य विशेषज्ञों और महिला रोग विशेषज्ञों ने भाग लिया । सौन्दर्य विशेषज्ञ प्रिन्सीपल जैक एण्ड जिल स्कूल, नवीन, शाहदरा, देहली के मन्जू सूद ने कहा कि सौन्दर्य-स्वास्थ्य एवं आकर्ष का मान ही नारी की पहचान है । इसके लिये आवश्यक है निरोग तन में निरोग मन का वास से करें ।

इस अवसर पर डा० मोहनी नारी रोग विशेषज्ञ ने कहा कि युवक किशोरियों में 70 प्रतिशत कमर दर्द की शिकायत पाई गई है और 55 प्रतिशत किशोर युवतियों लौह कण की कमी पाई है । आगे सौन्दर्य विशेषज्ञा सि राली, देहली ने कहा कि आज की युवा महिलाओं अपने सौन्दर्य सुधार के लिए निम्न 7 नियमों का ध्य रखना चाहिए ।

1. दिन में तीन बार चेहरे को शीतजल से छींटें मार
2. कब्ज का नाश करने के लिए व स्फूर्ति के लि ताम्बे के जग में रखा जल 400 मि.ली. प्रति दि लें ।
3. मौसम में होने वाले फलों का प्रयोग करें ।
4. 8 से 10 गिलास शुद्ध जल का प्रयोग प्रति दिन कर
5. सप्ताह में दो बार काले चनों का प्रयोग सब्जी रूप में करें ।
6. रात्रि भोजन कम व बिना मिर्च मसाले वाला ल चाहिए ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तरांचल आयुर्वेदिक एवं यूनानी सेवा चतुर्थ वर्गीय राज्य कर्मचारी संघ (अखिल भारतीय राज्य कर्मचारी महासंघ) से सम्बद्ध जनपद शाखा उत्तरकाशी का निर्वाचन सम्पन्न

दिनांक 27/4/2003 को उत्तरांचल आयुर्वेदिक एवं यूनानी सेवा चतुर्थ वर्गीय सज्य कर्मचारी संघ जनपद शाखा उत्तरकाशी का द्विवार्षिक अधिवेशन रा०आयु०चि० उत्तरकाशी में सम्पन्न हुआ । अधिवेशन के मुख्य अतिथि श्री गोविन्द सिंह चमियाल, जनपदीय अध्यक्ष, उत्तरांचल चतुर्थ वर्गीय राज्य कर्मचारी महासंघ जनपद शाखा उत्तरकाशी एवं विशिष्ट अतिथि श्री ताराचन्द महामंत्री, उत्तरांचल चतुर्थ वर्गीय राज्य कर्मचारी महासंघ शाखा, उत्तरकाशी की देख-रेख में सम्पन्न करवाया गया । निम्नांकित सभी पदाधिकारी अगामी दो वर्षों के लिए निर्विरोध निर्वाचित किये गये ।

1. सर्व श्री श्रीचन्द पंवार, संरक्षक, रा०आ०चि०,मुस्टिकसौड
2. श्री परमानन्द नौटियाल,अध्यक्ष,का०क्षे०आयु०यू०अधि० उ०का०
3. श्री अशोक कुमार, सचिव, का०क्षे०आयु०यू०अधि० उ०का०
4. श्री हर्षपति जोगेला, कोषाध्यक्ष, रा०अ०चि० मुख्यालय, उत्तरकाशी ।

निर्वाचित पदाधिकारियों द्वारा दिनांक 28-4-2003. को कार्यकारिणी का विस्तार कर सर्वसम्मति से निम्नांकित पदाधिकारियों एवं कार्यकारिणी के सदस्यों का चयन किया गया । वर्तमान कार्यकारिणी निम्नवत है ।

कार्यकारिणी

प्रमुख सलाहकार

श्री महानंद बडोनी (रा०आयु०चि०पोरा)

वरिष्ठ सलाहकार

श्री सत्ये सिंह नेगी (रा०आयु०चि० स्यालना)

सलाहकार

श्री हरिकृष्ण (कार्यालय)
श्री अजयपाल सिंह (रा०आयु०चि०)
श्री दयाराम सेमवाल (साल्ड)

उपाध्यक्ष

श्री आजाद प्रसाद उनियाल (भंकोली)
श्री श्याम सिंह धनई (बडेथ)

महिला उपाध्यक्षा

श्रीमती विमला देवी (मुख्यालय)
श्रीमती बिन्द्रा देवी (जोगथ)

संयुक्त सचिव

श्री प्रेम लाल (कुमारकोट)
श्री मदन सिंह चौहान (श्रीकोट)

इस अवसर पर निम्नलिखित मांग-पत्र पारित किये गये :-

संगठन मंत्री

श्री बुद्धि सिंह कैन्तुरा (बौन)
श्री सत्यवीर सिंह (पोरा)
श्री सुन्दर लाल डिमरी (फिताडी)
श्री त्रिलोक सिंह कैन्तुरा (कार्यालय)

प्रचार मंत्री

श्रीमती सरोजनी देवी (जोगथ)
श्रीमती कमला देवी (मुख्यालय)
श्री मुन्ना लाल (सौरा)

प्रेस सचिव

श्रीमती कमला देवी (मुख्यालय)

सम्प्रेक्षक

श्री सूरज लाल (मनेरी)
श्री बंचू लाल (चमियारी)

कार्यकारिणी के सदस्य

श्रीमती जमुना देवी (भंकोली)
श्रीमती चन्द्रकला (कोठिण्डा)
श्री शैलेन्द्र सिंह (राजगढ़ी)
श्री भगवान सिंह राणा (कुवॉ)
श्री चन्द्रकाँत (भटवाड़ी)
श्री प्रीतम सिंह (चिवॉ)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री नौनिहाल सिंह (जखोल)
श्री बाबूराम (दोणी)
सुरेन्द्र सिंह कोतवाल (डोभालगांव)

इस अवसर पर 13 सूत्री एक मांग-पत्र भी पारित किया गया ।

राजकीय आयुर्वेद एवं यूनानी चिकित्सा सेवा संघ (उत्तरांचल) हरिद्वार क्षेत्र का चुनाव सर्वसम्मति से सम्पन्न

राजकीय आयुर्वेद एवं यूनानी चिकित्सा सेवा संघ, हरिद्वार का वर्ष 2003-2004 का चुनाव दिनांक 09-05-2003 को क्षेत्रीय आयुर्वेदिक एवं यूनानी अधिकारी कार्यालय 37, श्रवणनाथ नगर हरिद्वार में सम्पन्न हुआ जिसमें निम्न पदाधिकारी सर्वसम्मति से निर्वाचित हुए -

1. संरक्षक-डॉ० रमाकान्त शर्मा, क्षेत्रीय आयुर्वेदिक एवं यूनानी अधिकारी, हरिद्वार ।
2. अध्यक्ष-डॉ० अनंगपाल सिंह, चिकित्साधिकारी, रा०आयु०चि०, हल्लूमाजरा (हरिद्वार) ।
3. उपाध्यक्ष-डॉ० (श्रीमती) अरूणा गुप्त चिकित्साधिकारी, रा०आयु०चि०, रूकड़ी, (हरिद्वार)
4. सचिव-डॉ० विजेन्द्र कुमार अग्रवाल, चिकित्साधिकारी रा०आयु०चि०, मंगलौर (हरिद्वार) ।
5. उपसचिव-डॉ० अशोक कुमार त्यागी, चिकित्साधिकारी रा०आयु०चि०, मिर्जापुर (हरिद्वार) ।
6. आय व्यय निरीक्षक-डॉ० सुभाष गुप्ता, चिकित्साधिकारी रा०आयु०चि०, भगवानपुर (हरिद्वार) ।
7. प्रचार एवं वैज्ञानिक गोष्ठी मंत्री- डॉ० अनिल राव चिकित्साधिकारी, रा०आयु०चि०, जगजीतपुर, हरिद्वार

सदस्य -

1. डॉ० दयाशंकर राय, चिकित्साधिकारी, रा०आ०चि० दौलतपुर (हरिद्वार) ।
2. डॉ० डी०एम० मित्तल, चिकित्साधिकारी, रा०आ०चि० रुड़की (हरिद्वार)।
3. डॉ० प्रमोद कपूर, चिकित्साधिकारी, रा०आ०चि० बहादरपुर खाद्दर (हरिद्वार) ।
4. डॉ० कृपाशंकर शर्मा, चिकित्साधिकारी, रा०आ०चि० बहादराबाद (हरिद्वार) ।
5. डॉ० राजबीर सिंह मलिक, चिकित्साधिकारी रा०आ०चि०, पिरान कलियर (हरिद्वार) ।

बैद्यनाथ
पंचसकार चूर्ण
यह चूर्ण पेट साफ करता है तथा पाचन शक्ति और भूख बढ़ाता है । इससे पेट के कृमि भी दूर होते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

हृदय रोग, पोलीपिल और अर्जुन

ब्रिटिश मेडिकल जरनल के 28 जून, 2003 में प्रकाशित एक शोधपूर्ण लेख के अनुसार वोल्फसन प्रतिषेधात्मक औषधि के निदेशक डा०एन०आई० वाल्ड और एम०आर०लॉ ने छह में एक सूत्र की खोज की है। चिकित्सकों के अनुसार कालेस्टेराल कम करने की औषधि का नाम पोलीपिल रखा गया है। योग उन औषधियों का मिश्रण है जिसे एलोपैथिक चिकित्सक अच्छी तरह जानंते हैं। इसमें सिमवासटेटिन-40 मि०ग्राम, थियाजाइड और ए.सी. ई. का मिश्रण है। साथ ही फोलिक अम्ल 0.4 मि०ग्रा० और एस्पिरिन 75 मि०ग्रा० है। चिकित्सकों का दावा है कि यदि एक गोली का सेवन 55 वर्ष की उम्र के बाद प्रतिदिन किया जाय, तो हृदयाघात की सम्भावना अत्यन्त कम होती है। अर्थात् 88% हृदय के रोगी इस व्याधि से सुरक्षा पा सकते हैं। यह शोध वस्तुत: प्रशंसनीय है। हृदय रोगियों की संख्या सम्पूर्ण विश्व में बढ़ रही है और इसकी वृद्धि तेजी से होगी - ऐसी आशंका चिकित्सा विज्ञानियों को है। ऐसी स्थिति में यह सामान्य बात है कि चिकित्सक इस व्याधि से छुटकारा पाने के लिए चिन्तित होंगे।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञानियों के अनुसार चार संकटपूर्ण स्थिति हो सकती है। प्रथम यह कि कालेस्टोरेल स्तर भी असामान्य स्थिति हो, साथ ही प्रोटीन-परिवहन की स्थिति असामान्य हो। द्वितीय यह कि रक्तचाप की स्थिति असामान्य हो, क्योंकि चालन-मार्ग में कहीं बाधा हो। तृतीय यह कि होमोसायस्टिन का रक्त स्तर असामान्य हो, क्योंकि यह रक्त स्तर को कम करता है। चतुर्थ यह कि रक्त कोष का असामान्य कार्य जिसमें प्लेटलेट्स की कार्य प्रणाली प्रभावित होती है। इस कारण से रक्त अवरूद्ध हो जाता है और हृदयाघात की सम्भावना बढ़ जाती है। वाल्ड-लॉ के विश्लेषण का भी यही प्रमाण है।

इससे हम सहमत हो सकते हैं कि उपर्युक्त परिस्थितियां हृदयाघात के लिए जिम्मेवार हो सकती हैं। साथ ही हम इस बात से भी हम असहमत नहीं हो सकते हैं कि यदि समुचित आहार-विहार का पालन किया जाय, तो हृदयाघात से बचा जा सकता है। साथ ही यदि समुचित औषधियों का सेवन किया जाय, तो सम्भवत: हृदयाघात हो ही नहीं। इन औषधियों में से एक है - अर्जुन। इस सिद्धान्त से सहमत हैं भारतीय हृदय रोग पत्रिका, भारतीय चिकित्सक संघ पत्रिका, फाइटोकेमिस्ट्री अनुसंधान, फिजियोथेरापी अनुसंधान, फार्माकोलोजी अनुसंधान, मोलिकुलर एवं फार्माकोलोजी अनुसंधान। साथ ही अनेक प्रतिष्ठित विद्वान भी इस अवधारणा से सहमत हैं कि यदि अर्जुन का सेवन व्यवस्थित रूप से प्रतिदिन किया जाय, तो हृदयाघात की सम्भावना अत्यन्त कम हो जाती है। वैज्ञानिकों के अनुसार अर्जुन के निम्नलिखित कार्य हो सकते हैं :-

1. ट्राइग्लिसिराईड और कोलेस्टेराल के स्तर में कम वृद्धि।
2. एच.डी.एल. को समुचित स्तर प्रदान करना।
3. यह हृदयाघात विरोधी एजेन्ट के रूप में कार्य करता है।
4. चूहों में यह मायोकार्डियल नेक्रोसिस से मुक्त करता है।
5. प्लेटलेट्स को नियंत्रित करता है।
6. प्रभावकारी एण्टी आक्सीडेन्ट के रूप में कार्य करता है।

प्रसिद्ध विज्ञानी श्री डी० बालासुब्रमनियम ने एक आलेख में दावा किया है कि यदि अर्जुन में बीटा रिसेप्टर एवं कैल्सियम प्रणाली को अवरूद्ध करने की क्षमता है, तो यह एक प्राकृतिक पोलीमिल के रूप में कार्य कर सकता है। जहां तक आयुर्वेद का प्रश्न है, अर्जुन को कषाय रस युक्त, शीतल, हृद्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(हृदय को हितकर) एवं क्षत, क्षय, विष, रक्त विकार, मेद, प्रमेह, व्रण (प्रमेह सम्बन्धी व्रण) कफ तथा पित्त का नाशक कहा गया है । ककुभः (अर्जुन) शीतलो हृद्यः क्षतक्षयविषास्रजित् । मेदोमेहव्रणान् हन्ति तुवरः कफपित्त हृत् । न केवल भावप्रकाश में बल्कि आयुर्वेद के अनेक ग्रन्थों में भी इसे हृदय के लिए हितकर कहा गया है । आधुनिक विज्ञान और आयुर्वेद के प्रख्यात् विद्वान, डा०के०एन०उडुप्पा ने सिफारिश की है कि यदि अर्जुन त्वक् का सेवन प्रतिदिन एक ग्राम की दर से किया जाय, तो यह प्रतिषेधक के रूप में कार्य करता है । वाग्भट्ट, चक्रदत्त सहित अनेक प्राचीन विद्वानों ने भी इसे हृदय रोग में सेवन करने की सलाह दी है । इस तरह हमारा विश्वास है कि यदि अर्जुन सहित अनेक औषधियों पर आधुनिक वैज्ञानिक उपकरणों की मदद से शोध किया जा जाय, तो निश्चित ही ये औषधियां हृदय के लिए हितकर साबित होंगी ।

कीटनाशक दवाओं का दुष्प्रभाव

बिहार राज्य सहित सम्पूर्ण देश में फसलों, सब्जियों एवं फलों के उत्पादन, मछलियों एवं दूधों में विभिन्न प्रकार की कीटनाशक दवाओं का दुरूपयोग या तो कीटों से इसकी रक्षा के लिए अथवा उत्पादन-वृद्धि के लिए किया जाता है । दोनों के पीछे ज्यादा से ज्यादा धन कमाने की लिप्सा है । दुर्भाग्यवश हमारे अधिकांश उपभोक्ता इस तथ्य से अंजान हैं कि वे अपने भोजन में विषों का प्रयोग कर रहे हैं जो उनके स्वास्थ्य के लिए नुकसान देह है । कीटनाशक दवाओं में शामिल हैं - फंगीसाइड, इन्सेक्टीसाइड, रोडेन्टीसाइड, नेमिटिसाइड । ये कीटनाशक शरीर में जल और भोजन के माध्यम से शरीर में प्रवेश करते हैं । परिणामतः इनसे कैन्सर, आंत्रशोथ, कामला, प्रतिरोधी शक्ति में ह्रास आदि रोग उत्पन्न होते हैं । ये केन्द्रीय स्नायु तंत्र को प्रभावित करते हैं । इसी तरह डीटीटी और एच.सी. एच. भी शरीर की प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं । वैज्ञानिकों के अनुसार एक भारतीय प्रतिदिन 0.27 मिलीग्राम अपने भोजन में डीडीटी का प्रयोग अंजाने में करता है । इससे बचाव करना अत्यधिक कठिन है । हमें अपने भोजन के लिए अनाज, दूध, फल, सब्जी आदि पदार्थ बाजार से खरीदना पड़ता है । इन उत्पादित चीजों में कीटनाशक दवाओं का प्रभाव रहता है । जब इन्हें खरीदकर हम घर लाते हैं, तो स्टोर करने के लिए भी अलग से दवाई डालते हैं । इस तरह कीटनाशक दवाओं से बचने के बदले इसका उपयोग करने के लिए हम विवश हैं । वैज्ञानिकों को इस दिशा में इसका समाधान खोजना चाहिए । केन्द्र एवं राज्य सरकार को भी चाहिए कि इस ज्वलंत समस्या का मुकाबला कैसे किया जाय । यह एक कठिन कार्य है, किन्तु यदि प्रयास किया जाय तो सफलता प्राप्त हो सकती है ।

कीटनाशक दवाओं का तो उपयोग किया ही जाता है, साथ ही अनाज, फल, सब्जी आदि खाद्य पदार्थों के उत्पादन के लिए भी किसान यूरिया, नाइट्रोजन एवं अन्य रासायनिक खाद का उपयोग करते हैं ।

हमारी राय में यदि कम्पोस्ट खाद की व्यवस्था व्यापक स्तर पर हो, तो कृत्रिम रासायनिक खाद से छुटकारा पाया जा सकता है । विदित है कि कम्पोस्ट खाद के लिए गोबर, मल-मूत्र, घर के बेकार पदार्थों का उपयोग किया जाता है । गांवों में किसान आमतौर पर गाय, बैल, भैंस सहित अनेक जानवर रखते हैं । अनेक गांवों में शौचालय भी नहीं है । घर के अवशिष्ट पदार्थों को बेकार समझकर फेंक देते हैं । यदि गांव वालों को प्रशिक्षण दिया जाय, तो तात्कालिक कई लाभ मिलेंगे । जैसे रासायनिक खाद के खर्च बचेंगे, गन्दगी एवं प्रदूषण से मुक्ति मिलेगी, गांव के स्तर पर नियोजन मिलेंगे और साथ ही आदमी को ताजे फल, सब्जी एवं लाभदायक अनाज मिलेंगे । सरकार एवं गैर सरकारी स्वंयसेवी संस्थाओं को इस दिशा में सार्थक प्रयास करना चाहिए ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारावाहिक

आयुर्वेद का इतिहास - 47

1. पं० बनवारी लाल शर्मा
2. विमल चन्द्र झा

चरक संहिता

पं० शिव शर्मा[1] ने जीवक का उदाहरण देते हुए लिखा है कि आत्रेय का नाम उनके शिक्षक के रूप में तो आता है, किन्तु पुनर्वसु का नाम शिक्षक के रूप में ज्ञात नहीं है । विदित है कि आत्रेय छठी शती ई०पू० में पैदा हुए थे । आत्रेय के अतिरिक्त कई ऋषि आत्रेय के नाम से विख्यात् हैं । जैसे कृष्णात्रेय, पुनर्वसु आत्रेय, दत्त आत्रेय आदि । एलोपैथी के जनक हिप्पोक्रेट्स का जन्म 450 वर्ष ई०पू० हुआ था जबकि भगवान बुद्ध का आर्विभाव 500 वर्ष ई०पू० हुआ था ओर जीवक का काल भी लगभग यही माना जाता है । निश्चय ही आत्रेय का जन्म हिप्पोक्रेट्स के पूर्व हुआ था । ऐसी स्थिति में चरक संहिता का काल भी इसी के आस-पास माना जा सकता है ।

श्री कैथ[2] ने चरक एवं चरक संहिता के सम्बन्ध में निम्नलिखित वर्णन किया है :-

1. चरक और सुश्रुत में छह रसों की बात की गयी है जबकि कुछ ग्रन्थों में 8-10 रसों की बात है ।
2. इस बात की प्रबल सम्भावना है कि चरक संहिता पर आधारित आत्रेय के विद्यालय के पूर्व भी प्राचीन चिकित्सा-पद्धति रही होगी ।
3. दृढ़बल संभवतः आठवीं या नवीं शती के थे । ये कपिलबल के पुत्र थे ।
4. इन्होंने अन्तिम दो अध्याय जोड़े हैं । 28 या 30 अध्याय में से 17 अध्याय इन्होंने जोड़े हैं ।
5. रचना मूल ज्ञात नहीं होती है । पुनर्वसु आत्रेय के शिष्य, अग्निवेश द्वारा रचित अनेक तंत्र के आधार पर इस रचना का प्रतिसंस्कार हुआ है ।

डा० रामकरण शर्मा और वैद्य भगवान[3] दास ने चरक एवं चरक संहिता के सम्बन्ध में निम्नलिखित निष्कर्ष निकाला है :-

1. चरक नाम अनेक ऋषियों का है जिन्होंने ज्ञान की अनेक क्षेत्रों में विशेषज्ञता हासिल की है ।
2. यजुर्वेद के प्रचारक (Propagator) चरक माने जाते हैं ।
3. शुक्ल यजुर्वेद में चरक का वर्णन दुष्ट देवता क रूप में है ।
4. पाणिनि के व्याकरण में चरक का जिक्र है ।
5. रुद्र ने अपने भाष्य में चरक को विद्वान चिकित्सक एवं योगी माना है ।
6. ललित-विस्तार नामक पुस्तक में भी इसी प्रकार की चर्चा है ।
7. न्याय मंजरी में जयन्त भट्ट ने इन्हें द्रव्यों का ज्ञाता कहा है ।
8. अलबरूनी ने चरक को प्रतिभाशाली पुरुष माना है ।
9. व्यास के पुत्र, वैशम्पायन भी चरक कहे जाते थे ।
10. याज्ञवल्क्य के द्वारा वेदों पर लिखे गये भाष्य में चरक का वर्णन है ।
11. बौद्ध त्रिपिटक में तेदे लोकिया नामक एक चिकित्सक का वर्णन है जो चरक नाम से कनिष्क (100 ई०प०) के शासन-काल में थे ।
12. चरक संहिता के चरक उपर्युक्त चरकों से भिन्न ज्ञात होते हैं ।

उपर्युक्त दोनों विद्वानों का कथन है कि चरक के काल का सही-सही निधार्रण करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है । बौद्ध-प्रभाव का अभाव, ब्राह्मण-शैली का अनुकरण और वर्णन-शैली से ज्ञात होता है कि यह रचना बौद्धों के पूर्व की है । प्रतिसंस्कृत चरक-संहिता का निर्माण 8वीं शती ई०पू० हुआ होगा । उनके निवास-स्थान का पता ज्ञात नहीं है । चक्रपाणि ने पतंजलि को योग, व्याकरण एवं औषधि-शास्त्र का प्रणेता कहा है । कुछ विद्वान चरक एवं पतंजलि को एक ही व्यक्ति मानते हैं । कुछ विद्वानों के मत इसके खिलाफ हैं ।

श्री जयदेव विद्यालंकार[4] ने पुस्तक की भूमिका

1. प्रबन्ध निदेशक, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० 2. सम्पादक, सचित्र आयुर्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में निम्नलिखित तथ्य निरूपित किये हैं :-

1. आयुर्वेद के उपलब्ध ग्रन्थों में प्राचीनतम ग्रन्थ चरक संहिता है ।
2. चरक संहिता के निर्माण के समय भी अनेक तन्त्र प्रचलित थे ।
3. दृढ़बल के काल के समय भी संस्कृत अग्निवेश तंत्र पूर्ण उपलब्ध नहीं होता था । इस कमी को पूरा करने के लिए सामग्री एकत्रित करके पूर्ण कर दिया ।
4. दारायस पर्शिया का राजा था । उसका राज्यकाल 521 ई०पू० से 485 ई०पू० मानते हैं । यदि 'स्वर्णमार्गदः' का यही अभिप्राय हो (स्वर्णमार्गदः का अर्थ है राजर्षि नग्नजित् तो सम्भवतः दारायस के काल में जीवित होगा) जो आत्रेय और उसके शिष्य अग्निवेश का जीवनकाल ईसा से 500 वर्ष पूर्व सिद्ध होता है ।
5. अग्निवेश के काल में रवि, सोम आदि वारों की गणना का प्रकार शायद नहीं था, क्योंकि कहीं भी आचार्य ने वारों के अनुसार शुभारम्भ-निर्देश नहीं किया । परन्तु तिथि, करण, नक्षत्र, अयन, यक्ष आदि द्वारा शुभाशुभ का वर्णन ग्रन्थ में उपलब्ध है । भारतवर्ष में वारगणना का प्रचार शकारम्भकाल से हजार वर्ष पूर्व हुआ - यह शंकरबालकृष्ण दीक्षित ने स्वरचित भारतीय ज्योतिषशास्त्र के इतिहास में बताया है । इस प्रकार भी अग्निवेश को उस काल के पूर्व ही होना चाहिए ।
6. भेल का गुरु पुनर्वसु आत्रेय है । अतएव कृष्णात्रेय भी उसी का नाम प्रतीत होता है । भगवान् व्यास ने भी चिकित्सा (काल चिकित्सा) का प्रवर्त्तक कृष्णात्रेय को ही बताया है । महाभारत के शान्तिपर्व में कहा गया है :-

'गान्धर्व नारदो वेदं भरद्वाजो पुनर्वसुम् ।
देवर्षिचरितं गार्ग्यः कृष्णात्रेय चिकित्सतम् ॥

चरक संहिता में उक्त आयुर्वेद की प्रवृत्ति के ऐतिह्य से भी यह स्पष्ट है । अतः कम से कम आत्रेय और उसके शिष्य अग्निवेश आदि महाभारत ग्रन्थ के रचनाकाल से पूर्व होने चाहिए । महाभारत के रचनाकाल विदेशी विद्वान ईस्वी सन् के प्रारम्भ से 250 वर्ष पूर्व ठहराते हैं ।

7. यह सम्भव प्रतीत नहीं होता है कि कनिष्क के समय चरक होंगे ।
8. चरक संहिता में ज्वर चिकित्सा प्रकरण विष्णु-सहस्रनाम के जप का विधान है । यह महाभारत में कहे विष्णुसहस्रनाम की ओर निर्देश होगा महाभारत से पूर्व के किसी भी ग्रन्थ में विष्णुसहस्र की उपलब्धि नहीं थी । अतः चरकमुनि महाभारत पश्चात् काल का ही है ।

[विद्वान लेखक द्वारा लिखित भूमिका में विरोधाभास है एक तरफ वे आत्रेय एवं उनके शिष्य अग्निवेश का काल महाभारत से पूर्व मानते हैं, दूसरी ओर वि सहस्रनाम के निर्देश से वे इसका काल महाभारत पश्चात् मानते हैं । विद्वान लेखक महोदय का नि विरोधाभासी प्रतीत होता है - लेखकद्वय]

उपलब्ध सामग्री के आधार पर चरक संहिता के नि -काल के विषय में निम्नलिखित निष्कर्ष निकाल सकते हैं :-

1. ब्रह्मा से लेकर पुनर्वसु आत्रेय तक ज्ञान प्रदान की परम्परा में काफी लम्बा समय व्यतीत होने बोध नहीं होता है । चरक संहिता के सूत्रस्थान अनुसार ब्रह्मा से दक्ष प्रजापति, प्रजापति से अ कुमार, अश्विनी कुमारों से भगवान इन्द्र, भ इन्द्र से भरद्वाज, भरद्वाज से पुनर्वसु आत्रेय और अग्निवेश ने आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त किया । अ अग्निवेश का क्रम सातवां है । यदि मिथक अनुसार काल-गणना छोड़ दें, तो ज्यादा समय नहीं होता है । किन्तु, इसके अनादित्व होने से उत्पन्न होता है । लगता है कि काल-गणना में अवश्य रहा होगा । यदि यह मान लिया जा ब्रह्मा से उत्पन्न आयुर्वेद अग्निवेश तक पहुंचते एक लम्बा समय व्यतीत हो गया था, तो आधार क्या हो सकता है । यदि कविराज सूरम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की बात करें, तो उनके अनुसार ब्रह्मा एक ऐतिहासिक व्यक्ति थे । एक जगह वे लिखते हैं कि 'ब्रह्माजी आज से न्यूनातिन्यून 17,000 सत्रह सहस्र वर्ष पूर्व हुए ।' उसी पृष्ठ में पुन: लिखते हैं - "अत: आदिकाल, कृतयुग तथा त्रेता के कुल काल पर्यन्त अर्थात् 6000 वर्ष तक ब्रह्माजी अवश्य जीवित थे," अश्वि-द्वय के विषय में उन्होंने अस्पष्ट लिखा है कि "वे कई सहस्र वर्ष जीवित रहे," इसी तरह इन्द्र के विषय में वे एक जगह लिखते हैं, "त्रेता के अन्त में इन्द्र ने आयुर्वेदोपदेश दिया । अत: त्रेता के लगभग 400 वर्ष व्यतीत हो जाने पर अर्थात् विक्रम से लगभग 8500 वर्ष पूर्व इन्द्र अवश्य था ।" विद्वान-लेखक के वर्णन से यह प्रमाणित होता है कि ब्रह्मा एवं इन्द्र ऐतिहासिक पुरुष थे, सृष्टिकर्त्ता ईश्वर नहीं थे, क्योंकि ईश्वर की मृत्यु नहीं होती है । एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक अर्थात् अग्निवेश तक आयुर्वेद के ज्ञान को प्रदान करने में काल-गणना की लम्बी अवधि को आधार मानने पर एक लम्बा समय व्यतीत हो जाता है । इस लम्बी अवधि तक इतिहास को सुरक्षित रखना व्यावहारिक प्रतीत नहीं होता है । यदि व्यावहारिक हो तो भी ऐतिहासिक सामग्री नष्ट होने की सम्भावना रहती है । चरक संहिता में जिस सहज ढंग से वर्णन किया गया है, उससे ज्यादा अवधि व्यतीत होने का बोध नहीं होता है ।

2. डा० रामकरण शर्मा, वैद्य भगवान दास सहित अन्य विद्वानों का निष्कर्ष सही प्रतीत होता है कि चरक संहिता में जिस शैली का प्रयोग किया गया है एवं वर्णन करने का जो तरीका अपनाया गया है, वह ब्राह्मण शैली से मेल खाता है । बौद्ध-धर्म का प्रभाव भी ग्रन्थ में दृष्टिगोचर नहीं होता है । आचार्य प्रियव्रतजी के अनुसार चरक संहिता की शैली कौटिल्य अर्थशास्त्र से कुछ मिलती है । चूंकि पुष्यमित्र तथा चन्द्रगुप्त के नाम चरक संहिता में नहीं मिलते, इससे इस बात की सम्भावना हो सकती है कि इसका निर्माण चन्द्रगुप्त से भी पहले हुआ होगा, लेकिन एक संशय यहां भी उपस्थित होता है । अर्थशास्त्र में भी चरक संहिता का वर्णन नहीं मिलता है । यह भी कहा जा सकता है कि यदि चरक संहिता का निर्माण अर्थशास्त्र से पहले हुआ रहता तो इस ग्रन्थ की चर्चा इसमें अवश्य रहती ।

3. चरक एवं पतंजलि के पृथक् व्यक्तित्व के विषय में विद्वानों की जो राय है, वह सत्य प्रतीत होती है ।

4. अग्निवेश तंत्र का एक पृथक अस्तित्व था । जिस तरह चरक संहिता के समस्त अध्याय उपलब्ध नहीं होने के कारण दृढ़बल ने जोड़ा, उसी तरह इसकी सम्भावना हो सकती है कि चरक के समय तक अग्निवेश के अधिकांश अध्याय लुप्त हो गये हों, और उसे समृद्ध आचार्य चरक ने किया हो । इसी समृद्धि का आशय प्रतिसंस्कर्त्ता से हो, क्योंकि प्रतिसंस्कर्त्ता को यह अधिकार रहता है कि वह मूल ग्रंथ को बिना विशेष परिवर्त्तन के अर्थात् ग्रन्थ की मूल प्रकृति में बिना किसी अन्तर के संशोधित करे जिसे प्रतिसंस्कर्ता का नाम दे दिया गया ।

5. अन्तत: उपलब्ध सामग्री के आधार पर निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि चरक संहिता का अस्तित्व भगवान बुद्ध से पूर्व था । जहां तक ग्रन्थ में कुछ विदेशज शब्दों के प्रयोग का प्रश्न है, उसके कई कारण हो सकते हैं । प्रथम कारण तो यह है कि भारत का सम्पर्क विदेशी राष्ट्र से काफी पूर्व से था । कुछ शब्द भले ही अल्प संख्या में, यात्रियों के माध्यम से हमारे देश में आये होंगे । आचार्य चरक ने उन शब्दों का प्रयोग आम जनता के लिए किया हो । दूसरा कारण यह हो सकता है कि दृढ़बल ने इसे चरक संहिता में जोड़ा हो, क्योंकि दृढ़बल के समय तक तो विदेशियों से भारतीयों का निकट सम्बन्ध स्थापित होने लगा था । इसका प्रभाव भी ग्रन्थ पर पड़ा हो ।

चरक संहिता की विशेषताओं को हम निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त करना चाहेंगे । चरक संहिता कुल 120 अध्यायों में विभाजित है जो निम्नानुसार है :-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

1. सूत्र स्थान - कुल अध्याय - 30

इसमें विषयानुसार दीर्घञ्जीवितीय, अपामार्गतण्डुलीय, आरग्वधीय, षड्विरेचनशताश्रितीय, मात्राशितीय, तस्याशितीय, नवेगान्धारणीय, इन्द्रियोपक्रमणीय, खुड्डाक चतुष्पाद, महाचतुष्पाद, तिस्रैषणीय, वातकलाकलीय, स्नेहाध्याय, स्वेदाध्याय, उपकल्पनीय, चिकित्साप्राभृतीय कियन्त:शिरसीय, त्रिशोफीय, अष्टोदरीय, महारोग, अष्टौनिन्दितीय, लंघनबृंहणीय, सन्तर्पणीय, विधि शोणितीय, यज्ज: पुरूषीय, आत्रेयभद्र काप्यीय, अन्नपान विधि, विविध ाशितपीतीय, दशप्राणायतनीय एवं अर्थे दशमहामूलीय अध्याय सहित कुल 30 अध्याय हैं ।

2. निदान स्थान - कुल 8 अध्याय ।

इसमें ज्वर, रक्तपित्त, गुल्म, प्रमेह, कुष्ठ, शोप, उन्माद एवं अपस्मार निदान सहित 8 अध्याय है ।

3. विमान स्थान - कुल 8 अध्याय ।

इसमें रस, त्रिविधकुक्षीय, जनपदोद्ध्वंसनीय, त्रिविध रोग विशेष विज्ञानीय, स्रोतो, रोगानीक, व्याधितरूपीय एवं रोगभिषग्जितीय विमान सहित 8 अध्याय हैं ।

4. शारीर स्थान - कुल 8 अध्याय ।

इसमें कतिधापुरूषीय, अतुल्यगोत्रीय, खुड्डीका गर्भावक्रान्ति, महती गर्भावक्रान्ति, पुरुष विचय, शरीर विचय, शारीर संख्या एवं जाति सूत्रीय शारीर सहित 8 अध्याय है ।

5. इन्द्रिय स्थान - कुल अध्याय 12 ।

इसमें वर्णस्वरीय, पुष्पितक, परिमर्शनीय, इन्द्रियानीक, पूर्वरूपीय, कतमानिशरीरीय, पन्नरूपीय, अवाक् शिरसीय, यस्यश्यावनिमित्तीय, सद्योमरणीय, अणुज्योतीय एवं गोमयचूर्णीय इन्द्रिय स्थान सहित कुल 12 अध्याय हैं ।

6. चिकित्सा स्थान - कुल 30 अध्याय ।

इसमें रसायन अध्याय कुल चार पादों में, वाजीकरण अध्याय कुल चार पादों में, ज्वर, रक्तपित्त, गुल्म, प्रमेह, कुष्ठ, राजयक्ष्मा, उन्माद, अपस्मार, क्षतक्षीण, श्वयथु, उदर, अर्श, ग्रहणी, पाण्डु रोग, हिक्काकास, कास, अतिसार, छर्दि, त्रिसर्प, तृष्णा, त्रिष, मदात्यय, द्वित्रणीय, त्रिमर्मीय, उरूस्तम्भ, वात-व्याधि, वातरक्त, योनि व्यापत् (स्तन्य रोग, बाल रोग) सहित 30 अध्याय हैं ।

7. कल्प स्थान - कुल 12 अध्याय ।

इसमें मदन, जीमूतक, इक्ष्वाकु, धामार्गव, वत्सक, कृतवेधन, श्यामा त्रिवृत्, चतुरङ्गुल, तिल्वक, सुधा, सप्त लाशाङ्गिनी एवं दन्ती द्रवन्तीकल्प सहित 12 अध्याय हैं ।

8. सिद्धि स्थान - कुल 12 अध्याय ।

इसमें कल्पना, पञ्चकर्मीया, वस्ति सूत्रीया, स्नेह, व्यापत्, नेत्रवस्ति व्यापत्, वमन विरेचनव्यापत्, वस्ति व्यापत्, प्रासूतयोगीयात्रिमर्मीया, वस्ति, फलमात्रा एवं उत्तरवस्ति सिद्धि स्थान सहित 12 अध्याय हैं ।

आचार्य प्रियव्रतजी के अनुसार "सिद्धिस्थान में एक श्लोक है जिसके आधार पर यह अनुमान किया जाता है कि सुश्रुत संहिता के समान चरक संहिता में भी उत्त तंत्र होगा जो कि सम्प्रति उपलब्ध नहीं है, किन्तु यह श्लोक सभी प्रतियों में नहीं मिलता और चक्रपाणि ने भी लिखा है कि यह अनार्ष है, फिर भी चक्रपाणि के काल (11 वीं शती) में इसका अस्तित्व मिलता है । निश्चलका (13 वीं शती) ने भी अपनी टीका में चरकोत्तर तंत्र तथा चरक परिशिष्ट को उद्धृत किया है ।

दृढ़बल की देन के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों की विभिन्न राय है :-

1. स्वयं दृढ़बल के अनुसार उसने त्रिभाग (तृतीयांश) की पूर्ति की ।
2. डा० दासगुप्ता के अनुसार चिकित्सास्थान के 13 अध्याय, सिद्धिस्थान के कल्पस्थान को दृढ़बल ने पूरा किया ।
3. डा० मुखोपाध्याय के अनुसार चरक संहिता के चिकित्सा स्थान के 17, कल्प स्थान के 12 और सिद्धिस्थान के 12 अध्याय को दृढ़बल ने पूर्ण किया । किन्तु ये 17 अध्याय कौन-से हैं यह कहना कठिन है । चरक संहिता के भिन्न-भिन्न संस्करणों में अध्यायों की जो व्यवस्था की गयी है, उसमें अन्तर है । डा० मुखोपाध्याय ने निर्णय सिन्धु प्रेस और गंगाधर (बेरहमपुर संस्करण) में दिये गये अन्तर को सूचीबद्ध किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसकी विस्तृत चर्चा दृढ़बल के अध्याय में आगामी किसी अंक में की जायगी ।

चरकोक्त महर्षि तथा आचार्य

1. ब्रह्मा
2. दक्ष प्रजापति
3. अश्विनी कुमार
4. इन्द्र
5. भरद्वाज
6. अङ्गि.रा
7. जमदग्नि
8. वशिष्ठ
9. काश्यप गोत्रीय भृगु
10. आत्रेय
11. गौतम
12. सांख्य
13. पुलस्त्य
14. नारद
15. असित
16. अगस्त्य
17. वामदेव
18. मार्कण्डेय
19. आश्वलापन
20. पारीक्षि
21. भिक्षु आत्रेय
22. भरद्वाज
23. कपिञ्जल
24. विश्वामित्र
25. आश्मरथ्य
26. भार्गव
27. च्यवन
28. अभिजित्
29. गार्ग्य
30. शाण्डिल्य
31. कौण्डिन्य
32. वाक्षि
33. देवल
34. गालव
35. साङ्कृत्य
36. बैजवापि
37. कुशिक
38. बादरायण
39. बडिश
40. शरलोमा (शवलोमा)
41. काप्य
42. कात्यापन
43. काङ्क.ायन
44. कैकशेय
45. धौम्य
46. मारीचि
47. काश्यप
48. शर्कराक्ष
49. हिरण्याक्ष
50. लोकाक्ष
51. पैङ्गि.
52. शौनक
53. शाकुनेय
54. मैत्रेय
55. मैमतायनि
56. वैखानस
57. बालखिल्य
58. भद्रशौनक
59. कुश सांकृत्यापन
60. कुमारशिरा भरद्वाज
61. वार्योविद राजर्षि
62. काशिपति वामक
63. शाकुन्तेय ब्राह्मण
64. पूर्णाक्ष मौद्गल्य
65. विमि वैदेह
66. भद्रकाप्य
67. धन्वन्तरि
68. अत्रि
69. जनकवैदेह
70. कौशिक
71. अग्निवेश
72. भेल
73. जतूकर्ण
74. पराशर
75. हारीत
76. क्षारपाणि
77. राजर्षि वामक
78. असित गौतम
79. दृढ़बल
80. लक्ष्मी
81. जय और विजय
82. विष्णु
83. कृष्ण
84. वासुदेव
85. अन्य

डा० मुखोपाध्याय[7] ने आत्रेय पुनर्वसु और आत्रेय को पृथक् मानकर पृथक् क्रम संख्या दी है । आचार्य प्रियव्रत शर्मा[8] ने अपनी पुस्तक (पृष्ठ सं० 115) में क्रम सं० 18 और क्र.सं. 61 में भरद्वाज के पृथक्-पृथक् नाम दिये हैं । इसी तरह उन्होंने क्र.सं. 41, 42 पारीचि काश्यप को एक ही महर्षि माना है । इसके विपरीत अन्य पुस्तकों में पृथक् व्यक्तित्व माने गये हैं । 'चान्ये महर्षयः' शब्द से ज्ञात होता है कि हिमालय पर्वत पर जिस सभा का आयोजन किया गया था और जिसमें भाग लेने वाले जिन ऋषियों के नाम दिये गये हैं, उनके अतिरिक्त भी अन्य बड़े-बड़े महर्षि उपस्थित हुए होंगे ।

संस्करण

यद्यपि चरक संहिता के अबतक सैकड़ों संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं, किन्तु उनमें से कुछ प्रसिद्ध निम्नलिखित हैं :-

1. जीवानन्द विद्यासागर, कलकत्ता द्वारा सम्पादित (वर्ष 1877 एवं 1896) ।
2. गंगाधार कविरत्न, बेरहमपुर (वर्ष 1879) ।
3. गुप्ता, कलकत्ता (1897) ।
4. मूलपाठ के साथ चक्रपाणिदत्त का भाष्य (1892-93) ।
5. यशोदानन्दन सरकर (बंगाली अनुवाद) - 1894 ।
6. आयुर्वेद-दीपिका के साथ चरक संहिता-वामन केशव दातर-निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, 1922 ।
7. बंगाली अनुवाद के साथ चरक संहिता-सतीशचन्द्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविभूषण, कलकत्ता - व.सं.-1311 ।
8. उपेन्द्रनाथ सेन और देवेन्द्रनाथ सेन, कलकत्ता का संस्करण ।
9. योगिन्द्र नाथ सेन का संस्करण और भाष्य ।
10. श्री हरिनाथ विशारद (कलकत्ता 1892)-इसमें सूत्रस्थान और विमान स्थान का कुछ अंश था (आचार्य प्रियव्रत शर्मा)
11. अन्य ।

भाष्य, टीका

चरक संहिता के निम्नलिखित भाष्यकार एवं टीकाकार प्रख्यात् हैं :-

1. पतंजलि - दूसरी शती - उनके भाष्य उपलब्ध नहीं हैं (डा० मुखोपाध्याय) ।
2. ईशानदेव ।
3. हरिश्चन्द्र या हरिचन्द्र - 1111 ई० ।
4. व्याप्य चन्द्र ।
5. वकुल ।
6. आचार्य भीमदत्त ।
7. भिषक् ईश्वर सेन ।
8. नरदत्त ।
9. जीनादास ।
10. जेज्जट - निरन्तर पद व्याख्या ।
11. गुणाकर ।
12. आयुर्वेद दीपिका - चक्रपाणिदत्त या चरक तात्पर्य - 1060 ई० ।
13. चरक तत्व-प्रदीपिका - शिवदास सेन ।
14. चरक तत्व प्रकाश- कौस्तुभ टीका - नरसिंह कविराज ।
15. चरक संहिता व्याख्या - पंजिका - आचार्य स्वामी कुमार ।
16. जल्प कल्पतरु - गंगाधर - 1879 ई० ।
17. उपस्कार - वैद्यरत्न योगिन्द्र नाथ सेन, कलकत्ता ।
18. कृष्ण वेद टीका - चरक ।

आचार्य प्रियव्रतजी के अनुसार निम्नलिखित टीकाकार एवं अनुवादक भी प्रसिद्ध हैं ।

1. ज्योतिष चन्द्र सरस्वती - चरक प्रदीपिका ।
2. हिमदत्त ।
3. वैष्णव ।
4. शिव सैन्धव ।
5. स्वामी दास ।
6. पैतामह ।
7. आषाढ़ वर्मा (परिहार वार्तिककार
8. क्षीर स्वामिदत्त (वार्तिककार)
9. चेल्ल देव ।
10. अमृतप्रभ
11. सुधीर
12. ब्रह्मदत्त
13. चन्द्रिकाकार
14. भासदत्त
15. ईश्वरसेन
16. गदाधर
17. कार्तिककुण्ड
18. सुकीर
19. सुदान्तसेन
20. श्री कृष्ण वैद्य
21. जिनदास
22. जयनन्दी
23. सन्ध्याकार
24. गौवर्धन
25. मुनिदास

चरक संहिता में शोध-कार्य की प्रधानता

कुछ लोगों की यह मान्यता है कि आयु शाश्वत है, अपौरुषेय है, इसलिए शोध की आवश्यक इसमें नहीं है । यह मान्यता तो आत्म-प्रशंसा के स हुयी । यह एक साधारण एवं सहज बात है कि आयुर्वेदज्ञ सभी रोगों के निदान एवं चिकित्सा में स होते तो सम्भवत: आयुर्वेद की दुर्गति नहीं होती और बहुत पहले ही विश्व के स्वास्थ्य मान-चित्र के शिखा विराजमान होता, किन्तु वास्तविकता ऐसी नहीं है । माना जा सकता है कि आयुर्वेद समुद्र के समान है। समुद्र में ज्ञान का इतना विशाल भंडार छिपा है कि खोजने एवं प्रयोग करने में कई युग बीत जायेंगे । लेकि यह उक्ति भी अतिशयोक्ति प्रमाणित होगी यदि आधु के विद्वान शोध-कार्य में विफल साबित होते हैं । आवश्यकता इस बात की है कि आयुर्वेद समुद्र ज्ञानरूपी खजाने को खोजने में अपनी सारी शक्ति ल दें । यह कार्य पहले भी होता था । चरक संहिता में इस प्रमाण हैं । कुछ उदाहरण नीचे हैं :-

संभाषा परिषद्

चरक संहिता में संभाषा परिषद् की विस्तृत च

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं । इस ग्रन्थ को पढ़ने के पश्चात् रोमांच एवं गर्व का अनुभव होता है कि प्राचीन काल में भी परिषद्/गोष्ठी/विचार -विमर्श और तर्क के माध्यम से किसी निष्कर्ष पर पहुंचते थे। आज भी सेमिनार, अधिवेशन, सम्मेलन, गोष्ठी आदि सभाओं का आयोजन किसी न किसी विषय पर सम्पूर्ण विश्व में होता रहता है । आयुर्वेद भी इससे अलग नहीं है। आयुर्वेद के महाविद्यालय, विद्यालय, सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थान, गैर सरकारी स्वयं-सेवी संस्थान, निजी संस्थान आदि समय-समय पर अधिवेशन/विचार-विमर्श/ गोष्ठी आदि के माध्यम से किसी विषय पर विद्वानों की सभा का आयोजन करते रहे हैं एवं करते हैं । किसी विषय पर वैज्ञानिक गोष्ठी का आयोजन करना एक स्वस्थ प्रक्रिया है । इससे शोध-कार्य में सहायता मिलती है । चरक संहिता के सूत्रस्थान (1/6-7) के प्रारम्भ में ही संभाषा परिषद् का जीवित वर्णन है । परिषद् का विषय था- 'तपश्चर्या, उपवास, अध्ययन, ब्रह्मचर्यव्रत प्रमति उत्तम कार्यों में लीन रहने वाले पुरुषों में उत्पन्न होने वाले रोगों से मुक्ति' इसमें भाग लेने वाले प्रमुख महर्षि विद्वानों में से थे - अङ्गि.रा, जमदग्नि, वशिष्ठ, भृगु, आत्रेय, गौतम, सांख्य, पुलस्त्य, नारद, असित, अगस्त्य, वामदेव, मार्कण्डेय आदि - (सू. 1/8-13) । इसमें एक लम्बी सूची दी गयी है जिसे बारम्बार लिखना विषय की पुनरावृति है । इसलिए सभी महर्षियों के नाम नहीं दिये जाते हैं । सूक्ष्म विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि सूत्रस्थान के अधिकांश भागों में विचार-विमर्श की प्रक्रिया अपनायी गयी है । उदाहरण के लिए कई प्रश्न पूछे गये हैं ।

(निरन्तर जारी)

सन्दर्भ :-

1. The System of Ayurveda - Shiv Sharma, Ayurvedacharya - Khemraj Shrikrishnadas, Shri Venkateshwar Steam Press, Bombay.
2. A History of Sanskrit Literature- A.B. Keith, Oxford University Press, London.
3. Agnivesa's Carak Samhita - Dr. Ram Karan Sharma and Vaidya Bhawan Dash - Vol. I - Sutrasthana - Chowkhamba Sanskrit Series Office - Varanasi.
4. चरक संहिता पूर्वो भाग: - आयुर्वेदाचार्य श्री जयदेव विद्यालंकार - मोतीलाल बनारसीदास-दिल्ली, बम्बई, चेन्नई, पुणे, बंगलौर, कलकत्ता, पटना, वाराणसी ।
5. आयुर्वेद का इतिहास - प्रथम भाग - कविराज सूरमचन्द्र - 29, दक्षिण पटेल नगर मार्कीट, नयी दिल्ली ।
6. आयुर्वेद का वैज्ञानिक इतिहास - आचार्य प्रियव्रत शर्मा - चौखम्बा ओरियण्टालिया, वाराणसी ।
7. History of Indian Medicine - Girindranath Mukhopadhyaya, Bhisagacharya - Vol. III. University of Calcutta, 1929
8. देखें क्र.सं. 6 ।

बैद्यनाथ

दादुरिन

यह त्वचा के भीतर पहुंचकर दाद के कीड़ों को नष्ट कर देती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतिशुक्लता (HYPOMELANOSIS)

वैद्य पी.एस.अंशुमान, एच.पी.

परिचय

प्राचीन वैदिक साहित्य काल से ही विरूपों के अन्तर्गत अतिशुक्लता का भी समावेश मिलता है । आयुर्वेद में भी इसी का अनुसरण करते हुए निन्दितों में अतिशुक्ल दोष को वर्णित किया है । यह त्वचा-केश-लोम आदि की शुक्लता रूप विकृति के रूप में जाना जाने वाला विकार है ।

प्राचीनों ने वर्ण को पंचभूत, आत्मा एवं सात्म्य से उत्पन्न माना है । आयुर्वेद के विवरणों में अतिशुक्लता को वैकारिक ही माना गया है ।

प्राचीनों ने पाण्डु (श्वेत) आदि कई रोगों में अति श्वेत या शुक्ल त्वचा का विवरण है परन्तु यह रोग सम्बद्ध विकार ही है ।

यहां जिस विकृति का उल्लेख विरूप या निन्दित श्रेणी में किया गया है वह प्राय: बीज कोष जन्य विकृति विशेष के रूप में ही वर्णित है । तथापि अतिशुक्लता को श्वित्र आदि के संदर्भ में भी विचार किया गया है । अत: अति शुक्लता पर विचार करते समय श्वित्र सम्बंधी विवरणों पर भी विचार आवश्यक है ।

(क) चर्म अतिशुक्लता (अल्बीनीज्म)

यह समग्र त्वचा की अतिशुक्लता रूप विकृति है ।

त्वचा का वर्ण त्वचा स्थित वर्णकोशाय की संख्या एवं उसमें स्थित मेलेनीन संज्ञक रंजक द्रव्य पर निर्भर करता है ।

इस रंजन प्रक्रिया में उत्सेचक की मदद से टायरोसिन संज्ञक एमिनोएसिड का मेलेनीन में रूपान्तरण होता है ।

डीएनए में स्थित दोष के कारण या उसकी विकृति के कारण (रंजक द्रव्य) आवश्यक उत्सेचक उत्पन्न नहीं होने कारण टायरोसिन-एमिनोएसिड का मेलेनीन में रूपान्तरण नहीं होता । अत: रंजक द्रव्य न्यूनता उत्पन्न करता है ।

इसके परिणाम स्वरूप शरीर की त्वचा, केश आदि अतिशुक्लता से ग्रस्त हो जाते हैं । इसी से आंख की पुतली भी लाल-भूरी दीखती है । ऐसे लोगों में प्रकाश असह्यता भी देखी जाती है । यह Oculacataneous Albinism भी कहलाता है ।

अतिशुक्लता के कारण उससे ग्रस्त व्यक्ति में प्रौढ़ या बुद्धिमांद्य भी मिल सकता है । इस कारण में टायरोसिन का उपयोग गल ग्रंथि के थायरोक्सिन-अंत: स्राव निर्माण में भी होता है । अत: इसके निर्माण न होने से या उसकी अल्पता से थायरोक्सिन न्यूनता होती है । परिणामत: तज्जन्य बुद्धिमंदता एवं बुद्धि का कुंठित होना पाया जाता है ।

ललाट (मध्य एवं ऊर्ध्वभाग) तथा मध्यकाय, भुजा, टांग पर उत्पन्न शुक्लता को Partiac Albinism कहते हैं ।

(ख) त्वक रोम शुक्लता रूप विकृति (फिनाइलकीटोन यूरिया)

इस विकृति में सम्बद्ध प्राणी के केश, भ्रू, पक्ष्म रोम त्वचा आदि सभी में अतिशुक्लता मिलती है । यह विकृति चयापचय विकार के रूप में जानी जाती है ।

इस प्रकार की विकृति में फिनाइलएंलेनीन हाईड्रोक्सायलेज संज्ञक उत्सेचक के निष्क्रिय होने पर फिनाइल ऐलेनीन वाय ऐमीनो एसिड का टायरोसिन के रूप में रूपान्तर यहीं होता है ।

इस प्रकार के सक्रिय फिनाईलाएलीनीन हाईड्रोक्सालेज उत्सेचक के अभाव के कारण फिनाईलकीटोन्यूरिया (PKU) नाम का रोग होता है । इस रोग में रक्त में फिनाईलएलीनीन का प्रभाव बढ़ जाता है जो चयापचय में अवरोध करता है । इस अवरोध के कारण प्राणी के मस्तिष्क के विकास एवं मानसिक वृद्धि अवरुद्ध होते हैं ।

मेलेनीन नहीं बन पाने के कारण बाल, त्वचा सभी अतिशुक्लता को प्राप्त हो जाते है । इस त्वचा एवं

(निवृत्त प्रो./प्रा.आयु.को.,भाव.) निवास : १४९७, ए२/१, कृष्णनगर, रूपाणिसर्कल, भावनगर(गुज०) 364002

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केश-लोमादि की शुक्लता के साथ बुद्धि मांद्य भी रहती है ।

आयुर्वेद में त्वचा के साथ-साथ रोम की शुक्लता का उल्लेख व्रण एवं श्वित्र के संदर्भ में मिलता है ।

(ग) केशादि की शुक्लता - यह सहज दोष एवं व्याधिज एवं जराजन्य विकार के रूप में पलित शीर्षक से विवेचित किया गया विकार है जिसमें केश-दाढ़ी-मूंछ एवं लोमादि की श्वेतता चर्चित है ।

श्वेतमण्डलोत्पत्ति (VITILIGO)

मूलत: धड़पर श्वेत (गोल) मण्डलोत्पत्ति होना इस विकृति की प्रमुख विशेषता है । ऐसे मण्डल आंख एवं मुख के चारों ओर की श्वेतता के रूप में या फिर कभी-कभी हाथ पैर कक्षा एवं जननाङ्ग क्षेत्र पर भी होते देखे जाते हैं । अभिघात से इनकी उत्पत्ति एवं वृद्धि को प्रभावित होते पाया जाता है ।

नैदानिक दृष्टि से यह किसी भी वय एवं लिङ्ग समूह में हो सकते हैं तथापि 50% तक इन्हें कुलज सम्बद्धता के साथ पाया जाता है ।

इस उत्पत्ति के लिये अन्य निमित्तों के रूप में अन्त: स्रावी ग्रंथियों के विकार यथा-थायरायड एवं पैक्रियाज-मधुमेह के विकार, एड्डीसन रोग, परनीसियस पांडु; कतिपय अर्बुद एलोप्सिया एरोटा जैसे विकारों से सभी सम्बद्धता पाई जाती है ।

आधुनिक चिकित्सक इसकी चिकित्सा के लिये आल्ट्र वायलट रश्मि चिकित्सा, कार्टोकोस्टेरॉयड, आदि का प्रयोग करते हैं ।

आयुर्वेद की दृष्टि से श्वित्रोक्त सहित सभी चिकित्सा उपयोगी होती है । वाकुचि का अन्त: वाह्य प्रयोग सर्वविदित है । इसी प्रकार कठुमर (कठोदुम्बर) का प्रयोग भी प्रचलित प्रयोग है ।

अन्य जैनेटिक विकार जन्य शुक्लता में -

ट्युबरस (Tuburous) स्क्लेरोसिस (Sclerosis) जो बच्चों में पाया जाता है तथा एक्रोमिक नेवी (Achromic Naevi) की जो उभय और मार्बल जैसी शुक्ला युक्त विकार के रूप में जाने जाते हैं ।

अन्य निमित्तज शुक्लता

व्रणशोथ एवं व्रणजन्य शुक्लता

इस प्रकार की शुक्लता को प्राचीनों ने व्रणज श्वित्र संज्ञा दी है ।

त्वचा के विविध संक्रमण या सम्बद्ध रोगों में इस प्रकार श्वेत दाग मिलते हैं । एक्जीमा, सोरासिस, कुष्ठ, फिरंग आदि के व्रणशोथ-व्रण आदि के कारण उत्पन्न शुक्ल मण्डल होते देखे जाते हैं । व्रणज के अतिरिक्त दग्धजन्य श्वेतता भी कही है ।

प्राचीनों ने इसके लिये संवर्णकर वाह्य उपक्रम भी दिये हैं ।

ग्रंथि-अर्बुद या Neoplas सम्बद्ध त्वक् शुक्लता पाई जाती है यथा Benign Pigmented Naevus पर प्राप्त वर्ण विकृति ।

अगर्दतंत्रीय त्वक् शुक्लता

कतिपय विष के अन्त: वाह्य सेवन से त्वचा की शुक्ल विकृति के संकेत प्राचीनों ने दिये हैं ।

आधुनिकों द्वारा रासायनिक कतिपय रासायनिक द्रव्य के औद्योगिक सम्यक या चिकित्सा माध्यम से उपयोग निमित्त से इनमें श्वेत मण्डलोत्पत्ति होते देखी जाती है । यथा Butyl Phenol एवं Hydroqunine आदि ।

अन्त: स्रावी ग्रंथियों के रोगजन्य शुक्लता

हाईपोपिटयुटरिज्म, थायरायड के रोग, हाईपोपेराथारायड, एड्डीसन रोग, केन्डीएस सिन्ड्रोम आदि में अन्त: स्रावी ग्रंथि विकार सम्बद्ध त्वक शुक्लता पाई जाती है ।

प्राचीनों ने पांडु में कही गयी अतिश्वेतता भी धात्वाग्नि मांद्य का उदाहरण है ।

पोषण त्रुटिजन्य शुक्लता

विभिन्न प्रकार की पोषण सम्बन्धी त्रुटियों के कारण भी त्वचा पर शुक्ल मण्डल रूपाविकृति देखी जाती है । यथा अपोषण दीर्घकालानुबंधी प्रोटीन न्यूनता (Chronic Protein Deficiency) में भी त्वक् शुक्लता देखी जाती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसी प्रकार विटामिन बी$_{12}$ की कमी में भी त्वचा पर श्वेत धब्बे देखे जाते हैं ।

अन्य

1. इडियोपेथि-गुटॉटे हाईपोमेलानोसिस (Ideopathic gutate Hypomelanosis)
2. Vogt-Koyanogi-Harada Syndrome (Vitiligo Like Syndrome associated with uveitis)

अज्ञात निमित्तज

आयुर्वेद में कुछ अन्य श्वित्र निदान भी ध्यानाकर्षक है यथा -

1. पूर्वकृत कर्म (अज्ञात कारण) या अर्धमाचरणजन्य
2. मानसिक द्वन्द्व या संघर्षज (देव निंदा गुरु से दुघर्ष या घर्षण कृतन्ध्नता)
3. मन्त्र एवं अभिशापादि जन्य-कलमाषपाद विकृति ।

अतिशुक्लता की चिकित्सा -

(क) अनागत बाधा प्रतिपेध -

इस श्रेणी में कुलज या मातृपित्तृ बीज दुष्टि परम्परा जन्य अतिशुक्लता को रोकने हेतु जेनेटिक दोषों को अप्रभावी या कम प्रभावी करने हेतु बीज चिकित्सा शुक्र आर्तव दुष्टि की चिकित्सा, गर्भिणीचर्या आदि का युक्तिपूर्वक उपयोग किया जा सकता है ।

(ख) आगतबाधा प्रतिपेध -

1. इसमें उत्पन्न अतिशुक्लता की चिकित्सा पर विचार किया जाता है । सहज, वंशसूत्र विकृति या अन्य सहज विकार जन्य सर्वाङ्गी अति शुक्लता की चिकित्सा असाध्य कथन पूर्वक सम्बद्ध उपद्रवों की तीव्रता कम करने और यापन उपचार किये जाते हैं ।
2. निमित्त एवं विकृति विशेष से सम्बद्ध अल्बीनीज्म आदि में प्रकाशसह्यता की चिकित्सा तथा मेध्य उपचार, फिनाईल कीटोनयूरिया एवं अन्य केश शुक्लता में पालित्य सिद्धान्तानुसार यापन किया जा सकता है ।
3. अग्नि दोष जन्य विशेषतः धातु अग्नि दोष सम्बद्ध अन्तः स्रावी ग्रंथि विकार सम्बद्ध शुक्लता की चिकित्सा अग्निचिकित्सा एवं अन्तःस्रावों द्वारा चिकित्सा किया जाना सुविधा जनक होता है ।
4. पोषण-न्यूनता, जन्य शुक्लता में न्यूनता पूर्ति द्वारा उपचार में मदद मिलती है । इस श्रेणी में प्रोटीन बहुल आहार एवं विटामिन बी$_{12}$ का प्रयोग उल्लेखनीय है ।
5. व्रणशोथ एवं व्रणज शुक्लता में संवर्णीकर उपचार कहे गये हैं, उनका प्रयोग असाध्यता कथन पूर्वक किया जाना उचित है यथा -भल्लातकतैल या सरादिगणसिद्धतैल या विभीतकमज्जा तैल में पाकर भस्म लेप आदि ।
6. सफेद दागों की चिकित्सा आयुर्वेदीय श्वित्रोक्त चिकित्सा के आधार पर की जा सकती है । इसमें वाकुचि, कठमर, भल्लातक, ताम्र आदि का प्रयोग किया जाता है । इसमें अन्तःवाह्य दोनों प्रयोग विहित है ।
7. वर्ण्यकर रसायन चिकित्सा भी उपयोगी है ।

अतिशुक्लत्व कुछ संदर्भ

* अथैतानष्टौ विरूपाना XX चाति शुक्लं ।
यजु 30/12

* इह खलु शरीरमधिकृत्याष्टौ पुरुषा निन्दिता भवन्ति तद्यथा - XX चातिकृष्णश्चातिगौर ।
च.सू. 21/

* XX कृष्णः कृष्णश्यामः श्यामावदातोऽवदातश्चेति प्रकृतिवर्णाः शरीरस्य भवन्ति XX ।
XX नीलश्याम ताम्रहारित शुक्लाश्च वर्णाः शरीरस्य वैकारिका भवन्ति XX।
च.इ. 1/

XX अवदातो गौर इति XX (गंगा)
XX हरितशुक्त्व इति पालाशवद्गौरः (गंगा)

* XX गर्भस्यात्मजानि XX वर्णः विशेषः (च.शा. 3/16
XX गर्भस्य सात्म्यजानि XX वर्णः चेति (च.शा.3/17

* स यदा गर्भोत्पत्तावबधातु प्रायो भवति तदा गर्भं करोति XX तोयाकाशं धातु प्रायोग गौरश्यामम् XX
यादृग्वर्णमाहारमुपसेवते गर्भिणी तादृग्उवर्ण प्रसवा भवति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इत्येकं भाषन्ते । तत्र दृष्टिभागम प्रतिपन्नं तेजो XX श्लेष्मानुगतं शुक्लाक्षं XX इति ।

सु.शा. 2/35

* तासां प्रथमाऽवभासनी नाम या सर्वान् वर्णानव भासयति पञ्चविधां च छायां प्रकाशयति स ब्रीहरेष्टादश भाग प्रमाणा सिद्धमपद्मकण्टकामधिष्ठानां ।

सु.शा. 4/4

XX चतुर्थी ताम्रा नामाष्टभागप्रमाणा, विविध किलास कुष्ठाधिष्ठानाः XX ।

सु.शा. 4/4

किलाससंदर्भ

* किलासमपि कुष्ठविकल्प एव, तत्त्रिविधंवातेन, पित्तेन, श्लेष्मणा चेति । कुष्ठकिलासयोरन्तरं त्वग्गतमेव किलासमपरिस्रावि च । तद्वातेन मण्डलमरूणं परुषं परिध्वंसि च, पित्तेन पद्म पत्रप्रतीकाशं सपरिदाहं च, श्लेष्मणा श्वेतं स्निग्धं वहलं कण्डूमच्च । तेषु संबद्धमण्डल मन्तेजांत रक्तरोम यासाध्यमग्निदग्धं च।

सु.नि. 5/17

* सु.चि. 15-28

* दुरूदा XXX विधानं तेषु पूर्ववत्, सु.चि. 1/89-94

* दारूणं चारूणं श्वित्रं किलासं नामभिस्त्रिभि;, यदुच्यते तत् त्रिविधं त्रिदोषं प्रायशश्च तत् । दोषे रक्ताश्रिते रक्तं ताम्रं मांससमाश्रिते श्वेत मेदः श्रिते श्वित्रं गुरू तच्चोत्तरोत्तरम् । यत्परस्परतोऽभिन्नं बहु यद्रक्तलोभवत यच्च वर्षगणोत्पन्नं तच्छित्रं नैव सिध्यति । वचास्यतथ्यानि कृतघ्नभावो, निन्दासुराणां गुरूधर्षणं त पापक्रिया पूर्वकृतं च कर्म, हेतुः किलासस्य विरोधि चान्नम् ।

च.चि. 17/172-175

* च.चि. 7/160-171

* कुष्ठैकसम्भवं श्वित्रं किलासं चारूणं च तत्, निर्दिष्टमपरिस्रावि त्रिधातुभ्दव संश्रयम् । वाताद्रूक्षारूणं पित्तात्तामं कमलपत्रवत्, सदाहं रोमविध्वंसि कफाच्छ्वेतं घनं गुरू । सकण्डु च क्रमाद्रक्तमांसमेदसुः चादिशेत् XX

अशुक्ल रोमा बहुलमसंसृष्टंमिथो नवम् अनग्निदग्धजं साध्यं श्वित्रं वर्ज्ममतोऽन्यथा । गुह्यपाणितलौष्ठेषु जातमप्यचिरन्तनम् ।

अ.स.नि. 14

* श्वित्रं तु द्विविध विद्यादोषजं व्रणजं तथा
तत्र मिथ्योपचारादि व्रणस्य व्रणजं स्मृतम् ।
दोषजं च द्विविधां प्रोक्तमात्मजं परजं तथा
परसंस्कार संस्पर्शाद्यित्तत्परज मुच्यते ।
तदात्मजं विज्ञानीयाद्यद्देहष्वनिलादिजम् । (भोज)
XX

* दारूण तत्तु विज्ञेय मांसधातुसमाश्रम् ।
मेदाश्रित भवेच्छ्वित्रं दारूणं रक्त संश्रतम् । (भालूकित)

वैद्यनाथ

जन्मघूंटी

जन्म के बाद से ही बच्चों को इसका सेवन कराने से उनके स्वास्थ्य में कोई गड़बड़ी नहीं होती । इससे बुखार, खांसी, सर्दी-जुकाम, अजीर्ण, उल्टी होना, टट्टी होना, पेट फूलना आदि रोग दूर होते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोबर-विवेचनात्मक अध्ययन

[1]डा० मोहन लाल पाठक, एम.डी. (आयु)

[2]डा० आदर्श कुमार, एम.डी. (आयु.)

गौ प्राचीन काल से ही भारतीय संस्कृति, सभ्यता तथा धर्म का मूलाधार रही है। सृष्टि में सहस्रों जीव जन्तु पाये जाते हैं किन्तु सबसे अधिक आदर सम्मान गौ को ही प्राप्त है। अथर्ववेद में पंच परोपकारी (गाय, घोड़ा, पुरुष, बकरी तथा भेड़) जीव श्रेष्ठ कहे गये हैं जिनमें सर्वप्रथम गौ की गणना करके गौ की श्रेष्ठता निम्न शब्दों में स्पष्ट की है :-

चतुर्नमो अष्टकृत्वो भवाय दश कृत्वः पशुपते नमस्ते।
तवेमे पञ्च पशवो विभक्ता गावो अश्वाः पुरुषा अजावयः॥

(अथर्ववेद)

गौ साधारण पशु नहीं है। गाय की गणना शुद्ध शाकाहारी भोजन करने वालों में की जाती है। वेद में गौ का महत्त्व बतलाते हुये "गावो विश्वस्य मातरः' गाय विश्व की माता कहा गया है। "सर्वे देवाः स्थित देहे सर्व देवमयी हि गौः" सभी देवता इसमें निवास करते हैं। जैसे माता अपनी संतान के लिये सर्वदा प्रयत्नशील रहती हुई उसकी रक्षा करती है उसी प्रकार गौ अपना सम्पूर्ण शरीर मानव प्राणी की रक्षा के लिए अर्पित कर देती है। इसलिए गौ को माता की संज्ञा भी दी जाती है। गौ के सभी अंग-प्रत्यंग, व्याधि ग्रस्त तथा स्वस्थ मानव प्राणी के लिए लाभकारी तथा शरीर रक्षा के लिए श्रेष्ठ माने हैं जिसकी प्रत्येक वस्तु पावन है तथा सम्पूर्ण जगत को पवित्र कर देती है।

चिकित्सा के दृष्टिकोण से गौ के अंग-प्रत्यंगों का प्रयोग करने के अनेक संदर्भ ग्रन्थों में पाये जाते हैं। मुख्यतया दूध, दही, घृत, गोमूत्र, गोबर तथा गोरोचन का प्रयोग अधिकतर किया जाता है क्योंकि ये द्रव्य अत्यन्त पवित्र तथा सभी प्राणियों के सभी पापों को नष्ट करके उन्हें शुद्ध बनाते हैं। इन द्रव्यों को "गोषडङ्ग" की संज्ञा दी गई है।

गोमयं रोचना मूत्रं क्षीरं दधि घृतं गवाम्।
षडङ्गानि पवित्राणि संशुद्धिकरणानि च॥

आयुर्वेद के मुख्य उद्देश्य की पूर्ति के लिए सभी द्रव्यों का प्रयोग शरीर रक्षण तथा रोग निवारण किया जाता है। वास्तव में ये गव्य पदार्थ सम्पूर्ण द्रव्य श्रेष्ठ, शुभ तथा प्रिय हैं। भाग्यशाली व्यक्ति ही इन का प्रयोग करते हैं। इन द्रव्यों के अपने-अपने गुण में बतलाये गये हैं। दूध, दही, घृत तथा गोरोचन व्यक्तियों द्वारा प्रयुक्त करना सरल नहीं है जबकि एवं गोबर सर्वत्र सुलभ तथा बिना धन के भी प्राप्त वाले द्रव्य हैं। गरीब व्यक्ति भी अपने जीवन में सरल पूर्वक प्रयोग करके अपने शरीर को निरोग बना सकता है गोमूत्र की अपेक्षा गोबर प्राप्त करना और भी सरल है।

सभी धार्मिक ग्रन्थों में गोबर की महिमा प्रदर्शित की गई है। गौओं का गोबर तथा मूत्र अलक्ष्मी (दरिद्रता) के नाश करने का सर्वोत्तम उपाय है। "शकृन्मूत्रं तासामलक्ष्मीनाशनं परम्।" ब्रह्माण्ड पुराण में कहा है गाय की दृष्टि, पीठ एवं गोबर में स्वयं लक्ष्मी जी निवास करती हैं। पद्म पुराण में "गोमये वसते लक्ष्मीर्गवां सर्वमङ्गला"।। गाय के गोबर में लक्ष्मी जी का वास है।

साक्षाद्गङ्गा च गोमूत्रे गोमये यमुना स्थिता।
अतः गोमय में यमुना स्थित है। (भविष्य पुराण)।

ऋषयो रोमकूपेषु प्रस्रावे जाह्नवीजलम्॥
कालिन्दी गोमये तस्या अपरा देवतास्तथा।

गो के सभी रोमकूपों में ऋषिगणों, गोमूत्र भगवती गङ्गा के पवित्र जल तथा गोमय में भगवती यमुना तथा सभी देवता वास करते हैं। (बृहत्पराशर स्मृति)

अष्टैश्वर्ययी लक्ष्मीर्गोमये वसते सदा।

अर्थात् गोबर में आठ ऐश्वर्यों से सम्पन्न लक्ष्मी जी का वास स्थान है। (महाभारत)

उपनिषदों में तो गोमय को विद्या माना गया है।

"गुणत्रयमिदं धेनुर्विद्याभूद् गोमयं शुभम्"।

गोमय की पवित्रता को स्पष्ट करते हुए लिखा है "कि गोमूत्र तथा गोमय से भी ग्लानि घृणा नहीं करनी

१.(सेवानिवृत प्रोफेसर एवम् सुपरिन्टैन्डेंट राजकीय आयुर्वेदिक कालेज/फार्मेसी, पटियाला) नजदीक मोदी कालेज, सुनामी गेट, पटियाला
२. सहायक प्रोफेसर, रस शास्त्र विभाग, सरकारी आयु० कालेज, पटियाला एवम् भूतपूर्व सुपरिन्टैन्डेंट सरकारी आयुर्वेदिक फार्मेसी, पटियाला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिए। उसका मांस न खाएं'' इस प्रकार गोबर में श्रद्धा रखनी चाहिए।

गवां मूत्रपुरीषस्य नोद्विजेत कथंचन ।
न चासां मांसमश्नीयाद् गवां पुष्टिं तथाप्नुयात् ॥

भविष्य पुराण में कहा है कि :-

श्री सम्पन्न बिल्व वृक्ष में पद्महस्ता भगवती लक्ष्मी के साक्षात् निवास होने के कारण ही भगवान् शिव जी को परम प्रिया है। इसे ''श्री वृक्ष'' भी कहा है। इस वृक्ष की उत्पत्ति गोबर से मानी जाती है। बिल्व वृक्ष के पश्चात् नील कमल एवं रक्तकमल बीज की उत्पत्ति भी गोबर से हुई थी।

गोमयादुत्थितः श्रीमान् बिल्ववृक्षः शिवप्रियः ।
तत्रास्ते पद्महस्ता श्रीः श्रीवृक्षस्तेन स स्मृतः ।
बीजान्युत्पलपद्मानां पुनर्जातानि गोमयात् ॥

गोबर की पवित्रता तथा महत्त्व को बतलाते हुए कहा है कि :-

गोमयेन सदा स्नायात् करीषे चापि संविशेत् ।
श्लेष्ममूत्रपुरीषाणि प्रतिघातं च वर्जयेत् ।

अर्थात् नित्य प्रति शरीर में गोबर लगाकर स्नान करे, सूखे हुए गोबर पर बैठे। गोबर पर थूकना तथा मलमूत्र गिराना नहीं चाहिए तथा गौओं का तिरस्कार न करे।

गोमूत्र से स्नान करने तथा गोमय निःसृत यव (गाय को जौ खिलाकर गोबर प्राप्त करे। उस गोबर से जो यव निकले) खाकर अपने जीवन का पालन करने का उल्लेख पाया जाता है। यथा :-

गोमूत्रेणाचरेत् स्नानं गोपुरीषात् तथा यवैः ।
शरीरयात्रां कुर्वीत गोरसैरथ वा द्विजाः ।

गाय के गोबर से स्थान को लिप्त करने से पवित्रता आ जाती है। इस लिए यज्ञशाला, भोजनालय, पूजालय आदि सभी स्थानों को गोबर से लिप्त किया जाता था। यथोक्तम् :-

गोमयेनोपलिप्तं तु शुचि स्थानं प्रकीर्तितम् ।
अग्न्यागारसुरागारान् गोमयेनोपलेपयेत् ॥

जहां पर गोबर को लिप्त किया जाता है उस स्थान पर सर्वमंगलमयी श्री लक्ष्मी की प्राप्ति स्वयं होने लग जाती है। पवित्रता ही स्वास्थ्य है। इस पवित्रता का उत्तम साधन गोबर है क्योंकि गोबर ही लक्ष्मी का असली स्थान है। गोबर से उत्तम प्रकार की खाद का निर्माण होता है। इस खाद द्वारा वृक्ष, पौधों की रक्षा भी होती है। गोबर प्रकाश अर्थात् विद्युत तैयार करने में सक्षम है। ईंधन के रूप में प्रयुक्त होने के कारण यह वनों की रक्षा करता है। इसमें प्रदूषण को रोकने की शक्ति पाई जाती है। गोबर दुर्गन्ध नाशक होने के कारण इसकी राख का प्रयोग बर्तनों की सफाई के लिए प्रयुक्त किया जाता है। घरों में गोबर का लेप करने से प्लेग, विसूचिका आदि भयंकर व्याधियां उत्पन्न नहीं होती हैं क्योंकि गोबर में कीटाणुओं को नष्ट करने की शक्ति पाई जाती है। यज्ञ में भी गाय का शुष्क गोबर प्रयुक्त होता है जिससे सभी विषैले जीवजन्तु मकड़ी, मच्छर आदि नष्ट होकर वातावरण शुद्ध होता है। गोबर की राख मल की दुर्गन्ध को नष्ट कर देती है। गाय के गोबर में कितनी विलक्षण शक्ति है। इसका अनुसन्धान रूस में करके अनुभव किया गया है। गाय के गोबर का लेप मकानों के बाहर दीवालों तथा छतों पर कर देने से बाहर से रेडियेशन की किरणें मकान में प्रवेश नहीं कर सकतीं। यह अनुसन्धान किया जा चुका है और इसका प्रमाणित वर्णन विश्व की विख्यात पत्रिका ''रीडर डाइजेस्ट'' में आया था।

जन्म, नामकरण, यज्ञोपवीत, विवाह तथा मरणादि सभी संस्कारों में गोबर का प्रयोग अवश्य किया जाता है। दशहरा आदि त्योहार पर गोबर से पूजन किया जाता है एवं दीवाली के दूसरे दिन गोवर्धन पूजन भी किया जाता है। वास्तव में गोबर में लक्ष्मी के वास होने के कारण सभी धार्मिक कार्यों में प्रयुक्त होता है। गोबर में रोग निवारण की अद्भुत शक्ति पाई जाती है।

पहले खेती के लिए बैलों का उपयोग किया जाता था। गोबर से बनी खादों का प्रयोग खेत में होता था जिससे उत्तम स्वास्थ्यवर्द्धक, पोषक तथा दुष्परिणाम रहित स्वादु खाद्यान्न की प्राप्ति होती थी, क्योंकि गोबर से बनी खाद में कीटाणुनाशक क्षमता तथा भूमि को सदा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपजाऊ रखने की विशेष शक्ति है । लेकिन आजकल अन्नादि फसल सरलता पूर्वक प्राप्त करने के लिए अनेक यंत्रों, रासायनिक खादों तथा कीट नाशक औषधियों का प्रयोग किया जा रहा है जिससे अन्नादि फसल की भरपूर प्राप्ति हो जाती है । लेकिन इन खादों तथा कीटनाशक औषधियों के कारण भूमि में उपजाऊ शक्ति धीरे-धीरे नष्ट होकर भूमि बंजर बन जाती है । जब हम इस प्रकार की वृत्रिम खाद से उत्पन्न विषाक्त खाद्यान्न का सेवन करते हैं तो शरीर में अनेक प्रकार की भयंकर व्याधियाँ उत्पन्न होकर शरीर का नाश कर देती हैं । इस प्रकार के दुष्परिणाम होने के कारण ही सरकार के लिए समस्या बन गई है । इस प्रकार की समस्या को हल करने के लिए हमें गो रक्षा करनी चाहिए ताकि उसके द्रव्यों से बनी सेन्द्रिय खादों का प्रयोग किया जा सके, क्योंकि सेन्द्रिय खाद निर्माण में अधिक परिश्रम नहीं लगता तथा धन भी कम खर्च होता है । गोबर खाद पृथ्वी का प्राकृतिक आहार है जिससे उपजाऊ शक्ति बढ़ जाती है । इस प्रकार की खाद प्रयुक्त करने पर जल भी कम खर्च होता है । पंजाब कृषि विश्वविद्यालय के एक अध्ययन दल ने पाया है कि रासायनिक खाद के इस्तेमाल के परिणाम स्वरूप पंजाब में पानी का अकाल पड़ने की सम्भावना गहरी होती जा रही है । भारत सरकार के कृषि अनुसन्धान परिषद् के सेवा निवृत्त महानिर्देशक ने चेतावनी दी है कि यदि रासायनिक खाद पर आधारित कृषि पद्धति ही चलती रही तो कुछ वर्षों में ही पंजाब का क्षेत्र मरुस्थल हो जायेगा ।

गोबर पोषक, शोधक, दुर्गन्धनाशक, सारक, शोषक, बलवर्द्धक तथा कान्तिप्रद है । अमरीकी डा० मैकफर्सन के अनुसार गोबर के समान सुलभ कीटाणुनाशक द्रव्य दूसरा नहीं है । रूसी वैज्ञानिकों के अनुसार आणविक विकिरण का प्रतिकार करने में गोबरपूती दीवारें पूर्ण सक्षम हैं ।

मद्रास के डा० किंग ने गोबर में हैजे के कीटाणुओं को मारने की शक्ति देखकर दूषित जल में गोबर मिलाकर शुद्ध करने की सलाह दी है । इटली के वैज्ञानिक जी.ई. बिर्गेड ने सिद्ध किया है कि गोबर से मलेरिया के कीटाणु मरते हैं । आयुर्वेद ग्रन्थों में अनेक स्थलों पर निवारणार्थ भिन्न-भिन्न योगों के रूप में गो गोबर प्रयोग तो किया गया है लेकिन चरक, सुश्रुत तथा का संहिता में कहीं पर पृथक् रूप से किन-किन पशुओं गोबर औषध के लिए प्रयुक्त करना चाहिए तथा गुणकर्मों का उल्लेख प्राप्त नहीं होता है । जबकि दही, घृत तथा गोमूत्र के गुण कर्म तथा संख्या का रूप रूप से उल्लेख पाया जाता है । अष्टांगसंग्रह अध्याय के अन्तर्गत मूत्र वर्ग के पश्चात् गाय, बकरी, हाथी, तथा गर्दभ की बिष्ठा का उल्लेख करते हुए कषाय-तिक्त रस युक्त एवं हिध्म, श्वासहर बतलाया है । यथोक्तम् :-

"कषायतिक्तमेतेषां हिध्माश्वासहरं शकृत् ॥"

मृग की बिष्ठा ओज:क्षय नाशक, वैष्किर तथा कुक्कुट आदि की बिष्ठा वातघ्न, प्रसह जाति गाय, गर्दभ, ऊँट, घोड़ा, हाथी, रीछ, सिंह, भेड़ादि की बिष्ठा अपस्मार तथा उन्माद नाशक, महामृग यथा रोज तथा गव्य आदि की बिष्ठा कुष्ठनाशक जलचर जाति की बिष्ठा अक्षिरोग तथा पित्तशामक बतलाते हुए कहा है :-

मार्गमोज:क्षयहरं वैष्किरं वातरोगनुत् ।
प्रसहानामपस्मारमुन्मादं च नियच्छति ॥
महामृगसमुद्भूतं कुष्ठहृज्जलचारिणाम् ।
नेत्ररोगहरं पित्तं प्रवृद्धं नियच्छति ॥

सुश्रुत में अनेक स्थलों पर अनेक प्रकार बिष्ठा का प्रयोग रोगहर रूप में किया गया है । अमानुषोपसर्ग प्रतिषेध अध्याय में कहा है :-

खराश्वाश्वतरोलूककरभश्वश्रृगालजम् ॥
पुरीषं गृध्रकाकानां वराहस्य च पेषयेत् ।
वस्तमूत्रेणं तत्सिद्धं तैलं स्यात् पूर्ववृद्धितम् ॥

सु० उत्तरतंत्र 60/41-

गधा, घोड़ा, खच्चर, उल्लू, ऊँट, कुत्ता, गीध, कौआ तथा सूअर के पुरीष का कल्क बनाकर के मूत्र में तैल पाक विधि अनुसार तैल सिद्ध करें ।

सिंहव्याघ्रर्क्षमार्जारद्वीपिवाजिगवां तथा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्वाविच्छल्यकगोधानामुष्ट्रस्य नकुलस्य च ।
विट्त्वग्रोमवसामूत्ररक्तपित्तनखादयः ॥
अस्मिन वर्गे भिषक् कुर्यात्तैलानि च घृतानि च
..... स्नेहादिरापि च क्रमः ।

सु० उत्तरतंत्र 60/49-53

सिंह, व्याघ्र, रीछ, बिल्ली, चीता, घोड़ा, गाय, सेह, बड़ी सेह, गोह, ऊँट तथा नेवला इनका पुरीष, त्वचा रोम, वसा, मूत्र, रक्त, पित्त तथा नखादि द्वारा पृथक्-पृथक् तैल तथा घृत पाक करके नस्य में प्रयोग करने तथा इनके क्वाथ से परिषेक तथा स्नान करें । इनका बारीक चूर्ण बनाकर शरीर पर छिड़कना तथा लेप लगाना चाहिए । यह मनोजन्य व्याधियों में लाभकारी है ।

धार्मिक दृष्टि से यदि विचार किया जाए तो गोबर से स्नान करना, गोबर पर बैठना, गोबर से घृणा, ग्लानि न करना, यज्ञादि धार्मिक कर्मों में तथा जीवन में अनेक संस्कार यथा यज्ञोपवीत, विवाह आदि में शुद्धि के लिए लेप करने के अनेक सन्दर्भ पाये जाते हैं । गोबर सर्वमंगला, पुष्टिवर्द्धक, संशोधक तथा पवित्रता दायक है । सभी धार्मिक ग्रन्थों में गोमय में भगवती स्वरूप यमुना, भगवती लक्ष्मी तथा सभी देवताओं का वास स्थान बतलाते हुए गोबर की महिमा प्रदर्शित की गई है । चिकित्सा के दृष्टिकोण से आयुर्वेद ग्रन्थों में सर्वाधिक गो गोबर का प्रयोग रोग शामक रूप में तथा औषध निर्माणार्थ हुआ है । इन सभी तथ्यों पर विचार करते हुए सभी प्रकार के पुरीषों में गोपुरीष (गो गोबर) को ही श्रेष्ठ कहना उचित प्रतीत होता है ।

गोबर के पर्याय :-

गोशकृत, करीष, गोमय, गव्य पुरीष, गोविट्, जगलम्, गोहन्नम्, गोविष्ठा, गोमलम् ।

गुणकर्म :-

रस	-	कटुतिक्त ।
गुण	-	लघु, रूक्ष, तीक्ष्ण ।
वीर्य	-	उष्ण ।
विपाक	-	कटु ।
प्रभाव	-	त्रिदोषशामक
कर्म	-	दीपन, अनुलोमन, लेखन, कफघ्न, स्वेदन, ज्वरघ्न, वेदना स्थापन, सवर्णीकरण, शिराविरेचन, विषघ्न, यकृदोत्तेजक, संज्ञाप्रवाधन, चक्षुष्य एवं कटु पौष्टिक है ।

भैषज्य कल्पना एवं रसशास्त्र में गोबर का महत्त्व :-

रस शास्त्र के ग्रन्थों का अध्ययन करने से प्रतीत होता है कि अनेक स्थलों पर गोबर का प्रयोग औषध निर्माणार्थ किया गया है ।

रस तरंगिणी 2/12 में गोर्वरम् की परिभाषा बतलाते हुए कहा है कि गाय बाँधने वाले स्थान या गोशाला में गाय के खुरों से दबने के कारण छिन्न-भिन्न हुए सूखने के पश्चात् दलित चूर्ण समान हुए गोबर को गोर्वर या गोमय कहा जाता है । गोबर को पञ्चगव्य का एकांश द्रव्य माना गया है । (र.त. 2/22)

गोबर के उपले बनाये जाते हैं । इनके पर्यायों का भी उल्लेख करते हुए लिखा है-

उपलं चोत्पलं ख्यातं गिरिण्डं पिष्टकं तथा ।
छाणञ्च छगणञ्चैव करीषञ्च निगद्यते ॥

(र.त. 3/50)

रसेन्द्रसारसंग्रह में इन पर्यायों के अतिरिक्त साठी, वराटी भी दिये हैं ।

रस, उपरस, धातु आदि की भस्म बनाते समय औषध को सम्पुट में बन्दकर न्यूनाधिक्य उपलों तुष आदि की अग्नि दी जाती है उसे पुट कहा जाता है । पुट में अग्नि देने के लिए जंगली उपले या उपलों का प्रयोग किया जाता है । गोर्वर की परिभाषा से स्पष्ट होता है कि भस्मादि के निर्माण के लिए गोमय का ही प्रयोग श्रेष्ठ है क्योंकि गोबर में कीटाणुनाशक तथा वातावरण शुद्ध करने की सक्षमता रहती है । वैसे भी आजकल जंगली उपले कम ही उपलब्ध होते हैं । लावक पुट 3/38, गजपुट 3/40, वाराह पुट 3/41, गोर्बर पुट 3/44 तथा पुटयंत्र 4/34 आदि में गोबर का प्रयोग होता है ।

शीघ्रं गोमयसंस्थिते तु कदलीपत्रे ततो निक्षिपेत् ।

र.त. 6/136

अर्थात् रस पर्पटी का निर्माण करते समय गोबर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का ही प्रयोग किया जाता है ।

अभ्रक सत्वपातन में पंचगव्य प्रयुक्त होता है र.त. 10/96, हरताल भस्म निर्माण समय गोमय प्रयोग होता है (र.त. 11/46), पारद भस्म बनाते समय गोबर पुट का प्रयोग होता है "तद् गोबरपुटं प्रोक्तं रस भस्म प्रसिद्धये ।" (र.सार.संग्रह.पुटप्रकरण-1) लावक पुट (पुटप्रकरण)। अभ्रक मारण समय "पचेद् गोमयेवह्निना" (र.सा.सं1/158), पर्पट रस "तत् क्षिपेत् कदलीपत्रे गोमयोपरि संस्थिते" (र.सा.सं 2/64 ज्वर), रस पर्पटिका "गोमयोपरि विन्यस्त कदली पत्रपातनात्" (र.सा.सं. 2/56 ग्रहणी), पारद भस्म के लिए सात बार गाय के उपलों द्वारा पुट देने का विधान है "सप्तधा स्वेदितः सूतं म्रियते गोमयाग्निना ।" (र.र.समु. 11/119), सर्वज्वरी पर्पटी (र.र.समु. 21/170), रत्नभागोत्तर रस (र.र.समु. 22/15-22 पर्पटी कल्पना), मणिपर्पटी रस (र.र.समु. 24/20-23) के निर्माण में गोमय का प्रयोग किया गया है । "मुखदौर्गन्ध्ये पथ्यादि वटिका"-गोबर रस में हरड़ छाल को पकाने का विधान है "गोमयैः कथिता पथ्या" (र.र.समु. 24/51), "मुखवैवर्ण्यादौ मातुलुङ्गादि लेप"- गाय गोबर रस, गाय का घृत, बिजौरे निम्बू मूल का चूर्ण तथा शुद्ध मनःशिला । सभी समान भाग लेकर पत्थर पर पीस कर कल्क बनाकर मुख पर प्रलेप या उबटन लगाने का विधान है । (र.र.समु. 24/47), कुष्ठादि चन्दनादि तैल - "गौशकृद्रससंयुक्तम्" (र.र.समु. 29/76-77), स्थावर, जङ्गम तथा कृत्रिम विष नष्ट करने के लिए कर्पूर को सात बार गोबर रस से भावित कर 100 मि.ग्रा. मृत पारद को दही में मिलाकर प्रयोग करना चाहिए । (र.र.समु. 30/87), कन्दर्परस (भै.र.), ग्रहणीवज्रकपाटरस (र.च.), चातुर्थिकारि रस (र.रा.स.), पंचानन रस (र.र.स.), प्रवाल पंचामृत (वृ.नि.र.), मुक्त पंचामृत (यो.र.) तथा बृहल्लोकनाथ रस (भै.र.) आदि अनेक रस योग पाये जाते हैं जिनमें गोबर से ही पुट देने का विधान पाया जाता है । पर्पटी कल्पना निर्माणार्थ गोबर का प्रयोग किया जाता है । बृहत् सोमराजी तैल (भै.र.) में गोबर का प्रयोग कल्क रूप में किया गया है । नेत्ररोग में रसांजनांजन, नालिन्यंजन, नदीजांजन में गोबर का प्रयोग चक्रदत्त में नेत्ररोगाधिकार में किया गया है । गोशकृ तैल, मरिचाद्य तैल, वृहत्मरिचाद्य तैल, महातृणक तै (कुष्ठाधिकार चक्रदत्त) में गोबर का उल्लेख है । चक्रद के व्रणशोथाधिकार में सवर्णवरण लेप में गोबर रस प्रयोग किया गया है । पंचगव्य घृत, महापंचगव्य घृत त लघु पंचगव्य घृत नाम के योग प्राप्त हुए हैं जिन सब पंचगव्य का प्रयोग किया गया है । ये घृत अपस्मार श्रेष्ठ कहे गये हैं । सुश्रुत संहिता में गोबर रस का प्रयो अंजन, गोबर क्वाथ से साद्धित तैल तिमिर रोग तथा शुक्ल रोग में गोबर रस का प्रयोग लाभप्रद बतलाया है । गोब का प्रयोग अनेक स्थानों पर विभिन्न कल्पनाओं के रूप रोग निवारणार्थ किया है ।

पंचकर्म में गोबर प्रयोग :-

1. स्वेदन कर्म -

1. पिण्ड स्वेद :....गोखरोष्ट्रवराहाश्वशकृद्भिः सतुषैर्यवैः (च.सू. 14/23-24)

2. कूप स्वेद :.....हस्त्यश्वगोखरोष्ट्राणां करीषर्दग्धपूरिते (च.सू. 14/59)

3. होलाक स्वेद :- धीतिकां तु करीषाणां यथोक्तान प्रदीपयेत् । (च.सू. 14/60)

4. पिण्ड स्वेदः- स्विन्नां गोमयपिण्डेन प्रतिह्यात् परिलेहिके (सु.सं.चि. 25/21)

5. स्वेद :- एवं पांशुगोशकृत्तुषबुसपलालोष्मभिः स्वेदयेत् (सु.सं.चि. 32/11)

6. बिच्छू विष :- स्वेदे सुखोष्णं च गोमयं हितमिष्यते (सु.सं.क. 8/69)

पिण्ड, कूप, होलाक, शंकर तथा प्रस्तर स्वेदादि में गोमय का प्रयोग किया जाता है । धूलि, गोबर, तुष भूसा, तिलखली की उष्मा से स्वेदन करने का विधान आता है । इसके अतिरिक्त गोमय से शीतोष्ण स्वेदन देने बिच्छू विष का नाश करता है ।

2. स्नेहन कर्म :- अभ्यङ्ग. ।

सिंहव्याघ्रर्क्षमार्जारद्वपिबाजिगवां तथा ।
पानाभ्यञ्जननस्येषुनानि योज्यानि जानता ।

(सु.सं.उ. 60/46-51)

रसोन, हींग, मनःशिला, हरताल आदि द्रव्यों तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घोड़ा, गाय आदि के शकृत्, त्वचा, रोम, वसा तथा मूत्र आदि से पृथक्-पृथक् घृत तथा तैल सिद्ध कर लें। इन घृत तथा तैलों का प्रयोग स्नेहन पान, अभ्यङ्ग तथा नस्य में करना चाहिये।

3. वमन कर्म :-

धामार्गव चूर्ण को जल से रगड़ कर वटिका बना लें। गोबर रस में इस वटी को घोल कर पिलाने, वमन हो जाता है। (च.क. 4/11)

4. वमन विरेचन कर्म :-

आमाशय तथा कोष्ठ लघु हो जाने पर स्वेदन तथा स्नेहन पश्चात् पंचगव्य घृत से वमन विरेचन कराना चाहिये। (का.सं.खि. 17/28)

5. शिरोविरेचन कर्म :-

1. .....गोशकृद्रसमूत्राणीति शिरोविरेचनानि। (सु.सू. 39/6)

2. गवां शकृत्क्वाथविपक्वमुत्तमं हितं तु तैलं तिमिरेषु नावनम्। (सु.सं.उ. 17/32)

गोबर की गणना शिरोविरेचन द्रव्यों में की गई है। गोशकृत् क्वाथ से पकाया गया तैल नेत्ररोग (तिमिर) में लाभप्रद है।

6. रक्तमोक्षण (जलौका) कर्म :-.....मृद्गोमय चूर्णेवेद्यरूजः स्यात्। (सु.सं.सू. 13/19)

जलौका द्वारा रक्तमोक्षण कराते समय जलौका लगाने से पूर्व गोबर द्वारा रगड़कर स्थान को रूक्ष करने का विधान है।

7. तर्पण कर्म :- अक्षि तर्पण करने के लिये पुटपाक द्वारा रस निकालने के लिये गोमय का प्रयोग होता है। (सु.सं. उ. 18/33-37)

चरक संहिता :- सूत्रस्थान

1. पिण्ड स्वेद - गो, गधा, ऊँट, सूअर तथा घोड़े के ताजे तथा गीले पुरीषों, तुष, जौ, बालू, धूल, पत्थर, शुष्क गोबर (करीष) चूर्ण, लौह चूर्ण की पोटलियों द्वारा या लौह पिण्ड से पिण्ड स्वेद देना चाहिए क्योंकि सभी द्रव्य रूक्ष होते हैं। अतः इनसे रूक्ष स्वेदन किया जाता है। (च.सू. 14/25) 2. गौ, गधा, ऊँट, सूअर, अश्व इनके गीले ताजे पुरीषों, तुष, जौ, बालू, पांशु, पत्थर, करीष तथा लौह चूर्ण का प्रयोग प्रस्तर स्वेद में दोष तथा व्याधि अनुसार किया जाता है। (च.सू. 14/26) 3. शङ्कर स्वेद में भी गोमय का प्रयोग करने का उल्लेख है। (च.सू. 14/40) 4. कूप स्वेद में भी शुष्क गोबर का प्रयोग किया गया है। (च.सू. 14/59) 5. होलाक स्वेद में भी शुष्क गोमय का प्रयोग करने का उल्लेख है। (च.सू. 14/60)

इन्द्रिय स्थान :-

इन्द्रिय स्थान के द्वादशोऽध्याय का नामकरण "गोमय चूर्णीयमिन्द्रिय" रखा गया है। इस अध्याय में अरिष्ट लक्षणों का उल्लेख करते हुए कहा है कि जिस व्यक्ति के शिर पर गोबर चूर्ण समान परन्तु स्निग्ध चूर्ण उत्पन्न होता है तथा विलीन हो जाता है ऐसा व्यक्ति एक मास पर्यन्त ही जीवित रहता है।

चिकित्सा स्थान :-

1. ज्वर :- "पंचगव्यस्य पयसः प्रयोगो विषमज्वरे" विषमज्वर में पिप्पली, त्रिफला, दही, मट्ठा, घृत, पंचगव्य घृत तथा दूध का प्रयोग लाभप्रद है। (च.चि. 3/303-4)

2. रक्तपित्त :- 1. जवासा तथा भृंगराज दोनों के मूल का कल्क गोबर रस में मिलाकर तण्डुलोदक (चावल का पानी) से लेना लाभप्रद है। (च.चि. 4/68-69) 2. गोबर रस तथा अश्व लीद रस में मधु तथा घृत मिलाकर पिलाना लाभकारी है। (च.चि. 4/69)

3. कुष्ठ - प्रदेह लगाने से पूर्व शुष्क गोबर से घर्षण करने का उल्लेख है। (च.चि. 7/57)

4. अपस्मार - इस रोग में गोबर का उबटन लगाने का निर्देश है। (च.चि. 10/32)

5. अर्श - गौ, गदहा, घोड़ा इनके गोबर तथा लीद का पिण्ड बनाकर स्वेदन देना चाहिए। (च.चि. 14/41)

6. हिक्काश्वास - नस्य के लिए चीनी, भूँई आँवला रस, मुन्नका रस, गोबर रस, घोड़े की लीद का रस इन सबको मिलाकर देवें। (च.चि. 17/130)

7. कासः- गो का बछड़ा जो दूध पान करता हो, उस बछड़े के ताजे गोबर रस में मधु मिश्रित कर पीना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिए। (च.चि. 18/19)

8. विष - 1. विष के द्वितीय वेग में जब हृदय पर प्रभाव हो जाये तो हृदय रक्षा के लिए मधु, गोघृत, मज्जा, दूध, स्वर्ण गैरिक, गोबर रस, पक्व इक्षुरस, पक्व कौए का मांस रस, ग्राम्य पशुओं का ताजा रक्त, गोब राख या काली मिट्टी का शीघ्रता से पान कराना चाहिए। (च.चि. 23/46-47) 2. चतुर्थ वेग में गोबर रस तथा कैथ पत्र स्वरस में मधु तथा गोघृत मिश्रित कर देना लाभप्रद है। (च.चि. 23/48)

कल्प स्थान :-

धामार्गव कल्प- वमन कर्म के लिए धामार्गव चूर्ण को जल में पीस कर बेर समान गुटिका बना लेनी चाहिए। इस गुटिका का प्रयोग गोबर रस, घोड़े की लीद रस में घोलकर कर देने का विधान है। (च.क. 4/11)

सुश्रुतः- सूत्रस्थानः-

1. जलौका लगाते समय पीड़ा युक्त स्थान पर गोबर मल का रूक्ष कर लेना चाहिये। (सू.सं.सू. 13/19)

2. **शल्य परीक्षण** :- यदि त्वचा में शल्य दिखाई न दे तो तैल से स्निग्ध तथा स्वेद से स्विन्न कर लेना चाहिये। तत्पश्चात् मिट्टी, उड़द, जौ, गेहूँ तथा गोबर को पीसकर त्वचा पर मर्दन करते समय जहाँ पर भी ललिमा, शोथ या रुजा अनुभव हो वहीं पर शल्य है। (सु.सं.सू. 26/12)

3. जाङ्गम प्राणियों का रक्त, रोम तथा नखादि युवावस्था में तथा क्षार, मूत्र तथा पुरीष (मल) आहार के जीर्ण हो जाने पर ही प्राप्त करने चाहिये। (सु.सं.सू. 36/16)

4. शिरोविरेचन द्रव्यों में गोमय रस की गणना भी की गई है। (सु.सं.सू. 39/6)

चिकित्सा स्थान :-

1. **वातव्याधि** :- थोहर की डण्डी, बड़ी कटेरी, सुहांजना तथा सैन्धव लवण को कूटकर चूर्ण बना लें। उपरोक्त चूर्ण, घी, तैल, वसा तथा मज्जा को घड़े में भर दें तथा इस घड़े को मिट्टी से लिप्त करके गोमय के उपलों में जला दें। यह स्नेह लवण है तथा वातरोग नाशक है। इस लवण को काण्ड लवण की संज्ञा भी दी जाती है। (सु.सं.चि. 4/31)

2. **महाकुष्ठ** - 1. अयस्कृति में तीक्ष्ण लौह के पतले पत्र बना लें। इन पत्रों पर सैंधव तथा सौवर्चल आदि लवण वर्ग का लेप करें। इन पत्रों को गोबर की अग्नि पर गर्म कर त्रिफला, शालसारादि गण में बुझा दें। यह विधि 16 बार करें। इसी प्रकार खैर के अंगारों पर 16 बार करके सूक्ष्म चूर्ण बना लें। यह लौह को खाने योग्य बनाने की विधि है। यह लौह क्षार विधि भी कही जाती है। यह कुष्ठ में लाभप्रद है। (सु.सं.चि. 10/11) 2. औषध अयस्कृति असाध्य कुष्ठ या प्रमेह, स्थौल्यता तथा मन्दाग्नि में लाभकारी बतलाई गई है। इस अयस्कृति का निर्माण गोमय की अग्नि पर किया जाता है। (सु.सं.चि. 10/12)

3. खैर रस निकालने में भी खैर पर मिट्टी या गोबर का लेप करने का विधान बतलाया गया है। यह रस मधु, घृत तथा आँवला स्वरस से सेवन करने से कुष्ठ नाशक है। (सु.सं.चि. 10/13)

3. **विद्रधि** - कफज विद्रधि में ईंट, रेती, ढेला, गाय का गोबर, तुष, पांशु तथा मूत्र को गर्म करके स्वेदन देने का विधान है। (सु.सं.चि. 16/22-23)

4. **मिश्रक चिकित्सा** - कर्णपाली के रोग "परिलेही" में गोमय पिण्ड से स्वेदन देने का उल्लेख है। (सु.सं.चि. 25/21)

5. **स्वेदावचारणीय चिकित्सा** - धूलि, गोबर, तुष, भूषा तथा तिलखली की उष्णिमा से स्वेद देने का विधान है। (सु.सं.चि. 32/11)

कल्प स्थान :-

मूषक कल्प- 1. त्रिकटु चूर्ण में गोबर रस मिलाकर अंजन करें। (सु.सं.क. 7/37) 2. गोबर रस में मधु मिलाकर चाटना चाहिए। (सु.सं.क. 7/38)

कीट कल्प - 1. गोबर के सड़ने पर जो बिच्छू पैदा होते हैं वह मन्द विष वाले बतलाये गये हैं। (सु.सं.क.8/57) 2. बिच्छू विष को नष्ट करने के लिए गोबर का शीतोष्ण सेक देना चाहिए। (सु.सं.क. 8/69)

उत्तर तंत्र :-

1. **दृष्टिगत रोग प्रतिषेध** - 1. दिवान्ध तथा रात्र्यन्ध में नलिन कमल, कमल केशर, गेरू तथा गोबर रस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वटिका बनाकर आंखों में अञ्जन करना लाभप्रद है । (सु. सं.उ. 17/11-12) 2. पित्त विदग्ध दृष्टि में रसौंत, चमेली या आँवला स्वरस, मधु, तालीश, स्वर्ण गेरू को गोबर रस में मिलाकर प्रयोग करना हितकर है । (सु.सं.उ. 17/12-13) 3. दिवान्ध रोगियों में सैंधव, हरेमूंग, त्रिकटु, सौवीराञ्जन, मैनशिल, हल्दी, दारु हल्दी, चन्दन तथा गोबर इन सब को पीसकर वटी या चूर्ण बना कर अंजन प्रयोग करना चाहिए । (सु.सं.उ. 17/27) 4. तिमिर रोग में गोबर क्वाथ से सिद्ध तैल की नस्य देना हितकर है । (सु.सं.उ. 17/32)

2. क्रिया कल्प-श्रृक्ष्ण मांस 40-40 ग्राम के दो पिण्ड, मधुर औषध 40 ग्राम, लेखनद्रव्य 40 ग्राम, तिक्त द्रव्य 40 ग्राम तथा द्रव 320 ग्राम सब को मिलाकर पीस लें । इन के दो पिण्ड बनाकर उन को एरण्ड, केले, कमलिनी पत्रों में लपेट कर मृतिका लेप कर खैर की अग्नि पर पकावें अथवा निर्मली, अश्मन्तक, एरण्ड, पाटला, बांसा, बेर, बरगद आदि क्षीरी वृक्ष की लकड़ियों अथवा गोबर अग्नि पर पाक कर स्विन्न कर लें । स्विन्न होने पर अग्नि से निकाल कर रस निचोड़ लें । इस रस का प्रयोग अक्षि तर्पण में करने से अक्षि दाह, शोथ, वेदना, स्राव, कण्डु, मैल आदि ठीक हो जाते हैं । (सु.सं.उ. 18/37) तथा गोबर रस, गोमूत्र, दही, घृंत, मधु आदि द्वारा निर्मित अंजन का निर्देश दिया गया है । (सु.सं.उ. 18/85-93)

3. शोष प्रतिषेध- 1. गाय, घोड़ा, हाथी, बकरी तथा भेड़ के गोबर रस, मूर्वा, हल्दी तथा खैर का क्वाथ, दूध प्रत्येक समान भाग तथा घृत एक भाग, त्रिफला, मधुर वर्ग द्रव्य, त्रिकटु, देवदारु इनका कल्क मिलाकर घृत पाक विधि से घृत सिद्ध करें । यह घृत यक्ष्मा रोग के लिये उत्तम है । (सु.सं.उ. 41/44-45) 2. गाय, घोड़ा, भेड़, बकरी, हरिण, ऊँट, गधा, हाथी, इनके गोबररस, मांसरस, रक्त, द्राक्षा, अश्वगन्धा, पिप्पली, शर्करा इनके कल्क से घृत सिद्ध कर लें । यह यक्ष्मा रोग नाशक है । (सु.सं.उ. 41/49)

4. श्वास प्रतिषेध- 1. गोबर रस में घृत, मधु तथा पिप्पली मिलाकर देने से श्वास तथा कास रोगों में लाभ होता है । (सु.सं.उ. 51/42) 2. भार्गी छाल, त्रिकटु, तैल, हल्दी, कुटकी, पिप्पल, मरिच, चण्डा तथा गोबर रस को चाटने से श्वास रोग में लाभप्रद है । (सु.सं.उ. 51/44)

5.अमानुषोपसर्ग प्रतिषेध- गोबर से तैल तथा घृत पृथक्-पृथक् सिद्ध करके उनका प्रयोग पान, अभ्यङ्ग, नस्यादि में करें । गोबर का अन्य द्रव्यों सहित अंजन, क्वाथ, परिषेक, स्नान, लेप रूप में भी प्रयोग करने तथा शरीर पर चूर्ण रूप में छिड़कने, स्नेहन, धूपन में प्रयुक्त करने का विधान बतलाया है । यह सभी कर्म मनोरोग में भी लाभप्रद कहे गये हैं । (सु.सं.उ. 60/46-53)

अष्टाङ्गहृदय :-

सूत्रस्थान - उष्म स्वेद में गोबर के प्रयोग करने का उल्लेख है । (अ.हृ.सू. 17/6)

चिकित्सा स्थान -

1. रक्तपित्त - गोबर तथा घोड़े की लीद के रस में मधु और घृत मिलाकर सेवन करें । (अ.हृ.चि. 2/27)

2. श्वासहिध्मा - 1. पीपलामूल, मुलेठी, गोबर तथा अश्व की लीद के रस में मधु तथा घृत मिलाकर दें । यह हिक्का तथा कास नाशक है । (अ.हृ.चि. 4/36) 2. गौ, हाथी, घोड़ा, सूअर, ऊँट, गधा, भेड़ तथा बकरे के मल के पृथक्-पृथक् रस में मिला कर देना कास रोग में लाभप्रद है । (अ.हृ.चि. 4/37)

3. पाण्डुरोग - पाण्डु रोग में पंचगव्य घृत के प्रयोग करने का निर्देश दिया है । (अ.हृ.चि. 16/1)

उत्तर तंत्र :-

1. वालामय प्रतिषेध - 1. पिप्पली, सोंठ, गोबर रस तथा सैंधव लवण को तालु पर मलने से तालुकण्टक रोग में लाभ होता है । (अ.हृ.उ. 2/66) 2. अदरख, हल्दी तथा जलभांगरा का कल्क बनाकर वटपत्रों में लपेट लें । इस पर गोबर लेप करके पुटपाक विधि से तुषाग्नि का स्वेदन करें तथा उसका रस निकालकर तालु भाग पर लेप करें तथा इस पुटपाक रस को नेत्र में डालें । यह तालुकण्टक रोग में लाभप्रद है । (अ.हृ.उ. 2/67)

2. तिमिर प्रतिषेध - 1.रसवत, गेरू तथा तालीस पत्र को पीसकर इस में गोघृत, मधु तथा गोबर रस मिलाकर रखें ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह द्रवाञ्जन नेत्र में लगाने से निशान्ध अर्थात् रतौंधी रोग नष्ट हो जाता है । (अ.हृ.उ. 13/83) 2. करंज बीज, श्वेत कमल, सोना गेरू एवं लालकमल का केसर समभाग लें । इसमें गोबर रस मिलाकर बत्ती बनालें । यह बत्ती रतौंधी रोग नाशक है । (अ.हृ.उ. 13/84) 3. गोबर रस, गोदुग्ध तथा गोघृत को पकाकर अंजन लगाने से अक्षिगत धूमर आदि रोग नष्ट होते हैं । (अ.हृ.उ. 13/91)

3. कर्णरोग प्रतिषेध- लेह नामक रोग में गोबर की पोटलियों से अनेक बार स्वेदन कर वायबिडङ्ग को भेड़ी के मूत्र में पीसकर लेप करना लाभकारी है । (अ.हृ.उ. 18/48)

4. मूषिकाऽलर्क विष प्रतिषेध - 1. गोबर स्वरस में त्रिकटु का सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर नेत्र में लगाने से आखु विष नष्ट होता है । (अ.हृ.उ. 38/23) 2. कैथफल स्वरस तथा गोबर स्वरस में मधु मिलाकर अवलेह बना लें । यह अवलेह आखुविष नाशक है । (अ.हृ.उ. 38/24)

काश्यप संहिता :-

सूत्रस्थान :-

1. स्वेदाध्याय - वातकफ नाशक द्रव्यों एवं गाय, गदहे, अश्व, भेड़ और बकरी के पुरीष अर्थात् इनके गोबर या उपलों द्वारा प्रदेह स्वेद देना लाभकारी बतलाया है । (का. सं.स्वेदाध्याय 23/37)

इन्द्रिय स्थान :- ओषधभेषजेन्द्रियाध्याय - मृत्युसूचक लक्षणों में बतलाया है कि जिस व्यक्ति के शिर पर गोबर चूर्ण के समान एवं स्निग्ध चूर्ण हो जाता है तथा फिर स्वयं ही नष्ट हो जाता है उसके जीवन का एक मास ही शेष है ऐसा जानना चाहिए । (का.सं.पञ्चम इन्द्रिय स्था० सू० 6)

चिकित्सा स्थान :-

1. द्विव्रणीय :- कासीस तथा लोह चूर्ण को गोबर रस के साथ मिश्रित कर लेप करें यह उत्तम सवर्णकरण है । (का.सं.चि.)

2. प्रतिशयाय - पञ्चगव्य का प्रयोग जीर्ण प्रतिश्याय में लाभप्रद कहा है । (का.स.चि.)

कल्पस्थान :-

1. रेवतीकल्पाध्याय :- 1. "अथो आहुर्गोमध्य एनां गोमूत्रपुरीषाभ्यामुपोषितां स्नपयेत्, सैव तत्र प्रायश्चित्ति। गोमाता रूप असाध्य जातहारिणी आक्रमण कर देती है इसका यही प्रायश्चित है कि जातहारिणी प्रभावित स्त्री गौओं के मध्य में बैठाकर गौओं के मूत्र तथा पुरी (गोबर) से स्नान करावें । (का.सं.क. रेवतीकल्प.69) बेदी को गोबर तथा जल द्वारा लीपने का विधान बतलाय गया है । (क.सं.क. रेवतीकल्प.80)

खिलस्थान :-

1. विषमज्वर निर्देशीयाध्याय :- 1. विषम ज्वर से पीड़ि रोगी के धातु, बल तथा ओज क्षीण होने पर पञ्चगव्य घृ का सेवन करा कर धातु बल तथा ओज बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिए । (का.सं.खि. 1/79) 2. वातपित्त ज्वर रोमहर्ष एवं अङ्गमर्द को शान्त करने के लिए पञ्चगव्य घृत का सेवन कराना चाहिए । (का.सं.खि. 1/84)

2. सूतिकोपक्रमणीयाध्याय :- सन्निपात ज्वर को शान्त करने के लिए पञ्चगव्य घृत का प्रयोग कराना चाहिए (का.सं.खि. 11/157)

3. जातकर्मोत्तराध्याय :- 1. पूजन के लिए गोबर तथ जल से लीप कर बेदी बनाने का विधान बतलाया गय है । (का.सं.खि. 12/6) 2. बच्चों के खेलने के लि गोबरादि द्रव्यों से गाय, हाथी आदि आकृति वाले खिलौ बनाने का निर्देश भी मिलता है । (का.सं.खि. 12/6) गोबर तथा मिट्टी से लिपित, पवित्र तथा शस्त्र, जल अ अग्नि से रहित पृथ्वी पर बालक को लगातर अधिक त तक बैठना नहीं चाहिये । (का.सं.खि. 12/9)

4. शोथ चिकित्साध्याय :- जब आतुर का आमाशय त कोष्ठ लघु हो जाये उसे स्नेहन स्वेदन पश्चात् पञ्चगव्य घृत, कल्याण घृत, तिक्त घृत या दशमूल घृत द्वारा वम विरेचन देने के पश्चात् 10 दिन तक दूध के साथ भोज कराने का विधान बतलाया गया है । (का.सं.खि. 17/28)

आयुर्वेद ग्रन्थों में गोमय का प्रयोग स्वरस, कल्क, चूर्ण अवलेह, घृत, लेप, वर्ति, अंजन, पर्पटी, रस तथा भस्म अनेक कल्पनाओं के निर्माणार्थ होता है । इन कल्पनाओं का प्रयोग शरीर में स्नेहन, स्वेदन वमन-विरेचन, शिरोविरेचन रक्तमोक्षण (जलौका), अक्षितर्पण, लेप, गण्डूष, अभ्यङ्ग

क्रमांक
1.
2.
3.
4.
5.
6.
7.
8.
9.
10.
11.
12.
13.
14.
15.
16.
17.
18.
19.
20
21.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मर्दन, रुक्षण, उबटन, स्नान, पान, परिषेक, अवगाहन तथा धूपन, अनेकविध कर्मों द्वारा रोग निवारणार्थ बाह्य या आभ्यन्तरीय रूप में करने के निर्देश ग्रन्थों में पाये जाते हैं। गोबर का प्रयोग ज्वर, विषमज्वर, कास, श्वास, हिध्म, प्रतिश्याय, रक्तपित्त, कुष्ठ, अपस्मार, उन्माद, विषजन्य विकार, वातज व्याधि, शोथ, विद्रधि, अर्श, पाण्डु, कामला, यकृत् विकार, उदर रोग, स्थौल्यता, मूषिका तथा अलर्क विष, अक्षिरोग (शोथ, दाह, वेदना, स्राव, मल, तिमिर, रात्र्यान्धव तथा दिवान्ध्य आदि), कर्ण रोग, तालुकण्टक, रक्तज विकार, पामा, दद्रु, त्वचावर्ण को सुन्दर बनाने तथा सूतिका रोगों में लाभकारी है जिनके अनेक सन्दर्भ संहिता ग्रन्थों में पाये जाते हैं। गोबर का प्रयोग रोग संशमनार्थ ही नहीं अपितु संशोधनार्थ (पंचकर्म) चिकित्सा में भी अपना विशेष महत्त्व रखता है। गोबर का प्रयोग कीटाणु नाशक, कीट नाशक, दुर्गन्ध नाशक, पवित्र है। पृथ्वी का प्राकृतिक आहार होने के कारण खेतों में इसका प्रयोग करना शुद्ध एवं उत्तम खाद्यान्न प्राप्ति का साधन ही नहीं अपितु पर्यावरण को शुद्ध कर शरीर की रक्षा एवं पोषण करता है क्योंकि गोबर में विषैले जीवाणु नाशक सक्षमता है।

संहिता ग्रन्थों में गोबर प्रयुक्त योग तालिका

क्रमांक	योग नाम	ग्रन्थ नाम	सूत्र	प्रयुक्त रोग नाम
1.	पञ्चगव्य घृत	चरक चि.	10/17	अपस्मार
2.	महापञ्चगव्य घृत	चरक चि.	10/18-24	अपस्मार
3.	मधुकादि योग	चरक चि.	17/115	हिक्काश्वास
4.	त्वक् सवर्णीकरण लेप	चरक चि.	25/116	द्विवर्णीय
5.	पञ्चगव्य घृत	सुश्रुत उ.	39/240-242	ज्वर प्रतिषेध
6.	लघुपञ्चगव्य घृत	सुश्रुत उ.	39/243-44	ज्वर प्रतिषेध
7.	पञ्चगव्य घृत	सुश्रुत उ.	61/34-37	अपस्मार प्रतिषेध
8.	काण्ड लवण (स्नेहन लवण)	सुश्रुत चि.	4/31	वातव्याधि चि.
9.	पञ्चगव्य घृत	अष्टाङ्ग. हृदय उ.	7/18	अपस्मार
10.	महापञ्चगव्य घृत	अष्टाङ्ग. हृदय उ.	7/19-23	अपस्मार
11.	सवर्णकारक लेप	अष्टाङ्ग. हृदय उ.	25/61	व्रण प्रतिषेध
12.	तुवरक रसायन	अष्टाङ्ग. हृउय उ.	39/84-95	रसायन
13.	पञ्च गव्य घृत	का.सं.चि.	--	प्रतिश्याय
14.	पञ्च गव्य घृत	का.सं.चि.	1/79-84	ज्वर
15.	पञ्च गव्य घृत	का.सं.चि.	11/156	सूतिका रोग
16.	पञ्च गव्य घृत	का.सं.चि.	17/28	शोथ
17.	मरिचादि तैल	शार्ङ्गधर सं.	म.ख. 9/148	कुष्ठरोग
18.	उदयादित्य रस	शार्ङ्गधर सं.	म.ख. 12/184	विचर्चिका दद्रु
19.	मुखकान्तिकर मातुलुङ्गादि लेप	शार्ङ्गधर सं.	उत्तर खण्ड 11/10	व्यङ्ग.
20	इष्टिकादि लेप	शार्ङ्गधर सं.	उत्तर खण्ड 11/95	कफज विद्रधि
21.	रसाञ्जन वर्ति	शार्ङ्गधर सं.	उत्तर खण्ड 13/85	नेत्र रोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मधुमेह कारण एवं निवारण

डॉ० नरेन्द्र शंकर त्रिपाठी, एम०डी० (आयुर्वेद)
रीडर एवं विभागाध्यक्ष, इन्चार्ज-डायबिटीज क्लीनिक, दयानन्द आयुर्वेदिक कॉलेज, जी.टी.रोड, जालंधर-144008

मधुमेह शब्द दो शब्दों के मेल से बना है, यथा -

मधु - अर्थात् शहद या मीठापन तथा

मेह - अर्थात् मूत्र (Urine)।

अत: मधुमेह का सामान्य अर्थ है - "मूत्र की मधुरता" और मूत्र में यह मधुरता रक्त में काफी समय तक चीनी की मात्रा बढ़ी रहने के बाद ही आती है, सामान्यत: चीनी मूत्र में नहीं पायी जाती है। रक्त में चीनी की सामान्य मात्रा 80 से 120mg% तक ही होती है, परन्तु जब यह मात्रा 180mg% (Renal threshold) को पार करने लगती है तो वृक्क (Kidneys) रक्त में मौजूद अधिक चीनी को रोकने में असमर्थ हो जाते हैं तथा यह बढ़ी हुई चीनी पेशाब के रास्ते से बाहर आने लगती है और इसी कारण इस रोग को मधुमेह कहते हैं।

प्राचीन काल में मधुमेह की पहचान मूत्र के त्यागने के स्थान पर चींटियों या मक्खियों के आ जाने के कारण शीघ्र ही हो जाती थी, परन्तु अब आधुनिक शौचालयों तथा रहन-सहन के कारण इस रोग की पहचान शीघ्र नहीं हो पाती है। इसलिए सामान्यत: 40 वर्ष के ऊपर के व्यक्ति को 4-6 माह में कम से कम एक बार रक्त में चीनी की मात्रा की जाँच अवश्य ही करवा लेनी चाहिए।

उपलब्ध आँकड़ों के मुताबिक लगभग 11 करोड़ व्यक्ति चीनी की बीमारी से सम्पूर्ण विश्व में पीड़ित हैं। इनमें से आधे अर्थात् लगभग 5 करोड़ 70 लाख लोग भारतवासी ही हैं। नवीनतम गणना के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 2-3% तथा शहरी क्षेत्रों में 8-12% लोग मधुमेह से ग्रसित पाए जाते हैं। इनमें से भी 40 वर्ष की उम्र पार कर चुके लगभग 25% शहरी व्यक्ति मधुमेह के शिकार हो रहे हैं।

मधुमेह रोग के कारण :- वर्तमान के आरामदायक एवं विलासिता पूर्ण जीवन-शैली के कारण; शारीरिक श्रम का अभाव; आवश्यकता से अधिक भोजन (कैलोरी) ग्रहण करना; चीनी, गुड़ तथा इनसे बनी चीजों का अधिक सेवन करना; नए अनाज का सेवन करना आदि कारणों से चीनी की बीमारी प्रमुख रूप से होती है।

आवश्यकता से अधिक भोजन (कैलोरी) ग्रहण करने से रक्त में चीनी की मात्रा सामान्य से काफी बढ़ जाती है। अग्न्याशय (Pancreas) के β-कोष (β-cell) से निकलने वाला "इन्सुलिन हारमोन" रक्तगत अत्यधिक चीनी का सम्यक् उपयोग (Consumption) नहीं कर पाता और यह रक्तगत शर्करा बढ़कर मूत्र मार्ग से बाहर आने लगती है और इसी को चीनी या मधुमेह की बीमारी कहते हैं।

आचार्य चरक ने भी चरक संहिता में प्रमेह रोग के कारणों का वर्णन करते हुए कहा है कि -

आस्या सुखं स्वप्न सुखं दधीनि
ग्राम्योदकानूप रसां पयांसि।
नवान्न पानं गुड़ वैवृत्तं च
प्रमेह हेतुः कफ कृच्च सर्वम्॥

(चरक संहिता, चिकित्सा स्थान, अध्याय 6/4)

मधुमेह रोग के भेद :- लगभग 40 वर्ष की आयु पार करते ही शरीर के सभी अंगों में "विकास" का स्थान "ह्रास" ले लेता है। अग्न्याशय (Pancreas) भी उससे अछूता नहीं रहता तथा इसमें भी बुढ़ापा (Degenerative changes) आने लगता है जिससे कि "इन्सुलिन" का बनना धीरे-धीरे कम होता चला जाता है और इसके फलस्वरूप ग्लूकोज की ग्लाइकोजन में परिवर्तन की क्रिया सुस्त पड़ जाती है और इसी वजह से रक्त में चीनी की मात्रा बढ़ने लगती है। इस बढ़ी हुई चीनी की मात्रा को हम "नियंत्रित आहार-विहार" से नियंत्रण में ला सकते हैं। आधुनिक विज्ञान की दृष्टि से इसे हम Non-insulin dependent diabetes mellitus - N.I.D.D.M. or type-II diabetes (चीनी) कहते हैं।

इसके विपरीत Type-I डायबिटीज को I.D.D.M. Insulin dependent diabetes mellitus भी कहते हैं और इसमें अग्न्याशय (Pancreas) के β- कोष (β-cells) या तो जन्म से ही नहीं होते-और या फिर नष्ट हो जाते हैं। इसलिए इन्सुलिन का निर्माण नहीं हो पाता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

या फिर बहुत ही कम होता है; जिसके परिणाम-स्वरूप रक्तगत शर्करा की मात्रा बहुत बढ़ी हुई होती है । यह रोग सामान्यतः बाल्यावस्था से ही होता है जिसके कारण रोगी को अलग से इन्सुलिन इन्जेक्शन के रूप में आजीवन लेना पड़ सकता है । इसलिए आयुर्वेद में वर्णित "रसायन-चिकित्सा" का महत्त्व बढ़ जाता है तथा अग्न्याशय (Pancreas) के साथ-साथ सम्पूर्ण शरीर का पुनर्यौवनीकरण (Regeneration) ही इस चिकित्सा का मुख्य उद्देश्य होता है जिससे इन्सुलिन के निर्माण को बढ़ाकर रक्तगत शर्करा की मात्रा को नियंत्रित किया जाता है ।

मधुमेह रोग के लक्षण और पहचान :- मधुमेह रोग की उत्पत्ति धीरे-धीरे होने के कारण इसके लक्षण भी देर से ही प्रकट होते हैं । इसलिए लगभग 40-50% रोगी लक्षण विहीन होते हैं या लक्षण अनुभव करते हैं । इसलिए 40 वर्ष की आयु पार कर लेने वाले लोगों को चाहिए कि अपने विलासिता पूर्ण आहार-विहार तथा दिनचर्या को त्यागकर हर 2-3 महीने बाद रक्तगत शर्करा की जाँच तथा पेशाब में चीनी की जाँच अवश्य ही करवाते रहें । अधिकांश रोगियों में निम्नलिखित लक्षण पाए जाते हैं -

(1) बहुमूत्रता (Polyurea)- रोगी को बार-बार पेशाब आना ।

(2) मुँह का अधिक सूखना (Polydipsia)- अधिक पेशाब आने के कारण रोगी का मुँह सूखता है ।

(3) अधिक भूख लगना (Polyphagia)- रोगी को अपेक्षाकृत अधिक भूख लगती है तथा अधिक कमजोरी का आभास होता है ।

(4) वजन में कमी आना (Loss of weight)-

(5) मूत्र मधुरता (Glycosurea) - मूत्र में शर्करा होने के कारण चींटियों का आना ।

इन लक्षणों के अलावा लगभग 25% रोगियों में चक्कर आना (Drowsiness), तेज साँस का चलना (Rapid breathing) तथा रक्तचाप में कमी (Hypovolumia) तथा 15-20% रोगियों में अत्यधिक थकान होना, कमजोरी आना तथा बार-बार चमड़ी के रोगों का होना भी पाया जाता है ।

चीनी परीक्षा - उपरोक्त लक्षणों के अतिरिक्त रक्तगत शर्करा (Blood Sugar) की जाँच करके मधुमेह का पता लगाया जा सकता है । रक्त में शर्करा 200 mg/dl या अधिक तथा खाली पेट (Fasting Sugar) 140 mg/dl या अधिक आए; लगातार दो बार जाँच करवाने पर भी; तो ऐसे व्यक्ति को डायबिटीज का रोगी माना जा सकता है ।

रक्त में चीनी की सामान्य मात्रा :-

1) बिना कुछ खाए, खाली पेट (Fasting)- 100 mg/dl या कम,

2) भोजन के 1 घण्टे बाद - 160 mg/dl या कम,

3) भोजन के 2 घण्टे बाद - 180 mg/dl या इससे कम होनी चाहिए जो कि सामान्य मात्रा मानी गई है ।

अधिक संवेदनशील रोगी (High Risk Individual):-

1) ऐसे रोगी जिनके माता-पिता या निकट सम्बन्धी को मधुमेह है (Family History-पारिवारिक वृत्त वाले लोग)

2) मोटापा (Over-weight) से ग्रसित रोगी ।

3) रक्त भाराधिक्य वाले रोगी (Hypertensive patient)

4) हृदय रोगी (Heart Patients)

मधुमेह रोग की चिकित्सा :-

"निदानम् परिवर्जनम् ॥"

अर्थात् रोग की उत्पत्ति के कारक (Factors) को वर्जित करना ही सभी रोगों का प्रमुख चिकित्सा सूत्र है । "आहार-विहार" पर नियंत्रण परमावश्यक है ।

टाइप-टू डायबिटीज का प्रमुख कारण अधिक कैलोरी का ग्रहण करना तथा तदानुरूप उसकी खपत न होना है ।

अतः मधुमेह रोग की चिकित्सा हेतु तीन विकल्प/मार्ग प्रमुखतया होते हैं -

1) रोगी का आहार-विहार - व्यायाम तथा योग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(Diet & Exercise)

2) मुख-मार्ग से दी जाने वाली औषधियाँ (Oral hypoglycaemic agents)

3) इन्सुलिन चिकित्सा (Insulin treatment)

आहार-विहार एवं व्यायाम (Diet & Exercise):-

यह चिकित्सा का पहला कदम है। रोगी के आहार पर नियंत्रण, हितकर विहार तथा नियमित व्यायाम के द्वारा मधुमेह पर शीघ्र नियंत्रण पाया जा सकता है। रोगी का आहार-शरीर की आवश्यकता के अनुरूप होना चाहिए। जरूरत से अधिक कैलोरी युक्त आहार लेने पर अनावश्यक रूप से रक्तगत शर्करा में वृद्धि होगी। चीनी, आलू, चावल, शकरकन्दी आदि अधिक मात्रा में कार्बोहाइड्रेट युक्त तथा अधिक तली-भुनी चीजें एवं गरिष्ठ भोजन करके, अधिक आराम करने या सो जाने से चीनी की मात्रा रक्त में बढ़ जाती है।

मैदे से बनी चीजें; चाकलेट, आइसक्रीम, पेस्ट्री तथा अन्य प्रकार की मिठाइयों को खाने से भी परहेज करना चाहिए। इसके अतिरिक्त मधुर, अम्ल एवं लवण रस प्रधान आहार का कम सेवन करना चाहिए।

में 3बार भोजन तथा 3बार नाश्ता Type-I (IDDM) तथा Type-II (IDDM) में 2 बार भोजन तथा 1 बार नाश्ता करने का प्रावधान संतुलित आहार के रूप में लेना श्रेयस्कर होता है।

सामान्यतः भोजन में :-

कार्बोहाइड्रेट	-	60-65%
वसा (Fats)	-	20-25%
प्रोटीन	-	10-15%
नमक	-	3-6 gm/day होना चाहिए।

अधिक मीठा खाने वालों को :-

मिठाई के वैकारिक स्रोत-सैक्रीन तथा एस्पारटम का प्रयोग भी कर लेना चाहिए। मदिरा का सेवन कभी-कभी अल्प मात्रा में किया जा सकता है, अगर स्वास्थ्य सामान्य हो तो। मधुमेह के रोगी नियंत्रित मात्रा में सभी प्रकार के आहार को ग्रहण कर सकते हैं।

विहार (Exercise) :- डायबिटीज के रोगियों को नियमित रूप से स्वच्छ वायु में प्रातः, नियंत्रित परिश्रम करना चाहिए जिससे शरीर की कोशिकाओं में पुनर्यौवनीकरण तथा ऑक्सीजन सप्लाई बनी रहे। पैदल चलना, साइकिल चलाना, भोजनोपरान्त सुबह-शाम घूमना तैरना तथा यौगिक क्रियाओं को भी करते रहना चाहिए क्योंकि यौगिक क्रियाओं के द्वारा शरीर के साथ-साथ मन भी स्वस्थ एवं तनाव रहित हो जाता है। लगभग आधे घण्टे की यौगिक क्रियाओं के द्वारा भी तीन सप्ताह से तीन माह के भीतर रक्तगत शर्करा पर नियंत्रण पाया जा सकता है। इसमें -

15 मिनट तक - आसन
5 मिनट तक - प्राणायाम तथा
10 मिनट तक - का समय धारणा, ध्यान और समाधि में लगा सकते हैं।

कुछ प्रमुख आसन जो इस रोग में किए जा सकते हैं, वे हैं -

1) अर्द्ध मत्स्यासन।
2) भुजंगासन।
3) पश्चिमोत्तानासन।
4) मयूरासन।
5) धनुरासन तथा
6) मत्स्यासन।

2. मुख मार्ग से ली जाने वाली औषधियाँ (Oral hypoglycamic agents):-

Insulin का उपयोग शारीरिक बल तथा व्याधि की गंभीरता को देखते हुए चिकित्सक की सलाह से ही करना चाहिए।

- आयुर्वेद चिकित्सा में करेले का स्वरस या करेले को सुखाकर चूर्ण दिया जा सकता है तथा सब्जी के रूप में भी उपयोग करना चाहिए।
- मेथी बीज का चूर्ण 3-5 ग्राम की मात्रा सुबह-शाम देने से भी रक्तगत शर्करा की मात्रा में कमी आती है।
- जामुन बीज मज्जा का चूर्ण लेने से लाभ होता है।
- बेल पत्र का सेवन या पके आम की मज्जा लाभकारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है ।

- गुड़मार पत्र का चूर्ण भी लाभप्रद है ।
- हल्दी एवं आंवले का चूर्ण सम मात्रा में 4-5 ग्राम सुबह-शाम लेने से लाभ मिलता है ।
- शिलाजीत वटी, चन्द्रप्रभावटी, बसन्तकुसुमाकर रस, शुद्ध शिलाजीत चूर्ण = ½ ग्राम सुबह-शा दूध के साथ तथा त्रिवंग भस्म का प्रयोग अत्यधिक प्रभावशाली होता है ।
- पुष्पधन्वा रस भी प्रभावशाली औषधि मानी जाती है ।

3) रसायन चिकित्सा (Rejuvenation therapy):- रसायन चिकित्सा अत्यन्त महत्वपूर्ण है । वृक्क् (Diabetic nephropathy), हृदय (Diabetic cardiopathy) तथा आँखों पर (Diabetic retiropathy) यदि मधुमेह का प्रभाव दिखे तो तदानुसार चिकित्सा व्यवस्था में परिवर्तन किया जा सकता है । मधुमेह में ओज (अपर ओज) का क्षय होता है जिसका निष्कासन मूत्र द्वारा होता है । इसलिए "ओज क्षय" को रोकने के लिए रसायन चिकित्सा करनी चाहिए ।

उपरोक्त चिकित्सा का प्रयोग निपुण वैद्य/चिकित्सक की देख-रेख में ही लेना जीवनदायी है, अन्यथा हानिकारक प्रभाव भी सामने आ सकता है ।

उपरोक्त औषधियों/वनस्पतियों का संग्रह भी उचित काल तथा जगह से ही किया जाना चाहिए अन्यथा हीन वीर्य औषधियों के प्रयोग के परिणाम लाभकारी नहीं आते हैं । ऐसा ही प्रयास दयानन्द आयुर्वेदिक कालेज, जी०टी० रोड (सामने बर्लटन पार्क); जालन्धर द्वारा स्थापित डायबिटीज क्लीनिक (शाम=4-6 तथा प्रातः 10-12) द्वारा किया जा रहा है; जिसमें पर्वतीय क्षेत्रों से मंगवाई गई दिव्य औषधियों के उत्साहजनक परिणाम 3 सप्ताह से 3 माह में भी मिलने लगते हैं । यहाँ पर रोग एवं रोगी की प्रकृति को देखकर/पहचानकर तदनुसार शुद्ध आयुर्वेदिक/हर्बल औषधियों के द्वारा मधुमेह की चिकित्सा सफलतापूर्वक की जा रही है ।

मधुमेह में पथ्यापथ्य :- पथ्यापथ्य के ज्ञान के बिना मधुमेह का इलाज संभव नहीं है । दैनिक जीवन में उपयोग आने वाली कुछ चीजें जिनका ज्ञान मधुमेह के रोगी के लिए आवश्यक है, वे हैं -

पथ्य :- कोद्रव (कोदो), चना, मुदग (मूँग की दाल), यव, जांगल मांस, सादी चाय, लघु व्यायाम, सुबह-शाम को यथाशक्ति सैर करने की आदत; नियंत्रित एवं पौष्टिक आहार, सत्तू, नींबू पानी, सादा सूप, पतली खट्टी लस्सी, हरी पत्ते वाली शाक-सब्जियाँ, खीरा, ककड़ी, टमाटर, मूली, करेला और घीया आदि ।

अपथ्य :- दिवास्वपन (दिन में सोना), मूत्र वेग धारण, तैल, घृत, मधु, गुड़; सभी प्रकार की शर्बत; इक्षु रस (गन्ने का रस), आनूप मांस, नवान्न (नया अन्न), चर्बी, मिष्ठान्न, मैदे से बनी चीजें, चीनी, मिठाई, चॉकलेट, चावल, गेहूँ का आटा, पनीर, केक, पेस्ट्री आइसक्रीम, आलू, तली हुई चीजें जैसे पूड़ी, पराठा, पकौड़े, समोसे, उड़द की दाल, राजमा, अचार, कचालू, सिगरेट, गुटखा, तम्बाकू ।

फल :- केला, चीकू, अंगूर, खर्जूर तथा सूखे मेवे ।

सब्जी :- आलू, शकरकन्दी, कचालू, चुकन्दर, भिन्डी, अरबी तथा चिकित्सक के द्वारा प्रदत्त आहार तालिका का पालन करना चाहिए ।

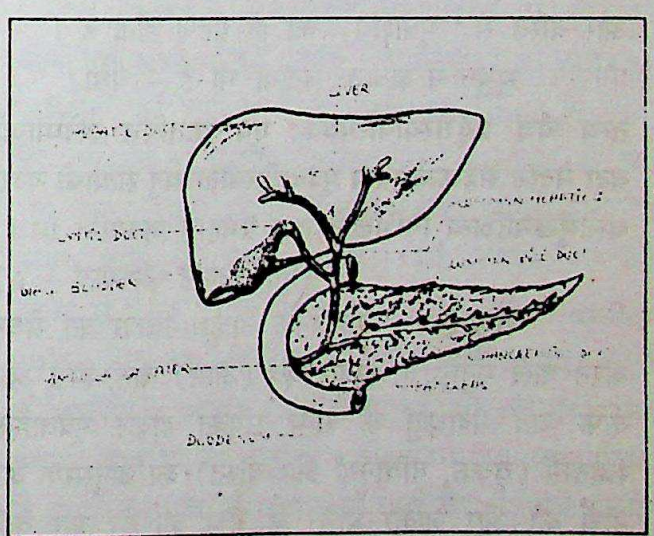

PANCREAS & BILLARY SYSTEM

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रमेह और मधुमेह - एक शास्त्रीय विवेचन

डा० नितिन कुमार अरोरा, बी०ए०एम०एस०,एन०डी० (दिल्ली), आयुर्वेद रत्न, एफ०सी०सी०
डा० जगदीश कुमार अरोरा, डाक्टर ऑफ् साइंस् (आयुर्वेद), एफ०आर०ए०एस० (लन्दन)

(प्रस्तुत लेख का प्रथम भाग जनवरी, 2003 में प्रकाशित हुआ है - सम्पादक)

सामान्य सम्प्राप्ति :-

क्षीणेषु दोषेष्ववकृष्य वस्तौ धातून् प्रमेहाननिलः करोति । दोषो हि वस्ति समुपेत्य मूत्रं संदूष्य मेहाञ्जनयेद्यथास्वम् ॥6॥

(चरक, चिकित्सा अध्याय-6)

वातज प्रमेह की सम्प्राप्ति :- कफ और पित्त दोष जब वात की अपेक्षा क्षीण (न्यून) रहते हैं तो बढ़ा हुआ वात "धातुओं" (वसा, मज्जा, ओज और लसिका) को मूत्राशय में खींचकर ले आता है तब "वातज प्रमेह" को उत्पन्न करता है ।

प्रमेहों की सामान्य सम्प्राप्ति :- कुपित वात, पित्त और कफ दोष मूत्राशय में जाकर मूत्र को दूषित कर अपने लक्षण वाले वातज, पितज, कफज प्रमेहों को उत्पन्न करते हैं । परन्तु यहाँ पर यह ध्यान देना आवश्यक हैं कि जो केवल "वात" से प्रमेह होता है वह असाध्य होता है क्योंकि मूत्रवह संस्थान के विभिन्न अंगों की विकृति के ही कारण प्रमेह की उत्पत्ति होती है । यहाँ मूत्रवह संस्थान का उपलक्षण "वस्ति" को समझना चाहिए और वस्ति से "मूत्राशय" का ही ग्रहण होता है ।

सुश्रुत ने शब्दतः बताया भी है - यथा

तस्य चैवं प्रवृत्तस्यापरिपक्का एवं वातपित्त श्लेष्माणो यदा मेदसा सहैकत्वमुपेत्य मूत्रवाहिस्रोतांस्यनु सत्याधो गत्वा बस्तेर्मुखमाश्रित्य निर्भिद्यन्ते तदा प्रमेहान् जनयन्ति ॥4॥

(सुश्रुत, निदान, अध्याय - 6)

सम्प्राप्तिः- प्रमेहजनक आहार-विहार का सेवन करने वाले मनुष्य के अपरिपक्व (आम) वात, पित्त और कफ जब मेदोधातु के साथ संयुक्त होकर मूत्रवाहक स्त्रोतसों (वृक्क, गविनियाँ और वस्ति) का अनुसरण कर नीचें की ओर जाकर बस्ति के मुख को घेर कर वहीं स्थित कर देते हैं तब प्रमेहों को उत्पन्न करते हैं ।

चरक संहिता के निदान स्थान में "वातमेह" के हेतुओं का विस्तार से "कषाय कटु तिक्त.....प्रकोपमापद्यते" वर्णन किया है । परन्तु चिकित्सा प्रक में वायु के स्पष्ट कारणों के लिए किसी शब्द विशेष प्रयोग न करके कफपित्त के क्षीण होने पर (अर्थात् इन दोषों के क्षीण होने पर वात स्वयं बद्ध हो जायेगा) गया है ।

सम्प्राप्ति के पूर्वोक्त (चरक के सूत्र में) "धातून" शब्द आया है - क्या इसका तात्पर्य "धातुओं में दूष्यों से है । वातजमेह में वसा, मज्जा, ओज, लसीका प्रायः दूषित होते हैं अर्थात "दूष्य" हैं ।

यह ठीक है कि वात वृद्धि, वातज आहार-विहार सेवन करने से-वातज मेह की उत्पत्ति होती है । फिर प्रमेह की कफ प्रधानता हाने के कारण प्रारम्भ में "कफ" वृद्धि अवश्य संभाव्य है । यदि मनुष्य "कफ" का आहार विहारों का सेवन करता है तो इससे प्रारम्भ में "कफ" वृद्धि हो जाती है । अब इसके बाद हेतुओं अनुसार "पित्तजमेह" भी हो सकता है और वातज भ

प्रमेही "वातज" निदानों (रूक्ष, कटु, क आदि आहार व मैथुन व्यायामाधिक्य आदि) का से प्रारम्भ करता चला जाता है जिससे "कफ", "पि का नाश होकर वात की वृद्धि हो जाती है । यदि वृद्धि को प्रथम ध्यान में रखें तब भी अन्य दोषों क्षीणता स्वभावतः ही सिद्ध होगी ।

यदि मनुष्य की प्रकृति "वातज" होती है "कफज मेह" की किंचित् अवस्था आ जाती है, वातज आहार विहारों का सेवन किया जाता है तो और शीघ्र प्रमेह की तृतीय श्रेणी अर्थात् पूर्व रूप प्रकट हो "वातज प्रमेह" की सम्भावना हो जाती है ।

वात प्रकृति वाला रूक्षतायुक्त होता है वातज प्रमेहों में भी रूक्षता आती है । स्वभाव ही ऐसे मनुष्य के पित्त की क्षीणता रहती है वात की अधिक वृद्धि हो जाने से पित्त की क्षीण

330, पटेल नगर, हापुड़ - 245 101 (उत्तर प्रदेश)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वाभाविक है ।

वातज आहार-विहारों का सेवन, वातज मेह के निदान से वात प्रधान दोष कुपित होकर (कफ-पित्त की क्षीणता पर) अपने विशिष्ट दूष्यों-वसा, मज्जा, लसीका, ओज को दूषित कर, वस्ति स्थान में जाकर, वातिक मेहों की उत्पत्ति कर देता है । इस प्रकार मनुष्य के शरीर में "वातज प्रमेह" उत्पन्न हो जाता है ।

प्रमेह रोग में दोष-दूष्य :- आयुर्वेद का सिद्धान्त है कि शरीर-स्थित तीन दोष-वात-पित्त-कफ- ये ही रोग के प्रमुख कारण हैं । मेद, रक्त, शुक्र, जल, वसा, लसीका, मज्जा, रस ओज और मांस, ये सब दूष्य हैं अर्थात् दोष इन्हें दूषित करते हैं ।

1. श्लैष्मिक प्रमेह में "दोष" तथा "दूष्य" समान होते हैं ।
2. पैत्तिक प्रमेह में "दोष" पित्त है और "दूष्य" कफ है ।
3. वातिक प्रमेह में धातुओं का इतनी तीव्रता के साथ विनाश होता है कि उसकी पूर्ति करने के लिए उतनी प्रभावशाली औषध का अभाव सा है ।

"कफः सपित्तः पवनश्च दोषाः, मेदोस्र शुक्राम्बु वसा लसीकाः ।
मज्जा रसौजः पिशित च दूष्याः, प्रमेहिणां विशतिरेव मेहाः ॥

(चरक, माधव निदान, भाव प्रकाश, योगरत्नाकर, गद निग्रह, बङ्गसेन)

आचार्य चरक ने 1. मेदा (Adipose Tissue), 2. रक्त (Blood), 3. शुक्र (Semen), 4. अम्बु (Body Fluid), 5. वसा (Fat), 6. लसीका (Lymph), 7. मज्जा (Bone Marrow), 8. रस (Plasma/Nutrient FLuid), 9. ओज (Essence of Tissue), 10. मांस (Muscular Tissue) - इन दस "दूष्यों" का निर्देश किया है । इनसे (इन दोष-कफ, पित्त तथा वायु, दूष्यों के संयोग विशेष से) बीस प्रकार के प्रमेह उत्पन्न होते हैं ।

अब उपरोक्त दस "दूष्यों" का विस्तार से वर्णन किया जायेगा ।

1. मेद :- मेद-मांस धातु से पुष्ट होता है तथा अस्थियों को पुष्ट करता है । छोटी अस्थियों में तथा सम्पूर्ण प्राणियों में उदर के अग्र भाग में "मेद" विशेष रूप से रहता है । "मेदोपुष्टि" मधुमेह में अत्यन्त उल्लेखनीय हैं । आचार्यों ने प्रधान "दूष्य" के रूप में "मेद" को वर्णित किया है । अधिकांशतः मेदो रोग से पीड़ित व्यक्तियों में ही विशेष मिलता है । आहार के पाचन की विकृति के परिणामस्वरूप मेदसचयाधिक्य एवं तद्जन्य रक्त शर्करा की वृद्धि होकर मधुमेहोत्पत्ति होती है । मेद धातु बढ़कर जब सारे स्रोतों को मार्गों को बन्दकर देती है तब कोष्ठ में वायु विशेष रूप से बढ़कर गमन करती हुई, अग्नि को विशेष रूप से प्रदीप्त करती है और आहार का शोषण भी कर लेती है । इसीलिए आहार का पाचन शीघ्र ही कर देती है जिससे मनुष्य आहार को बार-बार और अधिक मात्रा में चाहता है । यदि आहार काल का अतिक्रमण कर दिया जाये तो वात-पित्त जन्य भयंकर कई रोग हो जाते हैं । मेद के साथ कफ मिश्रित होने से स्वेदवादी सिराओं के मूल में स्थित होकर पसीना का अधिक स्राव करता है ।

2. रक्त :- आधुनिक अन्वेषण के अनुसार रक्त कणों तथा क्षत्रकणों की उत्पत्ति (लिम्फोसाइट को छोड़कर) अस्थियों की लोहित मज्जा (Red Marrow) से होती हैं । आयुर्वेद के अनुसार शरीरस्थ रस रजंक कण के द्वारा रंगा जाकर, रक्त रूप में परिवर्तित होकर सम्पूर्ण शरीर में भ्रमण करता है, अर्थात् रक्ताग्नि एवं रञ्जक पित्त की क्रिया से "रस" धातु, रक्त के रूप में परिणत होता है । रञ्जक पित्त का स्थान यकृत, प्लीहा (चरक तथा सुश्रुत के अनुसार), आमाशय (दोनों वाग्भट्ट के अनुसार) तथा हृदय (शार्ङ्गधर के अनुसार) हैं । इनमें जब रस पहुँचता है तो रञ्जक पित्त के सम्बन्ध से रक्त रूप में परिणत होता है । दोषों के प्रकोप के विवरण में, जब दोष प्रकुपित (या क्षीण) होते हैं तब उसके सभी गुण प्रकुपित नहीं होते/

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रत्युत, दोष-प्रकोपक आहार-विहार में प्रकोप्य दोष के जिस गुण की वृद्धि का स्वभाव विशेष होता है उसी गुण की वृद्धि अधिक होती है । परिणामतया उस दोष के उस प्रकुपित हुए गुण के अनुसार ही रोग-विशेष का प्रादुर्भाव होता है ।

वात से दूषित रक्त वर्ण में कृष्णारूण; तनु (पतला), रूक्ष, फेनिल (फेनवाला), शीघ्रगति, विशद (पिच्छिलता-रहित; अर्थात् न जमने वाला होता है ।

पित्त से दूषित रक्त नील, हरित, पीत, श्यामवर्ण, आम सन्धि (कच्ची मछलियों की गन्धवाला), मक्खियों और चीटियों को अप्रिय तथा उष्णता के कारण चिरकाल में जमने वाला होता है ।

कफ दुष्ट रक्त गेरू के द्रव के समान ईषत् रक्त-पाण्डु, पिच्छिल (चिपचिपा); तन्तुमान्, गाढ़ा, स्निग्ध, शीतल, मन्दगति तथा शीघ्र जमने के स्वभाव वाला होने से, स्वरूप में मांसपेशी के समान प्रतीत होता है ।

3. शुक्र :- शुक्र से दो पदार्थों (शारीर द्रव्यों) का ग्रहण होता है । प्रथम शुक्र धातु-जो सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त रहता है और जिसकी स्थिति शरीर में धैर्य, शौर्य आदि उत्पन्न करती है । दूसरा शुक्रधातु वह है जो वृषण ग्रन्थियों में अन्य अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के स्राव की सहायता से निर्मित होता है तथा जो गर्भाधान में समर्थ होता है और प्रसंग में मूत्रेन्द्रिय द्वार से क्षरित होता है । इसके क्षय होने पर मैथुन में अशक्ति, शुक्राविसर्ग तथा क्लैव्य आदि लक्षण होते हैं । यह शरीर का अंतिम धातु (रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र-इन सात को धातु कहते हैं)जो श्वेत, द्रव, स्निग्ध, मधुर और मधु के समान गन्ध वाला होता है । उसे "शुक्र" कहते हैं ।

प्रकुपित हुए दोष-शुक्र जो दूषित करते हैं ।

फेनिलं तनु रूक्षं च.....शुक्रं न तद् गर्भाय कल्पते ॥140॥

(चरक, चिकित्सा अध्याय 30)

अर्थात् वात से दूषित वीर्य (शुक्र) फेनयुक्त, पतला तथा रूक्ष होता है । उसका वर्ण अरुण-कृष्ण होता है और बड़ी कठिनाई से अल्प मात्रा में निकलता है । वायु से दूषित वीर्य गर्भ उत्पन्न करने में समर्थ नहीं होता है

सनीलमथवा पीतमत्युष्णं.....शुक्रं पित्तेन दूषितम् ॥14

(चरक, चिकित्सा, अध्याय 3

अर्थात् पित्त से दूषित होने वाले शुक्र का नीला अथवा पीला होता है । शुक्र अत्यन्त गरम दुर्गन्धयुक्त होता है । जब शुक्र निकलता है-तो लिंग दाह उत्पन्न करते हुए आता है । इसे पित्त से दूषित हु शुक्र कहा जाता है ।

श्लेष्मणा बद्धमार्ग तु भवत्यत्यर्थ पिच्छिलम् ॥142॥

(चरक, चिकित्सा, अध्याय 3

कफ से दूषित, जब शुक्र का मार्ग रुक जाता तो शुक्र अत्यन्त पिच्छिल होता है । इसे कफ से दूषि समझना चाहिए ।

4. अम्बु :- शरीर का जलीयांश भाग अर्थ शरीरज क्लेद, स्वेदादि, जलवाही स्रोतों द्वारा हमारे श शरीर में सदैव ही जल का वहन होता रहता है । "कफ के प्रकोप से बहुमूत्र तथा मूत्र में जलधातु की वृद्धि जल प्रमेह (Poly Urea) होता है । जल इस रस धातु रूप में शरीर में संचार करता है । जलधातु का (उदक क्षय) होने पर भी धातुओं को उसकी आवश्यक तो बनी ही रहती है । यह आवश्यकता "अति तृषा" रूप में प्रकट होती है - जो 'उदकमेह' का ही एक है ।.....तथा क्वचित् विभिन्न रूपों में स्थिर-सा रहता है- यथा नेत्र गोलक, अस्थि-सन्धि आदि में क के रूप में-रसमय जल का यह निर्बाध "कुंड" चारों से त्वचा से आवृत्त और रक्षित है । चरक ने छह त्वचा (त्वचा के विभिन्न स्तरों) में सबसे बाह्य त्वचा को "उदक धरा" (जल का धारण रक्षण करने वाली) दिया है, यथा :-

शरीरे षटः; तद्यथा-उदक धरा.....एताः षडङ्ग शरीरवतस्य तिष्ठन्ति ॥4॥

(चरक, शरीरस्थानम्, अध्याय -

अर्थात् 1. बाहरी त्वचा, जल को धारण करने वाली 2. रक्त को धारण करने वाली, 3. सिध्म

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किलास नामक "कुष्ठ" की उत्पत्ति का स्थान, 4. दाद और सभी कुष्ठों की उत्पत्ति का स्थान, 5. अलजी और विद्रधि की उत्पत्ति का स्थान और 6. जिसके कट जाने पर मनुष्य अन्धे की तरह अपने को अन्धकार में प्रविष्ट हुआ अनुभव करता है और जिस त्वचा के आश्रयभूत काली, लाल, स्थूल मूल वाली अत्यन्त दुश्चिकित्स्य फुंसियाँ पर्वों (गांठ-गांठ) पर उत्पन्न होती है। इस प्रकार ये 6 त्वचायें होती हैं। यह स्पेर्शन्द्रिय का अधिष्ठान है - यह शीत-उष्ण, गुरु-लघु आदि स्पर्शों का ज्ञान कराती है।

5. वसा :- वसा शब्द से मांस स्नेह का ग्रहण करना चाहिए। वसा से कतिपय विद्वान स्नेह या त्वगन्तरीय वसा स्तर का ग्रहण करते हैं। "शुद्ध मांसस्य च: स्नेह: सा वसा परिकीर्त्तिता", विजयरक्षित ने भी वसा का लक्षण - "वसा मांस स्नेह" इसी प्रकार किया है। वस्तुत: सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त स्नेह-विशेष को ही वसा कहना चाहिए।

6. लसीका :-

"यत्तु (उदकं) त्वगन्तरे व्रणगतं लसीका शब्दं लभते ॥15॥

(चरक, शारीरस्थान, अध्याय - 7)

उपरोक्त चरक वाक्य से "लसीका" नाम व्रण से स्राव (रक्त के स्कन्दन के कारण भूत "फाइब्रिन" नामक प्रोटीन तथा उसमें संसक्त कोषों के अतिरिक्त रक्त का द्रवांश) का हैं - जिसे सीरम (Serum) कहा जाता है। लसीका-माँस और त्वचा के मध्य में रहने वाला तरल पदार्थ है। इसके अतिरिक्त शरीर के अन्य भागों में भी लसीका रहती है इसे लिम्फ भी कहते हैं।

आधुनिकों के अनुसार लसीका वाहिनियों एवं वसा लसीका कुण्ड (Cisternachyli) में स्थित एक रंगहीन, पारदर्शक, स्वच्छ, क्षारीय तरल, जिसकी लसीका कोशिकाएँ अथवा लिम्फोसाइट्स (Lymphocytes) मुख्य कौशिकीय घटक होती है।

7. मज्जा :- आयुर्वेद में इसे शुक्र का पूर्व धातु कहा है। आधुनिकों के अनुसार लम्बी हड्डियों में स्थित कोमल ऊतक (अस्थि मज्जा) तथा कशेरूकीय स्तम्भ (Vertebral Column) में स्थित कोमल ऊतक (Spinal Marrow or The Spinal Cord/मज्जा दो प्रकार की होती है- लाल मज्जा, जो हड्डी के सुषिर ऊतक (Cancellous Tissue of the Bone) में पायी जाती है तथा रक्त कोशिकाओं एवं हीमोग्लोबिन के बनने से सम्बन्धित होती हैं। पीली मज्जा-जो बड़ी हड्डियों की अन्तस्थागुहा (Medullary Cavity of the Long Bones) में पायी जाती है और वसा कोशिकाओं तथा संयोजी ऊतक (Fat Cells & Connective Tissue) से बनी होती है - जो रक्त कोशिकाओं एवं हीमोग्लोबिन के बनने में भाग नहीं लेती है।

मज्जागत प्रकुपित वात विकार से मज्जा का शोष तथा मज्जा में निरन्तर शूल ये रोग होते हैं। सन्धि शूल, माँस तथा बल का क्षय, निद्रानाश, निरन्तर वेदना रोग होते हैं।

मज्जा प्रकुपित कफ के विकार में शुक्लनेत्रता रोग होते हैं। **मज्जा गत प्रकुपित पित्त के विकार में** (क) हारिद्रनखता (ख) हारिद्रनेत्रता रोग होते हैं।

8. रस :- आहार पर जठराग्नि की क्रिया से जो रस उत्पन्न होता है, वह शरीर में प्रसृत हो तत्-तत् धातु को प्राप्त हो उसकी पुष्टि करता है। अपने-अपने धात्वग्नि के बल से धातु इस रस धातु का उपयोग कर उसके सार (प्रसाद) भाग से अपनी तथा अपने उपधातु की और मल-भाग से अपने मल की पुष्टि करता है।

दूसरे शब्दों में हम इस प्रकार भी कह सकते हैं कि "सर" गतौ धातु से "रस" शब्द की निरुक्ति हुई हैं। शरीर में निरन्तर गति करते रहने से "रस" कहते हैं। खाये हुए चार प्रकार के आहार का पाचन हो जाने पर जो सार भाग बनता है उसे "रस" कहते हैं।

रस धातु के दोष-दूषित होने पर निम्न रोग होते हैं। 1. अन्न दोष (अन्न के प्रति तिरस्कार), 2. अरुचि (अन्न पर प्रीति होते हुए भी उसके मुख में आने पर उसका स्वाद न प्रतीत होना, अतएव मुख से नीचे अन्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का उत्तर न पाना), 3. रसों का ज्ञान सम्यक न होना, 4. अग्निमान्द्य, 5. अजीर्ण, 6. अंगमर्द (शरीर टूटना), तृप्ति (अन्नपान न लेने पर भी पेट भरा हुआ लगना) 7. हृल्लास (लाला-प्रेसक), 8. अंगसाद (शरीर शौथिल्य, अनुत्साह), 9. गौरव , 10 तन्द्रा, 11. ज्वर 12. हृद्रोग, 13. पाण्डु रोग, 14. स्रोतों का अवरोध, 15 कृशता, 16 मुखवैरस्य (मुख का स्वाद भिन्न-फीका, मधुर इत्यादि होना) 16क. ग्लानि (थकान), 17. तम, 18. असमय में वली (झुर्रियां), 19. पलित (बाल पकना), 20. क्लीवता (पुरुत्वनाश) इत्यादि ।

9. ओज :-

रसादीनां शुक्रान्तानां धातूनां यत् परं तेजस्तत् खल्वोजस्तदेव बलमित्युच्यते, स्वशास्त्रसिद्धान्तात् ॥24॥

(सुश्रुत, सूत्रस्थान, अध्याय 15)

रसादिक तथा शुक्रान्त धातुओं के उत्कृष्ट सार भाग को "ओज" कहते हैं । अर्थात् "रस" से लेकर "शुक्र" पर्यन्त धातुओं का जो उत्कृष्ट तेज है उसे ही ओज कहते हैं । यह कफ जातीय है । अर्थात ओज सब धातुओं का सार है तथा बल का कारण है ।

ओज का स्वरूप :-

ओजः सोमात्मकं स्निग्धं शुक्लं शीतं स्थिरं सरम् ।
विविक्तं मृदु मृत्स्नं च प्राणापतयमुत्तमम् ॥26॥

(सुश्रुत, सूत्रस्थान अध्याय 15)

ओज- सोमात्मक (सौम्य), स्निग्ध, शुक्ल, शीतवीर्य, स्थिर, प्रसरणशील विविक्त अर्थात् श्रेष्ठ गुणयुक्त, कोमल, पिच्छिल और प्राणों का उत्तम आधार है । मनुष्यों का सर्व अवयवयुक्त शरीर इस ओज से व्याप्त रहता है । इस ओज का शरीर में अभाव हो जाने से मनुष्यों की देह विशीर्ण (नष्ट) हो जाता है ।

ओज का स्थान - हृदय

तत्परस्यौजसः स्थानं तत्र...ताः फलन्तीति महाफलाः ॥7-12॥

(चरक, सूत्रस्थान, अध्याय 30)

वह हृदय पर (उत्तम) ओज का स्थान है, हृदय में ही चेतना के आश्रय भूत भावों का संग्रह है । इसीलिए चिकित्सकों ने हृदय को महत् और अर्थ शब्द से कहा है। उस हृदय (स्वरूप) मूल के कारण दश रक्त वाहिनियां "महामूल" वाली कही जाती हैं । ये ही शरीर में ओज का वहन करती हैं और इस शरीर में रस को चारों ओर धमन अर्थात प्रसारित करती हैं जिस पर और अपर ओज से पोषित होकर सभी प्राणी अपने जीवन का निर्वाह करते हैं अर्थात् जीवित रहते हैं जिस ओज के बिना सभी प्राणियों का जीवन नहीं रहता है, जो ओज गर्भ के प्रारम्भ में शुक्र-शोणित के सार रूप में वर्तमान रहता है और जो "ओज"- कललावस्था में रस के सार रूप में रहता है; जब गर्भ में हृदय की उत्पत्ति होती है तब अपने स्वरूप में रहते हुये हृदय में प्रवेश करता है, जिस ओज के नाश होने पर शरीर नाश करता है जो शरीर रस का स्नेह है - जिसमें प्राण प्रतिष्ठित रहता है, हृदय उसी "ओज" को "ओजोवह" स्रोतों द्वारा सारे शरीर में धमन करता रहता है । चरक के सूत्रस्थान के 17 वें अध्याय में प्रकरण वश "चरक" ने मधुमेह की विशद् सम्प्राप्ति दी है । उस पर दृष्टिपात करने से विदित होगा कि मधुमेह में कफ प्रधान दोष-दूष्यों की वृद्धि अपने-अपने वृद्धिकारक कारणों के अतियोगवश हुआ करती है । वृद्धि को प्राप्त इन दोष-दूष्य द्वारा वायु का आवरण होकर प्रकोप होता है । इस प्रकार प्रकुपित यह वायु अपने आशयापकर्ष के स्वभावश ओज को अपने आशय (स्थान) रस धातु में से आकृष्ट व च्युत करता है । इस प्रकार च्युत हुआ यह "ओज" मूत्रमार्ग से प्रवृत्त होता हुआ "मधुमेह" को उत्पन्न करता है ।

मधुमेह में "ओज" का विसर्जन किया जाता है । यह ओज क्या पदार्थ है ? इस प्रकरण में "ओज" की इस प्रकार प्रवृत्ति को स्पष्ट ही "मधुमेह" नाम तंत्रकार ने दिया है । इससे सिद्ध है कि इस रोग में मूत्रमार्ग से जिस द्रव्य की प्रवृत्ति हुआ करती है वह आधुनिकों का "ग्लायकोजन" (Glycogen) ही प्राचीनों का "ओज" है । इस संदर्भ में, विस्तृत वर्णन आगे के लेखों में किया जायेगा । चक्रपाणि ने आचार्य का मूल वचन उद्धृत कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओज के दो भेद बताए हैं ''पर'' या प्रधान तथा ''अपर'' या अप्रधान । इसमें मूत्र मार्ग से ''मधुमेह'' में जिसकी प्रवृत्ति होती है वह ''अपर'' या अप्रधान ओज है । ग्लायकोजन (Glycogen) की क्रियाओं को लक्ष में रखा जाय तो उसकी महत्ता सुस्पष्ट हो सकेगी ।

उदाहरण के लिए - जिस प्रकार दूध की विकृति-दधि, तक्र, घृत आदि है, इक्षु-विकृति गुड़ादि है, उसी तरह ''मधुमेह'' में मूत्र में जानेवाला पदार्थ - यह ''ओज'' की विकृति से निर्मित दोष-दूष्य समूर्च्छनाजन्य पदार्थ होगा । यह ''ओज'' वायु के द्वारा विकृत होता है, मेद, मांस दूष्यों के क्लेद के साथ मिलकर दुष्ट होता है, जैसे अस्थि-विकृतियों से अस्थि-पोषक धातुओं का अल्पाल्पशः क्षरण होता है, वैसे ही विकृत ''ओज'' का अंश भाग से निष्क्रमण होता है ऐसा मानना चाहिये । ओजोवह धमनियों में रसाश्रय से ''ओज'' रहता है, इसीकी विकृति होकर ''प्रमेह'' में क्षयावस्था है तथापि इस ओज के क्षय से एवं चिरंतन क्षय की यंत्रणा जारी रहने से ''हृदयस्थ'' पर ओज भी स्वस्थ नहीं रह सकता और वह ओज जो हृदय की रचना-विशेष में, उसे बनाए रखने में कार्य करता है (कुछ एन्जाइम या हार्मोन्स (Enzyme or Hormones) जैसा पदार्थ उस पर विकृति-निर्माण कर कालान्तर से ''हृदय रोग'' में कारण हो सकता है ।

हृदि तिष्ठति यच्छुद्धं रक्तमीषत्सपीतकम् ।
ओजः शरीरे संख्यातं तन्ना शान्ना विनश्यति ॥74॥

(चरक, सूत्रस्थान, अध्याय 17)

चरक ने सूत्र स्थान के 17 वें अध्याय में हृदयरोग, प्रमेह, शिरोरोग तीनों का वर्णन किया है और इसी स्थल पर हृदय के ओजाश्रय का भी स्मरण किया है- यह स्थान में रखने योग्य बात है ।

प्रमेह में धातुओं का क्षय होता है तथा अग्नि भी, विशेषकर धात्वग्नि भी मन्द रहती है जिससे यक्ष्मा की भांति इस में भी ओज का निर्मल कम होता है और रस रूपी ओज का ही क्षय होता है । मधुमेह की सम्प्राप्ति में ओजो-दुष्टि का स्पष्ट वर्णन भी प्राप्त होता है ।

10 मांस :- यहां यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि मांसपेशी ही केवल आयुर्वेदोपदिष्ट मांस या मांस धातु नहीं है । सत्य यह है कि ये मांसधातु-प्रधान अवयव विशेष है । जैसे प्रसिद्ध ''जल'' भारतीय वाङ्मय तथा आयुर्वेद में जल महाभूत नहीं है, एवं मिट्टी पृथ्वी महाभूत नहीं हैं, किन्तु क्रमशः जल महाभूत प्रधान तथा पृथ्वी महाभूत प्रधान पदार्थ विशेष है । यही स्थिति ''मांसपेशी'' के सम्बन्ध में भी समझनी चाहिए । मांस धातु शरीर के अन्य अवयवों में भी अनुस्यूत (ओतप्रोत) रहता है । उसके क्षय से पेशियों के अतिरिक्त अन्य अवयवों में भी वैकारिक लक्षण अभिव्यक्त होते हैं । जैसे ''धमनी शैथिल्य'', इससे यह समझा जा सकता है कि धमनियों में (रस-रक्त वाहिनियों में) भी ''मांस धातु'' की विद्यमानता होती है तथा उसके साम्य से उनकी क्रिया का साम्य रहता है एवं क्षय से उनमें कर्मक्षय होता है । अर्श को आयुर्वेद में मांसाकुर कहा है, उसमें मूल यही है कि सिराओं के घटक मांसमय मण्डल की क्षीणता और दुर्बलता के परिणामस्वरूप ही ये फूल जाती है ।

1. मांसगत प्रकुपित ''वात'' विकार -

1. अंग गौरव 2. अंगों में अधिक तोद, 3. दण्ड, मुष्टि से आहत के समान पीड़ा, 4. अंगरूजा, 5. अंगों की थकावट, 6. सशूल ग्रंथियां, 7. सतोद् ग्रंथियाँ, 8. भ्रम, 9 राग 10, भ्रम ।

2. मांसगत प्रकुपित ''पित्त'' विकार :-

1. मांसपाक 2. मांस प्रकोप ।

3. मांसगत प्रकुपित ''कफ'' विकार :-

1. अर्बुद, 2. अपची, 3. आर्द चर्म से आच्छादित गात्र का अनुभव, 4. अति गौरव ।

प्रमेह में ''मेद'', ''मांस'' और शरीरज क्लेद विशेष रूप से सभी प्रमेहों में दूषित होते हैं । शेष मज्जा आदि दूष्य तो विशिष्ट मेहों में ही दूषित होते हैं । यथा-लसिका, वसा, मज्जा और ओज केवल वातजमेह में दूषित होते हैं । पैत्तिक और कफज में नहीं - ऐसा मधुकोषकार का मत है । यही मत चरक और सुश्रुत का भी है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुष्ठ में श्रेष्ठ खदिर

प्रो०यु०डी० रावल, एम०डी० (आयुर्वेद)

नाम :- लै० एकेशिया कैटेचु (Acacia Catechu Willd.)

हिन्दी :- खैर ।

अंग्रेजी :- कच्छट्री (Cutch Tree)

खदिर को गुजराती में 'खैर' कहते हैं । उसका कत्था चूने के साथ मिलाकर पान पर लगाकर उसमें मुखवास के अन्य द्रव्य डालकर भोजन के बाद पान खाने का रिवाज समाज में प्रचलित था । खदिर के सेवन से मुखरोग-दंतरोग एवं कण्ठ रोग कम होते थे । आजकल खाने-पीने का शौक बढ़ गया है, लोगों के पास पैसा ज्यादा है, लेकिन स्वास्थ्य के लिए प्रचलित परंपरायें क्षीण होती चली जा रही है या नष्ट प्राय: हो गई है । 'ताम्बुलस्य त्रयोदशगुणा: स्वर्गेऽपि तेदुर्लभा:' ऐसा पृथ्वीलोक का अत्यन्त स्वास्थ्यप्रद खदिर आजकल प्रतिदिन के सेवन में से निकल गया है और मुंह के-दंत के-जिह्वा के-गले के केन्सर के रुग्ण उतने ही बढ़े हैं । कोई केन्सर का संस्थान इसके बारे में जनता को ज्ञान नहीं दे रहा है । 'प्रमेह' भी आजकल इतना बढ़ा है और खदिर एवं सुपारी खाने का रिवाज भी कम हो गया है । 'मधुमेह' की चिकित्सा में 'खदिरक्रमुककषाय' को श्रेष्ठ माना गया है । श्वित्र में भी खदिर एवं खदिरसार का उपयोग प्रशस्त कहा गया है । सभी प्रकार के कुष्ठ के लिए 'खदिर' को श्रेष्ठ औषध बताया गया है । भगन्दर, अपची, रक्तदोष एवं पांडुरोग को दूर करनेवाला खदिरसार है । 'खदिरादिवटी' केवल कास का औषध रह गया है । जितना आभ्यंतर प्रयोग में खदिर श्रेष्ठ है उतना ही लेप, उद्वर्तन, स्नान, धूपन, अवचूर्णन आदि बाह्य प्रयोग में प्रशस्त है । खदिर तैल एवं खदिरादिवटी का मुख रोगों के लिए उपयोग करने को चरक ने बताया है । पहले के समय में शायद रोमांतिका, मसूरिका, विस्फोट आदि रोगों में संक्रमण को 'खदिराष्टक क्वाथ' का प्रयोग करते थे, जो रोगों को रोकता है और शीघ्र परिणामदायी है । आजकल खाने में और औषधोपचार में इतना अपचार हो गया है कि 'एलर्जिक स्कीन डिसीज' बढ़ गये है । उसमें तरह-तरह के अत्यन्त आधुनिक उपचार होने के बावजूद परिणाम में 'Side effects' ज्यादा देखने को मिलते हैं । उसे रोकने के लिए 'खदिर' को 'उदर्दप्रशमन' बताकर 'चरक' ने सभी प्रकार के 'एलर्जिक स्कीन डिसीज' के लिए एक उत्तम औषध दिया है, लेकिन अफसोस की बात यह है कि वैद्यों में भी ऐसा औषध इन व्याधियों में अधिक उपयुक्त होता हो ऐसा नहीं देखा गया । आयुर्वेद में अनुसंधानात्मक कार्य करनेवाले सभी को 'खदिर' जैसे औषध पर 'एलर्जिक स्कीन डिसीज' में कार्य करके उसका प्रचार करना आवश्यक है ।

रस - तिक्त, कषाय ।

गुण - लघु, रूक्ष ।

वीर्य - शीत ।

विपाक - कटु ।

प्रभाव - कुष्ठध्न ।

कफपित्तशामक है । दन्तत्य-दांतों के लिए हितकर भेदोघ्न, कंडू, कुष्ठ, श्वित्र, कृमि, व्रण, प्रमेह, ज्वर शोथ, कास, अरुचि आदि को दूर करने वाला है ।[1]

चरक एवं अष्टांगसंग्रहकार ने 'कुष्ठध्न' एवं 'उदर्दप्रशमन' दशेमानि में 'खदिर' की गणना की है ।[2] सुश्रुत ने 'सालसारादिगण' में 'खदिर' की गणना की है । 'सालसारादिगण' कुष्ठ, प्रमेह, पांडुरोग को नष्ट करता है एवं कफ और मेदोधातु का शोषक है ।[3] अष्टांगहृदयकार ने 'असनादिगण' में उसकी गणना की है । 'असनादिगण' श्वित्र, कुष्ठ, कृमि, प्रमेह, पांडु-रोग को नष्ट करता है और मेदोदोष को शान्त करता है ।[4] चरक एवं संग्रहकार ने कुष्ठ नाशक द्रव्यों में 'खदिर' को श्रेष्ठ कहा है ।[5] अष्टांग हृदयकार 'वाग्भट' ने भी 'कुष्ठ' में खैरसार का सेवन करने को कहा है ।[6] 'सुश्रुत' ने भी कुष्ठ में खदिर को सर्वथोपयोगित्य दर्शाते हुए कहा है कि 'जिस प्रकार वृद्धि को प्राप्त हुआ (महा) कुष्ठ अपनी शक्ति से रोगी का अन्त कर देता है या रोगी को मार डालता है, उसी

डी-11/2 गवर्नमेन्ट क्वाटर्स, वस्त्रापुर, गुरुकुल के पास ड्राईव-इन रोड, अहमदाबाद-380052

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकार सम्पूर्ण रूप में प्रयोग में लाया गया खैर अपनी शक्ति (वीर्य, प्रभाव) से कुष्ठ रोग का नाश करता है ऐसा कहा है ।[7]

खदिर रस :-

आजकल वन्य सम्पदा के रूप में सुरक्षित न रहते हुए खदिर के वृक्ष कम होते जा रहे हैं । इस कारण ऐसी भूमि में उसकी कृषि होनी चाहिए । कोई उत्साही किसान इस बात की ओर ध्यान दे ऐसी नम्र विनती है । प्रशस्त भूमि में उत्पन्न, कीडों से नष्ट न किये गये मध्यमवय (तरुण) खैर के वृक्ष को चारों ओर से खोदकर, मुख्य जड़ को काटकर इसके अन्दर लोहे का घड़ा इस प्रकार रखें, जिससे कि गिरता हुआ खदिर का रस उस घड़े में एकत्रित हो जाय । फिर इस खैर को चारों ओर गोबर और मिट्टी का लेप करके लकड़ी, उपले आदि से युक्त ईंधन द्वारा आग लगा देवें जिससे जलने पर इसका रस नीचे घड़े में एकत्रित हो जाय । तब ज्ञात हो जाय कि घड़ा रस से भर गया है तब इस घड़े को निकालकर, रस छानकर दूसरे पात्र में सुरक्षित स्थान में रखें । फिर विधान अनुसार आँवले का रस, मधु और घृत मिलाकर इस रस की मात्रा का सेवन करने को कहा गया है ।[8] औषधि का पाचन होने पर 'भल्लातक' विधान में कहे गये आहार-विहार का सेवन तथा त्याग करना चाहिए ।[9] इससे कुष्ठ, भगन्दर, अपची, प्रमेह, रक्तदोष एवं पांडुरोग नष्ट होते हैं ।[10] इस औषधि का एक प्रस्थ (64 तोला) सेवन करने पर आयु में सौ वर्ष की वृद्धि होती है ।[11] इसका एक प्रस्थ सेवन करने पर बुढ़ापा दूर हो जाता है ।[12] बुढ़ापे में 'श्वित्र' या 'स्कीन डिसीज' के कारण चिन्ता बढ़े तो व्यक्ति को इसके सेवन की ओर ध्यान देना चाहिए ।

खदिरक्वाथ :-

भोजन-पान के लिए खदिरक्वाथ का प्रयोग करने को कहा गया है ।[13]

खैर का कषाय घी और मधु से, त्रिफला क्वाथ से अथवा विडंग कल्क के साथ लेने पर कुष्ठ का नाश करता है जिस प्रकार मन में स्थित धर्मरागादि कषाय को नष्ट करता है ।[14] एकतुला (100 पल या 400 तोला) खैर सार को एकद्रोण (1024 तोला) जल में पकावें और सोहलवां हिस्सा या भाग क्वाथ शेष रहने पर अग्नि से उतारकर सुरक्षित स्थान में रखें । आँवले का रस, मधु और घी मिलाकर इसका सेवन करें ।[15] आँवला तथा खैर की छाल के काढ़े में बाकुची के चूर्ण का प्रक्षेप डालकर पीने से शंख तथा चन्द्र के समान श्वेतकुष्ठ भी दूर होता है ।[16] आँवले तथा खैर की छाल के काढ़े में मधु डालकर प्रतिदिन पीने से शंख, कुन्दपुष्प तथा चन्द्र के समान श्वेत श्वित्र भी नष्ट होता है ।[17] 'खदिराष्टक क्वाथ' का पान करने से रोमान्तिका, मसूरिका, कुष्ठ, विसर्प, विस्फोट, कण्डू आदि रोग दूर होते हैं ।[18] शर्नेमेही को खैर का क्वाथ एवं क्षौद्रमेही (मधुमेही) को खदिर और सुपारी का क्वाथ लेने को कहा है ।[19]

क्वाथ 2 से 4 चम्मच क्वाथ विधि से प्रातः अनन्नकाल में । बार लेना चाहिए ।

दोषों के बाहर निकल जाने पर खैर के क्वाथ से बनायी गए यवागू पीने के लिए देने को कहा है ।[20]

शीतकषाय :-

खैर का शीतल कषाय मधु और रसौंत के साथ पीने से त्वक् रोग, कण्ठरोग, अपची, गुल्म, प्रमेहों को हठपूर्वक नष्ट करता है जिस प्रकार की वायु का प्रचण्ड वेग बादलों को छिन्न-भिन्न करता है ।[21]

चूर्ण :-

खैरसार के चूर्ण का प्रतिदिन प्रातःकाल सेवन करके कुल मिलाकर 1 तुला (400 तोला) तक सेवन करना चाहिए ।[22] चूर्ण । से 3 ग्राम 2 बार पानी से लेना चाहिए ।

खदिरागुटिका :-

सभी प्रकार के दांत, मुख और गले के रोग में उत्तम औषधि है । दांतों का हिलना या गिरना, दन्तसौषिर्य, दंत क्रिमि, मुखपाक, लयूकोप्लेकीया, मुखदौर्गन्ध्य, स्राव, उपलेप, पिच्छिलता, स्वरभेद आदि को दूर करता है ।[23] 'खदिरादिवटी' व्याधि के अनुसार 2 बार-3 बार या 4 बार मुँह में रखकर चूसने के लिए कहना चाहिए । मुखपाक (दंत, दंतवेष्ट के रोग, जिह्वा के रोग और कंठरोगों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि केन्सर भी हो तो इसका प्रयोग करना चाहिए ।

घृतः-

चरक ने रक्त पित्त प्रधान कुष्ठों में खदिर सार के क्वाथ और कल्क से सिद्ध 'खदिर घृत' का सेवन करने को कहा है ।[24] महाखदिर घृत को उत्कृष्ट कुष्ठनाशक कहा है । पान एवं अभ्यंग करने से सभी प्रकार के कुष्ठ नष्ट होते हैं ।[25] महाखदिर घृत में महातिक्तकघृत के सभी द्रव्य आ जाते हैं और इसके बावजूद इसमें खदिर, शिंशपा, विजयसार आदि डालकर इसको महाखदिर बताया गया है । इस कारण संतर्पण से होने वाले कुष्ठ, मुखरोग, गलरोग, हृद्रोग, आदि में यह सफल है । खैर सार के क्वाथ से सिद्ध भेड़ी के घृत का सेवन करने को कहा है।[26] वाताधिक्य वाले कुष्ठ में कृश व्यक्ति को भेड़ी के घृत का सेवन कराने से कुष्ठ के साथ कंडूयन, अनिद्रा, चिन्ता आदि अधिक हो तो भी लाभ होता है । खदिरघृत शमन औषध के रूप में देना हो तो 10 या 20 ग्राम खाने के पहले 1 बार लम्बे दिनों तक देना चाहिए । उसी से कुष्ठ, महाकुष्ठ, श्वित्र आदि दूर होते हैं । यदि उनमें शोधन करना हो तो 20 से 140 ग्राम तक 2-2 चम्मच, 4-4 चम्मच आदि क्रम से 14 चम्मच तक 7 वें दिन पहुँचना चाहिए और बाद में योग्य शोधन कराना चाहिए ।

खदिरारिष्ट :-

खदिरारिष्ट को भी सभी प्रकार के कुष्ठों का नाश करने वाला कहा है । पांडुरोग, अर्बुद, ग्रन्थि, कृमि, कास, प्लीहोदरादि रोगों को दूर करता है ।[29] आसव कल्पना को शीघ्र फलदायी बतायी गई । केन्सर के जिस प्रकार में कंडूयन ज्यादा होता हो ऐसे होचकिन्स डिसीज में जिसमें प्लीहा बढ़ जाती है और प्लेटलेट्स कम हो जाती है ऐसे 'Chronic idiopathic thrombocytopenic purpura' भी ठीक होता है । इन व्याधियों में उपद्रव के रूप में या उत्पादक कारण के रूप में ग्रन्थि, पांडुरोग, कृमि, कास आदि हो तो लाभ करता है ।

खदिरारिष्ट 2 चम्मच 2 बार समभाग जल मिलाकर खाने के पहले या बाद में देवें ।

बाह्य प्रयोग :- स्नान करने में[28], लेप में[29], धूप में[30], एवं उद्वर्तन में[31], खदिर का प्रयोग करने को कहा है ।

तैल :-खदिर सार का तैल भी कुष्ठ रोगों में हितकर बताया है ।[32]

खदिरादि तैल के प्रयोग से (गण्डूष या कवल धारण करने से दांतों का हिलना या गिरना, दंत सौषिर, कृमिदंत, मुखपाक, मुखदौर्गन्ध्य आदि को दूर करता है। खदिरादि तैल यथावश्यक देना चाहिए । दंत-दंतमूल के मुख के, जिह्वा के या जिह्वा मूल के असाध्य व्याधि में उसके केन्सर भी समाविष्ट है यदि ऐसा हो तो खदिरादि तैले का गंडूष या पान और खदिर क्वाथ का पान उपयुक्त है ।

प्रयोज्य अंग :- त्वक्, खदिरसार (कत्था)

विशिष्ट योग :- खदिराष्टक क्वाथ, खदिरकूर्च, खदिरादि वटी, खदिरघृत, महाखदिरघृत, खदिरारिष्ट, खदिर तैल या खदिरादि तैल ।

खदिर कुष्ठरोग जिसमें महाकुष्ठ का अंतर्भाव हो जाता है और श्वित्र में सर्वाधिक लाभप्रद है । इसके अलावा भगन्दर, अपची, ग्रन्थि, अर्बुद आदि संतर्पण जन्य व्याधियों में भी इसको लाभप्रद बताया गया है । इसके अलावा रोमांतिका, मसूरिका, विस्फोट आदि संक्रमणजन्य एवं पित्तप्रधान व्याधियों में भी इसको अच्छा कार्यक माना है । आजकल विस्फोट या अन्य त्वग्रोगों में जब स्टीरॉयड भी नाकाम हो जाते हैं ऐसी व्याधियों में महाखदिरघृत या क्वाथ या चूर्ण उपयुक्त है । इसी कारण चरक ने इसको उदर्द प्रशमन एवं कुष्ठघ्न द्रव्यों में श्रेष्ठ बताया है और सुश्रुत ने भी साल सारादिगण में वाग्भट्ट ने असनादिगण में स्थान देकर इस बात की इंगित किया है ।

संदर्भ :-

1. खदिरः शीतलोदन्तयः कण्डूकासारुचिप्रणुत् ।
तिक्तः कषायो मेदोघ्नः कृमिमेहज्वरव्रणान् ॥
श्वित्रशोथाम पितास्र पाण्डुकुष्ठ कफान् हरेत् ।
भा.प्र.नि. वटादिवर्ग (15) 31-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

2. च.सू.अ. 4/11(13), च.सू.अ. 4/17 (33) अ.सं. सू.अ. 15 ।
3. सु.सू.अ. 38/12-13 ।
4. अ.हृ.सू.अ. 15/18-20 ।
5. 'खदिरः कुष्ठध्नानाम्' च.सू.अ. 25/40, अ.सं.सू.अ. 13 ।
6. कुष्ठेषु सेव्यः खदिरस्य सारः । अ.हृ.उ.तं.अ. 40/50 ।
7. सु.चि.अ. 8/71 ।
8. सु.चि.अ. 10/13, अ.सं.चि.अ. 21, च.द. 50 कुष्ठचिकित्सा 1/65 ।
9. सु.चि.अ. 10/13, अ.सं.चि.अ. 21 ।
10. अ.सं.चि.अ. 29 ।
11. सु.चि.अ. 10/13 ।
12. उ.सं.चि.ऊ. 29 ।
13. च.चि.ऊ. 7/157, सु.चि.ऊ. 8/5, सु.नि.ऊ. 7/70, च.द. 50 कुष्ठ चिकित्सा/73, यो.र. कुष्ठ चिकित्सा ।
14. अ.सं.चि.अ. 29
15. सु.चि.ऊ. 10/13 ।
16. च.द. 50 कुष्ठ चिकित्सा 1/70, भा.प्र.ख. 24 ऊ. 54/154, यो.र. कुष्ठ चिकित्सा, भै.र. 54 कुष्ठ रोग चिकित्सा प्रकरणम् /54 ।
17. भै.र. 54 कुष्ठ रोग चिकित्सा प्रकरण/53 ।
18. च.द. 54 मसूरिका चिकित्सा/25-26, यो.र. कुष्ठ चिकित्सा, यो.र. शीतला चिकित्सा, भै.र. 59 मसूरिका चिकित्सा प्रकरणम् । 40-41 ।
19. शनैर्मेहिनं खदिरकषायम्, क्षौद्रमेहिनं खदिर क्रमुककषायम् । सु.चि.अ. 11/7
20. सु.चि.अ. 8/66 ।
21. अ.सं.चि.अ. 21 ।
22. सु.चि.अ.10/13 ।
23. च.चि.अ. 26/206-214 ।
24. च.चि.अ. 7/135 ।
25. च.चि.अ. 7/152-156, च.द. 50 कुष्ठ चिकित्सा/111-115, यो.र. कुष्ठ चिकित्सा, भै.र. 54 कुष्ठ रोग चिकित्सा प्रकरणम्/261-265 ।
26. सु.चि.अ. 10/13 ।
27. भै.र. 54 कुष्ठ रोग चिकित्सा प्रकरणम् । 365-370, यो.र. कुष्ठ चिकित्सा, शा.सं.भ.खं.अ. 10/60-65 ।
28. च.चि.अ. 7/157, सु.चि.अ. 7/5, सु.चि.अ. 7/70, च.द. 50 कुष्ठ चिकित्सा/73, यो.र. कुष्ठ चिकित्सा ।
29. च.चि.अ. 7/157, च.द. 50 कुष्ठ चिकित्सा / 73 यो.र. कुष्ठ चिकित्सा ।
30. च.चि.अ. 7/157 ।
31. च.र. 50 कुष्ठ चिकित्सा/ 73, यो.र. कुष्ठ चिकित्सा।
32. च.चि.अ. 7/117 ।
33. च.चि.अ. 26/206-214 ।

बैद्यनाथ

पंचसकार चूर्ण

यह चूर्ण पेट साफ करता है तथा पाचन शक्ति और भूख बढ़ाता है । इससे पेट के कृमि भी दूर होते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शैशवीय उदर रोग का निदान एवं चिकित्सा

* डा० चंचल शर्मा, एम.डी.(आयु.),पी.एच.डी.
** डा० राकेश शर्मा, एम.डी. (आयु.)
*** डा० जय पाल गर्ग, डा० रेनु राव, डा० शीतल शर्मा, बी.ए.एम.एस

उदर रोग सामान्य परिचय

बाल्यावस्था में सर्वप्रथम बालक माता से दूध ग्रहण करता है । अतः कोई भी दुग्ध दुष्टि उसके उदर रोग का कारण हो सकती है । अतः सर्वप्रथम उदररोगों का ही होना संभव है ।

आचार्य काश्यप के अनुसार उदर रोग -

संख्या-9

1. अतिसार

देह वैवर्ण्यमरतिर्मुखग्लानिरनिद्रता ।
वातकर्मनिवृतिश्चेव्यतीसाराग्रवेदनाः ॥

(का.सू. 25/14)

लक्षण :-

1. शरीर विवर्णता
2. मुखग्लानि, अरति
3. अनिद्रा
4. वात कर्मों की निवृति ।

2. अलसक

शिरो न धारयति यो भिद्यते जृम्भते मुहुः
स्तनं पिबति नात्यर्थं ग्रथितं छर्दयत्यपि ।
विषादाध्मानारूचिभिर्विद्यादलसकं शिशोः ॥

(का.सूत्र. 25/27-28)

लक्षण :-

1. शिर का एक स्थिति में स्थिर न रहना
2. शरीर में भेदन वत पीड़ा
3. पुनः-पुनः जृम्भा
4. अधिक स्तनपान नहीं करना
5. ग्रथित वमन
6. विषाद, आध्मान, अरूचि

3. आनाह

विशालस्तब्धनयनः पर्वभेदारतिक्लमी ।
संरूद्धमूत्रानिलविट् शिशुरानाहवेदनी ॥

(का.सूत्र 25/19)

लक्षण :-

1. नेत्र विस्तृत व स्तब्ध
2. सन्धियों में वेदना
3. अरति, क्लम
4. अपान व मल मूत्रावरोध

4. आमदोष

स्तैमित्यमरूचिर्निंदा गात्रपाण्डुकता रतिः ।
रमणाशनशय्यादीन् धात्री च द्वेष्टि नित्यशः ॥
अस्नातः स्नातरूपश्च स्नातश्चास्नातदर्शनः ।

लक्षणः-

1. स्तिमितता
2. अरूचि, निद्रा, अरति
3. पाण्डु
4. क्रीड़ा, भोजन, निद्रा व रात्रि से द्वेष
5. अस्नान होने पर भी स्नान किया हुआ की प्रतीति व स्नान करने पर अस्नान प्रतीति

5. उदर शूल

स्तनं व्युदस्यते शैति चोतानश्चावभन्यते ।
उदरस्तब्धता शैत्यं मुखष्वेदश्च शूलिन ॥

(का.सू. 25/15)

लक्षणः-

1. स्तनपान त्याग
2. रूदन
3. उत्तार शयन
4. उदर स्तब्धता
5. शैव्य
6. मुखस्वेद

* रीडर एवं विभागाध्यक्ष, कौमारभृत्य विभाग, हि.प्र.रा.आयु.स्ना.शि. एवं अनु. सं., पपरोला
** लेक्चरर, कौमारभृत्य विभाग, हि. प्र. रा. आयु. स्ना. शि. एवं अनु. संस्थान, पपरोला
***आयुर्वेद स्नातक, हि. प्र. रा. आयु. स्ना. शि. एवं अनु. संस्थान, पपरोला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. छर्दि

अनिमितमभीक्ष्णं च यस्योदगारः प्रवर्तते ।
निद्राज म्भापरीतस्य छर्दिस्तस्योपजायते ॥
(का.सू. 25/16)

लक्षण :-

1. अकारण पुनः-पुनः उद्‌गार
2. निद्रा व जृम्भा

7. विसूचिका

दह्यन्ते सूच्यन्ते भज्यन्ते निष्टन्त्यति ।
विसूचिकायां बालानां दि, शूलं च वर्धते ॥
(का.सू. 25/26)

लक्षण :-

1. अंगों में दाह, तोद
2. श्वास कष्ट
3. हृदय शूल

8. पाण्डु

नाभ्या समन्ततः शोथः श्वेताक्षिनखवक्त्रता ।
पाण्डुरोगे ग्निसादश्च श्वयथुश्चाक्षिकूटयोः ॥
(का.सू. 25/34)

लक्षण :-

1. नाभि के चारो ओर शोथ
2. नेत्र श्वेत
3. नख वक्रता
4. अग्निमांद्य
5. नेत्र के चारो ओर शोथ

9. कामला

पीत्तचक्षुर्नखमुखविण्मूत्रः कामलार्दितः ।
उभयत्र निरूत्साहो नष्टाग्निरूधिरस्य हः ॥
(का.सू. 25/35)

लक्षण :-

1. पीत चक्षु, नख, विट् व मूत्र
2. पाण्डु व कामला दोनों में जठराग्नि नाश व उत्साह शून्यता तथा रूधिर आकांक्षा ।

अन्य आचार्यों द्वारा वर्णित उदर रोग एवं चिकित्सा

1. छर्दि

स्वरूपः-छर्दि स्वतंत्र व्याधि नहीं अपितु लक्षण स्वरूप माना है ।

चिकित्सा

चूर्ण = अतिविषा + मधु
= अतिविषा + कर्कटश्रृंगी + पिप्पली + मधु (अ.ह.उ. 2/57)

2. क्षीरालसक

निदान

धात्री द्वारा त्रिदोष प्रकोपक आहार-विहार दुष्ट स्तन्य

लक्षण :-

1. जल सम स्वच्छ मल, फेनयुक्त
2. आमगन्धी जल
3. विभिन्न वर्ण व वेदनायुक्त
4. उदर गुरूता
5. वमन
6. अंग भङ्ग व विक्षेप
7. नासा, अक्षि, मुख पाक

चिकित्सा

शोधन — वमन — धात्री / बालक

शमन चिकित्सा — वचादि क्वाथ, हरिद्रादिगण महाकषाय, बिल्व मज्जा प्रयोग
(अ.सं.उ. 2/17-18)

3. अतिसार

लक्षण :-

1. मल का एकदम तनु आना
2. मल संग श्लेष्मा व रक्त का आना
3. बालक का निष्क्रिय होना

चिकित्सा

चूर्ण = धाय पुष्प चूर्ण + मधु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्वाथ = बिल्व, मुस्तक व नागर क्वाथ
जल = वचा, अतिविषा साधित जल
पेया = हरीतकी, पिप्पलीमूल, बिल्व से निर्मित पेया ।

(अ.ह.चि. 9/6, 8, 14)

बालातिसार में उपयोगी अन्य योग

1. चूर्ण - धातक्यादि चूर्ण
   - बाचतुर्भद्र चूर्ण
   - लवंग चतुः सम
   - दाडिमचतुः सम (भै.र.)
2. क्वाथ - धातक्यवादि क्वाथ (शा.सं.)
   - कर्करादि क्वाथ (भै.र.)
3. रस - महागंधक रस
   - कर्पूर रस (भै.र.)
   - बालार्क रस (रसयोग सागर)
4. घृत - चांगेरी घृत (च.द.)
5. लेह - धात्कयादि लेह (च.द.)

4. अजीर्ण

लक्षण :-

1. विष्टब्धाजीर्ण : तोद, शूल, अपक्वअन्न
2. विदग्धाजीर्ण : मुख में अम्लता
3. आमाजीर्ण : मुखमाधुर्य
4. रसशेष : अरूचि, गुरूता, प्रसेक

चिकित्सा :-

क. लंघन
ख. शीतल जल पान
ग. उदर स्वेदन
घ. शुण्ठी + हरीतकी + मधु चूर्ण

(सु.सू. 46/504, 511)

अन्य योग

1. चूर्ण - पाचन चूर्ण, लवणभास्कर चूर्ण, अग्निमुख, बालचतुर्भद्र (सि.यो.सं.)
2. वटी - महाशंखवटी, हिंग्वादि वटी, लहसुनादि वटी, संजीवनी वटी
3. रस - बालार्क रस, कुमारकल्याण रस (रस. सा. सं)
4. आसव अरिष्ट - अरविन्दासव, कर्पूरासव
5. कृमिजन्य उदर रोग

परिचय व लक्षण

बालकों में प्रायः पुरीष जन्य कृमि पाए जाते
स्वरूप - वर्ण श्वेत
आकृति - सूक्ष्म
लक्षण - मेदवत पीड़ा, अग्निमांद्य, पाण्डु, मलावरोध, प्रसेक, अतिसार ।
पुरीषज कृमि - अजव, वियव, किप्प, चिप गण्डूपद, चुरू, द्विमुख

चिकित्सा :-

निदान परिवर्जन
पानार्थ - पारिभद्र पत्र स्वरस + मधु
कृमिघ्नावलेह - विडंगचूर्ण + मधु
कृमिघ्न तैल - सुरसादि गण तैल
अन्य - यव निर्मित भस्म
अजामूत्र प्रयोग - पिप्पलीमूल चूर्ण + अजा

(सु. 54/27-3

अन्य योग

1. रस - कृमिमुद्गर रस (भै.र.) कृमिकालान रस, कृमि कुठार रस (र.र.सु.)
2. वि. गरिष्ट (भै.र.)
3. भल्लातक तैल (चरक)

6. मृत्तिकाभक्षणजन्य पाण्डु

लक्षण :-

गण्ड, अक्षिकूट, नाभि व मूत्रेन्द्रिय में शोथ
कोष्ठ में कृमि उत्पत्ति
रक्त व कफयुक्त अतिसार

चिकित्सा

निदान परिवर्जन
कटु व तिक्त रस मिश्रित मृतिका भक्षण
योग - व्योषादि घृत, नागकेसर, मुलेठी, यवक्षार शार्ङ्गधर द्वारा सिद्ध घृत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्य योग

अ. पाठा, वायविडंग, हल्दी, दारूहल्दी, नागरमोथा द्वारा सिद्ध घृत का बालक द्वारा लेहन । (अं. सं. उ. 2/146)

7. कामला

निदान

1. पाण्डुरोगी द्वारा पित्तवर्द्धक आहार का अत्यधिक सेवन ।

2. धात्री द्वारा पित्तवर्द्धक आहार (दौर्गन्ध्य कामला) ।

लक्षण :-

नेत्र - हरिद्र वर्ण, त्वचा, नख व मुख पीत वर्ण दाह, अविपाक, शिथिलता ।

चिकित्सा :-

1. संशोधन, स्नेहन, मृदु विरेचन ।

लक्षण :-

इन्द्रियां द्वारा समुचित विषय ग्रहण नहीं ।

2. संशमन चिकित्सा

चूर्ण - नवायस चूर्ण

वटी - मण्डूरवटक, शिलाजतुवटक

रसायन - योगराज रसायन

आसव अरिष्ट - बीजक अरिष्ट, धात्री अरिष्ट (च.चि. 16)

अन्य योग

लौह - धात्री लौह, नवायस लौह, पंचामृत लौह

वटी - आरोग्यवर्धनी वटी

रस - प्राणवल्लभ, कुमारकल्याण रस, कामलाहर रस

आसव अरिष्ट - रोहितकारिष्ट, कुमार्यासव, लोहासव

क्वाथ - फलत्रिकादि क्वाथ

घृत - पंचगव्यघृत, महातिक्तघृत, कल्याणघृत

अब भूल जाइये महीने की चिंता

सुन्दरी कल्प के नियमित सेवन से सिर्फ आपका मासिक तनाव दूर नहीं होता है बल्कि आपके शरीर को मिलती है :

* मासिक धर्म की अनियमितता एवं दर्द से राहत । * रक्त शुद्धिकरण से कान्तियुक्त त्वचा ।
* पोषण से सम्बन्धित विकारों का समाधान ।

आज ही सुन्दरी कल्प अपनाएँ और अपने शरीर को रखें स्वस्थ एवं निरोग, महीने भर ।

बैद्यनाथ

सुन्दरीकल्प फोर्ट

"अब आप भी अपना ख्याल रखिए"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बरसाती रोगों का सामान्य उपचार

कविराज डा० दिवाकर ठाकु

भीषण गर्मी बर्दाश्त करने के बाद वर्षा ऋतु का आगमन अत्यन्त आनन्दकर होता है । वर्षा की फुहारों से तन-मन प्रसन्न हो जाता है, धीरे-धीरे चारों ओर हरियाली दिखाई देने लगती है । स्वास्थ्य की दृष्टि से यह मौसम नाजुक होता है । आकाशीय वर्षा से भूमि से वाष्प निकलने के कारण अग्नि और बल क्षीण होकर वातादि दोषों को कुपित कर देती हैं । इस स्थिति में थोड़ी सी असावधानी बरतने से विभिन्न रोग जैसे ज्वर, वात संस्थान की विकृति, फुफ्फुसीय विकृति, पाचन सम्बन्धी विकार, कीट दंश, पुरानी चोट व दर्द की पुनरावृति आदि रोग शामिल है ।

ज्वर - वात श्लेष्म ज्वर को आधुनिक विज्ञान ने निज रोग न मानकर रोगाणु जन्य औपसिंक रोग माना है । आयुर्वेद मतानुसार ऋतु परिवर्तन पर वर्षा जल में भींगने, शीतल आहार-विहार के अधिक सेवन से शरीर में वात और कफ रोग की उत्पत्ति होती है । सम्पूर्ण बदन की संधि एवं माँसपेशियों में दर्द, सर्दी-जुकाम होकर ज्वर का चढ़ना, कभी-कभी बिना सर्दी का भी ज्वर आ जाता है । ज्वर ग्रस्त रोगी को सिरदर्द, खाँसी, बदन में जकड़ाहट, नेत्र में लालीपन, गले में कसकसाहट आदि लक्षण प्रकृति के मुताबिक होने लगते हैं ।

उपचार - उपवास, गर्म करके ठंडा कर पानी, बालक, वृद्ध एवं अशक्त को उपवास न कराकर सौंठ चूर्ण मिश्रित दूध, मौसमी दें । मलावरोध में मुनक्का, सौंफ, इसबगोल या पंच सकार चूर्ण का प्रयोग करें । महा सुदर्शन काढ़ा में गोदन्ती भस्म मिलाकर ज्वर शमनार्थ दें । ज्वर उतरने पर हल्का एवं आसानी से पचने वाला आहार जैसे पतली खिचड़ी, मूंग दाल, पालक, बथुआ, अदरख, लहसुन, पुदीना आदि दें ।

आंत्रिक ज्वर- इस ज्वर में अग्नि की मन्दता, उल्टी, नाभि प्रदेश में पीड़ा, अतिसार और ज्वर का वेगमंद रहता है । इस हालत में दालचीनी, मरिच, बड़ी इलायची और तुलसी मिलाकर चाय दें । गोदन्ती भस्म चार रत्ती, त्रिभुवन कीर्ति रस दो रत्ती और गिलोय चार रत्ती की खुराक बनाकर शहद और अदरख के रस में मिलाकर से सभी लक्षण कम होकर रोगी स्वस्थ हो जाता है ।

फुफ्फुसीय विकृति - आरंभ में सर्दी-जुक के लक्षण स्पष्ट होने के बाद ज्वर, प्रलाप, कास-श्व आदि लक्षण दृष्टिगोचर श्वसनक ज्वर रूप ले लेता है इस स्थिति में आनन्द भैरव एक गोली, संजीवनी व एक गोली और टंकण भस्म डेंढ़ रत्ती की एक खुरा बनाकर तुलसी पत्र स्वरस और मधु के साथ चार-चार पर दें । रोगी को लाभ होगा ।

वात संस्थान की विकृति - वात वाहिनी विकृति आने से नाड़ीशूल, दुर्बलता, अनिन्द्रा, सिर वेदना, मूर्च्छा और ज्वर के लक्षण मौजूद रहते हैं । दुर्ब रोगी को मानसिक दुर्बलता भी रहती है । इन लक्षणों वात कफान्तक दो रत्ती, पिप्पली चूर्ण एक ग्राम ब्राह्मी वटी एक गोली मधु के साथ दें । सिर की वेद में पेन बाम का प्रयोग करें ।

पाचन संबंधी गड़बड़ी- अग्निमांद्य, दस्त होना, उदर शूल, वमन ये इस मौसम की आम शिकाय है । इसके शमनार्थ भोजन और ऋतु पथ्य का पालन क से परेशानी नहीं होती है ।

चोकर सहित आटे की रोटी, भिण्डी, परव तोरई, पपीता, लौकी, कद्दू, बैंगन, करेला, कच्चा केल ओल आदि पाचक रस उत्पन्न करने वाले द्रव्यों का सेव हितकर होता है । कन्द शाक का प्रयोग न करें । फ आम और जामुन, दही के स्थान पर दूध, घी का प्रयो करें । अदरख, मूली, लहसुन, हरी मिर्च को थकुच क नीम्बू के रस में मिलाने से उत्तम पाचक बन जाता है पाचकाग्नि वर्द्धक होता है ।

पाचन विकारों में पतला दस्त, ऑव-पेचिश भी शिकायत हो जाती है । इसके लिए दिन में दो चा बार आधा चम्मच सौंफ का व्यवहार करें । भोजन हिंग्वाष्टक किंवा लवण भास्कर मिलाकर खायें । ईसबगोल

रसायनाचार्य बनफूल आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, बुद्धा कॉलोनी, दुजरा रोड, पटना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की भूसी शक्कर मिलाकर लें ।

अचानक वमन नहीं रोकें क्योंकि वमन से बाहरी विषाक्त द्रव्य बाहर निकल जाते हैं । साफ लौह खंड को आग में तपाकर जल में बुझाकर पीवें । गूलर की पत्ती चबावें, लेकिन कुछ देर पानी न पीवें । पेट दर्द में अजवाइन को गरम जल से लें ।

वर्षा ऋतु में वायु के कुपित होने से पुराने दर्द की पुनरावृत्ति होती है । इसके लिए सरसों के तेल में जमाइन और लहसुन पकाकर मालिश करें । खाने के लिए योगराज गुग्गुल और महानारायण तेल की मालिश लाभप्रद होती है ।

चर्मरोग - यों तो हर मौसम में कीटाणुओं का बोलवाला रहता ही है, किन्तु वर्षा कालीन मौसम में वातावरण आर्द्रयुक्त हो जाता है, जिससे कीटाणु अधिक सक्रिय हो जाते हैं । विषाक्त धूल कण आदि गंदगी वर्षा जल में घुल-मिलकर हमारे शरीर को प्रभावित कर देता है और त्वचा पर अनेक प्रकार के फोड़े-फुन्सी होने की आशंका बन जाती है । इसलिए स्वस्थ रहने के लिए प्रतिदिन शरीर पर सरसों तेल की मालिश करें । मात्र इसी तेल के प्रयोग से चर्म रोगों से रक्षा होती है । यदि दुर्भाग्यवश फोड़े-फुन्सी हो भी जावे तो त्रिफला को जल में भिगोकर जल छान लें, उसमें शहद मिलाकर सुबह-शाम आधा-आधा कप पीवें । छोटे-छोटे फुन्सी पर मिट्टी का लेप लगावें, इससे जीवाणु नष्ट हो जाते हैं और संक्रमण नहीं हो पाता है ।

एक अन्य प्रकार की छोटी-छोटी फुन्सियां जो सर्वाधिक परेशान करती हैं वह है घमौरी । इन छोटी-छोटी फुन्सियों की खुजलाहट एवं जलन से सभी उम्र के लोग परेशान रहते हैं । इसके निवारण हेतु एक पाउडर जो किसी भी घमौरी नाशक पाउडर की अपेक्षा न सिर्फ सस्ता बल्कि अधिक उपयोगी एवं लाभकारी है वह निम्न है-

संगजराहट एक सौ ग्राम, नीम का पत्र चूर्ण पच्चीस ग्राम, कपूर दस ग्राम और पिपरमिन्ट पाँच ग्राम इन सब को मिलाकर रख लें और घमौरी पर छिड़काव करें।

एक विशेष प्रकार का चर्म रोग जो वर्षा ऋतु में ही अधिकतर उत्पन्न होता हैं । विद्वान चिकित्सक इसे विषाणु जन्य मानते हैं । इसमें त्वचा पर आग से जलने सा फफोला हो जाता है । आरम्भ में इससें तेज बुखार आ जाता है । इस ज्वर से राहत पाने के लिए सितोपलादि चूर्ण में गोदंती भस्म मिलाकर मधु के साथ देना चाहिए । नीम के पत्ते के रस में काली मिर्च पीसकर शहद के साथ पिलाने से ज्वर का वेग कम हो जाता है । फफोलों पर चर्म रोगादि मलहम, मरिच्यादि तेल, सोमराजी तेल आदि व्रण रोपक व शोधक तेल एवं मलहम का प्रयोग हितकर देखा गया है । गूलर के पत्तों को पीसकर लेप करने से शांति मिलती है । खस, त्रिफला, पद्माख, लाजवंती, अनन्त मूल तथा कनेर की जड़ को पीसकर लेप करने से वर्षा ऋतु में उत्पन्न विसर्प से तत्काल शांति मिलती है । करेज वृक्ष की छाल का हल्का-सा गरम लेप भी उपयोगी सिद्ध है ।

बरसाती मौसम में विभिन्न प्रकार के असंख्य कीट-मकोड़े उत्पन्न हो जाते हैं । इनमें से कुछ विषाक्त होते हैं, जिनके दंश से सूजन, जलन व खुजली होती है, बल्कि कभी-कभी बुखार आदि जैसे लक्षण देखने में आते हैं । ज्वर आदि का लाक्षणिक उपचार होना चाहिए । दंश स्थान पर लेप के लिए निम्न योग उत्तम है ।

मुलतानी मिट्टी पचास ग्राम, कपूर बीस ग्राम और पिपरमिन्ट बीस ग्राम । पहले मुलतानी मिट्टी में पानी मिलाकर गाढ़ा बना लें । एक शीशी में अलग से कपूर और पिपरमिन्ट रख देने से स्वयं मिल जाते हैं । अब मुलतानी मिट्टी और जल के मिश्रण में इसे मिलाकर रख लें और विषाक्त कीटदंश पर इसका लेप लगाऐं । कैसा भी दंश रहेगा शीघ्र आराम मिल जाता है ।

उपरोक्त आलेख का मतलब है कि वर्षा के मौसम में होने वाले विकार तथा उसके सुलभ उपचारों की साधारण जानकारी दी गयी है जो सर्वग्राह्य है । प्रिय पाठकगण उपरोक्त योगों को अपने स्थानीय वैद्य जी से सलाह लेकर उपयोग करें तो अत्युत्तम होगा । वर्षा का आनन्द लेते हुए स्वास्थ्य की रक्षा करें ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्षा ऋतु में उपयोगी आहार-विहार

डॉ० अनिता चौधरी (इन्टर्नीज)
डॉ० शम्भु दयाल शर्मा, एम.डी. (आयु.) पी.एच.डी. (अध्येता

काल - श्रावण-भाद्रपद (July-August)

ऋतु-स्वभाव :- पित्त का चय एवं वात का प्रकोप

"सर्वमेव परित्यज्य शरीरमनुपालयेत् ।
शरीरस्य प्रणष्टस्य सर्वमेव विनश्यति ॥"

(चाणक्य राजनीतिशास्त्र)

अर्थात् सब का परित्याग करते हुए शरीर (स्वास्थ्य) का रक्षण करें, क्योंकि शरीर नष्ट होने पर सब कुछ नष्ट हो जाता है । स्वस्थ शरीर से ही मानव की सार्थकता है। स्वास्थ्य (आरोग्यावस्था) से ही मनुष्य इहलौकिक तथा परलौकिक कर्त्तव्यों को पूरा करने में समर्थ होता है । स्वास्थ्य की कामना (चाह) रखने वाले मनुष्य को दिनचर्या, रात्रिचर्या एवं ऋतुचर्या का पालन करना चाहिए । इनका पालन करने पर निश्चय ही रोग का प्रतिरोध होता है । रोग की चिकित्सा की अपेक्षा रोग न होने देना ही श्रेयष्कर है ।

"Prevention is better that cure"

इसी क्रम में वर्षा ऋतु चर्या अर्थात् वर्षा ऋतु में क्या सेवन (आहार-विहार) करना चाहिए क्या नहीं इनका वर्णन आगे किया जा रहा है । किन्तु ऋतुचर्या वर्णन से पूर्व ऋतुविभाग का ज्ञान होना आवश्यक है ।

आयुर्वेद साहित्य में कालविभाजन के अन्तर्गत सूर्य एवं चन्द्रमा की गति को दर्शाते हुए वर्ष के दो विभाग किए हैं जिन्हें अयन कहते हैं :-

1. उत्तरायण 2. दक्षिणायण

प्रत्येक अयन तीन भाग में विभाजित है, जिन्हें ऋतु कहते हैं ।

उत्तरायण (आदानकाल)	दक्षिणायन (विसर्गकाल)
शिशिर	वर्षा
बसन्त	शरद्
ग्रीष्म	हेमन्त

विसर्गकाल में प्राकृतिक तथा शारीरिक स्थिति-

वर्षा ऋतु विसर्गकाल की प्रथम ऋतु है । इसमें सूर्य की गति दक्षिणायण होती है । भूमण्डल पर अप शीतल किरणों को प्रसारित करता हुआ जगत को निरन्त तृप्त करता है । वर्षा ऋतु में प्राणियों का बल क्षीण रह है । विभिन्न ऋतुओं में शारीरिक बल की स्थिति आच वाग्भट्ट ने निम्नवत् वर्णित की है ।

"हेमन्ते शिशिरे चाग्र्यं विसर्गदानयोर्बलम् ।
शरद्वसन्तोर्मध्य हीनं वर्षानिदाधयो ॥"

(अ०सं० 4/8

आदानकाल से दुर्बल हुए शरीर में जाठराग्नि प दुर्बल होती है तथा वर्षा ऋतु में मेघ के बरसने से पृथ्व से निकलने वाली वाष्प से जल के अम्लविपाकी हो जा से, तथा अग्निबल के क्षीण होने से वातादि दोष कुपि होकर जठराग्नि को और मंद कर देते हैं । अतः इस ऋ में साधारण रूप से निम्न नियमों (आहार-विहार) क पालन करना चाहिए ।

वर्षा ऋतु में पथ्य आहार

1. वर्षा ऋतु में पानी को उबालकर प्रयोग में ल चाहिए ।
2. यदि कुंआ, नदी आदि का पानी सेवन करें तो ज फिटकरी या लाल दवा (पोटाश) ($KMnO_4$) आदि द्वारा संशोधित कर प्रयोग करें ।
3. अग्निवर्धक (दीपनद्रव्य सौंफ़ आदि) पदार्थों क सेवन करना चाहिए । यथा पिप्पली, पिप्पलामू चव्य, चित्रक, सोंठ, काला नमक, साधित त (छाछ) का सेवन ।
4. जाठराग्नि संक्षरण हेतु यव, गोधूम (गेहूं), पुर शालि चावल, यूष एवं जांगल पशु पक्षियों का मां रस ।
5. अम्ल, लवण स्निग्ध, उष्ण एवं सुपाच्य आहार क सेवन करें ।
   यथा - 1. अदरख, करेला, लौकी, जीरा, मेथी क सेवन हितकर होता है ।

रीडर, कौमार भृत्य विभाग, श्री बाबा मस्तनाथ आयुर्वेदिक महाविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

2. छाछ, आम, फालसा, अंजीर एवं खजूर आदि का सेवन ।

पथ्य विहार :-

1. यह ऋतु वातप्रकोपक है अर्थात् इसमें वात का प्रकोप होता है इसलिए तैल का अभ्यंग करना हितकर होता है ।
2. शीलनयुक्त स्थान का त्याग करें ।
3. वर्षा होने पर मच्छर, मक्खी आदि का प्रकोप बढ़ता है । इनसे बचाव के लिए मच्छरदानी का प्रयोग करें। डी.डी.टी. का छिड़काव भी कराना चाहिए तथा पानी निकासी व्यवस्था ठीक रखनी चाहिए जिससे मच्छरों का प्रकोप न हो ।
4. वमन और विरेचन द्वारा शरीर का संशोधन कर वस्ति कर्म हितकर होता है ।
5. उद्वर्तन, स्नान व सुंगधित द्रव्यों का प्रयोग करें ।

अपथ्य आहार :-

1. नदियों व तालाब का जल सेवन अहितकर होता है ।
2. अग्निमांद्य होने के कारण गुरु आहार जैसे खीर, चावल, पूआ, अरबी, भिण्डी आदि का सेवन न करें क्योंकि ये पचने में भारी होते हैं ।
3. अत्यधिक मद्य व द्रव पदार्थ का सेवन अहितकर होता है ।

अपथ्य विहार :-

1. अत्यधिक व्यायाम, आतप सेवन नहीं करना चाहिए ।
2. खुले स्थान में शयन, दिवाशयन तथा रात्रिजागरण अहितकर होता है ।
3. अत्यधिक परिश्रम व मैथुन (सहवास) वर्जनीय है ।

यदि उपरोक्त चर्या का पालन नहीं किया जाता तो अग्निदौर्बल्य (अग्निमंद्यता), शारीरिक दुर्बलता, विषमज्वर (Malaria), आंन्त्रिक ज्वर (Typhoid fever), अतिसार (Diarrhoea), रक्तज विकार (कण्डू, दद्रू, विचर्चिका आदि) तथा जीवाणु जन्य व्याधियों के होने की सम्भावना रहती है ।

खिलते यौवन के निशान भला चेहरे पर आए क्योंकर ?

यौवन के साथ-साथ मुहासों का आना भी स्वाभाविक है, पर इनके इलाज के लिए क्रीम आदि से भी पूरी बात नहीं बनती । ये त्वचा की सतह पर ही काम करती है, समस्या की जड़ तक नहीं पहुंच पातीं और इसके कारण कभी-कभी रह जाते हैं भद्दे निशान । बैद्यनाथ सुरक्ता रक्त साफ कर, त्वचा में निखार लाती है और आपके चेहरे की दमक बन जाती है खिलते यौवन की निशानी ।

बैद्यनाथ

सुरक्ता

कील मुहांसों के लिए

हर्बल रक्त शोधक

सुन्दर त्वचा भीतर से निखरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[1]डा० अनूप कु० गक्खड़, एम.डी. (आयुर्वेद)
[2]सीमा चोपड़ा, बी.ए.एम.एस.

1. प्र०:- 'उग्रतपा' शब्द किसके लिए प्रयुक्त हुआ है ?
   उ०:- भरद्वाज के लिए ।
2. प्र०:- 'शक्र' शब्द किसके लिए प्रयुक्त हुआ है ?
   उ०:- इन्द्र के लिए ।
3. प्र०:- ब्रह्मा से आयुर्वेद का ज्ञान किसने प्राप्त किया है ?
   उ०:- दक्ष प्रजापति ने ।
4. प्र०:- चरक में चतुर्विध सूत्र कौन-कौन से हैं ?
   उ०:- गुरु सूत्र, शिष्य सूत्र, प्रतिसस्कर्तासूत्र व एकीय सूत्र ।
5. प्र०:- चरक में निर्दिष्ट प्रथम सम्भाषा परिषद् किस स्थान पर आयोजित हुई ?
   उ०:- हिमवत पार्श्व ।
6. प्र०:- 'हिरण्याक्ष' का क्या अर्थ है ?
   उ०:- सोने के सदृश आँखों वाला ऋषि ।
7. प्र०:- वैखानस का क्या अर्थ है ?
   उ०:- वानप्रस्थान श्रम सेवी ।
8. प्र०:- किस प्रथम यूनानी ऋषि का उल्लेख चरक में मिलता है ?
   उ०:- काड्.कायन ।
9. प्र०:- 'बालखिल्य' शब्द किसके लिए प्रयुक्त हुआ है ?
   उ०:- शिशु ऋषि ।
10. प्र०:- धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की प्राप्ति में मूल कारण क्या है ?
    उ०:- आरोग्य ।
11. प्र०:- दक्ष प्रजापति से आयुर्वेद का ज्ञान किसने प्राप्त किया ?
    उ०:- अश्विनी कुमार ।
12. प्र०:- 'शचीपति' शब्द किसके लिए प्रयुक्त हुआ है ?
    उ०:- इन्द्र के लिए ।
13. प्र०:- त्रिसूत्र क्या है ?
    उ०:- हेतु, लिंग व औषध ।
14. प्र०:- त्रिसूत्र का ज्ञान स्वस्थ व्यक्ति के लिए है आतुर के लिए ?
    उ०:- स्वस्थ एवं आतुर दोनों के लिए ।
15. प्र०:- प्रथम अध्याय में आत्रेय शासन शब्द प्रयोग किस सन्दर्भ में किया गया है ?
    उ०:- मूत्र की संख्या एवं नाम उल्लेख करते समय
16. प्र०:- फलिनी द्रव्य कितने हैं ?
    उ०:- 19 ।
17. प्र०:- प्रथम अध्याय में पित्त के कौन-से गु बताए गए हैं ?
    उ०:- स्नेह, उष्ण, तीक्ष्ण, द्रव, अम्ल, सर व कटु
18. प्र०:- प्रथम अध्याय में कफ के कौन से गु बताए हैं ?
    उ०:- गुरु, शीत, मृदु, स्निग्ध, मधुर, स्थि पिच्छिल ।
19. प्र०:- रस की निवृत्ति में प्रधान कारण क्या है
    उ०:- जल तथा पृथ्वी ।
20. प्र०:- रस के विशेष ज्ञान में अप्रधान कारण है
    उ०:- आकाश, वायु एवं अग्नि ।
21. प्र०:- षड रस कौन-कौन से हैं ?
    उ०:- मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त व कषाय
22. प्र०:- वात दोष का शमन किन रसों के द्वारा हो है ?
    उ०:- मधुर, अम्ल व लवण ।
23. प्र०:- अग्निवेश आदि शिष्यों के शरीर में किन देवताओं ने प्रवेश किया ?
    उ०:- बुद्धि, सिद्धि, स्मृति, मेधा, धृति, कीर्ति क्षमा व दया ।
24. प्र०:- आयुर्वेद को कितने लोकों में हितकारी माना है ?
    उ०:- दो लोकों में ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

25. प्र०:- पृथकत्व कारक कौन-सा पदार्थ होता है ?
उ०:- **विशेष ।**

26. प्र०:- एकत्व कारक कौन-सा पदार्थ हाता है ?
उ०:- **सामान्य ।**

27. प्र०:- आयुर्वेद का अधिकरण क्या है ?
उ०:- **पुंमान ।**

28. प्र०:- कारण द्रव्य कौन-से हैं ?
उ०:- **पंचमहाभूत, आत्मा, मन, काल व दिशा ।**

29. प्र०:- भूमि आदि द्रव्यों का अपने-अपने गुणों के साथ अपृथक्भाव क्या कहलाता है ?
उ०:- **समवाय ।**

30. प्र०:- जिमसें कर्म और गुण आश्रित हो, उसे क्या कहते हैं ?
उ०:- **दव्य ।**

31. प्र०:- गुण का लक्षण क्या है ?
उ०:- **समवायी, तु निश्चेष्टः कारणं गुणः ।**

32. प्र०:- कर्म किस पर आश्रित होता है ?
उ०:- **दव्य पर ।**

33. प्र०:- अग्निवेश तंत्र का प्रयोजन क्या है ?
उ०:- **धातु साम्य क्रिया ।**

34. प्र०:- प्रथम अध्याय में वात के किस गुण का उल्लेख नहीं किया गया है ?
उ०:- **दारूण ।**

35. प्र०:- पित्त दोष का शमन किन रसों के द्वारा होता है ?
उ०:- **मधुर, तिक्त, कषाय ।**

36. प्र०:- कफ दोष का शमन किन रसों के द्वारा होता है ?
उ०:- **कटु, तिक्त, कषाय ।**

37. प्र०:- 'सहस्राक्ष' शब्द किस के लिए प्रयुक्त हुआ है ?
उ०:- **इन्द्र ।**

38. प्र०:- उत्पति भेद से द्रव्यों के कितने भेद हैं ?
उ०:- **तीन, जांगम, उद्भिद व पार्थिव ।**

39. प्र०:- अपामार्ग के फल का प्रयोग किसके लिए प्रयुक्त होता है ?
उ०:- **वस्य व शिरोविरेचन ।**

40. प्र०:- मूलिनी द्रव्यों में से कितने द्रव्य ऐसे हैं जिनका प्रयोग विरेचन के लिए किया जाता है ?
उ०:- **ग्यारह ।**

41. प्र०:- कौन-से मूलिनी द्रव्यों का प्रयोग वमन के लिए किया जाता है ?
उ०:- **शणपुष्पी, बिम्वी और हेमवती ।**

42. प्र०:- कौन-से मूलिनी द्रव्यों का प्रयोग शिरोविरेचन के लिए किया जाता है ?
उ०:- **श्वेता व ज्योतिषमती ।**

43. प्र०:- वमन और आस्थापन के लिए कितने फलिनी द्रव्य बतलाए गए हैं ?
उ०:- **आठ ।**

44. प्र०:- विरेचन के लिए कितने फलिनी द्रव्य बतलाए गए हैं ?
उ०:- **दस ।**

45. प्र०:- मूत्र के सामान्य गुण कौन-से हैं ?
उ०:- **उष्ण, तीक्ष्ण, रूक्ष, लवण, रस युक्त व कटु रस ।**

बैद्यनाथ
बाम
सर्दी, जुकाम,
सिरदर्द, पसली दर्द,
गर्दन की मोच में
तुरंत आराम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

SHUSHRUTA'S DASHAMULA AND ITS APPLICATION IN DIABETIC NEUROPATHY

K.N. Dwivedi

Evidences show that Sushruta includes Erandamula in place of Gokshura in Dashamula.[1,2,3,4,5,6] This is so because Sushruta was basically a surgeon and he used to face very frequently situations associated with pain and inflammation and that is why he used quick affecting analgesic and anti-inflammatory drugs. Erandamula[7] being the best among drugs having Vrishya and Vatahara actions fits suitable in the framework of drugs of Dashmula, which is commonly used to subside inflammatory and painful conditions. Its Vrishya action potentiates as well as facilitates its Vatahara action, thus, makes it a potent Vatashamaka and shothahara drug which is very often needed to pacity the pain (Ruja). On the other hand action of Gokshura is chiefly concerned with painful conditions of urinary tract.[8] This might be the reason behind selection of Erandamula as a component of Dashamula by Sushruta.

Diabetic neuropathy (may be attributed to Snayugata Vata) is a condition of Diabetes mellitus in which Ojahkshaya, Dhatukshaya, Tridosha Vikriti and Snayushotha are present simultaneously. These factors make the conditions very troublesome, devastating and difficult to treat. Rational treatment on the babis of modern aetiopathogenesis appears totally in vain and the patient remains fighting with his ailings. But when approached its samprapti according to the dogma of Ayurveda, we found Sushruta's Dashamula the most rationale and befitting therapy to treat the condition. This Dashmula (consisting of Erandamula in place of Gokshura) becomes enriched with Dhatuvardhaka, Ojovardhaka, Vrishya, Rasayana, Balya and Brimhana actions, by virtue of this, it becomes efficient enough to overcome vatakshaya, Dhatukshaya and Ojahkshaya. Its tridoshashamaka and shothahar actions help further to overcome Tridoshavikriti and snayushotha. Thus inclusion of Erandamula in Sushruta's Dashmula brings favourable changes pertaining to its actions and provides convenience to treat the corrosive problem of Diabetic Neuropathy. In order to evaluate the utility of this Dashmula in Diabetic Neuropathy, we launched a clinical trial.

Thirty diagnosed patients of Diabetic Neuropathy were selected from the O.P.D. of the Diabetic clinic (Ayurveda), Department of Dravyaguna, S.S. Hospital. B.H.U. However those patients having hepatic/renal disorder leprosy or tuberculosis were excluded as these conditions on their own are known to produce peripheral neuropathy.

Self control method was adopted in this trial. All the selected patients were examined clinically for the signs and symptoms of diabetic neuropathy and the finding were recorded. These patients were subjected for routine biochemical investigations and Nerve Conduction Velocity (NCV) Test before starting the treatment. Parameters of assessment were objective signs subjective symptoms and Nerve conduction velocity test.

The durgs of Dashamula were collected from the vicinity of Varanasi and dried in shade. Then their Ghanasatva (watersoluble solid extract) was prepared by classical method of Ayuveda. This ghanasatva was administered to the patients in a dose of 500 mg tid.

The patients were re-evaluated on aforesaid parameters at the interval of 1,2 and 3 months and observation was recorded.

Senior Lecturer in Dravyaguna, Faculty of Ayurveda, Institute of Medical Sciences, Banaras Hindu University, Varanasi - 221 005

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

OBSERVATION

Effect of Dashamula on Clinical Symptoms
(at the end of 3 months)

S. N.	Symptoms	No. of cases before treatment	No. of cases after treatment	No. of cases improved	Percentage of cases improved
1.	Tingling	24	4	20	83.40
2.	Burning Sensation	22	5	17	77.35
3.	Pain	18	6	12	66.68
4.	Numbness	16	5	11	68.75
5.	Feeling of hot & cold	10	5	5	50.00
6.	Giddiness	18	8	10	55.55
7.	Headache	18	4	14	77.77
8.	Weakness of Limbs	24	10	14	58.31
9.	Impotency	5	5	-	-
10.	Wasting of muscles	2	1	1	50.00
11.	Mental Depression	12	5	7	58.31

Effect of Dashamula on Clinical Signs
(At the end of 3 months of treatment)

S. N.	Signs	No. of cases before treatment	No. of cases after treatment	No. of cases improved	Percentage of cases improved
1.	Diminished/absent ankle jerk	26	14	12	46.20
2.	Diminished/absent other jerk	11	6	5	45.45
3.	Diminished/absent touch sensation	11	6	5	45.45
4.	Diminished/absent pain sensation	3	2	1	33.33
5.	Impaired vibration sense	28	10	18	64.26
6.	Orthostatic Hypotension	4	4	-	-

Effect of Dashamula on Motor Nerve Conduction Velocities
(at the end of 3 months therapy)

Nerve	Before Treatment NCV (m/sec) Mean±SD	After Treatment NCV (m/sec) Mean±SD	Significance
Median Nerve	46.88±5.904	53.46±6.89	t=3.804 P<0.01
Ulnar Nerve	40.56±6.820	48.11±7.002	t=2.096 P<0.01
Peroneal Nerve	40.62±9.408	52.67±6.058	t=3.862 P<0.001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Effect of Dashamula on Sensory Nerve Conduction Velocities
(at the end of 3 months therapy)

Nerve	Before Treatment NCV (m/sec) Mean±SD	After Treatment NCV (m/sec) Mean±SD	Significance
Median Nerve	42.23±7.841	50.13±7.027	t=3.143 P<0.01
Ulnar Nerve	46.18±7.338	54.97±7.114	t=3.178 P<0.01
Peroneal Nerve	44.58±6:759	54.12±6.114	t=4.101 P<0.01

It is evident from above observations that Sushruta's Dashamula produced significant relief to the patients of Diabetic Neuropathy by bringing favourable changes in their signs, symptoms and correcting the sensory and motor nerve conduction velocities. Apart from these in few cases where nerve biopsy was taken, it was observed that Dashamula produced regenerative changes in deteriorative nervine tissues.

Since no efforts have been made so far to search a rational treatment for Diabetic neuropathy and its prevalence is increasing by leaps and bounds, therefore we thought to make efforts to provide a safe, economic, easy and rationale treatment to it. After a lot of exploration and discussion we found that Sushruta's Dashmula is the most suitable combination which is Shothahara, Tridoshashamaka and over and above it has enough potency to increase the quantum of ojas by virtue of Vrishya and Vatahara actions of Erandamula and thus it proves successful both on subjective and objective parameters to treat the diabetic neuropathy and brings favourable and statistically significant changes in nerve conduction velocity.

REFERENCES

1. Sushruta samhita, sutrasthana, 38/67, Edited by Acharya Yadav Ji Trikamji and Pt N.K. Sharma, Pub. By Pandit Shyam Sunder Sharma, Registrar, Agra University Secretary, Swamy Lakshmi Ram Trust, 1939
2. Chakrapanidatta, Bhanumati commentary of Sushruta samhita 38/67.
3. Dalhana, Nibandha Samgraha commentary of Sushruta samhita 38/67.
4. Hemadri, Ayurveda Rasayana commentary of Ashtanga Hridya, Sutrasthana 6/177.
5. Shivadasa Sen, Tatva Chandrika Commentary of Chakradatta, Jvarchikitsa 169.
6. Kashyapa Samhita, Khila Sthana 10/83.
7. Charka Samhita, Sutrasthana 25.
8. Charaka Samhita, Sutrasthana 25.

बैद्यनाथ

अर्जुनारिष्ट

हृदय की कमजोरी, दिल की धड़कन तथा छाती एवं फेफड़ों में लाभदायक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CONCEPTS OF AYURVEDIC DRUG RESEARCH

Prof. P.P. Sharma

In the Ayurvedic philosophy & science the research work in drug should naturally be mainly based on Ayurvedic principles. Its results should be conductive and encouraging in the advancement of Ayurvedic Science. Some basic criteria should be fixed and followed in true spirits of Ayurvedic hypothesis. It is not possible to differentiate the work done by the modern medical scientists and Ayurvedic faculty. Once this basis is elaborated, analysed and adopted firmly on Ayurvedic principles, the other infrastructure will take its natural phenomenon without having any guide line of principle. Only by selecting any Ayurvedic or Unani drug of any origin as problamatic drug, the research project will not satisfy in fullfilling the objective of Ayurvedic research. Any research project or work on any Ayurvedic drug should fulfii following criteria, viz.

(1) It should be based on Ayurvedic concepts.
(2) It should follow the methodology and materiology as laid down in treatise & it should be supported by modern scientific methodology.
(3) It must add something original in the armamentum of knowledge in the science of Ayurveda.

When these above said guidelines or principles are favourable in true spirits, then it is immaterial that what type of materials and methodologies are used for its proper execution of any Ayurvedic research project. Man Power must be well acquainted with Ayurvedic tests ie, treatises & their commentaries by Scholars of Ayurveda to acquire the first hand knowledge of Ayurvedic Science. It should thus provide solid back-ground to Ayurvedic personnel in their Ayurvedic knowledge and armamentorium. This will help Ayurvedic research scholars to carry on further scientific investigations. The materials including modern techniques, laboratory equipments & ultramodern softwares should be utilised for the invention of truth in true spirits for human welfare. The modern optical instruments only aid to the process of investigation by Pratyaksha Pariksha (direct examination). We should not forget that dynamism and liberalism have been two great guiding ethose in the advancement and perform once of Ayurveda. The sages of past were quite broad minded (Prithudarshi) ie, having knowledge to acquire truth for human welfare.

As regards to the scope of research in the field of Dravyaguna following areas have been elaborately defined for practical purpose viz :-

(1) NAMA- RUPA VIJNANA (Identification of drugs)
(2) GUNA VIJANANA (Identification & study of properties).
(3) PRAYOGA VIJANANA (Pharmaco - therapeutics)
(4) KARMA VIJANANA (Pharmaco - dynamics)
(5) MANAKI KARANA (Standardisation of drug)
(6) VANOUSHADHI SURVEKSHANA (Survey of medicinal plants)

It is analysed one by one in the following headings:-

(1) NAMA-RUPA VIJNANA (Identification of drugs)

Charaka has clearly and wisely emphasised that the wise scholar is one who knows about the nama-rupa-guna of the herbs in a scientific & systematic way. He has further stressed to contact the persons who are maintaining intimate contacts with plants for knowing the proper details of identification.

In present circumstances this aspect of knowledge needs utmost importance for drug research workers. Most of the drugs known in Ayurvedic treatment today are controversial in nature due to use of different plants for the same drug. Due to this factor inspite of their usefulness become obsolete. One name or Paryaya (synonym) has been quoted for serveral different drugs. And in the same way, one drug is used in several names or synonyms. Thus, the relation & knowledge between these drugs and their respective Nama & Rupa has got a great importance. The real problem is to re-establish

HOD, Dravyaguan, IPGT & RA, GAU, Jamnagar.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

the relation of Nama (Nomenclature) & Rupa (Morphology & Histology) with the perspective of each & every individual drug as one entity. Until & unless this problem is solved the real head-ache of controversial drugs cannot be judiciously faced in a broader prospective. Henceforth the practice of enriching literature of new synonyms for any single drug would only add in the confusion of its study. One name of any drug should denote for only one drug and all the synonyms should be completely avoided as far as possible. The Rupa-jnana may be scientifically & systematically added in the nighantus on the very basis of botanical descriptions which would be helpful in the correct indentification of a plant drug.

(2) GUNA VIJNANA (Identification of its properties)

Rasa, guna, Veerya, vipaka and Prabhava are the importatnt properties of a drug according to the classics of Ayurveda. The method of knowing these properties of an unknown drug, requires adequate understanding, clarification and elaborative study. It will help the properties of any known & unknown drug definitely & uniformly. To achieve this object some objective methods and tests should be evolved in respect of each of these above said drug properties. In recent years, some guidelines have been forwarded by Ayurvedic scholars which deserve further analytical study.

(3) KARMA VIJNANA (Pharmacodynamics)

The Karmas (actions) of medicinal plants mentioned in the ancient texts and Nighantus in respect of drugs should be re-assessed for its utility in the light of modern pharmacognostical, pharmacological and pharmacotherapeutical investigations & analytic experiments. This will create a new faith in the potency of Ayurveda for the cause of suffering humanity in a welfare state in the scientific world. Apart from this, some new karmas (actions) of drug may come to light, which may add to the present armament of knowledge. It may also extend the areas of the therapeutic utility of these drugs at scientific level. For example the Sankhapushpi, a well known medhya (brain tonic) drug has been evaluated as a potent hypotensive agent devoid of any degenerative & depressing toxic effects like Sarpagandha's utility as a hypotensive drug.

Therapeutic index ie, the dose and effect relation of any drug in human cause should also be established in a clear cut manner so that the proper effective & safe dosage may be known for any drug. The study of the dosage of various Kalpas (formulations) fixed in a progressive & regressive order also is an interesting area of research in Ayurveda as mentioned in Brihatthrayi.

(4) PRAYOGA VIJANANA (Pharmacotherapeutics)

The knowledge of Ayurveda should be applied for medical relief in a broader perspective in the sense that any drug should also be efficacious clinically. Hence, it is earnestly desirable that the teaching & research in Dravyaguna should have scope & facilities for the screening of any drug which may be confirmed by findings on human patients according to Ayurvedic texts or clinical medicine. The out-dated system of demonstration of some crude drugs and macroscopic examination by naked eye in the name of practicals in Dravyaguna must be replaced by use of new sophisticated software appliances and methods having scientific touch & utility.

The problem of diseases like Cancer, Diabetes, Asthma, Leprosy, Rheumatoid, arthritis, AIDS, Cardiac disorders etc are challenging problems to the suffering humanity. So research workers of Ayurveda should be cautious in inventing efficacious Ayurvedic drug for the use of human welfare. It is the need of the hour that some effective and safe drug of Ayurveda substitutes for modern drugs having toxic properties should be invented.

(5) MANAKIKARANA (Standardisation)

The problem of standardisation is an acute one & for research workers it needs sincere and constant team work for years together. Starting from the raw drug to the finished product some kinds of standards for use have to be laid down so that the drug may be effective uniform

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

and can be uniformly accepted by all. Along with the physical & chemical standards of any drug its biological standards should also be established in relation to these respective drugs. It should be unique in this connection that we should not hesitate in adopting new pharmaceutical techniques in assessing the old techniques & processing by latest modern pharmaceutical methodology. National Pharmacopoea of Ayurveda is very essential and presently one volume has been published for reference.

(6) VANAUSHADHI SARVEKSHANA

(Survey and preservation of medicinal plants)

Now almost each state has been provided with a survey unit of medicinal plants, but due to lack of proper co-ordination amongst various units in their workings it is unproductive in long term. It is most desirable that at reasonable intervals of time, all these units should meet together and may exchange their respective views. The collected information should be pooled together for the propagation of Ayurveda on scientific lines. For instance, the regional name of each item should be compiled in a comparative illustrated table. The specimens of the so called controversial drugs should be collected, so that the individual controversial drug's complete and comprehensive picture of the problem would automatically emerge. Similarly the information in reference, to its traditional uses would also be helpful in planning further research project work. A central herbal identification committee with expert people may be formed.

Before concluding, it would be proposed to provide expert opinion in drug identification to give stress on other vital point. The texts of Nighantus available today are not properly edited. This creates misunderstandings in identifications and use of any drug. Hence, Nighantus are to be re-checked and revised in the light of modern scientific knowledge and thus, they should be reedited incorporating the latest research informations. A number of old Nighantus undertaking different library shelves should be reedited an published. More & more information may be added in these books. Because these research results may be helpful in the identification of old plants & discovery of new drugs having medicinal utility.

बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल विटामीन-सी और कैल्सियम युक्त एक संपूर्ण स्वास्थ्य टॉनिक

बैद्यनाथ

च्यवनप्राश

माँ से बढ़कर बच्चों की देखरेख और कौन कर सकता है ? इसीलिए हर माँ अपने नन्हे-मुन्ने के लिए स्वास्थ्य-वर्धक व पौष्टिक आहार की कामना करती है। परन्तु केवल स्वादिष्ट भोजन आपके बच्चों की विटामीन व पोषण संबंधी जरूरतों को पूरा नहीं कर सकता । उनके अनुकूल विकास के लिए आपको चाहिए एक उत्कृष्ट स्वास्थ्य टॉनिक । जैसे बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल जिसमें हैं 52 (परखी हुई) जड़ी-बूटियाँ और केसर । अनेक विटामिन व हर्बो-मिनरल्स से युक्त, इसमें विशेष मात्रा में है, प्राकृतिक विटामिन-सी और कैल्सियम, जो आपके शरीर में जरूरी पोषक तत्वों की कमी को पूर्ण करते हैं ।

स्वस्थ दिमाग और शरीर के लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

MICROBIAL STUDY OF URINE IN MUTRAKRCCHRA (UTI)

*Dr. Srikanth MR. ** Dr. P.K. Godatwar *** Prof. L.N.Sharma ****Dr. Ashwini Kumar Sharma

INTRODUCTION

Ayurveda established its uniqueness in considering each individual as a separate and unequivocal subject of examination. Reference such as पुरुषं पुरुषं वीक्ष्य स ज्ञेयो भिषगुत्तम: । and parameters of examination such as Dushya, Desha, Bala etc. corroborate this special trait.

It has been the endeavour of researchers in our field to try and develop objective parameters for the various symptomatologies mentioned in the classical texts. Ayurvedic diagnosis is being supported by the modern investigative techniques.

There is scope for using such techniques like microscopic and microbial examination of urine, a very important waste product of our body. The Ayurvedic scope of mutrapariksha has been limited to a larger extent to the physical examination of urine, the special test like Taila Bindu pariksha not being in vogue now a day.

The following paper presents the methodology adopted in supplementing the diagnosis of mutrakrcchra (UTI).

MUTRAKRCCHRA

Mutrakrcchra has been defined as a disease in which the patient experiences दु:ख/प्रतिकूल वेदना during the act of micturition. (Dalhana on Su.Utt. 59/1).

The literal translation of the word mutrakrcchra being Dysuria presents as a symptom in many diseases of the urinary system like calculi, strictures etc not to mention urinary tract infections. But the mutrakrcchra explained in Ayurvedic texts indicates a disease by itself with its own etiology, symptomatologies and pathology.

Terms like mutrakrcchra, mutradosha and mutraghata have been used synonymously at certain places to indicate Dysuria. But mutraghata according to Chakrapani is a condition where there is shoshana or pratihanana of mutra, thus, probably pointing towards anuria or oliguria. So it is felt that conditions of mutrakrcchra are more relevant while analysing the UTI from Ayurvedic bioscope.

Charaka and Sushruta have both described 8 types of mutrakrcchra and the only difference being that Sushruta has mentioned Shakritaja mutrakrcchra in place of Shukraja mutrakrcchra of Charaka.

Many scholars tend to include only pittaja mutrakrcchra while discussing urinary tract infections taking into consideration only the burning micturition. But the cardinal symptoms of UTI are most of the times burning micturition or painful micturition, Hotness, Hesitancy, urgency, tenderness, haematuria and increased frequency.

Some of the above symptoms of UTI are found in other types of mutrakrcchra other than the pittaja variety. Burning micturition may not be the presenting complaint always in UTI. It can also be increased frequency of micturition, pain in the hypogastrium or even sometimes even only a feeling of vague discomfort while voiding urine.

Increased incidences of UTI have also been recorded in patients of Urinary calculi and in catheterized patients. Hence ashmarija mutrakrcchra would be left out of the preview of UTI. Hence all the 8 types of mutrakrcchra were included in the study.

Samprapti

Stage 1- Nidana sevana → Dosha prakopa

Stage 2- Dosha (apanavayu pradhana)→ basti→ sthana samshraya

Stage 3- Accumulation in basti

Stage 4- Mutra marga paripidana due to pratiloma gati of apanavayu

Stage 5- Lakshanas

Modern Urology

Entry of microorganisms→ Adherence→ Invasion→ Discomfort→ UTI

* P.G. Scholar, Dept. of Rog Nidan, NIA, Jaipur
** Lecturer, Dept. of Rog Nidan, NIA, Jaipur
*** Prof. & Head, Dept. of Rog Nidan, NIA, Jaipur, **** Medical Officer, Ajmer

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

AIMS & OBJECTIVES

1. To classify the cases of UTI into the different types of mutrakrcchra.
2. To follow the methodology of modern urine analysis including the culture of urine in the cases of mutrakrcchra.
3. To find out the specific organism causing the UTI and to correlate with type of mutrakrcchra if possible.

MATERIAL AND METHODS.

Patients complaining of any one of the symptoms of UTI should be included in the clinical study.

The patient's symptomatologies should be recorded and a complete physical examination must be done. The patients are categorized into the different types of mutrakrcchra based on the symptoms. A grading pattern can be adopted if a therapeutic trial is also included.

A routine Haemogram and RBS should be done in all the patients, as diabetics are more susceptible to UTI.

EXAMINATION OF URINE

A clean catch mid stream sample of urine should be obtained in sterile test tubes after following proper aseptic measures to avoid contamination. The colour and appearance odour, turbidity if any should be noted. The urine is examined for Ph and Specific gravity using Ph strips and urinometer respectively. Chemical tests like Albumin, sugars, ketone bodies, bile salts, bile pigments and nitrates are carried out by using the dip stick or other prescribed methods. Suspected cases of RBCs in urine are examined by Benzedene test.

5 ml urine is centrifuged at 3000 RPM for 5 minutes. The supernatant portion is discarded and the sediment is examined under a Microscope for presence of epithelial cells, pus cells, casts and motile bacteria.

IDENTIFICATION OF BACTERIA

. Grams stain is used after forming a smear to classify the organisms into gram positive and gram negative bacilli Macconkey media, TCS media, Peptone water and Nutrient agar media are used to identiy the causative organisms.

Lactose fermenters like E.coli produce pink coloured colonies on inoculation in MacConkey media. Staphylococcus aureus produces smooth, shiny easily emulsifiable colonies with a golden yellow pigment. They also produce pink colonies on MacConkey media. Glucose, xylose, lactose, sucrose are the sugars which can be adopted under the fermentation procedures. Indole production and Methyl Red are used in the biochemical reactions.

SUMMARY AND CONCLUSION

A methodology for a clinical study on patients of UTI has been proposed to classify the cases into the different types of mutrakrcchra mentioned in Ayurvedic texts. Microscopic examination of urine and microbial culture should be adopted to diagnose the cases. Researches in Ayurveda can be more scientifically proven by adopting modern diagnostic protocols for diagnosis of diseases along with the subjective parameters. The microbial study of urine in cases of mutakrcchra (UTI) subscribes to this view. Simple microscopic examination of urine, staining procedures are both cost and time tested techniques although the culture and sensitivity techniques require slightly bigger infrastructure. Treatment approaches can also be standardized.

वैद्यनाथ
लाल तैल
बच्चों के मालिश का परम गुणकारी तैल
सूखा रोग में अत्यन्त लाभकारी
इसकी मालिश
बच्चों के सूखा रोग, हड्डियों की विकृति, स्नायु दुर्बलता आदि में अत्यंत लाभदायक है, बच्चों को तंदुरुस्त व फुर्तीला रखता है ।
श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

HERBO CAUTERISATION - A THERAPEUTIC MEASURE TO CERVICAL EROSION

* Dr. Dinesh K.S. ** Dr. K.S. Patel *** Prof. I.V. Mistry

INTRODUCTION

With respect to the change of time, environmental conditions and pace of life new diseases are emerging as well as existing diseases change their nature of presentation. As a health professional; their is the duty vested upon the Ayurvedic Scholar, to interpret such diseases and changes for his easiness of application and qualified management. Cervical erosion though it is not a new disease, is very common among the females. More than three fourths of Adult women suffer from this condition. Clinically it is the development of reddened area on the portio vaginalis around the external OS. Pathologically it is the replacement of the stratified squamous epithelium of the portio vaginalis by the columnar epithelium of the endocervix. Prophylactic and conservative management of conventional medicine has nothing to say in this context. Existing treatment like Cryosurgeory creates a lot of secondary complications. In such scenario, the importance of an alternate thinking arises and we think Ayurvedic Medicines and Proced... based therapies can do very well from t... available clinical experiences. As Ayurveda mos... deals with the disease on Symptomatologic... basis, this kind of pathological process is n... narrated in Ayurvedic Classics as such, still ... the basis of mode of presentation and nature ... disease a lot of references can be conglomera... from Ayurvedic literatures to understand t... pathology as well as to put up a treatment pla... against this illness.

AIMS AND OBJECTIVES

1. To study the disease Cervical Erosion ... Ayurvedic Methodology.
2. To formulate a treatment paradigm in ... Ayurveda against this disease.

CERVICAL EROSION - AN OVERVIEW O... CONVENTIONAL KNOWLEDGE :

Definition of the disease was put on th... introduction and the disease classification is a... follows.

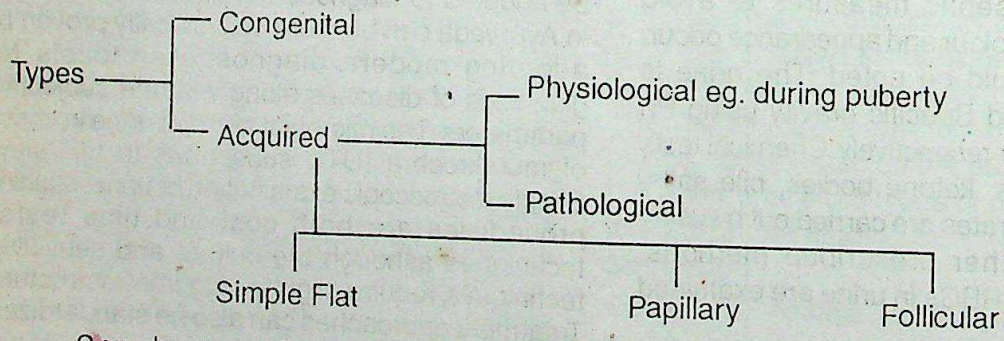

Sex hormonal hyperplasia. OCP hyperplasia and chronic inflammatory hyperplasia are known to cause this disease. It is a disease of reproducing age and after menopause and it tends to retrogress spontaneously. We think it is reliable to quote certain histopathological changes of this disease. Microscopical section of the tissue of portio vaginalis shows that

* Erosion area around the external Os on the portio vaginalis shows the covering ... columnar epithelium with the formation ... new glands.
* In follicular type, the surface is covere... with stratified epithelium with underlyin... retention cysts.
* The endo cervix and cervical stroma sho... the picture of chronic inflammation, roun... cell infiltration and fibrosis in inflammator...

* M.D. Scholar, Dept: of Kaumarabhritya; I.P.G.T. & R.A., Gujarat Ayurveda University, Jamnaga...
** Lecturer, Dept: of Kaumarabhritya, I.P.G.T. & R.A., G.A.U., Jamnagar
*** HOD, Dept of Kaumarabhritya, I.P.G.T. & R.A., G.A.U., Jamnagar

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

type.

Clinical Features.

- Persistent white discharge per vagina
  - Clean mucous (Hyperplastic erosion)
  - Mucopuruient (Inflammatory)
- Post Coital Metrorrhagia - Seldom
- Low back pain
- Dysurea and frequency of micturition in case of secondary infection
- Chronic ill health.
- Infertility may be present.
- Pruritus vulva in case of profuse discharge
- Psychological upsets.
- Asymptomactic cases are too common.

Diagnosis can be made by speculum examination of cervix. Pap stain cytological examination from cervical scrape and vaginal smear should be performed to screen out dysplasia, carcinoma in situ and early carcinoma. Electro Cautery or Diathermy Cautery is the treatment of choice in conventional medicine.

AYURVEDIC PERSPECTIVES

- Main symptom of the disease is whitish discharge per vagina and pruritus vulva. This indicates the disease is Kaphapradhana. As Vata dosha has predominant role in reproductive function association of this dosha is inevitable in this disease too.
- न हि वातात् ऋते योनिर्वनितानां प्रदूष्यति ।
- White discharge per vagina was described in diseases like Atyananda, Karnini, Acharana, Aticharana; Sleshmala, Upaplutha and prasramsini.
- The disease has no relation with Rajapravriti. So the role of Pitta and vata is minimal.
- Local inflammatory changes are the main pathological lesion in cervical erosion. So the local pitta and kapha are the vitiating factors.

Cervical Erosion Vs Vranasopha

- Like erosion व्रणशोथ is also local pathology शरीरैकदेशोत्थि:
- Vranasopha in this context is not necessarily specific (समो विषमो वा)
- Changes are taking place mostly on epithelial level (त्वङ् मांसस्थायी). Here the Epithelium can be considered as twak. Inflammatory changes can go upto a level of ulceration, papillae formation and follicle formation, so involvement of mamsa can also occur.
- In erosion the pakwavastha of 'Sotha' is very rare unless it is not infected with pyogenic organisms. So from the therapeutic point of view, it is not necessary to go upto pachana, visravana.....etc.

Samprapti Ghataka

- Dosha - Vata & Kapha - General
  - Kapha & Pitta - Local
- Dusthi Prakara - Atipravritti
- Dooshya - Twak & Mamsa
- Srotas - Artavavaha

Agnikarma (Herbo Cauterisation) - A perfect treatment to Cervical Erosion.

- Thermo Cautery is the treatment of choice in conventional medicine, but it has a lot of secondary complications.
- Agnikarma is well indicated when a Varana is there at Twak and Mamsa level by Acharya Susrutha - (Su. Su. 11/10)
- Symptomatically the disease is Kaphavataja in nature. Dalhana told that in such doshavastha Agnikarma will be the ideal therapy.

व्याधि वातकफात्मकं तत्राग्निकर्माधिकार: ।

(डल्हण सु.सू. 11/12)

- Unlike Electro Cautery no secondary complications like secondary hemorrhage, parametritis, cerivical stenosis, excessive pervaginal discharge is not being reported till date.
- Cure rate of the disease is highly satisfactory and enthusiastic from the clinical experience.
- Recurrence of the disease is very rare

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* With the single sit the disease can be tackled.
* The substance used for Agnikarma is not metals. Here the Vati (Herbal compound Stick) is used for the Agnikarma. It provides not only the thermo coagulation of pathological tissues but also herbal healing to the disease.
* According to the disease condition, condition of the patient, the medicines of the "Agnikarma Vati" can be changed. So a good selection choice of drugs are permitted to the physician.
* Ingredients of Vati with good caloric value will be ideal choice.
* Kapha vatashamaka drugs are good to cervical erosion.
* The drugs should posses Excellent Vrana ropana - Vrana sodhana properties.
* Such drugs should make into powder and then vati by adding Suitable swarasas (Preferably Ropana type). The perferable size of vati can be 8-10 cm length and 0.5 to 1.25 cm diameters.
* Herbal ingredients with anti septic and anti biotic properties can also be used here.
* Compound now in clinical trial by us is given below :-
  * Haridra (Curcuma longa)
  * Karanja (Pongamia Glabra)
  * Nimba (Azadirachta indica)
  * Amalakee (Emblica officinalis)
  * Patola (Trichosantus dioica)
  * Nyagrodhatwak (Ficus bengalensis)
  * Argwadhatwak (Cassia fistula).

All are in equal quantity with 2 bhavana in Jatee Swarasa (Jasminum officinale) and 2 bhavana in Triphala Kwatha (Terminalia chebula, Terminalia bellarica and Emblica officinalis).

OPERATIVE TECHNIQUE

Pre - Operative Preparations

1. Though the Agnikarma procedure can be done in OPD level; it is most advisable that the patient should be admitted one day prior to Agni karma. She should ha 24 hrs. of rest and good sleep.
2. Clinical assessment of fitness should b examined. Note the history, ag nutritional status, Oral Sepsis, Puls respiration, temperature, B.P., hea lungs, Spleen, liver. It is not advised to Agnikarma during menstruation.
3. Normal routine laboratory investigatio of blood, urine, stool should be carried o
4. Shaving of the vulva and a vaginal douc with panchvalkala kwatha should be don
5. Enema with Dasamoola Kwatha advisable and bladder should be empty
6. Total aseptic conditions should b maintained in the theatre and theatr articles and instruments.
7. Informed consent and counseling of th patient is mandatory.
8. Vaginal bimanual examination should b carried out.
9. Agnikarma vati should be proper autoclaved.
10. Lithotomy position is best.
11. Tetanus toxoid injection should be done patient is not immunized.

MAIN PROCEDURE

1. After speculum insertion dilate the cerv by steadying the anterior lip of cervix b volsellum.
2. Ignite the tip of 'vati', after diping in Jatyad taila, on spirit lamp. When the flam extinguishes red hot area of the vati shoul be gently apply on the eroded are beginning from 12 'o' clock position Repeat the procedure clockwise on cervi till all the area is being cauterized an looks like the colour of brownish o blackish.

   सम्यक्दग्धं.....तालवर्णं ।। सु. सू.
3. At the end small cervical dilator should be passed into the cervical canal to prevent stenosis.
4. After the proper inference of Agnikarma

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

put a gauze piece soaked with Jatyadi taila on the cervix.

5. Local anaesthesia use may or may not be applied.

POST OPERATIVE

1. Total aseptic condition should be maintained till 1 month after the procedure.
2. Light diet is advisable upto 2 days.
3. Daily pichu with Jatyadi taila should be done for one week.
4. Intercourse should be avoided for 1 month.
5. Samana drugs like Satavaree gulam, musaleekhadiradi kwatha (Sahasra yoga) Sringa basma should be administered at least for 1 month.

CONCLUSION

Cervical erosion is a disease which causes severe irritation, mental upset and general weakness to the patient. Even though response of Samana drugs in Ayurveda is reliable, the disease recurs in most of the cases. The Pathology of the disease is very much similar to the Samprapti of Vrana Sopha. As the disease is vata kapha pradhana agnikarma procedure has been tried. The outcome of the procedure is promising and good result oriented. The recurrence of the disease is very rare. Secondary complications were not noticed yet. This procedure should be subjected to rigorous clinical experiments and research. Hope that it can contribute certain new dimension in the management of cervical erosion.

पल-पल जीवन में आनन्द अविरल

जब उत्साह हो जीने का,
जब हर पल आप जीना चाहें भरपूर
बैद्यनाथ का वीटा-एक्स गोल्ड ।
स्वर्ण भस्म (शुद्ध सोना) की ताकत से भरपूर ।
जोश के लिए, उमंग के लिए आनंद से भरपूर जीवन के लिए ।

बैद्यनाथ

वीटा-एक्स

गोल्ड

स्वर्ण भस्म की ताकत से भरपूर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

STANDARDIZATION OF HERBAL FORMULATION : CHYAVANPRASH

M.Gupta, Swarnlata Saraf and S. Sar

It is recognized that health and desire of longevity is an inherent feature in all social orders. Now days with increasing pollution, we are more susceptible to common problems such as coughs, colds, respiratory difficulties, and loss of vital energies. And because of our busy life style, we can not lose precious days to illness. We reach for antibiotics, which quickly cures - but at the cost, reducing our resistance to other kinds of infections. Stress is another critical problem at home or at work, even at schoolchildren's. We have to cope with much more in much less time.

So, to overcome these problems, the herbal formulation has long history of use and better patient compliance as well as public acceptance. It has renewable resources, local availability in developing country like India, no side effects, economical and their cultivation and processing is friendly. The herbal formulations basically de-root the disease unlike synthetic medicines.

Herbal remedies derived from plants represent substantial production of global market and in this respect certain parameters must be used for the proper standardization of formulations. Because, these formulations are chiefly composed of herbs or its parts so there may be adulterated or deteriorated in finished product. So, the time comes to check formulation scientifically through well-established norms and standards in every step of processing from raw material to finished product to meet standard value given in monograph.

Standardization of product can play an important role to maintain the quality of product which result uniform efficiency by a particular dose. Uniform quality can be maintained by use of standards and its numerals. The standardization of any formulation can be carried out in three steps as follows :-

1. Raw Material standardization
2. Process Standardization
3. Finished Product Standaridization

Chyavanprash is selected as model herbal formulation for standardization, because of its prophylactic as well as dietary value in m of the population. It is an Ayurvedic or her Rasayan used as rejuvenating food. It helps balance physical, mental, emotional and spiritu aspects of life in order to assure optimal hea It is prepared strictly from 49 totally natural a fresh ingredients including Amla as main act herb. Amla or Indian Gose berry is one of t worlds best sources of vitamin C, which work immune system, It is totally natural origin, sa and completely free from side effects. It is th best immuno-modulator formulatio recommended for Ketabolic disease like chron infection or pulmonary infections, tuberculosis asthma, cough, inhibit hepato toxicity, induc fibrosis and cure ulcers.

Standardization of Chyavanprash:

(1) Raw Material standardization

Raw materials are to be estimated for i morphological identification, percentage puri and microscopic analysis for qualitative an quantitative estimations. Table is given for Ra material standardization for major drugs.

(2) Process Standardization

In such type of standardization th processing conditions like, temperature, ligh humidity and time period of each steps shou be under controlled. Conditions which ultimate give identical products to all respect.

Such procedures are in need to b established , which can be achieved b sustainable efforts through generation.

(3) Finished Product Standardization

These standardization standards ar given in Table. Currently new standard is include for quality assurance of Chyavanprash. i.e deterioration of free radical scavenging activi to prove anti-oxidant property.

Conclusion

By following the specifications for herba formulation like, Chyavanprash, we can mak indigenous formulations. Complementary t modern medicines, which can be very much useful for us regarding economy and easy availability, even in rural areas. The utility o

Standards of Few drugs for Chayavanprash

Drug & its amount (its gms):-	Punarvana (0.398)	Vasaka (0.398)	Kantakari (0.196)	Guduchi (not available)	Ashvagandha (0.796)	Cinnamomum (0.116)	Sesame Oil (0.398)	Amla (90.00	Haritaki	Lavang (0.128)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Standards of Few drugs for Chayavanprash

		Drug & its amount (its gms):-	Punarvana (0.398)	Vasaka (0.398)	Kantakari (0.196)	Guduchi (not available)	Ashvagandha (0.796)	Cinnamomum (0.116)	Sesame Oil (0.398)	Amla (90.00	Haritaki	Lavang (0.128)
			1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
01	AUTHENTIFICATION	Common Name (Syno)	Hog-weed	Arusha Baksa (Bang.)	Bhatakatiya	Gilioe, Amrita	Asgandh, Asoda (Guj.)	Kalmi-Dalchin	Teel oil, Benne oil	Aonla, Amla, Indian Goose-Berry	Harde, Myrobalan	Clove
02		Biological Source	Herbs of Boerhavia diffusa	Leaves of Adhotoda Vasica	Whole plant of Solanum xanthocarpum	Dried matured pieces of stem of Tinosporia cardifolia	Roots of Withania sommnifea	Dried inner bark of Cinnamomum ze lanicum	Fixed oil of Seeds of Sesam Indicum	Dried & fresh fruit of Emblica Officinalis	Dried ripe fruit of Terminalia Chebula	Dried flower bud of Eugenia caryo-phyllata
03		Family	Nyctaginec eae	Acanth aceae	Solanace ae	Minispermac eae	Solanaceae	Lauraceae	Pedaliace ae	Euphorb ieceae	Combretac eae	Myrtacea e
04	ASHVALUE	Total Ash	Not more than 13.0%	Not more than 17.0%	Not more than 11.0%	Not more tnan 11.0%	Not more than 6.5%	Not more than 5.0%				Not more than 7.0%
05		Acid Insoluble Ash	Not more than 4.0%	Not more than 1.0%	Not more than 3.0%	Not more than 2.0%	Not more than 1.2%	Not more than 2.0%				Not more than 0.75%
06	EXTRATIVEVALUE	Alcohol Soluble Extractive	Not less than 3.0%	Not less than 6.0%	Not less than 6.0%	Not less than 3.0%	Not less than 20.0% (in 25% alcohol)					
07		Water Soluble Extractive	Not less than 10.0%	Not less than 27.0%	Not less than 16.0%	Not less than 11.0%	Not less than 16.0%					

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

08	Foreign matter	Not more than 2.0%	Not more than 2.0%	Not more than 2.0%	Not more than 2.0%	Not more than 2.0%				Not more than 1.0%
09	Wt.per ml.						0.916-0.919gm			
10	Acid Value						Not less than 2			
11	Iodine Value						103-116			
12	Saponific-ation						188-195			
13	Free Fatty Acid						Not less than 1.0%			
14	Un-saponifiable Matter						Not more than 1.5%			
15	Refractive Index						1.472-1.476			
16	Volatile Oil Content					Not less than 1.0% v/w				100 gm of Clove Yield 16 ml Oil
17	Evaluation Assay-Analytical Method Used	TLC & UV Spectrophotometric analysis	By HPLC Analysis of Vasicin	Determination of Solasodine by HPLC	By HPLC	By HPLC				Carried out by Volatile Oil Determination
18	Identity Test		By TLC	By TLC		By TLC				

specifications of herbal formulations can produce a monograph for a particular formulation.

References

1. Indian Herbal Pharmacopoeia, Vol.I, Published by RRL and IOMA, Pg. 1,38, 139, 156, 165.
2. The Pharmacopeia of India, 1955, Pg. 120, 122, 123, 144, 145, 400.
3. Singh Ramsushil, Ayuvedic Pharmacopeia, IInd Ed. 1983, Pg. 44, 144, 145.
4. Pharmacy, am. J. Pharm. Ed.. 1996, 60 Vol., Pg. 358.
5. Kokate, C.K., Purohit, A.P., Gokhale, S.B., Pharmacognosy, 1999, Ed. 12th, Pg. 78, 240.
6. Remington, Mack Publishing Company 1995, Vol. I, Ed. 19th, Pg. 440, 833.
7. Wallis, I.E. Textbook of Pharmacognosy, 1997, Ed.5th, Pg. 563.
8. Consumer Reports, Herbal Roulette, 1995.
9. Weber, L., Natural Health, 1997, Pg. 131.
10. Menon, L.G., Kuttan R., Kuttan, G., J. Exp. Clin. Cancer. Res.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Therapeutic value of Herbo-mineral Ayurvedic drugs for Irritative Bowels Syndrome; (IBS)

Dr. M.M. Pandya, Ayurved-Acharya, M.A. Ph.D.;

Introduction :- It is estimated that about 8% of total ailments suffer from IBS. In Ayurveda such type of disease may be included in Atisara. Some scholars include it in a category of Sangrhini. But by close scrutiny of Etio-pathology of IBS non of this can be included in such categeory. Anyhow in modern medical science (MMS) there is no effective medical treatment for such vexatious ailment. Taking into consideration this aspect Ayurvedic herbomineral drug therapy was tried.

In all 25 patients suffering from IBS were included in this study. After period of fortnight treatment results were assessed and was found very effective, in contrast to MMS drug therapy.

Material and Method:- In all 25 patients were included in this study but patients suffering from amoebic or bacilliary dysentery, entero-gastritis, or chronic disorder like TB of intestine etc, were excluded from this study. Patients were classified according to age and sex. Socio-economical condition, signs and symptoms were recorded, and were advised for radiological examination before the treatment is started. Almost all were taking MMS drug therapy but of no avail.

Table No. 1 Sex and Age

Years	Male	Female	Total	%
15to30	2	3	5	20%
31to40	5	7	12	48%
41to50	2	3	5	20%
51onward	1	2	3	12%
Total	10	15	25	100%

Table No. 2. Socio-Economic

Business	6	24%
Professionals	8	32%
Service	5	20%
House Hold	6	24%
Total .	25	100

Table No. 3. Signs and Symptoms

Diarrhoea	25	100%
Gripping	21	84%
Anorexia	18	72%
Nausea	12	48%
Fatigue	22	88%
Stomatitis	13	52%

Table No. 4. Radiological Exam.

Barium Meal X-Ray	14	56%
Plain X-Ray	4	16%
USG	12	48%

Revealed loss of haustrations and tube like appearance of colon.

Does not reveal any abnormality.

Revealed small patchy lesions of lumen of intestine.

Herbo-mineral drugs contained; powder of kernel of Jamun seed. (euginia jambulina) kernel powder of Amrafal (mangifera indica), Bilva Twak, (Aegle mermus skin), Dadim Twak (Puncia granatulm skin), Sunthi (Zingeber officiale), Ashvagandha (Withinia somnifera), Jatiphala (Myristica fragrant) Shankha Bhasma, Allum, and Avipattikarana Chn. Mixture of all these ingredients was given in dose of 2 to 3 grams thrice a day. Dietetic regime was strickly observed. Only boiled and cooled water given. Whey (Takr) and curd (Dhai) was given freely. Wheat, beams, milk and fried articles were strickly prohibited.

Discussion:- IBS is a dilemma for doctors because no definite cause can be attributed for its emergence. Generally change in life style, irregular dieting, unhygienic water for drinking, addiction of alcohol or tobacoo in form of smoking or chewing and strees and strain are believed as predisposing factors for IBS.

It is also known as mucus colitis or nervous diarrhoea. It is characterized by aching or colicky pain in abdomen., urge of passing stool can not be delayed, generally occurs just after

Hon. Consulting Physician; Health centre Vatsalyadham. Madhi. Pin-394340

3. Singh Ramsushil, Ayuvedic Pharmacopeia, IInd Ed. 1983, Pg. 145, 400.
8. Consumer Reports, Herbal Roulette, 1995.
9. Weber, L., Natural Health, 1997, Pg. 131.
10. Menon, L. G., Kuttan R., Kuttan, G., J. Exp. Clin. Cancer. Res.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

taking meal, tiredness, lethargy bloody mucus may be present, anxiety, neurosis, may be associated.

In Ayurveda this phenemonon is discussed under the topic of Bhayatisar or Shokatisar (due to fear or grief). Pandit Bhavmishra alludes it specific symptom "DIVA PRAKOPO BHAVTI RATRAU SHANTAM CHA GACHHATI". (Bh.P.M.K. 4-22) It is aggravated during day. Some scholars consider it as Grahini or Sangrahini. But etiological factors described by Charaka are similar to MMS concept. Yo BHUKTE VIDHIM TYAKTVA GRAHINI DOSHAJAN GADAN. (Ch. Chi. 15-40) Morbidity takes place in Grahini to persons who cannot control limitation in diet. Pandit Bhavmishra is of the opinion that Sangrihin is DURVIGNEYA (difficult to identify), DURNIVAR (uncurable) and CHIRANUBANDHINI (long lasting). (Bh.P.M.K. 4.22).

Vagbhatta (in AH) holds that BHAYATISAR and SHOKATISARA may be due to provocation of VAYU (A.H. Chi. 60-123).

But it becomes difficult to understand how such psychic factors act on intestine. Because many people might have stress, strain and worries but they do not get such agony of ailment.

MMS Concept of IBS :- According to MMS it is due to irritation of mucus membrane of intestine flora, which reduces absorption capacity and as a result of it undigested food materials thrown out in watery or semi liquid form. But to them also it is obscure how psychic factors act on intestine.

Latest research carried out by Dr. J.D. Wood, a gastro-enterologist and head of the department of California Medical School, USA, has published an article under the title of "Enteric nervous system, serotonin and irritative bowels syndrome". It is observed that serotoninia biochemical secretion is governed by neurotransmitors of the brain. It produces hormone known as "Paracrine". This hormone releases signals from entrochromaffine in cells and enteric mast cells. Thus function of serotoni interacts with receptors on enteric neurons and sensory afferents. This may irritate luminal surfac of intestinal mucus membrane and weakene absorption of undigested material and results a diarrhoea.

Astonishingly similar view is als elucidated by Charaka, while dealing wit Grihiniroga. According to him. "Life, vigou physical build up, digestive capacity, Ojas (hormone secretion), etc are precipitated whe DEHAGNI and DHATVAGNI dose not functio properly. This may irritate intestine and GRIHIN causes diarrhoea. "(CH.Chi. 15.2).

At present great deal of controversy i prevalent about nature of Ojas among scholars of Ayurveda. Learned scholar, Vaidya Bapalal has elaborately disccused about Ojas in his voluminous work. Charaka Eka Svadhyaya, and concluded after examination of opinion of othe scholars that Ojas is substance which provide immunity as well as stamina to combat any kin of psychosomtic disorders. Pandit C. Shrinive also agreed and mentions in his work. Th science and Art of Indian Medicine says that Oja is quintessence of all seven Dhatus of metabo transformation.

Taking into consideration the opinion these learned scholars it can be concluded th view of Charaka about loss of Ojas for the caus of imbalance of function of neurotransmitors mig have direct or indirect relation for abnormality intestine causing IBS.

Pharmocology of Hebo-miner drugs:- Herbal drugs are known a phytochemical so they are more homogeneou to animate human beings. Kernal powder Jambun, Amrafala, Dadim skin. Bilava skin a Kashaya Rasa predominants. Substance possessing Kashaya Rasa are composed compounds which are essenentialy Prithivi an Vayu. This taste is astringent in nature. By virtu of this property it helps to shrink intestinal mucu membrane. Allum is known as astringent. constringes small vessels and organic fibres a

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

thus acts in diminishing the exhalations, secretions and increases absorbtion capacity of intestinal mucus membranes. Shankh Bhasma is known is digestive, astringent, nutritive, phlegmatic and also as demulcent. Jatiphala as known as aromactic carminative, digestive, tonic, it allveietes gastric irritation. it is also nervine tonic. Ashvagadha is very well known to relieve stress and strain. It has action on CNS and useful to balance the secretion.

Avipattikara alleviation is very well known as digestive and alleviates Vayu and Pitta provocation. It can be said without any hesitation that this is an ideal and most rational combination of herbo-mineral drugs, for the treatment of IBS.

Table No. 5 Result :-

Reduction in number of stools	22 (88%)
Bulking of stools	20 (80%)
Good appetite	16 (64%)
State of well being	18 (72%)
Relief in stomatitis	13 (52%)
No improvement	4 (16%)

Patients who did not find any improvement were advised for further investigation to rule out any other abnormality like malignancy of lower colon. Or any where else.

It can be observed from table No. 5 that about 88% has definite improvement. This clearly indicates that Ayurvedic herbo-mineral drugs therapy has definite effect on IBS.

But it is more important to bear in mind that drugs must be genuine and fresh. Herbal drugs procured from market may be substandard or fake.

Conclusion:- It is apparent that Ayurvedic drugs for IBS are more effective and without any adverse effects of therapy. Many of herbal drugs are easily available at door step. It dose not cost much and easily affordable to anybody.

References:-

Charaka Sanhita. Edt by Yadvaji, Bombay Nirnaya sagar. 1932

Vagbhatta, Ashtang Sangraha, Sastu Sahitya Amdavad. 1942.

Bhavprakas Nighantu. Sastu Sahitya edition Amdavad. 1944.

B.G. Vaidya. Charaka Eka Svadhyaya. Baroda Uni. 1979.

Shrinivas Murty. The sciences and Art of Indian Medicine. Adyar. 1948.

C. Dwarkanath. The Fundamental Principles of, Ayurveda, Adyar 1954.

Nadakarni, Indian Materia Medica. Popular Publication Bombay. 1976.

Ganguli.L.K. Handbook of Medical Treatment, Academic Publication. Calcutta 1984.

Probe. Himalayas Publications. Oct-Dec. 2001. Benglore.

बैद्यनाथ

जन्मघूंटी

जन्म के बाद से ही बच्चों को इसका सेवन कराने से उनके स्वास्थ्य में कोई गड़बड़ी नहीं होती । इससे बुखार, खांसी, सर्दी-जुकाम; अजीर्ण, उल्टी होना, टट्टी होना, पेट फुलना आदि रोग दूर होते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद एवं आयुर्वेदत्तर चिकित्सा पद्धति

सेवा में,

श्रीयुत् सम्पादक
सचित्र आयुर्वेद
पटना

"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः"

आज भारत वर्ष में प्राचीन, अर्वाचीन, प्राच्यप्रतीच्य अनेक चिकित्सा सम्प्रदाय अपने-अपने चिकित्सा सिद्धान्तों के अनुसार रोग नाशन का कार्य कर रहे हैं । इसमें आयुर्वेद एवं पाश्चात्य वैद्यक ऐसे सम्प्रदाय हैं जो रोगियों के रोगहरण और रोगनिवारण का कार्य करते हैं । कुछ सम्प्रदाय ऐसे हैं, जिनका क्षेत्र बहुत मर्यादित है फिर भी उपयुक्तता व प्रतिष्ठा की दृष्टि से दोनों प्रकार के सम्प्रदायों में अन्तर नहीं है । चिकित्सक का आदर्श शत-प्रतिशत या अधिकतम रोगियों का रोगनिवारण करके उन्हें सुखी बनाने का होता है । इसलिये एकाध प्रतिशत रोगियों के लिये जो सम्प्रदाय रोगहरण करके सुख प्रदान करता है उसके लिये भी चिकित्सकों के मन में वही प्रतिष्ठा का स्थान होना चाहिए ।

चिकित्सक जिस चिकित्सा पद्धति में तथा वैद्यक के जिस अंग में व्यवसाय करता हो उसमें उसको अपने को सदैव योग्य रखना चाहिए । जैसे सर्वमान्य चिकित्सक को काय चिकित्सा में, शल्यचिकित्सक को शल्य तंत्र में, बालचिकित्सक को कौमारभृत्य में, वैद्य को आयुर्वेदीय चिकित्सा में, हकीम को यूनानी चिकित्सा में, डॉक्टर को ऐलोपेथी में, तान्त्रिक को मंत्र-तंत्र चिकित्सा में, होम्योपैथ को होम्योपैथी में, शुरलर को जीवरसायन चिकित्सा में, तथा प्राकृतिक चिकित्सक को निसर्गोपचार में आदि । जो चिकित्सक अपने चिकित्सा शास्त्र का अच्छा विद्वान हो तथा अपनी चिकित्सा पद्धति में बहुत निपुण होते हुए भी अन्य शास्त्रों और अन्य चिकित्सा पद्धतियों का बहिष्कार न करता हो अर्थात उससे परिचित होकर जो अपने शास्त्र को और अच्छी तरह आकलन करने के लिए तथा अपने रोगियों की चिकित्सा में अधिक सफलता पाने के लिए उनके उपयुक्त विषयों का ग्रहण करता हो, वही आदर्श चिकित्सक है । इसके विपरीत जो अन्य शास्त्रों की ओर आँख मूंद कर उनसे बहिष्कृत रहता है व केवल अ शास्त्र को श्रेष्ठ समझ कर उससे प्राप्त ज्ञान से आत्मसन्तु होता है वह कूप मण्डूक चिकित्सक है । फिर प्राचीन, अर्वाचीन, वृहत या लघु किसी भी एक चिकि पद्धति का चिकित्सक क्यों न हो । चरकाचार्य कहते कि बुद्धिमान, जिनमें चिकित्सक भी आते हैं सम्पूर्ण को अपना गुरू समझें और उनमें जो भी उपयुक्त वि हों उनको ग्रहण करके व्यवहार में लावें ।

आयुर्वेद महर्षियों के अनुसार भिषगोत्तम के लिए "अन्येषु शास्त्रेष्वबहिष्कृत" होना आवश्यक के कारण "अधिकाधिकं फल" न्याय से चिकित्सक जितने अधिक चिकित्सा सम्प्रदायों का अभ्यास करे उतना अधिक उत्तम बनेगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है परन्तु उनकी संख्या बहुत अधिक होने के कारण न्यून सम्प्रदायों के अभ्यास से अच्छी बहुश्रुतता प्राप्त करना तो आयुर्वेद व ऐलोपैथी पर्याप्त हैं । आयुर्वेद भारत अतिप्राचीन, प्राचीन ज्ञानविज्ञानाधिष्ठित लोकप्रिय लोकमान्य पद्धति है और ऐलोपैथी अत्याधुनि नवज्ञानविज्ञानाधिष्ठित, राज्यमान्य व राज्य प्रिय चिकि पद्धति है । इस प्रकार दोनों में बाह्यतः आकाश-पाताल अन्तर दिखाई देने पर भी ऐतिहासिक तथा वैज्ञानि दृष्ट्या सूक्ष्म विचार करने पर ऐलोपैथी में आयुर्वेद "जनक स्वभावो हि जन्ये तिष्ठति निश्चयम्" न्याय से जनक बीज रूपेण दिखाई देता है और इसी कारण से आयुर्वेद के अनेक सूत्र रूप विषयों को समझने समझाने के लिये बहुत उपयुक्त होता है ।

आज अष्टांग आयुर्वेद, अष्टांग संग्रह या अ हृदय नामक एक छोटी-सी संहिता में दिखाई देती परन्तु एक काल था जब इसका स्वरूप अनन्तपार, अ महौषधि के समान विशाल था । प्रत्येक अंग पर अ स्वतंत्र संहिताएं थी और कोई एक चिकित्सक आयुर्वे सब अंगों की चिकित्सा नहीं कर सकता था । इसी वर्तमान काल के समान प्राचीन काल में भी चिकि व्यवसाय में विशेषज्ञों की प्रथा थी । इसके वि ऐलोपैथी एक समय में नदी के मूल के समान छोटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है और काल प्रवाह के साथ बहते-बहते उसने आज प्राचीन आयुर्वेद से भी अधिक विशाल रूप धारण किया है। इसके अतिरिक्त आज यूनानी चिकित्सा, होम्यो चिकित्सा, जीवरसायन चिकित्सा, निसर्ग चिकित्सा (Naturopathy) मनश्चिकित्सा (Psycho therapy), आहार चिकित्सा (Balneo therapy), मर्दन चिकित्सा (Massage therapy), स्वेदन चिकित्सा (Pyrotherapy), सूर्यरश्मि चिकित्सा (Helio therapy) आदि अन्य अनेक चिकित्सा सम्प्रदाय चिकित्सार्थ उपलब्ध हैं।

मनुष्यों में उपलब्ध होने वाले विविध रोगों की चिकित्सा के लिए इतनी अधिक संख्या में चिकित्सा सम्प्रदायों का प्रचलित होना इस वस्तुस्थिति का द्योतक है कि केवल प्राचीनतम आयुर्वेद और अधुनातम पाश्चात्य वैद्यक ही नहीं कोई भी एक चिकित्सा पद्धति मनुष्यों में उत्पन्न होने वाले विविध स्वरूपों के सम्पूर्ण रोगों की चिकित्सा सफलता से करने में असमर्थ है। इसलिये जब किसी चिकित्सक को चिकित्सार्थ आये हुये किसी रोगी की चिकित्सा में अपनी अनुभूत चिकित्सा पद्धति से सफलता मालूम हो या यदि प्रारम्भ से ही किसी रोगी के लिए अन्य चिकित्सा अधिक उपयुक्त तथा सुखावह मालूम हो तो उसका कर्त्तव्य है कि वह अन्य चिकित्सा का प्रयोग करे और यदि स्वयं न कर सके तो उसके विद्वान के पास जाने में मार्गदर्शन करे। यह कार्य चिकित्सक तभी कर सकता है जब वह "अन्येषु शास्त्रेवबहिष्कृत" हो। इस योग्यता के आधार पर चिकित्सकों के तीन वर्ग किये जा सकते हैं -

1. **स्वतंत्र कुशल चिकित्सक** - जो एक चिकित्सा पद्धति में अच्छी योग्यता तथा अनुभव रखने वाला हो, परन्तु अन्य चिकित्सा पद्धतियों से बहिष्कृत हो।

2. **द्वितंत्र कुशल चिकित्सक** - किन्ही दो पद्धतियों में योग्यता रखने वाला चिकित्सक इस वर्ग में आ सकता है। परन्तु ऐलोपैथी व आयुर्वेद या ऐलोपैथी और होम्योपैथी के द्वितंत्र कुशल इस वर्ग में श्रेष्ठ समझने चाहिये। दो के संयोग में ऐलोपैथी सदैव होनी चाहिए क्योंकि इसका ज्ञान (विशेषत: इनके शारीर रचना विज्ञान, शारीरक्रिया विज्ञान, विकृतिविज्ञान, रोग विज्ञान आदि विषयों का ज्ञान) अन्य पद्धतियों की उपयुक्तता बढ़ाने में बहुत सहायक होता है।

3. **स्वतंत्र कुशलोऽन्येषु शास्त्रार्थेष्वबहिष्कृत:**- एक चिकित्सा पद्धति में अच्छी योग्यता व अनुभव रखने वाला और अन्य अनेक चिकित्सका पद्धतियों का अच्छा ज्ञान तथा काम चलाऊ अनुभव रखने वाला चिकित्सक। जो चिकित्सक रोगी के हित को अपना हित समझता है, अपनी ही चिकित्सका पद्धति को सर्वश्रेष्ठ और पूर्ण वैज्ञानिक तथा अन्य चिकित्सा पद्धतियाँ तुच्छ तथा अवैज्ञानिक हैं, उनके सम्बन्ध में इस प्रकार की उच्च नीचता की कल्पना नहीं रखता और "कोकल: फलदायक:" न्याय से किस समय कौन-सी चिकित्सा रोगी को हितकर होगी, इसका कोई ठीक नियम नहीं है, इसको ध्यान में रखकर अन्य चिकित्साओं की जानकारी प्राप्त करके आवश्यकता प्रतीत होने पर उनका उपयोग करके रोगियों को स्वास्थ्य प्रदान करता है, वही आधुनिक काल में श्रेष्ठ चिकित्सक है।

इस प्रकार की बहुश्रुतता चिकित्सक स्वयं प्राप्त कर सकता है, यदि वह दिल से चाहता है। परन्तु अनेक चिकित्सा सम्प्रदाय की जानकारी स्वयं प्राप्त करना एक कष्टसाध्य कार्य है।

ऊपर विविध स्वरूप के जो चिकित्सा सम्प्रदाय निर्दिष्ट किये गये हैं। उनके दो विभाग होते हैं। प्रथम विभाग में वे सम्प्रदाय आते हैं, जिनमें केवल अपनी विशिष्ट रोग सम्प्राप्ति (Pathogenesis), चिकित्सा के सिद्धान्त, चिकित्सा-संभार, चिकित्सा योजना आदि रोग चिकित्सा सम्बन्धी विषयों का ही विवरण होता है। इसको सम्पूर्ण चिकित्सा सम्प्रदाय कह सकते हैं। दूसरा विभाग उन सम्प्रदायों का है, जिनमें चिकित्सा सम्बन्धी विषयों के अतिरिक्त शारीर रचना विज्ञान, शारीरक्रियाविज्ञान, विकृत शारीर (Morbid anatomy), स्वास्थ्य रक्षण, रोग प्रतिबन्धन आदि सामान्य मूलभूत विषयों का विवरण रहता है। ये पूर्ण चिकित्सा सम्प्रदाय हैं। कुछ लोग आयुर्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को अपूर्ण कहते हैं । परन्तु उनका ये कथन (स्वयं वे कितने भी अन्य विषयों के पण्डित क्यों न हों) आयुर्वेद सम्बन्धी उनके अज्ञान, मिथ्याज्ञान, दुराग्रह, परप्रत्यनेय बुद्धि, विद्वेष आदि पर अधिष्ठित है । आयुर्वेद आधुनिक पाश्चात्य वैद्यक के समान एक सर्वांग एवं परिपूर्ण शास्त्र है, परन्तु आधुनिक पाश्चात्य वैद्यक की अपेक्षा संक्षिप्त है । उसमें शारीरादि विषयों के अतिरिक्त पाश्चात्य वैद्यक में न होने वाले या उपेक्षित दार्शनिक शारीर, स्वस्थवृत (Personal hygiene), दोष-दूष्यादि पर अधिष्ठित रोगी का परीक्षण, पथ्यादि अनेक विचारणीय विषय हैं । परन्तु व्यावहारिक दृष्ट्या सबसे महत्व की बात तो यह है कि वह आज भी प्रत्यक्षाप्रत्यक्षतया ऐलोपैथी से अधिक भारतीयों के स्वास्थ्य रक्षण और व्याधिहरण का कार्य कर रहा है ।

आधुनिक पाश्चात्य चिकित्सा में पहले की अपेक्षा बहुत तेज, विषैली औषधियाँ, सूचिकाभरण (Injection), शस्त्रकर्म आदि प्रयुक्त हुआ करते हैं । ये उपाय दोधारी शस्त्र के समान जैसे शीघ्र तथा अधिक लाभकारी होते हैं वैसे ही शीघ्र तथा अधिक हानिकारक भी होते हैं । सूचिकाभरण के उपाय का अध्ययन करने पर पाया जाता है कि शीघ्र लाभ होने के कारण आजकल औषधि प्रदान करने का सूचिकाभरण प्रधान मार्ग हो गया है । इसके आधार पर आधुनिक कायचिकित्सकों को "सूचि चिकित्सक" कहना भी उचित है । सुई लगाने से पहले सिरा आदि जिस प्रत्यंग में सुई लगानी होती है उसकी दृष्टि से स्थान पसंद करना पड़ता है और सुई लगाते समय वह ठीक उसी अंग में लग रही है या नहीं, इस पर भी ध्यान देने की आवश्यकता होती है । परन्तु अनेक चिकित्सक इसमें लापरवाही करते हैं । परिणाम यह होता है कि कभी-कभी सुई पेशी के बदले सिरा या सिरा के बदले पेशी या नाड़ी (Nerve) में लग जाती है और नाड़ीशूल, अंगघात, सिराशोथ, स्तब्धता (Shock) और कभी-कभी अकस्मात् मृत्यु तक भी हो जाती है । सूची का निर्जीवाणुकरण (Sterilization) ठीक न होने से त्वक् शोफ (Dermatitis), विद्रधि (Abcess), पेशीशोथ (Myositis), अपतानक (Tetanus) आदि उपसर्ग (infection) उत्पन्न होते हैं । वर्तमान काल में धनुर्वात उत्पति के सम्बन्ध में जो अनुसंधान चल रहा है, उस यह निष्कर्ष निकला है कि दुर्घटनाओं के कारणों छोड़कर धनुर्वात उत्पन्न होने का प्रधान कारण उपसर्ग सुई (infected needle) से सूचिकाभरण करना है इसलिये आजकल तीव्र औषधियों से चिकित्सा क समय उनसे सम्भाव्य छोटे-मोटे उपद्रवों के लिये सावध तथा सन्नद्ध रहकर चिकित्सा करनी चाहिए । जो इ प्रकार विचार करके चिकित्सा नहीं करते हैं, उनको अप ही औषधियों से अपने ही रोगी मरते हुए देखने क सौभाग्य प्राप्त होता है ।

किसी विषय का तुलनात्मक अध्ययन उस विष में जितना ज्ञानवर्धक व विशालदृष्टिदायक होता है, उत अकेला उस विषय का अध्ययन नहीं होता, यह विद्वन्म सिद्धान्त है । यह सिद्धान्त अन्य शास्त्रों की अपे चिकित्सा शास्त्र में अधिक उपयुक्त सिद्ध होता है । आ संसार में रोगहरण के लिये अनेक चिकित्सा सम्प्रद उपलब्ध हैं, परन्तु उनमें से कोई भी एक सम्प्रदाय विभि रोगों से पीड़ित सब रोगियों को निर्मुक्त करने में पर्याप्त समर्थ दिखाई नहीं देता । ऐसी अवस्था में उपयु सिद्धान्त के आधार पर प्रत्येक सम्प्रदाय के चिकित्स का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह रोगियों के हित दृष्टि से तथा अपने ज्ञान वृद्धि की दृष्टि से अन्य सम्प्रदा का ज्ञान भी प्राप्त करें । आयुर्वेद महर्षियों के चिकि सम्बन्धी उच्च आदर्श आचरण करने का यही एक म है । आदर्श प्राणाभिसर बनने के लिए चिकित्सकों प्राचीन काल से अधिक वर्तमान काल में अपने चिकि सम्प्रदाय के अतिरिक्त अन्य अनेक चिकित्सा सम्प्रदायों परिचित रहना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि वर्तमान का में चिकित्सा का क्षेत्र बहुत विशाल हो गया है । अ पास आये हुए रोगियों को स्वहस्तेन रोगमुक्त करना परहस्तेन रोगमुक्त कराना प्रत्येक चिकित्सक का क कर्त्तव्य होता है ।

प्राचीन काल में भी भारत में अनेक चिकित्स सम्प्रदाय रहे हैं और उत्तर काल में बाहर से आये हुए बहु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से अन्य सम्प्रदाय भी प्रचलित हुए, परन्तु किसी से भी आयुर्वेद को आघात नहीं हुआ । इसमें अंग्रेजों के साथ आया हुआ पाश्चात्य वैद्यक अपवाद रहा । उसका कारण यह है कि जैसे पाश्चात्य वैद्यक की वर्धिष्णु गुणवत्ता रही वैसे ही भारतीयों की आत्मघाती मूर्खता रही । अंग्रेजों के शासनकाल में जैसे आंग्लभाषा विभूषित सूटबूट पहने भारतीय, धोती पहने हुए संस्कृतज्ञ परन्तु आंग्लभाषा अनभिज्ञ अपने बुजुर्गों को तुच्छदृष्टि से देखते थे, वैसे ही पाश्चात्य वैद्यक विभूषित सूटबूट पहने भारतीय चिकित्सक, धोती पहने हुए आयुर्वेदज्ञ परन्तु पाश्चात्य वैद्यक अनभिज्ञ भारतीय चिकित्सकों को तुच्छता से देखते थे व उनसे विचार विमर्श करना अपनी प्रतिष्ठा के खिलाफ समझते थे । यह प्रवृति आज भी पूर्णतया नष्ट नहीं हुई है, परन्तु अब कुछ परिवर्तन हो रहा है तथा पाश्चात्य वैद्यक के मुखिया शुद्ध आयुर्वेद को मानने लगे है । उनके कारण शासन द्वारा भी आयुर्वेद को राज्यमान्यता मिली है । इस परिवर्तन के पीछे आयुर्वेद के प्रति पाश्चात्य चिकित्सकों की निष्ठा नहीं बल्कि वैद्यों को आधुनिक वैद्यक विज्ञान से बहिष्कृत रखके तथा मिश्र अभ्यास क्रम के वैद्यों का निर्माण बन्द करके अपना व्यवसायिक मार्ग निष्कंटक बनाने की शुद्ध स्वार्थवृत्ति है । इसलिये आयुर्वेद हितैषियों को शुद्ध आयुर्वेद के मोह में नहीं फंसना चाहिये, किन्तु स्वतंत्र में कुशल होते हुए " अन्य शास्त्रेष्वबहिष्कृत" होकर "इदं ब्राह्मणमिदं क्षात्रं शापादपि शरदापि" इस प्रकार की योग्यतायें प्राप्त करनी चाहिये ।

डॉ० योगेश कुमार
एम.डी. (अध्येता)-मौलिक सिद्धान्त विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर ।

डॉ० प्रमोद कुमार मेहर
एम.डी. (अध्येता)-कौमारभृत्य विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर ।

प्रो० बी० एल० गौड
विभागाध्यक्ष - मौलिक सिद्धान्त विभाग एवं निदेशक-राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर ।

पारम्परिक चिकित्सा पद्धतियों के सम्बन्ध में

सेवा में

रजिस्ट्रार
भारतीय चिकित्सा परिषद्, उ०प्र० (लखनऊ)

द्वारा,

श्रीयुत् सम्पादक
सचित्र आयुर्वेद
पटना

महोदय

निवेदन है कि आयुर्वेद एवं यूनानी पद्धतियों के डिप्लोमा कोर्स चलाने का प्रस्ताव तथा आपके विचार पढ़ने को मिला । पारम्परिक वैद्यकीय एवं हकीमी चिकित्सा को जीवन्त करने के लिए राज्य सरकार इन पद्धतियों का चार वर्षीय डिप्लोमा कोर्स शुरू करने पर विचार कर रही है । प्रस्तावित डिप्लोमा धारक सिर्फ प्रैक्टिस करने को अधिकृत होंगे, नौकरी के लिए नहीं ।

मेरा आपसे अनुरोध है कि निम्न बिन्दुओं पर अवश्य मनन करें, क्योंकि वैद्य और हकीम भारतीय चिकित्सा प्रणाली की रीढ़ रहे हैं, किन्तु आधुनिक चिकित्सा प्रणाली की चकाचौंध में उनका महत्व घट गया है ।

राज्य सरकार एवं आपके स्तर से जो पारम्परिक वैद्यकीय एवं हकीमी चिकित्सा पद्धति को जीवित करने के लिए जो प्रयास किये जा रहे हैं, वह स्वागत योग्य है, लेकिन गौर इस बात का करना है कि इन पद्धतियों को उतना ही महत्व दिया जाय, जितना कि एलौपेथ एवं होम्योपैथी आदि को प्राप्त है । नि:संदेह यह महत्व अध्ययन एवं शोध के स्तर पर विशेष रूप से देना होगा. यह दुर्भाग्य की बात रही है कि अन्य चिकित्सा पद्धतियों को बढ़ावा देते समय भारत की पारम्परिक चिकित्सा पद्धतियों की उपेक्षा कर दी गई है, आज जब पश्चिम आयुर्वेद की महत्ता को प्रतिष्ठित करने में लगा हुआ है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमें अपनी प्राचीन चिकित्सा पद्धति की महत्ता फिर से समझनी पड़ रही है ।

यही बात चाहें आयुर्वेद की हो अथवा यूनानी चिकित्सा की अथवा अन्य पारम्परिक चिकित्सा पद्धतियों की, इसकी कुछ सीमायें हैं, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि इसकी उपयोगिता पूरी तौर पर समाप्त हो चुकी है, सच तो यह है कि कुछ विषयों में पारम्परिक चिकित्सा पद्धतियां कहीं अधिक उपयोगी और कारगर हैं ।

आयुर्वेद की दुर्दशा का एक कारण यह भी है कि इसके अध्ययन एवं शोध की दिशा में कहीं कोई ठोस प्रयास नहीं हुए, इसलिए स्थिति बिगड़ गई । अब जब इन पारम्परिक चिकित्सा पद्धतियों को पुनः जीवित करने के प्रयास किये जा रहे हैं तथा यह पुनः सुनिश्चित किया जाय कि इस तरह के चिकित्सा प्राठ्यक्रम शुरू न किये जाय, जो अनेक निजी संस्थाओं द्वारा चलाये जा रहे हैं, जो जिन्हें कोई भी मान्यता प्राप्त नहीं है ।

इन्टीग्रेटेड स्नातकों के लिए अलग 'मिश्र चिकित्सा कौंसिल'' होनी चाहिए जो स्नातकों के हित कार्य करे, इसके लिए अलग से नियमावली बने, शासनादे के अन्तर्गत नहीं । शासनादेश तो कभी भी परिवर्तित सकते हैं, नियमावली नहीं । इससे इन्टीग्रेटेड स्नातकों हितों की रक्षा हो सकती है अन्य या नहीं ।

भवदीय

(डा० राकेश मोहन शर्मा)
चिकित्साधिकारी
राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय
बरईशाहरपुर - महामायानगर (उ०प्र०)
एवं
उपाध्यक्ष
राजकीय आयुर्वेदिक एवं
यूनानी चिकित्साधिकारी सेवा संघ
शाखा - महामायानगर

बैद्यनाथ
आयुसिड
अम्लपित्त, उदरशूल एवं कब्जियत दूर करने की दवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व

आयुर्वेद सर्वथा निर्दोष-पद्धति

अगस्त, 1963

आयुर्वेद एक निर्दोष चिकित्सा-पद्धति है । वह केवल व्याधियों का विज्ञान न होकर मुख्यत: स्वास्थ्य का विज्ञान है - आरोग्य शास्त्र है । वह मनुष्यों को स्वस्थ रखता है और दीर्घजीवी बनाता है । जितना पुराना अनुभव आयुर्वेद का है, उतना किसी अन्य चिकित्सा-पद्धति को नही है । अत: कोई आश्यर्च की बात नहीं की जिन रोगों ने विदेशी चिकित्साविज्ञों को परेशान कर रखा है और वे जिनका निदान अब तक ढूँढ नहीं पाए हैं - उनकी सफल औषध और उपचार आयुर्वेद में सैकड़ों-हजारों वर्षों से विद्यमान है ।

प्रत्येक देश के लिए वही चिकित्सा-पद्धति सर्वोत्तम होती है, जो वहाँ की प्रकृति, परिस्थिति और वातावरण के अनुकूल हो और जिसकी जड़ वहाँ की जमीन में हो-यही कारण है कि विदेशी हुकूमत की लाख कोशिश के बावजूद आज भी आयुर्वेद भारत की लोकप्रिय चिकित्सा बनी हुई है ।

डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन

आचार्य यादव जी के विचार

नि०भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के 22वें अधिवेशन (ग्वालियर) में अध्यक्ष-पद से भाषण देते हुए आचार्य जी ने कहा था -

"आयुर्वेद में योगों का संग्रह बहुत बड़ा है । केवल रसों से ही साढ़े चार हजार से अधिक योग वैद्यराज पं० हरिप्रपन्न जी ने 'रस योग सागर' में प्रसिद्ध किये हैं । इनके अतिरिक्त कषाय, आसवारिष्ट, घृत, तैल आदि योगों का संग्रह किया जाये तो एक योगसागर बन जावे । यद्यपि ग्रंथकारों ने सब योगों को अनुभव करके ही लिखा है तथा उनमें से विशेष लाभप्रद, निर्माण में सुकर, सुप्राप्य द्रव्य और वर्त्तमान वैद्यों के अनुभूत तथा आविष्कृत सब रोगों की चिकित्सा जिनसे बन सके, ऐसे योगों का एक संग्रह विद्यार्थियों के पाठ्य पुस्तक के रूप में बनाया जाय तो बहुत अच्छा हो, ऐसा एक योग संग्रह बन जाय तो विद्यार्थियों के अतिरिक्त धर्मार्थ औषधालयों और आयुर्वेदीय फार्मेसी वालों को भी इससे बड़ा लाभ होगा । ब्रिटिश फार्मोकोपिया बनाने के लिए कुछ वर्षों के अन्तर से विद्वान और अनुभवी डाक्टरों की एक समिति बैठती है और यूरोप, अमेरिका आदि देशों के चिकित्सकों की चिकित्सा के फल का नई फार्माकोपिया बनाती है, उसमें हीन सिद्ध हुई कई औषध निकाल भी दिये जाते हैं और अधिक गुणवाले कई योग सम्मिलित कर लिये जाते हैं । ऐसी अपने यहाँ भी एक समिति इस कार्य के लिए स्थापित की जाय, जिसमें प्रत्येक प्रान्त के दो-तीन विद्वान और अनुभवी वैद्य सदस्य हों, यह कार्य इस प्रकार सरलता से सम्पन्न हो सकता है-प्रथम आयुर्वेद महामण्डल और विद्यापीठ के मंत्री कुछ अनुभवी विद्वान वैद्यों की सहायता से आयुर्वेदीय पत्रिका फार्माकोपिया में समाविष्ट करने योग्य प्रयोगों की सूची तैयार करके प्रकाशित करें और तत्तप्रान्तीय सदस्य भी अपने प्रान्तों के वैद्यों की सहायता से, विशेष रूप से प्रचलित योगों की सूची तैयार करके आयुर्वेदीय पत्रिकाओं में प्रकाशनार्थ भेजें । यदि वे इस प्रकार की सूची बनाकर न भेज सके तो सम्मेलन अपना एक प्रतिनिधि भेजकर तत्तप्रान्त से सूची तैयार करावे । भारतवर्ष में वर्तमान समय में प्रचलित आतुरालय और धर्मार्थदातत्वय औषधालयों से भी ऐसी सूची भेजने की प्रार्थना की जाय । बाद में प्राप्त सूचियों पर समिति द्वारा विचार करके एक सर्व सम्मत सूची बनाई जाय और अनन्तर तदनुकूल ग्रंथ आयुर्वेदिक सर्वमान्य योग संग्रह (फार्माकोपिया) बनाकर प्रसिद्ध किया जाय ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

COLOMBO - SRILANKA
MEDICINA ALTERNATIVA

Welcome to the 41st Anniversary Celebrations

October, 2003, A.D,

World Congress of Integrated Medicine

41st Anniversary of Medicina Alternativa

27th, 28th, 29th, & 30th, October 2003 A.D.

(Monday, Tuesday, Wednesday & Thursday)

Field Workshops: 31st (Friday) October 2003 onwards

Hosted by

MEDICINA ALTERNATIVA (Alma-Ata 1962)

affiliated to

The Open International University

for

Complementary Medicines

CHIEF HONOURED GUESTS

Prof. Dr. Sir Master Luong Ming Dang

M.D., Ph.D., D.Sc. (M.A.), K.St.J.,
Knight Commander, Albert Schweitzer Award (2001),
Founder of Mankind-Enlightenment-Love and

Prof. Dr. Dame Lady Nguyen Theresa Thu Thuy

M.B.B.S. (Aust.)., M.D., Ph.D., D.Sc. (M.A.)., K.St.J.

Venue

Bandaranaike Memorial International Conference Hall and Other Centers in Colombo, Sri Lanka

Pre Congress Meeting
27th October 2003 (Monday)

Post Congress Field Workshops
31st October 2003 (Friday)
1st November 2003 (Saturday)
2nd November 2003 (Sunday)

Further details from :

Lord Pandit Raja Guru Holy Tibetian Lama Healer
WHO Certified Fellowship Holder of Master Chinese
Acupuncturist Prof. Dr. Sir Anton Jayasuriya,
Chairperson Medicina Alternativa
No. 28, International Buddhist Centre Road,
Colombo-6, Sri Lanka
Telephone : 0094-1-360242
Fax : 0094-1-364148
e-mail : medalta@lanka.ccom.lk
: medalta@eureka.lk
: intopenunicrned@hotmail.com
: antonjayasuriya@yahoo.com
Mobible Ph.No. : 0094-722 44559

Congress Registration Fee : The Congres registration fee is U.S.$ 295 or equivalent in a currency or (payable by credit card*)

The Directors of Medicina Alternative take gre pleasure in informing that the activities of t World Congress of Integrated Medicine will ta place on 27th, 28th, 29th, & 30th October 2003. A. at the Bandaranaike Memorial Internationa Conference Hall and other centers in Colomb Sri Lanka.

Pre-Congress: Clinical Meetings on 27th Octob 2003 A.D. at the Bandaranaike Memoria International Conference Hall, Colombo, S Lanka.

SOME LECTURE TOPICS:

PROF. DR. SIR ALBERT NAI YEN KOU (Taiwa R.O.C.)
Chinese Chiropractic Methods in Sports Rheumatology

PROF. DR. SIR RAVI PONNIAH (U.K.)
Somatic Opthalmology Diagnostics

PROF. DR. DAME MEHER MASTE MOOS(India)
Light Therapy, Philosopy

PROF. DR. SIR E. MAYISVREN (Malaysia)
Herbal Therapy

SIR BRIAN CHARLESTON-STOKES & LA DAME JENNIE CHARLESTON-STOKES (U.
Laser Therapy

DR. HEMAMAL JAYAWARDENA (Sri Lanka)
Medico-Legal Problems of Sports & Malpract

PROF. DR. DAME ANGELIKA MEHM (Germany)
Update of Homoeopathic Research

Note: Free admission to students in the connec medical fields (Tax only will be levied). Exhibitors welcome.

Special group concession rates are available.

Any currency or valid credit card accepted at t Registration Desk.

NOBEL PRIZE FOR ALTERNATI MEDICINES TO BE ESTABLISHED.

*concession for payment made on or *before* 30

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

August 2003, a 50% concession is granted.

2003 A.D.

41st Anniversary Year of Medicina Alternativa
World Congress of Integrated Medicine
Dates of Congress : 27th to 30th October 2003

Post Congress:

Twelve International Clinicians and Scientists will conduct Post Congress Workshops which will encompass the holistic approach to therapy and the Integration of Medicines.

Professors	*Disciplines:*
1. Edwards	- Integrated Medicine
2. Hairuo	- Clinical Methods
3. Meher Master-Moos	- Colour Therapy
4. Manners	- Sono Therapy
5. Plog	- Laser Therapy
6. Nystedr	- Homoeopathy
7. Morais	- Sports Medicine
8. Popkin	- American Science
9. Weng	- Chinese Medicine
10. Hettigoda	- Ayurveda in Integrated Medicine

Theme Speakers:

Honoured Delegates:

Levin	(Austria)	Gupta	(India)
Ong	(Australia)	Mohsin	(Pakistan)
Crothers	(Australia)	Qureshi	(Pakistan)
Mannan	(Bangladesh)	Kim	(Korea)
Sweetnam	(Canada)	Jacobsson	(Sweden)
Boel	(Denmark)	Stauder	(Germany)
Jacoby	(Germany)	Mistry	(India)
Ethiraj	(India)	Chappuis	(Switzerland)
Rebello	(India)	Jirong	(Australia)
Nystedt	(Norway)	Coleman	(U.K.)
Chem	(Malaysia)	Mehta	(U.S.A.)
Edwin	(Macedonia)	Shriyann	(U.S.A.)
Imlauer	(Austria)	Stjernholm	(U.S.A.)

The following topics will be discussed at the Congress:

- Euthanasia: The Right to Live and Die.
- The Morality and Ethics of Cloning
- Doctors Do more Harm than Good.
- Illegal practice of Medicines.
- Xeno Transplants.
- Nobel Prize in Medicine.

The Environment & Illness

2003 A.D.
41st Anniversary Year of Medicina Alternativa
World Congress of Integrated Medicine
2003 A.D.
Dates of Congress : 27th to 30th October 2003 Colombo, Sri Lanka

REGISTRATION FORM

Name :.....

Qualifications :.....

Postal Address :.....

.....

Country :.....Tel.....

Fax:.....

e-mail:.....

I will/will not attend the Congress. ☐

I will read a paper/carry out a Workshop. ☐

Title of paper or Workshop:.....

.....

I wish to be convocated a certificate ☐ and medal of distinction ☐ or Knighthood at the World Congress.

Annexed Cheque / Draft / Euro Cheque

*Congress Registration Fee** US$. 295/= or equivalent payable by post to
Prof. Dr. Anton Jayasuriya, Chairperson,
Account No. : RFC/SA/USD/069,
Peoples Bank,
C/o No. 28, International Buddhist Centre Road,
Colombo 6, Sri Lanka
or Send credit card number and date of expiry by e-mail (medalta@lanka.ccom.lk, medalta@ureka.lk, intopenunicumed@hotmail.com) or Fax (0094-1-364148)
50% Concession if paid on or before 30th August 2003.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तर प्रदेश

वाराणसी

Silver Jubilee Year

NATIONAL SEMINAR ON RASA SHASTRA

(October 19-21, 2003)

Organised by:

Department of Rasa Shastra
Faculty of Ayurveda
Institute of Medical Sciences
Banaras Hindu University
Varanasi-221005

BACKGROUND

Kashi is the spiritual and cultural capital of India. It showed the path of spiritual light, music Vedanta, Art, Ayurveda and cultural event since the pre-historical era to the present. Great Kashiraj Deodas Dhanwantari and Shusruta taught Ayurveda at Kashi. At present five universities are existing at kashi and Banaras Hindu University is the largest residential university of the Asia having lush green campus. We are happy to inform you that the department of Rasa Shastra, Faculty of Ayurveda, Institute of Medical Sciences, Banaras Hindu University is completing 25th year successfully since its inception. In order to celebrate the Silver Jubilee the department of Rasa Shastra has decided to hold a National Seminar on Rasa Shastra from 19 to 21 October 2003.

As you are aware preparation of Ayurvedic medicine i.e. herbal and herbo-mineral preparation have potential to cure chronic and resistant diseases. Since many centuries it is practised successfully for the service of the ailling humanity. It is the need of hour to standardise the process of manufacturing of the drugs at different levels, their safety and efficacy evaluation as per W.H.O. guidelines. This events provides a platform to institutions and industries to upgrade the latest development and research in the use of varieties of medicinal products. Besides the semiar will focus on the salient features of the latest research and development initiative including patent laws.

The proposed National Semiar on Rasa Shastra will provide a platform for discussion to participants, experts, scientists from various disciplines from Institutions as well as industries to evaluate the current trends and to take future direction in revival and development of Rasa Shastra.

We are cordially awaiting you at Varanasi for your active participation and presence to make the seminar successful.

THEMES

Paper and Poster presentation on various aspects of Rasa Shastra are proposed. The plenary and parallel technical sessions will be organised on the following themes-

1. Fundamentals and History of Rasa Shastra.
2. Concept of Lohavedh and Dehavedha in Rasa Shastra.
3. Cultivation, Collection and Storage of raw material.
4. Drug standardization/GMP and patent law.
5. Safety and efficacy evaluation of Ayurvedic drugs
6. Legal aspect of Ayurvedic medicines (Drug and cosmetic act)
7. Education, research and curriculum of Rasa Shastra.
8. Challenges in the field of Drug Research.
9. Industry and institute relationship.

SUBMISSION OF PAPERS: Delegates are required to send two copies of computer typed abstract within 200 words on A4 size paper. Name and details contact information of the author along with the Registration fee should be mentioned properly. Name of the presenting author should be first and in italics. Please also state the theme under which you would like your paper to be considered. A souvenir of abstracts will be published during the Seminar and the Proceedings of the National Seminar on Rasa

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Shastra containing full length papers would be brought out at a later date.

FACILITY FOR PRESENTATION : 35 mm Slide projector, OHP and LCD projector.

EXHIBITION/DEMONSTRATION : An exhibition and demonstration by various Institutes and Industries will be organized.

VENUE: Faculty Building of Ayurveda, Institute of Medical Sciences, Banaras Hindu University, Varanasi.

Varanasi is well connected by Air/Rail/ Road to all major cities of India. Banaras Hindu University is about 8 Km. from Varanasi Rly station.

REGISTRATION : Participants in the seminar are required to register themeselves as delegates by paying the registration fee. The Registration fee may be paid by crossed Demand Draft in favour of **NATIONAL SEMINAR ON RASA SHASTRA-2003** payabla at Bank of Baroda, B.H.U. Registration fee will entitle an outstation participant to the Seminar kit, working lunch and the dinner.

Category	Upto 16 Aug.'03	After 16 Aug.'03
Indian Deliegate	650	750
Associate Deliegate	500	650
Post Graduate Scholar	500	650
Foreign Deliegate	US$100	

ACCOMMODATION: Accommodation will be provided in the guest Houses/Hostels in the walled campus to only registered delegates subject to availability of accommodation in the University. Accommodation can be arranged in the Hotels ranging from Rs. 200/- to 2000/- on request provided that a demand Draft and written request is sent in advance to the Organising Secretary.

IMPORTANT DATES

* Abstract Submission	**16 Aug., 2003**
*Registration Deadline	**16 Aug., 2003**
*Full Papers	**16 Sept., 2003**

ADVERTISEMENT TARIFF

Souvenir will be published on this event and tariff for advertisement are as follows:

Inside Wrapper	15,000/-
Outside Wrapper	25,000/-
Full Page Color	10,000/-
Full Page B/W	6,000/-
Half Page B/W	3,000/-

Silver Jubilee Year

NATIONAL SEMINAR ON RASA SHASTRA

(October 19-21, 2003)

REGISTRATION FORM

Name of the Participants.....

Full Address.....

.....

.....

Tel: Off.....Resi.....

Email.....

Age.....Nationality.....

Kindly enrol me as a delegate/exhibitor/co-sponsor/advertiser for the saminar. I am enclosing a demand draft No.....

Dated.....for Rs.....

on.....Bank in favour of National Seminar on Rasa Shastra - 2003 payable at Varanasi.

REGISTRATION: *DD in favour of "National Seminar on Rasa Shastra-2003" payable at Varanasi.*

Date :

Place : Signature

PATRON

Prof. P. Ramachandra Rao

Vice Chancellor

CHAIRMAN

Prof. S Mohanty

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Director
CO-CHAIRMAN
Prof. V.B. Pandey
Dean
ORGANISING SECRETARY
Dr. C.B.Jha
TREASURER
Dr. Neeraj Kumar
SECRETARIES
Dr. V.K. Joshi
Dr. V.P. Singh
JOINT SECRETARIES
Dr. K.N. Dwivedi
Dr. R.K. Rai
Dr. Satish Kumar

ORGANISING COMMITTEE

Dr. Manjari Dwivedi
Dr. M. Sahu
Dr. S.D. Dubey
Dr. R.D. Sharma
Dr. B.N. Upadhyaya
Dr. Y.B. Tripathi

ADDRESS FOR CORRESPONDENCE:

***Dr. C.B. Jha**
Phone: 0542-2307545 (O);2575149, 2308023 (R
Fax : 0542-2367867
E-mail: chandrabjha@rediffmail.com
***Dr. Neeraj Kumar**
Ph.0542-2307545 (O), 2368305 (R)
Department of Rasa Shastra
Faculty of Ayurveda, IMS,
Banaras Hindu University,
Varanasi - 221 005

बैद्यनाथ

मधु

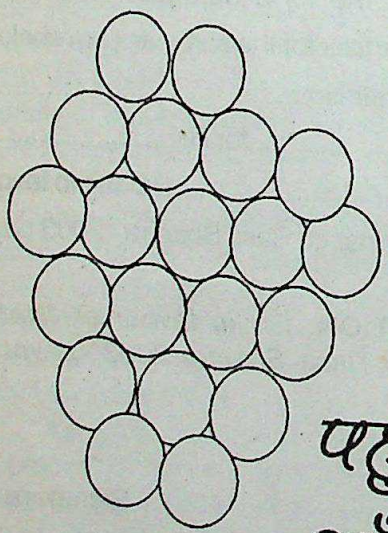

शरीर को शीतलता
पहुँचाता, भूख बढ़ाता है।
आँखों के लिए उपयोगी एवं
कांतिवर्द्धक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

P.Cd.		भाषा	
9801	अभिनव शरीर	हिन्दी	पं. दामोदर शर्मा गौड़
9804	अभिनव शारीरम्	संस्कृत	पं. दामोदर शर्मा गौड़
9807	अग्न्यतिसार संग्रहणी-कोष्ठवात प्रकरणानि	हिन्दी	
9810	अम्लपित्त प्रकरण	हिन्दी	आ०रघुवीर प्र०द्विवेदी
9813	AROGYA PRAKASH ENG.		
9816	आरोग्य प्रकाश	हिन्दी	पं. रामनारायण शर्मा वैद्य
9819	अष्टांग संग्रह की एवं वर्गीकरण	हिन्दी	डा. मायाराम उनियाल
9820	अष्टांग संग्रह	हिन्दी	पं. वागभट्ट
9821	बिहार की वनस्पतियाँ	हिन्दी	
9822	अष्टांग संग्रह (शरीर, निदान चिकित्साकल्पसिद्ध स्थान)	हिन्दी	पं. वागभट्ट
9825	अष्टांग संग्रह सूत्र स्थान	हिन्दी	पं. लालचन्द्र शास्त्री
9828	अष्टांग संग्रह उत्तरस्थान	हिन्दी	डा. मायाराम उनियाल
9831	आत्ययिक चिकित्सा	हिन्दी	
9834	औषधि विज्ञान शास्त्र	हिन्दी	पं. विश्वनाथ द्विवेदी
9835	आयुर्वेद अनुसंधान दर्शिका	हिन्दी	
9837	आयुर्वेदीय पंचकर्म विज्ञान	हिन्दी	वैद्य हरीदास श्रीधर कस्तुरे
9840	आयुर्वेद सार संग्रह	हिन्दी	संकलित
9846	आयुर्वेदीय हितोपदेश	हिन्दी	वैद्य रणजित राय देसाई
9849	आयुर्वेदीय क्रिया शरीर	हिन्दी	वैद्य रणजित राय देसाई
9852	आयुर्वेदीय पदार्थ विज्ञान	हिन्दी	वैद्य रणजित राय देसाई
9855	आयुर्वेदीय व्याधि विज्ञान (पूर्वार्द्ध)	हिन्दी	वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य
9858	आयुर्वेदीय व्याधि विज्ञान (उत्तरार्द्ध)	हिन्दी	वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य
9861	BAIDYANATH BOOK OF AYURVED KNOWLEDGE	ENG.	
9864	BAIDYANATH THERAPEUTIC GUIDE	ENG.	PT. DURGA PD. SHARMA
9867	BASIC PRINCIPLE OF AYURVEDA RESEARCH	ENG.	SRI D.P. SHARMA AND R.P. SHAH
9868	बिहारी के आदिवासी एवं जड़ी बूटियाँ	हिन्दी	डा. मायाराम उनियाल
9869	उत्तराखंड हिमालय की वनौषधियाँ एवं खनिज	हिन्दी	डा. मायाराम उनियाल
9870	भारतीय रस शास्त्र	हिन्दी	वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य
9871	बेदी वनस्पति कोष	हिन्दी	रामेश बेदी
9873	चरक एवं सुश्रुत के दार्शनिक विषय का अध्ययन	हिन्दी	डा.ज्योतिमित्र आचार्य
9876	चर्मरोग निर्देशिका	हिन्दी	आचार्य रघुवीर प्रसाद द्विवेदी
9882	DIGESATION & METABOLISM IN AYRUVED	ENG.	DR. C. DWARKANATH
9882	द्रव्यगुण विज्ञानम् (पूर्वार्द्ध)	हिन्दी	वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य
9885	द्रव्यगुण विज्ञानम् (उत्तरार्द्ध)	हिन्दी	वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य

Gurukul Kangri Vishwavidyalaya LIBRARY HARIDWAR

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

P.Cd.		भाषा	
9888	किशोर रक्षा और ब्रह्मचर्य	हिन्दी	वैद्य रवीन्द्र शास्त्री
9891	मानष रोग विज्ञान	संस्कृत	श्री बालकृष्णजी अमरजी पाठक
9894	MEDICINAL FLORA OF GARHWAL HIMALAYAS	ENG.	DR. MAYARAM UNIYAL
9897	मोटापन कम करने के उपाय	हिन्दी	श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी
9901	नेत्र चिकित्सा	संस्कृत	डा. बालकृष्णा शिवराम मुंजे
9904	नेत्र रोग विज्ञान	हिन्दी	
9907	निदान चिकित्सा हस्तामलक (प्रथम खंड)	हिन्दी	वैद्य रणजित राय देसाई
9910	निदान चिकित्सा हस्तामलक (द्वितीय खंड)	हिन्दी	वैद्य रणजित राय देसाई
9913	निदान चिकित्सा हस्तामलक (तृतीय खंड)	हिन्दी	वैद्य रणजित राय देसाई
9916	निदान चिकित्सा हस्तामलक (चतुर्थ खंड)	हिन्दी	वैद्य रणजित राय देसाई
9919	पदार्थ विज्ञान	हिन्दी	पं. रामरक्ष पाठक
9922	पारद विज्ञानयम	हिन्दी	वैद्य वासुदेव मूलशंकर द्विवेदी
9925	परिषधं शब्दार्थ शरीरम्	संस्कृत	पं. दामोदर शर्मा गौड़
9928	PROBLEMS OF AYURVEDIC RESEARCH	ENG.	SRI S.K. SHASTRI
9931	प्रयोगात्मक अभिनव द्रव्य गुण विज्ञाणम् (पुस्तकालय संस्करण)	हिन्दी	डा. मायाराम उनियाल
9934	प्रयोगात्मक अभिनव द्रव्य गुण विज्ञाणम् (छात्र संस्करण)		
9937	पंडित रामदयाल जोशी स्मृति ग्रंथ	हिन्दी	दिनकर पाण्डेय
9940	रस-भस्म सेवन विधि	हिन्दी	पं. वेनी प्रसाद वैद्य
9943	संक्रामक रोग विज्ञान	हिन्दी	कविराज बालकराम शुक्ल
9946	SCIENCE AND PHILOSOPHY OF INDIAN MEDICINES	ENG.	SRI K.K. UDUPPA
9949	शारंगधर संहिता	हिन्दी	आचार्य राधाकृष्ण पराशर
9952	सिद्धयोग संग्रह	हिन्दी	वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य
9955	THERAPEUTIC GUIDE TO AYURVEDIC MEDICINES	ENG.	PT. RAMRAKSHA PATHAK
9958	TREATISE ON 30 BAID. AYUR. PRODUCTS	ENG.	PT. DURGA PD. SHARMA
9961	त्रिदोश तत्व-विमर्श	हिन्दी	पं. रामरष पाठक
9964	यूनानी चिकित्सा सार	हिन्दी	हकीम दलजीत सिंह
9967	यूनानी सिद्धयोग संग्रह	हिन्दी	हकीम दलजीत सिंह
9970	उपचार पद्धति और पथ्य	हिन्दी	वैद्य रवीन्द्र शास्त्री
9973	वैद्य सहचर	हिन्दी	पं. विश्वनाथ द्विवेदी
9976	वनौषधि शतक	हिन्दी	पं. दुर्गा प्रसाद शर्मा
9979	यादव स्मृति ग्रंथ		प. रामनारायण शर्मा वैद्य
9982	यौवन विज्ञान पर नया प्रकाश	हिन्दी	डा. लक्ष्मीनारायण शर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

आयुर्वेद के लिए नोबेल पुरस्कार की घोषणा हो

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नोबेल पुरस्कार एक प्रतिष्ठित पुरस्कार है । यह पुरस्कार प्रतिवर्ष अल्फ्रेड नोबेल की स्मृति में विभिन्न विधाओं के लिए विद्वानों को दिया जाता है । विभिन्न विधाओं में चिकित्साविज्ञान भी शामिल है । दुर्भाग्य है कि नोबेल संस्था की दृष्टि में केवल एलोपैथी ही चिकित्सा विज्ञान है जबकि यह वास्तविकता नहीं है । स्वयं स्व० अल्फ्रेड नोबेल ने अपनी वसीयत में कहीं नहीं लिखा है कि पुरस्कार केवल एलोपैथी को दिया जाय । उनकी वसीयत स्टॉकहोम स्थित स्टरगाटेन कार्यालय में रखी हुयी है । श्री अल्फ्रेड नोबेल जब जीवित थे, उस समय वर्तमान एलोपैथी का अस्तित्व भी नहीं था । अपनी युवावस्था में ज्यादातर वे बीमार रहते थे । अपनी चिकित्सा के लिए वे स्वयं वैकल्पिक पद्धति पर निर्भर करते थे । 60 वर्ष में उनकी मृत्यु उस समय हुयी जब एलोपैथी का वैज्ञानिक स्वरूप जनता के पास नहीं आया था ।

यह तथ्य है कि नोबेल पुरस्कार हमेशा सही व्यक्ति को नहीं मिले हैं । उदाहरण के लिए हृदय प्रत्यारोपण का सफलतापूर्वक प्रयोग क्रिश्चियन बर्नार्ड ने किया था, किन्तु उन्हें पुरस्कार से वंचित रखा गया । पुर्त्तगाल के शल्य चिकित्सक, इगाज मोनिज को दिया गया पुरस्कार भी संदेहों से भरा हुआ था । इन्सुलिन के आविष्कारक डा० बेस्ट को नजरअन्दाज कर दिया गया जबकि एक नकलची, मेकलॉड को डा० बेन्टिंग के साथ दिया गया । सामाजिक क्षेत्र में विश्व शान्ति के लिए दिये जाने वाले पुरस्कारों पर भी प्रश्नचिन्ह है । अहिंसा के पुजारी महात्मा गांधी को इसलिए नोबेल पुरस्कार नहीं दिया गया, क्योंकि एक भारतीय की हैसियत से उन्होंने विदेशियों (अंग्रेजों) को भारत छोड़ने के लिए विवश किया । इसके विपरीत डा० हेनरी किसिंजर को नोबेल शान्ति पुरस्कार दिया गया जिनपर हजारों वियतनामियों की हत्या करने का आदेश था । आशय यह है कि नोबेल पुरस्कार हमेशा विवादग्रस्त रहा है ।

आयुर्वेद एक प्राचीन पद्धति है । यह हजारों वर्षों से रूग्ण मानवता की सेवा कर रहा है । इस पद्धति में प्रख्यात् वैद्य भी हुए हैं एवं आज भी हैं । यदि चिकित्सा-विज्ञान का क्षेत्र व्यापक कर दिया जाता है और गुणों के आधार पर पुरस्कार दिया जाता है, तो यह सम्पूर्ण चिकित्सा-जगत् के लिए बेहतर होगा । हमें कोई आपत्ति नहीं है यदि इसमें अन्य वैकल्पिक चिकित्सा-पद्धतियों को भी शामिल कर लिया जाता है । हमें जानकारी मिली है कि श्रीलंका स्थित अन्तर्राष्ट्रीय पूरक चिकित्सा खुला विश्वविद्यालय ने भी मेडिसीना अल्टरनेटिवा के माध्यम से एक स्मृति-पत्र नोबेल फाउण्डेशन के कर्मचारी निदेशक, डा० माइकल सोलमैन को सौंपा है और इसकी प्रति इसके अध्यक्ष, प्रोफेसर सेमुएलसन बेन्जट को भी दी है । यदि आयुर्वेद जगत भी इसके लिए प्रयास करता है, तो नोबेल समिति पर दबाव पड़ेगा । दबाव की राजनीति से इस बात की सम्भावना हो सकती है कि एक न एक दिन आयुर्वेद के लिए भी नोबेल पुरस्कार की अनुशंसा हो सकती है । यदि केन्द्रीय सरकार भी इस दिशा में प्रत्यन करे, तो सफलता शीघ्र प्राप्त होने की सम्भावना बढ़ जाती है । आशा है, आयुर्वेद जगत् और सरकार इस दिशा में सार्थक कदम उठायेंगे ।

विश्व स्तनपान प्रोत्साहन सप्ताह

इन दिनों सम्पूर्ण विश्व में स्तनपान सप्ताह मनाया जा रहा है । बिहार सरकार की ओर से यह सप्ताह 01 से 07 अगस्त, 2003 तक मनाया गया । सरकार की ओर से दिये गये विज्ञापन में बताया गया है कि स्तनपान बच्चों के स्वास्थ्य की रक्षा, सम्पूर्ण विकास एवं बढ़ोत्तरी के साथ-साथ मां के स्वास्थ्य की भी रक्षा करता है । मां का दूध ऐसा द्रव है जो बच्चों के जन्म से छह माह तक पूर्ण पोषण के साथ-साथ रोगों से भी बचाव करता है । मां का दूध पीने वाले बच्चों में संक्रमण रोग जैसे त्वचा का संक्रमण के साथ-साथ न्यूमोनिया और दस्त जैसे जान लेवा रोगों से भी बचाव होता है । पहले दो माह में मां का दूध पीने वाले बच्चों की अपेक्षा ऊपरी दूध पीने वाले बच्चों की मृत्यु दर 20

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुणा अधिक होती है । माँ का दूध पीने वाले बच्चों की तुलना में ऊपरी दूध पीने वाले बच्चों में एलर्जी की बीमारी - दमा और नजला-सात गुणा अधिक होती है । स्तनपान करने वाली माताएं अधिकतर प्रसन्न एवं गौरवान्वित रहती हैं; उनमें मानसिक रोग कम होते हैं । स्तनपान कराने वाली माताओं को स्तन कैन्सर, हड्डियों की कमजोरी, रक्त की कमी तथा गठिया जैसी बीमारियां कम होती हैं ।

मातृ-दुग्ध से सभी परिचित हैं । चरक संहिता में स्त्री के दूध के सम्बन्ध में कहा गया है कि यह जीवनीय, बृंहण, सात्म्य तथा स्निग्धता करनेवाला है । रक्तपित्त में नस्ल के लिए तथा आंख दर्द में आंख में तर्पण के लिए हितकर है । सुश्रुत संहिता में इसे मधुर, कषाय-अनुरस, शीतल, नस्य एवं आश्च्योतन (आंख को भरने) कार्य में पथ्य, जीवन, लघु, अग्निदीपक है । काश्यप संहिता में इस सम्बन्ध में विस्तृत विवरण है । ऐसा देखा जाता है कि माता को दूध नहीं होता है और यदि होता भी है, तो कम होता है । ऐसी स्थिति में हमारे प्राचीन महर्षियों ने धात्री दुग्ध का विधान किया है । यह जरूरी नहीं है कि मातृ-दुग्ध से धात्री-दुग्ध के सभी गुण मेल खाते हों । धात्री जन्म दायी मां नहीं हो सकती है । इसलिए मातृ-दुग्ध में पाये जाने वाले नैसर्गिक गुण धात्री-गुण में पाये जायं- यह कोई आवश्यक नहीं है । संभवतः यही कारण है कि काश्यप संहिता में दूध पिलाने वाली धात्री के दूध के संशोधन का विधान है । शोधन के लिए उन्हें किन पदार्थों का सेवन करना चाहिए इसका भी वर्णन है । स्तन्यशोधन के लिए चरक, सुश्रुत सहित काश्यप संहिता में भी वर्णन है । शुद्ध दूध के सवन से बालक बलवान होते हैं, उनके अंग तथा आयु निर्बाध होते हैं । यह रोगों से रहित होता है । इसके विपरीत अशुद्ध दूध के सेवन से कई रोग उत्पन्न हो जाते हैं ।

आशय यह है कि आयुर्वेद के महर्षियों ने स्त्री-दुग्ध पर ज्यादा बल दिया है । इस स्त्री-दुग्ध में माता का भी दूध शामिल हो सकता है और धात्री का भी । इन दिनों धात्री-दूध का नियम लगभग समाप्त हो गया है । बालायें और महिलाएं अपने रूप-लावण्य को कायम रखने के लिए अपने दूध का सेवन अपने ही बच्चों को नहीं कराती हैं । यह सोच आधुनिक महिलाओं की मानसिक विकृति की ओर इंगित करता है । कृत्रिम दूध बच्चों के लिए मातृ-दुग्ध के समान हितकारक नहीं है यह तथ्य आज स्थापित हो गया है । विश्व स्वास्थ्य संगठन, यूनीसेफ एवं शिशु रोग विशेषज्ञों की यही सम्मिलित राय है । संभवतः यही करण है कि सम्पूर्ण विश्व में अगस्त माह में प्रतिवर्ष स्तनपान सप्ताह मनाया जा रहा है ।

शीतल पेय में उपस्थित कीटनाशकों की वैज्ञानिक जांच हो

सेन्टर फार साइंस एण्ड इनवायरमेन्ट नामक एक स्वंयसेवी संस्था ने बहुराष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा उत्पादित कोका कोला, पेप्सी, मिरिण्डा, स्प्राइट आदि अनेक शीतल पेय की जांच की । जांच में कीटनाशक दवाई सीमा से ज्यादा पायी गयी है । इससे देश भर में हड़कम्प मच गया है । कोका कोला इंडिया के अध्यक्ष एवं मुख्य कर्मचारी अधिकारी, श्री संजीव गुप्ता ने सी एस ई की रिपोर्ट को चुनौती दी है । उन्होंने दावा किया है कि अमेरिका में जो कोका कोला बिकता है वही भारत में भी बिकता है । उन्होंने कहा है कि "बाजार में बिक्री के लिए पेश करने से पहले हम अपने उत्पाद की इतनी बारीक जांच करते हैं कि शायद सी एस ई के लैब में वैसी जांच भी सम्भव नहीं है । हम अपने उत्पाद के पार्ट पर बिलियन (पीपीबी) तक जांच करते हैं ।" उन्होंने लैब की मान्यता पर भी प्रश्न उठाया है । इस सम्बन्ध में सी एस ई की निदेशक, सुश्री सुनिता नारायण ने कहा है कि "जांच रिपोर्ट हड़बड़ी में तैयार नहीं की गयी है और न ही किसी के खिलाफ बनायी गयी है । हम लोगों ने 36 नमूनों की जांच करायी और पाया कि इसमें कई किस्म के कीटनाशक मौजूद हैं ।" लैब की मान्यता के सम्बन्ध में सुश्री नारायण ने बताया कि "आज देश में अनेक संस्थाएं हैं जो मान्यता प्राप्त होने के बावजूद गलत रिपोर्ट पेश करती हैं । सिर्फ मान्यता का ठप्पा लगा होने की वजह से ही किसी की बात ज्यादा सही नहीं हो जाएगी ।"

रिर्पोट के अनुसार पेप्सी उत्पाद में कीटनाशक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

0.0180 मि०ग्राम प्रति लीटर पाया गया जो युरोप के मानक से भी 36 गुना ज्यादा है । कोका कोला में 0.015 मि०ग्राम प्रति लीटर कीटनाशक पाया गया, जो यूरोप के मानक से 30 गुना ज्यादा है । कीटनाशकों में जो हानिकर कीटनाशक पाये गये हैं, उनमें से प्रमुख हैं :-

लिण्डैन (वाई-एच सी एच) - यह अत्यन्त खतरनाक कीटनाशक है । यह केन्द्रीय स्नायु प्रक्रिया को प्रभावित करता है । शरीर में उपस्थित प्रतिरोधी प्रक्रिया को भी हानि पहुंचाता है । जितने नमूनों की जांच सी एस ई प्रयोगशाला में की गयी, सबों में यह कीटनाशक पाया गया । कोकाकोला में यह 0.0035 प्रति लीटर की दर से पाया गया जो यूरोपीय मानक से 35 गुना ज्यादा है । इससे निश्चित रूपेण कैन्सर की उत्पत्ति होती है ।

डीडीटी - 81% नमूनों में डीडीटी एवं इसके चयापचित (मेटाबोलाइट- डीडी एवं डीडीई) पाये गये ।

मिरिण्डा लेमन में इसकी मात्रा 0.0042 मि०ग्राम प्रतिलीटर पायी गयी है जो यूरोपीय मानक से 42 गुना ज्यादा है ।

क्लोरपायरिफोस - सभी नमूनों में अर्थात् 100% नमूनों में यह रसायन पाया गया । मिरिण्डा लेमन में इसकी मात्रा 0.0072 मि०ग्राम प्रति लीटर की दर से पायी गयी जो यूरोपीय मानदण्ड से 72% ज्यादा है ।

मेलाथियोन - 97% नमूनों में यह रसायन पाया गया । मिरिण्डा लेमन में इसकी मात्रा 0.0196 मि०ग्राम प्रति लीटर की दर से पायी गयी है । कोकाकोला में यह 137% ज्यादा पाया गया ।

यह रसायन मानव यकृत् को उत्तेजित करके मेलोक्सोन का निर्माण करता है ।

उपर्युक्त विषैले कीटनाशकों के अतिरिक्त भारी धातु (हैवी मेटल), कैडमियम, लीड, कॉपर और आर्सेनिक पाये गये ।

विदित है कि इसके पूर्व भी उक्त संस्था ने ही बोतलबंद पानी के सिलसिले में अपनी जांच रिपोर्ट पेश की थी । प्रारम्भ में कम्पनियों ने प्रयोगशाला की मान्यता के सम्बन्ध में ही प्रश्न उठाया था । अन्ततः स्वास्थ्य मंत्रालय को एक अधिसूचना जारी करनी पड़ी जिसके तहत गुणवत्ता के सम्बन्ध में अनेक नियम बनाये गये । यह सत्य है कि बहुराष्ट्रीय कम्पनी अपने देश के उपभोक्ताओं के लिए गुणवत्ता का ध्यान रखती है, किन्तु विकासशील एवं अविकसित देशों के लिए उनके मानकीकरण का पैमाना ही अलग होता है । भारत सरकार को इस सम्बन्ध में ध्यान देना चाहिए और किसी भी कम्पनी को राष्ट्र के स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ की आजादी नहीं देनी चाहिए ।

सी एस ई की रिपोर्ट पर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने प्रश्नचिन्ह उठाया है । वे विमटा एवं हालैण्ड स्थित प्रयोगशाला का उदाहरण देते हैं । उनके अनुसार इन प्रयोगशालाओं में उनके उत्पादों की जांच की गयी है । जांच में किसी प्रकार का हानिकारक कीटनाशक नहीं पाया गया है । इस सम्बन्ध में सुश्री सुनीता नारायण का कहना है कि उन्होंने सरकार एवं जनता के समक्ष जांच का निष्कर्ष उपस्थित किया है । यह अधिकारियों पर निर्भर करता है कि वे जांच-निष्कर्ष को कितनी गम्भीरता से लेते हैं ।

विदित है कि बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने जांच-निष्कर्ष के सम्बन्ध में दिल्ली उच्च न्यायालय एवं सर्वोच्च न्यायालय में याचिका दाखिल की है । सर्वोच्च न्यायालय से याचिका वापस ले ली गयी है । हां, दिल्ली उच्च न्यायालय ने उच्च कोटि की प्रयोगशालाओं में जांच कराने का निर्देश सरकार को दिया है । प्रतिष्ठित प्रयोगशाला की क्या रिपोर्ट होती है एवं माननीय दिल्ली उच्च न्यायालय का क्या अन्तिम निर्णय होता है, यह तो भविष्य की बात है लेकिन इन घटनाओं से एक बात सामने आयी है कि सरकार के पास कोई प्रभावशाली नियामक एजेन्सी नहीं है जो इन पेय पदार्थों पर निगरानी रख सके । कहने के लिए तो कई निमायक एजेन्सी हैं, किन्तु अधिकार प्राप्त कोई नहीं है । भारतीय मानक ब्यूरो के पास इन सम्बन्ध में कोई अधिकार नहीं है । उसे बोतलबन्द पानी के सम्बन्ध में थोड़ा अधिकार था भी, किन्तु यह भी अपने अधिकार का उपयोग करने में असफल रही ।

जो भी हो, सीएसई के जांच-निष्कर्ष ने विदेशी उत्पाद के प्रति बढ़ते हुए रूझान पर प्रहार किया है - इसमें कोई शक नहीं । आम जनता को इससे लाभ उठाना चाहिए ताकि वे अपने स्वास्थ्य के प्रति सतर्क रह सकें ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारावाहिक

आयुर्वेद का इतिहास - 48

1. पं० बनवारी लाल शर्मा
2. विमल चन्द्र झा

चरक संहिता

विचार-विमर्श या शोध के सम्बन्ध में प्रस्तुत ग्रन्थ में सैकड़ों उदाहरण हैं । इनमें से एक-दो उदाहरण ही विषय की सार्थकता को प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त हैं । 500 कषाय के सम्बन्ध में जब भगवान् आत्रेय उपदेश दे रहे थे, तो अग्निवेश ने प्रश्न किया - हे भगवान् । ये 500 कषाय पूर्ण नहीं होते, क्योंकि जीवनीय आदि महाकषायों में वही अंग (औषधियां) दिखायी देते हैं । इस शंका का निवारण करते हुए आत्रेय ने कहा कि बुद्धिमान पुरुषों को चाहिए कि वे इसका इस दृष्टि से विचार न करें । अपितु भिन्न-भिन्न कार्य करनेवाले एक ही द्रव्य की भी अनेक संज्ञायें होती हैं । उदाहरण के लिए एक पुरुष अनेक कार्यों को सम्पादित करने में समर्थ होता है । वह जो-जो कर्म करता है उस कर्म के कर्त्ता, करण तथा कार्य के अनुसार उस गौण विशेष को पाता है, उसी प्रकार औषध द्रव्यों को भी जानना चाहिए । यदि हमें एकल औषधि में लाभकारी समस्त गुण मिल जाते हैं, जो सभी व्याधियों को नष्ट कर दे, तो अन्य द्रव्यों का वर्णन करने या उस सम्बन्ध में उपदेश देने की क्या आवश्यकता है । इस तरह कषायों की कल्पना के आधार पर 50 महाकषाय कहे गये हैं तथा इन महाकषायों को विभाजित करके 500 कषाय बताये गये हैं जिसके विचार की कोई सीमा नहीं है । यह अतिसंक्षेप मन्दबुद्धि वैद्यों के सामर्थ्य के लिए उपयुक्त नहीं है । अत: मन्दबुद्धि वैद्यों के व्यवहार के लिए तथा बुद्धिमान वैद्यों की बुद्धि की वृद्धि के लिए न अतिसंक्षिप्त न अतिविस्तृत कषायों के 50 वर्ग बताये गये हैं । इसी तरह[2] अग्निवेश ने अपने आचार्य से पूछा कि पहले आपने निदान स्थान में शरीर, इन्द्रिय और मन में ताप उत्पन्न करने वाला, सभी रोगों में प्रथम उत्पन्न होने वाला और सभी रोगों में बलवान् एवं प्रधान ज्वर को बताया है । इस आधार पर उन्होंने 18 प्रश्न पूछे हैं जिनका सन्तोषजनक उत्तर आचार्य ने चिकित्सास्थान के अध्याय-3 में दिया है । इस शोध की प्रक्रिया चरक संहिता में यत्र-तत्र दृष्टिगोचर होती है ।

दार्शनिक स्थल

सम्पूर्ण चरक संहिता दार्शनिक स्थलों से परिपूर्ण है । चरक संहिता के सूत्रस्थान के प्रथम अध्याय में ही वैशेषिक दर्शन का समावेश है । आयुर्वेद की व्युत्पत्ति में ही बताया गया है कि जिस शास्त्र में हितमय, अहितमय, सुखमय, दुखमय, आयु तथा आयु के लिए हितकर और अहितकर द्रव्य, गुण, कर्म, आयु का प्रमाण एवं लक्षण द्वारा वर्णन होता है - उसका नाम आयुर्वेद[3] है । आयु को परिभाषित करते हुए कहा गया है कि शरीर, इन्द्रिय, मन तथा आत्मा के संयोग को आयु कहते हैं । इसके धारि जीवित, नित्यग और अनुबन्ध; ये समानार्थक शब्द हैं । शरीर, इन्द्रिय, मन, आत्मा, इन्हें परस्पर धारण करने का स्वभाव होने से आयु को धारि कहते हैं । शरीर की चेतनावस्था तक आयु के रहने से इस नित्यग कहते हैं । अपरा पर शरीर के साथ सम्बन्ध कराने से इसे अनुबन्ध कहते हैं । आशय यह है कि इतना विशद वर्णन किसी अन्य चिकित्सा-विज्ञान में नहीं है । समस्त चिकित्सा विज्ञान का सम्बन्ध सामान्यतया व्याधि के प्रतिषेध एवं शमन करने से है । अन्य चिकित्सा-विज्ञान इहलोक, परलोक, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष आदि विषयों की बात नहीं करता, किन्तु आयुर्वेद चरक संहिता के माध्यम से करता है[4]। इसी तरह समवाय, सामान्य, द्रव्य-गुण-कर्म आदि का वर्णन है । मन, आत्मा और शरीर को द्रव्य माना गया है और इसमें परस्पर संयोग की सम्भावना बतायी गयी है । नौ द्रव्यों के सम्बन्ध में कहा गया है कि आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी आदि पंचमहाभूत एवं आत्मा, मन, काम तथा दिशा सहित नौ द्रव्य हैं । वैशेषिक दर्शन में समवाय के सम्बन्ध में कहा गया है - 'अयुत सिद्धानां आधार्याधार भूतानां य: सम्बन्ध इहेति प्रत्ययहेतु स समवाय: इति' । चरक संहिता[7] में इसका सुन्दर वर्णन

1. प्रबन्ध निदेशक, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० 2. सम्पादक, सचित्र आयुर्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। आचार्य लिखते हैं कि भूमि आदि द्रव्यों के गुणों के साथ अपृथग्भाव ही समवाय कहाता है। अपृथग्भाव से तात्पर्य पृथक् स्थिति न होना या साथ ही रहना से है। जिस प्रकार गुणों की द्रव्य के बिना स्थिति नहीं। अतः इन दोनों को जोड़ने वाले का नाम समवाय है। जहां पर 'भूम्यादीनां' तथा 'गुणैः' ये दो पद उपलक्षण मात्र हैं। अतः इनसे आधार भूत तथा आधेय भूत द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य एवं विशेष का ग्रहण किया जाता है। इसी तरह पुनः कहा गया है - यत्राश्रिताः कर्मगुणाः कारणं समवायि यत् तद् द्रव्यं। अर्थात् जिसमें कर्म और गुण आश्रित हैं, जो द्रव्य, गुण, कर्म का समवायिकरण है, वह द्रव्य है। यह द्रव्य का लक्षण है।

चरक संहिता में उपलब्ध दार्शनिक पक्ष की व्याख्या करना हमारा उद्देश्य नहीं है। हम प्रसंगवश केवल इतना ही कहना चाहते हैं कि चरक संहिता में चिकित्सा-विज्ञान के साथ-साथ दर्शनशास्त्र का भी वर्णन है। सम्भवतः महर्षियों की दृष्टि में मनुष्य के जीवन का सम्बन्ध दर्शन-शास्त्र से घनिष्ठ रहा है। आठवां, बारहवां, छब्बीसवां, अट्ठाईसवां और तीसवां अध्याय में भी दार्शनिक पक्ष है। विमानस्थान का चतुर्थ, अष्टम अध्याय, शारीर स्थान का कतिधापुरूषीय अध्याय (प्रथम अध्याय में 23 प्रश्नोत्तरों के माध्यम से सांख्य के प्रस्थान का सांगोपांग विवेचन है), तीसरे-चौथे एवं पांचवें अध्याय में गर्भावक्रान्ति में आत्मनिरूपण का सूक्ष्म विवेचन है। साथ ही मीमांसा एवं सृष्टि-प्रक्रिया का भी वर्णन है। पांचवें अध्याय में वेदान्त-प्रस्थानीय विचारधारा का भी उल्लेख है। चिकित्सा-स्थान के पन्द्रहवें अध्याय में धातु, उपधातु, देहाग्नि, भूताग्नि, मल आदि विषयों का समावेश है। अट्ठाईसवां अध्याय वात के भेद-प्रभेदों का निरूपण करता है। सिद्धि स्थान के अन्तिम भाग में तन्त्रयुक्तियों का निर्देशन है।

आचार्य ज्योतिर्मित्र[8] ने न्यायदर्शन के सिद्धान्त एवं चरक संहिता की तत्सम्बन्धी पृष्ठभूमि पर विस्तार से प्रकाश डाला है। उन्होंने तद्विद्य-संभाषा, सन्धाय संभाषा, विगृहय्य संभाषा, परिषद्, वाद-विधि, वाद सहित अनेक विषयों (जो चरक संहिता में उपलब्ध है।) पर प्रकाश डाला है। आचार्यजी की व्याख्या (दार्शनिक पक्ष के सम्बन्ध में) इतनी विशद् है कि उस पर यहां प्रकाश डालना उचित नहीं है।

संक्षेप में चरक संहिता में निम्नलिखित तत्वों का समावेश है -

(1) मान परिभाषा - चरक संहिता के कल्पस्थान (12/87-98) में जो मान-परिभाषा दी गयी है, वह मागध परिभाषा है। जैसे 6 ध्वंशी = 1 मरीचि, 6 मरीचि = 1 रक्तसर्षप, 8 रक्त सर्षप = 1 तण्डुल, 2 तण्डुल = 1 धान्यमाष (उड़द), आदि। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि मौर्यवंश से पूर्व चरक का अस्तित्व था, क्योंकि मौर्यकाल में कलिंग एक शक्तिशाली राष्ट्र था।

(2) चरककालीन विश्वास - चरक संहिता में चिकित्सा तीन प्रकार की बतायी गयी। - दैव व्ययाश्रय, युक्ति, व्यपाश्रय और सत्वावजय। इनमें से दैवव्यपाश्रय उपहार, होम, नियम, प्रायश्चित, उपवास, स्वस्तिवाचन, प्रणिपात गमन, चौराहे पर नमस्कार, सूतिका गृह में रोगों से बचाने के लिए सरसों को बिखरने का वर्णन आदि है। साथ ही पूजा, शकुन और स्वप्न विचार का भी वर्णन है।

(3) चतुष्पाद चिकित्सा - चरक संहिता के नवम अध्याय में चतुष्पाद चिकित्सा का वर्णन है। अर्थात् (1) वैद्य (चिकित्सक), (2) द्रव्य (औषध आदि), (3) परिचारक (सेवा करनेवाला), तथा (4) रोगी - ये चारों गुणयुक्त होते हुए ही रोगशान्ति में कारण होते हैं। अतएव चिकित्सा के लिए इन्हीं चार पादों का होना आवश्यक है।

(4) एषणायें - इसमें भी दर्शन छिपा हुआ है। चरक संहिता के एकादश अध्याय में एषणाओं का वर्णन है। यह सत्य है कि इहलोक एवं परलोक में हित की आकांक्षा रखने वाले मन, बुद्धि तथा पराक्रम से सम्पन्न पुरूष को तीन एषणाओं अथवा इच्छाओं की चाहत होती है, जैसे - प्राणैषणा, धनैषणा और परलोकैषणा। इन एषणाओं में से प्राणैषणा सबसे मुख्य है, क्योंकि प्राण ही नहीं रहेगा, तो सबकुछ व्यर्थ है। धनैषणा और परलोकैषणा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवितावस्था में ही हो सकती है । अतः प्राणरक्षा के लिए स्वस्थ पुरूष को स्वास्थवृत्त का पालन करना चाहिए तथा रूग्ण पुरूष को रोगशान्ति में प्रमाद रहित होना चाहिए । प्राणों की चाह के बाद धन की चाह होती है । उस पुरुष से बढ़कर दूसरा कोई पापी नहीं जिसकी आयु दीर्घ हो, पर उपकरण (साधन) नहीं हो । धनैषणा के बाद परलोकैषणा का क्रम आता है । परलोक के सम्बन्ध में संशय हो सकता है । पुनर्जन्म होता है, या नहीं इसमें भी सन्देह है । कुछ लोग प्रत्यक्ष को ही प्रमाण मानते हैं । इस सम्बन्ध में प्रस्तुत ग्रन्थ में विस्तृत विवरण है । आप्तोपदेश, प्रत्यक्ष, अनुपान, युक्ति, बल, आहार, कर्म का लक्षण तथा उसका अतियोग, अयोग एवं मिथ्यायोग का विशद् वर्णन है । इसी तरह काल का लक्षण, चिकित्सक के प्रकार, गुण आदि का वर्णन है ।

5. रसायन, वाजीकरण - रसायन अध्याय के प्रारम्भ में ही भेषज एवं अभेषज के प्रकार बताये गये हैं । भेषज के दो प्रकार बताये गये हैं- (1) स्वस्थ पुरुष के ऊर्जस्कर को बढ़ाने वाला और (2) रोगाक्रान्त व्यक्ति के रोग को दूर करने वाला । आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में ऊर्जस्कर बढ़ाने के लिए टॉनिक और विटामिन्स हैं, किन्तु उनके शास्त्र में जो आधुनिक शोध हो रहे हैं, उसमें टॉनिक एवं विटामिन्स का अतिसेवन भी हानिकर माना जा रहा है, जबकि आयुर्वेद में ऐसी बात नहीं है । आयुर्वेद के अनुसार जो औषधि स्वस्थ व्यक्ति में ऊर्जस्कर (ओज या प्रशस्त भाव बढ़ानेवाली) होती है, वही प्रायः वृष्य एवं रसायन होती है । रसायन सेवन के गुण के सम्बन्ध में चरक संहिता में बताया गया है कि रसायन भेषज का सेवन करने से मनुष्य दीर्घ आयु, स्मरणशक्ति, मेधा (धारणाशक्ति), आरोग्य, तरूणावस्था, प्रभा, वर्ण, स्वर का उदार होना, देह एवं इन्द्रियों में उत्तम बल की प्राप्ति, वाक्-सिद्धि, प्रणति, कान्ति इन सभी गुणों को प्राप्त करता है । रसायन की परिभाषा के सम्बन्ध में बताया गया है कि उत्तम रस आदि धातुओं को प्राप्त करने का जो उपाय है उसे 'रसायन' कहते हैं । वाजीकरण का सम्बन्ध काम-शक्ति से बताया गया है । प्रस्तुत अध्याय में रसायन-वाजीकरण के सम्बन्ध में पर्याप्त प्रकाश डाल गया है । आधुनिक चिकित्सा-शास्त्र में वयःस्थापन के लिए किसी योग का वर्णन सम्भवतः नहीं है । इस दृष्टि से चरक संहिता का विशेष महत्व है ।

इस तरह चरक संहिता के विभिन्न पक्षों प्रकाश डालने से यह ज्ञात होता है कि ग्रन्थ चिकित्सा-विज्ञान के सम्बन्धित पक्षों के वर्णनों के साथ-साथ जीवन-रहस्य से सम्बन्धित अनेक पक्षों का भी समावे है । चरक संहिता के सम्बन्ध में जो वर्णन यहां किये ग हैं, वस्तुतः वह भी विषय का अतिक्रमण है । ऐसी स्थि में इतिहास की मर्यादा हमें इस बात की अनुमति नहीं दे है कि हम इससे आगे बढ़ें ।

च्यवन

चरक संहिता के अनुसार जो ऋषिगण हिमालय पर्वत के समीप सुरम्य प्रदेश में एकत्रित हुए थे, उनमें से एक च्यवन ऋषि भी थे ।

धर्मशास्त्र का इतिहास[10] में निम्नलिखित चर्चा है- "मिताक्षरा, अपरार्क तथा अन्य प्रमाण-ग्रन्थों ने च्यवन के कतिपय श्लोक उद्धृत किये हैं । गोदान काल तथा उसके लिए मन्त्रोच्चारण की विधियों के सिलसिले में अपरार्क ने च्यवन का प्रमाण दिया है (याज्ञ० 1.127) कुत्ता, श्वपाक, शव, चिताधूम, सुरा, सुरापात्र आदि के स्पर्श से उत्पन्न प्रायश्चित पर चर्चा करते हुए मिताक्षरा एवं अपरार्क ने च्यवन का उद्धरण दिया है । इसी प्रकार अन्य सूत्रों का उद्धरण यत्र-तत्र दिया गया है ।" प्रस्तुत संदर्भ से यह ज्ञात नहीं होता है कि च्यवन एक आयुर्वेदज्ञ थे । पौराणिक कोश[11] में निम्नलिखित वर्णन है -

एक प्रसिद्ध ऋषि का नाम जो शुक्र (भृगु ऋषि) और पुलोमा के पुत्र थे (ब्रह्मा० 3.1.92; वायु० 86.2-23)। महाभारत के अनुसार ऐसी प्रसिद्धि है कि जब वह गर्भ में थे तब एक राक्षस इनकी माता को हर ले जाना चाहता था । यह देख च्यवन गर्भ से निकल आये और इनके तेज से वह राक्षस वहीं जलकर भस्म हो गया । यह अपने आप गर्भ से गिर पड़े थे और गतिशील थे, इस कारण इनका नाम च्यवन पड़ा था । एक बार यह तप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने बैठे और बहुत दिनों तक ध्यानमग्न ही बैठे रह गये। इनका शरीर दीमकों ने मिट्टी से ढक लिया। केवल आंखें ही चमकती थीं जिन्हें कुछ अद्भुत पदार्थ समझ राजा शर्याति की पुत्री सुकन्या ने कांटें चुभो दिये। इससे क्रुद्ध हो इन्होंने शर्याति के परिवार तथा अनुचरों का मल-मूत्र रोक दिया। तदनन्तर सुकन्या का विवाह इनसे हो गया। अश्विनी कुमारों ने सुकन्या से विवाह का प्रस्ताव किया था जिसे उसने अस्वीकार कर दिया था। इससे प्रसन्न हो अश्विनीकुमारों ने च्यवन को वृद्ध से युवा बना दिया। इसके बदले च्यवन ने यज्ञ किया और अश्विनी कुमारों को (जिन्हें वैद्य होने के कारण सोम नहीं दिया जाता था) सोमरस प्रदान किया। इसमें इन्द्र ने आपत्ति की थी, पर अन्त में उसे इनकी शरण आना पड़ा था (भाग० 9.3. 2-26, ब्रह्मा० 2.32.98; 3.8.31; 21.36; 61.2)। यह कथा महाभारत और पुराणों में बड़े विस्तार से दी गयी है। ऋग्वेद तथा शतपथ ब्राह्मण में भी अश्विनीकुमारों की सहायता से च्यवन का बुढ़ाप दूर होना पाया जाता है। महाभारत के अनुसार और्व ऋषि च्यवन के पुत्र थे जो सुकन्या के गर्भ से उत्पन्न हुए थे। आप्रवान तथा दधिचि भी इनके पुत्र कहे गये हैं (ब्रह्मां० 31.1.93)। (2) मित्रेयु का पुत्र तथा सुदास का पिता (भाग० 9.22.1; वायु० 99.207; विष्णु० 4.19.70-71)। (3) एक ऋषि (भाग० 6.15.14) जो युधिष्ठिर के राजसूय में आमंत्रित थे (भाग० 10.74.7)। यह स्यमंत पंचक में श्रीकृष्ण से मिलने आये थे (भाग० 84.3)। यह कृष्ण के साथ मिथिला भी गये थे (भाग० 83.18)। (4) सुहोत्र का पुत्र तथा कृतक का पिता (भाग० 9.22.5; वायु० 99. 217; विष्णु० 4.19.79); (5) तृतीय तल का (वितलका=वायु०) निवासी एक राक्षस का नाम (ब्रह्मा० 2.20.28; वायु 50.27)। (6) एक ऋषि तथा मंत्रकृत जिन्होंने कार्त्तवीर्य के 100 पुत्रों को मृत्यु का शाप दिया था (मत्स्य० 68.9; 145.92, 99)। (7) भृगु के एक पुत्र का नाम (मत्स्य० 195.15, 28.29)। (8) सुधन्वा का एक पुत्र (मत्स्य० 50.24)। (9) गोकर्ण का एक पुत्र, सोहलवें द्वापर का एक अवतार (वायु० 23.173)। (10) सुमेधा का पिता (वायु० 70.26)। (11) देवापि का एक पुत्र (वायु० 99.237)।

इनके नाम पर एक आश्रम भी है जो गया में है जहां वैकुण्ठ, लोकदण्ड, गृद्धकूट और शोणक हैं (वायु० 108.73)।

उपर्युक्त सन्दर्भों से यह ज्ञात नहीं होता है कि च्यवन आयुर्वेदज्ञ थे। दो, अश्विनीकुमारों के साथ इनके सम्पर्क से कुछ हद तक कल्पना की जा सकती है। हिन्दी विश्वकोष में लगभग यही अर्थ है। वैदिक कोश[12] में च्यवन के सम्बन्ध में निम्न वर्णन है -

च्यवन या च्यवान एक प्राचीन ऋषि का नाम है। च्यवन शब्द ऋग्वेद के अतिरिक्त प्राय: सभी वैदिक साहित्य, निरूक्त, 4.19 और आर्षकाल में आया है, ऋग्वेद में प्राय: 'च्यवान' रूप आता है। ऋग्वेद में एक जराग्रस्त ऋषि का नाम च्यवान है जिन्हें अश्विनों ने यौवन और सौन्दर्य प्रदान कर पत्नी का प्रिय और युवतियों का पति बनाया था; ऋ० 1.116.10, 1.117.13;, 1.118.6; 5.74.5; 7.68.6; 7.71.5; 10.39.4। शब्रा 4.1.5.1 में यह कथा अन्य प्रकार से है, जहां शर्यात की कन्या सुकन्या से उनके विवाह का वर्णन है। उन्हें वहां भृगु या आङ्गिरस बताया गया है; और पहलीबार एक तालाब में डुबकी लगाकर उनके नवयौवन प्राप्त करने का उल्लेख है, जिसका जिक्र परवर्ती साहित्य में अनेक बार आया है। च्यवान के सम्बन्ध में दूसरा महत्वपूर्ण आख्यान ऋग्वेद के दुरूह सू० 10.61.1-3 में आया है, जहां इन्द्र के उपासक पक्थों के राजा तूर्वचाण का उनसे विरोध दिखाया गया है जो स्वंय अश्विनों के उपासक हैं। पिशल, वैस्तू, 1.71. 77 की व्याख्या जैब्रा 3.121-128 से समर्थित होती है जहां भृगु के दूसरे पुत्र विदन्वन्त् द्वारा की गयी इन्द्र के विरूद्ध उनकी सहायता का उल्लेख आता है। यह ध्यान देने योग्य है कि शब्रा 4.1.5.13 के अनुसार सुकन्या के अनुरोध पर अश्विनों को यज्ञ में भाग दिया गया था। किन्तु इन्द्र और च्यवन के वैर का शासन हो गया होगा, क्योंकि ऐब्रा 8.21.4; पिंशल, उपर्युक्त 1.75 के अनुसार च्यवन ने शर्यात को ऐन्द्र महाभिषेक से अभिषिक्त किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था । पंविब्रा 13.5.12; 19.3.6; 14.6.10; 11.8.11 के अनुसार च्यवन साम-मंत्रों के द्रष्टा थे । तु० 'च्यवनो वै दाधीचोऽश्विनोः प्रिय आसीत् । सोऽजीर्यत तमेतेन (वीङ्केन) साम्नाष्णु व्यैङ्कयतान्तं पुनर्युवानमकुरूताम्' ता० 14.6.10; 'सा (सुकन्या) होवाच (देऽश्विनौ) पतिं (च्यवनं) नु मे पुनर्युवाणं कुरूतम्' शब्रा 4.1.5.11 । तु०- म्यूर, संस्कृत टेक्स्ट्म, 5.2.43; 250-25; लुड्विग, टां० 3.156, मैकडानल वैमा, पृ० 51, 52, हापकिन्स, जअओसो, 28. 43 एवं आगे; ट्रांजैक्शनस; 15.56.57 ।

कविराज सूरमचन्द्रजी[13] ने अपनी पुस्तक में निम्न वर्णन किया है -

"ऋषि भृगु का पुत्र च्यवन था । मानव कुलोत्पन्न महाराज शर्यात की पुत्री सुकन्या ऋषि च्यवन की पत्नी थी । कवि उशना च्यवन का भ्राता था । च्यवन नाम वेद मंत्रों के आधार पर रखा गया है । अथर्ववेद 6/116(120) में च्यवन शब्द का अर्थ ज्वर है ।

काल - च्यवन त्रेता के आरम्भ से अति दीर्घकाल तक जीवित रहा । वह रसायन-बल से दीर्घजीवी हुआ । चरक संहिता चि० स्थान 1/2/20 लिखा है -

प्राणकामाः पुरा जीर्णाश्च्यवनाद्याः महर्षयः ।
रसायनैः शिवैरेतैर्बभूवुरमितायुषः ॥

अर्थात् पूर्वकाल में वृद्ध च्यवन आदि अनेक महर्षियों ने दीर्घ-जीवन की इच्छा से कल्याणकारी रसायनों का सेवन किया । उनसे वे अमितायु अर्थात् परिमाण से अधिक आयु वाले हुए ।

च्यवन की कितनी आयु थी, यह हम अभी पूर्ण निश्चय नहीं कर पाए । द्वापर के आरम्भ में हिमालय पर के ऋषि-सम्मेलन में वह उपस्थित थे ।

स्थान - सुकन्या के पाणि ग्रहण के समय च्यवन सौराष्ट्र देश में रहता था । उस समय वह वृद्ध था । उससे पूर्व भी वह वहीं अथवा भारत के पश्चिम के किसी अन्य स्थान में निवास रखता होगा । वरूणदेव अरब देश में रहता था । भृगु ऋषियों के ये ही प्रदेश थे । भार्गव जमदग्नि की कच्छ के समीप अर्थात् पश्चिम में रहता था ।

गुरू - चरक की परम्परानुसार च्यवन ने भारद्वाज से आयुर्वेदोपदेश ग्रहण किया । उसने भास्कर से व्याधि दूर करने की विशेष विधि सीखी ।

क्या च्यवन अनेक थे ? श्री रघुवीर शरणजी अपने ग्रन्थ धन्वन्तरि परिचय पृ० 88 में लिखते हैं - इस प्रकार च्यवन भी अनेक हैं । इति । यह मत सत्य नहीं आर्य वाङ्मय में समान-नाम के विभिन्न व्यक्तियों के नामों के साथ पार्थक्य-दर्शक कोई स्पष्ट विशेषण प्राय पाए जाते हैं । ऐसा कोई विशेषण च्यवन नाम के साथ नहीं मिलता ।

विशेष घटना

1. वार्धक्य नाश - च्यवन के युवा होने की घटना एक ऐतिहासिक स्थल है । चरक संहिता के चि 1/4 में लिखा है -

भार्गवश्च्यवनः कामीवृद्धः सन् विकृतिं गतः ।
वीतवर्णस्वरोपेतः कृतस्ताभ्यां पुनर्युवा ॥

अर्थात् भृगु-पुत्र कामी च्यवन वृद्ध होने पर वर्ण तथा स्वर हीन हो गया । अश्विद्वय ने उसे युवा किया

ताण्ड्य ब्राह्मण 14/6/10, शतपथ ब्राह्मण, महाभारत, शान्तिपर्व 351/24 तथा रसरत्न समुच्चय उत्तराखण्ड, अध्याय 17 में भी इस घटना का वर्णन है अश्विद्वय ने च्यवन को सरोवर में स्नान कराया, तत्पश्चात् वह युवा हो गया । नावनीतक पृ० 106 पर लिखा है कि महर्षि च्यवन अश्विन निर्दिष्ट अमृत तैल के प्रयोग से जरारोग मुक्त हो गया ।

अस्य प्रयोगात् तैलस्य महर्षिः च्यवनः कि च ।
पुनर्यवत्वमापन्नो जरा रोग विवर्जितः ॥

अर्थात् इस (अमृत) तैल के प्रयोग से महर्षि च्यवन जरारोग रहित हो पुनः यौवन को प्राप्त हो गया ।

च्यवनप्राश नामक औषध के योग में लिखा है कि इस रसायन के सेवन से च्यवन युवा हुआ । यथा -

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्य प्रयोगाच्च्यवनः सुवृद्धोऽभूत् पुनर्युवा ।

अर्थात् इस च्यवनप्राश के सेवन से अत्यन्त वृद्ध च्यवन पुनः युवा हुआ । इन उद्धरणों से स्पष्ट है कि च्यवन युवा होने के लिए रसायन सेवन किया ।

2. इन्द्रभुज स्तम्भ - महाभारत, शान्तिपर्व 351/24 में च्यवन द्वारा इन्द्र की भुजा के हिलने-डुलने में असमर्थ होने का वर्णन है ।

ग्रन्थ :-

1. आयुर्वेद - शालिहोत्र वचनानुसार च्यवन आयुर्वेद का कर्त्ता था । भास्कर शिष्यों की नामावलि में च्यवन का नाम भी है । जीवदान नामक चिकित्सा-ग्रन्थ उसकी कृति थी ।

अक्षिरोग चिकित्सक - ऐसे आचार्यों के नाम हैं जिनके प्रतिदिन नाम-स्मरण से नेत्ररोग भय दूर हो जाता है। इनमें च्यवन का नाम भी है । प्रतीत होता है च्यवन अक्षिरोग विशेषज्ञ था ।

सुकन्या - प्रतीत होता है कि सुकन्या को भी अक्षिरोग विषयक चिकित्सा का ज्ञान हो गया था । अगस्त्य पत्नी लोपामुद्रा तथा अत्रि-पत्नी अनुसूइया के समान च्यवन पत्नी सुकन्या ने भी पति से आयुर्वेद विषयक ज्ञान प्राप्त किया ।

2. ज्योतिर्विद्या - अष्टादश ज्योतिः शास्त्र-प्रवर्तकों में च्यवन का नामोल्लेख है ।

3. मंत्र द्रष्टा - च्यवन ऋग्वेद 10/19 का ऋषि था । सुश्रुत संहिता, चि० 15/5 में च्यावन मंत्र उल्लिखित है । यह वेदमंत्र नहीं है ।

योग - चरक संहिता, चि० 1/61-73, अष्टांग हृदय, उत्तरस्थान 39/33-41, गदनिग्रह, भाग प्रथम 5/249-261 में च्यवनप्राशावलेह तथा गदनिग्रह, भाग प्रथम 5/286-291 में लघुच्यवनप्राशावलेह नामक योग पाए जाते हैं । यह स्पष्ट नहीं कि इन योगों का उपदेश च्यवन ने किया अथवा च्यवन के निमित्त किसी अन्य ऋषि ने । हारीत संहिता के अनुसार कृष्णात्रेय ने इसे भाषित किया -

च्यवनप्राशनं नाम कृष्णात्रेयेन भाषितम् ।

(निरन्तर जारी)

सन्दर्भ :-

1. चरक संहिता - सूत्र स्थान - 4/14-24 ।
2. चरक संहिता - चिकित्सा स्थान - 3
3. चरक संहिता - सूत्र 1/40
4. चरक संहिता - सूत्र 1/41
5. **तस्यायुषः पुण्यतमो वेदो वेदविदां मतः ।**
   वक्ष्यते यन्मनुष्याणां लोकयोरूभयोर्हितम् ॥
   - च०सू० 1/42
   धर्मार्थकाममोक्षणामारोग्यं मूलमुत्तमम् ।
   रोगस्तस्यापहर्त्तारः श्रेयसो जीवितस्य तु ।
6. खादीन्यात्मा मनः कालो दिशश्च द्रव्यसंग्रहः ।
   सेन्द्रियं चेतनं द्रव्यं निरिन्द्रय चेतनम् ।
   - च०सू० 1/47
7. **समवायोऽपृथग्भावो भूम्यादीनां गुणैर्मतः ।**
   स नित्यो, यत्र हि द्रव्यं न तत्रानियतो गुणः ।
   - च०सू० 1/49 जयदेव विद्यालंकार द्वारा सम्पादित
8. चरक एवं सुश्रुत के दार्शनिक विषय का अध्ययन - डा० ज्योतिर्मित्र आचार्य - श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि० ।
9. विश्वामित्राश्वरथ्यौ च भार्गवश्च्यवनोऽभिजित् ।
   - चरक संहिता, सू० 1/10
10. धर्मशास्त्र का इतिहास - प्रथम भाग - डा० पाण्डुरंग वामन काणे - हिन्दी समिति, सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश, लखनऊ ।
11. पौराणिक कोश - राणा प्रसाद शर्मा - ज्ञानमण्डल लि०, वाराणसी ।
12. वैदिक कोश - चौखम्बा विश्वभारती - वाराणसी ।
13. आयुर्वेद का इतिहास-प्रथम भाग- कविराज सूरमचन्द्र बी.ए., वैद्य वाचस्पति - 29, दक्षिण पटेल मार्कीट, नयी दिल्ली ।

Central Library Gurukul Kangri University Haridwar (U.A.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्षप तेल का मानकीकरण एवं उपयोगिता

*डॉ० आर० बी० सक्सेना
**डॉ० जी० के० जैन

सारांश

आयुर्वेद में मापदण्ड (Standard) निम्न प्रकार से व्यक्त किया गया है :

समदोषः समाग्निश्च समधातुमल क्रियः ।
प्रसन्नामेन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते ॥

(सुश्रुत)

जिसके वात, पित्त और कफ समान रूप से कार्य कर रहे हैं; पाचन शक्ति ठीक हो; रस रक्तादि धातु और मलों की क्रिया समान हो अर्थात् रस-रक्तादि स्वाभाविक रूप से बन रहे हों और मल निर्बाध निकल जाता हो; साथ ही जिसके आत्मा, इन्द्रियाँ तथा मन प्रसन्न हो; उसी को स्वस्थ कहते हैं अर्थात केवल रोग रहित शरीर होने से एक व्यक्ति को स्वस्थ नहीं कहा जा सकता है । सर्षप तेल भारत में प्राचीनकाल से औषधि बनाने, बाह्य एवं आन्तरिक उपयोग में आता रहा है । मगर जनसंख्या वृद्धि के साथ पैदावार घटने लगी, किन्तु मांग बढ़ती गयी, इससे मिलावट की प्रथा ने जन्म लिया । मिलावट के चलते नयी बीमारियों का जन्म होने लगा । सर्षप तेल की उपयोगिता को देखते हुए इसका मानकीकरण/शुद्धिकरण करना अति आवश्यक हो गया है ।

प्रस्तावना

जब से सृष्टि बनी तब से मानव एवं वनस्पति का अटूट सम्बन्ध रहा है । वैदिक काल के समय यह स्पष्ट हो गया था कि मानव वनस्पति का उपयोग औषधि एवं आहार के रूप में किया करता था क्योंकि उस समय जंगल में जड़ी-बूटियों का बाहुल्य था । दुनिया में ग्रामीण हुआ करते थे तथा यहाँ के मानव अपनी दैनिक आवश्यकताओं को इसी के द्वारा पूर्ण किया करते थे । इसलिये यह कहना उचित है कि मानव का जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त इन वनस्पतियों से सम्बन्ध सदैव से चला आ रहा है :-

'यथा - अहो एषां बरं जन्मः सर्व प्राप्युप जीवनम् ।'

(भवभूति)

सर्षप तेल एक सार्वजनिक तथा बहुमूल्य है । इसका उपयोग हजारों साल से आयुर्वेदीय औषधि में स्नेह द्रव्य के रूप में आन्तरिक एवं बाह्य होता आ है । इस तेल का वर्णन चिकित्सा में मिलता है । इस द्रव्यमान संस्कृत में इस प्रकार दर्शाये गये हैं :-

1. सर्षप - 'सरति स्नेहः अस्मात् सृगतौ'- जिसके से तेल का सरण होता है उसे सर्षप क हैं ।
2. आसुरी - भूतघ्न एवं असुरों से रक्षा करने में सम होने के कारण वेदों में आसुरी है । वेदों सर्षप का पर्याय आवायु भी है जो कि कु (लेप्रोसी) नाशक है ।
3. सिद्धार्थ - 'सिद्धः अर्थः अस्मात् मंगल्यवात्' अ मांगलिक कार्यों एवं सिद्धिकर होने से सिद्धार्थ कहते हैं ।
4. कटुस्नेह- 'कटुकः स्नेह यस्थ सः' - जिसका कटु होता है, इसी कारण व्यवहार में इस कड़वा तेल भी कहा जाता है ।
5. भूतघ्न - रसोघ्न- 'भूतान् घ्नान्ति' - जो भूतों हन्ता एवं ग्रहबाधा दूर करने में रक्षा क है ।
6. कुष्ठघ्न- 'कुष्ठघ्नन्ति' - त्वचा के रोग, कण्डु, विच कुष्ठ (कोढ़) का नाश करने वाला इसलिये कुष्ठघ्न कहा गया है ।

प्राचीनकाल में भारत में गुरु-शिष्य परंम्परा जिसके कारण प्रत्येक गुरु के पास जो शिष्य थे वे प्रत्ये विभाग में निपुण होते थे जिससे औषधि में किसी प्र की कमी नहीं रहती थी[1] मगर जब से शिक्षा को सं किया[2] एवं ग्लोबलाइजेसन (Globalization) अ अरबेजीजेशन (Urbanization) हुआ[3] तब से अलग-अल कोश की रचना हुई जिससे एक पौधे के कई नाम

*केन्द्रीय आयुर्वेद एवं चिकित्सालय अनुसंधान संस्थान, आमखो, ग्वालियर - 474009
**शासकीय अष्टांग आयुर्वेद महाविद्यालय, लोकमान्य नगर, इंदौर - 452001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized By Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गये। इन कारणों से खेत घटते गये और सर्षप का उत्पादन कम हो गया, तेल की मांग बढ़ गई, उच्च कीमत हो गई इत्यादि कारण से मिलावट होने लगी। सर्षप का तेल मिलावट वाला बाजार में आ गया। इस लेख में सर्षप तेल के अलग-अंलग नाम, निकालने की विधियाँ, शुद्धि परीक्षण, संगठन, उपयोगिता इत्यादि वर्णन का किया गया है जिससे उपभोगताओं को सर्षप तेल शुद्ध मिल सके।

सर्षप बीज के प्रकार

भारत में सर्षप तीन प्रकार की पाई जाती है (1) काली सर्षप - ब्रासिका नाइग्रा (2) सफेद सर्षप - ब्रासिका एलवा एवं (3) पीली सर्षप - ब्रासिका केम्पेस्ट्रिस। आयुर्वेद में औषध के लिये काली सर्षप का तेल उपयोग में लिया गया है। इस लेख में ब्रासिका केम्पेस्ट्रिस के तेल का वर्णन किया गया है।

सर्षप के बीज का देशी एवं क्षेत्रीय नाम

01. अन्नाम (Annam)	ल्यूब्यू (Lubu), ट्रॉन क्यू (Tron Cu)।
02. अराबिक (Arabic)	खरदालेसवेद (Khardaleasvad)।
03. बंगाल (Bangal)	काली सरसों (Kali Sarson), सादा राई (Sada rai), सांसी (Sanshi), सुरशी (Shurshi), सच वेतराई (Schwet rai), सुरसा (Sursha), सुरसी (Sursi), सारीक्षार (Sarishar)।
04. बर्मा (Burma)	अमेम्नी यंजी (Amemnyenzi)।
05. केनरेसे (Canarese)	कप्पूससोई (Kappusasoe), सारसिवे (Sarsive)।
06. केटलन (Catalan)	नेप डे बू (Nap de bou), नेप रोडो (Nap rodo)।
07. चाईना (China)	यॉन ताई (Yun Tai)।
08. कुटच (Kutch)	सुराह (Surah)।
09. डेक्कन (Deccan)	कालेरायान (Kalerayan), पीलेरायान (Pilerayan)।
10. अंग्रेजी (English)	बाइल्ड टर्नीप (Wild turnip)।
11. जर्मन (German)	रेप्स (Reps), रूबे (Ruebe), रूवसेन (Ruebsen), रूरनिप्स (Rurnips)।
12. गुजरात (Gujarat)	काली राई (Kali rai), राईरा (Raira), सराशीरे (Sarashire), सरसब (Sarswa)।
13. हसरा (Hasara)	डाक्यूबी (Dakubi)।
14. हिन्दी (Hindi)	बंगसरसों (Bangasarson), बारराई (Bara rai), डेन् (Dain), डेनली (Dainali), जादिया (Jadiya), जरिया (Jariya), काले राई (Kale rai), काली सरसों (Kali Sarson), खतिया (Khetiya), लाही (Lahi), लहोय (Lahota), लाई (Lai), लाइय (Laita), पीला सरसों (Pila sarson), पीली राई (Pili rai), रारारदा (Rararada), रारा सरसों (Rara sarson), सरसों (Sarson), सरसों जद्र (Sarsonzard), शीतशिरशा (Shetashirsha), सुरसी (Sursi), तोरी (Tori), तोरिया (Toriya)।
15. इंडो-चाईना (Indo-china)	मेन थांव (Man thanb), व्यू थांह (Vu-thanh)।
16. मलयालम (Malayalam)	क्रुरूपाकटूका (Karupakatuka)।
17. माल्टा (Malta)	स्वेडे (Swede)।
18. मराठी (Marathi)	कालामोहरे (Kala mohare), शेरसा (Sherasa), मोहकी (Mohaki)।
19. मुंडारी (Mundari)	डाकोबी (Dakobi), पीरामानी (Piramani)।
20. नागपुरी (Nagpuri)	डाहाकोबी (Dahakobi), डाहाकूबी (Dahakubi)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

21.	न्यूजीलैन्ड (N.zeland)	फ्लोरूहोरू (Floruhoru), कुरान (Koran)।
22.	परसीयन (Persian)	सिपन्डनेसियाह (Sipandanesiyah)।
23.	कोइट्टा-पिशिं (Quetta-pishin)	जामबोई (Jamboi)।
24.	राजपुताना (Rajputana)	सरस्यु (Sarsu)।
25.	संस्कृत (Sanskrit)	भूतगना (Bhuta ghana), बिमवात (Bimbata), दूरादहरशा (Duradharsha), ग्रहंना (Grahanga), कदम्का (Kadmbaka), कादम्बडा (Kadambada), कादम्बा (Kadamba), कालासर्षप (Kalasarshapa), कटुकेस्व (Katukasveha), कटुसेवहा (Katusveha), राजाकशवाका (Rajakshavaka), राजिका (Rajika), राकशीतफल (Rakshitaphala), सारीशप (Sarishapa), सर्षप (Sarshapa), सिद्ध प्रयोजन (Sidha prayajana), सिद्धार्थ (Sidhratha), तन्तुब्हा (Tantubha), तन्टूका (Tantuka), टयूवेरिका (Tuve rika), उग्रगंध (Ugra gandha)।
26.	सिंहलेसे (Sinhulese)	कालू ऐब्बे (Kaluabbe)।
27.	स्पेनिश (Spanish)	नबू गेलिगो (Nabo gallego), टरनेप (Turnep)।
28.	तमिल (Tamil)	करूप्यूक्कट्रगू (Karuppukkaduga)।
29.	तेलगू (Talugu)	नल्लावल्यू (Nallaavalue)।
30.	उतहल (Uthal)	सारिह (Sarih)।

सर्षप तेल के बीजों का वर्गीकरण

हेमींग्वेय एवं उनके साथियों[4] ने 96 बीजों को दुनिया से मंगाकर इंग्लैंड में खेतों में लगाया। फिर पौधों से जो बीज बने उनका तेल निकाला गया। उसके पश्चात् उस तेल का सूक्ष्म परीक्षण किया। उन्होंने उपरोक्त नमूनों को तीन समुदायों में रखा, प्रथम समुदाय वह जिसमें एलायल आइसोथायोसाइनेट (Allyl isothiocynate) सिर्फ है, दूसरा समुदाय जिसमें 3. व्यूटान्यल आइसोथायोसाइनेट (3-butenyl isothiocyanate) एवं तृतीय समुदाय में दोनों तेलों की मिलावट है। उसने विचार किया कि ब्रेसिका जंसिया (Brassica Juncea) अलग से पैदा हुआ है क्योंकि इसमें ब्रेसिका नाइग्रा (Brassica nigra), जिसमें एलायल आइसोथायोसाइनेट होता है तथा ब्रेसिका केम्पेस्ट्रिस, जिसमें 3-व्यूटान्यल आइसोथायोसाइनेट होता है।

सर्षप तेल को बीजों से निकालना

सर्षप तेल निकालने की मुख्य दो विधियां हैं:-

01. कोल्हू (Expeller) विधि :- इस विधि में बीजों एवं 2-4% जल के साथ कोल्हू में डालकर उसको दबाब दिया जाता है, इसके लिये कमरे का ताप 38-4 सेग्रे० तक रखते हैं, करीब 1-2 घंटे के बाद तेल निकलना प्रारम्भ हो जाता है। इस विधि से करीब 7% तक स्थिर तेल प्राप्त होता है।[5]

02. घोलक आसवन विधि :- 96 नमूने के बीज लेकर उसका स्थिर तेल घोलक आसवन विधि से निकाला गया[6] तालिका - 1

सर्षप तेल का इतिहास

औषधीय पौधों एवं आहारोपयोगी खाद्यान्न, फल, शाक एवं पौधों का उपयोग वैदिक काल से है। आदि मानव ने इन वनस्पतियों के जो नाम दिये वही लोक प्रचलित हो गये। नाम देते समय उन्होंने सम्भव पौधों का स्वरूप और गुणकर्मों पर काफी ध्यान दिया। आदि समय में वनस्पतियों के नामकरण पर अन्तर्राष्ट्रीय प्रभाव ज्यादा रहता था जैसे भारत के कई नाम असीरिया नाम से मिलते जुलते हैं। सर्षप का वर्णन (उपयोग) बाधा, गृह-बाधा और रक्षोघ्न में वैदिक काल में मिलता है। चरक ने व्यपाश्रय चिकित्सा का मणि-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं रक्षोघ्न द्रव्यों में आसुरी (सरसों), सर्षप (सरसों), राजिका श्वेत-राजिका (राई) एवं कतिपय सुगंधित अष्टगंध द्रव्यों का विशेष रूप से वर्णन है । संहिता एवं निघण्टु ग्रन्थों में (ब्रासिका केम्पेस्ट्रिम वैरायटी सर्षप) के संदर्भ में निम्न प्रकार उल्लेख दिया गया है :-

1. आसुरी (सर्षप):- अथर्ववेद सूक्त 1, 24-1-4, 1/23/29.
'यथा - आसुरीचक्रे प्रथमेंदं किन्लासभेषजन् इदं किलासनाशनम्'

2. आवायु (सर्षप):- अथर्ववेद काण्ड - 6/16, 2-2-1

प्राचीन पुस्तिकाओं में सर्षप तेल का वर्णन

कटूष्णं सार्षपं तैलं रक्तपित्तप्रदूषणम् ।
कफशुत्रानिलहरं कण्डूकोठविनाशनम् ॥
च०स०सू० 27/290

कृमिघ्नं सार्षपं तैलं कण्डूकोष्ठापहं लघु ।
कफमेदोऽनिलहरं लेखनं कटु दीपनम् ॥
सु०सू० 45/117

कटूष्णं सार्षपं तीक्ष्णं कफशुक्रानिलापहम् ।
लघु पित्तास्रकृत्कोठकुष्ठार्शोव्रणजन्तुजित् ॥
अ०सं०अ० 6

कटु तिक्तं तथा ग्राहि उष्णं स्थात् कफवातनुत् ।
कृमिण्डूशोधनं स्यात् पित्तकृत्सार्वणं स्मृतम् ।
कर्णरोगे कृमिरोगे तथा वातामयेषु च ।
कण्डूकुष्ठामये चैव कफमेदोगणेषु च ।
प्रशस्यं सार्षपं चैव रोगाणां च विभावयेत् ।
वस्तिकर्मणि नो शस्तं पित्तदाहकरं महत् ।
हारीत संहिता 1/14/7-9

कृमिघं सार्षपं तैलं कण्डूकुष्ठापहं लघु ।
कफमेदोऽनिलहरं लेखनं कटु दीपनम् ।
वंगसेन 93/56

कटूष्णं सार्षवं तीक्ष्णं कफशुक्रानिलापहम ।
लघु पित्तास्रकृत् कोठकुष्ठाशेव्रिणजन्तुजित् ।
अ०ह०सू० 5/59

सार्षपं क्रिमिनुन्तेलं कुष्ठकण्डूहरं लघु
पित्तास्रदूषणं हान्ति मेदाकर्ण शिरोग्रहान् ।
योग रत्नाकर प्रार०तैल गुणाः

कटुतैलोपदेशं तु वक्ष्यामि प्लीहनाशनम् ।
न ह्यतः परमं किञ्चिदौषधं प्लीहशान्तये ॥ 3॥
फलाम्लदीपनोपेतं कटुतेलौलोपसंस्कृतम् ।
तेनैनं भोजयेन्नित्यं यावत्प्राणो यथा भवेत् ॥ 11॥
लब्ध्य प्राणंततश्चैनं मात्रया पाययेत् सदा ।
कटु तैलं यथा शक्ति संस्कृतं नवमेव वा ॥ 12॥
दाक्षाकाश्मर्यमधुकबाल कोशीर चन्दनैः ।
कटुतैलं पचेत क्षीरे प्लीहिग दाहोत्तरे नृणाम ॥ 13॥
जीर्णेऽपराह्गे चोद्वर्त्य लघुरूष्णोदकाप्लुतः ।
अभयां कटुतैलेन भृष्टांदधानि साधिताम् ॥ 14॥
शाल्योदनेन भञ्जीत तथा काम्बलिकेन च ।
तच्चेद्विदाहं जनयेत पिबेत् कल्याणकं ततः ॥ 15॥
मत्स्याः कटुकतैलं च दाधिमाषान् घृतं पयः ।
क्षारेण पारिजातस्य तत् पक्कमव चारयेत् ॥ 16॥
एतत्तैल घृतं प्रोक्तं प्लीहगुल्म निवारणम् ।
दीपनं स्नेहनं बल्यं ग्रहणीपाश्वरोगनुत् ॥ 17॥
कर्णिकारत्वचतुलां चतुर्दोणे पचेदपाम् ।
पादशेषे समक्षीरे कषायेतत्र पाचयेत् ॥ 18॥
प्रस्थं कटुकतैलस्य द्वौ प्रस्थौ दधिमाषयोः ।
दशमूलोपसं सिद्धरोहीतरसमावपेत् ॥ 19॥
क्षारजीवन वर्गं च सैन्धवं दीपनं च यत् ।
एतत् सिद्धं प्रयोगेण कर्णिकारीयमुत्तमम् ॥ 20॥
उद्वर्तनं ब्रह्मचर्यं कटु तैलोपसेवनम् ।
सुखाः शय्यासनस्वप्नश्चिन्तेर्ष्याभियवर्जनम् ॥ 21॥
वामपाश्वोंपिशियनं दधि मत्स्योपसेवनम् ।
लघ्वल्व स्निग्धसेवा च शमयन्ति प्लिहोदरम् ॥ 22॥
कर्णिकारस्य वा कल्कश्चणितः स्वरसोऽपि वा ।
कटुतैलेन तक्रैर्वा सेवितः प्लीहनाशन् ॥ 23॥
रागसर्षपतैलं व पूर्ववत् प्लीहनाशम् ।
सेवितं मात्रया नित्यं दधिमाषौद काशिनाम् ॥ 24॥
रागसर्षपमुष्टिं तु पिष्टं काञ्जिकयो जितम् ।
पिबेत् सलवणक्षारं भोज्यं काम्बलिकेन च ॥ 29॥
सप्ताहादतिवृद्धोऽपि प्लीहा प्रशममृच्छति ।
दाहश्चेदतिबाधेत रस क्षीरं च भोजयेत् ॥ 26॥
का०स० कटुतैल कल्प; 3-26

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थिर एवं वाष्पशील तेल के बीज के अन्दर की बनावट

1. सफेद सर्षप के बीज :- इसमें अवाष्पशील एवं वाष्पशील तेल क्रमशः 27.51% एवं 0.08% होता है। यह आसवन विधि से एलायल आयसोथायोसायनेट नहीं देता है मगर भाप की बजह से एक्रीनयल आइसोथायोसायनेट (Acrinyl isothiocyanate), $C_5H_4OH.CH_2O\,N{:}C{:}S$ देता है। बीज में ग्लोकोसाइड-सिनाक्लि (Glucosidesinablin) होता है जो मायरोसि (Myrosin) एवं जल के कारण टूट जाता है एक्रीनयल आइसोथायोसायनेट एवं सिनपिने हाइड्रोजन सल्फे और ग्लूकोस देता है। एक्रीनयल आइसोथायो साय अवाष्पशील ज्यादा है एलायल आयसोथायेसाइनेट से

$$\underset{\text{ग्लूकोसाइड-सिनावलीन}}{C_{30}H_{42}O_{15}N_2S_2} \xrightarrow{H_2O + \text{मायरोसिन}} \underset{\text{एक्रीनायर आयसो-थायोसायनेट}}{C_7H_7ON{:}C{:}S} + \underset{\text{सिनापिने हाइड्रोजन सल्फेट}}{C_{16}H_{24}O_5NHSO_4} + \underset{\text{ग्लूकोस}}{C_6H_{12}O_6}$$

(2) काले सर्षप के बीज :- इसमें 25.58 और 0.47% अवाष्पशील और वाष्पशील होता है। यह वाष्प आसवन से एलायल आयसो थायोसायनेट देता है। इसके बीज में ग्लूकोसाइड-सिनिग्रीन (Glucoside-sinigrin), जिसको पुटेशियम मायरोनेट, $C_{10}H_{16}KNS_2O_9$ होता है मायरोसिन एवं जल होने से साधारण ताप पर उबालने 99.13% एलायल आयसो-थायोसायनेट बना लेता है।

$$\underset{\text{ग्लूकोसाइड-सिनावलीन}}{C_3H_5N{:}C\ (SO_4K)S.C_5H_{11}O_5} \xrightarrow{H_2O + \text{मायरोसिन}} \underset{\text{एलायल आयसो-थायोसायनेट}}{C_3H_5N{:}C{:}S} + \underset{\text{पोटेशियम हाइड्रोजन सल्फेट}}{KNSO_4} + \underset{\text{ग्लूकोस}}{C_6H_{12}O_6}$$

सिनिग्रीन (Sinigrin) एवं सिनाबलीन (Sinablin) में अन्तर :- सिनिग्रीन और सिनाबलीन ग्लोकोसाइड के संग मायरोसिन अलग आरएफ (Rf) कीमत देता है तथा एनटीमनी ट्राईक्लोराइड एवं एनीसाल-डिहाइड्रेड घोल के साथ अलग-अलग रंग देता है। यह क्रोमेटोग्राफी विश्लेषण एवं कोलोरीमिट्रिक अनुमान द्वारा सिद्ध होता है।[11]

ग्लाइकोसाइड का जब हाड्रोलिसिस किया जाता है तो उसके उत्पादन रचना पर संदेह आता है क्योंकि सिनिग्रीन और सिनालविन एमयूलसिन (Emulsin) या माल्टोस (Maltose) से हाइड्रोलिसिस नहीं होता है इस कारण यह सिद्ध करना मुश्किल है कि ग्लाइकोसाइड एल्फा (α) या बीटा (β) स्थान से जुड़ा हुआ है।[12]

$$H_2C{:}\,CHCH_2.N{:}C{:}S{:}\,C_5H_{11}O_6\,(OSO_3K)$$

सिनग्रीन (Singrin)

स्थाई सर्षप तेल के भौतिक एवं रासायनिक उपयोग

दीपनं सर्षपं तैलं, कटुपाक रस कटुः।
लेखनंऽस्पर्श, वीर्योष्णं तीक्ष्णं पीतास दूषकम॥
कफ मेदौऽनिलाशौघ्नं शिरकर्णामयापहम्।
कण्डु कुष्ठ कृमिश्वित्र कोठदुष्टः कृमिप्रणुत्।

राजिका सर्षप तेल के गुण :- तीक्ष्ण, वात दोषघ्नं, शीतलं कटु कैश्यं त्वगदोषनाशनम्। अति तीक्ष्ण विशेष तत् कृष्णापि राजिका।

(राज निघण्टु)

स्थाई सर्षप तेल के भौतिक एवं रासायनिक तालिका-2 में दिये गये हैं। वाणिज्य सर्षप तेल अलग-अलग ढंग में मिलता है जैसे हल्का गहरा पीला। सर्षप तेल रंग बीज, निकालने की विधि इत्यादि पर निर्भर रहता है। सर्षप तेल जल में अघुलनशील है मगर अल्कोहल थोड़ा घुल जाता है किन्तु ईथर, क्लोरोफार्म, हल्का पेट्रोलि एवं बैंजीन में घुलनशील (Misicible) है। सूक्ष्म त सर्षप तेल में नहीं मिलते हैं।

सर्षप तेल में पाये जाने वाले वसा अम्ल संगठन को तालिका-3 में प्रदर्शित किया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अम्ल को दो भागों में बाँटा गया है (1) पोलीअनसेच्यूरेटेड अम्ल (p)= 94.2 और (2) सेच्यूरेटेड अम्ल (S)=5. 4 [(p)/(s)] की कीमत 17.45 आती है ।[13]

शुद्धता का परीक्षण

थिनलेयर क्रोमेटोग्राफी :- थिन लेयर क्रोमेटोग्राफी (टी०एल०सी०) से स्थिर सर्षप तेल का ऐसोन्डिंग मेथड (Ascending Method) द्वारा अलग-अलग घोलों और विकसित द्वारा अध्ययन किया गया[14] तालिका-4

सर्षप तेल में मिलावट वाले तेल एवं परीक्षण

(1) अलसी का तेल (लिनसीड ओयल; Linseed Oil) :- इस परीक्षण के लिये माइक्रोब्रोमाइड परीक्षण किया जाता है - एक बूँद तेल की (0.04 से 0.06 ग्राम) माइक्रोस्कोप की सिलाइड (Slide) पर छिड़कना चाहिए। इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि सिलाइड पर ग्रीस न लगी हो । दूसरी सिलाइड की धार से एक पतला पर्थ बना लेना चाहिये फिर इस फिल्म को 20 से 25 मिनट तक ब्रोमीन के वातावरण में रखना चाहिये फिर उसे निकालकर खुले वातावरण में रखना चाहिए जिससे अधिक ब्रोमीन उड़ जायेगी । अलसी का तेल जिस जगह होगा वह सतह सिकुड़ी, कंकड़ीला, रंगहीन तथा कड़ी होगी । जब कि सर्षप तेल की मुलायम, अपारदर्शक, चमकदार एवं फैली होगी । अब सिलाइड को धार के द्वारा सीधा खड़ा करो और समान मात्रा में ईथर और पेट्रोलियम ईथर लेकर ढँककर रख दो, थोड़ी देर पश्चात् काँच की छड़ से फिल्म को उखाड़ें तो उसके अन्दर फ्लोक्यूलेंट प्रिसिपिटेट (Flocculent Precipitate) दिखेंगे । यह सर्षप, आर्चिस (Arachis), कापोक (Kapok) एवं मोबराह (Mowrah) तेलों में नहीं मिलता है ।

2. सत्यानाशी (पीलीकटेरी) (अरजेमोन तेल-Argemone tail):- दूसरा परीक्षण निम्न विधियों द्वारा किया जाता है :

(अ) सर्षप तेल को समान आयतन नाइट्रिक अम्ल (Nitric Acid) मिलाकर खूब हिलाना चाहिये । उसमें ब्राउन रेड या ऑरेन्ज रंग नहीं आयेगा ।[15]

(ब) 3 मि०ली० सर्षप तेल में 1 मि०ली० ग्रेसियल ऐसिटिक अम्ल (Glacial Acetic acid) एवं 3 मि०ली० 3% (ग्राम/आयतन) क्यूपिरिक ऐसीटेट (Cupric acetate) के साथ मिलाकर खूब हिलाना चाहिये । उसके पश्चात् स्टेन्ड पर रख देना चाहिये । इसमें किसी प्रकार पीपीटी नहीं आती तथा जल वाली परत पर नीला रंग हरे रंग में बदल जायेगा ।[15]

(3) कुसुम तेल (पकरा तेल-Pakra tail):- सर्षप तेल को थोड़े से अल्कोहलिक पोटेशियम हाइड्रोऑक्साइड (Alcoholic KOH) डालकर खूब हिलाईये, फिर गर्म करें तथा उसमें थोड़ी-सी बूँदें फेरस सल्फेट (Ferrous sulphate) की डालें फिर कुछ बूँदें फेरिक क्लोराइड की डालकर खूब हिलायें। उसके पश्चात् थोड़ा हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (Hcl) डालें । इसमें परसियन नीला (Prussion blue) या हरा नीला रंग नहीं आयेगा ।[15]

इस परीक्षण को तब करना चाहिये जब सर्षप तेल में तिल, रूई और पीला कटेरी का तेल न हो ।

सर्षप तेल की तीखी सुगंध को हटाना

3 ग्राम सर्षप तेल में 6 ग्राम गंधक अम्ल (Sulphuric acid) मिलाते समय इसको ठंडे में रखना चाहिये एवं मिलाते समय हिलाते रहना चाहिये जिससे सल्फर डाई ऑक्साइड (SO_2) निकल जाये जब इसमें हल्का पीला रंग आ जाता है तब समझना चाहिये बदबू निकल गई है ।

उपयोग एवं क्रिया

आयुर्वेद में सर्षप तेल का उपयोग

01. विसूचिकायाम्

क्षारागदं वा लवणं विडं वा गुडप्रगाढानथ सर्षपान् वा ।
अम्लेन वा सैन्धवहिंगुयुक्तां सबीज पूरौ स घृतौ त्रिवर्गो ॥

(सु०उ० 56/15)

02. शोषे

गौरसर्षपकल्केन स्नानीयौषधिमिश्च सः ।
स्नायादृतुसुखैस्तोयै र्जीवनीयोपसाधितैः ॥

(अ०ह०चि० 5/81)

03. कुष्ठे

सर्षपकरञ्जकोषातकीनां तैलान्यथेङ्गु दीनां च ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुष्ठेषु हितान्याहुस्तैलं यच्चापि खदिरसारस्य ॥
(च०नि० 7/119)

04. कफांदरे

उपनाह्यं ससिद्धार्थकिण्वैर्बीजैश्च मूलकात् ।
कल्कितैरूदरंस्वेदमभीक्ष्णं चात्र योजयेत् ॥
(अ०ह०चि० 15/75)

05. शोथे

सिराकफघ्नश्च-विधिः समस्तस्तत्रेष्यते सर्षपलेपनञ्च ।
(च०चि० 12/98)

06. वातरक्ते

श्वेतसर्षप कल्कः, तिलाश्वगन्धा कल्कः प्रियालसेलुकपित्थ-कल्कः, मधुशिग्रपुनर्नवाकल्कः व्योषतिक्तापृथक्पर्णी बृहतीकल्क.....इत्येतेषां पञ्च प्रदेहाः सुखोष्णाः क्षारोद कपिष्यः ।
(सु०चि० 5/10)

07. श्लीपदे

वक्तिकपत्रसंमिश्रैः सर्षपैः परिपेषितैः ।
लेपनं संप्रशंसन्ति श्लीपदघ्नं भिषग्वराः ॥
(ग०नि० 4.2.39)

पिबेत् सर्षपतैलं व श्लीपदानां निवृत्तये ।
पूतीकरञ्जपत्राणां रसं वाऽपि यथाबलम् ॥
(सू०चि० 19/60, वृ०मा० 42/11)

08. अपच्याम्

सर्षपारिष्ट पत्राणि दग्ध्वा भल्लातकैः सह ।
छागमूत्रेण संपिष्टमपचीघ्नं प्रलेपनम् ॥
(वृ०मा० 41/47)

09. व्रणोपचारे

सर्षपारिष्ट पत्राभ्यां सर्पिषा लवणेन च ।
द्विरह्नः कारयेद् धूपं दशरात्रमतन्द्रितः ॥
(सु०सू० 19/28)

10. दन्तरोगे (शीतादे)

घर्षो लवणसर्षपैः ।
(हा०सं०चि० 3.46.15)

क्षीतादे हृतरक्ते तु तोये नागरसर्षमान् ।
निष्क्वाथ्य त्रिफलां चापि कुर्याद् गण्डूष धारणम् ॥
(वृ०मा० 58/7)

11. जिह्वाकण्टके

गृह्णीयात् कबलञ्चापि गौरसर्षपसैन्धवैः ।
(वृ०मा० 58/4

12. कर्णक्ष्वेडे

कर्णक्ष्वेडे हितं तैलं सार्षपंचैव पूरणम् ।
(सु०अ० 21/54; अ०ह०उ० 18/2

13. कपजेप्रतिश्याये

कपजे लंघनं लेपः शिरसो गौरसर्षपैः ।
(अ०ह०उ० 20/1

14. कटिविषे

मृकेशाः सर्षपाः पीता शुडोजीर्णश्च धूपनम् ।
विषदं शकस्य सर्वस्य काश्यपः परमोऽब्रुतीत ॥
(अ०ह०उ० 37/2

15. प्लीहावृद्धौ

कटुतैलोपदेशं तु वक्ष्यामि प्लीहानाशनम् ।
न ह्यतः परमं किञ्चिदौषधं प्लीहशान्तये ।
(का०सं०, कटुतैलक

16. अरुस्तम्भे

.....दिह्याच्च मूत्रादयैः करञ्जफलसर्षपैः ।
(सु०चि० 5/

17. अपस्मारोन्मादयोः

त्र्यूषणं त्रिफला हिङ्ग सैन्धवं कटुका वचा ।
नक्तमालकबीजानि तथा च गौरसर्षपाः ॥
बस्तमूत्रेण पिष्टैस्तु गुडी छायाविशोषिता ।
अञ्जनं हन्त्यपस्मारमुन्मादञ्चैव दारूणम् ॥
(ह्य०सं० 3/18/19-2

18. विचर्चिकायाम्

खण्डे महावृक्षमवे निलीनः स्विन्नः कुकूले पुटपाकयुक्त
विचर्चिकां सर्षपकल्पपिण्डोनि हन्ति लज्जामिव रागदेव
(अ०स०चि० 21/

19. बालरसायने

कृमिघ्नं सार्षपं तैलं कंड्कुष्ठापहं लघु ।
कफमेदोऽनिलहरं लेखनं कटु दीपनम् ॥
(सु०शा० 10/4

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक उपयोग

01. जब सर्षप तेल को जल के साथ मिलाकर शरीर पर रगड़ते हैं तो तीव्र क्रिया होती है क्योंकि इससे धीरे -धीरे वाष्पशील तेल बनता है । ग्लूकोसाइड खुद बहुत कम या नहीं के बराबर शरीर पर असर करता है । इस कारण जो दूसरा पदार्थ बनता है वह अधिक नुकसान पहुँचाता है, इस कारण इसको शरीर पर लगाने में आपत्ति बताई गई है ।[17]

02. दूसरे संघटक होने के अलावा इसमें 25% ज्यादा स्थाई तेल होता है जिसके कारण यह हल्का लाल रंग का रहता है ।[18]

जब सर्षप तेल को शरीर की त्वचा पर लगाते हैं तो निम्न क्रिया प्रारम्भ हो जाती है :-

(अ) लाल रंग आना, नाड़ी उत्तेजना, जिससे गर्मी और जलन की तकलीफ होती है ।

(ब) इसके प्रभाव से इन्द्रियग्राह्यता को नुकसान होता है जिससे शरीर के दूसरे भाग पर प्रभाव पड़ता है जिसके कारण पहले से ज्यादा तकलीफ में आराम मिलता है ।

(स) अधिक समय तक उपयोग करने पर फफोले पड़ जाते हैं एवं सूजन, जलन इत्यादि हो जाती है ।

03. इसमें ओभीसिडल (Ovicidal) क्रिया भी देखने को मिलती है ।[19]

04. इसका ज्यादा उपयोग करने से जुलपित्ति (Urticaria) रोग बन जाता है ।[20]

05. निकाले गये सर्षप तेल में अगर प्रोटिओलायटिक इंजाइम (Proteolytic enzymes) डालते हैं तो एल्लेरजेनिक केपेसिटी (Allergenic capacity) खत्म हो जाती है । इससे प्रतीत होता है कि एन्टीजेन (Antigen) प्रोटीन में एनाफायलजिस (Anaphylaxis) के लिये होता है ।[21]

06. सर्षप तेल में इरयूसिक ऐसिड (Erucic Acid) ज्यादा पाया जाता है जो थोड़ा सा दूसरा पदार्थ बनाता है जो मयोकारडियल लिपसे (Myocardial lipase) के लिये बड़ा उपयोगी है ।[22]

07. हायपरलिपीमेडिक एक्टविटी (Hyperlipidaemic activity) सर्षप तेल सिरम लिपिड (Serum Lipid) से जल्दी सम्पर्क में आता है । इरयूसिक अम्ल सिरम लिपिड में पाया जाता है तथा कम या ज्यादा लीपोप्रोटीन (Lipoprotein) का घनत्व रहता है । सीरम लिपिड प्रोटीन में वसा अम्ल (Fatty acids) में परिवर्तन होते हुये भी मिलता है ।[23]

08. सर्षप तेल कोलिस्ट्राल (Cholesterol) एवं ओरटिक एथेरोस्केलेरोसिस (Aortic atherosclerosis) को कम नहीं करता है ।[24]

09. इसमें फंजीटोकासिक एक्टविटी (Fungitoxic activity) ज्यादा होती है ।[25]

10. इसका उपयोग अग्निवर्धक (Stomachic), कोलगोग्यू (Cologogue) एवं वर्मीफ्यूरो (Vermifuge) में किया जाता है ।[26]

11. यह कफ और वात को खत्म करता है ।[26]

12. यह त्वचा के फोड़े-फुंसी, एवं कोढ़ को ठीक करता है ।[26]

13. यह बवासीर, सूजन, मिर्गी, दाँत का दर्द तथा उल्टी को रोकता है ।[26]

14. सर्षप तेल को कपूर में मिलाकर निम्न प्रकार उपयोग में लाते हैं;[27]

(अ) इसका प्रभाव गठिया के मांस के ऊपर लेप में काम आता है ।

(ब) लंगड़ा ज्वर में इससे बड़ा लाभ होता है ।

(स) श्वासनली की सूजन को काम करने के लिये इसको छाती पर मला जाता है ।

15. सर्षप तेल की बदबू को खून में से भी निकाला गया है । इसकी खास क्रिया अभी तक अस्पष्ट है । अतः इसको औषधि तैल मानना चाहिये । इस तेल को फेफड़े में से भी निकाला गया है ।[8]

16. आयुर्वेद तेलों को बनाने के लिये सर्षप तेल को स्नेह द्रव्य के रूप में प्रयोग किया जाता है ।

17. सर्षप तेल एवं नमक मिलाकर दाँतों पर लगाने से दांत साफ रहते हैं एवं पायरिया नहीं होता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

म्यूटाजिनिक क्रिया (Mutagenic Action)

यह सर्षप तेल में खास है क्योंकि कुछ पदार्थ पौधों में स्वभाव से मिलते हैं जिसकी वजह से इसमें स्वभाव से परिवर्तन आता है जो कि प्रारम्भ में रासायनिक क्रिया द्वारा होता है । यह क्रिया रोशनी में होती है । यह क्रिया खास प्रकार के परिवर्त्तन करती है जिससे सही दिशा मिलती है ।[28]

सर्षप का वाष्पीकरण तेल

सर्षप के वाष्पशील तेल के भौतिक एवं रासायनिक गुण तालिका -5 में प्रदर्शित किये गये हैं ।

सर्षप के वाष्पशील तेल से एलायल थायोसायनेट निकालना :- 4 एमएल वाष्पशील तेल (बिल्कुल सही तुला हुआ) में इतना अल्कोहल मिलाओ जिससे आयरन 100 एमएल हो जाये । उसमें से 5 एमएल घोल को पिपेट द्वारा निकालकर 100 एमएल प्लासक में डालो, उसमें 50 एमएल एन/10 सिल्वर नाइट्रेट को डालो एम एमएल अमोनिया मिलाओ । फिर फ्लासक को रिफ्लक्स कंडेन्सर (Reflux Condenser) लगाकर जल ब बर्त्तन (Water both) के ऊपर रखकर करीब एक घ गर्म करो, ठंडा होने के लिये उतारकर रख दो, उसमें कडेन्सर हटा दो एवं डिस्टिल वाटर (Distilled wate खूब मिलाओ अब उस मिक्चर को 100 एमएल का एवं खूब मिलाकर उसे फिल्टर पेपर से छाल लें । 10 एम एल फिल्ट्रेट को हटा देना चाहिये । 50 एम फिल्ट्रेट को (सही नापकर) उसमें 5 एमएल नाईट्रि अम्ल एवं 2 एमएल फेरिक अमोनिया सल्फेट मिलाएं तत्पश्चात् ज्यादा सिल्वर नाइट्रेट को एन/10 अमोनि थायोसाइनेट से टाइट्रेट (Titrate) किया । प्रत्येक एम एन/10 सिल्वर नाइट्रेट का 0.004956 ग्राम एलाय आयसोथायोसायनेट के बराबर होता है ।[29,30]

$C_3H_5NC_5$	+	NH_4OH	+	$AgNO_3$	——————→	AgCNS	+	C_3H_5OH	+	NH_4NO_3
एलायर थायो- सायनेट		अमोनियम हाइड्रोआक्साइड		सिल्वर नाइट्रेट		सिल्वर थायो सायनेट		एलायल अल्कोहल		अमोनिय नाइट्रेट

वाष्पशील तेल का उपयोग

(अ) त्वचा पर लाल रंग पैदा करने में सबसे ज्यादा शक्तिशाली है ।

(ब) आन्तरिक उपयोग होता है जिसकी मात्रा कम से कम 1/8 (0.008 एमएल) है ।[29]

(स) जब यह तेल त्वचा पर लगाकर थोड़ी देर छोड़ दें तो फफोले पड़ जाते हैं यह बड़ी पीड़ा देते हैं । ऐसा कहते हैं कि स्पेन में एक मक्खी पाई जाती है उसको सुखाकर शरीर के किसी भी भाग में लगा दें तो फफोले पड़ जाते हैं एवं यह अत्यन्त समय में ठीक होते हैं । इसका कारण यह है कि तेल शरीर के अन्दर चला जाता है जिसके कारण सूजन ज्यादा आती है एवं देर में ठीक होती है ।[17]

(द) इस तेल का उपयोग फेफड़े के आवरण एवं अस्थमा में किया जाता है । इसको औषधि के रूप में लेप बनाते हैं फिर उपयोग करते हैं;

(i) वाष्पशील तेल 2 भाग, कपूर 3 भाग, रेंडी का तेल भाग और 90% अल्कोहल मिलाकर लेप तैयार कर

(ii) अल्कोहल घोल में 5.5% कपूर, 12.5% रेंडी तेल एवं 3.5% वाष्पशील तेल मिलाकर उपय करना चाहिये ।

विषैला

आधुनिक अनुसंधान से यह सिद्ध किया जा है कि सर्षप तेल विषैला होता है जहां पर इसका उप ज्यादा होता है वहां पर लोगों को घातक अर्बुद ज मिला है । मगर इसके प्रमाण ज्यादा नहीं मिल पा क्योंकि घातक अर्बुद एक ही कारण से नहीं होता है। सकता है कि सर्षप तेल में मिलावट ज्यादा हो रही हो विपरीत वस्तुओं का सेवन भी ज्यादा हो जिस कारण अधिक मात्रा में मिल गया हो ।

साहित्य उद्धरण

1. ले०ले०आर०डी०, 1999, मोलीक्यूलर फार्मोकोल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

: दी थीम ऑफ दी 21 एसटी सेंच्युरी, फार्मा टाइम्स, 31, 7. 15 ।
2. सक्सेना, आर०बी०, 2002, रिलेसन बिटबीन अनुपान्स एण्ड फार्मासियूटिक्ल आसपेक्स ऑफ अभ्रक भस्म, सचित्र आयुर्वेद 54, 11, 852-855.
3. सक्सेना, आर०बी०, 2002, मोलिक्यूलर फार्मोकोलॉजी : ए न्यू इन्टफेस बिटबीन आयुर्वेदा एवं मॉर्डन मेडीसिन, सचित्र आयुर्वेद, 53, 2, 141-144.
4. राल्फ ई० एलसटोन एण्ड बी०एल०टर्नर, 1963, बायोकेमिकल सिस्टमेटिक्स, प्रिन्टीसेन्हाल ईंक, ईग्लेवुड क्लीफ्फस, एन०जे० 333.
5. अनाम, 1948, दी वेल्थ ऑफ इंडिया, सी०एस०आई०आर०, नई दिल्ली ।
6. लिवेरसिंगे, जे०एफ०, 1932, फ्रूड एण्ड ड्रग्स में एडलट्रेशन एण्ड ऐनालिसिस, जे०एण्ड ए०, चर्चिल 40 ग्लोयूसेस्ट्रर प्लेस पोर्टमेन स्कवर, लंदन, 140 ।
7. वेंटले, ओ०, 1942, ए टेस्ट बुक ऑफ फार्मास्यूटिकल, 4थ ऐडीसन, वेल्लीएरे, टिनडाल्ल एन्ड कोएक्स[7] एन्ड[8] हेन्रीएट्टा स्ट्रीट, कोबेन्ट गार्डन डब्लूसी 2, लंदन 346 ।
8. बुसे जे० मिटचेल्ल, 1901 मटेरिया मेडिका एन्ड थेरापेयूटिक्स, कस्सेला एण्ड कम्पनी लिमिटेड, लंदन, 239 ।
9. बुडमेन, ए०जी०, 1941, फुड ऐनेलिसिस, म्क्ग्रों-हिल बुक कंपनी, इन्क०, न्यूयार्क, 199 ।
10. मार्टिडले, 1943, दी एक्ट्रा फार्मोकोपिया, 2 आय०, फार्मा सियूटिक्ल प्रेस, 17, ब्लीमूनव्यरे स्कूयर, डब्लू०सी० 1, लंदन 349 ।
11. ओवीडेरो, टी०के०, 1988, पाकिस्तान जरनल ऑफ सान्टिफिक एण्ड इंडस्ट्रीयल रिसर्च, 31, 5, 371 ।
12. ड्रीवेर, जे०ई०, 1960, टेस्ट बुक ऑफ फार्मासियूटिकल केमेस्ट्री, ऑक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस एन०वाय०एण्ड, लंदन 530 ।
13. चक्रवर्ती, एम०एम० एण्ड टी०पी० हिलडिटच, 1951, जे०सा०फूड एग्री० 2, 255 ।
14. सक्सेना, आर०बी०, अप्रकाशित कार्य ।
15. अनाम, 1940, 'दी इंडियन फार्मोकोपियल लिस्ट, दी मैनेजर गर्वमेन्ट आफ इंडिया, कलकत्ता, 92 ।
16. अनाम, 1936, फार्मोकोपिया ऑफ दी यूनाइटेड स्टेट, मेक प्रिन्टिंग कम्पनी इस्टन, पी०ए० 268 ।
17. क्यूशन, ए०आर०, सी०डब्लू०एडम्यून्डस और जे०ए०जगुन, 1941, फारमकालोजी एण्ड थेरापियूटिक्स, जे०एण्ड ए० चर्चिल लेटिक, ग्लूसटर प्लेस पोर्टमेन स्काव्यर, लन्दन, 230 ।
18. ओल्पोर्ट, एन०एल०, 1970, दी केमेस्ट्री एण्ड फार्मेसी ऑफ बेजीटेबिल ड्रग्स, जोर्ज न्यूनेस लेटिड, टावर हाऊस, साउथएम्पटोन स्ट्रीट स्ट्रन्ड०डब्लू०सी० 2, लन्दन 177 ।
19. नाईक, आर०एल०एण्ड आर०बी० ड्यूमवे, 1987, ज०महाराष्ट्र एग्रीक०यूनी० 12,1,76 ।
20. काटली०जी०एण्ड डी० मोसेग, 1987, कोन्टेक्ट डरमेटिटिस 17, 3, 163 ।
21. लेनिज्वररयूटीय, आई०, डी० मूनोज एण्ड एफ० कोरेस, 1987, कोन्टेक्ट डरमेटिस ।
22. वागेश्वरी, ए०एण्ड पी०जी० दूलप्यूले, 1980, लिपिडस 15, 11, 962 ।
23. रे०एस०, जी० तालूकडेर, के०पी० सेनगुप्ता एण्ड जी०सी० चटर्जी, 1980, इंडियन जे० एक्सपे० बाईओल 18, 12, 1509 ।
24. ठाकर, सी०पी० एण्ड एस०सी०कुमार, 1981, ओर्थरोसिरोसिस. 39, 3, 437 ।
25. दीक्षित, एस०एन०, एन०एन० त्रिपाठी एण्ड एस० सी० त्रिपाठी, 1978, नेट एक्ड०साई०लेट्र 1,8, 287 ।
26. नाडकरनी, ए०के०, 1976, इंडियन मटेरिया मेडिका, पोप्यूलर प्रकाशन बोम्बे, 214 ।
27. मुखर्जी, एस०, 1953, इंडियन फार्मोस्यूटिक्ल कोडेक्स, 1 वाल्यूम, कॉसिल ऑफ सांइन्टिफिक एण्ड इन्डस्ट्रियल रिसर्च, नई दिल्ली - 191 ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

28. सेबसोन, जे०एम०एण्ड सी०ए०, कीले, 1951, रीसेन्ट एडबान्सेस इन फार्माकालाजी, दी ब्लेकिस्टोन कम्पनी फिलडेलफिया : टोरेन्टो, 234 ।
29. कुक, ई०एफ०एण्ड एच०एल० चार्लेस, 1942, रेमिग्टन्स प्रेक्टिस ऑफ फार्मेसी, फिलडेलफिया एण्ड लंदन जे०बी० लिप्पिनकोट्ट कंपनी, 112
30. ग्यूईथर, ई०, 1972, दी इंसन्सियल ऑयल्स वोल्यूम, रोबर्ट ई० क्रिगेर पब्लिशिंग कं इन्टीन्जटोन, न्यूयार्क, 303 ।

तालिका - 1

सर्षप तेल (निश्चित ईथर द्वारा निकालना)

% तेल	29.4	32.0	33.0	34.0	35.0	36.0	37-38	कुल
% सेम्पल	02.0	04.0	18.0	30.0	27.0	14.0	05.0	100

तालिका - 2

स्थायी सर्षप तेल के भौतिक - रासायनिक गुण

क्र०स०	स्थिर राशि (पेरामीटर)	अनुक्रिया (रिस्पोन्स)
1	2	3
1.	रंग (कलर) (Colour)	ब्राउनिस-यलो (Brownish Yellow) या गोल्डन-यलो (Golden-Yellow) ।
2.	स्मेल (Smell)	सर्षप तेल की स्मेल ।
3.	एपीयरेन्स (Appearance)	विसकस (Viscous) ।
4.	टच (Touch)	ओयली (Oily) ।
5.	टेस्ट (Taste)	पंजेन्ट (Pungent) ।
6.	ओपिलेन्स (Opalescence)	ट्रान्सल्यूसेन्ट (Translucent) ।
7.	ड्राईंग इन रूम टेम्प्रेचर (Drying in room temperature)	नोन-ड्राईंग (Non-Drying) ।
8.	क्लरियटी (Clarity)	क्लीयर (Clear)।
9.	ओप्टीकल रूटेशन (Opticalrotation)	इनऐक्टिव (Inactive) ।
10.	हेहनेर नम्बर (Hehner number)	95-97 ।
11.	म्यूमेने नम्बर (Maumene number)	42-44 ।
12.	फ्रिजिंग पोईन्ट (Freezing Point)	-15^0 से -17^0 ।
13.	मात्रा/आयतन (Mass/Volume) 20^0से.टी. ।	0.9130 - 0.9180 ।
14.	स्पे०ग्रेबिटी (Sp.gravity) ($15.5^0/15.5^0$)	0.9140 - 0.9206 ।
15.	रिफेटिव इंडेक्स (Refractive index) (अ) 25^0 से०ग्रे० (ब) 40^0 से०ग्रे०	1.4679 । 1.4640 - 1.4680 ।
16.	वोलेटाइल कन्टेन्ट (स्टीम डिस्टीलेशन) (Volatile content by steam distillation)% आयतन/आयतन	0.40 ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

1	2	3
17.	लोस ओन ड्राईंग 110° से०ग्रे० पर (Loss on drying at 110°C)% मात्रा/मात्रा	0.31
18.	रैन्सिडिटी (Rancidity)	+Ve
19.	एश वेल्यू (Ash Value)	नहीं (Nil)
20.	फ्री सल्फर (Free Sulphur)	नहीं (Nil)
21.	एसिड वेल्यू (Acid Value)	1.5 - 7.30 ।
22.	स्फोनीफिकेशन वेल्यू (Saponification value)	150 - 180 ।
23.	स्फोनीफिकेशन इक्यूवलेन्ट (Saponification equivalent)	374 - 312 ।
24.	ऐस्ट्र वेल्यू (Easter value)	148 - 173 ।
25.	आयोडीन वेल्यू (Iodine Value)	96 - 120 ।
26.	हाइड्रोओक्सेल वेल्यू (Hydroxyl Value)	232 - 236 ।
27.	एसीटाईल वेल्यू (Acetyl Value)	197 - 202 ।
28.	अनसफोनीफाईएविल मेटर (Unsaponifiable mater)	0.34 - 3.8 ।
29.	गिरीसरोल (Glycerol)	83.69 ।

तालिका - 3

सर्षप तेल में औसत वसा अम्ल (Fatty acids)

क्र०स०	वसा अम्ल (Fatty acids)	परिमाण (Quantity) %
1	2	3
01.	समतप्त वसा अम्ल (Saturated fatty acids)	5.4 ।
	(अ) पालमिटिक (Palmitic)	1.5 - 2.0 ।
	(ब) स्टेअरिक (Stearic)	0.4 ।
	(स) एराचिडिक (Arachidic)	0.5 ।
	(द) वेहेनिक (Behenic)	2.0 ।
	(इ) लिग्नोसेरिक (Lignoceric)	1.0 - 1.5 ।
02.	असंमत्रप्त वसा अम्ल (Unsaturated fatty acids)	94.2 ।
	(अ) हेग्जाडेसेनोइक (Hexadecenoic)	-
	(ब) ओलेक (Oleic)	22.0 - 28.0 ।
	(स) ईकोसेनोईक (Eicosenoic)	70.0 ।
	(द) इरयूसिक (Erucic)	42.0 - 51.5 ।
	(इ) लीनोलेइक (Linoleic)	14.2 - 19.5 ।
	(ई) डोकेसडिइनोइक (Docosadienoic)	-
	(उ) लीनोलेनिक (Linolenic)	06.8 ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तालिका - 4

सर्षप तेल की टी० एल० सी० एवं आर एफ (Rf) कीमतें

क्र०स०	सोल्वेन्ट सिस्टम (Solvent system)	डेवेलपर (Developer)		
		आयोडीन वेपर (Iodine Vopour) आरएफ (Rf)	5% इथनोलिक सल्फियूरिक अम्ल (Ethanolic Sulphuric acid) आरएफ (Rf)	सल्फियूरिक अम्ल + जल (Sulphuric acid) (water) आरएफ (Rf)
1	2	3	4	5
01.	बेंजीन (Benzene): सोल्वेंट ईथर (Solvent ether) 9.7 : 0.3	0.80, 0.91	0.44, 0.55, 0.92	-
02.	बेंजीन (Benzene): क्लोरोफार्म (Chloroform) 1 : 1	0.13, 0.20, 0.77	0.19, 0.23, 0.68, 0.90	-
03.	बेंजीन (Benzene): इथाइल ऐसीटेड (Ethyl acetate) 95 : 5	0.44, 0.54, 0.86, 0.92	0.21	-
04.	बेंजीन (Benzene): इथाइल ऐसीटेट (Ethyl acelate) 4:1	0.75, 0.92, 0.98	-	0.75, 0.92, 0.98 (गर्म 110° से 10 मिनट
05.	बेंजीन (Benzene): इथाइल ऐसीटेड : ऐसिटिक ऐसिड 95:5:0.1	0.39, 0.47, 0.89	0.26, 0.34, 0.63, 0.81	-
06.	हेक्जेन (Hexane): सोल्वेंट ईथर (Solvent ether) 83:13	0.78	0.57, 0.95	

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तालिका - 5

सर्षप के वाष्पशील तेल के गुण

क्र०स०	पेरामीटर (Parameter)	रिस्पोन्स (Response)
1	2	3
1.	कलर (Colour)	कलरलेस (Colourless) और पेल यलो (Pale Yellow)
2.	स्मेल (Smell)	वेरीपंजेन्ट (Very Pungent) और एरीटेटिंग (Irritating)
3.	टेस्टी (Teste)	एक्रिड (Acrid)
4.	टच (Touch)	ओयली (Oily)
5.	स्पे० ग्रेविटि 25° से० पर (Specific gravity at 25°C)	1.013 - 1.030
6.	वॉयलिंग पॉइन्ट (Boiling point)	297°-306° (एफ) F
7.	ओपटीकल रोटेशन (Optical rotation)	इनएक्टिव (Inactive)
8.	रिफ्रेक्टिव इंडेक्स 20° से० पर (Refractive index at 20°C)	1.5250 - 1.5300
9.	सोल्यूविल्टी (Solubility)	
	(अ) अल्कोहल (Alcohol)	8 आयतन (70% अल्कोहल)
	(ब) वाटर (Water)	0.2%
	(स) ईथर (Eather)	मिसेबिल (Miscible)
	(द) कार्बन डाई सल्फाइड (Carbon di sulphide)	मिसेबिल (Miscible)
	(इ) पेट्रोलियम ईथर (Petroleum ether)	मिसेबिल (Miscible)
	(ई) क्लोरोफार्म (Chloroform)	मिसेबिल (Miscible)
	(उ) बेंजीन (Benzene)	मिसेबिल (Miscible)
10.	मेल्टिंग पॉइन्ट (Melting point)	- 102.5° से०

बैद्यनाथ
अर्जुनारिष्ट
हृदय की कमजोरी, दिल की धड़कन तथा छाती एवं फेफड़ों में लाभकारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एड्स एवं ओजक्षय में तुलनात्मक प्रस्तुति

सुरेश चन्द्र

सम्पूर्ण विश्व में ''एड्स'' का प्रथम रोगी ईसवी सन् 1981 में तथा भारत में सन् 1986 नवम्बर में देखा गया । मात्र विगत बीस वर्षों में तीव्रगति से बढ़ते हुए । इस 'एड्स' रोग की भयंकरता का अनुमान प्रस्तुत आंकड़ों से लगाया जा सकता है कि विश्व में प्रतिदिन लगभग 16 हजार स्वस्थ व्यक्ति अर्थात् साठ लाख व्यक्ति प्रति वर्ष एड्स के संक्रमण के जाल में फंस जाते हैं । विश्व में तीन करोड़ से अधिक वयस्क व्यक्ति तथा पच्चीस लाख बच्चे एड्स के विषाणु से संक्रमित हैं, जिनमें एक तिहाई महिलाएं हैं ।

भारत में भी इसकी प्रसार गति तीव्र है । वर्तमान में लगभग चालीस लाख व्यक्ति एड्स के एच०आई०वी० से संक्रमित हैं तथा इस रोग की भयंकरता का दूसरा रूप यह भी है कि संक्रमित लोगों में से 30 से 50 प्रतिशत व्यक्ति होने के पांच से दस वर्ष की अवधि में काल के ग्रास बन जायेंगे । इस 'एड्स' महामारी ने दुर्घटनाओं, भूकम्प, तूफान, बाढ़, युद्ध तथा अनेक प्राकृतिक आपदाओं से मरने वालों की संख्या को पीछे छोड़ दिया है तथा उत्तरोत्तर वृद्धि कर रहा है ।

एड्स और नैतिक चरित्र

पाश्चात्य सभ्यता, संस्कृति और तथाकथित आधुनिकता का अन्धानुकरण एड्स प्रसार का महत्वपूर्ण कारण है । पाश्चात्य संस्कृति ने जहां एक तरफ नैतिकता की दीवार को ध्वस्त कर दिया है, वहीं यौन सम्बन्धी स्वतंत्रता ने पति-पत्नी के पावनतम दैव प्राप्त सम्बन्ध को तिरस्कृत कर, इसके विपरीत स्वच्छन्द विहार की दूषित प्रवृत्ति ने एड्स रोग तथा यौन जनित अनेक रोगों की वृद्धि कर नैतिक प्रदूषण को भी बढ़ावा दिया है तथा च दाम्पत्य जीवन के पावनतम सौन्दर्य तथा स्नेहमयी सौहार्द्र को तिरस्कृत कर आज के आयु के लोगों ने अपने दुराचरण से इस एड्स रोग को बढ़ावा देकर जीवन को अनेक व्याधियों तथा आपदाओं से दुखमय बनाते हुए अन्त में मृत्यु को ही स्वीकारा है क्योंकि विगत् वर्षों में बढ़ते इस संहारक एड्स रोग के लिए सम्पूर्ण चिकित्सा पद्धति द्वारा अथक प्रयास के बाद भी इन पंक्तियों के लिखे तक कोई औषधि, एक भी दिव्य रसायन तथा इन्जेक्शन की खोज नहीं हो पाई है जिससे एड्सग्रस्त रोगी को मृत्यु से बचाया जा सके । इस तीन अक्षर के शब्द ने मानव जाति के इतिहास में मानव को मृत्यु से बचाने के लिए सबसे गम्भीर चुनौती खड़ी कर दी है । 'एड्स' जहां एक मारक तथा संहारक रोग है वहीं यह शरीर में अन्य अनेक व्याधियों को उत्पन्न करने के लिए भी भूमि तैयार करता है । क्योंकि ''एड्स'' शब्द

''ए''	-	**एक्वायर्ड**
''आई''	-	**इम्यूनो**
''डी''	-	**डैफिसियेन्सी**
''एस''	-	**सिन्ड्रोम**

अर्थात् एक्वायर्ड इम्यूनो डैफिसियेन्सी सिन्ड्रोम इसका अर्थ है - वह संक्रमण जिसे प्राप्त करने पर शरीर की संक्रमण से लड़ने की प्राकृतिक प्रतिरोधक क्षमता शनैः शनैः कमी व ह्रास उत्पन्न हो और इस कमी से वह स्थिति आ जाय कि शरीर पर अन्य प्रकार के जीवाणु एवं विषाणु आक्रमण एवं संक्रमण कर शरीर को रोगग्रस्त कर दें । एक तो 'एड्स' रोग के कारण, अनैतिक धातुक्षय से शरीर में भयंकर निर्बलता तथा उसमें प्राकृतिक प्रतिरोधक क्षमता के ह्रास से आने वाले रोगों को रोकने की असमर्थता से शरीर रोगों का घर व निवास बन जाता है । उस समय फिर किसी भी औषधि, इन्जेक्शन तथा दिव्य रसायन का अभाव ऐसी स्थिति में मृत्यु का वरण ही एक मात्र उपाय रह जाता है । इसीलिएं तो यह 'एड्स' का रोग अन्य रोगों से भिन्न है । इसीलिए इस 'एड्स' रोग को आज के दिन मृत्यु का पर्याय ही माना जाता है । पाश्चात्य चिकित्सा पद्धति के निहित अन्य रोगों में रोग उत्पन्न करने वाले जीवाणु एवं विषाणु के शरीर में प्रवेश पर शरीर की

संस्थापक, भूषण आयुर्वेदिक प्रयोगशाला, लोहट बाजार, हाथरस (अलीगढ़)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राकृतिक रोग प्रतिरोध क्षमता उस रोग संक्रमण के विरूद्ध लड़ाकू तत्त्व जिन्हें प्रतिपिण्ड (एण्टीबॉडी) कहते हैं, शीघ्र से शीघ्र बनाकर संक्रमण के विरुद्ध लड़कर या तो संक्रमण को नष्ट कर देती है अथवा उसका प्रभाव कम कर देती है जिससे रोग के लक्षण प्रकट होने लगते हैं, जो उपचार के बाद समाप्त हो जाते हैं । परन्तु इस एड्स संक्रमण में विषाणु के आक्रमण का कोप-भाजन शरीर की वे कोशिकायें होती हैं, जिन्हें लिम्फोसाइट कहते हैं, जो संक्रमण के विरुद्ध प्रतिपिण्ड (एण्टीवॉडी) बनाने के लिए उत्तरदायी होती हैं एवं उन्हीं पर यह विषाणु आक्रमण करता है । इससे शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता प्रतिपल कम होती चली जाती है । एक उदाहरण में इसे यूं समझना सरल होगा कि जैसे भवन या बैंक के चौकीदार को मार दिया जाये या जख्मी कर रक्षा करने में असमर्थ कर दिया जाये तो भवन में प्रवेश या बैंक को लूटने में सरलता हो जायेगी । उसी प्रकार जब यह विषाणु शरीर में प्रवेश कर जाता है तथा प्राकृतिक प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है, तब एड्स संक्रमण के साथ अन्य रोगों के जीवाणु, जिन्हें अवसरवादी संक्रमण कहते हैं, शरीर पर आक्रमण करके प्रवेश कर जाते हैं, क्योंकि शरीर की प्राकृतिक क्षमता पहले से ही कम अथवा नष्ट प्राय: हो चुकी होती है । मृत्यु इन अवसरवादी संक्रमणों के कारण होती है । अत: एड्स एवं मृत्यु एक ही सिक्के के दो पहलू समझे जायें तो गलत नहीं होगा । इस प्रकार आज एड्स के संक्रमण के बाद मृत्यु निश्चित है । संक्षेप में निष्कर्ष यह है कि शरीर में प्रतिरोधात्मक क्षमता क्षीण हो जाने से सामान्य से सामान्य जीवाणु या विषाणु एड्स रोगी पर हावी हो जाते हैं । सामान्यत: मानव प्रतिरोधक-तंत्र जीवाणु व विषाणु के हमले को आसानी से निबटा देता है। परन्तु एड्स में एच.आई.वी. संक्रमण के बाद अनेक प्रकार की बीमारियों का सहज ही शिकार होकर अन्ततोगत्वा रोगी कालग्रस्त हो जाता है ।

संक्षेप में 'एड्स' रोग के संक्रमण, प्रसार तथा मारक अवस्था के लिए निम्न पंक्तियां मुख्य हैं :-

1. असुरक्षित तथा अवैध सम्भोग तथा अत्यधिक वीर्य क्षय ।
2. नशीले द्रव्यों तथा मादक पेयों का अत्यधिक सेवन ।
3. एच.आई.वी. विषाणु संक्रमण में अवैध सम्भोग ही मुख्य है ।
4. प्राकृतिक प्रतिरोधक क्षमता का ह्रास ।
5. मृत्यु का आलिङ्गन ।

आयुर्वेद में एड्स

पाश्चात्य जगत् में इस एड्स का निश्चित रूप से 1981 अर्थात् मात्र बीस वर्ष पूर्व ज्ञात हुआ । पर आयुर्वेद के ऋषि एवं आचार्यों के प्राचीनतम आयुर्वेद ग्रन्थों में 'ओजक्षय' के लक्षणों में एड्स के ऊपर निर्दिष्ट सभी लक्षणों का निवेश स्पष्ट है । आदणीय पाठकों के विचारार्थ चरक और सुश्रुत के कुछ श्लोकों को प्रस्तुत करना आवश्यक समझता हूँ ।

"ओज" क्या है ?

"ओजस्तु तेजोधातु नां शुक्रान्तांनां परं स्मृतम् ।
हृदयस्थमपि व्यापि देह स्थिति निबन्धनम् ॥

शरीर की रसादि सातों धातुओं का उत्तम अन्तिम तेज रूप, देह को धारण करने वाला, देहव्यापी यह ओज विशेषत: हृदय में रहता है । यह ओज पर और अपर भेद से दो प्रकार का होता है ।

इसी ओज में आज के विद्वान् शरीर के Natural Resistance से सम्बन्ध करने लगे हैं ।

आचार्य चरक ने इस ओज का वर्णन करते हुए लिखा है कि

"येनौजसा वर्तयन्ति प्रीणिता: सर्वदेहिन: ।
यहते सर्वभूतानां जीवितं ना व तिष्ठते ॥
यत् सारमादौ गर्भस्य यत्त द्भरसादस: ।
संवर्त्तमानं हृदयं समाविशतियत् पुरा ॥
यस्य नाशात्त नाशोऽस्ति धारियद् हृदयाश्रितम् ।
यच्छरीर रस स्नेह: प्राणा यत्र प्रतिष्ठिता: ॥
तत्फला बहुधा वा ता: फलन्तीव महाफला: ।

अर्थात् जिस पर और ऊपर ओज से पोषित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होकर सभी प्राणी अपने जीवन का निर्वाह करते हैं अर्थात् जीवित रहते हैं । जिस ओज के बिना सभी प्राणियों का जीवन नहीं रहता है । जो ओज गर्भ के प्रारम्भ में शुक्र-शोणित के सार रूप में वर्तमान रहता है और जो ओज कललावस्था में रस के सार रूप में रहता है, जब गर्भ में हृदय की उत्पत्ति होती है, तब यह ओज अपने स्वरूप में रहते हुए हृदय में प्रवेश करता है । जिस ओज के नाश होने पर शरीर का नाश हो जाता है । हृदय में आश्रित रहकर धारि (आयु) का धारण करता है । शरीर रस का स्नेह है, जिसमें प्राण प्रतिष्ठित रहता है, हृदय उसी ओज को ओजोवह स्रोतों द्रारा सारे शरीर में धमन करता रहता है । इस ओज की क्रियान्विता में, शरीर की रक्षा तथा तेजस्विता में कितना महत्वपूर्ण स्थान है ? आचार्य कहते हैं कि -

देहः सावयवस्तेन व्याप्रो भवति देहिनाम् ।
तद्भावाच्च शीर्यन्ते शरीराणि शरीरिनाम् ॥

यह ओज प्राणों का उत्तम आधार है । मनुष्यों का सर्व अवयवयुक्त शरीर से व्याप्त रहता है । इस ओज का शरीर में अभाव हो जाने से मनुष्य की देह नष्ट (विर्जीण) हो जाती है ।

श्लोक में प्राण व ओज से शरीर में वही शक्ति स्थापित होती है जिसे प्राकृतिक प्रतिरोधक शक्ति जो एड्स में समाप्त हो जाती है, कहते हैं ।

शरीर में इस ओज की दो श्रेणी है । एक 'पर' दूसरी 'अपर' नाम से है । 'पर' ओज शरीर में अष्टविन्द्वात्मक तथा 'अपर ओज' अञ्जलि या अधञ्जिलि मात्र होता है इसी अपर ओज का ही क्षय शरीर का मारक होता है । जो एड्स के सम्बन्ध में बातें लिखी हैं वे ओज क्षय निम्न शास्त्रीय श्लोक में स्पष्टतः कही गई है । यथा

''व्यायामोऽनशनं चिन्ता रूक्षाल्पं प्रमिताशनम् ।
वातातपौभयं शोकोरूक्षपानं प्रजागरः ॥
कफ शोणित शुक्राषाम मलानांचाति वर्तनम् ॥
कालो भूतोपघातश्च ज्ञातव्याः क्षयहेतवः ॥

शास्त्रीय इन पंक्तियों में विशेष महत्व का शब्द ''भूतोपघातश्च'' का स्पष्ट इशारा एच.आई.वी. विषाणु संक्रमण की ओर है । आयुर्वेद में भी ऐसे भूत, प्रेतादि विषाणुओं का सीधा दर्शन सम्भव नहीं है, सुश्रुत में स्पष्ट पंक्ति है कि 'विशन्ति च न दृश्यन्ते ग्रहास्तद्वच्छरिणः'' वायु के माध्यम से ही ऐसे पिशाचादि का आक्रमण होता है । मदिरादि पान का भी इस श्लोक में 'रूक्षपानं' से ओजक्षय की ओर निर्देश है । केवल धातु-वीर्यक्षय ही नहीं अपितु ''कफशोणित शुक्रान्तं मलानां चातिवर्तनम्' से कफ, रक्त, शुक्र तथा मलों का अत्यधिक निकलना भी ओज क्षय हेतु है । अन्य अनेक और भी कारण ओजक्षय में श्लोक में है । विस्तार से इसके उपसंहार में यह ओजक्षय 'एड्स' की भांति मारक भी है । ओजक्षय की तीन स्थिति है 1. विस्त्रंस 2. व्यापत् 3. क्षय में अन्तिम क्षय में स्पष्ट लिखा है कि

''मूर्च्छा मांसक्षयो, मोहः प्रलापो मरणमिति'' क्षयें अन्त में 'मरणामिति' मृत्यु का आलिङ्गन है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जानु सन्धिवात (Osteo Arthritis of Knee Joint) की चिकित्सा में सिंहनाद गुग्गुलु एवं मुरीवन्ना तैल की कार्मुकता का अध्ययन

*डॉ० लाल जी, एम.डी. (आयु.)
**प्रो० श्याम सुन्दर शर्मा, डी.आयु.एम.(बी.एच.यू.)पी.एच.डी.(आयु.)
***डॉ० पूनम, एम.डी. (आयु.)

सन्धिवात (Osteo Arthritis) सामान्य रूप से होने वाली व्याधि है । चिकित्सालयों के बहिरंग विभाग में इस व्याधि से पीड़ित आतुरों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है । वात प्रकोप के कारण रचनात्मक व क्षयात्मक विकृतियों का होना है । जैसा कि आचार्य माधव ने सन्धि में विकृत वात के लक्षणों को स्पष्ट किया है -

हन्ति सन्धिगतः सन्धीञ् शूलटोपौ करोति च ।

(मा.नि. 22/21)

सन्धि में स्थित विकृति वायु सन्धियों को विकृत कर देता है तथा उनमें शूल और शोथ को उत्पन्न करता है जिसके कारण रोगी प्रभावित सन्धि को मोड़ने व उसका उपयोग करने में असमर्थ हो जाता है । सामान्यतः सन्धिवात शरीर की उन्हीं सन्धियों को प्रभावित करता है जो कि सर्वाधिक उपयोग में लायी जाती है । उदाहरण- जानु सन्धि (Knee Joints), Hip Joint का सन्धिवात । यह व्याधि कुछ विशेष कार्य करने वाले व्यक्तियों को भी प्रभावित करती है । उदाहरण के लिए टाइपिस्टों की उंगलियों में सन्धिवात होना ।

सन्धिवात के, विशेष रूप से O.A. of Knee Joints के कष्टकारी प्रभावों को ध्यान में रखते हुए आयुर्वेद में वर्णित शूल हर व शोथ हर औषधियों का प्रयोग O.A. of Knee Joints की चिकित्सा में, इनकी कार्मुकता का तुलनात्मक अध्ययन हेतु किया ।

आतुर चयन (Selection of Patients)-

आतुरों का चयन राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर के शल्यतंत्र विभाग के बहिरंग व अन्तरंग विभाग से किया गया । अध्ययन के लिए उन्हीं आतुरों का चयन किया गया जो केवल Primary Osteoarthritis of Knee Joint से प्रभावित थे ।

आघात या संक्रमण से युक्त/Secondary O.A. of Knee Joints के आतुर अनुसंधान के लिये नहीं लिये गये हैं ।

आतुर वर्गीकरण -

30 आतुरों का चयन कर तुलनात्मक अध्ययन हेतु तीन वर्गो में विभाजित किया ।

Group A - आभ्यन्तर प्रयोगार्थ सिंहनाद गुग्गुलु ।

Group B - स्थानिक / बाह्य प्रयोगार्थ मुरीवन्ना तैल ।

Group C - आभ्यन्तर प्रयोगार्थ सिंहनाद गुग्गुलु व स्थानिक / बाह्य प्रयोगार्थ ।

औषध -

सिंहनाद गुग्गुलु	- (आमवाताधिकार सूत्र 31 व 32)।
मुरीवन्ना तैल	-
चिकित्सा अवधि	- 30 दिन ।
पुनरावर्ती अवधि	- 7-7 दिन पर ।
औषध मात्रा	1. सिंहनाद गुग्गुल 2 से 3 ग्राम प्रति दिन प्रातः सायं । 2. मुरीवन्ना तैल - अभ्यंगार्थ उचित मात्रा में बाह्य प्रयोग ।
अनुपान	- सिंहनाद गुग्गुलु का अनुपान - उष्ण जल ।

Pathological Investigation -

1. Radiological Investigation
2. Laboratory Investigation
   T.L.C., D.L.C., E.S.R., Hb%, R.A. Factor, Blood Sugar
3. Urine Investigation - Complete

परिणाम मूल्यांकन का आधार -

परिणाम व मूल्यांकन के निर्धारण के लिये जानु

* मेडिकल ऑफिसर, महर्षि बाल्मीकी हॉस्पीटल, पुथ कुर्द, नई दिल्ली - 39
** निदेशक, विभागाध्यक्ष, शल्यतंत्र, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, आमेर रोड, जयपुर - 302002

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्धि वात में मिलने वाले लक्षणों व सन्धिवात क्रियाशीलता को मापदण्ड बनाया गया है, यथा -

- Severity of Pain
- Deep Grading of Tenderness
- Walking distance
- Movement of Knee Joint (Degree of Flexion)

परिणाम

उपरोक्त मापदण्डों का विस्तृत वर्गीकरण कर उन पर औषधि प्रभाव का विश्लेषण कर सांख्यिकीय आधार पर परिणाम को प्रस्तुत किया गया है ।

सभी लक्षणों में प्रथम सप्ताह में मिले लाभ का ग्राफ

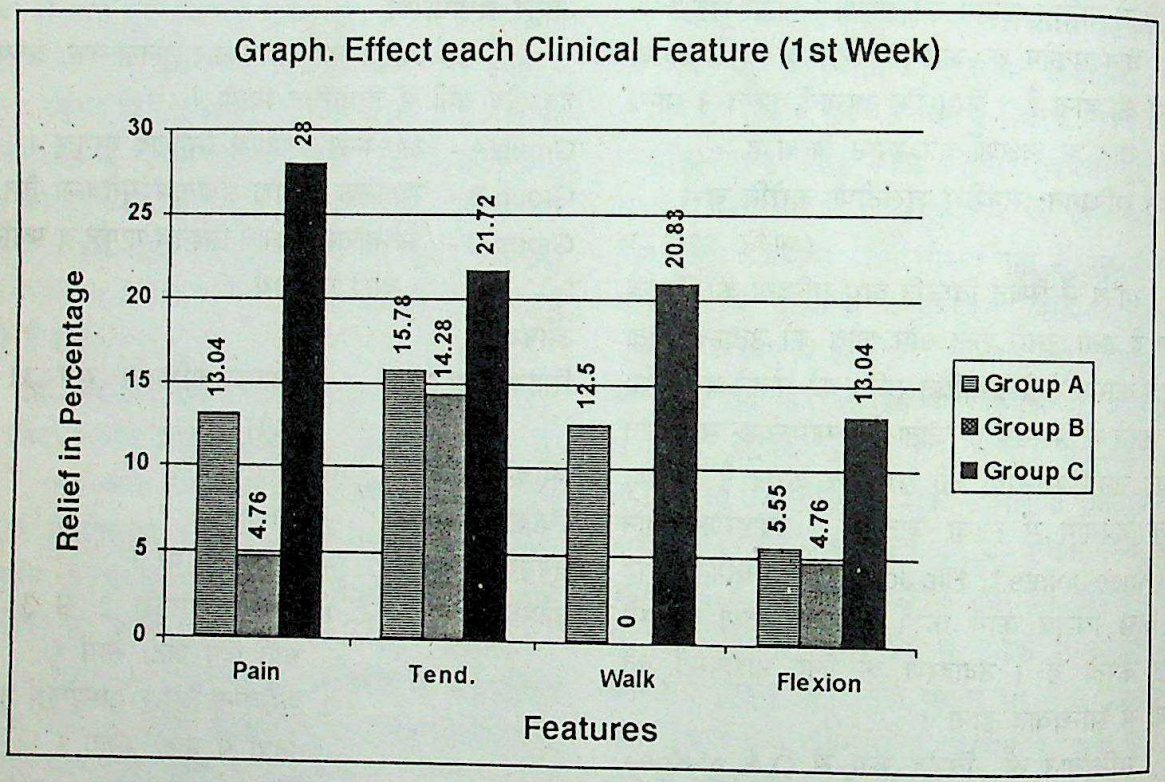

सभी लक्षणों में प्रथम सप्ताह में मिले लाभ की सारणी

S.No.	Group	A			B			C		
		%	T	p	%	t	p	%	t	p
1.	Pain	13.04	1.97	<0.01	4.76	1	<0.50	28	4.60	<0.001
2.	Tend.	15.78	1.97	<0.10	14.28	1.97	<0.10	21.72	15.62	<0.001
3.	Walk	12.5	1.503	<0.20	0	0	NS	20.83	3.012	<0.02
4.	Flexion	5.55	1	<0.50	4.76	3.22	<0.02	13.04	1.97	<0.10

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभी लक्षणों में द्वितीय सप्ताह में मिले लाभ का ग्राफ

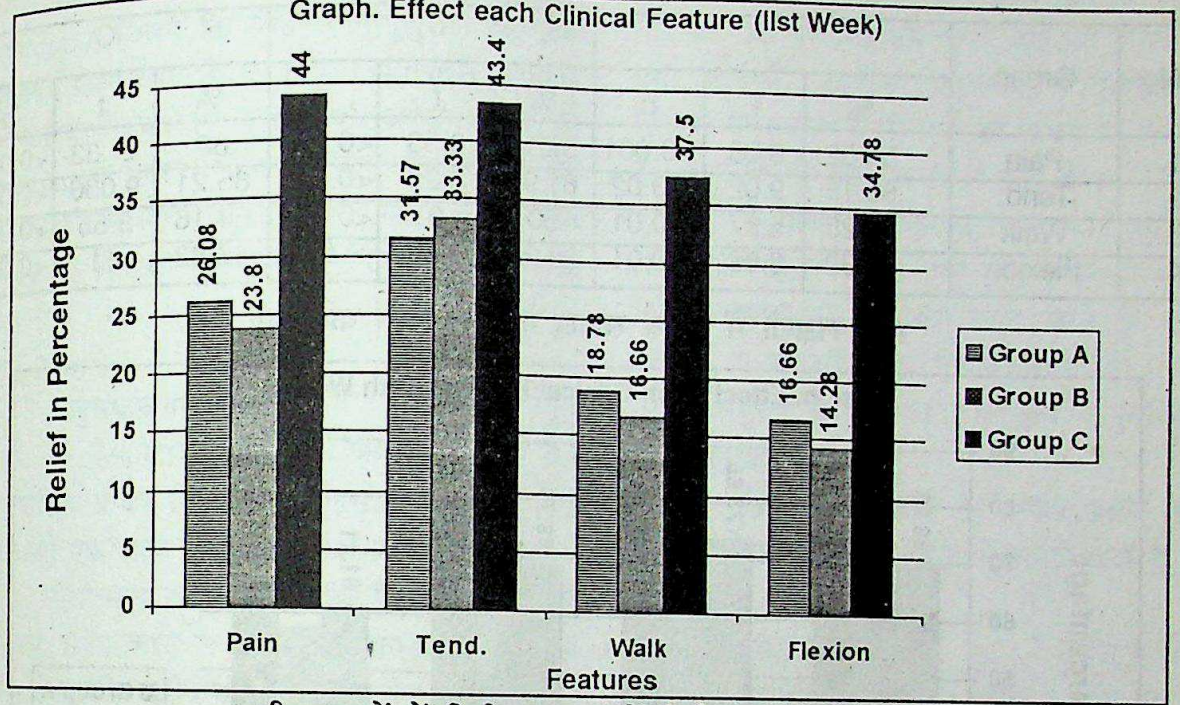

सभी लक्षणों में द्वितीय सप्ताह में मिले लाभ की सारणी

S.No.	Group	A			B			C		
		%	T	p	%	t	p	%	t	p
1.	Pain	26.08	3.68	<0.01	23.80	3.012	<0.02	44	11	<0.001
2.	Tend.	31.57	3.68	<0.01	33.33	3.29	<0.02	43.47	0	NS
3.	Walk	18.78	1.40	<0.20	16.66	1.97	<0.10	37.5	9	<0.001
4.	Flexion	16.66	1.97	<0.10	14.28	1.79	<0.10	34.78	6.015	<0.001

सभी लक्षणों में तृतीय सप्ताह में मिले लाभ का ग्राफ

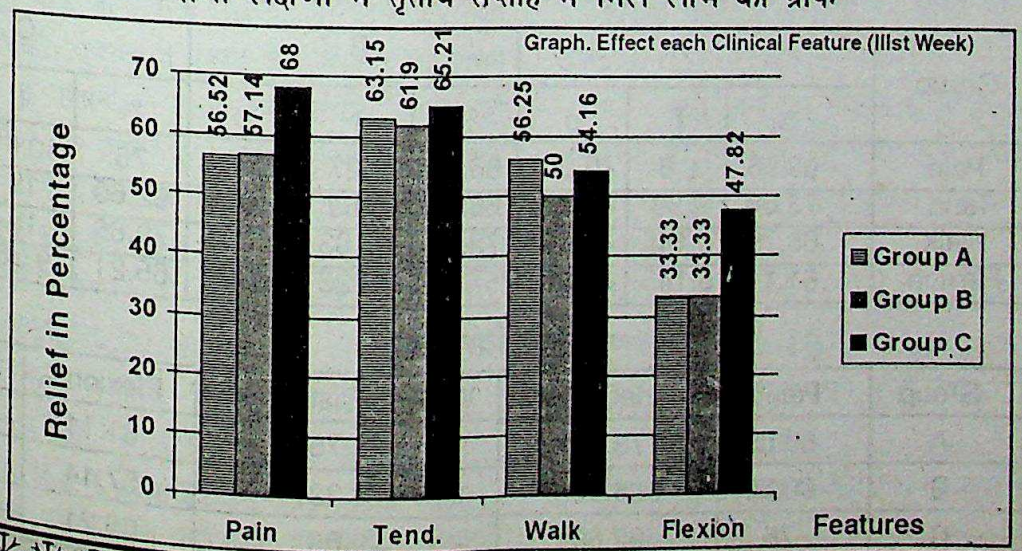

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभी लक्षणों में तृतीय सप्ताह में मिले लाभ की सारणी

S.No.	Group	A			B			C		
		%	T	p	%	t	p	%	t	p
1.	Pain	56.52	8.55	<0.001	57.14	8.53	<0.001	68	11.33	<0.001
2.	Tend.	63.15	9.02	<0.02	61.90	3.29	<0.001	65.21	9.036	<0.001
3.	Walk	56.25	5.07	<0.01	50	9	<0.001	54.16	8.55	<0.001
4.	Flexion	33.33	3.68	<0.01	33.33	4.60	<.001	47.82	11	<0.001

सभी लक्षणों में चतुर्थ सप्ताह में मिले लाभ का ग्राफ

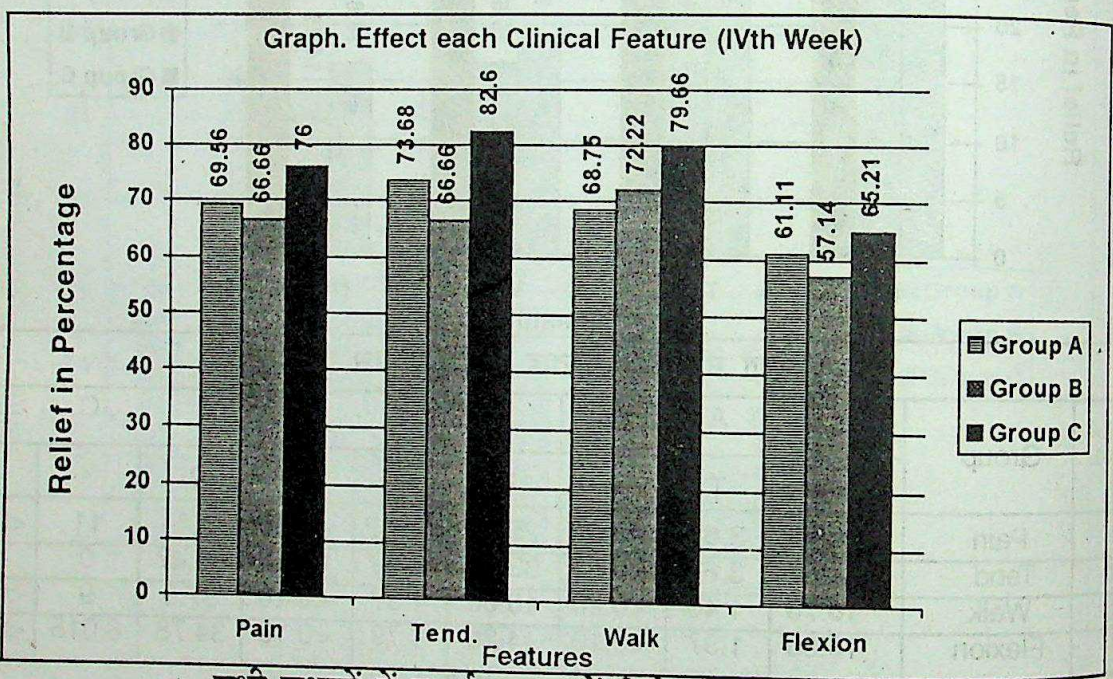

सभी लक्षणों में चतुर्थ सप्ताह में मिले लाभ की सारणी

S.No.	Group	A			B			C		
		%	T	p	%	t	p	%	t	p
1.	Pain	69.56	9.8	<0.001	66.66	7.27	<.001	76	10.61	<0.001
2.	Tend.	73.68	8.58	<0.001	66.66	8.58	<.001	82.60	19	<0.001
3.	Walk	68.75	6.145	<0.001	72.22	6.103	<.001	79.66	19	<0.001
4.	Flexion	61.11	6.145	<0.001	57.14	9.023	<.001	65.21	9.36	<0.001

परिणाम विश्लेषण

S.No.	Group	Pain%	Tenderness%	Walking Distance%	Flexion%	Average%
1.	A	69.55	73.68	68.75	61.11	68.27
2.	B	66.66	66.66	72.22	57.14	66.66
3.	C	76	82.60	79.66	65.21	75.86

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपरोक्त तालिका को देखने को स्पष्ट होता है कि Group A जिसमें कि सिंहनाद गुग्गुलु को आभ्यन्तर चिकित्सार्थ प्रयोग किया है; के परिणाम Group B (मुरीवन्ना तैल स्थानिक चिकित्सार्थ प्रयोग) की अपेक्षा अधिक रहे तथा Group C जिसमें सिंहनाद गुग्गुलु और मुरीवन्ना तैल दोनों को चिकित्सार्थ प्रयुक्त किया गया; के परिणाम सर्वाधिक रहे जिसको निम्न प्रकार से विश्लेषित किया जा सकता है ।

शूल (Pain)-

अनुसंधान हेतु चयनित रोगियो में सिंहनाद गुग्गुलु के द्वारा 69.56% लाभ मिला है । जबकि मुरीवन्ना तैल का स्थानिक प्रयोग से 66.66% लाभ रहा, जबकि दोनों औषध को एक साथ प्रयोग करने पर 76% लाभ मिला ।

ऐसा माना जा सकता है कि सिंहनाद गुग्गुलु का आभ्यन्तर प्रयोग करने से सार्वदैहिक वात प्रकोप में लाभ मिलता है जबकि मुरीवन्ना तैल का प्रयोग स्थानिक होने के कारण यह केवल स्थानिक वात का शमन करता है । क्योंकि सिंहनाद गुग्गलु व्याधि प्रत्यनीक चिकित्सा है जबकि मुरीवन्ना लाक्षणिक चिकित्सा है । जानु सन्धिवात में वात का स्थानिक प्रकोप के साथ-साथ सार्वदैहिक वात प्रकोप भी होता है । अतः इसकी चिकित्सा भी दोनों (आभ्यन्तर स्थानीय) प्रकार की करने से परिणाम अच्छा मिला है ।

ऐसा माना जा सकता सिंहनाद गुग्गुलु में उपस्थित घटक में हरीतकी, गुग्गुलु व एरण्ड तैल से शूल का शमन हुआ । तैल के सेवन से स्रोतों का अवरोध समाप्त हो जाता है क्योंकि तैल अपने उष्ण और सूक्ष्म गुणों के द्वारा शीघ्र ही स्रोतों में प्रविष्ट होंकर स्रोतों को विकसित कर देता है जिससे धातुओं का निर्माण सामान्य रूप से होने लगता है, ऐसा संहिताओं में भी वर्णित है ।

हरीतकी - (अ.हृ.चि. 21/49)

गुग्गुलु - (अ.हृ.उ. 40/48, वृ.मा. 39/8,11)

एरण्ड तैल - (सु.सं.चि. 4/30) (अ.हृ.चि. 22/62) (भ.प्र.चि. 26/55) (V.m. 22/50-63) (V.d. 12/8)

इसके साथ-साथ हरीतकी, विभीतकी, गुग्गुलु, गन्धक व एरण्ड तैल का वीर्य उष्ण होने के कारण भी वात के शीत गुण का क्षय होकर वात का शमन होता है तथा हरीतकी, आमलकी, विभीतक व एरण्ड तैल का विपाक मधुर होने से भी वात की रूक्षता में कमी आती है । इसलिए भी वात का शमन होता है ।

मुरीवन्ना तैल में करञ्ज, ताम्बूलपत्र, शिग्रु, पलाण्डु, मदनघन्ती यह सभी द्रव्य उष्ण वीर्य प्रधान हैं । अतः ये अपनी उष्णता से वात का शमन करते हैं । जबकि पलाण्डु व शतावरी मधुर विपाक प्रधान है । अतः ये अपनी मधुरता से वात का शमन कर जानुसन्धिवात में लाभ पहुचाते हैं ।

तैल को आचार्यों ने उष्णता प्रधान माना है इसीलिए यह वात शमन करने में समर्थ होता है ।

उष्ण गुण -

वातधुते नास्ति रुजा (सु.सू. 17/12)

सर्वेष्वेतेषु शूलेषु प्रायेण पवनः प्रभुः (मा.नि. 26/1)

अतः स्पष्ट है कि वात के बिना वेदना नहीं होती अथवा सभी प्रकार के शूलों में वात प्रधान कारण है । तैल के उष्ण गुण के कारण वेदना एवं शूल का शमन निश्चित संभव है ।

स्पर्श असह्यता (Tenderness)

सिंहनाद गुग्गुलु के प्रयोग से 73.66% लाभ मिला, जबकि मुरीवन्ना के द्वारा 66.66% लाभ रहा तथा दोनों योगों का एक साथ प्रयोग करने पर 82.60% लाभ हुआ है ।

ऐसा माना जा सकता है कि सिंहनाद गुग्गुलु में उपस्थित हरीतकी, गुग्गुलु तथा एरण्ड तैल के द्वारा ऐसा लाभ हुआ । इनके शोथहर प्रभाव का वर्णन संहिताओं में भी वर्णित है ।

हरीतकी- (च.चि.12/21,27,50.52)(भे.सं.चि.17/20-21) (का.सं.पू.341) (सु.चि. 23/12)(अ.हृ.चि.17/3,5)

गुग्गुलु - (सु.चि. 23/12) (अ.सं.चि. 19/3) (चि.क. 3/11-12)

एरण्ड तैलः-कटूष्णं तैलरण्डं वातश्लेष्महरं गुरु । (च.सू. 13/12)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुरीवन्ना तैल में उपस्थित शिग्रु, ताम्बूल, पलाण्डु मदनघन्ती आदि द्रव्य उष्ण होने के कारण तैल की उष्णता अत्यधिक है जिस कारण इसका स्थानीय प्रयोग करने से यह अपनी उष्णता से वातिक शोथ का शमन कर स्पर्श असह्यता (Tenderness) को कम करता है ।

श्रेष्ठ स्नेह -

संस्कारस्य अनु पश्चात् वर्तनमिति संस्कारानुवर्तनम् ।

अर्थात् अपने गुणों को अपने में रखते हुए बाद में अन्य गुणों को अपने में धारण करना ।

तैल के गुण - मारुतघ्नं न च श्लेष्मवर्धनं बलवर्धनम् ।

अर्थात् तैल वात विकारों को शान्त करता है, कफ को नहीं बढ़ाता है । बल को बढ़ाने वाला है ।

Walking Distance-

इसमें केवल सिंहनाद गुग्गुलु के प्रयोग से 68.75% लाभ जबकि मुरीवन्ना के प्रयोग से 72.22% लाभ मिला तथा दोनों को एक साथ प्रयोग करने से 79% लाभ मिला ।

ऐसा तभी सम्भव है जब शूल (Pain) व स्पर्शसह्यता (Tenderness) में लाभ हो, इन दोनों लक्षणों में जितना लाभ मिलेगा रोगी उतनी ही दूरी अधिक चलने में समर्थ होगा ।

इसके साथ ही वे औषधियाँ भी लाभकर हुईं जो रोगी की कण्डराओं के क्षय को रोककर उनमें पुनः सामर्थ्य प्रदान करे, ऐसा बलवर्धक व रसायन औषधियां करती हैं। उदाहरण के तौर पर सिंहनाद गुग्गुलु में उपस्थित **आमलकी रसायन** है ।

(च.चि.1.2.6,1.1.58-74,1.2.4,1.3.9-13)(सु.चि.28/20,
(अ.हृ.उ.45/56,39/149,150)

मुरीवन्ना में भी शतावरी व मदनघन्ती रसायन है ।

जैसा कि शास्त्रों में वर्णित है -

शतावरी - (अ.हृ.उ. 39/157)

मदनघन्ती-(*Indian Medical Plant Kritikar & Basu Voll.II.*

नम्यता (Flexion)-

इसमें सिंहनाद गुग्गुलु द्वारा 61.11% लाभ रहा जबकि मुरीवन्ना तैल द्वारा 57.14% लाभ तथा दोनों के द्वारा 65.21% लाभ मिला ।

मेरे विचार से अनम्यता का कारण सन्धि के बीच के स्थान (Joint space) का कम होना तथा सन्धि में उपस्थित कण्डराओं व स्नायु (Tendons-Ligament) में काठिन्यता व क्षय होना है । इसके साथ ही शोथ व शूल भी इसका कारण है । अतः हम कह सकते हैं कि सिंहनाद गुग्गुलु में उपस्थित घटक (हरीतकी, गुग्गुलु एरण्ड तैल, विभीतक व मुरीवन्ना तैल में उपस्थित घटक पलाण्डु, करञ्ज, शिग्रु, ताम्बूल पत्र के) द्वारा सन्धि के कण्डराओं व स्नायुओं के शूल व स्पर्शासहता के कम करने तथा इसमें उपस्थित रसायन औषधियों (आमलकी शतावरी, मदनघन्ती) के द्वारा उसका बल वृद्धि कर तथा स्नेह (एरण्ड तैल तथा नारियल तैल) से सन्धि में स्निग्धता आने से सन्धि नम्यता (Flexion) बढ़ा/ऐसा आचार्य का भी मत है ।

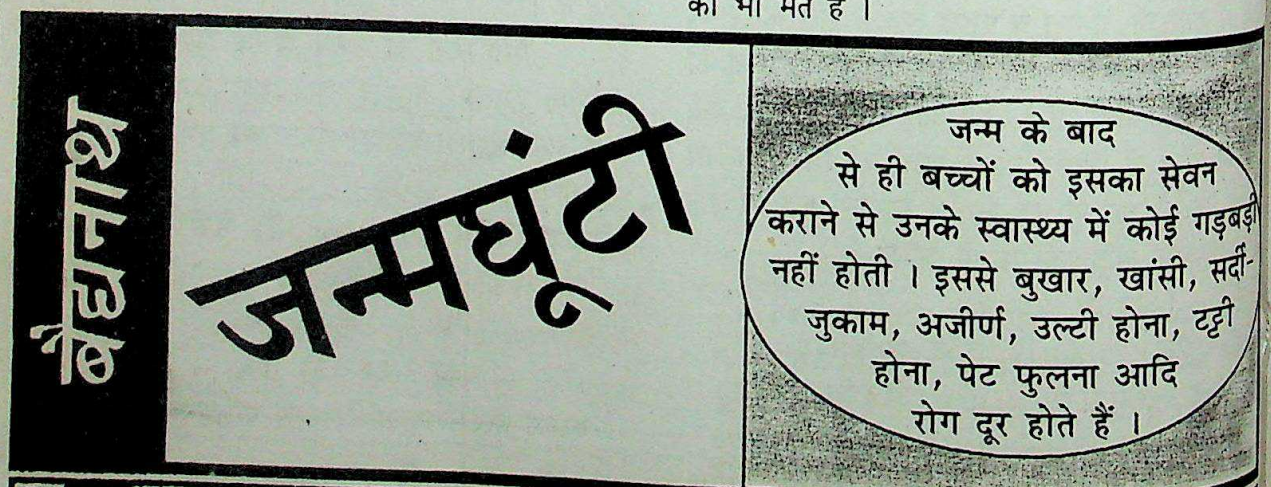

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अच्छे स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है - व्यायाम

* प्रो० लोकनाथ शर्मा, एम.डी., पी.एच.डी.
✡ डॉ० अश्विनी कुमार शर्मा, एम.डी. (आयु.)
* विश्राम प्रसाद अग्रहरि, एम.डी. स्कालर

आयुर्वेद केवल एक चिकित्सा विज्ञान न होकर अपितु जीवन का विज्ञान अर्थात् साइंस आफ लाइफ है। यह यहाँ तक कि जीवन शुरू होने से पहले (आत्मा, परमात्मा, पंचमहाभूत, इत्यादि) एवं जीवन अन्त के बाद (मोक्ष, पुर्नजन्म, आदि) का ज्ञान कराती है।

इस शास्त्र के दो उद्देश्य हैं-प्रथम स्वास्थ्य रक्षण एवं दूसरा रोग निवारण, ठीक इसी प्रकार व्यायाम का प्रयोग इन्हीं दो उद्देश्य के रूप लाया जाता है। स्वस्थावस्था में संभावित रोगों से बचने हेतु नित्य व्यायाम आवश्यक बन जाता है एवं बहुत से रोगों के उत्पन्न होने पर उपचारात्मक रूप में भी व्यायाम आवश्यक होता है।

उपरोक्त कारण से हमारे आचार्य चरक, सुश्रुत, वाग्भट आदि ने व्यायाम को दिनचर्या का आवश्यक अंग बना दिया है। तत्पश्चात् अन्य चिकित्सा पद्धति में व्यायाम को अत्यधिक महत्व दिया गया-विशेषकर दिल की बीमारी, चयापचय की बिमारी एवं मनोदैहिक रोगों की कुलवृत्ति होने पर या रोगोत्पत्ति होने के बाद।

आज का युग वैज्ञानिक युग है। इस युग में जो मनुष्य पैदल चलकर महीनों में दूरी तय करता था, अब वह कुछ ही क्षणों में तय कर लेता है एवं जो काम कई लोग मिलकर दिनभर में करते थे अब वह मशीनरी पद्धति द्वारा कुछ ही क्षण में संभव हो गया। इतना होने के बाद भी मनुष्यों में भाग दौड़ मची रहती है। प्राय: शिकायत रहती है कि उनके पास समय नहीं रहता है। परन्तु हम गौर से विचार करें और प्रतिदिन लगभग आधा घंटा व्यायाम करने में लगा दें तो हमारे स्वास्थ्य में और सुधार हो जायेगा एवं साथ ही कई लाइलाज रोगों से बचाव भी होता रहेगा। कुछ लोग व्यायाम के प्रति सचेत रहते हैं। एक पुरानी धारणा है कि 'मार्निंग वाक' जैसा व्यायाम तो बुजुर्गो के लिए है परन्तु अब यह सिद्ध हो चुका है कि कई रोगों से बचाव के लिए युवावस्था से ही व्यायाम करना आवश्यक हो जाता है।

व्यायाम कितना करना चाहिए :

यह एक सामान्य प्रश्न है कि व्यायाम कितना करना चाहिए। इसकी चर्चा हमारे प्राचीन ग्रन्थ सुश्रुत संहिता में स्पष्ट रूप से बताया गया कि स्वस्थ व्यक्ति को बलार्ध (अपने बल का आधा) व्यायाम करना चाहिए।

सर्वेष्वृतुष्वहरहः पुम्भिरात्महितैषिभिः।
बलस्यार्द्धेन कर्त्तव्यो व्यायामो हन्त्योऽन्यथा॥

(सु.चि. 24)

बलार्ध व्यायाम के निम्न लक्षण बताये गये हैं -

(अ) हृदय की वायु जब मुखद्वार से प्राप्त होने लगे (अर्थात् मनुष्य जब हाफने लगे)।

(ब) कक्षा, मस्तक (ललाट), नासा, हस्तपात की संधियों में स्वेद (पसीना) आने लगे।

(क) मुख में जब शुष्कता प्रतीत होने लगे।

लगभग ऐसा ही वर्णन आचार्य चरक ने उचित मात्रा में किये गये व्यायाम के लक्षण को बताया है; यथा स्वेद का निकलना, श्वास वृद्धि, शरीर में लघुता, हृदयादि प्रदेश में बाधा (हृदय गति तीव्र होना)।

कुल मिलाकर व्यायाम इतनी करनी चाहिए जिससे थोड़ा पसीना शरीर से निकलने लगे, हांफना शुरू हो जाय एवं शरीर में लघुता उत्पन्न हो जाए। ये सभी लक्षण 25-30 मिनट व्यायाम करने से उत्पन्न हो जाता है।

पाश्चात्य वैज्ञानिकों ने व्यायाम का दो प्रकार बताया है, प्रथम जिसमें उपरोक्त लक्षण उत्पन्न हो जाय- इसकी संज्ञा 'ऐराबिक' व्यायाम दी है, दूसरा जिसमें श्वास की गति सामान्य ही रहे इसे 'एनएरोबिक' कहा है। योगासन को हम 'एनएरोबिक' में ले सकते हैं।

* विभागाध्यक्ष, पी.जी.स्नातकोत्तर, रोग विकृति विज्ञान विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर-302002
✡ डॉ. अश्विनी कुमार शर्मा, एम.डी. (आयु.)
* पी.जी. अध्येता, रोग विकृति विज्ञान विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर - 302002

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृश तथा दुर्बल व्यक्तियों में, जहाँ पूर्ण व्यायाम निषिद्ध है, चङ्क्रमण (Walking or morning walking) उपयोगी है । इसमें तेजी से चलना चाहिए । यह शरीर को अधिक पीड़ा न देने वाला, आयुबल, मेधा तथा अग्नि को बढ़ाने वाला होता है तथा इन्द्रियों की चैतन्य करने वाला होता है ।

यत्तु चङ्क्रमणं नातिदेहपीड़ाकर भवेत् ।
तदायुर्वलमेधाग्निप्रदाभिन्द्रियबोधनम् ॥

(सु.चि. 24)

व्यायाम के लिए सबसे अच्छा समय सुबह नित्यक्रिया करने के बाद रहता है परन्तु शाम के समय शौच के पश्चात् कर सकते है । इसमें ध्यान यह रहे कि व्यायाम के बाद आधा घंटा कुछ न खाये, पीये एवं खाने के 7-8 घंटे बाद ही व्यायाम कर सकते हैं ।

उचित व्यायाम से लाभ :

उचित मात्रा में किये गये व्यायाम से शरीर में लघुता, कार्य करने की शक्ति, स्थैर्य, दुःखसहिष्णुता, वृद्ध दोषों का भय और अग्निवृद्धि (पाचक शक्तितीव्र) होती है ।

लाघवं कर्मसामर्थ्यं स्थैर्यं दुःखसहिष्णुता ।
दोषक्षयोऽग्निवृद्धिश्च व्यायामदुपजायते ॥

(च.सू. 7/32)

इस सन्दर्भ में वृद्ध वाग्भट ने 'दोषक्षय' के समकक्ष मेदक्षय अर्थात् मेदोदुष्टि से युक्त कहा है ।

आचार्य सुश्रुत ने व्यायाम से होने वाले लाभ को थोड़ा विस्तार से बताया है यथा शरीर की सम्यक् पुष्टि, कान्ति, अंगों का सुन्दर संगठन, पाचकाग्नि की वृद्धि, आलस्य का न होना, स्थैर्य, लघुता, शरीर शुद्धि, श्रम, क्लम, पिपासा, उष्णता और शीत आदि सहन करने की शक्ति तथा उत्तम आरोग्य की प्राप्ति होती है ।

शरीरोपचयः.....व्यायामदुपजायते ॥

(सु.चि. 24/39-40)

व्यायाम आयु, रूप और गुण से हीन व्यक्तियों को भी सुन्दर बना देता है । व्यायाम करने वाले व्यक्तियों को विरूद्धाहार भी पाक करने की शक्ति आ जाता है ।

व्यायाम एवं व्याधि :

किस-किस रोग में व्यायाम लाभकारी है और ध्यान आकर्षित करना लाभदायक हैं -

1. स्थौल्य एवं व्यायाम :- आज के युग में जाय तो अधिकांश मृत्यु अधिक खाने (संतर्पणजन्य) दुष्परिणाम से अधिक होती है । जैसा कि हम लोग है स्थूलता की चिकित्सा, कृशता की अपेक्षा दुरूह अतः हमें अपने वजन को अपने आकार के अनुरूप रखना चाहिए । इसका सबसे सरल उपाय है कि व्यायाम । वास्तव में स्थौल्य का सबसे बड़ा कारण कि हम जितना पोषक तत्व (कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, रोज आहार में लेते हैं उनकी उतना नित्य खपत न हो फलस्वरूप सभी तत्व अन्ततोगत्वा वसा (चर्बी) में परि होकर शरीर की वजन बढ़ाने लगते हैं । अब इस की स्थूलता को हम दो प्रकार से कम कर सकते हैं कि उतना ही आहार लिए जाय जितनी उर्जा हमें आव है । यह कार्य उन लोगों के लिए कठिन है जो अपना काम बैठकर करने वाले होते हैं । दूसरा सबसे सरल उपाय है । उदाहरण स्वरूप यदि एक तेजी से पैदल चलकर 3 मील दूरी तय करता है लगभग 30 ग्राम वसा की खपत करता है यदि ऐसा आदत डाल ले तो 10 किलोग्राम प्रतिवर्ष वजन बढ़ राहत पायेगा । इसी प्रकार तैरना, साइकिल चलाना अच्छे व्यायाम हैं जो कि अनावश्यक शरीर भारवृद्धि रोकता है । जैसा कि हम जानते हैं कि स्थौल्य अकेल नहीं वरन् कई उच्चरक्तचाप, डायबिटिज जैसे भय रोगों की जड़ है ।

आचार्य सुश्रुत ने स्थौल्यनाशक में व्यायाम कोई दूसरा वस्तु माना ही नहीं है ।

न नास्ति सदृशं केन किञ्चित स्थौल्यापकर्षणम् ।

(सु.चि.

2. हृदरोग एवं व्यायाम :- उच्चरक्तचाप, हृदय प्रतिचय (IHD or CHD) आदि रोगों से बचाव के चिकित्सात्मक रूप में व्यायाम अति उपयोगी होता व्यायाम करने से धमनी काठिन्य दूर होता साथ ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हृदय में अतिरिक्त रक्तसंचार (Collateral circulation) बढ़ता है। व्यायाम से हानिकारक वसा (LDL) लाभदायक वसा (HDL) में परिवर्तित होता है जो कि Arteriosclerosis के बचाव में महत्वपूर्ण कार्य करता है ।

3. व्यायाम एवं मधुमेह (डायबिटिज) : सामान्य अवस्था में ग्लूकोज, ग्लाईकोजन के रूप में मांसपेशी तथा यकृत में संचय होता है । परन्तु मधुमेह रोगी में ग्लूकोज का संचय नहीं हो पाता है । व्यायाम से मांसपेशी उत्तेजित होती है और उनका ग्लाइकोजन संचय के प्रति संवेदनशीलता बढ़ जाती है और मधुमेह नियंत्रण में सहायता मिलती है। प्रमेह रोगी में व्यायाम के महत्त्व को बताते हुए आचार्य सुश्रुत ने कहा है कि ऐसे रोगी को श्रम, कुश्ती, खेल, हाथी, घोड़े की सवारी, रथचर्या, पदातिचर्या, भ्रमण, अस्त्र-शस्त्र का अभ्यास करना चाहिए । इसके अतिरिक्त साधनरहित व्यक्ति भिक्षावृत्ति धारण कर सौ योजन या इससे अधिक मात्रा तय करें । (सु.चि. 11)

इससे स्पष्ट होता है कि व्यायाम मधुमेह को नष्ट करने में महत्वपूर्ण स्थान रखता है ।

4. व्यायाम एवं संधिगत व्याधि : संधिगत रोगों में व्यायाम अद्वितीय स्थान रखता है । इन रोगों में प्रभावित अंगों का व्यायाम कराया जाता है जिससे उन-उन संधियों की कार्य क्षमता बनी रहे । अस्थिसंधान (प्लास्टर) के बाद प्रायः प्रभावित संधि की कार्य क्षमता में कमी तथा मांसपेशी कमजोर हो जाते हैं उन्हें पूर्वास्था में लाने के लिये व्यायाम कराया जाता है ।

Cervical spondilosis, Ankylosing spondilitis, Rheumatoid arthritis, etc. में कार्य क्षमता समुचित बनाये रखने के लिए व्यायाम आवश्यक है । इन रोगों की तीव्रावस्था में आराम अथवा Passive exercise (किसी अन्य व्यक्ति की मदद से) किया जाता है जीर्णावस्था Active exercise (स्वयं द्वारा) किया जाता है । इन सब रोगों में विशेष रूप से स्थानिक व्यायाम किये जाते हैं ।

5. व्यायाम एवं मांसक्षयजन्य व्याधि : अर्धांगवात, पक्षाघात, बालपक्षाघात आदि रोगों में जिसमें मांसपेशियों का क्षय एवं कार्यक्षमता में कमी आ जाती है उनकी चिकित्सा प्रभावित अंगों के व्यायाम द्वारा किया जाता है ।

6. व्यायाम एवं मनोदैहिक रोग : मनोदैहिक रोग जैसे Irritable bowel syndrome, Ulcerative colitis, Peptic Ulcer, Anxiety, Depression आदि में व्यायाम उपयोगी है, परन्तु इनमें योगासन अधिक उपयोगी है । व्यायाम इन रोगों में करने से देह की स्थिति सुधारते हुए मन की स्थिति भी सुधरती है जिससे रोगियों में नयी संचार की शुरूआत होती है । फलतः रोगी सुखद अनुभूति करता है । इस प्रकार हम देखते हैं कि व्यायाम स्वास्थ्य रक्षण एवं व्याधि चिकित्सा में महत्वपूर्ण स्थान रखता है ।

अतिव्यायामजन्य हानि :

एक पुरानी कहावत है 'अति सर्वत्र वर्जयेत्' यह व्यायाम में भी लागू होता है । हम दैनिक जीवन में देखते है कि जो पहलवान अधिक कसरत करते रहे, उन्हें उम्र ढलने के बाद संधिवात जैसी जीर्ण व्याधियों का शिकार होना पड़ता है । व्यायाम थोड़ा ही परन्तु लगातार होना चाहिए, दूसरी बात व्यायाम जो चिकित्सा के लिए हो उसे विशेषज्ञ के सलाह लेने के बाद ही करना चाहिए ।

बैद्यनाथ
बाम
सर्दी, जुकाम,
सिरदर्द, पसली दर्द,
गर्दन की मोच में
तुरंत आराम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रस (रस शास्त्र)

डा० खेम चन्द शर्मा, एम.डी.(

यद्यपि रस शास्त्र में रस का अर्थ पारद है परन्तु आयुर्वेदीय और संस्कृत वाङ्मय में रस के अनेक पर्याय माने गए हैं । जैसे -

1. पारद, स्वरस, जल, द्रव, निर्यास, स्वाद, हर्ष, अनुराग, ध्वनि, बालक, सुवर्ण, विष, शुक्र, वीर्य, मधुरादि षड्रस, श्रृंगारादि नव रस ।
2. शरीर की सात धातुओं में आद्य आहार परिणाम धातु रस,
3. द्रव्य विज्ञान में रास्ना, पाठा, शल्लकी आदि द्रव्यों को भी पर्याय रूप में रस माना गया है ।

साहित्य में रस को ब्रह्म भी माना गया है । श्रुतियों में कहा है - **रसो वै सः**

इति श्रुते रसो ह्येवायं लब्धवा
पुमान आनन्दो भवति,
स सिद्धो भवति,
तृप्तो भवति,
अमृतो भवति ।

(शाण्डिल्य)

कहने का तात्पर्य है कि श्रुतियों के वचन के अनुसार रस को प्राप्त कर पुरूषार्थ करने वाला पुरूष आनन्द को प्राप्त होता है । सिद्ध एवं तृप्त होता है और परम आनन्दमय अमृतत्व को प्राप्त होता है । इसी से सहज अनुमान हो जाता है कि रस के अर्थ समूह में रस की व्यापकता कितनी विशाल है ।

रस

रस शास्त्र के सम्बन्ध में जब भी रस शब्द की विवेचना होती है तब रस का अर्थ प्रायः पारद (मर्करी) ही लिया गया है । रस शास्त्रीय विभिन्न ग्रन्थों का आलोडन करने पर ज्ञात होता है कि रस की निरूक्ति (पर्याय रूप में) निम्न प्रकार से आचार्यों ने वर्णित की है-

1. रसनात् सर्वधातुनां रस इत्यभिधीयते ।

(र०र०स०)

सभी धातुओं का रसन (खा लेने अथवा द्रव कर लेने) करने के कारण इसे रस कहा जाता है ।

2. रसति भक्षयति सर्वान् लोहान् इति रसः ।

3. रसनात् अभ्रकादीनां धातुनां कीर्तितो रसः ।

(रस तरं

सभी धातुओं (स्वर्ण, रजत, ताम्र, नाग, व यशद तथा अभ्रकं आदि) को भक्षण करने के इसकी कीर्ति रस रूप में है ।

4. रसोपरराजत्वात् रस इत्यभिर्धायते ।

(रसा

5. रसत्वाद् द्रवरूपत्वात् रसः ।

(रसार्ण

यह द्रव रूप में होता है, इस कारण इसे कहते हैं ।

गलद्रूप्यनिभम् (पिछली हुई चांदी के स रस कामधेनुकार भी कहते है: ।

हीरकद्युतिसङ्काशं प्रमाणाद् हीरकात् क्वचित्
क्वचित् पर्पटीकाभासं गलद्रूप्यनिभं क्वचित् ।

6. ममदेहरसो भस्माद् रसस्तेनायमुच्यते ।

(रस

मेरी देह का रस होने के कारण इसकी संज्ञा है अर्थात् शिववीर्य होने से इसे रस कहा जाता है

7. जरारूङ्मृत्युनाशाय रस्यते व रसो मत

(र०र०स

वृद्धावस्था, रोग एवं मृत्यु का नाश कर कारण रस कहलाता है ।

8. देहलोहमयीं सिद्धिं सूते सूतस्ततः स्मृतः

(र०र०स

9. पारद

पारद - पार + दा
पार - पार करना
दा - कराने वाला
जरामरणसङ्कटादिभ्यः पारं ददाति पारदः ।

लेक्चचर, विभाग रसशास्त्र एवं भैषज कल्पना, गौड़ ब्राह्मण आयुर्वेदिक कॉलेज, रोहतक-124001 (हरियाणा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थात् अपने गुणों के आधार पर बुढ़ापा और मृत्यु आदि संकटों से पार कराने के कारण इसे पारद कहते हैं। पर और अपर संसार को सुखमय बनाने के कारण ही इसे पारद कहा गया है।

रस रत्न समुच्चयकार का भी मानना है कि -

रोगपङ्काब्धिमग्नानां पारदानाच्च पारदः।
संसारस्य परं पारं दत्तेऽसौपारदः स्मृतः॥

रोग रूपी कीचड़ में डूबे हुए प्राणियों का उद्धार कर उन्हें पार करा देता है, अतः इसे पारद कहते हैं। आध्यात्मिक रूप से संसार के बन्धनों से जो पार कराए उसे पारद कहते हैं।

१०. सर्वधानुगतं तेजोमिश्रितं यत्र तिष्ठति।
तस्मात् स मिश्रकः प्रोक्तो नानारूपफलप्रदः॥
(र०र०समुच्चय)

सम्पूर्ण धातुओं का तेज एकत्रित रूप में इसमें पाया जाता है। इसलिए इसको मिश्रक कहते हैं। यह विभिन्न फलों को प्रदान करने वाला है।

रस (पारद) की लयकारी क्षमता को दर्शाते हुए रस हृदय तन्त्रकार कहते हैं कि -

काष्ठौषध्यो नागे, नागं बंगेऽथ, वंगमपिशुल्वे।
शुल्वं तारे, तारं कनके, कनकं च लीयते सूते॥

जैसे सृष्टि के समस्त प्राणियों में निवास करने वाली आत्मा परमात्मा में लीन हो जाती है, ऐसे ही स्थावर सृष्टि के समस्त औद्भिद् एवं पार्थिव द्रव्य पारद में लीन हो जाते हैं। उसका क्रम इस प्रकार है - काष्ठौषधियां नाग में, नाग वंग में, वंग शुल्व (ताम्र) में, शुल्व तार (रजत) में, तार स्वर्ण में तथा स्वर्ण पारद में लीन हो जाता है।

आभार ग्रन्थ :-

1. चरक संहिता
2. सुश्रुत संहिता
3. वाग्भट्ट
4. रस हृदय तंत्र
5. रसेन्द्र चूड़ामणि
6. रस प्रकाश सुधाकर
7. रस रत्न समुच्चय
8. रस रत्नाकर
9. शार्ङ्गधर संहिता
10. रसेन्द्र चिंतामणि
11. भाव प्रकाश
12. रस कामधेनु
13. आयुर्वेद प्रकाश
14. रस तरंगिणी
15. आयुर्वेदीय रस शास्त्र (चन्द्रभूषण झा)
16. आयुर्वेदीय रस शास्त्र (सिद्धिनन्दन मिश्र)
17. प्रारम्भिक रस शास्त्र (सिद्धिनन्दन मिश्र)
18. भारतीय रस शास्त्र (विश्वनाथ द्विवेदी)

बैद्यनाथ

दशमूलारिष्ट

तेज बल एवं कान्ति बढ़ाने में प्रसिद्ध। संग्रहणी, मंदाग्नि, अरुचि, उदर रोग, खांसी, दमा, कमजोरी आदि रोगों की शास्त्रोक्त दवा है। इससे बल और कान्ति बढ़ती है तथा शरीर पुष्ट होता है। प्रसव के बाद इसके सेवन द्वारा माताएं अपने और शिशु के स्वास्थ्य की रक्षा करती है।

बैद्यनाथ

अशोकारिष्ट

कमर दर्द, पेट दर्द, बुखार सा होना, आंखों, हाथों, पैर के तलुओं की जलन, भूख न लगना तथा ऋतु धर्म के समय होने वाली तकलीफ व बेचैनी इसके सेवन से दूर हो जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिश्याय एवं हृदय रोग

डा० शरद चन्द्र द्विवेदी, एम०डी० (आयु०

श्वसन संस्थानगत रोगों में प्रतिश्याय एक सर्वविदित लक्षण एवं रोग है । शीतकाल में अपेक्षाकृत अधिक होता है । आयुर्वेद में इसे स्वतंत्र नासारोगों के अन्तर्गत रखा गया है तो आधुनिक चिकित्साशास्त्र इसे केवल एक लक्षण मात्र मानता है । यह रोग किसी व्यक्ति को बचपन से वृद्धावस्था बिना हानि पहुंचाएँ रहता है तो कुछ व्यक्तियों को ऐसी जटिल व्याधियों तक पहुंचा देता है जिनकी चिकित्सा भी बड़ी जटिल हो जाती है ।

यह साधारणतया होता है यह समझकर आम व्यक्ति इस रोग के प्रति लापरवाही रखता है और आगे चलकर यह हृदय रोग का रूप ले लेता है । जैसे :- हृदय के वाल्व से संबंधित रोग या रिमेटिक हार्ट डिजिज । गाँवों में एक प्रचलन है कि नाक से पतला स्राव निकलता रहे एवं गाढ़ा होकर निकलता रहे तो वह ठीक समझा जाता है । नाक बन्द रहे तो उसे खराब मानते हैं । उनकी यह राय काफी हद तक सही है । बन्द नाक से या नाक में रूके अतिगाढ़ स्राव को जोर लगाकर जो कोशिश की जाती है उससे संक्रमण के गले में व कान में पहुंचने के अधिक अवसर होते हैं ।

जिस प्रतिश्याय में गले में खरास एवं गलतुण्डी शोथ हो तो कई बार वह रिमेटिक फीवर का पूर्णरूप होता है । प्राय: बच्चे इसके लिए अधिक संवेदनशील होते हैं । रिमेटिक फीवर की शुरूआत देखी जाये तो गले से प्रारम्भ होती है । इसमें बच्चे को पहले साधारण जुकाम के बाद गला खराब होना, गले में निगलने पर दर्द होना भोजन में अरूचि, ज्वर आदि लक्षण होते हैं । गले में स्ट्रेप्टोफोकस के संक्रमण से रिमेटिक फीवर हो सकता है । यहीं से संक्रमण हृदय तक पहुंचकर कार्डाइटिस को जन्म देता है, जो भविष्य में वाल्व की खराबी का कारण बन सकता है । इस रोग की शुरूआत किस तरह होती है और ये कैसे बढ़ता है, क्या-क्या इसके उपद्रव हैं इनकी साधारण जानकारी भी अपने बच्चों का जीवन बचा सकती है ।

यह रोग पाँच से पन्द्रह वर्ष की उम्र में होता है; लड़के-लड़कियों दोनों में इसका अनुपात समान पाया जाता है । प्राय: कुपोषित बच्चे इसके अधिक ग्रसित होते हैं । प्रारम्भ में एक से चार सप्ताह तक गले में खराश, निगलने में तकलीफ, प्रतिश्याय, अरूचि, थकावट चिड़चिड़ापन होता है, इसके बाद संधिशूल एवं प्रारम्भ होता है, अनियमित ज्वर आता है । इस स्थिति यदि एन्टीबायोटिक दवा ली जाती है तो रोग के लक्ष कुछ कम हो जाते हैं ।

इसके बाद की स्थिति में संक्रमण हृदय पहुँच जाता है एवं हृदय के आवरण में शोथ प्रारम्भ जाता है । बच्चे को श्वास लेने में कठिनाई होती है । इस स्थिति का निदान समय पर हो जाता है तो कुछ सप्त तक हृदय के वाल्व को खराब होने से बचाया जा सक है, लेकिन साधारणत: ज्वर एवं प्रतिश्याय समझकर चिकित्स करवाई जाती है, जिससे लक्षणात्मक लाभ मिलता है और रोग दिन प्रतिदिन बढ़ता रहता है ।

वाल्व खराब हो जाने पर अल्प श्रम से या चलने पर श्वास फूलता है, हृदय की धड़कन तीव्र हो जाती है त्वचा पर कहीं-कहीं ग्रन्थियां सी बन जाती है । उदर दाहिनी ओर शूल होता है जिसे अपेन्डिसाइटिस समझक चिकित्सक भ्रमित हो जाते हैं । प्रयोगशालीय जांचों रक्त की साधारण जांच से इसका पता किया जा सक है । ए एस एल ओ व सी आर पी दोनों इसमें पोजिटि मिलते हैं । ई एस आर बढ. जाता है । रक्ताल्पता हो एनीमिया हो जाता है ।

उपचार पक्ष :- प्रतिश्याय होते ही चिकित्सा करवा चाहिये । यदि गला भी खराब है तो चिकित्सक परामर्श लेकर यह पता कर लेवें की इसकी वजह क है ? गला खराब होते ही हल्के गरम पानी में चुटकी नमक डालकर गारगल करें या टिंक्चर बेन्जोन की 20-2 बूंदें गर्म पानी में डालकर वाष्प लेवें ।

पिप्पली चूर्ण 500 मि०ग्रा० की मात्रा में गुड़ साथ दिन में तीन बार लेवें । ऊपर से गरम दूध पीवें लक्ष्मी विलास रस की गोली एक-एक दिन में तीन गोजिह्वादि क्वाथ के साथ लेने पर गले की तकलीफ प्रतिश्याय में राहत मिलती है ।

प्रतिश्याय तक ही यह चिकित्सा है । आगे की चिकित्सा स्वंय न करें । चिकित्सक की देखरेख करवानी चाहिए ।

प्रभारी राज०आयु० स्वा० केन्द्र, गलानी, वाया - किंगल, शिमला (हि०प्र०)- 172024

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाड़ी एवं पाचन संस्थान पर कुचला का सुप्रभाव

कविराज डा० दिवाकर ठाकुर

आयुर्वेदीय औषधि क्षेत्र में कुचला एक महत्वपूर्ण द्रव्य है । चिकित्सा क्षेत्र में चालीस वर्षीय अनुभव के आधार पर पाठकों को कहना चाहूँगा कि यह नाड़ी व पाचन तंत्र के रोगों पर अत्यन्त गुणकारी है । लकवा, गठिया, पक्षाघात, गृध्रसी आदि स्नायविक एवं उदरगत वायु विकार में शोधित कुचला या इसके योग से निर्मित दवाओं का प्रयोग नि:शंक करते आ रहा हूँ और इन रोगों पर काबू पाकर यथार्थ लाभ मिल रहे हैं । अत: कुचला के बारे में कुछ जानकारी व्यक्त कर देना मेरी हार्दिक इच्छा है । मैं आशा करता हूँ कि पाठक कुचला-प्रभाव की जानकारी लेंगे ।

पं० भाव मिश्र ने अपने ग्रन्थ "भाव प्रकाश" के आम्रादि फल वर्ग में कुचला का वर्णन किया है । कुचला का वृक्ष बड़ा, मोटा और सीधा रहता है । पत्रादीर्घ वृताकार तीन से छ: इन्च लम्बे और तीन इंच तक चौड़े, बीज पौने इंच के घेरे में चपटे गोल, एक तरफ उन्नतोदर और दूसरी तरफ तरफ नतोदर तथा सफेद मखमल रेशों में भरे रहते हैं । औषधि के काम में बीज का ही अधिक उपयोग होता है । कुचला में मादक गुण होने से एवं अशुद्ध सेवन करने पर विषाक्त प्रभाव दिखलाता है । अस्तु शोधित एवं मात्रानुसार कुचला का प्रयोग से कोई प्रतिक्रिया नहीं होती है ।

कुचला शुद्ध करने की विधि - कुचले को दूध में मुलायम होने तक उबालें । चाकू से ऊपर का छिलका छिलकर निकाल कर बीचोंबीच चिर दें और पान पत्ता के आकार वाली पत्ती को निकाल फेकें । जल से धोकर धूप में सुखा चूर्ण कर रख लें । इस तरह शुद्ध कुचला कटु, तिक्त, गरम, क्षुधा कारक, कामोद्दीपक, वात-कफ नाशक, बवासीर, रक्ताल्पता और मूत्र विकारों को नष्ट करने वाला हो जाता है ।

रासायनिक संगठन - स्ट्रिकनीन, अन्य क्षारीय तत्व, छाल में ब्रूसीन, बीज में 1.53-3.42% क्षारीय तत्व, ग्लूकोसाइड, लोगनिन और कॉपर भी कुछ अंश में पाया जाता है । इसके अलावे रंजक द्रव्य, गोन्द, स्नेह, स्टार्च, फास्फेट, भस्म भी कुचला में उपलब्ध रहता है ।

प्राचीन पुस्तकों के अध्ययन से पता चलता है कि ईसा की सोलहवीं शताब्दी में कुचले के गुण की जानकारी जर्मन वाले कों हुआ था और सन् 1540 ई० डाक्टर बेलरी ने कुचला निर्मित दवाओं का प्रयोग कुत्ता, बिल्ली, सियार, चूहा आदि जानवरों को मारने के लिए किया था । इसके बाद अंग्रेज डाक्टरों ने इसके रासायनिक संगठन का विश्लेषण कर रोग निवारण हेतु कुचले का प्रयोग किया ।

डाक्टर बेलरी द्वारा कुचले का प्रयोग कुत्ता-बिल्ली आदि जानवरों को मारने के सम्बन्ध में दादी माँ के कथन की सम्पुष्टि हो जाती है । पचास-पचपन वर्ष पूर्व की बात है । उस समय मैं पाँचवी कक्षा में पढ़ता था । मेरे परिवार में एक साधारण नस्ल का कुत्ता नये चेहरे को देखकर और उसपर झपटने की खूंखारी स्वभाव से परेशान होकर दादी माँ कहती थी, इस कुत्ते को कुचला खिलाकर मार दो, अन्यथा कभी किसी को काट खायेगा । इससे स्पष्ट जाहिर होता है कि कुचला स्थित विषैला गुण की जानकारी दादी माँ को थी । यह हैरानी की बात नहीं है, क्योंकि उस जमाने हमारे पूर्वजों को जड़ी-बूटी की जानकारी रहती थी, जिससे परिवार में होने वाले रोगों का उपचार स्वत: कर लिया करते थे । आज की तरह उस समय रोग, डाक्टर और दवाओं की भरमार नहीं थी ।

यों तो कुचले की क्रिया का प्रभाव समस्त इन्द्रियों पर पड़ता है, लेकिन विशेष प्रभाव वातवाही नाड़ियों पर पड़ता है । अतएव लकवा, गठिया, मिरगी, धनुर्वात, मतिभ्रंश आदि रोगों पर कुचला का प्रभाव संतोषप्रद होता है । मज्जा तंतुओं पर व्यवधान पहुँचने से शरीर में कोई विकृति को कुचला दूर करने में सक्षम रहता है । हृदयस्थ सिराओं में सुधार लाकर रक्त चाप को बढ़ाता है जिससे श्वसन संस्थान को उत्तेजना मिलती है । फेफड़े के तीव्र रोगों में जब कास प्रक्रिया अव्यवस्थित हो

केमिस्ट - वनफूल आयुर्वेद भवन प्रा० लि०, बुद्धा कॉलोनी, दुजरा रोड, पटना - 800001 (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाती है, श्वासनली एवं फेफड़े में सूजन, दमा आदि विकारों में कुचला का प्रभाव अनुकूल होता है । अगर किसी रोगी में हृदय और नाड़ी की शिथिलता से स्पन्दन मन्द पड़ जाय तो इस स्थिति में कुचला आशातीत फायदा पहुँचाता है । हृदय के शिथिल होने से हृत्शब्द (लव-डुव) स्पष्ट रूप से सुनाई नहीं पड़ता है, नाड़ी उष्ण होकर शीघ्रगामी हो जाती है, हथेली, पगतल और कनपट्टी ढंडी पड़ जाती है, अल्प मेहनत करने से पसीना आने लगता है, दम फूलने लगता है इस हालत में कुचला राम वाण की तरह काम करता है ।

हृदयोदर (जलोदर) रोग में जब पेट में पानी संचय होता है, यकृत बढ़ जाता है, मूत्र का रंग लाल और अल्पमात्रा में निष्कासन हो तो इस हालत में कुचला का उपयोग मनोनुकूल होता है ।

पाचन संस्थान पर भी कुचला का प्रभाव अच्छा देखा गया है । पाचन संस्थान को सुधारकर आमाशय को सशक्त बनाता है । अतएव कुचला का उपयोग आमाशयिक विकार पर अपना कब्जा दिखलाता कटुरस होने के कारण आँतों पर इसका गर्म प्रभाव है । अन्न को पचाकर और आँतों की शिथिलता मिटाकर मल को बाहर निकालने में सहायक होता अत: यह साधारण कोष्ठबद्धता के लिए कारगर है ।

फार्माकोपिया ऑफ इंडिया ने भी कुचले को उत्तेजक एवं स्नायु तंत्र को पुष्ट करने वाला माना इसलिए इसका उपयोग पक्षाघात और स्नायु वेदना में दायक बताया है ।

जननेन्द्रिय संस्थान पर भी इसका उत्तेजक प्रभ देखा गया है । कुचला-योग से निर्मित मर्दानगी ता बढ़ाने वाली औषधियाँ बनती हैं । हस्त मैथुन के का शिश्नेन्द्रिय की शिथिलता व दुर्बलता से होने वाले पतन एवं अति मैथुन से उत्पन्न नपुसंकता को दूर करने कुचला सफल काम करता है ।

बैद्यनाथ

आयुसिड

अम्लपित्त, उदरशूल एवं कब्जियत दूर करने की दवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब मलेरिया व एड्स रोकेगा - ड्रेगन फलाई

मधुसूदन भार्गव

वर्षा ऋतु में इल्ली को मुंह में दबाये टिड्डे की सी रचना वाले कीट को लगभग सभी ने देखा है। हेलीकाप्टर से दिखाई देने वाले इस कीट को सामान्य भाषा में राक्षसी मक्खी (ड्रेगन फलाई) कहा जाता है। इसे देखकर ऐसा कहा जाता है कि हेलीकाप्टर के आविष्कारकर्त्ता वैज्ञानिक ब्रेक्वेट (सन 1909) ने हेलीकाप्टर के आविष्कार की प्रेरणा उड़ते ड्रेगन फलाई को देखकर ही ली होगी। हाल ही में कुछ भारतीय तथा बाहरी देशों के चिकित्सा वैज्ञानिकों द्वारा ड्रेगन फलाई की मलेरिया, फायरेलिया, डेंगू फीवर से लेकर एड्स फैलाने वाले कीटाणुओं के वाहक मच्छरों और खेती व वन सम्पदा को हानि पहुंचाने वाले कीटों के संहारक के रूप में पहचान कर लेने के बाद इसके मानव हितैषी होने का भी प्रमाण दे दिया है।

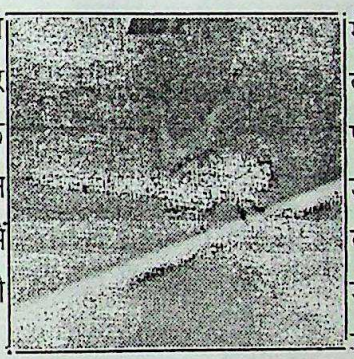

शताब्दियों से मच्छरों और उनके परिजनों को आहार बनाकर मनुष्य को निरोगी रखने में मदद कर रहे हैं। ड्रेगन फलाई वर्षा ऋतु में ताल तलैयों, नदी, झरनों, पोखरों और नम स्थानों के ऊपर हेलीकाप्टर की तरह उड़ते नजर आते हैं। भाँति-भाँति के रंग-बिरंगे इन कीटों के पीछे शहरी एवं ग्रामीण अंचलों के बच्चे कई-कई फर्लांग बिना रूके दौड़ते चले जाते हैं। जीव विज्ञान में ड्रेगन फलाई को "मेक्रेनिया मेग्नीफिका" नाम देकर आर्थोपोडा परिवार में रखा गया है। ड्रेगन फलाई से मिलता जुलता एक और कीट होता है। 'डेम्सल फलाई'।

ड्रेगन फलाई का अर्थ है राक्षस मक्खी अर्थात तेजी से आक्रमण कर शिकार को तुरन्त मार देने वाली मक्खी। संस्कृत में इसे "व्याध पतंग" कहा जाता है। व्याध का अर्थ शिकारी तथा पतंग का अर्थ "कीट (कीड़ा)" अर्थात् शिकारी कीट्।

डेम्सल फलाई का अर्थ है कोमल सुन्दर मक्खी। ड्रेगन और डेम्सल फलाई की रचना मिलती है, लेकिन रचना में अन्तर होने से इन्हें पहचाना जा सकता है।

ड्रेगन फलाई का मुंह शिकार भक्षण के प्रति अति संवेदनशील होता है, शिकार पकड़ने के साथ ही उसे कुतरना आंरभ कर देता है। इस कार्य में उत्तल लैंस सी संरचना वाली इसकी आँखें शिकार खोजने व पकड़ने में सहायक होती हैं। ड्रेगन फलाई का शरीर तीन खण्ड सिर, वक्ष और उदर में बटा होता है। वक्ष भी तीन भागों में विभाजित रहता है तथा इससे पंखों के दो और पैरों के तीन युग्म जुड़े होते हैं। पंख पतली पन्नी के समान होते हैं जिनसे उड़ते समय आपस में टकराने में करकर की आवाज आती है। सामान्यतः ड्रेगन व डेम्सल फलाई लाल-पीले, सिंदूर, काला सफेद, जामुनी, मटमैला, धारीदार एवं चमकदार आदि रंगों में मिलते हैं। पंखों के मध्य फैली तन्तुकायें गहरे रंग की होती हैं जो हवाईजहाज और हेलीकाप्टर के पंखों को शाधे दंड (वीम) सी दिखती हैं। पंख के अंतिम सिरे पर दंड के ही रंग का गहरा धब्बा होता है जिसे पैट्रोस्टिजम भी कहते हैं। उदर की लम्बी पतली रचना इसे हेलीकाप्टर के समान बना देती है। आवश्यकता पड़ने पर यह इसे मनचाही ओर मोड़ लेता है। पेड़ के कटे सिरे पर बैठते व उड़ते समय यह आकर्षित लडाकू हेलीकाप्टर सा लगता है। इस अवस्था में ड्रेगन फलाई को देखकर प्रतीत होता है कि हेलीकाप्टर के अविष्कारक ब्रेक्वेट (सन् 1909) ने सर्वप्रथम ड्रेगन फलाई को ही देखकर हेलीकाप्टर निर्माण की प्रेरणा ली हो। ड्रेगन फलाई की वंश वृद्धि क्रिया बड़ी ही विचित्र एवं रोचक होती है। नर की पूंछ के सिरे पर स्थित जनन छिद्र से शुक्राणु निकलते हैं। इन शुक्राणुओं को नर शरीर

४८, शास्त्री नगर, शिवपुरी, म०प्र०- ४७३५५१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के दूसरे और तीसरे खण्ड के मध्य बनी थैली में पूंछ घुमाकर एकत्रित कर लेता है । यह थैली नर का शुक्राणु कोश कहलाती है । नर जनन छिद्र के पास ही एक विशेष नुकीला अंग क्लासपर होती है । समागम से पूर्व नर मादा की तलाश में निकल पड़ता है और मादा के मिलने के साथ ही यह मादा के ऊपर नीचे दाये बायें घूम-घूमकर उसे रिझाने लग जाता है, जैसे ही मादा कुछ शिथिल पड़ती दिखाई देती है तुरन्त क्लास्पर से उसके सर के पिछले भाग को पकड़ लेता है और मादा को समागम के लिए विवश कर देता है । समागम को विवश मादा अपनी पूंछ के पिछले सिरे पर स्थित जनन छिद्र को नर के शुक्राणु कोश तक लाती है और शुक्राणु ग्रहण करती है । धीमे व मध्यम गति के हवा के झोंकों का इस क्रिया पर कोई प्रभाव नहीं होता है । अंत में मादा रूक पानी, पानी के किनारों पर डूबे-उथले पेड-पौधों की डालियों और सडे कले कचरे के ढरों पर अपने अण्डे देती है । मच्छर उनके लार्वा और बच्चे ड्रेगन फलाई का मुख्य भोजन है । इन्हीं के शिकार के कारण इन्हें मच्छर मार कहते हैं । अण्डे से निकलने के बाद इनके लार्वा और बच्चे मच्छरों के लार्वा और बच्चों को खाने लगते हैं । अधिकांशत: ड्रेगन फलाई पृथ्वी के समानान्तर उड़ते दिखाई देते हैं । शिकार का पीछा करते समय अथवा नीचे ऊपर उठते समय यह 30^0 से 60^0 के मध्य कोण बनाते हुये शिकार पर जा झपटता है और शिकार को एक ही बार में ढेर (मार) कर ले उड़ता है । इसके एक ही स्थान पर ऊपर नीचे उठने की कला आधुनिक लडाकू हेलीकाप्टर और युद्धक विमान से मेल खाती है । भारतीय वैज्ञानिक डॉ.बी. सूरी बाबू को वर्ष 1987 में ''ओडोनेटा कीड़ों (ड्रेगन फलाई) एवं उनके पर्यावरण पर प्रभाव'' विषय पर सागर विश्व विद्यालय मध्यप्रदेश द्वारा डाक्टरेट (पी.एच.डी.) की उपाधि दी गयी है ।

इसी प्रकार की खोज जे.एच. महाविद्यालय, बैतूल (म०प्र०) के प्राध्यापक पी.के. मिश्रा ''मच्छरों के जैविक नियंत्रण'' (वायोलॉजीकल कन्ट्रोल) विषय पर करने में व्यस्त है ।

भारतीय वैज्ञानिकों के अतिरिक्त विदेशों में भी रोगाणु वाहक मच्छरों के नियंत्रण पर कार्य किये जा रहे हैं । सन् 1985 में कोलिन एवं रेश नामक वैज्ञानिकों ने बतलाया था कि टिड्डों के लार्वा पानी में पैदा होते हैं । इसी प्रकार सन् 1988 में जापान के म्यूरा ताकानासी ने टिड्डों पर शोध कर बतलाया है कि टिड्डों के लार्वाओं मच्छरों के लावाओं को अपना आहार बनाते हैं ।

ड्रेगन फलाई पर किये जा रहे शोधों से जो परिणाम सामने आये हैं उनके अनुसार म०प्र० में ड्रेगन फलाई की 25 प्रजातियाँ उपलब्ध हैं तथा ड्रेगन फलाई और इनके डिम्बक फाइलेरिया, मलेरिया डेंगू ज्वर हेपेटाइटिस बी एवं सी एवं एड्स आदि के रोगाणुओं को मानव शरीर में प्रवेश कराने वाले मच्छरों उनके लार्वा तथा अण्डों को अपना ग्रास बनाकर न केवल उक्त बीमारियों को फैलने से रोकते हैं, बल्कि खेती एवं वन सम्पदा को हानि पहुंचाने वाले कीट पतंगों को खाकर किसानों और पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रण करने में हमारी मदद करते हैं ।

मानव द्वारा अंधाधुंध प्रयोग किये जा रहे पीडकनाशी एवं कीटनाशकों के कारण ड्रेगन फलाई की कई जातियां समाप्त होती दिखाई देने लगी हैं । इनके अतिरिक्त पक्षी जगत के नन्हें शिकारी गौरैया, भुजंगा, मैना, बुलबुल आदि तथा सरी सृप वर्ग के गिरगिट, छिपकली, सर्प गोह, मेंढक आदि भी ड्रेगन फलाई के शत्रु हैं ।

मध्यप्रदेश में शिवपुरी, भिण्ड, ग्वालियर, मुरैना, गुना, इन्दौर, भोपाल, जबलपुर आदि, उत्तरप्रदेश के झाँसी, आगरा, इटावा आदि, राजस्थान के कोटा, बांरा, शाहबाद, करौली आदि क्षेत्रों में वर्षाकाल के आस-पास अनेकों मनमोहक रंग के हजारों ड्रेगन फलाई उड़ते नजर आते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छात्रोपयोगी

पदार्थ विज्ञान में प्रयुक्त कुछ शब्दों का आंगल भाषा में अर्थ

डा० अनूप कु० गक्खड़ (एम०डी०आयुर्वेद)
मांका रयात, बी०ए०एम०एस०,प्रथम प्रॉफ०

1. संक्षेपक परिभाषा ↔ Abbreviative definition
2. अजीवात् जीवोत्पत्ति ↔ Abiogenesis.
3. आत्मनिषेध ↔ Abnegation.
4. ब्रह्म, परम तत्त्व, परतत्त्व ↔ Absolute
5. निरपेक्ष:, केवल, परम ↔ Absolute
6. निरपेक्ष नीति ↔ Absolute ethics
7. पूर्ण प्रमाण ↔ Absolute proof
8. परम सत्ता, परम तत्त्व ↔ Absolute reality
9. केवल चित्, परम चित ↔ Absolute spirit
10. निरक्षेप पद ↔ Absolute term
11. ब्रह्मवाद, परमवाद ↔ Absolutism
12. निरपेक्षवाद ↔ Absolutism
13. अमूर्त प्रत्यय ↔ Abstract idea
14. अपाकर्ष ↔ Abstractum
15. अनिश्चयवाद ↔ Acatalepsy
16. अज्ञेयता ↔ Acatalepsy
17. आगंतुक गुण, आकस्मिक गुण ↔ Accident
18. यदृच्छावाद ↔ Accidentalism
19. अनुषंगी परिस्थितियां ↔ Accompanying circumstances
20. कृत, कर्म ↔ Action/Act
21. क्रियात्मक प्रत्ययवाद ↔ Activistic idealism
22. वास्तविक पदार्थ, अंत्य वस्तु ↔ Actual entity
23. वास्तविक घटना, वास्तविक प्रसंग ↔ Actual Occasion
24. अनुकूलवाद ↔ Adaptationisn
25. पर्याप्त ज्ञान ↔ Adequate knowledge
26. तदर्थ युक्ति ↔ ad hoc argument
27. मरणोत्तर जीवन ↔ After - Life
28. प्रेमभाव, एगापी ↔ Agabe
29. श्रेय ↔ Agathan
30. कर्त्ता ↔ Agent
31. अज्ञान, अविद्या ↔ Agnosy
32. संकल्प-दौर्बल्य ↔ Akrasia
33. तर्क-बीजगणित ↔ Algebra of logic
34. सुखदु:ख परक ↔ Algedonic
35. विकल्पन ↔ Alternation
36. वैकल्पिक पद ↔ Alternative term.
37. परार्थवाद ↔ Altruism
38. अनेकार्थक वर्णन ↔ Ambiguous description
39. अर्थ-विस्तार ↔ Ampliation
40. सादृश्य ↔ Analogy
41. विश्लेष्य ↔ Analysandum
42. अभिशाप ↔ Anathema
43. प्राणतत्व, जीवतत्व ↔ Anima.
44. विश्वात्मा ↔ Anima mundi
45. जीववाद ↔ Animism.
46. प्रत्यक्ष शक्ति ↔ Anschaung
47. हेतु वाक्य ↔ Antecedent
48. पूर्ववृत्त ↔ Antecedents
49. प्रतिपक्ष ↔ Antithesis
50. निश्चय ज्ञान ↔ Apodeictic Knowledge
51. अवबोध ↔ Apprehension
52. जीवतत्त्व ↔ Archaeus
53. आदि तत्व ↔ Arche
54. अजीवात् जीवोत्पत्ति ↔ Archebiosis
55. उत्कृष्टता, उत्कर्ष ↔ Arete
56. युक्ति ↔ Argument
57. प्रकृत ज्ञान ↔ Assertoric knowledge
58. अभिगृहीत, अभिग्रह ↔ Assumption
59. सूक्ष्म देह, सूक्ष्म शरीर ↔ Astral body
60. निरूद्देश्य, अप्रयोजन ↔ Ateleological
61. परमाणुवाद ↔ Atomism
62. प्रायश्चित ↔ Atonement
63. गुण, विशेषता ↔ Attribute

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

64. तप, कृच्छ्रता ↔ Austerity
65. आप्त, आप्तपुरुष ↔ Authority
66. स्वयंसिद्धि, स्वयंसिद्धि ↔ Axiom
67. दिव्य दर्शन ↔ Beatific vision
68. सौन्दर्य, रमणीयता ↔ Beauty
69. भाव, सत् ↔ Being
70. व्यवहारविज्ञान ↔ Behaviouristics
71. जैविकमानव मीमांसा ↔ Bio-anthropology
72. जीवनतत्ववाद ↔ Bioism
73. ईश्वर निंदा ↔ Blasphemy
74. आनंद ↔ Bliss
75. बंध ↔ Bondage
76. संपूर्ण श्रेय ↔ Bonum consummatum
77. प्रतिरोधिता ↔ Brutality
78. व्यवसाय-नीति ↔ Business ethics
79. मुख्य पाप ↔ Cardinal sins
80. मुख्य सद्गुण ↔ Cardinal virtues
81. दैहिक पाप ↔ Carnal sin
82. यदृच्छावाद ↔ Casualism
83. धर्मोपदेश ↔ Catechesis
84. पदार्थ ↔ Category
85. कार्यकारणभाव ↔ Casuality
86. स्वयंभू ↔ Causa sui
87. कारण ↔ Cause
88. संयोग, यदृच्छा ↔ Chance
89. चरित्र ↔ Character
90. मंत्र ↔ Charm
91. विकल्प ↔ Choice
92. दिव्य दृष्टि ↔ Clair voyance
93. वर्ग ↔ Class
94. वर्गीकरण ↔ Classification
95. सहकार्य ↔ Co-effect
96. चिंतन ↔ Cogitatio
97. संसक्तता ↔ Coherence
98. समूह पद ↔ Collective term
99. सामान्य बुद्धि ↔ Commonsense
100. व्यापकार्थ ↔ Comprehension
101. मूर्त ↔ Concrete
102. उपाधि ↔ Condition
103. आचरण, आचार ↔ Conduct
104. संयोजन ↔ Conjunction
105. निगमन ↔ Consectarium
106. रूढ़िवाद ↔ Conservatism
107. संगति ↔ Consistency
108. प्रत्यक्षबोधक वाक्य ↔ Constatation
109. ध्यान ↔ Contemplation
110. वस्तु, विषय ↔ Content
111. संयम ↔ Continence
112. अनुयायी ↔ Continuant
113. प्रतिपरिवर्तन ↔ Contraposition
114. विपरीत ↔ Contrary
115. परिवर्तन ↔ Conversion
116. विश्व ↔ Cosmos
117. प्रतियुक्ति ↔ Counter- argument
118. साहस ↔ Courage
119. सृष्टि ↔ Creation
120. निकस, कसौटी ↔ Criterion
121. मीमांसा ↔ Critique
122. निश्चयात्मक वर्णन ↔ Definite description
123. देवता, देवत्व ↔ deity
124. विमर्श ↔ Deliberation
125. विश्वकर्मा, सृष्टिकर्मा ↔ Demiurge
126. कर्तव्यशास्त्र ↔ Deontology
127. वर्णनात्मक नीति ↔ Descriptive ethics.
128. इच्छा, एषणा ↔ Desire
129. निश्चय ↔ Determination
130. प्रज्ञा ↔ Dianoia
131. प्रत्यक्ष अभिप्राय ↔ Direct intention
132. साक्षात् ज्ञान ↔ Direct knowledge
133. विजोयन ↔ Disjunction

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

134. व्याप्ति ↔ Distribution
135. प्रत्येक-गुणधर्म ↔ Distributive property
136. विभक्त अर्थ ↔ Divided sense
137. द्वैतवाद ↔ Dualism
138. कर्त्तव्य ↔ Duty
139. निमित्त कारण ↔ Efficient cause
140. स्वार्थवाद ↔ Egoism
141. अहंकार ↔ Egotism
142. जीवन-शक्ति ↔ Vital
143. निर्गमन ↔ Emanation
144. मुक्ति, मोक्ष ↔ Emancipation
145. भावात्मक भाषा ↔ Emotive language
146. उद्देश्य, साध्य, लक्ष्य ↔ End
147. नीति परिवर्तन ↔ Enforcement of morality
148. वस्तु, पदार्थ ↔ Entity
149. ज्ञानवस्तु, ज्ञान-विषय ↔ Epistemological object
150. ज्ञानमीमांसा ↔ Epistemology
151. अनेकार्थक ↔ Equivocal
152. गूढ़, रहस्यमय ↔ Esoteric
153. तत्व, सार ↔ Essence
154. नैत्तिक दृष्टिकोण ↔ Ethical viewpoint
155. नीतिशास्त्र, नीति ↔ Ethics
156. आचार विज्ञान ↔ Ethology
157. शिष्टाचार ↔ Etiquette
158. घटना ↔ Event
159. अशुभ, अनिष्ट, अमंगल, अहित ↔ Evil
160. विकास ↔ Evolution
161. आदर्श-कारण ↔ Exemplary cause
162. निदर्शन ↔ Exemplification
163. अस्तित्व ↔ Existence
164. बहिरंग ↔ Exoteric
165. व्याख्या ↔ Explanation
166. प्रतिपाद ↔ Exposition
167. व्यंजक ↔ Expression
168. बाह्य जगत ↔ External world
169. तथ्य ↔ Fact
170. आस्था ↔ Faith
171. कल्पितार्थ, कल्पना ↔ Fiction
172. आकृति ↔ Figure
173. आदि तत्व ↔ First principles
174. आकार ↔ Form
175. धीरता ↔ Fortitude
176. आत्मा ↔ Geist, Self
177. सामान्य प्रत्यय ↔ General idea
178. ज्ञानमीमांसा ↔ Gnosiology
179. ध्येय, लक्ष्य ↔ Goal
180. ईश्वर-प्राप्ति ↔ God realization
181. शुभ, श्रेय, पुरुषार्थ ↔ Good
182. अधिष्ठान ↔ Ground
183. प्रसन्नता, आनंद ↔ Happiness
184. स्वर्ग ↔ Heaven
185. नरक ↔ Hell
186. कार्य ↔ Heteropathic effect
187. नि:श्रेयस, परमार्थ, परम पुरुषार्थ ↔ Highest good
188. पवित्र आत्मा ↔ Holy spirit
189. पुद्गमल ↔ Hyle, matter
190. आधार द्रव्य ↔ Hypostasis
191. विचार, प्रत्यय ↔ Idea
192. आदर्श ↔ Ideal
193. प्रत्येय ↔ Ideatum
194. व्यामोह ↔ Idol
195. अव्यवहित अनुमान ↔ Immediate inference
196. अमरता, अमरत्त्व ↔ Immortality
197. आपाद्य ↔ Implicate
198. आशय ↔ Import
199. प्रवृत्ति ↔ Inclination
200. समावेश ↔ Inclusion
201. परोक्ष ↔ Indirect
202. आगमन ↔ Induction
203. वास्तव ↔ Infacto

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

204. अनुमान ↔ Inference
205. अनियत पद ↔ Infinite term
206. निवेश ↔ Ingression
207. अन्तःकरण ↔ Inner sense
208. बुद्धिगम्य, प्रज्ञागम्य ↔ Intelligible
209. नास्तिकता, अधर्म ↔ Irreligion
210. न्याय ↔ Justice
211. साक्षात् ज्ञान ↔ Knowledge by acqaintance
212. उपादान कारण ↔ Material Cause
213. पुण्य ↔ Merit
214. पर्याय ↔ Mode
215. नैत्तिक कर्त्तव्य ↔ Moral duty
216. अविद्या, अज्ञान ↔ Nescience
217. शाब्दिक परिभाषा ↔ Nominal difinition
218. मत ↔ Opinion
219. विरोध ↔ Opposition
220. अन्वीक्षिकी ↔ Organon
221. आद्यपाप ↔ Original Sin
222. पुनर्जन्म ↔ Palingenesis
223. दर्शन ↔ Philosophy
224. प्रत्यक्षवाद ↔ Postivism
225. संभवता ↔ Possibility
226. प्राथमिक गुण ↔ Primary qualities
227. गुणधर्म ↔ Property
228. गुण ↔ Quality
229. परिमाण ↔ Quantity
230. तत्व, सार ↔ Quiddity
231. सत् ↔ Real
232. उपलब्धि, प्राप्ति, सिद्धि ↔ Realization
233. तर्कबुद्धि, हेतु ↔ Reason
234. तर्क ↔ Reasoning
235. निर्देश्य ↔ Referent
236. मनन ↔ Reflection
237. सापेक्ष पद ↔ Relative term
238. त्याग, सन्यास ↔ Renunciation
239. पश्चाताप ↔ Repentence
240. एकतत्ववाद ↔ Singularism
241. वितंडा ↔ Sophistry
242. अध्यात्मवाद ↔ Spiritualism
243. कथन ↔ Statement
244. विषय ↔ Subject
245. पुनरूक्ति ↔ Tautology
246. प्रमेह ↔ Theorem
247. पक्ष ↔ Thesis
248. बोध ↔ Understanding
249. सामान्य ↔ Universal
250. संकल्प ↔ Volition, will
251. ऐच्छिक कर्म ↔ Voluntary action
252. विश्व दृष्टि ↔ Weltanschauung
253. अभिलाषा ↔ Wish
254. विश्वात्मा ↔ World soul
255. विश्वाधार ↔ World ground
256. पूजा ↔ Worship
257. असत्, अनुचित ↔ Wrong

वैद्यनाथ
बसन्तकुसुमाकर रस
बल, स्मृति-वर्द्धक शास्त्रीय रसायन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चरक सूत्रस्थान अध्याय - 5 पर आधारित

[1]डा० अनूप कु० गक्खड़, एम.डी. (आयुर्वेद)
[2]सीमा चोपड़ा, बी.ए.एम.एस.

1. प्र०:- आहार की मात्रा किस पर निर्भर करती है ?
   उ०:- **जठराग्नि के बल पर ।**
2. प्र०:- आहार की उचित मात्रा किसे कहते हैं ?
   उ०:- **जो मात्रा, प्रकृति का उपघात न करके ठीक समय में पच जाता है ।**
3. प्र०:- क्या स्वभाव से ही लघु द्रव्यों की मात्रा की अपेक्षा की जाती है ?
   उ०:- **हां ।**
4. प्र०:- लघु द्रव्यों में किन महाभूत की प्रधानता होती है ?
   उ०:- **वायु एवं अग्नि महाभूत की ।**
5. प्र०:- गुरु द्रव्यों में किन महाभूत की प्रधानता होती है ?
   उ०:- **पृथ्वी एवं जल ।**
6. प्र०:- किन द्रव्यों का गुरु होने के कारण उनका अभ्यास करने को मना किया है ?
   उ०:- **वल्लूर, शुष्कशाक, शालूक, बिस इनका सेवन मना किया है ।**
7. प्र०:- किन द्रव्यों का निरन्तर सेवन नहीं करना चाहिए ?
   उ०:- **कूर्चिका, किलाट, सूअर का मांस, गोमांस, भैंस का मांस, दधि, माष, यवक ।**
8. प्र०:- प्रतिदिन प्रयोग करने योग्य आहार द्रव्य कौन-कौन से हैं ?
   उ०:- **षष्टिक, शालि, मूंग, सैन्धव, आमलक, यव, आन्तरीक्ष जल, दूध, घी व जाङ्गल देश में होने वाले पशु-पक्षियों का मांस ।**
9. प्र०:- चरक ने अञ्जन कितने प्रकार के माने हैं ?
   उ०:- **दो प्रकार के, सौवीराञ्जन व रसाञ्जन ।**
10. प्र०:- किस अञ्जन का प्रयोग प्रतिदिन किया जा सकता है ?
    उ०:- **सौवीराञ्जन ।**
11. प्र०:- रसाञ्जन का प्रयोग कब करना चाहिए ?
    उ०:- **पाँचवें अथवा आठवें दिन ।**
12. प्र०:- चक्षु को सर्वाधिक भय किससे होता है ?
    उ०:- **श्लेष्मा से ।**
13. प्र०:- तीक्ष्ण अञ्जन का प्रयोग कब करना चाहिए दिन में या रात में ?
    उ०:- **रात में ।**
14. प्र०:- स्नेहनार्थ धूमपान में प्रयुक्त होने वाले कौन से द्रव्य हैं ?
    उ०:- **वसा, घृत, मधूच्छिट व मधुर स्कन्ध में प्रयुक्त द्रव्य ।**
15. प्र०:- शिरोवैरेचनिकी धूमवर्ति के द्रव्य कौन-कौन से हैं ?
    उ०:- **अपराजिता, मालकांगनी, हरताल, मैनसिल, अगर, तेजपत्र ।**
16. प्र०:- कोई पांच रोग बताइये जिसमें धूमपान का प्रयोग किया जा सकता है ?
    उ०:- **शिरःशूल, पीनस, अर्धावभेदक, श्वास व कास ।**
17. प्र०:- प्रायोगिक धूमपान के कितने काल हैं ?
    उ०:- **आठ ।**
18. प्र०:- आठ कालों में से प्रायोगिक धूमपान कितने बार प्रयोग करने का निर्देश है ?
    उ०:- **दो बार ।**
19. प्र०:- गुरु द्रव्यों द्वारा कितने भाग की तृप्ति करने का निर्देश दिया है ?
    उ०:- **तीन भाग की या दो भाग की तृप्ति करने का निर्देश है ।**
20. प्र०:- स्नैहिक धूमपान का प्रयोग दिन में कितनी बार करने का निर्देश है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उ०:- दिन में एक बार ।

21. प्र०:- वैरेचनिक धूमपान का प्रयोग दिन में कितनी बार करने का निर्देश है ?

उ०:- दिन में तीन या चार बार ।

22. प्र०:- सम्यक् धूमपान के लक्षण क्या हैं ?

उ०:- हृदय, कण्ठ व इन्द्रियों की शुद्धि शिर का लघु होना व बढ़े हुए दोषों का शान्त होना ।

23. प्र०:- ''बाधिर्यमान्ध्यं मूकत्वं रक्तपित्तं शिरोभ्रभम्.. ....'' ये लक्षण किसके हैं ?

उ०:- अकाल में धूमपान करने से ।

24. प्र०:- धूमपान जनित 'रक्तपित्त' उपद्रव में किस प्रकार की चिकित्सा करनी चाहिए ?

उ०:- शीतल चिकित्सा ।

25. प्र०:- धूमपान जनित 'कफपित्तज' उपद्रव में किस प्रकार की चिकित्सा करनी चाहिए ?

उ०:- विरूक्षण ।

26. प्र०:- धूमपान जनित उपद्रवों में यदि वायु पित्त का अनुगामी हो तो किस प्रकार की चिकित्सा करनी चाहिए ?

उ०:- घृत सेवन, स्नैहिक नस्य, अञ्जन व तर्पण ।

27. प्र०:- क्या आमदोष में धूमपान का प्रयोग उचित है ?

उ०:- नहीं ।

28. प्र०:- क्या प्रमेह में धूमपान उचित है ?

उ०:- नहीं ।

29. प्र०:- नासिका, शिर व आँखों में वात कफ आदि से सम्बन्धित रोग में धूमपान कैसे करना चाहिए ?

उ०:- नासिका से ।

30. प्र०:- यदि वातादि दोष कण्ठप्रदेश में स्थित हो तो धूमपान कैसे करना चाहिए ?

उ०:- मुख से ।

31. प्र०:- विरेचनार्थ धूमनेत्र का परिमाण क्या होना चाहिए ?

उ०:- 24 अंगुल ।

32. प्र०:- स्नैहिक धूमनेत्र का परिमाण क्या हो चाहिए ?

उ०:- 32 अंगुल ।

33. प्र०:- प्रायोगिक धूमनेत्र का परिमाण क्या हो चाहिए ?

उ०:- 36 अंगुल ।

34. प्र०:- ''यदा चोरश्च कण्ठश्च शिरश्च लघुतां प्र ..'' ये लक्षण किसके हैं ?

उ०:- सम्यक् धूमपान ।

35. प्र०:- नस्य का प्रयोग किस-किस ऋतु में क चाहिए ?

उ०:- प्रावृट, शरद व वसन्त ।

36. प्र०:- अणुतैल के निर्माण के लिए किसके दूध प्रयोग होता है ?

उ०:- बकरी का ।

37. प्र०:- अणुतैल के निर्माण के लिए तैल से कि गुणा जल डाला जाता है ?

उ०:- सौ गुना ।

38. प्र०:- कौन से रस वाले वृक्षों की दातुन का प्र करना चाहिए ?

उ०:- कषाय, कटु, तिक्त रस वाले वृक्ष का

39. प्र०:- दातुन के लिए प्रयुक्त होने वाले किन का उल्लेख चरक ने किया है ?

उ०:- करञ्ज, करवीर, अर्क, मालती, अर्जु असन ।

40. प्र०:- लवंग फल का उल्लेख चरक संहि एक ही स्थल पर मिलता है, वह कौन-सा है ?

उ०:- इस अध्याय में सुगन्धित द्रव्यों को मु धारण करने के सन्दर्भ में ।

41. प्र०:- कटुक को चक्रपाणी ने क्या स्वीकार कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है ?

उ०:- लताकस्तूरी ।

42. प्र०:- "हन्तोर्बलं स्वरबलं वदनोपचयः परः....." ये लाभ किससे प्राप्त होते हैं ?

उ०:- तैल गण्डूष से ।

43. प्र०:- " न खालित्यं न पालित्यं न केशाः प्रपतन्ति च...." ये लाभ किस से प्राप्त होते हैं ?

उ०:- प्रतिदिन शिर पर स्नेह धारण करने से ।

44. प्र०:- "दृष्टिः प्रसादं" लाभ किससे प्राप्त होता है ?

उ०:- अञ्जन एवं पादअभ्यंग से ।

45. प्र०:- "दौर्गन्ध्यं गौरवं तन्द्रां कण्डूमलमरोचकम्.." ये लाभ किससे मिलते हैं ?

उ०:- शरीर मार्जन से ।

46. प्र०:- "पवित्रं वृष्यमायुष्यं श्रमस्वेदमलापहम्...." ये लाभ किससे मिलते हैं ?

उ०:- स्नान से ।

47. प्र०:- "पौष्टिकं वृष्यमायुष्यं शुचि रूप विराजनम्.." ये लाभ किससे मिलते हैं ?

उ०:- क्षौर कर्म से ।

48. प्र०:- "चक्षुष्यं स्पर्शनहितं पादयोव्यसनापहम्...." ये लाभ किससे प्राप्त होते हैं ?

उ०:- पादत्र धारण से ।

49. प्र०:- "मेध्यं पवित्रमायुष्य लक्ष्मीकलिनाशनम्...." ये लाभ किससे प्राप्त होते हैं ?

उ०:- पाद तथा मल मार्गों की शुद्धि से ।

50. प्र०:- "स्खलताः सम्प्रतिष्ठानं शत्रूणां च निषृदनम्.." ये लाभ किससे प्राप्त होते हैं ?

उ०:- दण्ड धारण से ।

51. प्र०:- "दृढ़मूलाश्च दीर्घाश्च कृष्णाः केशा भवन्ति च....." ये लाभ किससे प्राप्त होते हैं ?

उ०:- शिर पर स्नेह धारण करने से ।

खिलते यौवन के निशान भला चेहरे पर आए क्योंकर ?

यौवन के साथ-साथ मुहासों का आना भी स्वाभाविक है, पर इनके इलाज के लिए क्रीम आदि से भी पूरी बात नहीं बनती । यह त्वचा की सतह पर ही काम करती है, समस्या की जड़ तक नहीं पहुंच पातीं और इसके कारण कभी-कभी रह जाते हैं भद्दे निशान । बैद्यनाथ सुरक्ता रक्त साफ कर, त्वचा में निखार लाती है और आपके चेहरे की दमक बन जाती है खिलते यौवन की निशानी ।

बैद्यनाथ

सुरक्ता

कील मुहांसों के लिए

हर्बल रक्त शोधक

सुन्दर त्वचा भीतर से निखरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Eleventh constituent of Dasamula

Dwivedi, K.N.[1],
Dixit, Ranu[2].

Introduction

The word "Dasamula" though not mentioned in Vedic literature as it is, it has been mentioned as "Dasavrksa. The word "Dasamula" is self explanatory, meaning it has "Ten roots", i.e. it has the roots of ten different plants as its constituents. These plants are Bilva, Agnimantha, Syonaka, Patala, Kasmarya, Salaparni, Prsniparni, Brhati, Kantakari and Goksura. The other replaceable constituent is considered as "Eranda" by some authors in place of Goksura. Instead, even the Eranda can be added into the Dasamula making it as eleventh constituent because of its Guna, Karma which are beneficial for treating diseases.

Dasamula in Vedic Literature

As mentioned above, the word 'Dasamula' has not been mentioned in Vedic literature. In Atharvaveda a term "Dasavrksa" has been mentioned and it has been said that it is benefical for the prevention and treatment of diseases of joints[1].

Sayana says that with these Dasavrksa, a Mani (an ornament) should be prepared and tied to the body of the patient who is suffering from diseases of joints[2]. In Atharva Parisista, Dasavrksa is included under Tamaka Nasana Gana (a group of plants, used for the treatment of diseases)[3].

Components of Dasamula

(A) Samhita Granthas : Caraka Samhita:

Caraka (1000 B.C.) has not mentioned Dasamula in his treatise Caraka Samhita, though he has used the word Dasamula in different formulations, while describing the treatment of different diseases. But he has not clearly enumerated the ten drugs that constitute Dasamula. He has mentioned that Patala, Agnimantha, Syonaka, Bilva, Kasmarya, Kantakari, Brhati, Salaparni, Prsnipani and Goksura are the constituents of svayathuhara mahakasaya[4]. Again in Rasayanadhyaya, Prathama Pada of Cikitsa sthana, descri... 'Brahmarasayana', Caraka has mentioned ... drugs od Dasamula under the heading ... 'Pancapancamula'[5]. But he has not termed th... as Laghu and Brhat pancamula or dasamula. ... drugs of Laghu pancamula are mentioned he... under the group named as "Vidarigandhadi" ... Vastisiddhi Adhyaya of siddhi sthana[6], Caraka h... mentioned that vasti consisting of Bil... Agnimantha, Syonaka, Gambhari and Patala, a... vasti of Salaparni, Prsniparni, Brhati, Kantak... and Vardhamana (Eranda) are used in diseas... of vata, along with catuhsneha. Here caraka h... not mentioned these drugs as Brhat and Lag... pancamula and Eranda is mentioned here in th... place of Goksura along with other drugs of Lag... pancamula.

Susruta Samhita : (1000 B.C.)

Susruta Samhita is the first treatise ... which Dasamula is clearly mentioned. But th... is some controversy in its components. Susr... has described that the two groups – Mahat (Br... and Kaniya (Laghu) pancamula are jointly ca... as Dasamula. The constituent of Kaniya (Lag... pancamula are Trikantaka (Goksura), Brhatidv... (Brhati and Kantakari), Prthakaparni (Prsnipa... and Vidarigandha (Salaparni)[7]. The Ma... Pancamula is constituted with Bilva, Agnimant... Tintuka (Syonaka), Patala and Kasam... (Gambhari). There is no any controve... regarding component of Mabet pancamula. ... matter of controversy is in the component... Kaniya pancamula. In some editions of Sus... Samhita, Eranda is mentioned in the plac... Goksura as one of the ingredients of La... pancamula[9].

Acarya Yadav ji while editing Sus... Samhita has mentioned in the foot note ... Eranda is substituted in the place of Goksur... one of the components of Kaniya (Lag... pancamula in a manuscript Susruta Samhi... This old manuscript of Susruta Samhita ...

1. Senior Lect., Deptt. of Dravyaguna, Institute of Medical Sciences,B.H.U., Varanasi.
2. Senior Resident, Deptt. of Dravyaguna, Institute of Medical Sciences, B.H.U., Varanasi

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

found by Acarya Yadavaji and is written on Tada patra.

This difference regarding component of Laghu pancamula has drawn our attention. We thought that if Eranda is mentioned as one of the component of Laghu pancamula mentioned in some edition of Susruta Samhita, then there must be some evidences in support of it. And we have searched those evidences. These are noted under "view of commentators". Such evidences (described under view of commentators) show that Susruta was in favour of Eranda in place of Goksura as one of the component of Laghu pancamula.

Astanga Samgraha and Astanga Hr daya (600-700 A.D.): In Astanga samgraha[11] and Astanga Hrdaya[12] the component of Mahat (Brhat) and Hrasva (Laghu) pancamula are described but it is not said that both are jointly called as Dasamula. Thus, components of Dasamula are not described in both the books though they have mentioned the term Dasamula in different formulations.

Kasyapa Samhita : In Kasyapa Samhita which seems to be incomplete, Dasamula is mentioned in many formulations but its components are not described. How ever, in one verse, Kasyapa has mentioned Eranda as one of the component of Khuddaka (Laghu) pancamula. He says that decoction of Khuddaka pancamula excluding Eranda along with Kala (Nilini or Sariva) and Kat vanga (Syonaka) should be used as a remedy for vatatisara[13].

View of commentators :

Cakrapani Datta (11th A.D.):

Cakrapani Datta in his "Bhanumati" commentatory of Susruta Samhita has clearly described that Susruta accepts "Eranda" whereas Caraka accepts Goksura in the place of Eranda as one of the components of pancamuli (Laghu pancamula)[14].

Dalhana (12th Cent. A.D.): Dalhana in his "Nibandha Sangraha" commentary of Susruta Samhita has accepted the view of Susruta regarding the component of Dasamula. He has accepted that Laghu pancamula (Trikantaka, Brhatidvaya, Prthakparni and Vidarigandha) and Mahat pancamula (Bilva, Aginmantha, Syonaka, Patala and Gambhari) constitute the Dasamula Gana. But further he says that some people consider, Eranda in the place of Goksura as one of components of Kaniya pacamula[15].

Hemadri (13 – 14th Cent. A.D.) :

Hemadri in his "Ayurveda Rasayana" commentary of Astanga Hrdaya Samhita has also clearly mentioned that Susruta includes Salaparni, Prsniparni, Brhati, Kantakari and Eranda under Laghu pancamula[16]. He has accepted Bilva, Agnimantha, Syonaka, Patala and Gambhari as the components of Brhat pancamula.

Sivadasa Sen (15 Cent. A.D.)

Sivadasa Sen in his "Tatva-Chandrika" commentary of Cakradatta has very clearly described that Susruta accepts Eranda in place of Goksura and Caraka accepts Goksura in place of Eranda as one of the components of Laghu pancamula. Therefore, According to Sivadasa Sen, Eranda mula should be used as one of the components of Laghu pancamula in a preparation suggested by Susruta and Goksura should be used in the prepartion suggested by caraka[17].

Summary :

Caraka has not mentioned the components of Dasamula. Vagbhata, Kasyap and Bhela have also not mentioned the components of Dasamula. Susruta has mentioned that Mahat (Brhat) and Kaniya (Laghu) Pancamula constitute the Dasamula Gana, out of which Mahat pancamula is constituted by Bilva, Agnimantha, Syonaka, Patala and Gambhari. Two types of versions are available in different editions of Susruta Samhita regarding the components of Laghu pancamula. In some editions of Susruta Samihta. Salapurni, Prsniparni, Brhati, Kantakari and Goksura are mentioned. Whereas in other texts of Susruta Samhita Eranda is substituted in place of Goksura as one of the components of

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Dasamula. Kasyapa also indicates Eranda as one of the component of Laghu Pancamula. Some other authentic evidences also prove that Susruta was in favour of accepting Eranda in the place of Goksura. Citation of such authentic references follows. Above mentioned commentators are of view that Dasamula includes Brhat and Laghu Pancamula. Brhat pancamula is constituted by Bilva, Agnimantha, Syonaka, Patala and Gambhari, Brhati, Kantakari and Eranda whereas according to Caraka, Goksura, should be used in the place of Eranda as one of the components of Laghu Pancamula.

References

1. दशवृक्ष मुंचेमं रक्षसो ग्राह्या अधियैनं जग्राह पर्वसु ।
अथो एनं वनस्पते जीवनां लोकमुन्नय ॥
- शौनकीय अथर्ववेद संहिता 2/9/1.
2. हे दशवृक्ष पलाशौदुम्बरादिदशवृक्ष शक्ल निर्मित मणे ।
- सायण ।। शौनकीय अथर्ववेद संहिता 2/9/1
3. तक्मनाशनो जरायुजः प्रथमो यदग्निरुदगातां दशवृक्ष मुंच क्षेत्रियात्वाहरिणस्य रघुष्यदों मुंचामि त्वा.....।
- अथर्व परिशिष्ट 32/1/7.
4. पाटलाग्निमंथश्योनाकबिल्वकाश्मकाश्मर्यकण्टकारि काबृहतीशालपर्णी पृश्निपर्णी गोक्षुरका इति दशेमानिश्वयथुहराणि भवंति ।
- चरक संहिता, सूत्रस्थान, 7/39.
5. पंचानां पंचमूलानां भागान् दशपलोन्मितान् ।
हरीतकी सहस्त्रं च त्रिगुणामलकं नवम् ॥
विदारिगंधां बृहतीं पृश्निपर्णी निदिग्धिकाम् ।
विद्याद्विदारिगंधाद्यं श्वदंष्ट्रा पंचमं गणम् ॥
बिल्वाग्निमंथश्योनाकं काश्मर्यमथ पाटलाम् ।
पुनर्नवां शूर्पपर्ण्यौ बलामेरण्डमेव च ॥
जीवकर्षभकौ मेदां जीवन्तीं सशतावरीम् ।
शरेक्षुदर्भकाशानां शालीनां मूलमेव च ॥
इत्येषां पंचमूलानां पंचानामुपकल्पयेत् ।
- चरक संहिता, चिकित्सा स्थान 1-1/41-45.
6. अर्धश्लोकैरतः सिद्धान् नानाव्याधिषु सर्वशः ।
वस्तीन् वीर्यसमैभगैर्यथार्हालोडनांछृणु ॥
बिल्वोऽग्निमंथः श्योनाकः काश्मर्यः पाटलिस्तथा ।
शालपर्णी पृश्निपर्णी बृहत्यौ वर्धमानकः ॥
यवाः कुलत्थाः कोलानि स्थिरा चेति त्रयोऽनिले ।
शस्यन्ते सचतुःस्नेहाः पिशितस्य रसान्विताः ॥
- चरक संहिता, सिद्धिस्थान 10/18-20.
7. तत्र त्रिकण्टकबृहतीद्वयपृथक्पर्ण्यो विदारिगंधा च कनीयः ॥
कषायतिक्तमधुरं कनीयः पंचमूलकम् ।
वातघ्नं पित्तशमनं बृहणं बलवर्द्धनम् ॥
- सुश्रुत संहिता, सूत्र स्थान, 38/67-6
8. बिल्वाग्निमंथटिण्टुकपाटलाः काश्मर्यश्चेति महत् सतिक्तं कफवातघ्नं पाके लघ्वग्निदीपनम् ।
मधुरानुरसंचैव पंचमूलं महत् स्मृतम् ॥
X X X X X
अनयोर्दशमूलमुच्यते ॥
गणः श्वासहरो ह्येष कफपित्तानिलापहः ।
आमस्यपाचनश्चैव सर्वज्वरविनाशनः ॥
- सुश्रुत संहिता, सूत्र स्थान 38/69-7
9. तत्र एरण्डबृहत्यौपृथक्पर्णी विदारिगंधे चेति कनीयान्
- सुश्रुत संहिता, सूत्रस्थान 38/
संपादक श्री यादव जी त्रिकम जी आचार्य एवं
नंदकिशोर शर्मा भिषगाचार्य प्रकाशक पं० श्यामसुन्
शर्मा, रजिष्ट्रार, आगरा विश्वविद्यालय एवं सन्नि
स्वामी लक्ष्मीराम ट्रस्ट, 1939.
10. पंच पंचकान् वक्ष्यामः - तत्र एरण्डबृहत्यौपृथक्पर्
विदारिगंधे चेति कनीयान् । इति ताडपत्र पुस्तके
- सुश्रुत संहिता, सूत्र स्थान, 38/67
पादटिप्पणी, संपादक श्री यादव जी त्रिकम जी आ
एवं श्री स्वामी नारायण राम आचार्य, सत्यभामा
पाण्डुरंग, निर्णयसागर प्रेस, बम्बई, 1915, पृष्ठ 14
11. बिल्वकाश्यमर्यतर्कारीपाटलाटिण्टुकैर्महत् ।
जयेत्कषायं तिक्तोष्णं पंचमूलं कफानिलौ ॥
ह्रस्वं बृहत्यंशुमतीद्वय गोक्षुरकैः स्मृतम् ।
स्वादुपाकरसं नातिशीतोष्णं सर्वदोषजित् ॥
- अष्टांग संग्रह, सूत्रस्थान, 12/57,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

12. बिल्वकाश्यमर्यकीरी पाटलाटुण्टकैर्महत् ।
जयेत् कषायतिक्तोष्णं पंचमूलं कफानिलौ ॥
ह्रस्वं बृहत्यंशुमतीद्वय गोक्षुरकैः स्मृतम् ।
स्वादुपाकरसं नातिशीतोष्णं सर्वदोषजित् ॥
- अष्टांग हृदय, सूत्रस्थान, 6 /165-167

13. एरण्डवर्जं खुड्डाकं पंचमूलं श्रृतं हितम् ।
कालाकट्वङ्गसंयुक्तं वातातीसार नाशनम् ।
- काश्यप संहिता, खिलस्थान, 10/83

14. .....चरके गोक्षुरकं च एरण्डस्थाने पठ्यते न सुश्रुतप्रयोगेषु, एवं पंचमूली प्रयोगे एरण्डो गृहीतव्यः । गुणतो ज्येष्ठतमो वर्गप्रथम पाठात् ।
- चक्रपाणि दत्त, सुश्रुत संहिता, सूत्रस्थान "भानुमती व्याख्या" 38/67.

15. केचिद् गोक्षुरकस्थाने एरण्डं पठन्ति ।
- डल्हण "निबन्ध संग्रह टीका"
सुश्रुत संहिता, सूत्रस्थान 38/67.

16. .....सुश्रुतस्तु गोक्षुरस्थाने एरण्डं पठति ।
- हेमाद्रि, अष्टांग हृदय, सूत्रस्थान 6/177
"आयुर्वेद रसायन टीका"

17. सुश्रुते तु गोक्षुरस्थाने एरण्डमूलं पठ्यते, चरके तु गोक्षुर इति, तेन सुश्रुतप्रयोगेषु एरण्डमूलेन, चरकादि प्रयोगेषु गोक्षुरणैव इति । शालिहोत्रादावप्येरण्डमूलेनैवेति ॥
- शिवदास सेन, चक्रदत्त, ज्वर चिकित्सा / 169
"तत्व चन्द्रिका व्याख्या"

परीक्षा के समय आपके लाड़ले को जरूरत है एकाग्रता और अधिक कार्यक्षमता की

आपके लाड़ले का उज्जवल भविष्य आपका सपना है । पर आज की तीव्र प्रतिस्पर्धा व पढ़ाई का बोझ आपके लिए चिंता का विषय भी है । ऐसे माहौल में आपके बच्चे को जरूरत है एकाग्रता व समझने की क्षमता की, उसे जरूरत है बैद्यनाथ शंखपुष्पी की, तो आज ही से अपने लाड़ले को दीजिए ...

बैद्यनाथ

शंखपुष्पी

शरबत

आज हररोग और वर्षभर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ETIOPATHOLOGICAL STUDY OF HYPERLIPIDAEMIA WITH SPECIAL REFERENCE TO STHAULYA

*Dr. Ashwini Kumar Sharma, M.D.(Ayu.)Ph.D.(Ay
**Prof. Lok Nath Sharma

All over the world millions of human beings are at the risk of early death due to the ills produced by obesity directly or indirectly.

Obestiy can be viewed as a consequence of interaction between environmental factors and the individual genetic substance in particular with susceptibility genes. These genes enhance the storage of fat and cause an increased risk of obesity.

The problem of obesity has been a very serious issue for man kind form vedic period. In Carak Samhita which is a pioneer text of Ayurveda Acarya Caraka has mentioned this condition under "Astaunindit purusha". Ati sthula is one among eight undersirable physical constitutions.

Increase in body weight 10-20% than normal weight with accumulation of fat is termed obesity. The total body fat content in young men and women should be 20%-25% when excess calories are supplied in any form. These calories are stored as fat.

The increased mortality rate in obese persons is due to its complications. The mortality rate 30% higher in persons who are 25-30% over weight and 50% higher in persons who are 35-40% over weight. The common complications are cardiovascular, respiratory & metabolic related.

Nidana is of two types: exogenous and endogenous Kaphavardhak ahara, such as snigdha, madhura pradhana dravya all included under exogenous type while dosa, dusya, dhatu, mala, agni, srotas etc. come under endogenous type.

A person with lack of physical work, excessive sleep, especially in day time, taking cold, sweet substances and taking kapha provoking diet those are generally converted into sneha which leads to increase in the fat, but the remaining dhatus do not get proper nourishment because of the channels being blocked with meda and therefore, the person becomes obese.

Acharya Charaka has mentioned the ro of genetic factors in prevalence of sthaulya a termed as bijadosaswabhava.

NIDANA

All the aetiological factors found different texts of Ayurveda may be classified a following -

1. Aharatmaka Hetu
2. Viharatmaka Hetu
   a) Saririka
   b) Manasika
3. Other-Hetu
   a) Beeja dosa swabhava

Aharatmaka Hetu :-

आहार संभव वस्तु रोगाश्चाहार संभवा: ।
हिताहित विशेषश्च विशेष: सुखदु:ख्यो ॥

The body as well as disease are caus by food. Wholesome and unwholesome foods a responsible for happiness and misery. Continu uptake of slesma vardhaka ahara is the import cause of sthaulya. Sthaulya is also included nanatmaja vikaras of kapha. Due kaphavardhaka ahara kapha dosa vitiate although properties of kapha and meda are sam so meda also vitiates. According to samany visesha siddhanta meda accumulates in the for of fat and the person becomes sthula.

"सर्वदा सर्वभावनां सामान्यं वृद्धिकारणं ।
ह्रास हेतु विशेषश्च प्रकृतिरुभयस्तु ॥"

Means the similarity of all substance always, the cause of increase and dissimilarity the cause of decrese.

The properties of ahara which responsible for sthaulya are as follows:

These above factors i.e. (madhura ras 1) (guru, sita, manda, sthira, slakshana, picchi snigdha, sthula) guna, 2) (Madhura) vipaka (sita) virya, 4) (brimhana, santarpana, vrishy rasayana and abhishyanadi) Karma, 5) (prith and apa) Maha bhuta, 6) are supposed to be

* Physician Inchrage, Govt. Ayu. Hospital, Chatarpura (Jaipur) *Ex. Demonstrator, B.L.D. Ayu. Colleg Sardar Shahar (Churu)** HOD, P.G.Dept, of Rog & Vikriti Vigyan, National Institue of Ayurveda, Jaip

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

causative factors in the growth and accumulation of meda dhatu.

Ahara with influence of above mentioned factors increases the quantity of medas which obstructs the channels. Due to this obstruction vata vitiates and stimulates the digestion with the help of tirvagni. Consequently food is disgested very quickly and person wants more food. In due course of time many serious diseases may develop. Tivragni harms the obese person as similarly the fire burns the forest.

Adhyasana is also the cause of sthaulya. Person should always consume proper quantity of food. Proper quantity is the activator of agni. Foods whether laghu or guru both require a specified quantity for digestion. According to Acharya Charaka.

यावद्धयस्याशनमशितमनुपहत्य प्रकृतिं यथाकालं
जरां गच्छति तावदस्य मात्राप्रमाणं वेदितव्यं भवति ।

(C.S.Su. 5/4)

The amount of food which, without disturbing the equilibrium gets digested as well as metabolized in proper time is to be regarded as proper quantity.

Role of some Ahara dravyas which cause Sthaulys:-

1. Sukadhanya :- This group of Ahara dhanya contains all rasas and Vipaka is madhura. This group of ahara dhanya mainly possesses carbohydrate content. These dravyas basically contain prithvi, jala mahabuta. Excessive intake of this varga provokes Kapha dosa, which ultimately leads of sthaulya.

2. Samidhanya :- In this group the main dravyas are masa, mahamasa, Alasi, etc. These dravyas usually contain madhura rasa pradhan and having guru and sita guna. Due to these qualities the excessive intake leads to Kaphavridhi.

3. Mamsa varga :- Mamsa Vargas are having the gunas like vrishya, snehakara, Gurupaki and brimhan. Intake of mamsa dhatu, increases mamsa dhatu according to samanya visesha siddhanta.

4. Saka Varga :- In this varga various types of sakas are available, Ex:- Kanda saka, phal saka, mula saka, Kanda saka etc: Some sakas are having Abishyandi, Guru and kaphaja gunas. Excessive consumption of there sakas lead to kapha vridhi.

5. Phalavarg :- Draksa, Narikela, Kharjura, badam, akshot, etc. these fruits lead to kapha vridhi & medovridhi, excessive consumption in regular basis leads to medovridhi.

6. Harita varga :- This varga contains, Madhura Vipak and Guru, Kapha vardhak gunas. Excessive intake of these dravyas lead to kapha vridhi, medovridhi.

7. Madya Varga :- Usually this varga contains Amlaras, Usnavirya and Amlapakee qualities. Acarya Caraka explains excessive intake of medya leads to Medovaha srotodusti. The Madya prepared by wheat, rice, Gud will vitiate the medo dhatu.

8. Goras varga :- All the products from milk like curd, ghee, butter, cheese comes under this group. These dravyas are Madhur in ras, madur in vipak. And having Gunas like Guru, kapha vardhak, dhatuvardhak and sitavirya. Excessive consumption of this varga leads to medovridhi.

9. Iksu varg :- All the products from Gud will come under this varga, and leads to kapha vridhi on excessive consumption.

10. Krutanna Varga :- Various types of preparation methods of ahara, like fast foods, icecreams and cold drinks lead to kaphavridhi, bacause in some preparations. To enhance the taste, excessive ghee, butter, cheese and various oil are used. These lead to accumulation of lipids in the body.

11. Aharopayogi Varg :- In this varga dravyas, are described for the taste of ahara, ex. Oil, Sugar, Salts etc. some oils contain high cholesterol, high free fatty acids. These products cause excessive accumulation of lipids, hypertension and kidney disorders.

12. Jala varga :- According to Acarya Susruta, Nadi jal contains Abhishyandi, guru guna, and leads to kapha vridhi.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Viharatmaka Hetu :-

Sareerika :- Viharatmaja Hetu means that the person's physical activity, routine work and occupation come under viharatmja Hetu. obesity is a type of disease that is caused by decreased physical activity and increased in put of diet calories.

Avyayam :- The person who doesn't get physical exercise properly, leads to building of calories inside the body. The physical exercise is very useful for the body because it will give "Laghuta" to the body and it will stimulate the Agni, which increases the digestion power and causes medokshya.

According to Carak and Susruta that Avyayama is the main cause for sthaulya and explained the Avyayama leads to Agnimandya, which leads to dhatuvagnimandya, and finally sanchaya of meda will happen.

Avyavaya :- It means lack of sexual activity. We can take this nidana in the form of lack of physical exercise.

Asyasukha :- Vagbhatachrya explains that sitting in a single position continuously without changing position, will lead to sancaya of meda in particular sites like Udara, nitamba, kati.

Swapana sukh :-

According to Chakrapani swapna sukh means undistrubed sleep which causes kaphavridhi, kaphavridhi leads to "Atinidra" and atinidra causes kapha prakopa. Kapha prakopa supports the sanchya of meda.

Diwa swapana :-

Acarya Caraka has mentioned diva swapana also as a reason for sthaulya. Except greeshma rutu, in remaining all rutus diwa swapana is prohibited. The reason behind it is diwa swapana gives snigdhata to the body and vitiates kapha and pitta.

दिवास्वप्नात प्रकुप्यतेः श्लेष्मपित्ते

Manasika Hetu :-

Manasika hetu also contributes in production of sthalulya disease. A peson without any mental tension and stress will have well nurished dhatus, and snigdhata will also develop

a) Achinta :-

"अचिन्तनाच्चेत्यादिना प्रकृष्टं बृंहणकारणमुच्यते"

Acharya Chakrapani explains achinta as a cause of "Brimhana".

According to Caraka achinta is utpadaka cause for sthaulya.

b) Nitya Harashata :- In this context the meaning of harsa is sukha. Always a person feels happy and comfortable leads to kaphavridhi. Due to kapha vridhi snigdhata develops in the body. Snigdhata in the body for a longer period may lead to sanchaya of meda.

4) Other Hetu :-

a) Beeja Swabhava :- Acarya Caraka has mentioned, Beejadosa as a causative factor for obesity. According to Chakrapani.

बीज स्वभावदिति स्थूलमातृपित्तृ जन्यत्वात्

Due to dusta sukrartava the coming generation will be affected by dusta sukrartava janya rog. Sthaulya is said to be affected to children even if one of them had sthaulya Vyadhi. This can be taken as hereditary obesity.

Some special races like Africans, they are normally obese, above normal weight.

b) Ati santarpanaja :-

Acarya Caraka has mentioned in 23rd chapter of Sutrastana, that sthaulya is one of the diseases caused by atisantarpana. According to vagbhata santarpana is main causative factor for sthaulya. Santarpana comes under dvividhopakrama which is a type of chikitsa. The upakrama of santarpana mainly consists of prithvi and jala mahabhuta. Santarpana has Brimhana, snehana and sthambana.

Brimhana - It will give sthulata to sareera.
Snehana - It will give vishyanda to sareera.
Sthambana- It will give mruduta and kleda.

These three upakramas are included in santarpana. When a person takes these upakramas excessively kapha dosa will increase. Due to this there will be some obstruction in the pathways of various dhatus. Finally this will lead to some diseases like sthaulya, prameha etc.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

PURVARUPA

In case of medoroga there is no availability of purvarupas in Ayurvedic classics, because the pathogenesis continues for a long time even after the establishment of disease. Usually purvarupa will be seen after complete pathogenesis. In this context the laksanas will be expressed in the purvarupavastha upto some extent. There is no special purvarupa for sthaulya mentioned in Ayurvedic classics. But some symptoms like Apachan, Angamard, Alasya and Gourava, will appear a little bit early. We can take these laksanas as purva rupas of sthaulya.

RUPA

The main clinical manifestation are ;

Calsphikudarstan :

According to caraka-due to adiposity there is enlargement of buttocks, abdomen, breasts, to the extent that they become pendulous during movement. Due to inapropriate growth and development of dhatu the person feels weakness inspite of his bulk.

अतिस्थूलस्य तावदायुषी हसी जवोपरीथं कृच्छव्यवायता । दौर्बल्यं दौर्गन्ध्यं स्वेदाबाधः क्षुद्यातिमात्र पिपासातियोगश्येति भवन्त्यष्टौ दोषः ॥

Acarya Caraka explained eight fold disabilities that efflict a corpulent person as follows

1. Ayushohrasa
2. Javoparodha
3. Kricchra Vyavayata
4. Daurbalya
5. Daurgandhya
6. Swedabadha
7. Ksudatimatra
8. Pipasatiyoga

Ayushohrasa (Shortening of life span)

In very corpulent person the meda dhatu alone increases and not the other dhatus. In other words there is a profound malnutrition regarding the state of other vital tissues, as the fat increases at the expense of other tissues.

Obesity is associated with an increased rate of mortality at all ages. The level of mortality varies more or less in proportion to the degree of obesity. There is evidence that substantial reduction of the body weight of obese people is more than sufficient to diminish the great death rate.

2. Javoparodha (Hampering of movement)

Due to the flabbiness or un-stability or lack pf strength and heaviness of the body the corpulent men get hampered in their movement. The mechanical difficulties due to increased bulk of the body can cause considerable strain on the skeletal system resulting in weakness of the knee and other weight bearing joints. It affects on the arch of the feet predisposing the development of flat feet. Degenerative changes like osteoarthritis makes the patient physically inefficient to carry out any kind of movement or work.

1. Krichavyavaya (Difficulty in sexual intercourse)

Due to the obstruction of genital passage by fat the sexual intercourse becomes difficult. Many sex organ disorders are noticed in recent time in association with obesity in both sexes. The menopause, normal or artificial is often followed by increase in weight. Apart from mechanical difficulties obesity is known to be associated with endocrinal dysfunction in both the sexes. An endocrine aetiology for obesity has also been postulated. Though in man it is possible that endocrinal dysfunction is more often associated with a disorder in fat distribution than in synthesis, also it is likely that these endocrinal dysfunction are often the result rather than the cause of obesity.

''शुक्रावहुत्वान्मेदसाऽवृत्तामासोत्वाच्च कृच्छव्यवायता''

In sthula person although only meda dhatu is nourished and rest dhatus do not get nourished by which end dhatu sukra form less in amount and vitiated kapha and meda obstructs the sukravaha srota. Due to alpa sukra and obstruction of sukravaha srotas person feels difficulty during vyayaya.

Obstetrical risks:-

Menarche occurs at a younger age in heavy women and delayed in light weight women, Studies claearly indicated that frequency of toxaemia in pregnancy and hypertension are

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

significant among the heavy women. In addition the duration of labour becomes longer. Thus there is more risk of obstetrical complications in obese women. The weight of infants born to obese women was also found heavier that the weight of babies born to normal women.

4. Dourbalya :

"दौर्बल्यमसमत्वाद्धतुनाम"

(C.S.Su. 21/41)

Due to imbalance or disturbance in dhatu equilibrium or in the relative growth of the tissues of body there occurs 'daurbalya' in body. Indeed the obese person inspite of his great bulk suffers, from physical weakness. In corpulent person due to many external or internal factors which combine to favour the disproportionate growth of only the meda dhatu, the person suffers from general weakness.

2. Daurgandhya and swedabadha :

According to Caraka it is due to the presence of morbid fat from the innate quality of the fat element. The excessive sweating is on account of the admixture of fat with kapha. Its fluidity, excess and heaviness and its inability to bear the strain of exercise, these result in the distress caused by the sweat.

3. Kshudatimatra and pipasatiyoga

It occurs due to tikshnagni with vitiated vayu in the alimentary tract. There occurs excessive hunger and excessive thirst. Due to the increased secretion of insulin, growth, promoting hormone, appetite is increased.

a) Saithilya or Gatrasad :

Flabbiness and looseness of joints are known as shaitilya or gatrasada. Main dosa and dusya are kapha and meda respectively in obese persons, kapha and meda are guru in nature. Guru guna produces Shaithilya in body. Due to the excessive accumulation of meda on its site the obese person becomes less active.

b) Nidradhikya, tandra and swapna :

When a person becomes tired physically and mentally then he wants to sleep

यदातु मनसि क्लान्ते कर्मात्मनः क्लमान्विताः ।
विषयेभ्यो निवर्तन्ते तदा स्वपति मानवः ॥

(C.S.Su. 21/3

In sthaulya due to the kapha and meda tamoguna effects samgyavahi srotas and the person sleeps.

तत्रयादा संज्ञावाहिनि स्रोतांसि तमोभूयिष्ठः श्लेष्मा प्रतिपद्य

(C.S.Sa 4/3

Kshudraswasa : (Dyspnoea on exertion)

According to Susruta when respiratory rate increases during work and decreases during resting condition is known as Ksudraswasa. The obese person become restless during small work even, because inspiration and expiration depend on the movement of diaphragm. In obese person due to the excessive accumulation of fat in abdomen the diaphragm can not move properly and lead to dyspnoea on exertion.

Hypoventilation syndrome : (Pickwickian syndrome) this is characterised by hypersomnolence both at night during day in obese individuals along with carbon dioxide retention, hypoxia polycythaemia and eventual right heart failure.

Moha :- This character of sthaulya has been described in madhava nidana, Bhava prakasa and yogaratrakara. It indicates manasika vikriti. Ama which is formed due to agnimandya effects manasa dosa, raj and tama by which moha occurs. Susruta described moha in the character of ojokshaya and balakshaya.

Mukha madhurya :- This is due to excessive accumulation of kapha dosa.

Karapada anaga suptata : There is a feeling of numbness in hands and feet of obese person which occurs due to the provoked kapha by vata.

Kara pada anga daha :- This is due to provoked pitta by kapha dosa. There is burning sensation in hands and feet.

Mukha talu kantha sosa, snigdha gatra and amlapitta are also found in sthaulya patient.

SAMPRAPTI

In Ayurvedic classics pathogenesis is divided into many stages. Acarya Susruta

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

described the sequence of events taking place during the evolution of a disease depicting six distinct stages of pathogenesis. These are classically termed as Shatkriyakala. The concept of kriyakala is a unique holistic way of predicting the stage of progression of a pathology from a reversible preclinical stage to a manifest clinical disorder, open to further advancement of the disease with complications of irreversible nature. The fundamental philosophy behind the concept is to advocate the warrant for no early diagnosis and appropriate intervention at appropriate time in order to reverse the disease process.

The six kriyakalas are

1. Sanchaya - Accumulation of doshas
2. Prakopa - Provokation of doshas
3. Prasara - Spread of vitiated doshas
4. Sthana Sansraya - Localisation of vitiated doshas at defective sites.
5. Vyakthi - Manifestation of disease.
6. Bheda - Further advancement of complications.

When we apply the concept of kriyakala to sthaulya first the jatharagnimandya occurs due to excessive intake of kapha vridhikara, Medo vridhikara ahara and vihara and leads to formation of ama. Then ama along with kapha combines with rasa dhatu and is circulated through out the body. When it reaches to Medo dhatu there medhodhatvagnimandya occurs and further dhatu poshana is stopped, but medhodhatu will be going on increasing. Due to enormous increase of medhodhatu it will get deposited in srotas and cause srotorodha. After that samana vayu is obstructed by meda, and it stimulates Jatharagni and leading to excessive appetite.

We can discribe the stages of kriyakala in the pathogenesis of sthaulya like the following :-

1) Sanchaya - Kapha vridhi in its sites.
2) Prakopa - Excessive kapha leads to Jatharagni mandya
3) Prasara - The ama and kapha circulates through out the body.
4) Sthanasansraya - The ama and kapha reaches Medo dhatu and vitiates the medhodatvagni.
5) Vyakthi - The posana of remaining dhatu will be stopped and medodhatu starts to get accumulated, and pachakagni vridhi occurs.
6) Bheda - Advanced stage of sthaulya, hyperlipidaemic stage, leads to complications.

In the samprapti of sthaulya the components which play important role are as follows.

1. Dosa
2. Dusya
3. Agni
4. Medovah srotas

Dosa :-

(a) Kledaka Kapha :- Kapha is swadu, snigdha, sita, mridu, sthira, slaksna, Picchila, guru, sandra, manda and sukla by nature. It gets aggravated by sleep during day time, lack of exercise, intake of sweet, sour, saline, cold, unctuous, heavy, shiny, ama and abhishyandi type of food, etc. Kapha cause disintegration and kledana of food for which it is called kledaka kapha.

(b) Pachaka pitta :- It is located between pakvasaya and amasaya. It helps by its own power in the immediate digestion and disintegration of four types of foods.

(c) Samana Vayu :- The sthana of samana vayu is between amasaya and nabhi and it moves in kosta. It has got control on Jatharagni.

Dusya :-

Medo dhatu is dominated by prithvi, agni and jalamaha bhuta.

There are two types of Medodhatu, one is posaka and second is posya. Among these two posakamedodhatu is mobile in nature which is circulated in the whole body along with the rasa, rakta dhatu gives the nutrition to the posya Medo dhatu.

This can be correlated with the blood cholesterol lipoproteins and triglycerides etc. The second one is posyadhatu which is immobile in

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

nature, which is stored in Medodharakala. This tissue is spread underneath the skin and mainly the sites of this dhatu are buttocks (sphig) abdomen (Udara) and asthi.

The term hyperlipidaemia denotes that the levels of lipids increase above the normal range. This may be either blood lipids or total bodylipids. But at the initial stage the accumulation of meda (lipids) in whole body occurs first, then in latter stage the excess meda reaches blood and cause excessive levels of lipids. But the morbid complications like cardiac diseases and other metabolic disorders are mainly caused by high levels of blood lipids. In many obese subjects it was observed that even though they are 20%-30% more than normal weight, their blood lipids were in normal range. All those obese persons were in the age group of 35-50. So this indicates the complicative stage if obesity depends upon age factor also.

Agni :- Among many factors in the manifestation of a disease agni is considered as the most important factor. There are 13 types of agnis in the body which are responsible for digestion of food and metabolism at different levels.

Lowering of Dhatvagni leads to many metabolic disorders. Medodhatvagnimandya cause defective fat synthesis and distribution.

Ama :- Ama plays a major role in the pathogenesis of sthaulya. In this context ama is formed due to mandagni which is caused by kapha vardhaka ahara and vihara.

Then ama along with kapha combines with rasa dhatu and circulates through out the body. This will reach Medo dhatu and cause Medodhatvagnimandya, which hampers the development of further dhatus. That is why the obese persons will be rasasara, rakthasara, mamsa sara and Medosara, the nourishment of above dhatus will be normal bacause the individual dhatvagnis are normal. Due to medo dhatvagnimandya the further dhatus like asthi, majja, sukra will not be nourished properly. This would be the cause behind the patient getting symptoms with these dhatus. So this can explained.

Mandagni (Jatharagni) Ama in dha Dhatvagnimandya (Medo)

INVOLVEMENT OF SROTAS PATHOGENESIS.

Srotas refer to such structures channels in the body which comprise of hol space, which has opening and which carr certain materials from one part of the body the other.

In every disease state srotorodha is t most important pathogenesis, unless th channels get blocked. The biosphere of the bo and the milieu interior remains intact an dhatusamya prevails.

There are thirteen types of srotas in the body. Among them medovaha srotas is fourth an important srotas, in the prevalence of sthaulya

Medodhatu gets nourished by rasa. Th channels which transport the posaka medodha to give the nutrition of upto the site of posy medodhatu or vessels carrying the nutriti material up to the site of Medodhatu can b considered as medovaha srotas.

If we observe keenly the nidana i initiation for the samprapthi for sthaulya Nidan precedes agni mandya in first step. In secon step the agnimandya leads to ama conditio which ultimately leads to agnimandya in dha which is also called dhatvagnimandya. The thi step which is very important is that the diminishe nourishment of further dhatu and gradua increasing Medo dhatu. Some Acaryas say th this Medo dhatu is not pure Medo dhatu. This dusita Medodhatu, which leads to the conditio called sthaulya.

Acarya Susruta has mentioned th complications and explained that all the stage in the course of the disease are favoured avritmarga of srotas. .

The main complications mentioned b Acarya Susruta are -

1. Prameha pidaka
2. Bhagandara
3. Vidhradi
4. Vata roga

In Ayurvedic classics we can find some

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

other complications mentioned by various Acaryas. These conditions are not only related to the effect of corpulence but also to disturbance in carbohydrate and fat metablism.

These complications are -

1. Prameha
2. Prameha pidaka
3. Kotha, kandu
4. Pandu
5. Sotha
6. Kamala
7. Pliharoga
8. Mutra kricchra
9. Vata roga

Prameha :- Although it is not necessary that every obese should turn as an diabetic yet, it is invariably observed that all the maturity onset diabetic are obese. The aetiological factors for medoroga and prameha are same. It is also important factor that the biochemical changes in ketosis and stage of diabetes are almost the same as those found in fasting state due to the disturbance of fat metabolism.

The relationship between obesity and diabetes mellitus is complex. Increasing body weight and age are both associated with varying frequency of diabetes mellitus. However, not all obese patients develop diabets mellitus. Experimental evidecne suggests that obesity increases the demands on pancreas to produce insulin probably due to increased concentration of amino-acid. When the pancreas is unable to meet these demands because it has been injured by chemical, viral or genetic factors, then the demand of obesity may lead to failure of pancreas. Role of medodhatu in the pathogenesis of medoroga and prameha is quite obvious. In medoroga there is more and more formation of medodhatu, at the cost of other dhatu.

These above facts are only for shula prameha or maturity onset diabetes. Krisha prameha occurs due to dhatu kshaya. So juvenile and maturity onset diabetes is a separate disease entity because they differ entirely in aetiopathogenesis and management.

Prameha pidaka :

This is also complication of sthaulya and prameha both. Prameha pidaka occurs due to dushya meda causing obstruction of channels. Hence it is not necessary that prameha pidaka is a complication of only diabetic condition. It may be present without prameha.

Sadhya sadhyata (Prognosis)

In Ayurvedic texts the Sadhya sadhyata of sthaulya is not described but according to general principles regarding the Sadhya sadhyata of sthaulya it could be said that a patient suffering from sthaulya from a short duration, having the symptoms of lesser severity and without any complications and involvement of doshas and dushyas are not more than one is assessed as sadhya or easily curable sthaulya.

When Nidana, purvarupa and complications are moderate and disease is chronic it is difficult to cure and is thus kasta sadhya.

Sahaja or inherited sthaulya is asadhya.

स्थौल्यकार्श्ये वरं कार्श्य समोपकरणौहितौ ।
यद्युभौ व्याधिरागच्चेत् स्थूलमेवातिपीड्येत् ॥
(C.S.Cu. 21/17)

Out of obese and lean, the obese is more affected. If some diseases arise and the lean is better because the chikitsa of sthaulya is difficult in comparison with krisa person. The aim of treating sthaulya is to reduce vata, agni and meda. Neither santarpana nor apatarpana is efficacious for correcting sthaulya, because santarpana cikitsa pacifies vayu and agni but at the same time vridhi occurs in meda dhatu.

On the other hand apatarpana cikitsa reduces meda but it provokes the vayu and agni in the body.

गुरुचातर्पणं चेष्टं स्थूलानापं कर्शनं प्रति
कृशनां बृहंणार्थं च लघु संतर्पणंच यत् ।
(C.S.Su. 21/20)

For reducing the bulk of the obese heavy and non saturating diet should be given. In case of krisa to promote the bulk light and saturated diet should be given.

There is very limited choice of drugs and diets for sthula person, so sthaulya is a kasta sadhya vyadhi and it comes under daruna varga. It is easy for an obese person to lose upto 5 kg weight. This accounts for the temporary success. It is natural to suppose that adults who have been obese from childhood are less likely to achieve success with diets than those who have become obese while adulthood.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Importance of Diet and Exercise for the patient of Diabetes mellitus : An overview

*Ajai Kumar Pandey
**R.H. Singh

Diabetes mellitus is one of the most common non-communicable disease globally. It is the fifth leading cause of death in most developed countries. Its incidence has been estimated to be around 15% of Indian population. Diabetes is certain to be one of the most challenging health problems in the 21st century. It is not a problem of the present era only. It has been clinically known disease since evolution of human being (Vedic Period). All classical texts refer it to a disease mentioned in Ayurvedic literature as prameha, which appears to have very strong correlation and similarity to Diabetes mellitus. Diet and exercise are very important aspect for a diabetic life.

In ancient time this disease was not so prevalent because in those days man used to work very hard physically for collecting food items. Moreover, there was not much use of sweets, fast foods and ready-made fatty foods.

In modern life style physical labour has become a very insignificant part of one's life with all now inventions and many other items of comfort being invented in this modern machine age. Mental tensions and anxieties have increased extremely on other hand. Sugar and sugar mode product like Chocolates, Pasties, Cold drinks and Foods containing fats are used to a great extent today. All these things are responsible for development of Diabetes in modern era.

Approximately 50% of new cases of Diabetes can be controlled adequately by diet and exercise.

Diet for diabetic patients:

Dietary measures are required in the management of all Diabetes patients to achieve the over all therapeutic goal, normal metabolism. The following are the aim of dietary management-

1. To Abolish symptoms of hyperglycemia.
2. To maintain long term nutritional balance for normal growth and development in children, in pregnant and lactating mothers.
3. To terminal and snacks to prevent wide swing in blood glucose concentration in diabetics.
4. To avoid hypoglycemia associated with therapeutic agent (Insulin and sulphonylureas)
5. To avoid atherogenic diet or those which may aggravate diabetic complications.
6. To achieve weight reduction in obese patients to reduce Insulin resistance, hyperglycemia and dyslipidaemia.

The frist step in preparing any dietary regimen is to advise the individual patients daily energy requirement like :

An obese middle aged or elderly person-Required energy 1000-1600 Kcal./day

An elderly person not overweight - Required energy 1400-1800 Kcal./day

A young active person - Required energy 1800-3000 Kcal/day

The body weight should be maintained at or slightly below the ideal for the patient's height. Diabetic persons should have 30-60% of the daily calorie intake derived from carbohydrate, about 10-15% from protein and about 30-35% from fat, out of total calorie requirement. A Diabetic should not eat a balance with diabetic diet for maintenance of good glycemic control. All the eatable items in the world are made up of seven constituents, which are persent in different ratios in each of them. These seven constituents are as follows -

1. Carbohydrate :- The carbohydrate should be taken in the form of starches and other complex sugar. Simple sugars such as glucose and sucrose should generally be avoided because they may cause a sudden rise in blood glucose level.

* MD (Ay)-III
** Professor, Dept of Kayachikitsa, Faculty of Ayurveda, Institute of Medical Sciences,B.H.U.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

The daily intake of carbohydrate ranges from 100 gm to 300 gm. In the later case each of 3 main meal can provide 60 gm carbohydrate, each of 3 snacks, 30 gm and 30 gm comes from in 0.5 liter of milk taken in the curse of the day. 1 gm of carbohydrate provide 4 calories (energy) in the human body. It is found in grains, bread, vegetable, rice, edible seeds, peas, lentils etc.

2. Protein : In patients with NIDDM, consumption of protein along with carbohydrate will lower the blood glucose concentration due to amino acid stimulation of insulin secretions. This helps to compensate for the defect in glucose mediated insulin secretion seen in so many of these patients. One gm protein yield 4 calories (energy). Protein also promotes satiety and helps both types of diebetic patient to adhere to the carbohydrate allowance. A regular intake of milk is most essential (to get first class proteins) for diabetic who is a vegetarian too. Animal proteins (meat or egg) may prove harmful, hence avoided and always good to choose low fat protein food like pulses, lentils, beans, legumes, cheese, skimmed milk. The patient should try to restrict his protein intake around 15% of his total caloric requirement in case of diabetic nephropathy.

3. Fat : In diabetic it is risk factor for macrovascular disease. Intake of fat should be restricted to 30-35% of energy with less than 10% saturated fat, less than 10% polyunsaturated fat and 11.15% monounsaturated fat. The later is associated with an improved lipid profile in type 2 diabetes. The use of monounsaturated oils in the diet eg. olive oil, peanut seed oil etc are also beneficial . 1 gm fat yield 9 calories when metabolized in the human body.

4. Fibres : They themselves do not yield energy, hence are very important ingredients of a Diabetic's diet. Fibres are very helpful in controlling and preventing diabetes related complications. Fibre helps in delaying digestion of carbohydrate and therefore the blood glucose level does not shoot up alarmingly due to slowing of absorption.

As fibres do not yield energy, hence they may be used in plenty to giving felling sensation. A diabetic should choose fibre rich foods in diet such as –

1. Whole meal. whole grain product and brown rice.
2. Fresh fibrous fruit as whole.
3. Green leafy, non starchy seasonal vegetables and salad.
4. Legumes, pulses, lentils, beans, dry pea etc.

5. Elements and Minerals : Such as Zinc, calcium Iron, Phosphate, Chromium, Copper, Calcium carbonate, Sodium chloride etc are all essential to keep a person alive and healthy. Because many biochemical reactions and production of several enzymes and hormones in the body require these minerals to be present in the body. These are present in natural forms in vegetables, cereals, meat, milk, fruits and other eatable items indifferent quantities and ratios, hence regular intake is must.

6. Vitamins : Vitamins are the precious gift of nature and are responsible for the proper functioning of the body.

The immune status of a human body early depends upon the availability of vitamins to the body. A diabetic has poor level of immunity, hence eats foods rich in vitamins and then only can remain healthy. They need in one quantity of vitamin as compared to a non-diabetic. If the does not do so, he will definitely develop disease pertaining to lack of vitamins and diebetic complications.

On the basis of solubility vitamins could be of two types -

1. Water soluble - Vit. C and B complex groups.
2. Fat soluble - Vit. A, D, E and K.

7. Water : Water itself is non energetic in human body. So it can be used in large amounts to give a filling sensation. In a few countries such as in Japan, it is used as a main treatment plan for controlling diabetics and known as hydrotherapy.

In general alcohol should be avoided.

Weight Maintenance Diet : Dietary

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

measures are an essential part of treatment of diabetic patients who require treatment with sulphonylureas or insulin. In most part of the world the carbohydrate exchange (unit recommended) is 10 gm. The table – I shows the basic food unit used in diabetic diet in U.K. and the table - II shows how a diabetic weight maintenance diet is constructed.

Table – 1 : Basic Food Unit Used in Diabetic Diet

Food	Carbohydrate (gm)	Protein (gm)	Fat (gm)	Energy (kcal)
Carbohydrate - 20 gm bread 10	10	1.5	0.3	50
Protein - 30 gm meat	-	7	5	70
Fat - 15 gm butter	-	-	15	110
Milk - 585 ml	30	18	24	400

Table - II : Method of Constructing a diabetic weight maintenance diet

Exchange	Carbohydrate (gm)	Energy (Kcal)
21 carbohydrate	210	1050
2/3 Pint Milk	20	260
4 protein	-	280
2 fat	-	220
Total	**230**	**1810**

The diet contains 1800 kcal with 230 gm carbohydrate, 72 gm proteins, 66 gm fat providing 51%, 16% and 33% of calories respectively.

The 23 carbohydrate and 4 protein exchanges are distributed throughout the day according to the eating habit and daily routine of the patients.

Useful Carbohydrate Exchanges

Each item on this list=
1 carbohydrate exchange =10gm carbohydrate
* ½ slice bread from a large loaf
* 1 large digestive biscuit
* 2 cream crackers
*2/3 teacup natural grape fruit juice
* 1 medium size eating apple or orange
* 2/3 small potato
*10 grapes
* 1 small banana
* 1/3 pint (200 ml) milk
* 1 teacup cooked porridge
* 1 teacup cream or tinned soup
* 1 small plain yoghurt

If a diabetic understand the meaning of a above said balanced diet and is well versed with the methods of preparing one, the major part e can be considered to be under control.

Exercise for Diabetic Patient.

Regular physical exercise was recognized in ancient time as an important part of treatment of diabetic mellitus and was frequently prescribed during the preinsulin era for patients who would now be diagnosed as having non-insulin dependent diabetics mellitus (NIDDM).

In 1919, Allen et al, demonstrated that exercise lowers the blood glucose level concentration and transiently improves glucose tolerance in persons with diabetics. In 1926 Lowrence observed that exercise potentiates the hypoglycemic effect of insulin (injected). Although exercise may create significant problems in blood glucose regulation in insulin treated patients, it plays an important therapeutic role in management of NIDDM and is often prescribed along with diet and oral hypoglycemic agents, for this purpose. Yogic exercises are very useful in the condition where stress is the primary cause of diabetes. Various Asanas (postures) compressing abdomen may improve liver functions and also stimulate the pancreas.

Benefit of Regular Exercise :

Many benefits of regular physical

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

exercise have been identified for patients with diabetes mellitus as given in following points –

1. Lower blood glucose concentration during and after exercise.
2. Lower basal and post prandial insulin concentration.
3. Improved insulin sensitivity.
4. Lower glysylated haemoglobin levels.
5. Improved lipid profile i.e.↓TG,↓LDLand ↑HDL
6. Improvement in mild to moderate hypertension.
7. Increase energy expenditure.
8. Cardiovascular conditioning.
9. Incresed strength and flexibility.
10. Incresed sense of well-being and enhanced quality of life.

Risks of Regular Exercise :

In addition to the benefits of exercise a number of significant risks for patients with diabetes mellitus have been recognized temporarily or in a few cases even permanently. These are as follows –

1. Hypoglycemia if treated with insulin or sulfonylureas
   - Exercise induced hypoglycemia
   - Late onset Post exercise hypoglycemia
2. Hyperglycemia after very strenuous exercise.
3. Precipitation or enervations of cardiovascular disease like – Angina, M.L., Arrhythmias, Sudden death.
4. Worsening of long-term complications of diabetes i.e. proliferative retinopathy, Nephropathy, Peripheral neuropathy, Autonomic neuropathy.

General Guideline or Exercise in Diabetic Patients

1. Exercise should be done preferably in the morning in an open place and in a relatively pollution free atmosphere.
2. Always eat somethings before starting excercise to prevent hypoglycemia.
3. Insulin treated patent keep some sweets with them before starting exercise.
4. Timing of exercise gradually increases from 10 or 20 minutes to the optimum (30 to 45 minutes).
5. Yogic exercise Asanas (Padamasanas, Bhujangasana, Sasankasna, Sarvangasana, Yoga mudra, Salbhasana, etc) and paranayama should be practised regularly, because these exercises provide mental relaxation.
6. In stay of diabetic complications vigorous exercise should be avoided.
7. Exercise like body building weight lifting a 100 meter or sprint etc are example of anaerobic exercise and these should never be per formed.

In this regard mental exercise are very helpful in maintaining a smooth control on diabetes. These include relaxation exercise and a few Yogic Asanas, they help lot in releasing mental stresses and strains. A diabetic patient should inculcate the habit of performing these exercise regularly and as a daily routine. They may be such exercise at any time of the day.

It is now clear that regular physical exercise plays an important role in both prevention and treatment of diabetes.

By seeing above facts we can say that a balacned diet, timely food and suitable exercise are all responsible for a good and healthy life in not only diabetic patients but also for all persons. Inclusion of element and mineral with vitamins in diet and removel of mental stresses and strains by means of yogic relaxation exercise are all means of keeping away or controlling of this hazardous disease.

References

- ADA: Clinical Practice of Recommedations, Nutrition recommendations and principles for people with DM.Diabetes care 19 (Suppl 1):S16, 1996.
- Diabetes Mellitus : A fundamental and clinical text by Derek LeoRoith, Simeon I, Taylor Jerrald M. Olefsky, Lippincott – Raven publishers, Philadelphia, New York : 1996
- Harrison's Principles of Internal Medicine by Fouci Braunwald, Isselbacher Wilson, Martin, Kasper, Hauser, Longa, McGraw – Hill,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Health Publisher Division, USA 15th Ed., 2000.

- Helmrich SP, Regland DR, Leung RW, Raffenbarger RS. Physical activity and reduced Occurrence of NIDDM. N Engl. J. Med., 1991 : 325 : 147.
- Hortan ES - Role and management of exercise in DM. Diabetes care, 1988, 11 : 201.
- Lawrence RH - The effect of exercise on Insulin action in diabetes. Br. Med. J., 1926; 1 : 648.
- Manson JE, Nathan DM Kroleski AS et al. A prospective study of exercise and incidence of diabetes among U.S. made physicians JAMA 1992; 268 : 63.
- Pandey A.K., Singh R.H. (2002) : M.D. (A) Thesis, Dept. of Kayachikitsa, IMS, BHU study of the Immune Status in Patients Diabetes Mellitus and The Role Panchkarma and Naimittika Rasayana.
- Sashtri K.N. and Chaturvedi G.N. et al Caraka Samhita with Vidyotini Hin Commentary Vol. – II, 12th Ed. Chaukhamb Bharati Academy, Varanasi, 1984.
- Willett WC - Diet and Health : what sho we eat ? Science, 1994; 264 : 532.

बैद्यनाथ

मधु

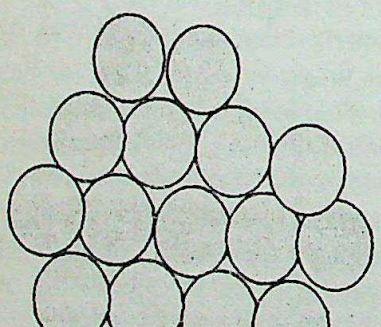

शरीर को शीतलता पहुँचाता, भूख बढ़ाता है। आँखों के लिए उपयोगी एवं कांतिवर्द्धक हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

METHOD OF ADOPTING LABORATORY INVESTIGATIONS IN DIAGNOSING KAMALA

Dr. Aruna. M.D. (Ayu.)

Introduction

The word *Kamala* seems to be very easy for diagnosis. Even a layman can understand the disease by yellow discolouration of eyes, urine etc. But it is equally difficult for differential diagnosis. Because, many organs and mechanisms are involved in its pathogenesis, hence it is absolutely necessary to know each fraction of *samprapti* of different types of *kamala* in detail. Because our line of treatment is based on *samprapti vighatanas* i.e., disintegration of *samprapti*. It is also highlighted in our classics कि परीक्षकारिणो हि कुशला भवन्ति !, the treatment should be adopted only after thorough examination of the patients and investigations of abnormal constituents of the body.

Kamala is considered as one of the Rakta pradoshaja vikara, Ranjaka pitta and its sthana yakrit are also involved in its samprapti, To know more about dushti of ranjaka pitta, rakta and functions of yakrit, the present day modern laboratory investigations are helpful.

In the present paper, the methodology adopted to utilize modern laboratory investigations are based on the type of ranjaka pitta involved in the samprapti and correlating varieties of kamala, with present day varieties of jaundices based on causes and pathogenesis.

Before the description of *kamala* it is necessary to know about the *ranjaka pitta* in detail, because it plays very important role in the manifestation of all the types of *kamala*.

Ranjaka Pitta

Ranjaka Pita is one of five varieties of *pitta*. It is secreted by *yakrit*. The *ranjaka pitta* is combination of two words, *'ranjaka'* and *'pitta'*. Here ranjaka means colouring agent **which colours the rasa to form rakta. In other words the redness of rakta is because of ranjaka pitta, further it also colours the mala i.e., 'Pureesha' to golden yellow colour, then it is called as Malaranjaka pitta.**

It should be noted that ranjaka pitta gives colour to rasa and forms rakta and at the same time it is also by product of rakta. 'किट्टम् असृज: पित्तम्'. The very statement made by our acharyas makes us to think the formation of bile pigment by the destruction of RBC's. When senile RBCs are destroyed by endothelial system, the haemoglobin is released, the haemoglobin is broken into heam and globin. Heam is split into iron and pigment biliverdin. this is reduced to bifirubin. This bilirubin is released into blood from reticuloendothelial cells, then it is called as free bilirubin. Within two hours after releasing into the circulation free bilirubin is taken up by the liver cells and converted into conjugated bilirubin with the glucuronic acid. Thus, is conjugated bilirubnin excreted into bile. Due to bacterial action in the intestine 50% of bilirubin is converted into urobilinogen, remaining 50% get absorbed into blood, enters liver through portal vein. From liver it is reexcreted in bile. Most of the urobilinogen enters liver via enterohepatic circulation and reexcreted through bile, about 5% of urobilinogen is excreted by kidney through urine. Due to exposure to air urobilinogen is converted into urobilin. Some amount of urobilinogen is excreted in the faeces as stercobilinogen. It colours the faeces yellow. In faeces stercobilinogen is oxidized to stercobilin. Hence I have correlated the action and property of bile pigment to that of the word "Ranjaka", in terms of rasa ranjaka pitta and malaranjaka pitta.

The word 'pitta' of ranjaka pitta denotes bile salt, which is secreted by liver along with bile. It is also called as 'ranjakagni'. According to Ayurveda 'dahana' and 'pachana' occurs because of agni. Bile salts digest and absorb the fat in the intestine, because, it has "agnitatwa" in it. Among the various types of functions of bile salt, emulsification, digestion and absorption of fat are important, which denotes the functions of pitta according to our classics. Bile salts have choleretic action, that stimulate the secretion of bile from liver. It also has cholegague action -

Professor, Dept., of P.G. Studies in Kayachikitsa, GAMC, Mysore.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

which increase the release of bile from gall bladder. Bile has laxative action - which induces defecation by stimulating peristalic movements of the intestine.

From the above discussion it can be concluded that the substance.

1. which is secreted by the liver.
2. which colours the rasa to form rakta.
3. which colours the stools (pureesha)
4. which helps in the digestion and absorption of fat, is ranjaka pitta which is nothing but bile.

It is this ranjaka pitta which provides an exceedingly valuable tool for diagnosing both koshta shakhashrita kamala and shakhashrita kamala.

Table No. 1. Comparison of Ranjaka pitta and Bile

Sl.No.	Ranjaka Pitta	Bile
1.	Ranjaka pitta is mala of rakta.	The split of senile RBC liberates biliverdin (Primitive stage of bile).
2.	Yakrit is the seat of Ranjaka pitta.	Liver secretes bile into the intestine.
3.	It is Harita pita varna.	Bile is greenish yellow in colour.
4.	When it reaches Mahasrotas it colours mala (Pureesha).	When it reachers intestine it colours stools.
5.	Then it is called as Malaranjaka pitta.	Then bile is converted into Urobilinogen and Stercobilinogen.
6.	If it does not reach intestine pureesha gets Tila pishta nibha varna.	If bile does not reach intestine stool gets clay colour.
7.	Ranjana means colouring agent.	Bile pigment is a colouring agent.
8.	Ranjakagni digests the food by the action of pachana and dahana.	Bile salts act as digestive agent, digestion and metabolism of fat takes place.

Classification of Kamala

The disease Kamala is classified into two categories

1. Koshta Shakhashrita Kamala and
2. Shakhashrit Kamala.

This classification is unique, as it is based on samprapti. Such classification is not adopted in other disorders.

Classification based on Paryaya

KAMALA

1. Koshta Shakhashrita Kamala
2. Bahu Pitta Kamala
3. Paratantra Kamala
4. -----
5. Hemolytic Jaundice

1. Shakhashrita Kamala
2. Alpa Pitta Kamala
3. Swatantra Kamala
4. Ruddha Patha Kamala
5. Obstructive Jaundice

KAMALA BHEDA

KOSHTA SHAKHASHRITA KAMALA (Hemolytic Jaundice)

SHAKHASHRITA KAMALA (Obstructive Jaundice)

Hepatic Jaundice

Post Hepatic jaundice

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

↓

1. Viral Hepatitis of Pancreas
2. Alcoholic (Pittaja) (पानात्य)
3. Drug Hepatitis

↓

1. Carcinoma of head
2. Gall Stones
3. Ascaris lumbicoides
4. Pittaja Gulma
5. Pittaja Udara

Koshta Shakhashrita Kamala

The word Koshta Shakhashrita comprises of two words, 'Koshta' and 'Shakha'. Here 'Koshta' refers to Mahasrotas and 'Shakha' to Raktadi dhatavaha tvak cha. It means the vitiated Ranjaka pitta is present abnormally in mahasrotas as well as in rakta. Hence it is termed as Koshta Shakhashrita Kamala. Paratantra Kamala and Bahu Pitta Kamala are the words used as synonyms for this Kamala.

Bahu Pitta Kamala : The word Bahu Pitta clearly indicates over production of Ranjaka pitta. Hence it is raised in the blood as well as in the intestines (Mahasrotas), therefore it is also called as Ubhayashrita Kamala.

Paratantra Kamala : This type of Kamala cannot occur independently and it manifests secondary to the Pandu roga. Therefore it is called as Paratantra Kamala. ''पाण्डु रोगि तु यो अत्यर्थम् पित्तलानि निशेवते.....'' During convalascing period if Pandu rogi consumes pittala ahara like amla, Madhya, it leads to Kamala of Koshta Shakhashrita type.

In Madhukosha commentary we find ''पाण्डु रोगावस्थायां कामलामाह'' i.e., Koshta Shakhashrita Kamala is an avastha of Pandu roga. Even Arunadatta mentions this Kamala as synonym of Panduroga–पाण्डु रोगस्य पर्याया: कामला !

From the above descriptions Koshta Shakhashrita Kamala can very well be correlated with Hemolytic Jaundice/Prehepatic Jaundice because the similarities are observed in causative factors, in pathogenesis as well as in symptomatology. Hence all the laboratory investigations used in diagnosing Hemolytic Jaundice are useful in diagnosing Koshta Shakhashrita Kamala.

While describing the samprapti of Koshta Shakhashrita Kamala, Charaka mentions that, 'तस्य पित्तम् असृक् मांसे दग्ध्वा रोगाय कल्पते' Here literal meaning of asruk dagdha is buring of rakta or Sandooshana of rakta (Madhukosha), which refers to haemolysis of RBC's. is is a special type of sandooshana of rakta which give rise to the symptoms like रक्त पीत शकृन्मूत्र, भेक वर्ण त्वक् etc. This type of vitiation of rakta is not described in any other disorders by our acharyas. It seems more appropriate to correlate it to the process of hemolysis of red cells of the blood.

Further it is interesting to note the observations made by Vagbhata and Sushruta in this connection. Vagbhata mentions that, this disease can manifest independently without preoccurence of Pandu roga, 'भवेत् पित्तोल्वंणस्यासौ पाण्डुरोगाधृतेअपि च!'. Arunadatta commenting on this sloka says that 'पाण्डुरोगोअपि भवेत् पाण्डुरोगाद्विनापि भवेत् !'. So this can occur even without panduroga. Here I would like to interpret by the present day observations. Even though normal quantity of bilirubin is produced in the body, if the uptake of bilirubin by the liver is reduced this type of Kamala can occur.

It is surprising to note the keen observations made by Arunadatta, even without the help of modern investigatory methods. This sounds the highest ability of distinguishing skills attained at that time. Dalhana commenting on Sushruta's statement आमयन्ते opines that Koshta

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Shakhashrita Kamala can occur पाण्डुरोगान्ते अन्य रोगान्ते च. It means this disease can occur not only after Pandu roga but can also manifest even after any other disorders. Here I would like to interpret that, it can occur after Malaria, Snake bite, Sarpha Visha, Dushi visha etc.,

Commenting on पाण्डुरोगाधृतेअपि च !, Arunadatta says that 'पाण्डुरोग अन्तरेनापि पित्ताधिकस्य नरस्य पित्तलानि असेव्यमानस्यासौ कोष्ठशाखाश्रया कामलास्यत् न केवल पाण्डु रोगिण: !. That means a person neither suffering from Panduroga, nor he is consuming pittala ahara can also develop Koshta Shakhashrita Kamala.

After analyzing all the possibilities of causative factors of Koshta Shakhashrita Kamala in this sloka Arunadatta finally stresses on the word पित्ताधिकस्य नरस्य i.e., Pitta predominant person can also suffer from this disorder inspite of not suffering from Pandu as well as not consuming pittala ahara one can suffer from Koshta Shakhashrita Kamala. Perhaps his observations may be directing towards the inborn error of defect in RBC's. All observations made without ultra modern microscopes.

As discussed earlier on the word asruk mamsam dagdha i.e., burning of rakta means sandooshana of rakta. It is special type of sandooshana typically that is seen in Hemolysis. In normal course, RBCs have 120 days life span. In abnormal condition, they are more fragile, their life span gets short, so they get destructed easily, giving rise to more quantity of bilirubin.

In such conditions liver works 6 times more than the normal and intensify conjugation work. In this way increased bile (ranjaka pitta) is passed into the duodenum, where by the action of bacteria bile pigment gets converted into urobilinogen. Here some amount of urobilinogen is carried to liver through enterohepatic circulation. Remaining bile pigment colours the stool very dark and deep brown, which is observed in Hemolytic jaundice as well as in Koshta Shakhashrita Kamala – रक्तपीत शकृन्मूत्र भेकवर्ण .....Here more the ranjaka pitta is produced more is excreted into duodenum causing more mala ranjana. As more amount of urobilinogen is produced it is found in the urine of Hemolytic Jaundice.

Though the production of ranjaka pitta is more but the symptoms like netra nakha tvacha peetata are not intense, severe dark in colour. Instead it is found like bhekavarna, which is similar to the colour of frog in rainy season i.e., mild icterus or lemon yellow tint, is being observed. This is because liver is functioning six times more and conjugation is taking place, hence bile is considerably less raised in blood than expected. Particularly in this disease the Koshtagata ranjaka pitta is conjugated, where as the raktagata (shakhagata) ranjaka pitta is unconjugated. Hence in Hemolytic jaundice serum bilirubin is raised not more than 4-6 mg/100 dl, where as in other type of Jaundice it is raised upto 40-50 mg/ 100 ml. Though more conjugation is carried by the liver, still unconjugated hyperbilirubinamia is remained in the blood, because of over production. Therefore in Hemolytic jaundice unconjugated hyperbilirubinama is raised and has significance in differential diagnosis. Hence increased indirect serum bilirubin is suggestive of Koshta Shakhashrita Kamala. Due to more destruction of RBC's anaemia is seen, which is also mentioned in Koshta Shakhashrita Kamala.

It is very important to note here that pittaja pandu roga can alone lead to this type of kamala not other varieties of Pandu roga. We can observe the netra, mutra peetata etc., symptoms in pittaja pandu alone, which is similr to Hemolytic anaemia. In the following table a comparison between Hemolytic Jaundice and Koshta Shakhashrita Kamala is illustrated.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Table No. 2 Comparison of Hemolytic Jaundice with Koshta Shakhashrita Kamala

Sl.No.	Hemolytic Jaundice	Koshta Shakhashrita Kamala
1.	Hemolytic anaemia leads to Hemolytic Jaundice.	Pittaja Panduroga leads to Koshta Shakhashrita Kamala
2.	Over production of bilirubin in observed in Hemolytic Jaundice.	Bahupitta Kamala means over production of Ranjaka pitta.
3.	Increased bile is observed in serum as well as in intestine.	Increased Ranjaka pitta is present in Koshta as well as in rakta.
4.	Mild Jaundice with lemon yellow tint sclera, nails etc.	Bhekavarna tvacha, Aanana, Netra is observed.
5.	Dark orange brown colour stool contain Stercobilinogen.	Rakta peeta varna mala due to large amount of Mala Ranjaka pitta.
6.	Dark Urine.	Rakta Peeta Mutra.
7.	Hemolysis lead to unconjugated hyper-bilirubinamia.	Asruk mamsa dagdha leads to Sandooshana of rakta.
8.	In majority of the patients enlargement of spleen is found due to excessive activity of the reticulo endothelial system	This condition can be considered as Pleeha roga or Pleehodara, where Pleeha Vridhi, Atipandu, Rakta and Pitta dushti laxanas are found.
9.	This type of pathogenesis (Hemolysis) is not found in Obstructive Jaundice.	This type of samprapti (Asruk dagdha) is not in Shakhashrita Kamala.

Following laboratory investigations help in confirming Hemolytic Jaundice vis-a-vis Koshta Shakhashrita Kamala.

1. Serum bilirubin - Unconjugated hyperbilirubinaemia
2. Vandenbergh test - Indirect Positive
3. Urine - Urobilinogen excess, No bilirubin or Bile salt
4. Stool - Excessive yellow
5. Liver - Liver function Test show normal values.

Shakhashrita Kamala Type I

As already discussed the word 'Shakha' refers to Rakta, Tvak, Mamsa etc. In this type of Kamala Ranjaka pitta gets Sthana samshraya in Rakta and stains Mamsa and Tvak with yellow colour. Therefore it is called as Shakhashrita Kamala. It is also called as Swatantra Kamala, Ruddhapatha Kamala and Alpapitta Kamala.

1. Swatantra Kamala : This disease can occur independently. So it is called as Swatantra Kamala.
2. Ruddhapatha Kamala : The word 'Ruddhapatha' indicates obstruction of channel. Here there is a block in the channel of Ranajak pitta. Hence it is named as Ruddhapatha Kamala.
3. Alpapitta Kamala ; The word 'Alpapitta' refers to the reduction of Ranjaka pitta in its quantity. As such there is no reduction in quantity, but there is block in path of Ranjaka pitta. Hence it does not enter into Mahasrotas and not appear in mala. So it is otherwise called as Alpapitta Kamala.**

The important points to be observed in Shakhashrita Kamala are

- The avarodha of Ranjaka pitta.
- The avarodha is due to Kapha dosha.
- The avarodha is in Pitta sthana i.e., Yakrit

While explaining avarodha due to Kapha Chakrapani explains that "कोष्ठस्थेन श्लेष्मणा शाखाश्रयी पित्तं कामलाजनकं !". In normal course the Ranjaka pitta should flow into the Mahasrotas, digest the food and colour the stool, further he mentions that Ruddha marga means 'कोष्टगमनार्थम् निषिद्ध मार्गत्वमिति यावत्' but because of Ruddha marga due to kapha the flow doesnot enter Mahasrotas (Koshta). Instead it gets

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

vimargagamana and accumulates in rakta (Shakha). In this way "शाखाश्रयी पित्तं कामला जनकम्" i.e.,Ranjaka pitta which is abnormally accumulated in the blood due to vimargagamana and that causes Shakhashrita Kamala.

So far we have observed the effect of raised level of Ranjaka pitta in the blood. It is equally necessary to observe its effect of absence in the koshta.

As the Ranjaka pitta is not entering the Mahasrotas, the pureesha is not getting normal colour, instead it appears like 'Tila pishta nibha', i.e., like the paste of white gingely seeds. Here we can appreciate the keen observation and the correct simile given by our ancient scientist, which was described about 5000 years ago. At this juncture I would like to recall the description of Ranjaka pitta compared to bile which contains bile salt and bile pigment. Here due to lack of bile salt the ingested fat is not digested and pureesha contains fat and due to lack of bile pigment the stool does not get colour so it is white in appearance. It is very important to note here that both of these two things are explained symbolically by quoting the example of 'Tila pishta'.

From the fore going description such as the words like

Ruddha patha (Obstruction),

Swatantra kamala.

Shakhashryee pitta,

Vikriti in pitta sthana and

Tila pishta nibha varcha

makes us to think of Hepatic Jaundice like

Infective Hepatitis,

Alcoholic Liver Disease,

Intra Hepatic Cholestasis,

because similar pathological conditions and clinical features like

Hepto cellular injury (Pittasthana Vikriti),

Obstruction in intra hepatic bile ducts,

Clay coloured stools (Tila pishta nibha varcha) due to lack of stercobilinogen in the stools and other symptoms like anorexia, fever, gastro intestinal disturbances (Agnimandhya, Aruchi) yellowish discolouration of urine, skin, sclera etc. are being observed which is shown in the comparison table.

Table No. 3 Comparison of Shakhashrita Kamala with Hepatic Jaundice

Sl.No.	Shakhashrita Kamala	Hepatic Jaundice
1.	Haridra Netra	Yellow Sclera
2.	Haridra Mutra	High Coloured Urine
3.	Haridra Twak	Yellow Skin
4.	Tila Pishta Nibha Varcha	Clay Coloured Stool
5.	Aruchi	Anorexia
6.	Jwara	fever
7.	Dourbalya	Fatigue, Weakness
8.	Alpagni	Loss of Appetite
9.	Parshwa Shoola	Mild dull aching in right upper quadrant
10.	Swasa	Cough
11.	Atopa	Abdominal Distress
12.	Vishtambha	Abdominal Distress
13.	Gurunaa Hrudayena cha	

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Following laboratory investigations help in confirmation of Shakhashrita Kamala vis-a-vis Hepatic Jaundice.

1. Serum Bilirubin - Hyper bilirubinamia, Direct bilirubin is raised.
2. SGOT & SGPT – Increased SGOT & SGPT indicated liver cell injury which are raised in Hepatocellular Jaundice.
3. GGT–This is raised in Alcoholic Jaundice.
4. Alkaline Phosphatase – More than 3 times the normal limits suggests obstruction in the bile duct.
5. Serum Protein – Value falls in chronic liver disease.
6. Serum Globulin – May be increased in chronic liver disease.
7. Prothrombin time – Prolonged Prothrombin time occur in Cholestasis because of Vitamin K malabsorption.
8. Urine – Urobilinogen raised.
9. Bile pigment – Presence suggests Hepato cellualar and Obstructive Jaundice.
10. Stool – Clay coloured (Tila Pishta Nibha), Bulky and contain excess fat.

Shakhashrita Kamala Type II (Extrahepatic Cholestasis)

Extrahepatic cholestasis results from mechanical obstruction to large bile ducts outside the liver or within the porta hepatic. The common causes are gall stones, carcinoma of head of the pancreas, tumours of bile ducts etc. The obstruction may be complete and sudden with eventual progressive obstructive jaundice. Where as in intrahepatic cholestasis is due to the impaired hepatic excretion of bile and may occur from hepatocellur diseases like viral hepatitis, alcoholic hepatitis and drug induced cholestasis Eg. Administration of chlorapromazine and oral contraceptives.

Both the conditions of cholestasis can be considered as Shakahshrita Kamala. But the explanation available regarding Shakahshrita Kamala in our classics directs towards the intrahepatic cholestasis. Liver is the main target organ in intrahepatic cholestasis, where as in extra hepatic cholestasis it is absolutely normal. When we observe the method and line of treatment adopted for Shakahshrita Kamala i.e., Pittavardhana chikitsa by giving katu, ushna, teekshan drugs like Trikatu, Maatulunga rasa, Moolaka etc., and there by bringing the pitta to the koshta till mala gets normal colour, makes us to think that it is acting on the liver as hepato protective, antiviral and regeneration of liver cells. Hence the treatment is for intrahepatic cholestasis, which is also called as medicinal Jaundice. Where as in Extrahepatic Cholestasis surgical intervention is necessary. Therefore it is also called as Surgical Jaundice. Hence I would like to comment that this type of surgical Jaundice is not explained in Shakahshrita Kamala context, but we get explanation regarding this under the description of Pittaja Gulma, Pittodara, Abhyantara Vidradi diseases. This point is worth noting to emphasise the modalities of treatment according to Ayurveda in extra hepatic cholestasis. Laboratory and radiological investigation help in differential diagnosis of these two conditions.

From the above discussions various types of kamala explained in our classics and their equivalent Jaundice explained in modern science along with the type of Ranjaka pitta involved is clear.

हमदर्द
पाचकवटी
अम्लपित्त, गैस में लाभदायक है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व

नये ज्ञान से आयुर्वेद को पुष्ट करें

सितम्बर, 1963

पाश्चात्य संस्कृति और शिक्षा में दीक्षित हुए लोग भले ही अपने अज्ञान और स्वार्थवश आयुर्वेद को आधुनिक चिकित्साशास्त्र की तुलना में हीन और अपूर्ण कहें, किन्तु आज भी आयुर्वेद जीवित है । उसमें अनेक सिद्धान्त और औषध रूप रत्नों का भण्डार भरा हुआ है । हां, इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि काल की उथल-पुथल और राजकर्त्ताओं की उदासीनता तथा प्रोत्साहन के अभाव के कारण वह जीर्ण-शीर्ण हुआ है । यदि इसको प्रोत्साहन मिले और इसमें अन्वेषण-कार्य हो, तो आज भी आयुर्वेद समग्र जगत् का उपकार कर सकता है । किन्तु हमें इस बात को भी ध्यान में रखना चाहिए कि दुर्बल मनुष्य या शास्त्र जीवित रहने के अयोग्य होता है । जीवित वही रह सकता है जो नवीन आहार (ज्ञान) को ग्रहण करके अपने में हजम कर लेता है । आधुनिक विचार एवं ज्ञान से आयुर्वेद को भी परिवर्द्धित पुष्ट करना होगा । हमारे महर्षियों ने सत्य-ज्ञान को कहीं से भी लेने का उपदेश किया है - **नीचादप्युत्तमां विद्याम् ।**

स्व० यादवजी त्रिकमजी आचार्य

आयुर्वेद पर पुनः प्रहार

यह सुविदित है कि आयुर्वेदीय - यूनानी के अनेक सुप्रसिद्ध औषधों में सोना, मोती, अफीम, भांग और विविध प्रकार की वस्तुओं की आवश्यकता होती है । परन्तु सरकारी प्रतिबन्धों के कारण निर्माताओं को ये द्रव्य पर्याप्त मात्रा में नहीं मिलते । आबजेक्शनेबुल एडवरटाइजमेन्ट एक्ट, ड्रग्स एक्ट, एक्साइज एक्ट, आसवारिष्ट पर मद्यकर इत्यादि कितने ही ऐसे कानून देशी औषध निर्माताओं पर आज अनावश्यक ही थोप दिये गये हैं जिसके कारण पग-पग पर औषध-निर्माताओं को अपना काम चलाना कठिन हो गया है । टैक्सों की भरमार ने औषध-निर्माताओं की आर्थिक रीढ़ ही तोड़ दी है । औषधों के निर्माण और बिक्रय पर अनेक प्रकार के लायसेन्सों के झमेले ने ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी है कि भारतीय औषध का विकास ही खतरे में पड़ सकता है ।

आसवारिष्ट कानून को ही लीजिये । बम्बई और कुछ प्रदेशों में इतनी कड़ाई है कि द्राक्षासव आदि बनाने के लिए निर्माता को बाण्डेड लेबोरटरी बनानी पड़ती है, एक सरकारी अफसर रखना पड़ता है और ऐसा करने पर ही निर्माण का लायसेन्स मिलता है । उस पर एक इण्टर स्टेट इम्पोर्ट - एक्सपोर्ट कानून अलग से लगा है, उसके कारण उत्तर का निर्माता दक्षिण में और दक्षिण का निर्माता उत्तर में अपने आसवारिष्ट आसानी से नहीं भेज सकता है । ये सब प्रक्रियाएं इतनी महंगी और उलझनपूर्ण हैं कि सामान्य औषध-निर्माता के लिए तो साहस ही नहीं है ।

शुद्ध आयुर्वेद की आधुनिक व्याख्या

शुद्ध आयुर्वेदवादियों से हमारा निवेदन है पाठ्यक्रम के मामले में केवलमात्र अन्तिमध्येय को केन्द्र बिन्दु मानकर चलें, जिससे स्नातक रोगोपचार में डाक्टरों के समान अथवा उनसे अधिक कुशल सिद्ध हों । इस बात में कोई मतभेद नहीं कि इस लक्ष्य की पूर्त्ति के लिए आधुनिक विज्ञान के कई विषयों का विद्यार्थियों को अध्ययन कराना परमावश्यक है । तभी तो शुद्ध आयुर्वेदवादी भी आधुनिक एनाटोमी, सर्जरी, प्रसूति-विज्ञान के अध्ययन से सहमत हैं । औषधियों में पेनीसिलीन तक को ग्रहण कर लेने में सहमत हैं ।

हमारा कथन तो केवल इतना ही है कि अपनी मिथ्या प्रतिष्ठा की रक्षार्थ इन तथ्यों को घुमावदार राजनैतिक भाषा में नहीं, सीधी भाषा में स्वीकार करें और एक आवाज होकर स्वास्थ्य मंत्रालय को बाध्य कर दें कि ज्ञानोपार्जन के क्षेत्र में वैद्यों पर वह किसी प्रकार का प्रतिबन्ध न लगा सके तथा आयुर्वेदीय शिक्षा संस्थाओं में सभी आवश्यक ज्ञान का पठन-पाठन हो और सरकार आयुर्वेदिक शिक्षा-संस्थाओं को भी वे सभी सुविधायें दे जिससे वहां के स्नातक अध्ययन काल में प्रचुर कर्माभ्यास कर सकें और चिकित्सा-क्षेत्र में डाक्टरों के बराबर अथवा उनसे अधिक कर्मकुशल एवं सफल सिद्ध हो सकें । आयुर्वेद के उत्थान और गौरव का केवल यही मार्ग है ।

- क० गौरीलाल चानना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आरोग्य समाचार

कॉफी के सेवन से वसा का क्षय

द हिन्दुस्तान टाइम्स में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार आस्ट्रेलियाई खेल मंत्रालय के शोध कर्मियों ने पता लगाया है कि कम मात्रा में कैफीन खिलाड़ियों को एक तिहाई ज्यादा व्यायाम करने में मदद करता है । बीबीसी के एक प्रतिवेदन के अनुसार कैफीन स्नायुओं को कारबोहाईड्रेट शर्करा की अपेक्षा वसा को उर्जा संसाधन के रूप में प्रयोग करने के लिए प्रेरित करता है । खिलाड़ियों को सलाह दी जाती है कि व्यायाम करने के पूर्व कॉफी या कोला का उपयोग करें, क्योंकि यह मूत्रल है । किन्तु, यह धारण गलत है । प्रख्यात् आहार-विशेषज्ञा, जेन ग्रिफथ के अनुसार यदि आप 300 मिलीग्राम कॉफी का उपयोग एक बार करते हैं जो 8 कफ चाय के बराबर है, तो यह मूत्रल हो सकती है, किन्तु सम्पूर्ण दिन में इतनी ही मात्रा मूत्रल नहीं हो सकती है ।

फल, सब्जियों के उपयोग से एक तिहाई कैन्सर में कमी

फ्रांस के वैज्ञानिकों ने दावा किया है कि विटामिन और खनिजों का उपयोग यदि प्रतिदिन आहार-पूरक के रूप में लिया जाय, तो एक तिहाई कैन्सर का खतरा कम हो जाता है । उन्होंने बताया कि फलों एवं सब्जियों में उपस्थित एन्टी आक्सीडेन्ट पौष्टिक पदार्थों का उपयोग पुरुषों और महिलाओं पर सात वर्ष की अवधि के लिए किया गया । इस प्रयोग से ज्ञात हुआ कि इस तरह के एण्टी आक्सीडेन्ट फ्री रेडिकल्स के प्रति काफी प्रतिक्रियावादी थे । विदित है कि फ्री रेडिकल्स से शरीर के तन्तुओं को क्षति पहुंचती है ।

मीठा जहर है करबाइड से पका फल

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार कार्बाइड से जो फल पकाये जा रहे हैं, वे विष का कार्य कर रहे हैं । ज्यादादत व्यापारी फलों को पकाने के लिए कैल्सियम कार्बाइड का प्रयोग करते हैं । इससे फल शीघ्र पक जाते हैं एवं देखने में ताजे एवं आकर्षक लगते हैं । किन्तु, कार्बाइड से निकलने वाली एसिटिलीन गैस जब जल के सम्पर्क में आती है, तो रासायनिक प्रतिक्रिया के फलस्वरूप विनायल अल्कोहल और एसीटेलडिहाइड बन जाते हैं । ये दोनों स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं । यह वही कैल्सियम कार्बाइड है जिसका इस्तेमाल वेल्डिंग करने वाले आक्सीजन के साथ लोहा पिछलाने में करते हैं । कार्बाइड से पके फलों में विटामिन, थायमिन, राइबोफ्लोविन और कुछ खनिज पदार्थ नष्ट हो जाते हैं । जानकारी के अभाव में लोग मीठे जहर का उपयोग करते हैं ।

वृन्त कोष (स्टेम सेल) से हृदय की चिकित्सा

नेचर मेडिसिन में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार हृदयाघात के फलस्वरूप हृदय की जो हानि होती है, उसे ठीक करने के लिए वृन्त कोष की सहायता ली जाती है । शोध कर्मियों ने बोन मेरो से प्राप्त वृन्त कोष का प्रयोग इसमें किया है । वैज्ञानिकों के अनुसार जो कोष निकाले जाते हैं, वे प्रत्यारोपण के शीघ्र बाद में मृत हो जाती हैं, इसलिए सम्प्रति सफलता की सम्भावना कम है । इसके बावजूद शोधकर्मियों ने एक प्रोटीन की खोज की है जो कोष को मरने से बचाते हैं । वैज्ञानिकों के अनुसार यदि क्षतिग्रस्त हृदय में यदि इस प्रकार का कोष लगाया जाता है, तो 80-90% तक हृदय को आराम पहुंच सकता है ।

पेन्सिलिन से हृदयाघात की सुरक्षा

कनाडा स्थित एक शोधदल ने पता लगाया है कि पेन्सिलिन के प्रयोग से उच्च रक्तचाप से पीड़ित वृद्ध व्यक्तियों में हृदयाघात की सम्भावना कम हो जाती है । शोधकर्मियों के अनुसार वर्तमान में, कुछ दिनों पूर्व एवं कुछ वर्षों पूर्व यदि पेन्सिलिन का उपयोग किया गया है, तो इसका प्रतिरोधात्मक लाभ हृदयाघात के रोगियों को मिलेगा । शोधकर्मियों के अनुसार दूसरे एण्टी बायोटिक आशा के अनुरूप लाभ नहीं दे पा रहे हैं ।

शीघ्र मोड़ना पीठ-दर्द का कारण

एक अध्ययन से यह पता चला है कि पीठ-दर्द के पीछे कारणों में से जो एक है वह है मेरूदण्ड को घुमाना या इस पर दबाव डालना । शोध कर्मियों की सलाह है कि कभी भी किसी अंग को पृथक् नहीं समझें । सब का जुड़ाव सबसे है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

National Sharir Research Institute

12th Foundation Day Celebrations and Seminar On Diabetese Mellitus & Its Treatment

(6th–7th Sep., 03)

Sponsored by

Divyanand Spiritual Foundation

Venue

Sant Kripal Nagar Sandila

Hardoi - 241204 (U.P.)

Patron

Swami Divyanand Ji Maharaj

Director

Dr. K.K. Thakral

It is a matter of great pleasure that National Sharir Research Institute (NSRI) Sandila, Hardoi, U.P. is regularly coming up with a wide spread advancement of science of Ayurvedic Sharir and applied aspects. Entire nation is looking forward towards the institute regarding opening of new horizons and thrusts in research in the field of above sciences.

Considering its necessity NSRI has decided to organise two days Seminar in the 1st week of Sept. 2003. The title of the Seminar will be "Diabetese Mellitus & its Treatment".

In the present days different Medical facilities such as Ayurved, Unani, Homeopathy, Yoga & Naturopathy all have made great progress in their respective fields. The progress is directed towards prevention and alleviation of chronic diseases at a low cost. That is why the need for understanding between various specialities has arisen. Researchers from all of these branches, scholars of ISM, Ayurved, Unani, Homepathy, Yoga & Naturopathy are requested to participate in the above seminar and help in making the programme a success.

The details of the programme are as follows:-

Venue:—National Sharir Research Institute (NSRI) Sant Kripal Nagar, Sandila (Hardoi) & 241204 (U.P.)

Date & Duration :— 6th–7th September, 2003 (Two days).

Award & Honour :— Award to the Best M.D. and Ph.D. thesis related to Diabetese Mellitus in the field of Ayurved presenters for last 3 years.

Seminar Topics :—

a) Physiology of Sugar Metabolism.
b) Understanding diabetese (i.e. definition & symptoms)
c) Occurance of diabetese
d) Types of diabetese
e) Diagonosis & monitoring instruments.
f) Monitoring & monitoring instruments.
g) Medical treatment of diabetese (Ayurvedic and modern)
h) Surgical treatment of diabetese.
i) Prevention of diabetese
j) Recent advances in the treatment of diabetese
k) Yogic & Naturopathic treatment of diabetese.

Eligibility

a) P.G. Scholars of ISM & H (Ayurved, Unani, Homeopathy, yoga and Naturopath) Ayurveda and allied sciences.
b) Demonstrators, Medical Officers, Lecturers, Readers, Professors of all disciplines working in ISM & H and modern medicine.
c) Selected Graduate level students insterested to participate only on recommendation of their heads of the department.

T.A. & D.A.

The delegates may arrange their T.A. and D.A. from the management of their respective institution or it would be borne by the delegates themselves.

Lodging & Boarding

Free lodging and boarding would be arranged at the Guest House of NSRI Sandila (Hardoi).

Nomination Forms & Registration

Registration fee of Rs. 250/- (Rupees Two hundred and fifty only) per delegate through Bank draft in favour of **Director, National Sharir Research Institute, Sandila (Hardoi)** should be sent to this office latest by 20th Aug. 03.

Further details can be obtained from

Dr. K.K. THAKRAL

National Sharir Research Institute (NSRI)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Sant Kripal Nagar, Sandila (Hardoi)-241204

Certificate & Momento

Paper presenters and participants of the Seminar shall be awarded with a certificate alongwith a momento.

Heads of the institutions are requested to kindly circulate this programme to all concerned teachers/P.G. Scholars/Students.

Expecting full co-operation from your level.

Dr. K.K. THAKRAL
Director, NSRI

SEMINAR ON
Non Surgical Management of Conventional Surgical Disorders
14th September 2003 Sunday
9:00 A.M. to 5:00 P.M.
Venue:
I.V.R.I. Library Auditorium, Bareilly
Organized by :
Vishwa Ayurved Parishad, Bareilly

It is informed that Vishwa Ayurved Parishad (Bareilly Branch) is going to organize a seminar on "Non Surgical Management of Conventional Surgical Disorders" on 14th Sep. 2003 from 9.00 a.m. to 5.00 p.m. at Bareilly. This seminar will consist of two scientific sessions, one panel discussion, valedictory function as well as short inaugural function.

The organiser invites your contribution in the form of participation, presenting the research paper, sponsering the event and donations.

TOPIC

Under the theme "Non Surgical Management of Conventional Surgical Disorders' we invite your research papers in duplicate neatly typed either in Hindi or English which should reach us on or before 30th of August 2003. The length of paper should not be more than three A-4 size pages. For the paper presentation Over head Projector & Slide Projector will be available. Topics covers various subjects like:

B.P.H., Uro lithiasis, cholilithiasis, Ano-rectal disorder, Ulcerative colitis, Hydrocle, Hernias, Cataract, Trachoma etc.....

KEYNOTE ADDRESS AND GUEST LECTURES

Eminent personalities of Ayurved will deliver the lectures and a panel discussion is also planned among them.

VENUE

I.V.R.I. Library Auditorium,

Izatnagar, Bareilly

LODGING AND BOARDING

Tea/coffee, Veg. Snacks and lunch will be served to the delegates during the seminar. As seminar will be concluded within a day therefore no accommodation will be required. Even then for out station delegates moderate accommodation will be arranged on their request. For invited guests free accommodation will be provided.

Hotel accommodation will be made available on request in advance on payment basis.

For sponsership/donations etc. please contact personaly by phone or by e-mail.

Dr. D.K. Dwivedi

Organizing Secretary

DHARAMDUTTVAIDYA STATE AYURVEDIC HOSPITAL, PREMNAGAR,

BAREILLY - 243122 U.P.

Phone : 0581 - 2540728 (Residence),
2540018 (Clinic) Mobile : 05813105363
E-mail : drayurvedi@rediffmail.com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्षिक चुनाव सम्पन्न

आज दिनांक 08.8.2003 को राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय, मैठू, जनपद महामायानगर में राजकीय आयुर्वेदिक एवं यूनानी चिकित्सा अधिकारी सेवा संघ का वार्षिक चुनाव (2003-04) डा० वीरेन्द्र पाल सिंह चिकित्साधिकारी की अध्यक्षता में सम्पन्न इसमें निम्नलिखित पदाधिकारी निर्वाचित हुए :-

निम्न पदाधिकारी निर्विरोध चुने गए ?

संरक्षक - डा० प्रमोद कुमार अग्निहोत्री, क्षेत्रीय आयु०/यूनानी अधिकारी, अलीगढ़

अध्यक्ष - डा० वीरेन्द्र पाल सिंह, चिकित्साधिकारी, राज०आयु० चिकित्सालय,मैढ़ू, हाथरस

उपाध्यक्ष - डा० श्रीमती वृन्दसमलता कौशिक चिकित्साधिकारी (सासनी, हाथरस)

सचिव - डा० राकेश मोहन शर्मा, चिकित्साधिकारी (बरईशाहपुर, हाथरस)

उपसचिव- डा० रमेश चन्द्र शर्मा, चिकित्साधिकारी (मीतई-हाथरस)

आयुर्वेदप्रचारमंत्री- डा० दिनेश कुमार अग्रवाल चिकित्साधिकारी (पहाड़पुर-हाथरस)

आय-व्यय निरीक्षक- डा० राकेश कुमार मित्तल चिकित्साधिकारी (कौमरी-हाथरस)

कार्यकारिणी सदस्य

डा० प्रमोद कुमार चौहान, हतीसा-हाथरस

डा० संजीवा वानो, लाखन्-हाथरस

पल-पल जीवन में आनन्द अविरल

जब उत्साह हो जीने का,
जब हर पल आप जीना चाहें भरपूर
बैद्यनाथ का वीटा-एक्स गोल्ड ।
स्वर्ण भस्म (शुद्ध सोना) की ताकत से भरपूर ।
जोश के लिए, उमंग के लिए
आनंद से भरपूर जीवन के लिए ।

बैद्यनाथ

गोल्ड

स्वर्ण भस्म की ताकत से भरपूर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धन्वन्तरि जयन्ती दिवस - एक संकल्प दिवस

प्रत्येक वर्ष धन्वन्तरि जयन्ती समारोह सम्पूर्ण देश में कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी को मनाया जाता है। सामान्यतया इसी दिन धनतेरस भी मनाया जाता है। दोनों समारोहों में मौलिक अन्तर है। पूर्ववर्त्ती समारोह बेहतर स्वास्थ्य प्रदान करने एवं दीर्घ आयु की कामना के लिए मनाया जाता है, किन्तु उत्तरवर्ती समारोह ज्यादा से ज्यादा धनोपार्जन के लिए मनाया जाता है। किन्तु यदि आरोग्य ही बेहतर नहीं हो, तो शायद धन का महत्व नहीं रह जाता है। जीवन है, तो आनन्द है, जीवन नहीं है और है भी तो अस्वस्थ जीवन, तो ऐसी स्थिति में जीवन की उपयोगिता का कोई अर्थ नहीं रह जाता है। सम्भवत: यही कारण है कि आचार्य चरक ने उपदेश दिया है - "धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम्"। आज के विश्व में भी दो विचाराधारा आज के समाज के समक्ष उपस्थित है। अधिकांश लोग धर्म, अर्थ और काम की प्राप्ति के लिए बेचैन रहते हैं, किन्तु उन्हें आरोग्य की चिन्ता नहीं होती है जबकि यह वास्तविकता है कि बिना आरोग्य के धर्म, अर्थ और काम का कोई महत्व नहीं है। यदि मनुष्य स्वस्थ नहीं है, तो वह न तो धर्म और काम का उपयोग कर सकता है और न अर्थ कमा सकता है। ऐसी स्थिति में बेहतर स्वास्थ्य और दीर्घ आयु का मानव-जीवन में सर्वोच्च स्थान है। हम आयुर्वेदज्ञों को धन्वन्तरि-जयन्ती के पावन अवसर पर संकल्प लेना चाहिए कि हम मानव-स्वास्थ्य के लिए अपने आपको समर्पित कर देंगे।

वैश्वीकरण की होड़ में आज विश्व सिमट गया है। आयुर्वेद जगत् को इससे लाभ उठाना चाहिए। व्यापारिक प्रतिष्ठान अपने व्यवसाय के हित में दवाओं का निर्यात करते हैं। हमारे पास सम्प्रति ऐसा कोई मंच नहीं है जो आयुर्वेद को दुनिया के अन्य देशों में स्थापित करने के लिए प्रभावकारी प्रचार कार्य करे। कुछ विद्वान अपने बल पर विदेशों में आयुर्वेद चिकित्सा का कार्य कर रहे हैं, किन्तु उनकी संख्या अत्यन्त कम है। केन्द्र सरकार एवं स्वयंसेवी संस्थाओं को इस दिशा में पहल करनी चाहिए। यह कोई आवश्यक नहीं है कि आयुर्वेद के चिकित्सकों को विदेश में प्रारम्भिक दौर में कोई विशेष सफलता मिले। यह भी सम्भव है कि उन्हें रोगी ही नहीं मिले और मिले भी तो कानूनी अड़चनों के चलते वे चिकित्सा-कार्य नहीं कर सकते हों। केन्द्र सरकार अपने दूतावासों या उच्चायोगों के द्वारा कानूनी अड़चनों को दूर कर सकती है। चिकित्सकों को भी प्रारम्भ में धैर्य से काम लेना चाहिए। सम्भव है कि उन्हें अपने घर से भी खर्च करना पड़े। गरीब चिकित्सकों के लिए यह सम्भव नहीं है। अत: सरकार या स्वंयसेवी संस्थाओं को ऐसे चिकित्सकों की मदद करनी चाहिए जो आर्थिक दृष्टि से सक्षम नहीं हैं। हमारे देश में अधिकांश आयुर्वेदिक चिकित्सक आयुर्वेद पद्धति से चिकित्सा नहीं करते हैं। वे एलोपैथी औषधियों का भी प्रयोग करते हैं। यही चिकित्सक यदि विदेश चले जायं और आयुर्वेदिक पद्धति से चिकित्सा नहीं करें, तो अपयश और शर्म का सामना करना पड़ सकता है। इससे आयुर्वेद की भी बदनामी होगी। अत: चिकित्सकों को आज के दिन संकल्प लेना चाहिए कि वे चिकित्सा कार्य आयुर्वेद की पद्धति से करें। इससे हमें दो लाभ प्राप्त होंगे। प्रथम यह कि आयुर्वेद की लोकप्रियता विश्व-स्तर पर बढ़ेगी। द्वितीय यह कि यदि विदेश में आयुर्वेद की लोकप्रियता बढ़ती है, तो नोबेल पुरस्कार के लिए दावा करना आसान होगा। हमें आशा है कि आयुर्वेदज्ञ इस दिशा में सोचेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद के प्रवर्त्तक भगवान धन्वन्तरि

पं० बनवारी लाल शर्मा

धन्वन्तरि-जयन्ती-समारोह प्रतिवर्ष कार्त्तिक कृष्णपक्ष त्रयोदशी को सम्पूर्ण देश में मनाया जाता है। वस्तुतः यह दिवस आरोग्य देवता आयुर्वेद के प्रवर्त्तक भगवान धन्वन्तरि को समर्पित है। हमें गौरव है कि धन्वन्तरि-जयन्ती-समारोह की शुरूआत करने का श्रेय श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० को ही जाता है। प्रतिष्ठान के सभी कार्यालयों में धूमधाम के साथ यह समारोह मनाया जाता है। आयुर्वेदिक औषधियों के निर्मातागण, चिकित्सक समुदाय, प्राध्यापकगण, छात्रगण एवं समस्त आयुर्वेद हितैषी इस पावन दिवस के अवसर पर मानव-आरोग्य को सबल बनाने एवं दीर्घ आयु प्रदान करने के लिए भगवान धन्वन्तरि से प्रार्थना करते हैं तथा संकल्प लेते हैं कि वे अपने सम्पूर्ण जीवन को आयुर्वेद के उत्थान एवं विकास के लिए समर्पित कर देंगे।

प्राप्त जानकारी के अनुसार वैदिक साहित्य एवं ब्राह्मण भाग में इसका उल्लेख नहीं मिलता है। हां, महाभारत एवं पुराणों में इनका उल्लेख प्राप्त होता है। मान्यता के अनुसार भगवान धन्वन्तरि विष्णु के अंश माने जाते हैं। देवासुर संग्राम के समय समुद्रमंथन के पश्चात् इनकी उत्पत्ति हुयी थी। उन्होंने विष्णु से निवेदन किया कि उनका स्थान एवं भाग निर्धारित कर दें। विष्णु ने उत्तर दिया कि देवताओं में यज्ञ का भाग पहले से निर्धारित है। अतः सम्भव नहीं है। हां, दूसरे जन्म में सिद्धियों की कृपा से आप देवत्व प्राप्त करेंगे। आप आयुर्वेद को अष्टांग में विभाजित करेंगे। द्वापर में आपका जन्म होगा। कहानी के अनुसार इसी वरदान के आधार पर पुत्रकाम काशिराज धन्व की तपस्या से सन्तुष्ट होकर अब्जि भगवान् ने उसके पुत्र के रूप में जन्म लिया और 'धन्वन्तरि' नाम धारण किया। पुराणों में विशेषकर हरिवंशपुराण में निम्न वंश परम्परा मिलती है -

काश
|
दीर्घतपा
|
धन्व
|
धन्वन्तरि
|
केतुमान्
|
भीमरथ (भीमसेन)
|
दिवोदास
|
प्रतर्दन
|
वत्स
|
अलर्क

कुछ अन्य ग्रन्थों में थोड़ी भिन्न वंश परम्परा है। धन्वन्तरि चतुर्भुज नहीं थे। हां, विष्णु के अंश होने के कारण उनके चतुर्भज होने की कल्पना की गयी है। एक कहानी के अनुसार एक बार गालव ऋषि वन में भटकते हुए बहुत थक गये और प्यासे हो गये। उस समय जंगल से बाहर निकलने पर एक कन्या मिली। उसके हाथ में एक घड़ा था जिसमें जल था। ऋषि ने कन्या से जल मांगा जिसे उसने तत्काल दे दिया। ऋषि प्रसन्न हुए और वरदान मांगने के लिए कहा। कन्या ने उत्तर दिया कि वह कुमारी एवं वेश्या है। उसका नाम वीरभद्रा है। ऋषि ने कुश से पुरुष की आकृति बनाकर उसके गोद में रख दी। तत्पश्चात् अभिमंत्रित करके प्राण प्रतिष्ठा कर दी। यही धन्वन्तरि हुये। इससे थोड़ी भिन्न कहानी स्कन्दपुराण में है। विभिन्न पुराणों एवं महाभारत के आख्यानों से धन्वन्तरि के आयुर्वेद-प्रवर्त्तक रूप का पता चलता है। कुछ विद्वान सुश्रुत संहिता के आधार पर धन्वन्तरि को शल्यतंत्र का विशेषज्ञ मानते हैं, किंतु विभिन्न आख्यानों से ज्ञात होता है कि वे केवल शल्यतंत्र

प्रबन्ध निदेशक, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही नहीं थे, बल्कि समस्त आयुर्वेद के ज्ञाता थे। ग्रन्थों के अनुसार वे विषशास्त्र, अश्वशास्त्र एवं गजशास्त्र के निष्णात विद्वान थे।

कुछ विद्वान काशिराज दिवोदास को धन्वन्तरि द्वितीय मानते हैं। इन्होंने ही शल्य प्रधान आयुर्वेद-परम्परा प्रचलित की जिसे धान्वन्तर सम्प्रदाय कहते हैं। दिवोदास काशी (वाराणसी) के संस्थापक थे। महाभारत के अनुसार दिवोदास सुदेव या भीमसेन और ययाति कन्या माध्वी के पुत्र थे। आचार्य प्रियव्रतजी के अनुसार दिवोदास धन्वन्तरि के उपदेशों को सुश्रुत ने अपनी संहिता में निबद्ध किया जो शल्यतंत्र का उपजीव्य ग्रन्थ बना। इतिहास की विडम्बना है कि अनेक महर्षियों के प्रार्दुभाव के विषय में एक कहानी नहीं मिलती है। केवल सुश्रुत संहिता में इसका व्यवस्थित रूप मिलता है। इस ग्रन्थ का प्रारम्भ ही इस वाक्य से होता है - अथातो वेदोत्पत्तिमध्यायं व्याख्यास्याम:। यथोवाच भगवान् भगवान धन्वन्तरि। इस वाक्य से स्पष्ट है कि भगवान धान्वन्तरि के उपदेशों के आधार पर ही सुश्रुत संहिता का प्रणयन सम्भव हो सका। इस ग्रन्थ के अनुसार आयुर्वेद का ब्रह्मा ने उपदेश दिया। ब्रह्मा से प्रजापति दक्ष ने सीखा और इनसे अश्विनी कुमारों ने सीखा। अश्विनों से इन्द्र ने और इन्द्र से धन्वन्तरि ने आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त किया। सुश्रुत संहिता के सूत्रस्थान से (काशिराजं दिवोदासं धन्वन्तरि) ज्ञात होता है कि काशिराज दिवोदास शल्यतंत्र के विशेषज्ञ थे क्योंकि सुश्रुत संहिता शल्यतंत्र के पर ही प्रकाश डालता है। सम्भवत: इसी कारण से कुछ विद्वान धन्वन्तरि को काशिराज दिवोदास से पृथक् मानते हैं। उनकी मान्यता है कि आयुर्वेद-प्रवर्त्तक धन्वन्तरि तो सम्पूर्ण आयुर्वेद के ज्ञाता थे, न केवल शल्यतंत्र को जो भी हो, हमारा आशय केवल आयुर्वेद प्रवर्त्तक धन्वन्तरि की उत्पत्ति के विषय में संक्षेप में प्रकाश डालना था। चूंकि धन्वन्तरि-जयन्ती- समरोह संकल्प दिवस के रूप में मनाने की परम्परा चल पड़ी है, अत: यह आवश्यक है कि हम आयुर्वेद के क्षेत्र में हो रही उपलब्धियों के साथ-साथ इसके समक्ष प्रस्तुत समस्याओं की भी चर्चा करें। इसमें कोई शक नहीं कि स्वतंत्र भारत में आयुर्वेद की प्रगति हुयी है। सरकार का भी ध्यान इसके विकास की ओर गया है, किन्तु प्रगति और विकास की गति काफी धीमी है। आज भौतिक विज्ञान में विश्व तेजी से आगे बढ़ रहा है, किन्तु आयुर्वेद के विकास की गति तीव्र नहीं है। आयुर्वेद भी इसका अपवाद नहीं है। अभी तक हम आयुर्वेद को राष्ट्रीय स्वास्थ्य-पद्धति घोषित नहीं करवा सके हैं। यद्यपि केन्द्र में आयुर्वेद का विभाग पृथक् हो गया है, किन्तु आयुर्वेद के लिए बजट का जितना आवंटन होता है, वह "ऊंट के मुंह में जीरा का फोरन" के समान है। राज्य सरकार की स्थिति तो अत्यन्त दयनीय है। बिहार जैसे कई राज्यों में तो शिक्षकों को नियमित वेतन भुगतान भी नहीं होता है। महाविद्यालय में कक्षा-भवन के साथ-साथ आतुरालय का भी अभाव है। यदि है तो भी खंडहर की अवस्था में। आयुर्वेद की इस दयनीय अवस्था के लिए हम सरकार को कोसते हैं, किन्तु कुछ हद तक हम भी इसके लिए जिम्मेवार हैं। हम में एकता का अभाव है। आज का युग प्रजातंत्र का युग है। हम प्रजातांत्रिक पद्धति से अपनी आवाज तो सरकार के पास पहुंचा सकते हैं। प्रतिनिधिमंडल के जरिये, शान्तिपूर्ण आन्दोलन के जरिये, गोष्ठी-सम्मेलन आदि रास्तों का अवलम्बन लेते हुए हम अपनी बात तो जिम्मेदार अधिकारी के पास तो ले जा सकते हैं। दुर्भाग्यवश हम आयुर्वेदज्ञ बात करते हैं, किन्तु जब कार्य करने की बारी आती है, तो चुप्पी लगा देते हैं। हमें इस कमजोरी को दूर करने का प्रयास करना चाहिए।

आयुर्वेद जगत् के समक्ष वनौषधियों का अभाव मुंह बाये समाने खड़ा है। आयुर्वेद की अधिकांश औषधियां वनौषधियों पर आधाारित हैं। यदि वनौषधियां नहीं मिलेंगी तो आयुर्वेदिक औषधियों का निर्माण करना अत्यन्त कठिन हो जायगा। कई वनौषधियों के बदले तो हम प्रतिनिधि द्रव्यों का प्रयोग करते हैं। ये प्रतिनिधि द्रव्य भी धीरे-धीरे लुप्त होते जा रहे हैं। अभी तक अत्यन्त कम वनौषधियों का कृषिकरण हो पाया है। कच्चे द्रव्यों के लिए हम जंगलों पर निर्भर करते हैं। जंगल धीरे-धीरे समाप्त हो रहे हैं। स्वाभाविक है कि इसका असर वनौषधियों की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपलब्धता पर भी पड़ा है । यद्यपि केन्द्र सरकार इस दिशा में कार्य कर रही है, किन्तु कार्य की रफ्तार काफी धीमी है । हम आभारी हैं भारत के राष्ट्रपति महामहिम डा० कलाम के जिन्होंने जोरदार आवाज में औषधीय पादपों की खेती करने की वकालत की है । उनके सत्प्रयास से ही बिहार के पालि क्षेत्र (पटना के नजदीक) में किसानों ने औषधीय पादपों की खेती प्रारम्भ कर दी है । यह खेती लोकप्रिय नहीं हो रही है । शायद बाजार का अभाव इसका कारण है । आयुर्वेदिक औषधि निर्माताओं को किसानों के घर तक बाजार ले जाना पड़ेगा और भुगतान अविलम्ब करना होगा ताकि पड़ोसी किसान औषधीय पादपों के उत्पादन से लाभकारी व्यवसाय कर सकें । विदित है कि औषधीय पादपों का निर्यात सबसे ज्यादा लाभकारी व्यवसाय है । अभीतक इस व्यवसाय में चीन अग्रणी स्थान पर है । भारत सरकार ने आगामी दो वर्षों में 5 ट्रिलियन डालर निर्यात करने का लक्ष्य रखा है । पता नहीं यह लक्ष्य प्राप्त हो पाता है या नहीं, किन्तु यह बात सत्य है कि औषधीय पादपों का भविष्य उज्जवल है । हमें यह संकल्प लेना चाहिए कि हम औषधीय पादपों के कृषिकरण के लिए किसानों का सहयोग करें ।

एक समस्या औषधियों के स्तरीकरण की भी है । आज अनेक औषधियों में शास्त्रोक्त द्रव्य नहीं दिये जाते हैं । रस-भस्म निर्माण की प्रक्रिया भी दोषपूर्ण है । यह स्वाभाविक भी है । रस भस्मों के निर्माण की जो शास्त्रोक्त पद्धति है, उससे कम मात्रा में प्रतिदिन दवाइयों का निर्माण किया जा सकता है । आज औषधियों की मांग बढ़ गयी है । इस मांग की पूर्त्ति करना प्राचीन पद्धति से औषधि का निर्माण के द्वारा सम्भव नहीं है । आज मशीनी युग है । निर्मातागण कम से कम समय में ज्यादा उत्पादन की अपेक्षा करते हैं । उनकी इस आदत से औषधियों की कार्मुकता पर भी असर पड़ा है । जल्दीबाजी में निर्मित औषधियों में प्राकृतिक गुण नहीं आ पाते हैं । यह विकट समस्या है । आयुर्वेद के विद्वानों विशेषकर अनुसंधान कर्मियों को चाहिए कि वे नवीनतम मशीनों की खोज करें एवं ऐसी प्रक्रिया का निर्माण करें जिससे औषधियों की कार्मुकता पर असर नहीं पड़े । हमें विश्वास है कि आयुर्वेद के विद्वतजन इस समस्या से निजात पाने के लिए संकल्प लेंगे ।

आयुर्वेद केवल औषधियों तक सीमित नहीं है । इसकी विशेषता इसकी चिकित्सा-पद्धति में है । दुर्भाग्य है कि अधिकांश चिकित्सक चिकित्सा-कार्य में आयुर्वेदीय पद्धति का सहारा नहीं लेकर एलोपैथी पद्धति का सहारा लेते हैं । यह आयुर्वेद के सिद्धान्तों के विपरीत है । इससे हमारी बदनामी भी होती है । आधुनिक चिकित्सक हमारा मजाक उड़ाते हैं और कुछ चिकित्सक आयुर्वेद के खिलाफ दुष्प्रचार भी करते हैं । यदि हम आयुर्वेद के स्नातक हैं तो हमें आयुर्वेद पर विश्वास करना चाहिए । हमारा अनुरोध है कि आयुर्वेद के चिकित्सक समुदाय अपनी इन कमजोरियों को दूर करने का संकल्प लें ।

बैद्यनाथ
अर्जुनारिष्ट
हृदय की कमजोरी, दिल की धड़कन तथा छाती एवं फेफड़ों में लाभकारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारावाहिक

आयुर्वेद का इतिहास - 49

1. पं० बनवारी लाल शर्मा
2. विमल चन्द्र झा

च्यवन

महाभारत[1] में प्रसंग है कि अश्विनी कुमारों ने सुकन्या को स्नान करने के पश्चात् देखा । उनलोगों ने सुकन्या से परिचय पूछा । सुकन्या ने बताया कि वह राजा शर्यांति की पुत्री और महर्षि च्यवन की पत्नी है । वह पूरी निष्ठा के साथ पतिदेव की सेवा करती है । अश्विनी कुमारों ने सुकन्या के सौन्दर्य की प्रशंसा करते हुए प्रलोभन दिया कि वह बूढ़ा (च्यवन) तो उसकी रक्षा एवं पालन-पोषण करने में समर्थ नहीं है । अतः च्यवन को छोड़कर उनदोनों में से किसी एक को पति चुन ले । सुकन्या के इंकार करने पर उनलोगों ने कहा - "हम देवताओं में श्रेष्ठ वैद्य हैं । तुम्हारे पति को तरुण और मनोहर रूप से सम्पन्न बना देंगे । तब तुम हम तीनों में से किसी एक को अपना पति बना लेना । इस शर्त के साथ तुम चाहो तो अपने पति को यहां बुला लो ।" उन दोनों की बात सुनकर सुकन्या च्यवन मुनि के पास गयी और सम्पूर्ण वृत्तान्त बता दिया । च्यवन मुनि की स्वीकृति के पश्चात् सुकन्या अश्विनी कुमारों के पास गयी और उनसे अपने पति को यौवन प्रदान करने का आग्रह किया । अश्विनी कुमारों की सलाह पर उन सहित तीनों ने (च्यवन सहित) सरोवर में प्रवेश किया । तदनन्तर दो घड़ी के पश्चात् वे सब के सब दिव्य रूप धारण करके सरोवर से बाहर निकले । अश्विनी कुमारों ने सुकन्या से तीनों में से किसी एक को पति के रूप में स्वीकार करने के लिए कहा । सबों के रूप एक थे, किन्तु सुकन्या मन और बुद्धि को निश्चय करके अपने पति को ही स्वीकार किया । महाभारत में च्यवन के सम्बन्ध में अनेक प्रसंग हैं । एक प्रसंग है कि राजा कुशिक और उनकी पत्नी ने च्यवन की काफी सेवा की । च्यवन ने राजा-रानी को अपने पथ से भ्रष्ट करने के अनेक उपाय किये, किन्तु असफल रहे । अन्ततः दोनों च्यवन के आशीष से नीरोग हुए । यहां पर पति-पत्नी के लिए नीरोग शब्द का व्यवहार किया जाना, तरुणावस्था में पहुंचाना एवं आनन्द का अनुभव कराना आदि शब्द ऐसे हैं जो च्यवन के वैद्यकीय व्यक्तित्व पर हलका प्रकाश डालते है । जैसे -

ततस्तु तौ नवमभिवीक्ष्य यौवनं
पस्परं विगतरूजा विवामरौ ।
नन्दतुः शयनगतौ वपुधरौ ।
श्रिया युतौ द्विजवरदत्तया तदा ॥

- महाभारत 53/69 अनुशासन पर्व

एक अन्य प्रसंग में महाभारत[2] में च्यवन को भृगु पुत्र कहा गया है । प्रस्तुत ग्रन्थ[3] इसी अध्याय में अश्विनी कुमार, इन्द्र और च्यवन का वर्णन है । इन्द्र अश्विनी कुमारों को सोमरस पान करने का अधिकारी नहीं मानते थे । क्योंकि वे चिकित्सा-वृत्ति करते थे । च्यवन अश्विनी कुमार के प्रति कृतज्ञ थे । अतः उन्होंने उनके सोमरस पान करना स्वीकार किया । इन्द्र की धमकी के बावजूद च्यवन ने अश्विनी कुमारों के लिए सोमरस का पान किया । बाद में देवराज इन्द्र ने भी भय से अश्विनी कुमारों को सोमरस पान करने का अधिकारी बनाया ।

शतपथ ब्राह्मण में भी लगभग यही कहानीं है । त्तैतरीय संहिता में जिक्र है कि "चूंकि अश्विनी कुमार चिकित्सा-वृत्ति करते थे, इसलिए वे किसी बलिदान के अधिकारी नहीं है ।" यह एक विचित्र बात है । महाभारत एवं शतपथ ब्राह्मण में भी चिकित्सा-वृत्ति को प्रस्तुत संदर्भ में हेय देखा गया है । इन संदर्भों से यह निष्कर्ष निकलता है कि ब्राह्मणों को चिकित्सा वृत्ति में प्रवृत्त नहीं होना चाहिए ।

आज का प्रमुख उत्पाद च्यवनप्राश च्यवन के नाम पर रखा गया है - ऐसा इतिहासकारों का तर्क है । श्री गिरीन्द्रनाथ उपाध्याय[4] ने बॉवर पाण्डुलिपि का उद्धरण देते हुए लघु च्यवनप्राश का जिक्र किया है । उन्होंने ब्रह्मवैवर्त्त पुराण के माध्यम से च्यवन महर्षि द्वारा रचित

1. प्रबन्ध निदेशक, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० 2. सम्पादक, सचित्र आयुर्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जीवदान' नामक पुस्तक का उल्लेख किया है ।

भार्गव च्यवन

आचार्य प्रियव्रत शर्मा[5] ने अपनी पुस्तक में च्यवन के स्थान पर भार्गव च्यवन का उल्लेख किया है । चरक संहिता[6] में शब्द है - ''भार्गवश्च्यवनोऽभिजित्'' । हिन्दी भाषा में इसका अर्थ भार्गव, च्यवन और अभिजित् है । प्रस्तुत पुस्तक के अनुसार भार्गव और च्यवन पृथक्-पृथक् व्यक्तित्व के स्वामी थे । ऐसे भार्गव के पर्याय भृगुपुत्र, परशुराम, शुक्राचार्य, जमदग्नि, शिव, प्राचीन जनपद आदि अनेक हैं । इस दृष्टिकोण से च्यवन का आशय ही भृगु-पुत्र है । भाव प्रकाश[3] के अनुसार भृगु महर्षि के गोत्र में उत्पन्न कामी च्यवन ऋषि जब वृद्ध होने से कुरूप हो गये थे, तब अश्विनी कुमारों ने वीर्य, वर्ण और स्वर से युक्त करके फिर से उन्हें युवा कर दिया था । यदि यह अर्थ सही है, तो च्यवन के साथ भार्गव शब्द का जो प्रयोग किया गया है, तो उसका आशय भृगु गोत्र में उत्पन्न च्यवन से है, न कि भार्गव एवं च्यवन एक थे । डा० रामकरण शर्मा एवं वैद्य भगवान दास द्वारा सम्पादित पुस्तक चरक संहिता[8] के अवलोकन से भी ज्ञात होता है कि भार्गव और च्यवन पृथक् थे । इस तरह चरक संहिता के विभिन्न संस्करणों के अवलोकन (हिन्दी भाषा) से ज्ञात होता है कि भार्गव और च्यवन पृथक्-पृथक् व्यक्ति थे । इसके बावजूद एक प्रश्न दिलचस्प है । यदि भार्गव का अर्थ ही भृगु-पुत्र हुआ और च्यवन ही भृगु-पुत्र थे जो भार्गवश्च्यवन का क्या अभिप्राय है ? यदि अभिप्राय यह है कि भृगु के अनेक पुत्रों में एक च्यवन भी थे, तो बात दूसरी है । विद्वानों एवं भाषाविदों को ऐसे अनेक शब्दों पर गम्भीरता से विचार करना चाहिए एवं एकमत पर पहुंचने का प्रयास करना चाहिए । संशय के ऐसे अनेक स्थल प्राचीन ग्रन्थों में हैं । विद्वानों को ऐसे संशयों का निराकरण करना चाहिए ।

विश्वामित्र

इतिहास में विश्वामित्र एक ऐसे व्यक्तित्व के स्वामी रहे हैं जिनका धार्मिक महत्व ज्यादा रहा है, चिकित्सीय महत्व कम । फिर भी, दोनों दृष्टिकोणों से उनके व्यक्तित्व पर प्रकाश डालना चाहेंगे ।

धर्मशास्त्र का इतिहास[9] के अनुसार विश्वामित्र द्वारा उद्धृत वृद्ध-याज्ञवल्क्य के श्लोक में विश्वामित्र धर्मशास्त्रकार कहे गये हैं । अपरार्क, स्मृति चन्द्रिका, जीमूतवाहन का कालविवेक तथा अन्य ग्रन्थ विश्वामित्र के श्लोकों को उद्धृत करते हैं । विश्वामित्र के महाभारत - विषयक अंश बहुधा उद्धृत होते हैं । पौराणिक कोश में विश्वामित्र का निम्न वर्णन है -

पुरूवंशी महाराज गाधि के पुत्र एक प्रसिद्ध ऋषि जो क्षत्रिय होते हुए भी अपने तपोबल से ब्रह्मर्षियों में परिगणित हुए थे । इनका क्षत्रिय-दशा का नाम विश्वरथ था, पर ब्राह्मणत्व प्राप्त करने पर यह विश्वामित्र के नाम से विख्यात हुए । पुराणानुसार गाधि की सत्यवती नाम की पुत्री ऋचीक ऋषि को व्याही गयी थी । ऋचीक ने अपनी पत्नी और सास के लिए दो अलग-अलग चरू बनाये, पर सत्यवती की माता ने सत्यवती वाला चरू खा लिया और सत्यवती ने अपनी माता के निमित्त चरू खा लिया । सत्यवती के पुत्र जमदग्नि हुए जो ब्राह्मण होते हुए भी क्षत्रियगुण सम्पन्न थे और महाराज गाधि की पत्नी के गर्भ से यही विश्वामित्र हुए जो क्षत्रिय कुल में उत्पन्न होते हुए भी ब्राह्मणों के सदृश गुणवाले हुए । शुनःशेप, मधुच्छन्द, धनंजय, कृतदेव, अष्टक, कच्छप, हारीत आदि इनके 100 पुत्र हुए । इनकी पत्नी का नाम रेणु था । एक बार इनके तप से डरकर इन्द्र ने मेनका नाम की अप्सरा को इनका तप भंग करने को भेजा । मेनका के गर्भ से विश्वामित्र को शकुन्तला नाम की पुत्री हुई जिसका विवाह राजा दुष्यन्त से हुआ और वह भरत नामक प्रतापी पुत्र की माता हुयी । राजा त्रिशंकु को इन्होंने सदेह स्वर्ग पहुंचाया था । राजा हरिश्चन्द्र के सत्य की सुप्रसिद्ध परीक्षा लेनेवाले भी यही विश्वामित्र थे । पुराणों में इनके सम्बन्ध की अनेक कथाएं भरी पड़ी हैं । इनके आश्रम में रावण के अनुचर मारीच और सुबाहु बराबर विघ्न उपस्थित कर यज्ञों को दूषित कर देते थे । अतः ये राम और लक्ष्मण को अयोध्यापति दशरथ से मांग लाये जिन्होंने तारका आदि का वध कर डाला था । इन्हीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहने से राम और लक्ष्मण मिथिला गये जहां इनका विवाह सम्पन्न हुआ । विश्वामित्र के आदेश से श्रीराम ने गौतम-पत्नी अहिल्या का उद्धार किया । महर्षि विश्वामित्र का पूरा जीवन ही परोपकार में व्यतीत हुआ । यह वेदमाता गायत्री के द्रष्टा हैं तथा इनके अनेक धर्मग्रन्थ भी हैं ।

वैदिक कोश[11] में विश्वामित्र का निम्न आशय है-

सभी का मित्र । विश्वामित्र एक ऋषि का नाम है; इन्हें कुशिक का पुत्र कहा गया है: ऋ: 3.33.5; 3.57.7, 12 । ये ऋग्वेद के तृतीय मंडल के ऋषि कहे गये हैं । एक सूक्त में, जो वस्तुत: उनका ही है, उन्होंने विपाश् और शुतुद्री नदियों की स्तुति की है: ऋ. 3.33.5 । वहां उन्होंने अपने को कुशिक का पुत्र कहा है । वे उक्त स्थानों पर भरतों के सहायक प्रतीत होते हैं । यह जन आक्रमण के लिए पूर्व से आ रहा था । नदी पार करते समय वे बाढ़ में फंस गये, पर विश्वामित्र ने नदियों को स्तुति द्वारा प्रसन्न कर लिया और भरत लोग पार पहुंच गये। उसी मण्डल के 3.55.9-11 में भी इस घटना का उल्लेख आया है, किन्तु सायण ने इसका गलत अर्थ समझा है । उनके अनुसार धन प्राप्त करके जाते समय विश्वामित्र का पीछा किया गया था । सायणभाष्य, ऋ० 3.33 42 । यास्क के अनुसार केवल यह ज्ञात होता है कि राजा ने विश्वामित्र को अपना पुरोहित बनाया था; निरूक्त, 2.24 । विश्वामित्रों का ऋग्वेद 3.1.21; 3.18.4; 3.53.13; 10.89.17; अवे०, 18.3.6; 18.4.54; जैउब्रा० 3.15.1 में उल्लेख आया है । इनके वंश को कुशिकों के रूप में दिखाया गया है; ऋ० 3.26.1, 3; 3.29.15; 2.30.20; 3.42.9.10 । परवर्त्ती साहित्य में वसिष्ठ के स्थान विश्वामित्र भी एक देवशास्त्रीय व्यक्ति बन गये हैं । इनका उललेख कभी-कभी जमदग्नि के साथ आया है; तुo ऋ०, 3.53.15.16 । वे शुन:शेप के, जिन्हें उन्होंने अपना दत्तक पुत्र देवरात के रूप में बनाया था, होतृ-पुरोहित थे: ऐब्रा० 7.16; शांश्रौत, 15-17 । वे इन्द्र के कृपा-पात्र थे और उन्होंने इन्द्र से भेंट भी की थी: ऐआ०, 2.2.3, शांआ; 1.5 । एक ऋषि के रूप में अन्यत्र भी उनका उल्लेख आया है : ऐआ. 2.2.1, ऐब्रा० 6.18.1; 6.20.3; तै०सं०, 2.2.1.2; 3.1.7.3; 5.2.3.4; का. सं० 16.19; 20.9; मै सं० 2.7.19, कौ ब्रा० 15.1; 26.14; 28.1, 2; 29.3; पं विं ब्रा० 14.3.12; बृउ; 2.2.4; जैउब्रा० 3.3.13; 3.15.1 इत्यादि; जमदग्नि के साथ; अवे० 4.29.5 इत्यादि ।

आर्षकाल में विश्वामित्र राजा बन चुके हैं । वे बाद में ब्राह्मण बन गये थे । ऋग्वेद में उनके राजा होने का उल्लेख नहीं है; किन्तु निरूक्त 2.24 में उनके पिता कुशिक को राजा कहा गया है । ऐतेय-ब्राह्मण 7.18.9 में कहा गया है कि शुन: शेप ने उनका दत्तक पुत्र बनकर जह्नुओं का राजत्व एवं गाथियों का दैव वेद दोनों को पा लिया था; किन्तु द्र० शांश्रौत सूत्र, 15.27 जहां राजत्व का उल्लेख नहीं है । पञ्चविश ब्राह्मण 21.12.2 में भी विश्वामित्र को राजा कहा गया है । किन्तु इन सब उद्धरणों से विश्वामित्र के राजा होने की संभावना नहीं उभर पाती; संभवत: उनके पूर्वज राजवंश के रहे हों ।

एक अन्य वैदिक कोश[12] में विश्वामित्र का आशय है - (1) सबका स्नेही, (2) आत्मा का स्नेही । 'विश्वामित्रेभिरध्यते अजस्र:' ऋ० 3.1.21

महाभारत के अनुशासन पर्व के अध्याय 56 में च्यवन और राजा कुशिक की विस्तृत चर्चा है । प्रस्तुत ग्रन्थ के अनुसार ऋचीक मुनि कुशिक के कुल में राजा गाधि को एक महान तपस्वी एवं परम धार्मिक पुत्र प्रदान करेंगे जिसका नाम होगा विश्वामित्र । जैसे -

क्षत्रियं विभ्रकर्माणं वृहस्पतिमिवौजसा ।
विश्वामित्रं तव कुले गाधेः पुत्रं सुधार्मिकम् ।
तपसा महता युक्तं प्रदास्यति महाधुते ।

आशय यह है कि यदि ऊपर दिये गये उद्धरण को माना जाय, तो विश्वामित्र कुशिक पुत्र नहीं होकर ऋचीक पुत्र ज्ञात होते हैं । हां, इससे विश्वामित्र कुशिक के पौत्र ज्ञात होते हैं जिन्होंने सर्व प्रथम ब्राह्मणत्व प्राप्त किया था -

कथमेष्यति विप्रत्वं कुलं भे भृगुनन्दन ।
कश्चासौ भविता बन्धुर्मम कश्वापि सम्मतः ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी विश्वकोश[13] में विश्वामित्र का निम्न अभिप्राय है –

गोत्रसूची में यह नाम है । अत: विश्वामित्र नाम के अनेक व्यक्ति होंगे, यह निश्चित है । वस्तुत: वैदिक वाङ्मय के विश्वामित्र और पुराणादि में पठित विश्वामित्र (जिनकी अनेक कथाएं मिलती हैं), एक व्यक्ति नहीं हैं, बल्कि इस गोत्र के विभिन्न व्यक्ति हैं, जो विभिन्न काल में हुए थे । श्रुति पुराणादि में विश्वामित्र संबंधी कथाओं के सूक्ष्म अध्ययन से कई पृथक् विश्वामित्र की सत्ता ज्ञात होती है, जैसा पार्जिटर महोदय ने दिखाया है । (Ancient Indian Tradition, ch-xxi)। वेदोक्त सुदास् नामक राजा से संबंधित विश्वामित्र, अयोध्याराज कल्माषपाद नृप से संबंधित विश्वामित्र, ताड़का निधनकारी राम का सहायक विश्वामित्र एवं मेनका के गर्भ में शकुन्तला को जन्म देने वाला विश्वामित्र एक व्यक्ति नहीं हो सकता ऐसा ज्ञात होता है ।

कान्यकुब्जनृप कुशिकपुत्र गाधि का पुत्र विश्वामित्र पुराणों में बहुधा निर्दिष्ट हुआ है । वसिष्ठ के पुत्रों का नाश स्नानादि की सुविधा के लिए कोशिश नहीं कर निर्माण, नंदिनी धेनु के अपहरण को लेकर वसिष्ठ के साथ विवाद करना और उनके तपोबल से पराजित होकर ब्राह्मण लाभ के लिए यत्न करना इत्यादि कथाएं बार-बार इतिहास पुराण में कही गयी है ।

विश्वामित्र के मधुच्छंदा अष्टक आदि कई पुत्र हैं । ये सब पुत्र विभिन्न विश्वामित्रों के हैं – यह ज्ञात होता है । इसके वंशजों ने अनेक गोत्रों की प्रवर्तना की जिनमें देवरात, जाबाल, गालब, पाणिनि, सुश्रुत, याज्ञवल्क्य आदि नाम प्रसिद्ध हैं ।

विश्वामित्र के साथ कई शास्त्रों का सम्बन्ध है । किसी विश्वामित्र ने भरद्वाज से आयुर्वेदाध्ययन किया, यह चरक से ज्ञात होता है । शाङ्खायन आरण्यक से विदित होता है कि किसी विश्वामित्र ने इन्द्र से यज्ञज्ञान प्राप्त किया । धनुर्वेदाचार्यों में विश्वामित्र का नाम है – यह प्रपंचहृदय के वाक्य से ज्ञात होता है । विश्वामित्र स्मृतिकार भी हैं । ये सब विश्वामित्र विभिन्न व्यक्ति हैं, ऐसा मानना ही संगत प्रतीत होता है ।

हिन्दी साहित्य कोश[14] में विश्वामित्र का निम्न अर्थ है –

एक ऋषि तथा ऋग्वेद के अनेक मंत्रों के निर्माता के रूप में प्रसिद्ध हैं । ऋग्वेद के अनुसार कुश वंश के राजा कुशिक वंश के थे, किन्तु परवर्ती साहित्य में महाराज गाधि के पुत्र माने गये हैं । [इनके जन्म के सम्बन्ध में वही कथा कही गयी है जिसका वर्णन ऊपर किया जा चुका है ।] विश्वामित्र के व्यक्तित्व से सम्बन्धित कथाओं में उनकी ब्रह्मर्षि वशिष्ठ से प्रतिद्वन्दिता ज्ञात होती है । इसके कुछ उल्लेख ऋग्वेद में भी प्राप्त होते हैं । दोनों वेदों की ऋचाओं के रचनाकार थे । गायत्री मन्त्र विश्वामित्र का ही रचा हुआ कहा जाता है । उनकी अधिकांश ऋचाएं ऋग्वेद के तृतीय मण्डल में मिलती है। वशिष्ठ सप्तम मण्डल की ऋचाओं के रचनाकार थे। विश्वामित्र और वशिष्ठ दोनों ही महाराज सुदास के महा राजपण्डित थे । वशिष्ठ विश्वामित्र को क्षत्रिय कुलोद्भव होने के कारण हेय दृष्टि से देखते थे । किन्तु, विश्वामित्र स्वयं को वशिष्ठ के मुख से ब्रह्मर्षि कहलाना चाहते थे तथा इसके लिए उन्होंने वशिष्ठ पर बल का भी प्रयोग किया । उन्होंने उनके सौ पुत्रों का वध कर डाला। प्रतिशोध में वशिष्ठ ने भी विश्वामित्र के पुत्र का वध कर डाला । महाभारत में ऐसा उल्लेख मिलता है कि एक बार गंगा से भी विश्वामित्र ने वशिष्ठ को लाने के लिए कहा था, किन्तु जब गंगा वशिष्ठ को उनके पास नहीं लायी वरन् उनकी पहुंच के बाहर एक सुरक्षित स्थान पर पहुंच आयी तो उन्होंने गंगा की धारा रक्तरंजित कर दी। 'रामायण' में विश्वामित्र और वशिष्ठ की प्रतिद्वन्द्विता की कहानी आयी है । महाराज के रूप में वे प्राय: वशिष्ठ के आश्रम में आया करते थे । एक बार इन्होंने वशिष्ठ की कामधेनु को बलपूर्वक खोलकर अपने यहां ले जाने का यत्न किया, किन्तु कामधेनु अपनी अर्गला तुड़ाकर भाग गयी । विश्वामित्र ने उसे सयान ले जाने की चेष्टा की लेकिन वशिष्ठ के पुत्रों ने उनका मार्ग रोक लिया। विश्वामित्र ने वशिष्ठ के 100 पुत्रों को मार डाला। अन्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में स्वयं वशिष्ठ ने उन्हें पराजित किया । अपमानित होकर विश्वामित्र ने तपस्या द्वारा अपने को ब्राह्मण वर्ण में परिवर्तित करने का यत्न किया । विश्वामित्र की तपस्या में ताड़का राक्षसी तथा उसके पुत्रों के अनेक व्याघात उत्पन्न किये । फलस्वरूप विश्वामित्र, राम-लक्ष्मण को दशरथ से माँग कर ले गये । मार्ग में ही उन्होंने, ताड़का वध किया । जनक के धनुष यज्ञ में विश्वामित्र राम और लक्ष्मण को ले गये थे । राम ने धनुष तोड़कर सीता से विवाह कर लिया । विश्वामित्र ने वशिष्ठ की प्रतिद्वन्द्विता से प्रेरित होकर एक बार त्रिशंकु को वशिष्ठ के अस्वीकार करने पर भी सदेह स्वर्ग भेज दिया था । इनकी घोर तपस्या को देखकर इन्द्र भी विचलित हो गये थे । उन्होंने अपने ऐश्वर्य के छीने जाने की संभावना से मेनका को विश्वामित्र की तपस्या को भंग करने के लिए भेजा था । इन्द्र को अपनी योजना में सफलता मिली । विश्वामित्र मेनका के सौन्दर्य से प्रभावित हुए तथा उसके संसर्ग से शकुन्तला का जन्म हुआ किन्तु इस दुष्कर्म से उत्पन्न ग्लानि के फलस्वरूप वे हिमालय में तपस्या करने चले गये । अन्त में वशिष्ठ ने विश्वामित्र को ब्रह्मर्षि मान लिया तथा इनका हठधर्म सफल हुआ । रामकथा में विश्वामित्र का महत्वपूर्ण स्थान है ।

(निरन्तर जारी)

सन्दर्भ :-

1. रताहं च्यवने पत्यौ मैवं मां पर्यशङ्कतम् ।
तावब्रुतां पुनस्त्वेनामावां देवभिषग्वरौ ।।
युवानं रूपसम्पन्नं करिष्यावः पतिं तव ।
ततस्तस्यावयोश्चैव वृणीष्वान्यतमं पतिम् ।
एतेन समयेनैनमामन्त्रय पतिं शुभे ।
.....
.....
यत्र वाप्यभिकामासि तं वृणीष्व सुशोभने ।
सा समीक्ष्य तु तान् सर्वांस्तुल्यरूप धरान् ।
निश्चित्य मनसा बुद्ध्यादेवी वव्रेस्वकं पतिम् ।
लब्ध्वा तु च्यवनो मार्यो वयो रूपं च वाञ्छितम् ।
दृष्टोऽब्रवीन्म हातेजास्तौ नासत्याविदं वचः ।
यथाहं रूपसम्पन्नो वयसा च समन्वितः ।
- महाभारत - वन पर्वणि - त्रयोविंशत्यधिक शततमोऽध्यायः - 12/13.. 20-22

2. तत्रैनं च्यवनो राजन् याजयामास भार्गवः ।
अद्भुतानि च तत्रासन् यानि तानि निबोधमे
- चतुर्विंशत्यधिक शततमोऽध्यायः - 7

3. एतदेव यदा वाक्यमाग्रेडयति देवरात् ।
अनाद्यत्य ततः शक्रं ग्रहं जग्राह भार्गवः ।
- वन पर्व 124/13

4. History of Indian Medicine - Girindra nath Mukhopadhyay- Vol.II, University of Calcutta, 1926.

5. आयुर्वेद का वैज्ञानिक इतिहास - डा० पी०व्ही०शर्मा, चौखम्बा ओरियन्टलिया, वाराणसी ।

6. चरक संहिता - सू० 1/10 - श्री जयदेव विद्यालंकार - मोतीलाल बनारसी दास ।

7. भार्गवश्च्यवनः कामी वृद्धः सन् विकृतिं गतः ।
वीर्यवर्ण स्वरोपेतः कृतोऽश्विभ्यां पुनर्युवा ।
भा०प्र० पूर्वखण्ड 1/13

8. Agnivesa's Carak Samhita - Dr. Ramkaran Sharma and Vaidya Bhagwan Dash - Vol.1 - Chowkhamba Sanskrit Series office - Varanasi.

9. धर्मशास्त्र का इतिहास - प्रथम भाग - डा० पाण्डु रंग वामन काणे - हिन्दी समिति - सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश, लखनऊ ।

10. पौराणिक कोश - राणा प्रसाद शर्मा - ज्ञान मण्डल लि०, वाराणसी ।

11. वैदिक कोश - सूर्यकान्त - चौखम्बा विश्वभारती, वाराणसी ।

12. वैदिक कोश - भाग -3 - पं० चन्द्रशेखर उपाध्याय एवं श्री अनिल कुमार उपाध्याय-नाग प्रकाशक, 11ए/यू.ए. जवाहर नगर, दिल्ली - 110 007 ।

13. हिन्दी विश्वकोश - खण्ड -11, नागरी प्रचारिणी सभा - वाराणसी ।

14. हिन्दी साहित्य कोश - भाग - 2 - धीरेन्द्र वर्मा, ब्रजेश्वर वर्मा, रामस्वरूप चतुर्वेदी, रघुवंश - ज्ञानमंडल लि०, वाराणसी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्धावभेदक — कारण एवं उपचार

प्राध्यापक हरिभाई के० त्रिवेदी

ग्यारह शिरोरोग में से अर्धावभेदक एक शिरोरोग है जिसका वर्णन चरक, सुश्रुत, वाग्भटादि संहिता ग्रंथों में है।

चरक ने रूक्ष, अत्यधिक भोजन, वायु, अवश्याय और अधिक मैथुन, वेगविधारण, श्रम, अधिक व्यायाम आदि कारणों को माना है। इन कारणों से प्रकुपित वायु स्वयं अथवा कफानुबंध होकर शिर के अर्धभाग को जकड़कर मन्या-भ्रू-शंख, कर्ण, नेत्र में तीव्र वेदना करता है। वेध्वा शस्त्र पीडनवत् अथवा अरणी मंथनवत् तीव्र वेदना होती है। चरक इसको वातज या वातकफज मानते हैं किन्तु सुश्रुत इसे त्रिदोषज मानते हैं।

सुश्रुत ने वर्णन इस प्रकार किया है -

शिरसोऽन्यतरे पार्श्वे कुपितो मारूतोयदा
श्लेष्मणा रूध्यते जन्तोस्तोह स्कुटनदालनैः।
शूलावद्यरर्णैगाढमर्ध तदुवरूध्यते
नयनग्चावदीर्येत सोऽर्धभेदः कफानिलात्॥

वाग्भट ने इसे वातज माना है और अर्ध शिर में हो तो उसे अर्धावभेदक और पूरे शिर में हो तो उसे शिरस्ताप कहा है।

शिरस्तापोऽयमर्धेतु मूर्ध्नः सोऽर्धावभेदकः।

कष्ट के द्वारा अवरूद्ध वायु मन्या, भ्रू, शंखप्रदेश और ललाट के समितत्व को पित्त के संयोग से सुखाकर शिर में अवधारणवत् वेदना को उत्पन्न करता है।

अर्धावभेदक शमन न होने पर श्रवणेन्द्रिय और नेत्र की क्रिया को भी हानि करता है। इस रोग का आक्रमण (दौरा) तीसरे दिन, पाँचवें दिन, पन्द्रहवें दिन अथवा महीने के पश्चात होता है।

अति चिंतनशील, मननशील, व्यक्तियों में तथा मानसिक तनाव से ग्रस्त व्यक्तियों में यह रोग देखा जाता है। स्त्रियों में आर्तव प्रवृत्ति के पूर्व-पश्चात् इसका वेग प्रायः देखा जाता है। वेगावरोध और सूर्यसंताप से इस रोग का वेग आता है और भ्रम तिमिरदर्शन, दृष्टिमांद आदि लक्षण शिरःशूल के उपरान्त मिलते हैं।

ग्यारह शिरोरोगों में एक सूर्यावर्त नामक शिरोरोग है, जो प्रायः अर्धावभेदक जैसे ही लक्षणों वाला है। सूर्यावर्त में मध्याह्नकाल में शिरःशूल तीव्रतम और रात्रि में शमन होता है। आधुनिक चिकित्साविज्ञान के अनुसार Sinusitis में इसका समावेश कर सकते हैं।

माइग्रेन (Migraine) और अर्धावभेदक

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के Migraine रोग के साथ अर्धावभेद का सादृश्य देखने को मिलता है। सूर्य संताप से शिरःशूल की वृद्धि सूर्यावर्त और माइग्रेन दोनों में समान है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान की दृष्टि से माइग्रेन का वर्णन देखेंगे।

लक्षण :- चार प्रकार में लक्षणों को विभाजित करेंगे।

1. Common Migraine : - (Migraine without aura)
   - — तीव्र शिरःशूल - Severe headache
   - — भेदनवत पीड़ा - Throbbing pain
   - — अर्धःशिर स्थित शूल - Unilateral location वाम अथवा दक्षिण ललाट-भ्रू-शंख में शूल।
   - — सोपान आरोहणे वृद्धि - Aggravation by walking stairs
   - — प्रकाश असहिष्णुता - Photophobia
   - — शब्दासहिष्णुता - Phono phobia
   - — वेगकाल 4 से 12 घण्टे तक।
2. Classic Migraine - Migraine with aura
   - — पूर्वरूप (aura) मिलता है।
   - — संवेदना (Sensory), क्रिया (Motor) और दृष्टि (Visual) से संलग्न लक्षणों का मिलना।
3. Basilar Migraine
   - — शिशुओं में और वयस्कों में देखा जाता है।
   - — भ्रम-शिरःशूल
   - — अस्पष्ट भाषण (Dysarthria)
   - — दृष्टिभ्रम-एक चीज दो दिखाई देना (Diplopia)
   - — अस्थिर गति (ataxia)
   - — कर्णनाद
4. Carotid Migraine
   - — ललाट से नीचे के भाग में शूल।
   - — मुख (Face) पर शूल।

निवृत्त प्रोफेसर, सरकारी आयुर्वेद महाविद्यालय, बड़ौदा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामान्यत: Migraine का रोगी सूर्यसंताप, प्रकाश, कोलाहल, भीड़ से दूर रहना पसंद करता है । ट्राफिक की भीड़ से Migraine का वेग आता है । एकान्त, शीत कतावरण और अल्प प्रकाश से वेग का शमन होता है ।

हेतु :- (Etiopathogenesis) ।

(अ) आनुवंशिक कारण :- यह व्याधि आनुवंशिक भी देखा जाता है । Genetic factor इसमें काम करता है । Gene में cromosoms (रंगसूत्र) की विकृति के कारण यह सहज व्याधि (Congenital) भी है ।

(1) MELAS : Mitochondrial Encephato my pathy lactic acidosis.

यह माइटोकोन्ड्रीयल डीसओर्डर है, जो माता की ओर से शिशु में आनुवंशिक होता है । यह Shake like episoder है ।

(2) F.H.M. :- Familial Hemiplegic Migraine

इसमें बारबार एक पक्ष या मुखार्ध में क्रियाहानि देखी जाती है । इसके Aura Phase में पूर्वरूप में अन्य लक्षण भी देखे जाते हैं यथा एक पक्ष में कर्महानि-संज्ञाहानि, अस्पष्ट वाचा, मनोवैचित्य, स्मृतिह्रास, मूर्च्छा, दृष्टि विकार (hemiplegic visual field defect) तथा शिर:शूल ।

इस प्रकार के रुग्णों CACNLING में जनीन में विकृति होती है जो 19 वें रंगसूत्र पर हैं ।

(3) Dopaminergic receptor :- Dopaminergic receptor जनीन में विकृति होने से भी माइग्रेन होता है ।

(ब) Vascular Theory of Migraine :-

माइग्रेन के दौरे के समय पर मस्तिष्क में रक्तपरिभ्रमण की प्रक्रिया 25 से 30 प्रतिशत कम हो जाती है । रक्तपरिभ्रमण मस्तिष्क के पृष्ठभाग (Occipital Cortex) से कम होकर क्रमश: अग्रभाग में कम होने लगता है । अर्थात् रुधिराभिसरण की प्रक्रिया पृष्ठभाग से मंद होकर अग्रभाग की ओर मंद होने लगती है । यह दौरा 4 से 6 घण्टे तक चलता है । जिस मस्तिष्क भाग में रक्तपरिवहन कम होता है उस प्रकार लक्षण देखे जाते हैं । इसको Focal neurological signal कहते हैं । उदाहरण के रूप में पक्षवध, एक नेत्र में दृष्टि हानि (hemianopia) इत्यादि ।

(क) Neuronal Theroy of migraine :-

इसमें Potanium liberating depression of cortical activity होती है जो मंदागति से काम करती है । इसको Spreading depression भी कहते हैं ।

(ड) Trigernino vascular systemic migraine :-

त्रिधारा नाड़ी Trigominal nerve जो Cranial nerve है उसका कार्य क्षेत्र नेत्र हनु और नासा है । उसका जो केन्द्र मस्तिष्क में है उसकी उत्तेजना (activation) होने से Vasocative neuropeptide यथा Substance-P और Calcitonine gene related peptide स्रवित होकर मुख पर और शिर में शूल उत्पन्न करते हैं ।

(इ) Hydroxytryptamine (Serotonin) in migraine

माइग्रेन में Serotonin का प्रमाण कम हो जाने से शिर:शूल उत्पन्न होता है ।

(ई) Doparnine in migraine :-

माइग्रेन का आक्रमण Dopamine की वृद्धि होने से हो सकता है जिसमें Dopamine Receptor Hypersen-sitivity होती है । इसकी वजह से छर्दि, उत्क्लेश, जृम्भा, न्यूनरक्तचाप आदि होता है । Dopamine की अल्प मात्रा देने से भी माइग्रेन का दौरा आता है ।

(आ) Sympathetic nervous disturing migraine

जो प्रक्रिया या हेतु की उत्तेजना करता है उससे भी माइग्रेन का दौरा आता है यथा चिन्ता, अनिद्रा-जागरण, रक्तशर्करा की कमी (Hypoglycemia), कोलाहल, भीड़ इत्यादि ।

इस प्रकार का आधुनिक चिकित्सा विज्ञान का वर्णन देखकर हम अर्धावभेदक को यथाशक्त अर्धघटित कर सकते हैं ।

चिकित्सा तथा पथ्यापथ्य :-

"नासा हि शिरसो द्वारम् ।"

शिरोरोग में नासा में प्रयुक्त नस्य सविशेष कार्य करता है । अत: कफ और वायु की प्रधानत: चिकित्सा नस्य के द्वारा करनी चाहिये और तत् पश्चात् पित्त शमन के उपचार करने चाहिये । चरक ने सिद्धिस्थान में इसकी चिकित्सा बतायी है, जो इस प्रकार है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

— चतुर्स्नेह (घृत-तैल-वसा-मज्जा) का उत्तम मात्रा में पान ।
— शिरोविरेचन ।
— कायविरेचन ।
— नाडीस्वेद ।
— पुराणघृतपान ।
— निरुह-अनुवासन वस्ति प्रयोग ।
— उपनाह - लंघन ।
— शिरोवस्ति ।
— अग्निकर्म - दहन ।
— प्रतिश्याय और शिरोरोग की समान्य चिकित्सा ।

सुश्रुत ने बताया है कि -

यस्योत्तमाङ्गार्धमतीव जन्तोः संभेदतोदभ्रमशूलजुष्टम् ।
पक्षाद्यशाहादथवाऽप्य कस्मात्तस्यार्ध भेदं त्रितयाद्वयवस्येत् ।

(सु.उ.25/15-16)

उत्तमांग शिरका अर्धभाग अत्यंत तोद-भेद समान वेदना से पीड़ित रहता है और भ्रम मोह शूल होता है । 15 दिन पर, 10 दिन पर अथवा अकस्मात् शूल हो तो उस त्रिदोषज व्याधि को अधार्वभेद कहते हैं ।

चिकित्सा न करने पर दृष्टिनाश भी होता है ।

तथाऽर्धभेदके व्याधौः प्राप्तमन्यच्च यदभवेत् ।
शिरीषमूलकफ लैरवपीडनयोर्हितः ॥

(सु०उ० 26/31)

शिरीषड़मूल या फल का अवपीडन नस्य देना चाहिये । शिरोविरेचन अथवा अवपीड़न नस्य के द्वारा कफ का स्रोतोरोध दूर करना चाहिये । शोधन नस्य उष्ण-तीक्ष्ण और सूक्ष्म गुणवाला होना चाहिये ।

स्नेहन नस्य यथा बला तैल - निगुण्डी तैल से नस्य से वात का शमना करना चाहिये ।
— गोघृत का नस्य अत्ति लाभप्रद है ।
— वातानुलोमन करना चाहिये ।
— शिर पर तैलाभ्यंग करना चाहिये ।
— माषतैल का वलातैल से सिरोवस्ति होनी चाहिये ।
— सूतशेखर रस का कार्मुकत्व विशिष्ट है । सूतशेखर, प्रवालपंचामृत और गोदन्तीभस्म देना चाहिये ।
— गोघृत + शर्करा + गोदुग्ध का पान प्रातः काल में करना चाहिये ।

यहाँ पर चिकित्सा के सिद्धान्त संक्षिप्त में दिखाये गये हैं । चिकित्सक इसकी सम्यक योजना कर सकते हैं ।

पथ्यापथ्य :- द्राक्षा

पथ्य - गोघृत-गोदुग्ध-मधु-शर्करा । मधुर द्रव्य ।
- जीवनीय गण साधित गोदुग्ध ।
- शिर पर गोदुग्ध या गोघृत का परिषेचन ।
- बादाम + शर्करा + गोघृत ।
- शांत वातावरण-ध्यान ।
- चांदनी रात में बैठना ।

अपथ्य :- कटु-तिक्त-कषाय रसवाला आहार ।
- लवण रस का अधिक सेवन ।
- मनोद्वेग । भीड़-भाड़ में रहना - अति उच्च और कर्कश आवाज सुनना ।
- सूर्य संताप - अति प्रकाश ।
- वेगावरोध ।
- अधिक श्रम ।

बैद्यनाथ
र्‍यूमार्थो
जोडों के दर्द से आराम देने वाली सुरक्षित दवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

पञ्चाङ्ग का चिकित्सा में महत्व

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

*डा० मोहन लाल पाठक, एम.डी. (आयु.)
**डा० आदर्श कुमार, एम.डी. (आयु.)

आयुर्वेद में पशु-पक्षियों तथा जानवरों की अनेक जातियां यथा महामृग, विष्कर, प्रसह, विलेशय तथा जलचर आदि का उल्लेख पाया जाता है। आनूप, जाङ्गल, तथा साधारण देश में पाये जाने वाले सभी पशु पक्षियों आदि से प्राप्त होने वाले अनेक प्रकार के द्रव्य यथा दूध, दही, घृत, मूत्र, पुरीष, गोरोचन, रक्त, मांस, मेद, मज्जा, अस्थि, बाल तथा नखादि हैं। इन सब द्रव्यों का प्रयोग प्रयोजन के अनुसार औषध रूप में अवश्य होता है। अतः जगत में पाये जाने वाला कोई भी ऐसा द्रव्य नहीं जिसका प्रयोग औषध रूप में न किया जा सके। "इत्थं च नानौषधभूतं जगति किञ्चिद् द्रव्यमस्ति विविधार्थप्रयोगवशात्"। इस उक्ति को स्पष्ट करता है क्योंकि रेत मिट्टी से लेकर रत्न आदि तक एवं मल-मूत्र रक्त तथा बालादि द्रव्य औषध हैं। उपवास, वायु सेवन, धूप सेवन, छाया, मन्त्र शान्ति प्रदान, दान, भय, त्रास, हर्षण, सोना तथा जागना आदि सभी अनौषध द्रव्य हैं। इन द्रव्य तथा अद्रव्यों दोनों का प्रयोग शरीर में रोग निवारणार्थ औषध रूप में किया जाता है। मल, मूत्र, बाल तथा नख आदि द्रव्य अपवित्र माने गये हैं। इनका प्रयोग भी औषध रूप में किया गया है। महामृग तथा प्रसह आदि जातियों में पाये जाने वाले कुछ ऐसे पशु हैं जिनके दूध, दही, घृत, गोमूत्र, शकृत, गोरोचन आदि द्रव्यों के प्रयोग करने के सन्दर्भ आयुर्वेद ग्रन्थों में अनेक स्थलों पर पाये जाते हैं। ये सभी द्रव्य अनेक प्रकार के रोगों का नाश कर शरीर को स्वस्थ बनाने में पूर्णतया सहयोग प्रदान करते हैं। संहिता ग्रन्थों में दूध तथा घृत की गणना मधुर स्कन्द या मधुर वर्ग, मूत्र की गणना कटु स्कन्ध तथा शिरोविरेचन, दही की गणना अम्लवर्ग के अन्तर्गत की है। भाव प्रकाश ने दूध, दही, घृत तथा मूत्र की गणना क्रमशः दूध, दही, घृत तथा मूत्र पृथक्-पृथक् वर्गों में की है।

दूध फिर प्रसूता तथा मूत्र एवं शकृत् निरोग पशु के ही लेने का विधान ग्रन्थों में मिलता है। जाङ्गम प्राणियों के दूध, मूत्र तथा मल का प्रयोग भोजन के जीर्ण हो जाने पर ही करना लाभप्रद है। चरक सूत्र स्थान में गाय, बकरी तथा भेड़ आदि के घृत गुण भी दूध गुणों के समान ही समझने का निर्देश दिया है। स्त्री दूध के अतिरिक्त सभी दूधों को उबाल कर ही सेवन करने का विधान आता है। गाय, बकरी, भैंस, भेड़, ऊँटनी, घोड़ी, स्त्री तथा हथिनी दूध, अष्टक्षीर की गणना का उल्लेख क्षीर वर्ग में है। गाय, बकरी, भैंस तथा भेड़ स्त्री जाति तथा गदहा, ऊँट, हाथी, घोड़ा एवं मनुष्य पुरूष जाति के मूत्रों को ही लेना चाहिये। इन मूत्रों की गणना मूत्राष्टक या मूत्र वर्ग में की गई है। गाय, बकरी तथा भैंस ऐसे पशु हैं जिनके दूध, दही, घृत, मूत्र तथा मल पांच द्रव्यों का प्रयोग चिकित्सात्मक रूप में किया गया है। इन पांच द्रव्यों के समूह को पृथक्-पृथक् क्रमशः पञ्चगव्य, पञ्चाज तथा पंचमहिष घृत का निर्माण करने का निर्देश सुश्रुत में दिया गया है। ऊँटनी के शकृत् के अतिरिक्त चतुरूष्ट्र की संज्ञा दी गई है। इस चतुरूष्ट्र से घृत निर्माण करने का भी उल्लेख है।

एतेनैव तु कल्पेन घृतं पञ्चाविकं पचेत्।
पञ्चाजं पञ्चमहिषं चतुरूष्ट्रमथापि च॥

(सु.सं.उ. 39/244)

गाय बकरी तथा भैंस का दूध ही जीवन में मानव प्राणी स्वस्थ दृष्टिकोण से सभी अवस्थाओं में अधिकतर प्रयोग करता है। स्त्री दूध बाल्यावस्था तक ही सेवन किया जाता है। हथिनी, घोड़ी, ऊँटनी दूध तो साधारणतया मानव प्राणी कम ही प्रयोग करता है। भेड़ दूध तथा घृत की गणना अहितकर अन्नपान द्रव्यों में की गई है। अजा दूध के गुण भी गो दूध के समान ही ग्रन्थों में बलताये गये हैं। श्रेष्ठ पशुओं में अजा की भी गणना की गई है।

श्लोक :-

चतुर्नमो अष्टकृत्वो भवाय दशः कृत्वः पशुपते नमस्ते।

*(सेवानिवृत प्रो० एवम् सुपरिन्टैन्डेन्ट राजकीय आयुर्वेदिक कालेज/फार्मेसी, पटियाला) नजदीक मोदी कालेज, सुनामी गेट, पटियाला
**सहायक प्रो०, रस शास्त्र विभाग, सरकारी आयुर्वेदिक कालेज, पटियाला, एवम् भूतपूर्व सुपरिन्टैन्डेन्ट, सरकारी आयुर्वेदिक फार्मेसी, पटियाला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तवेमे पञ्च पशवो विभक्ता गावो अश्वाः पुरुषा अजावयः ॥
(अथर्ववेद)

इसलिये गाय दूध के पश्चात् अजा दूध ही उत्तम कहा जा सकता है क्योंकि अजा दूध लघु तथा सुपाच्य होता है । अष्टाङ्ग अग्न्य संग्रहाध्याय में श्रेष्ठ कार्य करने वाले द्रव्यों का उल्लेख है । इनमें शोथहर, स्त्रियों में दूध पैदा करने वाले, रक्तसंग्रही तथा रक्तपित्त नाशक द्रव्यों में अजा दूध ही श्रेष्ठ माना गया है । निद्राजनन में भैंस दूध , पित्तकफोत्पादक द्रव्यों में उड़द, पूरी एवं भेड़ मुख्य बतलाये गये हैं । ''सर्पिवातपित्तप्रशमनानाम्'' वातपित्त शामक द्रव्यों में घृत श्रेष्ठ है । चरक संहिता में शोथ, स्तन्य, सात्म्य, दोषहर, रक्तसंग्राहिक तथा रक्तपित्त शामक श्रेष्ठ द्रव्यों में अजा दूध को ही माना गया है । काश्यप संहिता के राजयक्ष्मा चिकित्सा के अन्तर्गत अजा का बहुत महत्त्व बतलाये हुए अजा रसायन में कहा है कि राजयक्ष्मा रोगियों का अजा मेंगनियों के रस द्वारा उबटन कराना, अजा मूत्र से परिषेचन तथा अजा दूध के अतिरिक्त अन्य दूध का सेवन न करना उत्तम माना गया है । इतना ही नहीं अपितु अजा के साथ-साथ रहना जहां बकरियां रहती हैं वहीं पर निद्रा लेना राजयक्ष्मा रोग में लाभप्रद है क्योंकि इस प्रकार की अजा रसायन के सेवन करने से रोग सक्षमता शक्ति की वृद्धि हो जाती है । सुश्रुत में शोष प्रतिषेध अध्याय में एक मास में भली भाँति शोष रोग से मुक्त होने के लिये अजा शकृत्, दूध, घृत, रक्त, मांस से स्नान, अभ्यंग, उबटन आदि नाना विधि अनुसार नियम पूर्वक सेवन करना तथा बकरियों के साथ ही रहना चाहिये । चरक ने भी द्रोणी प्रावेशिक रसायन प्रयोग समय बलप्रदान के लिये अजा दूध पान करने का निर्देश दिया है । कफजन्य गुल्म को शान्त करने के लिये मूत्र गण में पिप्पल्यादि कल्क मिलाकर घृत पाक करके प्रयोग करना लाभप्रद है ।

''योनावजाविके मिश्रगोचरत्वादनिश्चिते ।''
(च.सू. 27/61)

भेड़ तथा बकरी की योनि निश्चित नहीं होती है क्योंकि यह पशु सभी प्रकार के देशों में पाया जाता है । इसलिये इसकी योनि अनिश्चित बतलाई गयी है । अजा दूध पित्तज गुल्म, राजयक्ष्मा, वातरक्त में पथ्य कहा गया है । पैतिक गुल्म तथा शोष रोग में घृत श्रेष्ठ माना गया है । दूध सात्म्य, पथ्य, सुपाच्य एवं लघु होने कारण उत्तम माना गया है । अजा की श्रेणी स्त्री जाति में आती है । इसलिये अजा मूत्र भी उत्तम माना गया है । स्वास्थ्य रक्षण, रोग निवारण, औषध निर्माण, शमन तथा संशोधन चिकित्सा में पञ्चाज द्रव्यों का बहुत महत्त्व है । अतः पंचगव्य के पश्चात् पंचाज का ही स्थान माना जा सकता है क्योंकि अजा सूक्ष्मकाय होने, व्यायाम करने तथा कटुतिक्त रस युक्त वृक्ष पत्रों का सेवन करने के कारण केवल दूध ही सात्म्य नहीं अपितु सभी द्रव्य सात्म्य हैं । पञ्चाज के पृथक्-पृथक् द्रव्य या सामूहिक रूप में औषध की अनेक विधि कल्पनाओं में इन का प्रयोग प्राचीन काल से होता आ रहा है । अतः यहाँ पर पञ्चाज (दूध, दही, घृत, मूत्र तथा शकृत) का ही वर्णन किया जा रहा है । इसे छागल पञ्चक भी कहते हैं ।

भैषज्य कल्पना एवं रसशास्त्र में पञ्चाज की उपयोगिता :-

1. त्रिफला घृत :-

त्रिफलाया रसप्रस्थं प्रस्थं वासारसोद्भवम् ।
भृङ्गराजरसप्रस्थं प्रस्थमाजं पयः स्मृतम् ॥
(शा.सं.म.ख. 9/65-69)

2. बिल्वादि तैल :-

बालबिल्वानि गोमूत्रे पिष्टवा तैलं विपाचयेत् ।
साजक्षीरं च नीरं च बाधिर्यं हन्ति पूरणात् ॥
(शा.सं.म. 9/171)

3. मनःशिला शोधन :-

पचेत्व्यहमजामूत्रैर्दोलायन्त्रे मनःशिलाम् ।
भावयेत्सप्तधा पित्तैरजाचाः शुद्धिमृच्छति ॥
(शा.सं.म. 11/75)

4. पलित हर लेप :-

.....। मासमेकं ततः कुर्याच्छागीदुग्धेन लेपनम् । .....।
(शा.सं.उ. 11/31-34)

5. वाताभिष्यन्द पर सेचन कर्म :-

एरण्डत्वक्पत्रमूलैः श्रृतमाजं पयो हितम् ।....॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(शा.सं.उ. 13/5)

6. पित्तज एवं रक्ताभिष्यन्द पर सेचन कर्म :-

....छागक्षीरे स्थितं सेकात् पित्तरक्तभिघातजित् ॥

(शा.सं.उ. 13/8)

7. मूत्र वर्ग :-

.....। गोऽजाऽवीनां स्त्रियाः पुंसां मूत्रवर्ग उदाहृतः ॥

(र.सा.सं. 1/109, र.र.समु. 10/75)

8. मन:शिला शोधन :-

.....। दोलायन्त्रे दिनं पाच्या यामं छागस्य मूत्रके ।.....॥

(र.सा.सं. 1/200)

9. हिंगुल शोधन :-

.....। सप्तवारमजामूत्रैर्भावितं शुद्धिमेति हि ॥

(र.सा.सं. 1/238)

10. अभ्रक तत्व :-

.....। पञ्चाजं पञ्चगव्यं वा घर्म दत्वा विशोषयेत् ।....॥

(र.त. 10/96-97, रस.र.समु. 2/27-31)

11. मूत्राष्टकम् :-

सैरिभाजाविकरभगोखरद्विपवाजिनाम् । मूत्राणीति...॥

(र.त. 2/9-11)

12. मल्ल शोधन :-

मल्लचूर्ण त्वाजरसैर्दोलायन्त्रे विपाचयेत् ।....॥

(र.त. 11/135)

13. वत्सनाभ शोधन :-

.....। अजादुग्धेन सुस्विन्नो यामतः शुद्धिमाप्नुयात् ।

(र.त. 24/25)

14. छागल पञ्चक :-

.....तत्पञ्चमाहिषं ज्ञेयं तद्वच्छागलपञ्चकम् ॥

(र.र.समु. 10/76)

15. दुग्ध वर्ग :-

हस्त्यश्व-वनिता धेनुर्गर्दभी छागिकाविका । उष्ट्रिक.॥

(र.र.समु. 10/85)

त्रिफला घृत में अजा दूध, बिल्वादि तैल - अजा मूत्र, मन:शिला शोधन में अजा, मूत्र, पलितहर लेप में अजा दूध, वाताभिष्यन्द में सेचन - दूध, पित्त एवं रक्ताभिष्यन्द में अजा दूध से सेक, हिंगुल शोधन में अजा मूत्र, मूत्राष्टक में अजा मूत्र, अभ्रक सत्वपातन में पञ्चाज, मल्ल शोधन तथा वत्सनाभ शोधन में अजा दूध का प्रयोग होता है । छागल पञ्चक में अजा दूध, दही, घृत, मूत्र तथा शकृत, मूत्रवर्ग, मूत्राष्टक में अजा मूत्र, दुग्ध वर्ग में अजा दूध की गणना की है । र.र.समु. में पारद के बन्धों का उल्लेख आता है । जलुका बन्धन में अजा दूध का प्रयोग होता है ।

पिप्पली को अजा दूध में पीस लें । इसमें चार गुणा बकरी घृत तथा चार गुणा अजा दूध मिलाकर इसमें चार गुणा जल डालकर घृत पाक कर लें । इस घृत के साथ पारद भस्म का प्रयोग करने से राजयक्ष्मा रोग नष्ट होता है । (र.र.समु. 30/45)

क्षार गुटिका में शकृत्, अमृताद्यादि घृत में शकृत्, पञ्चात घृत में अजा दूध, दही, घृत, मूत्र तथा पुरीष, नील्यादि तैल में अजा दूध, वातरक्त नाशक लेप में अजा दूध तथा घृत, क्षार बनाने में ग्राम्य पशु (गो, बकरी आदि) के गोबर या लीद, अनेक प्रकार के वर्ति, अञ्जन में दूध, मूत्र तथा अन्य द्रव्यों के साथ कल्क, क्वाथ बनाकर दूध, मूत्र, घृतादि के साथ प्रयोग करने के अनेक सन्दर्भ ग्रन्थों में पाये जाते हैं ।

पञ्चाज द्रव्यों का पञ्चकर्मो में प्रयोग :-

1. स्नेहन :-

स्थिरादिवर्गसिद्धेन घृतेनाजाविकेन च । स्निग्ध....।

(सु.उ. 41/32-33)

2. स्वेदन :-

1. नाड़ी स्वेद :-

मूत्रैरम्लैश्च सस्नेहैर्नाडीस्वेदं प्रयोजयेत ।

(च.सू. 14/32)

2. पिण्डस्वेद :-

.....र्गवादिशकृतार्द्रेण पिण्डी....पिण्डस्वेदः ।

(अ.सू.अ. 26)

3. द्रवस्वेद (क. परिषेक) :-

(क) आजेन सर्पिषा चैवं परिषेकं तु कारयेत् ।

(सु.चि. 2/32)

(ख).....मूत्राभिषेचितः ॥ (का.सं.चि.राजयक्ष्मा)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्रवस्वेद (ख. अवगाहन) :-

.....वसामूत्रेष्वगाहेत.....।

(सु.चि. 32/13)

3. वमन :-

1. अजाक्षीरेण बीजानि भावयेत् पाययेत् च ॥

(च.क. 3/9)

2. द्रव्यैस्तु तैरेव यथोपपत्त्या श्रृते जले छागपयोऽर्धमिश्रो।।

(का.सं. वमनविरेचनीय सिद्धि)

4. विरेचन :-

गोऽव्यजामहिषीमूत्रसौवीरकतुषोदकैः ।

(च.क. 7/13)

5. वस्ति :- (निरूह वस्ति)

1. मुत्रेषु संसाध्य यथाविधानं द्रव्याणि यान्यूर्ध्वमधश्च यान्ति क्वाथेन तेनाशु निरूहयेच्च.....।

(सु.उ. 56/26)

2. जीवादाननाशक वस्तियाँ :-

.....गोऽव्यजामहिषीक्षीरैजीवनीययुतैस्तथा ।...।।

(च.सि. 10/38-42)

6. अग्निकर्म :-

1. अथेमानि दहनोपकरणानि भवन्ति - तद्यथा पिप्पल्यजाशकृद्गोदन्त.....।

(सु.सू. 12/4)

2. तत्र पिप्पल्यजाशकृद्गोदन्तशरशलाकास्त्वग्गतानां.....।

(सु.सू. 12/4)

7. नस्य :-

1. .....शस्तं क्षीरं सिद्धमेतेषु चाजम् ।
.....सभ्यङ्नस्येऽष्टार्धसंख्येऽपि नित्यम् ।

(सु.उ. 10/4-5)

2. .....प्रभाव्याजे तिलान् क्षीरे तेन पिष्टांस्तदूष्मणा ।
..... दशकृत्वोऽणु तत् स्मृतम् ।।

(च.चि. 26/139-41)

3. ..... घृतं माहिषमाजिकं वा ।
.....नस्यं ससारिवैः स्यात् कमलोत्पलैश्च ।

(च.चि. 4/101)

उपरोक्त दृष्टान्तों से विदित होता है कि स्नेहन तथा स्वेदन (पूर्वकर्म) एवं वमन, विरेचन, वस्ति तथा शिरोविरेचन प्रधान कर्मों में पञ्चाज द्रव्यों का प्रयोग सामूहिक या पृथक्-पृथक् किसी न किसी रूप में करने के अनेको सन्दर्भ ग्रन्थों में पाये जाते हैं। इनके अतिरिक्त अनेक विध कर्म यथा लेप, धूप, उबटन, आश्च्योतन, अंजन एवं वर्ति आदि में भी इनके प्रयोग करने के निर्देश अनेक स्थलों पर आते हैं ।

अजा दूध विवेचन :-

अजा दूध गण :- मधुर वर्ग, गोरस वर्ग, दुग्ध वर्ग (चरक) । क्षीर वर्ग (सु.सं.) । क्षीर वर्ग, मधुर स्कन्ध (अ.ह.) । दुग्ध वर्ग (भा.प्र.) ।

दूध के विभिन्न भाषाओं में नाम :-

संस्कृत पर्याय :- दुग्धं क्षीरं पयः स्तन्यं बालजीवनमित्यपि ।

(भा.प्र.पू.खण्ड)

दुग्ध, क्षीर, पयः, पयस्, स्तन्य, बालजीवन । हिन्दी - दूध । सि. - खीर । ता. - पाल । अ. -लबून । फा. - शीर । बं. - दूध । गु. - दूध । लै. - लैक्टस (Lactus) । अं. - मिल्क (Milk) ।

दूध संख्या :-

1. अविक्षीरमजाक्षीरं गोक्षीरं माहिषं च यत् ।
उष्ट्रीणामथ नागीनां वडवायाः स्त्रियास्तथा ॥

(च.सं.सू. 1/104)

2. गव्यमाजं तथा चौष्ट्रमाविकं माहिषं च यत् ।
अश्वायाश्चैव नार्याश्च करेणूनां च यत्पयः ॥

(सु.सं.सू. 45/47)

3. गोर्महिष्या अजायाश्च नार्या उष्ट्र्या अवेः स्त्रियाः ।
तुरङ्गया इति चोक्तानि पूर्वमेव पयांसि तु ॥

(क.सं.खि. 22/3)

4. कारिणी घोटिका धेनुस्त्वविका छागिकोष्ट्रिका ।
महिषी गर्दभी नारी .....॥

(र.त. 2/24)

उपरोक्त ग्रन्थों में भेड़, अजा, गो, महिष, ऊँटनी, हथिनी, घोड़ी तथा स्त्री के दूध की गणना क्षीर वर्ग में की गई है । कश्यप संहिता में नारी तथा स्त्री दोनों ही एकार्थ वाचक शब्द का प्रयोग क्षीर वर्ग के सूत्र में किया गया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। अतः यहां पर हथिनी वाचक शब्द ही होना चाहिये क्योंकि पुनः-पुनः एक ही शब्द को कहना उचित अर्थ प्रतीत नहीं होता है एवं हथिनी दूध का अन्तर्भाव नहीं किया है। हथिनी दूध को मिलाकर ही क्षीर वर्ग में क्षीराष्टक का उल्लेख है। अष्टाङ्ग हृदय सूत्र 5/20-27 तक तथा अष्टाङ्ग संग्रह सूत्रस्थान के द्रव द्रव्य विज्ञानीय अध्याय में इन आठ प्रकार के दूधों का उल्लेख पाया गया है।

अजा दूध गुण :-

1. अजाक्षीरं शोषघ्नस्तन्यसात्म्यदोषघ्नरक्तसांग्राहिरक्तपित्तप्रशमनानाम्।

(च.सू. 25/39)

2. छागं कषायमधुर शीतं ग्राहि पयो लघु।
रक्तापित्तातिसारघ्नं क्षयकासज्वरापहम्॥

(च.सू. 27/219)

3. अजापयं शोषघ्नस्तन्यकररक्तसंग्रहण प्रशमनानाम्।

(अ.सग्रह.अ. 13)

4. गव्यतुल्यगुणं त्वाजं विशेषाच्छोषिणां हितम्।
दीपनं लघु संग्राहि श्वासकासास्रपित्तनुत्॥
अजानामल्पकायत्वात् कटुतिक्तनिषेवणात्।
नात्यम्बुपानाद्व्यायामात् सर्वव्याधिहरं पयः॥

(सु.सं.सू. 45/51-53)

5. अल्पाम्बुपानव्यायाम कटुतिक्ताशनैर्लघु।
आजं शोषज्वरश्वास रक्तपित्तातिसारजित्॥

(अ.हृ.सू. 5/24, अ.सं.सू.6)

6. अजानामल्पकायत्वात् कटुतिक्तानिवर्हणात्।
अल्पत्वाच्च बलित्वाच्च लघु दोषहरं पयः॥
अल्पत्वातद्धनं क्षीरं घनत्वादपि बृंहणम्।
शीत संग्राहि मधुरं बल्यं वातानुलोमनम्॥

(का.सं.खि.अ. 22)

7. छागं कषायं मधुरं शीतं ग्राहि तथा लघु।
रक्तपित्तातिसारघ्नं क्षयकासज्वरापहम्॥
अजानामल्पकायत्वात्कटुतिक्तनिषेवणात्।
स्तोकाम्बुपानाद्व्यायामात्सर्वरोगापहं पयः॥

(भा.प्र.)

अजा दूध के गुणकर्म

रस - कषाय, मधुर
गुण - लघु
वीर्य - शीतल
विपाक - मधुर
प्रभाव - सर्वदोष हर

कर्म :- बृंहण, संग्राही, अग्निदीपक, बल्य, शोषघ्न, वातानुलोमक, दोषहर, स्तन्यकर तथा रक्तसंग्राहक है।

उपयोग :- श्वास, कास, रक्तपित्त, ज्वर, अतिसार तथा रक्तातिसार नाशक है। क्षय जन्य रोगियों में लाभप्रद है। सभी को सात्म्य है।

अजा दूध के गुण भी गोदूध के समान कहे हैं। अजा अल्प जलपान करती है, एक स्थान से दूसरे स्थान पर छलांग लगाने, दौड़ने तथा कूदने आदि से अधिक व्यायाम तथा भोजन में कटुतिक्त वृक्षादि के पत्रों का अधिक सेवन करने वाली होने के कारण अजा दूध हल्का होता है। अल्प दूध देने वाली होने के कारण दूध सान्द्र (गाढ़ा, घना) होता है इसलिये बकरी दूध बृंहण कारक माना गया है।

आमयिक प्रयोग :-

चरक संहिता :- सूत्रस्थान

1. अष्ट दूध में अजा दूध की गणना की है। (च.सं.सू. 1/104)
2. रक्तातिसार में अजा दूध तथा आधा भाग जल, गन्ध वाला, नीलोत्पल, मोथा तथा पृश्निपर्णी से साधित पेया लाभप्रद है। (च.सू. 2/20)
3. वातरक्त में बकरी दूध, घृत तथा गेहूँ का आटा इन तीनों को मिश्रित करके लेप करना हितकर है। (च. सू. 3/22)
4. यक्ष्मा नाशक, स्तन हितकर (दूध पैदा करने वाले), सात्म्य, दोषशामक, रक्त सांग्राहिक तथा रक्तपित्त शामक आहार द्रव्यों में बकरी का दूध श्रेष्ठ कहा गया है। (च.सू. 25/39)

"अजाक्षीरं शोषघ्नस्तन्यसात्मयदोषघ्नरक्त सांग्राहिकरक्तपित्तप्रशनानाम्"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा स्थान :-

रसायन :- द्रोणी प्रावेशिक रसायन के प्रयोग कराते समय बल को बनाये रखने के लिये आचार्यों ने बकरी दूध पान करने के निर्देश दिये हैं । (च.चि. 1/4/7)

रक्तपित्त :- 1. रक्तपित्त के वेग में वातानुबन्ध होने पर बकरी का दूध प्रयोग करना लाभकारी है । (च.चि. 4/83) 2. आम की गुठली को अजा दूध में पीस कर कल्क बना लें । इस कल्क का प्रयोग नस्य कर्म में करना चाहिए । अजा दूध को मुलहठी कल्क तथा गो दूध से साद्धित कर अवपीड़ नस्य दें । (च.चि. 4/101)

गुल्म :- पित्तज गुल्म में बकरी का दूध एवं घृत पथ्य है । इसका प्रयोग अनेकों बार आहार रूप में करना श्रेष्ठ कहा है । (च.चि. 5/133)

राजयक्ष्मा :- बकरी के दूध का प्रयोग शोष रोग में लाभप्रद एवं पथ्य कहा है । (च.चि. 8/116)

उदर रोग :- त्रिकटु चूर्ण को अजा दूध में मिलाकर तीन मास तक प्रयोग करना चाहिये । (च.चि. 13/152)

अर्श :- 1. रक्तजन्य अर्श में कुटज रस क्रिया का प्रयोग अजादूध के साथ सेवन करने से रक्तस्राव बन्द हो जाता है तथा इस रसक्रिया के जीर्ण होने पर अजा दूध से शालि चावल का भात प्रयोग करना चाहिए । (च.चि. 14/188-192) 2. नीलकमल, मंजीष्ठ, मोचरस, लालचन्दन, कृष्ण तिल तथा पठानी लोध्र का समभाग चूर्ण बनाकर अजा दूध के साथ लेना चाहिए । (च.चि. 14/193) 3. अजा दूध में बथुए का स्वरस मिलाकर पिलाना लाभप्रद है । (च.चि. 14/194)

कास :- 1. भैंस, बकरी, भेड़ तथा गाय इन सब के दूध, आमलारस, गोघृत इन सब को समभाग लेकर घृत पाक विधि से घृत सिद्ध करें । यह घृत पित्तजन्य कास में लाभप्रद है । (च.चि. 18/107) 2. वातजकास में तृष्णाधिक्य होने पर अजादूध को तृणपञ्चमूल द्रव्यों से सिद्ध घृत पिलाना हितकर है । (च.चि. 18/141) 3. कास रोग में पिप्पली तथा गुड़ के कल्क तथा अजा दूध से पकाये गये घृत का प्रयोग करना चाहिए । (च.चि. 18/166)

अतिसार :- 1. अजा दूध जठराग्नि, बल तथा वर्ण की वृद्धि करता है इसलिए पैतिक अतिसार में अजा दूध का प्रयोग लगातार करना चाहिए । (च.चि. 19/57) 2. शीतल हुए अजा दूध में मधु तथा चीनी मिलाकर देना तथा अजादूध के साथ शालि चावल का भात लेना लाभप्रद है । (च.चि. 19/72) 3. कृष्ण तिल 1 भाग का कल्क बनाकर 4 भाग चीनी में मिश्रित कर अजा दूध के सेवन करने से रक्तस्राव शीघ्र ही बन्द हो जाता है । (च.चि. 19/84) 4. गुदा प्रक्षालन के लिये पञ्चवल्कल छाल, महुआ छाल क्वाथ अथवा ईख रस, बकरी या गो दूध में घृत, मधु तथा चीनी मिलाकर प्रयोग करना चाहिए । (च.चि. 19/88)

वातशोणित चिकित्सा :- 1. वातरक्त में अजा दूधा पथ्य माना गया है । (च.चि. 29/53) 2. गाय, भेड़ तथा अजा दूध में तैल मिलाकर प्रयोग करना लाभप्रद है । (च.चि. 29/126)

योनि व्यापद चिकित्सा :- आर्तव रोग में रसाञ्जन या कच्ची लाख को अजा दूध में पीसकर सेवन करना चाहिए । (च.सं.चि. 30/97)

कल्प स्थान :-

1. इक्ष्वाकु बीजों को कूट कर चूर्ण बना लें । इस चूर्ण को अजा दूध की भावना दें । यह चूर्ण विष, गुल्म, उदर, गण्डमाला तथा श्लीपद रोगों को नष्ट करता है । इसका सेवन अजा दूध के साथ करना चाहिए । (च.क. 3/9)

सिद्धि स्थान :-

1. परिस्रव चिकित्सा में समेर पत्र या पुष्प के डण्ठल का चूर्ण को अजा दूध में पाक करके शीतल हो जाने पर घृत मिश्रित कर निरूह वस्ति दें । (च.सि. 7/60) 2. वट की कोमल पत्ती को अजा दूध में पकाकर तथा घृत मिश्रित कर वस्ति देनी चाहिए । (च.सि. 7/61) 3. जौ, तिल, सुवर्चला, पोई का शाक, कांचनार पुष्प को पृथक-पृथक अजा दूध में पकाकर घृत मिश्रित करके वस्ति देनी चाहिए । (च.सि. 7/61) 4. बड़ी कटेरी, क्षीर काकोली, पिठिवन, शतावर तथा जीवनीय गण की औषधियों के कल्क को गाय, भेड़, बकरी तथा भैंस के दूध में पकाकर उस दूध में खरहा, मृग, मूर्गा, बिल्ली, भेड़, भैंस, बकरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का ताजा रक्त मिश्रित करके सब को मथ लें । इस में सौंफ, घृत, चीनी तथा मधु मिलाकर वस्ति दें । 5. महुआ, मुलेठी, मुन्नका, दूब, गम्भारी छाल, लाल चन्दन तथा जीवनीय गण की औषधियों के कल्क में गाय, भेड़, बकरी तथा भैंस का ताजा दूध डाल कर पाक कर लें । इस में खरहा, मृग, मूर्गा, बिलार, भैंस, भेड़ तथा बकरी का ताजा शोणित मिलाकर मथ लें । इस में चीनी तथा मधु मिलाकर वस्ति दें । ये दोनों वस्तियां जीवन को देने वाली बतलाई गई हैं । (च.सि. 10/38-42)

सुश्रुत संहिता :- सूत्रस्थान :-

कण्डू को शान्त करने के सहदेव, विश्वदेवा, बकरी दूध तथा सैंधव लवण के साथ मिलाकर लेप करें या इन्हीं द्रव्यों से साधित तैल का प्रयोग करें । (सु.सं.सू. 16/15)

चिकित्सा स्थान :-

द्विव्रणीय चिकित्सा :- हरड़ को सात दिन तक बकरी के दूधमें भिगोकर रखें । उसी दूध से हरड़ को पीस कर त्वचा पर लेप करने से त्वचा सदृश सामान्य रंग हो जाता है । (सु.चि. 1/95)

सद्योव्रण चिकित्सा :- बकरी घृत तथा दूध, मुलहठी, कमल, जीवक, ऋषभक इन सबको पीस कर गोघृत सिद्ध करें । यह योग सर्व नेत्राभिघात में लाभप्रद है । (सु. चि. 2/44)

महावात व्याधि चिकित्सा :- झिण्टी, वासा, बला, अतिबला, जीवन्ती, करेला इन सब का कल्क बना लें । इस कल्क में बकरी का दूध मिलाकर वातरक्त में लेप करें । (सु.चि. 5/12)

उत्तर स्थान:-

वाताभिष्यन्द प्रतिषेध :- 1. एरण्ड पत्र-मूल-छाल या कण्टकारी मूल से बकरी का दूध सिद्ध करें । शीतोष्ण दूध से स्वेदन कर्म करें तथा शीतल दूध पान करें । (सु. उ. 9/11) 2. हीवेर, तगर, मंजीठ, गूलर छाल से अजा दूध सिद्ध करके नेत्र में आश्च्योतन करने से नेत्र शूल नष्ट हो जाता है । (सु.सं.उ. 9/13-14) 3. मुलहठी, हल्दी, हरड़, दारुहल्दी को अजा दूध में पीस लें इस अंजन का प्रयोग नेत्राभिष्यन्द में लाभप्रद है । (सु.सं.उ. 9/14-15)

पित्ताभिष्यन्द प्रतिषेध :- गुन्द्रा, शाली, शैवल, पाषाणभेद, दारुहल्दी, इलायची, कमल, लोध्र, नागरमोथा, कमल पत्र, शर्करा, दाभ, इक्षु, मुसली, लोध्र, वेत, पद्याख, द्राक्षा, मधु, चन्दन, मुलहठी, धावन (स्त्री दूध), हल्दी तथा सारिवा इन सब का चूर्ण तथा इक्षु रस अजा दूध सिद्ध करके नस्य देना लाभप्रद है । इन सभी द्रव्यों का पृथक-पृथक प्रयोग भी किया जा सकता है । (सु.सं.उ. 10/4-5)

रक्ताभिष्यन्द प्रतिषेध :- 1. कांसी के मल को कपास वस्त्र से जला लें । इसमें श्वेत मरिच, ताम्र रज मिला दें । इसको अजा दूध में पीसकर वर्तियाँ बना लें । यह अंजन वर्ति रात्र्यान्ध में लाभप्रद है । (सु.सं.उ. 12/50)

दृष्टिगत प्रतिषेध :- 1. स्रोतोऽञ्जन, सैन्धव, पिप्पली तथा रेणुका को अजा दूध से पीस कर वर्तियां बना लें । यह अञ्जन वर्ति रात्र्यान्ध रोग नाशक है । (सु.सं.उ. 17/16) 2. मैनःशिल, हरड़, त्रिकटु, बला, कालानुसारिवा, समुद्रफेन इन सबको अजा दूध से पीस कर वर्तियां बना लें । यह वर्ति अञ्जन रात्र्यान्ध में लाभप्रद है । (सु.सं.उ. 17/18) 3. विदारी, सारिवा, तेज पत्र, मंजीठ तथा मुलहठी को अजादूध में पीस कर अक्षि पर शीतोष्ण लेप करना चाहिए । (सु.सं.उ. 17/89-90) 4. (क) दारुहल्दी, पद्याख, सोंठ को अजा दूध में पीसकर लेप करना चाहिए । (ख) द्राक्षा, मुलहठी, कूठ, सैंधव को अजा दूध में पीसकर परिषेक करना चाहिए । (ग) लोध्र, सैंधव, द्राक्षा मुलहठी को अजा दूध में पीसकर परिषेक करें । यह तीनों योग अक्षि वेदना तथा लालिमा को शान्त करते हैं । (सु. सुं.उ. 17/90-92) 5. मुलहठी, कमल, कूठ, द्राक्षा, लाख, शर्करा तथा सैंधव से साधित अजा दूध का प्रयोग अक्षिगत लालिमा तथा वेदना में प्रयोग करना लाभप्रद है । (सु.सं.उ. 17/92) 6. शतावरी, पृश्निपर्णी, नागरमोथा, आँवला तथा पद्याख का क्वाथ, अजा दूध तथा गोघृत को घृत पाक विधि से पाक करके नेत्रदाह एवं नेत्रशूल में प्रयोग करने से लाभ होता है । (सु.सं.उ. 18/93) 7. मेषश्रृङ्गी, शिरीष, धव इन के पुष्प, चमेली पुष्प, मुक्ता, वैदूर्य इन सब को बकरी के दूध में पीस कर 7 दिन तक ताम्र पात्र में रखें, पश्चात् वर्ति बना लें । इस वर्ती से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अञ्जन करें । (सु.सं.उ. 17/96-97) 8. स्रोतोऽञ्जन, प्रवाल, समुद्रफेन, मन:शिला, मरिच इन सब को अजा दूध में पीसकर 7 दिन तक ताम्र पात्र में रखें तथा वर्ति बनाकर अक्षिरोग में दृष्टि स्थैर्यार्थ प्रयोग करना श्रेष्ठ है । (सु.सं. उ. 17/98-99)

क्रिया कल्प :- कांसी स्याही, मुलहठी, सैन्धव तथा एरण्डमूल समभाग, बड़ी कटेरी के फल एवं मूल दुगने लें । इनको अजा दूध में पीसकर ताम्र पात्र में लेप कर दें । शुष्क हो जाने पर पुन: सात बार यही विधि का प्रयोग करें । इसकी वर्तियां बनाकर छाया में सुखाकर रख लें । यह वर्ती अक्षि वेदना नाशक है । (सु.सं.उ. 18/103-104)

कर्णगत रोग प्रतिषेध :- 1. शर्करा, मुलहठी तथा कन्दूरी कल्क तथा अजा दूध से तैल सिद्ध करें । इस तैल को गर्म करके कन्दूरी क्वाथ में मसल लें । शीतल हो जाने पर जब तैल ऊपर आ जाये तो उसे निकाल लें । तत्पश्चात् इस तैल को शर्करा मुलहठी तथा चन्दन कल्क के साथ 10 गुणे दूध से पाक करें । इस तैल को विल्व क्वाथ से गाढ़ा बना लें । वाधिर्य में यह तैल लाभप्रद है । (सु.सं.उ. 21/36-37)

अतिसार प्रतिषेध :- 1. मुलहठी, शर्करा, लोध्र, विदारी तथा सारिवा को बकरी के दूध में मथ लें । इसे मधु के साथ सेवन करने से रक्तातिसार नष्ट होता है । (सु.सं.उ. 40/120) 2. मंजीठ, सारिवा, लोध्र, पद्माख, कुमुद, नीलोफर तथा भारंगी का कल्क बनाकर अजा दूध के साथ सेवन करना लाभप्रद है । (40/121) 3. क. शर्करा, कमल, लोध्र, मंजीठ, मुलहठी तथा तिल । ख. काले तिल, मुलहठी, मंजीष्ठ तथा नीलोफर । ग. तिल, मोचरस, लोध्र, मुलहठी तथा नीलोफर । घ. धमासा तथा काले तिल चार योग हैं । इन योगों के चूर्ण को मधु से चाट लें पश्चात् अजा दूध प्रयोग करने से रक्तातिसार में लाभ होता है । (सु.सं.उ. 40/122-124)

शोष प्रतिषेध :- 1. गाय, घोड़ा, भेड़, बकरी, हरिण ऊँट, गधा तथा हाथी इन सब के गोबर रस, दूध, मांसरस, रक्त में द्राक्षा, अश्वगन्धा, पिप्पली, शर्करा के कल्क डालकर घृतपाक विधि से घृत निर्माण करें । यह घृत यक्ष्मा नाशक है । (सु.सं.उ. 41/49) 2. अजा मींगनी, मूत्र, दूध, घृत रक्त तथा मांस सेवन करना, बकरी के साथ रहना तथा इसकी नानाविध कल्पनाओं का एक मास पर्यन्त सेवन करने से लाभ होता है । (सु.सं.उ. 41/56)

हिक्का प्रतिषेध :- चार गुने सोंठ क्वाथ से सिद्ध किया गया अजा दूध पान करने पर हिक्का रोग शान्त होते हैं । (सु.सं.उ. 50/22)

अष्टाङ्ग हृदय :- **सूत्रस्थान** :-

अजा दूध के गुणों का उल्लेख क्षीर वर्ग के अन्तर्गत बतलाया गया है । (अ.हृ.सू. 5/24)

चिकित्सास्थान :-

कास चिकित्सा :- पीपल और गुड़ के कल्क एवं अजा दूध के द्वारा घृत पाक करें । यह घृत भोजनोत्तर सेवन करने पर क्षय, कासनाशक तथा अग्निवर्धक, उरस् स्रोतो की शुद्धि तथा कण्ठगत दोषावरोध में लाभप्रद है । (अ. हृ.चि. 164-165)

राजयक्ष्मा चिकित्सा :- राजयक्ष्मा के आहार द्रव्यों के अन्तर्गत बकरी दूध की गणना भी की गई है तथा अजा दूध को यक्ष्मानाशक कहा है । (अ.हृ.चि. 5/6)

अर्श चिकित्सा :- 1. अर्श चिकित्सा में अजा दूध या अजा दूध के साथ भात का सेवन करना पथ्य है । कुटजादि रस क्रिया का अनुपान अजा दूध कहा गया है । (अ.हृ.चि. 8/106) 2. अजा दूध रक्तार्श को नष्ट करने के लिए उत्तम बतलाया गया है । (अ.हृ.चि. 8/119)

अतिसार चिकित्सा :- 1. पक्वातिसार में अजा दूध का प्रयोग करना चाहिए । यदि दोषाधिक्य होने के कारण लाभ प्रतीत न हो तो रोगी के बलानुसार विरेचन देना चाहिए । (अ.हृ.चि. 9/66) 2. रक्तातिसार में तृष्णा, ज्वर तथा गुदपाक हो जाने पर अजा दूध, कमल, श्वेत कमल, लाजवन्ती एवं मोचरस से परिपक्व योग या सारिवा, मुलहठी तथा लोध्र से परिपक्व योग या बट और गूलर आदि क्षीरी वृक्षों की कोपलों के परिपक्व योग में मधु तथा खण्ड मिश्रित कर पान, भोजन तथा गुदसेचन में देना हितकर है । (अ.हृ.चि. 9/82-83) 3. नेत्रबाला, श्वेतकमल एवं साठी के योग से तथा पृष्णपर्णी रस में अजा दूध तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूध से आधा भाग जल मिलाकर पेया बना लें । यह पेया रक्तातिसार को शान्त करती है । (अ.ह.चि. 9/85) 4. कृष्ण तिल का कल्क 5 भाग, खण्ड एक भाग मिलाकर अजा दूध के साथ सेवन करने से रक्तातिसार शीघ्रता से शान्त हो जाता है । (अ.ह.चि. 9/91-92)

मूत्राघात चिकित्सा :- तुम्बी बीज चूर्ण को मधु मिश्रित कर अजा दूध के साथ 7 दिन तक सेवन करने से अश्मरी निकल जाती है । (अ.ह.चि. 11/30)

गुल्म चिकित्सा :- पैतिक गुल्म के आहार द्रव्यों में अजा दूध का भी उल्लेख किया गया है । (अ.ह.चि. 14/74)

उदर रोग चिकित्सा :- शोधन उपरान्त दुर्बलता आ जाने पर तथा कृश रोगी को अजा तथा गोदुग्ध या ऊँटनी दूध पीने के लिए देना लाभप्रद है । (अ.ह.चि. 15/27)

वातरक्त चिकित्सा :- गो-अजा-भेड़ के शीतोष्ण या शीतल दूध से वातरक्त में सेचन करने का निर्देश दिया है। (अ.ह.चि. 22/23)

LIBRARY
Gurukul Kangri Vishwavidyalaya
HARDWAR

कल्पसिद्धि स्थान :-

इक्ष्वाकु बीज चूर्ण को अजा दूध की भावना देनी चाहिए । इस इक्ष्वाकु चूर्ण का प्रयोग अजा दूध के साथ करें । इसका प्रयोग विष, गुल्म, उदर रोग, ग्रन्थि, गलगण्ड एवं श्लीपद में वमन के लिये करें । (अ.ह.क. सि. 1/31)

उत्तर स्थान :-

सर्पिसितासित रोग प्रतिषेध :- कमल, क्षीरकाकोली, दाख, मुलहठी एवं विदारीकन्द से अजा दूध सिद्ध कर लें । इस दूध में खाण्ड मिलाकर अक्षि रोग में सेचन करने से लालिमा, अश्रुस्राव तथा वेदना शान्त होती है । (अ.ह.उ. 11/30-31) ।

तिमिर प्रतिषेध :- 1. दाख, जटामांसी, लोध्र, मुलहठी, शंख, ताम्रभस्म, कपूर, कमल, पद्मकाष्ठ तथा श्वेत कमल समभाग लें । इनको अजा दूध में पीसकर वर्ती बना लें । यह वर्ती रक्तज तिमिर रोग नाशक है । (अ.ह.उ. 13/72-73) 2. कृष्ण सारिवा, सोंठ, मरिच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आँवला, शुद्ध हरिताल एवं शु. मन:शिला तथा समुद्रफेन समभाग लेकर बकरी दूध में पीसकर वर्तियाँ बना लें । यह वर्तियाँ रतौन्धी नाशक हैं । (अ.ह.उ. 13/86) महर्षि निमि का विचार है कि यदि एक मास तक रात्रि के समय प्रतिदिन त्रिफला चूर्ण एवं मधुयष्टि चूर्ण में महात्रिफला घृत तथा मधु मिश्रित कर खायें तत्पश्चात् आँवला रस पीयें तो गरूड़ सदृश सृष्टि हो जाती है । (अ.ह.उ. 13/14-15)

लिंगनाश प्रतिषेध :- 1. क्षीर काकोली, सारिवा, कृष्ण सारिवा, मञ्जीठ एवं मुलहठी को बकरी दूध में पीस लें । इसे थोड़ा गर्म करके मुख पर लेप करें । (अ.ह.उ. 14/25) 2. लोध्र, सैन्धव लवण, मुन्नका तथा मुलहठी को अजा दूध में पका कर नेत्र में आश्च्योतन करें । (अ.ह.उ. 14/26) 3. मुलहठी, श्वेत कमल तथा सुगन्धी कूठ, दाख, लाख तथा मिश्री को अजा दूध में पका लें । इसका नेत्र पर आश्च्योतन करें । ये सभी योग अक्षि रुजा तथा लालिमा में लाभप्रद है । (अ.ह.उ. 14/27)

सर्वाक्षिरोग प्रतिषेध :- 1. एरण्ड के मृदु पत्र एवं आर्द्र मूल छाल को अधकूट कर बकरी दूध में सिद्ध करें । इस का आश्च्योतन करने से वाताभिष्यन्द जन्य वेदना शान्त होती है । (अ.ह.उ. 16/10) 2. नेत्रबला, तगर, काकजंघा एवं गूलर छाल को कूट लें । इस में अजा दूध तथा जल डाल कर सिद्ध कर लें । इस दूध का आश्च्योतन करने से अक्षि वेदना शान्त होती है । (अ.ह.उ. 16/12) 3. पुण्डेरिया, मुलहठी एवं हल्दी को बकरी दूध में भिगोकर पोटली बना लें । यह पोटली आंखों पर फेरने से अभिष्यन्द रोग, अक्षि दाह, शूल, लालिमा तथा अश्रुस्राव में लाभ होता है । (अ.ह.उ. 16/15)

सद्योव्रण प्रतिषेध :- मुलहठी, जीवक, ऋषभक एवं कमल के कल्क तथा बकरी दूध से सिद्ध किया गया घृत आघात जन्य अक्षिरोग में लाभकारी है । (अ.ह.उ. 26/18)

क्षुद्र रोग प्रतिषेध :- मुसली को अजा दूध में पीस लें । इसमें मधु मिलाकर फेंट लें । इस दूध का लेप करने से व्यङ्ग., नीलिका आदि क्षुद्र रोग शान्त होते हैं । (अ.ह.उ. 32/21)

गुह्यरोग प्रतिषेध :- धातक्यादि तैल में अजा दूध तथा मूत्र दोनों का प्रयोग होता है । यह अभ्यङ्ग में उत्तम है । योनि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में उत्तर वस्ति तथा पिचू में प्रयुक्त किया गया है । (अ. हृ.उ. 34/51-53)

काश्यप संहिता :-

1. ब्राह्मी स्वरस 1 आढक (2 किलो 987 ग्राम), गोघृत 1 प्रस्थ (747 ग्राम) गाय तथा बकरी का दूध (जिनके बच्चे जीवित हों) 1-1 आढक (प्रत्येक 2 किलो 987 ग्राम), कल्क के लिये त्रिफला, शालिपर्णी, द्राक्षा, वच, कूठ, हरेणु, पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, दालचीनी, तेजपत्र, नेत्रवाला, खस, श्वेत चन्दन, नील कमल, पद्मक, शतावरी, नागबला, दन्ती, पाठा, प्रियङ्गु, देवदारु, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, जीवनीय गण द्रव्य, विडङ्ग, गुग्गुल तथा जातिपत्री आदि लें । इस कल्क से घृत पाक विधि अनुसार घृत सिद्ध करें । (का.सं.सू.लेहाध्याय) 2. दूध शोधन काल में मसूर, षष्टिक, मूंग, कुलथी, शालि चावल, घृत, गोदुग्ध, अजादूध तथा कृत्रिम लवण आदि आहार द्रव्य सेवन करें । (का.सं.सू. 19) 3. उत्तम प्रकार की 20 पिप्पली, जल 2 प्रस्थ (1 किलो 494 ग्राम) में चतुर्थांश शेष तक पका लें । इस जल के समान अजा दूध मिलाकर दूध सिद्ध कर लें । इस प्रकार के दूध का नित्यप्रति सेवन करें । (का.सं.चि. राजयक्ष्मा) 4. राजयक्ष्मा रोग में केवल अजा दूध का ही सेवन करना चाहिये । बकरियों के साथ रहे तथा जहाँ बकरियों बान्धी जाती हैं वहीं पर सोना चाहिये । यह रसायन क्षय नाशक है । (का.सं.चि. राजयक्ष्मा) । 5. रसोन के घृत योग में अजा दूध का प्रयोग किया गया है । (का.सं.चि. राजयक्ष्मा)

सिद्धिस्थान :- 1. वमन के अयोग हो जाने पर अजा दूध से पेया बनाकर देने से वमन शीघ्र ही हो जाती है । (का. सं.वमन विरेचणीय सिद्धि-3) 2. सैंधव, मरिच, रसौंत तथा मन:शिला को अजा दूध में रगड़ कर वर्ति बना लें, यह वर्ति अक्षिगत रोग, कण्डू, तिमिर एवं उपदेह आदि दोष को शान्त करती है । (का.सं. नस्तकर्मीया सिद्धि-4)

कल्प स्थान :- प्रेतों एवं पूतना ग्रह द्वारा पीड़ित रोगियों को घी, श्वेत सरसों, मधु, भेड़ सींग, अजा दूध, खर मूत्र एवं बाल तथा कर्पूर या चन्दन की धूप बनाकर देनी चाहिये । (का.सं. कल्पस्थान-धूप कल्प) ।

खिलस्थान :- 1. कुक्कुणक चिकित्सा के लिये अजा दूध में मुलहठी तथा दारुहल्दी समभाग लेकर पीस कर आश्च्योतन करना उत्तम कहा गया है । (का.सं.खि. 13/42) 2. अजा दूध में पद्माख, कमल, मुलहठी एवं शर्करा को पीस लें । यह लेप अक्षिरोग में लाभप्रद है । (का.सं.खि. 13/4) 4. कपित्थ अरजी एवं तुलसी फल को अजा दूध में रगड़ कर अक्षि रोग में आश्च्योतन कराना श्रेष्ठ है । (का०सं०खि० 1341) कपित्थ बिल्व एवं खदिर को अजा दूध में पीसकर अक्षिरोग में आश्च्योतन कराना चाहिये । (का.सं.खि. 13/40) 5. अञ्जन वर्ति के निर्माण में भी बकरी दूध का निर्देश दिया गया है । (का. सं.खि. 13/30-35) 6. पिप्पली, त्रिफला, बच एवं कुटकी तथा ताम्र चूर्ण को जल में पीस लें । इसे पुन: पुन: धूप में रखें । वटिका बना कर छाया में रखें । इन रूक्ष वटिकाओं को घृत में पीसकर नेत्र गत कोथ रोग में अजा दूध के साथ देनी चाहिये । (का.सं.खि. 13/54-57) 7. अजा दूध के गुणों का उल्लेख क्षीर गुणविशेषीयाध्याय में किया है तथा अजा दूध की गणना अष्ट दूध के साथ की गई है । (का.सं.खि.अ. 22)।

अजा दही विवेचन :-

अजा दही वर्ग :- अम्लवर्ग, दही वर्ग (सु.सं.) । अम्ल स्कन्ध, दुग्ध वर्ग, गोरस वर्ग (च.सं.)। क्षीर वर्ग (अ.हृ.) दही वर्ग (भा.प्र.)

विभिन्न भाषाओं में नाम :- संस्कृत - दधि । हि. दही । गु. - दाह । बं. - दह । क. - मोसर, मोसरू । ते. - हुगु, पेरूगु । फा. - दोग । अ. - जगुरात, मास्त । अं. - कर्ड लड् मिल्क (Curdled Milk) ।

दही के गुण कर्म :-

1. **दध्याजं कफपित्तघ्नं लघु वातक्षयापहम् ।**
   दुर्नामश्वासकासेषु हितमग्नेश्च दीपनम् ॥
   (सु.सं.सू. 45/68)
2. **आजं दध्युत्तमं ग्राही लघु दोषत्रयापहम् ।**
   शस्यते श्वासकासार्श:क्षयकार्श्येषु दीपनम् ॥
   (भा.प्र.पू.ख. 12)

रस - अम्ल कषाय (ताजा दही मधुर किञ्चित अम्ल)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुण - लघु
वीर्य - उष्ण
विपाक - अम्ल (ताजा दही मधुर)
प्रभाव - दोषहर
कर्म - यह दही दीपन, ग्राही, बृहंण, संतर्पण तथा त्रिदोषघ्न है।
उपयोग :- बकरी का दही अर्श, श्वास तथा कास में लाभप्रद है। भावप्रकाश में उत्तम एवं कृशता में हितकर कहा है।

सुश्रुत संहिता :-
1. यह कफपित्तनाशक, हल्का, वातक्षयहर तथा अग्निदीपक है। इसका प्रयोग अर्श, श्वास तथा कास रोग में लाभप्रद है। (सु.सं.सू. 45/68-69) 2. पञ्चाज घृत के द्रव्यों में अजा दही का भी प्रयोग होता है। यह घृत ज्वर, शोथ, पाण्डु रोग में उत्तम माना गया है। (सु.सं.उ. 39/244) 3. अजा के पांच द्रव्यों दूध, दही, घृत, मूत्र तथा मल को "पञ्चाज" शब्द की संज्ञा दी गई है। (सु.सं.उ. 39/244)

अजा घृत विवेचन :-

अजा घृत गण :- दुग्ध वर्ग, गोरस वर्ग, मधुर स्कन्ध (च.सं.)। घृत वर्ग, मधुर स्कन्द (सु.स.)। क्षीर वर्ग (अ.हृ.)। घृत वर्ग (भा.प्र.)

विभिन्न भाषाओं में नाम :-

संस्कृत नाम - "घृतमाज्यं हविः सर्पिः" घृत, आज्य, हविस तथा सर्पि। हि. - घृत, घी, घोव। बं. - घि, घृत। म. - तूप। ते. - नेई, नैय्यि। द्रा.-नैय्। क. - तुप्पा। फा.- रोगनेजर्द। अ. - दुहनुल, बकर। अं. - क्लेरिफिइड वटर (Clierified Butter)।

अजा घृत गुण :-

सर्पीष्यजाविमहिषी क्षीरवत्स्वानि निर्दिशेत।

अजा, भेड़ भैंस आदि के घृत गुणों को अजा, भेड़, भैंस आदि के दूध गुणों के समान समझना चाहिये। (च.सं.सू. 27/230)

आजं घृत दीपनीयं चक्षुष्यं बलवर्धनम्। कासे श्वासे क्षये चापि पथ्यं पाके च तल्लघु॥ (सु.सं.सू. 45/98)

आजमाज्यं करोत्यग्निं चक्षुष्यं बलवर्द्धनम्। कासे श्वासे क्षये चापि हितं पाके भवेत् कटु॥ (भा.प्र.पू.खण्ड)

रस - मधुर
गुण - लघु, स्निग्ध
वीर्य - शीत
विपाक - मधुर (लेकिन भाव प्रकाश ने कटु कहा है)
प्रभाव - वातपित्त शामक
कर्म - दीपन, चक्षुष्य, बलवर्धन तथा वातपित्त शामक है।
उपयोग - अजा घृत कास, श्वास, राज्यक्ष्मा, दुर्बलता नाशक, चक्षुरोग में लाभप्रद तथा पथ्य है।

चरक :- सूत्रस्थान :-

"सर्पीष्यजाविमाहिषीक्षीरवत्स्वानि निर्दिशेत्"

बकरी घृत के गुण दूध के समान बतलाये गये हैं। (च.सू. 27/231)

चिकित्सा स्थान :-

रक्तपित्त चि.:- अजा घृत को मुलहठी कल्क तथा गो दूध से घृत पाक करें। इस घृत की अवपीड़न नस्य देने से रक्तपित्त रोग शान्त होता है। (च.चि. 4/101)

गुल्म चि :- पित्तज गुल्म में अजा घृत पथ्य है। आहार रूप में अजा घृत को प्रयोग करने का विधान बतलाया है। (च.चि. 5/133)

सुश्रुत संहिता :- सूत्रस्थान :-

घृत के गुणों का उल्लेख किया गया है। (सु.सू. 45/98)

चिकित्सा स्थान :-

सद्योव्रण चि. :- 1. छिन्न व्रणों की चिकित्सा में बकरी घृत से परिषेक करने का विधान है। (सु.सं.चि. 2/33) 2. मुलहठी, कमल, जीवक, ऋषभक इन सब को पीस लें। बकरी दूध तथा घृत से गोघृत पाक कर लें। यह घृत सभी प्रकार के नेत्राभिघातों में प्रयोग करना श्रेष्ठ कहा है। (सु.सं.चि. 2/44)

अश्मरी चि. :- वरुणादि गण, गुग्गुल, इलायची, हरेणु, कूठ, भद्रादार्व्यादि गण, मरिच, चित्रक, देवदारु के क्वाथ, ऊषकादि गण का कल्क तथा बकरी घृत मिलाकर घृत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाक विधि से घृत सिद्ध कर लें । यह घृत कफ जन्य अश्मरी नाशक है । इस कफ नाशक वर्ग में क्षार, यवागू, यूष, कषाय, दूध तथा आहार सिद्ध करें । (सु.सं.चि. 7/14-16)

दृष्टिगत रोग प्रतिषेध :- 1. बकरी की मेद, यकृत् तथा घृत, पिप्पली, सैंधव, मधु, आँवला स्वरस इन संबको पका लें । इस को खैर के कोश में रख लें । यह क्षुद्राञ्जन (रसक्रिया) रात्र्यान्ध में श्रेष्ठ है । (सु.सं.उ. 17/21-22)

ज्वर प्रतिषेध :- पञ्चाविक (भेड़ के दूध, घी, दही, मूत्र तथा मल रस), पञ्चाक (बकरी के दूध, दही, घृत, मूत्र तथा मींगनी), पञ्चमहिष (महिष के पांचों द्रव्य), चतुरुष्ट्र (गोबर, के अतिरिक्त ऊँट के चारों द्रव्य) से पञ्चगव्य विधि अनुसार घृत का निर्माण करें । यह अक्षिरोग में लाभप्रद है । (सु.सं.उ. 39/244)

शोष प्रतिषेध :- 1. शोष रोगी को विदारिगन्धादि गण से सिद्ध किया गया अजा घृत या भेड़ घृत स्नेहन कराने के लिये देना चाहिये । स्नेहन हो जाने पर मृदु वमन विरेचन (संशोधन), मृदु आस्थापन तथा शिरोविरेचन मृदु कर्मों में प्रयुक्त करें । (सु.सं.उ. 41/32-33) 2. बकरी या भेड़ घृत शोष रोग में लाभप्रद है । इसलिये शोष रोगी को इनका प्रयोग करना चाहिये । यवागू के साथ इन घृतों का सेवन करना कृश व्यक्ति के लिये लाभकारी है । (सु.सं. उ. 41/39) 3. एक मास तक नाना विध कल्पनाओं द्वारा नियमानुसार अजा मींगनी, मूत्र, दूध, घृत, मांस का सेवन करने, इनकी कल्पनाओं द्वारा स्नानादि कर्म करने तथा बकरी के साथ रहने से शोष रोग समूल नष्ट हो जाता है । (सु.सं.उ. 41/56)

अष्टाङ्ग. हृदय :- चिकित्सा स्थान :-

राजयक्ष्मा चि० :- राजयक्ष्मा के आहार द्रव्यों में अजा दूध तथा घृत का निर्देश दिया गया है । अजा घृत राजयक्ष्मा शामक है । (अ.हृ.चि. 5/6)

अर्श चि. :- बकरी के नवनीत (मक्खन), घृत, दूध एवं मांस, जाङ्गल प्रदेशीय प्राणियों के मांस रक्तार्श में लाभप्रद है । (अ.हृ.चि. 8/119)

सद्योव्रण प्रतिषेध :- 1. नेत्रगत सद्योव्रण में अजा घृत से पान, तर्पण तथा नस्य कर्म कराने का विधान है । (अ.हृ. उ. 26/18) 2. कृकाटिका छेदन चिकित्सा में सीवन करने के पश्चात् अजा घृत द्वारा सेचन करने का विधान बतलाया गया है । (अ.हृ.उ. 26/21)

अजा मूत्र विवेचन :-

अजा मूत्र गण :- कटु स्कन्ध, मूत्र वर्ग (च.सं.) । मूत्र वर्ग, शिरोविरेचन (सु.सं.)। मूत्र वर्ग, कटु स्कन्ध (अ.हृ.) मूत्र वर्ग (भा.प्र.) ।

विभिन्न भाषाओं में नाम :-

संस्कृत - मूत्र, प्रस्राव । हि. - मूंत, पेशाव, पेसाव । बं. - मुत, चोना प्रस्राव । मराठी - मूंत, मूत्र । गु. - मुतर । अ. - बोल । कर्नाटक - आफल गोत, मूत्र । तेलगू - उच्चा । अंग्रेजी - यूरिन (Urine) । लेटिन - युरिन (Urina)।

मूत्र संख्या - *अविमूत्रमजामूत्रं गोमूत्र माहिषं तथा । हस्तिमूत्रमथोष्ट्रस्य हयस्य च खरस्य च ।* (च.सं.सू. 1/93) *मूत्राणि गोमहिष्यजाविगजहयखरोष्ट्राणां...।* (सु.सं.सू. 45/217) *मूत्रं गोऽजाविमहिषी गजाश्वोष्ट्रखरोद्भवम् ।* (अ.हृ.सू. 5/80, अ.सं.सू.अ. 6) .

भेड़ मूत्र, अजा मूत्र, गोमूत्र, भैंस मूत्र, हस्ति मूत्र, ऊँट मूत्र, घोड़े का मूत्र तथा खर (गदहा) मूत्र । यह अष्ट प्रकार के मूत्रों की गणना मूत्रवर्ग में की जाती है। भाव प्रकाश में मनुष्य मूत्र का प्रयोग किया गया है।

अजा मूत्र गुण :-

1. *आजं कषायमधुरं पथ्यं दोषन्निहन्ति च ।* (च.सं.सू. 1/99)
2. *कासश्वासापहं शोफकामलापाण्डुरोगनुत् । कटुतिक्तालि छागमीषन्मारुतकोपनम् ।।* (सु.सं.सू. 45/223)
3. *श्वासकासहरं छागं पूरणात्कर्णशूलजित् ।* (अ.सं.सू.अ. 6)
4. *अजामूत्रं कटूष्णं च रूक्षं नाडीविषार्तिजित् । प्लीहोदरकफश्वासगुल्मशोफहरं लघु ।।* (राजनिघण्टु)

रस - कटुतिक्त, लवण ।

गुण - रूक्ष ।

वीर्य - उष्ण ।

विपाक - कटु ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभाव - त्रिदोष हर ।

कर्म - वेदनास्थापन, विषघ्न, शोथघ्न तथा त्रिदोषहर ।

प्रयोग - अजा मूत्र कास, श्वास, शोथ, कामला, पाण्डु, गुल्म, प्लीहा रोग, उदररोग, कफज व्याधि, गुल्म तथा शोथ हर है । कान में डालने से कर्णशूल नाशक है । सुश्रुत में अल्प मात्रा में वात को कुपित करने वाला माना है । चरक संहिता में अजा मूत्र को पथ्य माना है ।

चरक :- चिकित्सा स्थान :-

विषय चिकित्सा में वर्णित अमृत घृत में अजा मूत्र प्रयोग हुआ है । यह सर्व विष नाशक घृत है । (च. चि. 23/242-249)

कल्प स्थान :-

निशोथ के 9 योगों का प्रयोग विरेचन के लिये किया गया है । जिन में से एक योग में अजा मूत्र का प्रयोग होता है । (च.क. 7/13)

सुश्रुत संहिता :- सूत्रस्थान :-

जङ्गम (गति करने वाले पशु) प्राणियों के दूध, मूत्र तथा मल का प्रयोग आहार में पच जाने पर ही करना चाहिये । (सु.सं.सू. 36/16)

उत्तर तंत्र :-

दृष्टिगत रोग प्रतिषेध :- 1. स्रोताञ्जन, सैन्धव, पिप्पली तथा रेणुका को अजा मूत्र में रगड़ कर वर्तियां बना लें । यह वर्ति अञ्जन रात्र्यान्ध्य में लाभप्रद है । (सु.सं.उ. 17/16) 2. स्रोतोञ्जन को अग्नि पर गर्म करके आठ मूत्र (मूत्रवर्ग) तथा त्रिफला क्वाथ में बुझाने का विधान है । (सु.सं.उ. 17/44)

कर्णगत रोग प्रतिषेध :- 1. कर्णशूल में अजा तथा भेड़ का मूत्र तथा बांस के छिलके के कल्क से घृत सिद्ध करके प्रयोग करने का विधान बतलाया गया है । (सु.सं. उ. 21/19) 2. अष्ट मूत्रों (मूत्र वर्ग) में किसी एक मूत्र को लेकर उसे उष्ण कर लें । जब मूत्र शीतोष्ण हो जाये तो उसे कान में डालने से कर्ण शूल नष्ट हो जाता है । (सु.सं.उ. 21/27) 3. अष्ट मूत्रों में घी, तैल, वसा तथा मज्जा (चतुर्स्नेह) का पाक करके कर्ण में डालने का विधान बतलाया गया है । (सु.सं.उ. 21/28)

शीतपूतना प्रतिषेध :- अजा तथा गोमूत्र, मुस्ता, देवदारु, कुष्ठ एवं एलादि गण के द्रव्यों से तैल पाक करें । यह तैल शीत पूतना रोग हर है । (सु.सं.उ. 34/4)

ज्वर प्रतिषेध :- पञ्चाज, पञ्चविक, पंच महिष (अर्थात सभी के दूध, दही, घृत, मूत्र तथा मल) मल के अतिरिक्त ऊँट के चारों द्रव्यों से पंचगव्य घृत निर्माण अनुसार घृत बनाने का विधान है । (सु.सं.उ. 39/244)

गुल्म प्रतिषेध :- 1. गोमूत्र आदि आठ मूत्रों में पिप्पल्यादि दीपनीय गण का कल्क मिलाकर घृत पाक करें । यह घृत कफज गुल्म में लाभप्रद है । (सु.सं.उ. 42/37-38) 2. पानीय क्षार निर्माण के लिये गाय, बकरी, भेड़, गधा, हाथी तथा भैंस के मूत्रों का प्रयोग किया गया है । यह क्षार गुल्म तथा वात व्याधि नाशक है । (सु.सं.उ. 42/40-44)

हिक्का प्रतिषेध :- पूतिकीट (तेलिया कीड़ा), रसोत, वच, हींग तथा कमल इन सब के चूर्ण को अजा या भेड़ मूत्र में भावित करके नस्य देनी चाहिये । यह नस्य हिक्का में लाभकारी है । (सु.सं.उ. 50/23)

कृमिरोग प्रतिषेध :- अजा मूत्र अनुपान से पिप्पली मूल चूर्ण का सेवन करना कृमि नाशक है । (सु.सं.उ. 54/32),

विसूचिका प्रतिषेध :- 1. विसूचिका में दन्ती आदि कहे गये द्रव्यों का चूर्ण बना लें । इस चूर्ण में भैंस, बकरी, भेड़, हाथी तथा गाय के मूत्र पाक करके वर्ति बना लें । स्वेदन पश्चात् इन वर्तियों का प्रयोग गूदा में करें या इन द्रव्यों में चूर्ण को गुदा में प्रधमन करें । (सु.सं.उ. 57/24-25) 2. संशोधन (वमन विरेचन) द्रव्यों को भैंस, बकरी, भेड़, हाथी तथा गोमूत्र में डालकर क्वाथ बनालें । इस क्वाथ में आधा भाग मूत्र, मधु, निशोथ तथा सैंधानमक 40 ग्राम मिलाकर निरूहण देना चाहिये । विरेचन होने पर संसर्जन कर्म करायें । (सु.सं.उ. 57/26)

अपस्मार प्रतिषेध :- पिप्पल्यादि, वचादि तथा मुस्तकादि गण के क्वाथ में आरग्वधादि गण का कल्क तथा अष्ट मूत्र के द्वारा पाक किया गया घृत अपस्मार रोग में श्रेष्ठ कहा है । (सु.सं.उ. 61/30)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अष्टाङ्ग हृदय अजा मूत्र :-

सूत्रस्थान :-

सभी प्रकार के मूत्रों की कटु स्कन्ध में गणना की गई है। (अ.हृ.सू. 10/30-31)

उत्तरस्थान :-

तिमिर प्रतिषेध :- सम्भालू बीज, पीपला, कृष्ण सुरमा, सैन्धव लवण को बकरी मूत्र में पीसकर वर्ति बना लें। यह वर्ति रतौन्धी रोग में लाभप्रद है। (अ.हृ.उ. 13/85)

कर्णरोग प्रतिषेध :- 1. बकरी मूत्र तथा भेड़ मूत्र 16 भाग, बांस की मृदु छाल का कल्क 1 भाग तथा तिल तैल 4 भाग मिश्रित करके तैल पाक कर लें। यह तैल कफज कर्ण शूल में डालें। (अ.हृ.उ. 18/15)

शिरोरोग में अजा मूत्र में हींग या विडंग को मिलाकर नस्य देने का विधान है। (अ.हृ.उ. 24/17)

काश्यप संहिता-मूत्र :-

राजयक्ष्मा रोगी को अजा मूत्र से परिसेचन कराना लाभप्रद है। (का.सं.चि. राजयक्ष्मा)

अजा शकृत् विवेचन :-

संस्कृत - पुरीष, शकृत्, विट्। हिन्दी - गोबर, लीद, बिट्। अंग्रेजी - फीसेज (faeses)।

अजा शकृत् गुणकर्म :-

रस - कषायतिक्त।

गुण - लघु रूक्ष।

वीर्य - उष्ण।

विपाक - कटु।

उपयोग - कषायतिक्तमेतेषां हिध्माश्वासहरं शकृत्।

गाय, बकरी, हाथी, घोड़े तथा गर्दभ की विष्ठा कषाय तिक्त रस वाली तथा हिक्का, श्वास रोग हर है। (अ.सं.सू.अ. 6) अष्टांङ्गसंग्रह में केवल गाय, बकरी, घोड़े आदि पशुओं के मल के सामान्य गुण संक्षेप में कहे हैं। इसके अतिरिक्त इसका कोई वर्णन पृथक् रूप से नहीं मिलता है। रोगों में इसके प्रयोग अवश्य पाये जाते हैं।

अजा शकृत :-

चरक :- चिकित्सा स्थान :-

1. क्षार वटिका में बकरी लेंडियों का प्रयोग किया गया है। (च.चि. 13/162-164)

2. **विष चिकित्सा :-** सज्जी खार, बकरी की मींगी की राख, तुलसी पत्र, अक्षि पीडक समभाग को मदिरा में पीस लें। इसका प्रयोग पान, नस्य, लेप तथा अञ्जन रूप में करना चाहिये। इसके प्रयोग से गोजर (शतपदी) विष नष्ट होता है। (च.चि. 23/215)

सुश्रुत संहिता :- सूत्रस्थान :-

1. दहन कार्यों के साधनों में पिप्पली, अजाशकृत्, गाव दन्त, शर, शलाका, जाम्ब कोष्ठ, इत्तर लौह, मधु, गु तथा स्नेह बतलाये गये हैं। इनमें पिप्पली, अजा शकृ गोदन्ति, शर, शलाका से त्वचा गत रोगों में अग्निक कराने का विधान है। (सु.सं.सू. 12/4)

2. जङ्गम (गति करने वाले पशु आदि) प्राणियों के दू मूत्र तथा मलादि का सेवन आहार द्रव्य जीर्ण होने प करना चाहिये। (सु.सं.सू. 36/16)

चिकित्सा स्थान :-

अश्मरी चि. :- ग्राम्य पशुओं (गो, बकरी आदि) क गोबर या लीद से क्षार बनाने का विधान बतलाया गया है यह क्षार अश्मरी नाशक है। (सु.सं.चि. 7/21)

उत्तर स्थान :-

शोष प्रतिषेध :- 1. गाय, घोड़ा, हाथी, बकरी तथा भेड़ के गोबर रस, मूर्वा, हल्दी तथा खैर का क्वाथ तथा दू समभाग तथा घृत एक भाग के समान, त्रिफला, सम्पू मधुर वर्ग, त्रिकटु, देवदारु इनका कल्क मिलाकर घृ पाक करें। यह घृत राजयक्ष्मा के लिये उत्तम है। (सु सं.उ. 41/44-46) 2. बकरी की मींगनी, मूत्र, दूध, घृ तथा मांस की नाना विध कल्पनाओं द्वारा नियमानुसार रोगी को एक मास पर्यन्त सेवन करने से लाभ होता है। (सु सं.उ. 41/56) 3. गाय, घोड़ा, भेड़, बकरी, हरिण, ऊँट, गधा, हाथी इनके गोबर रसों द्वारा घृत पाक करने का भी विधान शोष रोग निवारणार्थ आता है। (सु.सं.चि. 41/49)

पाण्डुरोग प्रतिषेध :- अजा शकृत 160 ग्राम, विड़ नमक, हल्दी तथा सैन्धा नमक प्रत्येक 40-40 ग्राम लें। इन सब का चूर्ण बना लें। इस चूर्ण को मधु मिलाकर सेवन करने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से पाण्डु रोग नष्ट होता है । (सु.सं.चि. 44-42)

काश्यप संहिता :- सूत्रस्थान :-

घृत तथा कफ शामक द्रव्यों एवं गौ, गदहे, घोड़े, भेड़, बकरी के पुरीष (उपलों) के द्वारा निर्मित प्रदेह (प्रलेप) लाभप्रद होता है । (का.सं.सू. 23/37)

चिकित्सा स्थान :-

अजा शकृत के रस से उद्वर्तन (उबटन) करना राजयक्ष्मा रोग में लाभकारी है । (का.सं.चि. राजयक्ष्मा)

अतः इससे स्पष्ट होता है कि अजा से प्राप्त होने वाले पञ्चाज द्रव्यों का प्रयोग बाह्य एवं आभ्यन्तरीय रूप में अनेक प्रकार की कल्पनाओं तथा कर्मों द्वारा अनेक प्रकार के रोगों को शान्त करने में पूर्णतया सहायक सिद्ध होता है । पञ्चाज भी एक उत्तम प्रकार की रसायन मानी गई है । जो कि सर्वत्र सरलता पूर्वक प्राप्य है । अतः पञ्चाज का प्रयोग शरीर में रोग निवारणार्थ तथा शरीर में रक्षण में अपना विशेष स्थान रखता है ।

पञ्चाज योग तालिका

क्र०	योग नाम	सूत्र	रोग नाम/अधिकार	पञ्चाज प्रयुक्त द्रव्य
ग्रन्थ नाम चरक संहिता				
1.	प्रथम सर्पिर्गुड़	च.चि. 11/50-55	क्षतक्षीण	अजा दूध
2.	कुटजादि रसक्रिया	च.चि. 14/188-192	अर्श	अजा दूध
3.	नीलोत्पलादि योग	च.चि. 19/75-76	अतिसार	अजा दूध अनुपान
4.	अमृत घृत	च.चि. 23/242-249	विष	अजा दूध
5.	अणु तैल	च.चि. 26/139-141	त्रिमर्मीय (प्रतिश्याय)	अजा दूध
6.	वृहत्यादि वर्ती	च.चि. 26/240	त्रिमर्मीय (नेत्ररोग)	अजा दूध
7.	अमृताह्वादि वर्ती	च.चि. 26/242-244	त्रिमर्मीय (नेत्ररोग)	अजा शकृत
8.	दृष्टिप्रदा वर्ती	च.चि. 26/254-255	त्रिमर्मीय (दृष्टि प्रदा)	अजा दूध
9.	बला तैल	च.चि. 28/148-156	वातव्याधि	अजा दूध
10.	तिलादि लेप	च.चि. 29/133	वात शोणितं	अजा दूध
11.	सहचरादि योग	च.चि. 29/139	वात शोणित	अजा दूध
12.	मधूच्छिष्ट प्रलेप	च.चि. 29/141-144	वात शोणित	अजा दूध
13.	शालिपर्ण्यादि वस्ति	च.चि. 12/15 (11)	इन्द्रिय क्षीणता, विषम ज्वर	अजा दूध
14.	स्थिरादि यापन वस्ति	च.चि. 12/16	बल वर्ण दायक एवं वृष्य	अजा दूध
15.	बल वर्धक वस्तियाँ	च.सि. 12/17 (1)	बल वर्ण शुद्ध वर्धक	अजा दूध
16.	चतुःस्नेह अनुवासन वस्ति	च.सि. 12/18 (1)	योनि व्यापत् रोग	अजा दूध
ग्रन्थ नाम सुश्रुत				
1.	पञ्चाज घृत	सु.सं.उ. 39/244	ज्वर प्रतिषेध	दूध, दही, घृत, मूत्र एवं मल
2.	पानीय क्षार	सु.सं.उ. 42/40-44	गुल्म प्रतिषेध	अजा मूत्र
ग्रन्थ नाम अष्टाङ्ग हृदय				
1.	अणु तैल	अ.ह.सू. 20/37-38	धूमपान विधि अध्यान (नस्य)	अजा दूध
2.	धात्रि घृत	अ.ह.चि. 3/107-109	कास	अजा दूध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

3.	कुटजादि रसक्रिया	अ.ह.चि. 8/104-107	अर्श (रक्तार्श)	अजा दूध अनुपान
4.	रोध्रादि योग	अ.ह.चि. 8/112	अर्श	अजा दूध
5.	हरिद्रादि भस्म	अ.ह.चि. 10/57-58	ग्रहणी	अजा मूत्र
6.	क्षार गुटिका	अ.ह.चि. 15/103-105	उदर रोग	अजा मूत्र
7.	सारस्वता घृत	अ.ह.उ. 1/46	बालोपचार (स्मृति दायक)	अजा दूध
8.	भूतराव घृत	अ.ह.उ. 5/19	भूत प्रतिषेध	अष्ट मूत्र
9.	महाभूतराव घृत	अ.ह.उ. 5/20	भूत प्रतिषेध	मूत्रवर्ग
10.	अञ्जन वर्ती	अ.ह.उ. 11/50	सन्धिसितासित (अक्षिरोग)	अजा दूध
11.	महा त्रिफला घृत	अ.ह.उ. 13/12-13	तिमिर रोग	अजा दूध
12.	भास्कराञ्जन	अ.ह.उ. 13/28-31	तिमिर	अजा पेया
13.	वर्तियाञ्जन	अ.ह.उ. 13/72-73	तिमिर	अजा पेया
14.	शशदन्तादि वर्ती	अ.ह.उ. 13/71-72	शुक्र नेत्ररोग	अजा पेया
15.	पिष्टाञ्जन	अ.ह.उ. 15/31-32	लिंग नाश (दृष्टि वर्धक)	अजा पेया
16.	नील्यादि तैल	अ.ह.उ. 24/35-36	शिरोरोग (पलित नाशक)	अजा पेया
17.	कुंकुमादि तैल	अ.ह.उ. 32/27-30	क्षुद्र रोग (कान्ति वर्धक)	अजा पेया
18.	धातक्यादि तैल	अ.ह.उ. 34/51-54	गुह्यरोग (योनि व्यापद्)	अजा मूत्र एवं दूध
ग्रन्थ नाम काश्यप संहिता				
1.	इन्द्राणी घृत	का.सं. राजयक्ष्माधि.	राजयक्ष्मा	अजा दूध
2.	द्राक्षा घृत	का.सं. राजयक्ष्माधि.	राजयक्ष्मा	अजा दूध
3.	पीलु घृत	का.सं. राजयक्ष्माधि.	राजयक्ष्मा	अजा दूध
ग्रन्थ नाम शार्ङ्गधर संहिता				
1.	त्रिफला घृत	शा.म.ख. 9/65-70	नेत्र रोग	अजा दूध
2.	बिल्वादि तैल	शा.म.ख. 9/171	कर्ण वाधिर्य	अजा दूध
3.	राज मृगाङ्क रस	शा.म.ख. 12/149-153	राजयक्ष्मा	अजा दूध
4.	शोथ नाशक लेप	शा.म.ख. 21/7	भल्लातक जन्य शोथ	अजा दूध
5.	हस्तीदन्तादि लेप	शा.म.ख. 21/23	रोमोत्पादक	अजा दूध
6.	सर्षपादि लेप	शा.म.ख. 21/98	अरुचि	अजा मूत्र
7.	चन्द्रोदय वर्ती	शा.म.ख. 23/75-77	अक्षि रोग	अजा दूध
ग्रन्थ नाम रसेन्द्रसार संग्रह				
1.	त्रैलोक्य चिन्तामणि रस	2/264-66	ज्वर	अजा दूध अनुपान
2.	अमृतार्णव रस	2/5-10	ज्वरातिसार	अजा दूध
3.	ग्रहणी कपाट रस	2/85-88	ग्रहणी	अजा दूध अनुपान
4.	महाराज नृपति वल्लभ रस	2/151	ग्रहणी	अजा दूध
5.	महाराज नृपति वल्लभ रस	2/146-61	ग्रहणी	अजा दूध
6.	क्रिमिकालानल रस	2/2	कृमि	अजा दूध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

7.	राजमृगाङ्क रस	2/3-7	यक्ष्मा चि.	अजा दूध
8.	बृहत् काञ्चनाभ्र रस	2/65-69	यक्ष्मा	अजा दूध
9.	पुरन्दर वटी	2/70-72	कास	अजा दूध
10.	चन्द्रामृत रस	2/81-87	कास	अजा दूध
11.	श्वास कास चिन्तामणि	2/19-21	हिक्का चि.	अजा दूध
12.	शूलवज्रिणी वटी	2/47-51	शूल रोग	अजा दूध
13.	प्राणवल्लभ रस	2/38-41	गुल्म	अजा दूध
14.	मेहमुद्गर रस	2/15-19	प्रमेह	अजा दूध
15.	प्राणवल्लभ रस	2/22-26	प्लीहा रोग	अजा दूध अनुपान
16.	भूत भैरव रस	2/81-87	कुष्ठ रोग	अजा दूध अनुपान
17.	शिरोवज्र रस	2/6-10	शिरो रोग	अजा दूध अनुपान
18.	सूतिकान्य रस	2/11-13	सूतिका रोग	अजा दूध

ग्रन्थ नाम रस तरङ्गिणी

1.	सैंधवादि नस्य	परिशिष्ट		मूत्र
2.	शूलवज्रिणि वटी	परिशिष्ट		दूध

रस रत्न समुच्चय

1.	दीपिका रस	12/20-25	ज्वर	अजामूत्र
2.	राजमृगाङ्क रस	14/14-17	राजयक्ष्मा	अजा दूध
3.	शंङ्खेश्वर रस	14/17-19	राजयक्ष्मा	अजा दूध
4.	हेमगर्भ पोटली रस	14/23-25	राजयक्ष्मा	अजा दूध
5.	मृगाङ.पोट्टली रस	14/20-22	राजयक्ष्मा	अजा दूध
6.	लोकनाथ रस	14/32-46	राजयक्ष्मा	अजा दूध
7.	अर्शोघ्न वटक	15/19-23	अर्श	अजा मूत्र
8.	अर्कक्षीरादि लेप	15/87	अर्श	अजा मूत्र
9.	आनन्द भैरवी वटी	17/11-12	मूत्रकृच्छ्राश्मरी	अजा मूत्र
10.	लघु लोकेश्वर रस	17/17-19	मूत्रकृच्छ्राश्मरी	अजा मूत्र
11.	शम्बूकादि लौह	18/164	विद्रधि चि.	अजा मूत्र
12.	विसर्प नाशन तैल	20/2-3	विसर्प चि.	अजा मूत्र
13.	पित्तकुष्ठ हर रस	20/9-10	विसर्प चि.	अजा मूत्र
14.	कफकुष्ठ हर रस	20/11	विसर्प चि.	अजा मूत्र अनुपान
15.	कनक सुन्दर रस	20/37	विसर्प चि.	अजा मूत्र
16.	त्रिपुरान्तक रस	20/40-41	विसर्प चि.	अजा मूत्र
17.	रत्न भागोत्तर रस	22/15-22	वन्ध्या चि.	अजा दूध
18.	माहेश्वर धूप	22/131	बालरोग	अजा घृत
19.	ग्रहनाशिनी गुटिका	22/134-135	बालरोग	अजा मूत्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

20.	अपस्मार नाशन रस	23/8-12	अपस्मार	अजा मूत्र
21.	नवनेत्रदात्री वर्ती	23/54-56	अक्षिरोग	अजा दूध
22.	नयनरोगहरी वर्ती	23/57	अक्षिरोग	अजा दूध
23.	पटलहरेन्द्र रस	23/74	अक्षिरोग	अजा दूध
24.	मंजिष्ठादि प्रलेप	24/48	मुख कान्ति	अजा दूध
25.	स्तन विद्रधि स्फोटन एक वीर प्रयोग	25/13	क्षुद्ररोग	अजा मूत्र
26.	बल्मीके पीतल भस्म	25/62-67	क्षुद्ररोग	अजा मूत्र
27.	महा कल्क (दिव्यामृत रस)	27/102	वाजीकरण	अजा दूध
28.	सूर्याप्रभा वटी	29/35	विषकल्प	अजा दूध
29.	नवज्वरे विषकल्प	29/47	विषकल्प	अजा मूत्र
30.	तिमिर विषकल्प	29/88	विषकल्प अञ्जन	अजा दूध
31.	दिग्धहते विषकल्प	29/108	व्रण रोपण	अजा दूध
32.	जया गुडिका विषकल्प	29/117	विषमज्वर	अजा मूत्र
33.	सिध्मादौ तैल	30/83-84	सिध्म कुष्ठ	अजा घृत तथा दू
34.	वृश्चिक विषयोग	30/91	बिच्छू विषनाशक	अजा दूध

बैद्यनाथ

मधु

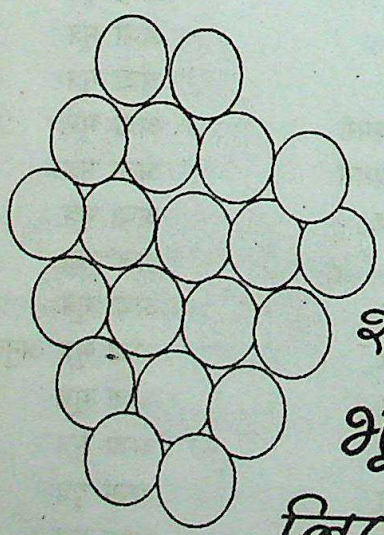

शरीर को शीतलता पहुँचाता, भूख बढ़ाता है। आँखों के लिए उपयोगी एवं कांतिवर्द्धक है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुलाब : सुगंध ही नहीं औषधि भी

डा० अशोक कुमार श्रीवास्तव
डा० अजय मिश्रा, ए० खान

ईश्वर ने प्रकृति के सौन्दर्य को निखारने की भरपूर कोशिश की है । पर्वत, नदियां, झरने, हरियाली तथा रंग-बिरंगे मनमोहक पुष्प मानव सुलभ मन को अनायास ही अपनी ओर आर्कषित करते हैं । प्रकृति सौन्दर्य क्लांत मन को शांति प्रदान कर उमंग भरने में सक्षम है । प्रकृति ने अनेक प्रकार के सुगंधित पौधे हमें विरासत में दिये हैं । इन पौधों के विभिन्न भागों में उपस्थित सगंध तेल के उड़नशील संघटक वातावरण में फैलकर जब घ्राणग्रन्थियों में पहुंचते हैं तब हमें सुगंध का आभास होता है । पादप पुष्पों की शृंखला में गुलाब कुदरत का नायाब तोहफा है, जो पूर्णत्व, रोमांस, कोमलता, सुंदरता तथा प्रेम का प्रतीक है । लगभग सभी प्राचीन ग्रन्थों में गुलाब का उल्लेख है, इसे चित्रकला, वास्तुकला, गायन तथा साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है ।

भारत में 1526 ई० में मुगल बादशाह बाबर के साथ गुलाब के पौधों का भारत आगमन का इतिहास मिलता है । अकबर के शासन काल में लिखी गई "आइने - अकबरी" में गुलाब सुवासित जल के प्रयोग का वर्णन है । इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका के अनुसार गुलाब का इत्र सबसे पहले पर्शिया में बनाया गया ।

प्रकृति में कई प्रकार के पीत, गुलाबी, लाल, रक्तापीत तथा श्वेत रंगों के गुलाब पाये जाते हैं । इसी प्रकार गुलाब के छोटे पुष्पों से लेकर बड़े पुष्पों (व्यास 3.5 सेमी. से 18 सेमी. तक) देखने को मिलते हैं । विश्व में गुलाब के 500 से अधिक प्रभेद हैं, इनमें से कुछ प्रभेद सुगंधयुक्त हैं जिनका कृषिकरण सगंध तेल प्राप्ति हेतु किया जाता है । गुलाब की तीन प्रजातियां, **रोजाडेमासिना, रोजा गैलिका** तथा **रोजा सेन्टीफोलिया** तेल उत्पादन में महत्वपूर्ण हैं । इन तीनों प्रजातियों में रोजा डेमासिना अपनी भीनी सुगंध तथा तेल की अधिक मात्रा हेतु विश्व प्रसिद्ध है । इस प्रजाति से उच्च गुणवत्ता का तेल प्राप्त होता है । रोजा डेमासिना के मूल स्थान का पता नहीं है । इसे एशिया माइनर से यूरोप में स्थापित किया गया । गुलाब के पौधों को प्रौढ़ होने में तीन वर्ष का समय लगता है, परन्तु इससे पूर्व ही फूलों को एकत्रित किया जा सकता है ।

व्यावसायिक रूप से भारत में गुलाब की खेती अलीगढ़, कन्नौज, गाजीपुर, सिकंदरपुर, बलिया, कानपुर के अतिरिक्त अमृतसर, तंजौर, त्रिचुरापल्ली, मदुरई, पूना, देवगढ़, हल्दीघाटी तथा हिमाचल प्रदेश में की जाती है । गुलाब का एक किग्रा० तेल प्राप्त करने हेतु लगभग 4000-5000 किग्रा० ताजे फूलों का इस्तेमाल किया जाता है । फूलों से कम मात्रा में तेल निकलने के कारण इस वेशकीमती तेल का बाजार मूल्य एक लाख अस्सी हजार रुपया प्रति किग्रा० से अधिक है । विश्व प्रसिद्ध 'रोज वैली' में बुल्गारिया के तेलयुक्त गुलाब के फूलों का कृषिकरण 300 वर्षों से किया जा रहा है । यहां के गुलाब में तेल की गुणवत्ता तथा प्रतिशत मात्रा अच्छी है ।

सगंध तेल प्राप्ति हेतु फूलों को प्रातः सूर्य निकलने से पहले ही तोड़ा जाता है । प्रातः तोड़े गये फूलों में तेल की अधिक मात्रा प्राप्त होती है । इन्हीं फूलों से आसवन विधि द्वारा तेल निकाला जाता है । केन्द्रीय औषधीय एवं सगंध पौधा संस्थान (सिमैप) लखनऊ ने गुलाब तेल आसवन हेतु नई तकनीक विकसित की है, जिसके द्वारा पहले से अधिक तेल की प्राप्ति की जा सकती है । इसके अतिरिक्त सिमैप ने काश्मीर में बुल्गारियन गुलाब का सफल स्थापन कर नया कीर्तिमान स्थापित किया है ।

रोजा डेमासिना के सगंध तेल में जिरेनियाल

प्लांट फिजियोलाजी एवं बायोकेमेस्ट्री विभाग, केन्द्रीय औषधीय एवं सगंध पौधा संस्थान (सिमैप),
पोस्ट-सिमैप परिसर, लखनऊ - 226015

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection; Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

75% तक सिट्रोनिलाल 20%, निराल 20% तथा एक सूक्ष्म संघटक बीटा-डेमासिनोन (0.01%) पाया जाता है ।

भारत में गुलाब का मुख्य उपयोग सुगंधित पदार्थों के निर्माण में किया जाता है । इन उत्पादों में रूह गुलाब, इत्र गुलाब, गुलाबजल, गुलरोगन तथा गुलकंद प्रमुख हैं । इन उत्पादों के निर्माण हेतु सर्वोत्तम प्रजाति रोजा डेमासिना ही है । हल्के गुलाबी रंग की यह आकर्षक प्रजाति इत्र उद्योग के लिये सर्वाधिक महत्वपूर्ण है । आसवन द्वारा प्राप्त इत्र भीनी, मादक एवं तेजगंध वाला उड़नशील द्रव्य है । यह अपनी गुलाबी महक से महफिलों को गुलाबी करता है, सुगंध बिखेरता है तथा एकांत के क्षणों को मादक बना देता है ।

गुलाब का प्रयोग प्राचीन सभ्यता में देखने को मिलता है । गुलाब के उत्पाद का प्रयोग आधुनिक सुगंध चिकित्सा (एरोमाथेरापी) में किया जा रहा है । रूह गुलाब चेहरे से झुर्रियां मिटाता है । इत्र गुलाब अनिद्रा एवं तनाब दूर करता है । गुलाब जल का प्रयोग फेस क्लीनर, नेत्ररोग तथा मोटापा दूर करने में होता है । गुलकंद रेचक है तथा गुलरोगन माइग्रेन जैसे भयंकर सिरदर्द का शमन करता है ।

शुद्ध स्वर्ण भस्म से निर्मित

बैद्यनाथ

रूमार्थी गोल्ड

पुरानी जोड़ों की प्रभावी दवा

रूमार्थी कैप्सूल में स्वर्ण भस्म का विशेष मिश्रण होने से यह गठिया वात एवं जीर्ण जोड़ों के दर्द पर व मासपेशियों के रोगों में अत्यंत प्रभावी औषधि है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोमान्तिका (Measles)

[1]प्रोफेसर महेन्द्र सिंह मीणा
[2]दिनेश चन्द्र शर्मा

पर्याय और परिचय

प्रधानत: यह बच्चों में होने वाला एक मुख्य रोग है। इसे खसरा (मीजल्स) कहते हैं।

रोमों के मूल में ताम्र वर्ण की सूक्ष्म पिड़काओं के निकलने के कारण इसे रोमान्तिका भी कहते हैं। इसमें पहले ज्वर होता है फिर कास अरुचि आदि लक्षण होते हैं। विषाणु (वायरस) जन्य यह रोग तीव्र संक्रामक होता है।

रोमकूपोन्नतिसमा रागिण्य: कफपित्तजा: ।
कासारोचक संयुक्ता रोमान्त्यो ज्वरपूर्विका: ॥
(सि.नि.प्र.ख.)

सूक्ष्माणा: पिडका: शरीरे सर्वाङ्गगा: सज्वरदाह तृष्णा: ।
कण्डूयुता: सारूचि सप्रेसका: रोमान्तिका: पित्तकफात् प्रदिष्टा: ॥
(च.चि. 12/92)

निदान

इसका मुख्य कारण विषाणु है (Filter-Passing-Virus)। वातावरण के दूषित होने से यह रोग देशव्यापी हो जाता है। इसमें विषाणु नासागत स्राव, रक्त और मस्तिष्क में पाया जाता है। आयुर्वेदीय दृष्टिकोण से इसमें कफ और पित्त का प्रकोप माना जाता है। इस विषाणु का अन्य परस्पर संसर्ग से तीव्रता पूर्वक होता है।

यह रोग बालकों में विशेष रूप से होता है। 6 मास तक के बच्चों में यह रोग नहीं होता है क्योंकि गर्भ में माता से पोषण और उसके बाद भी स्तनपान आदि के कारण इस रोग के प्रति शिशु में सहज क्षमता होती है। इसके अतिरिक्त 10 साल से अधिक उम्र के बालकों में यह प्राय: नहीं होता है। इसका सर्वाधिक प्रयोग 3-4 वर्ष के बच्चों में होता है।

काल :-

शीत ऋतु के अन्त में तथा वसन्त ऋतु में इसका प्रकोप होता है। प्राय: माघ मास से प्रारम्भ होकर बैसाख मास तक इसका प्रकोप रहता है। बालकों में यह रोग प्राय: 5 वर्ष की आयु तक होता है। एक बार होने के बाद स्थायी रोग क्षमता उत्पन्न हो जाती है। अत: एक बार जिस बच्चे को यह रोग हो जाता है उसे इसकी पुनरावृत्ति प्राय: नहीं होती है। प्रतिवर्ष ही इसका संक्रमण फैलता है। पर प्राय: 3-4 वर्ष में एक बार अधिक प्रकोप होता है। इसका संक्रमण छींकने, खांसने, बोलने आदि से निकले बिंदुत्क्षेपों से होता है।

लक्षण :-

तत्रादित: प्रतिश्यायो ज्वरोगश्च नेत्रयो: ।
तन्द्रारूचि: क्लम: सादो विड्भेदश्चापिकुत्रचित् ॥
शोणायनानां ताल्वादौ दर्शनं लक्ष्मणां ध्रुवम् ।
अथ तुर्यात् तृतीयाद्वा दिनात्ताम्राभ लक्ष्मणाम् ॥
(सि.नि.प्र.ख.)

इस रोग में लक्षणोत्पत्ति अत्यधिक क्रमिक रूप से होती है। संक्रमण के बाद रोग का संचय काल 9 से 11 दिन तक का होता है। इस रोग में सहसा ज्वर होता है। नासास्राव होता है और छीकें आने लगती हैं। नेत्रों में लालिमा हो जाती है। खांसी आने लगती है और पलकें भारी हो जाती हैं। आंखों से पानी गिरने लगता है तथा प्रकाश सहन नहीं होता है। तन्द्रा अरुचि, ग्लानि, शिर:शूल आदि लक्षण हो जाते हैं।

मसूढ़ों के सामने मुख के भीतर बारीक लाल और कुछ उभरी हुई फुंसियां हो जाती हैं। तीसरे-चौथे दिन मस्तक पर या कानों के पास फिर पूरे शरीर में फुँसिया निकलने लगती हैं। प्रारम्भ में कान के पास चिबुक (ठोडी) और ओंठ पर मच्छर काटने के समान धब्बे प्रतीत होते हैं। दो तीन दिन में सब पिड्कायें निकल जाती हैं। ज्वर कम हो जाता है। तत्पश्चात् पिडकाओं पर की पतली त्वचा निकल जाती है और धब्बे पड़ जाते हैं। जब तक ऊपर से त्वचा नहीं निकल जाती है, तब

1. विभागाध्यक्ष, शरीर क्रिया विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर
2. आयुर्वेद वाचस्पति अध्येता, शरीर क्रिया विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तक रोगी रोग फैला सकता है । रोगमुक्ति के 15 दिनों बाद तक बच्चों को रोगी से दूर रखना चाहिये ।

इस रोग के प्रारम्भ के 2-3 दिनों में तापक्रम 101^0 फा. तक रहता है । पिंडका निकलने के बाद चौथे दिन ताप बढ़कर 103^0-104^0 फा. तक हो जाता है । सातवें-आठवें दिन ताप पुनः कम हो जाता है, जब पिड़कायें शांत हो जाती हैं । 15-18 दिनों में रोगी स्वस्थ हो जाता है ।

रोमान्तिका में मुख के भीतर श्लैष्मिक कला में उभड़े लाल घेरायुक्त दानों का सर्वप्रथम शोध करने वाला 'कोपलिक्स' था । अतः उसके ही नाम पर इन चिन्हों को कोपलिक्स स्पोट्स (Kopliks Spots) नाम दिया गया है । इस रोग में नाड़ी और श्वास की गति उष्ण की अपेक्षा तीव्र होती है ।

प्रकार :-

1. सौम्य 2. तीव्र

सौम्य प्रकार उपर्युक्त लक्षणों वाला होता है ।

तीव्र प्रकार में पिड़काओं का रंग जामुन जैसा होता है । तीव्र प्रकार में भी दो भेद होते हैं ।

1. रक्तस्रावी :- जिसमें त्वचा में से रक्तस्राव होता है ।
2. शक्तिनाशक:- जिसमें जीवनीय शक्ति की अतिशय क्षीणता होती है तथा उपद्रव भी तीव्र होते हैं । कभी-कभी प्रलाप आदि उपद्रव भी हो जाते हैं ।

उपद्रव :-

यदि सातवें दिन दानों के मुर्झाने के साथ ही ज्वर कम न हो, नाड़ीगति तथा श्वास तीव्र हो तो प्रणालीय श्वसनक ज्वर (Broncho-Pneumonia) का संदेह करना चाहिये । प्रायः निर्बल बालक में द्वितीयक उपसर्ग होकर श्वसनक ज्वर, फुफ्फुसावरण शोथ, स्वरयन्त्रशोथ, मुखपाक, प्रवाहिका, मस्तिष्कावरण शोथ, नेत्राभिष्यन्द, मध्यकर्णशोथ एवं मूर्च्छा आदि उपद्रव हो सकते हैं ।

चिकित्सा सूत्र :-

1. रोगी को हवादार, स्वच्छ, पृथक कमरे में रखना चाहिये ।
2. कमरे में प्रकाश या रोशनी कम हो और ठण्डी हवा नहीं लगनी चाहिए । ओढ़ना-बिछौना प्रतिदिन धूप में सुखाना चाहिए ।
3. प्रथमतः लंघन कराना चाहिए । भोजन में रुचि हो तो पर लाजमण्ड, यवपेया, नारिकेल जल, दूध, मुसम्मी आदि द्रव पदार्थ दें । ज्वर का शमन होने पर क्रमशः सुपाच्य तथा पोषक आहार देना चाहिये ।
4. ज्वर प्रशमनार्थ मृदु किन्तु मोटा तौलिया सुखोष्ण जल में भिगोकर शरीर को पोंछना चाहिये । उष्ण जल, उष्ण निवास और उष्ण जल परिमार्जन करना, सुखपूर्वक पिडका निर्गमन में सहायक होता है ।
5. इसमें मुखपाक, नेत्राभिष्यन्द और नासा तथा कर्ण शोथ होने की अधिक सम्भावना होती है । अतः इन अंगों की स्वच्छता पर ध्यान देना चाहिये ।
6. आँखों में शुद्ध स्फटिक और रसाञ्जन का गुलाबजल में बना द्रव डालना चाहिये ।
7. मलशोधनार्थ यष्ट्यादि चूर्ण 3-4 ग्राम सुखोष्ण जल से 1-2 बार देवें । अथवा अश्वकंचुकी रस एक दो देकर उदरशोधन करना चाहिये ।

औषध व्यवस्था :-

पटोलादि क्वाथ :-

पटोलपत्र, त्रिफला, नीम की अन्तः छाल, गिलोय, नागरमोथा, मूर्वा, कुटकी, पाठा, हरिद्रा तथा जवासा समभाग लेकर, एक तोला की मात्रा में लेते हुये अष्टगुण जल में क्वाथ बनावें तथा मधु के साथ दिन में दो बार पिलाना चाहिये । इससे दाने ठीक ढंग से निकल जाते हैं तथा मृदुरेचन होता है । शरीर का निर्विषीकरण होने के साथ-साथ दानों में दाह और कण्डू आदि में लाभ होता है ।

खदिराष्टक क्वाथ -

खदिर, त्रिफलात्र नीम की अन्तः छाल, पटोल, गुडुची व अडूसा का भी उपर्युक्त विधि से सेवन करना चाहिये ।

चिकित्सा व्यवस्था -

	प्रातः	शाम
1. त्रिभुवन कीर्तिरस	: 100 - 100 मि.ग्रा.	

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

	बालसुधा	: 200 - 200 मि.ग्रा.
	सितोपलादि चूर्ण	: 1 - 1 ग्राम
		: 2 बार शहद से ।
2.	दिन में 2 बार	: पटोलादि क्वाथ 10-10 ग्राम, 2 ग्राम शहद डालकर
3.	दिन में 2 बार	
	संजीवनी	: 1-1 गो.
	लवंग	: 1/2 - 1/2 (नग)
	अजवायन	: 200-200 मिग्रा.
	मुनक्का	: 2-2 नग
		: पानी डालकर घोटकर गर्म करके 2 बार

4. चार-चार घण्टे से वासावलेह 1-1 चम्मच ।

बालक वासावलेह लेने में कठिनाई अनुभव करता है । अत: 50 ग्राम वासावलेह, 50 मि. लीटर द्राक्षारिष्ट, 1 ग्राम मधुयष्टि चूर्ण, 1 ग्राम बालसुधा, 5 ग्राम तालीसादि चूर्ण, 1 ग्राम इलायची तथा 20 ग्राम मिश्री मिलाकर एक सम्मिश्रण तैयार कर लेना चाहिये । चार-चार घण्टे में एक-एक चम्मच देते रहने से शुष्ककास में लाभ होता है तथा फुफ्फुस सम्बन्धी रोग उपद्रव रूप में नहीं होते ।

पथ्य -

प्रारम्भ में 2-3 दिन के लंघन के बाद तरल आहार, यूष, फलरस आदि देने चाहिये ।

परीक्षा के समय आपके लाड़ले को जरूरत है एकाग्रता और अधिक कार्यक्षमता की

आपके लाड़ले का उज्जवल भविष्य आपका सपना है । पर आज की तीव्र प्रतिस्पर्धा व पढ़ाई का बोझ आपके लिए चिंता का विषय भी है । ऐसे माहौल में आपके बच्चे को जरूरत है एकाग्रता व समझने की क्षमता की, उसे जरूरत है बैद्यनाथ शंखपुष्पी की, तो आज ही से अपने लाड़ले को दीजिए ...

बैद्यनाथ

शंखपुष्पी

आज हररोग और वर्षभर शरबत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्यों थकते हैं आप ?

थकान आधुनिक युग में एक आम बीमारी बन चुकी है । हर तरफ थके हुए लोग नजर आते हैं । श्रमिक को शारीरिक थकान है, बुद्धिजीवी मानसिक रूप से थके हुए हैं, घरेलू महिलाएं काम के बोझ तले थकावट महसूस कर रही हैं तो कामकाजी महिलाएं दोहरी जिम्मेदारी निभाते हुए थक चुकी हैं । इस तेज रफ्तार जमाने में हर कोई थका हुआ है ।

आखिर यह 'थकान' है क्या ? सामान्यत: शारीरिक या मानसिक परिश्रम का कार्य करने के पश्चात् प्रत्येक व्यक्ति एक प्रकार की शिथिलता अपने तन-मन में अनुभव करता है । यही अनुभूति थकान की है जो एक नैसर्गिक व स्वाभाविक थकावट से सर्वथा भिन्न है ।

अकारण होने वाली थकान ही एक बीमारी है । कई व्यक्ति जो थका देनेवाला कोई शारीरिक या मानसिक कार्य नहीं करते, फिर भी हरदम थकान उनको घेरे रहती है । थकान की यह अनुभूति जब आप में स्थायी रूप से घर कर जाती है, तब समस्या अधिक जटिल हो जाती है । मनोवैज्ञानिकों के अनुसार, रुचि और इच्छाओं के कम होने की अवस्था ही थकान है । जो रुचि और इच्छाओं की कमी के अनुपात में क्रमश: घटती या बढ़ती रहती है । सामान्य अर्थों में आदमी की शारीरिक और मानसिक शिथिलता को थकावट माना जाता है । वैज्ञानिक भाषा में इस अवस्था को "न्यूरेस्थानिया" कहा जाता है ।

जहाँ सामान्य थकान एक सहज प्राकृतिक प्रक्रिया है, वहीं असामान्य थकान एक प्रकार का रोग है, जिसका यथाशीघ्र निदान कर उपचार करना आवश्यक है । असामान्य थकान भी शारीरिक और मानसिक दोनों स्तरों पर हो सकती है । वैसे तो थकान ही अपने आप में रोग का लक्षण है । फिर भी थकावट के रोगी में इसके सामान्य लक्षण देखे जा सकते हैं । हमेशा चिंतामग्न रहना, भूख न लगना, काम-क्रीड़ा के प्रति अरुचि, तनाव व निद्रा आदि स्थायी थकान के सामान्य लक्षण हैं । मानसिक उदासी, चिड़चिड़ापन, स्फूर्ति और उत्साह का अभाव जैसे थकान से जुड़े रहते हैं ।

चिकित्सा-विज्ञान की आधुनिक खोजों से प्रकाश में आया है कि शरीर के रक्त और ऑक्सीजन मौजूद शर्करा की मात्रा जब कम हो जाती है, तो मांस-पे को पर्याप्त खुराक नहीं मिल पाती है । इस क मांसपेशियां शिथिल होकर शारीरिक सामर्थ्य को क करती हैं, जिसके फलस्वरूप आदमी थकान का शि हो जाता है । इसके अतिरिक्त, मधुमेह, रक्ताल्पता, थाइ ग्रंथि का असंतुलन, भोजन में पोषक तत्वों की क शरीर में लैक्टिक अम्ल की वृद्धि आदि भी थकान पै करने के अन्य कारण हैं ।

बढ़ते हुए मोटापे के कारण शरीर पर चर्बी च लगती है और इस वजह से ग्रंथियां सक्रिय नहीं रह पा इस प्रकार मोटापा भी स्थायी थकान को आमंत्रित क है । शारीरिक दुर्बलता की स्थिति में भी आदमी थकान की शिकायत हो सकती है । दुर्बल व कम व्यक्ति सामान्यत: परिश्रम करने पर ही थककर चू जाता है ।

थकान के मानसिक कारणों से चिंता, तनाव, बोरियत व अंतर्द्वन्द का नाम गिनाया जा सकता है । की तनावपूर्ण जिंदगी में ये सब आम बातें हैं, जो व्य मानसिक स्तर पर परिस्थितियों से सामंजस्य स्थापित न कर पाते, वे अंतत: थकान के शिकार हो जाते हैं ।

थकान का तात्कालिक एवं सबसे महत्व उपचार है - विश्राम । थके हुए शरीर और मन को पू रूप से विश्राम दीजिए । आराम से बैठकर या लेट अपनी सुविधानुसार विश्राम करने से आप थकान नि निजात पा सकते हैं । जिस प्रकार जीवन में श्रम की महत्ता होती है, उसी प्रकार विश्राम की भी आवश्यकता होती है । श्रम जीवन का निर्माण करता है, तो वि

34/ बंदा रोड, भवानीमण्डी, जिला-झालावाड़ (राजस्थान) 326 502

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन की आधार-शिला है । विश्राम की प्रक्रिया को हम दो भागों में बांट सकते हैं । पहला अल्पकालिक विश्राम-जब हम दो-चार घंटे या अधिक समय तक निरंतर कार्यरत रहते हैं, और एक प्रकार की थकान का अनुभव करने लगते हैं, तो बीच में कुछ-कुछ समय का अंतराल देकर उस दौरान चाय पीकर, पान आदि लेकर, थोड़ा घूम-फिरकर या गप्पें लड़ाकर विश्राम कर सकते हैं । इससे कार्य की एकरूपता से उत्पन्न हुई बोरियत और थकावट दूर हो जाती है और हम खुद को पुनः तरोताजा पाते हैं । यह अल्पकालिक विश्राम न केवल थकावट को दूर करता है, बल्कि आदमी की कार्यक्षमता में भी वृद्धि करता है ।

जहाँ तक पूर्ण विश्राम की बात है, वह व्यक्ति नींद के माध्यम से प्राप्त करता है । किसी कार्य में नष्ट हुई ऊर्जा को पुनः प्राप्त करने के लिए पर्याप्त निर्विघ्न नींद अति आवश्यक है । नींद का अभाव मनुष्य को थका कर विभिन्न रोगों की ओर धकेलता है । अतएव पर्याप्त नींद अच्छे स्वास्थ्य की प्रथम व अनिवार्य शर्त है । नींद मस्तिष्क के तंतुओं और शरीर के स्नायुओं को आराम पहुंचाकर थकावट को दूर करती है ।

सही संतुलित आहार हर व्यक्ति के लिए आवश्यक है । थकान की शिकायत करनेवाले व्यक्ति को अपने आहार पर समुचित ध्यान देना चाहिए । प्रोटीनयुक्त आहार, चोकरदार आटे से बनी रोटी और सफेद चीनी के स्थानपर प्राकृतिक शर्करा का उपयोग थकान की शिकायत को दूर करता है । अतिपरिष्कृत खाद्यान्न, अत्यधिक मात्रा में चीनी और कोला पेयों का अधिक सेवन थकान को आमंत्रित करते हैं । आदमी को सदैव स्फूर्तिवान रहने के वास्ते अपने आहार में हरी-सब्जी, सलाद, दूध, पनीर, फल, अंकुरित गेहूं, शहद आदि को पर्याप्त स्थान देना चाहिए ।

निरंतर शारीरिक निष्क्रियता तन-मन को एक आलस-भरी थकान से सराबोर कर देती है । टहलना, खेलकूद और नियमित व्यायाम व्यक्ति की कार्यक्षमता में बीस प्रतिशत तक वृद्धि करते हैं । मानसिक कार्य करनेवाले लोगों के लिए तो शारीरिक व्यायाम और भी अधिक आवश्यक है ।

थकान का शरीर से जितना संबंध है, उससे अधिक यह आपकी मनःस्थिति से ताल्लुक रखती है । यदि आप थकान जैसे रोग से पीड़ित हैं तो अपनी समूची जीवन-शैली का आत्मावलोकन कीजिए और तनाव के कारणों की खोजकर उन्हें दूर करने का ईमानदारी से प्रयास कीजिए । जीवन जीने की चीज है । इसे पूरे उत्साह और आनंद के साथ लीजिए । अपने कार्य की नीरसता के बीच आनंद व हास-परिहास के कुछ पल ढूंढ निकालना कोई मुश्किल काम नहीं । अपनी अभिरुचियों को व्यापक आधार देकर आप न केवल बोरियत व थकान से मुक्ति पा सकते हैं बल्कि सृजन की यह रचनात्मक शक्ति आपके व्यक्तित्व के विकास के वास्ते भी उपयोगी साबित होगी । जीवन की एकरसता को भंग करते हुए कभी अचानक लीक से हटकर प्रोग्राम बनाइए । आप देखेंगे की थकान जैसी चीज आपको छू भी नहीं पाएगी । अपने खाली समय का इस्तेमाल थकान अनुभव करने के बजाय साहित्य कला, विज्ञान, सिनेमा अथवा अपनी रुचि के विषय में करके आप सहज संतुष्टि पा सकेंगे । थकान से बचने के लिए सदैव प्रसन्नचित व हंसमुख रहें । जीवन के प्रति आपकी आस्था व सकारात्मक दृष्टिकोण आपके आचरण में परिलक्षित होना चाहिये । याद रखिए, आत्मकेन्द्रित होकर आप थकान को दावत देने के साथ ही सामाजिक स्तर पर अपनी लोकप्रियता को भी दांव पर लगा रहे होते हैं ।

थकान चाहे शारीरिक हो या मानसिक, आमतौर पर रहन-सहन, खानपान, नियमित व्यायाम व मानसिक स्तर पर समुचित परिवर्तन कर उसे दूर किया जा सकता है । असामान्य थकान की सूरत में अपने चिकित्सक से परामर्श जरूर लें ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मधुमेह की सफल अनुभूत घरेलू औषधि

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* डा० राजीव कुमार राय
** डा० सी०बी०झा

आज के मशीनी युग में शारीरिक श्रम का अभाव, अनियमित दिनचर्या, खानपान, रहन-सहन के किसी निश्चित मापदंड का पालन न करना, फास्टफूड का सेवन, वातावरण में उपस्थित तरह-तरह के प्रदूषित तत्व, अनाज उत्पादन में रासायनिक खादों का प्रयोग, नौकरी में कार्यरत लोगों में व्याप्त तनाव, संघर्षपूर्ण समाज में जीवन रक्षण एवं भौतिक सुख साधनों की लिप्सा हेतु धनार्जन के अतिशय प्रयास के कारण उत्पन्न तनाव आदि मधुमेह की उत्पत्ति में अत्यधिक सहायक कारण होते हैं। तनाव को मधुमेह की उत्पत्ति में एक बहुत बड़ा कारण इसलिए माना जाता है क्योंकि शरीर के सभी अंत:स्रावी ग्रंथियों पर नियंत्रण के उच्चतम केन्द्र मस्तिष्क में स्थित होते हैं एवं तनाव की स्थिति में मस्तिष्क बुरी तरह से उत्तेजित हो प्रभावित होता है जिससे अन्य अंत:स्रावी ग्रंथियों की कार्यप्रणाली पर दुष्प्रभाव पड़ता है ।

चरक संहिता के अनुसार शारीरिक व्यायाम का त्याग, अत्यधिक निद्रा, लेटना, बैठना और जो कोई ऐसा कार्य जिससें कफ, मेद और मूत्र की उत्पत्ति होती है वे सभी मधुमेह के निदान विशेष है ।

यथा-मृजाव्यायामवर्जनं स्वप्नशयनासनप्रसङ्गोः, यश्च कश्चिद्विधिरन्योऽपि श्लेष्मोमेदोमूत्रसंजननः, स सर्वो निदान विशेषः।

चरक संहिता, निदान स्थान 4/5

सामान्य बोलचाल की भाषा में मधुमेह को राजरोग कहा जाता है, जैसे राजा के पीछे चलने वाले सेवकों और सैनिकों का कारवाँ होता है इसी प्रकार से मधुमेह द्वारा उत्पन्न औपद्रविक रोगों का कारवां मधुमेह ग्रस्त व्यक्ति के शरीर में चलता है । वर्तमान में हमारी जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा मधुमेह से ग्रस्त है और दिन-प्रतिदिन मधुमेह रोगियों की संख्या चिकित्सालयों में बढ़ती ही चली जा रही है ।

आयुर्वेद मधुमेह को दोषों की विकृतावस्था से उत्पन्न व्याधि मानते हुए, क्लेद, वसा, ओज, लसिका सहित अस्थि रहित शेष अन्य धातुओं को दूष्य की श्रेणी में रखता है ।

मधुमेह आधुनिक चिकित्सा शास्त्र की दृष्टि में - आधुनिक चिकित्सा शास्त्र मधुमेह (Diabetes) को Insulin की कमी से उत्पन्न मानकर इसको दो वर्गों में विभाजित करता है ।

1. Type I - IDDM 2. Type II - NIDDM

Type-I सामान्यत: बच्चों में ही अधिक पाया जाता है एवं आग्न्याशय (Pancreas) से Insulin का स्राव न होने से ही यह अवस्था उत्पन्न होती है ।

Type-II इस प्रकार के Diabetes के दो कारण होते हैं । 1. Glucose load के प्रति Insulin का स्राव अग्न्याशय से देर से होना । 2. शारीरिक कोशिकाओं के Insulin receptors का Insulin के प्रति अच्छे तरीके से कार्य न करना (Insulin resistarnce)

उपरोक्त कारणों से Glucose का कोशिकाओं के अंदर वहन नहीं हो पाता है और न ही वे व्यय हो पाते हैं। परिणामस्वरूप Glucose की मात्रा रक्त में आवश्यकता से अधिक हो जाती है । वृक्कों की Glucose नियंत्रण क्षमता का उल्लंघन हो जाने पर यह मूत्र से स्रवित होने लगता है, परिणाम स्वरूप जल का अवशोषण मूत्र में होने लगता है, मूत्र की मात्रा बढ़ जाती है एवं रोगी को बार-बार पेशाब एवं प्यास लगने लगती है । Diabetes के कारणों से विभिन्न व्याधियाँ उपद्रव स्वरूप उत्पन्न हो जाती हैं जैसे- Atherosclerosis, Diabetic microangiopathy, Diabetic retinopathy, Diabetic nephropathy, Diabetic neuropathy तथा Infections आदि। इन व्याधियों के उत्पन्न होने के कारणों की व्याख्या आधुनिक चिकित्साशास्त्र में निम्न क्रम से किया जाता है।

1. शरीर के Diabetes के उपद्रवों से ग्रस्त होने वाले अंगों के उत्तकों में Aldose reductase नामक En-

* सीनियर रेजिडेण्ट, रसशास्त्र विभाग, का०हि०वि०वि०, वाराणसी ।
** विभागाध्यक्ष, रसशास्त्र विभाग, चिकित्सा विज्ञान संस्थान, का०हि०वि०वि०, वाराणसी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

zyme होता है ।

2. यह Aldose reductase ग्लूकोज के साथ क्रिया कर Sorbitol और Fructose का निर्माण कोशिकाओं में करता है ।

3. Sorbitol की Fructose मात्रा कोशिकाओं में बढ़ने से कोशिकाओं के अंदर जलीयांश बढ़ने लगता है एवं कोशिकाएं फूल कर नष्ट हो जाती हैं और व्याधि की उत्पत्ति होती है ।

मधुमेह की चिकित्सा - आधुनिक चिकित्सा शास्त्र में या तो Insulin को Injection द्वारा आतुर के शरीर में प्रवेश कराते हैं या विभिन्न औषधियों द्वारा Insulin का अग्न्याशय से स्राव बढ़ाकर शारीरिक कोशिकाओं में इनके Receptor की कार्मुकता बढ़ाते हैं । परन्तु आयुर्वेद में मधुमेह की चिकित्सा रोगी की स्थूलता, कृशता एवं दोषों के आधार पर की जाती है तथा चिकित्सा औषधि एवं आहार-विहार पर समान बल देकर की जाती है । आहार-विहार में कफवर्द्धक आहार-विहार को रोगी के लिए वर्जित कर रोगी को आवश्यक शारीरिक श्रम हेतु भी निर्देश दिये जाते हैं ।

आयुर्वेदीय औषधियों के रूप में वसन्त कुसुमाकर रस, स्वर्णवंग, त्रिवंग भस्म, शिलाजित्वादि लौह, चन्द्रप्रभावटी, गुडुची सत्व, शिवागुटिका आदि औषधियाँ अति प्राचीन काल से मान्यता प्राप्त एवं मधुमेह के समूल नाश हेतु सफलतापूर्वक प्रयोग की जा रही हैं ।

मधुमेह के चिकित्सार्थ सामान्य सिद्धान्त के रूप में कटु, तिक्त, कषाय रस की औषधियों का ही प्रयोग करना चाहिए क्योंकि ये कफ के शमन के साथ ही कषाय रस होने से मांसपेशियों पर संकोचक प्रभाव पैदा करती हैं । अतः यह सम्भावना बनती है कि परिणाम स्वरूप अग्न्याशय के उत्तेजित होने से इसके स्राव की मात्रा बढ़ेगी ।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के रसशास्त्र विभाग के बहिरंग रोगियों में हमलोगों द्वारा मधुमेह रोगियों के लिए स्वानुभूत औषधि योग को सफलतापूर्वक प्रयोग में लाया जा रहा है जिसे इस पत्रिका के माध्यम से पाठकों के लाभार्थ प्रस्तुत किया जा रहा है ।

1.	आम की गुठली	100 ग्राम
2.	जामुन की गुठली	100 ग्राम
3.	निम्ब बीज	50 ग्राम
4.	हरीतकी	25 ग्राम
5.	विभीतकी	25 ग्राम
6.	आमलकी	25 ग्राम
7.	स्याह जीरक	25 ग्राम
8.	करंज बीज	100 ग्राम
9.	शरीफा पत्र	100 ग्राम
10.	हरिद्रा	50 ग्राम
11.	मेथिका	100 ग्राम
12.	कुटकी	25 ग्राम
13.	चिरायता	25 ग्राम
14.	गुडुची	50 ग्राम
15.	तेजपत्र	50 ग्राम
16.	शुण्ठी	50 ग्राम

इन सभी द्रव्यों को अलग-अलग चूर्ण रूप में कर, सबको एक में मिलाकर, इसमें गुड़मार स्वरस, गुडुची स्वरस, निम्ब स्वरस, करैला पत्र स्वरस की अलग-अलग या सभी के स्वरसों को एक में मिलाकर 7 (सात) भावना दें एवं आवश्यकतानुसार इसकी 500 mg की वटी बना लें या चूर्ण बनाकर छाया में सुखाकर हवा रहित पात्र में रखें ।

मात्रा - 2 वटी प्रातः सायं जल से या 1 चम्मच चूर्ण प्रातः सायं जल से ले ।

निर्देश - उपरोक्त द्रव्यों के अनुपात के सुलभ निर्धारण हेतु घटकों की मात्रा का वर्णन किया गया है अन्यथा वर्णित अनुपात में ही किसी भी मात्रा में घटकों को एकत्र कर औषधि निर्माण किया जा सकता है ।

संदर्भ -

1. चरक संहिता, व्याख्याकार - पं० काशीनाथ शास्त्री एवं डा०गोरखनाथ चतुर्वेदी, प्रकाशक - चौखम्बा भारती अकेडेमी, वाराणसी ।
2. Text Book of Pathology - By Harsh Mohan Published by Jaypee Brothers, New Delhi.
3. Davidson's Principles and Practice of Medicine Edited by Christopher, R.W. Edwards, Published by Longman Group, United Kingdom.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्यों पड़ता है दिल का दौरा

कविराज डा० दिवाकर ठाकुर, जी.ए.एम.एस. ऑनर्स (पटना), डी.एससी.ए. (आयुर्वेद वृहस्प

आधुनिक परिवेश में दिल का दौरा और हाईब्लड प्रेशर खतरनाक साबित हो रहा है । भारत, पाकिस्तान, बंगला देश, नेपाल देश के कम उम्र वालों में यह रोग प्रचुर मात्रा में देखा जा रहा है अथवा यह कहा जा सकता है कि इस बीमारी ने महामारी का रूप धारण कर लिया है । ऐसे तो सारा विश्व ही इस रोग के चपेट में है । मोटा-मोटी तौर पर चालीस से पचास करोड़ के अन्दर भारतीय पुरुष-महिला इस रोग से पीड़ित हैं । दिल का दौरा व्यक्ति विशेष को पीड़ित करता ही है, उसके छोटे-छोटे बाल-बच्चे, परिवार एवं समाज को भी प्रभावित करता है, क्योंकि इसमें सभी को परेशानी उठानी पड़ती है। इस रोग से पीड़ित व्यक्ति अपने को असुरक्षित समझता है । आखिर इस असुरक्षित स्थिति में कौन पहुँचाता है ?

प्रायः देखा जाता है कि अनियमित ढंग से खान-पान, रहन-सहन के कारण दिल के दौरे का शिकार होना पड़ता है । कुछ आसान घरेलू उपचार को अपनाकर इससे निजात पाया जा सकता है ।

यह दिल का दौरा क्या होता है - हृदय को हर हालत में स्वस्थ रहना रक्त नलिकाओं पर निर्भर करता है। रक्त नालिका महाधमनी से निकलकर बाईं और दाईं ओर दो शाखाओं में हृदय धमनी बँट जाती है । बाद में इन दोनों शाखाओं से अन्य प्रशाखाएं निकलती हैं । विदित है कि हृदय धमनियों में रक्त प्रवाह बिना रूकावट अबाध गति से चलती रहती है । लेकिन जब धूम्रपान, रक्त में चर्बी की अधिकता, हाईब्लड प्रेशर, मधुमेह आदि कारणों से धमनी के अन्दर चिकनई श्वेत रक्त कणिका, अणु चक्रिका का ढेर लग जाता है तो रक्त परिवहन में अवरोध पैदा हो जाता है । यही कारण है कि हृदय की मांसपेशी को रक्त समुचित रूप से नहीं मिल पाता है और वह मृत प्रायः की स्थिति में आ जाती है । इसी मृत प्रायः की स्थिति को दिल का दौरा कहते हैं ।

दिल का दौरा पड़ने से हृत्पीड़ा, हृदयाघात, दमा जैसी स्थिति, पक्षाघात, हृदयावरोध से मृत्यु तक हो जा है । दिल के दौरे के मुख्य प्राण घातक तत्व हैं धूम्र उच्च रक्तचाप, तनाव आदि ।

धूम्रपान हृदय का सबसे बड़ा शत्रु है किसी-किसी धूम्रपान सेवी को तत्काल और कुछ बहुत दिनों के बाद दिल का दौरा पड़ सकता है आजकल गरीब और निम्न वर्ग के लोगों को अधिक म्रपान करते देखा जाता है जिस कारण वे हृदय रो पीड़ित होकर सदैव असुरक्षित की स्थिति में रहते हैं

उच्च रक्त चाप जब सामान्य रक्त चाप अधिक स्तर पर बढ़ जाता है तो वह अत्यन्त विनाशक हो जाता है क्योंकि यह बिना किसी पूर्व रोग लक्षण के हृदयाघात, लकवा, पक्षाघात, फालिज, अंधापन, गुर्दे बीमारी आदि खतरनाक रोगों को जन्म देकर प्राण संकट में डाल देता है ।

सामान्य व्यक्ति की अपेक्षा मोटे व्यक्तियों हृदय रोग अधिक होता है । मोटापा रक्त चाप, मधुमेह इन्सूलिन प्रतिरोध को उत्पन्न करता है ।

आज जन जीवन आपाआधी के दौरे से गु रहा है । आपसी कलह, वैमनस्यता, अहंभाव, दावं बेईमानी, झूठ, फरेब, क्रोध, अन्तर्कलह व्यभिचार अ करने में लिप्त हैं । न खाने-पीने का ठिकाना, शरीर देखभाल के प्रति असावधानी, ध्यान सत्संग, भजन-कीर्त आदि सद् आचरण से दूर रहने वाले लोग इस बीमारी खुला निमंत्रण देकर इसकी चंगुल में फँस जाते हैं। त के कारण शरीर की विभिन्न अन्तःस्रावी ग्रन्थियों से रासायनिक स्राव होता है जो रक्तचाप को बढ़ाते हैं। ह गति को अनियमित करते हैं और दिल में खून पहुँ वाली नलियों को विकृत कर देते हैं । साथ ही अन्दर रक्त प्रवाह की गति को कम कर देते हैं। ये परिस्थितियाँ हृदय के लिए विपरीत होने से दिल के की संभावना रहती है । सीने के बीचोबीच दर्द का हो दिल के दौरे का मुख्य लक्षण है । विशेषकर मेहनत

केमिस्ट :- बनफूल आयुर्वेद भवन प्रा० लि०, बुद्धा कॉलोनी, पटना - 800001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काम करने के बाद, सीढ़ी पर चढते समय, रास्ता चलने पर, घर या कार्यालय में काम करते समय तनाव, अचानक अशुभ घटना सुन लेने के बाद एकाएक दर्द उठ जाने से ऐसी घबड़ाहट व आन्तरिक बेचैनी होती है जैसे मानो अब प्राण निकल जाएगा । इसके अतिरिक्त मूर्च्छा, हाँफना तथा दिमाग पर दिल का दौरा पड़ने से फाजिल, लकवा, गंभीर हालत हृदयाघात से हृदय की गति रुक जाती है और मौत हो सकती है ।

लाभकारी घरेलू औषधियाँ जैसे लहसुन, अदरख, आंवला, अर्जुन, कंटकारि, करेला, हल्दी, जामुन, चना, बासा, मेथी, गुवार फली, मरिच, पीपल, पुष्करमूल, गुगुलु आदि सेवनीय है ।

कुछ हिदायतों को भी अमल में लाना चाहिए -

→ नित्य प्रति एक किलोमीटर पैदल चलना चाहिए, अधिक जहाँ तक संभव हो ।

→ क्रोध पर काबू रखें ।

→ प्रतिदिन मौसमी फल व हरी सब्जियों का व्यवहार करें ।

→ चोकर युक्त गेहूँ का आटा, जौ, मकई, सत्तू, बेसन मिश्रित रोटी, दाल, सूरजमुखी, मूंगफली व सरसों का व्यवहार करना चाहिए ।

→ गाजर, मूली, अमरूद, विटामिन ए, सी और ई युक्त खाद्य वस्तुओं का प्रयोग करें ।

→ मलाई, घी, अण्डा, मांस आदि चिकनई युक्त भोजन न करें ।

→ मीठा पदार्थ शरीर में शक्कर की मात्रा बढ़ाती है और हृदय के लिए हानिकारक है ।

→ तनाव, द्वेष, प्रतिशोध की भावना से बचें, ये हृदय को नुकसान पहुँचाते हैं ।

अब भूल जाइये महीने की चिंता

सुन्दरी कल्प के नियमित सेवन से सिर्फ आपका मासिक तनाव दूर नहीं होता है बल्कि आपके शरीर को मिलती है :

* मासिक धर्म की अनियमितता एवं दर्द से राहत । * रक्त शुद्धिकरण से कान्तियुक्त त्वचा ।
* पोषण से सम्बन्धित विकारों का समाधान ।

आज ही सुन्दरी कल्प अपनाएँ और अपने शरीर को रखें स्वस्थ एवं निरोग, महीने भर ।

बैद्यनाथ

सुन्दरीकल्प फोर्ट

"अब आप भी अपना ख्याल रखिए"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

बालकों में प्रगति निर्धारण के मापदण्ड

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

*डा० चंचल शर्मा, एम.डी. (आयु.), पी.एच.डी.
**डा० राकेश शर्मा, एम.डी. (आयु.)

1. सामान्य परिचय

कौमारभृत्य आयुर्वेद की वह शाखा है जिसके अन्तर्गत गर्भ में प्राणी के अस्तित्व में आने के समय से लेकर सोलह वर्ष की आयुपर्यन्त उसकी परिचर्या, भरण-पोषण, स्वास्थ्य संवर्धन, स्वास्थ्य संरक्षण तथा इस अवधि में विशेष में उत्पन्न होने वाले रोगों के स्वरूप, निदान और चिकित्सा का समावेश किया जाता है। इसके साथ ही बालक की शारीरिक, बौद्धिक एवं मनोवैज्ञानिक विकास की ओर भी उतना ही ध्यान दिया जाता है। उपेक्षा करने की स्थिति में बालक में शारीरिक एवं मानसिक विकारों के होने की संभावना बढ़ जाती है।

बालक में गर्भावस्था से लेकर सोलह वर्ष की पर्यन्त निरन्तर वृद्धि और विकास का क्रम चलता रहता है। बालक को मातापिता से जो बीज रूप में मिल जाता है वही अनुकूल अवसर, पोषण और परिवेश पाकर पनपता, विकसित होता रहता है। परिपक्वावस्था तक पहुंचते-पहुंचते वह विकास अपनी चरम सीमा तक पहुंच जाता है। बालक का गर्भ में आना, पलना, गर्भ मासानुमासिक वृद्धि और विकास, जन्म लेना जन्मोत्तर विकास के क्रम में नवजात शिशु, शिशु, , पूर्व किशोर आदि की स्थितियों से गुजरते हुए तरुणावस्था में प्रवेश करना आदि से सतत गतिमान जीवन में मील के पत्थरों के समान है।

2. गर्भस्थ शिशु विकास

शुक्रशोणितं गर्भाशयस्थमात्मप्रकृतिविकारसंमूर्च्छितं गर्भ इत्युच्यते ॥ (सु.शा. 5/2)

गर्भाशय में स्थित आत्मा, प्रकृति एवं विकारों से सम्मूर्च्छित शुक्र तथा शोणित को गर्भ कहा जाता है।

गर्भ की मासानुमासिक वृद्धि

1. तत्र प्रथमे मासि कललं जायते;
2. द्वितीये शीतोष्मानिलैरीभपच्यमानानां महाभूतानां संघातो घनः संजायतेः यदि पिण्डः पुमान्, स्त्री चेत्, पेशी नपुंसक चेदर्बुदमिति ॥
3. तृतीये हस्तपाद शिरसां.....सूक्ष्मो भवति।
4. चतुर्थे सर्वांग प्रत्यंग विभागः.....तत्स्थानत्वात्।
5. पञ्चमे मनः प्रतिबुद्धतरं भवति।
6. षष्ठे बुद्धिः।
7. सप्तमे सर्वांग प्रत्यंग विभागः प्रव्यक्ततरः।
8. अष्टमेऽस्थिरीभवत्योजः।
9. नमवदशमैकादश द्वादशनामन्यतमस्मिन् जायते।

प्रथम मास में कलल होता है। द्वितीय मास में शीत, उष्मा एवं वायु से पच्यमान महाभूतों का संघात घन होता है। तीसरे मास में हाथ, पैर एवं सिर की पांच पिण्डिकाएं निकलती हैं एवं अंगप्रत्यंग का विभाग स्पष्ट होता है। चतुर्थ मास में सभी अंग प्रत्यंग का विभाग स्पष्ट हो जाता है। गर्भ के हृदय के व्यक्त होने से चेतना धातु व्यक्त होती है क्योंकि चेतना का स्थान हृदय है। पंचम मास में मन प्रतिबुद्धतर हो जाता है, अर्थात् जागृत होता है। छठे मास में बुद्धि की उत्पत्ति होती है। सप्तम मास में अंग-प्रत्यंग का विभाग व्यक्ततर होता है। अष्टम मास में अस्थिर हो जाता है। रसवहनाड़ियों के द्वारा वह माता से गर्भ में और गर्भ से माता में आता-जाता रहता है। अतः आठवें मास में प्रसव को प्रशस्त नहीं माना जाता। सुश्रुत मानते हैं कि इस माह में जन्म लेने वाले बालकों को नैऋतों (ग्रहों) की वक्रदृष्टि उनके प्राणों का हरण कर लेती है। नवम मास का अन्त होते-होते प्रायः बालक का जन्म हो जाता है।

प्रायः सातवें महीने तक बालक का सभी महत्वपूर्ण विकास पूरा हो जाता है। आठवें और नवें महीनें में उनमें आकारिक वृद्धि ही अधिक होती है। आधुनिक दृष्टि से गर्भस्थ शिशु के विकास को प्रायः तीन अवस्थाओं में बांटा गया है।

1. बीजावस्था (Germinal Period)
2. भ्रूणावस्था (Embryonic Period)

* रीडर एवं विभागाध्यक्ष, कौमारभृत्य विभाग, हि.प्र.रा.आयु.स्ना.शि. एवं अनु.सं., पपरोला
** लैक्चरार, कौमारभृत्य विभाग, हि.प्र.रा.आयु.स्ना.शि. एवं अनु. संस्थान, पपरोला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

3. गर्भावस्था (Foetal Period)

बीजावस्था :- बीजावस्था बालक के गर्भ के अस्तित्व में आने से लेकर दूसरे सप्ताह के अन्त तक मानी गई है।

भ्रूणावस्था :- भ्रूणावस्था तीसरे सप्ताह के आरम्भ से लेकर आठवें सप्ताह के अन्त तक मानी जाती है। यह तीव्र गति से होने वाले परिवर्तनों की अवस्था है। छः सप्ताह की इस छोटी-सी अवधि में भ्रूण एक कोशिका पुंज (Mass of Cells) से विकसित होकर एक छोटे से व्यक्ति का आकार ग्रहण कर लेता है। इस अवधि में शरीर के सभी आवश्यक आन्तरिक और बाह्य अंग-प्रत्यंग अस्तित्व में आ जाते हैं। भ्रूणावस्था के बाद नए अंग का निर्माण नहीं होता। जो पहले से अस्तित्व में आ चुके हैं उन्हीं के वास्तविक या आपेक्षिक आकार में और उनकी प्रक्रियाओं में परिवर्तन होते हैं।

गर्भावस्था :- दूसरे मास के अन्त से लेकर जन्म लेने के पूर्व तक की अवधि को गर्भावस्था का समय माना गया है। इस अवस्था में अब तक बन चुके अंगों का ही अग्रिम विकास होता है। अर्थात उनके वास्तविक या आपेक्षिक आकार में परिवर्तन होता है। इस अवस्था में कोई नया अंग नहीं बनता।

गर्भ का जन्मोपरांत वृद्धि एवं विकास :-

भ्रूणावस्था से ही गर्भस्थ शिशु का शारीरिक, मानसिक एवं नाड़ीजन्य विकास प्रारम्भ हो जाता है। यह क्रम उत्पत्ति के बाद भी लगातार यौवनावस्था तक चलता रहता है। एक प्रकार से यह क्रम शारीरिक विकास के माप (Mile stone) समझे जा सकते हैं। इसके 3 भागों में विभाजित किया जा सकता है।

1. शारीरिक वृद्धि
2. मानसिक वृद्धि
3. नाड़ी वह संस्थान की वृद्धि

1. शारीरिक वृद्धि - नवजात शिशु का औसत वजन 3.4 किलोग्राम (7.5 पौंड) होता है। लम्बाई लगभग 50 से०मी० (20 ईंच) होती है। सिर की परिधि लगभग 3.5 क्यू. (14 सी.पी.) होती है। तुलनात्मक दृष्टि से सिर बड़ा, चेहरा गोल, और जंभ छोटा होता है। अंग विन्यास थोड़ा-सा झुका रहता है। पांच मास में ही बच्चों का वजन दुगुना, एक वर्ष में तीन गुना और 2 वर्ष की अवस्था में चार गुना हो जाता है। तीन वर्ष की अवस्था में बच्चों का वजन पांच गुना हो जाता है। तीन से सात वर्ष की अवस्था के मध्य बच्चा 2 किलोग्राम प्रतिवर्ष की दर से वजन प्राप्त करता है और किशोरावस्था होने तक 3 किलोग्राम प्रतिवर्ष की दर से बढ़ता है। सिर की परिधि 12 वर्ष 52 से०मी० पहुंच जाती है। 2 वर्ष के पश्चात् 10 वर्ष तक की आयु तक शिशु की लम्बाई 5 से०मी० प्रति वर्ष के हिसाब से बढ़ती है। (दांत पहले एवं बाद में) का निकलना और अस्थि निर्माण से ज्ञात होता है कि बच्चों में विकास का क्रम जारी है।

2. मानसिक वृद्धि :- बच्चों की गतिविधियाँ, कार्य प्रणाली और व्यवहार के दो आयाम होते हैं :-

1. **आन्तरिक मनोदशा :-** इसमें अनुभूति, रूख, विचार, कल्पना, स्मृति, निर्णय, गुण और आत्माभिमान का बोध होता है।

2. **सामाजिक रूप** - इसमें आस-पास के वातावरण, लोग और परिस्थिति का बोध होता है जिसमें बच्चें समय व्यतीत करते हैं। वे इस प्रकार हैं :-

1. प्रथम सप्ताह में शिशु अपनी माता की आवाज सुनकर सिर शीघ्र घुमाता है। जीवन के प्रथम सप्ताह से ही सामाजिक परिवेश और स्नेह का विकास होने लगता है।
2. जीवन के प्रथम तीन माह में शिशु सामाजिक बन्धनों को समझने लगता है।
3. छह माह होते-होते वे नाराजगी जाहिर करने लगते हैं, खेलना और रोना पसन्द करते हैं।
4. 7 माह आते-आते वे अपरिचितों को पहचानने लगते हैं।
5. दो वर्ष आते-आते उनमें नकल की प्रवृत्ति आने लगती है।
6. 3, 4, 5, 6 वर्ष की आयु में बच्चों में आदतों, विचारों और कार्य करने की आदत का विकास होने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगता है जिससे शरीर के स्थायित्व में बाधा उत्पन्न हो सकती है । युवावस्था में हो रहे परिवर्त्तनों के फलस्वरूप विचारों एवं कल्पनाओं पर भी प्रभाव पड़ता है । किसी दूसरे आदमी की नकल करने की प्रवृत्ति विद्यालय के दिनों में बढ़ जाती है ।

इस अवधि में सर्वाधिक महत्वपूर्ण परिवर्तन यह होता है कि लोग परिवार से पृथक् रहना पसन्द करते हैं और यही समय है जब माता-पिता एवं बच्चों में दूरी बढ़ने की सम्भावना बढ़ जाती है ।

नाड़ीवह संस्थान की वृद्धि - ये निम्न प्रकार के हैं :-

1. औदर्य निलम्बन ।
2. उत्तान (Supine) ।
3. अधोमुख ।
4. बैठना ।
5. खड़ा होना ।

नाड़ीवह संस्थान के विकास से अर्थ है - लाखों का समन्वय, हस्त-नेत्र समन्वय, हस्त-मुख समन्वय और हाथों को चलाने के लिए बुद्धि का विकास ।

भाषा का विकास प्रथम माह से ही प्रारम्भ हो जाता है जब शिशु घंटी या किसी प्रकार की आवाज पर सिर घुमाता है । 9 माह आते-आते कई प्रकार की आवाज जैसे - दा-दा, मा-मा निकालना प्रारम्भ करता है । 10 माह आते-आते वह बोली को समझने लगता है और उत्तर के लिए सहमति में सिर घुमाता है ।

7 वर्ष आते-आते सही अर्थों में उसकी वाणी का सम्पूर्ण विकास हो जाता है । 2 वर्षों में वह सर्वनाम व्यंजन जैसे :- जी, एफ, आर आदि का प्रयोग सबसे पहले सीख लेता है ।

बैद्यनाथ

प्राणदा

प्राणदा से हर साल मलेरिया के लाखों रोगी प्राणदान पाते हैं । इसलिए इसका नाम प्राणदा बिल्कुल सही है । हिन्दुस्तान के गांव-गांव और कस्बे-कस्बे में यह दवा मशहूर है । इकतरा, तिजारी, चौथिया, फसली, जूड़ी-पारी का बुखार, बरवट और तिल्ली मलेरिया के ही भेद हैं । मलेरिया बुखार की हर हालत में यह तुरंत फायदा पहुंचाती है । बुखार के बाद भी दवा पीने से बुखार के फिर लौटने का भय नहीं रहता ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम :-
हिन्दी में - केशर/केसर
संस्कृत में - काश्मीर, कुङ्कुम, रूधिर, रक्त, बाह्लीक
अरबी में - जाफरान
फ़ारसी में - कारकीखास
अंग्रेजी में - सैफरॉन (Saffron)
लेटिन में - क्रॉकस-सेटाइव (Crocus Sativus)

वर्ग :- केशर कुल (इरिडेसी-फैमिली) Iridaceae।

ग्रंथ परिचय :- चरक के शोणित स्थापन में और सुश्रुत के एलादिगण में इसका वर्णन है ।

गुण कर्म :- कटु (चरपरा), तिक्त (कड़वा/बिटर) रस उष्णवीर्य है, यह तिक्त होने से पित्त और कटु होने से वातनाशक, उष्ण होने से कफदोष विकार नाशक, हृद व त्वचा रोग नाशक रसायन है ।

पूर्व इतिहास :- केशर भारत वर्ष का सबसे पुराना औषध द्रव्य है । वैदिक काल (ईसा से हजारों वर्ष पूर्व) से ही इसके इतिहास का पता चलता है । उस समय से यह मंगल (शुभ) द्रव्य और औषधिद्रव्य के रूप में सदा से प्रयुक्त होता आ रहा है ।

भारतीय निघण्टुकारों ने इसका नाम काश्मीर इसलिये रखा था क्योंकि उस समय यह कश्मीर में उत्पन्न होता था । भारतवर्ष के साथ विदेशी व्यापार बढ़ने के बाद जब इसकी पूर्ति कश्मीर से नहीं हो सकी तब बाहर से भी केशर आने लगा ।

प्रथम बार बाहर से बलख, बह्लीकद्वीप से मंगाया गया । इसलिये केशर का एक नाम बाह्लीक है । पुर्तगालियों के सम्पर्क से यह वस्तु वहां से भी आने लगी । केशर के व्यापार के विषय में प्रथम बार दसवीं शताब्दी का समय स्पेन से और चौदहवीं शताब्दी इंग्लैण्ड के लिये मानी जाती है । इंग्लिश केशर की उपज 1718 ई० प्रारम्भ हुयी थी । भारतीय केशर ई० से कई हजार वर्ष पूर्व औषधि चिकित्सा प्रयोग में व्यवहार होता था ।

"रघुवंश ग्रंथ" में महाराज रघु के दिग्विजय में उपहार स्वरूप इसका देना प्रतिपादित है ।

देवी-देवताओं के पूजन में चन्दन के साथ केशर उपयोग बराबर होता है और पहले भी होता था । इसकी उपज आज भी कश्मीर में हो रही है किन्तु अधिकांश भाग विदेशीकेशर का आयात हो रहा है क्योंकि समय की आवश्यकता के सामने यदि पूरे कश्मीर भू-भाग पर केशर उपजाई जाय तो पूर्ति नहीं हो सकती । 125 मि०ग्रा० केशर 20 पुष्पों से प्राप्त होता है । एक पुष्प में केवल 3 कलियां होती हैं । इसके 90 हजार से 1 लाख फूलों से 6 कि०ग्रा० कच्ची केशर कलियां प्राप्त होती हैं जो सूखने पर 1 कि०ग्रा० 5 से 9% प्रतिशत आर्द्रता (मोश्चर) के साथ बच जाता है । केशर कलियों का ऊपरी भाग गहरा लाल और नीचे का भाग कुछ पीलेपन लिये होता है ।

कश्मीर में व्यापारी केशर के ऊपरी भाग तथा नीचे के केशरकली भाग को अलग-अलग रखकर "मोंगरा" तथा गुच्छी/लच्छी के नाम से परिचय कराते हैं । सम्पूर्ण को एक साथ संग्रह करने पर भी इसे केशर की गुच्छी कहते हैं ।

भाव प्रकाश निघन्टुकार ने कश्मीर में उत्पन्न केशर को सर्वश्रेष्ठ माना और बताया है ।

पहचान व मिलावट :- केसर की बहुत ही सुन्दर सुमोहक सुगन्ध व मधुरता लिये कटुरस (चरपरी) स्वादयुक्त होती है । अणुवीक्षणयंत्र से इसकी पहचान सरलता से होती थी किन्तु अब इसको-पहचानने के अनेक तरीके हो सकते हैं क्योंकि चिरकाल से मनुष्य की यह आदत रही है कि मूल्यवान वस्तु को सन्देह की दृष्टि से देखना और बेचने पर मिलावट करना तथा प्रयोग में लाने से पहले परीक्षणकर संदेह रहित होना ।

इसमें व्यापारी निम्नलिखित मिलावट करते या बहुतों ने किये भी होंगे ।

1. इसमें उसी के समान रंग व पुष्पों की मिलावट, केशर से मिलते-जुलते कई पुष्प हैं । कुसुम्ब, केण्डुला, ऑफिसिनेस, चाइनी जसैप्लावर, कॅरथेमसपिण्डु, कैरम या इण्डियनसैफ्लावर, अर्निकामोटाआदि-आदि ।

2. कृत्रिम कागजों की कतरन, जानवरों के आंत्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(इन्टसनल) की झिल्लियों को सुखाकर पतलाकाटकर रंग देकर केशर जैसा बना देते हैं ।

कुछ वर्ष पूर्व लाइपेरिया एट्रोपर "फ्यूरा" का केशर भी बाजार में केशर के नाम से बिकता है जो असली केशर के मुकाबले (तुलना में) कहीं ज्यादा सस्ता होता था ।

केशर परीक्षण

1. गन्धकाम्ल (सल्फुरिकएसिड) के ऊपर यदि केशर को छिड़का जाय तो उसका रंग गहरे बैगनी रंग की आभा दिखाई देती है । किन्तु यह परीक्षा भी अपूर्ण है इस प्रकार के रूप कई पुष्पों के होते हैं ।

2. केशर पानी में शीघ्र ही घुलनशील होता है किन्तु ईथर पेट्रोलियम पदार्थ, स्प्रिट आदि में इसका रंग नहीं खिलता और ना ही एक रूप घोल बन पाता है ।

3. केशर को जलाने पर 5 से 7% तक भस्म मिलती है । इससे अधिक होना किसी निरइन्द्रिय पदार्थ के मेल का द्योतक है जो बड़ी चतुराई से रंगकर तैयार किया जाता है ।

4. वैसे सामान्यत: केशर में 9 से 14% तक आर्द्रता रहती है । इससे अधिक आर्द्रता होने पर इस बात का स्पष्ट अंदाजा हो जाता है कि इसमें शक्कर का शर्बत, मधु या लवणद्रव एवं ग्लिसरीन की मिलावट है ।

5. केशर में रासायनिक परीक्षण करने पर 2.22 से 2.43 तक "नाइट्रोजन" के द्रव प्राप्त होते हैं । ऐसा आधुनिक विकृति विज्ञान वेत्ताओं का मानना है ।

बैद्यनाथ प्रतिष्ठानों में इस प्रकार रासायनिक विश्लेषण की भी परीक्षणार्थ सुविधा सदैव रही है ।

केशर (कुसुम) में संगठित रसायनिक प्राकृतिक तत्व वैसे निम्नलिखित हैं :-

क्रोसिन नाम का एक ग्लाइकोसाइडल तत्व जो रंजकतत्व है इसमें मिलता है । रंगहीन "प्रिक्रो क्रोसिन" उड़नशील तत्व वाले टाइल ऑयल, शर्करा, भस्मतत्व एवं उड़नशील तैल आदि तथा आयुर्वेद में इसे कटु-तिक्तरस (चरपरी-कड़वा) स्वाद और गरमतासीर (उष्णवीर्य) चिकनाईयुक्त हल्कीपाचक गुणयुक्त त्रिदोषनाशक त्वचारोग नाशक, हृदय व मस्तिष्क के लिये बलदायक कहा गया है ।

लवंग/लौंग

नाम :-

हिन्दी में - लौंग ।
संस्कृत में - लवंग, देवकुसुम, श्रीप्रसून, वारि
अंग्रेजी में - क्लोव (Clove) एवं सिजिगियम एरोमेटिकम (Szygium Aromaticum)
लेटिन में - केरियाफाईलस एरोमेटिक (Caryophyllus Aromatics)

कुल:-(फैमिली) लवंगकुल-मिर्टेसी (Myrtaceae) भावप्रकाश में चन्दनादि वर्ग ।

स्वरूप :- इसका सदैव हरितवृक्ष 30 से 40 फीट ऊंचा होता है । इसका तना (काण्डत्वक) पीलाभूरा रंग का होता है । इसके पत्ते 3 से 6 इंच अण्डाकृति आगे-पीछे होते हैं । इस वृक्ष के पुष्प बाहरी तरफ लालरंग का होता है । पुष्प का आकार चार त्रिकोण भाग में विभक्त होता है । इसके फल 1 इंच लम्बा मॉसल होता है, बीज प्रत्येक फल में एक ही होता है, बसन्त ऋतु (मार्च अप्रैल) में पुष्प तथा ग्रीष्म ऋतु जून से फल आते हैं, इसी वृक्ष के फूल का नाम लौंग है । लौंग का वृक्ष लगाने के 9 वर्ष में प्रथमबार पुष्प आते हैं । इन पुष्प कलियां को ही सुखाकर बाजार में लवंग के नाम से बेचा जाता है ।

उत्पत्ति :- लौंग के वृक्ष दक्षिण भारत में ट्रावनकोर में विशेष होता है । अमेरिका में ब्राजील, गिनि आदि स्थानों पर लौंग के वृक्ष होते हैं । आयुर्वेद में इसे लघु, तीक्ष्ण, स्निग्धगुण एवं तिक्तकटु रस, शीतवीर्य और कार्मुक गुण प्रधान कहा गया है । इसलिये कटु (चरपरा) होने से कफदोष विकार नाशक है और शीतवीर्य होने से पित्त विकार नाशक है । चिकित्सा शास्त्र में इसके अनेक रोग नाशक गुणों का वर्णन मिलता है ।

परिचय :- बाजार में मिलने वाला लौंग इउजेनिया कैरामिल्स नाम से लवंग के पेड की सूखी हुई कु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलियाँ हैं ।

अब इसकी खेती मलय में विशेष होती है इसकी खेती न कहकर बागान कहा जाना चाहिये । यहां से भारतीय बाजार में 3/4 भाग लवंग की सप्लाई होती है। जिंजवार और पेम्बा, पेनाग सुमाना, अम्बेयना मडेगास्कर और सैलेबीज में भी इसके बागान हैं ।

इतिहास :- लवंग/ लौंग का प्रथम ज्ञान भी भारतीयों को हुआ था । वैदिक काल में इसका प्रयोग लिखा हुआ मिलता हैं । ईस्वी सन् 3000 से 2000 वर्ष पहले चरक और सुश्रुत के समय से ही आयुर्वेद चिकित्सा में इसका प्रयोग होता आ रहा है । भारत के बाद 220 ई० में चीन को इसका स्पष्ट ज्ञान हुआ था । चौथी शताब्दी में यूरोप को इसका ज्ञान "इवानखुरदादाबाह" और मार्कोपोली, इन दोनों के लेख से ज्ञात होता है कि जावा से यह प्राप्त होता था, किन्तु पन्द्रहवी शताब्दी में निकोलीकोंटी ने अध्ययन कर के बताया कि जावा में वॉदा (एक समुद्रीद्वीप) से आता था ।

16 वी शताब्दी में पुर्त्तगालियों ने जहां-जहां "लौंग" आदि मसाले उत्पन्न होते थे, उन-उन द्वीपों पर हमलाकर अधिकार जमाया था । फिर सन् 1605 में "डचों" ने उन्हें भगा दिया था और 1770 ई० तक फ्रेंच के लोग भी लवंग की खेती (बागान) करने में सफल हो गये थे । जिससे सुमात्रा में 1803 ई० में खेती होने लगी थी । फिर पेनाग, मैडेगास्कर जीवार 1818 व पेम्बा इत्यादि स्थानों पर भी खेती (बागान) होने लगी ।

प्रागैतिहास :- प्राचीन काल में भारत वर्ष में लवंग की खेती श्रीपर्वत से आसपास होती थी । दक्षिण भारत लौंग की सप्लाई का केन्द्र था । दक्षिण भारत में मालाबार, एलेपी, आदि स्थानों पर जहां-जहां पर इलायची की खेती होती थी, वहां-वहां पर इससे पहले लौंग की खेती होती थी परन्तु ऐसा ज्ञात होता है कि आधुनिक समय में यह सारी व्यवस्था भंग हो गई और पुर्तगाली इसके बीज लेकर अपने द्वीपों में खेती करने लग गये । इन वस्तुओं का सप्लाई स्थान बदल गया । लौंग के पर्यायवाची "वारिज" नाम से पता चलता है कि यह अधिक समुद्री अथवा जल प्रधान प्रदेशों में होता था । जैसे लंका या उसके आस-पास के द्वीपों में होता था । "वैदिककाल" (ईसा से हजारों वर्ष पूर्व) से और संहिताकाल (ई० 3000 तीन हजार वर्ष पूर्व) तक इनकी प्राप्ति यह बतलाती है कि भारत के घर-घर में दिन-रात प्रयुक्त होने वाली यह वस्तु अति सुलभ व शुद्ध थी ।

"धन्वन्तरि निघण्टु" (10 वीं शताब्दी) "मदनपाल निघण्टु (14 वीं शताब्दी) राजनिघण्टु (16 वीं शताब्दी), भावप्रकाशनिघण्टु (16 वीं शताब्दी) और वर्तमान समय 21 वीं शताब्दी है, लौंग/लवंग की प्राप्ति का वर्णन मिलता है । वर्तमान समय में भारत की लौंग की बाहरी सप्लाई (आयात) पर निर्भर रहना पड़ता है ।

संग्रहकाल :- लवंग के पेड़ की पुष्पामंजरी जब लाल रंग की होती है जून से अगस्त सितम्बर तब इस पुष्पकलियों का संग्रह किया जाता है ।

पहचान :- लवंगपुष्प 10 से 15 मिलीमीटर लम्बे होते हैं । पेनाग और अम्बोयना का लौंग बड़ा होता है । इसकी विशेष मांग के अनुरूप उपज नहीं होती जंजीवार और पेम्बा से आने वाला लवंग अच्छा होता है, किन्तु आकार में छोटा है, इसमें एक विशेष प्रकार की सुगन्ध आती है ।इसका रंग लाल-काला होता है ।

लौंग का रासायनिक संगठन :- 15 प्रतिशत सुगन्धित उड़नशील तैल और 10 से 13 प्रतिशत टेनिन एक कापोफाइलिंग नाम का रबेदार अंश होता है ।

लवंग में भस्मतत्व 1 से 5 प्रतिशत होता है ।

लौंग का परीक्षण :-

1. लौंग का बाहरी छिलके में नालिका कार सूक्ष्म तैल ग्रंथियां होती हैं जिन्हें दवाने पर तैल निकलता है ।
2. लौंग को जल में पकाने से क्वाथ जल बादामी रंग का होता है ।
3. इसका तैल पीला होता है ।
4. लौंग को जलाने पर आग की लौ पीले रंग की होती है ।
5. लौंग का रस स्वाद (कटु) चरपरा होता है ।
6. लौंग की पुष्पकली 125 मिलीग्राम भार की होती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है । इसका प्राकृतिक वर्ण भूरा व काला होता है ।

7. वर्तमान समय में अर्कविधि से लवंग का एक्स्ट्रेट (सत्व) निकाल कर तैल निकला हुआ कलियों का मिश्रण लौंग के साथ किया जाता है । उपरोक्त परीक्षण से लवंग को एक सीमा तक पहुंचाने में मदद मिलती है । हमें किसी प्रकार प्रत्येक औषध द्रव्य का इतिहास याद करना और कराते रहना चाहिये । कुछ दिन पूर्व हम भारतीय आयुर्वेदज्ञों की अल्प जागरूकता के कारण कुछ विदेशी कम्पनियों डब्लू०आर० ग्रेस नामक अमेरिकी कम्पनी ने आयुर्वेद में वर्णित नीम व हल्दी के कुछ उत्पादों का पेटेन्ट हासिल कर लिया था, जबकि नीम पर सदा से शोध (रिसर्च) कार्यों में भारतीयों की भूमिका अग्रणी रही है । इस विषय पर पेटेन्ट के खिलाफ संघर्ष करने बालों में सर्वप्रथम भारत की शोध संस्था "विज्ञान तकनीकी एवं पर्यावरण शोध फाउंण्डेशन" की निदेशक डॉ० वन्दना शिवा का विशेष योगदान रहा और अमेरिका से नीम, हल्दी का पेटेन्ट का आदेश येरोपीय पेटेन्ट कार्यालय को वापस लेना पड़ा जिससे भारत ने नीम व हल्दी के उत्पादनों का पुनः अधिकार प्राप्त कर लिया । बासमती चावल का पेटेन्ट भी अमेरिका स्थित राइस टेकइन कार्पोरेशन यूरोपीय कम्पनी के पास बेइमानी है, क्योंकि भारत के "चाबल-बहुल" प्रान्तों में चावल के मॉड़ को अतिसार (डायरिया) तथा रक्तातिसार (बेस्लरीडिसेटरी) में पिलाने की परंम्परा गत रिवाज है, जो एक घरेलू दवा का काम करता है, विशेष सूत्रों से ज्ञात हुआ कि आयुर्वेद में वर्णित दुर्लभ वनौषधि (बूटी) "कुटकी" द्वारा निर्मित औषधि "प्रिकोलिन" पेटेन्ट भी अमेरिका के पास है । इस प्रकार 50 से 60 जड़ी-बूटियों व अनाज यूरोपीय कम्पनियों के पेटेन्ट से केवल नीम व हल्दी पर से पेटेन्ट अधिकार जीतना ना काफी है । इसमें आयुर्वेद चिकित्सकों शोधकर्ताओं के साथ-साथ सरकार और शिक्षित समाज का योगदान होना अनिवार्य है ।

संदर्भ ग्रंथ आदि :-

1. द्रव्यगुण विज्ञान द्वितीय भाग, आचार्य प्रियव्रत शर्मा ।
2. क्रियात्मक औषधि परिचय, आचार्य विश्वनाथ द्विवेदी ।

बैद्यनाथ

आयुसिड

अम्लपित्त, उदरशूल एवं कब्जियत दूर करने की दवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वास्थ्य संरक्षण में ऋतु अनुसार पंचकर्म की उपादेयता

डॉ० श्रीमती विभा द्विवेदी
डॉ० डी.के. द्विवेदी

आरोग्यात् बलमायुश्च सुखं च लभते महत् ।
ईप्सितंश्चायसान् भावान् पुरुषः शुभ लक्षणः ॥

आरोग्य प्राप्ति से मनुष्यों में बल आयु और महान सुख की प्राप्ति होती है और मनोवांछित अन्य वस्तुओं को भी प्राप्त करता है । इस प्रकार आरोग्य, सम्पन्न पुरुष का शुभ लक्षण कहा जाता है ।

पूर्ण स्वास्थ्य की प्राप्ति के लिये स्वास्थ्य रक्षा के नियमों और सिद्धान्तों का ज्ञान हर व्यक्ति के लिये आवश्यक है । ज्ञान होने से भी अधिक अनिवार्य है उस ज्ञान का आचरण सद्व्यवहार में सदुपयोग । स्वास्थ्य का महत्व हृदयंगम करके उसके लिये तद् अनुकूल आचरण करने से ही स्वास्थ्य के स्थैर्य की प्राप्ति होती है ।

सभ्यता के आरंभ से ही जीवन व्यवस्था में पूर्ण स्वास्थ्य और आरोग्य को प्राथमिक महत्व दिया है । हमारे पूर्वज पूर्ण स्वस्थ रहना मनुष्य का अनिवार्य धर्म मानते थे, इसलिये स्वास्थ्य साधन के नियम भी धार्मिक आचरण का अंग बनकर धार्मिक साहित्य में स्पष्ट प्राप्त होते हैं । किन्तु वर्तमान युग में लोगों का इतना ही कर्तव्य शरीर के प्रति रह गया है कि जब व्याधित हो जाये तब चिकित्सा का मात्र रोग नष्ट करा दिया जाये परन्तु इससे पुनः आरोग्य की स्थापना नहीं हो सकती । आयुर्वेद में ज्ञान से प्रमुख महत्व आचरण को दिया है । शरीर की कर्मेन्द्रियों को प्रसन्न रखना शारीरिक स्वास्थ्य है । आयुर्वेद वांगमय को यदि निहारा जाय तो दैनिक जीवन में स्वास्थ्य बनाये रखने के लिये दिनचर्या, रात्रिचर्या, ऋतुचर्या का वर्णन प्राप्त होता है । स्वास्थ्य संपादन द्वारा आरोग्य की प्राप्ति की इच्छा रखने वाले बुद्धिमान मनुष्य को स्वास्थ्य रक्षा के नियमों यानि ऋतुचर्या इत्यादि का अनुकरण करना चाहिये । अष्टांग हृदय के टीकाकार अरूणदत्त ने दिनचर्या का वर्णन नियम एवं अनियत कारण भेद से दो प्रकार का कहा है । नियतकालिक दिनचर्या का वर्णन प्रतिदिन तथा ऋतुमान के अनुसार पृथक दो प्रकार का होता है । यदि ऋतु अनुसार स्वास्थ्य संचय का प्रयास किया जाये तो निःसन्देह ही स्वास्थ्य की प्राप्ति होगी । संहिताओं में स्वास्थ्य संरक्षणार्थ ऋतु-चर्या का जो वर्णन किया है उसमें शोधन चिकित्सा का अपना अलग स्थान है । इस लेख में हम मात्र ऋतुचर्या में वर्णित पंचकर्म की उपादेयता पर ही दृष्टि डालेंगे-ऋतुचर्या के अन्तर्गत पंचकर्म का कुछ खास महत्व है ।

ऋतु अनुसार शरीर शुद्धि रखने से आरोग्य की प्राप्ति होती है । प्रत्येक ऋतु में स्वाभाविक दोषों का संचय प्रकोप होता है । इन दोषों को ध्यान में रखते हुए पंचकर्म द्वारा निवारण करा दिया जाये तो रोगों की उत्पत्ति तो नहीं ही होगी साथ ही आरोग्य की प्राप्ति निश्चित रूप से होगी । सुश्रुत सूत्र स्थान में आचार्य ने निर्देश किया है-

कर्मणा कश्चिदेकेन द्वाभ्यां कश्चिदत्रिभिस्तथा
विकारा साध्यते कश्चिद् चतुर्भिरपि कर्मभिः ॥

ऋतुओं में जरूरी नहीं कि सभी कर्म कराये जायें बल्कि दोषों की प्रधानता को ध्यान में रखते हुए तद्कर्म स्वास्थ्य प्राप्ति के लिये हितकर होंगे । इस शोधन चिकित्सा की उपादेयता से पूर्व हमें किंचित ऋतुओं के प्राविभाग, ऋतुचर्या एवं दोष प्रकोपादि अवस्थाओं पर ध्यान आकर्षित करना अनिवार्य है ।

संहिता ग्रन्थों में ऋतुओं के जो प्राविभाग बताये गये हैं उनमें से आचार्य चरक ने शोधन अनुकूलता से ऋतु प्रविभाग किये हैं पारमार्थिक दृष्टि से नहीं ! षड्ऋतुओं को काल के आधार पर आचार्यों ने दो भागों में विभक्त किया है । 1. आदान काल 2. विसर्ग काल ।

आदान काल में सूर्य प्रभाव से शरीर का बल कम होता है तथा विसर्ग काल में बल बढ़ जाता है षड्ऋतुओं का प्राविभाग उन दिनों के वर्षा शैत्य, उष्णता, वायु, जल, अन्न औषध द्रव्यों के गुण प्रकर्ष दोषों के चय प्रकोपादि विषय शरीर, बल अग्निबल इनकी सापेक्षता से किया गया है । ऋतु अनुसार स्वास्थ्य रक्षण के लिये जिस प्रकार का आहार-विहार करना चाहिये उस विचार की व्यवस्था को ऋतुचर्या कहते हैं । ऋतु के वर्णन में चरक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने दो भिन्न प्रकार के वर्णन किये हैं जो तीन जगह स्पष्ट प्राप्त होते हैं । सूत्र स्थान के 6 अध्याय में ऋतुचर्या वर्णित है । यहां उत्तरायण आदानकाल के शिशिर, वसंत, ग्रीष्म दक्षिणायन विसर्ग काल के वर्षा शरद, हेमंत ऋतुओं का वर्णन प्राप्त है । दूसरा वर्णन विमानस्थान 8 अध्याय में हेमंत, ग्रीष्म, वर्षा के शीत, उष्ण वर्षा का काल कहा है तथा साधारण काल क्रमशः प्रवृट्, शरद, वसंत को कहा है । प्रावृट् वर्षा का पूर्वकाल, शरद हेमंत का पूर्वकाल वसंत ग्रीष्म का पूर्वकाल । यहां शिशिर की गणना नहीं की गई । तीसरा वर्णन सिद्धिस्थान 6 अध्याय में शोधन के योग्य ऋतुयें बताई गई हैं ।

प्रावृट् शुचिनभौ ज्ञेयों शरदूर्जसरो पुनः ।
तपस्यश्च मधुश्चैव वसंत शोधनं प्रति एतानृतून विकल्पयैव दधात् संशोधनं भिषक्
स्वस्थवृतमाभिप्रेत्य व्याधौव्याधिवशे न तु ॥

शुचि (आषाढ) नभ (सावन) - प्रावृट् (ऊर्जा) कार्तिक (सह) अगहन शरद, तपस्य (फागुन) (मधु) चैत्र-वसंत ये तीन ऋतुयें संशोधन की दृष्टि से बताई है । यह संशोधन का समय स्वस्थ के लिए ही है ।

संशोधनमधिकृत्य ऋतु वर्ष	(संचय)	दोष	कर्म	मास
शरद	(प्रकोप)	पित्तं	विरेचन	मार्गशीर्ष
हेमंत	(संचय)			
वसंत	(प्रकोप)	कफ	वमन	चैत्र
ग्रीष्म	(संचय)			
प्रावृट्	(प्रकोप)	वात	बस्ति	श्रावण (च.सू.6)

कहलाते हैं ।

ग्रीष्मे संचति वायु प्रावृट् काले प्रकुप्यति
वर्षा सु चीयते पित्तं शरद काले प्रकुप्यति
हेमंते चीयते श्लेष्मा वसंत काले प्रकुप्यति

ये संशोधन जो बताये गये हैं वे अनात्यति व्याधियों के सम्बन्ध में समझने चाहिये । आत्ययिक व्याधियों में कृत्रिम उपायों का अवलम्बन करके तुरन्त संशोधन करना चाहिये । शोधन की दृष्टि से आषाढ़ श्रावण कार्तिक मार्गशीर्ष फागुन चैत्र उत्तम मास है व चैत्र श्रावण मार्गशीर्ष में सदा शोधन करना चाहिये । इनके पूर्ववर्त्ती संचय नहीं होता । मासों में फाल्गुन, आषाढ़, कार्तिक में योग्य रीति से दोष संचय नहीं होता । अतः संशोधन अधिकृत्य नहीं है (च.सू. .6 चक्र)। स्वाभाविक शमन की दृष्टि से पैत्तिक व्याधि, शरद ऋतु में, श्लेष्मज व्याधियों की ग्रीष्म में, वात व्याधियों का शरद ऋतु में शमन होता है । यह दोष वैषम्य वर्णन कालकृत या निसर्गकृत होता है प्रज्ञापराधजन्य नहीं है । अतः इस प्रकार का जो रोग उत्पन्न होते हैं ऋतुजन्य या प्राकृत

काल प्रकृतिमिद्दश्च निदिष्ट प्राकृतो ज्वरः
वर्षा शरद् वसंतेषु वाताद्यै प्राकृतः क्रमात्

हेमंच चर्या - प्रातः काल-अभ्यंग-वातघ्न तैल
मूर्धिनतैल
विर्मदनम्
नियुद्ध कुशलैः
पादाघात
उद्वर्तन-चूर्ण द्वारा
शरीर, शोधन स्नान - उष्णोदक (जेतांक) चरक
लेप - कस्तूरी मिश्रित
धूप - अगरू
स्वेद - अर्क किरणाम्
अंगार ताप संतप्त गर्भ - निवास
(भूमि के नीचे वाले घर)

शिशिर चर्या - हेमंत व्रत
तीक्ष्ण वमन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नस्य
व्यायाम
उद्वर्तन
आघात

तेप - कपूर, चन्दन, अगरू, केशर

ग्रीष्म - पंचकर्म नास्ति

वर्षाचर्या - वमन
विरेचन (पश्चात)
आस्थापन वस्ति

शरदचर्या - विरेचन, तिक्त, घृतपान, वसादि स्नेह वर्ज्य हैं, कारण पित्त में वसा वर्ज्य है।
रक्तमोक्ष्ण

समीक्षा- वसंत ऋतु में कफ का प्रकोप होता है जिससे अग्निमांद्य सभी व्याधियों का कारण माना गया है एवं ऋतु भी पित्ता मानी गयी है। अतः कफ के जयार्थ तीक्ष्ण वमन का उल्लेख है। यदि पित्त संसृष्ट कफ हो तो विरेचन। यह आदान का भी मध्य काल है। अतः वात पित्त प्रकोप हो तो विरेचन आस्थापन अनुवासन करना चाहिये।

शरद पित्त का प्रकोप - तिक्त घृत पान कराकर विरेचन देना हितकारी है।

हेमंत अधिक शीत के कारण उत्पन्न होती है। अतः अभ्यंगादि तथा उष्ण गृह का सेवन करना चाहिये।

वर्षा में वात का प्रकोप होता है। अतः बस्ति श्रेष्ठ बताई है।

ऋतुओं में पंचकर्म प्रशस्ति-

एवं विशुद्ध कोष्ठस्य कायाग्निरभिवर्धते।
व्याध्यश्च उपाशंतये। प्रकृतिश्च अनुवर्तते।
इंद्रियाणि मनो बुद्धि वर्णश्चास्य प्रसीदति।
बलं पुष्टिरपत्यंच वृषता चाष्य जायते।
जरा कृच्छेण लभते चिरंजीवत्य अनामयः।

अभ्यंग :-

शिरः श्रावण मादेषु तं विशेषेण शीतयेत्।
अभ्यंग आचरेत् नित्यं स जरा श्रम वातहा
दृष्टि प्रसाद पुष्ट आयुः स्वप्न सुत्वक् दाढर्यकृत।

अभ्यंग से क्लेश सहत्व अभिघात सहत्व, कफ जरा शमन, वर्णकृत बलप्रद (सुश्रुत) अधिक बताये हैं।

पादाभ्यंग :- शिरा स्नायुओं का संकोच नहीं होता।

उद्धर्तन :- शरीर परिमार्जन से वर्ण प्रसादन, कफ शामक, शरीरलाघव स्थिर-दृढ़ लाघवता उत्पन्न करना स्वेद से उत्पन्न मलों की दुर्गन्धता को दूर करना।

पादाघात :- पाद द्वारा पीडन अर्थात मर्दन से अधिक शरीर दृढ़। (दक्षिण भारत में प्रचलित)

परिषेक :- उष्णजल सिंचन से वृक्षों के मूलों के अंकुरों की वृद्धि होती है उसी प्रकार परिषेक से धातु वृद्धि होती है।

मूर्ध तैल :-

अभ्यंग सेकपिचवबस्तिश्चेति चतुर्विधं
मूर्ध तैलं बहु गुणं तद् विद्यात् उत्तरोत्तम् ॥ अ.हृ.

इन्द्रिय प्रसन्न एवं केश स्वस्थ होते हैं॥

स्नेहन - स्नेहो अनिलं हन्ति मृदु करोति देहं बलानां विनिहंति संगम ॥ च.सि.।

स्नेहो जीवनपवर्ण्या बलोपचयवर्धना ॥ च.सू.।

स्नेह पान, वात, शामक, शरीर मृदु बनाने वाला, जीवनीय, वर्ज्य उपचयकारक बलवर्धक है।

स्वेदन -

शीतशूलव्यपुरमे स्तंभ गौरव निग्रहे
संजाते मादर्व चैव स्वेदनात् विरर्तिमता । सु.चि. 14

शीत से बचना, शूल नाशक, मात्र स्तंभ नाशक, मार्दवता, लक्षण प्रशमन, शीतसेवन इच्छा मार्दवता, भक्त श्रद्धा, स्त्रोतोशुद्धि, संधि चेष्टाकर।

वमन :- पार्श्व, शिर, स्त्रोत में लघुता, मन प्रसन्न, लघुता क्रमशः कफ पित्त वात का निकलना।

विरेचन :- मूत्र, मल, पित्त, औषध कफ वात का क्रमशः शोधन। स्त्रोतो शुद्धि इन्द्रिय प्रसन्नता लघुता, वातअनुलोमन अग्नि प्रदीपक।

वस्ति - वय स्थापन, धातु दृढ़कर, वृद्धत्व रोकना, अग्नि मेधा स्वर वर्ण्य कृत। शिशु सभी के योग्य मल वात का शोधन, शरीर दृढ शुक्र का बलप्रद संपूर्ण शरीर के दोषों को निकालना। चक्रपाणि कहते हैं कि गुदा शिराओं के प्रतिष्ठान के कारण शरीर के मूल हैं शरीर उपचय कारक, वर्धक, वर्ण उज्जवल कृत आयुष्य वर्धक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नस्य - शिरोशुद्धि, लाघवता, चित्त इन्द्रिय प्रसादन, सुख स्वप्न प्रवोधन ऋतु अनुसार पंचकर्म सेवन से धातुओं के परिपोषण से दोषों का समान रूप से असर्जित होना तथा समपरिस्थिति में रहकर स्वास्थ्य का निदर्शक बनाना मुख्य कार्य है ।

पंचकर्म में शोधन व्याधि के साथ-साथ दोष व्यवस्था संबद्ध है । पंचकर्म को दोष प्रत्यनीक प्रयाच कहा है । अत: ऋतुओं में दोषों के प्राबल्य के अनुसार पंचकर्म का निर्देश किया है जिससे व्याधि उत्पन्न नहीं होती । चरक विमान स्थान में निर्देश दिया है कि बहु दोषाणां पुनर्दोषावसेचनमेव कार्यम् । जैसे केदार में अधिक जलसंचय होने पर बांध तोड़ जल को बहाना है । मध्यम बल युक्त दोष में व्यायाम आतप सेवन, वात सेवन, पाचन लंघन चिकित्सा । जैसे तालाब में जल सूर्य की किरणों द्वारा पानी और मिट्टी डालने से सूख जाता है । जहां दोष हीन हो वहां लंघन उपवास तृषा निग्रह से शांति जैसे तालाब का जल सूर्य की किरणों से सूख जाता है । इस प्रकार हम पंचकर्म का प्रयोजन तीन प्रकार से सिद्ध होते देखते हैं ।

1. स्वस्थ मनुष्यों में पंचकर्म
2. रसायनादि असाधारण गुण प्राप्ति के लिए पंचकर्म
3. रोगानुसार पंचकर्म

स्वस्थ में पंचकर्म की उपादेयता निम्न प्रकार से सिद्ध है - 1. दिनचर्या 2. ऋतुचर्या, 3. वेगावरोध 4. आवस्थिक कारणों के निवारणार्थ ।

दोषा कदाचित कुप्यंति जिता लंघन पाचने ।
ये तु संशोधनैः शुद्धा न तेषां पुनरूदभयं ॥

उत्पन्न हुए दोषों को संशोधन चिकित्सा द्वारा निर्मूल कर दिया जाता है जिससे वह पुन: उत्पन्न नहीं होते । शोंधन कर्म की उपयोगिता अनागत बाधा प्रतिषेध की दृष्टि से तथा चिकित्सा की दृष्टि दोनों ही तरह उपादेयता सिद्ध है । रसायन एवं वाजीकरण जो स्वास्थ्य का एक अंग है उनके पूर्व में भी पंचकर्म कराने का आचार्यों ने निर्देश किया है । पंचकर्म की इतनी उपादेयता होने के बावजूद भी आज वैद्य परम्परा से पंचकर्म चिकित्सा तो लुप्त हो ही गई है फिर स्वास्थ्य रक्षण के उपयोग के लिये तो विचारना ही क्या । बालकृष्ण अमरनाथ के पाठक (बी.एच.यू.) ने चरक सिद्धि स्थान की समीक्षा में पंचकर्म को एक प्रकार का हठ योग प्रक्रियाओं के समूह बताया है । अत: ध्यानपूर्वक इनका उपयोग करना होगा । स्वास्थ्य संपादन द्वारा आरोग्य की प्राप्ति की इच्छा रखने वाले बुद्धिमान मनुष्य को स्वास्थ्य रक्षा के नियमों का तटस्थता पूर्वक अनुकरण करना चाहिये । पंचकर्म की उपादेयता केवल श्रेष्ठ चिकित्सा के अंग तक ही सीमित नहीं, रोगों के निवारण में विभिन्न ऋतुओं में होने वाले व्याधियों के प्रतिकार में भी शोधन का मूल्य अक्षुण्ण है । हेमंत में संचित दोषों का वसंत के प्रारंभ में शोधन द्वारा निकाल देने से वसंत में होने वाली व्याधियां नहीं होतीं । ग्रीष्म के पूर्व शोधन में वर्षा की, वर्षा में शोधन से शरद की व्याधियां नहीं होतीं । संपूर्ण ऋतुचर्या दो प्रकार से दृष्टिगोचर है । ऋतु स्वाभाव के कारण संचित दोषों का संशोधन पूर्ण प्रकोप होने के समय करना योग्य होता है । पूर्व संशोधन से दोष काल स्वभाव के कारण संचित हो जाते हैं । अपथ्य निमित्त दोषों का संशोधन चयावस्था में ही हितकर होता है जिससे वे बलवत्तर गति को प्राप्त नहीं होते ।

आदानकाल में सूर्य वायु अतिशय तीक्ष्ण रूक्ष उष्ण होने के कारण पृथ्वी के सौम्य गुण को कम करते हैं । शीत ऋतु में मनुष्य बल श्रेष्ठ तथा वर्षा ग्रीष्म में न्यून, शरद वसंत में मध्यम होता है । हेमंत ऋतु में शीत के अवरूद्ध होन से उष्मा के बाहर न निकलने से जठराग्नि प्रबल हो जाती है । वायु द्वारा प्रेरित होकर धातुओं क़ा भी परिपाक करती है । हेमंत में मार्गशीर्ष एवं पौष दो माह होते हैं । मार्गशीर्ष में उष्मा शरीर में पीड़ित रूप में होने से सबल प्रबल होती है जिससे धातुओं की पुष्टि और बल की वृद्धि अधिक होती है । हेमंत में वात एवं कफ बढ़ाते हैं । आदान काल होने से अपचित धातु वाले शरीरों में पहले से ही मेद अग्नि दूषित वातादि दोषों से और भी मंद हो जाती है । अग्नि मंद होने से तीनों दोष प्रकुपित होते हैं । वर्षा ऋतु में शीत अंगों को सात्म्य हो जाता है । अत: शरद ऋतु में सहसा सूर्य से पित्त कुपित हो जाता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Rajasthan - the Land of Mineral wealth

*Dr. Vadeyar Shrinivas **Dr. P. Suresh ***Prof. Laxmikant Gurjali

Rajasthan possesses a veritable range of mineral deposits and it is an important mining state in India. It ranks next to Jharkhand in availability of minerals. Over fifty minerals are found in state out of which thirtynine are being mined. Hence for Rasashastra the branch which deals with drugs of mineral origin, Rajasthan is really a "Museum of Mineral resources" where in one can find a large variety of drugs described in ancient and contemporary works of Ayurveda.

Classification

The Minerals of Rajasthan can be classified in four major groups as :-

Metallic - E.g. ferrous like iron and Manganese and nonferrous like Silver, Copper, Lead and Zinc.

Nonmetallic - E.g. Mica, Uranium, Emerald, Asbestos, Dolomite, Silica Chinaclay, Limestone, Salt, Gypsum, Calcite, Tourmaline etc.

Building materials - E.g. Building stones, limestone, Fullers earth, Clay etc.

Mineral fuels- E.g. Lignite and Fuel oil.

These different minerals and their respective ores, place of occurrence viewed and compared with classification of Rasadravys viz. Maharasadi groups as follows -

Maharasas

Abhraka

Rajasthan is second largest Mica producing state in India. The mineral occurs in coarse granite pegmatites. The commonly distributed Mica is Muscovite (Shweta abhraka). Mice belt streches in Tonk, Jaipur, Bhilwara and Rajsmand districts. Other varieties are sparsely found.

Vaikranta

Has been grouped in Maharasa and Uparatna varga and identified as Tourmaline, Flourspar and Manganese ore.

Tourmaline is found as accessory mineral with pegmatite's of Mica and is of various colours.

Manganese ore

Exists in form of Pyrolusite, Brownite and Silomilienin in Banswara district. It is also mined from Sawaimadhopur.

Flourspar

The major deposit is Mando-ki-pal in Dungarpur district and small deposits are in Sikar, Bhilwara and Udaipur.

Makshika

Swarnamakshika (copper pyrites) has been located in several places, the important being Khetri-Singhana in Jhunjhunu district and Kho-Dhariba in Alwar district. The mineral is found disseminated in the Schist's and Phyllites.

Vimala

Saladipur in Sikar district has extensive deposits of Pyrites (Vimala) of order 115 million tonnes.

Uparasas

Gandhaka

Sulfide ores - Pyrites (vimala) and chalcopyrites (makshika), Sulphate ores - Gypsum (Godanti) are sources of sulphur. Pyrite being present abundantly is main source of sulpur.

Gairaka

Identified as ochre or Hematite (Fe_2O_3) is chief ore of iron located in north eastern and southeastern part of state.

Neelanjana

Galena (PbS) is one among sulphide minerals of Lead, the most important places of availability being Zawar deposits of Udaipur.

Sadharana rasa

Mriddharashringa

Lithrage (PbO) is found scattered in Aravali and Abu.

Lohas

Suvarna and Rajata

Is found in traces with Copper ore.

Tamra

The main ore being Copper pyrites is mined from Khetri-Singhana belt extending to over 80 kms. Khodariba in Alwar and Delwara Kerovli in Sirohi district.

Loha

Iron ore is found mainly as Hematite in north eastern and southeastern part of state. Morija Banol area has a 10m thickbelt of Hematite

*P.G. Scholar **Lecturer ***Prof. & H.O.D.
Dept of Rasa Shastra and Bhaishajya Kalpana, National Institute of Ayurveda, Jaipur - 302002

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

extending for a distance of 1km and the ore has 68% iron contents.

Naga and Yashada (Lead and Zinc)

These metals are found together and are separated through refining process the most important deposit being Zawar in Udaipur. The abundant sulphide mineral in this deposit includes Sphalerite, Galena and Pyrite with many other minerals of minor importance. The distribution of Zinc and Lead is in three areas northeastern, southeastern and central areas.

Ratna and Uparatnas

Marakata

Rajasthan is only state producing this highly valued Gemstone. Nearly all emerald occurs in Rajsmand district in a narrow belt that streches between Deogarh in north and Kankroli in the south.

Garnet

Most of India's Garnet is produced in Rajasthan. It is of two-types precious and semiprecious. Main producing centres are Tonk, Bhilware and Ajmer districts.

Sphatika

Quartz is widely distributed as pegmatites in Ajmer, Sirohi, Alwar and Sikar districts.

Sudha varga

Sudha

Rajasthan has extensive deposits of quality Limestone. "A" grade Limestone is available at Sawaimadhopur, Bundi, Chittoragarh, Udaipur, Sikar and Sirohi districts. Steel grade Limestone is available in Jaisalmer district.

Godanti

Gypsum occus mostly in the form of Gypsite in Bikaner, Nagaur, Jaisalmer, Barmer and Churu districts.

Shwetanjana

Identified as calcite ($CaCO_3$) is found mainly in Sikar district.

Sikata varga

Dugdhapashana

Rajasthan is principal supplier of soapstone, Talc and Steatite. The most important places of occurrence are Jaipur, Bhilwara and Udaipur districts.

Kausheyashma

The inferior type of Asbestos called as amphibole is most commonly found in Rajsamand, Udaipur, Dungarpur and Chittoragarh districts. The better called as chrysolite is found in Ajmer and Jodhpur districts.

Sikata

Silica sand is abundantly available in Jaipur and Bundi districts.

Shweta mrittika

Identified as Felspar is found in association with Mica and occurs chiefly in Jaipur, Ajmer and Pali districts.

China clay

Is found in Sawaimodhopur, Sikar, Alwar, Nagapur and Jalore districts.

Multani mitti

Known a Fullers earth is extensively found in Bikaner and Barmer districts.

Lavana-ksharas

Romaka or Sambhara lavana

Sambhar Lake 60kms west of Jaipur is single largest inland salt source in the country and is estimated to contain 65 million tones of salt. The other places are Didwana and Pachpadra salt areas.

Summary

With increase in demand for Ayurvedic drugs, the need for authenticity, economy and bulk supply of raw materials has assumed prime importance. The problems related to procurement of mineral drugs can be solved by establishing direct contact with mines. For e.g

Godanti (Gypsum) is being sold at a rate of RS. 14-20/- per Kg while it is available at a rate of Rs. 250/- & Rs. 340/- per ton in Poorabsar and Hanumangarh districts of Rajasthan (where it is mined).

References

Geography of Rajasthan by Dr. V.C. Mishra, National Book Trust India, New Delhi Chapter VII, Mineral Resources, Page no :- 101-129.

Geography of Rajasthan by Dr. L.R. Bhalla 1st edition, Page no :- 110-124.

Rasamritam by Vaidya Yadavaji Trikamaji Acharya

Rasaratna Samucchaya

The Wealth of India

Raw materials Vol. VI Page 359-360.
Vol. V Page 256-257.
Vol. X Page 84-85.

(Published by CSIR, New Delhi-1962)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

HERBAL DRUGS AS WOUND HEALERS

Sachin Dubey *P. Sabale* *V. Mallurwar* *S. Nayak**

INTRODUCTION

Wound may be defined as a damaged tissue with or without microbial infection and is produced due to any accident or cut with sharp edged things. Wound healing is a process of restoring normal structure functions of damaged tissue. Healing is a natural phenomenon by which body itself overcome the damage caused to the tissue but the rate of healing is very slow and chance of microbial infection is high. This creates demand of a substance that speeds up the rate of healing. Wound healers are one of the most critical requirement in the essential medicaments for soldier and it may help in putting injured soldier back on the war field as quickly as possible. Wound healers also minimizes demand of other drugs like antibiotics and also their probable side effects by their use.

Besides this, there is not a single synthetic drug formulation in the market which can claim for its wound healing properties. The drugs available are either bacteriostatic or bactericidal and in these cases healing is by a natural phenomenon only.

PHYSIOLOGY OF WOUND HEALING

CELLULAR ACTIVITY : The process of healing which restores normal structure and function involves two different processes.

Regeneration : Proliferation of parenchymal cells which results in complete restoration of original tissue.

On the basis of capacity to divide cells are of three types. They are labeled in table - 1

Table - 1: Regeneration of parenchymal calls

SN	TYPE	SITUATION	REGENERATION
1	Labile cells	Epidermis, g.i.t. respiratory tract urinary tract, cells or lymph node and spleen.	Under normal physiological condition they are continously dividing.
2	Stable cell	Parenchymal cells of Liver, kidney Pancreas, smooth muscles and cartilage cells.	Cells are in G0 phase And enters cell cycle After stimulation
3	Permanent cell	Nervous system Skeletal system Cardiac muscle	Can't regenerate

In order to maintain proper structure of tissue, cells enter the cell cycle under the constant regulatory control of growth factors like, Epidermal growth factor, fibroblast growth Factor, platelet derived growth factor and Endothelial growth factor. Regeneration of parenchymal cells involves two processes. (i) Proliferation of original cells from the margin of injury with migration so as to cover the gap (ii) Proliferation of migrated cells with subsequent differentiation and maturation so as to reconstitute the original tissue.

Repair : Proliferation of connective tissue element reulting in healing. Repair takes place by participation of mesenchymal cells, fibrocytes, endothelial cells and platelets of injured organ. Two processes are involved in repair.

(i) **Granulation tissue formation :** In this process after inflammation, cleaning of debris, ingrowth of granular tissue takes place. Ingrowth takes place by angiogenesis (formation of new blood vessel by proliferation of endothelial cells) and fibrous tissue formation as a result of miotic divison of fibroblas.

(ii) **Contraction of wound :** Contracted wound heals repidly as less surface area is there. Contraction involves activites like dehydration,

* Asstt. Prof. VNS Institute of Pharmacy, VNS Campus, Vidya Vihar, Neelbud, Bhopal (M.P.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

contratction of collagen and myofibroblast appearance.

Extracellular matrix: It is responsible to strengthen the wound. In Addition they also direct cell migration, differentiation and organisation . Extracellular matrix has five main components. These are labelled in table 2.

STEPS INVOLVED IN WOUND HEALING :-

Steps involved in healing depend on the characteristics of the wound and wounds are of two types on the basis of the characters

(1) **Primary union of wound**

This is seen when wound is characterized by small, clean and uninfected condition without much loss of cells. Steps in primary union includes (1) Haemorrhage (2) Inflammation (3) proliferation and migration of basal cells of epidermis towards incision (4) Fibroblast and new collagen fibres invasion.

(2) Secondary union of wound

Character of secondary union includes open with large tissue defect having excessive loss of cells and tisuues. First three steps in secondary union is same as that of primary union. Thereafter following steps are seen. In fourth step, main bulk of secondary healing is formed by granulation and granulation tissue as formed by proliferation of fibroblast and angiogenesis.

In final stage, wound contraction takes place by the action of myofibroblasts. In the first type o wound sutures can be used but for the secon type, wound healers are the only option.

Factors influencing healing: Two types o factors influence the wound healing.

(a) **Local factors** These include

- Infection by tissue organisms whic delays healing.
- Poor blood supply which shows healing
- Movement of affected part also delay healing.
- Exposure to ionizing radiation delay granulation.
- Exposure to ultraviolet light facilitates healing.
- Foreign bodies including sutures interfere in healing.

(b) **Systemic factors :** These include

- Wound healing is rapid in young and slow in aged people.
- Nutritional deficiency of vitamin C as zinc delays healing.
- Haematologic abnormalities also affect healing.
- Diabetics are more prone to infection and hence delays healing.
- Adminstration of glucocorticoids (antiinflammatory) delays healing.

Table 2- Components of extracellular matrix in cell repair -

SN	COMPONENT	FUNCTION	COMMENTS
1	Collagen	Structural support	- Proteinous nature - Synthesized and secreted by Ribosomes.
2	Glycoproteins	Adhesive for cells and support material	Following types are present - Fibronectin - Tenasein - Thromboplastin
3	Basement membrane	Acts as a base	Consists of Collagen IV and Laminin.
4	Elastic fibres	Provide ability To recoil	Consists of two components - elastin glycoprotein - elastin micofibril

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by M.S. Swaminathan Research Foundation, Chennai and eGangotri

5	Proteoglycan	Helps in formation of Collagen	Have two components - carbohydrate polymer - protein bound to it.

COMMONLY USED PLANTS AS WOUND HEALERS

Aloe vera

Aloe vera commonly known as Kumari is a perennial herb belonging to liliaceae family. It has short stem and shallow root system with large fleshy, rosettes sessile leaves. It can be seen as wild herb in drier parts of India.[37]

Aloe vera is an excellent remedy for minor burns, cuts and sunburns. Both juice and aqueous extract from the leaves shows significant healing properties. It is also reported that it not only speeds up healing but also prevents injured surface from getting infected[4]. *A. vera* was studied for burn wounds by routine dressing by *A. vera* extract every 3rd day in chemically produced burn on healing subjects. The wound healing time and bacteriological control was significantly lower in Aloe group.[22]

The working mechanism of *Aloe vera* for wound healing is reported to be enhancing collages turnover rate and increased level of lysyl oxidase (responsible for cross linking of newly synthesized collages).[4] Beside wound healing effect, it is reported to have ulcer healing property (when taken internally) and protective action on skin.

Gingko biloba (GB)

It belongs to the family Gingkoaceae and commonly known as kew tree. It is widely planted in Korea and China. Propragation type includes seeds and vegetative methods[37].

Gingko biloba was found to have significant activity against both dead space and excision wound models in male rats. A 50 mg. / kg. of dose has significantly promoted the breaking strength and hydroxyproline content of granulation issue in dead space wounds and in case of excision wound model, it is found to shorten the epithelization period.[9]

It is also reported that the activity of G.B. is due to its high amino acid content which absorbs rapidly in blood stream and in combination with vitamins, they provide essential nutrients to the wound area to promote healing. Beyond wound healing, it is used as an anti-inflammatory and antiallergic agent in ancient Chinese medicine.

Centella asiatica

Centella asiatica is a small trailing herb bearing white to reddish flowers which normally grows widely in the wet places. Commonly it is known as Brahmi and it is propagated by seeds and vegetable propagation.[37]

Clinical studies of the formulation (ointment, cream & gels) of aqueous extracts of *Centella asiatica* reports that, when it is applied topically thrice daily for 24 days on open wound in rats, it increases cellular proliferation and collagen synthesis at the wound site. The treated wound epithelized faster and the rate of wound contraction was higher as compared to control wound. Gel formulation produces better results as compared to other two formulations.[5] It is reported that the active constituents responsible for the activities of *Centella asiatica* are found to be asiaticosides and madicassoides.

Nelumba mucifera

Nelumba mucifera belonging to family Nymphacaceae is called as Kamal in Hindi and lotus in English. It is a perineal aquatic herb embedded in mud with large flower. It is commonly cultivated in ponds and swamps by using rhizomes for propagation.[37]

Nelumba mucifera is very common among natural and traditional healers. They collect leaves and rhizomes, dry them and burn to produce ash which acts a wound healer. But now it is reported that the methonolic axtract of rhizomes of *Nelumba mucifera* in the formulation of ointment is effective in different types of wound model in rats. The effect were studied on excision wound

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

model, incision wound model and dead space wound model by using two different concentrations i.e. 5% w/w & 10% w/w wound models. Both the extract ointment shows the significant effect in respect with wound contracting activity, wound closer time, tensile strength, regeneration of tissue at the wound site and lysyl oxidase activity. The effect produced is comparable to that of standard drug.[17]

Hypericum mysorense

Hypericum mysorense is a perineal flowering plant and has been long used in folk medicine. It belongs to the family Hypericaceae and is commonly known as St.Johns Wort. The flowering tops are commonly used as tea or fresh tincture. It is reported that the methanolic extract of *Hypericum mysorense* produces wound healing in rats. The extract, in the form of ointment (5% w/w and 10% w/w of arial part) was evaluated in excision and incision wound models in rat. Both the concentration of the ointment showed significant response in both types of wound when compared to the control. The effect is comparable with standard drugs.[11]

Table - 3, Plants used as wound healers

SN	COMMON NAME	SOURCE AND FAMILY	PARTS USED	REFERENCE
1	Aloe/kumari	*Aloe vera, A. barbadensis* (liliaceae)	Aq.Extract & Juice of leaves	Chitra etal, 1998[4] Muntazo etal[22]
2	Brahmi	*Centella asiatca* (Umbelliferae)	Aq. Extract	Sunil kumar etal, 1998[5] Brinkhaus etal, 2000[14] Arora etal, 2002[38]
3	Eucalyptus	*Eucalyptus globulus* (Myrtaceae)	Oil	Bhagwat etal, 2000[5]
4	Tulsi	*Ocimum temiflorum, O.sanctum* (labiateae)	Whole plant	Bhagwat etal, 2000[6]
5	Bach	*Acorus calamus* (Araceae)	Rhizomes	Bhagwat etal, 2000[5]
6	Amla	*Phyllanthus emblica* (Euphorbiaceae)	Root bark, fruits, leaves	Suguna etal, 2000[7]
7		*Entoda africana*	Aq. Extract	Diallo etal 2001[8]
8	Ginkgo (GB)	*Ginkgo biloba* (Ginkgoaceae)	Seeds and laves	Bairy etal, 2001[6]
9	Bael	*Aegle marmelos* (Rutaceae)	Methanolic extract.	Jaswanth etal. 2002[10]
11	St.Johns wort	*Hypericum mosorence*	Methanolic extract	Mukharjee etal, 2001,[11]
12	Quince	*Cydonia oblonga* (Rosoceae)	Aq. Extract, Seed mucilage	Hemmali etal, 2000,[12]
13	Prickly pear	*Opuntia ficus indica* (Cortoceae)	Opuntia Ficus indica	Park etal, 2002,[13]
14	Mexican /Prickly poppy	*Argemone mexicano* (Papaveraceae)	Ethanolic extract of leaves	Patil etal, 2002,[15]
15	Liquorice	*Glycyrrhiza glabra* (Leguminosae)	Vacuum dried Ethanolic extract	Kshore et al, 2002[16]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

16	Kamal	*Nelumbo mucifera* (Nymphacoceae)	Methanolic Extract of rhizomes	Mukharji et al, 2000[17]
17	Gyptalepis	*Gyptalepis fucchamani*		Ramdas etal, 2000[15]
18	Chaturangi	*Lanata camara* (verbanaceae)	Leaf juice	Dash et al, 2001,[19]
19		*Berldleja globosa*	Aq. Leaf extract	Minsah etal, 2001.[20]
20	Paras-pipal	*Thepsia populnea* (Malvoceae)	Fruits	Nagappa etal 2001[21]
21	Gandana	*Achellia mellifollium*	Hydroalcoholic extract of aerial parts	Henmati etal, 2002[23]
22		*Peperomia galioides*	Ethanlic Extract	Villeges etal, 2001[24]
23	Figwort	*Scrophielaria nudosa* (Scrophulariaceae)	Seeds, Pods	Stevenson etal, 2002,[25]
24	Sarphonka	*Tephrasia purpuria* (Fabaceae)		Taraphdai etal, 2002[26]
25		*Schims Terebinthfolios*	Ethanolic Extract	De Melo etal, 2002[27]
26		*Bulbins nauissifolia*	Roots	Ohotsokoani etal, 2002[28]
27		*Flaxinus ornus*	Bark, Leaves, Flowers	Kostova I, 2001[29]
28		*Pelorgonium riniforme*		Swerdlow Et al, 2001[30]
29	Ghamra	*Tridax procumbens*	Arial Parts	Bairy K.L, 2002[31]
30	Chaulmogra	*Hydnocarpus Weightiana* (Flacourtriaceae)	Oil,	Bairy K.L, 2002[31]
31	Sunflower	*Helianthus annus* (compositae)	Leaves, Seeds Flowers, Roots	Bairy K.L, 2002[31]
32	Hadjod	*Cissus quandrangularis* (Vitaceae)	Whole Plant	Thawani et al, 2002[35]
33		*Quercus infectoria*	Galls	Jalalpure et al, 2002[32]
34		*Bryophyllum pinnatum*	Aqueous, Alcoholic And petroleum extract of leaves	Mahamal et al, 2002[33]
35	Sehund, Thuhar	*Euphorbia neriifolia* Euphorbiaceae	Whole plant	Rao M.B, 2002,[32]
36	Apamarga	Achyranthus aspera (Amarantheaceae)	Whole plant	Rao M.B, 2002,[32]
37	Turmeric	*Curcuma longa*	Rhizomes	Rao M.B, 2002,[32]
38	Myrobalan (harda)	*Terminalia chebula* (Combretoreace)	Alcoholic extract	Suguna et al, 2002[36]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

39	Marigold	*Calendula officinalis* Compositeae	Leaves and flowers	Dubey S.K, 2001[40]
40	Rue, Pismaram, Sabab	*Ruta graveolens, R.chalepensis* Rutaceae	Whole plant, oil	Kent Tayler, 1997[41]
41	Leopardis bane	*Arnica montana* (Asteraceae)	Flowers, Rhizome	Sishyantalkar S,[42] Dubey S.K, 2001[43]

CONCLUSION

Considering the principle drawbacks, associated with synthetic compounds, plants which are the gift from nature, provide excellent raw material for the treatment of various diseases. As in the allopathic system of medicine, wound healers are available rarely, but out ancient heritage in the form of literature provides number of traditional and household preparations for this purpose. Preliminary scientific investigations on (Table-3) plants indicate that natural products could be exploited to discover some novel wound healers.

REFERENCES

1. Mohan Harsh "A Text book of Pathology" Jaypee Brothers, Medical Publisher Pvt. Ltd., New Delhi 2000, 4th edition : 152-157.
2. Tyagi M.P., Bhatia K.N, "Elementary Biology" Trueman Publication, Jalandhar Vol. II, 1999, First Edition : 306 - 310.
3. Grierson D.S., Afolayan A.J., *Journal of Ethnopharmacology,* 67 (3) 1999, 327 - 332.
4. Chitra P., Sajithlal G.B. Chandrakasan G. *Indian Journal of Experimental Biology,* 36 (9) P-896-901 1998.
5. Sunil Kumar, Parmeshwaraiah S; Shivkumar H.G., *Indian Jouranal of Experimental Biology,* 36 (6), 569 - 572, 1998.
6. Bhagwat v. Mitra S.K. Suryanarayana T., Sachan *Indian Veterinary Journal,* 77 (7). P-636-637, 2000.
7. Suguna L., Samitra M; Chandrakasan G. *Journal of Medicinal and Aromatic Plant Sciences,* 22 (Suppl. 1), 2000.
8. Diallo D, Paulser B.S. Lilyiback T.H.A., Michaclsen T.E., *Journal of Ethnopharmacology,* 74 (2), 159, 2001.
9. Bairy K.L., Rao C.M., *Journal of Natural remedies,* 22-27, 2001.
10. Jaswant A. Akilendeswari Loganathan V., Maniman S, Rukmani, *Indian Journal of Pharmaceutical Sciences,* 2001.
11. Mukherjee, P.K. Suresh B., *Natural Product Sciences* 6(2) 23, 2000.
12. Hemati A.A. Mohamadian F., *Journal of herbs, spices and medicinal plants.* 7(4), 41, 2000.
13. Park E.HK., Chun M.J. *Fitoterpia,* 72(2) 165, 2001.
14. Brinkhaus B., Lindren M, Schuppan D., Hahn E.G., *Phytomedicine,* 7(5) 427, 2000.
15. Patil M.B., Jalalpuri S.S., Ali A., *Indian drugs,* 38 (6) 288, 2001.
16. Kishore Grana Sam S., Santhil Kumar B Ramchandran S. Saraswan M., Sridhar S.K., *Indian Drugs,* 38 (7) 355, 2001.
17. Mukherjee P.K., Mukherjee K., Pal M., Saha B.P., *Phytomedicine,* 7, 66, 2000
18. Ramdas S.R., Ghotgi N.S. Ashalata S., Mathur N.P., Broomi V.G. Rao S. *Ethnobotany,* 12, 100, 2000.
19. Dash G.K. Suresh P. Ganpaty S., *Journal of Natural remedies,* 1(2) 105, 2001
20. Minsah A. Y, Sampson J., Haughton P.J., Hulands P.J. westbrock J., Dunn M, Hughes M.A. Cherry G.W., Journal of *Ethnopharmacology,77* (2-3), 219, 2001.
21. Nagappa A.N., Cheriyan B., Fitoterapia, 72 (5) 503, 2001.
22. Muntazo A Hatwar S.K., *Current Medicine Trends,* 6(1), 1071, 2001.
23. Henmati A-A, Arzi A, Amin M., *Journal of Natural remedies,* 2(2), 164, 2002.
24. Villegas L.F. Marcolo A martin J. Fernandez I.D. Maldanado H. Vaisberg A.J. Hammond G.B., *Jouranl of Natural Products,* 64 (10), 1357, 2001.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

25. Stevenson P.C. Simmonds H.S.J. Sampson j; Houghton P.J. Grice P., *Phytotherapy Research,* 16 (1), 33-35, 2002.
26. Taraphadai A.K., Shav B.P.-Bhattacharya R.K.; Mukherjee P.K. *Antiseptic,* 99 (8), 302, 2002.
27. DeMelo Junior E.J.M. Rapose M.J. Lisboa Neto J.A., Diniz M.F.A., Mar celino Junior A.C, Sant Ara A.E.G., *Phytomedine,* 9 (2) : 109, 2002.
28. Ohotsokoani - Lusunzi M.A. Karuso P., *Journal of Natural Product,* 64 (10), 1368, 1999.
29. Kostova I., *Fitoterapia,* 72 (5) : 471, 2001.
30. Swerdlow J.L.; Johson L., *Economic Botany,* 55(2), 332, 2001.
31. Bairy K.L., *Journal of Natural Remedies,* 2(1), 11-20, 2002.
32. Jalalpuri S.S., Patil M.B. Alagawadi K.R., *Journal of Natural Remedies,*. 2(1), 54, 2002.
33. Mahmood K. Patil P.K., *Indian Journal of Pharmacology,* 34 (2), 101, 2002.
34. Rao M.B., Aryavaidyan 15 (3 & 4), 169, 2002.
35. Thawani N. Kimmatkur N. Kingorani L; Khiyani R., *Antiseptic.* 99 (9), 345, 2002.
36. Sugana L. Singh S. Sivakumar P. Sampath P. Chandrakashan G., *Phytotherapy Research,* 16 (3) 227, 2002.
37. Kokarte C.K., Purohit A.P. and Gokhale S.B. Pharmacognosy Nirali Prakashan Pune, Sixteenth Edition : 2001, 218.
38. Arora D; Kumar M, Dubey S.D. *Journal of Natural Remedies* 2(2) 143, 2002.
39. Kokate C.K., Purohit A.P. and Gokhale S.B., "Pharmacognosy", Nirali Prakashan Pune, Sixteenth Edition : 2001, 190-191.
40. Dubey S.K. "Textbook of *Materia Medica",* Books and Allied (P) Ltd. Kolkata, 2001, Page 101-102.
41. Dubey S.K. Textbook of "*Materia Medica",* Books and Allied (P) Ltd.
42. Kent James Taler, *Lecture on "Materia Medica",* B. Jain Publishers (P) Ltd., New Delhi, 1997 : P-889-892.
43. Sidhyantalkar Satyavrata "Homoeo Drug Picture", Vijaykrishna Lakhanpal Publication, New Delhi : 119, 1998.

बैद्यनाथ

पंचसकार चूर्ण

यह चूर्ण पेट साफ करता है तथा पाचन शक्ति और भूख बढ़ाता है । इससे पेट के कृमि भी दूर होते हैं ।

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[1] Dr. Sastry J.L.N., M.D. (Ayu.)
[2] Dr. Nishteswar K., M.D. (Ayu.)
[3] Dr. Venugopal, M.Sc.; Ph.D.

ABSTRACT

Salacia reticulata Wight. [CELASTRACEAE] is known as Ekanayagam in traditional medicine and as Saptarangi or Saptachakra in Sanskrit. It is a relatively new drug in the Ayurvedic materia medica. Ancient medical texts like Sahasra Yoga & Chikitsamanjari have described it extensively in the management of diabetes. Present research also emphasizes about its anti-diabetic property since alpha-glucosidase inhibitor activity is established with its constituents. However, there is confusion prevailing over the identity of this herb as more than 10 species are officially reported as Ekanayagam. Hence, the present study-cum-review to esatablish the correct identity.

INTRODUCTION :

Ekanayagam is a relatively new entry into Ayurvedic materia medica and is not mentioned in the classical literature. It yas appears to be introduced by the traditional Keral Vaid for the management of diabetes. Kerala medical texts have described it extensively in the management of diabetes. Thery are :

i) ***Sahasrayogam*** described *Ekanayagam* under Nisa *Katakadi, Kataka Khadiradi* and *Darvi Kapitha Niryasadi kashayas.*

ii) ***Yogamritam*** did mention *Ekanayagam* several times viz., p. 146 - 148 - Sloka 2,4,5,6,9 &10.

iii) ***Chikitsa Manjari*** quoted *Ekanayagam* in : p.226-233 - Sloka 11, 12, 13, 14, 15, 26, 27, 35, 36 & 49.

When we review the literature, several *Salacia species* have been scientifically studied but different species are reported as *Ekanayagam.* They include:

(1) *Casearae esculanta* Roxb. [S. chinensis or S. prinoides] - (Wijetunga, 1966 & Sivaprakasam et al., 1984).

(2) *S. fruiticosa* Heyne. (Ramiah N. & Na G.A., 1978).

(3) *S. prinoides* [S. chinensis or C. esculanta (Pillai N.R. et al., 1979 & Kowsalya et al 1996).

(4) *S. madagascariensis* (Sneden A.T., 19 & 1981)

(5) *S. fruticosa* (Nair et al., 1982).

(6) *S. chinensis* [C. esculanta or S. prinoides (Sivaprakasam et al., 1984).

(7) *S. macrosperma* (Nair et al., 1982; Arc R.B. et al., 1988).

(8) *S. roxburghii Wall.* as *Saptachakra* (Sharma P.V., 1983).

(9) S. *reticulata var. diandra* (Kumar V. et al., 1985).

(10) *S. reticulata* Wight. (Warrier et al., 1995)

(11) *S. beddomei* (Hisham et al., 1995).

(12) *S. campestris* (Corsino J. et al., 2000).

(13) *S. madagascariensis* (Sneden A.T., 19 & 1981)

Some scholars as well as practitioners consider S. reticulata as *Ekanayakam* and S. oblonga as *Nayakam.*

The root/root bark is the useful part of *Saptachakra.* However, the market samples are stems usually. The root will appear yellowish brown to golden yellow in colour. The cross section of root shows seven circles ? (Hence the name *Sapta Chakra* in Sanskrit ?).

Vernacular names for Saptacakra :

Sanskrit : *Sapta Chakra; Swarna Mula* Hindi : Sapta Rangi; Bangali : Dimala; Marathi Cheru kuranti; Goa : Satagunda; Malayalam Ponkaranti veru, Koranti; Simhalese : Kotala Himbutu; Tamil : Koranti, Telugu : Ankudu chettu ?

The botanical description of the possible sources of *Ekanayakam* are given below :

1.) Salacia reticulata Wight. [CELASTRACEAE]

1. Sr. Medical Officer (Ayu.), C.G.H.S. Dispensary, Guindy, Chennai - 600032 Tamil Nadu. INDIA
2. Asst. Prof., Dept. of Dravyaguna, Dr. N.R.S. Govt. Ayu. College, Vijayawada - 520 002. Andhra Pradesh, INDIA
3. Botanist, CHEMILOIDS, Vijayawada - 520 007, Andhra Pradesh, INDIA

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

is a woody climbing shrub with blackish branches or ever green small tree; stem much dichotomously branched, pale yellow coloured; leaves are rectangular and lanceolate, 3-6 inch long, ¾-2 inch width, entire or slightly serrate margin; Flowers yellowish, 3-6 in each axil, occurs in bunches; Fruit small, round, ½-1 inch circumference, red when ripen, single seeded, whitish fruit pulp is edible, fruits in December-January or April.

Habitat :

Southern Orissa, Kerala, Malabar, Mumabai to Kurg and other coastal areas, near the river banks and forests; found up to 3000 ft. height.

Chemical constituents :

Root consists of 1-dicotanin & 3-dicotanin, some oil, Dulcitol, Mangiferin, Glycosydal tanin, Leucopelargonidin (Chopra, 1956).

A trioxygenated friedooleanane from ***S. reticulata var. diandra*** has been reported (Kumar, 1985).

Salacenonal, a novel and biogenetically important 29-nortriterpenoid isolated from ***S. reticulata*** (Tezuka et al., 1993).

A new 7-oxo- quinonemethide dinortriterpenoid, salaciquinone, and a known quinonemethide dinortriterpenoid, isoquesterin, were isolated from the root bark of ***S. reticulata var. beta-diandra*** (Tezuka et al., 1994).

2) S. chinensis Linn. (S. latifolia Wall ex M. Laws or S. prinoides DC.) - is a small erect or staggling tree or large, woody, climbling herb found throughout India including Andaman islands. Leaves ovate to lanceolate; flowers 2-6, clustered together on axillary tubercles, yellowish coloured; fruits small globose 1-2 cm in diameter, red when ripe, one-seeded; seeds surrounded by a edible pulp. Ripe fruits are eaten.

Note : Roots have been used as an anti-diabetic drug in the indigenous system of medicine and clinical tests are said to have substantiated their efficiency. The root bark contains two 1,3-diketones, fatty matter, dulcitol, mangiferin, bphlobatannin and glycosidal tannins. Roots also contain leucopelargonidin and its dimer and tetramer [Dash & Bedi, ISI Bull., 1967, 19, 393; Bhatnagar et al., J. Amer, Chem. Soc., 1954, 76 (3689).

Roots are astringent and considered to be abortificient. Its decoction is used in amenorrhoea, dysmenorrhoea and venerial disease (Burbill II, 1943, Kulkarni J., Bombay Nat. Hist. Soc. 1909-10, 19, 578).

3) Salacia oblonga Wall. - *Chundan* (Tamil); *Ponkora* (Malayalam) - is a small glabrous tree or shrub. Leaves 3-6 by 1.25-2 inches (7.5-15 by 3.2-5 cm) elleptic-oblong, rounded at the apex or with a very short obtuse acumen, slightly serrate, sub-coriaceous, turning yellow when dry. Flowers greenish-yellow, sometimes sessile in the axils of the leaves owing to the extreme shortness of the common peduncle. Calyx lobes rounded, glabrous, entire. Petals about 1/8 inch; broadly elliptic, serrate. Ovules 4 in each cell. Fruit 2-2.5 inch (5 cm) diameter, tuberculate light brown, globose or somewhat pyriform; orange when ripe. Seeds 1-8, angular, large, immersed in pulp. Part used in root bark.

Root bark of ***S. oblonga*** contains two 1, 3-diketones and fatty matter, rubber, dulcitol, mangiferin, phlobotamin and glycosidal tannins. Roots also contain leucopelargonidin and its dimer and tetramer (Bhatnagar et al., 1954 and Dash & Bedi, 1967).

4.) S. macrosperma Wight. (Marathi - Lendphal; Malayalam - Anakoranti) - It is a diffuse rembling or scandant shrub found in western ghats from Konkan southwards. Fruits are globose, orange-coloured and 3 cm in diameter, are said to have sweet pulp with a pleasant aroma.

5.) S. roxburghii Wall. Ex Whight & Arn. is a climbling shrub or small tree found in evergreen forest of North Bengal, Assam, Sikkim and Nepal. The ripe fruits are edible.

6.) S. brunniana Wight & Arn. is a scandent shrub found in Kerala (Ramarao 85; Burkill II, 1942).

7.) S. grandiflora Kurz. *Syn.* S. ongifolia Hook.f. ex M. Laws is a scandant shrub.

8.) S. macrophylla Blume *Syn.* S.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

flavenscens Kurz., S. ovalis a scandant shrub or a small tree found in the Konkan and Andamans (Burkill II, 1942; Fl. Malessiana, Ser. I, 6(3), 412.

Note: ***S. beddomei & S. jenkinsii*** are the species reported to be endagered species of Himalayas (Biodiversity in Med. Arom. Plants in India. ICAR Public. 1995).

CONCLUSION :

On review of the available literature it may be concluded that *S. reticulata* and *S. chinensis* are the commonly used species in the name of *Ekanayakam.* The authors have noticed that S. chinensis is available near Z. Annavaram area of East Godavari Dist. (A.P.). It is also important to realise that *S. chinensis* is available in good quantities at present. *C. esculentus & S. prinoides* are synonyms of S. chinensis.

S. oblonga and S. macrosperma occupy the place next to the above species and a comparative study is to be conducted before concluding a particular species as *Ekanayagam.*

References

1.) Arora R.B. et al., "Preliminary studies on the hypoglyceamic activity of S. macrosperma (Saptaranga)". J. Res. Ind. Med., 3(4) : 1988.

2.) Augusti K. et al., "Biologically active principles isolated from S. oblonga Wall." Ind. J. of Physiol. & Pharmacol., 39 (4) : p. 415-417, 1995.

3.) Bhatnagar et al.; J.Amer.Chem.Soc. ,76 (3689): 1954.

4.) Chopra R.N.; "*Indigenous Drugs of India*". p. 524. 1956.

5.) Chopra R.N. et al., "*Wealth of India*" - Vol. IX. CSIR : New Delhi. p. 168-169.1972.

6.) Corsino J. et al., "Biosynthesis of friedelane and quinonemethide triterpenoids is compartmentalized in Maytenus aquifolium and S. campestris". Phytochem., 55 (7) : p. 741-748, 2000.

7.) Dash & Bedi; I.S.I. Bull., 19 : p. 393, 1967.

8.) "*Flora of British India*" - vol. III, p. 627.

9.) Gopalan Pillai S. & Krishnan K.V.; "*Sahasra Yogam*". Vidyarambham Public, Aleppy.

10.) Hisham A.et al., "Salacianone and salacianot, two triterpenoids from beddomei". Phytochem., 40 (4): p. 1231, 1995.

11.) Kowsallya S. et al., "Development and evaluation of hypoglycaemic tablet with herb S. prinoides (Ekanayakam)". Ind. Nutrition & Dietetics, 32 (2) : p. 33-39, 19

12.) Kumar P.; "*Saptachakra Evam Avartaki Madhumeha Ke Paripekshya mein Gu Karmatmaka Adhyayan*". Dept. of D.G. N.I.A.,Jaipur. 1990. M.D. thesis.

13.) Kumar V. et al., " 21 alpha, 26-dihydroxy- A - friedooleanan-3-one from S. reticu var. diandra (Celestraceae)". Phytochm., (8) : p. 2067 - 2069, 1985.

14.) Leena Raman ; "Role of Saptachakra reticulata) in controlling Madhumeha with without Amalaki (E. officinalis)". P.G. dept of D.G., Dr. B.R.K.R. Govt. Ayu. College, Hyderabad. 1996-97. M.D. thesis.

15.) Nair R.B. et al, "Comparative study of the hypoglycaemic activity of Salacia species" J. Res. Ay. Siddha., 3 (1&2) : p. 53-68, 198

16.) Nambudri D.; "Chikitsa Manjari" Vidyarambham Public., Aleppy.

17.) Pillai N.R. et al., "Hypoglycaemic activity of the root bark of S. prinoides". Ind. J. Exp. Biol., 17 (1) : p. 1279-1280, 1979.

18.) Ramiah N. & Nair G.A.; "Chemical examination of the fruits of S. fruiticosa Heyne.". J. Res. Ind. Med. Yoga & Homoeo. 13 (2) : p. 110-111, 1978.

19.) Serasinghe et al., "Oral hypoglycaemic effect of S. reticulata in the streptozotocin induced diabetic rats". Phytotherapy Res. 4 (5) : p. 205 - 206, 1990.

20.) Pillai N.R. et al, "Hypoglycaemic activity of the root bark of S. prinoides". Ind. J. Exp. Biol., 17 (1) : p. 1279-1280, 1979.

21.) Pradeep Kumar; Saptachakra - An effective medicine". Sachitra Ayurveda, 46 (5) : p. 343-345, 1993.

22.) Sharma P.V. "Dravyaguna Vijnanam - Vol. II". Chaukhambha Orientalia : Varanasi 1983. p. 686-687.

23.) Shekar C.N. Chandra et al., "*Hypoglycaem*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

effects of different extracts of S. reticulata root bark". Paper presented at the *Building Bridges with Traditional knowledge Summit meeting,* Hawaii 28th May - 2nd June 2002.

24.) Sivaprakasam K. et al., "Siddha remedy for diabetes mellitus". J. Res. Ay. Siddha, 5 (1-4) : p. 25-32, 1984.

25.) Sneden A.T.; "Isoguestenin a new anti-leukemic bisnortriterpene from S. madagascarensis". Med. Pl. Symposium at Singapore 1980 Dec. 4-7, Abstr. No. 28. & J. Nat. Prod., 44 (4) : p. 503-507, 1981.

26.) Srinivasan Nambudri D.; "Yogamritam". Vidyarambham Public., Aleppy.

27.) Tezyka Y. et al., "*Salacenonal : A novel nortriterpenoid aldehyde of biogenetic significance from S. reticulata".* Nat. Prod. Lett., 3 (4) : p. 273 - 276, 1993.

28.) Tezuka Y. et al., "*Studies on terpenoids and steroids, 25. Complete 1H- and 13C - NMR spectral assignments of slaciquinone, a new 7-oxoquinonemethide dinortriterpenoid."* J. of Nat. Prod., 57 (2) : p. 270-276, 1994.

29.) Wijetunga M.G., "A study on Saptarangi (Casearae esculanta Roxb.)

पल-पल जीवन में आनन्द अविरल

जब उत्साह हो जीने का,
जब हर पल आप जीना चाहें भरपूर
बैद्यनाथ का वीटा-एक्स गोल्ड ।
स्वर्ण भस्म (शुद्ध सोना) की ताकत से भरपूर ।
जोश के लिए, उमंग के लिए
आनंद से भरपूर जीवन के लिए ।

बैद्यनाथ

वीटा-एक्स

गोल्ड

स्वर्ण भस्म की ताकत से भरपूर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ROLE OF UNANI MEDICINE IN MANAGEMENT OF AIDS

Dr. S.M. Hussain, B.U.M.S. (Pune), M.D. (Med.A.), M.T.C. (USA)

In Unani Medicinal Science, the name given to AIDS is AL-ZABOOL. The Unani Scholar Hakeem kabiruddin says in his authentic and recognised text "SAREH ASBAB" that Abnormal Hararate Ghariziya destroy the body fluid and melt the human body and due to loss of energy & fluid, the body becomes weak and skin loses its shine. It is also mentioned in his text that excessive loss of Akhlate Arba (humours) and Mani (semen) etc. weakens the whole system of Human body and then loss of energy and fluid will occur due to Azsame Ghariba Khabisa (Viral and other infections) and change of temperament of Hararat Ghrizia.

Now this disease is a major global health problem. Women are vulnerable to the AIDS and are now contracting the disease at a faster rate than man. AIDS is a serious health problem which affects peoples in the countries around the world. According to WHO, more than ten million people are infected with HIV and in which about 4 millions are women.

WHY DO AIDS PATIENTS DEVELOP IMMUNE DEFICIENCY ?

The normal human Immune system consists of phagocytes and macrophages and two kinds of Lymphocytes called T and B cells which protect our body from infections. Whenever any bacteria, virus or foreign body enters in the human body, the macrophages do engulf and digest it and pass the massages to helper T-cells to take immediate action. The helper T-cells identifies the enemy and make red alert in the body, do fight with lymph nodes to produce more T-cells after identifing organism.

The AIDS virus directly attack and kills helper T-cells, and paralyses the whole immune system. This is the reason why the AIDS virus is so deadly.

FRIENDS OF AIDS

Friend No.1 : Alcohol - The modern research has shows that Alcohol is big supporter and right hand to progression of AIDS. Alcohol interferes the functions of helper T-cells and defence mechanism of an healthy individual.

Friend No.2 : Nicotine - It has been proved that nicotine and other narcotics can produce severe suppression of body defence system (Immune System) and activity of helper T-cells in healthy individuals.

Friend No.3 : Tobacco - Smoking and tabacco chewing are also responsible for weakening of immune system of healthy individuals.

NAMING OF AIDS VIRUS

International Committee on Virus Nomenclature, in 1986 decided on the generic name : Human Immunodeficiency Virus (HIV) for AIDS virus, to avoid confusion of Name of AIDS virus because there were different names given by different researches to AIDS virus from 1981 to 1986 e.g. LAV, HTLV - I & II & III etc.

AIDS VIRUS :- The word virus in Latin language means POISON. The viruses are very small in size and are not seen under the ordinary microscope, used in laboratories. The viruses can be seen under electronic microscope which has high resolving power. AIDS virus measures 100 nm { 1nm = 1 millionth of milimeter (mm)} in diameter and 230 million viruses can fit in one full stop. AIDS virus belongs to the Lentivirus subgruop of the family retroviridae.

HIV POSITIVE

THE REAL MEANING OF THIS TEST

Any HIV test like Elisa, PAT Test, Western Blot Test etc. if are positive means HIV antibody are present in blood. These anti-body develops when AIDS virus or any other virus come in contact with human body. These antibodies are not VIRUSES. These antibodies are developed by our own body defence system to fight with vriuses. The presence of antibodies in Human body is not a disease and it does not mean that the person having AIDS. These antibodies are security guards to protect and fight with viruses.

The presence of HIV antibody in blood does not certify that presence of HIV virus in blood. After treatment with Unani Medicine or any

Director : Avicenna Research Centre for Unani Medicine, Mumbai

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

other Herbal preparation, viruses may be destroyed or killed and expelled from the body through urine, sweat etc. There may be NO VIRUS in blood but HIV antibodies will be present and the presence may be for short or long period (few months to 6-7 years) but it does not mean that patient is having AIDS.

Important Sign & Symptoms of AIDS Patient :

1. Weight loss-more than 7-10 kg in 3-4 months (2-3 kg every month)
2. Intermittent fever since 3-4 months.
3. Diarrhoea since 1-2 months
4. Weakness
5. Fatigue
6. Night Sweats
7. Lymph node enlargement since 3-4 months.

80 to 90% AIDS patient having Tuberculosis. Hence, Tuberculosis is must be treated besides AIDS.

WHICH MEDICINES ARE EFFECTIVE IN AIDS?

The only those medicines are effective in AIDS which do following.

i) To increase CD4 Lymphocytes count.
ii) To increase Haemoglobin level.
iii) To reduce opportunistic infection.
iv) To protect Liver, Kidney, Heart and other vital organs of the body.
v) To increase body weight (weight gain)
vi) To increase appetite.

Unani Way of Treatment

- Bed Rest
- Semi Hot Bath Daily with any Neem Soap.
- Leafy vegetables advice in routine food.
- Avoid spicy, oily foods.
- Proper care of genital parts.
- Following formulations are found very effective in AIDS patients :

Formulation No. AIDS -1 :

Shahitra - 0.9 gm, Chobchini - 0.9 gm, Senna - 1.1 gm, Gilo - 1.4 gm, Tabashir - 0.7 gm, Kushta Sadaf 0.15 gm.
Make fine powder of all above medicines.
Dose : 5 gm twice a day after food with or without Honey.

Formulation No. AIDS - 2 :

Berg Bakayan 0.2 gm, Burada Sandal Surkh 0.4 gm, Berham Dandi - 0.4 gm, Post Haleela Zerd - 0.4 gm, Chaksu - 0.4 gm, Serphooka - 0.2 gm, Shahitra 0.4 gm, Filfil Siyah- 0.2 gm, Post Kachnal - 0.2 gm, Gule Surkh 0.4 gm, Neel Kanthi - 0.4 gm, Berg neem 0.2 gm, Rasot - 0.2 gm, Berg Heena 0.2 gm, Kishneez-0.2 gm, Zeera Siyah- 0.2 gm.
Make fine powder of all above medicine.
Dose : 5 gm three times a day with or without Honey.

Formulation No. AIDS - 3 :

Gilo - 1 gm, Gule Surkh - 2 gm, Kushta Abrak - 0.075 gm, Kushta Sadaf - 0.15 gm.
Make fine powder of all above medicine.
Dose : 2 gm twice daily with or without Honey.

- Qurs Kushta Faulad : 1 tab. once a day.
- Jawaher Mohra 0.5 gm once a day with Honey or Milk.
- Jawaris Jalinoos 5 gm twice a day after food.
- Syr. Hayateen 25 ml. three times a day.
- Syr. Jeevan Baksh 25 ml. three times a day.
- Qurs Sartan Kaphoori 2 tab. twice a day.
- If there is loose Motina then following formulation may be advised. Tukhm Humaz - 0.60 gm, Tukhm Rehan 0.60 gm, Banslochan 0.60 gm, Ispagol Musallum - 0.60 gm, Tukhm Kanocha - 0.60 gm, Gile Armani 0.60 gm, Gond Kekar 0.60 gm, Nasata Gandam 0.80 gm.

Make fine powder of all above medicine.
Dose : 5 gm twice a day.

- Habbe Musaffi Khoon 2 tab. three times a day.
- Majoon Usbha 5 gm bid.
- Itrifal Shahitra 10 gm twice a day.
- Arq Murakkab Musaffi khoon 25 ml. twice a day.
- Maul Lahem Do Atisha : 20 ml. twice a day.
- Qurs Tabashir Qabiz or Qurs Tabashir Mulayyan 2 tab. twice a day.
- Majoon Kaloani 5 gm twice a day before food (Empty Stomach).
- Hepa powder may be given to patient if there is Hepatitis or Joundice.

Dose : 5 gm three times a day.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[1]डा० अनूप कु० गक्खड़, एम.डी. (आयुर्वेद)
[2]सीमा चोपड़ा, बी.ए.एम.एस., द्वितीय प्रॉफ

1. प्र०:- काल को छह भागों में विभाजित क्यों किया गया है ?
   उ०:- **शरीर को षडंग कहा गया है । इसी आधार पर काल को भी छह भागों में बांटा गया है ।**
2. प्र०:- आदान काल में कौन-सी ऋतुएं आती हैं ?
   उ०:- **शिशिर, वसन्त व ग्रीष्म ।**
3. प्र०:- विसर्ग काल में कौन सी ऋतुएं आती हैं ?
   उ०:- **वर्षा, शरद व हेमन्त ।**
4. प्र०:- योगीन्द्र नाथ ने 'सूर्य सिद्धान्त' ग्रन्थ के अनुसार उत्तरायण व दक्षिणायन को कैसे परिभाषित किया ?
   उ०:- **मकर संक्रान्ति से छह मास तक सूर्य उत्तरायण में होता है और कर्क अक्रन्ति से छह मास तक सूर्य दक्षिणायन में होता है ।**
5. प्र०:- अग्निगुण की प्रधानता किस काल में होती है ?
   उ०:- **आदान काल ।**
6. प्र०:- तिक्त, कषाय व कटु रस की वृद्धि किस काल में होती है ?
   उ०:- **आदान काल ।**
7. प्र०:- चन्द्रमा का अव्याहत बल किस काल में होता है ?
   उ०:- **विसर्ग काल ।**
8. प्र०:- गंगाधर के अनुसार 'चेष्टा' शब्द के अन्तर्गत किस का समावेश होता है ?
   उ०:- **व्यायाम, व्यवाय, अभ्यंग ।**
9. प्र०:- गंगाधर ने 'सात्म्य' शब्द से क्या अर्थ लिया है ?
   उ०:- **उपशय, सुखजनन, उपयोग ।**
10. प्र०:- चक्रपाणि अनुसार आदान व विसर्ग काल किसे कहते हैं ?
    उ०:- **जिस काल में पृथ्वी व प्राणियों के आप्य अंश की वृद्धि होती है उसे विसर्ग काल कहते हैं और जिस काल में पृथ्वी व प्राणियों के आप्य अंश का क्षपण होता है उसे आदान काल कहते हैं ।**
11. प्र०:- तिक्त, कषाय व कटु रस की अभिवृद्धि किस काल में होती है ?
    उ०:- **आदान काल ।**
12. प्र०:- ऋतुचर्या के प्रकरण में सबसे पहले हेमन्त ऋतु का वर्णन क्यों किया गया है ?
    उ०:- **क्योंकि इस ऋतु में ही सर्वाधिक बल होता है ।**
13. प्र०:- चक्रपाणि ने कायाग्नि से क्या ग्रहण किया है ?
    उ०:- **जठराग्नि ।**
14. प्र०:- अग्निमांद्य से कफ व पित्त का प्रकोप कैसे होता है ?
    उ०:- **अपाक व विदाह से क्रमशः**
15. प्र०:- वर्षा ऋतु में वात का प्रकोप किस प्रकार का होता है ?
    उ०:- **धातुक्षय जन्य ।**
16. प्र०:- शरद ऋतु में पित्त शामक उपक्रम किस क्रम से अपनाने चाहिए ?
    उ०:- **तिक्तघृत, विरेचन व रक्तमोक्षण ।**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

17. प्र०:- चक्रपाणि ने हंसोदक के दो अर्थ क्या किए हैं ?

उ०:- **(I) हंस का अर्थ है सूर्य व चन्द्रमा द्वारा शुद्ध किया गया जल ।**

(II) हंस के पीने के योग्य जल ।

18. प्र०:- 'ओक सात्म्य' से क्या अभिप्राय है ?

उ०:- **जो निरन्तर अभ्यास से सुखकर हो ।**

19. प्र०:- 'आमय' शब्द का और क्या अर्थ है ?

उ०:- **आम के हेतु ।**

20. प्र०:- अम्ल, लवण व मधुर रसों की वृद्धि किस काल में होती है ?

उ०:- **विसर्ग काल में ।**

21. प्र०:- जठराग्नि किस ऋतु में अधिक बलशाली होती है ?

उ०:- **हेमन्त ऋतु ।**

22. प्र०:- हेमन्त ऋतु में जब व्यक्ति पूर्ण आहार नहीं करता तो जठराग्नि क्या करती है ?

उ०:- **शरीर में स्थित धातुओं का पाक ।**

23. प्र०:- हेमन्त ऋतु में किस प्रकार के रसों से युक्त द्रव्यों का सेवन करना चाहिए ?

उ०:- **अम्ल व लवण रस युक्त द्रव्यों का ।**

24. प्र०:- प्रवाल, प्रमित आहार व उदमन्थ का सेवन किस ऋतु में वर्जित है ?

उ०:- **हेमन्त ऋतु ।**

25. प्र०:- भोजन के साथ प्रायः मधु का प्रयोग किस ऋतु में करने का निर्देश है ?

उ०:- **वर्षा ऋतु में ।**

26. प्र०:- वात, पित्त, कफ का प्रयोग किन-किन ऋतुओं में होता है ?

उ०:- **वर्षा, शरद व वसन्त में क्रमशः ।**

27. प्र०:- हंसोदक का प्रयोग किस में करना चाहिए ?

उ०:- **स्नान, पान व अवगाहन में ।**

28. प्र०:- ".....माल्यानि वासांसि विमलानि च..." यह किस ऋतु के लिए कहा गया है ?

उ०:- **शरद ऋतु के लिए ।**

29. प्र०:- उदमन्थ, दिवास्वप्न, अवश्याय व नदी जल का सेवन किस ऋतु में वर्जित है ?

उ०:- **वर्षा ऋतु में ।**

30. प्र०:- वर्षा ऋतु में प्रायः मधु का प्रयोग किस तरह करना चाहिए ?

उ०:- **पान, भोजन व संस्कार के रूप में ।**

31. प्र०:- मधुर, लघु, शीत व तिक्त भोजन का प्रयोग किस ऋतु में करना चाहिए ?

उ०:- **शरद ऋतु में ।**

32. प्र०:- हेमन्त व शिशिर ऋतु में से शीत किस ऋतु में अधिक होता है और क्यों ?

उ०:- **शिशिर ऋतु में, मेघ, वायु व वृष्टि के कारण शीत में वृद्धि होती है ।**

33. प्र०:- गुरु, अम्ल, स्निग्ध व मधुर आहार का प्रयोग किस ऋतु में निषिद्ध है ?

उ०:- **वसन्त ऋतु में ।**

34. प्र०:- "स्वादु शीतं द्रवं स्निग्धमन्नपानं तदा हितम्, ..." ये किस ऋतु में सेवन करने योग्य आहार हैं ?

उ०:- **ग्रीष्म ऋतु में ।**

35. प्र०:- हेमन्त ऋतु में किस प्रकार के पशु-पक्षियों के मांस सेवन का निर्देश है ?

उ०:- **औदक व आनूप देश में पैदा होने वाले**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राणियों का मांस व विलेशय का प्रसह पशु-पक्षियों का मांस ।

36. प्र०:- कटु, तिक्त कषाय, वातल व लघु आहार का निषेध किस ऋतु में किया गया है ?

उ०:- शिशिर ।

37. प्र०:- 'वमन' कर्म किस ऋतु में करवाना चाहिए ?

उ०:- वसन्त ऋतु में ।

38. प्र०:- जेन्ताक विधि से स्वेदन किस ऋतु में करना चाहिए ?

उ०:- हेमन्त ऋतु में ।

39. प्र०:- वसा, तैल, अवश्याय, औदक, आनूप मांस, क्षार, दधि आदि के प्रयोग का निषेध किस ऋतु में किया गया है ?

उ०:- शरद ऋतु में ।

40. प्र०:- किस के उदय होने पर हंसोदक उत्पन्न होता है ?

उ०:- अगस्त्य ।

41. प्र०:- लवण, अम्ल, कटु व उष्ण द्रव्यों के प्रयोग का निषेध किस ऋतु में किया गया है ?

उ०:- ग्रीष्म ऋतु में ।

42. प्र०:- 'दिन में शीतगृह एवं रात में चन्द्रमा की किरणों का सेवन करना' यह निर्देश किस ऋतु मे के लिए है ?

उ०:- ग्रीष्म ऋतु के लिए ।

खिलते यौवन के निशान भला चेहरे पर आए क्योंकर ?

यौवन के साथ-साथ मुहासों का आना भी स्वाभाविक है, पर इनके इलाज के लिए क्रीम आदि से भी पूरी बात नहीं बनती । ये त्वचा की सतह पर ही काम करती है, समस्या की जड़ तक नहीं पहुंच पातीं और इसके कारण कभी-कभी रह जाते हैं भद्दे निशान । बैद्यनाथ सुरक्ता रक्त साफ कर, त्वचा में निखार लाती है और आपके चेहरे की दमक बन जाती है खिलते यौवन की निशानी ।

बैद्यनाथ

सुरक्ता

कील मुहांसों के लिए

हर्बल रक्त शोधक

सुन्दर त्वचा भीतर से निखरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आरोग्य समाचार

खेल-खेल में ठीक हो सकते हैं बच्चों के कान

कम्प्यूटर गेम से संभव है विकास

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार एक ऐसा कम्प्यूटर गेम विकसित किया गया है जिससे बच्चों की श्रवण-शक्ति बढ़ायी जा सकती है । पत्रिका 'न्यू साइंटिस्ट' में कम्प्यूटर गेम को विकसित करने वालों ने दावा किया है कि इसके जरिये महज कुछ हफ्तों में ही बच्चों के सुनने की क्षमता बढ़ जायेगी । 'फोनोमेना' नामक कम्प्यूटर गेम को ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के डेविड मूर ने बनाया है । मूर ने कहा कि मैंने जो कम्प्यूटर गेम विकसित किया है उससे किसी बच्चे का फायदा हो सकता है । यह दीगर है कि अन्य विशेषज्ञों ने इस सिलसिले में अभी कुछ नहीं कहा है । उनका कहना है कि इसका परीक्षण जारी है और जब तक कोई परिणाम सामने नहीं आ जाता तब तक कुछ कहने का कोई फायदा नहीं है । इधर, मूर का कहना है कि मेरे 'फोनोमेना' का मुख्य उद्देश्य भाषा और ध्वनि के बीच सामंजस्य पैदा करना है ताकि बच्चों के सुनने-समझने में कोई दिक्कत न हो । मूर ने बताया कि 'फोनोमेना' में ऐसी व्यवस्था है कि किसी भी अक्षर या शब्द की ध्वनि पूरी तरह स्पष्ट हो जाती है । इससे बच्चा उसे अच्छी तरह सुन लेता है ।

मधुमेह से मुक्ति के लिए व्यायाम जरूरी

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार मधुमेह रोग (डॉयबिटीज) से बचने के लिए व्यायाम जरूरी है । स्वास्थ्य विशेषज्ञों का कहना है कि आमतौर पर 40 वर्ष की उम्र के बाद लोगों में यह रोग तेजी से घर करता है । लोग घबड़ाहट में तमाम दवायें गले के नीचे उतार लेते हैं लेकिन कोई फायदा न होने पर वे हताश हो जाते हैं । उन्होंने सलाह दी कि अगर मधुमेह रोगी अपने इन्सुलिन का स्तर सामान्य रखना चाहता है तो वह लगातार व्यायाम करता रहे । 'मॉयो क्लिनिक' की ओर से कराये गये अध्ययन से पता चला है कि 40 वर्ष की आयु के बाद मधुमेह का रोगी बनने वालों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है । अध्ययन में शामिल स्वास्थ्य विशेषज्ञों ने सलाह दी कि अगर ये मरीज एरॉबिक एक्सरसाइज प्रमुखता से करें तो उन्हें काफी राहत होगी । साथ ही, वे अपने इंसुलिन स्तर को नियंत्रित कर सकते हैं । अध्ययन में 21 से 87 वर्ष आयु के 65 पुरुष और महिला को शामिल किया गया । स्वास्थ्य विशेषज्ञ के. श्रीकुमारन ने बताया कि अध्ययन में शामिल लोगों से एरॉबिक एक्सरसाइज कराई गई । इस दौरान पता चला कि मध्य आयुवर्ग के लोगों का इंसुलिन स्तर इस व्यायाम से बिल्कुल नियंत्रित रहा ।

चीर-फाड़ न कराएं गर्भवती महिलाएं

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार गर्भवती महिलाएं अगर चीर-फाड़ प्रक्रिया को नजरअंदाज करें तो वे अविकसित बच्चे को जन्म देने सहित 'पीरिओडॉन्टल' (दांतों को कमजोर करने वाला रोग) के खतरे से बच सकती हैं । यह खुलासा 'पीरिओडॉन्टॉलोजी' पत्रिका में प्रकाशित शोध रिपोर्ट में किया गया । अध्ययन में करीब 366 गर्भवती महिलाओं को शामिल किया गया, सभी 'पीरिओडॉन्टल' रोग से ग्रसित थीं । इस दौरान 84 प्रतिशत महिलाओं ने चीर-फाड़ की बजाय 'स्केलिंग एण्ड रुट प्लानिंग' विधि को महत्व दिया । नतीजा : अविकसित बच्चों के जन्म में कमी आने के साथ ही गर्भवती महिलाओं में 'पीरिओडॉन्टल' रोग न के बराबर रहा ।

भूख न मिटना भी दिमागी खराबी के लक्षण

मानसिक शैथिल्य की प्रक्रिया बिगड़ने से नहीं मिटती है भूख

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार एक मानव मस्तिष्क मनपसंद भोजन मिलने की खुशी को मानसिक रूप से असंबद्ध प्रेरकों से जोड़ सकता है और पेट भर जाने के बाद इस संबंध को शिथिल भी कर सकता है । विज्ञान पत्रिका साइंस में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार, इंस्टीच्युट ऑफ न्यूरोलाजी के शोधकर्ताओं ने इस बात का पता लगा लिया है कि यदि मानसिक शैथिल्य की यह प्रक्रिया ठीक से काम नहीं करती तो व्यक्ति में पेट भर जाने के बाद भी खाने की इच्छा बनी रहती है । इस निष्कर्ष से भोजन को विसंगतियों और आदतों के अध्ययन में मदद मिलने की उम्मीद है । इस रिपोर्ट के लेखक जे गॉटफ्राइड के अनुसार दृश्य, ध्वनि और अन्य प्रेरकों के जरिये भोजन मिलने की उम्मीद के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ मानसिक सम्पर्क शिथिल न हो पाने की दशा जबरन ठूंस-ठूंस कर खाने की प्रवृति में अहम भूमिका निभा सकती है । गॉटफ्राइड का कहना है कि मस्तिष्क की सम्पर्क शिथिल करने की प्रवृत्ति या कंडीशनिंग अन्य वस्तुओं तक फैल सकती है । जितनी आसानी से हम सुख प्रदान करने वाली वस्तुओं से जुड़ जाते हैं, उससे इस बात का पता लगता है कि आखिर शराब या किसी नशे के आदी लोगों के लिए संबंधित वस्तुएं देखने के बाद अपनी लत पर काबू पाना इतना कठिन क्यों हो जाता है । ऐसी स्थिति में भोजन और अन्य प्रेरकों के बीच सम्पर्क जुड़ने की क्षमता अध्ययन का मूल भाग है, जो एक हद तक सभी जीवों में समान रूप से पाया जाता है । गॉटफ्राइड और उनके सहयोगियों ने इस बात का पता लगा दिया है कि पेट भर जाने के बाद मस्तिष्क कुछ सम्पर्कों को ढीला छोड़ देता है ।

मिर्गी से बचाव के लिए दौरे से पूर्व लक्षणों की पहचान जरूरी

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार मिर्गी आम तौर पर युवाओं को होने वाला एक ऐसा रोग है, जिसमें मरीज को बारम्बार बेहोशी के दौरे पड़ते हैं । मिर्गी के रोगियों के साथ सबसे बड़ा खतरा इस बात का होता है कि वे दौरा पड़ने के समय गिर कर, अपनी जीभ काट कर या आसपास की वस्तुओं से टकरा कर अपने आपको चोट पहुंचा सकते हैं । मिर्गी के रोगियों का चेहरा पीला पड़ सकता है, उनकी आंखों की पुतलियां स्थिर हो जाती हैं और फिर वह कुछ सेकेंड के लिए बेहोश हो जाता है । लेकिन जल्दी उठकर वह फिर से अपना कामकाज ऐसे करने लगता है, मानो कुछ हुआ ही न हो । मिर्गी का दौरा पड़ने के पहले मरीज में कुछ लक्षण प्रकट होने लगता है, जिन्हें देख कर यह समझा जा सकता है कि अब दौरा पड़ने वाला है और उस समय कुछ सावधानियां बरत कर या दवाएं लेकर दौरे से बचा जा सकता है । दौरे के समय नजर आने वाले लक्षण क्रमिक रूप से इस प्रकार हैं । 1- सबसे पहले मरीज बेहोश हो कर गिर जाता है । इस समय कभी-कभी वह जोर से चीखता भी है । 2- शरीर कुछ सेकेंड के लिए अकड़ जाता है और चेहरा ऐंठ जाता है । 3- फिर मरीज को पूरे वेग से दौरा पड़ता है । उस समय मरीज आसपास की चीजों से टकरा कर अपने आपको घायल भी कर सकता है । रोगी के जबड़े भिंच जाते हैं, जिससे उसकी जुबान कटने का खतरा पैदा हो जाता है । कभी-कभी मरीज पेशाब या मलत्याग भी कर देता है । 4-रोग का दौरा कुछ मिनट तक चलता है औ फिर बेहोशी दूर हो जाती है । इसके बाद मरीज उनींदा या भ्रमित सा नजर आने लगता है । वह कुछ समय तक अजीबोगरीब ढंग से काम करता है ।

हारमोन से घट सकता है एक तिहाई मोटापा

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार मोटे व्यक्तियों के लिए एक खुशखबरी । वैज्ञानिकों ने एक ऐसे हारमोन का पता लगाया है जो एक-तिहाई मोटापा घटने में कामयाब होता है । बृहस्पतिवार को न्यू इंगलैण्ड जर्नल ऑफ मेडिसीन पत्रिका में प्रकाशित एक शोध रिर्पोट में यह दावा किया गया है । पीवाईवाई 3-36 नाम के इस हारमोन की यदि कुछ अतिरिक्त मात्रा किसी मोटे व्यक्ति को दे दी जाय तो उसके मोटापे में काफी कमी हो जाती है । दरअसल, यह हारमोन सेवन करने वाले व्यक्ति के मस्तिष्क को यह संकेत देता है कि उसे कितनी मात्रा में भोजन लेने के बाद खाना बंद कर देना चाहिए । इससे उस व्यक्ति के खुराक में एक तिहाई तक की कमी आ जाती है । परिणामस्वरूप मोटापा कम हो जाता है । इस खोज को मोटापे के ईलाज के लिए काफी महत्वपूर्ण माना जा रहा है । अनुसंधानकर्ता डा. स्टीफेन आर ब्लूम ने बताया कि यह हारमोन मोटे एवं दुबले व्यक्ति पर सामान रूप से कारगार होता है ।

स्पांडिलाइटिस में व्यायाम से लाभ ज्यादा

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार उठने-बैठने का सही तरीका न अपनाने से इन दिनों स्पांडिलाइटिस की बीमारी आम होती जा रही है । चिकित्सकों का कहना है कि इस रोग में दवाओं से व्यायाम ज्यादा काम करता है । चिकित्सकों के अनुसार,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस रोग में हाथों को पीछे की ओर गति देते समय लचीलापन होना बहुत जरूरी है । इससे ग्रीवा तंत्रिकाओं का तनाव कम होता है । इसके लिए हाथों को पीछे की ओर किसी बार को पकड़ने की मुद्रा में रखा जाता है, और हथेलियां जमीन के ओर होती हैं । इससे उरोस्थि और रीढ़ की हड्डी के पीठ वाले हिस्से खुल जाते हैं । यदि रीढ़ के मध्य भाग में लचीलापन है, तो स्पांडिलाइटिस के लक्षण नियंत्रित हो जाते हैं । इसके अलावा शरीर को मोड़ने वाले आसन भी रीढ़ की हड्डी के पीठ और ग्रीवा के स्थान वाले हिस्सों का कड़ापन दूर करने में काफी सहायक सिद्ध होते हैं । इन आसनों से कठोरता और दर्द दूर करने में मदद मिलती है और गरदन को घुमाव देने वाला हिस्सा नर्म और लचीला हो जाता है ।

वैक्सीनों के पारे से नहीं होता ऑटिज्म

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार डेनमार्क के अध्ययन के अनुसार, छोटे बच्चों में देर होने वाले आंशिक गूंगेपन की बीमारी (ऑटिज्म) का बचपन में दिये जाने वाले पारायुक्त रोग प्रतिरोधक टीकों से कोई संबंध नहीं है । शोधकर्ताओं ने ऑटिज्म पर डेनमार्क के तीन दशक के राष्ट्रीय आंकड़ों का अध्ययन करने के बाद पाया कि इस आंशिक रूप से गूंगेपन की बीमारी का वैक्सीनों में दवाओं को सुरक्षित रखने के काम आने वाले पारे से बने मिश्रण थिमरोसाल से कोई संबंध नहीं है और यह बीमारी न्यूरोलॉजिकल डिसआर्डर से होती है । बचपन में दी जाने वाली वैक्सीनों में पारे की मौजूदगी पर इस रोग को पैदा करने वाले के रूप में अंगुली उठाई गई थी ।

जीभ की तंत्रिकाएं देती हैं दिल का दर्द

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार पेन स्टेट कॉलेज ऑफ मेडिसिन के शोधकर्ताओं ने निष्कर्ष निकाला है कि कोई मसालेदार वस्तु खाने पर मस्तिष्क में जलन की अनुभूति दर्ज कराने वाली जीभ की तंत्रिकाएं ही हृदयाघात होने पर सीने में होने दर्द के लिए भी जिम्मेदार होती हैं । जरनल ऑफ फीजियोलॉजी में प्रकाशित एक अध्ययन में एनेस्थियोलॉजी के प्रोफेसर हुई लिनपान से दावा किया है कि हमारे अध्ययन से ही पहली बार प्रमाणित हुआ है कि तीखी मिर्च की अनुभूति कराने वाली ये तंत्रिकाएं एंजाइना पेक्टोरिस जैसे पुराने सीने के दर्द में इलाज के लिए नया केन्द्र बिन्दु बन सकती हैं । अध्ययन के अनुसार, हृदयाघात तब होता है जब रक्तवाहिनियों के अवरूद्ध हो जाने से हृदय को पर्याप्त मात्रा में ऑक्सीजनयुक्त रक्त नहीं मिल पाता । इसके कारण हृदय से ब्रेडिकिनिन जैसे रसायनों का उत्सर्जन होने लगता है, जिसकी वजह से रक्तवाहिनियां फैल या फूल जाती है, ताकि हृदय को रक्त प्रवाह अधिक हो सकें ।

बैद्यनाथ

दशमूलारिष्ट

तेज बल एवं कान्ति बढ़ाने में प्रसिद्ध । संग्रहणी, मंदाग्नि, अरुचि, उदर रोग, खांसी, दमा, कमजोरी आदि रोगों की शास्त्रोक्त दवा है । इससे बल और कान्ति बढ़ती है तथा शरीर पुष्ट होता है । प्रसव के बाद इसके सेवन द्वारा माताएं अपने और शिशु के स्वास्थ्य की रक्षा करती है ।

बैद्यनाथ

अशोकारिष्ट

कमर दर्द, पेट दर्द, बुखार सा होना, आंखों, हाथों, पैर के तलुओं की जलन, भूख न लगना तथा ऋतु धर्म के समय होने वाली तकलीफ व बेचैनी इसके सेवन से दूर हो जाती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके पत्र

सेवा में,

श्रीमान् सम्पादक
सचित्र आयुर्वेद
पटना

महाशय

राजस्थान में चिकित्सकों को बधुआ मजदूर की तरह व्यवहार 1967 से आयुर्वेदरत्न/वैद्य विशारद के चिकित्सकों के साथ हो रहा है । इस पत्रिका के माध्यम से माननीय श्रीमान राष्ट्रपति, श्रीमान उपराष्ट्रपति, श्रीमान प्रधानमंत्री, श्रीमान उपप्रधानमंत्री व गृहमंत्री जी से अनुरोध है कि क्या भारत की न्यायापालिका बिकी हुई है । यह देश की आजादी का जश्न मना रहा है परन्तु ये चिकित्सक 1967 से गुलामों की भांति व्यवसाय से वंचित, गुलाम की भांति हैं । क्या ये आजादी की बात करने वाले गुलामी से छुड़वा पायेंगे ?

भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद् द्वारा पारित केन्द्रीय परिषद् अधिनियम 17/11/83 के प्रभावी होने के वाद 67 का फैसला कर सकते हैं जो उनके अधिकार में ही नही हैं । आयुर्वेदरत्न/वैद्यविशारद की पंजीयन सुनिश्चित कर नहीं पाये कि राजस्थान सरकार मैट्रिक के बाद पैरा डाक्टर बनाने की घोषणा कर दी है जिसके लिए 20 करोड़ का प्रावधान भी आ गया । पेरा डाक्टर को किट मिलेगा दवा बाजार से लाकर मुनाफा पर बेच सकते हैं चिकित्सा व्यवसाय कर सकेंगे । पंजीयन जिला प्रमुख करेगा । इसमें क्या केन्द्रीय परिषद् अधिनियम को स्वीकार किया गया है ? अगर है तो डाक्टर का पढ़ाई करने की आवश्यकता नहीं क्योंकि मैट्रीक के बाद 500 रुपये प्रति माह प्रशिक्षुभत्ता के साथ 6 माह तक ट्रैनिंग लेकर पंजीकृत चिकित्सक बन जायेंगे । उन्होंने इन्डियन मेडिसिन बोर्ड को भी अंगूठा दिखा दिया ।

आयुर्वेदरत्न/वैद्य विशारद विशुद्ध आयुर्वेद पाठ्यक्रम पर मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा जारी नौकरी व पंजीयन प्रशासन की मर्जी पर है जब चाहे जारी कर दे जब चाहे हटा दे यह अनियमित करने की तरफ इंगित करता है । भारत सरकार के कानून मंत्री व सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश महोदय से आग्रह है 1967 से प्रताड़ित चिकित्सक को असंवैधानिक करार करने वाले केन्द्रीय चिकित्सा परिषद् दिल्ली से मुक्ति दिलाये ।

सन् 1967 के बाद के आयुर्वेद रत्न (वैद्य विशारद) के मान्यता के जांच के लिए राजस्थान इन्डियन मेडिसिन बोर्ड ने आयुर्वेद परामर्शदात्री समिति बोर्ड का गठन किया है जिसके प्रो० श्री वेद प्रकाश शर्मा जयपुर अध्यक्ष नियुक्त किये गये हैं । उन्हें पत्र प्रेषित किया है ।

परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है कि 1967 का वाद का फैसला आजतक न होना दुर्भाग्य है, परन्तु उन्हें उचित निर्देशन दे ताकि 1967 से प्रताड़ित चिकित्सक का उत्थान हो सके ।

(डा० सुनील राज)
राष्ट्रीय उपाध्यक्ष
अखिल भारतीय आयुर्वेद मंच
सूरतगढ़, राजस्थान

वैद्यनाथ

लाल तैल

बच्चों के मालिश का
परम गुणकारी तैल
सूखा रोग में अत्यन्त लाभकारी हैं

इसकी मालिश
बच्चों के सूखा रोग, हड्डियों की विकृति, स्नायु दुर्बलता आदि में अत्यंत लाभदायक है, बच्चों को तंदुरुस्त व फुर्तीला रखता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाराष्ट्र

पद्मश्री सुरेश चन्द्र चतुर्वेदी अमृत महोत्सव

चतुर्वेदी का सम्मान आयुर्वेद का सम्मान है : जयवंती बेन

मुम्बई [न.प्र.] । "आयुर्वेद के क्षेत्र में वैद्य पंडित सुरेश चन्द्र चतुर्वेदी जैसे चिकित्सकों और विद्वानों द्वारा किया गया कार्य सतत् जारी रहा तो आनेवाली सदी आयुर्वेद कहलायेगी । आयुर्वेद इस देश की विश्व को दी गयी अनुपम चिकित्सा भेंट है । आयुर्वेद जीवन को नवजीवन प्रदान करता है इसलिए मुझे लगता है कि आयुर्वेद को पांचवें वेद के रूप में मान्यता मिलनी चाहिए। वैद्य चतुर्वेदी का सम्मान आयुर्वेद का सम्मान है।" इन शब्दों में आयुर्वेद और आयुर्वेद जगत के निष्णात वैद्य पद्मश्री सुरेश चतुर्वेदी के अमृत महोत्सव के अवसर पर उनके प्रति अपनी भावनाएं व्यक्त कर रही थीं केन्द्रीय ऊर्जा राज्य मंत्री जयवंती बेन मेहता ।

सुपरिचित वैद्य श्री चतुर्वेदी के अमृत महोत्सव पर जुहू में आयोजित एक विशिष्ट समारोह में उनका नागरिक अभिनंदन किया गया और उनके द्वारा लिखी दो पुस्तकों का विमोचन श्रीमती जयवंती बेन और श्री बलदेव दास ने किया । इस अवसर पर श्री चतुर्वेदी को रजत स्मृति चिन्ह, शॉल और श्रीफल प्रदान कर इनका नागरिक अभिनंदन किया गया ।

समारोह के विशिष्ट अतिथि पूर्व केन्द्रीय मंत्री वेद प्रकाश गोयल ने इस अवसर पर श्री चतुर्वेदी के आयुर्वेद सम्बंधित प्रतिभा के साथ-साथ राजनैतिक और सामाजिक पहलुओं पर भी प्रकाश डाला । उन्होंने कहा कि यह सुखद बात है कि विश्व में आयुर्वेद के प्रति रूचि और चेतना बढ़ रही है । समारोह में उपस्थित वनस्पतियों के विकास के लिए विशेष प्रत्यन करने चाहिये । वैद्य श्री श्रीराम शर्मा ने श्री चतुर्वेदी की आयुर्वेद चिकित्सा के प्रति प्रतिबद्धता को रेखांकित करते हुए उनके दीर्घायु की कामना की ।

विशिष्ट अतिथि विश्वनाथ सचदेव ने श्री चतुर्वेदी द्वारा हर्बल अकादमी के माध्यम से किये जा रहे कार्य पर प्रकाश डालते हुए कहा कि उनका यह संकल्प है कि नीम को विश्व चिकित्सा में मान्यता मिले । उद्योगपति देशबंधु गुप्ता ने कहा कि आज के इस अवसर पर हम निश्चय करें कि हमारे देश के आयुर्वेद के उत्पाद विश्व भर में पहुंचे ।

इस अवसर पर देश भर की कई संस्थाओं और विशेष रूप से पधारे व्यक्तियों ने श्री चतुर्वेदी का अभिनंदन किया । अपने अभिनंदन का जवाब देते हुए श्री चतुर्वेदी ने कहा, "मैं ईश्वर से कामना करता हूँ कि मेरा शेष जीवन आयुर्वेद के माध्यम से रोगियों की सेवा में बीते ।" उन्होंने कहा कि मेरी अपनी संस्था "आरोग्य निकेतन" को आज मैं न्यास को समर्पित करता हूँ ।

समारोह के अध्यक्ष नंदकिशोर नौटियाल ने अनेक संस्मरण सुनाते हुए श्री चतुर्वेदी की सेवाओं को स्पष्ट किया और कहा कि इस उम्र में भी श्री चतुर्वेदी आयुर्वेद में अनुसंधान कार्य कर रहे हैं । समारोह के संयोजक कृष्णकुमार भैया ने उपस्थितों व्यक्तियों का स्वागत किया और अश्विनी कुमार जोशी ने समारोह का संचालन किया । इस अवसर पर श्री चतुर्वेदी को शुभकामनाएं देने वाले गण्यमान्य व्यक्तियों में प्रमुख थे विधायक चंद्रकांता गोयल, महावीर अधिकारी, अभिनेता चंद्रशेखर, रामनारायण सराफ, सुभाष कांता सावंत, डॉ. रामजी तिवारी, यज्ञ शर्मा, धर्मेश तिवारी, विनोद तिवारी आदि । श्रीकांत चतुर्वेदी ने इस अवसर पर प्राप्त संदेशों का पाठ किया । इस अवसर पर 100 से अधिक विभिन्न संस्थानों एवं महानुभावों द्वारा वैद्यजी का पुष्पाहार, शॉल, श्रीफल एवं उपहारों का द्वारा सम्मान किया गया ।

वैद्य मिलन समारोह संम्पन्न

गंगा आयुर्वेद निकेतन तथा गंगा चैरिटेबल ट्रस्ट (विरार) के तत्वावधान में 10 अगस्त 2003 को "वैद्य-मिलन" समारोह का आयोजन किया गया । इस समारोह में मुख्य अतिथि मुम्बई विश्वविद्यालय के पूर्व डीन वैद्य श्री दीनानाथ उपाध्याय, वैद्य श्री सी.एन.साठे, वैद्य श्री बिन्दवानी तथा अनेक गणमान्य वैद्यों ने अपने विचार व्यक्त किये । समारोह की अध्यक्षता युवा वैद्य राजेन्द्र राणावत ने की । संस्था के अध्यक्ष श्री. एम.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जोशीजी के दिशा निर्देश में समारोह के सफल निस्पादन में वैद्य यू.पी. सिंह ने सक्रिय भूमिका निभाई ।

इस समारोह में संस्था के अध्यक्ष/संस्थापक श्री जोशीजी ने वसई तालुका के ग्रामीण क्षेत्रों में बसे आदिवासी एवं गरीब जनता के लिए पंचकर्म सहित दवाखाना की स्थापना की घोषणा की तथा वैद्यों से अपील की कि यदि अधिकाधिक संख्या में वैद्यों का सहकार एवं सेवा प्राप्त हुई तो तालुका के हर एक गॉव से आयुर्वेद चिकित्सा के द्वारा रूग्णों और दीन दुखियों की सेवा के लिए कटिबद्ध एवं प्रयासरत है ।

मुम्बई वैद्य सभा
अभिनन्दन समारोह

दिनाक 19 जुलाई 2003 को भारत सरकार की भारतीय चिकित्सा व होम्योपैथी की सचिव माननीया श्रीमती मालती सिन्हा एवं महाराष्ट्र आरोग्य विज्ञान विश्वविद्यालय के नवनियुक्त कुलपत्ति, डॉ रवि बापट जी का हार्दिक अभिनन्दन समारोह मुम्बई वैद्य सभा, की ओर से किया गया ।

सर्व प्रथम मंगलाचरण वैद्यसभा के मंत्री वैद्य श्री प्रहलाद हरिभाटे ने किया । प्रस्तावना वैद्य श्री भी०के०पाध्येगुर्जर ने की । स्वागत वैद्य श्री हरि प्रसाद शर्मा ने किया । वैद्य श्री सुरेन्द्र चन्द्र जी चतुर्वेदी, आयुर्वेद संचालक, महाराष्ट्र के वैद्य श्री अनन्त धर्माधिकारीजी ने प्रासंगिक भाषण किये ।

महाराष्ट्र राज्य के महाविद्यालयों के संचालक एवं प्राचार्यगण बहुत-बहुत बड़ी संख्या में उपस्थित थे ।

एसोसियेशन आफ मेंजेमेन्ट एण्ड प्रिसिंपल आफ आयुर्वेद कॉलेज, महाराष्ट्र के सचिव डा० सतीश ने समस्याओं, के बारे में बतलाया ।

सचिव श्रीमती मालती सिन्हा जी ने मित्तल पुनर्वसु आयुर्वेद अस्पताल व कॉलेज, मुम्बई को देखकर बहुत ही प्रसन्नता व्यक्त की । उन्होंने बताया कि मेडिकल अस्पतालों के मरीजों को लाभ नहीं मिलने से इस अस्पताल में रोगियों को लाभ मिल रहा है । अपने उद्‌बोधन में उन्होंने उल्लेख किया कि कुलपति डॉ रवि बापट ने अपने उद्‌बोधन में मित्तल पुनर्वसु आयुर्वेदिक कॉलेज व अस्पताल को देखकर प्रसन्नता व्यक्त की ।

नयी दिल्ली
वैद्य शिरोमणि श्री बृहस्पतिदेव त्रिगुणा एवं वैद्य वाचस्पति श्री सुरेश चतुर्वेदी का दिल्ली में सार्वजनिक अभिनन्दन

नई दिल्ली के इन्डिया इन्टरनेशनल सेन्टर के सभागृह में आयुर्वेद अभिनन्दन समिति की ओर से आचार्य वृहस्पतिदेव त्रिगुणा दिल्ली एवं वैद्य श्री सुरेश चतुर्वेदी मुम्बई का सार्वजनिक अभिनन्दन समारोह आयोजित किया गया ।

इस समारोह के मुख्य अतिथि कर्नाटक के राज्यपाल महामहिम श्री त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी थे एवं अध्यक्षता माननीया श्रीमती शीला दीक्षित, मुख्यमंत्री, दिल्ली सरकार ने की ।

समारोह के स्वागताध्यक्ष श्री देशबन्धु गुप्त अध्यक्ष ल्युपिन, लोबोरेटरी, मुम्बई ने आचार्य त्रिगुणा जी एवं वैद्य चतुर्वेदी के साथ मुख्य अतिथि, अध्यक्ष एवं मंचासीन सभी विशिष्ट अतिथियों को शाल, कलश एवं स्मृत चिन्ह प्रदानकर हार्दिक स्वागत किया । इस अवसर पर उन्होंने आयुर्वेदीय औषधियों के अधिक निर्यात के सुन्दर अवसर एवं इसके सदुपयोग के लिए आयुर्वेद समाज एवं सरकार को तत्परता से काम करने का आह्वान किया ।

मुख्य अतिथि महामहिम श्री टी०एन० चतुर्वेदी जी ने आयुर्वेद की महत्ता और इससे समुचित लाभ उठाने के लिए सरकार एवं समाज को जागृत हो जाने का परामर्श देते हुए वैद्य त्रिगुणा जी द्वारा आयुर्वेद चिकित्सा के माध्यम से हो रही सेवाओं की भूरि-भूरि प्रशंसा की । उन्होंने बताया कि अनेक बार वैद्य श्री त्रिगुणा जी एवं उनके योग्य सुपुत्र वैद्य देवेन्द्र त्रिगुणा के चिकित्सा परामर्श से लाभान्वित होते रहे हैं ।

समारोह की अध्यक्ष श्रीमती शीला दीक्षित ने अपने बचपन में असाध्य जीर्ण प्रतिश्याय का सफल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इलाज आयुर्वेद के माध्यम से किये जाने का उल्लेख करते हुए दिल्ली में अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान स्थापित करने का दिल्ली सरकार का संकल्प बताया और इसे यथा शीघ्र प्रारम्भ करने की घोषणा की ।

समारोह के विशिष्ट अतिथि, श्री लक्ष्मीमल सिंघवी सांसद एवं विधिवेत्ता ने आयुर्वेद को अधिक युगानुरूप बनाने पर बल दिया । इस अवसर पर पूर्व लोक सभाध्यक्ष एवं कृषिमंत्री श्री बलराम जाखड़ जी ने आयुर्वेद में प्रयुक्त औषधीय वनस्पतियों के अधिक कृषिकरण पर बल दिया। गुरूकुल कांगडी विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो० स्वतंत्र कुमार ने आयुर्वेदीय औषधियों के निर्माण की प्रक्रिया पर अधिक ध्यान देने का आग्रह किया ।

प्रारम्भ में आयोजन समिति के सदस्य एवं अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के प्रधानमंत्री वैद्य शिवकुमार मिश्र ने अभिनन्दन किये जाने वाले दोनों आयुर्वेद मनीषियों का परिचय देते हुए उनके शतायु रहकर आयुर्वेद चिकित्सा के चमत्कार से रोग पीड़ित मानवता के कल्याण करते रहने की कामना की ।

अभिनन्दित दोनों विशिष्ट वैद्यों ने इस अभिनन्दन के लिए आभार प्रकट करते हुए वस्तुतः इसे आयुर्वेद समाज का अभिनन्दन बताया ।

अभिनन्दन समिति के अध्यक्ष एवं सुप्रसिद्ध पत्रकार एवं कवि श्री कन्हैयालाल नंदन जी ने समस्त कार्यक्रम का संचालन किया । ल्यूपिन लेबोरेटरी के श्री हरीश नरूला ने धन्यवाद ज्ञापन कर सभी अतिथियों को सुस्वाद जलपान के लिए आह्वान किया ।

Andhra Pradesh
Hyderabad
GOVERNOR'S BLESSINGS TO RUDRAKSHA THERAPY

Dr. K. Satyanarayana Swamy, Founder : Rudraksha Therapy and General Secretary : Of Indian Medicine Academy met the Andhra Pradesh State Governor His Excellency Shri Surjeet Singh Barnala on 6-9-2003 at Raj Bhavan, Hyderabad.

Dr. Swamy explained to the Governor in detail about the Natural medicinal qualities of Rudraksha in curing the Physical and Mental ailments and for balancing the Navagraha Super Powers. This therapy has no side effects,no reactions, after or bad effects specially in chronic diseases. This therapy maintains the balance of tridosas and Saptha Dhatus in the human body for perfect health. Dr. Swamy explained in detail various Rudraksha methods to cure High Blood Tension, Depression, Negative thinking, and for improving the memory power, self confidence, perfect control of diabetes, various skin and circulatory diseases.

Governor has shown his keen interest by hearing Rudraksha therapy for more than one hour with appreciation for scientific aspect of Rudraksha and gave his blessings and wished more and more people should get health by this therapy and informed that he got Rudraksha tree at his native place. Governor was also pleased to wear the medicated and meditated Shive Shakti Rudraksha Mala at the hands of Rudraksha Dr. Swamy amidst the chanting of Maha Mruyutnjaya Manthra, Shiva Shakti Vibhuti Tilak Dharana activating the Agna Chakra.

INVITATION TO JOIN AS MEMBER OF RUDRAKSHA THERAPY

RUDRAKSHA THERAPY has been found useful in the treatment of High Blood Pressure, High Cholestrol content in the blood & will save from heart diseases, various allergies, partial headache, neurological diseases, early stage of asthma, diabetes, cancer and many other circulatory and mental ailments, improves concentration, memory power and self confidence, eliminates unnecessary fears, anger, tension & anxiety. It develops right thinking, correct decision making & cordial talking powers, cures the sleep disturbances, depression & negative thinking - both as preventive and as curative. In chronic cases of long sufferings with

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

many complications and which could not be cured by and other medical systems. Rudraksha Medicines mixed with various herbs/Ayurvedic Medicines given internally not only imporves its effectiveness but cuts short the treatment period leading to speedy and early recovery. This therapy has no side effects & no other after or bad effects and has the qualities to maintain the balance of TRIDOSHA & SAPTHA DHATHUS in the body.

And thus, Rudraksha Therapy not only cures the disease by making normal functioning of NAVA RANDRAS of body but also keeps the body, mind and spirit in perfect healthy and in fitness. It also gives the prosperity to the Rudraksha user by balancing the NAVAGRAH Super Powers.

The founder of this Rudraskha Theraphy is institutionally highly qualified and traditionally trained Dhanvanthari Peetadhipathi, Rudraksha Shiromani, Ayurveda Chakravati Dr. K. Sathyanarayana Swamy is internationally known Rudraksha Ayurvedic expert doctor.

For further information Please contact :-

RUDRAKSHA AYURVEDIC INTERNATIONAL
(By Indian Medicine Academy)
1-1-782/B/2, Opp : Canara Bank,
P.O. : Gandhinagar, HYDERABAD - 500 080
Andhra Pradesh - India
Ph.No. 27613000, 24652545

राजस्थान
जयपुर
वेद प्रकाश शर्मा अध्यक्ष निर्वाचित

श्री शर्मा बोर्ड ऑफ इण्डियन मेडिसिन, राजस्थान के अन्तर्गत आयुर्वेद परामर्श दात्री समिति के अध्यक्ष निर्वाचित हुए हैं । कोई भी व्यक्ति वैद्य विशारद, आयुर्वेद रत्न आदि योग्यताओं के आधार पर सूचीबद्ध प्रमाण-पत्र या इससे सम्बन्धित अन्य जानकारी के लिए श्री शर्मा से सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं । उनका पता है :-

प्रो0 श्री वेद प्रकाश शर्मा
88-89 चुनाव भार शापिंग सेन्टर
शास्त्री नगर, जयपुर - 19

उत्तर प्रदेश (मुरादाबाद)
किशोरियों कोक आदि पेय पदार्थों का सेवन

71 चिकित्सकों व 15 सौन्दर्य विशेषज्ञ ने एक गोष्ठी में भाग लिया । आयोजनकर्ता डा०गोपाल चड्ढा थे। डा० ठाकुर ने कहा कोक आदि कोल्ड ड्रिक स्वास्थ्य के लिए घातक है । इसपर अति शीघ्र प्रतिबन्ध लगना चाहिये । लेडी डा० उषा ने कहा कोक आदि का प्रभाव किशोरियों के स्वास्थ्य पर विशेष पड़ता है । किशोरियों के दान्तों का अनमल धस जाता है जिससे ठंडा व गर्म जल दान्तों को लगता है मसूड़े कमजोर हो जाते हैं जिससे पायरिया का खतरा बढ़ जाता है । अत: सावधानी जरूरी है ।

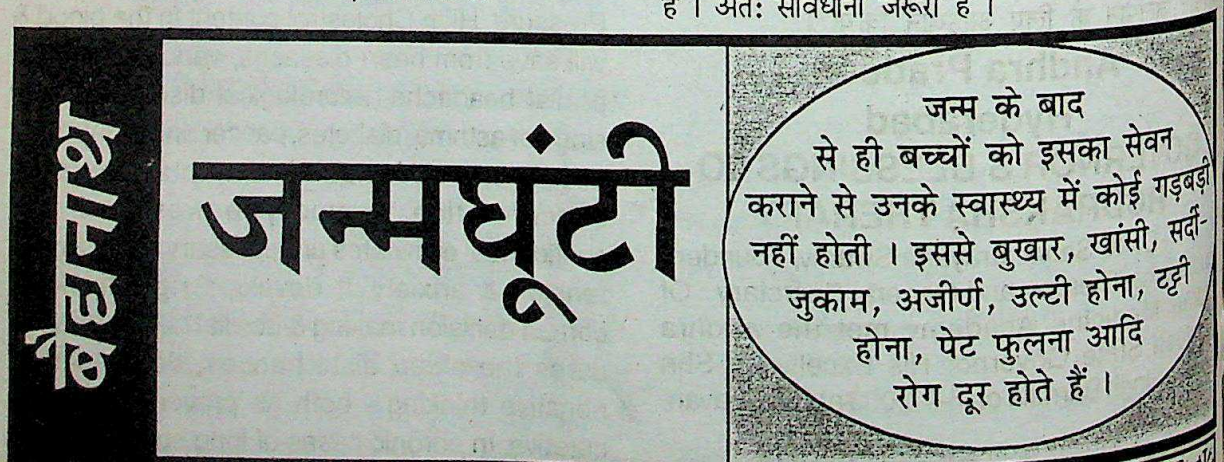

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सचित्र आयुर्वेद' के ग्राहक कृपया ध्यान दें ।

'सचित्र आयुर्वेद' के ग्राहकों से हमारा विनम्र निवेदन है कि जिनका चन्दा दिसम्बर' 2003 तक जमा है, दिसम्बर' 2003 का अंक मिलने के बाद उनका वार्षिक शुल्क समाप्त हो जायेगा । अत: निवेदन है कि अब वे यथाशीघ्र जनवरी, 2004 से दिसम्बर' 2004 तक की अवधि के लिए वार्षिक शुल्क 100 रुपया मनीआर्डर से निम्न पते पर भेज दें । इस प्रकार जिन ग्राहकों का वार्षिक शुल्क हमें प्राप्त हो जायेगा, उन्हें हम अलग से कोई कार्ड अथवा वी.पी. नहीं भेजेंगे । स्मरणीय है कि मनीआर्डर से चंदा भेजने पर केवल 100 रुपया ही देने पड़ेंगे जबकि वी.पी. भेजने पर वी.पी. चार्ज सहित कुल रकम 130 रुपये देने पड़ जायेंगे । इन अनावश्यक एवं अतिरिक्त खर्च से बचने का एकमात्र तरीका मनीआर्डर द्वारा वार्षिक चंदा यथाशीघ्र भेज देना है । अगर किसी ग्राहक महानुभाव को किसी कारणवश अग्रिम वर्ष 2003 से ग्राहक नहीं बनना हो तो वैसी सूचना वे तत्काल महानुभाव हमारी प्रार्थना पर तत्काल ध्यान देकर अपने निर्णय की सूचना इस कार्यालय को शीघ्र देंगे । यदि किसी कारणवश वार्षिक शुल्क में वृद्धि हुयी, तो यह वृद्धि उन ग्राहकों पर लागू नहीं होगी, जिन्होंने शुल्क भेज दिया है ।

नोट - जो ग्राहक छात्र हैं, वे अपने संस्थान से प्राप्त प्रमाण-पत्र के साथ रियायती वार्षिक शुल्क मात्र 75.00 रु. मनीआर्डर से भेज सकते हैं ।

व्यवस्थापक

सचित्र आयुर्वेद

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०, बैद्यनाथ भवन रोड, पटना - 800 001

बैद्यनाथ

आवेदन आमंत्रित करता है

स्व० रामनारायण वैद्य

संस्थापक : श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०

पुरस्कार

(वर्ष 2000-01-02-03)

आयुर्वेद की प्रगति व विकास के लिये

आयुर्वेदाचार्यो, लेखकों व विद्वानों से आमंत्रित है उनकी टाईप की हुई पांडुलिपियाँ अथवा अंग्रेजी, हिन्दी तथा संस्कृत में प्रकाशित मौलिक पुस्तकें जिनका आयुर्वेद साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान हो, अन्य भारतीय भाषाओं का अनुसंधान साहित्य व पुस्तकें जो उपरोक्त भाषाओं में अनुवादित हैं वे भी प्रतियोगिता के लिए स्वीकार्य होंगी । इनकी पांच नि:शुल्क प्रतियाँ निम्न पते पर 10 जनवरी 2004 तक पहुँच जानी चाहिए ।

पुरस्कार में रु० 1.5 लाख की राशि व भगवान धन्वन्तरि का स्मृति चिन्ह व सम्मान पत्र प्रदान किया जायेगा ।

मैनेजिंग ट्रस्टी

राम नारायण वैद्य आयुर्वेद रिसर्च ट्रस्ट

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०, ग्रेट नाग रोड, नागपुर - 440 009

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के रसशास्त्र विभाग द्वारा आयोजित राष्ट्रीय रसशास्त्र सेमिनार के मंच पर उपस्थित विशिष्ट विद्वानों का दृश्य । बायें से आडमा एवं श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० के निदेशक, श्री प्रमोद शर्मा, चिकित्सा विज्ञान संस्थान के निदेशक की ओर से डा० गजेन्द्र सिंह, राष्ट्रीय अनुसंधान एवं विकास निगम, नयी दिल्ली के प्रबन्ध निदेशक, श्री एन०के० शर्मा, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति, प्रोफ० पी० रामचन्द्र राव, आयुर्वेद-संकाय के डीन, प्रो० विद्याभूषण पाण्डेय एवं सेमिनार के आयोजन सचिव, डा० चन्द्रभूषण झा परिलक्षित हैं ।

आडमा के अध्यक्ष एवं श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० के निदेशक, श्री प्रमोद शर्मा महामना पं० मदनमोहन मालवीय की प्रस्तर प्रतिमा पर माल्यार्पण करते दिखलायी पड़ रहे हैं । उनके दायें आयुर्वेद संकाय के डीन डा० विद्याभूषण पाण्डेय गौर से देख रहे हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

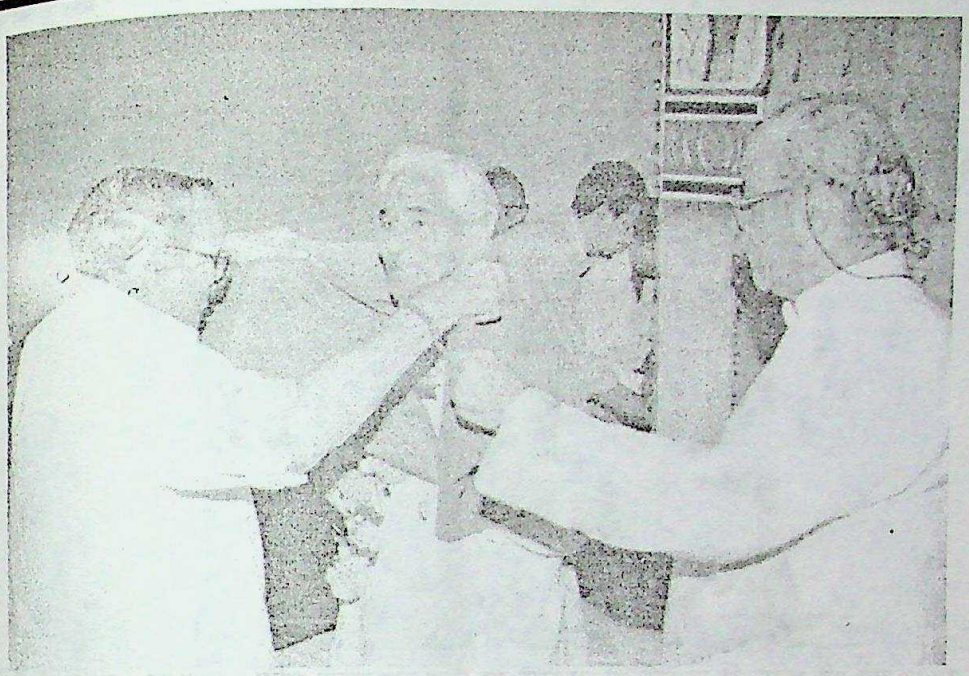

23 अक्टूबर 2003 को श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर वैद्य राधेलाल धमैनियां ''दीवान'' जी का सम्मान करते हुए बैद्यनाथ झाँसी प्रतिष्ठान के प्रबन्ध निदेशक, पं० बृजेन्द्र कुमार शर्मा (बाएं) एवं कार्यकारी निदेशक डा० पं० विश्वनाथ शर्मा (दाएं) तथा कार्यकारी निदेशक श्री अनुराग शर्मा परिलक्षित हो रहे हैं ।

23 अक्टूबर 2003 को श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर समारोहाध्यक्ष श्री अमर दत्त मिश्रा, डी०आई०जी० झाँसी का माल्यार्पण करते हुए डा०पं० विश्वनाथ शर्मा प्रतिष्ठान के कार्यकारी निदेशक बायीं ओर परिलक्षित हो रहे हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

23 अक्टूबर 2003 को श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर वैद्य रमाकान्त मणि, कानपुर (बीच में बैठे हुए) का सम्मान करते हुए बैद्यनाथ झांसी प्रतिष्ठान के प्रबन्ध निदेशक, पं० बृजेन्द्र कुमार शर्मा एवं कार्यकारी निदेशक श्री अनुराग शर्मा वैद्य जी के पार्श्व में प्रतिष्ठान के कार्यकारी निदेशक डा०पं० विश्वनाथ शर्मा परिलक्षित हो रहे हैं। माईक पर प्रतिष्ठान के महाप्रबन्धक श्री वाई०पी०शर्मा दिखलायी पड़ रहे हैं ।

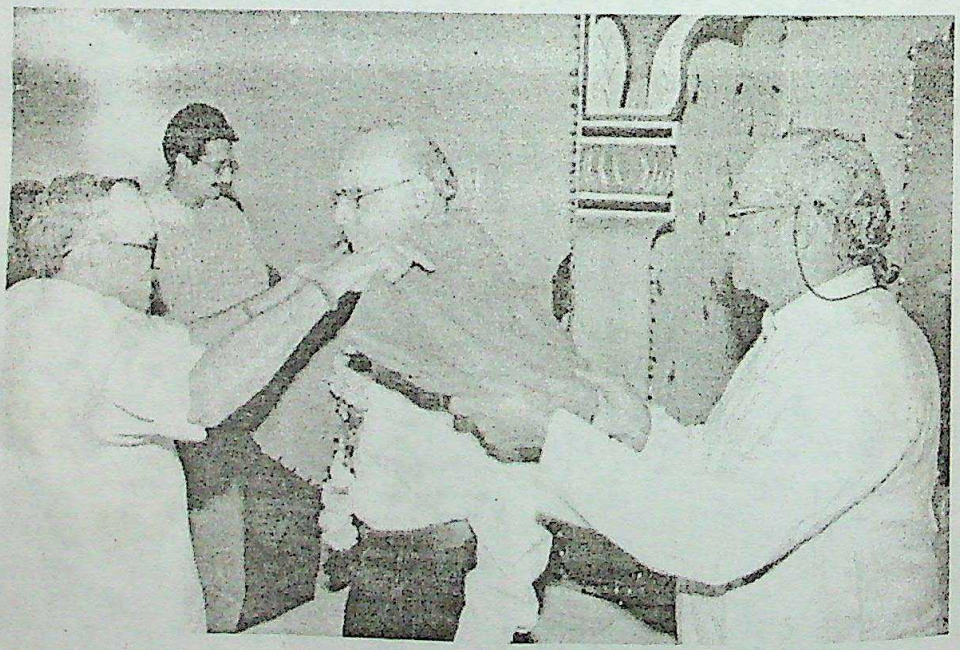

23 अक्टूबर 2003 को श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर डॉ० भूपेन्द्र शर्मा आयुर्वेदाचार्य, लश्कर (ग्वालियर) का सम्मान करते हुए बैद्यनाथ झांसी प्रतिष्ठान के प्रबन्ध निदेशक पं० बृजेन्द्र कुमार शर्मा (बाएं) एवं डा०पं० विश्वनाथ शर्मा, कार्यकारी निदेशक (दाएं) तथा श्री अनुराग शर्मा, कार्यकारी निदेशक परिलक्षित हो रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आडमा के अध्यक्ष एवं श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० के निदेशक, श्री प्रमोद शर्मा दीप प्रज्वलित करते दिखलायी पड़ रहे हैं । उनके दायें आयोजन सचिव, डा० चन्द्रभूषण झा एवं उनके बायें क्रम से चिकित्सा विज्ञान संस्थान के डा० गजेन्द्र सिंह, आयुर्वेद संकाय के डीन, डा० पाण्डेय एवं एन०आर०डी०सी० के प्रबन्ध निदेशक, श्री एन०के०शर्मा दिखलायी दे रहे हैं ।

सेमिनार के आयोजन सचिव, डा० चन्द्र भूषण झा एवं आयुर्वेद संकाय के डीन, डा० विद्याभूषण पाण्डेय समारोह के उद्घाटन के अवसर पर दीप-प्रज्वलित कर रहे हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०, पटना में धन्वन्तरि जयन्ती दिवस के पूजन कार्यक्रम के अवसर पर 'भवन' के कार्यपालक निदेशक, श्री रमाकान्त शर्मा, निदेशक श्री प्रमोद शर्मा एवं अध्यक्ष, श्री अरुण शर्मा दिखालायी पड़ रहे हैं ।

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०, पटना द्वारा आयोजित धन्वन्तरि जयन्ती-समारोह के अवसर पर आगत विद्वत् जन का स्वागत करते हुए परिलक्षित हैं - 'भवन' के अध्यक्ष श्री अरविन्द शर्मा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष प्रतिनिधि की रपट

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में रसशास्त्र पर राष्ट्रीय गोष्ठी सोल्लास एवं नये संकल्पों के साथ सम्पन्न

अनुसंधान के नये आयामों की खोज की जरूरत - विद्वत्जन !

वाराणसी (19 अक्टूबर, 2003 से 21 अक्टूबर, 2003)

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के विशाल सभागार (स्वतंत्रता भवन) में रसशास्त्र पर राष्ट्रीय विचार गोष्ठी आयुर्वेद के सिद्धान्तों के अनुरूप प्रारम्भ हुयी । यद्यपि आयुर्वेद के अनेक ग्रन्थों में विचार-मंथन का जिक्र है, किन्तु शाब्दिक दृष्टि से रस शब्द की व्याख्या एवं निष्कर्ष पर पहुंचने का जिक्र चरक संहिता के 26 वें अध्याय में है। इस मत पर यद्यपि विद्वत्जन विचार करें, तो निस्संदेह काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में आयोजित राष्ट्रीय रसशास्त्र सेमिनार कुछ हद तक इसी परिधि में आते हैं ।

हमारा आशय केवल विचार-गोष्ठी की पम्परा तक सीमित है, न कि चरक संहिता में वर्णित 'रस' शब्द और रसशास्त्रों में वर्णित 'रस' शब्द की तुलना करने से है। जो भी हो, रसशास्त्र पर राष्ट्रीय सेमिनार अत्यन्त सौहार्दपूर्ण वातावरण में प्रारम्भ हुआ । मंचासीन प्रमुख व्यक्तियों में से थे - सर्वश्री प्रमोद शर्मा, अध्यक्ष, आडमा (अखिल भारतीय आयुर्वेदिक औषधि निर्माता संघ सह निदेशक श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०)चिकित्सा विज्ञान संस्थान के निदेशक के प्रतिनिधि, प्रोफ० (डा०) गजेन्द्र सिंह, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी के आयुर्वेद संकाय के डीन, प्रोफेसर (डा०) विद्याभूषण पाण्डेय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति, डा० पी० रामचन्द्र राव एवं आयोजन सचिव, डा० चन्द्र भूषण झा (रीडर एवं विभागाध्यक्ष, रसशास्त्र विभाग, का०हि०विश्वविद्यालय) । छात्र/छात्राओं का एक दल जिनमें सर्वश्री एवं सुश्री रमेश पोखरे, शिवानी झा, रचना आदि शामिल थे, ने स्वागत-गान किया । मंचासीन सभी सम्मानित सदस्यों ने महामना पं० मदन मोहन मालवीय की प्रतिमा पर माल्यार्पण किया । तत्पश्चात् मुख्य अतिथि, कुलपति, आडमा के अध्यक्ष, चिकित्सा विज्ञान संस्था के निदेशक-प्रतिनिधि, आयुर्वेद संकाय के डीन एवं सेमिनार आयोजन सचिव का स्वागत फूलों की माला से सर्वश्री एवं सुश्री रानी अग्रवाल, सीता सिंह, डा० संजय कुमार, रश्मि वार्ष्णेय, अनीता सिंह एवं डा० अर्चना चौधरी ने किया । प्रतिनिधियों का स्वागत करते हुए डा०जी०सिंह ने बताया कि हर्बल औषधियों का कोई बुरा असर नहीं होता है । इसके बावजूद जैव रसायन विभाग से इसका सहयोग होना चाहिए । उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि आयुर्वेदिक औषधियों का मूल्य इतना होना चाहिए कि एक निर्धन भारतीय इसे खरीद कर सके । आयुर्वेद संकाय के डीन, डा० पाण्डेय ने बताया कि हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना के पीछे एकमात्र उद्देश्य आयुर्वेद सहित सभी विधाओं को विकसित करना था । सम्प्रति आयुर्वेद संकाय के अन्तर्गत चिकित्सालय में 125 शय्या है । विद्वानों के मध्य शैक्षणिक आदान-प्रदान होता है । रसायनशास्त्र एवं भेषज शास्त्र पर विचार-विमर्श होता है । गुजरात आयुर्वेद विश्वविद्यालय ने अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों के द्वारा आयुर्वेद की शिक्षा दी और लोगों का ध्यान आकृष्ट किया है । उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि आयुर्वेदिक औषधियों का मानकीकरण अनिवार्य है ।

सेमिनार के आयोजन सचिव, डा० चन्द्र भूषण झा ने विस्तार से सेमिनार के उद्देश्यों पर प्रकाश डाला । उन्होंने महामना पं० मालवीय को श्रद्धा निवेदित करते हुए कहा कि वर्ष 1916 में इस विश्वविद्यालय की स्थापना करके उन्होंने राष्ट्र की महान सेवा की । भगवान शिव के त्रिशूल पर अवस्थित भगवान शिव एवं रसशास्त्र का आपसी सम्बन्ध काफी घनिष्ठ है । इसी दृष्टिकोण से रसशास्त्र विभाग की स्थापना के रजत जयन्ती वर्ष के अवसर पर सेमिनार आयोजित करने का निर्णय लिया था । वर्ष 1924-25 में आयुर्वेदिक फार्मेसी एवं वर्ष 1924 में सर सुन्दरलाल हास्पीटल की स्थापना की गयी थी । वर्ष 1927 में इस प्रांगण में आयुर्वेद महाविद्यालय की स्थापना की गयी थी । वर्ष 1963 में आयुर्वेद के स्नातकोत्तर कक्षा प्रारम्भ करते समय रसशास्त्र विभाग द्रव्यगुण विभाग से सम्बन्धित था, किन्तु इसके महत्व को देखते हुए वर्ष 1978 में पृथक विभाग के रूप में रसशास्त्र की स्थापना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की गयी । सम्प्रति इस विभाग में पुस्तकालय, अजायब घर, प्राणि गृह (एनिमल हाउस), समुन्नत प्रयोगशाला, औषधि निर्माण के मानकीकरण एवं सूत्रीकरण के लिए आवश्यक मशीन एवं अन्य सुविधायें उपलब्ध हैं । विभाग का विभाजन - निम्नलिखित उपविभागों में किया गया है - भेषजिक, विश्लेषण, प्रयोगात्मक एवं आतुरालयी । अपने भाषण में डा० झा ने सभी विभागों के क्रियाकलापों, गतिविधियों एवं प्रगति पर विस्तार से प्रकाश डाला । उन्होंने बताया कि हाल ही में राज्य सभा में एक प्रश्न पूछा गया था कि आयुर्वेदिक औषधियों के अन्तः प्रयोग के लिए टनों स्वर्ण का प्रयोग किया जाता है, ताकि गम्भीर व्याधियों का इलाज इन औषधियों से किया जा सके । इस सम्बन्ध में भारतीय चिकित्सा पद्धति एवं होम्योपैथी विभाग ने जो आंकड़ें मांगें, उन्हें दिये गये ताकि केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री पूछे गये प्रश्न का समुचित उत्तर दे सकें । उन्होंने आयुर्वेद फार्मेसी के क्रियाकलापों पर विस्तार से प्रकाश डाला, किन्तु इस बात पर दुख प्रकट किया कि विभाग को हमेशा अनुसंधान के लिए धन की कमी रही है ।

इस अवसर पर समारोह को सम्बोधित करते हुए भारत सरकार के राष्ट्रीय अनुसंधान और विकास निगम के श्री एन.के. शर्मा ने कुछ आश्चर्यजनक जानकारी दी । उन्होंने बताया कि उनकी सलाह पर आई०आई०टी०, खड़गपुर ने आधुनिक चिकित्सकों (मेडिकल डॉक्टर्स) को इंजीनियरिंग का प्रशिक्षण देने के लिए एक वर्ष का पाठ्यक्रम निर्धारित किया है । आज युग तेजी से बदल रहा है । कोई भी विधा - केवल एक विधा तक सीमित नहीं रह गयी । आयुर्वेद को भी परिवर्तन स्वीकार करना पड़ेगा । चीन में आधुनिक चिकित्सकों को भी एक वर्ष का प्राचीन चीनी चिकित्सा विज्ञान का पाठ्यक्रम पढ़ना पड़ता है । हमारी संस्था रसशास्त्र विभाग के साथ मिलकर एक या दो संयुक्त कार्यक्रम करना चाहती है ।

इस अवसर पर आडमा के अध्यक्ष एवं श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० के निदेशक, श्री प्रमोद शर्मा ने इस बात पर जोर दिया है कि आज औषधि -निर्माण की प्रक्रिया के मानकीकरण की आवश्यकता है ।

हमारे शास्त्रों में औषधि निर्माण की जिस प्रक्रिया का वर्णन है, उस प्रक्रिया से औषधि निर्माण में काफी समय लगता है । हमें ऐसी प्रक्रिया की खोज करनी चाहिए जिससे कम समय में ज्यादा से ज्यादा औषधि का निर्माण कर सकें । हमें इस बात की भी सावधानी रखनी चाहिए कि जल्दीबाजी के चक्कर में औषधियों की गुणवत्ता पर कोई असर नहीं हो । आज रस-भस्मों की मांग काफी बढ़ रही है । इस बढ़ती हुयी मांग की पूर्त्ति करने के लिए उत्पादन में भी वृद्धि होनी चाहिए । काशी हिन्दू विश्वविद्यालय विद्वानों एवं शोधकर्मियों का स्थान है । विश्वविद्यालय उद्योगों की आंकाक्षों को पूरा करने में सहयोग कर सकता

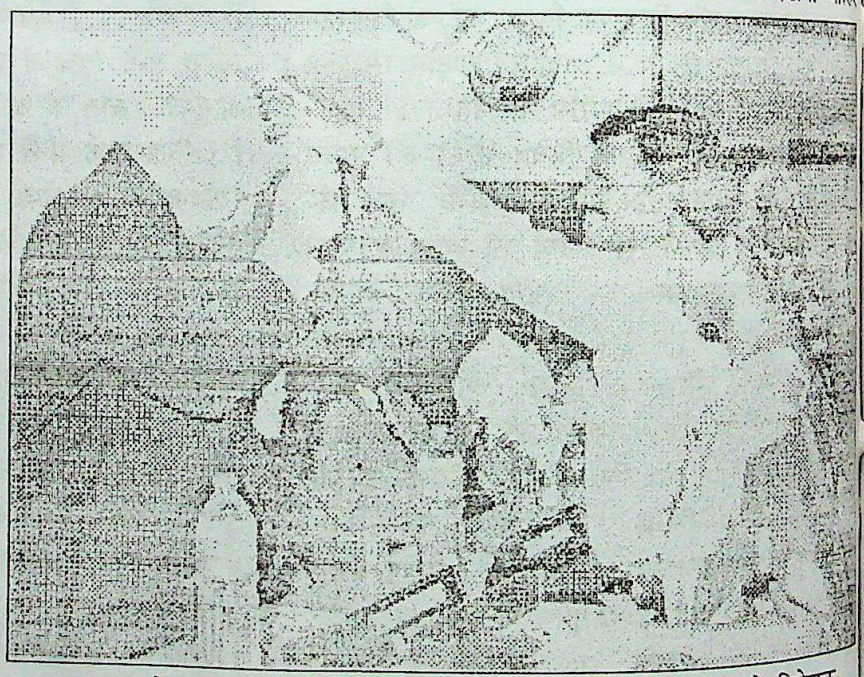

आडमा के अध्यक्ष एवं श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० के निदेशक, श्री प्रमोद शर्मा का स्वागत माल्यार्पण से आयोजकगण कर रहे हैं ।

(शेषांश पृ०सं०-370 पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औषधि-क्षेत्र में नोबेल पुरस्कार विजेताओं का हार्दिक अभिनन्दन ।

चुम्बकीय अनुनाद प्रतिच्छाया (एम.आर.आई.) की खोज

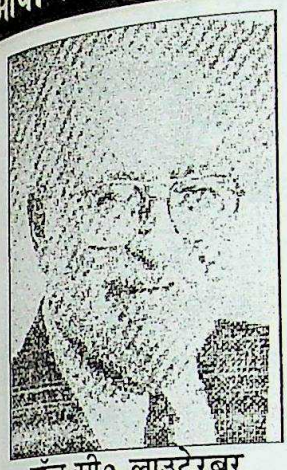

पॉल सी० लाउटेरबर

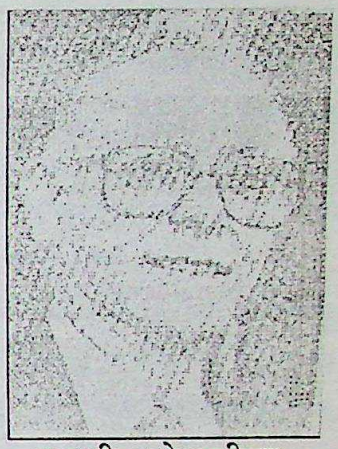

सर पीटर मेन्सफील्ड

अरबाना (अमेरिका) स्थित इलिनॉयस विश्वविद्यालय के जैव चिकित्सीय चुम्बकीय अनुनाग प्रयोगशाला के 74 वर्षीय पॉल सी० लाउटेरबेर ने खोज की कि चुम्बकीय क्षेत्र में दो पक्षीय आयाम (तस्वीर) उत्पन्न करने की सम्भावना हो सकती है ।

ब्रिटेन स्थित नॉटिंघम विश्वविद्यालय के प्राध्यापक 70 वर्षीय सर पीटर मेन्सफील्ड ने बताया कि चुम्बकीय क्षेत्र के उत्तर में किस प्रकार शरीर संकेत प्रेषित करता है जिसका विश्लेषण गणितीय ढंग से हो सकता है । इस तरह उन्होंने प्रतिच्छाया विकसित करने की तकनीक की खोज की ।

वस्तुत: सोमवार तदनुसार अक्टूबर 6, 2003 समस्त चिकित्सा जगत् के लिए सुखद दिवस था जब नोबेल पुरस्कार चयन समिति ने इस वर्ष औषधि-क्षेत्र में उपर्युक्त दोनों विज्ञानियों के चुम्बकीय अनुनाद प्रतिच्छाया (एम.आर.आई.) के क्षेत्र में अवदान के लिए पुरस्कार की घोषणा की । पुरस्कार समिति ने कहा कि प्रतिवर्ष 60 मिलियन एम.आर.आई. के सम्बन्ध में खोज की जाती है । इस खोज से निदान क्षेत्र एवं अनुसंधान क्षेत्र में काफी मदद मिलेगी । समिति ने कहा कि इस खोज से पता चला है कि शरीर में उपस्थित तन्तु (टिशु) को एम.आर.आई. रेडियो ट्रांसमीटर में बदल सकती है । इसका कारण यह है कि जल के अणुओं में हाइड्रोजन अणु पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं । इन अणुओं की मदद से एम. आर.आई. मानव शरीर के आन्तरिक अंगों की तस्वीर ले सकता है ।

इस खोज का सर्वोत्तम पक्ष यह है कि यह सर्वाधिक सुरक्षित प्रक्रिया है । इस प्रक्रिया में विकिरण आयन से कोई सम्बन्ध नहीं रहता है । इस तकनीक से मस्तिष्क और स्पाइनल कोर्ड की खराबी का पता लगाया जा सकता है। सभी प्रकार की मस्तिष्क विकृतियां जल में परिवर्तन करती हैं जिसकी तस्वीर एम.आर.आई. में आ जाती है । जल की मात्रा में तनिक भी परिवर्त्तन व्याधिकीय परिवर्तन की ओर संकेत देता है । इस खोज से कैन्सर के निदान एवं चिकित्सा में भी मदद मिलेगी । प्रतिच्छाया स्पष्टत: बता सकती है कि गांठ कहां तक फैली हुयी है और शल्य क्रिया तथा विकिरण क्रिया से किस हद तक सहायता मिल सकती है । शल्य क्रिया से पूर्व यह पता लगाना आवश्यक होता है कि ट्यूमर कहां तक फैला हुआ है । इस क्रिया में एम.आर.आई. मदद कर सकती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

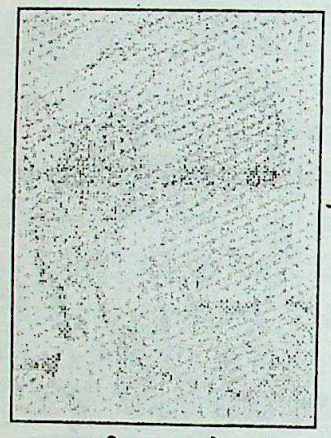

पीटर आग्रे

रसायनशास्त्र में कोष प्रणाली की खोज से चिकित्सा जगत् में अद्भुत परिवर्तन

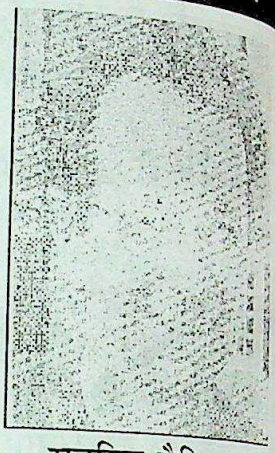

राडरिक मैकिलक

सभी प्रकार के जीवित द्रव्य कोष से निर्मित होते हैं । विभिन्न कोष एक साथ मिलकर अद्भुत प्रणाली का निर्माण करते हैं । इस बार के नोबेल विजेताओं ने पता लगाया है कि किस प्रकार कोष कार्य करते हैं ।

जल का परमाणु ही केवल एक मात्र परमाणु नहीं है जो कोषों के बाहर या भीतर उपस्थित है । जो संकेत प्राप्त होते हैं, वे आयन और परमाणुओं से मिलकर बनते हैं । 1990 के लगभग पीटर आग्रे ने प्रथम जल स्रोत की खोज की । उनका मुख्य अनुसंधान प्रोटीन के सम्बन्ध में था । हमारे मस्तिष्क में भी ऐसी प्रक्रिया उपलब्ध है जो रासायनिक प्रक्रिया को अपने आप में समाविष्ट कर सकती है । वर्तमान खोज से यह पता लग सकता है कि मानव शरीर में उपस्थित जल और ऑयन चैनेल के कितने रोग उत्पन्न हो सकते हैं । उन्नीसवीं शती के मध्य में यह पता लग चुका था कि कोष में जल और नमक की आवश्यकता है । 1950 के आसपास यह पता लगाया गया कि कोष में एवं इसके बाहर जल का शीघ्र आवागमन हो सकता है । विगत 30 वर्षों में इस क्षेत्र में काफी खोज की गयी । वर्तमान शोध से यह ज्ञात हुआ कि कुछ ऐसे छन्ना पत्र हैं जो आयन को झिल्ली के द्वार से जाने में रोकते हैं, जबकि जल परमाणु के द्वारा मुक्त रूप से जा सकते हैं । विदित है कि लाखों परमाणु इस मार्ग से बाहर जाते हैं । यद्यपि यह ज्ञान पहले से लोगों को पता था, किन्तु यह पता नहीं था कि किस तरह कार्य करता है । वस्तुतः इससे प्रोटीन को भी पहचानने में इस अर्थ में मदद मिलती है कि इसका वास्तविक स्रोत क्या है ? आग्रे ने विभिन्न प्रोटीन झिल्लियों की व्यापक जांच की । उन्होंने इसमें से एक को यकृत् में पाया । इस तरह 1998 में मैकिनन ने केसीएसएन नामक प्रथम जल चैनेल की खोज की ।

यद्यपि रसायनशास्त्र का आयुर्वेद शास्त्र के साथ कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध (रसायन को छोड़कर) नहीं है, फिर भी जिस विज्ञान से मनुष्य जाति का हित होता है, वह हमें मान्य है । इस दृष्टिकोण से हम औषधि क्षेत्र के दोनों विज्ञानियों एवं रसायन-शास्त्र के दोनों विज्ञानियों का हार्दिक अभिनन्दन करते हैं ।

हमें आशा है, मानव-आरोग्य की दिशा में विश्व के समस्त चिकित्स-विज्ञानी कार्यरत रहेंगे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तर प्रदेश

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, झांसी में धन्वन्तरि जयन्ती स्वास्थ्य दिवस समारोह सम्पन्न

समारोह कार्यक्रम विवरण दिनांक 23 अक्टूबर, 2003

- सर्वप्रथम भवगान धन्वन्तरि की पूजा अर्चना प्रतिष्ठान के प्रबन्ध निदेशक पं० बृजेन्द्र कुमार शर्मा द्वाग की गयी ।
- कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री अमरदत्त मिश्र, डी०आई०जी० झांसी ने की ।
- अध्यक्ष को माल्यार्पण डा०पं०श्री विश्वनाथ शर्मा प्रतिष्ठान के कार्यकारी निदेशक द्वारा किया था ।
- आमंत्रित वैद्यों का परिचय प्रतिष्ठान के महाप्रबन्धक श्री वाई० पी० शर्मा द्वारा किया गया ।
- आमंत्रित वैद्यों का सम्मान प्रतिष्ठान के प्रबन्ध निदेशक पं०श्री बृजेन्द्र कुमार शर्मा ने किया ।
- आमंत्रित वैद्यों को माल्यार्पण एवं स्वागत अभिवादन प्रतिष्ठान के एक्जीक्यूटिव डायरेक्टर श्री अनुराग शर्मा ने किया । इस अवसर पर संस्थान के श्री आनन्द कुमार शर्मा, श्री अतुल कुमार शर्मा तथा श्री अभिनव गौड़ भी विशेष रूप से उपस्थित रहे ।

समारोह में उपस्थित जनसमुदाय को सम्बोधित करते हुए झांसी के उपमहानिरीक्षक पुलिस, श्री अमरदत्त मिश्र ने कहा कि आयुर्वेद की समाज के स्वास्थ्य एवं जीवन उत्थान में महती भूमिका है । भारतीय समाज में आयुर्वेद जन-जन में समाया हुआ है । वर्तमान परिवेश में ऐलोपैथी की ओर से लोगों का मोह भंग होता जा रहा है तथा आयुर्वेद को लोग अपनो रहे हैं । उन्होंने कहा कि प्रारम्भ से ही बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन, आयुर्वेद उत्थान के लिए कार्य करता आ रहा है जिसका समाज आभारी है । देश में हजारों की संख्या में आयुर्वेद औषधि निर्माता हैं जो मात्र औषधि व्यवसाय के अतिरिक्त आयुर्वेद उत्थान के लिए कुछ कार्य करने में शून्य हैं । भारतीय समाज बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन द्वारा किया गया आयुर्वेद विकास कार्यों को याद रखेगा । इससे पूर्व अपने स्वागत भाषण में बोलते हुए डा०पं० विश्वनाथ शर्मा ने सभी का स्वागत करते हुए कहा कि आज विश्व के अनेक देशों में आयुर्वेद का प्रचार-प्रसार तेजी से फैल रहा है और आयुर्वेद विदेशों में भी शोध (रिसर्च) कार्य चल रहे हैं । भारत से अरबों रुपयों की दवाएं, जड़ी-बूटी निर्यात की जा रही हैं । यदि हम सचेत न हुए तो विश्व

(शेषांश पृ०सं० 376 पर)

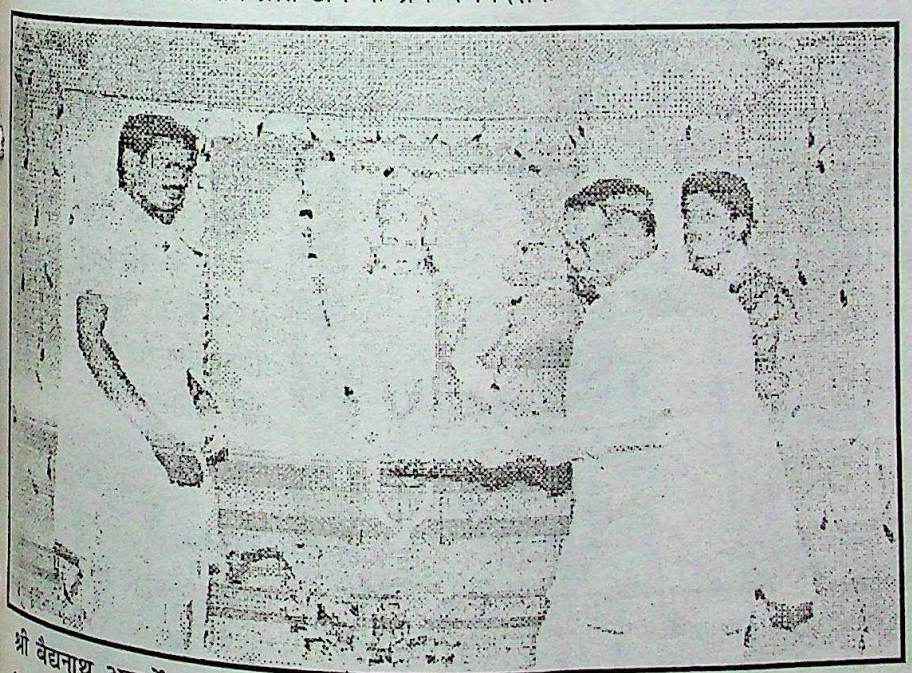

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, झाँसी, 23 अक्टूबर, 2003 को श्री धन्वन्तरि जयन्ती "स्वास्थ्य दिवस" समारोह की झांकियां । भगवान धन्वन्तरि की पूजा अर्चना करते हुए बैद्यनाथ झाँसी प्रतिष्ठान के प्रबन्ध निदेशक पं० बृजेन्द्र कुमार शर्मा परिलक्षित हो रहे हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पटना में धन्वन्तरि-जयन्ती-समारोह सोल्लास सम्पन्न

राज्य में आयुर्वेदिक विश्वविद्यालय एवं मेडिसिनल प्लान्ट्स बोर्ड शीघ्र खोलने की मांग

---- प्रमोद शर्मा

राज्य में मेडिसिनल प्लान्ट्स बोर्ड शीघ्र प्रारम्भ करने का आश्वासन - स्वास्थ्य मंत्री

पांच प्रतिष्ठित वैद्य सम्मानित

पटना, 23 अक्टूबर, 2003

आज बिहार चैम्बर ऑफ कामर्स के विशाल सभाकक्ष में श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०, पटना द्वारा आयोजित धन्वन्तरि जयन्ती समारोह के पावन अवसर पर शहर के प्रतिष्ठित वैद्यों, आयुर्वेद के विद्वानों, प्राध्यापकों, छात्रों एवं बुद्धिजीवियों का स्वागत करते हुए प्रतिष्ठान के निदेशक, श्री प्रमोद शर्मा ने बताया कि इस देश में धन्वन्तरि-जयन्ती-समारोह मनाने की परम्परा का श्रीगणेश करने का श्रेय श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० को जाता है । उन्होंने सरकार से बिहार राज्य के नालन्दा एवं विक्रमशिला जैसे किसी भी ऐतिहासिक स्थल पर आयुर्वेद विश्वविद्यालय खोलने की मांग की । उनके भाषण को अविकल रूप से यहां प्रस्तुत कर रहे हैं :-

आज हम भारत के प्रख्यात एवं प्रतिष्ठित संस्थान, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० की ओर से धन्वन्तरि-जयन्ती-समारोह के पावन अवसर पर हम आपका सादर, सहर्ष हार्दिक अभिनन्दन करते हैं । सबसे पहले हम आपका ध्यान इस बात की ओर आकृष्ट करना चाहते हैं कि 20 वीं शताब्दी में आयुर्वेद प्रवर्तक, भगवान धन्वन्तरि की जयन्ती मनाने की परम्परा कायम करने का श्रेय इस प्रतिष्ठान को है । यह सब भगवान धन्वन्तरि की असीम अनुकम्पा एवं आप महानुभावों की शुभकामनाओं का देन है कि प्रतिष्ठान जन सेवा में लगभग नौ दशकों से सतत प्रयत्नशील रहा है जो हमारे अतीत और वर्तमान की उल्लेखनीय उपलब्धि है ।

आशा थी कि आजादी के पश्चात् आयुर्वेद को हमारी आजाद सरकार राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति घोषित करेगी । हमारी यह आशा निर्मूल निकली । दुनिया-भर में फैली हुयी एलोपैथी (कुछ विद्वान इसे आधुनिक चिकित्सा- पद्धति कहते हैं) ने

(शेषांश पृ०सं०-372 पर)

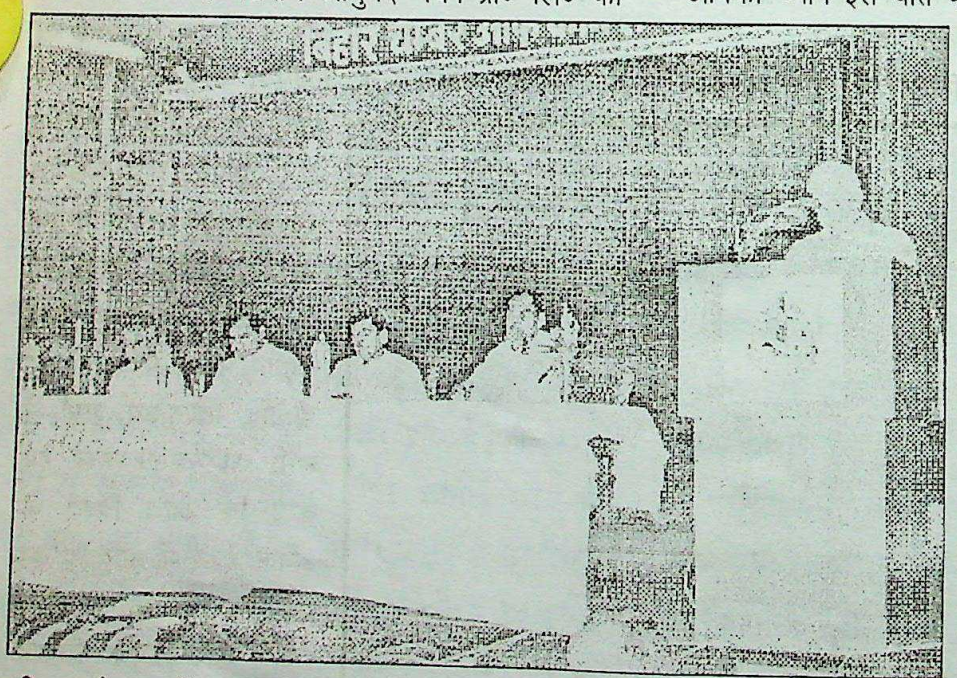

बिहार चैम्बर ऑफ कामर्स के सभागार में श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि०, पटना द्वारा आयोजित धन्वन्तरि-जयन्ती समारोह का एक परिदृश्य । चित्र में बायें से मंचासीन हैं - पटना विश्वविद्यालय के कुलपति, डा०के०के०झा, बिहार राज्य के स्वास्थ्य मंत्री (चिकित्सा शिक्षा एवं देसी चिकित्सा), डा० शकील अहमद, 'भवन' के कार्यपालक निदेशक, श्री रमाकान्त शर्मा एवं कारखाना प्रबन्धक, डा० एल०के० चौधरी । 'भवन' के निदेशक, श्री प्रमोद शर्मा समारोह को सम्बोधित कर रहे हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

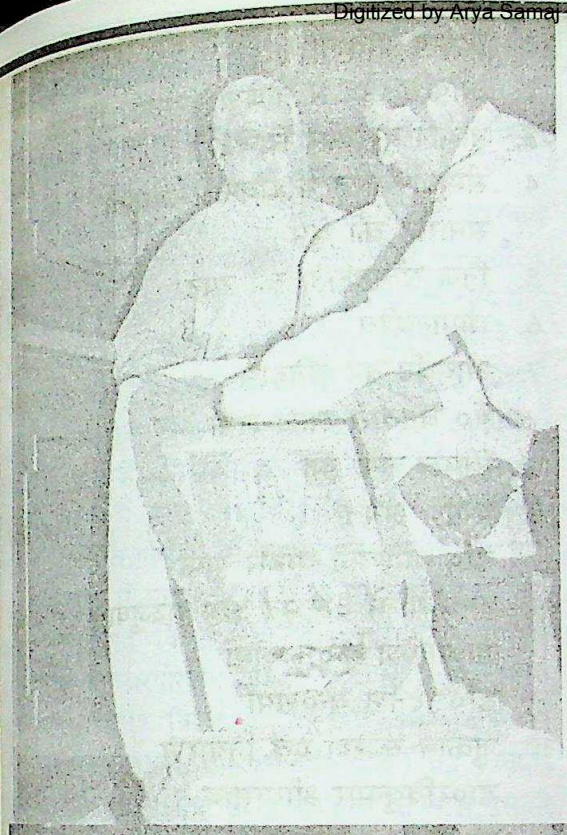

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०, पटना द्वारा आयोजित धन्वन्तरि-जयन्ती-समारोह के अवसर पर भगवान धन्वन्तरि के चित्र पर माल्यार्पण करते हुए दिखलायी पड़ रहे हैं - 'भवन' के कार्यपालक निदेशक, श्री रमाकान्त शर्मा एवं निदेशक, श्री प्रमोद शर्मा गौर से देख रहे हैं ।

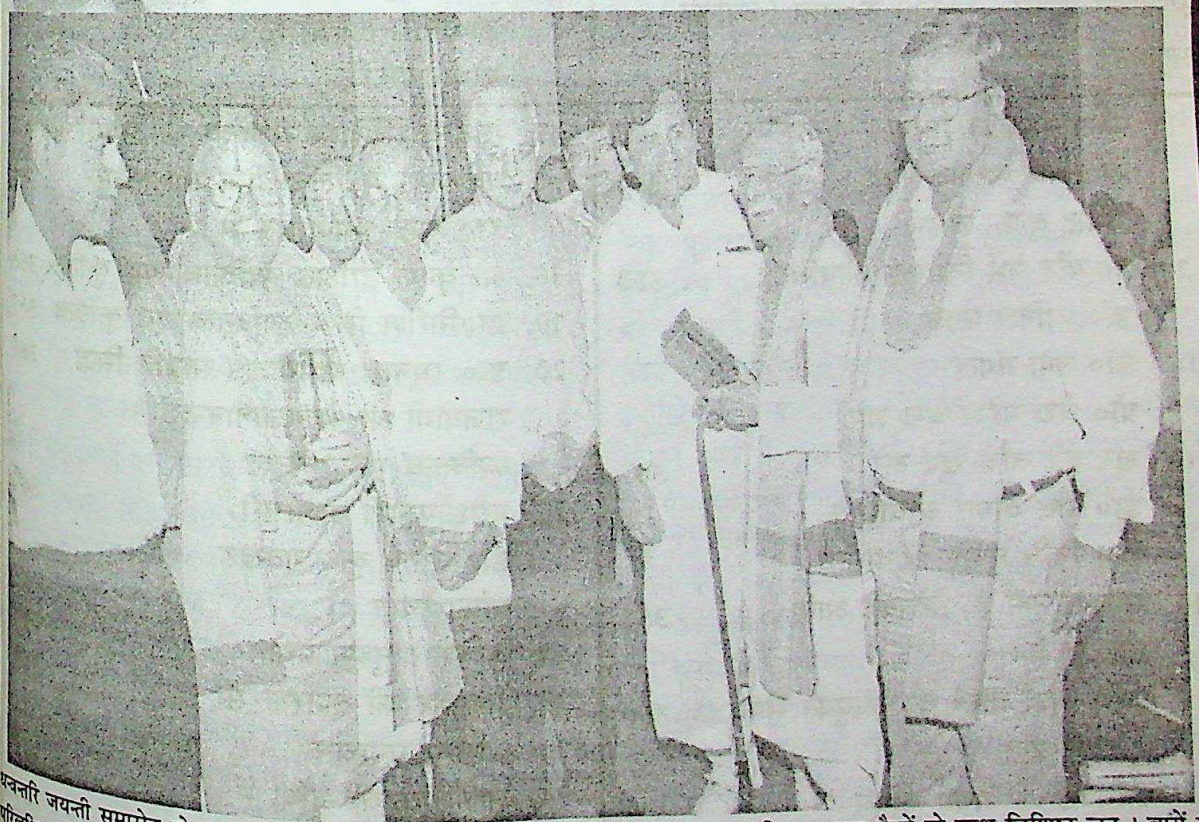

धन्वन्तरि जयन्ती समारोह के अवसर पर श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० द्वारा सम्मानित प्रख्यात् वैद्यों के साथ विशिष्ट जन । बायें से अंकित हैं - 'भवन' के अध्यक्ष, श्री अरविन्द शर्मा, सम्मानित प्रख्यात वैद्य, वैद्य नागेश द्विवेदी, पटना विश्वविद्यालय के कुलपति, डा०के०के० झा, 'भवन' के निदेशक, श्री प्रमोद शर्मा, कार्यपालक निदेशक, श्री रमाकान्त शर्मा (एकदम पीछे एवं मध्य), बिहार राज्य के स्वास्थ्य मंत्री (चिकित्सा शिक्षा एवं देसी चिकित्सा), डा० शकील अहमद, सम्मानित प्रख्यात वैद्य श्री रधुनाथ कर्मकार एवं डा० अनिरूद्ध मिश्र।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

वर्ष - 56 अंक - 5 नवम्बर - 2003

सम्पादक : विमल चन्द्र झा

सम्पादकीय पता :-

सम्पादक

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लिमिटेड

बैद्यनाथ भवन रोड

पटना - 800 001

फोन न०-(91)-(0612)-2353048, 2353134

फैक्स न०-(91)-(0612)-2368571,2351843

ई०मेल न०-baidyanath_ayurved@vsnl.com

एक प्रति मुल्य -10 रुपये प्रति

वार्षिक मुत्य - 100/-रु०

आजीवन शुक्ल - 1000 रु०प्रति (व्यक्ति)

आजीवन शुक्ल -2000 रु०प्रति (संस्था)

1. विशेष प्रतिनिधि 327
2. औषधि-क्षेत्र में नोबेल पुरस्कार विजेता 329
3. नोबेल पुरस्कार विजेता 330
4. सम्पूर्ण भारत में धवन्तरि-जयन्ती समारोह की धूम 331
5. निज संवाददाता की रपट 332
6. सम्पादकीय 335
7. आयुर्वेद का इतिहास 336
पं० बनवारी लाल शर्मा
विमल चन्द्र झा
8. व्याधि क्षमता 339
डॉ० अश्विनी कुमार शर्मा
9. दन्तरोगों में अनुभूत द्रव्य-मञ्जुषा 345
डॉ०गोपेश कु०न०शर्मा
डॉ० दिनेश कु०शर्मा
10. जुकाम-कारण एवं निवारण 348
डा०रविकुमार श्रीवास्तव
डा०निधि श्रीवास्वत
प्रो०बी.एन.सिंह
11. मीठा नीम (कड़ीपत्ता)- एक औषधीय भारतीय पौधा 351
जयेन्द्र कुमार जौहरी
12. आयुर्वेद गर्भ निरोधक औषधियाँ 353
डॉ० अनिल मंगल
डॉ० उमा मंगल
प्रो० वैद्य महेश चन्द्र शर्मा
13. खुद की जाँच खुद करें 357
डा० रवि कुमार श्रीवास्तव
डा० निधि कुमार श्रीवास्तव
14. समस्या नहीं है, हिचकी आना 358
कैलाश जैन
15. शरीर शुद्ध करने का उपयुक्त समय - शरद ऋतु 360
कवि०डा०दिवाकर ठाकुर
16. Herbal Drugs Standardisation 362
Dr. Gyanendra Pandey
17. राष्ट्रीय रसशास्त्र सेमिनार के अवसर पर 364
वाराणसी में लिया गया साक्षात्कार-
डा० चन्द्र भूषण झा से ।
18. श्री कृष्ण दीक्षित-व्यक्तित्व एवं कृतित्व 366
19. डा०गिरीश मिश्र-व्यक्तित्व एवं कृतित्व 367
20. डा० रघुनाथ कर्मकार (सम्प्रति सिद्ध राजयोगी श्री आत्मज्ञानानन्दजी)- व्यक्तित्व एवं कृतित्व 368
21. परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी 380
डा० अनूप कु० गक्खड़
मांका रयात
22. आपके अनुभूत प्रयोग 382
23. अखबार की कतरनों से आरोग्य समाचार 384
24. आलोचक की दृष्टि में 386
25. आपके पत्र 387
26. सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व 389
27. आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां 390

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय नोबेल पुरस्कार पर पुनः विवाद

इसमें कोई शक नहीं कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नोबेल पुरस्कार एक प्रतिष्ठित पुरस्कार है । इसके बावजूद यह पुरस्कार हमेशा विवादों से घिरा रहा है ।

औषधि क्षेत्र में इस वर्ष का नोबेल पुरस्कार संयुक्त रूप से ब्रिटिश प्राध्यापक, सर पीटर मेन्सफील्ड और अमरीकी प्राध्यापक, पॉल सी० लाटेरबर को चुम्बकीय अनुनाद परछाई (एम.आर.आई.) की खोज करने के लिए दिया गया है । यह एक ऐसी तकनीक है जिससे शरीर के आन्तरिक अंगों की प्रतिच्छाया बड़े आकार में दिखलायी पड़ती है । निस्संदेह इस तकनीक से चिकित्सकों को रोग निदान में काफी सहायता मिलेगी । दुर्भाग्यवश उपर्युक्त दोनों विज्ञानियों की इस खोज पर विवाद है । न्यूयॉर्क टाइम्स में एक विज्ञापन फोनार कारपोरेशन की ओर से प्रकाशित किया गया है । इस विज्ञापन के अनुसार फोनार कारपोरेशन के अध्यक्ष, श्री रेमेण्ड व्ही० दामादियान ने दावा किया है कि सर्वप्रथम उन्होंने ही चुम्बकीय अुनानद परछाई (एम.आर.आई.) का विकास किया है । विदित है कि श्री दामादियन के पास इसकी तकनीक पहले से मौजूद है । इसकी पुष्टि अमेरिकी सर्वोच्च न्यायालय ने जेनरल एलेक्ट्रिक ऑफ टेक्नालॉजी से लेमसन पुरस्कार भी प्राप्त हो चुका है । उन्होंने दावा किया है कि नियमानुसार उनका नाम भी पुरस्कार विजेताओं में होना चाहिए था । वे विगत तीस वर्षों से इस प्रकार के सम्मान की प्रतीक्षा कर रहे थे । खेद है कि वर्तमान पुरस्कार के अधिकारी होते हुए भी उनका नाम निकाल दिया गया । नोबेल पुरस्कार समिति को चाहिए कि पुरस्कार देने के पूर्व इस प्रकार के सम्भावित विवादों की जांच-पड़ताल कर ले ।

फ्रांस में बड़े पैमाने पर ताप से मृत्यु और आयुर्वेदीय सिद्धान्त

चरक संहिता के विमानस्थान के तृतीय अध्याय में जनपदोद्ध्वंस अध्याय वर्णन किया गया है । इस अध्याय में बतला गया है कि भिन्न-भिन्न प्रकृति, आहार, देह, बल, सात्म्य, मन तथा उम्रवाले मनुष्यों के होते हुए एक ही रोग से युगपत् (एक साथ ही) जनपदों का नाश क्यों होता है । समानभाव जनपदों में है - वायु, जल, देश, काल । कुशल वैद्य इस प्रकार के दोषों से युक्त चारों भावों को जनपदनाशक कहते हैं । चरक संहिता में काल के सम्बन्ध में बताया गया है कि ऋतु के लक्षणों के विपरीत अत्यधिक या कम लक्षण अहितकर होता है । स्पष्ट अर्थों में यदि ग्रीष्म ऋतु हो तो सर्दी होना या इतनी अधिक गर्मी होना कि मनुष्य जल ही जाय अथवा बहुत ही कम गर्मी हो, वह अहितकर है । इस सन्दर्भ में यदि गर्मी से फ्रांस में होने वाली मृत्यु पर दृष्टिपात करें, तो हमें आयुर्वेदीय सिद्धान्तों की सार्थकता समझ में आती है ।

विदित है इस वर्ष जुलाई'03 से दिसम्बर'03 के मध्य 11,000 से ज्यादा लोगों की मृत्यु अत्यधिक गर्मी पड़ने से फ्रांस में हुयी । जितनी गर्मी हमारे देश के उत्तर प्रदेश, बिहार, दिल्ली, आन्ध्र प्रदेश और राजस्थान में पड़ती है अर्थात् 40^0 सेल्सियस के आसपास, उतनी ही गर्मी इस वर्ष फ्रांस में भी पड़ी । अन्तर इतना ही है कि फ्रांस में ग्यारह हजार से ज्यादा निवासियों की मृत्यु हुयी, किन्तु हमारे देश में इसकी संख्या सैकड़ों में पहुंचती है । आंकड़ों में इतना अन्तर क्यों ? एक अन्तर स्पष्ट है । फ्रांसीसी सर्द देश के रहने वाले हैं । वे सर्दी तो सहन कर सकते हैं, किन्तु गर्मी नहीं । हमारे देश के विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न तापक्रम रहते हैं । इसलिए हमारा शरीर सर्दी एवं गर्मी को आसानी से सहन कर सकता है । हमारे यहां गर्मी से होने वाली मृत्यु भी अधिकांशतः कुपोषण या अन्य बीमारियों से होती है । अन्य कारणों में से प्रमुख कारण जीवन-शैली है । आम तौर पर वृद्ध जो वृद्ध-गृह में रहते हैं, उनके पास आधुनिक सुविधाओं का अभाव है । चिकित्सक से लेकर एम्बुलेन्स चालक तक की सुविधा उनके पास नहीं है । भयंकर गर्मी से जूझते निवासियों के पास शरीर को ठंडा रखने के लिए न तो वातानुकूलन की सुविधा थी और न पंखे की पर्याप्त मात्रा में इन्तजाम था । एक कारण औसत आयु में वृद्धि भी है । फ्रांस में सेवानिवृत्ति की उम्र 63 वर्ष है । लोगों की औसत आयु लगभग 85 वर्ष है । 25 वर्षों तक उन्हें पेन्शन पर जीवन-यापन करना पड़ता है । यह रकम इतनी कम होती है कि एक सेवा-निवृत्त कर्मचारी सारी चीजों को खरीद नहीं सकता है । इसका ही परिणाम था कि गर्मी से बड़े पैमाने पर लोगों की मृत्यु फ्रांस में हुयी ।

आशय यह है कि जिस देश में बेहतरीन स्वास्थ्य-व्यवस्था है, उस देश में अचानक इतने पैमाने पर मृत्यु हो जाय - यह एक विचारणीय विषय है । समस्त विश्व के स्वास्थ्य विज्ञानियों से अनुरोध है कि वे इस दिशा में अवश्य सोचें ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारावाहिक

आयुर्वेद का इतिहास–50

[1]पं० बनवारी लाल शर्मा
[2]विमल चन्द्र झा

विश्वामित्र

कुछ विद्वानों के अनुसार विश्वामित्र गोत्र नाम है। इस महर्षि के किसी भी उत्तराधिकारी को विश्वामित्र नाम से पुकारते हैं। विश्वामित्र का सम्बन्ध चिकित्सा कार्य से था–इस सम्बन्ध में गिरीन्द्र नाथ मुखोपाध्याय[1] ने कुछ ग्रन्थों का सन्दर्भ दिया है। जैसे नावनीतक के अनुसार अश्वि रसायन सूत्र की खोज विश्वामित्र ने की थी। निबन्ध संग्रह, व्याख्या कुसुमावली, व्याख्या मधुकोश, तत्व चन्द्रिका एवं भाव प्रकाश में विश्वामित्र का जिक्र एक आयुर्वेदज्ञ के रूप में आया है। **सुश्रुत संहिता में विश्वामित्र को सुश्रुत का पिता** कहा गया है – **विश्वामित्र सुतः श्रीमान् सुश्रुतः परिपृच्छति** (सु०उ० 66/4)। चक्रदत्त में भी सुश्रुत को विश्वामित्र का पुत्र कहा गया है– **परमकारूणिको विश्वामित्रसुतः सुश्रुतः शल्य प्रधानमायुर्वेद तंत्रं प्रणेतुभार वधमान्।** महाभारत[2] में विश्वामित्र के अनेक पुत्रों का जिक्र है जिसमें सुश्रुत का भी नाम आता है। चरक संहिता[3] में जो महर्षि हिमालय पर्वत पर एकत्र हुए थे, उनमें से विश्वामित्र भी एक थे। दिलचस्प बात यह है कि चरक संहिता में वर्णित अनेक ऋषियों के नाम महाभारत में भी मिलते हैं जैसे –गार्ग्य, गालव आदि। यदि इन महर्षियों का सम्बन्ध आयुर्वेद से है जो चरक संहिता के अनुसार है, तो निश्चय ही विश्वामित्र का सम्बन्ध आयुर्वेद से इस अर्थ में है कि वे प्रख्यात् आयुर्वेदज्ञों के पिता थे। आचार्य प्रियव्रत शर्मा[4] ने विश्वामित्र संहिता का उल्लेख किया है। उनके अनुसार, "इस संहिता के उद्धरण चक्रपाणि की चरक-व्याख्या (सू० 27) और सुश्रुत व्याख्या (सू० 14) दोनों में मिलते हैं। शिवदास ने चक्रदत्त की टीका (अर्शोधिकार) में निम्नांकित श्लोक उद्धृत किया है जिससे विश्वामित्र संहिता में द्रव्यगुण सम्बन्धी उपयोगी सामग्री का अनुमान होता है –

'श्वेतपुष्पः कृष्णपुष्पो रक्तपुष्पस्तथेव च।
पीतोऽन्योऽपि वरस्तेषु कृष्णपुष्प प्रकीर्त्तितः॥

यह वर्णन मुष्कक का है। हेमाद्रि, निश्चलकर और डल्हण ने भी इस संहिता को उद्धृत किया है।"

वैदिक वाङ्मय का इतिहास[5] के अनुसार नरुक्त मीमांसकों ने वेदों में विश्वामित्र आदि शब्दों को जातिवाचक माना है। काठक संहिता[6] में भी जिक्र है –

अयं सो अग्निः इत्येतद्विश्वामित्रस्य सूक्तम्।

श्री दांडेकर[7] ने ऋग्वेद मंडल (2 से 7) के गृत्समद, विश्वामित्र, वामदेव, अत्रि, भरद्वाज और वशिष्ठ को एक ही परिवार का माना है। श्री विद्या[8] से सम्बन्धित जो साहित्य उपलब्ध हैं, उनमें संस्थापकों के रूप में देवताओं जैसे इन्द्र, स्कन्द, शिव, सूर्य, अग्नि आदि के साथ-साथ महर्षिगण जैसे दुर्वासा, अगस्त्य एवं **विश्वामित्र** भी जाने जाते हैं। यद्यपि आज विश्वामित्र संहिता हमारे मध्य उपलब्ध नहीं है, किन्तु, चक्रपाणि[9] ने भी इसका जिक्र अपनी टीका में किया है। विदित है कि विश्वामित्र[10] वैदिक ऋषि माने जाते हैं। अश्वालायन ने जो 49 गोत्रों की सूची दी है, उनमें विश्वामित्रों[11] के साथ लगभग 24 ऋषियों का जिक्र किया है। इससे यह ज्ञात होता है कि यदि गोत्र को आधार माना जाय तो विश्वामित्र एक ऋषि नहीं थे, बल्कि कई थे। ब्राह्मणों[12] के अनुसार हरिश्चन्द्र के पुजारी विश्वामित्र थे, किन्तु ब्रह्म का पद वशिष्ठ को प्राप्त था। होत्र पुरोहित के रूप में विश्वामित्र की कई भूमिकाओं का जिक्र प्राचीन ग्रन्थों में है। महाभारत[13] के अनुसार सुश्रुत के पिता का नाम विश्वामित्र था – यह तथ्य लगभग समस्त इतिहासकारों ने प्रतिपादित किया है। संस्कृत कोश[14] के अनुसार भी सुश्रुत के पिता का नाम विश्वामित्र था।

डा० ज्योतिर्मित्र ने विश्वामित्र के सम्बन्ध में निम्नलिखित विवरण दिये हैं –

1. ऋषि विश्वामित्र द्वारा अपने पुत्र सुश्रुत को काशिराज धन्वन्तरि (दिवोदास) के पास अध्ययन के लिए

1. प्रबन्ध निदेशक, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि०, 2 सम्पादक, सचित्र आयुर्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भेजने का उल्लेख भावप्रकाश में भी है ।

2. डल्हण की व्याख्या में विश्वामित्र के नाम से उद्धृत वैद्यक वचन भी मिलते हैं । इस विश्वामित्र के विषय में पूर्ण परिचय नहीं मिलता ।

3. शालिहोत्र का शिष्य एवं सुश्रुत तथा धन्वन्तरि द्वारा उपदिष्ट विश्वामित्र का पुत्र सुश्रुत भिन्न-भिन्न व्यक्ति प्रतीत होते हैं ।

कविराज सूरमचन्द्रजी[16] से विश्वामित्र के सम्बन्ध में निम्न जानकारी मिलती है -

1. विश्वामित्र महाराज गाधि का पुत्र था ।
2. सुश्रुत विश्वामित्र का सुत था ।
3. विश्वामित्र तपोबल से ब्रह्मर्षि बना ।
4. मधुच्छन्दा आदि ऋषि विश्वामित्र के पुत्र थे ।
5. शकुन्तला विश्वामित्र की कन्या थी ।
6. गाधि के अनन्तर उसका पुत्र विश्वामित्र कान्यकुब्ज का अधिष्ठाता हुआ ।
7. वायुपुराण 88/86 के अनुसार विश्वामित्र ने "सागरानूप" में तप किया ।
8. विश्वामित्र का काल त्रेता के मध्य से द्वापर के प्रथम चरण तक अवश्य है । ऋषि विश्वामित्र द्वापर के आरम्भ में होने वाले ऋषि-सम्मेलन में उपस्थित था ।
9. विश्वामित्र ने भरद्वाज से आयुर्वेद का अध्ययन सीखा । हारीत संहिता 3/29 के अनुसार महामुनि विश्वामित्र को अश्विनों ने अश्विव रसायन का उपदेश दिया ।
10. शांखायन आरण्यक में लिखा है कि विश्वामित्र ने यज्ञ-ज्ञान इन्द्र से प्राप्त किया ।
11. शालिहोत्र वचनानुसार विश्वामित्र आयुर्वेद का कर्ता तथा सर्वलोक चिकित्सक था ।
12. विश्वामित्र के आयुर्वेदीय ग्रन्थ के वचन आज भी उपलब्ध होते हैं ।
13. अष्टांग हृदय पृ० 64 पर हेमाद्रि अपनी टीका में लिखता है -

उक्तं हि विश्वामित्रेण-

तडागजदरीजं च तडागाद्यत्सरिज्जलम् ।
बला रोग्यकरं तत्स्याद्दरीजं दोषलं मतम् ॥

14. सुश्रुत संहिता, निदानस्थान, 5/16 की टीका में डल्हण विश्वामित्र का वचन उद्धृत करता है -

तथा च विश्वामित्र :-

"त्वग्गतं तु यदस्रावि किलासं तत् प्रकीर्तितम् ।"

15. ब्रह्मा आदि का आयुर्वेद परम्परा में आकर विश्वामित्र आदि द्वारा शास्त्ररूप में (संक्षिप्त) हुआ । मधुसूदन सरस्वती अपने प्रस्थान भेद में विश्वामित्रकृत धनुर्वेद का उल्लेख करता है ।
16. विश्वामित्र स्मृतिकार हैं । मद्रास सरकार तथा दयानन्द कालेज, लाहौर के संग्रह में धर्मशास्त्र के हस्तलेख हैं ।
17. विश्वामित्र अनेक मंत्रों के द्रष्टा थे ।

हमारे पास जो साहित्यिक सामग्री उपलब्ध है उससे निम्नलिखित निष्कर्ष निकलते हैं :-

1. विश्वामित्र कई थे ।
2. अनेक विश्वामित्रों में से एक विश्वामित्र निश्चित रूप से आयुर्वेद ज्ञाता थे ।

गार्ग्य

धर्मशास्त्र का इतिहास[17] में गार्ग्य के सम्बन्ध में निम्नलिखित विवरण है -

वृद्ध याज्ञवल्क्य के एक श्लोक को उद्धृत करते हुए विश्वरूप ने (याज्ञ० 42, 1/4-5) गार्ग्य को धर्मवक्ताओं में गिना है । उन्होंने गार्ग्य एवं वृद्ध गार्ग्य के सूत्रों को उद्धृत किया है । इससे स्पष्ट है कि गार्ग्य धर्मसूत्र नामक एक ग्रन्थ था । मिताक्षरा, अपरार्क एवं स्मृतिचन्द्रिका ने आह्निक, श्राद्ध एवं प्रायश्चित सम्बन्धी बातों पर गार्ग्य के कई एक श्लोक उद्धृत किये हैं । पराशर ने भी गार्ग्य को धर्मशास्त्रकार माना है । धर्म-विषयक बातों को अपरार्क ने श्लोकों में भी उद्धृत किया है । गार्गी संहिता के ज्योतिष सम्बन्धी उद्धरण मिले हैं । स्मृति चन्द्रिका में ज्योतिर्गार्ग्य एवं बुद्धगार्ग्य से उद्धरण लिये गये हैं । नित्याचार प्रदीप ने गर्ग एवं गार्ग्य को अलग-अलग स्मृतिकार घोषित किया गया है ।

पौराणिक कोश[18] के अनुसार गार्ग्य के निम्नलिखित अर्थ हैं :-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(1) वासुदेव कृष्ण का एक समकालीन (ब्रह्मां० 4.73. 94) ।

(2) शिनि का एक पुत्र, एक क्षत्रिय वंश के ब्राह्मणों का नया वंशारम्भ (भाग० 9.21.19)।

(3) वेणुहोत्र के पुत्र तथा गर्गभूमि के पिता जिन्होंने जनमेजय को शाप दिया (ब्रह्मा० 3.67.77.8; 68. 21; वायु० 92.73-4)। फलस्वरूप ययाति को रूद्र का दिया हुआ रथ नष्ट हो गया । इनके लोक गंध नामक पुत्र को जनमेजय ने कष्ट दिया (वायु० 93. 21) ।

(4) तैंतीस श्रेष्ठ अंगिरसों में से एक मंत्रकृत् (मत्स्य० 196.23, 48, वायु० 59.98; 65.106) ।

(5) नवें द्वापर के अवतार, ऋषभ के चार पुत्रों में से एक पुत्र (वायु० 23.144) ।

(6) 28 वें द्वापर के अवतार, नकुली के चार पुत्रों में से एक पुत्र (वायु० 23.223) ।

(7) ऋग्वेद के शाखाप्रवर्त्तक आचार्य वाष्कल के तीन शिष्यों में से एक शिष्य । निःसंतान होने के कारण श्याल ने इसका उपहास किया था, बाद को शंकर की उपासना से इसे यवन रानी से एक पुत्र उत्पन्न हुआ जो काल यवन नाम से विख्यात हुआ (विष्णु० 3.4.25; 5.23.1.57) ।

(निरन्तर जारी)

सन्दर्भ :-

1. History of Indian Medicine – Girindranath Mukhopadhyaya, Bhisayachrya, Vol.II, University of Calcutta.
2. श्यामायनोऽथ गार्ग्यश्च जावालिः सुश्रुस्तथा ।
   कारीषिरथ संश्रुत्यः परपौरवतन्तवः ॥
   - महाभारत, अनुशासन पर्व - 4/55
3. विश्वामित्राश्मरथ्यौ च भार्गव श्च्यवनोऽभिजित् ।
   गार्ग्यः शाण्डिल्य कौण्डिल्यौ (न्यौ) वार्क्षिदैव लगालवौ ॥
   - च०सू० 1/10
4. आयुर्वेद का वैज्ञानिक इतिहास - डा० पी० व्ही० शर्मा - चौखम्बा ओरियण्टेलिया, वाराणसी ।
5. वैदिक वाङ्मय का इतिहास - स्व०पं० भगवद्दत्त - प्रणव प्रकाशन, नयी दिल्ली ।
6. काठक संहिता 20/1 ।
7. Literature of Brahmanism in Sanskrit – R.N. Dandekar, Emeritus Professor, Sanskrit - Poona University and Honorary Secretary, Bhandarkar Oriental Research Institute, Poona.
8. Sakta Literature – Govind Gopal Mukherjee, M.A., Ph.D. - Professor and Head of the Deptt. of Sanskrit, Burdwan University.
9. A History of Indian Philosophy - Vol.II - Surendranath Dasgupta, Vol.II - Cambridge University Press, London.
10. A History of ancient, Sanskrit Literature - F. Max Muller – Chowkhamba Sanskrit Series Office, Varanasi.
11. वही ।
12. वही ।
13. A History of Sanskrit Literature — A. B. Keith, D.C.L., D. LITT– Oxford University Press, London.
14. संस्कृत-शब्दार्थ-कौस्तुभ- रामनारायण लाभ- इलाहाबाद ।
15. चरक एवं सुश्रुत के दार्शनिक विषय का अध्ययन - डा० ज्योतिर्मित्र आचार्य - श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि०, पटना ।
16. आयुर्वेद का इतिहास - प्रथम भाग - कवि० सूरम चन्द्र, नयी दिल्ली ।
17. धर्मशास्त्र का इतिहास-प्रथम भाग - डा० पाण्डुरङ्ग वामन काणे - हिन्दी समिति, सूचना विभाग, उ०प्र०, लखनऊ ।
18. पौराणिक कोश - राणा प्रसाद शर्मा - ज्ञानमंडल लि०, वाराणसी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्याधि क्षमता (IMMUNITY)

डॉ० अश्विनी कुमार शर्मा, एम.डी. (आयु.) पी.एच.डी. (आयु.)

परिचय

रोगों के प्रतिकार करने की शक्ति को आयुर्वेद के आचार्यों ने व्याधिक्षमत्व अर्थात् व्याधिक्षमता कहा है । यह शक्ति समस्त प्रकार के संक्रमणों में रहा करती है । आधुनिक चिकित्सा विज्ञान इसे Immunity कहता है । इस शक्ति से रोग के कारणों से संपर्क होने पर भी शरीर रोगाक्रान्त नहीं होता ।

रोग प्रतिरोधक क्षमता किसी भी व्यक्ति के शरीर में पायी जाने वाली वह क्षमता (Capacity) है जिसके द्वारा वह विभिन्न रोगों के उन जीवाणुओं, विषाणुओं अथवा पराश्रयी से अपनी रक्षा करता है, जो संक्रमण द्वारा उसके शरीर में प्रवेश कर सकता है ।

प्रकार :-

यह व्याधिक्षमता चक्रपाणिदत्तजी ने दो प्रकार की बतलाई है -

1. **व्याधि बल विरोधी क्षमता** - उत्पन्न व्याधि का प्रतिकार करने वाली यह प्रथम प्रकार की क्षमता होती है । दूसरे शब्दों में इसे 'युक्तिकृत बल' भी कह सकते हैं । आधुनिक चिकित्सा विज्ञान इसे एक्वायर्ड इम्युनिटी (Acquired immunity) तथा आर्टिफिशियल इम्युनिटी (Artificial immunity) कहता है ।

2. **व्याधि उत्पाद प्रतिबन्धक क्षमता** - यह दूसरे प्रकार की क्षमता व्याधि को उत्पन्न होने ही नहीं देती है । इसे सहज बल भी कह सकते हैं । आधुनिक चिकित्सा विज्ञान इसे नेचुरल इम्युनिटी (Natural immunity) तथा कोन्जेनीटल इम्युनिटी (congenital immunity) कहता है ।

आयुर्वेद में व्याधिमता के प्रकार के रूप में हम त्रिविध को ले सकते हैं । संहिताओं में यत्र-तत्र त्रिविध बल का वर्णन है । जिस मनुष्य में बल होता है वही रोगों से आक्रान्त नहीं होता तथा रोगों से लड़ने का सामर्थ्य भी उसी व्यक्ति के शरीर में होता है ।

बलं छलं निग्रहाम रोगाणाम् । च.चि. 13/166

इस प्रकार आयुर्वेद में बल शब्द का प्रयोग 'रोग निग्रह' के लिए हुआ है । प्राकृत श्लेष्मा का नाम ही ओज है जो शरीर का 'बल' कहलाता है । 'बल' शरीर की रोगों के आक्रमण से रक्षा करता है ।

त्रिविध बल हैं - 1. सहज बल 2. कालज बल 3. युक्तिकृत बल ।

1. सहज बल

1. जो शरीर और मन के अनुसार 'स्वाभाविक रूप से' होता है, उसे सहज बल कहते हैं ।
2. सहज बल जन्म से ही होता है ।
3. जिस प्रकार शरीर की उत्पत्ति होती है तथा पूर्व जन्म कृत कर्मों के अनुसार जैसा मन बन जाता है, उसी शरीर और मन के अनुसार प्राणी में प्राकृत (Natural) बल होता है ।
4. शरीर से बलवान और मन से दुर्बल व्यक्ति से जो संतान उत्पन्न होती है वह शरीर से बलवान और मन से दुर्बल होती है । शरीर से दुर्बल किन्तु मन से सबल व्यक्ति से उत्पन्न होने वाली संतान भी शरीर से दुर्बल और मन से सबल होती है ।

2. कालज बल

1. यह बल काल के अनुसार स्वयं उत्पन्न होता है ।
2. ऋतुओं के विभाग के अनुसार विसर्ग काल के आरम्भ (वर्षा-श्रावण-भाद्रपद) तथा आदान काल के अन्त (ग्रीष्म-ज्येष्ठ-आषाढ़) में मनुष्यों में दुर्बलता, विसर्ग काल के मध्य (शरद-आश्विन- कार्तिक) और आदान काल के मध्य (बसन्तः कार्तिक) में मध्यम बल और विसर्ग काल के अन्त (हेमन्त : अगहन-पौष) और आदान काल के आदि (शिशिर : माघ-फाल्गुन) में श्रेष्ठ बल रहता है ।
3. अवस्था के अनुसार-बाल्यावस्था में क्रमशः बल की वृद्धि होती जाती है । युवावस्था में बल चरम सीमा पर पहुँच जाती है ।

अर्थात् उत्कृष्ट बल, सभी मनुष्यों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहता है । वृद्धावस्था में बल क्रमशः क्षीण होने लगता है । यह भी कालज बल है ।

3. युक्तिकृत बल

युक्ति को योजना कहते हैं । योजनाबद्ध उपायों से जिस बल की प्राप्ति हो उसे युक्तियुक्त बल कहते हैं ।

1. **आहार** - घृत, दुग्ध, तैल, मांस रस, सदा षट्रसयुक्त द्रव्यों, फल, जीवतिक्त आदि पदार्थों के आहार करने से बल की वृद्धि होती है ।
2. **चेष्टा** - प्राणायाम, आसन आदि व्यायाम तथा शुद्ध वायु का सेवन करने से श्वास गति तीव्र होकर प्राणवायु को ग्रहण करती है । अतः व्यायाम और शुद्ध सेवन का अन्योन्याश्रय संबंध है ।

शरीरोपचयः कान्तिर्गात्राणां सुविभक्तता ।
दीप्ताग्नित्वमनालस्यं स्थिरत्वं लाघवं मृजा ॥
श्रमक्लम पिपासोष्णशीतादीनां सहिष्णुता ।
आरोग्यञ्चापि परम व्यायामदुपजायते ॥

राजेश्वरदत्त, स्वस्थवृ

व्यायाम से शरीर क्लेश सह, बलवात तथा चिरायु बनता है । सदाचार का पालन करने से शरीर और मन का बल बढ़ता है ।

4. योग

ऐसे प्रयोग जो व्याधि क्षमता (रोग प्रतिरोधक क्षमता) के उत्पादक तथा वृद्धिकर हों, जैसे-रसायन, वाजीकरण लसिका चिकित्सा पद्धति (Serum therapy) मसूरण (Vaccination) चिकित्सा पद्धति आदि ।

5. अन्य

ब्रह्मचर्य, निद्रा विश्राम आदि ।

इसका संक्षिप्त उल्लेख तालिका द्वारा इस प्रकार किया जा सकता है ।

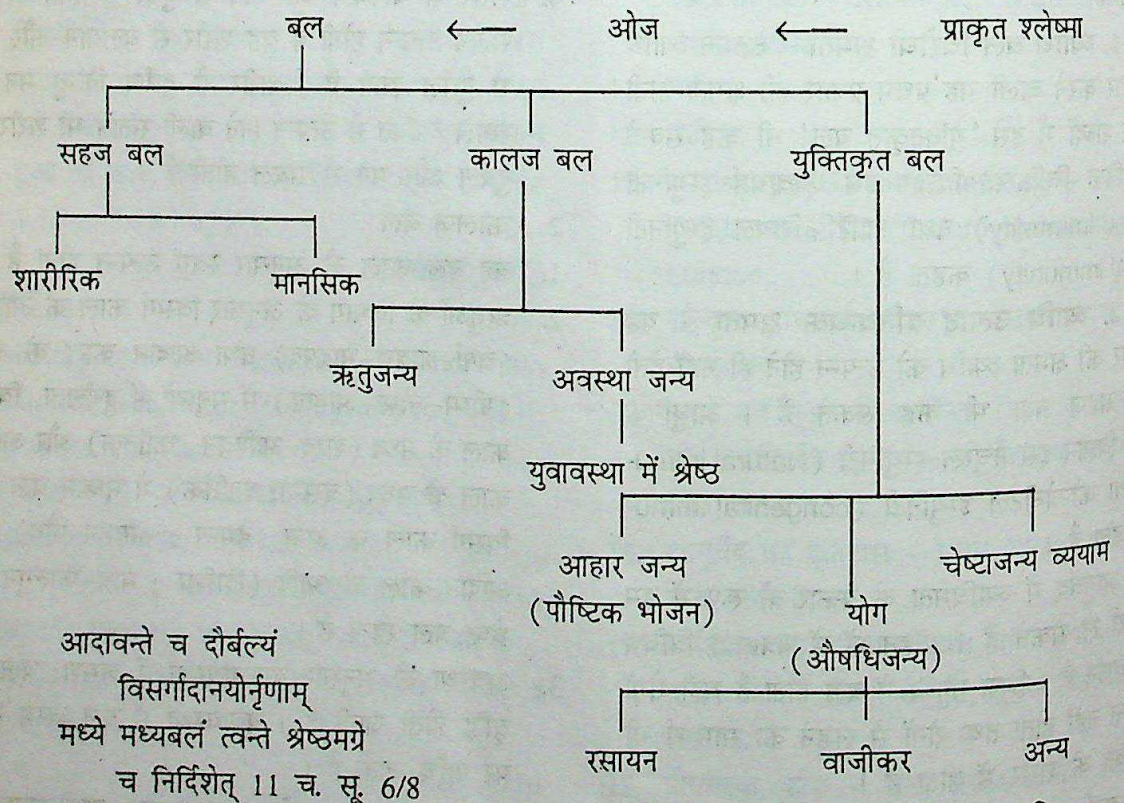

आदावन्ते च दौर्बल्यं
विसर्गादानयोर्नृणाम्
मध्ये मध्यबलं त्वन्ते श्रेष्ठमग्रे
च निर्दिशेत् 11 च. सू. 6/8

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक प्रकार

रोग प्रतिरोध क्षमता या व्याधि क्षमता
(Immunity)

- स्वाभाविक या सहज (Natural) अविशेष क्षमता (Non specific immunity)
- युक्तियुक्त या कृत्रिम (Artificial) विशिष्ट क्षमता (Specific Immunity)
  - सक्रिय (Active)
  - निष्क्रिय (Passive)
- रोगज (Acquired)

1. स्वाभाविक रोग प्रतिरोधक क्षमता

रोगों के असंख्य जीवाणु नासिका, मुख आदि के द्वारा शरीर में प्रविष्ट होते रहते हैं । हमारे रक्त में इन जीवाणुओं को तथा इनके विषों को नष्ट करने की स्वाभाविक शक्ति होती है जो रोगों से शरीर की रक्षा करती है ।

रक्त के श्वेत कण (leukocyte) जीवाणुओं का भक्षण करते हैं । इसलिए इन्हें मक्षिकोशा (phagocyte) भी कहते हैं । जब जीवाणु जन्य कई रोगों में रक्त में इनकी अत्यधिक संख्या बढ़ जाती है तब इस स्थिति को भक्षकायाणूत्कर्ष (Phagocytosis) कहते हैं ।

रक्त में प्राणिज प्रोभूजिन होता है जिसे प्रोपर्डीन कहते हैं । प्रोपर्डीन, पूरक (complement) तथा भ्राजा (mg++) के साथ मिलकर जीवाणुओं का नाश करना, कुछ जीवाणुओं को निष्क्रिय बनाना आदि विशिष्ट क्रियाओं में भाग लेता है । रक्त प्रोपर्डीन पूरक, भ्राजक आदि द्रव्यों से जीवाणुओं को स्वादु बना देता है । रक्त की यह क्रिया आस्वादि (opsonin) कहलाती है । जिस व्यक्ति के शरीर में आस्वादि शक्ति जितनी होगी रक्त के श्वेतकणों की भक्षण क्रिया उतनी अधिक होगी । परिणामस्वरूप जीवाणुओं के आक्रमण से उतनी ही अधिक रक्षा होगी । जीवनीय द्रव्य, उत्तम पौष्टिक आहार, शुद्ध वायु, व्यायाम आदि के द्वारा यह शक्ति बढ़ जाती है ।

रक्तलसिका (Serum) में भी जीवाणुओं को नष्ट करने की शक्ति होती है । रक्त में स्थित जो द्रव जीवाणुओं का संहार करता है उसे जीवाञ्वांशनि (Bacterioeysim) कहते हैं ।

जीवाणु अपने विष (Toxin) के द्वारा शरीर में विभिन्न प्रकार के विकार उत्पन्न करते हैं । रक्त इसको निष्क्रिय करने के लिए प्रतिविष (Antitoxin) उत्पन्न करता है । प्रतिविष अपने प्रभाव से जीवाणुओं के विष की क्रिया को नष्ट कर देता है ।

रक्त में कुछ अन्य ऐसे द्रव्य हैं जो जीवाणुओं की विकारकारिता तथा घातक क्रिया को रोकते तथा नष्ट करते हैं -

1. शोणित प्रसमूहि (Haemoagglutinin)- जब जीवाणु शोणित प्रसमूहि के सम्पर्क में आते हैं तब गतिशून्य होकर एक दूसरे से जुड़ जाते हैं तथा निष्क्रिय हो जाते हैं -

2. प्ररसि (Plasmin)

3. रक्त रस जन (Plasonogen)

प्ररसि तथा रक्त रस जन - ये जीवाणुओं के अवरोधक (Inhibitors) हैं जिससे जीवाणुओं की गति तथा क्रियाशक्ति अवरूद्ध हो जाती है ।

4. स्कन्दक (Clotting factors)- ये सभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवाणुओं को गतिशून्य करके एक दूसरे से जोड़ देते हैं और इस प्रकार उन्हें निष्क्रिय करते हैं ।

ये सभी द्रव्य तथा कुछ अज्ञात द्रव्य मुख्य रूप से चार प्रकार के कार्य करते हैं -

1. जीवाणु विनाशन
2. विषाणु क्रियावरोधन
3. रक्तकोशा व्यंसन
4. प्रजीव नाशन

शरीर की स्वाभाविक क्षमता इन्हीं द्रव्यों की क्रियाशीलता पर आधारित होती है । ये द्रव्य सब गुण सम्पन्न होते हैं तब जीवाणुओं के किसी प्रकार का दुष्प्रभाव शरीर पर नहीं पड़ता है ।

युक्तिकृत रोग प्रतिरोधक क्षमता - स्वाभाविक रोग प्रतिरोधक क्षमता जब कम होती है अथवा किसी कारण से नष्ट होने लगती है तब शरीर में कृत्रिम उपायों के द्वारा रोग प्रतिरोध क्षमता उत्पन्न की जाती है ।

कृत्रिम रोग प्रतिरोध क्षमता को विशिष्ट क्षमता (Specific immunity) भी कहते हैं क्योंकि यह एक ही प्रकार से जीवाणुओं से शरीर की रक्षा करने में समर्थ होती है ।

यह विशिष्ट क्षमता मुख्यतया दो प्रकार की है-

सक्रिय (Active) - इसका निर्माण विशेष प्रकार से होता है । अतएव सर्व सामान्य इसका निर्माण नहीं कर सकता । इसमें विशिष्ट जीवाणु या उसके विष को क्रमशः उत्तरोत्तर बढ़ती हुई मात्रा में injection द्वारा घोड़ा आदि पशुओं के शरीर में प्रवेश करते हैं । परिणामस्वरूप उस पशु में रक्त में उस विशिष्ट जीवाणु का प्रतिविष (anti-toxin) या प्रतिरोध विष उत्पन्न हो जाता है । तदुपरान्त इन पशुओं के रक्त से लसिका का संग्रह कर लिया जाता है । इस लसिका (Serum) का उपयोग मनुष्यों में सूची वेध द्वारा दो अवस्थाओं में होता है-

1. उसी विशिष्ट जीवाणुओं अनागत योग के प्रतिषेधार्थ -

इसके लिए अल्प मात्रा में लसिका मनुष्य के शरीर में प्रविष्ट की जाती है । उस जीवाणु के कारण रोग शरीर में न हो जाए इसलिए इस उपाय को रोग की रोकथाम के लिए व्यवहार में लाया जाता है, जैसे सामान्य क्षत होने पर एन्टीटेटेनस सीरम (Antitetanus serum A.T.S.) का उपयोग धनागत धनुरति रोग के प्रतिषेधार्थ ।

2. उसी विशिष्ट जीवाणु जन्य आगत रोग के प्रतिकारार्थ-

इस अवस्था में लसिका को उचित मात्रा में रोगी मनुष्य के शरीर में प्रवेश कराने से पूर्व अनूर्णता के लिए परीक्षा आवश्यक है ।

तदुपरान्त रोग पूर्ण निवृत न हो जाए उतने दिन तक लसिका का प्रयोग नियमित करने रहना चाहिए, जैसे धनुर्वात रोग जाने पर ए.टी.एस. का आगत रोग प्रतीकारार्थ किया जाता है । इसको लसिका चिकित्सा पद्धति (Serum therapy) कहते हैं ।

3. निष्क्रिय (Passive)-

इसमें विशिष्ट प्रकार के जीवाणुओं का वैक्सीन बनाकर टीका लगाया जाता है । इस पद्धति को मसूरण या वैक्सीनेशन (Vaccination) कहते हैं । वैक्सीन का उपयोग केवल प्रतिबन्ध के लिए किया जाता है, न कि चिकित्सा के लिए ।

वैक्सीन में सजीव जीवाणुओं को अल्पमात्रा में स्वस्थ व्यक्ति के शरीर में इसलिए प्रवेश कराया जाता है कि निकट भविष्य में उस विशिष्ट जीवाणु जन्य रोग का प्रादुर्भाव न हो जाए ।

वैक्सीन के द्वारा अल्प मात्रा में जीवाणु या उनका विष स्वस्थ व्यक्ति के शरीर में जाकर रोग उत्पन्न नहीं करता अपितु शरीर में प्रतिविष या प्रतिरोध क्षमता को उत्पन्न कर देता है जिससे कुछ काल के लिए वह व्यक्ति उस विशिष्ट जीवाणु जन्य रोग से पीड़ित नहीं हो पाता । इसको निष्क्रिय इसलिए कहा जाता है कि इसके प्रयोग से तुरन्त विशिष्ट क्षमता उत्पन्न नहीं होती अपितु कुछ समय के बाद व्यक्ति का शरीर स्वयं निर्माण करता है । इस उपाय को विसूचिका (cholera), रोहिणी (Diptheria) बालपक्षाघात (Poliomyelitis), यक्ष्मा (tuberculosis) आदि रोगों में प्रतिबन्धक के रूप में व्यवहार में लाते हैं ।

रोगज क्षमता (Acquired Immunity)-

1. जीवाणुजन्य रोग का आक्रमण जब किसी व्यक्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता है तब शरीर में जीवाणुओं का प्रतिकारार्थ प्रोपर्डिन, पूरक, भ्राजा आदि द्रव्यों तथा रक्त के श्वेत कणों का अधिक निर्माण होता है ।

2. रोग के आक्रमण से प्रभावित होकर यदि शरीर रुग्ण हो जाए तो जाना जाता है कि श्वेत कणों, प्रोपर्डिन आदि की उत्पादन शक्ति या रोग प्रतिरोधक क्षमता क्षीण हो गई है ।

3. शरीर जब विशिष्ट रोग से मुक्त हो जाता है तब उस रोग के जीवाणुओं को नष्ट करने की विशेष शक्ति उत्पन्न हो जाती है जिसे रोगज क्षमता कहते हैं जैसे मसूरिका, कुकरकास, रोमान्तिका आदि में ।

व्याधिक्षमता अभाव या अल्पता जन्य रोग

कुछ व्याधियाँ व्याधि क्षमता की अल्पता के कारण ही उत्पन्न होती हैं । एड्स तथा कुछ व्याधियाँ Immunity system के स्वयं के शिकार के कारण होती हैं यथा आमवात SLE (Systemic lupus erythometous)।

आयुर्वेदिक औषधियों के रोग प्रतिरोधक क्षमता का उन्नयन आयुर्वेद के प्रमुख सिद्धान्तों में एक है । स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणमातुरस्य विकार प्रशमनं च । आयुर्वेदीय ग्रंथों में 'स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षमण्' इस सिद्धान्त पर बहुशः जोर दिया गया है जिसे देखा जाए तो वह व्यक्ति की व्याधिक्षमता को बढ़ाने के लिए ही बनाया गया है । स्वस्थ के स्वास्थ्य की रक्षा का तात्पर्य है उसके सहज बल या सहज रोग प्रतिरोधी क्षमता को बढ़ाना । तदर्थ अनेक उपाय प्रस्तुत किए गए हैं । उन्हीं में से प्रमुख हैं रसायन एवं वाजीकरण । उत्तम पोषण के माध्यम से प्रशस्त धातुओं के निर्माण के उपाय को ही रसायन कहा गया है - लाभोपायो हि शस्तानां रसादीनां रसायनम् । शरीर में प्रशस्त धातुओं के निर्माण के परिणामस्वरूप मनुष्य में दीर्घायु, व्याधिक्षमत्व, मेधाशक्ति एवं प्रभावर्ण इत्यादि की उत्पत्ति होती है ।

रसायन केवल मात्र औषधि व्यवस्था न होकर औषधि, आहार-विहार एवं आचार का एक विशिष्ट प्रयोग है जिसका उद्देश्य शरीर में उत्तम धातु पोषण के माध्यम से दीर्घायु, व्याधिक्षमत्व एवं उत्तम मेधाशक्ति को उत्पन्न करना है । रसायन का प्रयोग प्रायः स्वस्थ व्यक्ति में उत्तमोत्तम स्वास्थ्य की कामना के किया जाता है । इस प्रकार के रसायन को 'काम्य रसायन' कहते हैं । रसायनों का प्रयोग रुग्णावस्था में रोग विशेष के प्रशमन सहित स्वास्थ्य लाभ की दृष्टि से किया जाता है, ऐसे रसायन को 'नैमित्तिक रसायन' कहते हैं ।

रसायनों में सर्वश्रेष्ठ है मेध्य रसायन । ऐसे तो सभी द्रव्य मेधाकर होते हैं क्योंकि प्रशस्त धातु निर्माण के दूरगामी प्रभाव के रूप में मेधावृद्धि होती ही है, परन्तु शास्त्र में विशेषकर चरक संहिता में ऐसे रसायनों का एक विशेष वर्ग ही बताया गया है, जिनमें सामान्य रसायन का प्रभाव तो होता ही है, वे विशेष रूप से मेधाकर होते हैं, इन्हें 'मेध्य रसायन' कहते हैं । चरक ने शंखपुष्पी, मण्डूकपर्णी, गुडूची एवं मधुयष्टी इन चार प्रमुख मेध्य रसायनों का उल्लेख किया है ।

इसके अतिरिक्त नैमित्तिक रसायन के रूप में निम्न प्रमुख द्रव्यों का वर्णन किया गया है ।

रोग विशेष

1. दृष्टि रोग	ज्योतिष्मती, त्रिफला, शतावरी, यष्टीमधु
2. हृदय रोग	शालपर्णी
3. त्वक् रोग एवं कुष्ठ	तुवरक, भल्लातक, विडंग, सोमराजी, गंधक
4. ग्रंथि एवं गुल्म	पिप्पली, भल्लातक
5. यक्ष्मा	रसोन, नागबला, शिलाजतु, पिप्पली
6. पाण्डु	लौह

इसके अतिरिक्त अग्नि के लिए हितकर रसायन औषधियां-

1. विडंग, हरीतकी, पिप्पली
2. आमलकी, अमृता, कुमारी
3. स्वर्ण, कस्तूरी, अभ्रक, कुपीलु

अब प्रमुख द्रव्यों का वर्णन प्रस्तुत है कि किस प्रकार से व्याधि क्षमता का उन्नयन करते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

1. शंखपुष्पी (Convolvulus pluricaulis)

गुण

रस- तिक्त, विपाक - मधुर,
गुण - स्निग्ध पिच्छिल
प्रभाव - मेध्य, वीर्य - शीत ।

इसमें शंखपुष्पीन नामक क्षाराभ पाया जाता है । इसमें शरीर एवं मन के दोषों की शांति, धातुओं की वृद्धि एवं मलों का संशोधन होता है । अत: यह बल्य है और बल्य होने से व्याधि क्षमता वर्धक है ।

2. मण्डूकपर्णी (Centella asiatica)

गुण

गुण - लघु, रस - तिक्त
प्रभाव - मेध्य विपाक - मधुर
वीर्य - शीत

इसमें हाइड्रो कोटिललिन नाम क्षाराभ पाया जाता है । इसके अतिरिक्त ताजी पत्तियों में एशियाटिकोसाइड नामक ग्लाइकोसाइड निकाला गया है ।

मधुर विपाक और शीत वीर्य होने के कारण यह बल्य है तथा सभी अवयवों की क्रियाकारी शक्ति को बढ़ाती है ।

3. गुडूची (Trinospora Cordifolia)

गुण :- इसमें बर्बेरिन नामक क्षाराभ पाया जाता है । इसके अतिरिक्त एक स्टार्च गुडूचीसत्व निकलता है । गुडूची दौर्बल्य, क्षय को रसायन कर्म एवं अपने उपरोक्त गुण कर्मों से दूर करने से व्याधिक्षमता वर्धक है । यह इम्यूनोमोडयूलेटर है ।

4. मधुयष्टी

गुण - गुरु, विपाक - मधुर
रस - मधुर वीर्य - शीत

मुलेठी में ग्लिसराइजिन नामक प्रमुख घटक होता है । यह जीवनीय रसायन एवं बल्य है । अत: सामान्य दौर्बल्य में प्रयुक्त होती है ।

5. पिप्पली (Piper longum)

गुण - लघु, स्निग्ध, तीक्ष्ण
रस - कटु
विपाक - मधुर, वीर्य - अनुष्णशीत

इसमें पाइपरीन, पिपलार्टिन, नामक क्षाराभ पाये जाते हैं । यह कटुरस होने से दीपन, स्निग्ध, उष्ण होने से वातानुलोमन है । अत: क्षुधावर्धक होने से सामान्य दौर्बल्यहर है । यकृतप्लीहोदर में लाभप्रद है ।

बैद्यनाथ
आयुसिड
अम्लपित्त, उदरशूल एवं कब्जियत दूर करने की दवा है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दन्तरोगों में अनुभूत द्रव्य-मञ्जूषा

*डॉ०गोपेश कुमार न०शर्मा, **डा० दिनेश कुमार शर्मा

प्राणियों के दाँत अपनी आकृति संरचना एवं उत्पत्ति क्रम में विशिष्टता एवं क्लिष्टता रखते हैं। संभवत: इसीलिये आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में इनके रोगों एवं उनकी चिकित्सा का अध्ययन-अध्यापन अलग से किया जाता है। जितना समय सम्पूर्ण शरीर के ज्ञान में एवं चिकित्सा को समझने में लगता है लगभग उतना ही समय सिर्फ दाँतों के अध्ययन में लगता है। इससे इसके महत्व का पता चलता है।

आयुर्वेद में मुखरोगों के अन्तर्गत दन्त एवं दन्तमूल गत रोगों का वर्णन किया है। दांतों एवं मसूढ़ों का चोली-दामन का साथ है इससे कोई भी असहमत नहीं होगा ऐसा हमारा विचार है। दालन (शीतदन्त-वाग्भट), कृमिदंत भंजनक (दन्तभेद वा०), दन्तहर्ष, दन्तशर्करा, कपालिका, श्यावदन्त हनुमोध, दन्तचाल, कराल तथा वध न इन दन्त रोगों में साध्य है। अत: उनका उसी प्रकार उपचार किया जाता है। शेष अनेक अवस्थाओं में प्रयुक्त अनुभूत द्रव्यों को विद्वान पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है। वैसे दन्तरोगों की चिकित्सा में उपयुक्त स्वच्छता पथ्यापथ्य एवं आहार-विहार का प्रयोग किया जाए तो सफलता शीघ्र प्राप्त हो सकती है।

क्र०	द्रव्यमान	वानस्पतिक नाम एवं वर्ग	प्रयोग
1.	पीलू Miswak	Salvadora persica	दांतों एवं मसूढ़ों में शिथिलता तथा स्कर्वी में इसकी दातुन
2.	बोल Myrrh	Combiphora muyrrha	कृमिदन्त में मंजन के रूप में या शीतार में गण्डूष
3.	नकछिकनी Sneezwort	Centipeda orbicularis	दन्तशूल में कल्क का लेप
4.	गुग्गुल Indian bedellium	Commiphora mukul	दन्तशूल में इसे पानी घिसकर लेप करना
5.	जामुन Black plum	Syzigium Jambolanum	दान्तों की मजबूती हेतु, छाल के फांट से गण्डूष या दातुन के रूप में प्रयोग।
6.	लसूढ़ा Sebesten plum तथा गूंदन	Cordia latifolia also angustifolia	त्वक् क्वाथ का गण्डूष
7.	कपूर Camphor	Cinnamomum comphora	दन्तकृमि तथा दन्तशूल में कपूर भरना या दन्तमंजन में।
8.	अयापान	Eupatorium ayapana	क्वाथ स्कर्वी में गण्डूष के रूप में।
9.	स्नूही Triangular spurge	Euphorbia antiquorum	दन्तशूल में दुग्ध का स्थानीय प्रयोग (सावधानी पूर्वक)
10.	सर्षप Turnip	Brassica campestris	पूयदन्त में नमक एवं सर्षप तैल का नियमित प्रयोग।
11.	चमेली Jasmine	Jasminum grandiflorum & humile	दन्तपूय तथा मुखव्रणों में क्वाथ या सिद्ध तैल का प्रयोग।
12.	सुपारी Areca nut	Areca catechu	कोयले के रूप में निर्मित सुपारी चूर्ण का दन्तमंजन के रूप में प्रयोग, कषाय होने के बावजूद, कच्ची सुपारी दान्तों एवं मसूढ़ों में विकृति, शैथिल्य तथा कैंसर उत्पादक होती है।

* द्रव्य गुण विज्ञान विभाग, दयानंद आयुर्वेदिक कालेज, जालंधर ** जे.एस.एस. आर्युदिक कालेज, मैसूर-15

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्र०	दव्यमान	वानस्पतिक नाम एवं वर्ग	प्रयोग
13.	अर्क Madar	Calotropis procera	दन्तशूल में दातुन के रूप में
14.	गूलर Country fig	Ficus glomerata	त्वक् या पत्र का क्वाथ चलदन्त, रक्तस्राव में ।
15.	खुरासानी अजवायन Henbane	Hyoscyamus niger	दन्तशूल में बीज चूर्ण का भरना ।
16.	जूफा Hyssop	Hyssopus officinalis	पत्रकल्क या स्वरस का दन्तशूल में लेप ।
17.	खैर Cutch Tree	Acacia catechu	त्वक् चूर्ण या खार (कत्था) चूर्ण मंजन के रू में व्रण रक्त स्राव तथा चलदन्त में उपयोगी ।
18.	कपूरकचरी Spiked ginger lily	Hedychium Spicotium	दन्तशूल में कन्दचूर्ण का तथा मुखदौर्गंध्य नाश हेतु कंद के टुकड़े का प्रयोग ।
19.	सेमल Silk cotton tree	Salmalia malabaricum	सेमल नियसिका पूयदन्त रक्तस्राव आदि में मंजन के रूप में प्रयोग ।
20.	समाफदाना Sumac	Rhus parviflora	स्कर्वी, दन्तशैथिल्य व दन्तमूल विकारों में फाए का गण्डूष या मंजन के रूप में प्रयोग ।
21.	अखरोट Walnut	Aleurites moluccana	त्वक् (दंदासा) को दन्तशैथिल्य मुख व्रणों में चबाते हैं ।
22.	लोध Lodh	Symplocos racemosa	छाल का दन्तमंजन के रूप में व्रण, स्राव व शैथिल्य में प्रयोग ।
23.	अकरकरा Pellitory	Anacylus Pyrethrum	कृमिदंत, दन्तशूल एवं शोथ में मूल क्वाथ से गण्डूष ।
24.	बड़ी इलायची Greater cardamom	Amomum Subulatum	दन्त एवं दन्तमूल (मसूढ़े) के विकार में फल क्वाथ का प्रयोग ।
25.	हींग Asofoetida	Ferula narthax	नींबू स्वरस में घिसकर, कोष्ण, कृमिदंत या दन्तशूल में पिचु लगाना ।
26.	बबूल Acacia	Acacia arabica	दातुन, काढ़े से गण्डूष - दांतों की सुरक्षा तथा रक्तस्राव रोकना ।
27.	बड़ Banyan	Ficus bengalensis	वायवीयमूल के दातुन या काढ़े से गण्डूष ।
28.	लवंग Clove	Syzygium aromaticum	लौंग या रस का तैल-एंटी सेप्टिक, दन्तशूल आदि में ।
29.	तुलसी Basil	Ocimum Sanctum	पत्र चूर्ण सरसों के तेल के साथ-पूयदंत, दौर्गंध तथा शिथिलता में ।
30.	वनतुलसी मरूवा	Majorana hortensis	तैल दन्तशूल में ।
31.	कायफल Bayberry	Myrica nagi	छाल चूर्ण सिरके के साथ मंजन-दांतों एवं मसूढ़ों की शिथिलता में ।
32.	चांदनी Tabernaemontana	T. coronaria	दन्तशूल में मूल या मूलत्वक् को चबाने से लाभ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्र०	द्रव्यमान	वानस्पतिक नाम एवं वर्ग	प्रयोग
33.	अतिबला Indian mallow	Abutilon indicum	दन्तशूल तथा दन्तहर्ष में इसका क्वाथ ।
34.	प्याज Onion	Allium cepa	कच्चे प्याज को 2-3 मिनट तक चबाना-एंटिसेप्टिक दन्तशूल में ।
35.	मरिच Pepper	Piper nigrum	मरिचचूर्ण नमक के साथ या लौंग तेल के साथ-कृमिदन्त, दन्तहर्ष, मुखदौर्गंध, दन्तशूल या रक्तस्राव में ।
36.	नीम Margosa	Azadirachta indica	दातुन के रूप में नियमित प्रयोग - रोगों में बचाव, दन्तशूल, चलदन्त तथा दुर्गंधनाशक ।
37.	तेजोवती	Zanthoxylum alatum	दन्तशूल में तथा दृढ़ता हेतु फलों, शाखाओं तथा कांटों का प्रयोग ।
38.	वज्रदन्ती	Barleria prionitis	दन्तशूल में पत्रकल्क में नमक मिलाकर लेप तथा चलदंत में नीलपुष्पी के पत्र क्वाथ का गण्डूष ।
39.	माजूफल Magic nuts	Quercus infectoris	कषाय तथा स्तंभक होने से चलदंत, स्कर्वी रक्तस्राव आदि कष्टों में तथा अनेक दन्तमंजनों में उपयोगी द्रव्य ।
40.	बकुल	Mimusops elengi	दांन्तों की शिथिलता में कच्चे फल को चबाना या छाल के काढ़े का गण्डूष धारण करना, दातुन करना ।
41.	लताकस्तूरिका Musk-mallow	Hibiscus abelmoschus	मुख एवं दन्तस्थ क्लेद एवं दौर्गंध्य नाश के लिये बीज का प्रयोग ।
42.	अरिमेद Cassia flower	Acacia Farnesiana	चलदन्त एवं रक्तस्राव में त्वक् क्वाथ का गण्डूष ।
43.	शरपुंखा Tephrosia	Tephrosia purphrea	दन्तविकारों में मूलचूर्ण से मंजनं या दातुन के रूप में प्रयोग ।
44.	झाबुक Tamarisk	Tamarix Gallica	स्कर्वी तथा दन्तपूय में पत्र से निर्मित क्वाथ का गण्डूष ।
45.	कंकोल Cubeb	Piper cubeba	कृमिनाशन दुर्गंधहर होने से अनेक दन्तमंजन में प्रयुक्त ।
46.	बीजक Malabar kino	Pterocarpus marsupium	दन्तशूल में इसकी गोंद लाभकारी ।
47.	सिरस	Albizia lebbak	दन्तशैथिल्य में त्वक क्वाथ का गण्डूष ।
48.	जद्वार	Delphinium denadatum	दन्तशूल में मूलकंद का टुकड़ा चबाते हैं ।
49.	खजूर Date palm	Phoenix Febrifuga	मूलचूर्ण मंजन के रूप में मूल क्वाथ का गण्डूष विशेष रूप से दन्तशूल में ।
50.	मांसरोहिणी Indian Red wood	Soymida Febrifuga	त्वक् के काढ़े का गण्डूष शूल एवं शोथयुक्त अवस्थाओं में ।

भूत वर्तमान तथा भविष्य त्रिकाल में अनुभवों, अनुभवकर्ताओं की कोई न्यूनता नहीं रही है । अतः यह कहना ही पड़ेगा कि यह प्रकरण यही समाप्त नहीं हो रहा है । नेति..... नेति..... नेति..... ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जुकाम (Coryza)-कारण तथा निवारण

*डा० रविकुमार श्रीवास्तव, एम.डी. (आयु.)
**डॉ० निधि श्रीवास्तव, एम.डी.(आयु.)
*** प्रो०बी.एन.सिंह, एम.डी., पी.एच.डी.(आयु.)

परिचय - जुकाम (प्रतिश्याय) नासा रोगों में प्रधान रोग है । अंग्रेजी में इसे कोराइजा या एक्यूट राइनाइटिस (Coryza or Acute Rhinitis) कहते हैं । नासिका की श्लेष्मल कला (Nasal Mucous-membrane) के शोथ को ही राइनाइटिस कहते हैं ।

आयुर्वेद मतानुसार प्रतिश्याय रोग के कारण - वेगों को रोकना (छींक के वेगों को), अजीर्ण, धूलसेवन, अत्यधिक बोलना, ऋतुओं की विषमता, तीव्र धुआं लगना, रात में जागना-दिन में अधिक सोना, अत्यधिक शीतल जल का सेवन करना, ओस का सेवन करना, अत्यधिक मैथुन करना, इस प्रकार विविध प्रकोपक कारणों से प्रकुपित होकर प्रतिश्याय रोग को उत्पन्न करते हैं ।

दोषानुसार प्रतिश्याय के भेद -

(1) वातिक (2) सन्निपातिक
(3) पैत्तिक (4) रक्तज
(5) कफज (6) दुष्ट प्रतिश्याय

जुकाम के पूर्वरूप में - छीकों का आना, सिर में अधिक भारीपन, जकड़न, अंगों में पीड़ा, रोगटों का खड़ा होना आदि लक्षण मिलते हैं ।

वातिक प्रतिश्याय - में नासिका में आनाह, अवरोध तथा इससे पतलास्राव होना, गला, तालु, होंठ का सूखना, सिरदर्द, छीकों का अधिक आना, मुख की विरसता आदि लक्षण होते हैं ।

पैत्तिक प्रतिश्याय - में नासिका से पीला तथा गरम स्राव निकलता है । नाक में जलन का अनुभव होता है । रोगी कृश और परेशान-सा रहता है ।

कफज प्रतिश्याय - में नाक से अधिक मात्रा में ठण्डा और सफेद कफ का स्राव होता है । कण्ठ, तालु, ओष्ठ तथा नाक में खुजली होती है । सिर में भारीपन रहता है । साथ-साथ कास, श्वास तथा अरुचि आदि लक्षण भी मिलते हैं ।

सन्निपातिक प्रतिश्याय - में जुकाम बार-बार होता है और ठीक हो जाता है तथा भिन्न-भिन्न लक्षण मिलते हैं ।

दुष्ट प्रतिश्याय - में बार-बार नाक गीली व सूखी हो जाती है । श्वास दुर्गन्धित आता है, रोगी का गन्धज्ञान नष्ट हो जाता है ।

रक्तज प्रतिश्याय - में नासिका से रक्त स्राव होता है । आँखों के आगे अंधेरा छाना, गन्ध ज्ञान नष्ट होना, श्वास तथा मुख से दुर्गन्ध आना आदि लक्षण मिलते हैं ।

पाश्चात्य चिकित्सकों के अनुसार प्रतिश्याय रोग के निम्न कारण माने गये हैं -

(1) कुछ सहायक कारण जैसे -
(क) ठण्डे मौसम में अधिक होना (Cold & Damp Weather)
(ख) अचानक वर्षा में भींग जाना ।
(ग) गन्दा एवं भीड़ युक्त स्थान (Stuffy, Dusty, Over-Crowded Atmosphere)।
(घ) अधिक धूल एवं धूमयुक्त स्थान (Dirty & Smoky Atmosphere)

इसके अतिरिक्त कुछ उत्प्रेरक कारण जैसे -

(1) वाइरस जन्य (कुछ रोग) कारण -
माइक्रोकाकस कैटारैलीज - Micrococcus-Catarrhails
पाक्स वाइरसेस् - जैसे — Measles, Small-pox, Chicken-pox

(2) जीवाणु जन्य संक्रमण जैसे -
स्ट्रेप्टोकाकस - Streptococus Viridans

* आयुर्वेदिक विशेषज्ञ, टी०के०डी०एल०, सी०सी०आर०ए०एस०, नई दिल्ली
** व्याख्याता, श्री बाबा मस्तनाथ आयुर्वेदिक कॉलेज, रोहतक
*** प्राचार्य, श्री बाबा मस्तनाथ आयुर्वेदिक कॉलेज, रोहतक

CC-0: In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्टैफिलोकाकस - Staphylococcus
न्यूमोकाकास - Pneumococcus
मेनिन्ह्रो काकस - Meningococcus
हीमोफिलस इन्फ्लुएन्जा - H. Influenzae

(3) नासिका तथा गले का संक्रमण - जैसे :- (Presence of Infection in Nasopharynx & Throat)
बच्चों में एडिनाइड्स का होना - Adenoids in children
तीव्र तुण्डिका शोथ या जीर्ण शोथ - Acute or chronic Tonsillitis
फैरिन्जाइटिस - Recurrent pharyngitis
कुछ दन्त रोग - Dental carris, gum Abscess
नासिका विवर शोथ - Acute or chronic sinusitis
नासार्श - Nasal - polypus
नासानाह - Nasal Septal Deviation

(4) एलर्जी के कारण उत्पन्न प्रतिश्याय - कुछ औषधि, भोजन, फूल, पाउडर के एलर्जी से उत्पन्न जुकाम ।

उपर्युक्त कारणों से जुकाम उत्पन्न हो सकता है । प्रतिश्याय एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में ड्रापलेट इनफेक्शन के द्वारा फैलता है ।

प्रतिश्याय (भेद)

तीव्र प्रतिश्याय	जीर्ण प्रतिश्याय	एलर्जिक प्रतिश्याय
Acutre Rhinitis	Chronic Rhinitis	Allergic Rhinitis

हापर ट्राफ्किराइनाइटिस	एट्राफिक राइनाटिस	राइनाइटिस सिक्का
Hypertrophic-Rhinitis	Atrophic Rhinitis	Rhinintis Sicca

प्रतिश्याय रोग में मुख्य रूप से सर्वप्रथम नाक में सूखापन, खुजली, दाह या जलन तथा बार-बार छींक का आना तथा इसके बाद नाक से पानी जैसा या चिकना, पुनः पिच्छिल स्राव (Watery mucoid or mucopurulent discharge) होता है । इसके साथ-साथ हल्के ठण्ड के साथ ज्वर, शरीर तथा सिर में दर्द, आलस्य, स्वरभेद आदि लक्षण मिलते हैं ।

जुकाम की यदि उचित चिकित्सा न की जाये तो उपद्रव रूप में-नासा विवर शोथ, मध्य कर्ण शोथ (Otitis media) ब्रोन्काइटिस (Bronchitis) ब्रान्कोन्यूमोनिया (Broncho-pneumonia) आदि रोग उत्पन्न हो सकते हैं।

जुकाम (प्रतिश्याय) की चिकित्सा -जुकाम की चिकित्सा में निम्न प्रकार की औषधि प्रयुक्त की जा सकती है ।

(1) महालक्ष्मीविलास रस - 375 मि.ग्रा
त्रिभुवन कीर्ति रस - 375 मि.ग्रा.
श्रृंग भस्म- 250 मि.ग्रा.
प्रवाल भस्म- 500 मि.ग्रा.
मिलित मात्रा 1
पान का रस व मधु से दिन में 3 बार ।

(2) बनफ्सादि क्वाथ - 50-60 मि.लि. ।
चीनी मिलाकर गुनगुना काढ़ा प्रातः सांयम सेवन करें ।

(3) व्योषादि बटी - 6 गोली ।
दिन भर में चूसने के लिए ।

(4) जीर्ण प्रतिश्याय में -
चित्रक हरीतिकी - 10 ग्राम + कटफलादि चूर्ण - 4 ग्राम / 2 मात्रा प्रातः सांयम गुनगुने दूध से ।

(5) षड्बिन्दु तैल - 3-4 बूंदें ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनों नाक में नस्यार्थ दिन में 2 बार ।

इसके अतिरिक्त तालिसादि चूर्ण, सितोपलादि चूर्ण, प्रवाल पंचामृतरस, गोदन्तीभस्म, वृ०पूर्णचन्द्र रस, च्यवनप्राश, व्योषाघ्र चूर्ण, कटफलादि चूर्ण, मृत्युंजय रस, क्षुद्रादि क्वाथ, तुलस्यादि फाण्ट आदि में से चुनाव कर सकते हैं ।

पथ्य (सेवन करने योग्य पदार्थ)- पेट को साफ रखें, पुराना जौ, गेहूँ, मूंग, सहजन की फली, लहसुन, परवल, उष्णोदक, त्रिकटु, सैंधव तुलस्यादि फाण्ट, गेहूँ का चोकर+काली, मिर्च+अदरख को पानी में पकाकर चीनी व नींबू रस मिलाकर सेवन करें, उष्ण कफ नाशक लघु भोजन का सेवन करें ।

अपथ्य (सेवन न करने योग्य पदार्थ)- शीतकारक हवा, कब्जकारक पदार्थ, दिन में सोना, मल-मूत्र को रोकना, द्रव पदार्थ का अधिक सेवन वर्ज्य ।

अनुपान - तुलस्यादि फाण्ट, काली मिर्च अदरख-मुलैठी, बनफ्सादि काढ़ा, पानस्वरस आदि ।

बैद्यनाथ

प्राणदा

प्राणदा से हर साल मलेरिया के लाखों रोगी प्राणदान पाते हैं । इसलिए इसका नाम प्राणदा बिल्कुल सही है । हिन्दुस्तान के गांव-गांव और कस्बे-कस्बे में यह दवा मशहूर है । इकतरा, तिजारी, चौथिया, फसली, जूड़ी-पारी का बुखार, बरवट और तिल्ली मलेरिया के ही भेद हैं । मलेरिया बुखार की हर हालत में यह तुरंत फायदा पहुंचाती है । बुखार के बाद भी दवा पीने से बुखार के फिर लौटने का भय नहीं रहता ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मीठा नीम (कड़ीपत्ता) - एक औषधीय भारतीय पौधा

जयेन्द्र कुमार जौहरी

बात जब नीम की हो और वह भी मीठा, फिर क्यों न आश्चर्य हो। ऐसा ही एक भारतीय बहुचर्चित पौधा है "मुराया कोनिंगाई"। भारत में एक आम मुहावरा है कि "मतलब निकल गया तो पहचानते नहीं", ऐसा ही कुछ मीठा नीम के साथ भी है। इसके फलों को विभिन्न व्यंजनों में सुगंध के लिये प्रयोग करते हैं और प्रयोग करने के बाद समय निकाल कर फेंक देते हैं। कड़ी पत्ता अपनी अनूठी सुगंध के लिये देश व विदेश में बहुचर्चित है तथा अब इसे विश्व व्यापार के सगंधीय मसालों में एक विशिष्ट स्थान प्राप्त हो चुका है।

'मुराया' रूटेसी परिवार का सदस्य है जो अपने विशिष्ट सगंधीय व औषधीय गुणों के कारण दक्षिणी भारत में बहुत समय से प्रयोग में लाया जाता है। इसका उपयोग प्राचीन काल से व्यंजनों में किया जाता है। इसके पौधे की ऊंचाई 6 मीटर तक हो जाती है। यह पूरे भारत में उगाया जाता है। भारतीय वनों में यह विशेष रूप से पाया जाता है परन्तु अब यह "किचेन गार्डेन" की शोभा हो गया है तथा इसकी पत्तियाँ विषम पद्वाकार "इम्पीपिन्नेट" प्रकार की होती है। इसके फूल शाखाओं की ऊपरी फुनगी पर लगते हैं। इसका फल बेर के सामन होता है जो कि रंग में बैंगनी से काला होता है। इसके फूल प्रायः मार्च अप्रैल में फूलते हैं तथा मई से जुलाई के महीने में इसके फल पाये जाते हैं। इसकी लकड़ी बहुत कठोर होने के कारण कृषि यंत्रों के हत्थे बनाने में प्रयोग की जाती है।

औषधीय उपयोग :- 17 वीं शताब्दी के ग्रंथ "हार्टस मताबेरिकस" में इस पौधे का वर्णन मिलता है। इस ग्रंथ में पुर्तगालियों ने इसे केरल के विशिष्ट पौधे के रूप में वर्णित किया है। इस ग्रन्थ के कथनानुसार इस पौधे को "मालाबार" तट के लगभग हर घर में उगाया जाता है।

यह प्रायः पाचक होता है तथा पेचिश की रोकथाम में सहायक होता है। यह मनुष्य में खून में कोलेस्ट्राल की मात्रा को नियंत्रित करता है। यह कैन्सर रोधी है। गरी के तेल में मिलाकर प्रयोग करने से बाल स्वस्थ व काल रहते हैं। मीठा नीम की पत्तियों का कड़वी नीम की पत्तियों के साथ काढ़ा, महाराष्ट्र में बुखार उतारने का घरेलू उपचार है। महाराष्ट्र में ही इसका उपयोग छूत की बीमारियों की रोकथाम के लिये भी किया जाता है। इसकी जड़ों को पेट साफ करने हेतु प्रयोग में लाया जाता है। इसके अतिरिक्त मीठा नीम को टॉनिक के रूप में पाचन हेतु भी प्रयोग किया जाता है।

दक्षिणी भारत में साँप के काटने पर घरेलू वैद्य मीठा नीम को गोमूत्र के साथ सेवन हेतु देते हैं। वर्तमान में यह वैज्ञानिक रूप से सिद्ध हो चुका है कि मीठा नीम में अविषालु या विष को नष्ट करने वाले कोई गुण नहीं हैं तथापि घरेलू वैद्यों की यह धारणा और उपयोग एक पहेली है। एक अनुमान के अनुसार मीठा नीम विष को शरीर में फैलने से रोकता है।

रासायनिक संगठन :- मीठा नीम में एक सगंध वाष्पीय तेल विद्यमान होता है जिसे आसवन विधि द्वारा निष्कर्षित किया जा सकता है। यह तेल साबुन व्यवसाय में काम आता है। शुद्ध तेल गहरे पीले रंग का होता है जिसमें तीव्र सुगंध आती है। इसका स्वाद लौंग के तेल के स्वाद के समान होता है। इसके फल को खाया जा सकता है। मीठा नीम के फल में भी एक वाष्पीय तेल होता है जिसे आसवन विधि द्वारा निष्कर्षित किया जा सकता है। इसके फल में कोइनिंगिन नामक रसायन पाया जाता है।

कड़ी पत्ता लगाने की विधि :- मीठा नीम को ज्यादातर बीज से उगाया जाता है। इसके बीज छाया व नम स्थान पर शीघ्र उग जाते हैं। इसके पके हुये बीजों को रेतीली भूमि में नर्सरी हेतु बोया जाता है जो कि 10-20 दिन में पूर्ण रूप से उग जाते हैं। 1-2 माह के होने पर इन्हें पालीबैग में लगा दिया जाता है। पालीबैग में एक माह तक उगाने के बाद उन्हें खेतों अथवा गमलों में लगाया जा सकता है।

राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, लखनऊ - 226001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दक्षिणी भारत में घरेलू प्रजाति के पौधों की पत्तियाँ छोटी व अति सुगंधकारी होती हैं । इन पत्तियों पर प्राय: हल्के लाल रंग के धब्बे पाये जाते हैं जो कितने एवं शिरा धरातल के पास दिखाई पड़ते हैं । जंगली प्रजाति की पत्तियाँ आकार में थोड़ी बड़ी "लगभग 50 से.मी." व्यास तक की होती है जिनमें अनेकों छोटी पत्तियों के समूह होते हैं । इस प्रजाति में देशी प्रजाति के मुकाबले सुगंध थोड़ी कम होती है ।

व्यवसाय :- पिछले कुछ दशकों तक कड़ी पत्ते का उपयोग घरेलू बागान से तोड़कर ही किया जाता था क्योंकि ताजी हरी पत्तियाँ ज्यादा सुगंधित होती हैं । लेकिन बढ़ती जनसंख्या व शहरी विकास के साथ घरों में पौधे लगाने का स्थान उपलब्ध नहीं रहा । अत: आज मीठा नी सब्जी बाजार में एक जरूरी सामग्री के रूप में उपल होता है । इसकी सुगंध अब भारतीय व्यंजनों की शान हो गयी है । अत: इसका विदेशों को भी किया जाता है । अफ्रीकी, यूरोपीय व अरब देशों में विशेष माँग है । आज नयी-नयी तकनीक व प्रौद्यो द्वारा पत्तों को ज्यादा समय तक तरोताजा व सुगंध बरकरार रखा जा सकता है । इसके निर्यात द्वारा हम देश के लिए बहुमूल्य विदेशी मुद्रा का अर्जन कर हैं । आज वह केवल भारतीय ही नहीं अपितु अन्तर्राष्ट्रीय सामग्री हो गयी है जो कि हमारे देश में प्रा काल से उपयोग में लाया जा रहा था ।

बैद्यनाथ

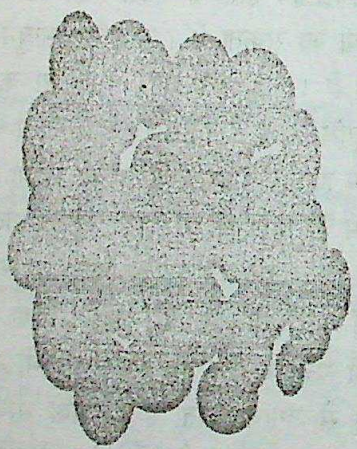

मधु

शरीर को शीतलता पहुँचाता, भूख बढ़ जाता है । आँखों के लिए उपयोगी एवं कांतिवर्द्धक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेदिक गर्भ निरोधक औषधियाँ

* डॉ०अनिल मंगल
** डॉ०उमा मंगल
*** प्रो० वैद्य महेश चन्द्र शर्मा

वर्तमान परिस्थितियाँ विपरीत होने से परिवार नियोजन की समस्या प्रादुर्भूत हुई हैं । वस्तुत: प्राचीन समय में भी इस समस्या का बाहुल्य रहा, किन्तु उस समय का उद्देश्य वर्तमान समय जैसा नहीं था अपितु उनका लक्ष्य सामाजिक कतिपय कुरीतियों को प्रकट न होने देना अथवा उन्हें विकसित न होने देना था ।

प्राचीन समय में भी संतति निरोध पुरुष एवं स्त्री दोनों के लिये था ।

1. **पुरुषों हेतु संतति निरोध का उद्देश्य** - राजमहलों में अंत:पुरों में सेवा कार्य करने हेतु जिन पुरुषों को रखा जाता था उनके बाल्यावस्था में ही वृषण ग्रन्थियों (Testis) का बन्धन अथवा निष्कासन कर दिया जाता था जिससे वे अन्त:पुरों में रहते हुए भी कामोद्दीपन से रहित रहते थे ।

2. **स्त्री हेतु संतति निरोध का उद्देश्य** - वेश्याओं में अबाध मैथुन प्रवृति हेतु एवं कौमार्य युक्त अभिसारिणी यौवनाओं द्वारा संतानोत्पत्ति न होने के उद्देश्य से प्रेरित था ।

प्राचीन समय में परिवार नियोजन के उद्देश्य व्यक्तिगत एवं सीमित थे किन्तु वर्तमान समय में जनसंख्या वृद्धि विकराल समस्या के रूप में उपस्थित है जिससे सम्पूर्ण राष्ट्र पीड़ित है, "आबादी का बढ़ता बोझ, घटते साधन, बढ़ता कर्ज" जैसे वक्तव्य स्पष्टत: इंगित कर रहे हैं कि जनसंख्या का बढ़ना कितना दुखदायी हो रहा है ।

इस समस्या के निष्पादन हेतु समय-समय पर अनेक योजनायें बनाई जाती रही हैं परन्तु उनसे इस समस्या पर कोई अंकुश नहीं लगाया जा सका है ।

वर्तमान समय में संतति निरोध के लिये मुख्य रूप से तीन विधियाँ प्रयुक्त होती हैं -

1. शस्त्रकर्म
2. औषधि प्रयोग
3. बाह्य निरोध साधन

शस्त्रकर्म के अन्तर्गत पुरुषों के लिए Vasectomy तथा स्त्रियों के लिए Tubectomy किये जाते हैं ।

औषधि प्रयोग बाह्य एवं आभ्यान्तर प्रकार से दो प्रकार के हैं । बाह्य औषध प्रयोग हेतु योनि में स्थानिक प्रयुक्त औषध उदाहरण "Todays" आदि की जाती है । जो कुछ समय में ही योनिमार्ग में Dissolve होकर एक तरल माध्यम पैदा कर देती है जिससे शुक्राणु गर्भाशय में प्रवेश नहीं करता है ।

आभ्यान्तर औषधि हेतु विभिन्न प्रकार की औषधियाँ जैसे - MALA-D, DOLUTON-L (Wyeth) प्रयुक्त की जाती हैं ।

3. बाह्य निरोध साधन हेतु विभिन्न प्रकार के उपकरण जैसे - कंडोम, जैली, कॉपर टी, रिंग आदि को प्रयुक्त किया जाता है ।

उपर्युक्त सभी विधियों का मुख्य उद्देश्य निषेचन क्रिया (Fertilization) को रोकना ही है ।

प्राचीन काल में भी ऐसे ही कुछ उपायों का प्रयुक्त किया जाता था जो निम्न प्रकार हैं -

A. गर्भ पूर्व कालिक (गर्भधान निरोधक)

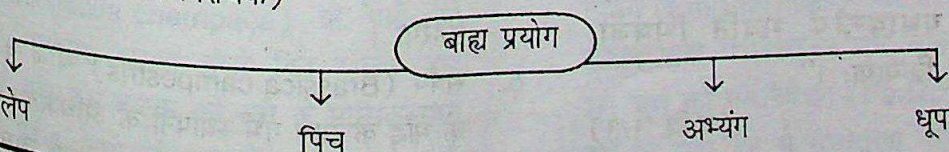

* एम.डी.; पी.एच.डी. (अध्येता) एवं रिसर्च फैलो ** बी.ए.एम.एस. चिकित्सक, मंगल हॉस्पीटल, जयपुर
*** एम.डी., पीएच.डी., एम.ए. विभागाध्यक्ष
द्रव्यगुण विज्ञान विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

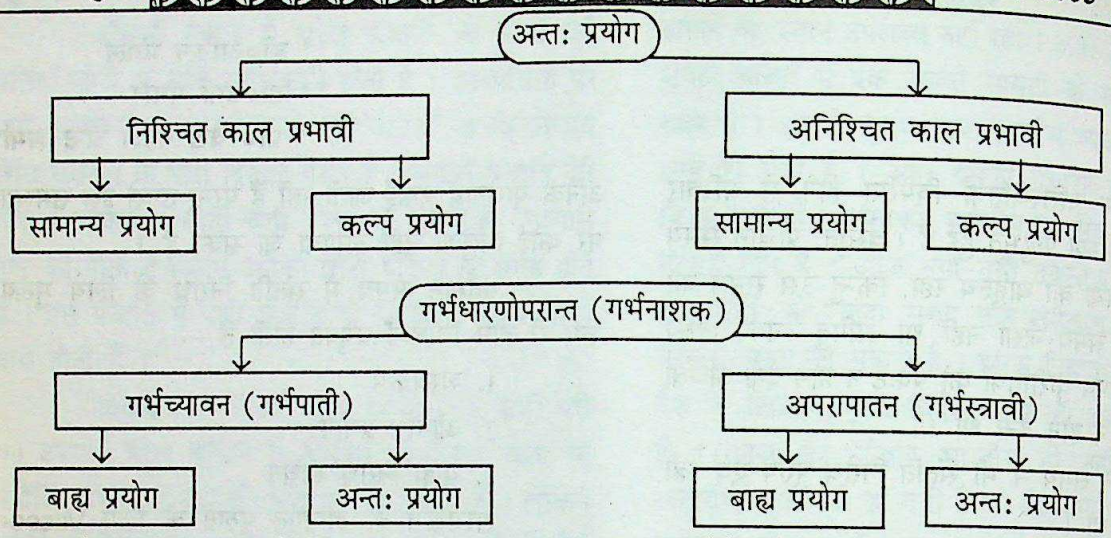

इसके अतिरिक्त आचार्यों ने ऋतुस्राव के पश्चात् सोलह रात्रियों तक स्त्री गमन न करना, विपरीत आसन का संभोग आदि प्रयोग बताये हैं ।

चरक शारीर स्थान में तो गर्भोपघातकर भाव- अतिगुरु, उष्ण, तीक्ष्ण चेष्टायें, विषम आसन, पुरीषादि वेगों को रोकना, अभिघात आदि को भी बताया है ।

वस्तुतः गर्भनिरोधक एवं गर्भनाशक योगों का उल्लेख आयुर्वेदीय चिकित्सा ग्रंथों में 12 वीं शती के बाद के ग्रंथों में मिलता है । ऐसे अनेक ग्रन्थ जैसे - योग रत्नाकर, वैद्यवल्लभ, बन्ध्यजीवन, हरमेखला, कामसूत्र, अनंगरंग, रतिशास्त्र, रतिरहस्य, रतिमंजरी, कुचिमारतंत्र आदि ग्रन्थों में अनेक योग उल्लिखित हैं ।

इन्हीं ग्रन्थों में से कुछ योगों को हमने चुना और चिकित्सा में प्रयुक्त किया जो काफी हद तक सफल सिद्ध हुए । परन्तु इसके अतिरिक्त एक मुख्य बिन्दु पाया कि आयुर्वेद का सिद्धान्त सत्य है कि-

"दोष विकार भेषज काल बल शरीराहारासार सात्म्य सत्व प्रकृति वयसां
मानमवहित मनसा यथावज्ज्ञेयं भवति भिषजा: तसादिमानज्ञानायत्तत्वात् क्रियाया: ।"

(च.वि. 1/3)

क्योंकि इसी आधार पर वास्तविक सिद्धि-सफलता निर्भर है ।

ऐसे अनेक योगों को हम यहाँ उद्घृत कर रहे हैं, जो शास्त्र एवं पारम्परिक चिकित्सा में वर्णित एवं प्रयुक्त हैं -

1. निम्बछाल (Margosa wood) की धूम को मासिक स्राव के बाद दिया जाये तो गर्भस्थापना से बचा सकता है ।
2. एक रॉक साल्ट के टुकड़े को तिलतैल (Sesame Oil) के साथ भिगोकर संभोग से पूर्व योनि में रखा जाये तो इससे भी गर्भस्थापना नहीं होगी ।
3. पलाश (Butea monosperma) बीज चूर्ण, घृत और शहद को मिश्रित कर लेह (Paste) जैसा बनाकर स्त्रीयोनि में लगाने से गर्भ नहीं रूकेगा ।
4. चित्रक मूल (Root of Plumbago zeylanica) के क्वाथ को चावल के माँड़ (Rice Wash) के साथ लेने से स्त्री को गर्भ नहीं ठहर सकता ।
5. कदम्ब (Antho cephalus indicus) के फल को शहद के साथ मिलाकर ऋतुस्राव के बाद तीन दिन तक गुनगुने पानी के साथ लेने से स्त्री को गर्भ नहीं ठहरेगा ।
6. सर्षप (Brassica campestris) बीज को चावल के माँड़ के साथ गर्भ स्थापना के अधिकतम सम्भावित (10-18th days) में सात दिन दिया जाय तो स्त्री हमेशा के लिये बांझ हो सकती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पलाश (Butea monospesma) बीज चूर्ण को गर्भनिषेचन (fertilization) के दौरान 3 दिन देने से स्त्री बंध्या हो जाती है ।

तण्डुलीयक (Amarantus spinosus) मूल चूर्ण को चावल के धोवन (Rice Wash) के साथ मिलाकर मासिक स्राव के साथ 3 दिन तक सेवन कराने से स्त्री को बंध्या बनाया जा सकता है ।

हरिद्रा (Curcuma longa) के काण्ड (Rhizome) को यदि 6 दिन तक (3 दिन मासिक स्राव के साथ तथा 3 दिन बाद के) दिया जावे तो स्त्री में बंध्यत्व पैदा हो जायेगा परन्तु मासिक स्राव आता रहेगा ।

त्रपुष (Cucumis sativus) को शैलू पत्र (Cordia dichotoma) के साथ देने से गर्भधारण नहीं होता है।

पाठा पत्र (Cissampelos pareira) को मासिक स्राव के बंद होने के बाद, स्नान कर लेने के बाद यदि स्त्री लेती है तो वह निश्चित ही बंध्यत्व को ग्रहण करेगी ।

शाल्मलि (Salmalia malabarica) के पुष्पों को स्त्री नियमित लेती है तो वह निश्चित ही बंध्यत्व को ग्रहण करेगी ।

वकुल (Mimusops elengi) के पुष्पों को एल्कोहल के साथ पीसकर यदि स्त्री मासिक स्राव के दौरान लेती है तो उसका मासिक स्राव भविष्य में कभी नहीं होगा । अर्थात् वह सदैव के लिये बंध्या हो जायेगी ।

श्वेत मरिच (Piper nigrum) को चीनी के घोल (Sugar Water) के साथ कल्क बनाकर यदि स्त्री को मासिक स्राव के 3 दिन तक दे दिया जाये तो उसको मासिक स्राव फिर कभी नहीं होगा ।

चम्पक (Michaelia champaca) के पत्रों को रात्रिपर्यंत भिगोकर उसका दूसरे दिन कल्क बना लिया जाये और उस कल्क को स्त्री के मासिक स्राव के दौरान दिया जाये तो उसको गर्भस्थापना नहीं होगी।

16. ताल पत्र (Borassus flabellifer) के चूर्ण को गेरू (Red Ochre) के साथ मिलाकर यदि ठण्डे पानी के साथ मासिक स्राव के चौथे दिन दिया जाये तो स्त्री बंध्यत्व ग्रहण कर लेती है ।

17. श्वेत गुंजा (Abrus precatorius) को रात्रि पर्यन्त पानी में भिगोंकर मासिक स्राव के चौथे दिन एक बीज, पांचवें दिन दो, 6वें दिन 3 बीज नियमित रूप से देने से स्त्री के 3 वर्ष तक गर्भधारण नहीं होती है ।

18. एरण्ड बीज (Ricinus communis) के गूदेदार भाग को गर्भस्थापना न होने के लिये प्रयुक्त किया जाता है । एक वर्ष हेतु एक बीज, दो वर्ष के लिये 2 बीजों को मासिक स्राव के दौरान प्रयोग में लिया जाता है । इससे एक या दो वर्षों तक गर्भधारण नहीं होगा ।

19. अग्निमंथ (Clerodendrum phlomidis) के मूलत्वक् के क्वाथ को चावल के धोवन (Rice Wash) के साथ देने से बंध्यत्व उत्पन्न होता है ।

20. जम्बू (Syzium cumini) पुष्पों को पीसकर बारीक चूर्ण बनाकर गोमूत्र के साथ यदि स्त्री को मासिक स्राव के दौरान दिया जाये तो स्त्री बांझ हो जायेगी ।

21. तालीसपत्र (Abies webbiana) के पत्रों को बराबर मात्रा में गैरिक (Ochre) के साथ मिलाकर प्रयोग किया जाये तो वह बंध्यत्व पैदा करता है ।

22. बदरी (Zizyplus jujuba) फलों को तथा लाख (Lac) को अदरक तैल (Ginger Oil) के साथ उबाल कर प्रयोग करने से स्त्री को गर्भधारण नहीं होगा ।

23. पिप्पल्यादि योग - पिप्पली (Piper Longum), विडंग (Embelia ribes) और टंकण (Borax) को समान मात्रा में मिलाकर चूर्ण बना लिया जाये और इस चूर्ण को गर्भनिषेचन (Fertilization) के समय दूध के साथ देने से गर्भधारण नहीं होगा ।

इस पर CCRAS, Delhi ने प्रयोग द्वारा सिद्ध किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि यदि मासिक स्राव के प्रथम दिन से योग को पूर्ण चक्र (अर्थात् 20 दिन) तक प्रयोग में लिया जाये और ऐसा 3 चक्रों (Cycles) तक किया जाये तो स्त्री में गर्भ धारण 100% तक नहीं होता है ।

24. धात्र्यादि चूर्ण :- आंवला (Emblica officinalis), अर्जुन (Terminalia arjuna), और हरड़ (Terminalia chebula) के चूर्ण को जल के साथ लेने से मासिक स्राव बंद हो जाता है ।

25. रसांजनादि चूर्ण :- रसांजन (Aqueous extract of Berberis aristata), वचा (Acorus calamus) और हरीतकी (Terminalia chebula) का चूर्ण बनाकर, उसे ठण्डे जल से लिया जाये तो उसे गर्भधारण नहीं होगा।

26. काला जीरा (Carum Carvi), कचूर (Curcuma zedoria), नागकेशर (Mesua ferrea), कलौंजी (Nigella sativa) और कट्फल (Myrica nagi) को समान मात्रा में लेकर चूर्ण बनाकर जल के साथ मिश्रित कर इनकी गोली बनाकर प्रयोग किया जाये तो इससे मासिक स्राव रुकता है । साथ ही बंध्यत्व पैदा हो जाता है ।

27. चंदन चूर्ण (Santalum album), सरसों और चीनी को बराबर मात्रा में लेकर उसे चावल के धोवन (Rice wash) के साथ मिश्रित कर प्रयोग में लेने से स्त्री बांझ हो जाती है ।

इन सबके अतिरिक्त ऐसे अनेक योग ग्रन्थों में वर्णित हैं जिनका प्रयोग वर्षों से जन समाज कर रहा है। साथ ही ऐसे अनेक योग जो अभी तक प्रचलित नहीं हैं, परन्तु ग्रन्थों में वर्णित हैं उन पर शोध जारी है ।

योगों के प्रयोग में वय एवं शारीरिक संगठन का महत्व अधिक है । अत: परिणाम अलग-अलग रोगियों में पृथक्-पृथक् रहते हैं ।

परीक्षा के समय आपके लाड़ले को जरूरत है एकाग्रता और अधिक कार्यक्षमता की
आपके लाड़ले का उज्जवल भविष्य आपका सपना है । पर आज की तीव्र प्रतिस्पर्धा व पढ़ाई का बोझ आपके लिए चिंता का विषय भी है । ऐसे माहौल में आपके बच्चे की जरूरत है एकाग्रता व समझने की क्षमता की, उसे जरूरत है बैद्यनाथ शंखपुष्पी की, तो आज ही से अपने लाड़ले को दीजिए....

बैद्यनाथ

शंखपुष्पी

आज हररोज और वर्षभर

शरबत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खुद की जाँच खुद करें

*डा० रवि कुमार श्रीवास्तव **डा०निधि श्रीवास्तव

सर्वमन्यत् परित्यज्य शरीरमनुपालयेत् ।
तद् भावे हि भावानां सर्वभाव शरीरिणाम् ॥
(चरक)

अन्य सब कुछ को छोड़कर शरीर की रक्षा करनी चाहिए क्योंकि शरीर है तो सब कुछ है । शरीर के नाश होते ही सभी भाव खत्म हो जाते हैं । यदि हम अपने स्वास्थ्य का ध्यान खुद रखें तो उससे भविष्य में बड़ी मदद मिलेगी और गंभीर बीमारियों को प्राथमिक अवस्था में ही पहचान लेगा और समय पर उपचार कराना संभव होगा । साल में कोई भी एक दिन (हो सके तो अपना जन्मदिन हो) निकाल कर हर साल अपने स्वास्थ्य की स्वयं जाँच करें । आइये, जाँच किस प्रकार करनी है, इसके उपाय हम आपको बतलाते हैं :-

(1) हृदय की जाँच -

(क) बीस सीढ़ियाँ एकदम में चढ़ने का प्रयास करें या

(ख) एक किलोमीटर तेजी से चलें ।

- छाती में दर्द हो, खूब पसीने आए, दम लगने लगे, थकान महसूस हो तो हृदय रोग विशेषज्ञ को तुरन्त दिखलायें ।

विशेष: ऐसा कुछ होने पर तुरन्त व्यायाम बंद करें और आराम करें ।

(2) श्वसन की जाँच -

(क) बच्चों के खेलने वाला गुब्बारा लें । उसे कद्दू के आकार का होने तक एक साँस में फुलायें ।

(ख) यदि न फुला पायें, चक्कर आने लगे या सरदर्द करे, तो श्वसन संस्थान में दोष हो सकता है । अपने फिजिशियन से सलाह लें ।

(3) आँखों की जाँच -

(क) दीवार पर एक कैलेन्डर लटकायें ।

(ख) उससे करीब दस फुट के अंतर पर खड़े हो जायें ।

(ग) पहले बायीं आंख बंद करके दाँयी आँख की फिर दाँयी आँख बंद करके बाँयी की बारी-बारी से जाँच करें ।

(घ) छोटे-बड़े-मध्यम अक्षर आप पढ़ सकते हैं ?

(4) कान व श्रवण शक्ति परीक्षा -

(क) तीन फुट-छः फुट-बारह फुट अंतर से क्या आपको सामान्य सुनाई देता है ?

- यदि तीन फुट के अंतर से सुनाई नहीं देता है तो 70% बहरापन है ।
- यदि छह फुट के अंतर से सुनाई नहीं देता है तो 50% बहरापन है ।
- यदि बारह फुट के अंतर से सुनाई नहीं देता है तो 30% बहरापन है ।
- ऐसी स्थिति में ई.एन.टी. स्पेशलिस्ट से कानों की जाँच करवायें ।

(5) स्पर्श की जाँच -

(क) क्या ठण्डा और गर्म का फर्क आपकी त्वचा महसूस करती है ?

(ख) क्या आपके शरीर की त्वचा को विशेषत: पीठ, गर्दन, हाथ-पैर की अंगुलियों की त्वचा को स्पर्श का अनुभव भली-भाँति होता है ?

- यदि नहीं तो किसी स्किन स्पेशलिस्ट को दिखा लें ।

(6) स्तनों की जाँच -

(क) जमीन पर लेट कर बाँयें हाथ से दाँया और दाँयें हाथ से बाँयें स्तन के कपड़े उतार कर जाँच करें ।

(ख) स्तन में दर्द हो, गाँठ हो या कोई स्राव हो तो स्त्री रोग विशेषज्ञ से सलाह लें ।

(7) स्त्रियों की माहवारी -

(क) अधिक रक्तस्राव होना, नियत तारीख से पहले या बाद में माहवारी आना, माहवारी खत्म होने के बाद भी बीच-बीच में रक्त स्राव होना, स्त्री-पुरुष संबंध के साथ रक्त स्राव होना ।

(ख) प्रदर- उसमें में बदबू आना, खुजली होना, जलन होना, थकान होना, कमजोरी का एहसास होना ।

- ये सब हो तो तुरन्त किसी स्त्री रोग विशेष से सलाह लेनी चाहिए ।

* आयुर्वेदिक विशेषज्ञ, टी.के.डी.एल. प्रोजेक्ट निस्कॉम - नई दिल्ली
** व्याख्याता -- शरीर रचना, श्री बाबा मस्तनाथ आयुर्वेदिक कॉलेज, अस्थल बोहर, रोहतक (हरियाणा)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समस्या नहीं है, हिचकी आना

- कैलाश

हिचकी आना हमारे देश में किसी रिश्तेदार अथवा आत्मीयजन द्वारा याद किये जाने का द्योतक माना जाता है कि यदि मन ही मन याद करने वाले व्यक्ति का नाम लिया जाए, तो हिचकी आना बंद हो जाती है । प्राचीन रोम में किसी को बद्दुआ देने के लिए कहा जाता था कि भगवान तुझे हिचकियां बख्शे !

बहरहाल, चिकित्सा-संबंधी विभिन्न प्रयोगों ने यह साबित किया है कि हिचकी कोई गंभीर रोग नहीं है, सामान्यत: हिचकी प्रत्येक व्यक्ति को आती है और थोड़ी देर में स्वत: बंद हो जाती है, कई बार लगातार हिचकी के बारे में सोचने से मनोवैज्ञानिक कारणों से हिचकी का दौर शुरू हो जाता है ।

आखिरकार हिचकियां आने की पृष्ठभूमि में कौन से कारण हैं ? वस्तुत: जब हम किसी सामान्य शारीरिक नियम के विरूद्ध आचरण करते हैं तो हिचकियां आने लगती हैं । हमारे शरीर की आंतरिक व्यवस्था के अन्तर्गत पेट और छाती को विभाजित करने वाली एक महीन किन्तु मजबूत परत होती है, जिसे 'डायफ्राम' में खिंचाव आता है, इसी के कारण हिचकियां आने लगती हैं, आवश्यकता से अधिक भोजन करने से, भोजन को पर्याप्त मात्रा में नहीं चबाने से, अधिक तेज मसालेदार भोजन करने से और अत्यधिक गर्म चाय आदि पीने से भी हिचकियां आ सकती हैं । इसके अलावा, अत्यधिक मदिरापान, तनाव, लगातार हंसना या रोना भी हिचकियां आने के अन्य कारण हैं । हिस्टरिया जैसे मानसिक रोग के रोगी भी हिचकियों के शिकार होते हैं ।

बच्चों को दूध पिलाने से जो गैस बनती है, वह डायफ्राम से टकराकर 'फ्रेनिक गर्व' नामक नस में खिंचाव पैदा करती है, इस खिंचाव से भी बच्चे को हिचकियां आने लगती हैं । शारीरिक संरचना की दृष्टि से हिचकियां आना हमारे श्वसन एवं पाचन-तंत्र में पैदा हुई अस्थायी गड़बड़ी को रेखांकित करता है, किसी भी गड़बड़ी की तरह ही इसकी सूचना तुरन्त मस्तिष्क प्रेषित की जाती है । मस्तिष्क श्वसन-तंत्र में अवरोध कर देता है, इससें सांस लेने में झटके लगने लगते झटके ही मूलत: हिचकियां हैं, हिचकियां शरीर में अभाव को भी सूचित करती हैं । आमतौर पर एक पानी पी लेने से हिचकियां रूक जाती हैं ।

वैसे सामान्य रूप से हिचकियां कुछ समय जाने पर खुद-व-खुद रूक जाती हैं, मगर कभी-कभी किसी व्यक्ति को लगातार कई दिनों तक हिचकियां रहती हैं । पौलैंड के एक व्यापारी मार्क वेलेसा, 12 सालों तक हिचकियों से परेशान रहे । डॉक्टर हिचकियों का उपचार करने में असमर्थ रहे, कई में तो निरन्तर हिचकियां आते रहने से रोगी की मृत्यु हो गयी ।

वस्तुत: हिचकियों के कारण तथा निदान संबंध में अभी पर्याप्त अनुसंधान होना शेष है, हिचकी के उपचार हेतु पानी पी लेना पर्याप्त है पानी पी लेने से गलत जगह फंसा हुआ भोजन का निकल जाता है । प्राचीन विश्वासों के अनुसार, प्याज काटकर सूंघने, लहसुन की माला पहनने तथा गिनकर घूंट पानी पी लेने से हिचकी आना रूक जाती है, अंधविश्वास भी हमारे यहां प्रचलित है कि हिचकी ग्रस्त व्यक्ति पर मिथ्या आरोप लगाने से भी हिचकी जाती है ।

कुछ घरेलू नुस्खे भी हिचकी को रोकने कारगार साबित हुए हैं । पोदीना में शक्कर मिलाकर से हिचकी में राहत मिलती है, कई बार शहद चाटने हिचकी से मुक्ति मिल जाती है, हींग की धूनी देने हिचकी तुरन्त दूर हो जाती है,

सेंधा नमक घी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में मिलाकर हिचकी के रोगी को सूंघाने से उसे तत्काल फायदा महसूस होगा, उबले हुए चावल में घी डालकर खाने से भी हिचकी में लाभ मिलता है ।

प० जर्मनी के एक वैज्ञानिक का मत है कि यदि हिचकी का दौर शुरू होने पर शक्कर के कुछ दाने निगल लिये जाएं तो हिचकी आना रूक सकता है । दोनों कानों में अंगुलियां डालकर दबाने से भी हिचकी आना बंद हो जाती है । डॉ रोनाल्ड राइट के अनुसार, हिचकीग्रस्त व्यक्ति द्वारा मुंह कागज के थैले में रखकर उसके द्वारा सांस में छोड़ी गयी कार्बन ऑक्साइड को पुनः खींचने प हिचकियाँ रूक सकती हैं, इस उपचार के पीछे शरीर उपस्थित ऑक्सीजन एवं कार्बन-डाई आक्साइड के अनुपा को गड़बड़ाना है, ताकि जब शरीर में ऑक्सीजन की मात्र कम होगी, तो नसें व मांसपेशियां शिथिल हो जाएंगी औ हिचकियां स्वतः रुक जाएंगी ।

वस्तुतः हिचकियों से बचने का सबसे आसा तरीका है - खानपान में सतर्कता बरतना तथा आहा संबंधी नियमों का मुस्तैदी से पालन करना ।

अब भूल जाइये महीने की चिंता

सुन्दरी कल्प के नियमित सेवन से सिर्फ आपका मासिक तनाव दूर नहीं होता है बल्कि आपके शरीर को मिलती है :

* मासिक धर्म की अनियमितता एवं दर्द से राहत ।
* रक्त शुद्धिकरण से कान्तियुक्त त्वचा ।
* पोषण से सम्बन्धित विकारों का समाधान ।

आज ही सुन्दरी कल्प अपनाएँ और अपने शरीर को रखें स्वस्थ एवं निरोग, महीने भर ।

बैद्यनाथ

सुन्दरीकल्प

फोर्ट

"अब आप भी अपना ख्याल रखिए"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर शुद्ध करने का उपयुक्त समय - शरद ऋतु

कविराज डा० दिवाकर ठाकुर, जी.ए.एम.एस. ऑनर्स (पटना) डी.एस.सी.ए. (आयुर्वेद वृहस्प

सम्प्रति हम शरद ऋतु में विचरण कर रहे हैं । यह आश्विन और कार्तिक दो महीनों की होती है यानि 16 दिसम्बर से 15 नवम्बर तक इसका समय निर्धारित किया गया है । यह विसर्ग काल का समय है जब सूर्य पृथ्वी से दूर हो जाता है । इस मौसम में सूर्य की शक्ति क्षीण और चन्द्रमा बलशाली हो जाता है । आचार्य चरक ने इस ऋतु को ''नृणां मध्य बलावहा'' कहा है ।

कविवर राज शेखर ने इस ऋतु को सुहावने ढंग से वर्णन किया है । वर्षा की ठंढी फुहारें, मेघाच्छन्न आकाश, मूसलाधार बारिश व भयंकर ऊमस के बाद परम सुन्दर शरद ऋतु के आगमन से जन मानस को शांति मिलती है । नदी, जलाशय, तालाब और पोखरों का पानी सूखने लगता है । पृथ्वी बिना कीचड़-धूल का और आकाश बिन बादल शोभायमान होता है । भौंरें अनुपम शब्द करते हुए गूंजते हैं, पक्षियों के नानाविध कलरव कर्ण प्रिय लगते हैं, पपीहरा पीऊ-पीऊ का रट लगाये रहता है, पृथ्वी पर वर्षा ऋतु में उत्पन्न विषैले कीट पतंग धीरे-धीरे नष्ट होते जाते हैं । शरद ऋतु में दिन को पड़ने वाले सूर्य का ताप और रात्रि समय चन्द्र किरणें बरबस मन को आकर्षित कर लेते हैं । चारों तरफ पृथ्वी हरियाली की चादर ओढ़े दिखलाई पड़ती है । दिन भर कड़ी घूप और रात को चाँदनी की शीतलता शरद ऋतु का असली रूप है । महाकवि तुलसी दास ने इस ऋतु का सजीव वर्णन करते हुए लिखा है :-

वरषा विगत शरद ऋतु आई ।
लछिमन देखहू परम सुहाई ।
फूले कास सकल महि छाई ।
जनु वरषा कुत प्रगट बुढ़ाई ।

शरद ऋतु में शरीर अत्यधिक उष्ण रहता है जिससे शरीरस्थ पित्त को बढ़ने का मौका मिलता है । जिन व्यक्तियों की प्रकृति गरम है या जो पित्त रोग से आक्रान्त हैं, उनको इस मौसम में बड़ी तकलीफ होती है । शरद ऋतु शारीरिक दोषों को शुद्धि करने का उपयुक्त समय पित्त के दूषित होने से रक्त भी दूषित हो जाता है ये दोनों समान गुणधर्मी हैं । अतः पित्त एवं रक्त की के लिए विरेचन एवं रक्त मोक्षण सुयोग्य चिकित्सक देखरेख में कराना चाहिए । दूषित पित्त को निकाल लिए विरेचन के रूप में निशोथ, अमलतास का हरीतकी चूर्ण, त्रिफला, मुनक्का क्वाथ आदि विरेचन का प्रयोग करना हितकर होता है । कुटकी चूर्ण को के साथ रात को सोते समय गरम जल से लिया चाहिए । मृदुकोष्ठ बालों के लिए गुलकन्द उत्तम है । अगर दूषित पित्त का निर्हरण न किया जाय तो रक्त को दूषित कर देता है । दूषित रक्त से उत्पन्न बचने के लिए रक्त दान करना श्रेष्ठ उपाय है । से निकाले गए रक्त की पूर्ति नए रक्त कण से हो है और सेहत भी बनी रहती है । रक्त दान एक सी. से एक सौ पच्चीस सी.सी. करना चाहिए क्योंकि उपाय एक तरफ और रक्त दान एक तरफ होता है इसकी उपयोगिता के विषय में चरकाकार्य ने लिख ''एकतः तानि सर्वाणि रक्तमोक्षणमेकतः ।''

यदि इस ऋतु में पित्तज एवं रक्तज रोगों प्रकोप हो जाय तो स्थानीय चिकित्सक से परामर्श निम्न औषधियों का सेवन करना चाहिए । जैसे सूत रस, योगेन्द्र रस, कामदुधा रस, कुमुदेश्वर रस, ब्रह्म मुक्ता पिष्टी, आमलकी रसायन, चन्दनासव, कुष्माण्डवलेह, दाडिमावलेह, गुलकन्द, खसखस केवड़ा-शंखपुष्पी का शर्बत, निम्बादि चूर्ण, पंचतिक्त शतावरी घृत, सितोपलादि चूर्ण, गुलर, पित्तपापड़ा, दूर्वा आदि पित्त व रक्त दोष नाशक औषधियों का से स्वास्थ्य लाभ किया जा सकता है । पित्त विकार ध्यान में रखते हुए भोज्य पदार्थों का चयन करना चाहि इस मौसम में पित्त बढ़े नहीं इसके लिए आहार-विहार भी कड़ी निगरानी रखना जरूरी है । अतएव भोजन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेषकर मीठा, करूआ और कसैला पदार्थ का सेवन स्वास्थ्य के लिए हितकर है । इसका कारण यह है कि स्वाद वाली चीजें पित्त को शान्त रखती हैं जिससे पित्तज रोग नहीं हो पाता है । गरम चीजों में चाय, काफी, तीखे, चटपटे या मसालेदार आदि की मात्रा कम करनी चाहिए । इस दृष्टि से चावल, गेहूँ, ज्वार, मूंग, चना आदि का प्रयोग भोज्य पदार्थ के रूप में करना चाहिए । चना गुड़ और घी से निर्मित रोटी, नारियल और शक्कर से बनाए चावल स्वादिष्ट के अलावे शारीरिक स्वास्थ्य के लिए प्रशस्त है, क्योंकि नारियल मीठा और शीतल होने से पित्त जन्य गरमी को कम करता है । अत: ''मधुरं लघु शीतं तिक्तं पित्तं शमनं सेव्यम्'' का अनुसरण करना चाहिए ।

ताम्बे के जल पात्र को प्रशस्त एवं विसंक्रमित माना गया है ''जल पात्रं तु ताम्रस्यं ।'' रात्रि को ताम्र पात्र में जल भरकर प्रात: मुँह साफ कर पीने से पित्त का शमन और पखाना साफ होता है । शरीर हल्कापन और दिल दिमाग में ताजगी रहती है । तिक्त रस में नीम, मीठा रस में महुवा और कसैला में बबूल की दातौन श्रेष्ठ मानी जाती है । इससे दाँत साफ करने से दाँतों की शुद्धि के साथ-साथ पित्त का प्रशमन भी होता है ।

नाश्ते में डबल रोटी, बिस्कुट, मूंग का हलुवा, जलेबी, छेने की मिठाई, आँवला, मुरब्बा, बेल मुरब्बा बताशे और चावलों की खीर आदि ली जा सकती है ।

करेला, मेथी की सब्जी, सौंठ, हल्दी, बंदगोभी, तोरई, पपीता आदि ऋतुज शाक सब्जियों का प्रयोग करना श्रेयस्कर होता है । नीम्बू, कोकम, संतरा, मौसमी, अम्लवेंत, अनार ये सब खट्टे होते हुए भी पित्त को सम अवस्था में रखते हैं ।

मट्ठा, गाय का दूध, मक्खन, मलाई, घृत खाने का यही मौसम है । अतएव इन स्नेह वस्तुओं का सेवन इस ऋतु में अधिक सेवनीय है, क्योंकि ये सभी मीठा, बलकारक और हल्का दस्तावर होने से पित्त को दुरूस्त रखते हैं । कहा जाता है कि प्राचीन समय में राजा-महाराजाओं से ब्राह्मण लोग घी, दूध एवं शरद चन्द्र के समान पवि दही की माँग करते थे - ''भोजनं दधि राजेन्द्र घृतक्षी समन्वितं, शारदं च शरदचन्द्र चन्द्रिका धवलं दधि: । लोगों का कहना है कि शरद पूर्णिमा के दिन चन्द्रमा क शीतल किरणों से अमृत बरसता है, शरद पूर्णिमा के दि रात में खीर बनाकर दूसरे दिन प्रात:सेवन करने का प्रचल आज भी यत्र-तत्र है । आयुर्वेद चिकित्सक इस खीर जड़ी मिलाकर दमा के रोगियों को देते हैं ।

हंसोदक का सेवन अत्यन्त उपयोगी एवं स्वास्थ वर्द्धक माना गया है । जो जल दिन में सूर्य किरणों से त हो, रात्रि में चन्द्रमा की शीतल किरणों से शीतल हो त अगस्त तक नक्षत्र से निर्विष हो उसे हंसोदक कहते हैं

शराब इस ऋतु में अहितकर होता है क्योंकि य पित्त को प्रकुपित करता है । अगर शराब के बिना जो न रह सकते हैं तो वे गन्ने का रस, मुनक्का, अंगूर, ता खजूर आदि मधुर पदार्थों से निमित सौम्य मद्य अल्प मा में ले सकते हैं ।

इस मौसम में दिन भर गरमी के कारण शर दाह को कम करने के लिए पंखा, कूलर एवं शीतल प्रदान करने वाला माध्यम का उपयोग करना चाहिए । स काल जब चन्द्रमा निकल रहा हो तो विमल एवं स्वच वस्त्रों को पहनकर एवं ऋतुज फूलों को धारण व बाग-बगीचों में शीतल धवल चाँदनी में टहलना स्वास्थ्यव एवं आनन्दप्रद होता है । रात को शीतल चाँदनी बैठना-सोना चाहिए किन्तु बारह बजे रात के बाद न अन्यथा ठंड लगने के कारण बीमार होने की संभाव रहती है ।

रेशम, सूत्री वस्त्र, खादी, मलमल के वस्त्र पहनावा स्वास्थ्यकर व शरीर के लिए आरामदेह होता क्योंकि हवा का गमनागमन होता है ।

अतएव गौरतलब है कि आधिभौतिक, आ दैविक एवं आध्यात्मिक व्याधियों को दूर करने में यह त्र सर्वथा अनुकूल है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
This paper was read on the occasion of National Seminar on Rasa-Shastra organised at BH

HERBAL DRUGS STANDARDISATION

Dr. Gyanendra Pandey

The production of genuine drug formulations is primary requirement for success of Indigenous Systems of medicine in order to achieve their objective of protection of health and eradication of diseases.

Thus, clinical effectiveness basically depends on quality, standard and potent drug compounds which are produced in accordance with procedures, methods and techniques evolved by expounders of ancient medicine and discussed in classical text devoted to latrochemistry, pharmaceutics, therapeutics and allied areas of drugs and management of diseases belonging to vast scope of Ayrveda and Siddha Systems of medicines.

There is prime necessity to maintain quality of medicines by best drug delivery system for therapeutic use of pharmacologically active and clinically promising drug remedies in confirmity with pharmacopoeial standards and specifications.

Recently implementation of GMP (Good Manufacturing Practices) properly emphasizes the reorientation of drug standardisation in the field of Indian medicine specially pharmaceutical aspect which is media of drugs availability.

The strategies and guidelines of GMP are providing support and impetus to standardization of drugs for manufacturing of quality drugs.

The standardization of raw drugs especilly drug obtained from plant sources, commonly known as herbal drugs are major ingredients of drug formulations manufactured in Indigenous system of medicine.

Primarily, the standardisation of raw drugs is most essential part of drug composition which prove to be foundation of potential drug formulations and development of ISM, drugs under guidelines of GMP in the interest of progress of Indian medicine.

Drugs Standardisation and Quality Contro

The drug standardisation has pivotal ro in Indian Medical Science and simila standardisation of drug formulation includi rasousadhis is most important. There is utmo need for conducting studies in order standardize in various aspects, process a stages involved in preparation in drug formulati belonging to group of rasousadhis described ancient literature of Rasasastra, medicines a therapetutics devoted to Ayurveda.

The survery of texture sources pertainin to Rasasastra finds a large number to medicinal preparations and compound formulations base on metallic and mineral drugs (covering variou groups of drugs or dravyas e.g. rasa uparas dhatu, upadhatu etc. according to Ayurved system of classification for metallic raw drug which are manufactured as per instruction an process provided in texts of Rasasastra and allie literature dealing with preparation of rasousadhis

During the different stage of process (sodhana, marana, nirmana and kalpana) carried out of completing manufacture method including specific techniques (kupipakva vidhi etc.) variou kinds of drugs Harbal and also animal drugs othe than metal raw materials) are used and differen processes need to be adoped for rasousadh preprations.

Various problems relating to base drug component auxillary drugs and other matrials ar observed.

Simultaneosuly, the method o preparation (nirmana vidhi) involving set process including apparatus etc. prescribed in classica texts and tradition practised in (sastra tatha parampara) experience different kind of problems

During the procedure of drug manufacture beginning raw material and ending to the finished products and also further stages

126, Engineers Enclave, Phas IV, Jakhan, Dehradun (Uttaranchal)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(Shelf-life, packing etc.)

The applied observations on manufacturing practices adopted for producing resousadhis relate to different aspects and indicate to various kind of difficulties, counted during the process of rasousadhi preparation and consequently the process uniformity, strict implementation of classical method, genuine ingredients, other allied factors (relevant to composition and procedure) adversely affects the production of quality and standard of formulations. Therefore, the scientific approach is properly required towards standardization and quality control of the drug formulation including rasousadhis.

The significance, efficacy and requirement of drug and formulations of Ayurveda have underlined essential need of quality control of drugs specially drug formulation and rasaushadhis on account of their high potency, faster activity and promising effect in present perspectives of increasing demand of indigenous compound preparations in order to cater the growing and expanding areas of utility of Ayurvedic management of various diseases in India and abroad where Ayurveda in now set for globalisation in view of its popularity, utility and therapeutic efficiency.

Hence, it has become indispensable and essential to provide quality drug in the area of pharmaceutical preparations belonging to herbal, herbomineral and rasausadhi groups of Ayurvedic formulations for untilisation in therapeutic management and best results of treatment in several diseases as the availability of standards, effective and genuine drugs meeting the prescription of therapeutics, expectation of pharmacological activity and clinical requirement for appropriate and systematic administration of drugs in clinical management of ailments.

It is, thus, basic need of Ayurvedic treatment to make available genuine formulations which are prepared in accordance with classical method, pharmaceutical process genuir ingredients and proper manufacturing practi following prescribed condition, standards a conforming to specification and relevant facto considered to essential for producir therapeutically effective formulations for using patients under clinical management. Therefo the quality control of formulation throu standardisation of rasausadhis carries great importance nowdays for achieving the vital ta with systematic approach.

Briefly the method of standardisati comprises rasousadhis (i) the standardisation base and component single drugs i.e. minera metal and others auxillary drugs (botanical a also animal origins) (ii) standardisation of proce of manufacture of rasousadhis a standardisation of finished products. Effect study of packing material and study of shelf- are also part of drug standardisation rasousadhis. The methods of studie biochemical, physiochemical and phrmaceutic Investigations conducted on rasousac preparation in order to evolve pharmacopo standarads according to classical method production of rasousadhis and maintain t quality and genuineness of drugs processi maximum pharmacological activity and clini efficacy of rasousadhis.

The role of standardisation has beco more vital in the light of enforcement of G (Good manufacturing practices) in pharmaceuti field. Thus, the research on standardisati aspect is applied and approach for implement and ascertaining quality control of rasousad which are most acting valuable, highly effect group of drugs of Ayurveda, based latrochemical knowledge, secret alchemic s medicine, chemistry and therapeutics utility respect of rasousadhis in particulars, coverin major group of drug formulations contributed indigenous system of medicine.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रीय रसशास्त्र सेमिनार आयोजित करने का उद्देश्य प्राचीन प्रज्ञा एवं आधुनिक उपकरणों के मध्य समन्वय स्थापित करना है - डा० चन्द्र भूषण झा

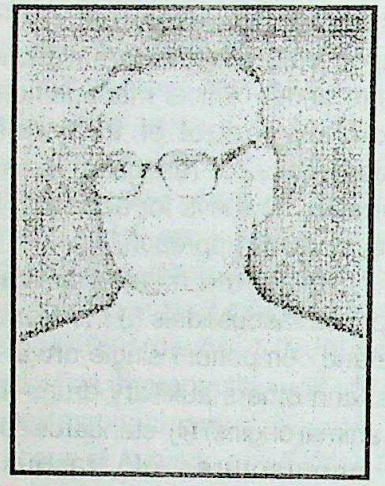

डा० चन्द्रभूषण झा

प्र०- राष्ट्रीय रसशास्त्र सेमिनार को आयोजित करने के पीछे आपका क्या उद्देश्य है ?

उ०- सेमिनार आयोजित करने के पीछे दो उद्देश्य हैं । पहला यह कि रसशास्त्र विभाग का स्वतंत्र रूप से अस्तित्व वर्ष 1978 में हमारे विश्वविद्यालय में आया अर्थात् आज से पच्चीस वर्ष पूर्व । रजत जयन्ती समारोह मनाना था । आप जानते हैं कि प्राचीन काल में महर्षियों की सभा होती थी जिसमें विभिन्न विषयों पर अथवा किसी एक विषय पर विचार-मंथन होता था और किसी निष्कर्ष पर पहुंचने का प्रयास किया जाता था । वस्तुतः वही सेमिनार या विचार गोष्ठी आज का सेमिनार है । हमारा प्रयास है कि रसशास्त्रियों के सक्षम उपस्थित गम्भीर समस्याओं पर विचार-विमर्श किया जाय और इस दिशा में प्राप्त उपलब्धियों को विश्व के समक्ष प्रस्तुत किया जाय । दूसरा उद्देश्य यह है कि प्राचीन प्रज्ञा या ज्ञान और आधुनिक विज्ञान एवं तकनीक के मध्य समन्वय स्थापित किया जाय ।

प्र०- समन्वय से आपका आशय क्या है ?

उ०- आप जानते हैं कि भौतिक विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी ने काफी प्रगति की है । आज तापक्रम मापने, किसी द्रव्य को गर्म करने एवं ठंडा करने, बायलर, कम्प्यू द्रव्यों का स्वरस निकालने, पी.एच. मापने, उत्प पदार्थ की विषाक्तता की जांच करने, टी.एल.ए बर्त्तन, ईंधन, विद्युत, जार जैसे अनेक उपकरण रस भस्मों के निर्माण के लिए हम जिन आधु उपकरणों का उपयोग करते हैं, उनमें से अधिक प्राचीन काल में उपलब्ध नहीं थे । कच्चे द्रव्य उत्पादित द्रव्यों की जांच करने के भी उपकरण थे और आज भी वे हैं । हम इन उपकरणों साधनों का उपयोग रसशास्त्र में वर्णित औषधियों के उत्पादन में करते हैं, किन्तु हम गुणवत्ता पर समझौ नहीं करते हैं । महर्षियों से जो ज्ञान हमें विरासत मिला है, उसे हम संजोकर रखना चाहते हैं, बल्कि प्रयास करते हैं कि इसमें वृद्धि हो । कहने आशय केवल इतना है कि प्राचीन ज्ञान को विश्व समक्ष उनकी ही भाषा (अर्थात् आधुनिक युग आविष्कृत आधुनिक वैज्ञानिक उपकरण) में आंकड़ों एवं साक्ष्यों के द्वारा प्रस्तुत करना चाहते हैं। वस्तु यही समन्वय है ।

प्र०- धन्यवाद ! डा० झा ! यह आप कैसे कह सकते हैं कि रस-भस्म नुकसान नहीं पहुंचाती है या इसका विलयन मानव-शरीर में हो जाता है ? इस तथ्य को प्रमाणित करने के लिए आप क्या करते हैं ?

उ०- आपने देखा होगा कि इस सेमिनार में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में स्थापित विभिन्न विभागों के विद्वा ने भाग लिया । जैसे इन्स्टीच्यूट ऑफ टेक्नोलोजी के धातु विज्ञानी-प्रो०भानु प्रकाश, मेडिसिनल केमिस्ट्री विभाग के प्रो० विद्याभूषण पाण्डेय, मटेरियल विज्ञा के प्रो० धनंजय पाण्डेय, फार्माकोलोजी विभाग के डा०बी०एल०पाण्डेय । इसी तरह हम बायो केमिस्ट्री विभाग, नेफ्रोलॉजी, हिस्टोलॉजी आदि विभागों से सहयोग लेते हैं । ये सभी विभाग आधुनिक विज्ञान की उपज हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उ०- बेहतर। आप काफी अच्छा काम कर रहे हैं। इस सेमिनार को आयोजित करने में आपको विश्वविद्यालय से वित्तीय सहायता प्राप्त हुयी या नहीं। यदि प्राप्त हुयी, तो क्या पर्याप्त थी ?

उ०- विश्वविद्यालय की ओर से राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय समारोह आयोजित करने के लिए एक निश्चित राशि दी जाती है। यह पर्याप्त नहीं होती है। यदि आयोजक बड़े पैमाने पर समारोह आयोजित करना चाहता है, तो उन्हें अपने माध्यम से संसाधन का इन्तजाम करना पड़ता है। हमें भी विभिन्न संस्थाओं से आर्थिक सहायता मिली।

प्र०- क्या आपको धन का अभाव अखरा ?

उ०- नहीं, धन का इन्तजाम हो गया था।

प्र०- आयुर्वेदिक फार्मेसी की वर्तमान वित्तीय स्थिति क्या है ?

उ०- सम्प्रति वित्तीय स्थिति संतोषजनक है। बल्कि लाभ में चल रहा है। वर्ष 1983 से पूर्व स्थिति काफी दयनीय थी।

प्र०- फार्मेसी में उत्पादित औषधियों की खपत कहां होती है ? क्या बाजार में होती है ?

उ०- नहीं, बाजार में इसकी बिक्री नहीं होती है। सर सुन्दरलाल अस्पताल में जो रोगी चिकित्सा के लिए आते हैं, उनके प्रयोगार्थ फार्मेसी से औषधियों की आपूर्त्ति की जाती है।

प्र०- कितनी औषधियों का उत्पादन यहां होता है ?

उ०- नियमित रूपेण 120-125 औषधियों का उत्पादन यहां होता है। लगभग 50 औषधियों पर अनुसंधान हो रहा है।

प्र०- औषधियों के उत्पादन में आप किन बातों पर ध्यान देते हैं ?

उ०- सुरक्षा, गुणवत्ता और आशुकारी प्रभावकारिता।

प्र०- धन्यवाद डा०झा ! बहुत-बहुत धन्यवाद ! अत्यन्त व्यस्त होने के बावजूद साक्षात्कार के लिए समय निकालने के लिए धन्यवाद ?

उ०- धन्यवाद।

शुद्ध स्वर्ण भस्म से निर्मित

बैद्यनाथ

रुमार्थो गोल्ड

पुराने जोड़ों के दर्द की प्रभावी दवा

रुमार्थो कैप्सूल में स्वर्ण भस्म का विशेष मिश्रण होने से यह गठिया वात एवं जीर्ण जोड़ों के दर्द पर व मांसपेशियों के रोगों में अत्यंत प्रभावी औषधि है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० श्रीकृष्ण दीक्षित - व्यक्तित्व एवं कृतित्व

डा० श्रीकृष्ण दीक्षित

प्रथम अगस्त, 1939 को ग्राम-बाभन चकिया, पो०-भुवरपुर, जि०-गाजीपुर (उ०प्र०) में जन्म डा०श्रीकृष्ण दीक्षित (संक्षेप में डा० एस० के० दीक्षित) की उपलब्धियों एवं सफलताओं की कहानी लम्बी । अपने पिता स्व० मार्कण्डेय दीक्षित के निर्देशन में नकी प्रारम्भिक शिक्षा प्रारम्भ हुयी । 1953 ई० में लाहाबाद बोर्ड से उच्च विद्यालय एवं 1955 ई० में टरमीडिएट की परीक्षा उत्तीर्ण होने के पश्चात् इन्होंने ायुर्वेद का अध्ययन प्रारम्भ किया । काशी हिन्दू श्वविद्यालय इनके अध्ययन का केन्द्र बिन्दु रहा । वर्ष 962 में उन्होंने ए.बी.एम.एस., वर्ष 1966 में डी.आयु.एम. रसशास्त्र) एवं 1980 ई० में पीएचडी (रसशास्त्र) की ग्री प्राप्त की। शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त इन्होंने ीवन की कर्मभूमि में जनवरी, 1967 में प्रवेश किया । र्वप्रथम इनकी नियुक्ति प्रदर्शक के रूप में काशी हिन्दू श्वविद्यालय में हुयी । ये इस पद पर मार्च, 1971 तक हे । तत्पश्चात्, अनुसंधान पदाधिकारी के पद पर इन्होंने ारत सरकार की केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसंधान रिषद्, नयी दिल्ली को अपना योगदान अक्टूबर, 1971 ो दिया। इस पद पर इनका योगदान मार्च, 1974 तक हा । इसी माह ये काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में फार्मेसिस्ट के पद पर आये । इस पद पर ये सितम्बर, 1976 तक हे । तत्पश्चात् व्याख्याता के पद पर तदर्थ रूप में नवम्बर, 976 में इनकी नियुक्ति हुयी । इस पद पर ये सितम्बर, 982 तक रहे । पुनः अक्टूबर, 1977 में फार्मेसिस्ट के द पर आये । इस पद पर सितम्बर, 1982 तक बने रहे । अब इनकी रूचि अध्यापन में बढ़ने लगी । परिणामस्वरूप नवम्बर, 1982 में व्याख्याता, मार्च, 1986 में वरिष्ठ व्याख्याता, मार्च, 1993 में रीडर एवं वर्ष 2000 में विभागाध्यक्ष (रसशास्त्र) बने । इस मध्य अध्यापन के साथ-साथ जुलाई, 1994 से 31 जुलाई, 2001 तक आयुर्वेदिक फार्मेसी के अधीक्षक के पद को भी इन्होंने सुशोभित किया । दिसम्बर, 2002 से गुजरात आयुर्वेद विश्वविद्यालय, जामनगर के विजिटिंग प्रोफेसर के पद पर कार्यरत हैं ।

संक्षेप में इनके अध्यापन का अनुभव 28 वर्षों तक काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के रसशास्त्र विभाग में रहा । शोध की कोई समय-सीमा नहीं होती है । मनुष्य अध्ययन-अध्यापन के साथ निरन्तर शोध करता रहता है, केवल प्रवृत्ति होनी चाहिए । डा० दीक्षित में यह प्रवृत्ति प्रारम्भ से थी । फिर भी, संस्थागत शोध-कार्य का अनुभव केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसंधान परिषद् में तीन वर्षों का रहा है । शोध-छात्रों को निर्देशन देने का अनुभव 18 वर्षों का है । 14 एम.डी. (आयु.) एवं 11 पीएचडी छात्रों ने इनके निर्देशन में उपाधि प्राप्त की । 130 से ज्यादा इनके प्रकाशन हैं । रसार्णव नामक ग्रन्थ का इन्होंने सम्पादन किया है । ये विभिन्न संस्थाओं/बोर्ड/विश्वविद्यालय के सदस्य भी रहे हैं । इनमें से प्रमुख हैं - काशीहिन्दू विश्वविद्यालय के आयुर्वेद संकाय, विद्वत् परिषद्/शैक्षिणक परिषद्, बोर्ड ऑफ स्टडीज ऑफ इण्डियन मेडिसन के सदस्य, विभागीय अनुसंधान समिति, वैज्ञानिक सलाहकार समिति, डा०बी०आर० अम्बेदकर विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर, बोर्ड ऑफ स्टडीज, नागपुर विश्वविद्यालय, इण्डियन मेडिसिन फार्मास्यूटिकल कारपोरेशन, मोहन, अल्मोड़ा की विशेषज्ञ समिति के सदस्य, फार्मेसी विकास के लिए भारतीय चिकित्सा पद्धति एवं होम्योपैथी के आमंत्रित विशेषज्ञ सदस्य एवं अनेक रिओरियन्टेशन प्रशिक्षण कार्यक्रम के कार्यक्रम समन्वयक रह चुके हैं । साथ ही अनेक सेमिनार

(शेष पृष्ठ सं० 367 पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० गिरीश मिश्र - व्यक्तित्व एवं कृतित्व

डा० गिरीश मिश्र

डा० गिरीश मिश्र का जन्म दिनांक 8 फरवरी, 1924 को बेगूसराय (बिहार) जिलान्तर्गत बड़ी रघु गांव में पिता स्व० पंडित हरि मिश्र एवं माता स्व० अम्बिका देवी के यहां हुआ था । अयोध्या शिवकुमारी आयुर्वेद महाविद्यालय, बेगूसराय से स्नातक की डिग्री लेने के पश्चात् इनकी प्रथम नियुक्ति शिव गंगा आयुर्वेद महाविद्यालय, सुकुली में व्याख्याता के पद पर हुयी । इस महाविद्यालय में उन्होंने वर्ष 1956 से वर्ष 1958 तक अर्थात् दो वर्षों तक कार्य किया । पश्चात् इनकी नियुक्ति श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि०, पटना में प्रधान चिकित्सक के पद पर दिनांक 19 दिसम्बर, 1959 को हुयी । इस पद पर ये जून, 1970 तक रहे । वर्ष 1971 में उन्होंने प्रवाचक रीडर के पद पर राजकीय अयोध्या शिवकुमारी आयुर्वेदिक महाविद्यालय, बेगूसराय में योगदान दिया । ये चिकित्सा विभागाध्यक्ष भी रहे । इस पद पर वर्ष 1988 तक कार्य करते रहे । इसके पश्चात् इन्होंने स्वतंत्र रूप से चिकित्सा कार्य प्रारम्भ किया । शिवशक्ति आयुर्वेद भवन आयुर्वेदिक चिकित्सालय स्थापित कर वर्ष 1988 से ये स्वतंत्र रूप से चिकित्सा कार्य कर रहे हैं ।

डा० मिश्र बहुआयमी व्यक्तित्व के स्वामी हैं । चिकित्सा-कार्य के अतिरिक्त इनकी अभिरूचि साहित्य में भी है । काव्य-सृजन एवं निबन्ध लेखन इनका प्रिय विषय है । चिकित्सा-कर्म में इनके कौशल की प्रशंसा एलोपैथिक चिकित्सकों ने भी की है । प्रिन्स ऑफ वेल्स मेडिकल कॉलेज (सम्प्रति पटना चिकित्सा महाविद्यालय एवं चिकित्सालय) के तत्कालीन प्राचार्य, डा० विजय नारायण सिंह एवं बिहार राज्य के तत्कालीन राज्यपाल के कार्यालय से भी इन्हें चिकित्सा-कार्य के लिए प्रशंसा प्राप्त हुयी है ।

धन्वन्तरि जयन्ती के पावन अवसर पर लगभग 80 वर्षीय आयुर्वेद के निष्णात् चिकित्सक का हम हार्दिक अभिनन्दन करते हैं ।

-सम्पादक

(शेषांश पृष्ठ सं० 366 का)

की आयोजन समिति के सदस्य रह चुके हैं । अनेक विश्वविद्यालयों जैसे कानपुर विश्वविद्यालय, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, डा०बी०आर०अम्बेदकर विश्वविद्यालय, उत्कल विश्वविद्यालय, महाराष्ट्र विश्वविद्यालय, केरल विश्वविद्यालय, एम.जी.जी. विश्वविद्यालय एवं राजीव गांधी स्वास्थ्य विश्वविद्यालय, बंगलौर के परीक्षक रह चुके हैं । साथ ही भारत सरकार की आयुर्वेदिक फर्माकोपिया समिति के सदस्य, उपसमिति के अध्यक्ष एवं टी.के.डी.एल. परियोजना, नयी दिल्ली के आयुर्वेदिक विशेषज्ञ रह चुके हैं । विश्व स्वास्थ्य संगठन के कार्यक्रम के तहत विदेशी छात्रों को पढ़ाने का अनुभव भी उन्हें हैं । विभिन्न संस्थाओं में आयोजित व्याख्यानमाला को भी उन्होंने सम्बोधित किया है ।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि डा० दीक्षित का सम्पूर्ण जीवन आयुर्वेद के प्रति समर्पित रहा है । उनके कार्य, अनुभव एवं शिक्षा का लाभ आयुर्वेद जगत् को निरन्तर मिलता रहा है एवं अपेक्षा की जाती है कि वे जीवन पर्यन्त आयुर्वेद की सेवा करते रहेंगे ।

सम्प्रति उनका पता है :-

बी-3/402, शिवाला
वाराणसी - 221005
दूरभाष - (0542)- 2276791

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धन्वन्तरि जयन्ती के पावन अवसर पर जिन्हें सम्मानित किया गया

डा० रघुनाथ कर्मकार (सम्प्रति सिद्धराजयोगी श्री आत्मज्ञानानन्दजी) - व्यक्ति एवं कृतित्व

डा० रघुनाथ कर्मकार

डा० कर्मकार का जन्म 12 जनवरी 1912 को भागलपुर में श्रीमती गिरिबाला एवं श्री कालीचरण कर्मकार की चतुर्थ सन्तान के रूप में हुआ । प्लेग महामारी के कारण सात दिनों के इस शिशु के माता-पिता को बनग्राम, जिला-जैसोर ले जाना पड़ा जहाँ नाना डॉ० अक्षय कुमार कर्मकार का घर था । डेढ़ साल बाद ये लोग भागलपुर वापस लौट गये ।

उत्तरी बिहार में सत्याग्रह के बाद जब महात्मा गाँधी 1917 में भागलपुर आये तब बालक को उस महान नेता के माल्यार्पण का अवसर मिला । आज भी इस घटना को याद कर इनका मन उत्साह से भर जाता है । 1920 ई० में अपने माता-पिता के साथ बालक पटना के अपने पैतृक निवास पर आ गया । जुलाई 1920 में उन्होंने टी०के०घोष एकेडेमी में दाखिला लिया । यहाँ पर इन्हें श्री टी०एल० वासवानी (जो बाद में भगवान वासवानी के नाम से प्रसिद्ध हुए) से योग सीखने का दुर्लभ सौभाग्य प्राप्त हुआ । 1928 में मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद इन्होंने पटना कॉलेज में दाखिला लिया । यहाँ के प्राचार्य श्री हार्न एवं अन्य यूरोपियन शिक्षक जैसे प्रो०आर्मर, प्रो० आक्टरलोनी आदि भी थे । प्रो० हिल के प्रिय शिष्यों में ये एक रहे । इन्टर-परीक्षा उत्तीर्ण होने के बाद इन्होंने पटना राजकीय आयुर्वेदिक कॉलेज में प्रवेश लिया । यहाँ इन्होंने प्रथम श्रेणी प्राप्त कर मान्यता पायी । 1935 में इन्होंने यामिनी भूषण अष्टांग आयुर्वेदिक कॉलेज, कलकत्ता में दाखिला लिया । जनवरी 1937 ई० में नेत्ररोग-विशेषज्ञ होकर (भिषगाचार्य, **एम.ए.एम.एस.** डिग्री लेकर) पटना लौटे एवं अपनी पैक्टिस शुरू की । 1942 में भारत-छोड़ो आन्दोलन के कुछ पहले इनका विवाह हुआ । इनकी एवं इनकी पत्नी श्रीमती सिन्धु कर्मकार की एक आदर्श जोड़ी है । इनके एक पुत्र एवं दो पुत्रियाँ हैं, जो उच्च शिक्षा प्राप्त हैं । इन्होंने शरीर-सौष्ठव एवं खेलकूद (एथेलेटिक्स) लम्बी-छलांग-प्रतियोगिता (बिहार ओलिम्पिक प्रतियोगिता) में भाग लिया । फुटबाल, क्रिकेट, टेनिस एवं बैडमिन्टन भी ये खेलते थे । ये एक कुशल तैराक, शिकारी एवं लक्ष्यवेधक थे । भारतीय शास्त्रीय-संगीत के महान संगीतज्ञों के साथ रहे । इस विषय में बंगला पाक्षिक पत्रिकाओं में इनके कुछ लेख प्रकाशित हो चुके हैं । ये एक सिद्ध सितारवादक भी हैं । आज 92 वें वर्ष की आयु में भी ये एक सुनहरी, सशक्त एवं साफ वाणी के स्वामी हैं । सन् 1953 ई० की 21 सितम्बर को इन्होंने पटना राजकीय आयुर्वेदिक कॉलेज में शालाक्य-विषय के आचार्य का प्रभार ग्रहण किया । 1959 ई० में ये शल्य-विभाग के विभागाध्यक्ष नियुक्त हुए । इनके सेवा-काल की पराकाष्ठा हुई सन् 1969 में जब इन्हें आयुर्वेदिक कॉलेज का प्राचार्य एवं अस्पताल का अधीक्षक नियुक्त किया गया । 12 जनवरी, 1970 को इन्होंने कार्यावकाश ग्रहण किया । परन्तु ऊर्जा से ओत-प्रोत इनका व्यक्तित्व एवं इनकी बुद्धि का झुकाव आध्यात्मिक क्षेत्र की ओर हुआ एवं ये अध्यात्म के क्षेत्र में उतर पड़े । उस समय अपने गुरू एवं मार्गदर्शक रामकृष्ण मिशन के श्री स्वामी वेदान्तानन्द जी के प्रभाव एवं प्रेरणा से इन्होंने प्राणायाम, ध्यान एवं अन्य आध्यात्मिक विषयों का गहन अध्ययन किया । 1983 ई० की शुरूआत से इनमें वैराग्य की भावना प्रबलतर होती गई । 12 अप्रैल, 1983 को करीब 6.30 बजे सुबह ये निर्विकल्प-समाधि की अवस्था में चले गये एवं करीब दो घंटे तक इनकी श्वास-क्रिया एवं हृदय-स्पन्दन रूके रहे । इसके चार-पाँच घंटे बाद ही इनकी आवाज वापस लौटी और ये अपने अनुभवों को व्यक्त कर सके । इसके कुछ घण्टों के बाद ही ये अन्य क्रियाओं का सम्पादन कर सके । इस निर्विकल्प-समाधि के फलस्वरूप इन्हें आत्मज्ञान की प्राप्ति हुई और ये आत्मज्ञानानन्द हो गये । मशहूर नेत्र-चिकित्सक डॉ० दुखन राम से इनका बहुत पुराना एवं गहरा सम्बन्ध था । अपने समय के प्रसिद्ध रोग-विज्ञानी (Pathologist)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ०एस०सी०राय ने भी इन्हें लिखने के लिए प्रोत्साहित किया। आज के दिन भी इन महान् विभूतियों के प्रति इनकी अगाध श्रद्धा है। 1988 ई० में बांग्ला भाषा में इनकी पहली पुस्तक "राजयोगेर प्राणायाम नूतन आलोके" प्रकाशित हुई। अगले वर्ष इसका हिन्दी रूपान्तर छपा। "Fundamental Principles of Rajyoga Pranayama" अंग्रेजी में एवं "योगीर छिन्नपत्र" बंगला का प्रकाशन सन् 1990 में हुआ। "ज्ञानातीत भूमिर समाधि एवं योगनिद्रा" बंगला में 1993 में छपी। इनकी प्रसिद्ध पुस्तकें "Anapaan-Deepani" अंग्रेजी में एवं "विशुद्ध-राजयोग एवं प्राण-विज्ञान" हिन्दी में सन् 1996 एवं 1997 में क्रमशः प्रकाशित हुई। इसी समय "गीता-परिचय" और "गीता-भाष्य एवं गीता रहस्य" का प्रकाशन हुआ। 1998 में बंगला में प्रकाशित पुस्तकों का साल था। ये पुस्तकें थीं "विशुद्ध-राजयोग एवं राजयोग-रहस्य" एवं "प्राण-विज्ञान", रोग प्रतिषेध प्राणकर्म"। इनकी प्रथम छः पुस्तकें तपन प्रेस के श्री निशीथ बोस के सौजन्य से प्रकाशित हुईं।" इस जीवन में "व्यक्ति को मोक्ष कैसे प्राप्त हो" और "गीता का शाश्वत संदेश" इनके भिन्न-भिन्न सम्भाषणों के विषय रहे, जो समय-समय पर संस्थानों एवं केन्द्रों पर इन्होंने दिये। इनके शिष्यों में वकील, वैज्ञानिक, इंजीनियर, शिक्षाविद्, पत्रकार एवं अन्य क्षेत्रों के विशेषज्ञ भी हैं। इस 92 वें वर्ष की अवस्था में दो भयंकर दुर्घटनाओं के बावजूद इन्हें उपर्युक्त विषयों से अगाध प्रेम है एवं इन विषयों पर बात-चीत करने में वे अत्यधिक आनंदित होते हैं। 21 फरवरी 1997 को बिहार-बंगला-संस्था द्वारा इन्हें सम्मानित किया गया। सन् 1999 में बिहार के तत्कालीन गवर्नर श्री सुन्दर सिंह भण्डारी द्वारा इन्दिरा गाँधी तारामंडल में इन्हें एक ट्राफी प्रदान की गई "South East Asian Herbs and Herbal Medicine" की ओर से।

इंडियन मेडिकल ट्रस्ट, बिहार तथा बिहार काउन्सिल ऑन साइंस ऐण्ड टेक्नोलाजी द्वारा अप्रैल 2000 में राजगीर में मनाये जाने वाले एसियन सेमिनार ऑन इन्डिजेनस सिस्टम ऑफ मेडिसिन द्वारा भी उन्हें सम्मानित किया गया। 11 दिसम्बर, 2001 को तीसरी बार उनका बायाँ पाँव दुर्घटनाग्रस्त हुआ। 1972 की पहली दुर्घटना में बायें पाँव की फैमुरल हड्डी फिर टूट गई। तीसरी बार साइटिका-नर्व और जाँघ की मांसपेशियाँ ही क्षतिग्रस्त हुई थीं जिनमें बहुत दर्द और सूजन हो गई थी। यह सब कुछ इन्होंने 90 वर्ष की अवस्था में झेला। कुछ ही घंटों में इन्होंने फैक्चर-सामग्री तथा क्रेप-बैन्डेज को हटा दिया। एक सप्ताह के अन्दर ही वे खड़े हो गये और कुछ सहारा लेकर वे चलने लगे। इस दुर्घटना की विशेष चर्चा करनी है इसलिए कि पीड़ितावस्था में विचारों, अनुभवों तथा उपलब्धियों की बाढ़ उनपर आ गई। उनकी पीड़ाओं, अत्यधिक कष्टों और बिना चिकित्सीय सहायता ने उनमें प्रचुर शक्ति और नये ज्ञानालोक भर दिये। दिसम्बर 2001 राजकीय आयुर्वेदिक महाविद्यालय, पटना प्लैटिनम जुबिली सेलेब्रेशन था और पुरानी पीढ़ी के अकेले जीवित सदस्य हैं जो गत 73 वर्षों से उपर्युक्त संस्था से जुड़े रहे हैं। उपर्युक्त साप्ताहिक समारोह में वे दो बार सम्मानित किये गये और इन्हें माल्यार्पण किया गया। पहली बार, बिहार की मुख्य-मंत्री श्रीमती राबड़ी देवी द्वारा 25 दिसम्बर 2001 को और दूसरी बार तत्कालीन केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्री, डा०सी०पी०ठाकुर ने इन्हें प्रतिष्ठित "आचार्य निमि पुरस्कार" प्रदान किया। ये सारे सम्मान एवं प्रशंसाएँ उन पर तब बरसीं जब वे व्हील चेअर में थे और जिनका प्रत्युत्तर उन्होंने अपनी सामान्य उदारता, हँसी, शक्ति एवं जीने की उमंग से दिया। इस प्रकार वे स्वयं अपनी साधना करते हैं और इसको प्रदर्शित भी करते हैं। चलिये, हमलोग भी इस जीवित युग-पुरुष का अभिवादन करें।

डा० कर्मकार एक लब्ध-प्रतिष्ठ लेखक भी हैं। उनकी लगभग 18 पुस्तकें विभिन्न विषयों पर प्रकाशित हो चुकी हैं।

इस वर्ष धन्वन्तरि-जयन्ती के पावन अवसर पर **श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, पटना** द्वारा सम्मानित किया गया। हम उनके शतायु होने की कामना करते हैं।

– सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(पृ०सं० 328 का शेषांश)

है । उन्होंने उपस्थित विद्वत जनों का ध्यान निम्नलिखित तथ्यों की ओर आकर्षित किया :-

1. विभिन्न औषधियों में उपयोग होने वाले द्रव्यों में एकरूपता नहीं है ।
2. भौतिकी, रासायनिक एवं तात्विक बनावटों में गुणवत्ता का अभाव है ।
3. कई औषधियों में अनावश्यक द्रव्य रहते हैं ।
4. विष द्रव्यों का शोधन स्वास्थ्यकर वातावरण में एवं वैज्ञानिक तरीकों से नहीं किया जाता है ।
5. औषधियों में किन द्रव्यों का प्रयोग किया गया है, उसको पता लगाने के तरीकों का अभाव ।
6. कहा जाता है कि रसभस्मों का पूरी तरह विलयन मानव-शरीर में नहीं हो पाता है । वे तत्व के रूप में रहते हैं । आयुर्वेदिक विद्वान इस तर्क से सहमत नहीं हैं । विज्ञान साक्ष्य मांगता है । हमें तर्कों से एवं वैज्ञानिक साक्ष्य के आधार पर अपनी बातों को प्रमाणित करना पड़ेगा । श्री शर्मा ने बताया कि ये कुछ उदाहरण हैं, किन्तु समस्याएं कई हैं । उन्होंने आशा प्रकट की कि उपस्थित विद्वत्जन उद्योगों के समक्ष उपस्थित कठिनाइयों का समाधान करेंगे ।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति, डा०पी० रामचन्द्र राव ने सर्वप्रथम रसशास्त्र विभाग को राष्ट्रीय सेमिनार आयोजित करने के लिए बधाई दी । फार्मेसी काफी अच्छा काम कर रही है । लेखा-पत्र से ज्ञात होता है कि फार्मेसी लाभ में चल रही है । बी.ए.एम.एस. स्तर का पाठ्यक्रम भी विश्वविद्यालय में प्रारम्भ किया गया है । उन्होंने पूर्व वक्ता के पेटेन्ट सम्बन्धी सुझाव से सहमति प्रकट की । उन्होंने आश्वासन दिया कि विश्वविद्यालय इस सम्बन्ध में होनेवाले खर्च को वहन करेगा । समुद्र राष्ट्रीय सम्पदा है । इसमें औषधीय तत्वों से भरपूर अनेक तत्व मौजूद हैं । 120 किलोमीटर तक समुद्री सीमा पर प्रत्येक राष्ट्र का अधिकार होता है । इस सुविधा का लाभ उठा सकते हैं । हमें अणुओं का विकास करना चाहिए ताकि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हम किसी भी चीज को प्रमाणित कर सकें । सूचना प्रौद्योगिकी का भी सहयोग लेना चाहिए ।

डा० नीरज कुमार ने धन्यवाद ज्ञापित किया ।

तत्पश्चात् वैज्ञानिक सूत्र प्रारम्भ हुआ । इस अवसर पर स्कूल ऑफ मटेरियल सायन्स एण्ड टेक्नोलॉजी, आई०टी०, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के डा० धनंजय पाण्डेय ने अपना पत्र 'ताम्र भस्म की प्रकृति का विश्लेषण' पढ़ा । उन्होंने बताया कि औषधीय पादपों के स्वरस एवं पारद भस्म के ताम्र भस्म का निर्माण किया गया । प्रयोग से ज्ञात हुआ कि पारद भस्म के साथ बनाया गया ताम्र भस्म का परिणाम काफी अच्छा था । संक्षेप में उसे इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है ।

$$Cu \rightarrow Cu_2O \begin{cases} \xrightarrow{} Cuo & \text{(औसत परिणाम)} \\ \xrightarrow{} Cu_2S & \text{(खराब परिणाम)} \\ \xrightarrow{} CuS & \text{(सर्वोत्तम परिणाम)} \end{cases}$$

इस अवसर पर अनेक विद्वानों ने पत्र पढ़े - पत्र पढ़ने वाले विद्वान एवं विषय निम्नलिखित थे ।

1. Fundamentals and History of Rasa Shastra– M. Singh (Jhansi)
2. Rasaushadhies — A boon for Ayurvedic Therapeutics – Dr. G. Prabhakar Rao (New Delhi).
3. Chemistry of Rasa Kalpas – Dahiwale Sachin B.
4. Rasa Shastra Through Samhita– Papri Nath (Kolkata).
5. चरक संहितोक्त रसशास्त्र एवं भैषज्य कल्पना-संक्षिप्त परिचय - वीणा तनेजा (का०हि०वि०) ।
6. बीसवीं सदी में भैषज्य कल्पना - रवि प्रकाश (इलाहाबाद) ।
7. नागार्जुन और रसशास्त्र - एक ऐतिहासिक अध्ययन - सुश्री शालिनी अग्रवाल (का०हि०वि०)
8. Maan vis - A - vis Measurements for open discussion - Renuka Joshi - Jamnager.
9. Concept of Lohavedha and Dehavedha in Rasashastra - Prashant G. Jadar (Belgaum).

इस वैज्ञानिक सत्र की अध्यक्षता श्री प्रमोद शर्मा ने की । सह अध्यक्ष डा० एस नरेन्द्र थे । रेपोट्योर डा० के०एच०एच०वी०एस०एस०एन० मूर्त्ति थे । काशी हिन्दू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वविद्यालय के रसशास्त्र विभाग के भूतपूर्व प्राध्यापक एवं प्रख्यात् विद्वान डा० दामोदर जोशी प्रमुख वक्ता थे ।

दिनांक 20.10.2003

आयुर्वेद संकाय के श्री प्रियव्रत शर्मा सभागार में श्री दत्तात्रेय अनन्त कुलकर्णी स्मृति व्याख्यानमाला के व्याख्यानदाता प्रोफे० दामोदर जोशी, भूतपूर्व विभागाध्यक्ष, रसशास्त्र एवं विजिटिंग प्राध्यापक, गुजरात आयुर्वेद विश्वविद्यालय थे । उनका विषय था - रसशास्त्र का मौलिक सिद्धान्त और उनका आयुर्वेदिक भेषज में प्रयोग । इनका व्याख्यान काफी विद्वतापूर्ण था । व्याख्यानमाला की अध्यक्षता डा०एस०के०दीक्षित ने की । इस अवसर पर अनेक पत्र पढ़े गये जिनमें प्रमुख थे -

1. Role of Herbal drug Standardisation in GMP strategies-G. Pandey (Jhansi).
2. Good Manufacturing Practices for herbal medicinal Plants – S.D. Vyas (Omanabad).
3. Evaluation of Standardisation methods for Romak Lavan - Sujit Kuamr (Jaipur).
4. Quality Control of Copper– A raw material in Ayurvedic formulations - A. Aroskar (Pune).
5. GMP for Herbal medicinal Porduct — T.S. Sarangi (Puri).
6. Standardisation of Samanya and Avartita Ksheer bala Taila – A. Jhunjunwala (Jaipur).

(श्री झुनझुनवाला के सहयोगी ने यह पत्र पढ़ा)

इस वैज्ञानिक सत्र की अध्यक्षता डा० मंजरी द्विवेदी ने की । रेपोट्यिर डा०पी०के० गोस्वामी थे । मंचासीन विद्वानों को प्रतीक चिन्ह उपहार स्वरूप दिया गया ।

इसी तरह एस.एन.शास्त्री सभागार में भी अनेक पत्र पढ़े गये ।

भोजनावकाश एवं दिनांक 21.10.03 को भी अनेक पत्र पढ़े गये । स्थानाभाव के कारण सबों का समावेश करना यहां सम्भव नहीं है । पैनेल बहस के पश्चात् समापन समारोह भोजनावकाश के पश्चात् हुआ । राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर के भूतपूर्व निदेशक, श्री हरिशंकर शर्मा का भाषण विद्वतापूर्ण एवं ओजस्वी था । इन्हें भी प्रतीक चिन्ह से सम्मानित किया गया ।

समापन समारोह में उपस्थित विद्वानों में प्रमुख थे - श्री हरिशंकर शर्मा, प्रो० दामोदर जोशी, प्रोफे० एस. के. दीक्षित, डा० विद्याभूषण पाण्डेय, डा० चन्द्र भूषण झा एवं अन्य ।

वस्तुतः राष्ट्रीय रसशास्त्र सेमिनार वैज्ञानिकता से भरपूर रहा । वैज्ञानिक शोधों के प्रस्तुतीकरण से आयुर्वेद एवं आधुनिक विज्ञान के समन्वय का प्रयास सफल रहा । डा० बी.एल.पाण्डेय वस्तुतः आधुनिक चिकित्सा विद्वान एवं आयुर्वेद के निष्णात विद्वान हैं । उन्होंने अपने मुख्य भाषण में दोनों विधाओं के वैज्ञानिक पक्षों पर प्रकाश डाला । वैज्ञानिक सत्र के जितने अध्यक्ष, सह-अध्यक्ष एवं रिपोट्यिर थे, सबों का सम्मान प्रतीक चिन्ह से किया गया । मिला जुलाकर सेमिनार काफी सफल रहा, किन्तु एक बात अखरने वाली थी । वह बात थी अंग्रेजी का साम्राज्य, लगता है विद्वान लोग हिन्दी भूल गये हैं । पं० मदन मोहन मालवीय ने हिन्दी भाषण को प्रतिष्ठित करने के लिए संघर्ष किया था । दुर्भाग्यवश उनके द्वारा स्थापित संस्थान में ही हिन्दीभाषा को उचित स्थान प्रस्तुत सेमिनार में नहीं मिल सका । यह खेद की बात है ।

बैद्यनाथ
प्रदरनाशक चूर्ण
सभी प्रकार के प्रदर रोगों में लाभकारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(शेषांश पृ० सं० 332 का)

हमारे शासकों को प्रभावित किया था । इसी कारण से आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा- पद्धति घोषित नहीं किया जा सका । हमने यह भी आशा की थी कि सरकार आयुर्वेद के उत्थान के लिए बहुमुखी कदम उठायेगी। लेकिन यह भी सम्भव नहीं हुआ । हां, कुछ कदम उठाये भी गये, लेकिन वे पर्याप्त नहीं थे । सम्पूर्ण देश को ध्यान में रखकर आयुर्वेद की प्रगति के लिए सशक्त कदम नहीं उठाये गये। इसमें क्षेत्रीयता का प्रभाव था । उदाहरण के लिए राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर (राजस्थान) में खोले गये । गुजरात आयुर्वेद विश्वविद्यालय को यद्यपि केन्द्र सरकार से सहायता मिलती है, किन्तु यह विश्वविद्यालय गुजरात राज्य के निर्णय (संकल्प) के आधार पर खोला गया था । काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में आयुर्वेद संकाय की स्थापना यद्यपि केन्द्र सरकार के निर्देश पर हुयी, किन्तु इसमें में भी जो आशा थी वह पूर्ण नहीं हुयी । इसमें कोई शक नहीं कि उत्तर प्रदेश, राजस्थान, महाराष्ट्र, दिल्ली, गुजरात जैसे कुछ राज्य आयुर्वेद पर ध्यान दे रहे हैं । इसका प्रमाण राज्य सरकार द्वारा बजटीय प्रावधान है । यद्यपि हम इसे पर्याप्त नहीं मानते हैं और आशा करते हैं कि सम्बन्धित राज्य सरकार आयुर्वेद के सर्वांगीण विकास के लिए समुचित कदम उठायेगी । सम्प्रति हम बिहार राज्य में आयुर्वेद की स्थिति का वर्णन करना चाहेंगे । इसे हम निम्नलिखित बिन्दुओं में विभक्त करना चाहेंगे :-

आयुर्वेदीय शिक्षा :- आयुर्वेद को समझने के लिए इसके मौलिक सिद्धान्तों को गहराई से समझना चाहिए । सिद्धान्तों को समझने के लिए संस्कृत की जानकारी अनिवार्य है । आज आयुर्वेद के स्नातक पाठ्यक्रम में जिन छात्रों का नामांकन होता है, वे बी.सी.सी.ई. के माध्यम से आते हैं । अर्थात् एम.बी.बी.एस., आयुर्वेद, होम्योपैथी, यूनानी एवं तिब्ब के छात्रों का नामांकन एक ही जांच-प्रक्रिया से होता है । जांच-प्रक्रिया का आधार इन्टर विज्ञान है । इस कक्षा में संस्कृत की अनिवार्यता नहीं है । जो छात्र इस जांच में बैठते हैं, सफल होने पर वे पहले एलोपैथी का चुनाव करते हैं, बाद में किसी और शाखा में जाने का । आयुर्वेद को वे सम्मान जनक दृष्टि से नहीं देखते हैं । इसका एकमात्र कारण यह है कि आयुर्वेद स्नातक की उपाधि लेने के बावजूद उन्हें नौकरी नहीं मिलती है । यदि नौकरी मिलती भी है, तो उन्हें अन्य सहयोगी एम.बी.बी.एस. चिकित्सक की अपेक्षा वेतन एवं अन्य सुविधाएं नहीं मिलती हैं । परिणाम यह होता है कि मेधावी छात्र आयुर्वेद में नामांकन लेना पसन्द नहीं करते हैं ।

अत: आवश्यकता इस बात की है कि आयुर्वेद स्नातकों को एलोपैथी के सक्षम वेतनमान एवं अन्य सुविधाएं प्रदान की जाय । जो छात्र आयुर्वेद में नामांकन लेना चाहते हैं, उनके लिए संस्कृत में उत्तीर्ण होना अनिवार्य बना दिया जाय । सरकारी नौकरी में बहाली की प्रक्रिया त्वरित गति से हो एवं बहाली प्रत्येक वर्ष होनी चाहिए । यदि छात्र आयुर्वेद में अपना भविष्य सुरक्षित समझेंगे, तो वे निश्चित रूप से आयुर्वेद की ओर आकर्षित होंगे ।

इस पावन अवसर पर हम एक सुझाव भी देना चाहते हैं । सुझाव यह है कि नालन्दा, राजगृह, पाटलिपुत्र या विक्रमशिला में आयुर्वेद का विश्वविद्यालय खोला जाय । बिहार के चारों जगहों का आयुर्वेद के अनुसार ऐतिहासिक महत्व है । यदि यह कार्य गुजरात सरकार जामनगर जैसे सुदूर क्षेत्र में विश्वविद्यालय की स्थापना करके कर सकती है, तो बिहार क्यों नहीं कर सकता है? राजस्थान राज्य में आयुर्वेद विश्वविद्यालय खोला जा रहा है । इसके लिए भूमि एवं धन का आवंटन हो चुका है । निर्माण-कार्य प्रगति पर है । यदि इच्छा-शक्ति प्रबल हो तो यह कार्य आसानी से हो सकता है ।

जड़ी-बूटियों का उत्पादन एवं मेडिसिनल प्लान्टस बोर्ड :- जड़ी-बूटियां आयुर्वेद का महत्वपूर्ण अंग है । इसके बिना औषधियों के उत्पादन में काफी कठिनाई आ सकती है, बल्कि असम्भव है । इसका उत्पादन तीन कारणों से महत्वपूर्ण है - प्रथम कारण यह है कि आयुर्वेदिक औषधियों के निर्माण में जड़ी-बूटियों का उपयोग बड़े पैमाने पर होता है । द्वितीय कारण है - राष्ट्र की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवश्यकता । लगभग दो दशक पूर्व विश्वस्वास्थ्य संगठन ने एक सर्वेक्षण कराया था । सर्वेक्षण के अनुसार उस समय औषधीय पादपों का विश्व व्यापार 500 मिलियन डालर प्रतिवर्ष था । किन्तु, आज निर्यात में बेतहाशा वृद्धि हुयी है । चीन का स्थान इसमें शिखर पर है । विश्व बैंक के प्रतिवेदन के अनुसार चीन के कुल राष्ट्रीय दवा व्यवसाय का 40% चीनी चिकित्सा पद्धति है । हमारे देश में स्थिति विपरीत है । गतवर्ष एलोपैथी दवाओं का कुल व्यवसाय 26000 करोड़ रुपये का हुआ जबकि आयुर्वेदिक औषधियों का बाजार में हिस्सा 2500 करोड़ से ज्यादा नहीं है अर्थात् बाजार का केवल 9.61% । भारत सरकार ने निर्यात् बढ़ाने, जड़ी-बूटियों के उत्पादन में प्रोत्साहन देने, बीज-संरक्षण कोष सहित अनेक क्षेत्रों के लिए मेडिसिनल प्लान्ट्स बोर्ड की स्थापना की है । साथ ही सभी राज्यों को सलाह दी गयी है कि अपने-अपने राज्य में मेडिसिनल प्लान्ट्स बोर्ड की स्थापना करे । खेद है कि बिहार सरकार की ओर से इस दिशा में कोई कदम नहीं उठाया गया है । इसी वर्ष जुलाई माह में चेन्नई में जड़ी-बूटियों के निर्यात पर एक दो दिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय गोष्ठी हुयी थी । इस गोष्ठी में नाबार्ड एवं एक्सिम बैंक के शीर्ष अधिकारियों ने भाग लिया था । 12 ऐसे औषधीय पादपों की पहचान की गयी जिसकी मांग तमिलनाडु में सर्वाधिक है । नाबार्ड ने इन औषधीय पादपों के बड़े पैमाने पर उत्पादन के लिए गैर सरकारी संस्थाओं को भी वित्तीय सहायता प्रदान करने का निर्णय लिया है । खेद है कि हमारे राज्य में जड़ी-बूटियों के उत्पादन के लिए कोई ठोस योजना नहीं है । हां, जब महामहिम राष्ट्रपति, डा० कलाम प्रधानमंत्री के प्रधान वैज्ञानिक सलाहकार थे, तब उन्होंने बिहार राज्य के पालीगंज क्षेत्र के किसानों को जड़ी-बूटी उगाने के लिए प्रोत्साहित किया था । राष्ट्रपति बनने के पश्चात् भी वे पालीगंज को भूले नहीं और बिहार प्रवास के क्रम में वहां के किसानों से मिले । इसके बाद ना तो केन्द्रीय सरकार की ओर से और न राज्य सरकार की ओर से कोई कदम उठाये गये । समय-समय पर मेडिसिनल प्लान्ट्स बोर्ड के अधिकारी आते हैं और सलाह देकर चले जाते हैं, लेकिन कार्यान्वयन नहीं होता है । उपस्थित माननीय स्वास्थ्य मंत्री से अनुरोध है कि वे इस दिशा में सकारात्मक कदम उठावेंगे ।

आज अनेक औषधि पादप ऐसे हैं जो पर्याप्त मात्रा में औषधि निर्माताओं को नहीं मिलते हैं । कुछ पादप तो अस्तित्वहीन हो रहे हैं । उनके अभाव में हमें प्रतिनिधि द्रव्यों से काम चलाना पड़ता है । स्वाभाविक है कि प्रतिनिधि द्रव्य उतने लाभकारी नहीं होते हैं जितने मूल द्रव्य । अत: आवश्यकता है बड़े पैमाने पर औषधि उत्पादन की । बिहार विभाजन के पश्चात् अधिकांश वन-क्षेत्र झारखण्ड में चले गये हैं । परिणामत: अधिकांश औषधि पादप भी झारखण्ड क्षेत्र में चले गये । हमारे राज्य में औषधि पादपों का जबरदस्त अभाव चल रहा है । इन समस्याओं पर काबू पाने के लिए यह आवश्यक है कि सरकार अपने स्तर से कृषिकरण का कार्य करे । किसान दो कारणों से जड़ी-बूटी का उत्पादन नहीं करना चाहते हैं । प्रथम कारण बाजार है । अर्थात् यदि किसान धान, गेहूं एवं अन्य खाद्य पदार्थ को उपजाते हैं, तो उन्हें बाजार गांव में ही मिल जाता है । औषधि-पादपों की बिक्री के लिए बाजार गांव में नहीं है । उन्हें अपने उत्पाद को बेचने के लिए बिचौलिये पर निर्भर रहना पड़ेगा जिससे उन्हें अपेक्षित लाभ नहीं मिल सकेगा । अत: सरकार या निजी औषधि निर्मात्री कम्पनी को यह आश्वासन देना चाहिए कि उनके द्वारा उत्पादित कच्चे द्रव्य को अविलम्ब खरीद लिया जायेगा । जहां तक श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०, पटना का प्रश्न है, हम इस बात का आश्वासन देते हैं कि बिहार में उत्पादित कच्चे द्रव्यों को हम अपनी आवश्यकतानुसार खरीद लेंगे । इसे हम बाय-बैक गारंटी भी कहते हैं । यदि औषधि पादपों के उत्पादनों की व्यवस्था की जाती है तो इससे हमें विदेशी मुद्रा अर्जन करने एवं पर्यावरण संरक्षण में भी मदद मिलेगी ।

शोध संस्थान :- आये दिन यह शिकायत मिलती रहती है कि आयुर्वेदीय औषधियां कारगर नहीं होती हैं । रसौषधियां विषाक्त प्रभाव डालती हैं । आयुर्वेद में शोध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का अभाव है । आयुर्वेद पुरानपंथी है । इत्यादि । इसके लिए शोध संस्थानों की स्थापना की आवश्यकता है । हम बिहार सरकार से मांग करते हैं कि राज्य में एक उच्चस्तरीय शोध संस्थान खोला जाय । सम्प्रति राज्य में एक भी शोध संस्थान नहीं है । संक्षेप में हम इस बात पर जोर डालना चाहेंगे कि आयुर्वेद की शिक्षा को वैज्ञानिक ढंग से सुगठित की जाय, वनौषधियों के उत्पादन के लिए युद्ध स्तर पर कृषिकरण किया जाय । राज्य सरकर के साथ-साथ किसानों को भी इसके लिए प्रोत्साहित किया जाय । साथ ही उन्हें औषधि पादपों, उनके उत्पादन से होनी वाली आय एवं उत्पादन के लिए जरूरी तकनीक बतायी जाय । यदि एक आयुर्वेद विश्वविद्यायल एवं उच्चस्तरीय शोध संस्थान खोलने की दिशा में सरकार कोई कारगर कदम उठाती है, तो इससे आयुर्वेद का भला होगा और हम आयुर्वेदज्ञ इसके लिए सरकार कें कृतज्ञ रहेंगे ।

आयुर्वेदिक विद्वानों का सार्वजनिक अभिनन्दन :- हमारे मध्य प्रतिभाओं की एक लम्बी श्रृंखला है । इस श्रृंखला में वैसे भी विद्वान पुरुष हैं जिन्होंने अपने जीवन का अधिकांश भाग आयुर्वेद को समर्पित कर दिया है और आज वे जीवन की अन्तिम संध्या में हैं । ऐसे महापुरुष को यदि उचित सम्मान प्रदान नहीं किया जाता है तो हमारी कृतघ्नता होगी । इसके साथ ही हमारे मध्य आयुर्वेद के ऐसे विद्वान मौजूद हैं जो निष्ठापूर्वक आयुर्वेद की सेवा कर रहे हैं । दोनों दृष्टिकोणों को समन्वित करते हुए प्रतिष्ठान ने प्रतिवर्ष धन्वन्तरि जयन्ती समारोह के पावन अवसर पर बिहार से तीन, झारखण्ड से एक और नेपाल से एक प्रख्यात् वैद्य या आयुर्वेद के निष्णात विद्वान को सम्मानित करने का निर्णय लिया है । इसका श्रीगणेश आज से ही कर रहे हैं ।

जहां तक श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि०, पटना के द्वारा आयुर्वेदोत्थान की दिशा में उठाये गये कदमों का प्रश्न है, यह सर्वविदित है । हम न केवल मानक औषधियों का निर्माण करते हैं, बल्कि आयुर्वेदिक शोध की दिशा में भी काफी रुपये व्यय करते हैं । प्रतिष्ठान का शोध एवं विकास विभाग इसका एक उदाहरण है । इ विभाग में कच्चे द्रव्य एवं उत्पादित द्रव्यों की जांच जाती है । जांच में सही पाये जाने पर ही औषधियों बाजार में भेजा जाता है । आयुर्वेदीय साहित्य को परिपु करने के लिए वर्ष में लाखों रुपये खर्च पुस्तकों प पत्रिकाओं के प्रकाशन पर किया जाता है । केवल सचि **आयुर्वेद** पत्रिका का नियमित प्रकाशन ही हमारे दावे प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त है । हमारे पास एक सुज्जित पुस्तकालय है जिसका लाभ आयुर्वेद के विद्व प्रतिदिन उठाते हैं । विगत कई वर्षों से हम कम्पनी के संयुक्त प्रबन्ध निदेशक स्व० दुर्गा प्रसाद शर्मा की स्मृति व्याख्यानमाला का आयोजन करते आ रहे हैं जिसम व्याख्यानदाता आयुर्वेद के मूर्धन्य विद्वान रहे हैं । इसके साथ ही हम राष्ट्रीय स्तर पर सम्मेलनों का भी आयोजन करते आ रहे हैं । रसौषधियों का मानक स्थापित करने के लिए दो राष्ट्रीय सम्मेलन हमारी ओर से पटना में आयोजित किये गये थे जिसमें देश के प्रतिष्ठित विद्वानों ने भाग लिय था ।

संक्षेप में हमारा आशय यह है कि हम आयुर्वे के उत्थान के लिए कृत संकल्प हैं एवं राज्य सरकार से आशा करते हैं कि वह भी अपनी राजनीतिक इच्छा-शक्ति का प्रयोग करके आयुर्वेद के उत्थान के लिए समुचित कदम उठावे ताकि हम अन्य उन्नत राज्यों की श्रेणी में आ सकें ।

समारोह का प्रारम्भ संध्या 5.30 बजे भगवान धन्वन्तरि के तैल चित्र पर माल्यार्पण से हुआ । संस्कृत के प्रख्यात् विद्वान, श्री कृष्ण कुमार पाठक के स्वस्तिवाचन के पश्चात् आगत विद्वानों का स्वागत प्रतिष्ठान के निदेशक, श्री प्रमोद शर्मा ने किया । तत्पश्चात् इस अवसर पर आयुर्वेद एवं योग के लब्ध प्रतिष्ठ विद्वान, श्री रघुनाथ कर्मकार (सम्प्रति सिद्धराज योगी आत्मज्ञानानन्द), वैद्य नागेश द्विवेदी, डा० अनिरूद्ध मिश्र, डा० गिरीश मिश्र एवं श्री रघुनन्दन मिश्र का सम्मान बिहार राज्य के स्वास्थ्य मंत्री (चिकित्सा शिक्षा एवं देसी चिकित्सा), डा० शकील

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अहमद एवं पटना विश्वविद्यालय के कुलपति, डा०के०के० झा ने क्रमशः शाल एवं प्रतीक चिन्ह (मोमेन्टो) से किया। सचित्र आयुर्वेद के सम्पादक, श्री विमल चन्द्र झा ने सम्मानित किये गये विद्वानों के जीवन पर प्रकाश डाला। दुर्भाग्यवश डा० गिरीश मिश्र एवं श्री रघुनन्दन मिश्र अस्वस्थ रहने के कारण सशरीर समारोह में उपस्थित नहीं थे। सबों के जीवन चरित क्रमशः सचित्र आयुर्वेद में प्रकाशित किये जायेंगे।

समारोह का उद्घाटन करते हुए राज्य के स्वास्थ्य मंत्री, डा० शकील अहमद ने कहा कि आयुर्वेद भारत की आत्मा है। कोई भी सरकार इसे नहीं छीन सकती है। यदि कोई इसे नष्ट कर सकता है, तो आयुर्वेदज्ञ ही इसे नष्ट कर सकता है। उन्होंने बताया कि मेडिसिनल प्लान्ट्स बोर्ड से सरकार के दो विभागों को प्रेम हो गया है - पहला वन विभाग और दूसरा स्वास्थ्य विभाग। इसी प्रेम की वजह से सरकारी सूचिका विगत छह माह से झूल रही है। खैर, अब निर्णय हो गया है कि बोर्ड स्वास्थ्य विभाग के अधीन रहेगा और इसकी स्थापना शीघ्र हो जायेगी।

समारोह की अध्यक्षता करते हुए पटना विश्वविद्यालय के कुलपति, डा० के० के० झा ने आरोग्य के महत्व पर प्रकाश डाला। प्रतिष्ठान के अध्यक्ष, श्री अरविन्द शर्मा ने आगत सज्जनों को धन्यवाद ज्ञापित किया। मंच संचालन का गुरुतर भार का निर्वाह प्रतिष्ठान के कारखाना प्रबन्धक, डा०एल०के० चौधरी ने किया।

बैद्यनाथ

ईसब्बेल

आंव, पेचिश, मरोड़, आमातिसार (डिसेन्ट्री),
कब्जियत आदि रोगों में बहुपरीक्षित एवं उपयोगी औषधि।

बैद्यनाथ

घाव मलहम

फोड़े, फुंसी तथा खुजली में लाभदायक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अन्य देश हमसे आगे निकल जाएंगे । इस अवसर पर उन्होंने आयुर्वेद उत्थान के लिए बैद्यनाथ प्रतिष्ठान द्वारा किए जा रहे कार्यों का विवरण प्रस्तुत किया । उन्होंने कहा कि बैद्यनाथ ने अपने औषधि निर्माण शोध (रिसर्च) कार्य के साथ-साथ आयुर्वेदाचार्यों की एक टीम औषधि निर्माण में विशेष रूप से प्रशिक्षित कर एस०पी०एस० (सीनियर प्रोडेक्ट स्पेशलिस्ट)एवं जे०पी०एस० (जूनियर प्रोडक्ट स्पेशलिस्ट) योजना के तहत आयुर्वेद चिकित्सकों एवं नागरिकों को बैद्यनाथ प्रतिष्ठान द्वारा दवाओं की श्रेष्ठ क्वालिटी निर्माण प्रक्रियाओं में सार्थक सुधार, मूल द्रव्यों की शुद्धता व गुणवत्ता का रासायनिक विश्लेषण जड़ी-बूटियों के चयन से लेकर निर्माण, भण्डारण, पैकिंग व सप्लायी तक पर्याप्त सावधानी व स्वच्छता के लिए केन्द्रीय सरकार की अच्छी निर्माण प्रक्रिया (जी०एम०पी०) के तहत निर्धारित मापदण्डों का परिचय व पालन कर जन-जन को इसकी जानकारी की प्रेरणा दी जाती है । इस प्रकार हमारे आयुर्वेद की विशिष्टताओं से लोगों को परिचित कराने का अभियान निरन्तर जारी है । बैद्यनाथ प्रतिष्ठान के महाप्रबन्धक, श्री वाई०पी० शर्मा ने बड़े ही भाव-विभोर शब्दों में सम्मान हेतु आमंत्रित वैद्यों का परिचय इस प्रकार कराया -

उन्होंने कहा कानपुर से वैद्य रमाकान्त मणि (राष्ट्रपति पदक विभूषित) विगत 50 वर्षों से आयुर्वेद चिकित्सा क्षेत्र में ख्यातिलब्ध चिकित्सक हैं । ऐसे ज्ञानवृद्ध-वयोवृद्ध चिकित्सा मनीषी का सम्मान करना हमारी परम्परा और विरासत में मिली संस्कृति है ।

मऊरानीपुर से वैद्य राधेलाल धमैनिया दीवान जी, टीकमगढ़ से डा०आर०के० जैन "कंचन", लश्कर (ग्वालियर) से प्रो०डा० भूपेन्द्र शर्मा एवं उरई (जालौन) से वैद्य सुघर सिंह "ठेकेदार" सम्मानित किए गए । श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० प्रतिवर्ष देश के सैकड़ों आयुर्वेद मनीषियों का सम्मान विगत 80 वर्षों से निरन्तर करता आ रहा है ।

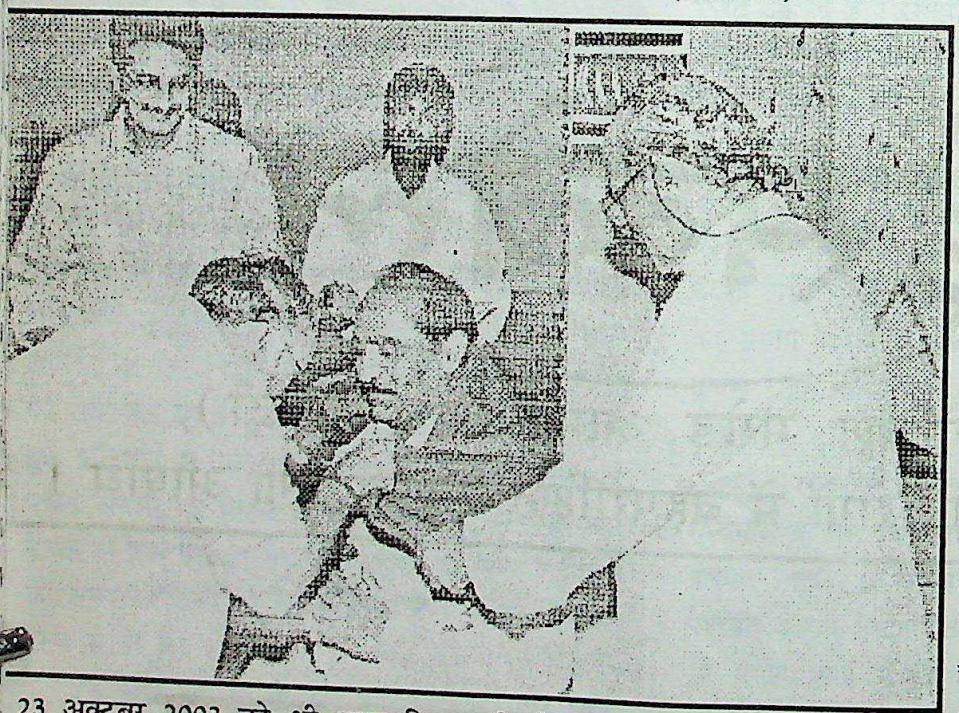

23 अक्टूबर 2003 को श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर डा० आर०के० जैन "कंचन" आयुर्वेदाचार्य, टीकमगढ़ का सम्मान करते हुए बैद्यनाथ झांसी प्रतिष्ठान के प्रबन्ध निदेशक पं० बृजेन्द्र कुमार शर्मा (झुके हुए बाएं) तथा बाएं से दूसरे कार्यकारी निदेशक, श्री अनुराग शर्मा एवं डा०पं० विश्वनाथ शर्मा कार्यकारी निदेशक (दाएं से प्रथम) परिलक्षित हो रहे हैं ।

समारोह के अन्त में उपस्थित जन-समुदाय का आभार व्यक्त करते हुए पं० बृजेन्द्र कुमार शर्मा ने कहा कि आयुर्वेद में औषधियों का ही वर्णन नहीं बल्कि आयुर्वेद एक जीवन पद्धति है, इसमें बताये हुए आहार-विहार का पालन करने से सम्पूर्ण समाज निरोगी रह सकता है । उन्होंने समारोह में पधारे वैद्य-डाक्टरों एवं गणमान्य अतिथियों का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आभार व्यक्त किया । इस अवसर पर एक स्वास्थ्य प्रदर्शनी आयोजित की गयी, जिसमें आयुर्वेद का परिचय, भारत में आयुर्वेद का नाम एवं श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि० के संस्थापक स्व० वैद्यराज पं० रामनारायण शर्मा का अथक परिश्रम व विद्वतापूर्वक की गयी आयुर्वेद सेवा का प्रतीक बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन द्वारा अनेक आयुर्वेद के मौलिक 54 से भी अधिक ग्रंथमालाओं एवं प्रकाशनों का प्रदर्शन कराया गया जिसमें बहुत से ग्रन्थ आयुर्वेद महाविद्यालयों के पाठ्यक्रम में और औषधि मानक ग्रन्थ की भारत सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त है । अन्त में समारोह में उपस्थित जन-समुदाय को केशरयुक्त दूध एवं मिष्ठान वितरित किया गया ।

चिकित्सा पल्लव, दिव्य चिकित्सा भवन में धन्वन्तरि जयंती सम्पन्न

पनगरा (बाँदा) । 23 अक्टूबर, चिकित्सा पल्लव कार्यालय दिव्य चिकित्सा भवन पनगरा (बाँदा) ने विगत वर्षों की भाँति अपनी पाँचवी वर्षगाँठ के अवसर पर आयुर्वेद प्रवर्तक भगवान् धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव धूम-धाम के साथ आयोजित किया । इस समारोह में क्षेत्र के प्रबुद्ध वर्ग, कॉमिस्ट, पत्रकार, एडवोकेट्स, साहित्यकार, विभिन्न पैथियों के चिकित्सक एवं आयुर्वेद प्रेमी उपस्थित रहे । कार्यक्रम की शुरूआत मुख्य अतिथि आचार्य काशी प्रसाद द्विवेदी, नगर अध्यक्ष नरैनी ने भगवान् धन्वन्तरि के तैल चित्र माल्यार्पण के पश्चात् शुरू किया । मुख्य अतिथिआचार्य द्विवेदी ने अपने भाषण में दिव्य चिकित्सा भवन के कार्यक्रम की भूरि-भूरि सराहना की । उन्होंने इस संस्थान की चिकित्सा पद्धति आयुर्वेदीय पंचकर्म को जीर्ण, जटिल रोगोपहारी और हानि रहित बताते हुये इस संस्था के संस्थापक एवं चिकित्सा पल्लव के प्रधान संपादक, डॉ०मदन गोपाल वाजपेयी के सत्प्रयासों, अनुसंधानों, तत्परता एवं आयुर्वेद के प्रति समर्पणता की प्रशंसा की । उन्होंने इस संस्थान को इस क्षेत्र का तीर्थ बताया । औषधि निर्माण क्षेत्र में भी इस संस्था के सहयोगी संस्था दिव्य आयुर्वेद भवन को सफल कहा ।

कार्यक्रम के अंत में दिव्य चिकित्सा भवन में भर्ती देश के कोने-कोने से आए सोरायसिस, दमा, किडनीफेल्योर, आमवात, कैंसर आदि के रोगियों से मिलकर

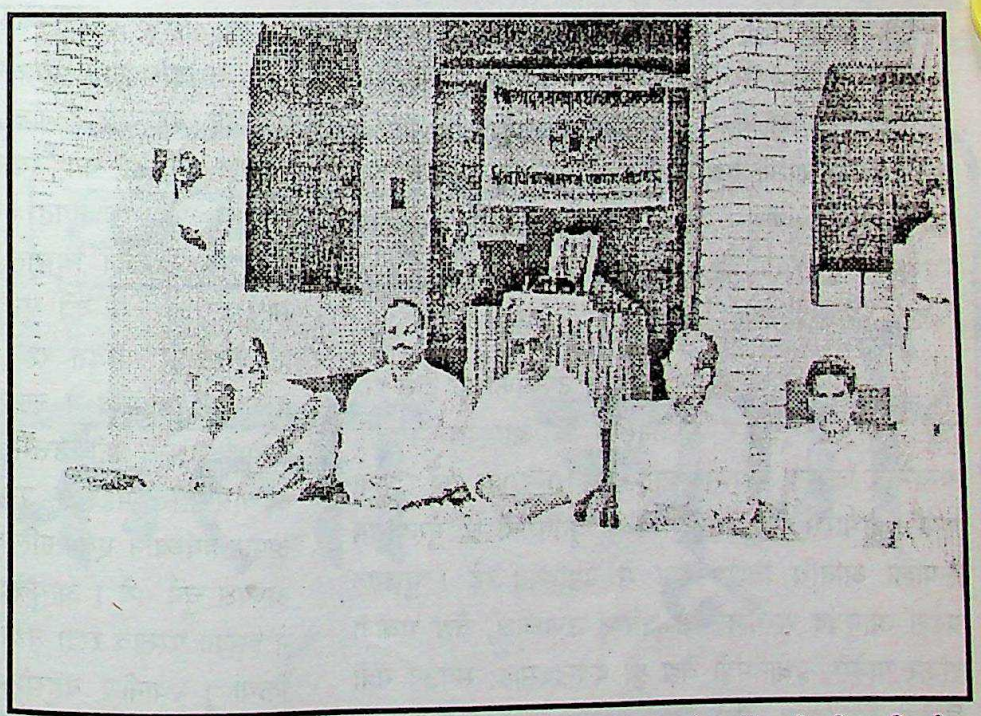

दिव्य चिकित्सा के धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव पर बाएं से दाएं मंचासीन डॉ० श्रीमती कालिन्दी सिन्हा, चिकित्सा पल्लव प्रधान सम्पादक , डॉ० मदन गोपाल वाजेपयी, मुख्य अतिथि श्री काशी प्रसाद द्विवेदी (नगर अध्यक्ष, नरैनी), डॉ० श्रीराम त्रिपाठी पूर्व क्षे०आ०यू०अधिकारी एवं अनन्त राम त्रिपाठी एडवोकेट चिकित्सा पल्लव । माइक पर कार्यक्र संचालन करते श्री विजय कान्त मिश्र 'शास्त्री' ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुख्य अतिथि आचार्य द्विवेदी ने उनके स्वास्थ्य लाभ आदि की जानकारी ली, पश्चात् संतोष व्यक्त किया । आचार्य द्विवेदी ने डॉ० वाजपेयी को इस युग का धन्वन्तरि कहा एवं डॉ० वाजपेयी द्वारा लिखित एवं दिव्य चिकित्सा भवन द्वारा प्रकाशित आयुर्वेद पंचकर्म एवं प्राकृतिक चिकित्सा का सामान्य परिचय पुस्तिका का विमोचन भी किया । डॉ० वाजपेयी ने अपने समापन भाषण में आगन्तुकों के प्रति आभार व्यक्त करते हुए भगवान् धन्वन्तरि के प्रति कृतज्ञता प्रकट की उन्होंने धन्वन्तरि को शल्यशास्त्र के निष्णात विद्वान के रूप में परिभाषित किया । इस महोत्सव में उपस्थित प्रबुद्ध वर्ग श्री नत्थूराम शास्त्री (शिक्षक), श्री सदाशिव शुक्ल, डॉ० बसंत कुमार अम्बष्ट ने भी सम्बोधित किया । अंत में पनगरा की वरिष्ठ वैद्या (डॉ०) कालिन्दी सिन्हा को उनकी पचास वर्षों की सेवाओं के लिये आयुर्वेद विदुषी अलंकार से वस्त्र, श्रीफल व प्रमाण पत्र देकर सम्मानित किया । कार्यक्रम का संचालन विजयकान्त मिश्र (शिक्षक) ने सामयिकी सम्भाषा पूर्वक किया । पश्चात् भवन के कर्मचारियों, पदाधिकारियों को सेवानिवृत्त क्षे०आ०यू० अधिकारी डा०श्रीराम त्रिपाठी ने वस्त्र देकर सम्मानित किया ।

गुजरात

गुजरात के मूर्धन्य आयुर्वेद उपासकों के द्वारा इस वर्ष बड़े ही धूमधाम से आरोग्य के आदिदेव भगवान धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव ता०-23-10-2003 को मनाया गया । सभारंभ में गुजरात राज्य के कृषिमंत्री श्री पुरुषोत्तम रूपाला अतिथि विशेष रूप से उपस्थित रहे । गुजरात प्रदेश आयुर्वेद सम्मेलन के वरिष्ठ उपाध्यक्ष, वैद्य भवानी शंकर पानेरी, प्रधानमंत्री वैद्य श्री देवेन्द्र साह, संगठन मंत्री विक्रम उपाध्याय, वैद्य दिनकर आणेकर, डॉ० हंसमुख सोनी, डॉ० ए०एस० गुप्ते तथा विद्वत् वैद्यगण पांच सौ की संख्या में उपस्थित थे । विभिन्न संस्थाओं ने भी इस महोत्सव में बढ़ चढ़कर भाग लिया जिनमें - गुजरात प्रदेश आयुर्वेद सम्मेलन, आयुर्वेद सहायक निधि, आयुर्वेद भवन ट्रस्ट, अहमदाबाद वैद्य सभा, गुजरात आयुर्वेद विक मंडल, एसोसिएशन ऑफ इन्डियन सिस्टम ऑफ मेडिसि गुजरात आयुर्वेद मेडीकल एसोसिएशन प्रमुख थे । गुज आयुर्वेद चेरीटेबल ट्रस्ट, आयुर्वेद मेडीकल एसोसि वगैरह संस्थाओं ने प्रथमबार सामूहिक तौर पर एक जगह "गुजरात आयुर्वेद भवन" इन्कमटैक्स के पा अहमदाबाद में एकत्रित होकर धाम-धूम से महोत्सव आयोजन सम्पन्न किया । इस समारोह में आयु विकासमंडल के अध्यक्ष वैद्य शान्तिभाई अग्रवाल और कमलेश राजगौड़, वैद्य गनी मन्सूरी, सेनेट सिन्डिकेट मे गुजरात आयु० युनि० जामनगर, डा० हसमुख वैद्य, गुज आयुर्वेदिक बोर्ड के अध्यक्ष आदि महानुभव उपस्थित थे

बिहार

आडॉम विज्ञान शोध संस्थान में धन्वन्तरि जयन्ती

दुग्धपुरा - मंगलगढ़; बृहस्पतिवार कार्तिक कृ त्रयोदशी तदनुसार दिनांक 23-10-2003 की संध्या भगवान धन्वन्तरि की जयन्ती आडॉम विज्ञान शोध संस्था दुग्धपुरा, पो० मंगलगढ़ (समस्तीपुर) के आयुर्वेद विद्या भवन के विशाल विस्तृत प्रांगण में बड़े ही धूमधाम से साथ अंग्रेजी बाजे की धुन में सोल्लास मनाई गई । दुर्भाग्य के कष्ट से पीड़ित रहने पर भी आचार्य डा० महेश्व प्रसाद जी महोदय ने अथक परिश्रम एवं दौड़-धूप कर सम्पूर्ण उत्सव की उत्तम व्यवस्था कराई । इस बार आचार्य डॉ० महेश्वर प्रसाद जी सर्वसम्मति से निर्वि अपार हर्षध्वनि एवं तालियों की तीव्र गड़गड़ाहट के स अध्यक्ष चुने गये । आयुर्वेद के एक स्नातकोत्तर विद्वान ने इसका प्रस्ताव रखा तथा कई व्यक्तियों ने इसका स किया । स्थानीय बहुसंख्यक जन-गण ने भी अति ध्वनि के साथ इस प्रस्ताव का समर्थन एवं स्वागत कि तब विधिवत भगवान धन्वन्तरि का पूजन हुआ । प्र हुअी । इसके बाद श्रीमती अर्चना देवी, श्रीमती क देवी तथा कुमारी वन्दना, विजयश्री ने मिलकर सु सुरीली कण्ठों से भगवान धन्वन्तरि का स्तवन संस्कृ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया जिसकी सब विद्वानों, वैद्यों एवं प्राध्यापकों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की । अनेक विद्वान वैद्यों, आयुर्वेद के स्नातक, स्नातकोत्तर शोधकर्ताओं, डॉक्टर, सर्जन एवं प्राध्यापकों के ओजस्वी व सारगर्भित भाषणों के बाद अन्त में अध्यक्ष पद से बोलते हुए आचार्य डा० महेश्वर प्रसाद जी ने भगवान धन्वन्तरि के अवतरण एवं कृति पर प्रकाश डालते हुए आयुर्वेद की परम उपयोगिता एवं महत्ता पर संक्षिप्त भाषण दिया। उन्होंने कहा कि शरीर संशोधन के लिए आयुर्वेद का पंचकर्म इतना अनिवार्य एवं उपयोगी है कि इसके बिना कभी भी मनुष्य का शारीरिक एवं मानसिक दोष एवं विकार दूर नहीं हो सकता । पंचकर्म शरीर का संशोधन कर उसे स्वच्छ, उज्जवल ही नहीं बनाता वरना उसके विजातीय द्रव्यों एवं विषों से रहित करता है । इससे गहराई में छिपे विकारों का नाश होता है जिससे व्याधि को समूल दूर करने में सहायता मिलती है । आज विश्व के लब्धजन और विवेकी डाक्टर महोदय इसी प्रकार की प्रक्रिया को पसंद करते हैं । अतएव विश्व के सर्व पढ़े-लिखे विद्वान लोगों का आयुर्वेद की ओर आकृष्ट होना स्वाभाविक है । अध्यक्ष महोदय के भाषण के बाद प्रसाद वितरण हुआ । प्रसाद को लेकर सभी लोग आयुर्वेद के प्रति श्रद्धा एवं विश्वास का अलख जगाते हुए तथा आयुर्वेद की महत्तम उपयोगिता को अपने मस्तिष्क में संजोये हुए आयुर्वेद एवं आचार्य महेश्वर की जय-जयकार करते हुए अपने-अपने घर गये ।

पूजन समाचार

गया - प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर दिनांक 23-10-2003 को स्थानीय आरोग्य आयुर्वेद भंडार, गया में श्री धवन्तरि जयन्ती महोत्सव का आयोजन धूमधाम के साथ किया जाय ।

संध्या में पूजा-अर्चना के पश्चात् प्रसाद वितरण किया गया । इस अवसर पर शहर के वैद्य डाक्टर एवं अन्य गणमान्य अतिथियों ने भाग लिया । अंत में वैद्य दिनेश प्रसाद भदानी ने आगंतुकों को धन्यवाद ज्ञापन के साथ समारोह का समापन किया ।

बैद्यनाथ

त्रिफला चूर्ण

कब्ज, पांडु, कामला, शोथ,
नेत्र विकार आदि को दूर करता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी माधवनिदानोक्त पञ्चनिदानलक्षणाध्याय पर आधारित

1. डा० अनूप कु०गक्खड़, एम.डी.(आयुर्वेद)
2. मांका रयात

1. प्र०- रोग विनिश्चय ग्रन्थ काल किन विषयों से सम्पन्न है ?
   उ०- **उपद्रव, अरिष्ट, निदान, लिंग ।**
2. प्र०- रोग ज्ञान के पञ्चविध उपाय क्या हैं ?
   उ०- **निदान, पूर्वरूप; रूप, उपशय व सम्प्राप्ति ।**
3. प्र०- निमित्त किस का पर्याय है ?
   उ०- **हेतु का ।**
4. प्र०- संस्थान किस का पर्याय है ?
   उ०- **रूप का ।**
5. प्र०- व्यञ्जन किसका पर्याय है ?
   उ०- **रूप का ।**
6. प्र०- आयतन किस का पर्याय है ?
   उ०- **हेतु का ।**
7. प्र०- सात्म्य किसका पर्याय है ?
   उ०- **उपशय ।**
8. प्र०- जाति किसका पर्याय है ?
   उ०- **सम्प्राप्ति का ।**
9. प्र०- अगाति किसका पर्याय है ?
   उ०- **सम्प्राप्ति का ।**
10. प्र०- दोषों की अंशांश कल्पना का ज्ञान किस सम्प्राप्ति द्वारा होता है ?
    उ०- **विकल्प ।**
11. प्र०- अनुपशय का अन्तर्भाव किसमें होता है ?
    उ०- **निदान ।**
12. प्र०- जब एक रोग दूसरे रोग के निदान के समान रोग की उत्पत्ति करने वाला हो तो उसे क्या कहते हैं ?
    उ०- **निदानार्थकर रोग ।**
13. प्र०- दोषों के प्रकोप होने पर मूल कारण क्या है ?
    उ०- **विविध अहित सेवन ।**
14. प्र०- रोग की उत्पत्ति में सन्निकृष्ट आदि भेद से कितने भेद होते हैं ?
    उ०- **दो ।**
15. प्र०- माधव निदान में सम्प्राप्ति की परिभाषा किस ग्रन्थ से ली गयी है ?
    उ०- **अष्टांङ्ग हृदय ।**
16. प्र०- माधव निदान में वर्णित निदान के पर्याय किस ग्रन्थ से लिए गये हैं ?
    उ०- **अष्टांङ्ग हृदय ।**
17. प्र०- माधव निदान में वर्णित व्याधि संकट की परिभाषा किस ग्रन्थ के अनुसार है ?
    उ०- **चरक संहिता के अनुसार ।**
18. प्र०- शीत के कारण उत्पन्न कफज ज्वर में शुण्ठी का प्रयोग किस उपशय का उदाहरण है ?
    उ०- **हेतु विपरीत औषध ।**
19. प्र०- अतिसार में कुटज का प्रयोग किस उपशय का उदाहरण है ?
    उ०- **व्याधि विपरीत औषध ।**
20. प्र०- वातिक शोथ में दशमूल का क्वाथ प्रयोग किस उपशय का उदाहरण है ?
    उ०- **हेतु व्याधि विपरीत औषध ।**
21. प्र०- छर्दि में मदनफल का प्रयोग किस उपशय का उदाहरण है ?
    उ०- **व्याधि विपरीतार्थकारी औषध ।**
22. प्र०- अतिसार में दूध का प्रयोग किस उपशय का उदाहरण है ?
    उ०- **व्याधिविपरीतार्थकारी अन्न ।**
23. प्र०- रूप के पर्याय कितने हैं ?
    उ०- **छः ।**
24. प्र०- मधुकोश के अनुसार पूर्वरूप के कितने भेद हैं ?
    उ०- **दो ।**
25. प्र०- रोगों के भेदों की गणना किस प्रकार की सम्प्राप्ति के अन्तर्गत होती है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उ०- संख्या ।

26. प्र०- ज्वर और रक्तपित्त से किस रोग की उत्पत्ति होती है ?

उ०- शोष रोग ।

27. प्र०- उदर रोग से किसकी उत्पत्ति होती है ?

उ०- शोथ रोग ।

28. प्र०- क्षय रोग से कौन-सा रोग उत्पन्न होता है ?

उ०- शोष रोग ।

29. प्र०- कास रोग की उत्पत्ति किस रोग से होती है ?

उ०- प्रतिश्याय ।

30. प्र०- ज्वर के आठ प्रकार - यह किस प्रकार की सम्प्राप्ति को दर्शाते हैं ?

उ०- संख्या ।

31. प्र०- रोग की बलवत्ता का ज्ञान किस प्रकार की सम्प्राप्ति से होता है ?

उ०- बल ।

32. प्र०- आग से जल जाने पर अगरु आदि द्रव्यों का लेप करना-किस प्रकार से उपशय का उदाहरण है ?

उ०- हेतु व्याधि विपरीतार्थकारी औषध ।

33. प्र०- व्यायाम से उत्पन्न उरूस्तम्भ रोग में जल में तैरना-किस उपशय का उदाहरण है ?

उ०- हेतु व्याधि विपरीतार्थकारी विहार ।

34. प्र०- उदावर्त में विरेचन-यह किस उपशय का उदाहरण है ?

उ०- व्याधि विपरीत विहार ।

35. प्र०- व्याधि के गूढ़ लिङ्ग का ज्ञान किससे होता है ?

उ०- उपशय ।

36. प्र०- व्याधि शब्द ग्रहण करने से और किसको भी ग्रहण कर लेना चाहिए ?

उ०- व्याधि उत्पन्न करने वाला दोष ।

37. प्र०- वातज उन्माद में भय दिखाना - किस प्रकार के उपशय को दर्शाता है ?

उ०- हेतु विपरीतार्थकारी विहार ।

38. प्र०- ज्वर से किस रोग की उत्पत्ति होती है ?

उ०- रक्तपित्त ।

39. प्र०- निदानपंचक की आवश्यकता क्यों है ?

उ०- इससे सिद्ध हस्तता की प्राप्ति होती है ।

40. प्र०- आकृति किसका पर्याय है ?

उ०- रूप ।

बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल विटामीन-सी और कैल्सियम युक्त एक संपूर्ण स्वास्थ्य टॉनिक

बैद्यनाथ च्यवनप्राश

स्वस्थ दिमाग और शरीर के लिए

माँ से बढ़कर बच्चों की देखरेख और कौन कर सकता है ? इसीलिए हर माँ अपने नन्हे-मुन्ने के लिए स्वास्थ्यवर्धक व पौष्टिक आहार की कामना करती है ।

परन्तु केवल स्वादिष्ट भोजन आपके बच्चों की विटामिन व पोषण संबंधी जरूरतों की पूरा नहीं कर सकता । उसके अनुकूल विकास के लिए आपको चाहिए एक उत्कृष्ट स्वास्थ्य टॉनिक । जैसे बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल । इसमें है 52 (परखी हुई) जड़ी-बूटियाँ और केसर । अनेक विटामिन व हर्बो-मिनरल्स से युक्त, इसमें विशेष मात्रा में है, प्राकृतिक विटामिन-सी और कैल्सियम, जो आपके शरीर में जरूरी पोषक तत्वों की कमी को पूर्ण करते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्जुन के कुछ कतिपय प्रयोग

अर्जुन वृक्ष हमारे छत्तीसगढ़ में कऊहा पेड़ के नाम से जाने जाते थे :- यह हृदय रोग की कारगर महान औषधि है । कऊहा के पेड़ हमारे छत्तीसगढ़ में गंवई गाँव खेत बाग-बगीचा में होते थे । इसी प्रकार छोटानागपुर के पठार, मध्य भारत, दक्षिण बिहार, हिमालय की तराई, बर्मा, सिलोन आदि प्रांतों के नदी किनारे पाये जाते हैं ।

अर्जुन वृक्ष की ऊंचाई 60 फीट से 80 फीट एवं मोटाई 10 से 20 फीट होती है । गर्मी के दिनों में छोटे-छोटे गुच्छेदार फूल लगते हैं जो कि हरा एवं सफेद रंग का होता है । फूलों में शहद की भांति सुगंध होती है । फल षटकोण की भांति होता है तथा स्वाद में कषाय होता है, मुंह साफ करने में सहायक होता है ।

हृदय रोग हेतु औषधि निर्माण कैसे :- अर्जुन की छाल को छाया में सुखाकर चूर्ण बना लें और एक किलो चूर्ण में एक पाव मिश्री मिलायें और चार किलो दूध के साथ मिट्टी के बर्तन में आग से उतारकर कपड़े से छान लें । इसके बाद तीन से छः माशा की मात्रा में मधु के साथ दिन में दो बार सेवन करने से हृदय रोग ठीक हो जाता है और हृदय रोग से उत्पन्न जी मिचलाना, चक्कर आना, नींद नहीं लगना, दिल घबराहट होना, भूख नहीं लगना, इस उपद्रव में बढ़े हुए शरीर की बेचैनी ठीक हो जाती है ।

अर्जुन हृदय रोग (हार्ट) फेफड़ों की महान कारगर औषधि :- अर्जुन छाल का चूर्ण 400 तोला, दाख 200 तोला, महुवा 100 तोला, मिश्री 2 किलो, धाय फूल 3 किलो को 11 सेर पानी में मिट्टी के बर्तन में रखकर आग में पका लें, चौथाई शेष बचने पर उतारकर कपड़े से छान लें और 3 से 5 तोला की मात्रा में पानी के साथ दिन में दो बार सेवन करें । इस औषधि के सेवन करने से हार्ट की व्याधि दूर होती है । हृदय रोग फेफड़ों की खराबी से उत्पन्न घबराहट, कमजोरी, चक्कर आना, जी मिचलाना, भूख नहीं लगना, कमर में दर्द होना, सिर दर्द, हाथ पैर तलवा में जलन होना, मुख से खून की उल्टी होना, मूर्च्छा एवं बेहोशी आदि उपद्रव इसके सेवन करने से ठीक हो जाते हैं ।

छाती के दर्द, जलन और सूजन के लिये :- अर्जुन के छाल एक किलो, गुड़ एक पाव, दूध चार किलो को मिट्टी के बर्तन में आग में पकायें और चौथाई शेष रहने पर उतारकर छान लें और चार तोले की मात्रा में मधु मिलाकर दिन में दो बार सेवन करने से छाती का दर्द, जलन और फेफड़े का सूजन का रोग ठीक हो जाता है ।

बिच्छू के डंक में कऊहा छाल का चूर्ण :- अर्जुन छाल की भस्म बना डंक स्थान पर लगाएं और दो से तीन माशा की मात्रा में जल के साथ पिलायें और इस प्रकार लगाने और खाने से बिच्छू का डंक उतर जाता है । बिच्छू के डंक के रोगी को सन्निपात रोग हो जाता है। रोगी के शरीर से पसीना लाकर शरीर को ठंडा कर देता है । इस स्थिति में कऊहा अपने प्रभाव एवं गुण धर्म से औषधि के रूप में अमृत तुल्य औषधि बनाकर रोगी को बिच्छू डंक उतार लेता है ।

सर्पदंश में :- अर्जुन छाल की राख बनाकर (भस्म) को पानी में घोलकर सर्पदंश में लगायें और एक से तीन रत्ती के मात्रा में खिलायें । इस प्रकार लगाने और खिलाने से सर्पदंश का जहर उतर जाता है । सर्पदंश के उपद्रव रोगी को मूर्च्छा हो जाती है । रोगी मरनासन्न जाता है । इस गति को अर्जुन अपने प्रभाव से अमृत तुल्य औषधि बनाकर रोगी को सर्पदंश से बचा लेता है ।

दांत के रोग में अर्जुन :- छाल बारीक चूर्ण को शाम सुबह मंजन करें या कहुआ के दातुन करें । इस प्रकार मंजन और दातुन करने से दांत का हिलना, दांत में पायरिया रोग तथा दांतों से खून से गिरना दांत में दर्द होना एवं मसूड़ा रोग ठीक हो जाता है । इससे रोगी सुखमय भोजन कर सकता है । यह सहयोग कऊहा पेड़ का है ।

खूनी दस्त (रक्त अतिसार) रोग में :- अर्जुन छाल के कच्चा रस और गाय का दूध एवं शहद मिलाकर तीन-तीन माशा के मात्रा में सेवन करने से खूनी दस्त (रक्त अतिसार) का रोग ठीक हो जाता है । इस रोग से रोगी काफी कमजोर होते हैं । शरीर से चल नहीं पाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुख से बोल नहीं पाता और बेहोश हो जाता है । इस रोगी को अर्जुन छाल की औषधि जीवन दान देकर रोग से मुक्त करती है ।

(अस्थि भंग) हड्डी टूटने पर :- अर्जुन छाल के चूर्ण को छः माशा की मात्रा में पानी के साथ पिलायें और हड्डी को साईज बैठाकर टूटे हुए स्थान पर चूर्ण को दूध में घोलकर लेप करें । सेवन करने और लेप करने से टूटी हुई हड्डी तत्काल जुड़ने में सहायक होती है । टूटे हुए स्थान से खून अधिक जाता है तो चूर्ण में दूध मिलाकर दिन में दो बार सेवन करने से खून बन्द हो जाता है और रोगी इस रोग से छुटकारा पाकर सुख का अनुभव करता है । टूटी हूए हड्डी जुड़ जाती है ।

धातु रोग (छिनता) पित्त :- अर्जुन छाल के चूर्ण तीन से छः माशा पानी के साथ सुबह शाम डुबाकर मधु मिलाकर 5 तोले जल की मात्रा में लें । इस तरह से सेवन करने से लाल सफेद धातु उपदंश खुजली ठीक हो जाती है । धातु रोग से शरीर में कमजोरी चक्कर आना हाथ पैर में जलन कमर दुखना, भूख नहीं लगना आदि लक्षण ठीक हो जाते हैं ।

कफ श्वास (दमा) रोग :- इसमें कऊहा छाल 100 चूर्ण, 100 ग्राम अडुसा (रूसा) पत्ति का रस 100 ग्राम मिश्री मिलाकर दो किलो पानी से मिट्टी के पात्र में पका लें । चौथाई शेष रहने पर उतारकर छान लें । एक से तीन तोले की मात्रा में सेवन करने से काश, श्वास (दमा) रोग, खून का गिरना आदि रोग ठीक होते हैं ।

उक्त सभी सेवन विधि की मात्रा पूरी उम्र वालों की है :- बच्चों के लिए उक्त मात्रा की आधी एवं चौथाई बराबर देखकर देना चाहिए । अर्जुन वृक्ष कऊहा के नाम से प्रचलित है । इसका पंचांग विभिन्न योग से अनेक रोग के लिए आयुर्वेद में औषधि निर्माण होता है । अर्जुन घृत, नागार्जुन अभ्रक रस, अर्जुनारिष्ट आदि औषधि के नाम से हर जगह दवाई की दुकान में मिलती है । ध्यान देकर इसका सेवन करना चाहिए जिससे सम्पूर्ण प्रकार के उक्त रोग से मुक्ति मिलती है ।

हृदय रोग (फार्ट) फेफड़ा की खराबी दर्द जलन और सूजन होने का कारण :- अधिक चिंतन, मानसिक तनाव, आर्थिक बोझ और जागरण, गरिष्ठ भोजन का सेवन, दूषित जलवायु से विभिन्न प्रकार की असावधानी से उक्त रोग होने का कारण है ।

सदाचार, सदविचार, दिनचर्या एवं रात्रिचर्या तथा ऋतुचर्या का आचरण करते हुए प्रज्ञापराध उषाः पान एवं शाकाहारी सुपाच्य भोजन चावल मूंग दाल, पेठा, अनार, दाख, ताजा फल आदि का सेवन करने से उक्त प्रकार का रोग न होगा ।

परहेज - गरिष्ठ, भोजन, दूषित, जलवायु, सड़े गले फल और मांसाहार वर्जित है ।

वैद्य धनुषराम साहू
आयुर्वेद सेवा आश्रम वाले, कुटेली कला,
आई.टी.आई, कालोनी के पास,
छावनी, भिलाई, जिला - दुर्ग (छ.ग.)-490 026
फोन - 0788 - 2381097

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा रसशास्त्र पर आयोजित राष्ट्रीय सेमिनार के अवसर पर पठित आलेख

बैद्यनाथ
पंचसकार चूर्ण
पेट साफ कर पाचन शक्ति को बढ़ाता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अखबार की कतरनों से आरोग्य समाचार

दिल्ली फिर डेंगू के कब्जे में

द हिन्दू में प्रकाशित एक समाचार एवं दिल्ली नगर निगम के द्वारा जारी एक अधिसूचना के अनुसार दिल्ली शहर में डेंगू रोग से पीड़ित रोगियों की संख्या 2,385 पहुंच गयी है । निगम ने दावा किया है कि अबतक इस रोग से केवल 32 लोगों की मृत्यु हुयी है । नगर निगम के विपक्ष के नेता, श्री राम बाबू शर्मा ने बताया कि केन्द्रीय क्षेत्र से 289, शाहदारा (उत्तरी) से 249, शाहदारा (दक्षिण) से 222, सिविल लाइन्स से 190, दक्षिण से 174, नजफगढ़ से 160, रोहिणी से 150, पश्चिमी क्षेत्र से 136, करोलबाग से 116, शहर क्षेत्र से 65, पहाड़गंज से 46 एवं नरेला से 26 व्यक्ति इस रोग से पीड़ित हो चुके हैं ।

पड़ोसी राज्यों में उत्तर प्रदेश से 182, हरियाणा में 87, राजस्थान में 7 एवं अन्य राज्यों से 30 व्यक्ति इस रोग के शिकार हुये हैं ।

फेफड़ों की बीमारी दूर करती है लाल शराब

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार ब्रिटिश मेडिकल पत्रिका में मंगलवार को छपे एक शोधपत्र में इंपीरियल कॉलेज, लंदन के अनुसंधानकर्त्ताओं ने दावा किया है कि सिगरेट पीने से होनेवाली फेफड़े की बीमारी के इलाज में लाल शराब (रेड वाइन) काफी कारगर होती है । अनुसंधानकर्ताओं ने कहा है कि लाल शराब के अंदर एक रेसवराट्राल नाम का एक अवयव पाया जाता है जो क्रोनिक ऑब्सट्रक्टिव प्यूलमोनरी डिजीज (सीओपीडी) नामक रोग ने कारण फेफड़ों में होने वाले सूजन को कम करने में सहायक होता है ।

गौरतलब है कि सिगरेट पीने के कारण होने वाले सीओपीडो रोग में फेफड़ा कमजोर हो जाता है जिसकी वजह से रोगी को सांस लेने में काफी दिक्कत आती है । अनुसंधानकर्ताओं ने पद्रंह सिगरेट पीने वाले एवं पंद्रह सीओपीडी के रोगियों पर किये गये अपने परीक्षण के दौरान पाया कि रेसवराट्राल के चलते सीओपीडी के के दौरान फेफड़ों से रिसने वाले इंटरल्यूकिनस नामक घातक रसायन का रिसाव पूरी तरह बंद हो गया उल्लेखनीय है कि रेसवराट्राल एक एंटीऑक्सीडेंट है लाल अंगूर के छिलकों में पाया जाता है, जिससे शराब बनती है । इस खोज के बाद वैज्ञानिक अब शराब को हृदय रोगों के अलावा कैंसर एवं अन्य दुस रोगों के ईलाज में भी उपयोग करने के बारे में विचा रहे हैं ।

एचआईवी के दोस्त का पता चला

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार अनुसार अमेरिकी शोधकर्ताओं ने एचआईवी के मित्र प्रोट का पता लगा लिया है । यह प्रोटीन ही एचआईवी मानव शरीर की प्रतिरोध क्षमता को बेधने और बढ़ने म करता है । इस खोज से एड्स की नयी दवाएं बनाने मदद मिलेगी । एक विज्ञान पत्रिका में प्रकाशित एक में जान हापकिन्स ब्लूबर्ग स्कूल आफ पब्लिक हेल्थ एसोसिएट प्रोफेसर डाक्टर झिओ फांग ने बताया है हमने एचआईवी के कोशिकीय प्रतिरोध को ध्वस्त मानव कोशिका को संक्रमित करने की श्रृंखला में महत्वपूर्ण कड़ी की खोज की है ।

स्वास्थ्यकर नहीं है एशिया के समुद्री तट

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार अनुसार विश्व स्वास्थ्य संगठन ने चेतावनी देते हुए कहा कि एशिया के कुछ समुद्री तट मल-मूत्र एवं सीवरों गंदे पानी के कारण इतने दूषित हो चुके हैं कि वे स्वा के लिए एक खतरा बन गए हैं । विश्व स्वास्थ्य संग ने एक लिखित वक्तव्य में कहा है कि इन तटीय इलाक का पानी मल एवं सीवर के गंदे पानी से व्यापक पैमाने प्रदूषित हो गया है जिसकी वजह से एशिया की एक जनसंख्या इससे प्रभावित हुई है । अधिकांश प्रभावित में आमाशय में सूजन के लक्षण पाए गए हैं । इन सीवरों में इ०कोली 0157 नामक एक अत्यंत ही खतरनाक रोगाणु पाया गया है जिससे सबसे ज्यादा लोग प्रभावित रिपोर्ट में कहा गया है कि इस बैक्टीरिया से अंतड़ी पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभाव पड़ता है जिसकी वजह से लोगों को खून की कमी, पेट डायरिया एवं बुखार हो जाता है ।

बच्चों का वजन बढ़ा सकती है डाइटिंग

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार अमूमन डाइटिंग के बारे में मान्यता है कि इससे शरीर का वजन कम होता है, लेकिन हाल में हुए शोध में पता चला है कि बच्चों को डाइटिंग कराने से उन पर उल्टा असर पड़ सकता है । डाक्टरों के मुताबिक ऐसा उपापचय में परिवर्तन होने और उनके चटपटे खाद्य पदार्थों की ओर आकर्षित होने से होता है । बोस्टन स्थित महिला अस्पताल से जारी एक रिपोर्ट के अनुसार ज्यादा वजन वाले व्यक्तियों के लिए अपना वजन कम करना बेशक स्वास्थ्य की दृष्टि से जरूरी है, लेकिन इसके लिए अपनाए जाने वाले डाइटिंग का तरीका ने सिर्फ अप्रभावकारी है, बल्कि यह वजन बढ़ाने की प्रक्रिया को प्रोत्साहित भी करता है । यह शोध अमेरिकन एकेडमी ऑफ पेडियाट्रिस के जनरल पेडियाट्रिस के अक्टूबर के अंक में प्रकाशित हुआ है । शोध में पता चला कि डाइटिंग करने वाले लोग ज्यादा सक्रिय थे और वे प्रतिदिन कम कैलोरी ले रहे थे । इसके बावजूद उनका वजन डाइटिंग न करने वालों की तुलना में ज्यादा बढ़ गया ।

बैद्यनाथ

शिलाजित्वादि बटी

इसके सेवन से वीर्य की क्षीणता, इन्द्रिय शीथिलता, स्वप्नदोष, टट्टी और पेशाब के साथ वीर्य जाना, याद्दाश्त की कमी, प्रमेह आदि रोग दूर होते हैं । पेशाब के साथ में चीनी आना भी रूक जाता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हर्बल रेमेडीज (वानस्पतिक औषधियां) CD-ROM 2003

सर्वश्री टी. ब्रेंडलर, जें, ग्रुएनवाल्ड एवं सी. जेनिमें, 1100 से अधिक पौधों का सचित्र विवरण ISBN-3-88763-102-1 (मेडफार्म साइंटिफिक पब्लिशर्स, स्टुटगार्ट, जर्मनी) मूल्य रू० :- 3900.00 (31-12-2003 तक 2500.00) इस CD में 1100 से अधिक औषधीय वनस्पतियों का विस्तृत विवरण है । संकलन कर्ताओं ने पौधों का चयन समूचे संसार को ध्यान में रख कर दिया है । अनेक प्रमुख भारतीय औषधीय पौधों का भी सचित्र विवरण है ।

तदुपरांत में निहित पांच प्रमुख खंडों 1 पौधे, 2 औषध, 3 द्रव्य (रासायनिक पदार्थ) 4 तकनीकी शब्दकोश तथा 5 संदर्भ (सम्बद्ध साहित्य की सूची) में पहुंच सकता है ।

प्रत्येक पौधे के वितरण में निम्न पहलुओं का वर्णन है :

1. **सामान्य परिचय :** इसमें पौधे की ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक भूमिका तथा प्रमुख उपयोग दिये हैं ।
2. **नाम की उत्पत्ति :** पौधे के वंश और जाति नाम की रचना उत्पत्ति का उपलब्ध ब्यौरा है ।
3. **वर्णन:** पौधे के आकार तथा विभिन्न अंगों का वानस्पतिक विवरण ।
4. **वितरण, कृषि ।**
5. उसके विषैले हानिकारक तत्वों पर सूचना ।
6. पर्यायवाची नाम/अस्वीकृत लैटिन नाम, वंश की अन्य संबंधित जातियां ।
7. **स्थानीय नाम:** जर्मन तथा अंग्रेजी नामों के साथ अनेक पौधों के फ्रांसीसी, हिन्दी व संस्कृत नाम ।
8. **रंगीन चित्र:** लगभग सभी के एक या अधिक चित्र, जैसे गुंची के पौधे की एक शाखा, पत्ते, फूलों व फलों के चित्र हैं ।

CD में लगभग 1200 औषध द्रव्यों का है । A से Z की तालिकायें द्रव्यों के नाम से वांछित पर निम्न सूचना सुविधा से मिल जाती हैं :

1. द्रव्य का उपयोग ।
2. औषधियों में द्रव्य की मात्रा ।
3. द्रव्य की क्रिया ।
4. द्रव्य के प्रयोग में कोई निरोध या सीमा ।
5. प्रकृति, प्रभाव, लक्षण ।
6. रासायनिक तत्व, निहित पदार्थ ।
7. पर्यायवाची शब्द / नाम ।
8. स्थानीय नाम ।
9. एशियाई, चीनी, जर्मन, यूरोपीय, होम्योपैथी लोकवनौषधि में मान्य प्रयोग, लक्षण ।
10. गुण-दोष वर्णन तथा द्रव्य के उपयोग की स्थिति

CD में दिये हुए उक्त सभी विवरणों तक विभिन्न वर्णक्रमानुसार तालिकाओं के द्वारा तथा उनसे प्राप्त विवरण में उपलब्ध अनेक विकल्पों के द्वारा सुविधा से पहुंच हो सकता है, तथा एक सूचना से दूसरी में, एवं CD के एक खंड से दूसरे में 'भ्रमण' किया जा सकता है ।

यह CD चिकित्सा संस्थाओं तथा औषधि और वनस्पति से सम्बद्ध शोध और शिक्षा संस्थाओं के कर्ता, प्रवक्ता तथा विद्यार्थियों के लिये बहुत उपयोगी होगी ।

सुधांशु कुमार जैन, पीएच.डी.
(संस्थापक एवं भूतपूर्व निदेशक,
लोकजैवविज्ञान संस्थान)
ए-26, माल एवेन्यू कॉलोनी, लखनऊ- 226001
phone 0522-2235474,
Email :- (skjain 1926@rediffmail.com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके पत्र

आयुर्वेद चिकित्सा से ही सभी रोगों का इलाज संभव

सेवा में,

श्रीयुत् सम्पादक
सचित्र आयुर्वेद
पटना

एलोपैथिक की तरह आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति को बल दिया जाना आवश्यक है । यही पद्धति ऐसी है कि जिससे बीमारी को जड़ से समाप्त किया जा सकता है। इसके लिए रोगियों और चिकित्सकों दोनों को ही आगे आना होगा क्योंकि आयुर्वेद चिकित्सा का भविष्य स्थायी है। अंग्रेजी दवाइयों से तत्काल आराम अवश्य मिलता है लेकिन इनसे शरीर में विपरीत प्रभाव पड़ते हैं । सरकार को आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति को बल देना आवश्यक है। विश्व के अनेक देश के चिकित्सक भी इसमें रूचि ले रहे हैं। स्थायी इलाज के लिए आयुर्वेद उपचार ही आवश्यक है।

अनेकानेक दुर्लभ जड़ी बूटियाँ जो हमारे यहाँ उपलब्ध हैं बजाय आयुर्वेदिक औषधियों में प्रयोग होने के वह अन्तराष्ट्रीय मार्केट में ऊँची कीमतों पर खपा दी जाती हैं। यदि साधन हों तो वे जड़ी-बूटियों पर्याप्त मात्रा में आयुर्वेद जगत् की उपलब्ध कराई जा सकती हैं, सम्बन्धित क्षेत्रों में हर्बल पार्क लगाये जा सकते हैं, आयुर्वेद में काम आने वाली ऐसी अनेक उपयोगी और दुर्लभ जड़ी-बूटियों को हर्बल पार्क में लगाकर पर्याप्त मात्रा में खेती कराई जाय तो अच्छा है, इसलिए इस क्षेत्र में जागरूकता एवं सरकारी सहयोग की आवश्यकता है ।

अत: यह आवश्यक है कि इस बढ़ती अवांछनीय तस्करी को कड़ाई से रोक जाय, इसलिए एलोपैथिक दवाओं से होने वाले साइड इफैक्ट के चलते, अब जागरूक लोगों का ध्यान अपनी पारम्परिक और प्राचीन चिकित्सा आयुर्वेद की ओर तेजी से जाने लगा है ।

(डा० राकेश मोहन शर्मा)
चिकित्साधिकारी, राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय,
वरईशाहपुर, हाथरस (महामायानगर)

सामाजिक बुराई और अल्ट्रासाउन्ड भ्रूण की लिंग जांच अवैधानिक है

सेवा में,

श्रीयुत् सम्पादक
सचित्र आयुर्वेद, पटना

गर्भस्थ शिशु का लिंग परीक्षण प्रसव पूर्व निदा तकनीक अधिनियम 1994 के तहत कानूनन दंडनीय अपरा है । लिंग परीक्षण करने या कराने वाले फुसलाने वा चिकित्सक एवं रेडिओलिजिस्ट सभी को 5 वर्ष तक क कैद या पचास हजार रुपया जुर्माना या दोनों दंड एक सा हो सकते हैं । अपंजीकृत अल्ट्रासाउन्ड क्लीनिक भ कानूनन दंडनीय है । जन्म से पूर्व लिंग परीक्षण के मामल में माननीय सर्वोच्च के फैसले के अनुसार केन्द्र सरकार राज्य सरकार व केन्द्र शासित प्रदेशों को निर्देशित किया कि इस सम्बन्ध में पहले दिये गए निर्देशों का बराब पालन होना चाहिए, भ्रूण लिंग परीक्षण जैसे गैर-कानून कार्य में यदि किसी को लिप्त पाया जाए तो उसव लाइसेन्स को रद्द कर दिया जाय । प्रीवेंशन एण्ड मिसयू एक्ट 2003 को भी सख्ती से लागू किया जाय क्योंवि कन्या भ्रूण हत्या की समस्या अभी भी गम्भीर बनी हुई है निश्चित रूप से कन्या भ्रूण हत्या एक ऐसा कुरीति ए जघन्य अपराध है, जिसे कलंक की संज्ञा दिया जान अनुचित नहीं होगा । यह कुरीति इसलिए जारी है, क्योंकि औसत भारतीय समाज अभी भी महिलाओं को वह आद और सम्मान देने के लिए तैयार नहीं है, जो अपेक्षित नहीं बल्कि अनिवार्य है । भले ही आज बेटा बेटी एक समान का नारा चारों ओर गूंजता हो, लेकिन सच यह है कि ज्यादातर बेटियाँ अभी भी उपेक्षित हैं और प्राय: उनके साथ दोयम दर्जे का व्यवहार किया जाता है । आमतौरपर बेटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नभी भी बोझ ही समझी जाती है । इसका एक कारण हाँ दहेज सरीखी बुराई का फलना-फूलना है, वहीं दूसरी ोर पुरुषों की तुलना में महिलाओं को कमतर समझने की ारतीय समाज की मानसिकता भी है । जब तक भारतीय माज इस मानसिकता से मुक्त नहीं होता, तब तक कन्या ूण हत्या के सिलसिले को समाप्त करना मुश्किल है । वंता एवं आश्चर्य की बात यह है कि कन्या भ्रूण हत्या े विषय केवल निर्धनता, अशिक्षा और पिछड़ेपन से ग्रस्त ागों में ही नहीं देखने को मिलती, बल्कि वह सम्पन्न ौर शहरी क्षेत्रों में भी नजर आती है ।

कन्या भ्रूण हत्या और दहेज सरीखी बुराइयों का स्तित्व में बने रहना हमें यही बताता है कि भारतीय माज सब कुछ जानते समझते हुए भी अपनी कुछ विकृतियां परित्याग करने के लिए तैयार नहीं । इससे अधिक दुख की बात और कोई हो नहीं सकती कि विज्ञान एवं तकनीक का प्रयोग कन्या भ्रूण हत्या सरीखे अमानवीय कृत्य अंजाम देने के लिए किया जा रहा है न कि रोगों के निदान के लिए । इसी परिप्रेक्ष्य में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने उचित एवं संवैधानिक निर्णय दिया है । हम सबका कर्तव्य है कि उसका शत-प्रतिशत पालन करें और जो हमारे द्वारा जो कुरीति को अंजाम दिया जा रहा है उसे रोकें । कन्या भ्रूण हत्या के सिलसिलें को जारी रख का कितना अमानवीय कृत्य कर रहे हैं । वस्तुतः इस विषय में समाज को झकझोरने की आवश्यकता है ।

डा० राकेश मोहन शर्मा
चिकित्साधारी
राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय
वरई शाहपुर, हाथरस (महामाया नगर)

बैद्यनाथ

जन्मघूँटी

जन्म के बाद से ही बच्चों को इसका सेवन कराने से उनके स्वास्थ्य में कोई गड़बड़ी नहीं होती । इससे बुखार, खांसी, सर्दी-जुकाम, अजीर्ण, उल्टी होना, टट्टी होना, पेट फूलना आदि रोग दूर होते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कैन्सर और आयुर्वेद

नवम्बर, 1963

आयुर्वेदीय सिद्धान्तानुसार कैन्सर क्या है और इसकी निदान-चिकित्सा के सम्बन्ध में आज से 20 वर्ष पूर्व करांची के सुविख्यात चिकित्सक स्व० वैद्य सुखरामदास ओझा के प्रयास से 1943, अक्टूबर में एक कैन्सरान्वेषण सम्मेलन का आयोजन पंजाब के सुप्रसिद्ध विद्वान और पीयूषपाणि चिकित्सक स्व० ठाकुरदत्तजी मुल्तानी के सभापतित्व में हुआ था। इस सम्मेलन में प्राय: भारत के समस्त लब्धप्रतिष्ठ वैद्यों ने भाग ले कर जो विचार व्यक्त किये, उनमें से कुछ महत्वपूर्ण विचारों का उल्लेख इस विशेषांक पृष्ठ 348 पर एक परिसंवाद के रूप में प्रकाशित है, वाचक देखेंगे ही।

यद्यपि आयुर्वेदीय प्राचीन या अर्वाचीन ग्रंथों में कैन्सर के नाम से कोई उल्लेख नहीं मिलता, किन्तु आयुर्वेद में ही यह विशेषता है कि जितनी अंग्रेजी संज्ञायुक्त नवीन रोग सामने आते हैं, उनके लक्षणों को देख आयुर्वेद के त्रिदोष सिद्धान्तानुसार उसकी निदान-चिकित्सा सदैव अवश्य कर लेते हैं। यथा - इन्फ्लुएंजा, टाइफाइड, ब्लडप्रेशर इत्यादि रोगों का उल्लेख आयुर्वेदीय संहिताओं में इस नाम से नहीं है; फिर भी आयुर्वेदीय चिकित्सक सफलता के साथ इन रोगों की चिकित्सा कर रहे हैं। हाँ, इतना अवश्य है कि अभिनव रोगों के नामकरण एवं निदान-चिकित्सा में आयुर्वेदीय चिकित्सकों को कुछ समय लगता है। आवश्यकता है अध्ययन-चिन्तन और मनन की।

कैन्सर भी इसी कोटि में आता है। करांची के कैन्सर अन्वेषण सम्मेलन में कोई निर्णयात्मक विचार नहीं हो सका। किसी ने विद्रधि, किसी अर्बुद और किसी ने अपची और गलगण्ड का पर्यायवाच मानकर अपनी सम्मति दी। उसके बाद यह रो वैद्य-समाज के दृष्टि-पथ से ओझल-सा ही हो गया यद्यपि कुछ आयुर्वेदीय चिकित्सक अपने को कैन्स रोग का विशेषज्ञ मानते हैं, कुछ वैद्यों ने इस विषय प पुस्तकें भी प्रकाशित की हैं, परन्तु इसमें उन्हें कितन सफलता मिल रही है, यह ज्ञात नहीं।

प्रस्तुत विशेषांक में प्राच्य-पाश्चात्य दृष्टिको से कैन्सर सम्बंधी विवेचन को ही प्रमुखता दी गयी है अतएव, प्रारम्भ में आयुर्वेदीय दृष्टिकोण से कैन्सर क्य है- इसी विषय पर विद्वान लेखकों की रचना प्रकाशि की गयी है। इसके बाद आधुनिकों के विचार परिशोध, चिकित्सोपकरण आदि का उल्लेख है। य मानना होगा कि कैन्सर के सम्बन्ध में आधुनिकों ने ज अबतक खोज की है और कर रहे हैं, उससे इस रो के विषय में बहुत कुछ जानकारी प्राप्त हो सकती है इसी दृष्टिकोण से जहाँ आयुर्वेदीय सिद्धान्तानुसा कैन्सर-विवेचन का सविस्तार उल्लेख किया गया है वहाँ वाचकों को सरलतया बोधगम्य हो सके उस हे आधुनिकों के विचार एवं चिन्तादि प्रकाशित किये ग हैं। एक बात यह भी है कि कैन्सर का जितन साहित्य का चित्र अंग्रेजी भाषा में है, उतना हिन्द भाषा में उपलब्ध नहीं है। इस विशेषांक का प्रधा उद्देश्य है कैन्सर के विषय में सर्वसाधारण को जानकार देना। इस विषय में यह विशेषांक कहाँ तक सफल हुआ है, इसका निर्णय "सचित्र आयुर्वेद" के वाचव ही करेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां

नयी दिल्ली

तीय अखिल भारतीय विज्ञान सम्मेलन

फाल्गुन, प्रविष्टे 7-9, वि.सं. 2060 तद्नुसार

19-21 फरवरी, 2004

ष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला सभागार, समीप

पूसा गेट, नई दिल्ली

1. विषय एवं सहभागिता के सोपान

1 विज्ञान सम्मेलन प्रस्तुति (SEMINAR):

- इंडोलाजी (यथा आयुर्वेद, गो विज्ञान, वेद विज्ञान, आध्यात्म विज्ञान, खगोल व ज्योतिर्विज्ञान, परम्परागत ज्ञान-विज्ञान इत्यादि) एवं आधुनिक विज्ञान के विभिन्न विषयों यथा जीव-, वनस्पति-, भौतिक-, रसायन-, जीव रसायन-, मृदा-, पालीमर-, चर्म-, पर्यावरण-, कृषि-विज्ञान और उद्योग, औषधीय पौधों की खेती, स्वास्थ्य, आयुर्विज्ञान, जल, सूचना प्रौद्योगिकी, परिवहन, ग्राम विकास प्रविधियां, ऊर्जा के विकल्प, बौद्धिक सम्पदा प्रबंधन, स्वदेशी प्रौद्योगिकी, अभियांत्रिकी एवं सतत् विकास इत्यादि क्षेत्रों में आमन्त्रित व्याख्यान, मौखिक व पोस्टर शोध पत्र प्रस्तुति ।
- प्रस्तुति व स्मारिका में प्रकाशन हेतु 1-पृष्ठीय सारांश की 2 प्रतियों की प्राप्ति की अंतिम तिथि 18.12.2003 है । एम०एस०वर्ड में Devlys या krutidev fonts के साथ टाइप करके कम्प्यूटर फ्लापी में भी सारांश/पूर्ण शोध पत्र प्रार्थनीय हैं । पूर्ण शोध पत्र आलेखों को सी.एस.आई.आर. के प्रतिष्ठित जर्नल भारतीय वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान पत्रिका में छापने का निर्णय हुआ है । तद्नुसार पत्रिका के निर्देशों के अनुरूप पूर्ण शोध पत्रों को जनवरी 22, 2004 तक आयोजकों के पास भेज दें । ई-मेल से abvs2004@mail.nplindia.ernet.in पर भी सामग्री भेज सकते हैं ।
- प्रतिभागी : पूरे देश से लगभग 1000 प्रतिनिधियों के भाग लेने की उम्मीद है । प्रसिद्ध वैज्ञानिक यथा डा. रधुनाथ अ. माशेलकर-एफआरएस, डा० मंगला राय, डा० हर्ष गुप्ता, प्रो० श्रीकृष्ण जोशी, प्रो० रामामूर्ति नटराजन, डा० पल्पू पुष्पागंदन, प्रो० कृष्ण किशोर अग्रवाल, डा०टी०रामासामी आदि का सानिध्य प्राप्त है ।
- पंजीकरण शुक्ल : रु० 550/-, रू० 1400/- (3 प्रतिभागियों का संयुक्त पंजीकरण), रु० 200/- (विद्यार्थी, कारीगर एवं वि.भा. सदस्यगण), रू०100/- (प्रतिभागी के साथ आने वाले विवाहिती), विज्ञान भारती - दिल्ली की जीवन सदस्यता शुल्क ''ऐच्छिक'':- रू०1500/- (नये सदस्यों हेतु पंजीकरण शुक्ल में पूरी छूट है ।) विज्ञान भारती - दिल्ली की जीवन संरक्षक सदस्यता शुल्क ''ऐच्छिक'' :- रु० 15000/-

उपहार सामग्री, प्रकाशित सामग्री, भोजन, स्थानीय वाहन के साथ पुरुस्कार पदक का खर्च भी इसमें शामिल है ।

शोध पत्र प्रस्तुत करने की अथवा न करने की दोनों की स्थितियों में आपका पंजीकरण आवश्यक है, जिसके लिए कृपया सादे कागज पर अपने नाम एवं पते का विवरण देकर पंजीकरण शीघ्र करें जिससे प्रबंधकों को अनेक व्यवस्थाओं को समयबद्ध रूप से निर्वाह करने में आसानी होगी। आवास व्यवस्थापक : डा० हृदय नाथ दत्ता, रा. भौ.प्र. [दूरभाष : 011-25557276 (नि.), 25742610 Extn. 2367 (द)]/ डा० गजेन्द्र गिरि, आई.ए.आर.आई., पूसा, नई दिल्ली ।

1.1.1 स्वदेशी विज्ञान पुरस्कार एवं आर्यभट्ट राष्ट्रीय सम्मान

उत्कृष्ट आविष्कारों व उपलब्धियों हेतु चयनित राष्ट्रीय विभूतियों को महामहिम डा० ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, वैज्ञानिक राष्ट्रपति के द्वारा स्वदेशी विज्ञान पुरस्कार से सम्मानित करने की योजना है । 35 वर्ष से कम आयु के 5 वैज्ञानिकों/शिक्षकों को सर्वोत्तम शोध पत्रों की प्रस्तुति हेतु एवं भारत के प्राचीन शिल्पियों/वैज्ञानिकों की संक्षिप्त जीवन कथा के साथ 9 x 11 इंच आकार के चित्रों की प्रस्तुति की प्रतियोगिता में भाग लेने वाले चयनित प्रतिभागियों को आर्यभट्ट सम्मान से अलंकृत किया जाएगा । विज्ञान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेखकों/पत्रकारों को भी सम्मानित किया जाएगा जिन्होंने पिछले 55 वर्षों में विज्ञान की बातें आम जनता तक पहुंचाने में अग्रणी योगदान किया है । स्वयं का व्यक्ति परिचय देने के लिए अथवा नामांकन करने हेतु आप आमंत्रित हैं ।

1.1.2 स्मारिका /पुस्तक हेतु विज्ञापन आमंत्रण : आवरण 4 (बहुरंगा) : रु० 20000/-, आवरण 2 (बहुरंगा) : रु० 10000/-, आवरण 3 (बहुरंगा) : रु० 7500/-, पूरा पृष्ठ (श्याम श्वेत) : रु० 5000/- अंदर आधा पृष्ठ (श्याम श्वेत) : रु० 3000/-

1.2 उत्पादों, प्रविधियों एवं सेवाओं की प्रदर्शनी हेतु आमंत्रण :

रु० 5000/- प्रति 9 वर्गमीटर स्टाल; रु० 600/- प्रति वर्गमीटर स्टाल (अतिरिक्त स्थान के लिए दर) । स्थान की बुकिंग एवं अपनी जरूरतों की पूर्ति के लिए कुल राशि का 50 प्रतिशत भुगतान दिसम्बर 30, 2003 से पूर्व कर दिया जाए (ग्रासरूट अन्वेषकों, उत्कृष्ट कारीगरों व किसानों को आवेदन करने पर विशेष छूट प्रदान की जाएगी)। व्यवस्थापक :- श्री नरेश कुमार गुप्ता (दूरभाष : 09818270976, 25714362)

1.2.1 प्रायोजक :

राशि रु० 30000/- (इसमें शामिल है :- प्रतिनिधियों के लिए 3 नि:शुल्क पास, स्मारिका/पुस्तक में नि:शुल्क विज्ञापन का प्रकाशन अथवा उत्पादों के प्रदर्शन के लिए 6 वर्गमीटर का स्थान एवं प्रायोजकों के विवरण की सम्मेलन के दौरान बैनर से उच्च कोटि दृश्यता)। सभी भुगतानों को स्वदेशी साइंस मूवमेंट आफ इंडिया, दिल्ली के नाम से डी०डी०/चेक द्वारा दिसम्बर 2003 से पूर्व भेजें । प्रथम परिपत्र का विवरण जाने के लिए कृपया www. swadeshiscience. org देखें ।

इस यज्ञ में शामिल होने के लिए आपकी तरफ से अधिकाधिक नामांकन एवं स्वयं का प्रतिनिधित्व प्रार्थनीय है । कृपया सम्मेलन के विषयों में रूचि रखने वाले व्यक्तियों के पते डा० वेद राम सिंह, वरिष्ठ वैज्ञानिक, रा.भौ.प्र. अथवा डा०संतोष कुमारी, प्लांट फिजियोलोजी, आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली-12 को अवश्य प्रेषित करें ।

निवेदक :

डा० देवेन्द्र प्रकाश भट्ट
संयोजक, अ.भा.वि.स. 2004 एवं
वैज्ञानिक ई-2
राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला
डा०के०एस०कृष्णन् मार्ग
नई दिल्ली - 110012 (भारत)
दूरभाष :- 011-25742610/12 Extn. 2353 (द.)
011-25714362 (नि.)

महाराष्ट्र

पूणे

NATIONAL CONFERENCE ON AYURVED AYURVED-2003

27th & 28th December 2003

Organised By
Bandhuta Dnyanpeeth Pune
&
Tathagat Publication

Mr. Prakash Rokade
(Founder President)
Bandhuta Dnyanpeeth Pune

Dr. Vijay Jadhav
Executive President-Ayurved-2003

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Organising Committee

Mr. Prakash Rokade

(Founder President)

Bandhuta Dnyanpeeth Pune

Chief Patron

Hon'ble Mr. S.S. Tiwari

(President-Bhartiya Dyanvardhini Sabha)

Patron

Hon'ble Mr. Shrirang Barane

Corporator, P.C.M.C.

Hon'ble Prof. Sangamesh Bhairgond

President-

Prof. Dr. B.K. Bhagwat

Executive President-

Dr.Vijay Jadhav

Vice President-

Dr. Mrs. Manasi Deshpande

Dr. Ravindra Dhimdhime

Mr. Shanker Athare

Organising Secretary-

Dr. Mrs. Anjali Jadhav

Joint Secretary-

Dr. Rajkumar Bobade

Dr. Mrs. Meenal Lad

Dr. Mrs. Ujjawala Hakkemane

Co-ordinators-

Dr. Jaymala Shirke

Dr. Suhas Herlekar

Dr. Bhim Gaikwad

Dr. Bharat Kadlaskar

Dr. Mrs. Madhuri Dalvi

Dr. Kishor Chipole

Executive Members

Mrs. Alka Kapre

Mrs. Meena Maske

Mr. B.R. Handrale

Mr. Shrikant Chougule

Mr. Pandurang Somvanshi

Mr. Narayan Salvi

Invitation

Ayurved is one of the great gifts to the sages of ancient India to Mankind. It is one of the oldest that is 5000 years old Medical systems in the world with a long record. Ayurved treats man as a 'Whole'. It is therefore truly Holistic and Integral Medical system.

Tathagat Publication is involved in Publishing Books for Ayurved Syllabus and Curriculum. The Publication has always believed that Books are the imperishable treasure of wisdom of Mankind through ages. They are said to be the ambassadors of cultural genius of any Nation. They act as the indispensable tool for the acclturisation of the society. They are also the means of preserving and disseminating cultural heritage. So the loss of books on a particular branch of knowledge is like the wasting away of the repe-bridge connecting the two shores of an inundated river. Absence of such books especially of scientific and technical ones the wisdom accumulated through ages is lost for ever. Being in this short journey of publication now we have emerged to the platform of this, National conference of Ayurved.

There will be about 600 to 800 delegates from all over India attending this conference. Ayurved U.G. and P.G. Students will be benefitted with the plenary lectures of stalwarts in the field of Ayurved covering importance of various aspects of Ayurved.

This conference offers an opportunity to present papers in relation to theme's suggested.

Dr. (Mrs.) Anjali Jadhav
Organising Secretary

Dr. Vijay Jadhav
Executive President

Suggested Themes

We invite the Scholars for presentation of papers on applied research on the following topics

- Ayurved Science and philosophy
- Facts that make Ayurveda Science.
- Ayurved & Yoga
- Clinical Trials on various subjects.
- Drug Trials on various issues.
- Good manufacturing practice.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

- Drug standardization Herbal and Mineral.
- Old formulations and new formulations in the treatment of new diseases.
- Ancient and Modern methods of preparation of drugs, is the therapeutic effect unchanged.
- Any subject related to Ayurved Science.

For Further Correspondence Information & Details contact.

Dr. Mrs. Anjali Jadhav
Org. Secretary

Dr. Vijay Jadhav
Exe. President

National Conference on Ayurved
"Ayurved-2003"
Sarvoday Residency, A/2, S.No. 28,
Near Jagtap Dairy, Pimple Nilakh,
Pune 411 027
Tel. : 020 - 7270003 (Resi.)
Mobile - 9822636058
email : ayurved_2003@yahoo.com

पंचकर्म चिकित्सा शिविर आयोजित

मथुरा में स्थित धन्वन्तरि धाम-वनौषधि चिकित्सा संस्थान द्वारा 9 अक्टूबर 2003 गुरुवार से 19 अक्टूबर, रविवार तक आयोजित दस दिवसीय बस्ति (पंचकर्म) चिकित्सा शिविर सम्पन्न हुआ। यह बस्ति चिकित्सा शिविर न केवल उत्तर भारत अपितु सम्पूर्ण भारत में, आजादी से अभी तक के आयुर्वेद के इतिहास में अपनी तरह का पहला शिविर था, जो कि पूर्णतया शास्त्रोक्त परिचर्या के पालन के साथ एवं सम्पूर्ण पथ्यापथ्य, पूर्वकर्म एवं संसर्जन क्रम के साथ आयोजित किया गया । उत्तर भारत में गुड़गांव, पलवल, कोसी कलां, वृन्दावन, फिरोजाबाद, जैत, मथुरा आदि स्थानों से कुल 16 रूग्णों को आभ्यंतर विभाग में रखकर पहले अभ्यंग एवं स्वेदन पूर्वकर्मों द्वारा शरीर दोषों को तीन दिन तक मृदु किया गया । इसके पूर्व दिन रोगियों को दोष पाचन एवं अग्नि दीपन औषधियां सेवन कराई गई थीं । तत्पश्चात् दिवसीय बस्ति चिकित्सा जिसमें योगबस्ति, मात्राबस्ति, उत्तरबस्ति का रोगानुसार एवं रोगी अनुसार चयन कर चिकित्सा प्रदान की गई । दिनांक 5 एवं 6 अक्टूबर, 2003 को पूरे उत्तरभारत से आए करीब 70 रूग्णों में से चयनित ये 16 रूग्णों गृध्रसी Sciatica, संधिगतवात Osteo Arthritis, श्वेतप्रदर Leucorrhoea, कम्पवात Parkinsonism, पक्षाघात Paraplegia/ Hemiplegia, सर्वांगवात आदि वातविकारों से पीड़ित थे । वैद्य लीलाधर गुप्ता द्वारा परिकल्पित इस शिविर जयपुर के विद्वत् वैद्य श्री के.जे. दवे (Retd.) सहायक निदेशक, केन्द्रीय आयुर्वेद अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली एवं वैद्या श्रीमती सविताबेन दवे (Retd.), सहायक निदेशक, प्रभारी आयुर्वेद युनिट, सफदरगंज हॉस्पीटल, नई दिल्ली ने रूग्णों का बस्ति हेतु चयन किया । जयपुर से आमंत्रित दवे आयुर्वेदिक क्लिनिक एवं पंचकर्म थेरेपी सेन्टर के संचालक वैद्य प्रणव के. दवे (M.D. आयु.पंचकर्म) एवं वैद्या श्रीमती नीलम पी. दवे (B.A.M.S, D.V.V., C.R.A.V.) ने पंचकर्म विशेषज्ञ के रूप में दस दिवसीय बस्ति चिकित्सा शिविर का संचालन किया । आधुनिक विधा में असाध्य माने जाने वाले उपरोक्त रोगों में पंचकर्म-बस्ति चिकित्सा शिविर के परिणाम बहुत ही उत्साह वर्द्धक रहे । जिसका प्रतिवेदन 19 अक्टूबर 2003, रविवार को धन्वन्तरि जयन्ती समारोह एवं शिविर समारोह में कोटा से पधारे वैद्य नित्यानन्द शर्मा (M.D. आयु.) ने प्रस्तुत किया । इस कार्यक्रम में मथुरा जिले के विधायक श्री प्रदीप माथुर, क्षेत्रीय आयुर्वेद अधिकारी वैद्य राजवीर शर्मा एवं जिला के समस्त वैद्यगण उपस्थित थे । इस प्रकार के सराहनीय कार्यों को पूर्ण प्रचार-प्रसार मिले और रोगियों को असाध्य व्याधियों में लाभ मिले तो इसमें आयुर्वेद की गरिमा बढ़ेगी ।

पंजाब

पुस्तक-विमोचन सम्पन्न

जालन्धर के प्रांगण में संहिता एवं मौलिक सिद्धान्त विभाग द्वारा आयोजित एक समारोह में डा०अनूप कुमार गक्खड़ एवं डा० अनिल गक्खड़ द्वारा लिखित एवं चौखम्भा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अष्टाङ्ग संग्रह प्रश्नमाला पुस्तक का विमोचन करते प्राचार्य डा० राजकुमार शर्मा

पब्लिशर्स, वाराणसी द्वारा प्रकाशित अष्टाङ्ग संग्रह, प्रश्नमाला, पुस्तक का विमोचन प्रिंसीपल डा० राजकुमार शर्मा द्वारा किया गया । उन्होंने डा० अनूप गक्खड़ द्वारा लेखन कार्य के द्वारा आयुर्वेद शिक्षा के क्षेत्र में दिए जा रहे योगदान की प्रशंसा करते हुए कहा कि लेखक द्वय द्वारा संहिताओं का अवलोकन कर उन्हें वस्तुनिष्ठ प्रश्नोत्तर के रूप में प्रस्तुत करना निश्चित रूप से एक सराहनीय प्रयास है । उन्होंने कहा कि गक्खड़ बन्धुओं की पूर्व प्रकाशित चरक संहिता प्रश्नमाला की भाँति अष्टाङ्ग संग्रह प्रश्नमाला पुस्तक भी न केवल बी.ए.एम.एस. के विद्यार्थियों के लिए लाभकर होगी अपितु एम.डी. आयुर्वेद व अन्य इस प्रकार की परीक्षाओं हेतु भी इस की उपयोगिता साकार होगी ।

इस अवसर पर कालेज के अध्यापक वर्ग में से डा०एन०एस०त्रिपाठी, डा० बलदेव सिंह बिलखू, डा०सुमन पवार, डा०गोपेश शर्मा, डा०मधुरिमा भार्गव, डा०अवधेश मिश्रा, डा०संजय गुप्ता, डा०संजीव सूद व डा० जी०पी० गर्ग उपस्थित थे ।

गुजरात आयुर्वेद चिकित्सा द्वारा नि:शुल्क उपचार

गुजरात स्थित द्वारका तीर्थ क्षेत्र में गायत्री शक्तिपीठ शान्तिवन में गत वर्षों से आयुर्वेद चिकित्सा द्वारा प्रत्येक रविवार को रुग्णों की समूहवार चिकित्सा चालू की गई है । आज तक सतत हजार रोगियों ने इस नि:शुल्क चिकित्सा का लाभ लिया है। रविवार प्रात: रोगियों की भीड़ जमती है । पूरे दिन में औसतन 250 रोगी लाभान्वित होते हैं । यह संख्या सतत् बढ़ रही है ।

गुजरात आयुर्वेद विश्वविद्यालय, जामनगर के श्री डी.पी. मेहता प्रत्येक रविवार को द्वारका आते हैं और सेवा प्रदान करते हैं । रोगियों को उपयोगी मार्गदर्शन भी देते हैं।

आयुर्वेदिक निदान-चिकित्सा केम्प

लायन्स क्लब इन्टरनेशनल डी. 323 बी. लायन्स लायन्स क्लब ऑफ अहमदाबाद, जोधपुर हिल द्वारा ता० 2 से 10 के बीच अरविन्द भाई पटेल, शगुन फ्लैट, बी.-2, आर.सी. पटेल, सुरजबा स्कूल के पास, जाराणा में इस निदान चिकित्सा कैम्प का आयोजन किया गया ।

एक ऐतिहासिक धन्वन्तरि आश्रम जहाँ दिवोदास धन्वन्तरि का समाधि स्थल है

गुजरात राज्य के जूनागढ़ जिला के मालिया हाटीना के पास भंडूरी गाँव के नजदीक नानीधणेज नामक गाँव है जिसका नाम आयुर्वेद जगत् में प्रसिद्धि पा रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद संकुल आणंद में आयोजित भगवान धन्वन्तरि महोत्सव में उपस्थित बायें से दायें पंडित श्री महेशचन्द्र शास्त्रीजी, डॉ०जयदत्त व्यास, राजवैद्य श्री महेन्द्र झा, कच्छ-भूज के जिला न्यायाधीश श्री वी.एम.चौधरी साहेब, डॉ०अर्जुन भाई पटेल तथा अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के संगठनमंत्री वैद्यराज हरिनाथ झा जो आयुर्वेद मेडिकल एसोसिएशन आणंद जिला के अध्यक्ष तथा आयुर्वेद संकुल आणंद के संस्थापक भी हैं। साथ में उपप्रमुख डॉ० योगेश गज्जर तथा महिला वैद्या फाल्गुनी झा दृष्टिगोचर हो रहे हैं। बीच में भगवान धन्वन्तरि की षोडशोपचार पूजा की गई है

कहा गया है कि सुश्रुतादि आचार्यों के गुरू दिवोदास धन्वन्तरि ने यहाँ रहकर आयुर्वेद का प्रचार-प्रसार किया था और अपने जीवन का उत्तरार्ध यहीं पर व्यतीत किया। अतः यहाँ उनका मरणोत्तर समाधि स्थल है। आज भी यह स्थल धन्वन्तरि का धणेज गाँव के नाम से जाना जाता है। यहीं पर श्रावण महीना की अमावस्या को प्रत्येक वर्ष मेला का आयोजन किया जाता है जिसे ''धन्वन्तरि मेला'' के नाम से जाना जाता है। इस दिन लोग वनस्पतियों के द्वारा भगवान धन्वन्तरि की पूजा करते हैं और स्वास्थ्य लाभ के लिए मंगल कामना करते हैं।

आयुर्वेदिक क्लिनीक, पंचकर्म रिवायटल सेन्टर का उद्घाटन

अहमदाबाद के डॉ० भावेश जोशी और डा० निमिया जोशी के तत्वावधान में ''अर्चनम'' नामक आयुर्वेद क्लिनिक का उद्घाटन 4 अक्टूबर को किया गया जिसमें गुजरात प्रदेश आयुर्वेद सम्मेलन के प्रधानमंत्री वैद्य देवेन्द्र शाह तथा गणमान्य आयुर्वेदिक चिकित्सक तथा शहर के नामांकित डॉक्टर, उद्योगपति, वकील विगेरे उपस्थित रहें।

गुजरात आयुर्वेद मेडीकल एसोसिएशन का सेमिनार सम्पन्न

उपरोक्त संस्था के अमहदाबाद ब्रांच द्वारा ता० 14-10-2003 की लाईफ केयर ईमरजन्सी सेन्टर, स्टेडियम रोड, अहमदाबाद में एक सेमिनार का आयोजन किया गया जिसमें ''जीवन संरक्षक तथा आत्ययिक चिकित्सा'' के ऊपर विभिन्न वक्ताओं ने विचार प्रकट किये। 200 से अधिक आयुर्वेद चिकित्सकों ने भाग लिया। अध्यक्ष पद पर स्थानिक धारासभा श्रीमती मायाबेन कोडनामी तथा अतिथि विशेष जामनगर के प्राध्यापक तथा भाजपा के महामंत्री डॉ०हितेशभाई जानी, गुजरात प्रदेश आयुर्वेद महासम्मेलन के प्रधानमंत्री वैद्य डी.के.साह उपस्थित रहे। संस्था के चेयरमेन डॉ० हसमुख सोनी, प्रेसीडेन्ट डॉ०एस०पी० त्रिपाठी तथा एसो० के कार्यकर्ताओं ने उत्साह से कार्यक्रम को सफल बनाने में योगदान किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

INTERNATIONAL SEMINAR AND WORKSHOP ON "AYURVEDIC PARA SURGICAL METHODS"

KSHARA SUTRA, AGNI KARMA & RAKTA MOKSHANA A GLOBAL PERSPECTIVE

It is with a sense of great pleasure that we invite to you to attend and participate in the 1st International Seminar and workshop on RESEARCH IN PARA SURGICAL METHODS to be held during the 3rd week of Jan., 2004 in India.

This seminar is, in effect, a follow up programme of a seminar on research in Kahara Sutra Therapy held in Osaka, Japan from 2nd to 5th May, 2003 by the Ayurveda society in Japan.

Registration Fee

Following shall be the schedule for registration :

CATEGORY	UPTO DEC.25th, 2003	AFTER DEC.25th 2003
A. Indian Delegates	Rs. 2000/-	Rs. 2500/-
Accopanying persons	Rs. 1500/-	Rs. 2000/-
B. Students (P.G. & Ph.D.)	Rs. 500/-	Rs. 750/-

Shalya discipline only.

The registration fee is to be submitted only through a bank Draft in favour of organizing Secretary, International seminar and workshop on Ayurvedic Para Surgical Methods. The late date for submission of the abstract of the research paper is 20th of October 2003. The abstract is to be sent to the administrative secretary. For further information, all correspondence is to be addressed to :

Prof : Dr. Kulwant Singh
Director, Seminar and Workshop on Ayurvedic para surgical methods
"Kartal Niwas"
Momai-nagar, Street No-1
Jamnagar
Gujarat State- 361002 (India)
Telephone - +91 - 288 - 2752103
Mobile - 98250 19771
Email : profkulwantsingh@yahoo.co.in

गुजरात

गुजरात प्रदेश के आरोग्य विभाग में आयुर्वेद डायरेक्टर के पद पर वैद्य श्री जनकभाई एम० उपाध्ये की सरकार द्वारा नियुक्ति की गई । यह पद गुजरात सरकार के आयुर्वेद विभाग में बहुत समय से मिला है ।

अहमदाबाद के सरकारी अखंडानंद आयुर्वेद महाविद्यालय के प्रोफेसर वैद्य मेधावेन ज्ञानी की निर्देशक आयुर्वेद के शासकीय विभाग फुड एण्ड ड्रग्स कन्ट्रोल लायसन्सनींग ओर्थोरिटी एवं वन औषधि नियामक के रूप में की गई है ।

आयुर्वेद परिवार की ओर से हार्दिक बधाई ।

गुजरात प्रदेश आयुर्वेद सम्मेलन द्वारा आयोजित पंचकर्म सेमिनार दि० 21.9.03 को संपन्न हुआ ।

गुजरात प्रदेश आयुर्वेद सम्मेलन, नेशनल एकेडेमी ऑफ पंचकर्म एण्ड रिसर्च एवं शांतीगिरि आयुर्वेद एवं सिद्ध वैद्यशाला (अहमदाबाद शाखा) द्वारा आयोजित पंचकर्म सेमिनार का आयोजन अहमदाबाद के सुप्रसिद्ध रमणीय गोयल वाटर बोर्ड रिर्सोट के एअर कण्डीशन्ड सभागृह में भारी संख्या में वैद्यों की उपस्थिति में सुचारू रूप से संपन्न हुआ ।

इस सुनियोजित पंचकर्म सेमिनार में गुजरात के सुप्रसिद्ध एडवोकेट एवं आयुर्वेद प्रेमी, चित्रकूट स्थित आयुर्वेद प्रतिष्ठान के ट्रस्टी श्री रसिकभाई खमार ने दीप प्रज्वलन करके उद्घाटन किया । संपूर्ण सेमिनार का अध्यक्ष स्थान (NAPAR) के अध्यक्ष गुरूवर्य, आदरणीय एच.एस. कस्तुरेजी ने संभाला और बहुत ही सुचारू रूप से कार्यक्रम को चलाया । पंचकर्म सेमिनार के विशेष अतिथिगण श्री अमित मकर (अध्यक्ष, युवा भाजपा मोर्चा, गुजरात राज्य) एवं वैद्यश्री तसमुखभाई (अध्यक्ष, गुज०आयु०रजि०बोर्ड, गुजरात सरकार) । वैद्य मेधावेन ज्ञानी (वनऔषधि विभाग, गुजरात सरकार)। श्री मुकुंद भाई जोशी एवं भूतपूर्व नियामक वैद्य बी.डी. नन्दुरबारकर, वैद्यश्री एच.एस. कस्तुरेजी, वैद्य श्री देवेन्द्र शाह, वैद्यश्री विक्रम उपाध्याय,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव में उपस्थित वैद्यगणों को सम्बोधित करते हुए गुजरात राज्य के कृषिमंत्री श्री पुरुषोत्तमभाई रूपाला ।

...लीनाथ झा, वैद्यश्री नरहरिभाई दवे, वैद्य श्री दिनकर ...लकर, वैद्यश्री नयन जोशी, वैद्या इलाषेन देशपांडे, वैद्यश्री ...ल.स्वामी उपस्थित थे । इस पंचकर्म सेमिनार में वैद्य ...आचार्य एस.एस. कस्तूरेजी की अध्यक्षता में महाराष्ट्र ..., मध्य प्रदेश, राजस्थान एवं केरल से पधारे हुये ...ओं ने अपना मार्मिक प्रवचन, ओडियो विज्युअल, ...इड, सीडी द्वारा प्रदर्शित किया ।

पंचकर्म सेमिनार की समाप्ति में वैद्यश्री देवेन्द्र ...शाह (प्रधान मंत्री, गुज०प्रदेश आयु०सम्मेलन, एडिक्युटिव ...टरी, नापार) द्वारा समग्र सेमिनार के संचालन के लिये ...श्री आचार्य एच.एस. कस्तुरे रूग्ण उद्घोषक वैद्य श्री ...रीश व्यास का विशेष रूप से आभार प्रदर्शन किया ।

कार्यक्रम की समाप्ति बाद सभी सदस्यों ने गोयल ...र पार्क का आनन्द लिया ।

राष्ट्रीय कार्यकारिणी बैठक एवं नि:शुल्क चिकित्सा शिविर

नेशनल एकेडमी आफ पंचकर्म एण्ड रिसर्च की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक एवं नि:शुल्क चिकित्सा शिविर 8 एवं 9 नवम्बर 2003 को भोपाल (उ.प्र.) में आयोजित की गई है ।

उत्तर प्रदेश जड़ी-बूटियों की व्यावसायिक खेती का तीन दिवसीय प्रशिक्षण औद्योगिक क्षेत्र सतहरिया में 1 जनवरी 2004 से

यह प्रशिक्षण -

1. भारत सरकार
   लघु उद्योग मंत्रालय
   (शाखा) लघु उद्योग सेवा संस्थान, वाराणसी
2. मालवीय सूचना केन्द्र कम्प्यूटर विभाग
   प्रौद्योगिकी संस्थान
   काशी हिन्दू विश्वविद्यालय (बी०एच०यू०, वाराणसी)
3. भारत सरकार से पंजीकृत
   भारतीय आयुर्वेद विकास एवं विश्व विज्ञान शोध संस्था
   (आयुर्वेद विश्व परिषद् से संबंद्ध, मुँगरा बादशाहपुरा, जौनपुरा)

के संयुक्त तत्ववाधान में गरीबी व बेरोजगारी से जूझ रहे किसानों व नवयुवकों को स्वावलम्बी बनाने के उद्देश्य से आयोजित किया जा रहा है ।

प्रशिक्षण विषय-

जड़ी-बूटियों, फल-फूल, शाक-भाजी, मसालों तथा सुगंधित पौधों की प्रत्यक्ष पहचान, उनका उपयोग,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यावसायिक लाभ, बीज तथा पौधेकी प्राप्ति, फसल की तैयारी, खाद का प्रयोग, जैविक खाद की जानकारी व तैयारी विधि, पौधों की रोगों तथा कीट-पतंगों से रक्षा व उपचार, भण्डारण व बिक्री सम्बन्धी जानकारी विस्तृत रूप से विशेषज्ञों द्वारा दी जायेगी । साथ ही स्वयं सहायता समूह का गठन तथा भारत सरकार से प्राप्त ऋण अनुदान व सहायता आदि के विषय में भी जानकारी दी जायेगी ।

प्रशिक्षण की भाषा -

सरल सुबोध हिन्दी में प्रशिक्षण दिया जायेगा ।

प्रवेश के नियम -

1. हिन्दी भाषा में लिखने-पढ़ने का ज्ञान होना चाहिए ।
2. प्रशिक्षण शुल्क के रूप में प्रतिभागियों को 1500 रुपये देय होगा जिसे 30 दिसम्बर तक बैंक ड्राफ्ट, मनीआर्डर या प्रत्यक्ष भुगतान कर पंजीकृत कराना होगा । यह भुगतान निम्न लिखित आयोजक के नाम पते पर देय होगा । ज्ञातव्य है कि यह पत्रिका प्रशिक्षण के विषय पर पूर्ण एवं नवीनतम जानकारी निरन्तर देती रहेगी जो प्रशिक्षण का एक अंग है और घर बैठे मिलता रहेगा ।
3. पासपोर्ट साइज की 3 ररंगीन फोटो, शिक्षा का विवरण, अपना नाम, पिता का नाम व पता, फोन नं०(यदि हो तो) अनुभव आदि विवरण हिन्दी में सादे कागज पर लिखकर भेजें ।

भारत व्यापी अभियान में सहयोग की अपील, भारत वर्ष के सभी तीर्थ स्थलों पर आयुर्वेद धाम की स्थापना - 5 आयुर्वेद शंकराचार्यों को तिलक की कामना - डॉ०गंगाधर द्विवेदी

जौनपुर । भारतीय आयुर्वेद विकास एवं विश्व विज्ञान शोध संस्था तथा आयुर्वेद विश्व परिषद के राष्ट्रीय नेता आयुर्वेद धन्वन्तरि मासिक पत्रिका के प्रधान सम्पादक वैद्यराज गंगाधर द्विवेदी, जौनपुर ने 30 मई 2003 को चित्रकूट धाम (सतना उ०प्र०) में सम्पन्न संस्था के [illegible] महाधिवेशन में सर्व सम्मति से लिये गये निर्णय के अनुसार संस्था को भारत वर्ष के 26 प्रान्तों में विस्तार, [illegible] अध्यक्षों, जिला अध्यक्षों का चयन और मनोनयन के [illegible] सभी धार्मिक / पौराणिक तीर्थ स्थलों पर सुविधा एवं [illegible] के अनुसार आयुर्वेद भारतीय चिकित्सा पद्धति को [illegible] कुमारी से हिमालय तथा असम से काश्मीर तक [illegible] स्थानों पर आयुर्वेद धाम की स्थापना एक आयुर्वेद [illegible] रूप में करने का संकल्प लिया है । इसकी सफलता [illegible] लिए भारत देश के विद्वान आयुर्वेद प्रेमियों, धार्मिक [illegible] के संचालक संत महात्मापओं, आयुर्वेद विकास में [illegible] देश की स्वयं सेवी संस्थाओं, पत्र-पत्रिकाओं के सम्पा[illegible] व प्रकाशकों से पुरजोर अपील किया है कि इस पवित्र [illegible] अनोखे निर्णय के लिए अपना सहयोग, सुझाव मार्ग [illegible] के साथ अपनी प्रबल संस्तुति हमें लिखित प्रदान [illegible] जिससे प्रेरणा और मार्ग दर्शन प्राप्त करके हम [illegible] आश्रम व स्थान का चयन कर सकें । इसी के साथ [illegible] वर्ष से 5 आयुर्वेद शंकराचार्यों के चयन में भी [illegible] निर्णय व सुझाव हमें ऐसे संत-महात्मा का नाम व [illegible] भेजें, जिन्हें इस पवित्र तिलक के साथ पद भार से [illegible] जा सके, ऐसे नाम को चयन किया जाना है जिन्हें भारत [illegible] चिकित्सा आयुर्वेद के प्रति गहरी आस्था विकास हो [illegible] आयुर्वेद का दीप सम्पूर्ण भारत में जलाने में पूर्ण सक्षम हो [illegible] जिसका स्वयं का देश प्रसिद्ध ट्रस्ट (आश्रम) हो, जो [illegible] पवित्र तिलक और पद को सहर्ष स्वीकार करें ऐसे ही [illegible] सेवक संत-महात्मा-विद्वान-वैद्य का नाम चयन में [illegible] सहयोग करें ।

भारत वर्ष के वैद्य-हकीम-होम्योपैथ, एलैक्ट्रो[illegible] नेचुरोपैथ वैकल्पिक चिकित्सा के अनुभवी, जड़ी-बूटी [illegible] से चिकित्सा के अनुभवी, जड़ी-बूटियों की प्रत्यक्ष, पहचा[illegible] उत्पादन में लगे हुये अनुभवी जनों से अपील है कि [illegible] इस पुनीत देश व्यापी संस्था का प्रदेश अध्यक्ष/जिलाध्य[illegible] पद भार को ग्रहण करने हेतु अपना पूरा बायोडाटा/विवरण [illegible] अनुभव/योग्यता/पत्रचार हेतु पुरा पता/ दूरभाष नम्बर [illegible] सहित अपनी तीन पासपोर्ट साइज की रंगीन फोटो, [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रु० संस्था सदस्यता 100 रु० संस्था पत्रिका का वार्षिक शुल्क मनिआर्डर-रजिस्ट्री द्वारा - राष्ट्रीय अध्यक्ष - भारतीय आयुर्वेद विकास एवं विश्व विज्ञान शोध संस्था, केन्द्रीय कार्यालय - धन्वन्तरि वाटिका (पत्रकारपुरम), मुँगरा बादशाहपुर, जिला -जौनपुर, फोन - (05454)-274607 के पते पर 30 दिसम्बर 2003 में तक अवश्य भेज दें जिससे उनकी अवैतनिक नियुक्ति की घोषणा नये वर्ष जनवरी 2004 के मासिक पत्र में किया जा सकेगा, इसके पूर्व जो भी नियुक्तियाँ की गयी हैं, सभी को निरस्त कर दिया गया हैं, ऐसे पदाधिकारी संस्था में कर्मठता के साथ रहना चाहें तो उन्हें पुनः अपना आवेदन करना आवश्यक हैं।

आयुर्वेद विकास के साथ दूसरी संस्था "भारतीय अंशकालिक पत्रकार महासमिति इण्डिया" जो देशव्यापी अंशकालिक पत्रकारों के कल्याण उनका विकास, सुरक्षा, सहयोग, सम्मान, अधिकार दिलाने के लिये 1993 ई० में गठित हैं, इस संस्था का सम्पूर्ण भारत वर्ष के सभी प्रदेशों में मजबूत संगठन खड़ा करने हेतु सभी प्रान्तों की इकाइयां भंग करके वर्ष 2004 के लिये नया चुनाव किया जाना है, इसके लिए भारतवर्ष के सभी प्रदेशों एवं जनपदों के उत्साही कर्मठ समाजसेवी, ख्यापिप्राप्त अंशकालिक रूप में पत्रकारिता करने वाले विभिन्न भाषी पत्रकारों, पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशक, सम्पादकों से अनुरोध अपील है कि संघेशक्तिःकलियुगे को ध्यान में रख अंशकालिक पत्रकारों का देश व्यापी मजबूत एक संगठन के लिये अपना अनुभव, पूरा पता, दूरभाष संख्या, पत्र-पत्रिका से अपना सम्बन्ध दर्शाते हुए प्रदेश अध्यक्ष अथवा ज़िला अध्यक्ष पद हेतु आवेदन को रजिस्ट्री से तथा 300 रु० संस्था सदस्यता एवं संस्था की पत्रिका हेतु मनिआर्डर राष्ट्रीय अध्यक्ष-भारतीय अंशकालिक पत्रकार महासमिति इण्डिया, केन्द्रीय कार्यालय-धन्वन्तरि वाटिका (पत्रकारपुरम), मुँगरा बादशाहपुरा, जिला - जौनपुर, फोन - (05454) - 274607 के पते पर 30 दिसम्बर 2003 तक भेजें।

हिमाचल प्रदेश बबासीर के आयुर्वेदिक आप्रेशन क्षार सूत्र एवं आधुनिक आवश्यकता पर गोष्ठी

नगरोटा बगवां जिला कांगड़ा में चड्ढा ट्रेडर्ज (रजि.) के तत्वावधान में दांतों की दवा के स्थान पर बबासीर के आयुर्वेद अनुसार आप्रेशनों की आवश्यकता पर विचार गोष्ठी हुई। इसमें 31 से अधिक आयुर्वेद चिकित्सकों ने भाग लिया। इसका आरम्भ भगवान धन्वन्तरि पूजन से हुआ। इसकी अध्यक्षता डा० आनन्द गोल्ड मैडलिस्ट जालन्धर अध्यक्ष आयुर्वेद मंडल जलन्धर ने की। डा० आनन्द ने कहा कि आज के आहार बिहार अधिक वाहन चलाने से व शराब-मांस तेल व मिर्च मसाले के प्रयोग से कब्ज एवं बवासीर के रोग बढ़ रहे हैं। इस अवसर पर लेडी डा० ललिता ने कहा कि समान्यता 60 प्रतिशत महिलाओं को बबासीर का रोग अधिक होता है और गर्भ काल में 80 प्रतिशत महिलाएं कब्ज और बबासीर के रोग से रोगी महिलायें पाई गईं। इस अवसर पर डा० शर्मा देहली ने कहा कि यदि औषध सेवन से आराम नहीं होता तो क्षार सूत्र द्वारा आपरेशन करना चाहिए। इस अवसरपर डा०शर्मा देहली के प्रसिद्ध चिकित्सक ने भी अपने विचार रखे। इस अवसर पर डा० धर्मवीर इन्चार्ज आयुर्वेद हॉसिप्टल बिल्लीमारान ने गुदा रोगों का आयुर्वेद उपचार पर अपना शोध पत्र पढ़ा। अनुसंधान करने के लिए विश्व स्वास्थ्य विज्ञान के अवसर पर डा० गोपाल चड्ढा ने बबासीर रोग उसके होने के कारण एवं उपचार के बारे में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष जानकारी प्रदान की । डा० गोपाल चड्ढा ने कहा कि आयुर्वेदिक बबासीर आप्रेशनों के निम्न पांच लाभ हैं (क) क्षार सूत्र (बबासीर का आप्रेशन विधि) एक साथ बवासीर के मस्से को काटता भी है उसके घाव को भरता भी है (ख) इससे रोगी 4 से 6 घण्टे के बाद अपने घर जा सकता है । इससे हॉसपिटल में रहने व अन्य सुविधायें कम होती हैं (ग) यह आर्थिक दृष्टि से भी लाभदायक है। यह आप्रेशन कुछ सौ रुपयों में हो जाता है जबकि आधुनिक बबासीर के आप्रेशन पर 15 से 25 हजार रुपयों का खर्च आता है । (घ) आधुनिक बबासीर का आप्रेशन के बाद लगभग 22 प्रतिशत रोगियों को फिर बबासीर के मस्से हो जाते हैं । जबकि क्षार सूत्र आयुर्वेद तरीके से आप्रेशन से 100 रोगियों में केवल एक रोगी को ही मुश्किल से बबासीर होती है । (ड़) इस प्रकार के अप्रेशन सब स्थानों में पिछड़े से पिछड़े गांव में भी आयुर्वेद क्षार सूत्र विशेषज्ञ आप्रेशन कर सकते हैं । क्षार सूत्र बवासीर का उचित समाधान हैं । डा० गोपाल चड्ढा 351 से अधिक बबासीर पर आयुर्वेद कैम्प लगा चुके हैं और 141 क्षार सूत्र आप्रेशनों में भाग ले चुके हैं ।

प्रसूता के लिए बलवर्द्धक श्रेष्ठ टॉनिक

बैद्यनाथ

दशमूलारिष्ट

तेज बल एवं कान्ति बढ़ाने में प्रसिद्ध । संग्रहणी, मंदाग्नि, अरुचि, उदर रोग, खांसी, दमा, कमजोरी आदि रोगों की शास्त्रोक्त दवा है । इससे बल और कान्ति बढ़ती है तथा शरीर पुष्ट होता है । प्रसव के बाद इसके सेवन द्वारा माताएं अपने और शिशु के स्वास्थ्य की रक्षा करती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

तम्बाकू मुक्त विश्व

इन दिनों विश्व के अधिकांश हिस्सों में तम्बाकू के खिलाफ युद्ध छिड़ा हुआ है । हम भी इस युद्ध में विश्व के साथ हैं, किन्तु कुछ प्रश्न विद्वतजन् के समक्ष विचारणीय हैं । तम्बाकू शब्द का प्रयोग कर देने से हानि हो जाती है । यह सत्य नहीं है । इसी तरह तम्बाकू उत्पादन पर प्रतिबन्ध लगा देने से समस्या का समाधान हो जायगा । यह भी उचित नहीं है । आयुर्वेद के मतानुसार तम्बाकू के पत्ते तीखे, स्वाद में कड़वे, गरम, मृदु विरेचक, पौष्टिक, पेट के आफरे को दूर करने वाले और कृमिनाशक होते हैं । यूनानी मत से यह दातों की सड़न को दूर करता है । खांसी, नाक से मवाद बहना, फोड़े- फुन्सी, क्षय, रतौंधी आदि में यह लाभदायक है । वायना में इसके पत्तों को गरम करके तेल में भिगोंकर ताजा घाव पर लगाते हैं । पुस्तकों के अनुसार यूरोप और दक्षिण अफ्रीका में तम्बाकू के सूखे पत्ते रक्तस्राव को रोकने के लिए प्रयोग किये जाते हैं । हमारे देश में बिच्छू काटने पर इसका प्रयोग किया जाता है । कुचले के विष को दूर करने, पाण्डु रोग में मसूढ़े के रोग, दन्तरोग, सफेद दाग, जोड़ों का दर्द, नासूर आदि रोगों में इसका प्रयोग किया जाता है । कर्नल चोपड़ा के अनुसार यह कृमिनाशक है । यह सन्धिवात के सूजन, चर्मरोग और बिच्छू के विष में फायदा करता है । डा० नादकर्णी के अनुसार यह टेटनस में लाभ करता है । आशय यह नहीं है कि तम्बाकू में समस्त गुण ही हैं । इसके अवगुण भी हैं । सम्भवत: विश्व में ऐसा कोई पदार्थ नहीं है जिसमें गुण के साथ अवगुण नहीं है । यहां तक कि दूध को अमृत कहा गया है । इसके बावजूद इन दिनों शोध के पश्चात् यह ज्ञात हुआ है कि दूध के सेवन से अनेक व्याधियों का जन्म हो जाता है । इसका अर्थ यह नहीं हुआ कि दूध बन्द कर देना चाहिए ।

विगत दिनों इण्डियन फर्मास्यूटिकल एसोसियेशन की बिहार शाखा की ओर से एक गोष्ठी हुयी थी । वक्ताओं ने इसके दुष्परिणामों की चर्चा की और तम्बाकू के उत्पादन पर प्रतिबन्ध लगाने की मांग की । हम इससे सहमत हो सकते हैं, बशर्ते निम्न सूचनाएं जनता के समक्ष उपस्थित की जायं :-

1. यह आम धारणा है कि तम्बाकू के सेवन से कैन्सर सहित अन्य व्याधियों का जन्म होता है, किन्तु यह धारणा सर्वेक्षण पर आधारित नहीं है । सरकार या कोई स्वयंसेवी संस्था को सर्वेक्षण करना चाहिए कि जो लोग तम्बाकू (खैनी) का सेवन करते हैं, उनमें से कैन्सर रोगियों का प्रतिशत कितना है । बिहार एवं उ०प्र० के कुछ क्षेत्रों में, विशेषकर गांवों में खैनी का प्रयोग व्यापक स्तर पर होता है, किन्तु, कैन्सर के रोगी कम पाये जाते हैं । सामुदायिक सर्वेक्षण के पश्चात् वास्तविकता सामने आ सकती है । इसमें सर्वेक्षणकर्त्ताओं को कैन्सर अस्पताल एवं इसके चिकित्सकों का भी सहयोग लेना चाहिए ।

2. उत्तर भारत में अधिकांश व्यक्ति पान के साथ जर्दा का प्रयोग करते हैं, जर्दा के निर्माण में भी तम्बाकू का प्रयोग किया जाता है । इस पर भी सर्वेक्षण के पश्चात् तथ्यों का सही ज्ञान प्राप्त होता है । इस तरह शिखर, गुटके एवं तम्बाकू से बने और पदार्थों पर भी सर्वेक्षण कराया जा सकता है ।

कुछ लोग यह तर्क दे सकते हैं कि जब विश्व के कुछ भागों में सिगरेट पर सर्वेक्षण एवं अनुसंधान हुए हैं, तब सर्वेक्षण की क्या आवश्यकता है ? इससे समय एवं धन का अपव्यय होगा । किन्तु, यह तर्क हमारी दृष्टि में दो कारणों से सही नहीं है । कारण निम्न हैं :-

1. इस बात की प्रबल सम्भावना है कि सिगरेट बनाने की प्रक्रिया में तम्बाकू शोधन के लिए जिस रसायन का प्रयोग किया जाता है, वही रसायन कैन्सर उत्पन्न करने के लिए जिम्मेवार हों ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

2. विश्व स्वास्थ्य संगठन के एक प्रतिवेदन के अनुसार हृदय रोग उत्पन्न होने के लिए जो तत्व जिम्मेवार हैं, उसमें आहार-विहार सम्पूर्ण रूप से जिम्मेवार नहीं है। प्रतिवेदन के अनुसार फ्रांस में लाल शराब, मांस, चावल आदि चीजों का प्रयोग व्यापक पैमाने पर होता है, किन्तु रोगियों की संख्या अत्यन्त कम है। यही स्थिति जापान की भी है, किन्तु अमेरिका एवं इंगलैण्ड में स्थिति इसके विपरीत है। इन तथ्यों से यह निष्कर्ष निकालना उचित नहीं है कि आहार ही एक मात्र कारण हृदय रोग के लिए है। आयुर्वेद के मतानुसार आहार और विहार दोनों ही किसी भी व्याधि को उत्पन्न करने के लिए जिम्मेवार होते हैं। इसके साथ ही देश और काल भी इसके लिए जिम्मेवार हैं। हमारी दृष्टि में यह मत सही है, क्योंकि जब हमने एक गोष्ठी में एलोपैथ के चिकित्सकों से यही प्रश्न किया कि फ्रांस और जापान के निवासियों को वही आहार लाभ पहुंचाता है, किन्तु इंगलैण्ड एवं अमेरिका के निवासियों को नहीं; कारण क्या है ? चिकित्सकों ने इसका उत्तर जीन कहा। देश और काल भी तो प्रभावित कर सकते हैं।

हृदय रोगियों का उदाहरण देने के पीछे हमारा आशय केवल इतना है कि देश और काल तथा आहार और विहार भी किसी व्याधि के उत्पन्न होने के कारण हो सकते हैं। इन सब चीजों का शोध भारतीय परिप्रेक्ष्य में होना चाहिए न कि पश्चिमी देशों के परिप्रेक्ष्य में। आज अधिकांश शोध पश्चिमी देशों में हो रहे हैं और हम उनकी नकल करते हैं और किसी बात को प्रमाणित करने का प्रयास करते हैं।

जहां तक धूम्रपान का प्रश्न है, यह शब्द भी आपत्तिजनक नहीं है। चरक संहिता के पंचम अध्याय में धूम्रपान का विशद् वर्णन है। यह एक पृथक् प्रश्न है कि आधुनिक सिगरेट में जिन द्रव्यों का उल्लेख किया गया है, उन द्रव्यों का जिक्र आयुर्वेदिक ग्रन्थों में नही है। इसलिए धूम्रपान शब्द गलत है - यह सही नहीं है। किसी शोध को स्थापित करने के लिए भारतीय परिप्रेक्ष्य में व्यापक सर्वेक्षण के पश्चात् होना चाहिए।

मधुमेह का व्यापक असर

हमारे देश में मधुमेहियों की संख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है। इस रोग के उत्पन्न होने के अनेक कारणों में एक कारण मोटापा है। आंकड़ों के अनुसार दुनिया में एक अरब दस करोड़ लोगों का वजन जरूरत से ज्यादा है। इनमें से 52 करोड़ लोग मोटापे से पीड़ित है। इन मोटों में से 60% लोग मधुमेह से पीड़ित हैं। हमारे देश में मोटों की संख्या में वृद्धि का कारण जीवन-शैली है। आधुनिक सुख-सुविधाओं में वृद्धि और शारीरिक परिश्रम में कमी के कारण यह रोग उत्पन्न हो रहा है। पहले महिलाएं घर में ही चावल, दाल और आटा बनाती थीं, किन्तु आज ये कार्य मशीन कर रही है। दूध से भी मक्खन निकालने का कार्य गृहिणी करती थी, किन्तु आज इसका स्थान मशीन ने ले लिया है। यही स्थिति पुरुष वर्ग की है। पहले मीलों लोग पैदल चले जाते थे, किन्तु आज लोग वाहन खोजते हैं। स्वाभाविक है कि जीवन-शैली में इस परिवर्तन का असर मोटापे पर भी पड़ा और मधुमेहियों की संख्या बढ़ रही है। इससे बचाव का एकमात्र तरीका है - जीवन-शैली में सुधार लाना। आज यह सम्भव नहीं है कि गृहिणी खाद्य पदार्थ का उत्पादन स्वयं करे। पुरुषों से भी यह सम्भव नहीं रह गया है कि वह मीलों पैदल चले। तब मुकाबला कैसे किया जाय ? इसका मुकाबला प्रतिदिन व्यायाम करना एवं वसाहीन पदार्थों का सेवन करने से हो सकता है। फास्टफूड का अति सेवन एक प्रमुख कारण है। हमारे युवा वर्गों को इसका व्याज्य करना चाहिए। विदित है कि मधुमेह से रेटिनोपैथी, हृदय रोग एवं अन्य रोग उत्पन्न होते हैं। सरकार को भी इस रोग से बचाव करने का व्यापक प्रबन्ध करना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंचकर्म चिकित्सा में काल तथा व्यय (खर्च) कितना हो सकता है ?

वैद्य हरीदास श्रीधर कस्तुरे

मैं अमेरिका में वहां के एम.डी. डॉक्टरों को पंचकर्म की ट्रेनिंग देने का कार्य कर रहा था उस समय की यह बात है-डाक्टरों ने मुझसे सहसा यह प्रश्न किया कि-पंचकर्म चिकित्सा करने में समय कितना लगेगा ? और क्या यह कम किया जा सकता है ? आधुनिक जीवनमान इतना गतिशील हुआ है कि अति दीर्घकाल तक चिकित्सा करना किसी को मंजूर नहीं है । यह बात अलग है कि व्यवस्थित उचित प्रणाली की चिकित्सा न होने पर उन्हें किसी अति चिरकारी व्याधि का भोग बनकर कई महीने या साल बिस्तर पर गुजारना मंजूर कर लेना पड़ता है ।

यहां जब भी मैं पंचकर्म पर व्याख्यान देता हूं तो सहसा प्रश्न पूछा जाता है कि पंचकर्म चिकित्सा में कितना धन व्यय होता है ?

ये दोनों प्रश्न महत्व के हैं । अमेरिकी लोगों के लिए दूसरे प्रश्न का बहुत महत्व नहीं था क्योंकि उनके पास धन का प्रश्न नहीं था । हमारे यहां पहले की अपेक्षा दूसरा प्रश्न अधिक महत्व का है और इन दोनों का उत्तर मात्र व्यावहारिक नहीं बल्कि शास्त्रीय आधार से प्रत्यक्ष सुकर और चिकित्सा में हितकर होना चाहिये । मतलब यह है कि समय व्यावहारिक प्रयोग के लिये कम करने से शास्त्रीय निर्देश का उल्लंघन होना नहीं चाहिये और आतुर को लाभ भी होना चाहिए और अपेक्षित बहुमूल्यवान औषधि प्रयोग तैल घृतादि के मूल्य को डरकर व्यय कम करने पर शास्त्रीयता भंग न होते हुए आतुर को लाभ भी होना चाहिये । यह कैसे हो सकता है इसका संक्षेप में विचार करेंगे ।

पंचकर्म शोधन प्रधान चिकित्सा है । शोधन के लिये प्रयोग करना हो तब स्नेहन-स्वेदन-पाचन इन पूर्वकर्म के साथ वमन, विरेचन, बस्ति, नस्य और रक्तमोक्षण ये कर्म और पेयादि क्रम का संसर्जन क्रम करना यह पंचकर्म है । इसमें सामान्यत: संपूर्ण पंचकर्म में शास्त्रानुसार प्रयोग करना हो तो 4 मास से 2 मास तक का समय लग सकता है । शोधन तीन प्रकार से किया जाता है । प्रथम प्रवर या प्रभूतमात्रा 2 मध्यम 3 अवर या अल्प प्रकार का होता है । तत्तद् प्रकार के शोधनार्थ स्नेहन भी प्रवर-मध्य और अवर 3 प्रकार से होता है और संसर्जन क्रम भी 3 प्रकार से कम अधिक दिन तक किया जाता है ।

प्रवर शोधन के लिये स्नेहपान 7 दिन किया जाता है । 8 वें दिन अभ्यंग और वाष्पस्वेद और 9 वें दिन वमन । वमन के बाद 7 दिन संसर्जन क्रम 9+7=16 दिन । फिर 17 वें दिन प्राकृत भोजन के बाद पुन: स्नेहपान कम वमन के 15 वें दिन विरेचन । अत: 9+15=24 वें दिन विरेक । विरेचन के बाद पुन: संसर्जन क्रम 7 दिन 24+7=31 दिन । 9 वें दिन से 33 वें दिन बस्ति प्रारंभ । कर्म-काल-योग ऐसे 3 बस्ति कोर्स हैं । अत: विरेचन के 9 वें दिन अनुवासन + 29 बस्तियां यानी 24+9+29=62 वें दिन बस्ति कोर्स पूर्ण । बस्ति काल में उपयुक्त दिन के दुगुना काल विश्राम । यानी 70 दिन विश्राम । अत: 62+60= 122 दिन । फिर नस्य 7 दिन = 129 दिन । तदनंतर यदि रक्तमोक्षण करना हो तो 130 वें दिन रक्तमोक्षण करें । इस तरह 130 दिन में पंचकर्म पूरा होगा ।

मध्य शोधन में - स्नेहपान 5 दिन, वमन 7वें दिन, विरेचन 7+15=22वें दिन । 22+9 वें दिन अर्थात् 31वें दिन बस्ति । कालबस्ति में 16 संख्या है - अत: 31+15=46 वें दिन बस्ति पूर्ण । 32 दिन विश्राम-परिहारकाल = 32+46= 78 दिन + 5 दिन नस्य + 1 दिन रक्तमोक्षण = 84 दिन । या 84 दिन लगेंगे ।

अवर शोधन में - 3 दिन स्नेहपान + 5 वें दिन वमन । 5 + 14 वें दिन विरेचन । 20 दिन । 20 + 9वें 29 वें दिन अनुवासन + 7 दिन बस्ति = 36 दिन । परिहार काल 16 दिन । 36 + 16 = 52 दिन नस्य 3 दिन - = 55, 56 वें दिन विश्राम और 57 वें दिन रक्तमोक्षण ।

इस तरह 130 दिन से 47 दिन के अंदर पंचकर्म कोर्स किया जा सकता है ।

डी/11, महावीर कुटीर सोसायटी, बम्बई गैरेज के सामने, शाही बाग, अहमदाबाद - 380 004

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब सवाल यह है कि इससे भी कम दिन में पंचकर्म कैसे करें ? एतदर्थ निम्नांकित पद्धति विचारार्थ है।

(1) क्या सभी क्रियाएं सभी आतुरों में करना आवश्यक है ? इसका उत्तर यह है कि यह जरूरी नहीं है कि सभी आतुरों में शोधन की सभी विधियां बरती जायें। आतुर का शरीर बल, रोग बल, रोगावस्था, कास, दूष्यादि का विचार कर केवल एक या दो या तीन कोई भी कर्म किये जा सकते हैं। उदाहरण के लिए तमकश्वास का आतुर हो तो उसे 'तमके तु विरेचनम्' किया जा सकता है। त्वग्रोग - रक्तप्रदोषज व्याधि हो तो स्नेहपान और विरेचन या स्नेहपान और रक्तमोक्षण किया जा सकता है। वातव्याधि के विशिष्ट रोगों में स्नेहन-स्वेदन और बस्ति कर्म किया जा सकता है। उन्माद-अपस्मार-शिरोरोग में स्नेहन-विरेचन-बस्ति धारा और नस्य किया जा सकता है। इस तरह उचित कर्म को प्राधान्य देकर बहुत काल कम किया जा सकता है।

(2) स्नेहपान क्रम के सद्धः स्नेह कराकर एक ही दिन में पूर्ण कर सकते हैं। मात्र शास्त्रानुसार सम्यक् स्नेहन का परीक्षण कर लेना चाहिये।

(3) बस्ति कोर्स में 8-16-30 के योग बस्ति, काल बस्ति और कर्म बस्ति कोर्स के बाद वातहर, पित्तहर और कफहर बस्ति का चयन कर कुछ संख्या घटाई जा सकती है।

(4) परिहार काल घटाया जा सकता है।

(5) संसर्जन क्रम को युक्ति पूर्वक घटाया जा सकता है। इस तरह यदि प्रयोग सौकर्य के लिये 15 से 20 दिन में कर्म पूर्ण करना हो तो कर सकते हैं। तथापि रसायनादि हेतु पंचकर्म करना हो तो उसके शास्त्रीय स्वरूप में प्रयोग करना अधिक लाभप्रद होगा।

अब दूसरा प्रश्न है व्यय के बारे में। इसका विचार करेंगे।

पंचकर्म विषय में व्यय के विचार से दो बातें सामने आती हैं। एक तो किसी वैद्य को पंचकर्म चिकित्सा केन्द्र खोलना हो तो कितना धन इकट्ठा करना होगा ? दूसरी बात यह है कि रोगी को पंचकर्म करना हो तो कितना खर्च होगा ?

इन दोनों विषय में बहुत-सी भ्रांतिया हैं। नये-नये स्नातक यह समझते हैं कि पंचकर्म का दवाखाना, निकालना हो तो बहुत-सी साधन सामग्री चाहिये जो खूब मंहगी होती हैं। अनेक प्रकार के टेबुल चाहिये जो रखने के लिए जगह भी बहुत बड़ी चाहिये और तैल, घृतादि स्नेह औषधियों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में होता है वे भी बहुत कीमती हैं। इस विषय में थोड़ी जानकारी कर लेना उपयुक्त होगा।

पंचकर्म के पूर्वकर्म के स्नेहन स्वेदन प्रक्रिया में जो यंत्रादि टेबुल आवश्यक होते हैं वे निःसंशय कुछ महंगे जरूर हैं लेकिन आधुनिक टेक्नॉलॉजी का लाभ उठाकर एकही यंत्र में सभी प्रक्रियाएं हो सके ऐसे साधन निर्माण कर सकते हैं। उदाहरण हेतु अभ्यंग, वाष्पस्वेद, शिरोधारा, पिषिंचिल (स्नेहधारा स्नेह), नाड़ी स्कंद और बस्ति के सभी कर्म एक ही टेबुल पर किये जा सकें ऐसा टेबुल Multipurpose बनाया जा सकता है। वह 6 से 10 हजार रु० के व्यय में उत्तम बन जाता है। फिर एक ही कमरे में उसे रखकर बहुत बड़े विशाल भवन का आयोजन का खर्च बचा सकते हैं। शिरोबस्ति नस्य और बस्ति यंत्र तथा रक्तमोक्षण के लिये उपयोगी साधनों का खर्च बहुत ही नगण्य है। पूर्वकर्म में प्रयुक्त स्नेह - घृत तैलादि का खर्च आतुर देने पर राजी हो जाता है। अतः बहुत अड़चन नहीं होती।

दूसरी बात- रोगी को बहुत अधिक खर्च आएगा - इस बारे में हमारे अनुभव से शास्त्र-कर्म साध्य व्याधि -उदाहरण - Duodenal Ulcer, Ulcerative Colitis, Sinus (पीनस) अस्थिमज्जागतवात और उसके समान अन्य रोगों में जो व्यय शस्त्रकर्म में होगा उसका 20 प्रतिशत भी पंचकर्म चिकित्सा में नहीं होता। दूसरी पद्धति - यदि चिकित्सक योग्य समझें तो स्नेहपानादि क्रम में अवर मात्रा या सद्यः स्नेहनधारा भी खर्च तक किया जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसी तरह निरूह बस्तियां बृंहण विधि से देने पर खर्च काफी कम हो जाता है । उदाहरण - क्षीरबस्ति का प्रयोग जो परिणाम शूल (अल्सर), अथवा अस्थिमज्जागत वात में किया जाता हैं । साधारणत: 14 बस्तियां देनी होती हैं । यदि इस बस्ति को बृंहण विधि याने ड्रिप मेथड से दी जाय तो घृत-तैलादि का प्रमाण भी कम लेना पड़ता है और 7/8 बस्तियों में लाभ मिलता है । इस तरह औषध सामग्री और समय । इसमें कम करने पर खर्च कम होते हुए भी लाभ उतना ही होता है । पिषिंचिल इ० प्रक्रिया में तेल का बहुत मात्रा में लगभग 8-9 लीटर में प्रयोग किए जाने के कारण काफी खर्च आता है । लेकिन उसे महत्वपूर्ण प्रक्रिया (Major operation) मानकर विशिष्ट संयोग में उपयोग करना चाहिये । इस तरह देश, काल, दोषादि का भाव समझकर व्यय को कम ज्यादा किया जा सकता है ।

योजकस्तत्र दुर्लभ: ।।

प्रसूता के लिए बलवर्द्धक श्रेष्ठ टॉनिक

बैद्यनाथ

LIBRARY ... Vishwavidyalaya HARDWAR

दशमूलारिष्ट

तेज बल एवं कान्ति बढ़ाने में प्रसिद्ध । संग्रहणी, मंदाग्नि, अरुचि, उदर रोग, खांसी, दमा, कमजोरी आदि रोगों की शास्त्रोक्त दवा है । इससे बल और कान्ति बढ़ती है तथा शरीर पुष्ट होता है । प्रसव के बाद इसके सेवन द्वारा माताएं अपने और शिशु के स्वास्थ्य की रक्षा करती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

म्याँमार (बर्मा) में उपलब्ध लोक प्रचलित उपयोगी वनौषधियाँ

डा० मायाराम उनियाल, वनौषधि विद्यापति (श्रीलंका), रत्न सदस्य

मेरे लिए यह सुखद एवं अविस्मरणीय यात्रा थी कि वर्ष 1998 में म्यानमार (बर्मा) के महामहिम भारतीय उच्चायुक्त, श्री श्याम शरण दास जी द्वारा केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसंधान परिषद्, केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मन्त्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली के माध्यम से म्यानमार (बर्मा) में मिलने वाली जड़ी-बूटियों के सर्वेक्षण हेतु विशेषज्ञ के रूप में मुझे आमंत्रित किया । मुझे भारत सरकार की ओर से दिनांक 20/10/1998 को लगभग 40 दिन के लिए म्यानमार भेजा गया और 20 नवम्बर 1998 तक साईन्स एण्ड टैक्नालॉजी डिपार्टमेन्ट, म्यानमार के अधिकारियों एवं वैज्ञानिकों के साथ म्यानमार की वनसम्पदा की खोज करता रहा । इस कार्य काल में म्यानमार के शासकों और अधिकारियों से मुझे लगातार सहयोग मिलता रहा । इस दौरान वहाँ बुद्धिजीवियों, लामाओं, अनुसंधानकर्त्ताओं एवं आयुर्वेद महाविद्यालय, माँडले के लोगों से मिलने का बराबर अवसर मिलता रहा । उस भाषा से अनजान देश की परम्पराओं, रीति रिवाजों और खान-पान, रहन-सहन का भी अध्ययन करता रहा । इस कार्यकाल में मुझे म्यानमार (बर्मा) के कतिपय महत्वपूर्ण वनक्षेत्रों में वनौषधि सर्वेक्षण का अवसर प्राप्त हुआ जिसका विवरण प्रस्तुत शीर्षक लेख में देने का प्रयास किया जा रहा है ।

भौगोलिक परिचय :- यद्यपि बर्मा पहले भारतवर्ष का अंग था और आर्यावर्त, भारत, हिन्दुस्तान के नाम से विख्यात होते हुये भी 1935 में ब्रिटिश सरकार ने अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिये कूटनीति से इसको अलग कर दिया । इसके बावजूद यहाँ पर भी यहाँ की धार्मिक, सांस्कृतिक परम्पराओं का सम्बन्ध आज भी गहरे रूप से भारत से बना हुआ है । भारत और म्यानमार के सांस्कृतिक, आध्यात्मिक सम्बन्धों का इतिहास दो हजार साल से भी अधिक पुराना है । इसकी बुनियाद ई०पू० 267 में ही पड़ गई थी जब बर्मा में बुद्धवाद की जड़ें जमने लगी थीं और पाली को राजकीय लिपि का दर्जा मिल गया था । इसके बाद अंग्रेजी राज के दौरान 1886 से 1934 तक दोनों देशों को एक ही प्रशासनिक ईकाई माना जाता रहा । दोनों देशों की आजादी भी लगभग एक साथ मिली । आजादी के बाद शुरूआती दौर में दोनों देश करीब थे । 1951 में भारत और बर्मा ने दोस्ताना समझौतों पर हस्ताक्षर किये । रंगून में सैन्य शासन के शुरूआती शासन के बाद सन् 1988 में लोकतत्र की बहाली के समर्थन में हुये संघर्ष के कारण भारत और बर्मा के आपसी रिश्तों में जीत हासिल की पर सतारूढ सैन्य परिषद् ने उन्हें कुर्सी सौंपने से इन्कार कर दिया । लेकिन म्यानमार और भारत के धार्मिक, सांस्कृतिक रिश्तों एवं पड़ोसी होने के कारण आपसी रिश्तों को सुधारने की दिशा में विशेष प्रयास चल रहे हैं । म्याँमार में भारत की दिलचस्पी के कई कारण हैं । अव्वल तो यह है कि दोनों देशों की भौगोलिक परिस्थिति एक जैसी है और कई किलोमीटर लम्बी सीमा आपस में जुड़ती है जो सुरक्षा के कारणों से इसे अहम् बनाती है । इसके अलावा आर्थिक क्षेत्र में भी दोनों देश एक दूसरे के पूरक साबित होते हैं । मेरी म्याँमार की वनौषधि सर्वेक्षण यात्रा का उद्देश्य भी ज्ञान विज्ञान का आदान-प्रदान करना तथा आपसी सद्भाव और मैत्री को बढ़ाना है ।

म्याँमार संघ जो पहले बर्मा के नाम से जाना जाता था भारत और बंगला देश के पूर्व में और चीन गणराज्य देश के मध्य में स्थित है । यह 10^0 से 28^0 उत्तरी अक्षाशों और 92^0 से 101^0 पूर्वी देशान्तरों के बीच फैला हुआ है । इसका कुल क्षेत्रफल 6 लाख 77 हजार वर्ग किलोमीटर है । घोड़े की नाल सदृश्य तीन पर्वतों से घिरा हुआ यह प्रदेश है । इसके पश्चिम और उत्तर में नवीन बलित पर्वत है जो पूर्वी हिमालय का ही दक्षिणी विस्तार है । उत्तर से दक्षिण की और क्रमशः पटकाई, नागा, चीन और अराकान के नाम से जाने जाते हैं । इन पर्वत श्रेणियों की ऊँचाई दक्षिण की ओर घटती जाती है । पूर्वी भाग उच्च और कम ऊँचाई वाली पहाड़ियों का क्षेत्र है । सबसे ऊँचे अधिक विस्तृत शान पठार की ऊँचाई 3,000 मीटर

रत्न सदस्य, राष्ट्रीय आयुर्वेद विद्यापीठ (भारत सरकार)
महर्षि आयुर्वेद, नोयडा एक्सपोर्ट प्रोसिसिंग जोन, नोयडा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से लेकर 3,800 मीटर की है ।

जलवायु :- उत्तर के उच्च पर्वतीय क्षेत्रों को छोड़कर म्यांमार की जलवायु उष्णकटिबन्धीय मानसूनी प्रकार की है । तटीय क्षेत्र उष्ण एवं आद्र है । मध्यवर्ती मैदानों में ग्रीष्म और शीत ऋतु के तापमानों में काफी अन्तर रहता है । माँडले का जनवरी का तापमान 21^0 सैल्सियस रहता है जबकि अप्रैल में 32^0 सैल्सियस होता है । पठारी क्षेत्र का तापमान मध्यम रहता है । इसलिये यहाँ की जलवायु ठंडी होती है । इस प्रदेश में मुख्यत: मई से अक्टूबर के मध्य दक्षिणी पश्चिमी मानसून में वर्षा होती है । तटीय क्षेत्रों में विशेषकर तानिन थाराई, जिस के पीछे तीव्र ढाल वाली उच्च पर्वत श्रेणियाँ हैं और अमारवादी डिविजन में वर्षा अधिक होती है । मध्यवर्ती भूमियों में वर्षा का औसत लगभग 100 से.मी. होता है । कुछ भागों में वर्षा का अन्तर आने से वनस्पतियों के स्वरूप एवं उपलब्धता में अन्तर पाया जाता है । तटीय क्षेत्रों में सघन उष्णकटिबन्धीय वन, मानसूनी वन, मध्यवर्ती भागों में विरल वन तथा अन्य भागों पर झाड़ियाँ पाई जाती हैं ।

प्राकृतिक संसाधन :- यह देश प्राकृतिक पेड़-पौधों, जीव-जन्तुओं, जड़ी-बूटियों एवं खनिजों की अपार सम्पदा से भरपूर है । देश के कुल क्षेत्रफल के आधे से भी अधिक भू-भाग पर वन है । डेल्टाई क्षेत्रों में सघन सागौन के वृक्ष मिलते हैं । उष्ण एवं आर्द्र तटीय प्रदेशों में रबड़ के वृक्ष उगाये जाते हैं । यहाँ पर पाये जाने वाले वृक्षों में सागौन, शिरीष, करंञ्ज एवं Sterculia, Pterocarpus, Dipterocarpus, Tamarix, Dalbergia, Cardia, Gmelina, आदि कतिपय प्रजातियाँ पाई जाती हैं । इस प्रदेश के वनों को सदाहरित वन, नमी वाले वन, ट्रोपिकल वन, हिलफोरेस्ट, पतझड़वन, खुलेवन, शुष्कवन मिले-जुले झाड़ियों वाले वनक्षेत्र, बाँस वाले वन क्षेत्र आदि भू-भागों में विभक्त किया जा सकता है । सागौन व्यापारिक दृष्टि से सबसे अधिक महत्वपूर्ण वृक्ष है । औषधीय पादपों में मंजीठ, कलिहारी, वृहती, गोक्षुर, शालपर्णी, विदारीकन्द, विडंग, नागकेशर, कुटकी, कपिकच्छु, भृंगराज, बला आदि कतिपय वनौषधियाँ महत्वपूर्ण हैं । सागौन की लकड़ी का निर्यात 17% म्यांमार से किया जाता है ।

म्यांमार वनौषधियों के अतिरिक्त खनिज संसाधनों में भी धनी है । पूर्वी पठार में धात्विक खनिज जैसे चांदी, सीसा तथा जस्ता मिलते हैं । कीमती रत्न जैसे नीलम, माणिक्य और पन्ना शान स्टेट के पठार में मिलते है । वर्तमान् की खाड़ी में मोती मिलते हैं । खनिज तैल अयारवादी के मध्यवर्ती भागों में पाया जाता है । इस देश की अर्थव्यवस्था का मुख्य स्रोत कृषि है जिसके अन्तर्गत पशुपालन, मत्स्यपालन आदि शामिल है । कृषि के अन्तर्गत अधिकतर भूमि में चावल, दालें, तिल, गन्ना, मक्का, मूंगफली, कपास, पटसन एवं तम्बाकू आदि की खेती की जाती है । इसके अतिरिक्त फल, चाय आदि तटीय क्षेत्रों एवं शान के पठारों में पैदा किया जाता है । मूलभूत यातायात साधनों में मोटरमार्ग एवं रेलमार्ग का परिवहन की सुविधा कम है । देश के उत्तरी भागों को दक्षिणी भागों से मिलाने के लिये नदियाँ महत्वपूर्ण कड़ी हैं । इस प्रदेश की सबसे बड़ी नदी इरावदी है । म्यांमार से चावल, दालें, खनिज और इमारती लकड़ी सागौन का निर्यात किया जाता है तथा यह देश मशीनरी, दवाओं, मोटरगाड़ियों का सामान और वस्त्रों का आयात करता है । इस प्रदेश के लोग बौद्ध धर्मावलम्बी है । माँडले, पैगू, पांगन, लाशियों, मितकिना आदि स्थान प्रमुख शहर है । यांगन म्यांमार की राजधानी है । यह डेल्टाई क्षेत्र में स्थित है । माँडले की प्राचीन राजधानी होने के कारण माँडले एक ऐतिहासिक नगरी है । यहाँ पर आयुर्वेदिक कालेज है जो कि ट्रेडिशनल सिस्टम ऑफ मेडिसिन के नाम से जाना जाता है । यहाँ पर चार वर्ष का आयुर्वेदिक पाठ्यक्रम पठाया जाता है । इस संस्थान में काफी बड़े क्षेत्र में वनौषधि उद्यान एवं हर्बेरियम एवं म्यूजियम है । संस्थान की अपनी औषध निर्माणशाला (फार्मेसी) आदि सभी अनुभाग है । यहाँ 100 से भी अधिक किस्मों के औषध घटकों का निर्माण किया जाता है । यहाँ 100 शय्याओं वाला आयुर्वेदिक हॉस्पिटल भी है । म्याँमार में परम्परागत चिकित्सा का प्रचलन है । यहाँ के लोग इसे बर्मिन आयुर्वेद कहते हैं । आयुर्वेद की संहिताओं के आधार पर ही बर्मिन आयुर्वेद बना है । लोक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परम्परागत प्रचलित जड़ी-बूटियों के सर्वेक्षण एवं अनुसंधान करने की विशेष आवश्यकता है । लेखक को वनौषधि सर्वेक्षण कार्यकाल में लोकप्रचलित परम्परागत औषध द्रव्यों की जितनी जानकारी मिल सकी उनका विवरण इस तालिका में देने का प्रयास किया गया है ।

Some Useful Indigenous Medicinal Plants Found in Mayanmar

Sl.No.	Botanical Name	Ayurvedic Name	Burmese Name
1.	Abroma augusta	Ulatkambal	Naga - bie.
2.	Abutilon indiucm	Atibala	Bauk - Khway - galay.
3.	Aconitum heterophyllum	Aties	Di-wok.
4.	Aconitum napellus	Bikh	Aseik - Pin - Myo
5.	Aloe vera	Kumari	Sha - zaung - Let - pat.
6.	Alpinia galanga	Kulanjan	Pade - gaw - gyi.
7.	Andrographis paniculata	Kalmegh	Panicu - Say - ga- gyi.
8.	Albizzia labbek	Sirisha	Kokko, Main-kokko
9.	Albizzia odoratisima.	Kinhi	Thit - mogyi.
10.	Alangium begonifolium	Ankola Bhed	Hmaik.
11.	Acacia catechu	Khadir, Khair	Tun-Sa-Se, Cath.
12.	Acacia leucophloea	Khadhi Bhed	Tanaung.
13.	Acacia farnesiana	Irimed	Naniungaing.
14.	Alstonia scholaris	Saptaparna	Kyese - Kalwa, Lettok.
15.	Adhatoda vasica	Atacushaka	Nauk - Salum, Naya-gyi
16.	Artocarpus lokoocha	Lakucha	Myauklaung.
17.	Andropogan nardus.	Ka - Trina	Singumyet
18.	Aegle marmelos	Bilva	Okshift.
19.	Azadirachta indica	Neem	Tamakha, Tama.
20.	Abrus precatorius	Gunja	Ywenge, Yway - glay.
21.	Baliospermum montanum	Danti	Nat - Cho.
22.	Betula utilis	Bhojapatara	Buza-pit-pin, Beetoot.
23.	Biophytum sensitivum	Lajjalu Bhed	Hit - gayoon.
24.	Blepharis edulis	Utangan	Thiti - wa- Ra.
25.	Boerhavia diffusa	Punarnava	Payan - nawa.
26.	Boswella serrata	Shallyaki	Loban, Arabi
27.	Bauhinia variegata	Kanchnar	Bwegyin
28.	Bauhinia purpurea	Kanchnar	Palan.
29.	Bambusa arundinacea	Vansha	Kyakat-wa.
30.	Bridelia retusa	Kangkola	Hlekanan.
31.	Barleria prionitis	Sirayaka	Leittha- ywe.
32.	Bombax malabaricukm	Shalmali, Semal	Letpan.
33.	Cannabis sativa	Bhanga	Say-gyauk, Bhang
34.	Carthamus tintorius	Kusumba	Su-ban (Wild-salfram)
35.	Cassia tora	Chakarmarda	Day - gywe.
36.	Butea frondosa	Palash	Pegu.
37.	Ceriops roxburghiana		Kamyaing, Baingalang.
38.	Clerodendrum serratum	Bharangi	Bebya
39.	Clerodendrum siphonanthus	Chingri	Ngayanpadu.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Sl.No.	Botanical Name	Ayurvedic Name	Burmese Name
40.	Clorodendrum infortunatum	Bhant	Kha - aung - gtha.
41.	Cassia occidentalis	Kasamarda	Dangywe.
42.	Cassia fistula	Amaltas	Thinbaw-mezali.
43.	Cissampelos pareira	Patha	Kywet - nabaung.
44.	Cleome viscoasa	Hurhur	Hingala
45.	Cocculus hirsutus	Patalgarudi	?
46.	Coptis teeta	Humiri, Mishmi	Shwe - gyo - myit
47.	Clitoria ternatea	Aparajita	-
48.	Cuminum Cyminum	Jeera	Ziya, Ziyarbyus
49.	Curculigo orchiodes	Kali Mushli	Blaclamushli, Mutha.
50.	Curcuma amada	Amahaldi	Thayat - kin.
51.	Curcuma longa	Haridra	Sa - nwin (Tunne - ie)
52.	Cuscuta reflexa	Akashbel	Shwe - new.
53.	Cyperus rotundus	Mustak Motha	Myet - mon - huyin.
54.	Cassia auriculata	Chakramarda	Peikthingat
55.	Callicarpa arborea	Priyangu	Daung - satpya.
56.	Callicarpa macrophylla	Priyangu	Sigye
57.	Caesalpinia sappon	Patang	Teinnyet
58.	Caesalpinia bonducella	Kanta Karanja	Kalien - suky - anbo.
59.	Cordia myxa	Losora	Thanat.
60.	Cinnamomum tavoyanum	Dalchini	Hmanthein-po.
61.	Cinnamomum zeylanicum	Dalchini	Hmanthein.
62.	Cinnamomum camphora	Kapoor	Payuk, Camphor.
63.	Cinnamomum tamala	Tejapata	Thitkyabo, Sing-num.
64.	Crataeva roxburghii	Varuna	Kodat, Kon-kadab.
65.	Citrus aurantium	Nimbuka, Narangi	Kabala.
66.	Citrus medica	Bijora	Taw - Shauk.
67.	Cedrela toona	Tuna	Thit - kado.
68.	Cryptolepis buchanani	Sariva kali	Thamamgya.
69.	Celastrus paniculatus	Malkangani	Wina.
70.	Eclipta alba	Bhringaraja	Kycik-hman.
71.	Eulophia campestris	Salapa	Gamon-Thinga zin.
72.	Datura alba	Datura	Padoing - byu.
73.	Datura stramonium	Kala datura	Pading - Khatta.
74.	Desmodium gangeticum	Shalparni	Bur.
75.	Desmodium pulchellum	Shalparni behed	Bur - Tang - deim.
76.	Dalbergia sissoo	Sesham	Bur - Taung - demi.
77.	Dioscorea pentaphylla	Varahi	Bur - putsa-u, kyw-ay
78.	Embelia ribes.	Bidanga	Saw - bwasa.
79.	Emblica officinalis	Amalki	Bur - zibya, Tasha
80.	Eugenia jambolana	Jamun	Thabyebyu.
81.	Euphorbia hirta	Dugadhika	-
82.	Fritillaria roylei.	Kshira kakoli	Gamon-kyet-thum.
83.	Ficus glomerata	Udumbar	Bur - kha - aung.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Sl.No.	Botanical Name	Ayurvedic Name	Burmese Name
84.	Ficus religiosa	Ashwatha	Bur - nyaung - bawdi
85.	Ficus bengalensis	Vata	Bur - pyi - nyaung.
86.	Grewia hirsuta	Nagabala	Bur - Tayaw.
87.	Grewia humilis	Nagabala	Bur - kyet - tayaw.
88.	Gardenia turgida	Thanela	Bur - thaminzani.
89.	Garcinia paniculata	Hingupatari	Bur - met - lin.
90.	Gmelina arborea	Gambhari	Bur - yema - ne - ya.
91.	Gloriosa superba	Kalihari	Si - mee - dauk - new.
92.	Hibiscus rosa - sinensis	Japa	Bur - kaung - yan.
93.	Helicteris isora	Morodphali	Bur - thunge - che.
94.	Holarrhena antidysenterica	Kutaja	Bur - lettok - gyi.
95.	Holoptelea integrifolia	Chirvilva	Bur - myaukseil.
96.	Hiptage madablota	Madhavi	Bur - bewe.
97.	Heliotropium indicum	Hastisundi	Bur - upa - Thaka - galay.
98.	Hordeum vulgare	Yava	Bur - Byit - gyon.
99.	Hydnocorpus dawnensis	Tubraka	Kalaw-byu.
100.	Hydnocarpus anthelmintica	Tubraka	Kalaw.
101.	Hydrocotyle asiatica syn. Centella asiatica.	Brahmi	Bur-myin-Khwa.
102.	Hyoscyamus niger	Khursani Yavani	Samon-byu, Samon-nant.
103.	Ipomoea turpethum. Syn. Operculina turpethum	Nishoth	Bur - Tharrawady.
104.	Ipomoea hederacea	Kaladana	—
105.	Ipomoea reniformis	Mushakarni	Myin - khwa, "tu"
106.	Indigofera tinctoria	Neel	Me-me-nati.
107.	Ichnocarpus frutescens	Sariba Bhed.	Bur-tawsaba.
108.	Jasminum arborescens.	Chameli	Bur-sabui.
109.	Lepidium sativum	Chandrashura	Bur-samon-ni.
110.	Leucas cephalotes	Dronapushpi	Bur - pin - gu - hteik.
111.	Lippia nodiflora	Jalapipali	Bur - pazun - tha - bet.
112.	Lawsonia inermis	Mehndi	Bur - dan, Henna plant.
113.	Mallotus philippinensis	Kampilaka	Bur - pathidian, Tawthidin.
114.	Martynia diandra	Kakanasa	Say - ka - lon.
115.	Mentha arvensis	Pudina	Mint, Pudina.
116.	Mentha sylvestris	Pudina	Wild mint.
117.	Momordica charantia	Karela	Kyet - hin - ga.
118.	Momordica dioica		Hinga - baung.
119.	Musa paradisiaca	Kadali	Hnget - pyaw.
120.	Mucuna prurita	Kapikachhu	Bur - khway - lay - pe.
121.	Mangifera indica	Amara	Bur - thyet.
122.	Murraya koenigii	Mitha neem	Bur - Kyuagnthwe.
123.	Myristica fragrans.	Jatiphal	Bur - zadeik - pho.
124.	Melia azedarach	Mahanimba	Bur - Persian.
125.	Nardostachys jatamansi	Jatamansi	Zawgyimok - seik.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Sl.No.	Botanical Name	Ayurvedic Name	Burmese Name
126.	Nymphaea alba	Nelophar	Kya - byu.
127.	Nymphaea lotus	kamal	Kya.
128.	Nymphaea stellata	Nilotpala	Kya - nyo.
129.	Mimosa pudica	Lajawanti	Bur - hti - gayon "kon"
130.	Mesua ferrea	Nagkeshar	Gangaw, Thano.
131.	Nyctanthes arbortristis	Parijata	Bur - seikphalu.
132.	Oxalis corniculata	Changari	Hmo - na - do.
133.	Oroxylum indicum	Shoyanake	Bur - waphyu - wa- hwe.
134.	Paederia foetida	Parasarni	Pe-bok-new.
135.	Papaver somniferum	Ahiphena	Bein (Poppy).
136.	Pergularia extensa	Uttamarni	Phala-kantka.
137.	Phaseolus mungo	Mungo	Mat - pe.
138.	Phaseolus radiatus	Masha	Pedi-sein, Pede-net.
139.	Phaseolus trilobus	Mugdaparni	Taw-mat-pe.
140.	Putranijiva roxburghii	Putranjiva	Bur - badibyu.
141.	Phyllanthus urinaria	Bhumayamalaki	Mye - zwe - byua, Mye - shiw - sha.
142.	Premna integrifolia	Agnimantha	Bur - Kywetha.
143.	Pterospermum accerifolium	Muchukund	Bur - taung - phetwun.
144.	Plantago ovata	Isabgol	Eiktha - pha - gula.
145.	Plumbago zeylanica	Chitarak	Kant - gyok - nyo.
146.	Portulaca oleracea	Lonika	Mye - byit.
147.	Psoralea corylifolia	Babachi	Ne - hle.
148.	Pterocarpus santalinus	Lal chandan	Natha - ni, Santagu.
149.	Pterocarpus marsupium	Bijay sar	Padam.
150.	Pueraria tuberosa	Bidari kanda	U - hmoon - u, kyway.
151.	Piper nigrum	Kali Marich	Bur - nagayokkaung.
152.	Piper betle	Tambul, Pan	Bur - kum, pu - betel.
153.	Piper cubeba	Kankola	Myee - tet, nga - yok.
154.	Quercus infectoria	Majuphala	Magik nuts.
155.	Randia dumetorum	Madanphal	Bur - sethanbaya.
156.	Rauwolfia serpentina	Sarpagandha	Bonma - yaza
157.	Rheum emodi	Revandachini	Kala - chinleanug.
158.	Riccinus communis	Eranda	Kyet - su.
159.	Rubia cordifolia	Manjeestha	Pain - jai - ni.
160.	Rhododendron arborium	Burans	Bur - zalant - ni.
161.	Semecarpus anacardium	Bhallataka	Bur - thitsiebo.
162.	Santalum album	Chandana	Santagu - byu.
163.	Saraca indica	Ashoka	Thawka - Ashatrea.
164.	Saussurea lappa	Katha, Kushta	Pan - nu.
165.	Sesbania sesban	Jayanti	Ye - thagyi.
166.	Sida cordifolia	Bala	Kat - si - ne.
167.	Sida spinosa	Bala Bheda	Kat - si - ne.
168.	Sida veronicifolia	Nagbala	Kat - si - nye.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Sl.No.	Botanical Name	Ayurvedic Name	Burmese Name
169.	Stereospermum suaveolens	Patala	Kyaema - gyo - lein.
170.	Sphaeranthus indicus	Mundi	Mon - di.
171.	Stereospermum suaveolens	Patala	Kyaema - gyo - lein.
172.	Streblus asper	Gokharu	Ok-hne.
173.	Swertia angusti folia	Chirayta	Pwe - daung - hin - ga.
174.	Swertia chirata	Chirayta	Say - ga - gyi.
175.	Saccharum spontanum	Kans	Bur - yanscingale.
176.	Solanum xanthocarpum	Kantakari	Myek-bok-khayan.
177.	Solanum indicum	Brahti	Bur - khayan - kazaw.
178.	Solanum torvum	Bhattaki	Myobyet - khayan.
179.	Solanum trilobatum	Brihati	Mye - bok - khayan.
180.	Shorea ossamica	Bur - kyilan	Shal Bhed.
181.	Sterculia foetida	Jangtibadam	Bur - letkok.
182.	Symplocos racemosa	Lodhara	Bur - daukyat.
183.	Symplocos crataegoides	Lodha	Bur - makauk - galay.
184.	Soymida febrifuga	Rohini	Dant - da - ku - ni.
185.	Scindapsus officinalis	Gajapippali	Bur - ngayagni
186.	Saccharum arundinaceum	Sarkanda	Bur - Paung - nyit.
187.	Smilax China	Ushava	Sein - na - maw.
188.	Smilax aspera	-	Bur - Kanvael.
189.	Smilax multiflora	-	Bur - Kanvael.
190.	Tamarindus indica	Imali	Bur - magyi.
191.	Taraxacum officinale	Dugadhika	Bur - dudli.
192.	Tecoma undulata	Rohitka	Bur - thinwin - ni.
193.	Tectona grandis	Shaka	Bur - kyun.
194.	Tephrosia purpurea	Sharpunkha	Bur - me - yaing.
195.	Terminalia arjuna	Arjuna	Bur - phauk - kyant.
196.	Terminalia belerica	Bibhitaka	Bur - thit - sein
197.	Terminalia chebula	Haritaki	Bur - jphaungo.
198.	Terminalia tomentosa	Asana	Bur - taukkyan.
199.	Thymus serpyllum	Vanayavani	Bur - samon - phyu - yaing.
200.	Tinospora cordifolia	Guduchi	Bur - sin - thama - nwe.
201.	Toddalia aculeta	kanchana	Bur - kyan - za.
202.	Tribulus terrestris	Gokharu	Su - le - thein.
203.	Trichodesma indicum	Adhapuspi	Kul - fa- thein.
204.	Trichosanthes cucumerina	Jangli patola	Bon - lon - taw - pe - lin.
205.	Trichosanthes dioica	Patola	-
206.	Trichosanthes bracteata	Vishala	Kyi-ah
207.	Tridax procumbens	Akal-kohari	Mywe- zokhnegya.
208.	Tylophora asthamatica	Arakparni	Upa - thaka.
209.	Uraria picta	Prishnaparni	Pathani - pa - hyni.
210.	Tylophora asthamatica	Arkparni	Upa - thaka.
211.	Urginea indica	Kola kanda	Padaing - kyet- thun.
212.	Valeriana wallichii	Tagara	Kantabalu.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Sl.No.	Botanical Name	Ayurvedic Name	Burmese Name
213.	Vallaris heynei	Asphata	Kin - but - gyi - gin - bok.
214.	Vanda roxburghii	-	kyi - baung - myo
215.	Vernomia cinerea	Sahdevi	Kadu - byan.
216.	Vetiveria zizaniodes	Ushira	Myit - hmway.
217.	Viola odorata	Vanapsha	Nilapan.
218.	Viscum album	Vanda	Kyi - baung.
219.	Vitex negundo	Nirgundi	Kyaung - ban - gyi.
220.	Vitex trifolia	Nirgundi	Kaung - ban.
221.	Vitis quadrangularis	Harjora	Shazaung - let - set.
222.	Vitis vinifera	Draksha	Sapyit.
223.	Wrightia tinctoria	Meetha Indrajava	Net - letwa.
224.	Wrightia tomentosa	Dudhkoriya	Let - htok - thein.
225.	Withania somnifera	Asgandha	Dahat - tha - gaing.
226.	Wood fordia fruticosa	Dhataki	Pan - le - pat - ta - gye.
227.	Zanthoxylum alatum	Tumbaru	Tezaba
228.	Zingiber officinale	Sunthi	Gyin - gyin - sein.
229.	Zizyphus jujuba	Badari	Zee - bin - zee - daw.
230.	Zizyphus rugosa	Unnab	Myauk - zee.

आभार प्रदर्शन :-

उपयोगी सुझावों एवं सहयोग हेतु लेखक भारतीय उच्चायुक्त, म्यानमार, भारत सरकार एवं स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय के आई.एस.एम. विभाग के तत्कालिन सचिव श्रीमती शान्ता शास्त्री का हृदय से आभार प्रकट करता है जिनके सौजन्य से यह कार्य सम्पादित किया गया।

शुद्ध स्वर्ण भस्म से निर्मित

बैद्यनाथ

रुमार्थो गोल्ड

पुराने जोड़ों के दर्द की प्रभावी दवा

रुमार्थो कैप्सूल में स्वर्ण भस्म का विशेष मिश्रण होने से यह गठिया वात एवं जीर्ण जोड़ों के दर्द पर व मांसपेशियों के रोगों में अत्यंत प्रभावी औषधि है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खदिरादि गुटिका का मानकीकरण

डॉ० आर० बी० सक्सेना
एम०वी०धौलकिया

सारांश

खदिरादि गुटिका को मुखदुर्गंध, मुखपाक, दंतरोग, दंत सूयर्सिया, दंतकृमि एवं गला रोग में वैद्यों द्वारा लिखा जाता है । खदिरादि गुटिका को प्रत्येक कंपनी अपने तरीके द्वारा तैयार करके बाजार में बेचने के लिए भेज रही है एवं उसका मानकीकरण भी नहीं लिखा होता है । इस कारण यह पता करना बड़ा कठिन हो जाता है कि कौन-सी कंपनी की खदिरादि गुटिका उपयोगी होगी । खदिरादि गुटिका को विभाग की फार्मेसी में बनाया गया एवं उसका परीक्षण रसायन प्रयोगशाला में किया गया । इसमें कच्चा तन्तु, राल, टैनिन, शक्कर, उड़ने वाला पदार्थ इत्यादि को परिमाण परीक्षण द्वारा निकाला गया, सूक्ष्म परीक्षण में वनस्पतियों का मूल तत्व (अल्कलोयड) को टी०एल०सी० द्वारा ज्ञात किया और फ्लूरेसेन्स परीक्षण से शुद्धता का पता किया गया ।

प्रस्तावना

चिकित्सा सम्बन्धी आयुर्वेद औषधि में मानकीकरण एवं विशिष्ट गुणों का होना अति आवश्यक हो गया है क्योंकि बायो-विज्ञान बहुत जटिल है जिससे अगर मानकीकरण की गई औषधि का उपयोग नहीं किया गया तो परिणाम विपरीत आ जाते/आते हैं । खदिरादि गुटिका का उपयोग मुखदुर्गंध, मुखपाक, दंतरोग, दंत सूयर्सिया, दंत कृमि एवं गला रोग में होता है । यह बाजार में अलग-अलग प्रणालियों द्वारा तैयार की हुई मिलती है । इसके तैयार करने में करीब 40 द्रव्यों का उपयोग होता है जिसके कारण इसके दाम बढ़ जाते हैं । अगर कम दाम में मिलती है तो उसमें मिलावट/द्रव्यों का कम मात्रा में उपयोग/आधे पके द्रव्यों का उपयोग/मानकीकरण न होना इत्यादि ऐसे कई कारण हैं जिससे इसकी शुद्धता पर संदेह होता है एवं इस प्रकार की औषधि प्रभाव कम/नहीं करती है । इस लेख में खदिरादि गुटिका के द्रव्यों का विश्लेषण, बनाने की प्रणाली, मानकीकरण, विशिष्ट गुण इत्यादि का वर्णन किया गया है जिससे खदिरादि गुटिका की शुद्धता प्रतीत हो ।

खदिरादि गुटिका का बनाना

खदिरादि गुटिका में उपयोग होने वाले द्रव्यों को गुजरात आयुर्वेद विश्वविद्यालय-जामनगर की फार्मेसी से लिया और उनकी शुद्धता का परीक्षण विभाग के औषधि -प्रकृति विज्ञान द्वारा अलग-अलग प्रणालियों द्वारा कराए गया उसके पश्चात् उनको बनाने में उपयोग किया ।

(अ) **क्वाथ बनाना** - तालिका 1, क्र०-1 एवं 2 द्रव्यों को अलग-अलग लेकर क्वाथ में उपयोग होने वाला चूर्ण बनाया । फिर क्र०-3 में दोनों को डालकर अग्नि पर तब तक पकाया जब तक जल 1/4 भाग नहीं रह गया फिर उतारकर थोड़ा ठंडा किया और कपड़छन करके क्वाथ अलग कर दिया ।

(ब) क्र०-4 से 39 तक के द्रव्यों को अलग-अलग लेकर काट पीसकर कपड़छन किया फिर मालिस 1 में दी गयी मात्रा लेकर गर्म क्वाथ में मिलाया एवं खूब चलाते रहे जब पूर्ण तरह से मिल गया तो क्र०-40 द्रव को मिलाया । इसके पश्चात् गुटिकाओं को हाथ से बनाया और छाँव में सूखने रख दिया । फिर काँच की बोतल की क्षारीयता निकाली[2] । उसके पश्चात् सूखे गुटिकाओं को बोतल में रखकर कसकर बन्द कर दिया ।

सावधानियां

1. जिस कांच की बोतल में गुटिकाओं को रखा जाये उसकी क्षारीयता ज्ञात करना अति आवश्यक है अन्यथा औषधि में रासायनिक क्रिया हो सकती है ।
2. बोतल में औषधि रखने के पश्चात् खूब कसकर ढक्कन लगाना चाहिये अन्यथा आर्द्रता अन्दर चली जायेगी और गुटिका को खराब कर देगी ।
3. गुटिकाओं को बनाते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि यह अगुंलियों में चिपके नहीं ।
4. गुटिका अगर अपना रंग, गंध, स्वाद एवं आकार बदलती है तो उसे उपयोग में नहीं लाना चाहिये ।

अगर उपरोक्त सावधानी रखी जाती है तो खदिरादि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुटिका को करीब दो वर्ष तक उपयोग में लाया जा सकता है।

खदिरादि गुटिका का विश्लेषण

खदिरादि गुटिका के विश्लेषण के लिये 'एनएलआर' रसायनों का उपयोग किया गया एवं भौतिक और रासायनिक गुणों का विश्लेषण अलग-अलग प्रणालियों द्वारा किया गया, तालिका - 2[3,4]

वनस्पतियों का मूल तत्व (अल्कोलायड) का गुणात्मक विश्लेषण थिन लेयर क्रोमेटोग्राफी विधि द्वारा किया गया। जिसमें सिलिका जेल जी (मार्क) को अवशोषक के रूप में उपयोग किया गया । इसमें क्रोमेटोग्रामस को विकसित करने के लिये ड्रेग्नड्रोफ्फस प्रतिक्रियाशील तत्व को राजप्रतिनिधि के रूप में उपयोग किया गया ।[5]

खदिरादि गुटिका की शुद्धता ज्ञात करने के लिए फ्लूरेसेन्स परीक्षण किया गया । सर्वप्रथम गुटिका का चूर्ण बनाया फिर उसको अलग-अलग जल, अल्कोहल एवं क्लोरोफार्म में डालकर रख दिया, करीब 4 घन्टे बाद उसको छानकर उन अर्कों को यू०वी० चेम्बर में अलग - अलग लम्बाई वाली तरंगों तथा साधारण रोशनी में विश्लेषण किया, तालिका -3।[6]

परिणाम एवं वादविवाद

खदिरादि गुटिका का कड़ापन 12.00 के.जी. केजी$^{-2}$ है जिस कारण इसका विश्लेषण समय भी ज्यादा हो गया है । इसके ऊपर गर्मी एवं रोशनी का प्रभाव नहीं है। यह जल में अधिक घुलती है क्योंकि यह आर्द्रताग्राही है। इस कारण इसका उपयोग मुख/गला रोग में आसानी से होता है । इसमें कच्चा तन्तु, राल एवं टैनिन की मात्रा अधिक है जिससे सिद्ध होता है कि जड़ी-बूटियों के द्रव्यों से यह बनाई गई है । कम राख की मात्रा बताती है कि इसमें किसी प्रकार की मिलावट नहीं हुई है ।

वनस्पतियों का मूल तत्व (अल्कलोयड) की कुल मात्रा 0.26% आयी । इसमें से एक बिन्दु आया जिसकी आर०एफ० कीमत 0.50 आयी जो कि टी०एल०सी० परीक्षण द्वारा निकाली गयी । इससे प्रतीत होता है कि खदिरादि गुटिका में वनस्पतियों के मूल तत्व पाये जाते हैं ।

तालिका-3 में फ्लूरेसेन्स परीक्षण से प्रतीत होता है कि 254 एनएम में अल्कोहल और क्लोरोफार्म में फ्लूरेसेन्स दिखाई देता है । साधारण रोशनी में यह अलग-अलग विलायक में अलग-अलग रंग देती है ।

निर्देश-पुस्तकें

1. दी आयुर्वेदिक फार्म्यूलरी ऑफ इंडिया, पार्ट-1 1978 गवर्मेन्ट ऑफ इंडिया, मिनिस्ट्री ऑफ हेल्थ एन्ड फेम्ली प्लानिंग डिपार्टमेन्ट ऑफ हेल्थ ।
2. ब्रिटिस फार्मोकोपिया 1963 टेस्ट फोर लिमिट ऑफ अल्कलाईनिटी ऑफ ग्लास, पब्लिस्ड फोर दी जनरल मेडीसीनल कॉसिल वाय फार्मोस्यूटिकल प्रेस 17, ब्लोमस व्यूरी स्का०लंदन डब्लू.सी.आई. 1156 ।
3. आर०बी०सक्सेना, एम०वी०धौलकिया और एच०सी०मेहता 1983. फिजिको - केमीकल एण्ड फ्लूरेसेन्स इंवेस्टीगेसन ऑफ एक्रसा-नट (पुगा), जर०साई०रिस०प्ला० एण्ड मेडी० 4, 1, 43-44 ।
4. आर०बी० सक्सेना, एम०टी० दासवानी और के०एल०शाह 1988, स्टेन्डर्डाइजेशन ऑफ सुदर्शन घनवटी, अनांदावियत्री, वाल्यूम 6, न०-1, 21-29 ।
5. इ० स्टाहल 1969 थिन लेयर क्रोमेटोग्राफी ए लेबोरेट्री हेन्ड बुक, स्प्रीन्जेर-वरलेग बरलींन, हेईडेवेरग, न्यूयार्क ।
6. आर०बी०सक्सेना और एच०सी०मेहता 1988 स्टडी ऑफ केमीकल कोंस्टीटयूइंटस एण्ड फ्लूरेसेन्स ऑफ संजीवनी वटी, आयुर्वेदा समाचार, वोल्यूम 11, न०-2, 9-15 ।

* औषध मानकीकरण अनुसंधान विभाग, केन्द्रीय आयुर्वेद अनुसंधान संस्थान, आमखो, ग्वालियर - 474 009

तालिका - 1

खदिरादि गुटिका के मुख्य अंश

क्र०स०	संस्कृत/हिन्दी में नाम	वनस्पति नाम	अंग का उपयोग	मात्रा
1.	खदिरा सारा	अॅकेसिया कटेच्यू विल्ड	अंतकाष्ठ	04.800 किलो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्र०स०	संस्कृत/हिन्दी में नाम	वनस्पति नाम	अंग का उपयोग	मात्रा
2.	अरिमेदा (बिलायती बबुल)	अॅकेसिया ल्यूकोफलोइ बिल्ड	तने की छाल	09.600 किलो
3.	जल	-	-	49.152 लीटर
4.	श्वेत चंदन	सॅन्टॅलम् अॅलूब्रम् लिन	अंतकाष्ठ	12.000 ग्राम
5.	पद्मक	प्रयूंस सेरासोइडेस डी०डोन	अंतकाष्ठ	12.000 ग्राम
6.	उसीरा	वेटीवेरिअ जिजनीओइडेस (लिन) नेश	जड़	12.000 ग्राम
7.	मञ्जिष्ठा	रुबिया कॉर्डिफोलिया लिन	तना	12.000 ग्राम
8.	धातकी	बुडफोर्डिआ फ्लोरीबंडा सॉलिस्व	पुष्प	12.000 ग्राम
9.	मुस्ता	सायपेरस रोटयूंडयस लिन	प्रकंद	12.000 ग्राम
10.	प्रपयूंडारीका	नेल्यूम्बो नेल्सीफेरा गैर्टन	तना	12.000 ग्राम
11.	एसटीमधू	ग्लिसह्राइझाग्लब्रा लिन	जड़	12.000 ग्राम
12.	त्वक (दालचीनी)	सिन्नॅमोमम् झेलॅनिकम् ब्लूम	तने की छाल	12.000 ग्राम
13.	छोटी इलायची	इलेट्टेरिया कार्डमोमम् मेटम	बीज	12.000 ग्राम
14.	पद्म्	नेलंबियम स्पेसिओजम् विल्ड	पुष्प	12.000 ग्राम
15.	नागकेसर	मेसुआ फेरिआ लिन	पुष्प	12.000 ग्राम
16.	लकसा	एक्स (रिसाव)	रिसाव	12.000 ग्राम
17.	रासंजना	-	-	12.000 ग्राम
18.	मामसी (जटामांसी)	नार्डोस्टॅकिस् जटामांसी डीसी	प्रकंद	12.000 ग्राम
19.	हरीतकी	टर्मिनेलिया चेब्युला	फल का गुद्दा	12.000 ग्राम
20.	विभीतक (बहेड़ा)	टर्मिनेलिया बेलेरिका	फल का गुद्दा	12.000 ग्राम
21.	आमलकी	एम्ब्लिका ऑफिसेनेलिस	फल का गुद्दा	12.000 ग्राम
22.	लोधरा (लोध)	सिम्प्लोकॉस् रेसिमोसा राक्स	तने की छाल	12.000 ग्राम
23.	बलक	कोलेयस बेट्टीवेरोइडेस के०सी०जकोव	जड़	12.000 ग्राम
24.	हरिद्रा	कर्क्युमा लाँगा लिन	प्रकंद	12.000 ग्राम
25.	दारु हरिद्रा	बर्बेरिस की विभिन्न जातियां	तना	12.000 ग्राम
26.	फालिनी (फूल प्रियंगु)	कॅलिकार्पा मॅक्रोफाइला वाह.	पुष्प	12.000 ग्राम
27.	छोटी इलायची	इलेट्टेरिया कार्डमोमम् मेटम	बीज	12.000 ग्राम
28.	समंग (लज्जालु)	मीमोसा प्यूडीका लिन	पूरा पौधा	48.000 ग्राम
29.	कट्फल	मायूरिका नेगी	फल	12.000 ग्राम
30.	वच	एकोरस कॅलेमस् लिन	प्रकंद	12.000 ग्राम
31.	यवस	अल्हगी स्यूडल्हगी ब्लेब डेस्क	मूल	12.000 ग्राम
32.	अगर (अगरू)	एक्विलेरिया एगेलोचा राक्स	अंतकाष्ठ	12.000 ग्राम
33.	पतङ्ग	सिझल्पिनिया सॅप्पन	मूल	12.000 ग्राम
34.	गेरिक	-	-	12.000 ग्राम
35.	अंजन	-	-	12.000 ग्राम
36.	लोंग (लवंग)	करियोफालस् एरोमॅटिक्स लिन	पुष्प	12.000 ग्राम
37.	नख	-	-	48.000 ग्राम
38.	ककोला	पाइपर क्यूबेबा लिन०एफ०	प्रकंद	48.000 ग्राम
39.	जातिकोसा (जायफल)	मायूरिस्टिकाफ्रेग्रेन्स हाउट.	वायवीय	48.000 ग्राम
40.	करपूरा (कपूर चीनिया)	सिनॅमोमम् कॅम्फोरा बीज एव	रिसाव	192.00 ग्राम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तालिका - 2

खदिरादि गुटिका के भौतिक-रसायन गुण

क्र०सं०	स्थिर राशि (पॉरीमीटर)	अनुक्रिया (रिस्पांस)
1	2	3
1.	रंग (Colour)	काला (Black)
2.	गंध (Smell)	कोई अनोखी नहीं (Not characteristic)
3.	आकार (Appearance)	वटी/गुटिका (Pills/tablets)
4.	स्पर्श (Touch)	कठोर (Hard)
5.	स्वाद (Taste)	थोड़ी सिकोड़नेवाली और बाद में थोड़ी तीक्ष्ण (Slightly astringent and slightly bitter afterwards)
6.	गुटिकाओं का कड़ापन (Hardness of the pills)	12.0 केजी०सेमी०$^{-2}$
7.	37^{0} से० पर विश्लेषण समय (Disintegration time at 37°C)	एक घंटे से ज्यादा (More than one hour)
8.	गुटिकाओं का एक प्रकार (Uniformity of the pills)	
	(अ) गुटिकाओं का औसत वजन (20 गुटिकाएं) (Average weight of the 20 pills)	0.4646 ग्राम्स (grams)
	(ब) गुटिकाओं के वजन में परिवर्तन (Variation in weight of the pills)	
	(i) सबसे ज्यादा (Highest)	0.620 ग्रामस (grams)
	(ii) सबसे कम (Lowest)	0.361 ग्रामस (grams)
9.	110^{0} से० पर सुखाने पर कमी (Loss on drying at 110°C)	% 11.61
10.	गर्मी का प्रभाव (Action of heat)	कोई परिवर्तन नहीं (No Change)
11.	रोशनी का प्रभाव (Action of light)	स्थिर (Stable)
12.	हवा का प्रभाव (Action of air)	वायु में से जल लेना (Hygroscopic)
13.	गलने की योग्यता (Solubility)	
	(अ) जल (Water)	% 57.13
	(ब) अल्कोहल (Alcohol)	% 16.77
	(स) क्लोरोफार्म (Chloroform)	% 01.10

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

1	2	3
	(द) पेट्रोलियम ईथर (Petroleum ether)	% 01.31
	(इ) बैन्जीन (Benzene)	% 00.39
14.	उड़नेवाला पदार्थ (Valatile matter)	% 00.15
15.	कच्चा तन्तु (Crude fibre)	% 05.33
16.	राल (Resin)	% 04.22
17.	नाइट्रोजन (Nitrogen)	% 00.04
18.	अल्कलोयड (Alkaloid)	% 00.26
19.	टैनिन (Tannin)	% 16.95
20.	शक्कर (Sugar)	
	(अ) पूर्वस्थिति में पहुँचाना (Reducing)	% 09.22
	(आ) पूर्वस्थिति में न पहुँचाना (Non-reducing)	% नहीं (Nil) ।
21.	राख की मात्रा (Ash value)	% 06.52
22.	अम्ल में राख की अघुलनशीलता (Acid insoluble ash)	% 00.35
23.	गुण-सम्बन्धी परीक्षण (Qualitative test)	
	(अ) लौह (Iron)	+ ve
	(आ) चूना (Calcium)	+ ve
	(इ) क्लोराइड (Caloride)	+ ve
	(ई) सल्फेट (Sulphate)	+ ve
	(उ) फोस्फेट (Phosphate)	+ ve
	(ऊ) सोयडियम (Sodium)	+ ve
	(इ) पुटेशियम (Potassium)	+ ve
24.	परिमाण-सम्बन्धी परीक्षण (Quantitative test)	
	(अ) लौह आक्साइड (Iron oxide)	% 01.65
	(आ) चूना (Calcium)	% 01.42
	(इ) क्लोराइड (Chloride)	% 00.72
	(ई) सल्फेट (Sulphate)	% 00.49
	(उ) फास्फेट (Phosphate)	% 00.48
	(ऊ) सोडियम (Sodium)	+ ve
	(ए) पुटेशियम (Potassium)	+ ve

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

तालिका - 3

खदिरादि गुटिका का फ्लोरेसेन्स परीक्षण

क्र०स०	तरंग की लम्बाई	जल में खींचना			अल्कोहल में खींचना			क्लोरोफार्म में खींचना		
		जल	जल खींचना +1एन हाइड्रो क्लोरिक अम्ल	जल खींचना + 1 एन सोयडियम हाइड्रो- ऑक्साइड	अल्कोहल	अल्कोहल खींचना +1 एन हाइड्रो- क्लोरिक अम्ल	अल्कोहल खींचना +1 एन सोडियम ऑक्साइड	क्लोरोफार्म	क्लोरोफार्म खींचना +1 एन हाइड्रो- क्लोरिक अम्ल	क्लोरोफार्म खींचना +1 एन सोयडियम हाइड्रो- ऑक्साइड
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
1.	छोटी तरंग लम्बाई 254 NM	NF	NF	NF	हल्का हरा	NF	NF	हल्का सफेद	NF	NF
2.	लम्बी तरंग लम्बाई 365 NM	NF	NF	NF	NF	NF	NF	NF	NF	NF
3.	साधारण रोशनी	हल्का लाल भूरा	हल्क पीला भूरा	गहरा लाल भूरा	भूरा	भूरा	हल्का लाल भूरा	बहुत हल्का पीला	रंगहीन	बहुत हल्का पीला

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हृदयरोगियों के लिए आहार का महत्व

डा० अरुण कुमार त्रिपाठी, एम०डी०, पी०एच०डी० हृदयरोग विशेष

सभी प्रकार के हृदय रोगों में आहार का खास महत्व है। औषधि के साथ-साथ आहार भी चिकित्सा का ही अंग है परन्तु दुर्भाग्यवश अधिकांश चिकित्सक इस पक्ष की अनदेखी करते हैं। इससे जहां एक तरफ चिकित्सा की सफलता का प्रतिशत कम होता है; वहीं दूसरी तरफ रोगी स्वयं अपनी चिकित्सा में सहयोग नहीं कर पाता। उचित अहार का मार्गदर्शन करने से रोग को आगे बढ़ने से तुरंत रोका जा सकता है और इलाज की सफलता सुनिश्चित होती है। अनेक प्रकार के हृदय रोग खानपान की गलत पद्धति, तनाव और व्यायाम आदि न करने की वजह से होते हैं। आज के समय में व्यस्ततम जीवन पद्धति के चलते फास्ट फूड सभ्यता विकसित हो रही है, जो मूलरूप से हिन्दुस्तानी रहन - सहन रीति रिवाजों के विपरीत है। सदियों से प्रचलित जीवन पद्धति और खानपान के अभ्यस्त लोगों में अचानक आए इस नये बदलाव से स्वास्थ्य पर, विशेष रूप से हृदय और मस्तिष्क पर बुरा प्रभाव पड़ा है। इसी के परिणामस्वरूप हृदय रोग महामारी का रूप लेता जा रहा है। उचित समय पर उचित निर्देशित आहार हृदय रोग की गम्भीरता को कम करता है और यहाँ तक कि पुनर्वापसी की दिशा में महत्वपूर्ण कदम सिद्ध होता है। यहां पर हम विशेष रूप से हृदयधमनीगत हृदय रोग (सी०ए०डी०) और दिल में दर्द (एन्जाइना) के बारे में आहार की विशेषता पर ही विचार करेंगे। सभी प्रकार के आहार को मोटे तौर पर अनाज, फल, सब्जियाँ तथा दूध मांसादि वर्गों में विभाजित कर सकते हैं। इनमें से प्रत्येक आहार वर्ग का अलग-अलग महत्व है। हृदय रोगियों को इन सभी आहार वर्गों से चयनित आहार का ही सेवन करना चाहिए। तालिका - में खाद्यपदार्थों को उपयोगिता तथा हानि के अनुसार तीन समूहों में बाँटकर समुचित प्रयोग करने का निर्देश है।

तालिका - 1 खाद्य पदार्थों की विभाजन तालिका

(क) आवश्यक भोज्य पदार्थ

(ख) संयमपूर्वक सेवनीय भोज्य पदार्थ

(ग) निषिद्ध भोज्य पदार्थ

वसा एवं तेल :-

(क) वसा एवं तेल का प्रयोग कम से कम करें। (4 चम्मच या 20 ग्राम प्रतिदिन)।

(ख) जैतून का तेल, कुसुम का तेल, सूरजमुखी का तेल, तिल का तेल, कपास के बीजों का तेल।

(ग) भारी चर्बी/वसा जैसे सूअर की चर्बी, मक्खन, घी, पाम का तेल, नारियल का तेल, वनस्पति तेल आदि।

मांस :-

(क) 150-200 ग्राम मांस विशेषत: मुर्गे एवं खरगोश का मांस।

(ख) मांसल भाग जैसे जिगर, गुर्दा आदि।

(ग) वसा युक्त मांस जैसे सूअर का मांस, बतख का मांस, तला हुआ मांस, डिब्बों में भरा हुआ मसाला युक्त मांस।

अण्डा एवं अन्य भोजन पदार्थ :-

(क) मलाई रहित दूध, अल्प वसा युक्त पनीर, दही, अण्डे का सफेद भाग।

(ख) कम मलाई युक्त दूध (2% वसा), दो अण्डे प्रति सप्ताह।

(ग) मलाई युक्त दूध, गाढ़ा दूध, मलाई, वसा युक्त पनीर।

मछली :-

(क) सभी श्वेत मछलियाँ (कांड, सॉलमन आदि) एवं 200-400 ग्राम वसा युक्त मछली प्रति सप्ताह उचित है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ख) तली हुई मछलियाँ ।

फल और सब्जियाँ :-

(क) सभी ताजे फल और सब्जियाँ, जहां तक संभव हो छिलका सहित सेवन करें ।

(ख) उपयुक्त तेल में पकाए हुए आलू ।

(ग) अनुपयुक्त तेल में पकाए हुए आलू ।

दालें एवं अनाज :-

(क) छिलका सहित साबुत दालें, चोकर सहित आटे की रोटी, पॉलिश रहित चावल आदि ।

(ख) मैदे से बने पदार्थ ।

केक एवं अन्य मिष्टान्न :-

(क) अल्प वसा युक्त पुडिंग, खीर आदि ।

(ख) उपयुक्त घी, तेल आदि से युक्त केक तथा सोयाबीन से निर्मित आईसक्रीम आदि ।

(ग) (ख) में बताए गए खाद्य पदार्थ जो कि अनुपयुक्त घी, तेल के प्रयोग से निर्मित हों, आईसक्रीम चॉकलेट आदि ।

पेय पदार्थ :-

(क) शर्करा रहित फलों का रस, शर्करा रहित पेय पदार्थ, सब्जियों का सूप आदि ।

(ख) शर्करा युक्त पेय पदार्थ, मांस रस (सूप) आदि ।

(ग) जौ की बनाई मदिरा आदि ।

नमक :-

(क) भोजन पकाते समय स्वल्प नमक का प्रयोग करना ।

(ख) चटनी, पापड़, चिप्स, नमक युक्त मक्खन एवं मछलियाँ तथा पनीर, अचार आदि ।

आहार संबंधी जानने योग्य आवश्यक तथ्य :-

शाकाहारी भोजन :- शाकाहारी व्यक्तियों के भोजन में सम्पूर्ण कोलेस्टेराल, एल०डी०एल० और ट्रायग्लिसराइड की मात्रा कम होती है । शाकाहारी भोजन में वसा और कोलेस्टेराल की मात्रा स्वाभाविक रूप से कम होती है तथा रेशों (Fibres) की मात्रा अधिक होती है साथ ही असंतृप्त वसा अम्लों तथा संतृप्त वसा अम्लों का अनुपात भी अनुकूल होता है । ऐसा माना जाता है कि शाकाहारी लोगों का शरीर हल्का होता है । ताजे फलों तथा सब्जियों में रेशे, प्रोटीन, लाभदायक एन्टी ऑक्सीडेन्टस्, विटामिन्स तथा पोटाशियम, मैग्नीशियम आदि आवश्यक तत्वों की मात्रा अधिक होती है, जो हृदय रोगों से बचाव करते हैं । शहरीकरण का एक दुष्प्रभाव आहार में होने वाला बदलाव है जिसके चलते आहार में कैलोरी की मात्रा तथा संतृप्त वसा की मात्रा बढ़ जाती है जिसके कारण मोटापा, इन्सुलिन रेजिसटेन्स और खून में चर्बी की मात्रा बढ़ जाती है । परिणामतः हृदय रोगों की सम्भावना शहरियों में कई गुना बढ़ जाती है ।

एण्टीऑक्सीडेन्टस :- विटामीन सी और ई, कैरोटिन्वायड्स, फ्लेवोन्वायड्स तथा सिलिनियम आदि घातक वसा - एल०डी०एल० के ऑक्सीकरण को रोकते हैं । विटामिन-सी रक्त नलिकाओं को संकुचित होने से रोकती है, कोलेस्ट्रेरॉल की मात्रा कम करती है तथा एच०डी०एल० (उपयोगी वसा) को बढ़ाती है, साथ ही उच्च रक्तभार को कम करती है । अमरूद, आँवला, नींबू, प्याज, हरी सब्जियाँ, गाजर तथा अन्य रंगीन फल विशेष रूप से पीले नारंगी तथा हरे रंग वाले फलों में एण्टीऑक्सीडेन्ट्स पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं ।

रेशा युक्त आहार :- हृदय रोगियों के लिए आहार रेशायुक्त होना चाहिए । शाकाहारी भोजन विशेष रूप से अनाज, हरी सब्जियाँ तथा ताजे फलों में पर्याप्त मात्रा में रेशे पाए जाते हैं । साथ ही विटामिन्स एवं आवश्यक एण्टीऑक्सीडेन्ट्स भी पाए जाते हैं । आहार में उपस्थित घुलनशील रेशे आँतों में कोलेस्टेरॉल से संबद्ध होकर वसा के अवशोषण को कम कर देते हैं । इस प्रकार रक्त में वसा की मात्रा कम हो जाती है । सामान्य भारतीय शाकाहारी व्यक्ति के आहार (चोकर युक्त आटा, ब्रेड,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गेहूँ, जई, बाजारा, रागी, ज्वार, मक्का, जौ, मूँगफली, फलियाँ आदि) में रेशे की मात्रा पर्याप्त पाई जाती है। इनमें यह मात्रा 10 ग्राम / 100 ग्राम (10 ग्राम / 100 ग्राम) से अधिक पाई जाती है। कम मात्रा में रेशे (1 ग्राम से 10 ग्राम प्राप्त 100 ग्राम पर) वाले खाद्य पदार्थ चावल, कन्द वाली सब्जियाँ, फल तथा नारियल आदि हैं।

तेल और वसा :- हृदय रोगियों के लिए आहार में असंतृप्त वसा तथा संतृप्त वसा का अनुपात अनुकूल होना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि असंतृप्त की मात्रा अधिक तथा संतृप्त वसा की मात्रा कम होनी चाहिए। कोकोनेट ऑयल (नारियल का तेल) में सर्वाधिक संतृप्त वसा अम्ल पाए जाते हैं जो पाम ऑयल से तीन गुना अधिक है। आहार में आवश्यक वसा अम्लों की भी जरूरी है, विशेष रूप से ओमेगा - 3 - बहु असंतृप्त वसा अम्ल (w-3 PUFA) तथा ओमेगा - 6 - बहु असंतृप्त वसा अम्ल (w-6-PUFA)। इनमें से पहला सालमन तथा मैकेरल मछलियों में अधिक पाया जाता है। सोयाबीन कार्न, सूरजमुखी तथा कॉटनसीड के तेलों में प्रति 100 ग्राम सर्वाधिक, लगभग 50 ग्रम लीनीलीक नामक आवश्यक वसा अम्ल पाया जाता है। अतः यह कहना उपयुक्त होगा कि हृदय रोगियों को ऐसे ही खाद्य तेलों का प्रयोग करना चाहिए।

तालिका :- 2

विभिन्न खाद्य तेलों तथा आहार में प्रयुक्त वसा में रक्त थक्का निर्माण तथा धमनी कठिनता तथा वसा अम्लों का प्रतिशत

क्र०	तैल/वसा	बहु असंतृप्त वसा अम्ल	एकल असंतृप्त वसा अम्ल	संतृप्त वसा अम्ल	रक्त थक्का निर्माण सूचकांक	धमनी काठिन्य सूचकांक
1.	नारियल तेल	2	6	92	6.18	13.63
2.	पाम का तेल	10	40	50	1.74	0.88
3.	सोयाबीन तेल	61	24	15	N.A.	N.A.
4.	मूंगफली तेल	32	50	14	N.A.	N.A.
5.	सूरजमुखी तेल	69	19	12	0.28	0.07
6.	कपास बीज तेल	48	21	26	N.A.	N.A.
7.	मक्खन	3	28	69	2.07	2.03

आहार संबंधी टिप्स (सलाह) :-

1. उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखकर आहार का चयन करना चाहिए।
2. आहार में नमक की मात्रा कम से कम होनी चाहिए तथा सामान्य नमक (Nacl) की जगह पोटैशियम नमक का भी प्रयोग किया जा सकता है। नमक की मात्रा 6gm प्रतिदिन से अधिक न होने पाए।
3. खाद्य तेलों को बार-बार न गर्म करें। ऐसा करने से वे संतृप्त वसा में बदल जाते हैं जो कि नुकसानदायक होते हैं।
4. नमक कम करने के लिए धनिया, मेथी, अदरक या तेजपत्र का पाऊडर प्रयोग कर सकते हैं, इनको भोजन में ऊपर से डाला जा सकता है।
5. शाकाहारी आहार का ही अधिकतम प्रयोग करें केवल मछली का प्रयोग कर सकते हैं।
6. एल्कोहल का प्रयोग किसी भी दशा में 50 mg ऊपर न करें।
7. प्रतिदिन कम से कम 400 ग्राम ताजे फलों, सब्जि का प्रयोग अवश्य करें।
8. शान्तचित्त रहें तथा मन में शुद्ध विचार रखें जीवन के प्रति आशावान रहें।
9. खान-पान नियमित रखें तथा अचानक कोई बदलाव न करें।
10. प्रतिदिन हल्का व्यायाम तथा खुली हवा में टहलना उत्तम होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उर्ध्व श्वसन संस्थान की प्रमुख व्याधियों का निदान एवं चिकित्सा

* डा० चंचल शर्मा, एम०डी० (आयु०), पी०एच०डी०
** डा० राकेश शर्मा, एम०डी० (आयु०)
*** डा० गीतांजलि सूद, डा० दोरजे यंगजीन, डा० नीना शर्मा, बी०ए०एम०एस०

उल्वक रोग

गर्भोदक का वमन न होने से या कण्ठगत कफ के
मिश्रण से
↓
दूषित आहार रस
↓
हृदय के रसवाही स्रोतों को अवरूद्ध शिशु मुट्ठियां बांधने लगता है, मदहोश सा हो जाता है और हृदय रोग, आक्षेपक, श्वास, कास, छर्दि से पीड़ित
↓
उल्वक रोग (सहज या अम्बूपूर्ण)

चिकित्सा

स्रोतोशुद्धि के लिए वमन व विरेचन और प्रात:काल पीने के लिए बकरा का मूत्र दें ।

कण्ठवेदना लक्षण

गले की वेदना में बालक दूध को उगल देता है । श्लेष्मावर्धक पदार्थो के सेवन से उसे विषृम्भ हो जाता है । हल्का ज्वर, अरुचि तथा ग्लानि हो जाती है ।

कण्ठशोथ लक्षण

कण्ठ शोथ में ज्वर, अरुचि तथा शिर:शूल होता है ।

परित्याग

कफवर्धक पान - स्तन्यपान एवं तैलाभ्यंग

योग

बिल्वादि बृहत पंचमूल के द्रव्य, वनभण्टामूल तथा पंचकोल = 1-1 पल
हरिण आदि जांगल देशीय प्राणी का मांस = 8 पल
खरगोश के सिर का भेजा समेत मांस = 8 पल + जल = 16 गुणा पकावें । 8वां भाग शेष रहने पर छान लें । फिर उस क्वाथ के साथ 1-1 तोला वायविडंग, सैंधव लवण, जीरा, चव्य, देवदारु, हींग, लशुन तथा त्रिकटु का भली प्रकार पीसा गया कल्क तथा 1 प्रस्थ घृत + 1-1 प्रस्त बकरी का मूत्र, सूरा, दही तथा दूध मिलाकर पाक करें । सिद्ध होने पर घृत को छान कर रख लेवें तथा इस घृत का पान करें ।

रोहिणी

निदान एवं सम्प्राप्ति

वात, पित्त, कफ पृथक या तीनों मिलकर एवं रक्त
↓
प्रकुपित होकर
↓
गले में मांस को दूषित करके
↓
गले के मार्ग में रुकावट करने वाले अंकुरों को उत्पन्न करना
↓
प्राणनाशक रोहिणी नामक रोग की उत्पत्ति

भेद

वाजत रोहिणी
* जिह्वा के चारो ओर, अत्यधिक पीड़ाकारक मासांकु
* कण्ठावरोध
* वात के भयंकर उपद्रवों से युक्त

पित्तज रोहिणी
* शीघ्र उत्पन्न होने वाले
* शीघ्र दाह व पाक करने वाले
* तीव्र ज्वर

कफज रोहिणी
* श्वासमार्ग अवरोध
* मन्दपाक
* भारी व अधिक फैलने वाली

सन्निपातज रोहिणी
* भयंकर पाक या गम्भीर धातुओं में पाक
* औषधि से लाभ न हो
* तीनों दोषों के लक्षणों से युक्त

* रीडर एवं विभागाध्यक्ष, कौमारभृत्य विभाग, हि.प्र.रा.आयु.स्ना.शि. एवं अनु.सं., पपरोला
** लेक्चरार, कौमारभृत्य विभाग, हि.प्र.रा.आयु.स्ना.शि. एवं अनु.संस्थान, पपरोला
*** आयुर्वेद स्नातक, हि.प्र.रा.आयु.स्ना.शि. एवं अनु. संस्थान, पपरोला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रक्तज रोहिणी
* गले स्फोट
* शीघ्र दाह पाकादि
* ज्वर

चिकित्सा

वातज रोहिणी
* रक्तमोक्षण
* पंच लवण से प्रतिसारण (घर्षण)
* स्नेहयुक्त सुखोषण गण्डूष धारण

पित्तज रोहिणी
* पतंग, शर्करा, मधु के द्वारा प्रतिसारण
* मुनक्का तथा फासले के क्वाथ का कवल धारण

कफज रोहिणी
* गृहधूम और कुटकी चूर्ण से प्रतिसारण
* श्वेता, विडंग, दंती और सेंधा नमक के द्वारा सिद्ध तैल का नस्या एवं कवल धारण

सन्निपातज रोहिणी
* असाध्य

रक्तज रोहिणी
* पित्तज रोहिणी समान

तुण्डिकेरी

कफ व रक्त के कारण वनकपास के फल के सदृश बड़े उत्सिथ शोथ को तुण्डिकेरी कहते हैं ।

लक्षण
* जलन
* पाक
* सूचिविद्धवत वेदना

चिकित्सा
* तुण्डिकेरी में प्रारम्भ में शमन चिकित्सा करें ।

प्रतिसारण
* मरिच, अतीस, पाठा, वच, कुठ, श्योनाक, छाल चूर्ण, सैन्धव लवण व मधु के साथ लगावें ।

कवल
* बच, अतीस, पाठा, रास्ना, कुटकी, पिचुमन्द के क्वाथ से कवल करें ।

धूम
* पञ्चांगी वर्ति (हिंगोट, अपामार्ग, दन्ती, निशोथ, देवदारु) धूम को दिन में दो बार प्रयोग करें ।

भोजन
* क्षार सिद्ध मुदगयूष भोजन करें ।
* यदि शमन चिकित्सा से लाभ न हो तो शल्य चिकित्सा करें ।

शल्य कर्म
* मण्डलाग्र शस्त की सहायता से एकतृतीयांश भाग का छेदन कर्म करें ।
* छेदन के पश्चात् प्रतिसारण व कवल आदि करें ।

संदर्भ :-

1. सम्प्राप्ति-गर्भाम्मसामवन नाच्छलेष्मणा: कण्ठगस्य वा. .... उत्यक सहजं व्याधिमम्बुपूर्ण चतं वदेत् । (अ. स.उ. 2/191-193)
2. चिकित्सा - स्रोतोविशोधनं.....मूत्रं पानाथ्यगौ च वर्णयेते । (अ.स.उ. 2/193-194)
3. योग - बिल्वादि मूल बृहतीपंचकोलं.....पाण्डुरागं च वातोत्यं स्वस्थवृते च पुष्टिदम् । (अ.स.उ. 2/194-198)
4. कण्ठवेदना - पीतमुदिरतिस्तन्यं.....कण्ठवेदनाऽर्दिते। (का.सू. 25/9)
5. कण्ठशोथ - कण्ठके श्वयथु कण्ठे ज्वरारूचिशिरोरूज: । (का.सू. 25/11)
6. रोहणी सम्प्राप्ति - गलेऽनिल: पित्तकफौ.....साऽसृहया हि रोहिणी । (सु.नि. 16/49)
7. वातज रोहिणी - जिह्वां समन्ताद्..... वातात्मकोपद्रवगाढयुक्ताम । (सु.नि. 16/50)
8. पित्तज रोहिणी - क्षिप्रोद्रमा क्षिप्रविदाहपाका तीव्रज्वरा पित्तनिमित्तजा स्यात् । (सु.नि. 16/51)
9. कफज रोहिणी - स्रोतोनिरोधिन्यापि मन्दपरका गुर्वी स्थिरा या कफसम्भवा वै । (सु.नि. 16/5)
10. सन्निपातज रोहिणी - गम्भीरपाका प्रतिवारवीर्या त्रिदोषलिंग यसम्भवा स्यात् । (सु.नि. 16/52)
11. रक्तज रोहिणी - स्फोटाचिता पितसमानलिगासाध्या प्रदिरूटारूधरामिकेपम् । (सु.नि. 16/52)
12. तुण्डिकेरी - शोफ: स्थूलस्तोददाहप्रपाकी प्रागुक्ताध्या तुण्डिकेरी मता तु । (सु.नि. 16/44)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोक वनौषधियों की विश्वसनीयता और भावी शोधकार्य

डा० सुधांशु कुमार जैन, पी.एच.डी.

लोक वनौषधियों की विश्वसनीयता तथा उपयोगिता पर पिछले कुछ दशकों में प्रायः ही प्रश्न चिन्ह लगते रहे हैं। अब यह प्रवृत्ति कुछ कम हुई है । प्रश्न उठना स्वाभाविक था, क्योंकि सामान्य जनता में ग्राह्य तथा अनेक पीढ़ियों के व्यक्तिगत अनुभव के अतिरिक्त, विश्वसनीयता सिद्ध करने के जो रासायनिक विश्लेषण, प्रयोगशालाओं में परीक्षण आदि के मापदण्ड हैं, लोकवनौषधियों उन्हें बिरले ही संतुष्ट कर पाती थीं । अब, एक ओर तो पश्चिमी शोधकर्त्ताओं द्वारा भी यह माना जाने लगा है कि समूचे पौधे या उसके किसी अंग विशेष को प्रयोग करने पर जो गुण दिखते हैं, वे पौधे से प्राप्त रासायनिक तत्वों में अलग से भी विद्यमान हों, आवश्यक नहीं है तथा दूसरी ओर पश्चिमी कम्पनियों द्वारा एक के बाद एक लोकवनौषधि में वर्णित पौधे (हल्दी, नीम) को अपनी बौद्धिक सम्पदा के स्वामित्व के दायरे में लाने से इस ज्ञान के प्रति आस्था और जागरूकता बढ़ी है । अतः लोकवनौषधियों की विश्वसनीयता दर्शाने हेतु नाना प्रकार के सुझाव आये हैं । सामान्यतः सांख्यिकी और आंकड़ों के आधार पर बनाये सुझाव अधिक मान्य होते हैं, किन्तु लोकपरम्पराओं, विशेषतः लोकवनौषधियों पर मौलिक शोध करने वाले जानते हैं कि वनों या दूर बीहड़ स्थानों में बसे प्रायः अशिक्षित समाज के बीच आंकड़ें इकट्ठा करना अव्यावहारिक एवं असंभव-सा है।

फिर भी हमने लोकवनस्पति पर प्रकाशित साहित्य में संदर्भों की संख्या के आधार पर अध्ययन करने का प्रयत्न किया है । यह जानने की चेष्टा की कि कौन-सी वनौषधियां ऐसी हैं जिनके प्रयोग पर सूचना (संदर्भ) मात्र एक स्थान, या एक जनजाति से न होकर, उनका प्रयोग दो या अधिक जनजातियों में तथा भिन्न दो या अधिक क्षेत्रों अथवा प्रदेशों में प्रचलित पाया गया ।

जनजातियों अथवा/तथा क्षेत्रों पर प्रकाशित संदर्भों की संख्या 2,3,4 या अधिक तथा क्षेत्रों की निकटता, अथवा दूरी को ध्यान में रखते हुए, विश्वसनीयता की श्रेणियां निम्न रूप से नियत की गईं और 1,2,3,4 तथा 5 अंक दिये गये ।

प्रकाशित संदर्भों में सूचना/रिपोर्ट	अंक
एक ही स्थान से दो रिपोर्ट	1
एक ही प्रांत से अथवा निकटवर्ती दो क्षेत्रों से दो रिपोर्ट	2
दो निकटवर्ती प्रांतों से, किन्तु भिन्नजन जातियों से दो से अधिक रिपोर्ट	3
दूर स्थित प्रांतों से तथा भिन्न जनजातियों से दो रिपोर्ट	4
दूर स्थित प्रांतों/क्षेत्रों से तथा साथ ही भिन्न जनजातियों से दो से अधिक रिपोर्ट	5

साहित्य के अध्ययन के बाद अनेक लोकवनौषधियों को अंक दिये गये । यह पाया गया कि छांटी हुई दस औषधियों (वनस्पतियों) में से कौन-सी ऐसी हैं, जिन्हें आयुर्वेद अथवा अन्य भारतीय चिकित्सा पद्धति में सम्मिलित किया जा चुका है । उन्हें तारांकित (*) किया गया है । यह दृष्टांत नीचे दिये हैं । पौधों के हिन्दी नाम, वैज्ञानिक (लैटिन) नाम तथा उपयोग और उन पर आधारि अंक दर्शाये हैं :- (नामों का लिप्यांतरण अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर किया गया है - जैन आदि 2000)

1. आंवला (फील्लाथुस एम्बलिका Phyllanthus emblica)

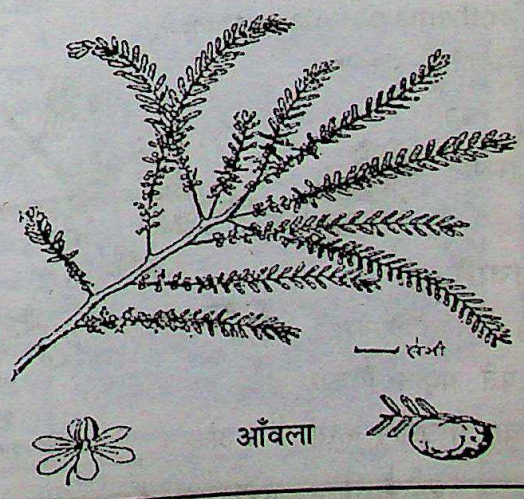

ए-26 माल एवेन्यू कॉलोनी, लखनऊ-226 001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो संदर्भ यह दर्शाते हैं कि जनजातियां उत्तर प्रदेश में आंवले के पत्ते तथा दूरस्थित असम एवं अरूणाचल में इसके फल मधुमेह के उपचार में प्रयोग करती हैं । अंक-4 ।

2. इंद्रजन / कुरची (होलार्हेना आंटीडीसेंटेरिका, Holarrhena antidysenterica)

पांच संदर्भ यह बताते हैं कि उत्तर प्रदेश एवं राजस्थान की जनजातियां तथा बिहार की संताल और असूर जातियां पौधे की छाल मलेरिया ज्वर में प्रयोग करती हैं । अंक 5

3. कालीपहाड़ (सीस्याम्पेलॉस पारेइरा, Cissampelos pareira)

इस बात पर कम से कम तीन संदर्भ हैं कि जनजातियां राजस्थान एवं दूर स्थित असम में पत्ते तथा छत्तीसगढ़ प्रांत के सरगुजा जनपद में मूल यकृत विकार (पीलिया आदि) में प्रयोग करती हैं । अंक 5

*** 4. चित्रक (प्लुम्बागो ज़ेयलानिकुम, Plumbago Zeylanicum)**

तीन संदर्भ दर्शाते हैं कि पौधे की जड़ गर्भनिरोधक के रूप में संताल जनजाति द्वारा बिहार में तथा दूर स्थित असम में भी प्रयोग की जाती है । अंक 5

*** 5. विषखपड़ा (ट्रिआंथेमा पोर्टूलाकास्ट्रम, Trianthema portulacastrum)**

दो संदर्भों से ज्ञात होता है कि राजस्थान म जनजातियां मूल और आंध्रप्रदेश में पत्ते यकृत विकार के उपचार में प्रयोग करती हैं । अंक 4

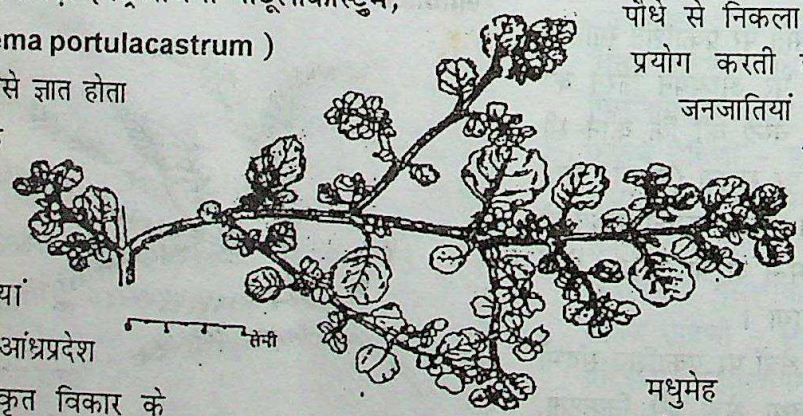

2. विषखपड़ा

*** 6. भृंगराज (एक्लिप्टा प्रोस्ट्रेटा, Eclipta prostrata)**

पांच संदर्भ बताते हैं कि जनजातियां उत्तरांचल में मूल, राजस्थान में पत्ते तथा पौधे का तैल और गुजरात एवं तामिलनाडू (इरूला जनजाति) में पत्ते कुष्ठ रोग के उपचार में प्रयोग करती हैं । अंक 5

7. लटजीरा / अपामार्ग (आचीरांथेस आस्पेरा Achyranthes aspera)

चार संदर्भ बताते हैं कि उत्तरप्रदेश में नेपाल सीमा के निकटवर्त्ती क्षेत्र में बसी थारु जनजाति तथा बिहार व दूर स्थित असम और अरुणाचल की जनजातियां पौधे की जड़ गर्भ निरोधक के रूप में प्रयोग करती हैं । अंक 5

8. सफेद आक (कालोट्रोपिल गीगांटेआ, Calotropis gigartex)

दो संदर्भ बताते हैं कि बिहार में बीज और दूरस्थित मेघालय में खासी तथा जैंतिया जनजातियां पौधे गर्भनिरोध हेतु प्रयोग करती हैं । अंक 4

*** 9. सिरिस (आल्बीजिआ लेब्बेक, Alpizzia Lebbeck)**

तीन संदर्भ बताते हैं कि उत्तरांचल तथा मध्यप्रदेश की जनजातियां इस वृक्ष का बीज अर्श के उपचार में प्रयोग करती हैं । अंक 5

10. सेहुंड (एडफोर्बिआ लीगुलारिआ, Euphorbia ligularia)

दो संदर्भ बताते हैं कि उत्तरी भारत की जनजातियां पौधे से निकला दूध-सा पदार्थ यकृत विकार में प्रयोग करती हैं, जबकि दूरस्थित असम की जनजातियां स्तंभ प्रयोग करती हैं । अंक 4

रोग के अनुसार पौधों के नाम :

अर्श : सिरिस
कुष्ठ : भृंगराज
गर्भ निरोधक : चित्रक, लटजीरा, आक
मधुमेह : आंवला
मलेरिया : इंद्रजव
यकृत विकार : काली पहाड़, विषखपड़ा, सेहुंड

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चर्चा

औषधीय पौधों पर अनेक वैज्ञानिक आधुनिक मापदंडों से रासायनिक विश्लेषण तथा अन्य परिणाम करते हैं। प्राय: यह पाया गया कि जिन पौधों को जनजातियां प्रचिन समय से प्रयोग करती आ रही हैं, उनमें सफलता का प्रतिशत अधिक होता है। लखनऊ की केन्द्रीय औषध अनुसंधान संस्थान में भी यही तथ्य निकला। उक्त वर्णित दस लोकवनौषधियों को 4 अथवा 5 अंक की श्रेणी में रखा गया। इनमें से चार (नं० 4, 5, 6, 9) का उल्लेख भारतीय चिकित्सा पद्धति में भी है। यह अपेक्षा की जाती है कि शेष छ: को भी परीक्षणों द्वारा परखा जाये। उनमें उपयोगी तत्व होने की संभावना बहुत है।

साथ ही, जिन शोधकर्ताओं (वनस्पतिज्ञ अथवा आयुर्वेद के स्नातक अथवा चिकित्सक) को वनौषधियों पर साहित्य उपलब्ध है, अथवा ऐसे साहित्य तक पहुंचने की सुविधा है, वे अधिकाधिक पौधों को उक्तवर्णित ढंग से कसौटी पर परखें, उन्हें अंक दें। शोध के लिए अच्छी सामग्री मिलेगी। लोकवनौषधियों की सूची बनाने हेतु संदर्भ में दिये कोश (जैन' 99) से सहायता लें, सैकड़ों पौधे एक ही रोग हेतु अनेक प्रांतों और जनजातियों में प्रयोग होने के संदर्भ मिलेंगे। मूल संदर्भ देखना आवश्यक होगा, क्योंकि जनजाति, क्षेत्र, स्थान, उपयोग की विधि आदि पर सूचना वहीं मिलने की संभावना है। कोश में दिये लगभग 300 संदर्भों की प्रतिलिपियां लोकजैवविज्ञान संस्थान (Institute of Ethnobiology) के पुस्तकालय में मिलने की पूरी संभावना है। (यह संस्थान लखनऊ से स्थानान्तरित होकर अब वनस्पति विभाग, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर, म०प्र० - 474011 में है।)

आशा है कि भारत की धनी जैवविविधता और लोकवनौषधियों की परंपरा का जनमानस के स्वास्थ्य हेतु अधिकाधिक सदुपयोग करने में शोधकर्त्ता रुचि लेंगे।

संदर्भ :-

Jain, S.K. 1991. Dictionary of Indian Folkmedicine & Ethnobotany (Deep Pub. B-1/118 II floor Paschimvihar, New Delhi - 110063)

जैन सुधांशु कुमार, सविता त्रिपाठी, वेद प्रकाश एवं सुमिता श्रीवास्तव - 2002, वनस्पति शब्दकोश (उपयोगी पौधों का हिन्दी - लैटिन - अंग्रेजी शब्दकोश) (साइंटिफिक पब्लिशर्स, पो०बा० 91, जोधपुर - 342001)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वसंतकुसुमाकर रस

वैद्य रमण वेकरे

रसशास्त्र के दो उद्देश्य शास्त्रों में वर्णित है :- (1) लोहवाद (2) देहवाद ।

इनमें से लोहवाद, अर्थात् निकृष्ट धातुओं को पारद की सहायता से उत्कृष्ट धातुओं में परिवर्तित करना यह उद्दिष्ट पीछे रह गया । किन्तु देहवाद की प्रगति होती गयी । वृद्धों को नवयौवन प्राप्त कराना, या अकालग्रस्त वृद्धत्व दूर करना यह कार्य रसायन औषधियों के द्वारा सम्पन्न हुआ ।

रसशास्त्र के अनेक मौलिक रसायनों में से एक है -

'वसन्तकुसुमाकर रस'

काल प्रभाव से शिशिर ऋतु में निष्पर्ण हुये वृक्ष वसंत ऋतु में पुनः पल्लवित हो जाते हैं । उसी प्रकार धातुवृद्धि करके मनुष्य को पुनः यौवन प्राप्त करा देनेवाले इस कल्प का 'वसन्तकुसुमाकर' यह नाम निश्चित ही सार्थक है ।

संदर्भ :- वसन्तकुसुमाकर इस नाम से पाँच भिन्न पाठ प्राप्त हुये । इनमे से निम्नोक्त पाठ अधिक प्रचलित हैं :-

"द्रवो भागौ हेमभूतेश्च गगनं चापि तत्समम् ।
लोहस्य च त्रयो भागाश्चत्वारो रसभस्मनः ।
वंगभस्म विभागं स्यात् सर्वमेकत्र कारयेत् ।
प्रवालं मौक्तिकं चैव ररसाम्येन योजयेत् ।
भावना गव्यदुग्धेन इक्षुवासारसेन च ।
हरिद्रा वारिजेनापि मोचकंदरसेन च ।
शतपत्ररसेनैव मालत्या कुसुमेन च ।
उशीरद्रव्य नीरेण सप्त सप्त च संख्यया ।
पश्चान्मृगमदाभाव्यं सुसिद्धो रसराड् भवेत् ।
कुसुमाकरविख्यातो वसंतपदपूर्वकः ॥

रसरत्नसमुच्चय

क्र०	घटकद्रव्य-भस्म	प्रमाण	भावनाद्रव्य	संदर्भ
1.	प्रवाल, पारद, मुक्ता, अभ्रक लोह, नाग, वंग, रौप्य, सुवर्ण- भस्म	4:4:4:4 3:3:3 2:2	वासा, हरिद्रा, ईक्षुरस, कमलपुष्प, मालतीपुष्प, दूध, कदलीकन्द कस्तूरीहिम, चन्दनफाण्ट	र.चं., र.यो.सा. 423
2.	प्रवाल, पारद, मुक्ता लोह, वंग, अभ्रक, रौप्य, सुवर्ण भस्म	4:4:4 3:3 2:2:2	वासा, हरिद्रा, ईक्षुरस, कमलपुष्प, मालतीपुष्प, दूध, कदलीकन्द, कस्तूरी हिम, उशीरद्वय, कुसुम	र.रस.समु.
3.	पारद, अभ्रक, सुवर्ण कान्तलोह, रजत, प्रवाल, मुक्ता, नाग, वंग भस्म	1:1:1 1:1 ½:½:½:½	कस्तूरी, जातीपुष्प, कोकिलाक्ष, शाल्मली आर्द्रक, गान्धारि, खर्जूर, कदली, द्राक्षा केतकी, मधुयष्टि, मधु, क्षीर, ईक्षुरस, वाराहीकन्द इ०	र.यो.सा. 424
4.	स्वर्ण, रजत, प्रवाल वज्र, वैडूर्य, मुक्ता, अभ्रक, लोह, पारद, वंग, नील, वैक्रान्त नाग भस्म	1:1:1 1:1:1 1:1 2:2:2:2:2	इक्षुगण, शतपत्र, मालती कुसुम, कस्तूरी	र.यो.सा. 425
5.	स्वर्ण, रजत, वत्सनाभ, वंग, मुक्ता, विद्रुम, लोह	1:1:1 1:1:1:1	शतपत्र, कदली, कमल, हरिद्रा जातिका, कस्तूरी इ.	र.यो.सा. 426

विभाग प्रमुख, रसशास्त्र एवं भैषज्यकल्पना विभाग, श्री सप्तश्रृंगी आयुर्वेद महाविद्यालय, हीरावाड़ी, पंचवटी, नासिक - 422003 (महाराष्ट्र)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्रव्यगुणात्मक अध्ययन (पाठ क्र०-1)

क्र०	द्रव्य	रस	वीर्य	विपाक	दोषघ्नता	गुण	कर्म/रोगाधिकार
1.	प्रवाल भस्म	मधुर, अम्ल कषाय	शीत	मधुर	त्रिदोषघ्न	स्निग्ध,गुरू	रसायन, चक्षुष्य, क्षय, रक्तपित्त,श्वास, ज्वर, उन्माद, मूत्रविकार
2.	पारद भस्म रससिन्दूर	षड्रस	उष्ण	मधुर	कफवात	लघु	योगवाही, रसायन
3.	मुक्ता	मधुर कषाय	शीत	मधुर	पित्त, वातकफ	स्निग्ध	रसायन, वृष्य, मज्जावर्धक, ओज-ओजवर्धक, दाहशामक, मूत्ररोग, रक्तप्रसादक, रक्तस्तंभक
4.	अभ्रक	कषाय मधुर	शीत	मधुर	वातपित्त	स्निग्ध	सप्तधातु/ओजोवर्धक, रसायन, वृष्य मानसरोग, दौर्बल्य, क्षय, पाण्डु श्वासकास, प्रमेह
5.	लोहभस्म	तिक्त, मधुर कषाय	शीत	कटु	कफपित्त	रूक्ष, बल्य, क्लेदहर	रक्तवर्धक, रसायन, पाण्डु, प्रमेह अर्श ग्रहणी
6.	नागभस्म	तिक्त, मधुर	उष्ण	मधुर	कफवात	स्निग्ध	शुक्रवर्धक, मधुमेह, क्षय
7.	वंगभस्म	तिक्त, लवण	उष्ण	कटु	कफवात	रूक्ष	शुक्रवर्धक, Sperm count एवं Sperm motility बढ़ाना; प्रमेह, क्षय
8.	रौप्यभस्म	अम्ल, कषाय मधुर	शीत	मधुर	वातपित्त	सर, स्निग्ध गुरु,वात-वाहिनी क्षोभहर	रक्तकणवर्धक, Sickle-cell-anaemia में उपयुक्त, मेध्य, वातवाहिनी शामक, उन्माद, अपस्मार, पाण्डु, नेत्ररोग मज्जा + शुक्रधातुवर्धक
9.	सुवर्णभस्म	मधुर, कषाय तिक्त	शीत	मधुर	वातपित्त	स्निग्ध गुरु	वृष्य, ह्रद्य, नेत्र्य, क्षय, रसायन, विषघ्न बल्य, ओजवर्धक, प्रमेह, श्वास, कास मनोविकार
10.	वासा	तिक्त, कषाय	शीत	कटु	कफपित्त	स्वेदनजन स्तंभक	रक्तस्तंभक, रक्तपित्त, क्षय, श्वास, कास, दुर्गन्धित श्वास ।
11.	हरिद्रा	कटु, तिक्त	उष्ण	कटु	कफपित्त	रूक्ष	प्रमेह, त्वग्रोग, दुष्टव्रण, कुष्ठ, यकृद्रोग, वर्ण्य, क्लेदहर
12.	ईक्षु	मधुर	शीत	मधुर	पित्त	गुरु, स्निग्ध सर	बृंहण, मूत्रल, वृष्य, रक्तपित्त रक्तस्तंभन, तृष्णा
13.	कमलपुष्प	मधुर, तिक्त कषाय	शीत	मधुर	कफपित्त	शीत	रक्तस्तंभक, वृष्य, मूत्रल, ह्रद्य, दाहशामक, रक्तपित्त, अत्यार्त्तव तृष्णाहर, रक्तार्श, शोध
14.	मालतीपुष्प	कषाय, तिक्त	शीत	मधुर	कफपित्त	शीत	सुगंधी, हृद्य, आनंदवर्धक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्र०	द्रव्य	रस	वीर्य	विपाक	दोषघ्नता	गुण	कर्म/रोगाधिकार
15.	गोदुग्ध	मधुर	शीत	मधुर	वातपित्त	स्निग्ध, सर मृदु:पिच्छिल गुरु, मंद	रसायन, जीवनीय, बृंहण, वृष्य, ओजो वर्धक, रक्तपित्त, जीर्णज्वर, श्वास, कास, मूत्रकृच्छ्र, मेध्य
16.	कदलीकन्द	कषाय मधुर	शीत		कफपित्त		रक्तपित्तहर, वृष्य, रक्तस्तंभक मूत्रल, अश्मरी
17.	कस्तूरी	तिक्त, कटु लवण	उष्ण	कटु	कफवात	तीक्ष्ण	ओजोवर्धक, बल्य, वृष्य, हृद्य, स्वेदघ्न इस कल्प के अन्य शीतल एवं स्तंभक द्रव्यों के कार्य नियंत्रित करना।
18.	चंदन (श्वेत)	तिक्त	शीत	मधुर	पित्तकफ	रूक्ष	दाह, तृषाशामक, रक्तस्तंभक, रक्तपित्त, ज्वर, रक्तप्रदर
19.	वसंत-कुसुमाकर	मधुर कषाय, तिक्त	शीत	मधुर	त्रिदोषघ्न	गुरु, सर स्निग्ध	बृंहण, बल्य, रक्तप्रसादन सप्तधातुवर्धक, रसायन, वृष्य रक्तपित्तशामक

* निर्मित कल्प का स्वरूप -

स्पर्श - श्लक्षण
रूप - कृष्णाभ रक्त
रस - मधुर, कषाय, तिक्त
गंध - उग्रगंधी

* मात्रा - 30mg - 120mg
अनुपान - मधु आदि
सेवनकाल - रसायनकाले
कालमर्यादा - 4 दिन से 40 दिन तक/यथावश्यक

* दोषधातुमलात्मक अध्ययन

दोष - वात - रूक्ष, लघु, चल, विशद
पित्त - तीक्ष्ण, उष्ण, लघु, विस्भं, द्रवम्।
कफ - मंद, स्थिर।

श्वातु - रस - धात्वाग्निवर्धन
रक्त - रक्तप्रसादन, रक्तपित्तघ्न, रक्तस्तंभक (प्रवाल, मुक्ता, वासा, हरिद्रा, ईक्षु, कमल)
मांस - मांसवर्धन (गुरू, सर, स्निग्धगुण)।
मेद - मेदवर्धन (पिच्छिलगुण, मधुरविपाक, शीतवीर्य) मेहघ्न (अभ्रक, सुवर्ण, कांतलोह, नाग, वंग, हरिद्रा)
अस्थि - वातशामक
मज्जा - कफवर्धक (गुण, वीर्य, विपाक)
शुक्र - शुक्रल (गुण - मधुर विपाक, शीतवीर्य), कर्मसामान्य (मुक्ता, अभ्रक, सुवर्ण, नाग, वंग, इक्षु, कमल, गोदुग्ध, कदलीकन्द), शुक्राणुवृद्धि एवं शुक्राणुगतिवर्धक
मल-पुरीष -पुरीषवर्धन, मलरंजन
मूत्र - मूत्रल, मूत्रविरेचनीय, मूत्रदाहहर
स्वेद - स्वेददौर्गन्ध्यहर (मालती इ.)

अवयवगाभित्व - महास्रोतस, रसादिसप्तधातुओं के हृदय, बस्ति, शिर: यकृत्, प्लीहा, वृषण।
रोगमार्ग - बाह्य, आभ्यन्तर एवं मध्यममार्ग।

बसंतकुसुमाकर रस द्वारा निम्न प्रमुख व्याधियों में संप्राप्तिभेद

1. क्षय

संप्राप्ति - कफप्रधानदोष→रसवहस्रोताऽवरोध→ उत्तरोत्तर धातु→स्रोताऽवरोध→क्षय
किंवा अतिमैथुन-शुक्रक्षय→पूर्वपूर्वधातुक्षय→क्षय
संप्राप्तिभेद - वसंतकुसुमाकररस→धात्वाग्निवर्धन→ कफशोषक→ स्रोतोसंगहरण→ स्रोतोरोध नहीं→उत्तरोत्तर धातुओं का केदारकुल्यान्याय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से पोषण→धातुपुष्टि

वसंतकुसुमारक रस→सद्यः शुक्रकर द्रव्य (दुग्ध इ.)शुक्राग्निवर्धन → शुक्रवर्धन (कर्म-सामान्यात्) → पूर्व पूर्व धात्वाग्निवर्धन → धातुपुष्टि → उपशय

क्षय - अनुलोम एवं प्रतिलोम क्षय में उपयुक्त/ज्वर, दाह, शुष्ककास आदि वातपित्त प्रधान लक्षणों में उपयुक्त । आधुनिक Anti T.B. औषधियों के दुष्परिणाम दूर कर रुग्णों को बल देने में उपयुक्त ।

प्रमेह

संप्राप्ति - बस्तिप्रदेशस्य कफ/पित्त → मेद, मांस, जलीयांश दुष्टि → कफज/पित्तज प्रमेह → कफपित्तक्षीणता → वायु, वसा, मज्जा, ओज, लसिकादुष्टि → बस्तिगामी→ प्रमेह

संप्राप्तिभेद - बसंतकुसुमाकररस → कफपित्तनाशक → जलीयधातुशोषण (कषायतिक्तरसत्वात्) → सर्वधात्वाग्निवर्धन → आमपाचन→ धातुगत जलीयांश शोषण → वातनिग्रहण मूत्रवह-स्रोतोदुष्टिहर उपशय

विशेषतः वातज, पित्तज प्रमेह में उपयुक्त । वातप्रकोप से ओज, मांस, मज्जा, शुक्र, वसा, लसिका इन जलीयधातुओं का क्षय होता है, ऐसे अपतर्पणोत्थ प्रमेह में उपयुक्त । इससे धातुपुष्टि होती है परन्तु कफ, मेद एवं मेद की वृद्धि नहीं होती ।

रक्तपित्त

संप्राप्ति- प्रकुपित पित्त → बहिर्गामी → रक्तवहस्त्रोतस में स्थित → सामपित्त → स्रोतोरोध → रक्तदुष्टि → रक्तपित्तसम्मूर्च्छना → धातुओं का स्वेदन, क्षरण → धातुगत द्रवांश रक्तगत होना → रक्तवृद्धि → रक्तपित्त ।

संप्राप्तिभेद - बसंतकुसुमाकररस → पित्तशामक (गुण, रस, वीर्य, विपाक से)→ अग्निवर्धक→ निरामपित्त → स्रोतोदुष्टि दूर होती है → रक्त + पित्तासम्मूर्च्छना विघटन (शीतवीर्यत्वात्) → रक्तस्तंभन (कषायरस, मधुरविपाक, शीतवीर्य) → उपशय

हृद्रोग

हृद्रव, तीव्रनाड़ीगति कम करता है, क्रियात्मक (Functional) विकृति में उपयुक्त । ज्वरगत पित्तप्रकोप से होनेवाला हृदयशैथिल्य दूर करता है, निम्नरक्तचाप के लक्षण दूर करता है, रक्तशोधक एवं धात्वाग्निवर्धन कर्म से रक्तगत विषाक्तता दूर करता है ।

* व्याधि	अनुपान
क्षय (प्रतिलोम)	- मधु, त्रिकटुचूर्ण
प्रमेह	- मधु, शर्करा, हरिद्रा
रक्तपित्त	- शर्करा, श्वेतचंदन, फाण्ट, वासास्वरस, शर्करा, मधु
अम्लपित्त	- शतावरीस्वरस, शर्करा, मधु
ओजःक्षय	- घृत, मधु, शर्करा, पंचामृत
बल्य, वीर्यवृद्धि	- दालचीनी
सर्वांगदाह	- श्वेतचन्दन चूर्ण, शर्करा
वमन	- शंखपुष्पीस्वरस
अत्यधिक रजःस्राव	- प्रवालपिष्टी
वृद्धावस्थाजन्य इन्द्रियदौर्बल्य	- अभ्रकभस्म
प्रमेहपिटिका	- शिलाजित
अतिव्यवायजन्य वातप्रकोप	- शिलाजित
जीर्ण सर्वाङ्गशोथ	- गोक्षुरादिक्वाथ
प्रदर	- तण्डुलोदक

निषिद्ध रुग्ण - कामोत्तेजना अधिक होनेवाले रुग्णों में निषिद्ध । अन्यथा कामोत्तेजना अधिक तीव्र होकर शुक्रक्षय बढ़ेगा ।

सर्वधात्वाग्नियों का वर्धन करने से अनुलोम एवं प्रतिलोम क्षय में उपयुक्त; विशेषतः पित्त के उष्ण, तीक्ष्ण, द्रव गुण कम करने से रक्तपित्त, अम्लपित्त, सर्वांगदाह इन व्याधियों में उपयुक्त, कर्मसामान्य से ओजोवर्धन कार्य होता है । लाभोपायो हि शस्तानां रसादीनां रसायनम् । इस सूत्र की पूर्त्ति करनेवाला, आबालवृद्ध, प्रसूता, गर्भिणी इन सभी को उपयुक्त 'बसंतकुसुमाकर' यह श्रेष्ठ रसायन है ।

संदर्भ :-

रसयोगसागर :- वै० हरिप्रपन्न शर्मा
आयुर्वेद सार संग्रह :- वैद्यनाथ प्रकाशन, नागपुर
रसतंत्रसार एवं सिद्धप्रयोग संग्रह :- कृष्णगोपालकालेडा, अजमेर
सिद्धौषधिसंग्रह :- वै० फडके
रसौषधिनिर्माण :- वै० कुलकर्णी
माधवनिदान टीका :- वै० उपाध्याय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अम्लपित्त : एसीडिटी : कारण और निवारण

वैद्य पं० परमानंद शर्मा नंद, एम.ए. आयुर्वेदाचार्य

अम्लपित्त वर्तमान युग का तेजी से बढ़ने वाला रोग हो रहा है । गांवों की तुलना में शहरी क्षेत्र में इसके रोगी ज्यादा हैं । अम्लपित्त का सरल और शाब्दिक अर्थ है - खट्टा पित्त । इसमें रोगी की छाती में प्राय: जलन सी होती है और खट्टी डकारें आती हैं । कतिपय मामलों में कड़वी डकारें भी देखी गई हैं । वास्तव में इसे कोई स्वतंत्र रोग न समझ कर अजीर्ण, यकृत और आंतों के रोगों की उपस्थिति का लक्षण समझना चाहिए । भोजन के साथ और भोजन के तत्काल बाद पानी पीना इसका मुख्य कारण मुझे अपने रोगियों में दिखाई दिया है । केवल इस एक कारण को दूर करने पर पचास प्रतिशत रोगी बिना किसी विशेष दवा के भी अपने आपको ठीक महसूस करते हैं । वास्तव में यदि भोजन को धीरे-धीरे चबाया जाये, कुछ तरल पदार्थ (दही, दूध, सूप, कढ़ी आदि) भोजन के साथ हो तो पानी की आवश्यकता ही नहीं पड़ती । इसका दूसरा बड़ा कारण खट्टे पदार्थों का विशेषकर अचार, इमली, दही आदि का अधिक सेवन है । कतिपय मामलों में दांतों की खराबी भी इस रोग के लिए जिम्मेदार देखी गई है । दांतों की सड़न के अंश जब भोजन के साथ आमाशय में चले जाते हैं तो इस रोग को जन्म देते हैं ।

अम्लपित्त के रोगी को पसीना ज्यादा आता है, दिल में घबराहट होती है, वमन हो जाने पर आराम महसूस होता है, कभी-कभी वमन में हरा-पीला सा पित्त भी निकलता है और जीभ प्राय: सफेद होती है । प्राय: रोगी को पूरी नींद नहीं आती लेकिन कफ प्रधान वाले अम्लपित्त रोगी हर वक्त उंघते भी देखे गये हैं । जब रोग पुराना हो जाता है तो रोगी की टट्टी में यदा-कदा खून भी देखा गया है । कतिपय रोगी चींटी काटने की या खुजली होने की शिकायत करते हैं । अम्लपित्त के पुराने रोगी के लक्षण प्राय: क्षय रोगी से भी मिलते-जुलते बन जाते हैं । अत: सावधानी से निदान आवश्यक है ।

भोजन के अंत में 10 ग्राम से 20 ग्राम तक की मात्रा में पुराना गुड़ खाने से इस रोग में आराम देखा गया है ।

आज से लगभग 25 वर्ष पूर्व मेरे पिताजी स्व० वैद्य रामरतन जी महाराज इस प्रकार के रोगियों को केवल छोटी पीपर का चूर्ण + गिलोय सत्व से ठीक करते । वे इसे सुबह-शाम शहद से चटवाते । तेल, खटाई पूरी तरह से रहते । मैं उन्हें शास्त्रीय योग के लिए कहता लेकिन वे उपर्युक्त योग में एवं चिकित्सा में कभी असफल नहीं हुये ।

मुनक्का दाख 50 ग्राम + सौंफ 25 ग्राम । दोनों को कूटकर 200 ग्राम पानी में रात को भिगो दें । प्रातः मसलकर छान लें और इसमें 10 ग्राम चीनी मिलाकर पिलावें । तेज सरदियों में इसका प्रयोग कम करना चाहिए । प्रारम्भ में इसकी मात्रा आधी या आधी से भी कम देनी चाहिए । धीरे-धीरे बढ़ाकर उपर्युक्त मात्रा कर ली जावे ।

नित्य एक तोले चूने के निथरे पानी से भी अम्लपित्त में लाभ होता है । 10 से 15 ग्राम के बीच चूने के पत्थर को लगभग एक लीटर जल में भिगो दें । बाद में 24 घंटे में वह जल धीरे-धीरे पी लें । केवल निथरा हुआ पानी ही पीना है, चूने को हिलाना नहीं है । आवश्यक चूना पेंदे में पड़ा रह जायेगा । भिगोने के लिए मिट्टी या कांच के बरतन का प्रयोग करें ।

मुलहठी के चूर्ण को मधु तथा गो घृत में मिलाकर चाटने से अम्लपित्त में लाभ होता है । चूर्ण की मात्रा में 3 से 5 ग्राम, शहद 10 ग्राम, घी 5 ग्राम । उसे शहद + घी में शंका करे तो केवल शहद में चटा ऊपर 100 ग्राम मलाईदार मीठा दूध पिला देवें ।

केवल गिलोयसत्व को अपामार्ग के क्वाथ से देना हितकर है । पुराने से पुराने और जटिल अम्लपित्त में स्वर्ण सूतशेखर रस सर्वोत्तम है । मैंने स्वयं आजमाया है । महंगा अवश्य है ।

नये रोग में अविपत्तिकर चूर्ण खूब बरता जाता है । कतिपय रोगी शिकायत करते हैं कि हमें टट्टी पतली आती है, दस्त लगते हैं । ऐसी स्थिति में चूर्ण की आधी मात्रा भोजन के आधा घंटा पूर्व और आधा मात्रा भोजन के आधा घंटा बाद पानी के बजाय शहद से देनी चाहिए ।

कतिपय वैद्य इस रोग में केवल बैद्यनाथ का अम्लपित्तांतक योग की 2 गोली दिन में 3 बार नारियल जल से देते हैं । रोगी को ठीक होते देखा गया है । इस रोग में पथ्य में मैंने एक विशेष बात देखी - अरहर की दाल कतिपय रोगियों को माफिक नहीं आती, मूंग छिलका लाभदायक रहती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद शिक्षण-प्रशिक्षण की एकरूपता : आयुर्वेदीय तकनीकी शब्दावली के सन्दर्भ में

आचार्य राजकुमार जैन

हमारे देश में जब से आयुर्वेदीय शिक्षण पद्धति का प्रचलन हुआ है तब से आज तक अनेक उतार-चढ़ाव इस पद्धति में हमें देखने को मिले हैं । आयुर्वेदीय शिक्षा पद्धति के अतीत को जब देखते हैं तो आज के सन्दर्भ में वह हमें सर्वथा अप्रासंगिक प्रतीत होती है, किन्तु उस समय हमारा जो सामाजिक एवं पारिवारिक ढांचा था और जिस प्रकार की शैक्षिक पद्धति का प्रचलन था उस सन्दर्भ और परिप्रेक्ष्य में यदि देखा जाय तो तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु वह सर्वथा उपयुक्त थी । उस शिक्षा पद्धति ने आयुर्वेद जगत् को ऐसे विद्वानों की सौगात दी है कि जिससे सम्पूर्ण आयुर्वेद जगत आज भी गौरवान्वित है । उन विद्वानों ने अपने चिकित्सा कौशल से समाज को चमत्कृत करते हुए जनसामान्य एवं लोक का उपकार किया ही, अपनी विद्वता की ऐसी अमिट छाप आयुर्वेद जगत् पर छोड़ी जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न महत्वपूर्ण ग्रन्थ हमें उपलब्ध हुए और आज वे हमारे स्नातक एवं स्नाताकोत्तर पाठ्यक्रम में अध्ययन-अध्ययापन हेतु सम्मिलित हैं ।

समय परिवर्तनशील है । कालक्रम से समय में जो परिवर्तन हुआ उसका पर्याप्त प्रभाव हमारे सामाजिक परिवेश, विभिन्न परिस्थितियों तथा आयुर्वेद जगत पर पड़ा । परिणाम स्वरूप अपनी आवश्यकता एवं प्रादेशिक स्थिति के अनुरूप आयुर्वेद के शिक्षण हेतु प्रचलित पाठ्यक्रम में पर्याप्त भिन्नता बनी रही । कहीं ग्रन्थ प्रधान पाठ्यक्रम था तो कहीं विषय प्रधान । कहीं केवल आयुर्वेदाधारित पाठ्यक्रम चल रहा था तो कहीं आधुनिक चिकित्सा मिश्रित पाठ्यक्रम चला । उसके अपने-अपने सुपरिणाम या दुष्परिणाम आयुर्वेद जगत् के सम्मुख समय-समय पर आए। यह क्रम सन् 1975 तक चला । इस क्रम में तब बदलाव आया जब जनवरी 1976 में भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद् ने सम्पूर्ण देश में परिषद् द्वारा निर्मित पाठ्यक्रम प्रवृत्त किया और समस्त राज्य सरकारों, विश्वविद्यालयों, परीक्षा निकायों तथा निजी संस्थाओं को अपने-अपने पाठ्यक्रम बन्द कर केवल भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद द्वारा जारी पाठ्यक्रम लागू करने का निर्देश दिया । यद्यपि तत्काल प्रभाव से तो यह सम्भव नहीं हो पाया, किन्तु समय के साथ-साथ स्थितियां बदलीं और अन्ततः बाध्य होकर देश के समस्त प्रान्तों की सरकारें, विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों सभी को भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद् द्वारा जारी किए गए पाठ्यक्रम को अपनाना और लागू करना पड़ा । यद्यपि समय-समय पर उसमें भी परिवर्तन किए गए, तथापि यथावश्यक परिसंस्कारित रूप में वह पाठ्यक्रम आज सम्पूर्ण देश के समस्त आयुर्वेद महाविद्यालयों में लागू एवं संचालित है ।

यह है आयुर्वेद के शिक्षण-प्रशिक्षण और तदर्थ अपेक्षित पाठ्यक्रम की संक्षिप्त यात्रा । आज हम जिस पड़ाव पर पहुंचे हैं वहां हमें यह अनुभव हो रहा है कि हम आयुर्वेद की शिक्षण-प्रशिक्षण की एकरूपता को आयुर्वेदीय तकनीकी शब्दावली के विशेष सन्दर्भ में समीक्षा करें । इस सम्बन्ध में सब से पहला प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि इसकी आवश्यकता का अनुभव आज हमें क्यों हो रहा है ? या तो इसलिए कि आज छात्रों को तकनीकी शब्दावली और इसके अन्तर्गत समाविष्ट शब्दों का उनके विशिष्टार्थ सहित अपेक्षित ज्ञान नहीं है अथवा इसलिए कि वर्तमान में लागू या संचालित पाठ्यक्रम में उनके अध्ययन-अध्यापन की अपेक्षित व्यवस्था नहीं है । इस सम्बन्ध में एक जिज्ञासा या प्रश्न यह भी है कि आयुर्वेद के विभिन्न विषयान्तर्गत तकनीकी शब्दों को किन्हें माना जाय ? क्योंकि आज तक क्रमबद्ध रूप से आयुर्वेद के तकनीकी शब्दों का संकलन अथवा तकनीकी शब्दावली का निर्माण नहीं हुआ है । क्षमा करें, यदि हुआ हो तो मेरी जानकारी में नहीं है । अतः सर्वप्रथम आवश्यकता इस बात की है कि विभिन्न विषयों के तकनीकी शब्दों का संकलन अथवा तकनीकी शब्दावली का निर्माण किया जाय । तत्पश्चात् उन विषयों के विद्वानों की समिति द्वारा उन तकनीकी शब्दों के अर्थ-विशिष्टार्थ सुनिश्चित किए जावें । तत्पश्चात् अखिल भारतीय स्तर पर विद्वज्जनों द्वारा उसे अनुमोदित कराया जाकर उनके अध्ययनार्थ विभिन्न विषयों के अन्तर्गत पाठ्यक्रम में उसे सम्मिलित किया जाय ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसा कि समस्त विद्वज्जन भली-भांति इस तथ्य को जानते हैं कि भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद् द्वारा लागू एवं देश के समस्त आयुर्वेद महाविद्यालयों में संचालित आयुर्वेदाचार्य पाठ्यक्रम विषय प्रधान पाठ्यक्रम है और इस पाठ्यक्रम में चरक संहिता, सुश्रुत संहिता आदि ग्रंथों को मूलरूप में पढ़ाने की व्यवस्था को समाप्त कर दिया है । इसका प्रभावजन्य सुपरिणाम या दुष्परिणाम आपके समक्ष है । मैं इस विवाद में नहीं पड़ना चाहता । वैसे तो इसका समाधान करते हुए कहा जा रहा है कि चरक-संहिता एवं सुश्रुत संहिता के सम्पूर्ण प्रतिपाद्य विषय वर्तमान पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों के पाठ्यक्रमों के अन्तर्गत समाविष्ट कर दिए गए हैं, अत: संहिता ग्रंथों को मूल रूप से पढ़ाने की अनिवार्यता-बाध्यता अब नहीं रही है और सम्भवत: इसीलिए तथाकथित आयुर्वेदज्ञों को चरक संहिता-सुश्रुत संहिता आदि ग्रंथों को अपने पास रखने की बाध्यता भी अब नहीं रही है ।

अब कुछ विशेष तथ्यों एवं बिन्दुओं की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट करना चाहूंगा । जिन लोगों ने आद्योपान्त चरक संहिता का गम्भीरता से अध्ययन किया है । वे भली-भांति जानते हैं कि चरक संहिता के प्रत्येक स्थान और प्रत्येक स्थान के प्रत्येक अध्याय का महत्व है । इस सन्दर्भ में मैं चरक संहिता के विमान स्थान और विमान स्थान में विशेषत: अष्टम अध्याय की ओर आप लोगों का ध्यान आकृष्ट करना चाहूंगा । इसमें प्रतिपाद्य विषयों का अपना विशेष महत्व है । इस अध्याय में जो विषय प्रतिपादित किए गए हैं उनमें अनेक आयुर्वेदीय तकनीकी शब्दों का प्रयोग हुआ है । जब कोई ग्रन्थ लेखक या अनुवादकर्ता उन शब्दों का अर्थ या विशिष्टार्थ करता है तो उसमें उनकी अपनी दृष्टि होती है, जब कोई अध्यापक उन विषयों का विवेचन करता है तो उसमें उसकी अपनी दृष्टि होती है । परिणाम यह होता है कि शब्दविशेष का अर्थ करने में स्वमत प्रतिपादन को अधिक महत्व दिया जाता है और वह शब्द विशेष अपने प्रासंगिक अर्थ को खो देता है । यह स्थिति केवल वर्तमान में ही नहीं है महर्षि अग्निवेश के काल में भी थी । उस समय विषय विशेष पर आयोजित सम्भाषा परिषद या संगोष्ठी भाग लेने हेतु अनेक महर्षि गण सम्मिलित होते थे एक ही विषय पर अपना भिन्नमत या दृष्टिकोण प्रस्तु करते हुए विषय को विवादास्पद बना देते थे । तब श्रेष्ठ या मुनि प्रवर पुनर्वसु आत्रेय को उन्हें चेतावनी हुए पारस्परिक विवाद में नहीं पड़ते हुए उससे बचने परामर्श दिया जाता था । इसी प्रकार का एक प्रकरण अग्निवेशतंत्र के सूत्र स्थान में देखने को मिलता है निम्न प्रकार है :-

तथार्षीणां विवदतामुवाचेदं पुनर्वसु: ।
मैवं वोचत तत्वं हि दुष्प्रायं पक्षसंश्रयात् ॥
वादान् सम्प्रतिवादान् हि वदन्तो निश्चितानिव ।
पक्षान्तं नैव गच्छन्ति तिलपीडक वद्गतौ ॥
मुक्त्वैवं वादसङ्घट्टमध्यात्ममनुचिन्त्यताम् ।
नाविधूते तम: स्कन्धे ज्ञेये ज्ञानं प्रवर्तते ॥

– चरक संहिता, सूत्र स्थान 25/26-2

एतद्विध रूप से परस्पर विवाद में व्यस्त ऋषि से पुनर्वसु आत्रेय ने कहा-आप लोग इस प्रकार का विवा नहीं करें, क्योंकि अपने-अपने मत पक्ष का समर्थन क रहने से किसी तत्व निर्णय को प्राप्त करना अत्यन्त कठि है । वाद, उत्तर और प्रतिवाद प्रत्युत्तर को निश्चित सिद्ध की भांति कहते हुए पक्ष के अन्त या निर्णय तक कोल्हू के बैल की तरह घूमते हुए पहुंच पाना सम्भव नहीं है इसलिए वाद और प्रतिवाद के संघट्ट (टक्कर) को छोड़कर अध्यात्म निश्चित सिद्धान्त का अनुचिन्तन करना चाहिए क्योंकि जब तक खण्डन-मण्डन रूप अज्ञानान्धकार का नाश नहीं होता है तब तक ज्ञेय विषय में ज्ञान की प्रवृत्ति नहीं होती है ।

यहाँ मैं उपर्युक्त श्लोक में आए हुए तीन श की ओर अपका ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट क चाहूंगा-प्रथम श्लोक में तत्व, द्वितीय श्लोक में प और तृतीय श्लोक में अध्यात्म । इन तीनों शब्दों के से आप परिचित एवं सुविज्ञ हैं । किन्तु प्रस्तुत प्रसंग इनका अभिप्रेतार्थ वह नहीं है जो प्रचलितार्थ है । जहां मैं अपनी अल्प बुद्धि से समझ पाया हूँ - प्रथम श्लोक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शब्द और द्वितीय श्लोक के पक्षान्त शब्द का अर्थ निर्णय ग्रहण किया जाय तथा तृतीय श्लोक के अध्यात्म शब्द का अर्थ-निश्चित सिद्धान्त ग्रहण किया जाय । जैसा कि आप समस्त विद्वज्जन भली-भांति जानते हैं, महर्षि चरक ने प्रसंगोपात्त सिद्धान्त की बड़ी सटीक एवं समीचीन व्याख्या की है । यथा - "सिद्धान्तो नाम स य: परीक्षकै: बहुविधं परीक्ष्य हेतु भिश्च साधयित्वा स्थाप्यते निर्णय: । स चतुर्विध:- सर्वतंत्र सिद्धान्त:, प्रतितंत्र सिद्धान्त: अधिकरण सिद्धान्त: अभ्युपगम सिद्धान्त: ।" इसका आशय आप समझ गए होंगे, अत: इसके अधिक विस्तार में मैं नहीं जाना चाहता ।

आज के विचारणीय विषय में मुख्यत: दो बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित किया जाना अभीष्ट है । एक है - शिक्षण प्रशिक्षण की एकरूपता और दूसरा है तकनीकी शब्दावली । शिक्षण प्रशिक्षण के सम्बन्ध में मैं उपर्युक्त रूप से अपेक्षित प्रकाश डाल चुका हूँ । जहाँ तक तकनीकी शब्दावली की बात है, यह नवगठिन शब्द प्रतीत होता है । मैं सोचता हूँ कि आयुर्वेद के संहिता ग्रन्थों या पाठ्यक्रम में इस प्रकार के जो शब्द आए हैं जिन्हें तकनीकी शब्द माना जा सकता है उनके लिए यदि पारिभाषिक शब्द की संज्ञा दी जाय तो अधिक उपयुक्त होगा । विद्वज्जन इस पर विचार कर अपना निर्णय देवें ।

अन्त में मेरा सुझाव है कि जैसा कि पूर्व में कहा जा चुका है कि सर्व प्रथम विषयवार तकनीकी या पारिभाषिक शब्दों की सूची का निर्माण किया जाय । तत्पश्चात् उन विषयों के विद्वानों की समिति द्वारा जन तकनीकी या पारिभाषिक शब्दों के अर्थ-विशिष्टार्थ सुनिश्चित किए जावें । तत्पश्चात् अखिल भारतीय स्तर पर विद्वानों द्वारा अनुमोदित कराया जाकर सम्पूर्ण देश में उसे लागू किया जाय । यद्यपि यह एक श्रमसाध्य, व्यय साध्य और समय साध्य कार्य है, किन्तु हमारी लगन, निष्ठा, प्रबल इच्छा शक्ति और सार्थक प्रयास इसे सुसाध्य बना देंगे - इसमें कोई सन्देह नहीं है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शीत (हिम) दग्ध या शीतजन्य शोथ (CHILBLAINS)

वैद्य पी.एस.अंशुमान, एफ.सी.पी.एस.

परिचय

सभी चिकित्सकों के पास विभिन्न कारणों से उत्पन्न अनेक विकार युक्त रोगी चिकित्सार्थ आते रहते हैं। आयुर्वेद के चिकित्सकों के पास ऐसे सभी रुग्णों की आयुर्वेदानुसार चिकित्सा करने के अवसर आते रहते हैं। शीत जन्य शोथ किम्बा शीतदग्ध भी ऐसे ही विकारों में से एक है।

यह एक ऐसी विकृति है कि जिसके विवरण अत्यन्त सूत्रात्मक रूप से दिये गये हैं। अत: ऐसी स्थिति में चिकित्सकों को युक्तिपूर्वक चिकित्सा करनी पड़ती है।

शीत ऋतु में या शीत प्रदेशों में शीतजल, हिम, वायु, ओले आदि के स्पर्श या सम्पर्क के कारण यह विकृति होती कही गई है।

त्वचा की सारसँभाल रखने की दृष्टि से या सौंदर्य चिकित्सा की दृष्टि से या ठंडे प्रदेश या ऋतु में प्रवास या चढ़ाव जैसी प्रवृत्ति करने वालों के लिये भी इससे संबंधित मार्गदर्शन की आवश्यकता आती रहती है।

इसी उद्देश्य से शीतजन्य त्वक शोथ पर यहां कुछ आयुर्वेदीय संदर्भों को दृष्टि में रख कर विचार किया गया है जिससे इस विषम एवं विकार पर अधिकाधिक विचार कर कार्य किया जाना संभव हो सके।

हिमदग्ध या शीतजन्य शोथ (CHILBLAINS)

हिमोत्पत्ति आयुर्वेद साहित्य में अतिशीतगुणभूयिष्ट हिमादि की उत्पत्ति को वायु कोप के कारण माना गया है।

एक अन्य परिकल्पना के अनुसार बाह्य वातावरण में स्थित वायु, जल, विद्युत, अग्नि जैसे घटक हिम की उत्पत्ति के कारण माने गये हैं। यथा - 'जैसे दिव्य जल (अन्तरिक्ष) जल को वायु, अग्नि, विद्युत मिलकर कठोर (हिम या ओले के रूप में जमाकर) बना देते हैं xxx' (सु०)

जब बाह्य वायु प्रकुपित होकर इस लोक में संचार करता है तो उसके कार्य होते हैं - मेघों का अत्यन्त गर्जन करना, नीहार (हिमवर्षा) निर्ह्राद (गर्जन) का पड़ना xxx' (च)।

हेमन्तादि ऋतु में स्वभावत: शीत वायु आदि के कारण शीतस्पर्श से विकार होना संभव है। यही ऋतु है जिसमें नदी जलाशय बर्फ से ढके रहते हैं तथा हिमयुक्त आर्द्र वायु उत्तर दिशा में बहती है, दिशायें कोहरे से व्याप्त रहती हैं।

हिमदग्ध हेतु

1. ठंडी वायु के सम्पर्क में खुली (त्वचा) के आने पर।
2. स्वयं हिम के सम्पर्क में आने पर।
3. हिम वायु, हिम जल या हिम (बर्फ), ओले या पाले के सम्पर्क में देर तक रहने से या शीत वर्षा एवं कण के सम्पर्क में आने से।
4. बाह्य तापक्रम 99° फा० होनें पर या उससे कम होने पर खुले भाग पर ठंडी लग जाने से।

विकृति

1. ठंड लगने के कारण खुले अवयवों में स्थित धमनी में संकोच हो जाने के कारण स्थानिक अवयवों में ऑक्सीजन की कमी हो जाती।
2. ऑक्सीजन कम मिलने के कारण सिरायें शिथिल हो फैल जाती हैं।
3. इन फैली सिराओं से द्रव रिस कर शोथ करता है।
4. बाद में फाइब्रस ऊतक (टिशु) स्थूल हो जाते हैं जो स्पर्श में कठिन एवं ऊष्ण हो जाते हैं।

लक्षण

1. खुले अवयवों पर ठंड के असर से त्वचा सूज जाती है।
2. शोथ प्राय: खुले अवयवों पर ठंडी हवा, हिम, पाले

(निवृत्त प्रोफ०/प्राचार्य, आयु०मो०भाव) निवास: 1497, ए 2/1, कृष्णनगर, रूपाणिसर्कल, भावनगर (गुज०)-364001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदि के कारण नाक, कान, उंगलियों जैसे अवयव सूज जाते हैं ।

3. यह शोथ निम्नलिखित विशेषता युक्त होता है -
- श्याव, रक्त वैवर्ण्य युक्त होना ।
- स्पर्श में कठिन, ऊष्ण होना ।
- चुभन जैसी पीड़ा होना, कंडु होना ।
- बाद में शोथ का बढ़ जाना ।

4. उपेक्षा करने पर स्नायु भाव (फाईब्रोसिस) होना । प्रदाह एवं संक्रमण पूर्वक वर्णोत्पत्ति होना ।

5. शोथ पर सेक करने से शोथ बढ़ जाता है । ठंडे उपचारों से शोथ स्थिर रहता है ।

चिकित्सा - आयुर्वेद में शीत, वर्षा-पवनादि के द्वारा दग्ध होने पर स्निग्ध एवं उष्ण उपचार करने को कहा गया है ।

(क) **रोकथाम के उपाय -**

1. शरीर को कम से कम खुला रखें ।
2. दस्ताने पहनें ।
3. सिरा धमनी संकोच रोकने के उपक्रम करना ।

(ख) उपक्रम

1. त्वचा पर मृदु सिक्थ युक्त प्रलेप लगायें तथा सिक्थतैल का प्रयोग करें ।
2. कंडु के लिये कर्पूरयुक्त तैल लगाना, कपूर सिक्थ यथा पंचगुण तैलादि ।
3. पर्याप्त प्रमाण में सुधा (Ca) एवं विटामिन 'डी' का उपयोग करना ।
4. शीत पित्त एवं उदर्द की चिकित्सा का उपयोग किया जा सकता है । अतः शीत पित्तघ्न कल्प उपयोग के लेवें ।
5. व्रण एवं शोथ होने पर शल्यतंत्रीय उपचार ।

(ग) **कुछ उपयोगी कल्प**

1. अन्तः प्रयोग (शीतपित्तघ्न अनुसार)
स्वरस - आद्रर्क, लशुनकल्क (ग.नि.)
कल्क/चूर्ण - यवानिगुड, घृतभ्रष्टहरिद्रा दूध के साथ
क्वाथ - दशमूल मंजिष्ठादि क्वाथ ।
रसादि - शीतपित्तभंजीरस ।
अन्य - हरिद्राखाण्डादि ।

बाह्य प्रयोगार्थ

तैल - पिंडतैल, एरण्डमूलादिसिक्वाथ तैल, महामद्य तैल, खुड्डाक पद्म तैलादि

(घ) रसोन कल्क का प्रयोग शीत वात (वर्षा) हिम दग्ध (फ्रास्टवाईट) में उपयोगी भेषज कहा गया है । (ग.नि.)

कुछ संदर्भ :-

प्रकुपितस्य खल्वस्यं लोकेषु चरतः कर्माणिमानि भवन्ति, xx निहारनिर्ह्रादपोसु xxx व्यापादनं च षण्णामृतूनां xx चतुर्युगान्तकराणां मेघसूर्यनिलानां विसर्गः ।

च.सं.

संहन्त्यापो यथा दिव्या मारूतोऽग्निश्च वैद्युतः तद्वलासं बस्तिस्थभूष्मा संहन्ति सानिलः ।

सु.नि. 3/26

हेमन्तः शीतलो रूक्षो मन्दसूर्योऽनिलाकुलः ।

सु.उ. 64/21

वायुर्वात्युत्तरः शीतो रजोधूमाकुला दिशः ।
छन्नस्तुषारैः सविता हिमानद्धा जलाशयाः ।।

सु.सू. 6/22

शिशिरे शीतमधिकं वात वृष्टयाकुलादिशः ।

सु.सू. 6/24

xxx

शीतवर्षानिलै दग्धे स्निग्धभुष्णं च शस्यते ।

सु.सं.

शीत्वातहिमदग्धनूनां
स्तब्ध भग्नकुटिल व्यथितास्थ्नाम् ।
भेषजस्य पवनोहतानां
वक्ष्यते विधिरतो लशुनस्य ।

अ.हृ.उ. 39/19(1) ग.नि.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवजात शिशु की परिचर्या

*डॉ० एस०डी०शर्मा, एम.डी.(कौमारभृत्य)
डॉ० प्रियंका मस्तान, तृतीय व्यावसायिक (अध्येता)

प्रकृति की गोद में पलने वाले शिशु में जीवन के संचार हेतु संहिताओं में कुछ कर्मों का विधान किया गया है। इसके कुछ अंशों का सार नवजात शिशु-परिचर्या के अंतर्गत समाहित है ।

हमारी संस्कृति में जीव के विकास क्रम में उत्पन्न होने वाले प्रत्येक पूर्ण परिवर्तन को विधि विधान के साथ समारोहपूर्वक मनाने की प्रथा है । बालक के उत्पन्न होने पर जो वैदिक कर्म यज्ञ आदि किए जाते हैं उन्हें जातकर्म संस्कार कहा जाता है । इन्हीं संस्कारों के कारण शिशु जन्म के पश्चात बाह्य वातावरण में जीवन यापन भलीभाँति करता है । इन्हीं कर्मों का वर्णन नवजात शिशु परिचर्या के अंतर्गत बतलाया गया है :-

विभिन्न संहिताओं के अनुसार परिचर्याक्रम

चरक	सुश्रुत	वाग्भट
प्राणप्रत्यागमन	मुखविशोधन	उल्वापरिमार्जन
स्नान	पिचुधारण	प्राणप्रत्यागमन
मुखविशोधन	नाभिनालोच्छेदन	नाभिनालोच्छेदन
गर्भोदक वमन	जातकर्म	स्नान
नाभिनालोच्छेदन	स्नान	पिचुधारण
जातकर्म		सुवर्णप्राशन
रक्षाकर्म		गर्भोदक वमन
		जातकर्म

यहाँ हम वर्तमान में किए जा रहे क्रम से इनका अलग-अलग विवेचन कर रहे हैं -

नाभिनालोच्छेदन :-

आचार्य चरक व सुश्रुत के अनुसार नाभिनाल से 8 अंगुल छोड़कर दोनों ओर से नाभिनाल को पकड़कर स्वर्ण, रजत, ताम्र, लौह, धातु से बना तीक्ष्ण अर्धधार वाले चाकू के द्वारा काटकर बची नाभिनाल को बच्चे की ग्रीवा में बाँध देते हैं । तत्पश्चात् यदि उसमें पाक होता है तो लोध्र, मुलेठी, प्रियंगु, सुरदारु, हरिद्रा कल्क से साधित तैल को लगाना चाहिए । इन्हीं द्रव्यों के चूर्ण को छिड़कना चाहिए । लेकिन आ०वाग्भट् के अनुसार नाभिनाल को ४ अंगुल छोड़कर काटना चाहिए ।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य :- यदि बालक स्वस्थ एवं समय पर हुआ हो तो नाभिनाल को 2-3 मिनट के बाद 5cm की दूरी पर काटते हैं । इसके 80-100 ml रक्त (blood) अपरा (placenta) से शिशु में आता है।

नवजातमुखशोधन :- जन्म लिए हुए बालक के जरायु आवरण (Foetal membrane) को हटाकर सैंधव युक्त घी से मुख का शोधन करना चाहिए । तत्पश्चात् बालक के सिर पर घी में भींगा फाया रखें।

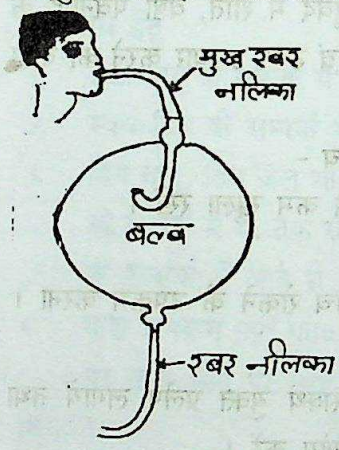

MUCOUS SUCTION CATHETER

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान ने नवजात मुखशोधन के लिए (mucous suction catheter) का प्रयोग बताया है। इसके द्वारा मुख, नाक, गले में स्थित श्लैष्मिक स्रावों को बाहर निकालते हैं ।

प्राणप्रत्यागमन (Resuscitation) बालक के उत्पन्न होने के पश्चात प्राणों का संचार अर्थात् श्वास-प्रश्वास क्रिया प्रारम्भ कराना प्राणप्रत्यागमन कहलाता है । यदि श्वास क्रिया आरंभ न हो तो श्वास-प्रश्वास क्रिया प्रारम्भ करने के लिए निम्न उपाय किए जाते हैं :-

1. कान के मूल में पत्थर को बजाते हैं ।
2. शीत व उष्ण जल से बारी-बारी मुख पर छींट देते हैं।
3. नर मूंज इत्यादि से निर्मित काले छाज से हवा करनी चाहिए ।

आधुनिक मतानुसार (Resucitation) के APGAR SCORE करना चाहिए ।

*रीडर एवं विभागाध्यक्ष, कौमारभृत्य विभाग, श्री बाबा मस्तनाथ आयुर्वेद महाविद्यालय, रोहतक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• Appearance or Colour	Blue or pale	Limbs blue	Completely Pink
• Pulse rate or Heart rate	Absent or Nil	Greater than slow or less than 100 min	100 min
• Grimace	Absent	Feeble Cry	Cry
Reaction	Nil	sneezing	
• Activity	Completely flaccid	Some movement	Active
• Respiration	Absent or Nil	Slow or irregular	Strong or more than 30 min

यदि अपगार स्कोर 7-10 हो तो मुख गले व नाक की श्लेष्मा का चूषण एवं सफाई करना ही उचित है क्योंकि 7-10 APGAR SCORE उसकी स्वस्थ शारीरिक स्थिति का द्योतक है ।

4-6 अपगार स्कोर है तो Laryngoscope के द्वारा मुख एवं गले का निरीक्षण करते हुए सफाई करनी चाहिए एवं आवश्यकता होने पर Ambubag masks का प्रयोग करना चाहिए ।

यदि अपगार स्कोर 4 से कम हो तो ऐसी स्थिति में Severe Depression होता है ।

- हृदय गति कम होने पर Intubation करनी चाहिए ।
- हृदय स्थल पर मसाज Cardiac Massage करना चाहिए ।

गर्भोदक वमन :- जो बालक गर्भोदक का पान कर लेता है तो उसे निकालने के लिए सैंधव-घृत चटाया जाता है । इसकी अतिरिक्त मात्रा गर्भस्थ शिशु मूत्र त्याग में निकाल देता है ।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में Normal saline के द्वारा आमाशय का प्रक्षालन करते हैं ।

उल्वापरिमार्जन :-

उल्वा (vernix caseosa) हटाने के लिए सैंधव व सर्पि चटाने के पश्चात् बला तैल से अभ्यंग करवाना चाहिए।

स्नान :- शिशु में प्राण का संचार होने के उपरान्त निम्न प्रकार से स्नान करवाना चाहिए ।

1. क्षीरी वृक्ष के क्वाथ के द्वारा ।
2. सर्वगन्धोदक से स्नान (चातुर्जात, कपूर, लवंग आदि) ।
3. प्रतप्त चांदी व स्वर्ण के जल से ।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य :- औषधियुक्त विभिन्न साबुनों का प्रयोग Chlorhexidine (Hibitone) cream 5% का लेप करें । Hexachlorophene Lotion ।

रक्षाकर्म :- बालक व माता दोनों की रक्षा के लिए निम्न उपाय करने चाहिए जिससे बालक व माता दोनों की बाह्य संक्रमणों से रक्षा हो सके ।

1. प्रसूति गृह के चारों ओर खदिर, बेर, पीलू की शाखाएँ लगायें ।
2. सरसों, अतीस व तण्डुल के दाने बिखेर दें । इसके द्वारा जीव-जन्तुओं से रक्षा होती है ।
3. होम सुबह-शाम करवायें ।
4. वचा, हींग, सर्षप, गुग्गुल को पोटली बना कर दरवाजे पर लटकायें ।
5. प्रसूता के व्यवहार में आने वाले पात्रों को धूप देने के बाद प्रयोग में लायें ।
6. ब्राह्मी, जीवक, वचा का सेवन बालक को करवायें ।
7. वचा का विशेष रूप से प्रयोग करें ।

सुवर्णप्राशन :- बालक को मंत्रों को पूरित मधु व सर्पि का सेवन करवाना चाहिए ।

1. इसमें high calorie diet प्राप्त हो जाती है ।
2. Non specific immunity develop हो जाती है ।
3. घृत प्रयोग सें आन्त्र में संचित मल बाहर जल्दी निकल आता है ।

इसके बाद प्रथम दिन से बालक को स्तनपान करवाना चाहिए ।

इन समस्त कर्मों द्वारा संस्कारित होकर ही प्रकृति की छाया में पलने वाला यह शिशु रचना करता है एक नई सृष्टि की ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाजीकरण अध्याय

1. प्र०- वाजीकरण सेवन से किस प्रयोजन की सिद्धि होती है ?
   उ०- **धर्म, अर्थ, प्रीति और यश प्राप्ति ।**
2. प्र०- वाजीकरण सेवन का निर्देश किसके लिए है ?
   उ०- **आत्मवान अर्थात् धैर्यवान् और संयमी पुरुष**
3. प्र०- सर्वश्रेष्ठ वाजीकरण किसे माना गया है ?
   उ०- **स्त्री ।**
4. प्र०- धर्म, अर्थ, लक्ष्मी और लोक किस पर प्रतिष्ठित है ?
   उ०- **स्त्रियों पर ।**
5. प्र०- संतान कामना हेतु किस स्त्री से सम्भोग का निषेध है ?
   उ०- **तुल्य गोत्र, रोग ग्रस्त, रजोधर्मी ।**
6. प्र०- छाया-फल-शाखा-गन्ध आदि रहित वृक्ष की तुलना किससे की गई है ?
   उ०- **निःसंतान पुरुष से ।**
7. प्र०- सन्तानवानत पुरुष की तुलना किससे की गई है ?
   उ०- **बहुमूर्ति-मुख-शरीर-कर्म-नेत्र-ज्ञान-आत्मा आदि से ।**
8. प्र०- संयोगज्ञरमूलीय अध्याय में प्रथम वाजीकरण योग कौन-सा है ?
   उ०- **बृंहणी गुटिका ।**
9. प्र०- वाजीकरण के लिए श्रेष्ठ ऋतु कौन-सी है ?
   उ०- **वसन्त ।**
10. प्र०- वृष्योत्कारिका योग में सितोपला की मात्रा कितनी है ?
    उ०- **100 पल ।**
11. प्र०- वृष्यमधुक योग में मधुक की मात्रा कितनी है ?
    उ०- **1 पल ।**
12. प्र०- किस योग में मधु को गर्म करने का निर्देश
    1. **डा० अनूप कु०गक्खड़, एम.डी.(आयुर्वेद)**
    2. **सीमा चोपड़ा, बी.ए.एम.एस. तृतीय ऑफ**

    है ?
    उ०- **षष्टिकादि गुटिका ।**
13. प्र०- जिन प्राणियों का शुक्र उपलब्ध नहीं उनके स्थान पर क्या प्रयोग करना चाहिए ?
    उ०- **अण्डा ।**
14. प्र०- कितने वर्ष के घोड़े को उचित वाजीकरण हेतु प्रतीक माना गया है ?
    उ०- **8 वर्ष ।**
15. प्र०- वाजीकरण के अयोग्य किसे माना गया है ?
    उ०- **बालक और वृद्ध ।**
16. प्र०- किसे वाजीकरण का प्रयोग नहीं करना चाहिए ?
    उ०- **स्त्रियाँ एवं किन्नर ।**
17. प्र०- वाजीकरण प्रयोग से किस धातु की वृद्धि होती है ?
    उ०- **सभी धातुओं की विशेषकर शुक्र धातु ।**
18. प्र०- वाजीकरण औषध प्रयोग से किन रोगों का प्रतिकार होता है ?
    उ०- **शुक्र के वेग को धारण करने से उत्पन्न रोग ।**
19. प्र०- वाजीकरण अध्याय के प्रथम पाद का क्या नाम है ?
    उ०- **संयोगशर मूलीय अध्याय ।**
20. प्र०- कितने स्तनों वाली गाय का दूध वृष्य माना गया है ?
    उ०- **चार ।**
21. प्र०- वृष्य पिप्पली योग में कितनी पिप्पलियां लेने का निर्देश है ?
    उ०- **30 ।**
22. प्र०- सहवास के योग्य आयु कौन-सी है ?
    उ०- **16-70 ।**
23. प्र०- 'जरया चिन्तया शुक्रं व्याधिभिः कर्म कर्षणात्...' यह कारण किसके हैं ?
    उ०- **शुक्र क्षय के ।**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

24. प्र०- वाजीकरण अध्याय के प्रथम पाद में कितने योग निर्दिष्ट हैं ?
उ०- **15 ।**

25. प्र०- अपत्यकर क्षीर योग के प्रयोग से कितने वर्षो वाला वृद्ध भी यौवन को प्राप्त करता है ?
उ०- **70 ।**

26. प्र०- वृष्य मांस योग के अन्तर्गत किसके मांस के प्रयोग का निर्देश है ?
उ०- **चटक ।**

27. प्र०- शुक्र प्रवृत्ति के कितने कारण हैं ?
उ०- **8 ।**

28. प्र०- "बहलं मधुरं स्निधमविस्त्रंगुरु पिच्छिलम्" महकिसको लक्षण है ?
उ०- **फलवत्त शुक्र के ।**

29. प्र०- रसाला किसे कहते हैं ?
उ०- **दधि को शर्करा और चर्तुजात के साथ संस्कारित करके जो द्रव्य बनता है ।**

30. प्र०- चन्द्राशु कल्प किसे कहा गया है ?
उ०- **षष्टिक औदन ।**

31. प्र०- चक्रपाणि ने चन्द्राशु कल्प से क्या ग्रहण किया है ?
उ०- **अतिशुक्ल ।**

32. प्र०- पौरुष शब्द किसके लिए प्रयुक्त हुआ है ?
उ०- **शुक्र ।**

33. प्र०- वाजीकरण अध्याय के दूसरे पाद में कितने श्लोक हैं ?
उ०- **31 ।**

34. प्र०- गाय इत्यादि पशु के आहार के रूप में किसका प्रयोग वर्णित है ?
उ०- **माषपर्ण, इक्षुकाण्ड, अर्जुन ।**

35. प्र०- दूध के विशिष्ट गुणों की वृद्धि हेतु किसके साथ उबालने का निर्देश है ?
उ०- **स्वर्ण मण्डल ।**

36. प्र०- क्षीर धारा का परिषेक किसके ऊपर करने का निर्देश है ?
उ०- **पिप्पली कल्क ।**

37. प्र०- पूर्वकर्म हेतु सर्वप्रथम किस बस्ति का वर्णन है ?
उ०- **निरूह ।**

38. प्र०- वृष्योत्कारिका योग में मधु की कितनी मात्रा लेनी चाहिए ?
उ०- **सितोपला से 1/4 ।**

39. प्र०- वाजीकरण घृत में माषका क्या प्रमाण है ?
उ०- **1 आढ़क ।**

40. प्र०- वाजीकरण पिण्डरस में प्रथम द्रव्य कौन-सा है ?
उ०- **शर्करा ।**

बैद्यनाथ
आयुसिड
अम्लपित्त, उदरशूल एवं कब्जियत दूर करने की दवा है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

This paper was read on the occasion of National Seminar on Rasashastra organised at BHU, Varanasi

RASA MEDICINE ACTIVITY IN NEPAL

Dr. C.R. Sapkota

Ayurveda is a traditional and indigenous system of medicine which has been in practice in Nepal since time immemorial. Ayurveda is also officially recognized system of medicine in Nepal, Indian & Sri Lanka. History reveals that an institutional frame work came into existance during the glorious cultural era of Nepal regime. Some 355 years (1648 AD) ago, King Pratap Malla instituted a Vaidyakhana supported by the treasury in order to render service. The Vaidyakhana supported by the treasury in order to render service. The Vaidyakhana (Health institute that period) is one of the oldest institution. The Rasa medicines and Kastha medicine (Kasthaushadhi) are very popular within and outside the kingdom for the reasons of their quality.

Ayurvedic formulations are divided into two groups:

1. Kasthausadhi (Predominantly plant drugs are used for preparation).
2. Rasausadhi (Predominantly mineral and metals are used for preparation). Rasamedicine is prepared from highly processed mercury along with other metals minerals and herbs.

Importance of Rasa medicine

अल्पमात्रापयोगित्वत् अरुचेरप्रसंगतः ।
क्षिप्रमारोग्यदायित्वात् औषधेभ्योऽधिको रसः ॥
र०सा०स०

The superior qualities of Rasa medicine are

(i) Effective in small doses (ii) Palatable (iii) Quick action (iv) Used in incurable (acute and chronic) diseases (v) Long self life (no loss of potency). Out of 175 Medicine prepared, 100 are Rasa medicines. Some medicines are as follows:

1. Chandrodaya
2. Makardhwaja
3. Rasa Sindur
4. Swarna Bhasma
5. Rajat Bhasma
6. Tamra Bhasma
7. Lauha Bhasma
8. Mandur Bhasma
9. Naga Bhasma
10. Banga Bhasma
11. Yashad Bhasma
12. Abhrak Bhasma
13. Makshik Bhasma
14. Godanti Bhasma
15. Parbal Bhasma / Pisti
16. Moti Bhasma / Pisti
17. Shankha Bhasma
18. Baratika Bhasma
19. Mirgashringa Bhasma
20. Kasturi Bhusan Rasa
21. Brihatbata Chintamani Rasa
22. Mirtunjaya Rasa
23. Tribhuvan Kirti Rasa
24. Arogyawardhani Bati
25. Chandraparbha Bati
26. Kasturadi Bati
27. Gandhak Rasayan
28. Rasamanikya
29. Shilajit
30. Sitras (Patent)
31. Wajikar

Number of Ayurvedic literatures were written and compiled in Nepal during historic period. Chandra Nighantu is an Ayurvedic manuscript of 10 volumes containing the detailed description of various Dravyas (medicinal plants, minerals and animal). Sanskrit, Nepali and Newari languages along with their colourful sketches in Nepali papers in those volumes.

Following organizations use Rasa medicines.

1. Ayurveda campus
2. Naradevi Ayurvedic Central Hospital
3. Regional Ayurvedic Hospital
4. Zonal Ayurvedic Hospital
5. District Ayurvedic Health Centre
6. Peripheral Ayurvedic Dispensaries in V.D.C.

Associate Professor, Ayurveda Campus, Institute of Medicine, Tribhuvan University, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Private Sector

1. Ayurvedic Health Homes / Hospital / Research Centre
2. Ayurvedic Practitioners with Academic Training
3. Traditional Ayurvedic Practitioners
4. Traditional Healers

Pharmaceutical Sector

Two hundred different brands of Ayurvedic medicines are produced in Nepal. There are 35 Registered Private Manufacturing Unit and one is Government Manufacturing Units for Ayurvedic medicine in Nepal.

Ayurveda campus, Institute of Medicine which is one of the technical institute of tribhuvan University producing the Ayurvedic main power (B.A.M.S.). During the Rana days in 1928 Ayurveda campus was established. The teaching, learnig activites at Ayurveda campus are greatly benefited from the Nardevi Chikitsalaya, which though is separate entity organizationally, functions as the teaching hospital. Moreover, His Majesty's Government runs a national system of Ayurvedic treatment. The Department of Ayurved under the Ministry of Health has a network of 275 outlets nationwide. These outlets provide services consisting of different levels of facilities and expertise. The DoA runs a 15 bed regional hospital at Dang in western Nepal. Furthermore, a total of 14 zonal Ayurvedic centers and 75 district level Ayurvedic Health Centers are in operation in the kingdom. The remaining centers of DoA are located at the village level and under the national ayurvedic health policy of HMG/N, the department opens 20 new centers every year. Ayurveda Medical Council established in BS 2045 (1988) functioning in 2056 (1999) is concerned with rules and regulations to be followed by Ayurvedic practitioners. Ayurvedic Doctor's Association of Nepal is established in 1997. W.H.O. including UNDP have been active in promoting Ayurveda.

बैद्यनाथ

मधु

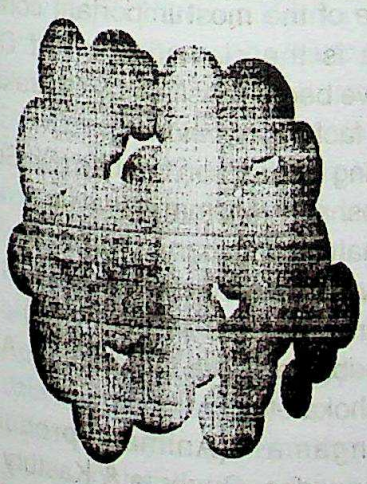

शरीर को शीतलता पहुँचाता, भूख बढ़ जाता है। आँखों के लिए उपयोगी एवं कांतिवर्द्धक है।

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CONTRIBUTION OF CHARAKA IN THE FIELD OF DRAVYAGUNA

Dr. P.P.Gupta[1], Dr. K.N. Dwivedi[2],
Dr. Ram Milan[3], Dr. S.D. Dubey[4]

The story of drugs goes back to the prehistoric days. Long long ago the Indian Acharyas invented various drugs (medicinal plants) and their therapeutic uses also. This was based partly on observation of the effect of drugs on various animals and partly on human trials and error. Rigveda, the oldest document of Indian wisdom contains material, which show the rational attitude towards plant kingdom and it is beneficial for the human beings. The Atharvaveda has got more advanced picture and a larger number of drugs have been used in similar number of desases. On the basis of this long tradition and accumulated wisdom, the ancient Acharyas as Atreya and his followers after deep and concentrated efforts were able to make some generalizations for rational explanation of drug action which form the basic concept of Dravyaguna. Charaka has consolidated the entire knowledge of Ayurveda in three main heading 1. Hetu (The aetiological factors). 2 Linga (the features of disease) and 3. Aushadha Gyan (Knowledge of Drugs). Thus he has given due importance to Dravyaguna.

DRAVYAGUNA

Dravyaguna is the shashtra in which properties, actions and uses of Dravyas are described simultaneously in detail. As-Said by Prof. P.V. Sharma-

द्व्याणां गुणकर्माणि प्रयोगाः विविधास्तथा ।
सर्वशो यत्र वर्ण्यन्ते शास्त्रं द्व्यगुणं हि तत् ॥

(द्रव्यगुणसूत्रम्)

But above definitaion is only prayogatmaka. Again currently a complete definition of Dravyaguna has been given by prof. P.V. Sharma as -

द्व्याणां नामरूपाणि गुणकर्माणि कल्पना ।
प्रयोगा यत्र वर्ण्यन्ते शास्त्रं द्व्यगुणं हि तत् ॥

Again Acharya Shivadasasen has described as "द्रव्याणां गुणाः" means properties of draavyas and means properties and dravyas both separately are also included in Dravyaguna. Dravyaguna deals various aspects of the knowledge about drugs (medicinal plants) such as identification, properties, actions and uses. It also includes doses, compatibility and processing of drugs.

Charaka has very critically and scientifically discussed the padarthas of Dravyaganuna.

DRAVYA

According to Charaka Samhita it is the substratum of Guna and Karma can not be taken in abstract form or can not be isolated from Dravya. Similarly, though dravya stays for a moment in pure form, it can not be thought of as devoid of guna and karma. Hence, guna and Karma is said to be inherently related to dravya as -

यत्राश्रिता कर्मगुणाः कारणं समवायि यत् ।
तद् द्रव्यम्..... ॥

च०सू० 1/51

One of the most important contribution of Charaka is the classification of Dravyas. Dravyas have been classified by Charaka based on different factors as below -

1. According to effect on doshas (Ch.Su. 1/67)-
   - a- Dosha prashsmana dravya
   - b- Dhatu pradushana dravya
   - c- Swastha-hita dravya.
2. According to source (Ch.Su. 1/68)-
   - a- Audbhida (plant products) - Arjuna & Ashoka etc.
   - b- Jangama (Animal products) Godugdha, Goghrita & Kastury etc.
   - c- Parthiva (Minerals) – Gold, Copper, Iron

1 & 3 Sr. Resident 2. Lecturer 4. Reader and Head
Deptt. of Dravyaguna; I.M.S., B.H.U., Varanasi-5

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

& Mercury etc.

3. Audhida dravyas are subdivided in to four groups (Ch.Su. 1/69)
   a- Vanaspati (having fruits but no flowers)- Udumbara & Baniyana tree.
   b- Vanaspatya (having both flowers and fruits)-Amalaki and Haritaki etc.
   c- Virudha (Shrubs and weak plants) - Sariva.
   d- Oshadhi (Plants destroyed at the ripening stage of fruits) - Godhuma.
4. According to Karya - Karana bheda (Ch.Su. 1/48)
   a- Karana dravya - Panchamahabhuta, Atma, Mana, Kala & Dika.
   b- Karya dravya – All products produced by Karana dravya.
5. According to chetana bheda (Ch.Su.1/48, 26/10)
   a- Chetana dravya (Animate) – Animal and plant products
   b- Achetana dravya (Inanimate) – Minerals.
6. According to pharmacological action (Ch.Su. 4/14-15)- Dravyas have been grouped in 50 mahakashaya based on action.
7. According to therapeutic application (Ch.Vi. 8/135-139).
   a- Dravyas for Vamana Karma
   b- Dravyas for Virechana Karma
   c- Dravyas for Asthapana Karma.
   d- Dravyas for Anuvasana Karma.
   e- Dravyas for Shirovirechana Karma.
8. According to panchabhautika composition (Ch.Su.26/11).
   a- Parthiva dravyas (dominating properties of prithvi mahabhuta).
   b- Apya dravyas (dominating properties of Jala mahabhuta).
   c- Tejasa dravyas (dominating properties of teja mahabhuta).
   d- Vayavya dravyas (dominating properties of Vayu mahabhuta).
   e- Akashiya dravyas (dominating properties of Akasha Mahabhuta).
9. According to use (Ch.Su. 26)-
   a- Ahara dravyas (Dietary substances).
   b- Aushadha dravyas (Drugs).
10. According to Rasa (Ch. Vi. 8/137)-
   a- Madhura Skandha
   b- Amla Skandha
   c- Lavana Skandha
   d- Katu Skandha
   e- Tikta Skandha
   f- Kashaya Skandha

GUNA

Charaka has defined that guna is inherently existent in substratum and is non-inherent cause for its effect. As-

Charka mentioned 41 gunas which are classified in four groups. as

1. **Sartha** (Physical) Guna :- Shabda, Sparsha, Rupa, Rasa and Gandha.
2. **Gurvadi** (Somatic) Guna :- Guru, Manda, Hima Snigdha, Slakshana, Sandra, Mridu, Sthira, Sukshma, Vishada and ten gune opposite to each other.
3. **Psychic** Guna :- Iccha, Dvesha, Sukha, Dukha, Prayatna & Budhi.
4. **Paradi** (applicatory) Guna :- Para, Apara, Yukti, Sankhya, Samyoga, Vibhaga, Prithakatva, Parimana, Samskara And Abhyasa.

RASA

According to Charaka 'Rasa' is the object of gustarory sense organ which is located in dravya. Apa and prithvi are the material cause of Rasa in its origin while other three bhutas Akasha, Vayu and Agni serve as Nimitta Cause. As-

Again Rasa is perceived through Nipata (Contact of Dravya with the gustator sense organ). Thus 'Rasa' is known from perception and also from inference on the basis of its characters such as effect on salivation etc. As-

रसानार्थो रसस्तस्स द्रव्यमापः क्षितिस्तथा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निवृतौ च विशेषे च प्रत्ययाः खादयस्त्रय ॥

च०सू० 1/64

Again Rasa is perceived through Nipata (Contact of Dravya with the gustatory sense organ). Thus 'Rasa' is known from perception and also from inference on the basis of its characters such as effect on salivation etc. As-

"रसो निपाते द्रव्याणां"

च०सू० 26/36

Rasas are six in number as-1-Madhura (sweet), 2. Amla (Sour), 3. Lavana (Salty), 4. Katu (pungent), 5. Tikta (bitter) and 6. Kashaya (Astringent). There is a good discussion in Charaka Samhita about the number of Rasas ranging from one to infinite including that actually rasas are six. There are also proportionate to three doshas, three rasas pacify and the other three rasas aggravate each of them such as-

स्वाद्वम्ललवणां वायुं कषायस्वादु तिक्तकाः ।
जयन्ति पित्तं, श्लेष्माणां कषायकटुतिक्तकाः ॥

च०सू० 1/66

VIPAKA

Charak has been mentioned as -

"विपाकः कर्मनिष्ठया"

च०सू० 26/36

It means vipaka is detected by karmanishtha. Here karmanishtha denotes the end point of digestion (paka-karma) and also the action exerted by the final transformation. Charaka has described three types of Vipaka according to rasa emerged at the completion of digestion and the effect on three doshas -

1. Madhura vipaka 2. Amla vipaka
3. Katu vipaka.

कटुतिक्तकषायाणं विपाकः प्राशयः कटुः ।
अम्लोऽलं पच्यते, स्वादुर्मधरं लवणस्तथा ॥

च०सू० 26/58

Charaka alos says that Madhura vipaka increases kapha dosha and semen and helps in excretions. Amla vipaka increases pitta dosha, decreases semen and is carminative while katu vipaka increases vata dosha, decreases semen and is the cause of constipation (Ch.Su. 26/61-62).

VIRYA

According to Charaka "Virya" is that by which drug acts. Again he has established logically cause-effect relationship between virya and karma on the law of agreement in presence and absence (Anvaya and Vyatireka) by saying that none can act without virya and all actions are caused by virya, which is of two types -

1) Shita virya 2) Ushna virya As-

शोतोष्णमिति वीर्यं तु क्रियते येन या क्रिया ।
नावीर्यं कुरूते किंचित् सर्वा वीर्यकृता क्रिया ॥

च०सू० 26/65

"येन कुर्वन्ति तद् वीर्यम्"

च०सू० 26/13

Again we assess the virya from contact of dravya with gustatory sense organ to till the presence of dravya in our body. as -

रसोनिपाते द्रव्याणां विपाकः कर्मनिष्ठया ।
वीर्यं यावदधीवासात् निपातात् चोपलभ्यते ॥

च०सू० 26/67

Again the word 'Achintya' has been used by Charaka in the context of wearing of gems and not as a part of the definition of prabhava but due to its specific action it can be included under prabhava. As-

मणीनां धारणीयानां कर्म यद्विविधात्मकम् ।
तत् प्रभावकृतं, तेषां प्रभावोऽचिन्त्य उच्यते ॥

च०सू० 26/70

KARMA

Karma is the cause of conjunction and disjunction and is located in dravya and does not require any other factor as its cause. As-

संयोगे च वियोगे च कारणं द्रव्यमाश्रितम् ।
कर्तव्यस्य क्रिया कर्म कर्म नान्यदपेक्षते ॥

च०सू० 1/52

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Again Charaka says that karma is movement initiated by conscious will. In other words tissue response caused by conscious will in living organs, a quality of self, in the form of movement is Karma. As-

"प्रयत्नादि कर्म चेष्टितमुच्यते"

च०सू० 1/48

The different useful parts of dravyas i.e. root, bark, sara, secretions, stalk, expressed juice, tender leaves, alkali, latex, fruit, flower, bhasma (ash), oil, thorn, leaves, leaf buds, tuber and sprouts have been mentioned in Charaka Sutra (1). Again he has described sixteen moolini and nineteen phalini dravyas four mahasnehas, five yus, eight urine, eight milk and six shodhana dravyas in this chapter.

In Charaka Sutra (2), there is discussion about the group of dravyas used in panchakarma therapy and 28 medicated gruels (yavagu) which are prepared wih various dravyas for alleviation of various diseases. In Charaka Sutra (3), 32 effective powders and unguents (Pradeha) also have been described.

In Charaka Sutra (4), six hundred compound formulations for virechana karma are described in brief which are detailed in Kalpasthana. There are six locations of virechana dravyas i.e. latex, bark, root, leaf, flower, fruit and five sources of decoctives and their five varieties of pharmaceutical preparations which are expressed juice, paste, decoction, cold infusion and hot infusion. Again Charaka has enumerated the name of fifty Mahakashayas on the basis of pharmacological actions including 500 kashayas (medicinal plants & minerals).

Four qualities of dravya and one best factor amongst four factor has been described in Charak Sutra (1). Again in Charaka sutra (25), he has mentioned 152 best ones for the alleviation of different diseases like "Kshiram jivaniyanam" etc. In Charaka sutra (26), it has mentioned that there is no one drug (dravya) in the universe which can not be used rationally and with a definite objective. Describing the mode of action of Ayurvedic dravyas in this chapter he has mentioned that the drugs are active not only due to properties but also due to their own intrinsic composition, properties and both combined together in particular time, on reaching a particular locus with a particular mechanism and objective. Again Charka have mentioned that some drugs act by rasa, or by virya, or by gune, or by vipaka or by prabhava. Here general consideration regarding 12 classes or diets are described broadly.

Here a list of drugs for panchakarma therapy have been described in Vimana Sthana (8/134). In Asthapana dravyas Charaka has mentioned six Skandha of dravyas on basis of rasas, karma or vipaka i.e. Madhura, Amla, Lavana, Katu, Tikta & Kashaya Skandha.

The Charaka Chikitsasthana begins with Rasayana which promotes strength and immunity and prevents diseases which is the object of Ayurveda. Vajikarana is also described due to its importance in daily routine for keeping the person healthy and prosperous. Charaka has mentioned more than one thousand compound formulations in different diseases in Chikitsasthana. Again in Kalpa and Siddhisthana he has mentioned vamana and virechana dravyas along with different types of vasti and 276 vasti preparations also.

REFERENCES

1. Dravyaguna sutram by Prof. P.V.Sharma published by Chankhambha Sanskrit Bhawan, Varanasi, 1994.
2. Charaka Samhita text with English translation vol. i,ii,iii & iv By Prof. P.V. Sharma published by Chaukhambha orientalia, Varanasi, 1994.
3. 'Ayurveda dipika' commentary of Chakrapanidatta on Charaka Samhita by Yadav Ji Trikam ji Acharya, Nirnaya Sagar press, Bombay.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

POTTALI RASAYANAS WITH SPECIAL REFERENCE TO HEMAGARBHA POTTALI

Dr. Pradeep Kumar Prajapat

Introduction :

Ayurveda, the science of life, is our heritage. It is a stream of knowledge which lightens the path way of healthy, prospersous and happy divine life. It is coming down from generation to generation since the evolution of life[1]. It has long tradition and deep attachment to the Indian culture. With the gradual advancement of the knowledge Ayurveda has been divided into different eight specialities like - Kayachikitsa (General Medicine), Shalya (Surgery), Shalakya (Eye, Ear, Nose and Throat), Kaumarbhritya (Pediatrics), Agadatantra (Toxicology), Bhootavidya (Infections diseases) Rasayana (Rejuvenation) and Vajikarna (Aphrodisiac) etc.[2] Out of these Rasayana is the important one which fulfills the aim and objectives of human life. Rasayana deals with the promotion and stablisation of positive health and social well being of an individual[3]. It is evident from the literature that the development of this branch is in chronological order. Initially the drugs of herbal origin were in use for this purpose, gradually the drugs of mineral origin were also included in this group due to their high potency, quick effect, safe in use, easy availabilty and long durability[4]. All the pharmaceutical processing techniques have been also developed in chronological manner since 8th cent.—A.D. through which it became possible to eliminate the toxicity and blemishes of minerals and the fear of toxic hezards could be proved meaningless. Thus, the use of metals and minerals came in frequent practice for curative as well as promotive purpose.

Shodhana, Jarana, Marana and other different processing of Rasa Shastra are specialised pharmaceutical techniques[5] which were developed in mediaeval period (i.e. 8th/9th Century—A.D.). Mercury was considered a key and most prominent material of Rasa Shastra s it occupied the top most position in the field Rasayana therapy for which mercury used to b presented in different forms through vario specific pharmaceutical processings as follows

1. Shuddha Dravyas - e.g. Mercury, Hing etc.
2. Bhasmas/Pishti - e.g. Parada Bhasma Swarna Pisti etc.
3. Parpati - e.g. Rasa Parpa Tamra Parpati etc.
4. Pottali - e.g. Hemagarbha Ratnagarbha etc.
5. Kuppipakva - e.g. Rasa Sindur Makaradhwaja etc.
6. Kharaliya - e.g. Arogyavardhan Laxmivilas etc.
7. Druti - e.g. Abharka Dru Swarna Druti etc.

Each individual kalpa is having muc therapeutic importance and represents a grou of products. Amongst them Pottali Rasayanas are such preparations produced throgh specialised pharmaceutical technique i.e. heating under liquid sulphur through *Dola Yantra*. Pottali is a ova shaped solid product which is an aggreagate o various final products like — Shuddha Dravya Bhasmas, Pishti, Sinduras and herbal extract which are uniformly mixed and given conical bel nut like shape through trituration with prescribe liquids. After complete drying it is wrapped w silk colth and heated in boiling liquid sulphur the desired characteristics are achieved. T namie of particular Potttali is based upoon main ingredietn used in it. These are readymad products having wide range of thrapeutic utili In addition there is no problem in it transportation and administration. (Table-1)

S.No.	Name
1.	Ratn
2.	Shar
3.	Loke
4.	Hem
5.	Grah
6.	Mrig
7.	Vajra
8.	Rajm
9.	Loka
10.	Potta
11.	Vaish
12.	Gan
13.	Lagh
14.	Hans
15.	Panc
16.	Nrisi
17.	Netra
18.	Swa
19.	Mah
20.	Apur
21.	Shev
22.	Peet
23.	Hem
24.	Hiran
25.	Kanc
26.	Loke

Table No

Reference
Ingredients
Ras.Sindur
Swarana
Tamra
Parada
Tankana
Gandhaka
Varatica
Mukta
Shankha
Vatsanabh
Praval
Lauha
Abhraraka
Vanga
Naga
Tala
Rajata
Process

Reader, Dept. of Rasa Shastra & Bhaisjaya Kalapana, I.P.G.T. & R.A.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Table No. 1 showing the different types of Pottali Rasayanas

S.No.	Name of Pottali	R.R.	RPS	RSS	SS	RRS	Rd.C	Ras.Cint.	R.R.Su.	RSar.	R.Sam.	BP.	B.Bt.
1.	Ratna Garbha Pottali	+	-	+	-	-	+	-	+	-	+	-	+
2.	Shankha Garbha Pottali	+	-	-	-	-	-	+	+	-	+	-	+
3.	Lokeshwar Pottali	-	-	+	-	-	+	-	-	-	-	-	+
4.	Hema Garbha Pottali	-	++	+	++	+	-	-	-	-	+	-	++
5.	Grahanikaparda P.	-	-	--	-	-	-	-	-	-	-	-	-
6.	Mriganka Pottali	-	+	-	+	+	-	-	-	-	+	-	-
7.	Vajra Pottali	-	+	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-
8.	Rajmriganka Pottali	-	+	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-
9.	Lokanatha Pottali	-	+	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-
10.	Pottali Rasa	-	-	-	-	+	-	-	-	-	-	-	-
11.	Vaishwanar Pottali	-	-	-	-	+	-	-	-	-	-	-	-
12.	Gandhakamarda P.	-	-	-	-	++	-	-	-	-	-	-	-
13.	Laghu Pottali	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-
14.	Hansa Pottali	-	-	+	-	-	+	-	-	-	+	-	+
15.	Pancamitra Pottali	-	-	-	-	-	-	-	-	-	+	-	-
16.	Nrisingh Pottali	-	-	-	-	-	-	-	+	-	+	-	-
17.	Netra Pottali	-	-	-	-	-	-	-	-	+	-	-	-
18.	Swarna Garbha P.	-	-	-	-	-	-	-	-	+	-	-	-
19.	Maha Hem. Gar. Pot.	-	-	-	-	-	-	-	-	-	+	-	-
20.	Apurva H.G. Pot.	-	-	-	-	-	-	-	-	-	+	-	-
21.	Shewta H.G. Pot.	-	-	-	-	-	-	-	-	-	+	-	-
22.	Peeta H.G. Pot.	-	-	-	-	-	-	-	-	-	+	-	-
23.	Hemagarb Rasayana	-	-	-	-	-	-	-	-	-	+	-	-
24.	HiranyaGar. Pottali	-	-	-	-	-	-	+	-	-	-	-	-
25.	Kancana Pottali	-	-	-	-	-	-	+	-	-	-	-	-
26.	Lokesh Pottali	-	-	-	-	-	-	+	-	-	-	-	-

Table No. 2 showing different ingredients of Hemagarbha Pottali & Process with references

Reference	R.P.S.		R.R.S.	R.Cint.		R.S.S.	S.S.		Yogaratnakar				B.R.		S.B.M.	Ras.Sar.	
Ingredients	1st	2nd	P.Bh.	1st	K.P.	R.S.S.	1st	2nd	1st	nd	3rd	4th	1st	2nd	S.B.M.	1st	2nd
Ras.Sindur	-	-	P.Bh.	-	-	+	-	-	-	-	-	-	P.Bh.	-	-	+	-
Swarana	+	+	+	+	+	+	+	+	+	+	+	+	+	+	+	+	+
Tamra	-	-	-	-	-	+	-	+	+	+	+	-	+	-	+	+	+
Parada	+	+	-	+	+	-	+	+	+	+	+	+	-	+	+	-	+
Tankana	+	+	-	-	-	+	-	+	+	+	+	-	-	+	+	-	+
Gandhaka	+	+	+	+	+	+	+	+	+	+	-	+	+	+	-	-	+
Varatica	-	+	-	-	+	-	-	-	-	-	-	-	-	+	+	-	+
Mukta	-	+	-	-	-	-	+	+	+	-	-	-	-	+	+	-	+
Shankha	-	+	-	-	-	-	+	+	+	-	-	-	-	+	-	-	-
Vatsanabh	-	-	-	-	-	-	+	-	-	-	-	-	-	-	+	-	-
Praval	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	+	-	-
Lauha	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	+	-	-
Abharaka	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	+	-	-
Vanga	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	+	+
Naga	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	+	-
Tala	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	+	-	-
Rajata	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	+	-	-
Process	P.P.	P.P.	P.P.	P.P.	P.P.	P.P.	P.P.	P.P.	S.Y.	Vi.M.	V.D.	P.P.	P.P.	P.P.	V.D.	P.P.	P.P.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Considering these important facts, efforts have been made to standardise the processing method and heating pattern of *Hemagarbha Pottali Rasayana.*

Foot Note

P.P. — Putapaka Method
S.Y.— Sibta Yantra Paka
Vi.M.— Vitastimatra Bhugarbha Paka
V.D. — Validrava Paka

Materials and Methods :

Pottali Rasayanas are in use since 12th century A.D. There are various methods for its preparation viz. - Kaparda poorana[7], Putapaka[8] and Validravapaka[6]. Here we have adopted the last one as described in "Yogaratnakara" expect one change i.e. instead of direct heat we have preferred of use indirect heat through *Valukayantra* due to following reasons —

1. To avoid sudden *variation* in quantum of heat.
2. To maintain *uniform* and controlled heat.
3. To avoid accidental burning of sulphur.

Pharmaceutically three samples of Hemagarbha pottali have been prepared.

[A] Ingredients.

Swarna (Gold) Bhasma	- 1 part
Shuddha Gandhaka (Sulphur)	- 2 parts
Tamra (Copper) Bhasma	- 3 parts
Shuddha Parada (Mercury)	- 4 parts

[B] Bhavana Dravya

Ghrita Kumari Patra Majja (Flesh of Aloe vere leaf)

[C] Equipments

1. Dola Yantra - A specialised apparatus for liquid bath
2. Valuka Yantra - A specialised apparatus for heating through sand.
3. Hot Plate 4. Two thermometers 5. Iron and Glass rods. 6 Suturing needle with thread and silk cloth etc.

Method of Preparation :

The whole procedure has been divided into following steps.

1. Preparation of Kajjali (Dry trituration).
2. Bhavana (wet trituration)
3. Formation of Gutika (Conical mass) just like Puga (Betal nut).
4. Application of heat (heating through liquid sulphur).
5. Collection of final product.

1. Preparation of Kajjali : (Dry Trituration)

The weighed amount of purified Parada (Mercury) and Gandhaka (sulphur) were triturated in a Khalva Yantra up to the formation of lustureless, smooth, soft and black fine powder (Kajjali). After that the weighed amount of Swarna (Gold) and Tamra (Copper) Bhasmas were added and mixed uniformly in it.

2. Bhavana : (Wet Trituration)

The sufficient quantity of Kumari Patra Majja (Flesh of Aloe Vera leaf) was added in the prepared Kajjali and triturated till its dryness. This process of wet trituration was repeated for seven times.

3. Formation of Pugakara Gutika (Betal nut shaped conical mass)

The whole material was given the shape of a conical mass (Betal nut) with the help of Kumari Patra Majja and dried in sunlight. After complete drying the Pugakaragutika was wrapped with a four folded pure silk cloth and tied well with a thread of sutured through needle with thread to form a pottali (bundle).

4. Application of Heat :

[A] The pottali ws suspended in liquid sulphur with the help of a glass rod. Because in the process the pottali is suspended like a Dola (Pendulum), therefore, the whole arrangement is known as *Dolayantra* which is generally used for the swedana purpose (a special method of purification of drugs).

[B] After the Dolayantra was subjected to heat through *Valukayantra* where Valuka (sand particles) was used to give indirect heat and to avoid sudden variation in quantum of heat.

[C] Mild heat should be maintained till the desired characteristics are achieved i.e.

(i) The surface lustre of melted sulphur should appear like sky blue in colour during heating.

(ii) The metallic sound should be produced from pottali when it is gently hammered with an iron rod.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(D) The two thermometers of 360°C were fixed one in the sand and other in liquid sulphur to measure heat in relation to temperature as shown in graph (Fig. 1)

5. Collection of Final Porduct :

The pottali was opened in hot condition because on cooling sulphur becomes solid and the silk coth adhered to the pottali.

If any sulphur remains adhered to Pottali then that should be scrapped with a knife. At last Pottali was rubbed with a cloth to produce lustre.

Precaution :

1. Heat should be mild i.e. around 200°C to 240°C throughout the process otherwise sulphur may catch fire.
2. The cloth should be of pure silk to avoid the burning of cloth during process.
3. Pottali should not touch the pot from any side and should be hanged in the middle of pot submerged in liquid sulphur during whole porcess.

Discussion :

Though, a lot of mercurial preparations are in use for therapeutic purposes since 8th-9th century A.D. but pottali Rasayana preparation came in existance since 12th century A.D. to overcome many problems and drawbacks as following -

1. In ancient time the costly mercurial medicines were generally used to be stored in earthen or glass pots which have tendency to break with slight jerks so to overcome the problems of transportation Pottali preparation came in existance. Being compact and tough in nature, on breaking of its container there is no question of its loss due to scattering.
2. Usually so many medicines at a time are required for a patient according to his or her disease and condition but at a time one single pottali is sufficient for many complications instead of many numbers of medicines because Pottali Rasayana is a comprehensive medicine.
3. Pottali Rasayana is effective in minute dose and has a quality of easy availability at any time in emergency.
4. For internal administration of Pottali Rasayana the lines are scratched on a *Kasouti stone* with it.

These lines are then mixed with honey etc. by rubbing them propely so that the honey is mixed with drug which may be lickied by the patient. The number of lines depend on the dose which ultimately depdends upon condition of the patient and severity of disease. Because it is administered by scratching so very find form of drug is obtained, suitable for easy absorption and assimilatin into the biological system which play an important role in exhibiting the effect of drug on body.

There were several methods for its processing -

1. Kapardapurana Method[7]:

In this method the drug materials are triturated with prescribed liquid to make a paste which is then filled up into the (Kaparda) and dried well in sunlight after closing the mouth of Kaparda (Cowry-Cyprea moneta) with Tankana (Borax) and Arka (*Calotropis prosera)* or Snuhi Ksheera (*Euphorbia nerifolea*). These Kaparda are then subjected to strong heat through *Gajaputa.* After self cooling drug matarial is taken out and powdered well to use in the dose of one of four RAtti (125 mg - 500 mg).

2. Putapaka Method[8]

The drug materials are triturated with prescribed liquid to make semisolid form which is then given the shape of rounded balls (*Karshamanasca Vartika or Pugamatra Gutika*) and dried well. These are kept in a Musha (Crucible) and subjected to heat through Bhudhara Yantra or Laguputa. Then they are taken out on self cooling and grinded well in powder form to use for therapeutic purpose in the dose of one to four Ratti (125 mg to 500 mg) along with suitable Anupana (Adjuvents).

3. Validravapaka Method[6]:

It was introduced by "Yogaratnakara" in 17th century A.D. Now-a-days it has become most

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

common and popular method in which the drug materials are heated through liquid sulphur. The drug is used in the form of fine powder which is obtained after rubbing it on Kasauti Pattara (stone) in the dose of one to four Ratti (125 mg to 500 mg)

The Hemagarbha Pottali has been prepared by adopting Validaravapaka method except one change i.e. instead of direct heat here we have preferred to use indirect heat through *Valukayantra* due to following reasons -

1. To avoid sudden variation in quantum of heat.
2. To maintain uniform and controlled heat.
3. To avoid accidental burning of sulphur.

It is supposed that during the process sulphur acts as a binding agent. The space between the particles of drug material is occupied by melted sulphur and air from this space comes out in the form of air bubbles. So due to increased compactness of the particles, the sound of the material also becomes changed after preparation of pottali.

Conclusion :

It seems that Pottali Rasayana came in existance -

* To keep various drugs all together at one place.
* To avoid loss of precious drugs.
* To provide finer form of drug, suitable for easy digestion and assimilatin in the biological system on internal use.

For processing of Pottali Rasayana Valukayantra method may be considered the best which is capable in overcoming its pharmaceutical drawbacks. It is also suitable for standardizing the Mridu Agni in terms of modern parameters i.e. temperature in °C.

References :

1. Charaka Samhita - Sutrasthan 1/4-5 Commented by Kashi Nath Shastri and Gorakhanath Chaturvedi 12th edition Pub. by Chaukhambha Bharati Academy, Varanasi - 1986.
2. Sushruta Samhita - Sutrasthan 1/7 Commented by Atridev 5th edition Pub. by Motilal Banarasidas, New Delhi - 1981.
3. Charaka Samhita - Chikitsasthana - 1/5 Commented by Kashi Nath and Gorakha Nath-14th edition Pub. by Chaukhambha Bharati Academy, Varanasi-1987.
4. Rasendra Sara Samgraha - Chp. 1/4 Commented by Pragyadatta Joshi 6th ed. Pub. by Chaukhambha Amar Bharati Prakashana, Varanasi - 1981.
5. Rasa Ratna Samuccya - Chap. 8/59-83 commented by Prof. Dattatreya Kulkarni 3rd edition Pub. by Meharchand Lakshamandas. New Delhi - 1982.
6. Yogaratnakara - Kasachikitsa - Page 420, Commented by Lakshmipati Shastri 3rd ed. Pub. by Chaukhambha Sanskrit Sansthan, Varanasi - 1983.
7. Sarngadhara Samhita - Madhya Khanda - 12/ 97-106 Commented by Brahmanand Tripathi 2nd ed. Pub. by Chaukhambha Sura Bharati, Varanasi - 1994.
8. Sarngadhara Samhita - Madhya Khanda - 12/107–113.

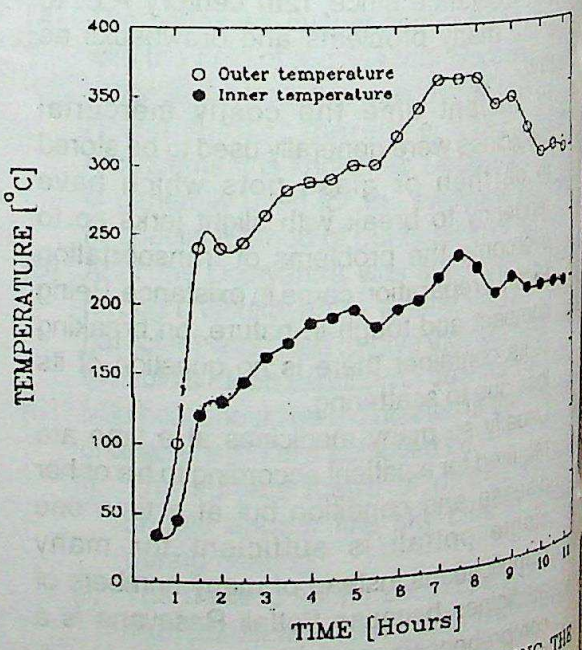

FIG.1: TIME AND TEMPERATURE DURING THE PREPARATION OF HEMAGARBHA POTTALI

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Preliminary Phytochemical Studies on the roots of *Boliospermum montanum* Linn.

S. Nayak* and A.K. Singhai**

INTRODUCTION :

Baliospermum montanum[1], commonly known as Danti belongs to family Euphorbiaceae. The plant is an monoceious under shrub (0.9 to 1.8m height) wiht herbecaous branches from the root. It is distributed in the outer range of Himalaya from Kashmir and Bhutan upto 3000ft. The leaves are small, lanceolate, ovate, palmately lobed, petioles with a pair of stipular glands. Flowers in numerous axillary racemes, root is pungent, purgative, anthelmentic, diuretci alexitoric, useful in pain inflammation, leucoderma and jaundice[2-3].

The seeds resemble those of the caster plant and act as a drastic purgative They are also used externally as a drastic purgative. They are also used externally as a stiulant and rubefacient. The oil is powerful hydrogouge. The leaves are used for the healing of wounds.[4]

Seed oil of *B.montanum* contains a new hydroxy fatty acid and axillarnic acid. Ethanolic extract of roots shows the presence of five nw phorbol esters. Leaves contain β–sitosterol, β–D-glucoside and hexacosanol. The presence of steroids, Terpenoids and flavanoids is also reported from the plant[5-6].

The plant is widely used by tribals to treat various ailments. A number of marketed formulation are also available including Dhanvatram ghatam' and Saindhavadgam tail etc. Results of present studies will help in the further validation and quality control of *Baliospermum montanam.*

Materials and Methods

Collection and Identification :- The plant *Baliospermum montanum* was collected from the Tili village (Sagar Distt., M.P.) in the month of February. The collected plant was identified from the Department of Botany, Dr. H.S. Gour Vishwavidyalaya, Sagar. Subsequently the roots were also purchased from local market and the authenticity was established. Roots were washed, dried coarsely powdered and kept in a air tight container for further studies.

Moisture content : 10 gms of air dried powdered (roots) drug was kept in a oven and dried upto two constant reading percent moisture content was calculated by following formula.

$$\%\text{Moisture} = \frac{t_1 t_2}{t_1} \times 100$$

Determination of Ash[7]: About 5 gms of accurately weighed powdered drug was taken in a silica dish previously ingnited and weighed. The powdered drug was scattered in a fine even layer on the bottom of the dish, incinerated by gradually increasing the heat, not exceeding dull red that until free from carbon, kept in a desiccator for cooling and weighed.

Acid insoluble Ash : Ash obtained by above was boiled in 25 ml of dilute hydrochloric acid for five minutes. Insolubel matter was collected in a Gooch crucible, washed with hot water ignited and weighed. Percentage of acid insoluble ash was calculated with reference to the air dired drug.

Determination of Extractive values : 20 gms of powdered drug was macerated with petroleum ether (40°–50°) Benzene, chloroform, ethanol and water separately for 48 hrs, filtered and solvent was evaporated under reduced pressure and percent extractive values in different solvent was calculated as w/w with reference to the air dired drug.

Extraction with Ethanol[8]: 600 gms defatted drug was extracted with ethanol 95% in a soxhlet apparatus, for about 35–40 cycles for complete extraction, solvent was removed under reduced pressure, thus obtained ethanolic extract was weighed and stored.

Fractionation : Ethanolic extract (5.0 gm) was refluxed with chloroforms in a round bottomed flask fitted with a reflux condenser thrice, complete refluxing gave rise to chloroforom soluble and chloroform in soluble fraction.

* VNS Institute of Pharmacy, VNS Campus, Neelbud, Bhopal (M.P.)
** Department of Pharmaceutical Sciences, Dr. H.S.Gour Vishwavidyalaya, Sagar (M.P.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Quantitative Chemical Tests[6]

1. Detection of Fixed oils

A small quantity of petroleum ethar extract was pressed between two filter papers. Oil stains on the paper indicate the presence of fixed oil.

2. Detction of fats

A few drops on 0.5 N alcoholic potassium hydroxide was added to a small quantity of petroleum ethar extract along with a drop of phenolphthaline. The mixture was heated on water bath for 1-2 hours. Formation of soap indicates the presence of fixed oils and fats.

3. Test of carbohydrates.

A small amount of drug is treated with Molish reagent. Appearance of purple colour indicates the presence of carbohydrate.

4. Test of tannins

To about 5 ml of an aqueous extract of the drug 0.5 gm of sodium acid phosphate was added. Warmed, kept a side for cooling and filtered. To the filtrate 2% solution of phenazone waa added. Bulky precipitation indicates the presence of tannins.

5. Test of saponins

Small quantity of the extract treated with ether. Precipitation proves the presence of saponins.

About 1 ml of alcoholic extract was diluted with distilled water to 20 ml and shaken in a graduated cylinder for 15 minutes. A layer of foam indicates the presence of saponins.

6. Test for glycosiders

Small quantity of the extract was taken in a flask and hydrolyzed by acid (HCl) and neutralized by excess alkali and then treated with Felhing solution. A precipitate of red colour (of cuprous oxide) is obtained if glycosides are present.

7. Test for flavonoids

Small quantity of the extract was dissolved in alkalis giving yellow solutions which on addition of acid become colurless.

8. Test for alkaloid

Most alkaloids are precipiated fr... mental or slightly acidic solution by -

a. Mayer's reagent - Potassium mercuric iod... solutions, giving a yellow precipitate.

b. Droggendroff's reagent - Solution ... potassium bismuth iodide, giving a reddish orang... precipitate.

Thin Layer Chromatographic Studies.[10]

Ethanolic extract, chloroform solub... fraction and insoluble traction was subjected ... thin layer chromatographic studies. Sillica gel ... used as adsorbent and 0.2% VAnilline in conc... H_2SO_4 was used as deleting agent, variou... solvent systems were used to develop ... chromatograms, R*f* values were calculated b... following formula.

$$Rf = \frac{\text{Distance travelled by the spot}}{\text{Distance travelled by the solvent}}$$

Results and Discussion

Results are presented in table 1, 2 and 3. Prelimainary phytochemical studies on the roots of *Baliospermum montanum* indicates that the moisute content in the roots, is 5.8% w/w, Ash value 3.7% acid insoluble ash 1.6% w/w, extractive values in petroleum ether 1.8%, w/w Benzene 2.3% w/w, chloroform, 3.6% ethanol 9.4% and water 10.6% w/w yield, fractionations of ethanolic extract with chloroform gave 37.5% chloroform soluble fraction while chloroform insoluble fraction was obtained 62.5% w/w (Table-1) of the ethanolic extract.

Thin layer chromatographic studies suggest that the ethanolic extract contains at least seven active consituent of R*f* values 0.12, 0.2... 0.30, 0.43, 0.48, 0.62 and 0.89 in methanol: chloroform (75:25) TLC profile of chloroform soluble fraction shows presence of three spots of R*f* value 0.27, 0.43 and 0.90 while chloroform insluble fraction shows the presence of four spots of R*f* values 0.13, 0.26, 0.50 and 0.60. A number of solvent system were tried methonal: chloroform (75:25) table-3 was found to the best solvent detecting serum sports.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Qualitatvie chemical tests of petroleum ethar extract shows the presence of fixed oils and fats, while ethanolic extract were shown the presence of tannins and alkaloids (Table-2). Present investigations were carried out to establish some standards for further validation and standardization of the *B. montanum*.

Table - 1. Preliminary phytochemical studies on the roots of *Baliospermum montanum*.

Parameters	% w/w
Moisture content	5.8
Ash value	3.7
Acid insoluble ash	1.6
Extractive values	
Petrolume ether	1.8
Benzene	2.3
Chloroform	3.6
Ethanol	9.4
Water	10.6
Extraction with ethanol (95%)	10.22
Chloroform soluble fraction	37.5
Chloroform insoluble fraction	62.5

Table - 2 : Qualitative chemical teste on the roots of *Baliospermum montanum*.

Plant constituents	Test/Reagent used	Results
Pet.ethar extract		
Fixed oils	Filter paper	Present
Fats	0.5 N alcholic Potassium hydroxide	Present
Ethanolic extract		
Carbohydrates	Molisch test	Present
Tannis	Phenazone test	Present
Saponins	Forth test	Present
Glycosides	Felhing's test	Absent
Alkaloids	1. Mayer's test	Present
	2.Droggendroff's Test	Present

Table - 3 : TLC studies on the roots of *Baliospermum montanum*.

Ethanolic extract Rf	Chloroform soluble fraction Rf	Chloroform insoluble fraction Rf
0.89	0.90	0.60
0.62	0.43	0.50
0.48	0.27	0.26
0.43		0.13
0.30		
0.26		
0.12		

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Solvent System Methanol : Chloroform
75 : 25

Absorbent – Silica get G

Detecting agent – 0.2% Vanilline in H_2SO_4

References :

1. Chopra, R.N., Nayar, S.L., Chopra, I.C., "Glossary of Indian Medicinal Plants", National Institute of Science Communication, New Delhi, Fourth reprint, 1996, p. 32.
2. Chatterjee, A., Pakrashi, S.C. "The Treatise on Indian Medicinal Plants", National Institute of Science Communication, New Delhi, Vol.III, 1997, p. 23.
3. Kirtikar, K.R., Basu, B.D., "Indian Medicinal Plants", M/S B.S. Mahendrapal Singh, Dehradun, Vol. III, II Edition, 1998, p. 22275.
4. Nadkarni, K.M., Nadkarni, A.K. and Chopra, R.N. "Indian Materia Medica", Popular Prakashan, Bombay, Vol.1 (reprint), 1999. p. 166.
5. "The Wealth of India - Raw Materials", CSIR, New Delhi, Vol. 1, 1945, p. 144.
6. Prabhakar, Y.S. and Suresh Kumar, D., *Fitoterapia* LXI (2), 1990, 105.
7. The Pharmacopoeia of India, 1966, p. 147.
8. Brain, K.R., Turner, T.D., "The Practical Evaluation of Phytopharmaceuticals", Wright Scientechnica, Bristol, 1975, p.83.
9. Kokate, C.K., "Practical Pharmacognosy" Ballabh Prakashan, New Delhi, I edi., 1986. p. 112.
10. "Vogal's text book of Quantitative Chemical Analysis" Pearson education (Singapur), Pte.Ltd., Indian Branch 482, F.I.E., Putpudgang, Delhi, 6th edi., 2002, p. 250-235.

खिलते यौवन के निशान भला चेहरे पर आए क्यों कर ?

यौवन के साथ-साथ मुहासों का आना भी स्वाभाविक है, पर इनके इलाज के लिए क्रीम आदि से भी पूरी बात नहीं बनती । ये त्वचा की सतह पर ही काम करती है, समस्या की जड़ तक नहीं पहुंच पातीं और इसके कारण कभी-कभी रह जाते हैं भद्दे निशान । बैद्यनाथ सुरक्ता रक्त साफ कर, त्वचा में निखार लाती है और आपके चेहरे की दमक बन जाती है खिलते यौवन की निशानी !

बैद्यनाथ

सुरक्ता

हर्बल रक्त शोधक

कील मुहांसों के लिए

सुन्दर त्वचा भीतर से निखरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

POLLALI KALPANA - A PRESTIGIOUS PREPARATION OF RASA SHASTRA

*Dr. Sridurga
**Dr. C.B. Jha

Introduction

Rasaushadhies are derived from metals and minerals by applying various specialized procedures like shodhana, samskara, jarana, marana, murchchhana etc. After murchchhana, Parada attains definite disease curing capacity. Kajjali, Parpati, Kupipakwa and Pottali are the important derivatives of Parada Murchchhana. Pottali is a prestigious preparation of Rasa shastra used in the management of emergency conditions. It is considered as a life saving drug of Ayurveda. It has wide range of therapeutic efficacy and when used with various anupanas it cures all kinds of diseases.

Definition

When a group of materials are mixed together uniformly, triturated with certain liquids, made into a conical mass, binded in a cloth and boilled in molten sulphur a hard substance is formed which is known as pottali.

"Vistaritasya vastuni alpi bhavanam pottam

pottam lati grihnati anen iti pottali".

Nessecity of invention of pottali.

According to Rasayana sara, the difficulties arising from selection of vessel/ container for preservation of drug, transportation, breakage of vessel and loss of medicine can be overcome by the pottali kalpa. Thus, the chief advantages of pottali include

i. It is a small hard piece.
ii. It is not easily breakable.
iii. It is portable.
iv. It is unaffected by atmospheric conditions and does not react with the container. It is fast acting and has wide range of therapeutic efficacy.

History

i. **Samhitas :-** During the samhita period, the pottali prepared with vegetable drugs were used in the management of various disorders (Ch.Chi. 14/40,44, Shu. Chi. 32/12). In Astang Samgraha also the use of pottali for swedana purpose has been mentioned.

ii. **Rasa Texts :** Rasa Ratnakar is the first treatise in which pottali kalpa was mentioned. Ratna garbha and Shankha garbha pottali were mentioned in it and these are prepared through puta paka. In Rasendra Sara Samgraha of Krishna Gopal Bhatta five pottali kalpas were mentioned i.e. Ratna Garbha, Lokeshwara, Hema Garbha, Grahanikaparda and Hamas pottali. These are prepared by trituration method. In Rasa Chintamani of Sri Ananta Dev Suri paka of pottali has been indicated in liquid Gandhaka.

iii. In Yoga Ratnakara also it has been clearly mentioned that pottali should be prepared by processing in boiling sulphur. Now a days this method is followed for the preparation of pottali.

iv. Other than processing in liquid and boiling sulphur various other methods of preparations like Puta paka (Varatika, Shankha, Musa, Sharava, Gaja puta, Lavaka puta etc) Mardana (Bhavana) Yantra paka (Lavana, Valuka, Bhasma Yantras), boiling in other liquids like Krishara, ksheera etc also have been mentioned in the texts.

Pottali prepared through processing in boiling sulphur :

Material and methods

Chief ingredinetns : - Parada, Gandhaka, Swarna,
Other materials :- Bhasmas and Pisti
Bhavana Dravyas :- Swarasa of Ghrit Kumari, Palasa puspas, Tulasi, Chitraka, Gumacacia, Isabgol.

* Ph.D. Scholar ** Reader & Head
Department of Rasa Shastra, Institute of Medical Sciences, B.H.U., Varanasi - 221005

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Shape and size :- Shikharakara (Rasayanasara),
Puga matra gutika karya (Vaidya Chintamani)
Karsha pramana vati kritwa (Rasayana Samgraha)
Shankwakara (Rasamritam).

Cloth :- Kausheya Vastra (silk cloth) is specially indicated for making pottali. Binding of pottali with silk thread also has been mentioned.

Vessel / container :- Earthen vessel / metallic and porcelain vessels for melting and boiling of sulphur.

Quantity of sulphur :- Sama guna to Shadaguna (pottali should be suspended in boiling sulphur. Hence quantity of sulphur may be taken accordingly).

Principle :- Dola yantra method of heating (pottali should be completely merged in boiling sulphur and should not touch the bottom of the vessel).

Method of heating :- Instead of direct heating valuka yantra method of heating is considered best to prevent the burning of sulphur. Charcoal furnace/Gas burner/ electric heater may also be used.

Colour of Product :- Rakta varna (contains Hingula, Rasa sindura, Chandrodaya etc)
Sweta varna (contains Malla, Rasa Karpura etc)
Peeta varna (contains Hartala, Gandhaka etc)
Mishra/Vividha varna (contains mixture of various metals)
In vividh varna yukta pottali, the drugs are separately processed and then mixed together in a single pottali.

Procedure :

i. Parada and Gandhaka are first made into Kajjali and bhasmas, Pisti etc are later addet to the prepared Kajjali. If worts/thin foils of Swarna, Rajata etc are taken, they are first mixed with Parada to form amalgam, then sulphur is added to it to prepare Kajjali.

ii. Bhavana with advocated liquids is done for proper and uniform mixing of materials. Bhavana also binds the material and desired shape may be given. If liquid is not mentioned water may be taken as a bhavana dravya. To impart good colour and make it hard, water is advocated as bhavana dravya. For enhancement of medicinal properties, various herbal juices may also be taken. White yolk of egg is also indicated for bhavana.

iii. After giving bhavana with appropriate liquid, it is made into a conical shaped mass.

iv. It is then dried propely. Drying in both shade and sun has been advocated. It should be dried in shade to prevent the formation of cracks. But in some cases drying in intense heat of sun also has been advocated.

v. After drying, the conical mass is kept in a silk cloth the made into pottali.

vi. The pottali is suspended in molten sulphur and subjected to valuka yantra method of heating.

Paka kala/Duration of heating :

The following terms have been used in the texts to denote the duration of heating in different pottali.

i. Yamardh ii. One Yama iii. Dwiyama iv. Ghati dwitaya
v. Ghatyante

According to Yogaratnakara, it should be heated on mild fire till the boiling sulphur attains sky blue colour.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"Mandagnina pachedyavadvyomvarnantu gandhakam".

Paka pariksha :-
i. Solid metallic sound should be produced by the pottali.
ii. Boiling sulphur should attain sky blue color.

Paschat Karma :- Pottali should be opened in hot condition itself and polished with sharp knife.

Precautions :- Sulphur may catch fire on intense heat. Hence pottali paka shoud be always done on mild heat.

Dose :- 1 to 4 Ratti

Method of use :- Pottali is rubbed on touch stone and powder thus obtained is given with various diseases.

Table showing various pottali, their ingredients, dose and indications

S.No.	Name of the pottali	Ref.	Chief ingredients	Dose	Indications
1.	Grahani kaparda Pottali	R.S.S.	Parada, Gandhaka, Tankana Loha, Kapardika bhasma	1 Ratti	Vataja Grahani
2.	Hamsa Pottali	R.S.S.	Parada, Gandhaka, Tankana Vatsanabha, Trikatu, kapardika bhasma	1 Ratti	Grahani
3.	Hamasa garbha Pottali	B.R.	Parada, Gandhaka, Kapardika bhasma, Shunthi, Maricha, Pippali, Vatsanabha	1 Ratti	Grahani
4.	Hemagarbha Pottali	R.S.S.	Rasa sindura, Gandhaka Swarna, Tamra bhasma	4 Ratti	Raj yakshma
5.	Hiranyyagarbha Pottali	B.R.	Parada, Gandhaka, Swarna bhasma	1 Ratti	Pandu, Kamala, Halimaka, Prameha, Shoola, Jwara, Atisara Ajirna
6.	Kanchana Pottali	R.Chi.	Parada, Gandhaka, Swarna bhasma, Kapardika bhasma	4 Valla	Jwaratisar, Vata-Kaphaja, Jwara, Mandagni, Kushtha
7.	Laghu Pottali	R.Chi.	Parada, Gandhaka, Swetabhraka bhasma Kapardika bhasma	2 Valla	Sannipata, Vatavyadhi Atisara, Mandagni, Prameha
8.	Lokanatha Pottali	R.P.S.	Parada, Gandhaka, Tankana Shankha bhasma	2 Valla	Sarva roga hara
9.	Lokeshwara Pottali	R.S.S.	Rasa sindura, Gandhaka Swarna bhasma	4 Ratti	Anga Karshya, Kasa, Kshaya, Agnimandya

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

S.No.	Name of the pottali	Ref.	Chief ingredients	Dose	Indications
10.	Mriganka Pottali	R.P.S.	Parada, Gandhaka, Tankana Swarna bhasma	2 Ratti	Kshaya, Sarva rogahara
11.	Netra Pottali	R.S.	Swarna gairika, Darvi, Shiva Mishri, Karpura, Sphatika Ahiphena	Bahya prayoga	Netra daha, Netra srava Netra peeda, Shuklanjana
12.	Panchamrita Pottali	R.Chi.	Gandhaka, Kapardika, Shankha, Swarna Kantaloha bhasma	1 Valla	Sarvatisara, Ajirna, Shula, Mandagni, Vatavyadhi, Prameha, Daurbalya.
13.	Ratnagarbha Pottali	R.R.	Parada, Gandhaka, Swarna Rajata, Tamra, Mukta, Loha Swarna makshika, Shankha Vajra bhasma.	4 Ratti	Jwara, Kshaya, Asta maharoga
14.	Shankha garbha Pottali	R.R.	Parada, Gandhaka Shankhanabhi	1 Ratti	Raj yakshma, Vataja, Pittaja Roga
15.	Swarna garbha Pottali	R.S.	Parada, Gandhaka, Tankana Swarna, Tamra, Vanga Shankha, Mukta, Kapardika bhasma	2 Ratti	Samgrahani, Atisara, Kasa, Jwara, Rajayakshma
16.	Vaishwanara Pottali	R.R.S.	Parada, Gandhaka, Tankara	1-2 Ratti	Mandagni
17.	Vaijra Pottali	R.P.S.	Parada bhasma, Vajra bhasma	Bahya prayog	Dantadardhyakara

R.S.S. : Rasendra Sara Sangraha,
R.Chi. : Rasendra Chintamani,
R.S. : Rasayana Sangraha,
R.R.S. : Rasa Ratna Samuchchhaya
B.R. : Bhaishajya Ratnawali
R.P.S. : Rasa Prakasa Sudhakara
R.S. : Rasa Ratnakara

Conclusion :

Pottali is a prestigious Rasa preparation. As per texts, it is claimed to possess wide range of therapeutic properties. It is said to cure various dreadful diseases. However, the use of pottali in the present era is very limited. To make its use frequent and popular amongst the physicians it is necessary to standardize the methods of preparation of various pottali and to evaluate their safety and efficacy on experimental and clinical levels.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलोंजी पर मेने अनुभव

रसोई में सदैव विराजमान रहने वाली कल्याणकारी कलोंजी के बारे में हमारी मातायें बहुत कम जानकारी रखती हैं। कलोंजी भात एक मसाला नही है । इसमें दिव्य चिकित्सकीय गुण भरे पड़े हैं । मेरे शोध संस्थान में प्रयोगों के बाद जो कुछ इसके गुण धर्मों का सत्यापन हुआ है पाठकों को उनसे अवगत कराने के उद्देश्य से यह लेख लिख रहा हूँ जिससे कम खर्च में मातायें अधिक लाभ ले सकें और चिकित्सक समाज इसका उपयोग कर सके ।

कलोंजी का परिचय :- इसके छोटे सुन्दर पौधे होते हैं। पूर्णद्विनिमान, पुष्प एकांकी, लम्बे पुष्प वृन्त पर फीके नीले रंग के होते हैं । बीज त्रिकोणाकार काले रंग के इन्हें मसलने पर नीबू जैसी तीक्ष्ण गंध आती है । बीजों का उपयोग मसाले के रूप में सभी जगहों पर किया जाता है।

विविध भाषान्तर मत नाम - संस्कृत-कुञ्चिका, उप कुञ्चिका-उपकुञ्चिका, कल्वाञ्जिका, कालिका, पृथु, पृथ्वीका, स्थूल जीरक ।

हिन्दी - कलोंजी, मंगरैला गुजराती ।
मराठी - कलोंजी ।
बंगाली - कालाजीरा ।
फारसी - स्याहदाने ।
अंग्रेजी - Black cumin, Small Fennel
लैटिन - Nigella Sativea

गुण

रस - कटुतिक्त ।
वीर्य - उष्ण ।
विपाक - कटु ।
दोषघ्नता - कफ वातहर ।

कलोंजी कटु और तिक्त, विपाक में कटु, वीर्य में उष्ण रूक्ष, तीक्ष्ण, दीपन, दुर्गन्धनाशक, पित्तहर, मेध्य गर्भाशय विशुद्ध कर पाचन, बल्य, वृष्य, सुगन्धित कफ-वात, गुल्म, आमदोष, आध्मान वातगुल्म, छर्दि, अतिसार, कृमि, ज्वर वात और कफ के विकार आदि रोगों में प्रयुक्त होते है। आर्तव - प्रवर्तक और रूचिकर है ।

उपयोगी - कलोंजी गर्भाशय - विशुद्धिकर होने से प्रसूति में प्राय: सेवन करायी जाती है । इससें भूख अच्छी लगती है । यदि घृत भी सेवन कराया जाए तो वह भी जीर्ण हो जाता है । गर्भाशय में यदि कुछ दुष्टि शेष रह गयी हो तो उसे भी निकाल देती है । कटिशूल नहीं होने पाता । मल-मूत्र की प्रवृत्ति यथावत होती है और स्तनों में दूध की वृद्धि होती है । पेट में आध्मान नहीं होता है ।

कष्टार्तव में भी कलोंजी जीरक देने से ऋतुकाल की पीड़ा कम होती है । गर्भाशय का संकोच विकासादि क्रिया करके आर्तव साफ लाने का कलोंजी में अच्छा गुण है । एक-दो तोले की मात्रा में सदा कलोंजी जीरक खाने से रजोदर्शन उत्तम होता है ।

विषमज्वर में आधा तोला कलोंजी जरामून कर गुड़ के साथ मिलाकर देने से लाभ होता है ।

कलोंजी के सेवन से कंडू कम होती है । कलोंजी 5 तोला, बावची - 5 तोला, गूगल - 5 तोला, दारूहल्दी - 5 तोला, गंधक 2½ तोला । इनके कल्क को 1 सेर नारियल तेल में पका लेवें ।

इससे पामा विचर्चिका तथा त्वचा के सब रोग दूर होते हैं । शोथयुक्त अर्श में कलोंजी की धूनी देने से शोथ और वेदना कम होती है । इसको खिलाने से गण्डूपद कृमि बाहर निकल आते हैं ।

लोहगन्धि नि:श्वास और धूमगन्धि उद्गार में 1/4 तोला कलोंजी, 1/2 तोला मिसरी के साथ खिलाने से लाभ होता है ।

कैयदेव निघण्टु में कारवी, सुषती, वाष्पिका इत्यादि उपकुञ्चिका के पर्याय दिए हुए हैं ।

प्याज के बीज को कलोंजी मानने वाले भी कई लोग हैं । ऐसा कैयदेव निघण्टु के संपादक सुरेन्द्र मोहन के वक्तव्य से लगता है, जो सत्य नहीं । कलोंजी अलग द्रव्य है ।

सूतिका ज्वर में कलोंजी उपयोगी है, ऐसा कई मान कहते हैं ।

कलोंजी जीरक कृमिघ्न, मूत्रल, स्तन्यवर्धक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रज:स्रावकारी और वातहर है । खूब कड़वी दवाओं के साथ तथा विरेचक औषधों के साथ इसकी भोजन की जाती है । गर्भाशय संकोचनार्थ प्रसवानन्तर तुरन्त इसका क्वाथ दिया जाता है । इससे दूध बढ़ता है । कृमि में इसे दिया जाता है । चित्रकमूल के साथ कलोंजी अजीर्ण अग्निमांद्य अतिसार और विषमज्वर में प्रयुक्त होती है । रज:स्रावकारी होने से यह अल्पार्तव और कष्टार्तव में उपयोगी है । बड़ी मात्रा में देने से यह गर्भस्राव करती है । पानी में उबालकर कलोंजी हाथ-पैर के वेदनायुक्त शोथ में बाँधी जाती है । उनके कपड़े कीड़ों से खराब न हो इसलिए इसके बीज उन कपड़ों के बीच डाले जाते हैं ।

उदरवात, उदरकृमि मन्दाग्नि तथा ज्वरमल में आम की प्रवृति आदि लक्षणों के साथ जब महिलाओं में आर्तव विकृतियाँ श्वेत प्रदर या गर्भाशय प्रदाह आदि विकारों के कारण जब महिलाओं को बंधत्व उत्पन्न होते हैं तब आधुनिक चिकित्सक जब औषधियों से रोग पर काबू नहीं पाते तो गर्भाशय लेखन की सलाह देते हैं उक्त लक्षणों से युक्त महिलाओं में कलोंजी का उपयोग कराने से समस्त लक्षणों का शमन दो-तीन माह में होकर रज:शुद्धि हो जाती है । श्वेत प्रदर गर्भाशय स्रोत तथा शरीर में भारीपन मुख का स्वाद एवं ज्वर सभी समाप्त होकर बंधत्व का नाश करते हैं । इस हेतु कलोंजी 1 तोला की मात्रा में समान भाग पुराने गुड़ में मिलाकर सुबह+शाम 1-1 तोला की मात्रा में उष्णोदिक के साथ देते हैं ।

कष्टार्तव, अत्रार्तव, अल्पार्तव आदि विकारों में भी कलोंजी गजब का काम करती है । उक्त समस्याओं में 6 माशा की मात्रा में गरम जल या पुराने गुड़ के साथ दो-तीन माह तक अन्तिम सप्ताह में देते रहने से उक्त समस्या में लाभ दृष्टिगोचर होता है जैसा कि कलोंजी को कफ वातहर एवं वृषिय कहा है । कलोंजी स्त्री हार्मोनस का स्राव समुचित रूप से करके उक्त समस्याओं का निराकरण करती है जो संस्थान के प्रयोगों द्वारा सत्य सिद्ध होता है ।

गर्भपात या औषधियों के सेवन के बाद जब गर्भ का कोई हिस्सा गर्भशय में शेष रह जाता है तब लगातार रक्त स्राव पेडु प्रदेश में दर्द सूजन एवं बदबूदार आर्तव का स्राव होता है उसके कारण ज्वर अत्यन्त कमजोरी तथा रक्त अल्पता एवं घबराहट आदि लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं । ऐसी अवस्था में कलोंजी 2 तोला सोया के बीज 2 तोला, पुराना गुड़ 4 तोला मिलाकर 2 मात्रा बना लें । सुबह+शाम गर्भ जलसे इसका सेवन कराने से गर्भ का शेष भाग निकल जाता है और शोथ तथा सूल का शमन हो जाता है और तदजन्य समस्त लक्षण दो-चार दिन में खत्म हो जाते हैं ।

वैद्य ओमवीर सिंह 'वीर'
एम०डी० (आयु०)
निर्देशक, धन्वन्तरि अष्टाँग आयुर्वेद शोध संस्थान
दरोगा बाग, उन्नाव (उ०प्र०)
फोन न०-0515-2825990

बैद्यनाथ
पंचसकार चूर्ण
पेट साफ कर पाचन शक्ति को बढ़ाता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व

सरकारी उपेक्षा और आयुर्वेद के अस्तित्व का प्रश्न

दिसम्बर, 1963

सरकार के कुछ कार्यों के आधार पर कुछ लोग कहते हैं कि सरकार की दृष्टि आयुर्वेद के प्रति स्वस्थ नहीं है और सरकार धीरे-धीरे आयुर्वेद को मिटा देगी और देश में केवल एलोपैथी चिकित्सा पद्धति ही रह जायेगी । इस प्रकार के प्रचार से वैद्य समाज में एक निराश का वातावरण बनता जा रहा है, जो वस्तुत: सम्भावित सरकारी उपेक्षा के खतरे से बहुत अधिक भयावह है । इस प्रकार के प्रश्न उठने के कारणों पर यदि विचार किया जाय, तो स्पष्ट देखने को आता है कि जब तक देश में मेडिकल कालेज नहीं खुले थे, तब तक भारत में चिकित्सा का सर्वाधिक श्रेयप्राप्त साधन देशी चिकित्सा-पद्धतियाँ और प्रधानत: आयुर्वेद ही था । ज्यों-ज्यों मेडिकल कालेज खुलते गये, त्यों-त्यों आयुर्वेद के ज्ञान के प्रति लोग अनायास ही विमुख होते गये और जैसे-जैसे इन मेडिकल कॉलेजों से पाश्चात्य चिकित्सा पद्धति के स्नातक निकले, वैसे-वैसे नगर निवासी और उच्च वर्ग की जनता की चिकित्सा का श्रेय आयुर्वेद के स्थान पर एलोपैथी को मिलने लगा । धीरे-धीरे इसी प्रकार जनप्रिय वैद्यों के विस्तृत यश को डाक्टरों की चमत्कारपूर्ण कीर्ति ने मलिन कर दिया । इस प्रकार देशी चिकित्सा पद्धतियाँ दब गयीं और पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञान अपना जौहर दिखाने लगा ।

भारत वर्ष में विदेशी चिकित्सा-विज्ञान की उन्नति का सम्पूर्ण इतिहास यदि गौर से देखा जाय, तो वह वास्तव में मेडिकल कालेज की उन्नति का इतिहास है । मेडिकल कालेजों और विदेशी चिकित्सा-पद्धति एवं विदेशी औषधों की बढ़ती दर, देश का कितना पुष्कल धन व्यय हुआ और उससे जन-स्वास्थ्य एवं चिकित्सा के क्षेत्र में देश को कितने अंशों में लाभ हुआ, यह सर्वविदित है और इतना स्पष्ट है कि अब इसपर किसी प्रकार की टिप्पणी की अपेक्षा नही है । इतना तो निर्विवाद है कि भारत की स्वास्थ्य परम्पराओं के विघटन के साथ ही भारतीय जनता की स्वास्थ्य-विषयक रूचि और विचार धारा में जो परिवर्तन आ गया है, उसने देश के स्वास्थ्य को इतना निर्बल कर दिया है कि वह गम्भीर चिन्ता का विषय बन गया है और पाश्चात्य चिकित्सा-विज्ञान का अनुसरण, असीमित धन-व्यय कराके भी उस चिन्ता के समाधान की दिशा में कोई ठोस प्रगति नहीं कर सका है । फिर भी आश्चर्य यह है कि हमारे भाग्य-विधाता प्रगति के मोह में उसी लकीर पर जा रहे हैं ।

आश्चर्य तो तब होता है जब हम देखते हैं कि करोड़ों रुपये लागत वाले मेडिकल कालेजों की स्थापना में हमारी सरकार अब भी पूर्ववर्त्ती शासकों की अपेक्षा कहीं अधिक सक्रिय है । कदाचित् सरकार इस नीति का अनुसरण मोर कमेटी के सुझावों पर कर रही है, जिसका सर्वत्र विरोध हुआ था । हम नि:संकोच कह सकते हैं कि मेडिकल कालेजों की बढ़ती, आयुर्वेद और वैद्यों की रही सही स्थिति को भी समाप्त करने का कारण सिद्ध हो सकती है । एक समय कलकत्ता आयुर्वेद का केन्द्र था । समूचे बंग प्रदेश में कविराजों का विशिष्ट स्थान था, परन्तु मेडिकल कालेजों के प्रसार ने आज उसी कलकत्ते में आयुर्वेद और कविराजों की जीविका को ऐसा चूस लिया है, जैसे किसी सघन वृक्ष के उदर कोई लता (बेल) फैलकर उस वृक्ष को सुखा देती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवैध पंजीयन - दोषी कौन

सेवा में,

आदरणीय सम्पादक महोदय
सचित्र आयुर्वेद
पटना (बिहार)

महोदय

उच्च न्यायालय-इलाहाबाद के विद्वान न्यायाधीश एम० कटजू ने अपने निर्णय में कहा है "हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा वर्ष 1967 के पश्चात् जारी की गई आयुर्वेदिक एवं यूनानी चिकित्सा की उपाधियां अमान्य हैं।" न्यायाधीश महोदय ने अपने निर्णय में कहा कि दिल्ली प्रदेश रजिस्टर्ड मेडिकल प्रेक्टिस बनाम डायरेक्टर आफ हेल्थ सर्विसेज मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा वर्ष 1931 से 1967 तक की डिग्रियां ही मान्य हैं। इसके पश्चात् जारी डिग्रियां को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा बोगस एवं अवैधानिक करार दिया गया है। इसी को आधार मानकर उच्च न्यायालय इलाहाबाद ने कहा है कि इन दोनों संस्थाओं (हिन्दी साहित्य सम्मेलन-प्रयाग व इलाहाबाद) की उपाधियों के आधार पर किसी व्यक्ति को स्टेट में बतौर चिकित्सक पंजीकरण कराने का प्रेक्टिस करने का अधिकार प्राप्त नहीं हैं। सचिव भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद्, नई दिल्ली के पत्रानुसार एक राज्य में किये गये पंजीयन को दूसरे राज्य में स्थानान्तरित करने का कई भी प्रावधान नही है अर्थात् एक राज्य में किये गये पंजीयन के आधार पर अन्य राज्यों में चिकित्साभ्यास नहीं किया जा सकता। इसके अतिरिक्त कथित केन्द्रीय अधिनियम के अन्तर्गत मात्र अनुभव के आधार पर सूचीकरण का कोई प्रावधान नहीं है लेकिन राजकीय आयुर्वेदिक एवं यूनानी चिकित्सा परिषद्, बिहार द्वारा सचिव, भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद् दिल्ली के पत्र सं० मिसिल संख्या - 6-26/2000 एम.जी. दिनांक - 10.11.2000 की अवेहलना करके आयुर्वेदरत्न/वैद्य विशारद का पंजीयन किया जा रहा है। उपसचिव-सहनिदेशक (देशी चिकित्सा) बिहार-पटना ने एक विज्ञप्ति निकाल कर इतिश्री कर ली। इसके बाद भी केन्द्रीय परिषद् के आदेश की अवलेहना की। वैद्य विशारद/ आयुर्वेदरत्न के आधार पर पंजीयन करने का उत्तरदायित्व किस पर होगा ? रजिस्ट्रार महोदय पर या पंजीयन करवाने वालों पर ? इस रजिस्ट्रेशन पर यदि वैद्य चिकित्सा कार्य करते हैं तो उनके विरूद्ध किस धारा के अन्तर्गत कार्यवाही होगी। ऐसे पंजीयन क्या अमान्य समझे जायेंगे।

पंजीयन कराने से पहले व्यक्ति सोचें कि सम्पूर्ण देश में अनुभव के आधार पर पंजीयन वर्ष 1965 से बन्द है। प्रत्येक प्रदेश का सिर्फ राजकीय आयुर्वेदिक एवं यूनानी परिषद् पंजीयन करने के लिए वैधानिक परिषद् है इसलिए व्यक्तियों को रोज अखबार में निकलने वाले विज्ञापनों की पहले जाँच करके ही कोई ठोस कदम उठाना चाहिए।

भवदीय

डा० राकेश मोहन शर्मा
चिकित्साधिकारी
राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय
बरई, शाहपुर-हाथरस

बैद्यनाथ
त्रिफला चूर्ण
कब्ज, पांडु, कामला, शोथ, नेत्र विकार आदि को दूर करता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आरोग्य समाचार अखबार की कतरनों से

कम दिखने का कारण ब्रेन ट्यूमर भी

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार जिन बच्चों की निगाह लगातार कमजोर हो रही हो। जिनके देखने का दायरा धीमे-धीमे कम हो रहा हो तो जरूरी नहीं है कि ऐसे बच्चों की आंख की कोई बीमारी हो। यह आंख की बीमारी न होकर मस्तिष्क के पिट्यूटरी ग्रन्थि का टयूमर हो सकता है । पीजीआई में न्यूरो सर्जरी विभाग द्वारा 14वें वार्षिक अधिवेशन 'न्यूरोपेडिकॉन-2003' संगोष्ठी में विशेषज्ञों ने यह जानकारी दी।

बेहद खतरनाक है मैलिगनेंट ट्यूमर

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार टयूमर दो तरह के होते हैं बिनाइन व मैलिगनेंट । बिनाइन टयूमर साधारण होता है जबकि मैलिगनेंट टयूमर घातक साबित होते हैं । चिकित्सकों का कहना था कि बिनाइन टयूमर मस्तिष्क को धीमे-धीमे प्रभावित करता है इसलिए लोग समय रहते इलाज करा सकते हैं । लेकिन मैलिगनेंट टयूमर इतनी तेजी के साथ बढ़ता है कि मरीज को समय पर सर्जरी का समय ही नहीं मिलता ।

अब जीन की कार्यप्रणाली समझना आसान

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार वैज्ञानिकों ने गुरुवार को फलों की मक्खी के पहले प्रोटीन नक्शे को प्रकाशित किया जिससे इस बात का पता लगाया जा सकता है कि उनके शरीर की कौन-सी जीन क्या काम करती है । इसके पूर्व चार्ट बना कर केवल जीन के कोड का पता ही लगाया जा सकता था।

बाल्टीमोर के जॉन्स हॉपकिन्स विश्वविद्यालय के जौएल बाडर ने कहा कि यह हमारे लिए मील का पत्थर है, क्योंकि अभी तक हम इस बात का पता नहीं लगा पाते थे कि प्रत्येक जीन क्या काम करती है । कई विश्वविद्यालयों की टीम और जैवप्रौद्योगिकी कम्पनी क्यूराजेन का कहना है कि वे कैंसर, हृदय रोग और मधुमेह जैसी बीमारियों के इलाज के लिए नई दवाओं के निर्माण में पहले से ही अपने निष्कर्षों का इस्तेमाल करती रही हैं । बाडर ने कहा कि इस नए नक्शे से इस बात का पता लग सकता है कि कोशिकाओं में कौन-से प्रोटीन सिर्फ आपस में बात करते रहते हैं और कौन से मिलजुल कर काम करते हैं । उन्होंने कहा कि केवल इतना जानना ही पर्याप्त नहीं है कि कौन-सा हिस्सा मानव कोशिका बनाता है । आपको यह भी जानना होगा कि कोशिका के भीतर कौन-सा हिस्सा क्या खास काम करता है । इससे हम जीन संबंधी रोगों के बारे में बेहतर तरीके से समझ सकेंगे । यही नहीं इससे प्राथमिक जीवविज्ञान के बारे में भी हमारी जानकारी में इजाफा होगा और इस बात को भी अच्छी तरह समझ सकेंगे कि कोशिकाएं कैसे काम करती हैं । फलों की मक्खी ड्रोसफिला मेलोनोगैस्टर का नक्शा विज्ञान पत्रिका साइंस के ऑनलाइन संस्करण में प्रकाशित किया गया है । हालांकि इस मक्खी और मानव की शरीर की संरचना में काफी फर्क है, लेकिन यह हमेशा से ही शोधकर्ताओं की पसंदीदा रही है, क्योंकि जीन स्तर पर मनुष्यों के साथ इसमें काफी समानता है । हालांकि शोधकर्ताओं ने अब तक जीन संरचना संबंधित कई नक्शे प्रकाशित किए हैं, लेकिन यह पहला अवसर है, जब हमें उनसे इस बात की भी जानकारी मिलती है कि कोई खास डीएनए क्या काम करता है ।

मच्छरों की जान का दुश्मन है नीम

दैनिक जागरण में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार मच्छरों के आतंक से परेशान लोगों के लिए अब एक खुशी की खबर यह आई है कि नीम के साथ कई अन्य पौधे मच्छरों को मारने में मददगार साबित हो सकते हैं ।

इंडियन काउंसिल आफ मेडिकल रिसर्च के अनुसार नीम के तेल के अतिरिक्त कई अन्य ऐसे पौधे यहां मौजूद हैं जो मच्छरों के साथ जारी लड़ाई में कारगर साबित हो सकते हैं । मेडिकल रिसर्च के एक वैज्ञानिक के मुताबिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मच्छरों से लड़ने में हर्बल से बने उत्पाद इनकी जरसंख्या को काबू करने के साथ-साथ मच्छरों से फैलने वाली बीमारी पर भी अपना नियंत्रण रखते हैं । रिसर्च टीम के अनुसार उन्होंने अपने शोध के दौरान पाया कि नीम के साथ कई अन्य पौधों में ऐसे गुण पाए जाते हैं कि जो मच्छरों के लार्वा को मारने में सक्षम हैं । साथ ही ये पौधे मच्छरों की बढ़ती संख्या को कम करने में भी काफी मददगार साबित हो सकते हैं । वैज्ञानिकों के अनुसार मच्छरों से फैलने वाली भयंकर बीमारियों मलेरिया, डेंगू, जापानी इनसेफेलाइटिस के उपचार के लिए भी इन उत्पादों को इसके एक विकल्प के तौर पर प्रयोग में लाया जा सकता है ।

काम के दबाव में गंजे हो रहे हैं चीनी युवक

दैनिक जागरण में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार काम के बढ़ते दबाव, गलत खान पान और बुरी आदतों के कारण चीन में ज्यादातर लोगों के बाल जवानी के दिनों में ही झड़ जाते हैं ।

चीन की तीन इंटरनेट वेब साइटें और अमेरिका की मेडिकल कंपनी मर्क एंड कंपनी के सर्वेक्षण के मुताबिक इसमें शामिल करीब 10 हजार पुरुषों में से 60 फीसदी के बाल 25 वर्ष से कम की आयु में ही झड़ गये थे जबकि 84 फीसदी युवाओं में इस तरह के लक्षण तीस वर्ष की आयु के बाद देखने को मिले । 85 फीसदी पुरुषों में इस प्रकार के लक्षण पुरुष हार्मोन्स के निकलने के कारण हुये । बाल झड़ने की समस्या से सबसे ज्यादा पीड़ित लोग ऑफिसों में काम करने वाले युवा व छात्र थे ।

आनुवांशिक हो सकती है सिगरेट व शराब की लत

दैनिक जागरण में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार वैसे तो अनुवांशिक बीमारियों के बारे में आप जानते ही होंगे ये वे बीमारियां होती हैं जो बच्चों को अपने माता-पिता द्वारा विरासत में मिलती हैं लेकिन अब एक शोध द्वारा यह पता चला है कि सिगरेट पीना, शराब पीना व अन्य तरह के मादक पदार्थों का सेवन करने की आदत भी वंशानुगत हो सकती हैं ।

ब्रिटेन कैंसर रिसर्च सेन्टर के वैज्ञानिकों ने कैंसर पीड़ितों का नये तरीके से इलाज करते वक्त पाया कि इन लोगों पर रोग के लक्षण बनने का कारण अनुवांशिक हो सकता है । यह परीक्षण करीब 20,000 लोगों पर किया गया जिसमें इस बात के पक्के सबूत मौजूद थे जिससे इस बात का पता चलाना है कि मानवीय व्यवहार को बनाने के लिए उसके वंशजों का महत्वपूर्ण हाथ होता है ।

इस शोध का नेतृत्व कर रहे डा. के मुताबिक इस शोध के दौरान इससे संबंधित 46 अलग-अलग शोधों के आंकड़े एकत्र कर अनुवांशिकी के साथ मानवीय व्यवहार का संबंध जानने का प्रयास किया है ।

मॉलिकुलर साइक्रेटी जनरल में प्रकाशित खबर में इस बात का खुलासा किया गया है । डाक्टरों के अनुसार दिमाग में बनने वाले एक विशेष प्रकार के केमिकल को जीन नियंत्रित करते हैं जो कि अपनी अलग पहचान बनाने में सक्षम होते हैं ।

जान ले सकता है अधिक तनाव

दैनिक जागरण में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार क्या आपको पता है कि मानसिक तनाव हमारी जान भी ले सकता है । एक अमेरिकी शोध के मुताबिक अव्यक्त मानसिक तनाव से हार्ट अटैक की संभावना काफी बढ़ जाती है ।

शोध में पाया गया कि ऐसे लोगों के हार्ट अटैक की संभावनाएं 6 गुना बढ़ जाती हैं जिनका रक्तचाप मानसिक तनाब के दौरान बढ़ जाता है । जबकि तनाव से शांति से निपटने वालों में हार्ट अटैक या हृदय संबंधी किसी गम्भीर बीमारी का खतरा कम होता है । ओरलांडो में अमेरिकन हार्ट एसोसियेशन की बैठक में शोधकर्त्ताओं ने बताया कि वास्तव में कभी-कभी लोगों को यह पता ही नहीं चल पाता कि वे तनावग्रस्त भी हैं और कभी तनाव न होने पर भी अपने को तनावग्रस्त मान लेते हैं । दरअसल तनाव काफी कुछ रक्तचाप को प्रभावित करता है जिससे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिल की धड़कन बढ़ जाती है ।

बाल्टीमोर स्थित जोंस हापकिंस विश्वविद्यालय के डायने बेकर ने कहा कि यदि हमें पता ही न हो कि हम तनाव में हैं तो इससे कैसे निपट सकते हैं । बेकर ने बताया कि वैसे हार्ट अटैक के अन्य भी कई कारण होते हैं, लेकिन छिपा मानसिक तनाव बहुत अधिक घातक होता है ।

धूम्रपान, कोलेस्ट्राल की अधिक मात्रा या मधुमेह से भी हार्ट अटैक की संभावनायें बनी रहती हैं । शोधकर्ताओं ने बताया कि तनाव की स्थिति में रक्तचाप का एकदम से बढ़ जाना किसी गम्भीर हृदय बीमारी को जन्म दे सकता है ।

कैंसर से बचाती है सूर्य की रोशनी

दैनिक जागरण में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार वर्षों से लोगों को यही सलाह मिलती रही है कि त्वचा के कैंसर से बचाव का तरीका है, सूरज की रोशनी से हरसंभव बचना ।

लेकिन अब चिकित्सकों का कहना है कि सूर्य की रोशनी से ज्यादा बचना त्वचा के कैंसर के खिलाफ भले ही एक कारगर उपाय हो, लेकिन यह अन्य तरक के कैंसरों को बुलावा देने जैसा है । ब्रिटिश मेडिकल जर्नल में ताजा अंक में छपे एक पत्र में यूनिवर्सिटी ऑफ कैलीफोर्निया के प्रोफेसर सेड्रिक गालैंड ने यह चेतावनी दी है । उल्लेखनीय है कि सूरज को विटामीन-डी का प्रमुख स्रोत माना जाता रहा है । अध्ययनों के अनुसार इस विटामिन से स्तन कैन्सर समेत कई अन्य प्रकार के कैंसरों के खिलाफ सुरक्षा मिलती है । प्रोफेसर गालैंड ने खासकर ब्रिटेन में रहने वाले लोगों को प्रतिदिन 10 से 15 मिनट सूर्य की रोशनी में रहने की सलाह दी है । बशर्ते मौसम इसकी इजाजत देना हो । उन्होंने इस अवधि में किसी सनस्क्रीन लोशन का उपयोग न करने की भी सलाह दी । उनका कहना है कि सर्दियों के मौसम में आमतौर पर विटामीन-डी की कमी हो जाती है जो कि कई प्रकार के कैंसरों से लड़ने में काफी कारगर माना जाता है । दूसरी तरफ कैन्सर विरोधी संस्थाओं ने सूर्य की रोशनी में 15 मिनट रहना खासकर बीच दोपहर में सभी तरह की त्वचा वाले लोगों के लिए खतरनाक बताया है । वैसे सूर्य की रोशनी में नहाए बिना भी शरीर को विटामिन-डी की आपूर्ति की जा सकती है ।

कैन्सर का इलाज अब अंतरिक्ष तकनीक से

दैनिक जागरण में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार वैज्ञानिकों के लिए बहुत प्राथमिक स्थिति में ही कैंसर के सेल का पता करना अब आसान हो जाएगा । यूरोपियन स्पेस एजेंसी (ईएसए) ने किसी तकनीक विकसित की है जो कैंसर सेल के बहुत प्राथमिक स्थिति में ही पता लगाने में मददगार होगी । ईएसए ऐसी तकनीक विकसित करने का प्रयास कर रहा है जिसकी मदद से हमारे सौर्यमंडल के बाहरी हिस्से में छोटे-छोटे दिखने वाले तारों की कक्षा से छोटे ग्रहों के बारे में जाना जा सकेगा । नीदरलैंड के वैज्ञानिक इस क्रांतिकारी तकनीक से काफी उत्साहित है ।

अब बायोप्सी की पीड़ा से छुटकारा

दैनिक जागरण में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार अब स्तन कैंसर के पीड़ितों को बायॉप्सी जैसी दर्दनाक इलाज तकनीक से छुटकारा मिल सकेगा । मिनेसोटा विवि के वैज्ञानिकों की प्रारंभिक सफलता उक्त तथ्य को प्रमाणित करती है । वैज्ञानिकों का दावा है कि मैग्रेटिक रेसोनेंस स्पेक्ट्रोस्कोपी की मदद से कुछ ही मिनटों में केवल एक स्कैन की मदद से स्तन कैंसर का उपचार किया जा सकता है । उल्लेखनीय है कि बायप्सी में सुई के द्वारा मानव ऊतकों के नमूने निकाले जाते हैं जिसमें रोगी को पीड़ादायक स्थिति से गुजरना पड़ता है ।

वैज्ञानिकों ने खोजा घड़कन की आयु

दैनिक जागरण में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार वैज्ञानिकों ने तीन ऐसी बातों का पता लगाया है जो यह जानने में मदद करती हैं कि कोई व्यक्ति कब तक जीवित रहेगा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साइंस पत्रिका में प्रकाशित उनकी रिपोर्ट में कहा गया है कि किसी भी व्यक्ति की जिन्दगी उसके शरीर के तापमान और उसके रक्त में मौजूद दो तरह के रसायनों के स्तर पर निर्भर करती है । यह रिर्पाट उस शोध का नतीजा है जिसके लिए अमरीका के बाल्टीमोटर राज्य में 1958 से अब तक पन्द्रह सौ लोगों की आयु में बढ़ोत्तरी पर नजर रखी गयी ।

उस दौरान उनके शारीरिक तापमान और उनके खून में मौजूद दो प्राकृतिक रसायनों इंसूलिन और डियास का स्तर जांचा जाता रहा । उनकी खोज से पता चला कि जिन लोगों के जिस्म का तापमान औसतन ठंडा रहता है वे ज्यादा समय तक जीते हैं ।

इसके अलावा उन लोगों की भी आयु लंबी होती हैं जिनके शरीर में इंसुलिन की मात्रा कम और डियास का स्तर अधिक होता है । तापमान और इन दो रसायनों की ओर ध्यान जानवरों के साथ किए गए उन परीक्षणों के बाद गया जिनमें उन पशुओं कम कैलोरी वाला भोजन दिया गया ।

बाद में पाया जाता कि वे अधिक समय तक जीवित रहे और उनका शारीरिक तापमान औसम से कम रहा और उनके शरीर में इंसुलिन की मात्रा कम और डियास की ज्यादा थी । इससे शोधकर्ताओं को लगा कि इन तीन चीजों का लंबे जीवन से जरूर संबंध है । अब अगला कदम यह जानना है कि आखिर सही वजह क्या है और क्या अन्य लोगों भी उससे फायदा उठा सकते हैं ।

मधुमेह से छूटकारा अब जल्द ही संभव

दैनिक जागरण में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार अमेरिकी वैज्ञानिकों ने मधुमेह पर न सिर्फ नियंत्रण करने बल्कि इस लाइलाज बीमारी को पूरी तरह नेस्तानाबूद करने में सफलता हासिल की है । वैज्ञानिकों ने चूहों पर किए गए प्रयोगों में मधुमेहग्रस्त जीवों को रोगपूर्व स्थिति में पहुंचा दिया है । इस खोज ने मधुमेह के टाइप 1 रोगियों के लिए रोगमुक्ति के द्वार खोल दिए हैं । मैसाचुसेट्स जनरल हॉस्पीटल के एक वैज्ञानिक समूह ने बताया कि मनुष्यों पर इसका प्रायोगिक परीक्षण जल्दी ही शुरू किया जाएगा । ऐसे रोगियों में जिनके शरीर में इंसुलिन नामक हॉरमोन बनना बंद हो जाता है, रक्त में मौजूद शकंरा को ऊर्जा में बदलने के लिए बाहर से इंसुलिन देनी पड़ती है । मधुमेह के रोगी में शरीर की अपनी प्रतिरोधक प्रणाली आइलैट कोशिकाओं को खत्म कर देती है ।

स्किन कैंसर के पीड़ितों को दोहरा खतरा

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार सामान्य और अघातक किस्म के स्किन कैन्सर से पीड़ित महिलाओं को असंबंध कैन्सर के विकसित होने का दोहरा और व्यापक खतरा होता है । यह निष्कर्ष एक लंबे अध्ययन में उभरकर सामने आया है । अध्ययन के अनुसार स्किन कैंसर का संबंध मस्तिष्क, स्तन, गर्भाशय और मूत्राशय कैन्सर समेत विभिन्न गांठों से होता है । यह लीवर कैंसर से ज्यादा तकलीफदेह होता है । इसकी तकलीफ लीवर कैन्सर से पांच गुना और फेफड़े के कैंसर से तीन गुना ज्यादा होती है । अध्ययन के अगुआ नार्थवेस्टर्न यूनिवर्सिटी के मेडिकल स्कूल के इवानस्टन नार्थवेस्टर्न हेल्थकेयर के डॉ० कैरोल रोसेनबर्ग के अनुसार स्किन कैन्सर के पीड़ितों को इसके विकसित होने का खतरा हमेशा बना रहता है । कुछ मामलों में पाया ।

सख्त बिस्तर से परहेज करें पीठ दर्द से परेशान लोग

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार पीठ के दर्द से परेशान रोगियों को उनके डाक्टर द्वारा सुझाए गए कड़े बिस्तर से छुटकारा मिलने की आस बनी है । अब एक नए शोध के दौरान चिकित्सकों ने कहा है कि पीठ दर्द से परेशान लोगों को कड़े बिस्तर पर नहीं सोना चाहिए ।

चिकित्सा क्षेत्र की पत्रिका द लांसेट में छपी एक रिपोर्ट के मुताबिक रीढ़ की हड्डी में परेशानी वाले लोगों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए सबसे उपयुक्त बिस्तर वह होगा जो न तो ज्यादा कड़ा हो और न ज्यादा नरम । यह रिपोर्ट स्पेन में 300 लोगों पर किए गए अध्ययन पर आधारित है । अध्ययन में शामिल वैसे लोगों ने रात की नींद के बाद कम पीठ दर्द की शिकायत की जिन्हें अपेक्षाकृत मुलायम गद्दे पर सुलाया गया था । स्पेन में हुए ताजा अध्ययन सामान्य पीठ दर्द पर केन्द्रित था यानि इसमें गठिया के रोगियों या रीढ़ की हड्डी में चोट की शिकायत वाले लोगों को शामिल नहीं किया गया था ।

विवाहित मर्द फैलाते हैं भारत के एड्स

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार भारत की सामान्य जनता तक एड्स के वायरस फैलाने वाले आम तौर पर वे विवाहित मर्द हैं जो वेश्याओं के साथ असुरक्षित यौन संबंध बनाते हैं । एक अध्ययन में यह बात सामने आई है । लगभग 6,10,000 भारतीय गत वर्ष एचआईवी संक्रमण के शिकार हुए हैं । इससे अब एचआईवी संक्रमित भारतीयों की संख्या साढ़े चालीस लाख हो गई है । दक्षिणी अफ्रीका के बाद भारत दुनिया में दूसरा सर्वाधिक एचआईवी संक्रमण वाला देश हो गया है । छह सबसे अधिक संक्रमित राज्यों में से चार राज्यों में यह संक्रमण व्यापारियों, सेवा क्षेत्र के कर्मचारियों और होटल के कर्मचारियों द्वारा फैला है । भारत का 85 प्रतिशत एचआईवी संक्रमण असुरक्षित यौन संबंध के कारण होता है और लगभग तीन प्रतिशत मां के दूध के जरिए फैलता है । तीन प्रतिशत लोग संक्रमित सीरिंज के प्रयोग से एचआईवी की चपेट में आते हैं ।

बैद्यनाथ

ईसब्बेल

आंव, पेचिश, मरोड़, आमातिसार (डिसेन्ट्री),
कब्जियत आदि रोगों में बहुपरीक्षित एवं उपयोगी औषधि ।

बैद्यनाथ

घाव मलहम

फोड़े, फुंसी तथा खुजली में लाभदायक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुजरात

5th International Seminar on AYURVEDA FOR BETTER HEALTH January 5-7, 2004 Gujarat Ayurved University, Jamnagar - 361 008 (India)

First Circular

Due to unavoidable circumstances the 5th International Seminar on Ayurveda for Better Health which was scheduled during October 1-3, 2003 is hereby postponed. Now this seminar is rescheduled to be organized as a part of 38th Foundation Day Celebrations of the Gujarat Ayurved University during January 5 - 7, 2004 at Jamnagar.

Ayurveda & University

Ayurveda is a science of life and accomplishes physical, mental, social and spiritual well being by adopting preventive & promotive measures with its holistic approach. Gujarat Ayurved University, established by an Act of Gujarat State since 1967 is committed to promote and propagate Ayurveda by way of education, research and providing classical treatment for human suffering. It aims at globalizing Ayurveda by providing opportunities to foreign scholars, institutions and organizations to propagate Ayurveda in their country by attending various short-term and long-term diploma and degree courses and entering into an MOU with this University. The University has collection of rare manuscipts on Ayurveda. The work of scanning these manuscripts is in progress.

Invitation

It is with great pleasure that we invite you to attend the 5th International Seminar on Ayurveda for Better Health during January 5-7, 2004 and let us discuss and interact with experts and scholars of various disciplines of Ayurveda for the promotion of the cause of Ayurveda.

We shall be happy to welcome you to Jamnagar on this occasion.

The Seminar

The deliberations of the seminar comprise : (1) Plenary Sessions, (2) Guest Lectures, (3) Key Note Lectures, (4) Invited free scientific papers on the topics : (i) Promotion and preservation of health - an ayurvedic approach, (ii) Research and development of Ayurvedic drugs and formulations, (iii) Ayurvedic management of chronic disorders, (iv) Cultivation, marketing and export of medicinal plants.

Research papers are invited from scholars of Ayurveda and allied disciplines. Last date for submission of abstract (300 words) is November 20, 2003 and full paper should reach us by December 10, 2003. The language of paper and presentation should be English. Best paper presentation awards will also be given.

Registration

You are requested to fill in the attached registration form and send it to the Administration Secretary by November 20, 2003 with requisite registration fee.

Registration Fee

Category	Up to Nov. 20, 2003	After Nov. 20,2003
Indian Delegates	Rs. 1000.00	Rs. 1200.00
Accompanying Persons	Rs. 800.00	Rs. 1000.00
P.G. Students	Rs. 400.00	Rs. 500.00
Foreign Delegates	US$100	US$125
Accompanying Persons	US$75	US$100
SAARC and Neighbouring Countries	US$75	US$100
Industrial representative	Rs. 2000.00	Rs.2500.00

Privilege :- Registration fee includes free moderate accommodation, lunch, dinner, breakfast etc. during seminar days. However, if anybody interested to opt for hotel accommodation, the same will be made available on payment basis if the request is received before November 20, 2003.

Payment :- Registration fee may be remitted by a bank draft drawn in favour of Registrar, Gujarat Ayurved University, payable at Jamnagar.

Jamnagar

Jamnagar situated on the west coast of the state of Gujarat is well connected with rail road to all parts of India. It is also connected by

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

air to Mumbai. Weather will be pleasant with light woolens with temperature arount 15°C – 20°C.

Large number of delegates from different parts of the country and abroad are expected to participate in the seminar. An early confirmation of your participation is solicited.

R.M. Jhala
Registrar

Address for Communications :

Mr. P.J. Vora
Administrative Secretary, Chanakya Bhavan,
Gujarat Ayurved University
Jamnagar-361 008
Gujarat (India)
Ph. +91-288-2677324 Fax : +91-288-2555966
Visit : www. ayurveduniversity.com
For updates : www21.brinkster.com/ayurvednews
Email : info@ayurveduniversity.com

5TH INTERNATIONAL SEMINAR ON AYURVEDA FOR BETTER HEALTH
January 5-7, 2004
Gujarat Ayurved University, Jamnagar - 361 008 (India)

Registration Form

Name : Dr./Mr./Ms. .....
Surname First Name Other Initials

Date of Birth..... Sex ..... Nationality.....

Designation .....

Address for correspondence .....

.....

.....

Phone Nos. with STD/ISD Code.....(Office).....(Residence)

Fax..... Email .....

Accompanying persons : Spouse Yes/No .....

Children upto 12 yrs (No charge) .....

Adults .....

Registration No. & Date (for office use only).....

Name of the Registering authority .....

Details of payments

Registration fee delegate Rs.....

Accompanying persons Rs.....

Total Rs.....

Demand Draft No.....Date .....

Bank .....Branch .....

Signature

1. Payments should be made only by Demand Draft in favour of "Registrar, Gujarat Ayurved University" payable at Jamnagar, Gujarat (India).
2. Only vegetarian food will be served during the Seminar

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुजरात आयुर्वेद युनिवर्सिटी द्वारा अहमदाबाद, एलीसब्रिज में नये चिकित्सा केन्द्र का प्रारंभ

:- धवन्तरि जयंती के शुभ अवसर पर माननीय उपकुलपति डा० पी०एन०पी०कुरूप द्वारा स्वर्गस्थ वैद्य शोभन वसाणी स्थापित आयुर्वेद सेन्टर चिकित्सा केन्द्र, एलिसब्रिज, अहमदाबाद में गुजरात आयुर्वेद युनिवर्सिटी द्वारा संचालित चिकित्सा केन्द्र का उद्घाटन हुआ । इस समारोह में अहमदाबाद शहर भाजपा अध्यक्ष डा० मायावेन कोडनानी (विधायक), श्री भविन शडे (विधायक-एलिसब्रिज) एवं गुजरात प्रदेश आयुर्वेद सम्मेलन के प्रधानमंत्री डा० देवेन्द्र शाह, संगठन मंत्री वैद्य विक्रम उपाध्याय, मणिबेन आयुर्वेद हॉस्पिटल के अध्यक्ष वैद्य टी०एल०स्वामी, सरकारी अखंडानंद आयुर्वेद महाविद्यालय के प्राचार्य, वैद्य वी०पी० परमार एवं आयुर्वेद युनि० के कई महानुभाव उपस्थित रहे ।

श्रीमती तापीबाई आयुर्वेदिक हास्पीटल, भावनगर में धन्वन्तरि त्रयोदशी उत्सव सम्पन्न

दिनांक 23/10/2003 के दिन श्रीमती तापीबाई आयुर्वेदिक हॉस्पीटल, भावनगर (गुज०) में भावनगर जिला वैद्यसभा एवं आई०एस०एम० एसो०, भावनगर जनपद के संयुक्त उपक्रम के रूप में धन्वन्तरि जयन्ती (प्रागट्योत्सव) सम्पन्न हुआ ।

इस अवसर पर भा०जि०वै०स० अध्यक्ष वैद्य पी. एस. अंशुमान (पूर्व प्राचार्य/अधीक्षक) तथा संयुक्ताध्यक्ष वैद्य नरेन्द्र पी० त्रिवेदी एवं आइ.एस.एम.भा.जन. अध्यक्ष वैद्य जनकभाई भट्ट, महामंत्री वैद्य जादवजी भाई पटेल, आर.एम.ओ. श्री पी.एल.गोधरणी, एम.ओ. श्री एम.एम.जानी द्वारा भगवान धन्वन्तरि का वेदोक्त पूजन किया गया ।

इस अवसर पर पूर्व सांसद वैद्य महावीर सिंह जी गोहिल, वरिष्ठ वैद्य शशिकांत उपाध्याय, वैद्य पंचकर्म श्री शाहपुरकर, प्रो० हंसदेवराज्यगुरू, प्रो०के.जी. आशरा, आयुर्वेद चिकित्सक, इन्टर्नीज विद्यार्थी, नर्सिंग स्टाफ, अंतरंग रूग्ण भी पूजा में उपस्थित रहे । वैद्य पी.एस. अंशुमान, वैद्य जनक भाई, वैद्य यादव जी भाई पटेल ने प्रासंगिक प्रवचन किये तथा वैद्य श्री गोधरणी जी के आभार दर्शन किया ।

उत्तर प्रदेश

धन्वन्तरि जयन्ती पर राज्यपाल ने औषधीय पौधे रोपित किये

उत्तर प्रदेश के राज्यपाल, श्री विष्णुकान्त शास्त्री ने धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर राजभवन स्थित धन्वन्तरि वाटिका में ''सप्तपर्ण'' आयुर्वेदीय औषधीय पौधे का रोपण किया । उन्होंने पूर्व वर्षो में वाटिका में लगाये गये पौधों का अवलोकन किया तथा इसके प्रति प्रसन्नता व्यक्त की । इसके पूर्व उन्होंने आयुर्वेद के प्रवर्तक भगवान धन्वन्तरि के चित्र पर माल्यार्पण किया ।

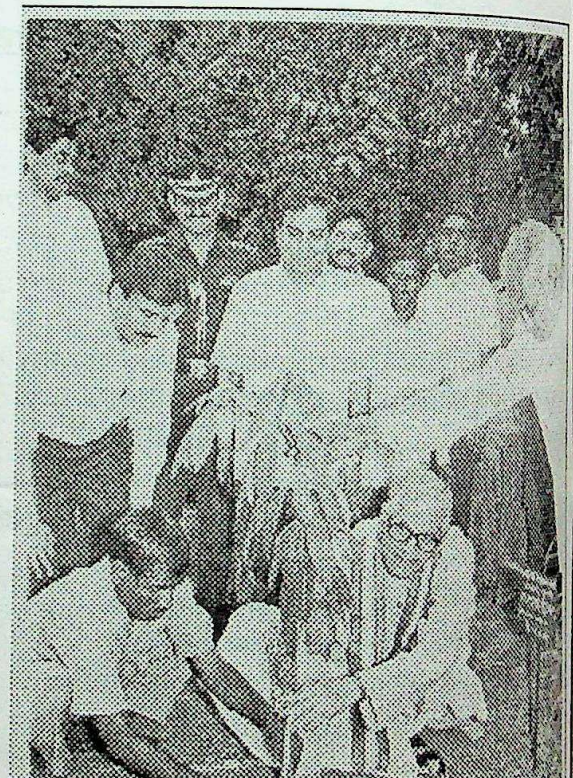

महामहिम श्री विष्णुकान्त शास्त्री, राज्यपाल उत्तर प्रदेश दिनांक 23 अक्टूबर, 2003 को धन्वन्तरि वाटिका राजभवन, लखनऊ में ''सप्तपर्ण'' का पेड़ लगाकर वृक्षरोपण करते हुए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रमुख सचिव राज्यपाल श्री शम्भुनाथ ने "श्वेत तुलसी" पौधे को रोपित किया तथा विशेष सचिव श्री आर०के० ओझा, विशेष सचिव, श्री के०पी० सिंह सहित अन्य अधिकारियों ने भी अनेक औषधीय पौधे जैसे आलमखीरा, बादाम, शरीफा आदि को रोपित किया । उल्लेखनीय है कि धन्वन्तरि वाटिका की स्थापना लगभग 3 वर्ष पूर्व हुई थी जिसमें अब तक करीब 200 से अधिक पौधे लगाये जा चुके हैं ।

धन्वन्तरि वाटिका के प्रभारी अधिकारी आयुर्वेदाचार्य डा० शिवशंकर त्रिपाठी के अनुसार राज्यपाल द्वारा स्थापित इस वाटिका का मुख्य उद्देश्य आयुर्वेदीय औषधीय पौधों के ज्ञान को जन-जन तक पहुंचाना है और राजभवन की इस आदर्श औषधीय पौधों की वाटिका का अनुसरण कर प्रदेश के विभिन्न अंचलों में ऐसी धन्वन्तरि वाटिकाएं स्थापित हों ताकि आयुर्वेद के रूप में प्राप्त पूर्वजों की अनमोल धरोहर का लाभ जन सामान्य को मिल सके ।

निःशुल्क चिकित्सा शिविर सम्पन्न

स्वामी कल्याणदेव राजकीय आयुर्वेदिक कालेज-रामपुर, मुजफ़्फरनगर में दिनांक 01 एवं 02 नवम्बर 2003 को पंचकर्म, गुदा एवं दन्त रोगों का निःशुल्क चिकित्सालय शिविर सम्पन्न हुआ । उक्त चिकित्सा शिविर का उद्घाटन का परम पूज्य पद्मभूषण वीतराग 1008 श्री स्वामी कल्याणदेव जी महाराज के कर कमलों द्वारा दिनांक 01 नवम्बर 2003 को दीप प्रज्वलित कर किया गया । इस उद्घाटन समारोह में माननीय सांसद श्री सईदुज्जमा मुख्या अतिथि के रूप में एवं विशिष्ट अतिथि के रूप में मा० श्री सोमांश प्रकाश जी ने समारोह को सुशोभित किया । इस विशिष्ट चिकित्सा शिविर की अध्यक्षता संस्था के प्राचार्य/अधीक्षक प्रोफेसर डा० विष्णुदत्त अग्रवाल ने सम्पादित की । उद्घाटन समारोह में संस्था से समस्त चिकित्सक, कर्मचारी एवं छात्र-छात्राओं ने विशेष उत्साह के साथ भाग लिया जिसका संयोजन डा० मुकेश शर्मा एवं संचालन डा० विजय सिंह पुन्डीर ने किया ।

पंचकर्म गुदा एवं दन्त रोगों के इस चिकित्सा शिविर में पंचकर्म में 905 रोगियों का परीक्षण कर उनके कष्ट साध्य रोगों के निवारण हेतु-औषधि एवं चिकित्सा परामर्श दिया गया । पंचकर्म के अर्न्तगत कार्यशाला में रोगियों का स्नेहन, स्वेदन, शिरोधारा, बस्ति एवं अन्य पंचकर्म की विधियों द्वारा चिकित्सा की गई । 171 गुदा रोगियों का परीक्षण किया गया तथा आवश्यकतानुसार रोगियों का बवासीर, भगन्दर आदि का क्षारसूत्र शल्य कर्म के द्वारा चिकित्सा की गई । इस कैम्प की तीसरी विशेषता जालंधर विधि से रूग्ण दांतों को बिना इंजेक्शन/दर्द के निकालने की रही । इस विधि का छात्रों को विशिष्ठ प्रशिक्षण डा० जिगनेश कडिया द्वारा दिया गया एवं डा० प्रकाश चन्द्र द्वारा उन्हें सहयोग प्रदान करते हुए 185 रोगियों का परीक्षण किया गया तथा कई रोगियों के जलंधर विधि से दाँत निकाले गये ।

पंचकर्म चिकित्सा में सिद्धहस्त अहमदाबाद, गुजरात से पधारे डा०बी०डी०नन्दूरवारकर एवं डा०टी०एल० स्वामी को सहयोग संस्था के चिकित्सक प्रो० विष्णुदत्त अग्रवाल डा०सी.एम. कंसल, डा. अक्षय लाल एवं डा. ओ.पी. बहुखण्डी द्वारा किया गया । क्षारसूत्र के अर्न्तराष्ट्रीय विशेषज्ञ डा० देवेन्द्र के. शाह एवं डा. सिसिन त्रिवेदी का सहयोग संस्था के सर्जन डा० एस.के. अवस्थी ने किया । संस्था के समस्त शिक्षकों का शिविर को सफल बनाने में महत्वपूर्ण एवं सराहनीय योगदान रहा । शिविर में डा० श्रीराम विश्वकर्मा ने क्षारसूत्र में डा० सतीश चौधरी ने पंचकर्म में एवं डा० विनोद कुमार ने दन्त विभाग में एवं डा० राजेन्द्र तोमर, डा० राजीव कुमार, डा० अन्जु सक्सेना, डा० वीरेन्द्रपाल सिंह, डा० खालक सिंह, डा० हरिशंकर, डा० शाहनवाज खॉ, डा० हरीश सिंह, डा० जाकिर हुसैन, डा० रविन्द्र कुमार बमनिया डा० फहीमुदीन सहयोग किया । संस्था के छात्र-छात्राओं विनोद कुमार, वीरेन्द्र कुमार सिंह विनय भारती उमाकान्त भारद्वाज, मुद्रित तोमर, तमशीर अहमद महेन्द्र सिंह अतुल कुमार एवं अन्य सभी छात्र-छात्राओं ने सराहनीय योगदान रहा ।

दिनांक 02 नवम्बर 2003 को उपरोक्त कैम्प के समापन समारोह में गुजरात से पधारे सभी वैद्यों को संस्था के प्राचार्य द्वारा सम्मानित किया गया । सभी सम्मानित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैद्यों द्वारा पंचकर्म क्षारसूत्र दन्त चिकित्सा की शास्त्रीय जानकारी भी छात्रों/शिक्षकों को प्रदान की गई । समापन समारोह में प्राचार्य प्रो० विष्णुदत्त अग्रवाल द्वारा सभी वैद्यों एवं अतिथिगणों का आभार ज्ञापन किया गया । मै० दीवानचन्द्र महेन्द्र कुमार, रूड़की रोड, मुजफ्फरनगर के कैम्प की व्यवस्था में भोजन, शाल आदि के सहयोग हेतु आभार व्यक्त किया गया ।

कैम्प के संचालन में संस्था के सभी छात्रों/कर्मचारियों का भी विशेष लगन एवं परिश्रम के साथ सहयोग रहा जो अत्यन्त उत्साह जनक पहलू है ।

धन्वन्तरि जयन्ती सम्पन्न

वाराणसी में डा. विजय सिंह राना द्वारा व्यक्तिगत तौर पर पंचकर्म चिकित्सालय विगत 2 मार्च 2003 से कार्यरत हैं । चिकित्सालय द्वारा धन्वन्तरि पूजन-धूम-धाम से मनाया गया । इस पुनीत अवसर पर संगोष्ठी एवं नि:शुल्क परामर्श चिकित्सा शिविर का आयोजन किया गया ।

संगोष्ठी सभा में मुख्यवक्ता डा० उमाशंकर पाण्डेय द्वारा धन्वन्तरि अवतरण एवं वर्तमान स्वास्थ्य समस्या के सम्बन्ध में विस्तृत चर्चा की गयी । इसके साथ-साथ संगोष्ठी में निम्न विषयों पर विद्वान चिकित्सकों ने अपने विचार व्यक्त किये - 1) जड़ी-बूटी एवं प्राथमिक स्वास्थ्य - डा० शैलेन्द्र कुमार त्रिपाठी, आई.आर.डी.पी., बी.एच.यू. 2) एड्स एवं ब्रह्मचर्य - डा० काशीनाथ पाण्डेय (अवकाश प्राप्त, डी.ओ.) 3) आयुर्वेद की वर्तमान समय में उपयोगिता - डा० कात्यायन-चिकित्साधिकारी-सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी । 4) पंचकर्म का परिचय डा० विजय सिंह राणा द्वारा दिया गया ।

शिविर में विशेष रूप से गठिया, कमर दर्द, नर्व रूट, कम्प्रेशन डिस्कस्किप, दमा, एक्जीमा आदि कठिन एवं असाध्य 50 रोगियों का परीक्षण कर उचित उपचार किया गया ।

कार्यक्रम की अध्यक्षता डा० काशीनाथ पाण्डेय ने की तथा डा० विजय सिंह राणा ने अतिथि वक्ता एवं उपस्थित सम्मानित नागरिकों का आभार प्रकट किया । सर्वप्रथम धन्वन्तरि पूजन-वन्दन डा० काशीनाथ पाण्डे एवं डा० उमाशंकर पाण्डेय द्वारा वैदिक रीति से सम्पन्न कराया गया ।

मध्य प्रदेश

मानव-स्वास्थ्य के संरक्षण के विज्ञान आयुर्वेद के प्रवर्तक भगवान धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष्य में 'जनसाधारण के लिये स्वास्थ्य संरक्षण विधि के विकास में आयुर्वेद का योगदान' विषय पर व्याख्यान संपन्न ।

ग्वालियर - 23 अक्टूबर, मानव जीवन विज्ञान आयुर्वेद के प्रवर्तक भगवान धन्वन्तरि के पृथ्वी पर अवतरण के दिवस की स्मृति में धन्वन्तरि त्रयोदशी के दिन धन्वन्तरि जयंती के उपलक्ष्य में जनसाधारण के लिये बनायी गयी विधि को जन-जन तक पहुंचाने के लिये संकल्पित संस्था अखिल भारतीय विधि-विज्ञान परिषद् के तत्वावधान में "जनसाधारण के लिये स्वास्थ्य संरक्षण की विधि के विकास में आयुर्वेद के योगदान" विषय पर सार्वजनिक व्याख्यान का आयोजन किया गया ।

सार्वजनिक व्याख्यान के पूर्व आयुर्वेद प्रवर्तक भगवान धन्वन्तरि के गरिमामय चित्र के समक्ष दीप प्रज्ज्वलित कर चित्र का माल्यार्पण किया गया । धन्वन्तरि वंदना एवं धन्वन्तरि-चालीसा के सस्वर पाठ के उपरान्त अखिल भारतीय विधि विधान परिषद् के संयोजक एवं स्थानीय महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय उत्कृष्ट महाविद्यालय के विधि अध्ययन संस्थान के प्रोफेसर विनोद कुमार श्रोत्रिय ने सार्वजनिक व्याख्यान के विषय पर अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कहा कि आज ही के दिन देवताओं एवं राक्षसों द्वारा समुद्र मंथन के परिणाम स्वरूप पृथ्वी पर विद्यमान सृष्टि के लिए स्वास्थ्य के संरक्षण हेतु कल्याणकारी अमृत कलश लेकर भगवान धन्वन्तरि द्वारा स्वास्थ्य के संरक्षण के नियमों के महा विज्ञान आयुर्वेद से जन-जन को अवगत कराया गया । इसी प्राचीन ज्ञान को आधार बनाकर मानव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को स्वस्थ रहने के लिये क्या करना चाहिये और क्या नहीं करना चाहिये-इन मानदंडों का उद्भव हुआ । इन्हीं मापदंडों को आधार बनाकर मानव के स्वास्थ्य, इसके संरक्षण के लिये प्रत्येक देश की विधायिकाओं द्वारा स्वास्थ्य संरक्षण विधि बनायी गयी जिसका अध्ययन विधि और चिकित्सा दोनों ही क्षेत्रों में किया जाता है । मानव जाति को स्वास्थ्य के मार्ग पर ले जाने के लिये स्वास्थ्य संरक्षण की विधि और आम जनता के बीच की दूरी को स्वास्थ्य संरक्षण विधि के साक्षरता शिविरों के द्वारा मिटाने की आवश्यकता है ।

इस अवसर पर विधि के वरिष्ठ प्रोफेसर सुभाष चन्द्र शर्मा ने अध्यक्षीय उद्बोधन दिया तथा स्थानीय जीवाजी राजकीय माधव राव सिन्धिया विज्ञान महाविद्यालय के रसायन शास्त्र के प्रोफेसर डा०ए०के०सिंह, सैन्य विज्ञान के प्रोफेसर डॉ० विष्णुकान्त शर्मा एवं डॉ० अभिनव श्रोत्रिय ने भी अपने विचार व्यक्त किये । आभार प्रदर्शन डॉ० आभा श्रोत्रिय द्वारा किया गया ।

नयी दिल्ली
अन्तर्राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, नयी दिल्ली में धन्वन्तरि जयन्ती सम्पन्न

आज दिनांक 21/10/2003 को चिकित्सा जगत् आदिदेव भगवान धन्वन्तरि की जयन्ती कांस्टीट्यूशन क्लब, रफी मार्ग, नई दिल्ली में अन्तर्राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान द्वारा आयोजित की गई । इसमें मुख्य अतिथि रसायन एवं उर्वरक केन्द्रीय राज्यमंत्री श्री छत्रपाल सिंह जी एवं भारत सरकार के योजना आयोग के सदस्य डा० दीनानाथ तिवारी थे । समारोह की अध्यक्षता लालबहादुर शास्त्री संस्कृत विद्यापीठ के कुलपति प्रो० वाचस्पति उपाध्याय जी ने की । संस्था के सचिव वैद्यराज बी.पी.गुप्ता ने अन्तर्राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान की गतिविधियाँ बताते हुए कहा कि आयुर्वेद के विकास के लिये सरकार एवं आयुर्वेद की स्वयंसेवी संस्थाओं को आगे आकर मिलकर कार्य करना होगा । समाज में स्वास्थ्य के बारे में जानकारी देना सभी आयुर्वेदज्ञों का कर्तव्य होना चाहिये । विकृत खान-पान एवं दूषित जीवन शैली के कारण निरन्तर मनुष्य रोगी होता जा रहा है, ऐसे में समाज को सही जानकारी देनी होगी । वैद्यराज बी०पी०गुप्ता ने अधिकाधिक आयुर्वेदिक प्रेक्टिस एवं गुटका-तम्बाकू विरोधी अभियान के लिए वैद्यों का आह्वान किया । इस समारोह में आयुर्वेद के विभिन्न क्षेत्रों में उत्कृष्ट सेवा के लिये डा०वी.वी. प्रसाद, वैद्य एम.एल. खत्री, वैद्य वी.के. वर्मा, वैद्य एस.के. पुष्करणा, हमदर्द विश्वविद्यालय के प्रो०मौ.अली एवं डा०एम.पी. शर्मा को प्राणाचार्य की मानद उपाधि से अलंकृत किया गया ।

मुख्य अतिथि ने आयुर्वेद के प्रचार प्रसार पर बल देते हुए अपनी सरकार की आयुर्वेद विकास की प्रतिबद्धता को दोहराया ।

डा० दीनानाथ तिवारी ने अपने उद्बोधन में संस्था की प्रशंसा करते हुए उसके क्रियाकलापों में यथासंभव सरकारी सहायता की वकालत करते हुए आयुर्वेदज्ञों का आह्वान किया कि वे अपने अनुभवों का निरन्तर आदान-प्रदान किया करें । डा० तिवारी ने आयुर्वेदिक औषधियों के मानकीकरण पर बल देते हुए कहा कि आयुर्वेदज्ञों को अपनी औषधियों के पेटेंट अधिकारों के विषय में भी प्रयासरत रहना चाहिये । अध्यक्षीय भाषण में प्रो० वाचस्पति उपाध्याय ने भगवान धन्वन्तरि की जयन्ती को मनाने एवं पूजा-अर्चना करने के महत्व को बताते हुए आयुर्वेद में लुप्त हो रही शल्य चिकित्सा, मंत्र चिकित्सा, विष चिकित्सा एवं मर्म चिकित्सा को पुन: जीवित करने के लिये वैद्य समाज का आह्वान किया । इस समारोह में दिल्ली एवं आसपास के प्रदेशों के लगभग 250 आयुर्वेदज्ञों ने भाग लिया ।

हिमाचल प्रदेश
आयुर्वेदिक औषधियां रोग ठीक करने के साथ रोग प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ाती हैं : डा० जुल्का

बद्दी 29 अक्टूबर (ठाकुर) आयुर्वेद प्रवर्तक भगवान धन्वन्तरि की पावन जयन्ती के उपलक्ष्य में बैद्यनाथ आयुर्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भवन प्रा०लि०, बद्दी द्वारा बैद्यनाथ स्वास्थ्य दिवस का आयोजन किया गया । समारोह में मुख्यातिथि तहसीलदार नालागढ़, एस.के. पराशर ने आयुर्वेद प्रवर्तक भगवान धन्वन्तरि के बारे में विस्तार से चर्चा की तथा आयुर्वेदिक पद्धति के लाभों के बारे में बताया कि आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति प्राचीन चिकित्सा पद्धति है । अनेक देशों में आयुर्वेद के अष्टांगों पर व्यापक रूप से रिसर्च कार्यक्रम चल रहे हैं ।

बद्दी के आयुर्वेदिक चिकित्सा अधिकारी डॉ० नीरज जुल्का ने इस अवसर पर अपने संबोधन में कहा कि जब समुद्र मंथन हुआ था तो धनतेरस के दिन धन्वन्तरि जी प्रकट हुए थे । उस समय उनके हाथ में अमृत कलश था, जिसे उन्होंने सभी देवताओं को पिलाया था । धन्वन्तरि को "गॉड ऑफ आयुर्वेद" भी कहा जाता है । आयुर्वेद अर्थात् आयु का वेद एक ऐसा वेद, एक ऐसा शास्त्र, जिसमें आयु को बढ़ाने और आयु की रक्षा हेतु उपाय बताए गये हैं ।

यही एक ऐसी चिकित्सा पद्धति है, जिसमें शरीर के साथ-साथ मन का भी उपचार किया जाता है । आयुर्वेदिक औषधियों से न केवल कठिन एवं जीर्ण रोगों का समूल नाश होता है बल्कि शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ती है । उन्होंने कहा कि प्राय: जनसाधारण की धारणा होती है कि आयुर्वेदिक औषधियों से रोग देर से ठीक होते हैं या ठीक नहीं होते । यह धारणा भ्रम है अगर औषधि गुणवत्तापूर्ण है व रोग का निदान सही है और औषधि का नियम से उपयुक्त अनुपात से सेवन किया जाए तो नि:संदेह कठिन से कठिन रोग शीघ्र समूल नष्ट हो जाते हैं ।

इस अवसर पर डॉ० गोपाल शर्मा व डॉ० नीरज जुल्का को सम्मानित किया गया । समारोह में फैक्ट्री प्रबंधक एम.पी. वर्मा व वरिष्ठ व्यापार प्रबंधक शैलेश शर्मा, डॉ० पंकज शर्मा ने भी विचार रखे । समारोह में एडवोकेट राजीव शर्मा, भमा सिंह चौधरी, सोहन लाल, मुनीष कौशल, डॉ० रमा जुल्का, डॉ० राममूर्त्ति शर्मा, डॉ० रजनीश मेहता, डॉ० खुल्लर व डॉ० जगदेव भी उपस्थि थे ।

किशोरियों में एनिमिया एवं सौन्दर्यशाला विचार गोष्ठी

डा० गोपाल चड्ढा, चड्ढा ट्रेडर्स द्वारा शिमला एवं विलासपुर में दो गोष्ठियां आयोजित की गयीं । एक गोष्ठी में किशोरियों में व्याप्त रोगियों पर चर्चा हुयी । इसमें 25 चिकित्सकों ने भाग लिया । डा० ओम ने कहा कि किशोरियों में शारीरिक रचना, मासिक स्राव, असन्तुलित भोजन, गर्भावस्था एवं फास्ट फूड के कारण एनिमिया होता है । एक अन्य गोष्ठी में 19 चिकित्सकों ने भाग लिया । गोष्ठी में वक्ताओं ने बताया कि बाजार में उपलब्ध श्रृंगार की सामग्रियों के कारण त्वचा रोग एवं वंशानुगत रोग उत्पन्न होने का भय रहता है ।

महाराष्ट्र

मुंबई वैद्य सभा एवं मुंबई महानगर आयुर्वेद सम्मेलन के संयुक्त तत्वावधान में श्री धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव व वृद्ध वैद्य सम्मान

गुरूवार दिनांक 23/10/2003 को मुंबई वैद्य सभा व मुंबई महानगर आयुर्वेद सम्मेलन के संयुक्त तत्वावधान में प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी श्री धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव एवं वृद्ध वैद्य सम्मान समारोह आयोजित किया गया ।

प्रारम्भ में सभा के मंत्री वैद्य श्री शारदाप्रसाद शर्मा के शुभहस्तों से धन्वन्तरि पूजन किया गया ।

पश्चात सभा के दूसरे मंत्री वैद्य श्री प्रह्लाद हरी भाटे ने मंगलाचरण प्रस्तुत किया । तत्पश्चात् मुंबई महानगर आयुर्वेद सम्मेलन के अध्यक्ष वैद्य दीनानाथ उपाध्याय ने सभी का हार्दिक स्वागत किया ।

पश्चात सत्कारमूर्ति द्वय वैद्य श्री किशोर महादेव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व वैद्या श्रीमती इंदिरा खत्री का परिचय आयुर्विद्या प्रसारक मंडल के अध्यक्ष वैद्य श्री सदानंद कामत ने दिया एवं शुभकामना व्यक्त की । तत्पश्चात् मुंबई वैद्य सभा के अध्यक्ष वैद्य श्री श्रीरामजी शर्मा ने समारोह के अध्यक्ष एवं महाराष्ट्र राज्य के आयुर्वेद संचालक वैद्य श्री अनंत धर्माधिकारी का शाल-श्रीफल से सत्कार किया एवं धन्वन्तरि जयन्ती प्रकाश डाला एवं सत्कार मूर्तियों के प्रति शुभकामना व्यक्त की ।

पश्चात् वयोवृद्ध, आयुर्वेद विद्वान वैद्य श्री किशोर महाजन व वैद्या श्रीमती इंदिरा खत्री का सत्कार समारोह अध्यक्ष वैद्य श्री अनंत धर्माधिकारीजी से शुभहस्तों से किया गया ।

श्री धर्माधिकारीजी ने अपने उद्‌बोधन में दीपावली की सभी को शुभकामना देते हुये सत्कार मूर्तियों के प्रति शुभेच्छा व्यक्त की ।

प्रासंगिक भाषण में वैद्य श्री स.द.दि.कामत, वैद्या श्रीमती ईश्वरी गांधी, प्राचार्य वैद्य श्री हरिप्रसाद शर्मा, वैद्य श्री प्रह्लाद हरि भाटे, वैद्य श्री श्रीरामजी शर्मा, वैद्य श्री अनंत धर्माधिकारी, वैद्य श्री पाध्येगुर्जर आदि महानुभावों ने उद्‌बोध दिया । आभार सभा के मंत्री वैद्य श्री दिनेशचंद्र गोरडिया ने व्यक्त किया ।

उड़ीसा

काशीनगर (गजपति जिला) उड़ीसा में धन्वन्तरि जयन्ती उत्सव सम्पन्न

काशीनगर, स्वास्थ्य विलास फार्मेसी में गत ता० 23/10/03 दिन खूब आडम्बर के साथ भगवान धन्वन्तरि जी की जयन्ती मनायी गयी है । सुबह आठ बजे से भगवान धन्वन्तरि जी की पूजा तथा यज्ञ वैदिक रीति से अनुष्ठित किया गया । पूजा के बाद निकट से आए हुए शताधिक नूतन और पुरातन रोगियों की आयुर्वेदिक चिकित्सा करते हुए उन्हें व्यवस्था पत्र और औषध प्रदान किया गया ।

शाम को 6 बजे उड़ीसा साहित्य एकाडमी के श्री पूर्णचन्द्र महापात्र जी के सभापतित्व में साधारण सभा का आयोजन किया गया । इसमें उड़ीसा के आयुर्वेद भेषज निरीक्षक डा० पवित्र कुमार मुख्यवक्ता, गजपति आरक्षी उपाध्यक्ष श्री वसन्त कुमार दास, मुख्य अतिथि, एस०के०सी०पी० कॉलेज के अध्यापक श्री पन्चानन गौड़ सम्मानित अतिथि के रूप में योगदान दिये ।

डा० महन्त ने दीप प्रज्जवलित कर और भगवान धन्वन्तरि जी के तैलचित्र पर पुष्पमाल्य प्रदान करते हुए सभा का उद्‌घाटन किया । कवि श्री प्रशान्त मिश्र के स्वागत भाषण के बाद सम्मानित अतिथि श्री गौड़ ने आयुर्वेदीय वृक्षलता के गुण और उसके संरक्षण के बारे में अपने मतदान किया । मुख्यवक्ता डा०महन्त आयुर्वेद औषध के उपकार और उसके विशुद्ध रूप से बनाने के बारे में सरकार के बारे में बताया । मुख्य अतिथि श्री दास आयुर्वेद चिकित्सा के महत्व के बारे में अपना अनुभव बताया । इसके बाद स्वास्थ्य विभाग फार्मेसी के परियोजना निर्देशक कविराज मिश्र रामनाथ पात्र विवरणी ने पाठ लिखा और "स्वास्थ विलास" मुखपात्र के श्रेष्ठ लेखक के रूप में बालुमा के डा० त्रैलोक्य नाथ महारणा के नाम घोषणा की । उनको मुख्य अतिथि श्री दास मानपत्र प्रदान किया । सभापति श्री महापात्र भगवान धन्वन्तरि के आर्विभाव और धरा पुष्ट में आयुर्वेद के क्रम-विकास के बारे में बताया कि धन्वन्तरि भारतीय चिकित्सा विकास संस्था के सभापति डा० किशोर चन्द्र महापात्र ने धन्यवाद प्रदान किया ।

इस सभा में स्थानीय सरकारी कर्मचारी और आयुर्वेद प्रेमी योग दिख थे । श्री रमाकान्त पात्र और डा० पूर्णचन्द्र पात्र ने सभा का आयोजन किया था । सबको प्रसाद सेवन के बाद धन्वन्तरि जयन्ती का समापन किया गया ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिहार

तम्बाकू मुक्त दिवस मनाया गया

पटना, 26 नवम्बर, 2003 (कार्यालय संवाददाता द्वारा) इण्डियन फर्मास्यूटिकल एसोसियेशन की बिहार शाखा एवं इण्डियन फार्मेसी ग्रेज्युएट्स एसोसियेशन के संयुक्त तत्वावधान में स्थानीय बिहार इण्डस्ट्रीज एसोसियेशन के सभाकक्ष में फार्मेसी सप्ताह का आयोजन किया गया। समारोह का विधिवत् उद्घाटन करते हुए श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, पटना के निदेशक, श्री प्रमोद शर्मा ने कहा कि फार्मेसी सप्ताह का जो नारा है - **"तम्बाकूमुक्त भविष्य की प्रोन्नति के लिए फार्मेसिस्ट का योगदान"** वह तभी सार्थक हो सकता है जब हमें समाज का सहयोग प्राप्त हो। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि मनुष्य में इच्छा शक्ति होनी चाहिए। यदि हममें इच्छा शक्ति है, तो हम किसी भी बुरी लत को छोड़ सकते हैं। सेल्फ-मेडिकेशन, स्वास्थ्य-रक्षा, पर्याप्त प्रयोगशालाओं के निर्माण सहित अनेक विषयों पर उन्होंने प्रकाश डाला।

समारोह प्रारम्भ होने के पूर्व उद्घाटनकर्त्ता महोदय सहित मंचासीन सभी सदस्यों का स्वागत माल्यार्पण से किया गया। इण्डियन फार्मास्यूटिकल एसोसियेशन की बिहार शाखा के सचिव, डा०एल०के० चौधरी ने फार्मेसी सप्ताह के महत्व पर प्रकाश डाला। एसोसियेशन के अध्यक्ष, श्री एस० लश्कर ने अपने स्वागत भाषण में बताया कि धूम्रपान करने के खतरों पर विस्तार से प्रकाश डाला। आई.पी.जी.ए. के सचिव, डा०एस.पी.सिंह ने अपने भाषण में बताया कि अबतक तम्बाकू के प्रयोग करने से उत्पन्न होने वाले 4,18,000 जीन की पहचान की जा चुकी है। राज्य औषधि नियंत्रक, श्री संगीत कुमार सिन्हा ने अपने अध्यक्षीय भाषण में जी.एम.पी., राज्य में स्थापित औषधि-उद्योग एवं नकली दवाओं पर विस्तार से प्रकाश डाला। अन्य वक्तओं में प्रमुख थे क्षेत्रीय अनुज्ञप्ति अधिकारी, श्री जायसवाल। इस अवसरपर निम्नलिखित सज्जनों को शाल एवं प्रशस्ति पत्र से सम्मानित किया गया।

श्री जी० एस० कानोडिया
मे० इंडिया फार्मास्युटिकल प्रा० लि०
चौक शिकारपुर, पटना सिटी।

श्री सुरेश प्रसाद
मे० वीनर लेबोरेटरीज
आयुर्वेदिक दवा निर्माता

श्री एस० पी० सिंह
एम० फार्म
महाप्रबंधक
जिला उद्योग केन्द्र, गया

श्री नन्द किशोर प्रसाद
बी० फार्म
मे० ऐसकालपियस रेमेडीज प्रा० लि०
रूकनपुरा, बेली रोड, पटना

बैद्यनाथ शंखवटी
अजीर्ण, मंदाग्नि, पेट दर्द में लाभदायक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

लहसुन एवं एड्स

एड्स यद्यपि आधुनिक शब्द है, किन्तु इस रोग के उत्पन्न होने के जो भी लक्षण एवं कारण हैं, उनकी चर्चा आयुर्वेदिक ग्रन्थों में विशद् रूप से है । सम्पूर्ण विश्व के वैज्ञानिक इस तथ्य पर पहुंच चुके हैं कि यदि लहसुन का सेवन अपने आहार में किया जाय, तो एच आई व्ही/एड्स, कैन्सर, हृदय रोग, क्षय रोग सहित अन्य रोगों से बचा जा सकता है । वैज्ञानिकों के अनुसार लहसुन में सेलेनियम नामक तत्व पाया जाता है । इस तत्व की कमी से उपर्युक्त रोग उत्पन्न होते हैं । हाल के दिनों में अमेरिका में एक शोध हुआ है । शोध से यह निष्कर्ष निकाला गया है कि यदि सेलेनियम का प्रयोग एड्स की प्रारम्भिक अवस्था एवं अन्तिम अवस्था में दिया जाय, तो एच आई व्ही के रोगियों के खर्च में काफी कमी आ जा सकती है । सेलेनियम ओज वृद्धि करता है, प्रतिरोधी क्षमता को मजबूत करता है, मायकोबेक्ट्रिया का विनाश करते हुए श्वास-संक्रमण को कम करता है या योनिगत प्रतिरक्षा को मजबूत करता है ।

चरक संहिता के अनुसार लशुन कृमि, कुष्ठ, किलास (श्वित्र) को नष्ट करने वाला, वातहर, गुल्मनाशक, स्निग्ध, गरम, वृष्य तथा रस में कटु होता है । भाव प्रकाश के अनुसार लहसुन बृंहण, वृष्य, स्निग्ध, उष्णवीर्य, पाचक तथा सारक होता है । वह रस तथा पाक में कटु तथा मधुर रस युक्त, तीक्ष्ण, भग्न-सन्धानधारक, कण्ठ को हितकारी, गुरू, पित्त एवं रक्तवर्धक, शरीर में बल तथा वर्ण को उत्पन्न करने वाला, मेधाशक्ति तथा नेत्रों के लिए हितकर और रसायन होता है । हृद्रोग, जीर्णज्वर, कुक्षिशूल, मल तथा वातादिक की विबन्धता, गुल्म, अरुचि, कास, शोथ, बवासीर, कुष्ठ, अग्निमांद्य, कृमि, वायु, श्वास और कफ को नष्ट करता है । इसका प्रयोग विशेषकर फुफ्फुसविकार, वातविकार, व्रण आदि रोगों में होता है । काश्यप संहिता में लशुन कल्प नाम से एक पृथक् अध्याय है । इसमें लहसुन के अनेक प्रयोगों का जिक्र है । हमें अपना ध्यान केवल एड्स से सम्बन्धित लक्षणों पर केन्द्रित करना चाहिए । इस अध्याय के अनुसार लहसुन अनेक रोगों के अतिरिक्त, कुष्ठ रोग, कृमि, श्वित्र में लाभ करता है । यदि हम रासायनिक संगठनों की बात करें, तो वेल्थ ऑफ इण्डिया के अनुसार इसमें आर्द्रता 62.8, प्रोटीन 6.3, वसा 0.1, कार्बोहाइड्रेट 29.0, कैल्सियम 0.03, फास्फोरस 0.31% पाया जाता है । इसके अतिरिक्त लौह 1.3 मिलीग्राम, विटामीन-सी 13 मि.ग्रा./100 ग्राम एवं ताम्र पाया जाता है । यदि इसका स्रावण किया जाय, तो इसमें एसेसियेन्शल ऑयल (एलाइल प्रोपाइल डाय सल्फाइड, C_6H_{12}, S_2 - 6%, डिलाइल डायसल्फाइड, C_6H_2, S_2 - 6%) और गन्धक के यौगिक पाये जाते हैं ।

नादकर्णी के अनुसार लहसुन में वोलाटाइल ऑयल, एलाइल प्रोपाइल डायसल्फाइड, गन्धक तत्व, डिलाइल डायसल्फाइड, पोटासियम, पोली सल्फाइड सहित अनेक तत्व पाये जाते हैं । राजयक्ष्मा, लकवा, अल्सर एवं ज्वर में इसका प्रयोग प्रमाणित है । यह रक्त-दोष को समाप्त करता है । इसके अतिरिक्त अनेक रोगों में इसके उपयोग का वर्णन है । यदि हम मेडिकल डिक्शनरी की बात करें, तो सेलेनियम का अर्थ विषाक्त अधातु तत्व है जो गन्धक से मिलता-जुलता है । यद्यपि यह जानवरों में क्षारीय रोग उत्पन्न करता है, किन्तु इसके यौगिक अर्बुद को समाप्त करने के कार्य में आते हैं । मार्टिनडेल एक्स्ट्रा फार्माकोपिया में सेलेनियम नाम से कई सल्फाईड एवं धातु मिलते हैं । उदाहरण के लिए सेलेनियम सल्फाइड एवं डाईसल्फाइड हैं । सामान्यतया इसके उपयोग शैम्पू में होते हैं । चिकित्सा की दृष्टि से व्रण में इसका उपयोग किया जा सकता है । सेलेनियम-75 का उपयोग गन्धक के स्थान पर करने का विधान है । इसी का उत्पाद, सोडियम सेलेनाइट का उपयोग अस्थि-अर्बुद, मस्तिष्क-अर्बुद आदि में रोगों में किया जाता है । आधुनिक चिकित्सा ग्रन्थों में भी एड्स में सेलेनियम या इसके उत्पाद के उपयोग का वर्णन नहीं है । इसके बावजूद आधुनिक शोध के अनुसार एड्स सहित अनेक अमाशय रोगों में इसके उपयोग का वर्णन है ।

उपर्युक्त सूचनाओं के अवलोकन से निम्नलिखित तथ्य स्थापित होते हैं :-

1. प्राचीन ग्रन्थों के अनुसार एड्स के कारणों एवं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लक्षणों का यदि उचित ढंग से वैज्ञानिक विश्लेषण किया जाय, तो ओजक्षय एवं अर्बुद से इसके लक्षण काफी हद तक मिलते हैं । लहसुन का इन दोनों रोगों में प्रयोग प्राय: सभी महर्षियों ने किया है ।

2. आधुनिक खोज के अनुसार सेलेनियम लहुसन में पाया जाता है । यद्यपि अनेक आधुनिक ग्रन्थों में इसका जिक्र नहीं है, फिर भी नवीनतम खोज से प्रस्तुत निष्कर्ष साबित होता है ।
3. हमारे देश के भी चिकित्सा-विज्ञानियों को जो विशेषकर एच.आई.व्ही./एड्स एवं कैन्सर रोगियों का इलाज करते हैं, लहसुन का प्रयोग अपने रोगियों पर करवाना चाहिए ।

जो भी हो, नवीन निष्कर्ष भी हमारे महर्षियों के सिद्धान्तों एवं उनकी खोज को प्रमाणित कर रहे हैं - इसमें कोई शक नहीं ।

विश्व एड्स दिवस

प्रथम दिसम्बर, 2003 को विश्व एड्स दिवस मनाया गया । इस अवसर पर नैरोबी में सम्बोधित करते हुए विश्व स्वास्थ्य संगठन के सहायक निदेशक, डा० जैक चो ने कहा कि विगत दो दशकों में एच.आई.व्ही. /एड्स सर्वाधिक जन-विनाशकारी रोग है । हम भी इस बात से सहमत हैं । वस्तुत: अफ्रीका के पश्चात् जिस तेजी से यह रोग हमारे देश में फैल रहा है, वह सर्वाधिक चिन्ता का विषय है । आंकड़ों के अनुसार केवल बिहार राज्य में एड्स पीड़ितों की संख्या पचास हजार से ज्यादा है जिसमें महिलाओं का प्रतिशत 46 है । यूनिसेफ के अनुसार तमिलनाडु में प्रतिवर्ष 11 लाख महिलाओं को प्रसव होता है जिसमें सोलह हजार बच्चे एड्स रोग से संक्रमित होकर जन्म लेते हैं । विगत दस वर्ष में 15 लाख बच्चे इस रोग से मर चुके हैं । बच्चों, महिलाओं एवं पुरुषों को मिला दिया जाय तो हमारे देश में एड्स पीड़ितों की संख्या लाखों में पहुंच जायेगी । सही-सही आंकड़ों का पता लगाना मुश्किल है, क्योंकि अधिकांश रोगी हमारे गांव में रहते हैं जहां चिकित्सा सुविधा का अभाव है । दुर्भाग्य की बात यह है कि आम नागरिकों को रोग का पता लग जाने पर भी चिकित्सा-सुविधा उपलब्ध नहीं होती है । इसका कारण निर्धनता है । इस रोग की सफल औषधि एआरव्ही का दाम दस वर्ष पूर्व तीस हजार रुपये थे । आज इसका दाम घटकर 1200 रुपये जरूर हो गया है, फिर भी, यह काफी ज्यादा है । विश्व स्वास्थ्य संगठन का आरोप है कि यद्यपि हमारे देश के दो कारखानों में इस रोग की औषधि का निर्माण होता है, किन्तु कम्पनी पेटेन्ट कानून का उल्लंघन कर रही है । संगठन का दावा है कि 2005 ई० तक 5.5 बिलियन डालर की कीमत के बराबर दवाओं का निर्माण हो जायेगा जिससे सम्भवत: औषधि कम दाम पर उपलब्ध हो जायेगी ।

प्रश्न है कि हम इस रोग पर कैसे काबू पा सकें । यौन-नियंत्रण इसका सर्वाधिक सफल उपाय है, किन्तु मनोविज्ञान है कि यदि ज्यादा दिनों तक एक युवा अपने परिवार से अलग रहता है, तो वह स्त्री सामीप्य के लिए ललायित हो जाता है । यह मनोविज्ञान उसे एड्स संक्रमित महिलाओं के पास ले जाता है और वह भी एड्स से पीड़ित हो जाता है । इसी तरह महिलायें अपने पेट की ज्वाला शान्त करने के लिए एड्स पीड़ित पुरुषों से सम्बन्ध बना लेती हैं । इस तरह महिलायें भी एड्स से पीड़ित हो जाती हैं । परिणाम बच्चों पर भी पड़ता है । यह तो निरन्तर प्रक्रिया है । यह तभी रुक सकता है जब सरकार निर्धनता को दूर करने के लिए सकारात्मक कदम उठावे । साथ ही युवा वर्ग को भी आत्म-नियंत्रण का परिचय देना चाहिए । इसके अतिरिक्त सरकार निम्न कार्य कर सकती है ।

1. व्यापक पैमाने पर इसकी भयंकरता को जनता तक पहुंचावे । यद्यपि सरकार कुछ कदम उठा रही है किन्तु व्यापक पैमाने पर नहीं ।
2. प्रत्येक सरकारी, गैर सरकारी (समस्त चिकित्सा पद्धतियों सहित) अस्पतालों में इस रोग की जांच एवं चिकित्सा की सुविधा होनी चाहिए ।
3. जांच एवं चिकित्सा सुविधा नि:शुल्क अथवा अत्यन्त सस्ती होनी चाहिए ।
4. औषधियों के उत्पादन पर एकाधिकार नहीं होना चाहिए ।

यदि हम एड्स-नियंत्रण के प्रति ईमानदार रहें तो निश्चय ही हमें काफी सफलता मिलेगी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारावाहिक

आयुर्वेद का इतिहास–51

[1]पं० बनवारी लाल शर्मा
[2]विमल चन्द्र झा

गार्ग्य

संस्कृत के इतिहास[1] के अनुसार गार्ग्य प्रसिद्ध वैयाकरण थे। एक अन्य पुस्तक[2] में संस्कृत वैयाकरणों की एक सूची दी गयी है जिसमें गार्ग्य का भी नाम है। निरुक्तकार के नाम से भी वे प्रख्यात थे। हिन्दी कोश[3] में गार्ग्य का अर्थ है – गार्गेय, एक प्राचीन वैयाकरण का नाम। एक अन्य हिन्दी कोश[4] में इसका अर्थ है – गर्ग गोत्र में उत्पन्न पुरुष; पाणिनि के पूर्ववर्ती एक वैयाकरण। इन कोशों में गार्ग्य के आयुर्वेदज्ञ होने का उल्लेख नहीं मिलता है। अब आयुर्वेदिक ग्रन्थों पर एक नजर डालते हैं। चरक संहिता[5] में अन्य उपस्थित ऋषियों के साथ गार्ग्य का भी उल्लेख है – गार्ग्यः शाण्डिल्य कौण्डिन्यौ वार्क्षदेवल गालवौ।

गर्ग और गार्ग्य

कविराज सूरमचन्द्रजी[6] ने गर्ग के सम्बन्ध में निम्न परिचय दिया है। पाठकों के लिये इसे अविकल प्रस्तुत कर रहे हैं :-

भारतीय इतिहास के सूक्ष्मदर्शी विद्वान् पं० भगवद्दत्त जी का "अश्वशास्त्र" नामक एक गवेषणापूर्ण लेख अभी-अभी प्रकाशित हुआ है। उसके आधार पर ऋषि गर्ग का निम्नलिखित इतिवृत्त दिया जाता है –

वंश – चन्द्रवंश में चक्रवर्ती भरत का पुत्र महाराज भुमन्यु था। उसका वंश-वृक्ष यहां दिया जाता है –

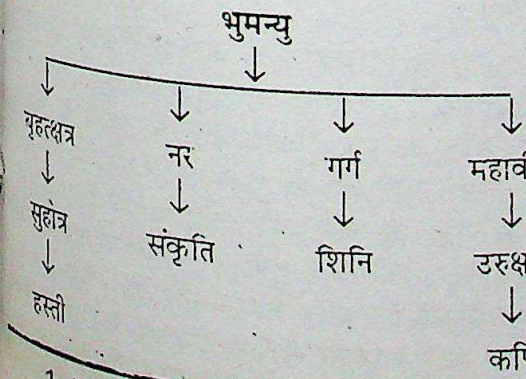

इस वंशवृक्ष से ज्ञात होता है कि महाराज भुमन्यु का पुत्र गर्ग था तथा नर आदि गर्ग ऋषि के भ्राता थे। उनके पृथक्-पृथक् गोत्र चले। गर्ग के वंश में गर्ग अथवा गार्ग्य हुए।

काल– भरत चक्रवर्ती त्रेता के पूर्वार्ध के अन्त में हुआ। उससे लगभग 100 वर्ष पश्चात् गर्ग जन्मा। वह दीर्घजीवी था। उस गर्ग ने अनेक शास्त्र रचे। उसके काल के विषय में अध्यापक श्री तारापद भट्टाचार्य, अपने ग्रन्थ 'ए स्टडि आन वास्तुविद्या", पृ० 102 पर लिखते हैं –

The date of the famous writer Garga was between the second century B.C. and first century A.D.----- This Garga was followed by his disciples — पराशर, बृहद्रथ, विश्वकर्मा तथा वासुदेव।

अर्थात् – वास्तुशास्त्रकार प्रसिद्ध गर्ग का काल ईसापूर्व 200 से ईसावत पहली शत तक था।..... गर्ग के शिष्य पराशर आदि थे।

आलोचना – कहां भारत युद्ध से सहस्त्रों वर्ष पूर्व होने वाला गर्ग और कहां ईसापूर्व 200 वर्ष का समय। उस समय अत्रि, पराशर, बृहद्रथ, विश्वकर्मा तथा वासुदेव आदि में से एक व्यक्ति भी जीवित नहीं था। तारापद जी ने पाश्चात्यों का संस्कार अधिक नहीं लिया पर यहां पर वे स्खलित हुए हैं। वस्तुतः गर्ग आदि का शास्त्र-रचना काल वही है, जो सामशाखाकार तथा अश्वशास्त्र-उपदेशक शालिहोत्र का काल था, अर्थात् त्रेता के मध्य से द्वापर के प्रारम्भ तक का काल।

गर्ग एक ही हुआ है। उसके विषय में पाणिनि (विक्रमपूर्व 2800) ने सूत्र रचा – गर्गादिभ्योयञ्। 4। 3। अतः गर्ग को अथवा उसके ग्रन्थ को ईसापूर्व प्रथम शती में रखना भारी भूल है।

गुरु – राजगुरु हेमराजजी के अनुसार गर्ग ने शालिहोत्र से अश्ववैद्यक का ज्ञान प्राप्त किया। इस विषय में शालिहोत्र ग्रन्थ का निम्नलिखित स्थान द्रष्टव्य है।

सुश्रुतो रदराजश्च गर्गो मित्रजिदेव च।
पृच्छन्ति वाहनागरं शालिहोत्रं तपोनिधिम्॥

1. प्रबन्ध निदेशक, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि०, 2 सम्पादक, सचित्र आयुर्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थात् - सुश्रुत, रदराज, गर्ग तथा मित्रजित वाहनागर के विषय में तपोनिधि शालिहोत्र से पूछते हैं ।

इस प्रकार स्पष्ट है कि गर्ग शालिहोत्र का शिष्य था ।

शिष्य - बृहत्संहिता अध्याय 46 तथा मत्स्य पुराण अध्याय 229 के अनुसार अत्रि ऋषि ने गर्ग से वास्तुशास्त्र ग्रहण किया ।

ग्रन्थ

1. अश्व-आयुर्वेद - महर्षि गर्ग का अश्व-आयुर्वेद विषयक कोई ग्रन्थ था ।

नेपाल के राजगुरु पण्डित हेमराज जी शास्त्री लिखते हैं -

दुर्लभगणकृते सिद्धोपदेशसंग्रहनामकेऽश्ववैद्यके ग्रन्थे-
शालिहोत्रेण गर्गेण सुश्रुतेन च भाषितम् ।
तत्त्वं यद् वाजिशास्त्रस्य तत्सर्वमिह संस्थितम् ॥

अर्थात्-शालिहोत्र, गर्ग और सुश्रुत ने अश्वशास्त्र के विषय में जो कहा है, वह सब दुर्लभगण के ग्रन्थ में स्थित है । गणकृत अश्वायुर्वेद के अन्त में लिखा है -

ये शालिहोत्र-सुश्रुत-गर्गैर्महर्षिभिः पुरा कथितः ।
स्वे स्वे तुरङ्गशास्त्रेयोगाश्शान्त्यै विकाराणाम् ॥

अर्थात् - शालिहोत्र, सुश्रुत तथा गर्ग नामक महर्षियों ने पूर्वकाल में अपने-अपने अश्वशास्त्रों में विकारों की शान्ति के लिए योग कहे हैं ।

इन दोनों लेखों से गर्ग का अश्वशास्त्रकार होना सिद्ध होता है ।

2. हस्ति आयुर्वेद - युक्ति-कल्पतरु में गर्ग का हस्तिशास्त्र विषयक मत उद्धृत है ।

3. वास्तुविद्या - मत्स्यपुराण अध्याय 252 में वर्णित अष्टदश वास्तुशास्त्रोपदेशकों में गर्ग की गणना की गई है । अग्निपुराण 65/7 में गर्ग-विद्या का उल्लेख है । गर्गविद्या से निवासयोग्य गृहनिर्माण कला अभिप्रेत है । तारापद भट्टाचार्य ने लिखा है कि वृहत्संहिता, विश्वकर्मप्रकाश तथा सनत्कुमार-वास्तुशास्त्र में गर्ग के वास्तुशास्त्र का उल्लेख है ।

4. ज्योतिर्विद्या - गणकतरङ्गिणी में वर्णित ज्योतिर्विद्याप्रवर्तकों में गर्ग का उल्लेख भी है ।

वायसशास्त्र - यह शास्त्र ज्योतिष विद्या के 64 अंगों में से एक विषय पर है । गर्गकृत वायसरुत का एक हस्तलेख बड़ोदा के हस्तलि० ग्रन्थों के सूचीपत्र में निर्दिष्ट है । देखें, भाग द्वितीय, पृ० 1248, प्रवेश संख्या 12034, ग्रन्थ संख्या 120 ।

वारिशास्त्र - यह शास्त्र भी ज्योतिष विद्यान्तर्गत है । इस विषय का अष्ट पत्रात्मक एक लघु ग्रन्थ नेपाल राज्य के हस्तलिखित ग्रन्थों की सूची, संख्या 3633, पृ० 76 पर उल्लिखित है । उसके अन्त में लिखा है -

गर्गभाषित वारिसार शतक समाप्तः । संवत् 190 ।

नेपाली संवत् 190 विक्रम संवत 1127 है ।

5. देवर्षिचरित - महाभारत शान्तिपर्व 212/33 में लिखा है कि गर्ग को देवर्षिचरित का ज्ञान परम्परा से उपलब्ध हुआ है ।

6. मन्त्रद्रष्टा - ऋग्वेद 6/47 का ऋषि गर्ग है । इनके अनुसार गर्ग अथवा गार्ग्य हुए ।

अर्थात् - गर्ग और गार्ग्य में कोई अन्तर नहीं है, किन्तु श्री गिरीन्द्रनाथ मुखोपाध्याय[7] ने दोनों में अन्तर माना है । उनके अनुसार गर्ग के पुत्र का नाम गार्ग्य था । विष्णु पुराण के अनुसार गर्ग से शिनि उत्पन्न हुए और उनसे गार्ग्य । प्रयोगरत्नाकर के अनुसार गर्ग एक चिकित्सा विज्ञानी थे । मत्स्य पुराण में गर्ग ने सामान्य गर्ग की विसंगति पर प्रकाश डाला हुआ है । डा० दासगुप्ता[8] ने गर्भ का जिक्र सनत-कुमार, अंगिरा, भृगु, कणाद, शुक्र, वशिष्ठ आदि ऋषियों के साथ किया है । ये लोग यथार्थ, विश्व और ईश्वर पर होनेवाली गोष्ठी में बद्रिकाश्रम में एकत्रित हुए थे ।

उपलब्ध अभिलेख के आधार पर यह कहा जा सकता है कि गर्ग और गार्ग्य पृथक् व्यक्तित्व के स्वामी थे । दोनों ही का सम्बन्ध चिकित्सा-जगत् से था - यह सत्य प्रतीत होता है ।

वामदेव

हिन्दी विश्वकोश के अनुसार वामदेव के बारे में में कहा गया है - ऋग्वेद के चतुर्थ मंडल के सूक्तद्रष्टा, गोतम ऋषि के पुत्र, 'जन्मत्रयी' के तत्ववेत्ता, वामदेव गोतम जिन्हें गर्भावस्था में ही अपने विगत दो जन्मों का ज्ञान हो गया था और उसी अवस्था में इन्द्र के साथ तत्वज्ञान पर इसकी चर्चा हुयी थी । वैदिक उल्लेखानुसार सामान्य मनुष्यों की भांति जन्म न लेने की इच्छा से इन्होंने माता का उदर फाड़कर उत्पन्न होने का निश्चय किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किन्तु माता द्वारा अदिति का आवाहन करने और इन्द्र से ब्रह्मज्ञान चर्चा होने के कारण ये वैसा न कर सके । तब वह श्येन पक्षी के रूप में गर्भ से बाहर आए (ऋ० 4.2. 71) । एक बार यह कुत्ते की आंत पका रहे थे । उसी समय इन्द्र श्येन पक्षी के रूप में अवतीर्ण हुए । युद्ध में इन्होंने इन्द्र को परास्त किया और उन्हें ऋषियों के हाथ बेच दिया (बृहद्देवता 4,126, 131)। ये सारी कथाएं प्रतीकात्मक तथा रूपकात्मक होने के कारण असंगतियों से युक्त और अस्पष्ट हैं ।

इस नाम के अनेक पुराणेतिहासिक व्यक्तियों का उल्लेख प्राप्त होता है जिनमें मनु शतरूपा के पुत्र रूप में विष्णावतार (मत्स्य 4.27. 30-31), अंगिरस और सुरूपा का पुत्र (ब्रह्माण्ड 3, 1); रामचन्द्र के समय के एक ऋषि और ग्यारह रूद्रों में से दसवें रूद्र (भाग० 2,12, 7) आदि उल्लेखनीय हैं । वैदिक कोश[2] में वामदेव का निम्न आशय है - परम्परा के अनुसार ये ऋग्वेद के चतुर्थ मंडल के ऋषि हैं: ऐआ० 2.2.1 इत्यादि । एक बार उस मण्डल में इनका नाम भी आया है 4.16.18 । याजुष संहिताओं (कासं., 10.5; मैसं., 2.1.11; 3.2.6) के अनुसार ये उस मण्डल के चतुर्थ सूक्त के द्रष्टा हैं । वहां वे गोतम के पुत्र उल्लेखित होते हैं, जबकि ऋग्वेद 4.4.11 में गोतम को इस ऋषि का पिता बताया गया है । ऋग्वेद 4.32.9; 12 में गोतमों को इन्द्र की स्तुति करने वाले के रूप में चित्रित किया गया है । वृहद्देवता में वामदेव के सम्बन्ध में दो अभद्र विवरण आये हैं; एक में कहा गया है कि वामदेव के कुत्ते की अंतड़ियां पकाने पर स्वत: इन्द्र श्येन के रूप में उनके सामने प्रकट हो गये थे । दूसरे में कहा गया है कि वे संघर्ष में इन्द्र को जीतकर उसे ऋषियों को बेच देते हैं; 4.126.131 एवं अग्रिम; मैकडानल के नोट के साथ । ओल्डेनबर्ग (हीजाऋ० 76 एवं अग्रिम) ने इन कथानकों को ऋग्वेद (4.27 और 4.24 क्रमश: - प्रथम सूक्त पर देखें अग्रिम) में ढूंढने की चेष्टा की है । साथ ही देखें अथर्ववेद 18.3.15, 16 को और ऐब्रा० 4.30.29 6.18.1, 2; ऐआ०, 2.5.1 = ऐउ०, 2.5 को, जहां वामदेव के जन्म के पूर्व ज्ञान प्राप्त कर लेने का उल्लेख आता है । बृउ०, 1.4.22 मा०= 1.4.10; पं विं ब्रा; 13.9 में भी वामदेव का उल्लेख आता है । एक अन्य वैदिक कोश में वामदेव का निम्न उल्लेख है - (1) वाम: वननीयो देव: । द्योतको वोधो यस्य स: (2) सुन्दरदेव परमेश्वर का उपासक । 'अवन्तु न कश्यपो वामदेव:' अ. 18.3.15 । (3) उत्तम रीति से सेवन करने योग्य पदार्थों का दाता, (4) उत्तम ज्ञानों का प्रकाशक या दानी ।

'भुवोऽविता वामदेवस्य धीनाम्'

ऋ० 4.16.18

पौराणि कोश[3] में वामदेव के सम्बन्ध में कहा गया है- (1) एक वैदिक ऋषि का नाम जो उशिज के पिता थे (वायु० 65.102; 99.114) । ऋग्वेद के मंडल में इनके रचे सूक्त मिलते हैं जिनसे इनकी दैवी शक्ति तथा योगबल का पता चलता है । (2) दशरथजी के एक मंत्री के नाम (रामायण) । (3) शिव का एक नाम । (4) एक रूद्र का नाम । (5) एक ऋषि का नाम जिनके पास 'वाम्य' नाम के दो अति तीव्रगामी घोड़े थे (महाभा० वन० 192.43, 48-59) । (6) हाथियों का एक वर्ग जिसमें अंजन (इरावती का पुत्र) था (ब्रह्मां० 3.7.292, 327, 339) । हिन्दी कोश[4] में वामदेव का आशय है - शिव, महादेव, एक वैदिक ऋषि । (निरन्तर जारी)

संदर्भ

1. A history of Sanskrit Literatrue — A.B. Keith - Oxford University Press.
2. A history of ancient Sanskrit literature - F. Max. Muller - The Chowkhamba Sanskrit Series offices, Varanasi.
3. मानक हिन्दी कोष - हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ।
4. बृहत् हिन्दी कोश - ज्ञानमण्डल, वाराणसी ।
5. चरक संहिता ।
6. आयुर्वेद का इतिहास - प्रथम भाग - कविराज सूरमचन्द्र ।
7. History of Indian Medicine - Girindranath Mukhopadhyaya, Bhisagacharya — Vol. II, University of Calcutta.
8. A history of Indian Philosophy — Vol. III– Cambridge University Press.
9. हिन्दीकोश - खण्ड-10, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी
10. वैदिक कोश- सूर्यकान्त ।
11. वैदिक कोश - पं०चन्द्रशेखर उपाध्याय एवं श्री अनिल कुमार उपाध्याय - नाग प्रकाशक - दिल्ली ।
12. पौराणिक कोश - ज्ञानमंडल लि०, वाराणसी ।
13. मानक हिन्दी कोश-हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृद्धावस्था में स्वस्थ रहने के मौलिक सिद्धान्त एवं उत्पन्न होने वाली व्याधियों की चिकित्सा

प्रो० हरिभाई के० त्रिवेदी

पुरुषार्थ चतुष्ट्य एवं ऐषणाओं (प्राणैषणा, धनैषणा एवं परलोकैषणा) की प्राप्ति तभी सम्भव है जब शरीर एवं मन स्वस्थ रहे । स्वस्थ कौन है - इसका सुन्दर वर्णन सुश्रुत संहिता में है -

समदोषः समाग्निश्च समधातुमलक्रियः ।
प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते ॥

- सु०सू० 15/41

प्रस्तुत लेख के उद्देश्यों पर हम निम्नलिखित ढंग से प्रकाश डाल सकते हैं :-

वातादि दोष, रस-रक्तादि धातु और मल, मूत्रादि के कर्म-

शरीरस्थ प्रकृतिस्थ वायु सदा सर्वदा-उत्साद, श्वास, प्रश्वास, चेष्टा (शारीरिक व्यापार), पुरीष आदि के वेगों की प्रवृत्ति, रस आदि इन्द्रियों की पटुता (विषयग्रहण कर्म) से अनुगृहीत करता रहता है । (दशन व्यापार) क्षुधा, तृषा, रुचि, प्रभा, मेधा, बुद्धि, शूरता तथा शारीरिक मृदुता से अनुगृहीत करता रहता है ।

इसी प्रकार प्रकृतिस्थ कफ देह को सर्वदा स्थिरता, स्निग्धता, सन्धिबन्धन तथा क्षमा (सहन शीलता) आदि से अनुगृहीत करता रहता है ।

रसादि धातुओं के कर्म :-

रस धातु रक्त की एवं समस्त धातुओं की पुष्टि करता है एवं धारण एवं यापन करता है तथा मानसिक तृष्टि को बनाए रखता है ।

रक्तधातु - वर्ण को स्वच्छ रखता है तथा मांस का तथा सब धातु का पोषण करता रहता है । मांस-शरीर को पुष्ट करता है और मेदस् का पोषण करता है ।

मेदस् धातु - शरीर को स्निग्ध रखने के साथ-साथ स्वेद ही उत्पत्ति, शरीर की दृढ़ता तथा अस्थियों का पोषण करता रहता है ।

अस्थि धातु - शरीर धारण के साथ-साथ मज्जा धातु का पोषण करता है ।

मज्जा धातु - पूरण के साथ-साथ श्वेत, शारीरिक शक्ति तथा शुक्र धातु का पोषण करता रहता है ।

शुक्र धातु - गर्भोपादन के अतिरिक्त धैर्य, प्रीति (प्रेम) तथा बल की वृद्धि का हेतु होना है तथा मानसिक हर्ष देनेवाला होता है ।

पुरीषादिम्लों के कर्म -

पुरीष का कर्म - अवष्टम्भ (अवलम्ब-उपयोगी बल का रक्षण तथा मलाशय स्वस्थ रखना । साथ ही वायु तथा अग्नि का धारण)

मूत्र का कर्म - क्लेद (शरीर में आर्द्रता बनाये रखना) को बहा देना ।

स्वेद का कर्म है - शरीर में आर्द्रता रखना (तथा त्वचा को कोमल) बनाए रखना ।

उपरोक्त वातादि दोष शरीर का संचालन करने में, रस-रक्तादि धातु शरीर की वृद्धि (मोटापा) करने में एवं पुरीषादि मल शरीर का धारण करने में महत्व का योगदान देते हैं और उसकी सब क्रिया प्रत्यक्ष कर्मानुमेय है और शरीर को पोषण देने में आहार, शरीर को स्वस्थ रखने में निद्रा और शरीर को टिकाने में ब्रह्मचर्य का टू तीन उपस्तंभों में महत्व का योगदान है ।

वृद्धावस्था में दिनचर्या का महत्व :-

वृद्धावस्था मनुष्य मात्र की स्वाभाविक एवं सहजावस्था है । इन अवस्थाओं में मनुष्य की कार्य करने की एवं धारणा-स्मृति शक्ति का ह्रास दिखाई पड़ता है । वृद्धावस्था वात वृद्धि की अवस्था है । अतः जठराग्नि विषम होती है । (कभी सुबह में, कभी दोपहर में और कभी रात्रि को क्षुधा (भूख) लगती है, कभी ऐसा भी होता है कि भूख नहीं लगती क्योंकि जठराग्नि विषम होने से आहार का सम्यक् पाचन नहीं हो तो उसका आमदोष (आहार का अपक्वारस) होता है, आमदोष से दो बातें होती है । (1) आमरस से रस-रक्तादि धातुओं का पोषणाभाव न होने से शरीर में दौर्बल्य (अशक्ति) लगता है और (2) आमदोष से कोई भी व्याधि का निर्माण होता है । अतः हमारे शरीर में कोई भी व्याधि का निर्माण न हो

सेवानिवृत्त प्राध्यापक, सरकारी आयुर्वेद महाविद्यालय, बड़ौदा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसलिये दिनचर्या का सम्यक रूप से पालन करें । प्रतिदिन की चर्या का नाम दिन चर्या है, चर्या का अर्थ है चरण अर्थात् आचरण । मानव (नर नारी) का कर्तव्य कर्म दिनचर्या कहलाता है ।

स्वास्थ्य परिरक्षण हेतु स्वस्थ पुरुष को नित्य सोकर उठने के बाद जो कर्म करना चाहिए उसे ही स्वस्थवृत्त कहते हैं । स्वस्थवृत्त पालन से रोगों को दूर रखते हुए आरोग्य पूर्वक सप्रयोजन जीवन यापन किया जा सकता है । चरक संहिता में कहा है कि संसार में सब कुछ छोड़कर स्वशरीर का पालन करना चाहिए क्योंकि शरीर ही सर्व सुख दु:ख के भोग का माध्यम है । जिस प्रकार नगर स्वामी नगर तथा सारथी रथ की रक्षा में सदा तत्पर रहता है उसी प्रकार बुद्धिमान पुरुष को अपने शरीर की रक्षा में तत्पर रहना चाहिए ।

स्वस्थ मानव बाह्ममूहुर्त में शय्या पर से उठकर अपना दायें हाथ देखें - हाथ देखते समय निम्नोक्त श्लोक का स्मरण करें ।

कराग्रे वसते लक्ष्मी: करमूले सरस्वती ।
करमध्येतु गोविन्द: प्रभाते करदर्शनम् ॥

अर्थात् अपने जो कोई भी अराध्य देव-ईश्वर हो उसको कृतज्ञता पूर्वक याद करें ।

तत्पश्चात् वट, खैर, बबूर करञ्ज अथवा अर्जुन वृक्ष आदि किसी उपयुक्त या उपलब्ध वृक्ष की प्रशाखा की दतवन करें । दतवन से रातभर की मलीनता दूर हो जाती है । दतवन का रस कषाय (जैसा बजूरक) अथवा कटु (जैसा नेजवल का) अथवा तिक्त (जैसा निम्बका) होना चाहिए । दतवन इस प्रकार चबाकर करें जिससे मसूड़ों पर बाधा न हो और प्रत्येक दन्त स्वच्छ हो जाय अथवा दन्तमञ्जन से भी दन्त साफ किये जाते हैं । दन्तमंजन भी कषाय, कटु एवं तिक्त रस वाले द्रव्यों के योग से बनाया गया हो । कषाय रस से दन्तवेष्टों का संकोच होता है । फलत: दन्तमूल दृढ हो जाते हैं । कटु रस से लालास्राव हो जाता है और तिक्त रस से क्रिमि नाशन एवं रक्त शोधन हो जाता है । इसलिये दन्तरोगों एवं दन्तवेष्ट रोगों तथा समस्त मुख रोगों की उत्पत्ति नहीं होती तथा शान्ति हो जाती है, दन्त दृढ बने रहते हैं, मुख स्वच्छ एवं दुर्गन्ध रहित बना रहता है ।

अञ्जन - दतवन के बाद आँख में अञ्जन करना चाहिए । नेत्र नामक अवयव अग्निगुण प्रधान है, कफ अग्नि का विरोधी है । कफ का स्त्रावण होता रहे तो कफ का संचय नहीं होता । फलत: नेत्र में कोई रोग भी नहीं हो पाता । विशेषत: कांत्र (मोतिया) की सम्भावना भी नहीं रहती । इसलिये सप्ताह में कम से कम एक या दो बार कोई अंजन करना चाहिये । जैसे कि सौवीर अञ्जन अथवा रसाञ्जन अञ्जन का प्रयोग करना चाहिये ।

अभ्यंङ्ग - प्रतिदिन अभ्यंग करना चाहिये क्योंकि वह जरा (बुढ़ापा), श्रम (थकान) तथा वात-विकार को नष्ट करता है और दृष्टि को स्वच्छ करता है, शरीर को पुष्ट करता है, आयु को बढ़ाता है, निद्रा लाता है, त्वचा को सुन्दर बनाता है और मांसपेशियों को दृढ़ बनाता है ।

व्यायाम - अभ्यंग के बाद: लघु व्यायाम, कोई भी आसन जो शरीर को अनुकूल हो वह करना चाहिए । व्यायाम से शरीर एवं मन में स्फूर्ति आती है । कर्म करने की शक्ति बढ़ती है? । जठराग्नि प्रदिप्त होती है । स्थौल्य का क्षय होता है । अङ्ग-प्रत्यङ्ग विभक्त एवं घन (ठोस) हो जाते हैं ।

स्नान - स्नान से जठराग्नि-प्रदीप्त होता है, वृष्य है, आयु को बढ़ाता है, कण्डू, मल, थकान, स्वेद, तन्द्रा, वृषा, दाह तथा बुरे विचार को नष्ट करता है । उष्ण जल से अधि:काय (ग्रीवा के नीचे के शरीर) का परिषेचन (स्नान) करना बलवर्धक है ।

स्नान के अनन्तर अर्थात् भोजन का जब समय होता है तब पूर्वकृत भोजन पत्र जाने पर कोई हित एवं मित (उचित मात्रा में) सेवन करें । ऋतु एवं सात्म्य-असात्म्य (शरीर के अनुकूल-प्रतिकूल) का विचार करके जो हित हो वह आहार खाये ।

खाना के पूर्व आर्द्रक + लवण (नमक) को मिलाकर लेना चाहिए क्योंकि आर्द्रक लेने से जठराग्नि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रदीप्त होता है और दूसरी बात यह है कि अगले समय के खानों का जो कुछ अंश अपक्व रहा हो तो आर्द्रक रस उसको पचाते हैं ।

खाने में शक्य हो तो प्रथम मधुर रस का उपयोग करें, बाद में अम्ल, लवण और तिक्त (कडुआ रस) लेना चाहिए, तिक्त रस कृमि नाशक है । यदि तिक्त रस वाले कारवेल्लक न मिले तो निम्न का दतवन करें । निम्ब, रस ज्वर व्याधि का भी प्रतिकार करता है ।

महर्षि चरक ने त्रिविधकुक्षीय विमान स्थान के दूसरे प्रकरण में आहार का सेवन करने वाले व्यक्तियों के लिये अपने उदर में आहार के लिये 3 प्रकार का अवकाश (स्थान)रखना चाहिए । जैसे - एक अवकाश मूर्त (Solids) आहार के लिये, एक अवकाश द्रव (Liquids) आहार के लिये और एक अवकाश, वात-पित्त-कफ इन दोषों के लिये रखें । इस प्रकार आहार सेवन करने से कभी जठराग्नि मंद नहीं होगी अर्थात् जठराग्नि मांद्य सम्बन्धी कोई भी व्याधि नहीं होगी ।

खाना खाते समय जल का उपयोग भोजन के मध्य में करना चाहिए । भोजन के मध्य में जल लेने से आहार मृदु, प्रवाही एवं सुपाच्य बनता है और हो कितना आहार लिया उसका भी एहसास होता है । अत: भोजन के मध्य में जल पीने से शरीर "सम" रहता है और अन्त में जल पीने से शरीर स्थूल एवं मेदस्वी हो जाता है तथा भोजन के पूर्व जल पीने से जठराग्नि मंद हो जाने से आहार का सम्यक रूप पाचन नहीं होता और रसादि धातुओं का पोषणाभाव से शरीर कृश (दुर्बल) हो जाता है ।

वृद्धावस्था में व्याधि होने का हेतु ।

वृद्धावस्था में शरीर के धातु दौर्बल्य वंशात् भिन्न-भिन्न ऋतुओं का प्रभाव शरीर पर तत्काल होते हैं क्योंकि वृद्धावस्था वायु की ही अवस्था है । इस अवस्था में वायु का प्रभाव होने से रस-रक्तादि नई धातुओं की उत्पत्ति नहीं होती, शरीर केवल आहार लेने से पोषण क्रम में चलता है । नई धातु उत्पन्न न होने से शरीर में बल, स्फूर्ति, मेधा कान्ति इत्यादि बढ़ता नहीं है । वृद्धावस्था में थोड़ा-सा वात वृद्धिकर आहार-विहार से वात वृद्धि होती है और वायु का विकार होता है ।

(अ) वात प्रकोप के कुछ सामान्य हेतु निम्नोक्त हैं ।

(1) आहार संबंधी - रूक्ष, शीत, अल्प तथा लघु आहार का निरन्तर सेवन । (2) विहार संबंधी - अत्यधिक स्त्री संग (मैथुन), अत्यधिक जागरण, अत्यधिक व्यायाम, उपवास, वेग निधारण, चिन्ता, क्रोध (3) कर्षण (4) धातु क्षय (5) मार्गावरोध तथा आमरस की उत्पत्ति (6) अभिघात, मर्मस्थान की बाधा इत्यादि ।

(स) वात प्रकोप के सामान्य लक्षण ।

(1) पर्व संकोच (2) स्वग्ग (3) अस्थि भंङ्ग (4) रोमहर्ष (5) प्रलाप (6) पाणिपृष्ठशिरोग्रह (7) खाञ्ज, पांङ्गुलत्व, कुल्जत्व (8) अंङ्ग शोष (9) अनिद्रा (10) गर्भ, शुक्र, रज नाश (11) स्पन्दन तथा गात्र सुप्तता (12) शिर, नासा, अक्षि, जत्रु, ग्रीवा में टेढ़ा होना । (13) भेद, वोद, अर्ति (14) आक्षेप (15) आयास ।

(क) वातवृद्धि से अंङ्ग प्रत्यंग में निम्नोक्त व्याधियां होती हैं।

एकाङ्ग = सिरागत वात, स्नायुगतवात, संधिगत वात, कम्पवात, गृध्रसी (Sciatica) हनुग्रह इत्यादि।

(ड़) सर्वाङ्ग = पक्षवध, अर्दित, कम्पवात, खञ्ज, पङ्गु, आक्षेपक, अपतंत्रक, अपतानक -

(इ) वात व्याधियों में औषधि प्रयोग -

एकल द्रव्य प्रयोग -

(क) वातनाशक गण - अश्वगंधा, बला, दशमूल, शुण्ठी, रास्ना ।

(ख) अन्य विशिष्ट वातहर द्रव्य = रास्ना, गुग्गुलु, एरण्ड, माष निर्गुंडी, तिल तेल, नारायण तेल, रास्ना तेल, विषगर्भ तेल, निर्गुंडी तेल ।

(ग) घृत प्रयोग = दशमूलाद्य घृत, चित्रकाद्यघृत ।

(घ) कषाय = रास्नासप्तक, रास्नादशमूल ।

(इ) गुग्गुलु योग = त्रयोदशांग गुग्गुलु, योगराज गुग्गुलु ।

(ई) रस प्रयोग = वातगजांकुश, चितांमणि रस, लक्ष्मीविलास रस, योगेन्द्र रस ।

(व) पथ्य = मधुर, अम्ल, लवण, स्निग्ध द्रव्य ।
अपथ्य = जागरण, चिंतन, श्रम, रूक्ष पदार्थ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृद्धावस्था में होनेवाली व्याधियां पथ्य, अपथ्य, प्रतिकारक, उपक्रम एवं चिकित्सा

क्रम	रोग-व्याधि	पथ्य	अपथ्य	प्रतिकारक	उपक्रम एवं चिकित्सा
1.	श्वास (दमा)	1. सूंडी से उबालकर जल 2. मूंग का पानी	1. स्निग्ध पदार्थ 2. तैलीय पदार्थ 3. शक्कर की बनावट 4. शीत जल, 5. फ्रिज का जल	1. लघु व्यायाम । 2. कब्ज न होना । 3. सुपाच्य अन्न लेना । 4. रात्रि को लघु अन्न लेना 5. रज-धुओं का त्याग	1. हरड़ चूर्ण 2. भार्ग्यादि क्वाथ । 3. श्रृंग्यादि चूर्ण । 4. पीपर चूर्ण
2.	डायाबिटीज (मधुप्रमेह)	1. यव (जव) 2. गोमूत्र 3. पुराने चावल 4. चने का आटा	1. शीत एवं स्निग्ध अन्न 2. मधुर पदार्थ 3. तैलीय पदार्थ 4. दही, केले इत्यादि	1. मेद की वृद्धि न हो उसमें जागृत रखना 2. लघु व्यायाम	1. हरिद्रा, 2. दारूहरिद्रा 3. आमलकी, 4. गुडूची 5. यवानी, 6. चन्द्रप्रभाव 7. फल त्रिकादि क्वाथ ।
3.	हृदयरोग	1. सूंडी युक्त उष्ण जल 2. पुराने चावल 3. मुद्ग यूष, 4. दही 5. गोघृत	1. तैलीय-त्रिकाशयुक्त पदार्थ 2. मधुर पदार्थ 3. दही, केले 4. वातल आहार	1. चिंता 2. क्रोध न करना 3. रात्रि जागरण 4. लहसुन का प्रयोग प्रतिदिन करना	1. अर्जुन क्षीरपाक । 2. पुष्कर मूल चूर्ण । 3. श्रृंग भस्म । 4. चौषष्डी पिप्पली । 5. हृदयार्णव रस ।
4.	स्मृति भ्रंश	1. धान्यक में + शकर डालकर प्रतिदिन प्रयोग करें । 2. लहसुन	1. वातल आहार 2. ठंडा या वासी आहार 3. अपवित्र आहार	1. दूध 2. गोघृत 3 गेंहू	1. शंखापुष्पी । 2. ब्राह्मी । 3. सारस्वत चूर्ण । 4. जटामांसी । 5. वज, उपलेट ।
5.	आँख के रोग	1. शीत जल से आँख साफ करना 2. प्रकाश-सामने मत देखना ।	1. लाइट के सामने एकटक से देखना नुकसान कारक है ।	1. शहद + घृत का मिश्रण आँख में डालना	1. त्रिफला । 2. पलाश अर्क ।
6.	प्रास्टेट ग्लेन्ड	1. यव का जल । 2. मूंग का पानी । 3. सूंडी युक्त उष्ण	1. द्विचक्री वाहन मत चलाना चाहिए । 2. भार का वहन मत करना चाहिए ।	1. प्रति दो दिन में विरेचन चूर्ण देना ।	1. पुनर्नवा गुग्गुल । 2. अपामार्ग चुर्ण । 3. हरड़ चूर्ण ।
7.	लो ब्लड प्रेशर	1. उड़द की दाल 2. गुड़, 3. लहसुन 4. मेथिका	1. चिकाशयुक्त पदार्थों 2. फ्रिज का पानी मत लेना ।	1. घृतयुक्त गेहूं का आटा और गुड डालकर सुखडी बनाकर देना चाहिए ।	1. अश्वगंधा । 2. यष्टिमधु । 3. शतावरी । 4. स्वर्ण वसंत मालती ।
8.	हाई ब्लड प्रेशर	1. पुराने चावल 2. मूंग की दाल	1. पंखा की हवा का सेवन नहीं करें । 2. आईस्क्रीम, दही इत्यादि नहीं लेना चाहिए।	1. खाना खाने के बाद सोना नहीं चाहिए । 2. शीतल पानी नहीं पीना चाहिए । 3. आईस्क्रीम नहीं खाना चाहिए ।	1. श्रृंग भस्म । 2. गोदंती भस्म । 3. चौखण्डी पिप्पली । 4. चराटिका भस्म ।
9.	तमाम प्रकार की वात व्याधियां	1. उड़द की दाल 2. लहसुन, गेंहू 3. चावल के साथ घृत लेना चाहिए ।	1. रात्रि को जागना नहीं चाहिए ।	1. मल-मूत्रादि के वेग को नहीं रोकना चाहिए । 2. तिल तैल का अभ्यंग ।	1. अश्वगंधा 2. बलाचूर्ण 3. दशमूल, 4. रास्ना 5. एरण्ड, रास्ना, गुग्गुल ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद मतानुसार आयुष्मान बालकों का परिज्ञान

*डॉ० चन्द्र शेखर सिंह, एम.डी. (आयु.) अध्येता
**डॉ० अभिमन्यु कुमार, सहायक प्रोफेसर

आचार्य चरक ने आयुर्वेद की परिभाषा देते हुए कहा है -

हिताहितं सुखं दुःखमायुस्तस्य हिताहितम् ।
मानं च तच्च यत्रोक्तमायुर्वेदः च उच्यते ॥

च०सू० 1/41

अर्थात् जिस ग्रन्थ में हित आयु, अहित आयु, सुख आयु एवं दुःख आयु इन चार प्रकार की आयु के लिए हित (पथ्य), अहित (अपथ्य), इस आयु का मान (प्रमाण और अप्रमाण) तथा आयु का स्वरूप बताया गया हो उसे आयुर्वेद शास्त्र कहा जाता है ।

बालकों के परिप्रेक्ष्य में यहां पर सुख आयु का अर्थ है कि जो बालक शारीरिक और मानसिक रोगों से रहित है, उसके शरीर में बल, वीर्य उचित प्रमाण में उपस्थित है, तथा उसकी इन्द्रियां अपने विषयों को ग्रहण करने में पूर्ण समर्थ है, उस बालक की आयु को सुख आयु कहा जाता है । इसके विपरीत जो बालक रोगों से ग्रस्त रहते हैं तथा उनके शरीर में बल, वीर्य का प्रमाण उचित रूप में नही रहता है उस बालक की आयु को दुःख आयु कहते हैं । आचार्य चरक ने स्वस्थ की परिभाषा देते हुए कहा है

सम मांस प्रमाणस्तु समसंहननो नरः ।
दृढ़ेन्द्रियो विकाराणां न बलेनाभिभूयते ॥

च०सू० 21/18

अर्थात् जिस व्यक्ति के शरीर में मांस का प्रमाण सम हो, शरीर संहनन सम प्रमाण में हो तथा इन्द्रियां दृढ हो अर्थात् विषयों को उचित रूप में ग्रहण करने में समर्थ हो वह मनुष्य रोगों के बल से भी अधिक कष्ट नहीं पाता है ।

उपरोक्त कथन के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि यदि बालक हमेशा स्वस्थ रहता है तो वह निश्चित ही सुख आयु को प्राप्त करेगा अर्थात् वह स्वस्थ बालक दीर्घ आयु प्राप्त करेगा ।

आचार्य कश्यप ने भी कहा है -

अन्नाभिलाषो भुक्तस्य परिपाकः सुखेन च ।
सृष्ट विण्मूत्रवातत्वं शरीरस्य च लाघवम् ॥
सुप्रसन्नेन्द्रियत्वं च सुखस्वप्नप्रबोधकम् ।
वलवर्णायुषां लाभः सौमननस्यं समाग्निता ॥

का.सं. खिल स्थान

अन्न के प्रति रुचि, ग्रहण किये हुए अन्न का सुख पूर्वक परिपाक हो जाना, सम्यक प्रकार से मल, मूत्र एवं वायु का प्रवर्तन होना, शरीर में लघुता तथा इन्द्रियों की प्रसन्नता एवं सुख पूर्वक सोना शारीरिक स्वास्थ्य के लक्षण हैं ।

इस प्रकार शरीर के स्वस्थ रहने के परिणाम स्वरूप उसमें बल, वर्ण और आयु की वृद्धि तो स्वतः होती ही रहती है । अतः स्वस्थ बालक में आयु का प्रमाण दीर्घ होगा अर्थात् वह बालक आयुष्मान होगा ।

बालकों में आयु के प्रमाण को ज्ञात करने के लिए उसके सम्पूर्ण शरीरावयवों एवं उनकी शारीरिक क्रियाओं की परीक्षा करनी चाहिए ।

आयुर्वेदमतानुसार आयुष्मान बालकों के लक्षणः-

तालिका सं.-1 विभिन्न आचार्यों द्वारा वर्णित आयुष्मान बालकों के लक्षण :-

क्र.सं.	शरीर अवयव	आयुष्मान बालक के लक्षण
1.	केश	- एक-एक केश अलग-अलग रोमछिद्रों से निकले हों तथा मृदु, अल्प, स्निग्ध एवं कृष्ण वर्ण के हों तो वे उत्तम माने जाते हैं । (च.शा. 8/51) - केशभूमि (बालों की जड़ें) स्निग्ध, लोहित निर्मल और व्रण रहित प्रशस्त होती है । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

		– स्त्रियों के केश बहुत अधिक बड़े और बहुत छोटे निन्दित माने गये हैं । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
2.	त्वक्	स्थिर तथा मोटी त्वचा प्रशस्त होती है । (च.शा. 8/51)
3.	ललाट	चौड़ा, दृढ़ एवं समसुविभक्त तथा उर्ध्वब्यञ्जन युक्त (उर्ध्वाकार रेखायें) ललाट उत्तम होता है । (च.शा. 8/51)
4.	शिर	स्वभाविक आकृति एवं शरीर के प्रमाण के अनुसार हो तो वह शिर प्रशस्त माना गया है । (च.शा. 8/51)
5.	कर्ण	दोनों कर्ण स्थूल, समतल पृष्ठ वाले, समान रूप से नीचे को बढ़े हुए, जिनमें कर्णगुहा का छिद्र बड़ा हो तो वह उत्तम होता है । (च.शा. 8/51)
6.	भ्रू	नीचे की ओर लटकी हुई, आपस में दोनों भौंहें मिली हुई न हो तो वे श्रेष्ठ होती हैं। (च.शा.8/51)
7.	नेत्र	दोनों नेत्र समान हों, दृष्टिमण्डल नेत्र में समभाव से स्थित हो, नेत्र में कृष्ण मण्डल, श्वेतमण्डल और दृष्टिमण्डल का विभाग स्पष्ट रूप से विभक्त हो, नेत्र तेज से युक्त हो तो वह श्रेष्ठ होता है । (च.शा. 8/51)
8.	नासिका	सरल, लम्बे-लम्बे श्वास-प्रश्वास लेने वाली, नासावंश सुन्दर, सम एवं सुविभक्त हो तथा नासावंश का अग्रभाग कुछ झुका हो तो वह नासिका श्रेष्ठ होती है ।(च.शा. 8/51)
9.	मुख	मुख बड़ा और सीधा हो तथा मुख में सुन्दरता के साथ दांत लगे हों तो वह उत्तम होता है । (च.शा. 8/51)
10.	जिह्वा	उचित आयाम-विस्तार वाली, श्लक्ष्ण, तन्वी तथा प्रकृति और वर्ण से युक्त जिह्वा श्रेष्ठ होती है । (च.शा. 8/51)
11.	तालु	चिकना, उचित रूप से मांसल एवं रक्तवर्ण युक्त तालु श्रेष्ठ होता है ।(च.शा.8/51)
12.	स्वर	महान, स्निग्ध (कर्कश न हो), प्रतिध्वनियुक्त स्वर उत्तम माना गया है। (च.शा.8/51)
13.	ओष्ठ	आयाम-विस्तार में उचित रूप से हो, मुख गुहा को पूर्ण रूप से आच्छादन करने वाला एवं रक्त वर्ण ओष्ठ श्रेष्ठ होता है । (च.शा. 8/51)
14.	ग्रीवा	गर्दन वृत्ताकार हो तथा अधिक लम्बी न हो वह श्रेष्ठ होता है । (च.शा. 8/51)
15.	उर	वक्ष विस्तृत एवं मांसपेशियों से सम्पन्न उत्तम होती है । (च.शा. 8/51)
16.	स्तन	वक्ष प्रदेश पर दूर-दूर स्थित स्तन श्रेष्ठ होते हैं । (च.शा. 8/51)
17.	उदर	ईषत उन्नत, अशिथिल (जो शिथिल-ढीला न हो) कोमल तथा बहुत बड़ा न हो, वह उदर प्रशस्त होता है । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
18.	नाभि	– दक्षिण पार्श्व से आवर्त (घेरा) बना हो, और उत्सङ्ग (किनारे का भाग उठा हो तथा मध्य में गहरा हो) तो वह नाभि उत्तम है । (च.शा. 8/51) – गहरी, दक्षिण की ओर घूमी हुई, गोल, उठे हुए किनारों वाली, लोम, शिरा तथा आवर्तों से रहित प्रशस्त मानी गयी है । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
19.	पार्श्व	– दोनों पार्श्व अंश भाग स्थूल, मांसल होकर क्रमशः पतले और स्थिर हो, वे श्रेष्ठ होते हैं । (च.शा. 8/51)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

		- गोल, मांसल, स्निग्ध तथा लोम और शिराओं से रहित प्रशस्त माने जाते हैं । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
20.	पृष्ठ देश	- मांसपेशियों से ढका श्रेष्ठ होता है । (च.शा. 8/51) - सम, ऊपर से विशाल, शिरा, लोम तथा आवर्तों से रहित तथा बीच भाग में निम्न पृष्ठ देश प्रशस्त होता है । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
21.	स्कन्ध	उन्नत स्कन्ध प्रशस्त होते हैं । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
22.	कक्ष	उन्नत, विशाल, मोटे तथा सुस्पष्ट प्रशस्त होते हैं । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
23.	बाहु	- दोनों बाहु गोल, मांस से परिपूर्ण एवं लम्बे हों तो वे श्रेष्ठ होते हैं । (च.शा. 8/51) - उपचित (ऊपर से मोटी तथा नीचे पतली हो) तथा घुटनों (जानु) को स्पर्श करने वाले बाहु प्रशस्त होते हैं । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
24.	कटि प्रदेश	- छाती की अपेक्षा कटि भाग तृतीयांश कम हो, समतल हो, उचित रूप से मांसपेशियों से आच्छादित हो तो वह श्रेष्ठ होता है । (च.शा. 8/51) - जघन छाती के समान परिमाण वाला प्रशस्त होता है । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
25.	स्फिच् (नितम्ब)	- गोल, स्थिर, मांसपेशियों से भरे हुए, न ज्यादा ऊँचे, न ज्यादा धंसे हुए श्रेष्ठ होते हैं। (च.शा. 8/51) - गोल, जो लम्बे न हो, व्रण एवं लोम रहित तथा अविषम (जो विषम न हो) श्रेष्ठ होते हैं । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
26.	ऊरु (जांघ)	- दोनों ऊरुओं का क्रमशः गोल और मांसल होना श्रेष्ठ होता है । (च.शा. 8/51) - मांस से युक्त, गहरी शिराओं वाली तथा चिकनी श्रेष्ठ होती है ।(का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
27.	जानु	मजबूत जानु प्रशस्त होते हैं । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
28.	जंघा	- हरिण के पैर के समान, न मांसपेशियों से अधिक आच्छादित हो, न मांसपेशियों से रहित हो जिससे कृश प्रतीत होता हो तथा जिसमें शिरा, अस्थि और संधियां पुष्ट मांस पेशियों से आच्छादित होने के कारण छिपी हुई हो, वह जंघा उत्तम माना गया है । (च.शा.8/51) - कसा हुआ तथा शिरा और लोम से रहित जंघा प्रशस्त माना जाता है । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
29.	प्रजंघा	पतला प्रजंघा प्रशस्त माना गया है । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
30.	गुल्फ	न मांसपेशियों से अधिक आच्छादित हो, जिससे स्थूल प्रतीत होता हो, न कम मांसपेशियों से आच्छादित हो जिससे कृश प्रतीत होता हो, वह गुल्फ श्रेष्ठ होता है ।(च.शा.8/51)
31.	उत्तर पाद (पाद का ऊपरिभाग)	उन्नत, शिरा एवं लोम से रहित उत्तर पाद श्रेष्ठ होता है । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
32.	पार्ष्णि	खुरदरी, परुष (कठोर), पतली, विषम, फटी हुई एड़ी अप्रशस्त मानी गयी है । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
33.	नख	- स्थिर, गोलाकार, चिकने, ताम्रवर्ण के लाल, ऊंचे उठे हुए और कछुए की पीठ की तरह चढ़ाव-उतार से युक्त नख प्रशस्त होते हैं । (च.शा. 8/51) - स्निग्ध, तनु, पतले और ताम्र वर्ण के नख प्रशस्त होते हैं । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

34.	अंगुलियाँ	- गोल, मांस से परिपूर्ण तथा लम्बी अंगुलियां प्रशस्त मानी गयी हैं । (च.शा. 8/51) - अंगुलियां, नाखून, पैर आदि लम्बे हों तो आयु लम्बी होती है ।(का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
35.	मणिबन्ध	पुरुषों की मोटी एवं स्त्रियों की पतली मणिबन्ध तथा तीनों यवपंक्तियों से अविच्छिन्न मणिबन्ध श्रेष्ठ मानी गयी है । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
36.	वृषण	मोटे वृषण प्रशस्त होते हैं । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
37.	प्रजनन (शेप)	कोमल, दीर्घ, हर्षयुक्त, ताम्र वर्ण की तथा गोल मणि (Glans) युक्त प्रजनन प्रशस्त माना गया है । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)
38.	योनि	स्थूल और व्यञ्जनयुक्त योनि प्रशस्त होती है । (का.सं.सू. लक्षणाध्याय)

आचार्योक्त वर्णित उपरोक्त लक्षणों का विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि सभी लक्षण वैज्ञानिक मापदण्डों के आधार पर ही निर्दिष्ट किये गये हैं तथा प्रत्येक लक्षण स्वस्थ एवं रोग रहित बालक में होना आवश्यक है । इन लक्षणों के उपस्थित रहने पर ही बालक आयुष्मान हो सकता है ।

केश के सम्बन्ध में आचार्यों ने कहा है केश मृदु, केशभूमि (बालों की जड़ें) स्निग्ध, व्रण रहित एवं कृष्ण वर्ण (लोहित) के केश प्रशस्त होते हैं । व्रण रहित केश भूमि का अर्थ है शिर पर किसी भी प्रकार का व्रण या विद्रधि नही होनी चाहिए ।

बालकों के कुपोषण जन्य विकारों जैसे- Kwashiorkor में प्रोटीन की कमी से बाल भूरे वर्ण के तथा रूक्ष हो जाते हैं । बालों का पीला तथा भूरा होना Flag Sign कहलाता है । इसलिए आचार्यों ने कृष्ण वर्ण के केश को प्रशस्त बताया है ।

त्वचा के बारे में आचार्यों ने कहा है त्वचा मोटी और स्थिर होनी चाहिए । मोटी त्वचा का अर्थ है त्वचा के सभी स्तरों का पूर्ण रूप से होना । ऐसी त्वचा में रक्त संवहन पूर्ण रूप में होता है, निश्चित रूप से ऐसी त्वचा निरोग तथा स्थिर रहेगी ।

शिर स्वभाविक आकृति एवं सम प्रमाण में होना प्रशस्त माना गया है । बालकों में जलशीर्षक (Hydrocephalus) होने पर उनके शिर की आकृति, सामान्य से अधिक हो जाती है । Microcephaly की स्थिति में शिर की परिधि सामान्य से कम हो जाती है । इसका मुख्य कारण है मस्तिष्क का पूर्ण विकास न होना अथवा समय से पहले ही Skull Suture का बन्द हो जाना । इसलिए शिर की स्वाभाविक आकृति को आचार्यो ने उत्तम माना है । जन्म के समय शिर की परिधि 32-35 से.मी. होनी चाहिये ।

कर्ण स्थूल, समतल पृष्ठ वाले तथा समान रूप से नीचे को बढ़े हुए होने चाहिए । कर्ण का सामान्य आकृति से छोटा होना कुछ विशेष व्याधियों का द्योतक है जैसे- Down Syndrome, Turner's Syndrome में Low Set Ear पाये जाते हैं ।

दोनों नेत्रों की आकृति समान हो वह नेत्र उत्तम होता है । कुछ व्याधियों में नेत्रगोलक की आकृति असामान्य हो जाती है जैसे - Infantile Glaucoma, Exophthalmos, Ptosis, आदि । अतः नेत्रों की आकृति का समान होना नेत्रों की आरोग्यता का लक्षण है ।

नासिका लम्बे-लम्बे श्वास-प्रश्वास लेने वाली, नासावंश (Nasal Septum) सुन्दर, सम और सुविभक्त होना चाहिए । नासावंश के विच्युत (Deviated) होने पर श्वास-प्रश्वास की क्रिया में अवरोध उत्पन्न हो सकता है, जिसके कारण बालक के श्वसन प्रक्रिया में बाधा आ सकती है । अतः नासावंश का सम, सुविभक्त होना प्रशस्त माना गया है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

जिह्वा अपने सामान्य आकृति में हो तथा अपने प्रकृति एवं वर्ण से युक्त तो वह प्रशस्त होती है । कुछ व्याधियों में जिह्वा अपने सामान्य आकृति से बड़ी होती है जैसे Cretinism, Glycogen Storage Disease, Hurler's Syndrome आदि ।

जिह्वा सामान्यत: रक्त वर्ण की होनी चाहिए । रक्ताल्पता की स्थिति में जिह्वा का वर्ण श्वेत हो जाता है । इसी प्रकार श्वासावरोध जन्य विकारों में तथा शरीर में विषाक्त द्रव्यों के प्रभाव से जिह्वा का वर्ण श्याव (नीला) हो जाता है ।

अत: आचार्यों ने सामान्यत: रक्त वर्ण युक्त जिह्वा को उत्तम बताया है ।

तालु चिकना, रक्त वर्ण युक्त, उचित रूप से मांसल होना चाहिए । विभिन्न तालुगत रोगों जैसे - गलशुण्डिका, तुण्डीकेरी (Tonsillitis), अधुष (Palatitis), तालुकच्छप (Adenoma of Palate), अर्बुद (Tumour of the Palate) आदि रोगों में तालु में विकृति आ जाने से तालु का चिकना सतह विकृत हो जाता है । इसी प्रकार तालु विकृति (खण्ड तालु Cleft Palate) भी एक सहज व्याधि है जिसमें संरचनात्मक विकृति होती है । अत: तालु चिकना, रक्त वर्ण युक्त प्रशस्त होता है ।

आचार्यों ने रक्त वर्ण के ओष्ठ को उत्तम माना है । शरीर में रक्त की उचित मात्रा के रहने पर ही ओष्ठ रक्त वर्ण का होता है । श्वासावरोध जन्य विकृति तथा शरीर में विषाक्त द्रव्यों के प्रभाव से ओष्ठ का वर्ण श्याव (नीला) हो जाता है, जो कि शरीर के व्याधिग्रस्त होने का द्योतक है । इसलिए आचार्यों ने रक्त वर्ण ओष्ठ को प्रशस्त माना है ।

वृत्राकार गर्दन प्रशस्त होता है । गलगण्ड (घेंघा) आदि रोगों में ग्रीवा की वृत्ताकार संरचना स्थापित नहीं रह पाती है । अत: आचार्यों ने वृत्ताकार ग्रीवा: को ही प्रशस्त माना है । उर (वक्ष) विस्तृत एवं मांस पेशियों से आच्छादित होनी चाहिए । वक्ष की सामान्य संरचना में विकृति होना वक्ष के व्याधिग्रस्त होने का लक्षण है । जैसे - Barrel Shaped Chest, Pigeon Shaped, Funnel Shaped, Kyphosis, Costochondral आदि । अत: वक्ष का विस्तृत एवं मांस से आच्छादित होना आरोग्यता का लक्षण है ।

कुक्षि (उदर) ईषत उन्नत, प्रशस्त होती है । उदर के सामान्य से अधिक उन्नत होने पर व्याधि की सम्भावना हो सकती है - जैसे जलोदर तथा अधिक कृश तथा धँसी हुई कुक्षि शारीरिक कृशता की द्योतक है । अत: कुक्षि का ईषत उन्नत होता प्रशस्त है ।

बाहु, पाद एवं अंगुलियां, गोल, मांस से परिपूर्ण एवं लम्बे हो वे श्रेष्ठ होते हैं । शरीर के कुपोषण जन्य विकारों से ग्रस्त होने के कारण बाहु, पाद एवं अंगुलियों में मांस क्षय की स्थिति आ जाती है जिसके कारण बाहु, पाद एवं अंगुलियां कृश हो जाती हैं अर्थात् अस्थि रूप में दिखाई पड़ती है । अत: बाहु, पाद और अंगुलियों का मांस से परिपूर्ण होना उत्तम लक्षण है ।

आचार्यों ने ताम्र वर्ण के नख को प्रशस्त माना है । शरीर में रक्त की उचित मात्रा रहने पर नख ताम्र वर्ण होता है तथा रक्ताल्पता की स्थिति में नख का वर्ण श्वेत हो जाता है । अत: आचार्यों ने ताम्र वर्ण नख को प्रशस्त बताया है ।

उपरोक्त लक्षणों के अतिरिक्त कुछ विशेष क्रियायें जैसे - वात, मूत्र, पुरीष का त्याग, शयन, जागना, परिधान करना, मुस्कराना, रोना, स्तन से दूध पीना आदि क्रियायें जिस बालक में स्वाभाविक अवस्था में होती हैं वह बालक उत्तम होता है । (च.शा. 8/51)

इसी प्रकार आचार्य कश्यप ने बताया है - मत्त हाथी, बैल, सिंह, चीते, हंस की गतियों की अधिपति (स्वामी) होते हैं, तथा मन्द गति वाले प्रशस्त होते हैं । चंचल गति वाले चंचलतापूर्वक सुख और दु:ख को प्राप्त करते हैं । बालकों से कुपित होना, रोना, शयन, जागरण,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रोध, हर्ष, विसर्ग (मल-मूत्रादि का त्याग), आदान (अन्न जल आदि का ग्रहण), पाचन, स्थिरता, गम्भीरता आदि लक्षण युक्तियुक्त एवं गुण वाले प्रशस्त माने गये हैं।

(का.सं.सू. लक्षणाध्याय)

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. काश्यप संहिता : विद्योतिनी हिन्दी व्याख्या, पं० हेमराज शर्मा, चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, सन् 2000
2. कौमार भृत्य (अभिनव बालरोग चिकित्सा) : डॉ० देवेन्द्र नाथ मिश्र चौखम्भा संस्कृत प्रतिष्ठान, वाराणसी, सन् 2000
3. चरक संहिता : विद्योतिनी हिन्दी व्याख्या पं० काशीनाथ शास्त्री चौखम्भा भारती अकादमी, वाराणसी, सन् 1993
4. Child Health Care in Ayurveda : Dr. A. Kumar, Sri Satguru Publication, Indian Books Centre Delhi 1995.
5. Pediatrics Clinical Methods : Meharban Singh, Sagar Publication 72, Jan Path, Ved Mansion, New Delhi - 2001
6. The Short Text Book of Pediatrics : Suray Gupte, JAYPEE BROTHERS, Medical Publisher (P)Ltd., New Delhi - 2001

शुद्ध स्वर्ण भस्म से निर्मित

बैद्यनाथ

रुमार्थो गोल्ड

पुराने जोड़ों के दर्द की प्रभावी दवा

रुमार्थो कैप्सूल में स्वर्ण भस्म का विशेष मिश्रण होने से यह गठिया वात एवं जीर्ण जोड़ों के दर्द पर व मांसपेशियों के रोगों में अत्यंत प्रभावी औषधि है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाल-मनोविकार-उत्पत्ति, स्वरूप एवं निदान

डा० अयोध्या प्रसाद अचल, एम०ए० (द्वय), पी.एच.डी., आयुर्वेद बृहस्पति

बाल मनोविकारों से हमारा तात्पर्य बालक में उत्पन्न होने वाले मानसिक या संवेगात्मक विकारों से है। ये उसके मानसिक व्यवहार, चरित्र तथा व्यक्तित्व में विसंगतियों अथवा विकारों के रूप में प्रकट होते हैं। बालक के विकास-क्रम में ये किसी भी अवस्था में प्रतिबिम्बित हो सकते हैं।

बालक का विकास नौ महीने तक माता के गर्भ में होता है। गर्भ में ही चेतना जागती है। मन प्रव्यक्त होता है। गर्भ से बाहर आने के बाद, हालांकि परिवेश बदल जाता है, पर विकास का क्रम यथावत जारी रहता है। यह विकास सामान्यतया 18 साल की उम्र के लगभग परिपक्वता को प्राप्त होता है।

विकास के क्रम में शारीरिक और मानसिक विकास साथ-साथ चलता है। जैसे-जैसे बालक का शारीरिक विकास होता जाता है वैसे-वैसे उसका मानसिक या बौद्धिक विकास भी होता जाता है। 18 से 21 साल के बीच बौद्धिक विकास भी परिपक्वता की चरम सीमा पर पहुँच जाता है। उसके बाद अनुभव बढ़ता है, ज्ञान बढ़ता है, उपलब्धियां बढ़ती हैं पर बुद्धि स्थिर रहती है।

किसी-किसी बालक में शारीरिक विकास तो सामान्यतया होता जाता है पर मानसिक विकास किसी अवस्था विशेष तक पहुँचकर अवरुद्ध हो जाता है। ऐसा बालक शरीर से बढ़ता जायेगा पर बुद्धि जहाँ पर अवरुद्ध हो गई है वहीं तक स्थिर रह जाएगी। ऐसे बालक को मन्दबुद्धि (मेन्टली डेफिशियन्ट), बालक कहते हैं। बौद्धिक विकास किस उम्र में आकर अवरूद्ध हुआ है, इसके हिसाब से मानसिक मन्दन की चार प्रमुख कोटियां मानी गई हैं - जड़, मूढ़, क्षीणबुद्धि और मन्दबुद्धि। इनमें शून्य से आरम्भ होकर क्रमशः बुद्धि की मात्रा बढ़ती जाती है। ये अवस्थाएं अब भी सामान्यतया लाइलाज मानी जाती है। जड़ प्रायः बचते ही नहीं। अन्तिम तीन के सम्बन्ध में यही सम्भव है कि उन्हें उनके बौद्धिक स्तर के अनुरूप ही शिक्षित एवं छोटे-मोटे कामों में प्रशिक्षित किया जाए ताकि वे किसी प्रकार अपना जीविकोपार्जन कर सकें।

बालक का विकास वंशानुक्रम (हेरिडिटी) और परिवेश (एन्वारोमेन्ट) दोनों से प्रभावित होता है। वंशानुक्रम से प्राप्त विशेषताएं-क्षमताएं अनुकूल वातावरण को पाकर विकसित होती हैं, पनपती हैं। सही मार्ग पर आगे बढ़ती हैं। प्रतिकूल वातावरण उनके विकास को बाधित करता है; विकास में अव्यवस्थाएं एवं असमान्यताएं, विसंगतियां उत्पन्न करता है। प्रतिकूल वातावरण उनमें भी प्रौढ़ों के समान ही मानसिक विकृतियों को जन्म देता है। 20 वीं शती के उत्तरार्ध में बाल मन की गहराइयों में जितना झांकने की कोशिश की गई है उतनी इससे पहले शायद कभी नहीं की गई थी। इसी कोशिश ने बालमनोविकार विज्ञान (चाइल्ड-साइकियेट्री) के प्रत्यय को जन्म दिया है। इसके अन्तर्गत विशेष रूप से बालकों के मानसिक रोगों के स्वरूप, निदान एवं उपचार के सम्बन्ध में खोज की जाती है।

व्यक्ति के समस्त शीलगुणों-अर्जित संस्कारों का निर्माण, चाहे वे सामान्य हों, या असामान्य, बाल्यावस्था में ही हो जाता है। उनकी जड़ें बाल्यावस्था के विकास-क्रम में ही जम जाती हैं। बाद में वे परिस्थितियों के अनुरूप अनेक रूपों में व्यक्त होते हैं, प्रकट होते हैं। मानसिक रोगियों के अध्ययन के क्रम में उनकी अधिकांश विकृतियों की जड़ें उनके बाल्यावस्था के अनुभवों में ही पाई जाती हैं। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक फ्रायड् के अनुसार व्यक्ति के समस्त शीलगुणों का निर्माण उसकी बाल्यावस्था में ही मनोलैंगिक विकास (साइकोसेक्सुअल डेवलेप्मेन्ट) के क्रम में ही हो जाता है।

प्रौढ़ों के समान बालक अपने रोगों के बारे में ठीक से बतला नहीं सकते। चिकित्सक को उनके हाव-भाव, व्यवहार आदि को देखकर या उनके अभिभावकों से पूछकर ही उनके रोगों का पता लगाना पड़ता है।

आनन्दकुंज, सी-30, गोविन्दपुरी, मोदीनगर - 201201

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालक के मानसिक रोगों के निदान में यह कठिनाई और भी विकट रूप में सामने आती है । एक तो, उनमें सभी रोग-लक्षण प्रौढ़ों के समान समग्र रूप में व्यक्त नहीं होते, दूसरे, उनमें हिस्टीरिया के रोगी के समान अधिकांश मानसिक लक्षण शारीरिक लक्षणों का रूप धारण कर अपरोक्ष रूप में प्रकट होते हैं ।

बालकों में पाए जानेवाले मानसिक रोग लक्षण :- बालकों में सामान्यतया पाए जानेवाले मानसिक रोग लक्षणों को प्राय: निम्न वर्गों में बाँटा जाता है ।

(1) **व्यक्तित्व सम्बन्धी विकार या कठिनाइयाँ :-** यथाभीरुता, कायरता (बुजदिली), दुराग्रह (जिद), शर्मीलापन, चिड़चिड़ापन, रोना-मचलना आदि ।

(2) **व्यवहारगत विकृतियां :-**

(क) **त्यागन क्रिया से सम्बन्धित विकृतियां :-** यथा बिस्तर पर पेशाब करना, मलावरोध, गलत जगहों तथा गलत समय पर मल का त्याग करना आदि ।

(ख) **भोजन से सम्बन्धित अस्तव्यस्तताएँ :-** यथा अरुचि, क्षुधानाश, अतिभोजन, वमन, विशेष खाद्य अथवा पेय पदार्थों के लिए हठ आदि ।

(ग) **सोने से सम्बन्धित अस्तव्यस्तताएँ :-** यथा अनिद्रा, सोते हुए आतंकित होना, निद्रा-भ्रमण (स्लीप-वाकिंग) आदि ।

(घ) **वाणी सम्बन्धित दोष :-** यथा तुतलाना, हकलाना, कुछ अक्षरों को न बोल पाना, उनके स्थान पर दूसरा अक्षर बोलना - जैसे 'स' के स्थान पर 'श'। अभिव्यक्ति करने में असमर्थता आदि ।

(3) **अस्वास्थ्यकर या असमाजिक प्रतिक्रियाएँ :-** यथा आक्रामकता, चोरी, झूठ बोलना, तोड़-फोड़ करना, क्रूरता, यौन-दुर्व्यवहार, स्कूल से भागना आदि ।

(4) **अस्वास्थ्यकर संवेगात्मक प्रतिक्रियाएं** - यथा ईर्ष्या, द्वेष, प्रेम, भय, क्रोध की अति एवं उनके विकृत रूपों में उपस्थिति ।

(5) **परितोषी प्रतिक्रियाएं** - अंगूठा, उंगली, पेन्सिल, कपड़ा आदि चूसना, हस्तमैथुन, हवाई किले बनाना आदि ।

(6) **तनाव सूचक आदतें** - दांतों से नाखून काटना, पेशी संकुचन, मुख संकुचन, अंग चालना (अंगों का फड़कना) आदि ।

(7) **मनः शारीरिक विकृतियां** - बार-बार होने वाला उदरशूल, सिरशूल, ज्वर भाव, श्वास कष्ट आदि ।

(8) **गम्भीर मानसिक रोग** - यथा बालकों को होनेवाली मिर्गी या बालापस्मार (एपिलेप्सी), उन्माद (स्कीजोफ्रीनियां), उत्साह-विषाद मनोविकृति (मेनिक-डीप्रेसिव साइकोसिस) आदि ।

बालकों में मानसिक रोगों के कारण

बालकों में पाए जाने वाले मानसिक रोगों या रोग लक्षणों के कारण निम्न हो सकते हैं -

1. **आनुवांशिक** - यथा जीन का दोषपूर्ण होना ।
2. **अज्ञात** - योनि-पथ के अति संकरा होने के कारण प्रसव के समय बालक के मस्तिष्क पर पड़ा दबाव, यान्त्रिक प्रसव में उपकरणों से मस्तिष्क को पहुंची क्षति, ऑक्सीजन का अभाव ।
3. **अन्तःस्रावी असंतुलन (एन्डोक्राइन इम्बैलेन्स):-** बालक के विकास को प्रभावित करने वाली अन्तःस्रावी ग्रन्थिओं (एन्डोक्राइन ग्लैंड्स) की न्यून या अतिक्रियाशीलता या उनके स्रावों में असंतुलन ।
4. **कुपोषण** - गर्भावस्था में माता के भोजन में तथा जन्मोत्तर बालक के भोजन में पर्याप्त पोषक तत्वों-विशेष रूप से केन्द्रीय तंत्रिका-तंत्र का पोषण करने वाले पदार्थों का अभाव ।
5. **प्यार, सुरक्षा एवं सम्मान का अभाव :-** यथा माता-पिता के पारस्परिक सम्बन्धों के तनावपूर्ण होने, माता पिता या दोनों न होने; अथवा सौतेले मां-बाप होने के कारण बालक को आवश्यक प्यार एवं सुरक्षा न मिलना, बात-बात में झिड़के जाना, अपमानित किया जाना; आदि। अर्थाभाव में बाल-मजदूर या घरेलू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नौकर होने की विवशता । मालिकों का क्रूर व्यवहार ।

6. **अभिभावकों का अप्रत्याशित व्यवहार :-** अल्प सुरक्षा, अति सुरक्षा, बालक की सामर्थ्य एवं क्षमता से अधिक उससे आशा करना, कठोर अनुशासन, क्रूर व्यवहार आदि ।
7. **सिनेमा, टी०वी०, अश्लील एवं विकृत साहित्य:-** इसके द्वारा अपसंस्कृति एवं गलत आदर्शों को प्रस्तुत किया जाना । बाजार में नित्य नई आने वाली भोग सामग्रियों के प्रति निर्बाध अवांछित इच्छाएं जगाना ।
8. **सक्रियता का अभाव :-** घर एवं शिक्षण संस्थाओं में दिन पर दिन खुले मैदानों में खेल, व्यायाम, सांस्कृतिक गतिविधियों आदि का सतत् घटता स्तर; काम के प्रति सम्मान के दृष्टिकोण का अभाव आदि ।
9. **सतत् बढ़ता प्रदूषण एवं तनावग्रस्त जीवन शैली :-** कोमल प्रकृति का होने के कारण जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, शब्द प्रदूषण, बिजली के सामानों से निकलने वाला विकिरण आदि बालकों को अधिक प्रभावित करते हैं । आज की जीवनशैली में आये परिवर्तनों ने बालकों से खेलने-खाने की उम्र छीन ली है । 2½-3 साल की अवस्था में उनको जबरदस्ती स्कूलों के लिए तैयार किया जाना, स्कूलों में अप्रत्याशित डांट फटकार सुनना, औकात से बाहर किताबों का बोझ ढोना आदि बालकों में तनाव का कारण बनते हैं ।

आयुर्वेद की प्राचीन संहिताओं में अपूर्ण रूप से प्राप्त मात्र काश्यप संहिता ही एक ऐसा ग्रन्थ है जिसमें बालक के मनोविकारों का उल्लेख किया गया है । इसके वेदना अध्याय में मानस रोगों के अन्तर्गत मात्र अपस्मार और उन्माद का नामोल्लेख किया गया है । ग्रहों के विवरण में, विशेष रूप से स्कन्द ग्रह से पीड़ित, बालक के लक्षणों में विस्तृत विवरण के लिए देखें लेखक की "कौमारभृत्य" नामक पुस्तक का मनोविकृति शीर्षक का वाँ अध्याय ।

बैद्यनाथ

मधुमेहारि

योग दाने

मधुमेह (डायबिटीज) व

उससे उत्पन्न विकारों में लाभदायक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वरदान वनस्पति है हरड़

डॉ० विनोद बिहारी श्रीवास्तव

वनस्पति जगत की एक दिव्य औषधि हरड़ के बारे में विशिष्ट जानकारी से आपको परिचित कराना हमारा उद्देश्य है। ब्रह्माजी के मानस पुत्र दक्ष प्रजापति ने एक बार देवताओं के चिकित्सक अश्विनी कुमारों से प्रश्न किया कि हरड़ जैसी दिव्य औषधि पृथ्वी पर कहां से उत्पन्न हुई है और इसकी कितनी जातियां हैं, उनके नाम एवं गुण क्या हैं। वह कौन-कौन से रोगों को नष्ट करती है, आप हमें विस्तार से बताएं। तब अश्विनी कुमारों ने बताया कि जब देवराज इन्द्र ने अमृत पान किया था तब उसमें से एक बूंद पृथ्वी पर गिर पड़ी, उससे सात प्रकार की हरड़ उत्पन्न हुई। उनके नाम इस प्रकार हैं -

हरीतक्यभया पथ्या कायस्था पूतनाऽमृता हेमवत्यव्यथा चापि चेतकी श्रेयसी शिवा वयस्था विजया चापि जीवन्ती रोहिणीत च ।

अर्थात्- हरीतिकी, अभया, पथ्या, कायस्था, पूतना, अमृता, हेमवती, अव्यथा, चेतकी, श्रेयसी, शिवा, वयस्था, विजया, जीवन्ती और रोहिणी - ये हरड़ के संस्कृत नाम हैं। इसे हिन्दी में हरड़, हर्ड, हर्र । बंगाली में हरीतकी । मराठी में हिरड़ा, हिरड़े । कन्नड़ में अणीले । गुजराती में हरड़ा। तमिल में कडुकाई । फारसी में हलैले जर्द, अंग्रेजी में ब्लाक मरोवोलम चेवुलिक । लेटिन में टरमिनेलिया चेबुला आदि कहा जाता है । मुख्य रूप से हरड़ की ये सात जातियां होती हैं - 1. विजया, 2. रोहिणी, 3. पूतना, 4. अमृता, 5. अभया, 6. जीवन्ती, 7. चेतकी ।

आकृति पहचान - हरड़ के पेड़ बड़े होते हैं । इसकी गणना साखों-वृक्षों में होती है । इसकी लकड़ी बहुत पक्की होती है, जो इमारत के काम आती है । इसके पत्ते बड़े-बड़े, अडूसे के पत्तों के समान दो-दो पत्ते एक साथ शाखा में इधर-उधर लगते हैं । पत्ते कुछ-कुछ ललाई लिए, रूक्ष होते हैं । फूल छोटे-छोटे, पीले रंग के तथा फल बिहारी नींबू के समान दोनों ओर से लम्बे नोकदार और बीच में गोल होते हैं । जब फल सुखता है तो ऊपर से खुरदरा-सा दिखता है । उसमें पांच रेखाएं सी विदित होती हैं। लोग इन्हें फोड़कर उसका बक्कल काम में लाते हैं। रंजक के रूप में अथवा औषधि के रूप में इसका उपयोग किया जाता है । इस प्रकार से यह एक दिव्य औषधि के रूप में प्रचलित है । जो हरड़ तूम्बी के समान गोल होती है वह विजया हरड़ है । जो साधारण गोल होती है वह रोहिणी कहलाती है । जो बड़ी गुठली वाली तथा छोटी हो, पूतना हरड़ है । जो अधिक गूदे वाली होती है वह अमृता हरड़ है । जो पांच रेखायुक्त हो वह अभया हरड़ होती है । जो सवर्ण के समान रंग वाली हो उसे जीवन्ती कहते हैं और जो तीन रेखा वाली होती है उसे चेतकी हरड़ कहते हैं ।

उत्पत्ति- विजया हरड़ विंध्याचल पर्वत प्रदेश में, चेतकी हरड़ हिमालय के क्षेत्र में, पूतना हरड़ सिंधु क्षेत्र में, रोहिणी हरड़ जंगली क्षेत्र में, अमृता और अभया हरड़ चम्पारण देश में तथा जीवन्ती हरड़ सौराष्ट्र देश में उत्पन्न होती है । हरड़ के लाभ -

हरीतिकी मनुष्याणां मातेव हितकारिणी,
कदाचित्कुप्यते माता नोदरस्था हरीतिकी

अर्थात् - हरड़ मनुष्यों को माता के समान हित करने वाली है । माता तो कभी कुपित हो सकती है, किन्तु उदर में स्थित अर्थात खायी हुई हरड़ कभी भी हानिकारक नहीं होती, सदैव रक्षा ही करती है । इसकी औषधीय उपयोगिताएं इस प्रकार हैं - विजया हरड़ सम्पूर्ण रोगों के लिये उपयोगी होती है । पूतना हरड़ लेप में उपयोगी है । अमृता हरड़ रेचन कार्य जुलाब में उत्पन्न होती है । अभया हरड़ नेत्रों को हितकारी होती है । जीवन्ती हरड़ बलकारी, रसायन एवं सब रोगों में गुणकारी है तथा चेतकी हरड़ तीव्र रेचक होती है ।

गुण एवं अनुपान भेद - चबाकर खाने से हरड़ अग्नि को बढ़ाती है । पीसकर खाने से हरड़ मल को शुद्ध करती है अर्थात रेचक होती है । जल में पकायी हरड़ दस्त बंद करती है । भुनी हरड़ त्रिदोष नाशक होती है । भोजन के साथ हरड़ खाने से बुद्धि, बल प्रदान करती है तथा समस्त इन्द्रियों को प्रसन्न करती है । भोजन के पश्चात हरड़ खाने से तीन दोषों का शमन तुरन्त होता है । नमक के साथ हरड़ खाने से कफ का नाश, चीनी के साथ खाने से पिबा का शमन, घी के साथ सेवन से वायु का नाश होता है । इसी प्रकार ऋतुओं के अनुसार सेवन से भी अलग-अलग गुण तथा लाभ होते हैं, जैसे - वर्षा ऋतु में सेंधा नमक के साथ, शरद ऋतु में चीनी अथवा बूरे के साथ, हेमंत ऋतु में सोंठ के चूर्ण के साथ, शिशिर ऋतु में छोटी पीपल चूर्ण के साथ, बसंत ऋतु में मधु के साथ और ग्रीष्म ऋतु में गुड़ के साथ हरड़ का सेवन करना चाहिये ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेब खाइये - स्वस्थ रहिये

कैलाश जैन, एडवोकेट

सेब, अमरूद तथा नाशपाती तीनों एक ही प्रजाति के फल हैं, लेकिन सेब अपनी रासायनिक संरचना के आधार पर अन्य फलों के मुकाबले अधिक उपयोगी है । प्रति सौ ग्राम सेब से निम्नांकि अनुपात में शरीर के लिए आवश्यक तत्व उपलब्ध होते हैं: कार्बोज 13.4 ग्राम, प्रोटीन 0.2 ग्राम, कैल्शियम 10 मिली ग्राम, आइरन 1 मिली ग्राम, विटामीन सी 4 मिली ग्राम । इसके अतिरिक्त सेब में प्राकृतिक लवण एन्जाइम, वसा आदि आवश्यक तत्व भी पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं ।

सेब संसार में लगभग सर्वत्र सुलभ है । भारत में क्रमशः कश्मीरी तथा काबुली प्रजातियों के सेब पाए जाते हैं, जबकि काबुली सेब में मामूली खट्टापन होता है । वैसे तो यह फल वर्ष भर उपलब्ध रहता है, लेकिन अगस्त से नवम्बर माह के बीच इनकी बहुतायत रहती है ।

सेब न केवल एक स्वादिष्ट फल है, बल्कि यह अपने औषधीय गुण-धर्म के कारण भी अत्यन्त उपयोगी फलों की श्रेणी में माना जाता है । एक अंग्रेजी कहावत के अनुसार रोजाना एक सेब खाना - डाक्टरों से दूर रहने का अचूक नुस्खा है ।

जिगर की बीमारियों में सेब एक रामबाण औषधि है । इसके रोगियों को नियमित रूप से सेब के रस का सेवन करना चाहिए । पथरी तथा पेट की अन्य बीमारियों में सेब का सेवन आश्चर्यजनक रूप से राहत पहुंचाता है । पेचिश व दस्त होने पर सेब के रस में अनार का रस मिलाकर देना लाभप्रद रहता है । बहुमूत्र रोग, अनिद्रा, गले के घाव, सिरदर्द, चिड़चिड़ापन, स्मरण शक्ति के अभाव, ज्वर, जलन, नेत्र रोग आदि पचासों रोगों में सेब का उपयोग किया जाता है ।

सेब के नियमित सेवन से शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि होती है । इसमें पाए जाने वाले पौष्टिक तत्व यथा फास्फोरस, विटामिन, सोडियम, पोटेशियम, अमीनो अम्ल आदि फल तथा औषधि के रूप में इसकी महत्ता को और अधिक बढ़ाते हैं ।

सेब की तासीर शीतल, सुपाच्य एवं तृप्ति दायक है । नवीन रक्त के निर्माण में भी यह सहायक होता है । सेब में पाए जाने वाले गेलिक एवं टार्टरिक अम्ल इसकी सुपाच्यता को सुनिश्चित करते हैं । सेब को भोजन से पूर्व सेवन करना उचित रहता है । कब्जियत से बचने के लिए इसका छिलका उतारकर खाना चाहिए ।

औषधि के अतिरिक्त फल के रूप में भी सेब के विविध उपयोग हैं । सेब के अचार, मुरब्बा, चटनी, जैम आदि कई व्यंजन बनाए जाते हैं, जो स्वादिष्ट होने के साथ पौष्टिक भी होते हैं । वैसे सेब के व्यंजन बनाने की प्रक्रिया में उसके कई पोषक तत्व नष्ट हो जाते हैं, इसलिए बेहतर तो यही होगा कि सेब को उसके प्राकृतिक रूप में ही खाया जाए । सेब अच्छा पका हुआ तथा मीठा होना चाहिए । अधिक रस-युक्त सेब, उत्तम माना जाता है ।

सेब भारत के उत्तरी क्षेत्रों, काश्मीर, हिमाचल प्रदेश, असम, मेघालय, मिजोरम आदि राज्यों में काफी मात्रा में उगाया जाता है । कश्मीर में तो सेब की खेती वहां की अर्थ व्यवस्था का प्रमुख आधार है । व्यावसायिक दृष्टि से हमारे देश को सेब के निर्यात से महत्वपूर्ण विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है ।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Harid war

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसी : औषधः एक गुण अनेक

1. डा० गोविन्द गुप्ता, एम.डी. (आयु.) पीएच.डी. (आयु.)
2. डा० (श्रीमती) कुसुम गुप्ता, बी.ए.एम.एस.

तुलसी की महिमा इस बात से सिद्ध होती है कि भारतवर्ष में यह घर-घर में देवी की तरह पूजी जाती है। यह सर्वत्र सुलभ है एवं तुलसी के युक्तिपूर्वक सेवन से हम अपने शरीर को अनेकानेक रोगों से सुरक्षित रख सकते हैं।

तुलसी का परिचय :- तुलसी का पौधा भारत में सर्वत्र पाया जाता है। इसके पाँच भेद होते हैं लेकिन श्वेत एवं श्याम तुलसी ही अधिक सुलभ एवं प्रचलित हैं। इसकी पत्तियाँ डेढ़ इंच लम्बी, कोमल, गोलाकृति, कुछ लम्बाई में होती है। श्वेत एवं श्याम तुलसी की आकृति में कोई भेद नहीं है, केवल पत्तियों के रंग में थोड़ा भेद है, अर्थात् श्याम तुलसी की पत्तियाँ एकदम काली होती हैं और श्वेत तुलसी की श्वेत वर्ण की नीलाभ होती हैं।

आयुर्वेद ग्रन्थानुसार तुलसी के गुण :- आचार्य चरक तथा सुश्रुत के अनुसार तुलसी हिचकी, खाँसी, त्रिदोष और पसली के दर्द को दूर करती है। यह वेदनाकारक एवं कफ-वात को नष्ट करती है और दुर्गन्ध हरती है।

निघण्टु - रत्नाकर के अनुसार श्वेत एवं श्याम दोनों तुलसी कड़वी, गरम, तीखी, दाहजनक, पित्तकर, हृदय के लिए हितकारी, कसैली जठराग्नि को बढ़ाने वाली, हल्की, वात-कफ नाशक, श्वास-कास-हिक्का को दूर करने वाली, वमन, दुर्गन्ध, कोढ़, पार्श्वशूल, विषदोष, मूत्रकृच्छ, भूतबाधा एवं शरीर के विभिन्न अंगों में होने वाली पीड़ा को नष्ट करती हैं।

समस्त आयुर्वेदीय ग्रन्थों में तुलसी को उत्तम ज्वरनाशक औषधि स्वीकार किया गया है।

तुलसी में विद्यमान अनेक गुणों के कारण ही हिन्दू धर्म में इसको देवी मान कर घर-घर में लगाने का विधान किया है। मंदिरों में पूजा आरती के पश्चात् भगवान के चरणामृत के साथ तुलसी पत्र अवश्य दिया जाता है। आधुनिक अनुसंधानों से यह सिद्ध हो गया है कि तुलसी के पौधे में वायु को शुद्ध करने और कीटाणुओं को विनष्ट करने के गुण विद्यमान हैं। एलोपैथी चिकित्सक भी तुलसी से मलेरिया की क्षमता को मानते हैं। इसके अतिरिक्त सर्दी-खाँसी, न्यूमोनिया, पार्श्वशूल को दूर करने वाली भी मानते हैं।

तुलसी गुणों का सागर है। इसके प्रयोग से अनेक रोगों को दूर किया जा सकता है एवं बिना अधिक खर्च के घर में ही अपना इलाज सम्भव है। जनसाधारण के लिए कुछ उपाय नीचे बताये जा रहे हैं :-

तुलसी द्वारा ज्वर-चिकित्सा-

- मलेरिया ज्वर में तुलसी की छः पत्तियों को 2 नग काली मिर्च के साथ पीसकर, मधु के साथ दिन में तीन-चार बार चटायें। ज्वर में विशेष लाभ होता है।
- विषमशीत ज्वर में तुलसी पत्र का काढ़ा या स्वरस - 3 ग्राम की मात्रा में दिन में तीन-तीन बार पिलाने से रोगी को पसीना आकर ज्वर शांत हो जाता है।

सर्वज्वर नाशक वटिका - काली मिर्च और पीपल को समान भाग लेकर कपड़छन चूर्ण बना लें। इस चूर्ण में तुलसी पत्र के स्वरस की सात भावना देकर चने के आकार की गोलियाँ बनाकर रख लें। यह सर्वज्वर नाशक वटी है। इसके सेवन से किसी भी प्रकार का ज्वर हो नष्ट हो जाता है।

जीर्ण ज्वर नाशक योग - तुलसी मूल - 100 ग्राम, छोटी पीपल-10 ग्राम, गुडुच का अर्क-10 ग्राम काकड़ासिंगी-10 ग्राम, छोटी इलायची के बीज-10 ग्राम, वंशलोचन-10 ग्राम लेकर बारीक कपड़छन चूर्ण करके बंद डिब्बे में रख लें। इससे जीर्ण ज्वर, सर्दी, खाँसी में 1 ग्राम की मात्रा में देने से शीघ्र लाभ होता है।

मलेरिया में तुलसी प्रयोग - जहाँ तुलसी के पौधे

1. प्राध्यापक, श्री बाबा मस्तनाथ आयुर्वेद कॉलेज, अस्थल बोहर, रोहतक
2. प्रधान चिकित्सक, जैन धमार्थ औषधालय, बड़ा बाजार, रोहतक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगे होते हैं, वहाँ के वातावरण में तुलसी की गन्ध के कारण मच्छर नहीं आ पाते, जिससे मच्छरों के द्वारा होने वाला मलेरिया एवं अन्य रोगों से बचाव होता है । इसके अतिरिक्त शरीर के खुले अंगों पर तुलसी पत्र का रस मलने, तुलसी की मंजरी, पत्तियों आदि को कमरे में एवं बिछौने आदि पर रखने से विशेष लाभ होता है ।

खाँसी, जुकाम युक्त ज्वर नाशक योग - जिस रोगी को ज्वर के साथ खाँसी, जुकाम भी हो उसके लिए निम्न योग अतिउत्तम एवं सरल-सुलभ है ।

प्रथम योग - तुलसी पत्र स्वरस - 1½ ग्राम
शहद - 3 ग्राम
अदरख का रस - 1½ ग्राम

उक्त मात्रा में इस मिश्रण को रोगी को दिन में तीन बार पीने से अवश्य राहत मिलती है ।

द्वितीय योग - तुलसी पत्र स्वरस - 2 ग्राम
अडूसा पत्र स्वरस - 2 ग्राम

उक्त मात्रा दिन में 3 बार लेने से खाँसी में विशेष लाभ होता है ।

तृतीय योग - खाँसी के लिये अदरक के रस में तुलसी की मंजरी को पीसकर लेना चाहिए ।

बाल रोगों में महोपयोगी तुलसी - बच्चों की सुकुमार प्रकृति होने के कारण उनको तीक्ष्ण वीर्य औषध नहीं देनी चाहिए । ऐसी स्थिति में तुलसी का प्रयोग विभिन्न बालरोगों में अमृत तुल्य सिद्ध होता है ।

पेट फूलने पर - बच्चे का पेट फूल जाता हो एवं उसे कब्ज रहती हो तो तुलसी का रस गरम करके आधा चम्मच की मात्रा में पिला दें । थोड़ी देर में ही आराम आ जाता है । बच्चों के पेट सम्बन्धी सभी शिकायतों में यह अचूक नुस्खा है - तुलसी के स्वरस में सोंठ का चूर्ण मिलाकर पिलाना । बच्चों को श्वास लेने में कठिनाई हो रही हो तो तुलसी के स्वरस के साथ अल्प मधु मिलाकर चटाना चाहिए ।

दूध फेंकने में - यदि बच्चा दूध पीते ही उल्टी कर देता हो, दूध पीते समय अधिक खाँसी आती हो या दूध गले में अटकता हो तो निम्न योग उत्कृष्ट लाभकारी सिद्ध होगा । तुलसी का बीज, काकरासिंगी, भटकटैया के फूल का केसर, मोथा, अतीस, भुना हुआ श्वेत जीरा, वायविडंग, केसर और छोटी पीपल । इन सभी को समान मात्रा में लेकर कपड़छन चूर्ण बना लें । फिर इस चूर्ण को पान के रस के साथ अच्छी तरह घोंट लें और चने के बराबर की गोलियाँ बनाकर रख लें । दिन में तीन बार एक-एक गोली मधु के साथ बच्चे को सेवन करावें । खाँसी, ज्वर, दूध फेंकना आदि सभी रोग शान्त हो जायेंगे ।

कृमि रोग में - बच्चों के पेट में कीड़े होना आम बीमारी है । इससें बच्चों में खून की कमी, भूख कम लगना, चिड़चिड़ापन आदि लक्षण दिखाई देते हैं । इस रोग के लिए तुलसी की पत्तियों का थोड़ा-सा रस निकालकर जरा-सा गरम करें और बच्चें को पिला दें, विशेष उपकार होने में संदेह नहीं है ।

बालकों के ज्वर में - तुलसी की पत्तियाँ, बबूल की कोपल और अजवायन बराबर लेकर थोड़े जल में काढ़ा बना लें । शीतल होने पर मिश्री मिलाकर पिलावें । बालकों का ज्वर दूर करने का यह एक उत्तम नुस्खा है ।

बालग्रह निवारक योग - तुलसी की पत्तियों का चूर्ण तैयार करें, उतनी ही मात्रा में मीठा बच का चूर्ण उसमें मिला दें । मधु के साथ इस मिश्रण को खिलाने से सभी बाल-ग्रह शान्त हो जाते हैं ।

कुकुर-खाँसी - कुकुर खाँसी बच्चों का अत्यधिक कष्टदायक रोग है । इसमें बच्चा लगातार खाँसता रहता है, उसका मुंह लाल हो जाता है एवं श्वास नहीं आता । इस रोग से बचाने के लिए सुलभ तरीका यह है कि तुलसी की मंजरी, मुलेठी चूर्ण, बच और छोटी पीपल प्रत्येक 40-40 ग्राम लेकर 500 ग्राम पानी में डाल दें एवं गरम करें जब 200 ग्राम पानी शेष रह जावें तो उसमें 100 ग्राम मिश्री भी मिला दें एवं छानकर रख लें । 5 ग्राम (एक चम्मच) की मात्रा में दिन में दो बार देने से कुकुर खाँसी में परम लाभ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता है ।

पुरुषों में स्तम्भन कारक योग - सूरनकन्द की जड़ के चूर्ण के साथ तुलसी मूल छाल के चूर्ण को समान मात्रा में मिलाकर पान के बीड़े में कुछ दिन सेवन करने से स्तम्भन शक्ति में आश्चर्य जनक वृद्धि होती है । मात्रा 1 से 2 ग्राम ।

स्वप्न दोष निवारक योग - तुलसी की पत्तियों का चूर्ण, शीतलचीनी का चूर्ण और कपूर इन तीनों चीजों को समभागों में लेकर मिला दें । रात्रि में सोने से पहले ठंडे जल के साथ सेवन करें । इस प्रकार नियम से कुछ दिन लेने से स्वप्न दोष विनष्ट हो जाता है ।

चर्मरोगों की महौषधि तुलसी :- विभिन्न प्रकार के चर्मरोगों में तुलसी का विविध प्रकार से उपयोग कर उन रोगों से छुटकारा पाया जा सकता है -

तुलसी की पत्तियों के साथ मांजूफल मिलाकर नियमित सेवन करने से चकत्ते एवं खुजली का नाश होता है ।

- तुलसी का स्वरस दाद पर लगाने से दाद नष्ट हो जाता है ।
- तुलसी पत्र को नींबू स्वरस में पीसकर लगावें ।
- तुलसी पत्र को लहसुन के साथ पीसकर लगाने से दाद नष्ट हो जाता है ।

स्त्री रोगों में तुलसी का उपयोग :-

गर्भाशय की शुद्धि हेतु :- तुलसी के बीज पानी में पीसकर रज:स्राव के समय प्रथम तीन दिन स्त्री को पिलावें । इस प्रयोग से गर्भाशय की त्रुटियाँ दूर हो जायेंगी और यह गर्भधारण की क्षमता बढ़ती है ।

प्रदर नाशक योग - तुलसी के बीजों को रात्रि में भिगों कर प्रात:काल अच्छी प्रकार मलकर प्रदर रोगिणी स्त्री को पिला दें । अवश्य प्रदर नष्ट हो जाता है ।

दंत रोगों में तुलसी की उपयोगिता -

- दांतों की वेदना में तुलसी पत्र के साथ मिर्च पीसकर दर्द करने वाले दांत के नीचे दबा लें तुरंत ठीक हो जाता है ।
- दांतों में यदि कीड़ियाँ लग गयी हों एवं दांत खोखले हो गयें हों तो तुलसी पत्र का रस निकाल कर उसमें कपूर मिलाकर दांत के खोखले भाग में लगाने से दांत का दर्द ठीक हो जाता है एवं कीड़ियां मर जाती हैं ।
- मसूड़ों में दर्द होने पर तुलसी पत्र एवं चमेली पत्र को मिलाकर चबाने से मसूड़ों का दर्द ठीक हो जाता है ।
- मिरगी रोग में जब रोगी को मिरगी का दौरा आता है और वह मूर्च्छित हो जाये या उसमें झटके आने लगे तो तुलसी पत्र स्वरस में सेंधा नमक मिलाकर दोनों नासिका छिद्रों में डाल दें । मूर्च्छा तुरन्त दूर हो जाती है ।

बवासीर (अर्श) में तुलसी का उपयोग - (1) तुलसी का बीज 3 माशा लेकर दही के साथ प्रात:काल सेवन करने से खूनी बवासीर नष्ट हो जाता है । (2) अर्श (मस्सों) में काकजंघा की जड़ को तुलसी पत्र के साथ पीसकर उसमें से स्वरस निकाल कर रोगी को पिलावें एवं मस्सों पर लगावें ।

सिर दर्द में -

(1) तुलसी पत्र को सुखाकर इनका नस्य लेना ।

(2) तुलसी पत्र स्वरस से कनपटी एवं ललाट की मालिश करने से सिर दर्द नहीं होना ।

मूत्रदाह में तुलसी का उपयोग :- मूत्र के साथ जलन एवं मूत्र के पीले आने की स्थिति में निम्न योग का इस्तेमाल करने से तुरन्त आराम आता है ।

तुलसी	-	1 भाग
गो- दूध	-	4 भाग
जल	-	4 भाग

तीनों को मिलाकर पिलाना चाहिए । तुलसी का स्वरस हमेशा ताजा बनाना चाहिए ।

बिच्छू के काटने पर -

1. तुलसी पत्र स्वरस में सेंधा नमकर मिलाकर काटे हुए स्थान पर लेप करें या तुलसी मूल की लुगदी बनाकर उस स्थान पर घुमाने से काटे हुए स्थान पर होने वाली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भयंकर पीड़ा शीघ्र ही शांत हो जाती है ।

2. बिच्छू के जहर को शरीर में निष्प्रभावी करने के लिए तुलसी पत्र चबाने के लिए दें एवं पत्र स्वरस की मस्तक एवं समस्त शरीर पर मालिश करें ।
3. नींबू के स्वरस और गोमूत्र में तुलसी पत्र को पीसकर बिच्छू के काटे हुए स्थान पर लेप करने से शीघ्र ही विष नष्ट हो जाता है ।

सर्प दंश में तुलसी प्रयोग :- दुर्भाग्य से यदि किसी व्यक्ति को सर्प ने काटा हो तो तुरंत निम्न उपाय करना चाहिए -

1. कृष्ण तुलसी पत्र के रस को पीड़ित व्यक्ति के कान एवं आँख में डालना चाहिए एवं अल्प मात्रा में बार-बार पिलाते रहना चाहिए या तुलसी पत्तियों को चबाते रहना चाहिए । 2-3 मुट्ठी पत्तियाँ चबानी चाहिए ।
2. जहाँ सर्प ने काटा हो उस स्थान पर तुलसी की मंजरी को बारीक पीसकर पानी के साथ मिलाकर लेप करना चाहिए । इस प्रक्रिया में लेप का रंग काला हो जाता है, तब लेप को बार-बार बदलते रहते हैं । प्रभुकृपा से रोगी की जान बच जाती है एवं वह स्वस्थ हो जाता है ।

उक्त प्रयोगों के अतिरिक्त भी तुलसी अनेकानेक रोगों से मुक्तिदायक होती है । इसीलिए हिन्दू धर्म में प्रातःकाल दो तुलसी पत्र का सेवन नित्यप्रति करना श्रेष्ठ माना गया है एवं मंदिरों में तुलसी-चरणामृत का विधान भी तुलसी के औषधीय गुण को प्रकट करता है ।

बैद्यनाथ

अश्वगंधारिष्ट

मूर्च्छा, भय, घबराहट, अनिद्रा,
मंदाग्नि आदि में लाभकारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वनौषधि - विवेचन

बुद्धिवर्धक वटी
वच अथवा उग्रगंधा

इस वनौषधि का पौधा भारत के मध्य प्रदेश, बिहार तथा हिमाचल प्रदेश आदि प्रान्तों में पाया जाता है। मध्य प्रदेश के सतपुड़ा, सोना घाटी, नर्मदा, विन्ध्य पठारी तथा मेकल आदि क्षेत्रों में अधिकता से उत्पन्न होता है। इसका पौधा बहुशाखायुक्त व भूमिगत तने वाला होता है। इसकी पत्तियाँ रेखाकार से मालाकार नुकीली तथा मोटी होती हैं। इसके पुष्प हरे-पीले वर्ण में जबकि फल गोल तथा लाल रंग के होते हैं। इसके पौधे नदी नालों के किनारे तथा गीली दलदली भूमि पर उगते हैं।

भाषा भेद :- इसको संस्कृत में वचा, गुजराती-वज, बंगाली-बच, कोंकणी - इखण्डा, मलयालम - वासम्बू, पंजाबी -बरीबोज, मराठी - बेखण्ड तथा कन्नड़ में बजे नाम से जाना जाता है।

औषधीय गुण :- औषधि के रूप में वच के कांडर (राइजोम) का प्रयोग होता है। राइजोम का तेल निकालकर प्रयोग किया जाता है। इसका तेल वायु रोग (गैस्ट्रिक) श्वास रोग, कुपचन, दस्त, खाँसी, हिस्टीरिया, मूत्र एवं चर्म रोगों में प्रयुक्त होता है। 'सद्यः बुद्धिहरी तुण्डी, सद्यः बुद्धिप्रदा वचा' - चाणक्य।

कृषि हेतु आवश्यक जलवायु :- उन क्षेत्रों में जहाँ वार्षिक वर्षा 70 से 250 से.मी. होती हो तथा तापमान 10 डिग्री सेन्टीग्रेड से 38 डिग्री सेन्टीग्रेड हो वह क्षेत्र इस औषधि की खेत हेतु बहुत उपयुक्त होता है। भूमि सिंचाई की समुचित व्यवस्था तथा बलुई दोमट मिट्टी खेती के लिए उपयुक्त होती है।

खेत की तैयारी :- इसकी खेती हेतु पौधों की कटाई की जाती है जिसके लिए आवश्यक है कि खेत की दो तीन बार जुताई कर रोपाई से पूर्व खेत को थोड़ी दलदली बना कर रोपाई करें। इसके भूमिजन्यकाण्ड (राइजोम) को प्लान्टिंग मेटेरियल बनाने के लिए पुराने राइजोम को नमी वाली मिट्टी में दबाकर रखते हैं। इसके नए अंकुरण फूटने पर इनको छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर इनका रोपण कर दिया जाता है।

प्रत्यारोपण :- अंकुरित कंदों का प्रत्यारोपण जुलाई अगस्त माह में तैयार किये गये खेत में 30x30 से०मी० की दूरी पर तथा चार से०मी० गहराई में लगा दिया जाता है। प्रति हेक्टेयर 111000 पौधों की आवश्यकता होती है। प्रत्यारोपण के तुरन्त बाद सफाई करनी आवश्यक होती है।

सिंचाई एवं खाद :- रोपाई के पूर्व जुलाई के समय खेत में 15 टन गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर मिला देनी चाहिए। चूँकि इसकी खेती हेतु पानी की अधिक आवश्यकता होती है इसलिए वर्षा ऋतु के अलावा अन्य दिनों में प्रत्येक 2-3 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई होनी आवश्यक है।

खरपतवार नियंत्रण :- खरपतवार हटाने के लिए समय-समय पर निराई गुड़ाई करते रहना चाहिए इससे उत्पादन अधिक होता है।

फसल प्राप्ति :- रोपाई के 6 से 8 माह बाद जब पत्तियाँ पीली पड़कर सुखने लगें तब फसल पककर तैयार होती है। इस समय राइजोम सहित पौधों को खोदकर राइजोम को साफ कर (धोये बिना) छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर छाया में फैला दिया जाता है जिससे तैल की मात्रा कम नहीं होती।

आय-व्यय लेखा जोखा :- प्रति हेक्टेयर कुल उत्पादन 43 कुन्तल (सूँखे राइजोम), कुल व्यय (प्लान्टिंग मेटेरियल तथा मजदूरी) 32000 रुपये। क्रय मूल्य प्रति कुन्तल 2000/= रु० कुल प्राप्ति मूल्य 86000/=रु० शुद्ध लाभ 54000/= रु०। इस प्रकार प्रति हेक्टेयर वच की खेती से आठ माह की फसल से शुद्ध लाभ 54000/= रु० संभावित है।

मार्केटिंग :- इनकी बिक्री हेतु विभिन्न फार्मेसियों से सम्पर्क किया जाना चाहिए। जैसे :- अधिकांश आयुर्वेदिक औषधि निर्माता एवं जड़ी-बूटी व्यापारी इसके संभावित ग्राहक हैं।

निर्मित औषधियाँ :- इससे कृमि का सिरप, दन्त दर्द पाउडर सहित अनेक आदि दवाइयाँ बनती हैं। इससे इसकी कृषि का उज्जवल भविष्य हो सकता है।

डॉ० मदन गोपाल वाजपेयी
प्रधान सम्पादक, चिकित्सा पल्लव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तराखण्ड हिमालय के परिप्रेक्ष्य में जैव विविधता संरक्षण पर एक नीतिगत अध्ययन

डा० गिरीश चन्द्र जोशी

10 लाख वर्ग कि.मी. क्षेत्रफल में फैली दुनिया की विशाल पर्वत श्रृंखला हिमालय का 18 प्रतिशत भाग भारत में है जो कि 12 राज्यों में बिखरा हुआ है। हिमांलय को भारत में तीन खण्डों में विभक्त किया गया है। पूर्वोत्तर हिमालय में सिक्किम, दार्जिलिंग की पहाड़ियाँ, भूटान, अरुणाचल प्रदेश, असम, नागालैंड, मणिपुर, त्रिपुरा व मिजोरम हैं जबकि पश्चिमी हिमालय में जम्मू-काश्मीर तथा हिमाचल प्रदेश और मध्य हिमालय में उत्तरांचल की गढ़वाल-कुमाऊँ की पहाड़ियाँ आती हैं। इस सम्पूर्ण हिमालय क्षेत्र के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल में 53 प्रतिशत वन क्षेत्र के रूप में वर्गीकृत है, जबकि 28 प्रतिशत चरागाह, 10 प्रतिशत खेती व उससे जुड़े कार्यों और 9 प्रतिशत लगभग बर्फ से ढका हुआ क्षेत्र है। भारत की आबादी का करीब 6 प्रतिशत हिस्सा हिमालयी क्षेत्र में निवास करता है। लेकिन इस हिमालयी क्षेत्र में दिन प्रतिदिन घट रही घटनायें चिंता का विषय बनती जा रही हैं। विभिन्न क्षेत्रों में बुद्धिजीवियों, योजनाकारों एवं वैज्ञानिकों ने हिमालयी क्षेत्र के बहुआयामी दृष्टिकोण पर कई गोष्ठियाँ, कार्यशालायें एवं विभिन्न राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिकाओं में शोध पत्र भी प्रकाशित किये हैं। लेकिन हिमालयी क्षेत्र में निवास करने वालों का जीवन स्तर सोचनीय है।

यह क्षेत्र विभिन्नताओं से भरा है, यहाँ के बहुमूल्यवान जंगल एवं प्रकृति की सुन्दरता अपने आप में एक मिसाल है। यहाँ के निवासी कठिन माहौल में जीवन यापन कर आज भी हमारी सांस्कृतिक धरोहर एवं संस्कृति को संजोकर रखे हुए हैं, लेकिन अब हिमालयी क्षेत्रों में वनों का तेजी से विनाश हुआ है और स्थिति यहाँ तक आ गई है कि चेरापूंजी जैसे दुनियां के सर्वाधिक वर्षा वाले इलाके में पीने के पानी का संकट आ गया है, तमाम दुर्लभ जड़ी-बूटियाँ लुप्त हो गई हैं। वन्य जीवों की दुनियां उजड़ने के साथ-साथ यहां से निकलने वाली नदियाँ मैदानों में जाकर बाढ़ का रूप लेने लगी हैं।

मध्य हिमालयी क्षेत्र में कुमाऊँ का भौलोगिक क्षेत्रफल 21035 कि.मी. और गढ़वाल का 30084 कि.मी. है। ये तिब्बत और नेपाल की अंतर्राष्ट्रीय सीमा से लगे हैं। भू-गर्भवेत्ताओं ने हिमालय के पहाड़ों को सबसे कम उम्र का और संवेदनशील माना है। जो अभी भी ऊपर उठ रहा है लेकिन पिछले सात-आठ दशकों से यहाँ के प्राकृतिक संसाधनों का जिस तीव्रता के साथ विनाश हो रहा है, उसी वजह से आज हमें विकराल बाढ़, भूस्खलन जैसी त्रासदी से जूझना पड़ रहा है और भू-क्षरण भूस्खलन जैसी घटनायें काफी तेज हो गई हैं। इन क्षेत्रों में वनों की कटाई बहुत तेजी से हुई है और स्थिति अभी जारी है। गर्मियों में वनों की आग की चपेट से जैव विविधिता नष्ट हो रही है। पिछले दो दशकों के दौरान तो पहाड़ों में शुरु हुई भारी निर्माण योजनाओं, भू-माफिया, सड़क निर्माण में विस्फोटकों के प्रयोग समेत कई अन्य घटनाओं ने यहां संकट खड़ा कर दिया है। टिहरी बाँध को लेकर कई सवाल उठे हैं जबकि कई अन्य बाँध प्रस्तावित हैं। दून घाटी में चूना पत्थर खदानों की वजह से मसूरी एवं आस-पास के क्षेत्र तबाह हो चुके हैं। बागेश्वर जिले में मैग्नीसाइट खान व खड़िया खनन से ये स्थान पूरी तरह बदरंग हो चुके हैं। यहाँ के झरने, नदी, नहरें और जल स्रोत पूरी तरह प्रभावित हुए हैं। भूक्षरण हुआ है और आस-पास कृषि उत्पाद भी प्रभावित हुआ है। वनस्पति व वन्य जीवों का लुप्तप्रायः होना, तीव्र भूक्षरण, जलस्रोतों का सूखना, चारागाहों का समाप्त होना, सड़क-रास्तों का टूटना, ग्रामीण क्षेत्रों से पलायन, विस्फोटकों से असुरक्षा की भावना एक आम बात हो गई है। ऐसी घटनाओं से पहाड़ का पारिस्थितिकीय संतुलन बुरी तरह प्रभावित हुआ है। भारतीय भू-वैज्ञानिक के एक सर्वेक्षण अध्ययन के अनुसार गंगोत्री ग्लेशियर लगातार सिकुड़ता जा रहा है। 1990 तक इसने 0.243 वर्ग कि.मी. का स्थान छोड़ा है। इस क्षेत्र में परिस्थितिकीय असंतुलन का खतरा पैदा हो गया है। इसका मुख्य कारण इस क्षेत्र में वनों की कटाई, सड़क निर्माण, अनियोजित निर्माण कार्य, मानव तथा पशु गतिविधियाँ जिम्मेदार रही हैं। इस क्षेत्र में लगभग 12 लाख यात्री,

क्षेत्रीय आयुर्वेदिक भेषज अनुसंधान संस्थान, ताड़ीखेत (रानीखेत), जिला-अल्मोड़ा (उत्तरांचल)-263663

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

10-12 हजार ट्रैकर, 400-500 के बीच पर्वतारोही आते हैं। एक लाख से अधिक यात्री गोमुख तक पहुँच जाते हैं। गंगोत्री के पास भोजवाता में आज वह भोजपत्र के घने वन नहीं रहे जो आज से 50-60 वर्ष पहले थे। जहाँ काफी मात्रा में कचरा और गंदगी सीधे नदी में डाला जाता है। यही हाल पिण्डारी ग्लेशियर, मिलम, काफनी, सुन्दरढुँगा, सकीदून, हयारा एवं डोडीताल का है।

वन्य जीवों जैसे (कस्तूरी मृग) का शिकार भी यहाँ बड़े पैमाने पर हो रहा है। इस क्षेत्र में भयंकर बाढ़ व भूकम्प के भयानक खतरे बढ़ गये हैं तथा बांध व अन्य परियोजनायें भी विवाद के घेरे में आ गई हैं।

अति वृष्टि, अल्पवृष्टि, बाढ़, भूस्खलन, नरभक्षी जानवरों का आतंक यहाँ आम बात हो गई है। जीव-जन्तुओं व वनस्पतियों की अति दुर्लभ प्रजातियाँ खत्म हो रही हैं। जब उनके प्राकृतिक आवास ही छिन गये तो जीव-जन्तु अब कहाँ अपना बसेरा बनायेंगे ? और इस प्रकार इनकी प्रजातियाँ खत्म हो जायेंगी। पूरे पहाड़ी क्षेत्र में पशुओं का दबाव भी बढ़ रहा है जिससे प्राकृतिक वन नष्ट हो रहे हैं। इसके विपरीत चरागाहों की भी सम्यक व्यवस्था नहीं है। उत्तरांचल में जहाँ कुल 51124 वर्ग कि.मी. भौगोलिक क्षेत्र में 34247 वर्ग कि.मी. से अधिक में वन हैं। गढ़वाल क्षेत्र में 23125 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में वन हैं। यही क्षेत्र वन संपदा की दृष्टि से उ.प्र. का समृद्ध भाग है। अगर कोई प्रभावी योजना तत्काल न बनाई गई तो आने वाले वर्षों में इनके भारी विनाश की समस्यायें दिख रही हैं। यहाँ अपार जल सम्पदा है। लेखक द्वारा 1980 से 2000 के वनौषधियों के सर्वेक्षण अध्ययन से पता चला कि करीब 350 वनौषधियाँ उत्तरांचल हिमालय में पाई जाती हैं। इनका अवैज्ञानिक तरीके से आज भी विदोहन जारी है। अगर हम हिमालय की रक्षा में विफल रहे तो आने वाले दिनों में हमें गंभीर संकटों का सामना करना पड़ेगा। पहाड़ों में वन लग भी रहे हैं लेकिन एक पौध को वृक्ष का रूप लेने में कई वर्ष लग जाते हैं। लेकिन स्थिति वन रोपण के अनुपात में अच्छी नहीं लग रही है। इस मुद्दे पर और प्रभावशाली कार्ययोजना बनाने के लिए आम जनता की भागीदारी आवश्यक हो गई है।

प्राचीन काल में मानव के लिए जंगल का विचार एक रहस्यमय व्यक्तित्व की स्वीकृति थी जो कि ऋषि-मुनियों की आवास स्थली एवं योग साधना का स्थान माना जाता था। तभी उत्तराखण्ड को देव भूमि कहा जाता है। ज्यों-ज्यों सभ्यता विकसित होती गयी आज जंगल का विचार रोमांचकारी एवं उपभोग के लिए होने लगा है। इसी के परिणाम स्वस्थ प्राकृतिक शक्तियाँ अपना प्रकोप दिखाने लगी हैं। वन्य जीव के जीवन को संरक्षित करने के लिए आवश्यक है उसके आवास को संरक्षित करना। प्राकृतिक आवास में जीव-जन्तु एक दूसरे जीव के जीवन पर निर्भर करते हैं। प्रकृति से छेड़-छाड़ का नतीजा विनाश ही है। हिमालय अपनी अभूतपूर्व जैव विविधता के लिए विश्व प्रसिद्ध है। सम्पूर्ण भारतीय हिमालय का 92 प्रतिशत क्षेत्र संरक्षित क्षेत्र आज किसी न किसी रूप में प्राकृतिक सम्पदा के ह्रास से गुजर रहे हैं। जैविक प्राकृतिक सम्पदा का एक सीमा से अधिक दोहन न सिर्फ उस क्षेत्र विशेष पर बल्कि उससे जुड़े दूसरे अवयवों पर भी प्रभाव डालता है। उदाहरण के लिए मिश्रित वन इसलिए अधिक उपयोगी है क्योंकि वहाँ एक प्रजाति दूसरी प्रजाति को स्वतः संरक्षित करती है। इसलिए प्रजातियाँ जितनी भिन्न होगी, उनकी गुणवत्ता में व स्थायित्व में निरंतर वृद्धि होती जायेगी। उच्च जैव विविधता वाले क्षेत्र मृदा एवं जल संरक्षण हेतु उपयुक्त होते हैं। जैव प्रक्रिया में मानव क्रिया-कलापों या अन्य कारकों से ह्रास होने पर इन संसाधनों को क्षति पहुँचती है। जल संसाधन के संदर्भ में यदि मध्य हिमालय (उत्तराखंड) की बात करें तो यहाँ प्रचुर मात्रा में जल के भंडार हैं, गंगोत्री-यमनोत्री, पिण्डर, नामिक और मिलम ग्लेशियरों से यह भूमि आच्छादित है जिनसे क्रमशः गंगा, यमुना, पिण्डर, रामगंगा (पूर्वी) और गौरी गंगा जैसी नदियाँ निकलती हैं, फिर भी मध्य हिमालय के अधिकांश गांवों में पेयजल समस्या है। गर्मी में ग्रामीण इलाकों में लोग 4-8 कि.मी. पैदल चलकर पानी लाते हैं। क्योंकि हमने अपने जल संसाधनों का उचित प्रबन्धन नहीं किया। इस क्षेत्र में पेड़-पौधों का उगना और खेती में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विविधता बहुत कुछ ऊँचाई एवं जलवायु पर निर्भर करता है । वर्षा पर निर्भर रहने के कारण तराई भांभर को छोड़कर यह क्षेत्र मोटे अनाज जैसे ज्वार, बाजरा, मडुआ, मांदिरा (झुंगरा) और ऊँचाई वाले क्षेत्र काफर, पलथी एवं बहुमूल्य जड़ी-बूटियां जैसे अतीश, कुटकी, जटामांसी, चिरायता, सालमपंजा, सालममिश्री, मेदा, महामेदा, वृद्धि-वृद्धि, काकोली, क्षीर काकोली, ऋषभक, जीवक, जम्बू, इन्द्रायणी आदि के लिए उपयुक्त है । जल, जमीन, जैव विविधता का संरक्षण आपस में एक दूसरे से अन्तर्निहित है । अगर हमें इन तीनों को बचाना है तो इस धरती को वृक्ष लगाकर हरा-भरा करना होगा । जैव-विविधता संरक्षण व्यक्ति विशेष या राष्ट्र विशेष की समस्या न होकर सम्पूर्ण विश्व की समस्या है, यह प्रत्येक व्यक्ति का दायित्व है । परन्तु बदलते सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक परिवेश ने जनता की मौलिक सोच को काफी हद तक बदला है । आज उत्तराखण्ड के सुदूर से सुदूर क्षेत्रों में शराब व गुटका (तम्बाकू) आसानी से उपलब्ध हो जाता है जबकि जीवनदायिनी औषधियों के लिए मीलों पैदल जाना पड़ता है । नशाखोरी एवं तम्बाकू की लत सम्पूर्ण क्षेत्र के लिए एक अभिशाप बनकर रह गया है । इससे हमारा सामाजिक पर्यावरण दूषित हो गया है । आज मानव की सोच दूरगामी न रह कर वर्तमान तक सीमित हो गई है । फलस्वरूप दूरगामी योजनाओं में जनता की भागीदारी की निरंतरता कायम रख पाना काफी कठिन है । पहले मानव को रोटी चाहिए तब वह पर्यावरण रक्षा के प्रति जागरूक हो सकता है । बंगला भाषा के एक कवि श्री सुकान्त भट्टाचार्य की अपनी प्रसिद्ध कविता में पूर्णिमा के चांद में भी रोटी का प्रतिबिम्ब नजर आता है । आशय स्पष्ट है उसे चाँद नहीं चाहिए, रोटी चाहिए जब तक सब के पास रोटी नहीं पहुँचती उसे पर्यावरण से क्या मतलब । जाहिर है खा पीकर अघाये हुए आदमी का जीवन दर्शन भिन्न होगा वह चाँद को प्रकृति की एक अद्वितीय शोभा मानकर उसकी ओर एकटक देख सकता है । हमारे उत्तराखंड क्षेत्र में रोजी-रोटी व रोजगार के साधन अल्प मात्रा में हैं । अतः इनका विकास करना होगा । हमारी युवा पीढ़ी रोजगार के चक्कर में भटकाव की ओर अग्रसर हो रही है ।

हमें सर्वप्रथम प्राथमिक शिक्षा, स्वास्थ्य व रोजगार को उन्मुख दिशा देनी होगी । हर सभ्यता अपनी बुराइयों के साथ नष्ट हो जाती है । उत्तरांचल की विकास योजनाओं अपनी जड़ों से कटी हुई हैं । योजनायें जंगल को तो बचाना चाहती हैं पर आदमी को नहीं । वह पर्यावरण को स्वच्छ रखना चाहती हैं पर इसमें इस बात की चिन्ता नहीं है कि नदी व जंगलों के पास बसे हुए लोग अपनी जरूरतों के लिए कहाँ जायेंगे । योजनायें एक भयभीत समाज में कुछ मोहक अभयारण्यों की सृष्टि करना चाहती हैं ।

मानव जीवन का अस्तित्व जैविक संसाधनों पर आधारित है । जैव विविधता की प्रकृति के पारिस्थितिक संतुलन को बनाये रखती है । जैव विविधता से अभिप्राय है सम्पूर्ण वनस्पति एवं प्राणि जगत का संरक्षण हमारे उत्तराखण्ड क्षेत्र में भी जनसंख्या दबाव के कारण जैविक संसाधनों का क्षरण हुआ है । बीते एक दशक में गढ़वाल मंडल की जनसंख्या में 19.65 प्रतिशत तथा कुमाऊ मंडल में 24.64 प्रतिशत की वृद्धि हुई है । इसलिए जनसंख्या नियंत्रण के लिए आम लोगों को जागरूक रहना होगा । बढ़ती जनसंख्या के दबाव के कारण ही यहाँ की मूल संस्कृति एवं सभ्यताओं का अन्त हो गया है । जनता एवं सरकार को मिल जुलकर प्रयास करने की आवश्कयता है ताकि न केवल वनों का विदोहन रोका जा सके बल्कि वनों को फिर से पुनः स्थापित किया जा सके । केवल कानून बना देने से वनों को कटने से नहीं रोका जा सकता है । इस हेतु सामाजिक चेतना जाग्रत करने की आवश्यकता है । वनों के संवर्धन हेतु दीर्घकालिक एवं अल्पकालिक नीतियाँ एवं योजना लागू करना अति आवश्यक हो गया है । उत्तराखंड को अविकसित कहलाने के पीछे कहीं न कहीं शोषण की नियति छुपी हुई नजर आती है । पहाड़ में आज जरूरत है पारंपरिक एवं सांस्कृतिक प्रबंध के तंत्र को संरक्षित करने की इसके पीछे संरक्षण एवं संवर्धन की भावना होती है । पारंपरिक एवं प्राकृतिक खेती, सांस्कृतिक वन प्रबन्ध जैसा कि चमोली जिले का हरियाली देवता का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सांस्कृतिक-पारिस्थितिक पर्यटन को फिर से लागू करने की आवश्यकता है । हमें इस की प्राचीनतम ज्ञान को ध्यान में रखते हुए आधुनिक जैव प्रौद्यिगिकी का प्रयोग करते हुए अपने ही क्षेत्र की परंपरागत खेती को विकसित करने की आवश्यकता है क्योंकि हमारे पास कृषि के लिए भूमि सीमित है । आधुनिक जैव प्रौद्यिगिकी के माध्यम का प्रयोग कर हम सीमित क्षेत्र में ही पोषक तत्वों से भरपूर अनाजों, सब्जियों एवं फलों को पैदा कर सकते हैं ।

अल्पकालिक योजनाओं में संरक्षित वनों के निर्माण में वृद्धि करना, सामाजिक वनीकरण, उसर व बंजर भूमि में उचित वनों को विकसित करना है । दीर्घकालिक योजनाओं में प्रमुख हैं जनसंख्या को सीमित करना, इस हेतु सामाजिक चेतना जागृत करनी होगी । इस कार्य में गैर सरकारी संगठन, छात्र शिक्षक, वैज्ञानिक, पत्रकार एवं बुद्धिजीवी वर्ग सकारात्मक भूमिका निभा सकता है । मुख्य रूप से महिलाओं को विश्वास में लेना होगा क्योंकि पहाड़ की महिलायें ही ईंधन, चारा, काष्ठ, भूमि उपयोग जैसे क्षेत्रों में पूर्ण रूप से जुड़ी हैं । जन सामान्य को जागृत कर उनकी भागीदारी द्वारा इसे एक जन आन्दोलन का रूप लेकर हमारी अमूल्य धरोधर जैविक विविधता को संरक्षित रखा जा सकता है । जन सहयोग के बिना कोई भी परियोजना सफल नहीं हो सकती है ।

इस क्षेत्र की जैव विविधता के संरक्षण के लिए प्राकृतिक संसाधनों के उचित प्रयोग हेतु उचित प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए जैसे चारा व ईंधन जमा करने हेतु उपयोगी एवं लुप्त प्राय: प्रजातियाँ को पौधशाला में विकसित करके उनका रोपण बंजर भूमि में करना चाहिए । इससे स्थानीय जनता को जारा, ईंधन की आपूर्त्ति भी होगी और प्राकृतिक आवासों से दबाव भी कम होगा । उपयोगी प्रजातियों को धार्मिक उपवनों के रूप में विकसित करना चाहिए जिससे ये भविष्य में बीज बैंक का काम कर सकें । निर्माण कार्य नियोजित रूप से होना चाहिए । पर्यावरण संरक्षण हेतु महिलाओं एवं स्कूली बच्चों तथा आम जनता को संरक्षण संबंधी शिक्षा देनी चाहिए । इसका प्रचार प्रसार सम्पूर्ण हिमालयी क्षेत्र में होना चाहिए । इन सब बिन्दुओं को मद्देनजर रखते हुए हमें एक समग्र योजना का विकास करना होगा तभी हम हिमालय को दूषित होने से बचा सकते हैं और इसका संरक्षण कर सकते हैं ।

बैद्यनाथ

जन्मघूँटी

जन्म के बाद से ही बच्चों को इसका सेवन कराने से उनके स्वास्थ्य में कोई गड़बड़ी नहीं होती । इससे बुखार, खांसी, सर्दी-जुकाम, अजीर्ण, उल्टी होना, टट्टी होना, पेट फूलना आदि रोग दूर होते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घरेलू वैद्य

सौंफ, जीरा, अजवायन, काली मिर्च के औषधीय प्रयोग

डॉ० रविकुमार श्रीवास्तव
डॉ० निधि श्रीवास्तव

आजकल जैसा हम देख रहे हैं कि चिकित्सा कराना बहुत ही महंगा होता जा रहा है । भारतवर्ष की अधिकांश जनता गरीब है । उनके लिये दवायें इतनी महंगी पड़ती हैं कि मामूली लोग व गरीब लोग इन्हें प्रयोग नहीं कर सकते । इसके लिए ऐसी दवाओं की जरूरत है जो बहुत सस्ती हो, साथ ही साथ बहुत लाभदायक हो, आसानी से उपलब्ध हो और उनसे नुकसान पहुंचने का कोई डर भी न हों । ऐसी दवायें मसालों के रूप में हमारे घर में ही मिल सकती हैं । यहाँ हम अपने तजुर्बे के अनुसार कुछ घरेलू चीजों के नुस्खे पेश कर रहे हैं :-

सौंफ

सौंफ का संस्कृत भाषा में नाम मिश्रेया तथा वानस्पतिक नाम - फीनीक्युलम वलगेर होता है । इसमें 'एनिथोल' नामक मुख्यतत्व 50-60 प्रतिशत तक होता है । आयुर्वेद संहिताओं में इसका वर्णन औषधि के रूप में किया गया है । इसमें मुख्य गुण निम्नलिखित होते है :-

''अन्या शताह्वा वृष्या च क्षतक्षीणहिता हिमा ॥
अक्षिरूक्वातपित्तास्रक्षयघ्नी स्वादुतिक्तला ।''

अर्थात सौंफ ठण्डी, वृष्य, क्षतक्षीण नाशक, वातपित्त नाशक, दृष्टिशक्ति वर्धक, क्षयघ्न, मधुर तथा तिक्त होती है । इसके अलावा यह बुद्धिवर्धक, भूख को बढ़ाने वाली, हृदय को बल देने वाली, प्यास को कम करने वाली तथा आंव को पचाने वाली होती है । घर में इसका प्रयोग निम्न प्रकार से रोगों में आसानी से किया जा सकता है -

1. सौंफ, सोंठ तथा आम की गुठली का चूर्ण बनाकर 3 ग्राम की मात्रा में खाने से अतिसार (डायरिया) में लाभ होता है ।
2. 10 ग्राम सौंफ के चूर्ण में 5 ग्राम लाल शक्कर मिलाकर रोज रात को खाने से आँख की रोशनी बढ़ती है और मोतियाबिन्द की रोकथाम होती है ।
3. सौंफ, पोदीना और बड़ी इलायची पीसकर चटाने से छोटे बच्चों के दस्तों में आराम मिलता है । इस मिश्रण को पानी में घोलकर 2-2 चम्मच पिलाने से भी लाभ होता है ।
4. सौंफ को चूर्ण करके इसमें मिश्री मिलाकर 6-6 ग्राम दिन में 3-4 बार खाने से खूनी आंव में लाभ होता है ।
5. 10 ग्राम सौंफ को आधा किलो पानी में डालकर पका लें । इस पानी को थोड़ा-थोड़ा बार-बार पिलाने से प्यास दूर होती है तथा भूख खुलती है ।
6. सौंफ, सोंठ, इलायची तथा पोदीना थोड़ा-थोड़ा कूटकर पीस लें और एक गिलास जल में मिलाकर पतला कर लें । इसी जल को थोड़ा-थोड़ा पिलाने से वमन (वोमेटिंग) दूर होती है तथा हाजमा ठीक होता है ।
7. 50 ग्राम सौंफ को 1 किलो पानी में घोलकर रात को रख दें । फिर सुबह उस पानी को छान कर पीने से ज्वर (बुखार) की दाह मिटती है ।
8. बेल के गूदे के साथ सौंफ का चूर्ण खिलाने से अजीर्ण (अपच) मिटता है ।

जीरा

संस्कृत भाषा में इसे जीरक, जरण तथा आजमोदा इन नामों से पुकारा जाता है । जीरा हिन्दुस्तान के सब प्रांतों में मसाले की तरह साग में खाया जाता है । इसका लैटिन नाम - क्यूमिनम सायमिनम होता है । इसमें पाये जाने वाला मुख्य तत्व क्युमैल्डिहाइड है । आयुर्वेदिक मतानुसार इसके गुण निम्न प्रकार बतलाये गये हैं :-

''जीरकं कटुकं रूक्षं वातकृत्दीपनं परम् ।
गुल्माध्मानातिसारघ्नं ग्रहणी कृमिहृत परम् ॥''

अर्थात् जीरा चरचरा, शीतल, मधुर, दीपन, शीतल, विषनाशक, कृमिनाशक, गुल्म, आध्मान, अतिसार नाशक, वातवर्धक तथा पेट के आफरे को दूर करने वाला होता है । इसका प्रयोग घर में निम्न प्रकार से रोगनाशक रूप में किया जा सकता है :-

1. व्याख्याता, द्रव्यगुण विभाग, श्री सांई आयुर्वेदिक मेडिकल कॉलेज एवं हास्पीटल, सारसौल, जी.टी. रोड, अलीगढ़
2. व्याख्याता, शरीर रचना विभाग, श्री सांई आयुर्वेदिक मेडिकल कालेज एवं हास्पीटल, सारसौल, जी.टी.रोड, अलीगढ़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

1. जीरा, अजवायन, सोंठ, काली मिर्च, काला नमक अंदाज से लेकर चूर्ण कर लें । इसमें थोड़ी-सी घी में भुनी हींग मिलाकर खाने से पाचन शक्ति (अग्नि) बढ़ती है तथा पेट का दर्द ठीक होता है ।
2. जीरा, अजवायन तथा काला नमक का चूर्ण खाने से खाने की रुचि जाग्रत होती है तथा पेट की गैस शांत होती है ।
3. 3 ग्राम जीरा और 125 मि.ग्रा. फिटकरी पोटली में बांध कर गुलाब जल में या उबाल कर ठण्डा किये हुए 10 ग्राम जल में भिगो दें । आँख में दर्द होने पर या लाल होने पर इस रस को टपकाने से आराम मिलता है ।

दही में भूरे जीरे का चूर्ण मिलाकर खाने से अतिसार (डायरिया) मिटता है ।

5. जीरे को नींबू के रस में भिगोंकर नमक मिलाकर गर्भवती स्त्री को देने से उसका जी मिचलाना बंद हो जाता है ।
6. सोंठ, जीरा तथा काली मिर्च घोंट छानकर पीने तथा लगाने से मकड़ी तथा कुत्ते का विष उतर जाता है ।
7. सिरके के साथ जीरा देने से हिचकी बंद हो जाती है ।
8. जीरे को गुड़ के साथ खाने से मलेरिया में लाभ पहुँचता है ।

अजवायन

इसको लैटिन भाषा में 'केरम कोप्टिकम' तथा संस्कृत में 'यावानी' कहते हैं । यह भी पूरे भारतवर्ष में मिलती है । इसके अंदर एक विशेष प्रकार का सुगन्धित उड़नशील द्रव्य रहता है, जिसको 'थायमॉल' कहते हैं । चमक औषधियों की दृष्टि से इस औषधि ने बहुत प्रसिद्धि पा ली है । संस्कृत के अंदर तो इसके लिए यहाँ तक कहा गया है :-

"एका यवानी शतमन्नपाचिका:"

अर्थात् अकेली अजवायन ही सैंकड़ों प्रकार के अन्न को पचाने वाली है । आयुर्वेद मतानुसार अजवायन चरपरी, रुचिकारक, तीक्ष्ण, गरम, चटपटी, हल्की, भूख बढ़ाने वाली तथा कफ, शूल, वात, कृमि, वमन, गुल्म तथा प्लीहा का नाश करने वाली होती है । अजवायन को निम्न प्रकार से घर में औषधि रूप में प्रयोग किया जा सकता है :-

1. अजवायन को सरसों तैल में डालकर कुछ देर धूप में पका लेते हैं । इस तैल को छोटे बच्चों के सिर पर तालु पर रखने से सर्दी दूर होती है ।
2. यदि अंगों में दर्द हो तो अजवायन का धुंआँ देने से लाभ होता है । बुनी हुई जूट की चारपाई पर रोगी को लिटाकर ऊपर से चादर या कम्बल उढ़ा देते हैं । चारपाई के नीचे आग रखकर उस पर अजवायन बुरकते हैं, जिससे धुआँ उठे व बदन पर लगे । यदि चारपाई को चारों ओर से कपड़े से ढक दिया जावे तो धुआँ ठीक बदन पर लगता है ।
3. प्रसूता स्त्री को खौला हुआ अजवायन का पानी देने से प्रसूता को भूख लगती है, खाना पचता है, शरीर का दर्द कम होता है तथा गर्भाशय की गंदगी साफ हो जाती है ।
4. थोड़ी अजवायन और काला नमक आटे में मिलाकर रोटी बनाने से वह रोटी जल्द हजम होती है ।
5. 4 ग्राम अजवायन चूर्ण को, हींग, काला नमक मिलाकर देने से पेट के कीड़े मर जाते हैं ।
6. अजवायन को गरम करके, पोटली बनाकर सूंघने से, जुकाम तथा सिरदर्द में आराम आता है ।
7. अजवायन का काढ़ा बनाकर आँख धोने से आँखें साफ होती हैं ।
8. अजवायन, काली मिर्च, सेंधा नमक तीनों चीजों को पीसकर गरम जल से सुबह देने से पेट दर्द, मंदाग्नि तथा अफरा नाश होता है ।

काली मिर्च

इसक संस्कृत पर्यायवाची नाम - श्याम, वेणुज, यवनप्रिय, कटुक, वृत्तफल आदि है । लैटिन भाषा में इसे पाइपर नाइग्रम कहते हैं । इसका मुख्य कार्यकारी तत्व 'पाइपरिन' होता है । आयुर्वेदमनीषियों द्वारा इसका वर्णन निम्न प्रकार मिलता है :-

"नात्यर्थ मुष्णं मरिचमवृष्यं लघु रोचनम् ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छेदित्वाच्छोषणावाच्च दीपनं कफ वातजित् ॥"

अर्थात् काली मिर्च, चटपटी, तीक्ष्ण, वृष्ण, रुचिकारक, गरम, छेदक, शोषक, रूक्ष, दीपन, पित्तकारक, कृमिध्न, वात तथा पित्त शामक होती है । भारतवर्ष के अन्दर यह औषधि अत्यंत प्राचीन काल से ही घरेलू औषधि के बतौर रहती है ।

1. काली मिर्च का चूर्ण नाक में डालने से बेहोशी दूर होती है ।
2. सूजन पर काली मिर्च का लेप करने से वह ठीक हो जाती है ।
3. काली मिर्च व तुलसी के पत्ते का काढ़ा बनाकर छानकर उसमें बताशा मिलाकर पीने से जुकाम ठीक होता है ।
4. तुलसी के पत्ते के साथ काली मिर्च का चूर्ण मिलाकर चाटने से जाड़ा देकर आने वाला बुखार चला जाता है ।
5. काली मिर्च व काला नमक अंदाज से लेकर दही के मट्ठे में मिलाकर पीने से मंदाग्नि दूर होती है ।
6. काली मिर्च को पीसकर पुराने गुड़ के साथ देने से नाक से गिरने वाला खून बंद हो जाता है ।
7. काली मिर्च को घी में मिलाकर या मिश्री के साथ सुबह उठते ही खाने से अनेक प्रकार के नेत्र रोग मिटते हैं ।
8. काली मिर्च को पीसकर तेल में मिलाकर लकवे के रोगी को लेप करने से इतना फायदा होता है जितना कि किसी दूसरी दवा से नहीं होता ।

प्रसूता के लिए बलवर्द्धक श्रेष्ठ टॉनिक

बैद्यनाथ

दशमूलारिष्ट

तेज, बल एवं कान्ति बढ़ाने में प्रसिद्ध । संग्रहणी, मंदाग्नि, अरुचि, उदर रोग, खांसी, दमा, कमजोरी आदि रोगों की शास्त्रोक्त दवा है । इससे बल और कान्ति बढ़ती है तथा शरीर पुष्ट होता है । प्रसव के बाद इसके सेवन द्वारा माताएं अपने और शिशु के स्वास्थ्य की रक्षा करती हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पौष्टिकता से भरपूर : गुड़

राजकुमार जैन

हमारे दैनिक जीवन में शक्कर का इस्तेमाल इतना अधिक बढ़ गया है कि उसके चलते हम मिठास के दूसरे और स्वास्थ्यकर विकल्प 'गुड़' को लगभग भुला बैठे हैं। सफेद साफ सुथरी और सफेद अवश्य होती है, किन्तु यह शरीर को केवल ताप व शक्ति के अतिरिक्त कुछ नहीं दे पाती। इसके विपरीत गुड़ अपने आप में ईख के समस्त प्राकृतिक व स्वाभाविक गुण समेटे है तथा अत्यधिक पौष्टिक तत्वों से सम्पन्न है। गुड़ को प्राकृतिक पदार्थों में सर्वाधिक मीठा माना जाता है, यहां तक कि इसकी मिठास शक्कर या चीनी से भी बढ़कर है।

गुड़ ईख से बनने वाले उत्पादों में सबसे प्रमुख है। ईख मूलतः भारतीय उपज है। भारत में वैदिक काल से पूर्व से ही ईख की खेती होती रही है। 327 ई०पू० जब सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण किया, तो वह लोगों को एक प्रकार की बेंत चबाते देखकर आश्चर्यचकित रह गया, जिसमें मधु जमा हुआ था। वस्तुतः यह बेंत ईख या गन्ना थी।

गुड़ का निर्माण ईख (गन्ना) ताड़ या खजूर के रस से किया जाता है। गन्ने के रस के गुड़ की अपेक्षा ताड़ या खजूर के रस से बना गुड़ अधिक पौष्टिक माना जाता है। इसके बाद इसके गट्ठर बना लिए जाते हैं। फिर इन गट्ठरों को कोल्हू के पास एकत्रित कर लिया जाता है। ये कोल्हू लकड़ी या लोहे के बने होते हैं। कोल्हू खींचने का काम प्रायः बैलों द्वारा कराया जाता है। कोल्हू में गन्नों को पेरकर उसके रस को मिट्टी की बनी नांद या लोहे के कड़ाह में एकत्र कर लिया जाता है। पर्याप्त मात्रा में रस इकट्ठा हो जाने पर उसे भट्ठी पर जिसे 'गुबोर' कहा जाता है, पकाने का काम शुरू होता है। भट्ठी में दो पात्रों की व्यवस्था होती है, एक में रस गर्म होता है, दूसरे में रस पकाया जाता है। पकाते समय रस के मैल को साफ करने के लिए उसमें चूना डाला जाता है। करीब पन्द्रह मिनट तक रस का पकाने के बाद बांस से बने एक विशेष उपकरण में पलटा जाता है। यह प्रक्रिया दो-तीन बार दोहराई जाती है, तब तक तरल रस नर्म गुड़ का आकार प्राप्त कर लेता है। इसके बाद इसकी मैल (कचरा) निकाली जाती है।

जहां तक रासायनिक संरचना का सवाल है, गुड़ बड़ी मात्रा में अपने में पौष्टिक व पोषक तत्वों को समाहित रखता है। प्रति 100 ग्राम गुड़ में 21.20 ग्राम ग्लूकोज, 29.70 ग्राम सुक्रोज, 3.26 ग्राम खनिज व 8.66 ग्राम जल मौजूद रहता है। इसके प्रति सौ ग्राम का ताप मूल्य 383 उष्णांक है तथा प्रति सौ ग्राम गुड़ में 280 यूनिट विटामिन 'ए' उपलब्ध होता है। चूंकि गुड़ लौह तत्व से भरपूर होता है, अतएव रक्त निर्माण में भी यह महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। रक्ताल्पता (खून की कमी) संबंधी रोगों में गुड़ का नियमित सेवन बहुत लाभ पहुंचाता है।

विटामिन-बी समृद्ध होने के कारण गुड़ स्नायविक शक्ति को स्थिर रखने, यानि शक्ति में वृद्धि करने तथा साधारण स्वास्थ्य एवं दीर्घ-जीवन कायम रखने में सहायक होता है। इसमें प्रोटीन, आयोडीन, विटामिन-ए तथा बी काम्प्लेक्स पर्याप्त परिमाण में उपलब्ध होता है। ये तत्व शारीरिक ऊष्मा व ऊर्जा का स्तर बनाए रखने में सहायक होने के साथ-साथ अस्थियों को सुदृढ़ता प्रदान करते हैं। चूंकि शक्कर में ये तत्व मौजूद नहीं होते, अतः गुड़ शक्कर की अपेक्षा कहीं अधिक स्वास्थ्यकर माना जाता है।

आयुर्वेद की दृष्टि से गुड़ एक पौष्टिक खाद्य पदार्थ है। आयुर्वेद के अनुसार यह रक्त, मज्जा, मांस और चर्बी बढ़ाने के साथ ही शरीर को पुष्ट करता है तथा सुडौलता प्रदान करता है। हृदय संबधी रोगों, मल-मूत्र रोग तथा पाचन संबंधी रोगों में गुड़ का सेवन अत्यंत फायदेमंद होता है। गुड़ शक्तिवर्धक, भारी वातनाशक, स्निग्ध तथा मूत्र-संस्थान को संतुलित करने वाला होता है।

हारीत संहिता में गुड़ को खांसी, क्षय, पांडु रोग, कमजोरी तथा खून की कमी आदि रोगों में सर्वश्रेष्ठ बताया गया है। उदर वायु, उदर विकारों के रोगियों को भोजन के

राज स्टेशनर्स, पचपहाड़ रोड़, भवानी मण्डी - 326502 (राज.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ गुड़ का सेवन नियमित रूप से कराना चाहिए । गुड़ की तासीर चूंकि गर्म होती है, इसलिए सर्दियों में इसका सेवन नियमित रूप से करना चाहिए । गुड़ व तिल से बने लड्डू, गुड़-चने, गुड़ की गजक व रेवड़ियां आदि ऐसे पदार्थ हैं, जो स्वादिष्ट होने के साथ ही सेहतमंद भी हैं । गुड़ जितना पुराना होगा, वह उतना ही पौष्टिक व स्वास्थ्यवर्धक होगा । गुड़ के इस स्वास्थ्यकर स्वरूप को देखते हुए हमें अपने दैनिक जीवन में शक्कर या चीनी के इस्तेमाल को कम करके उसका स्थान गुड़ को देना चाहिए । इससे जहां एक ओर हम शक्कर के हानिकारक प्रभावों से मुक्त हो सकते हैं, वहीं गुड़ के पौष्टिक व पोषक तत्वों से अपने स्वास्थ्य के प्रति भी सचेत रह सकते हैं ।

(द्रष्टव्य - कुछ राज्यों में शक्कर को चीनी कहा जाता है)

खिलते यौवन के निशान भला चेहरे पर आए क्यों कर ?

यौवन के साथ-साथ मुहासों का आना भी स्वाभाविक है, पर इनके इलाज के लिए क्रीम आदि से भी पूरी बात नहीं बनती । यह त्वचा की सतह पर ही काम करती है, समस्या की जड़ तक नहीं पहुंच पाती और इसके कारण कभी-कभी रह जाते हैं भद्दे निशान । बैद्यनाथ सुरक्ता रक्त साफ कर, त्वचा में निखार लाती है और आपके चेहरे की दमक बन जाती है खिलते यौवन की निशानी ।

बैद्यनाथ

सुरक्ता

हर्बल रक्त शोधक

कील मुहांसों के लिए

सुन्दर त्वचा भीतर से निखरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्श की चिकित्सा में सूरणकन्द की कार्मुकता का अध्ययन

[1]डा० लाल जी, एम.डी. (शल्यतंत्र), एन.आई.ए., जयपुर (राज.)
[2]डा० पूनम, एम.डी. (आयुर्वेद) द्रव्यगुण

"अरिवत् प्राणान श्रृणाति इति अर्शः"

अर्थात् शत्रु के समान प्राणों को जो नष्ट करे उसे 'अर्श' कहते हैं। गुदा प्रदेश में दबाव पड़ने से मांस के अंकुर गुदा की वलियों में उत्पन्न हो जाते हैं। इन्हीं मांसांकुरों को हीमोराइड्स या पाइल्स (Haemorrhoids or Piles) कहते हैं। यह गुदा की सिराओं के अग्रभाग में रक्त के संचय होने के कारण फूल जाती है। इसी को अर्श कहा जाता है।

अर्श उत्पत्ति के कारण -

आहार - गुरू, मधुर, शीत, अभिष्यन्दी व विदाही आहार मांस, खीर, मालपुआ, दही, मण्ड, तिल व अरुई, बंडा, सिरका कमलनाल, कमलकन्द, सिंहाड़ा, अंकुरित चना, नया अन्न, कच्ची मूली, वासी अन्न का लगातार सेवन से दोष प्रकुपित होकर 'अर्श' उत्पन्न करते हैं।

विहार - भोजन पचने से पूर्व पुनः भोजन करना, अग्नि मन्द होने पर मलाशय में मल का अधिक संचय होने से, उत्कट आसन या विषम आसन से, ऊँट व घोड़े की सवारी करने से, अत्यधिक प्रवाहण, वात, मूत्र, पुरीष इनके वेगों को बलात निकालने से तथा इन वातादि के आये हुए वेगों को धारण करने से, व्यायाम और मैथुन का अनुचित रूप से सेवन करने से, स्त्रियों को आमगर्भपात होने से, विषम प्रसव होने से, अधिक वजन उठाने से गुदा प्रदेश पर दबाव पड़ता है। इसी कारण गुदा की वलियों में अर्श की उत्पत्ति होती है।

अर्श दो प्रकार के होते हैं -

बाह्य अर्श (External Piles)- इसको शुष्क अर्श (Drug Piles) भी कहते हैं। ये गुदोष्ठ के बाहर पहिए के आरे की भांति चारों ओर रहते हैं। प्रत्येक अर्श के भीतर एक सिरा होती है। उसके चारों और सौतिक तन्तु होते हैं; जो त्वचा से ढके रहते हैं। ये अर्श सूखे रहते हैं। अतः इन्हें शुष्कार्श कहते हैं। जब ये रगड़ से, शीतस्पर्श से, अधिक बैठक व तीव्र मलावरोध आदि के कारणों से प्रकुपित एवं शोथ युक्त हो जाते हैं तब रोगी को चलने फिरने में कष्ट होता है।

आन्तरिक अर्श (Internal Piles):- इसको परिश्रावी या रक्तार्श (Bleeding Piles) भी कहा जाता है। ये गुदौष्ठ के भीतर या मध्य में अधिक सिराओं से युक्त होते हैं व चारो ओर सौतिक तंतु (Nerves fibres) होते हैं। अर्श के ऊपर श्लैष्मिक कला (Mucous membrane) का आवरण चढ़ा रहता है। ये प्रारम्भ में कोमल तथा बाद में रगड़ आदि से कठोर हो जाते है। जीर्ण होने पर शौच करते समय ये बाहर भी आ जाते हैं। इनमें से श्लेष्मा (Mucous) और रक्त (Blood) का स्राव होता है।

आन्तरिक अर्श की तीन अवस्थाएं पायी जाती हैं -

1st degree Piles - इस अवस्था में मलत्याग के समय श्लेष्मा व रक्त का स्राव व गुदा में दाह होता है।

2nd degree Piles - इस अवस्था में श्लेष्मा व रक्त स्राव के साथ-साथ अर्श का भी कुछ भाग गुदा से बाहर आने लगता है। परन्तु मल त्याग के उपरान्त स्वयं गुदा के अन्दर चले जाते हैं।

IIIrd degree Piles - इस अवस्था में अर्श मलत्याग के समय गुदा से बाहर आ जाते हैं परन्तु स्वयं अन्दर नहीं जाते बल्कि हाथ से गुदा के अन्दर डालना पड़ता है। इसका कारण Suspensory ligament का कमजोर होना है।

अर्श जीर्ण होता जाता है उसी के अनुसार उसकी असाध्यता बढ़ती जाती है।

Note - Internal Piles केवल 3, 7 व 11 O'clock पर ही पाये जाते हैं।

1. भूतपूर्व लेक्चरर (शल्यतंत्र विभाग), गुरुनानक महाविद्यालय, मुक्तसर (पंजाब),
2. मेडिकल ऑफीसर (आयुर्वेद), महर्षि बाल्मीकि हॉस्पीटल, नई दिल्ली - 39
प्रा०चिकित्सक, प्रथम क्लीनिक, एच-3/332, सेक्टर-16, नई दिल्ली-85

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आन्तरिक अर्श का रेखांकन -

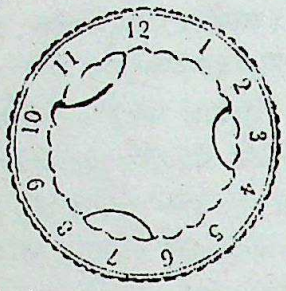

आतुर चयन -

आतुरों का चयन महर्षि बाल्मीकि चिकित्सालय के बहिरंग विश्राम संख्या 14 से किया गया ।

Note - अध्ययन हेतु केवल उन्हीं आतुरों का चयन किया गया जो केवल Internal Piles से प्रभावित हैं तथा जिनमें निम्नलिखित लक्षण थे -

1. Mucousdischarge peranum
2. Bleeding peranum
3. Irritation in Anus
4. Constipation
5. Anorexia

आतुरों का वर्गीकरण

औषधि का प्रभाव देखने के लिए आन्तरिक अर्श के तीनों अवस्थाओं वाले 20-20 आतुरों का चयन करके 3 वर्गो में विभाजित करके प्रत्येक वर्ग के 10 आतुरों को औषधि प्रयोग कराया गया व 10 रोगियों को Control Group में रखा गया ।

Pathological Investigation—
Proctoscopy
Blood test – TLC, DLC, ESR, Hb%
Stool test- OVA, cyst

औषध निर्माण-

सूरण कन्द (Amorphophallus Companulatus) के छिलके को साफ छोटे-छोटे टुकड़े करके उनका पुटपाक करके इन टुकड़ों को सुखाकर चूर्ण करके रख लेते है ।

औषध मात्रा - 6 ग्रा० सुबह व शाम ।

अनुपान - अनुष्ण जल ।

चिकित्सा अवधि - 30 दिन ।

पुनरावर्ती अवधि - 7 - 7 दिन पर ।

परिणाम मुल्यांकन - परिणाम मुल्यांकन के निधारण के लिए आन्तरिक अर्श में पाये जाने वाले लक्षणों को मापदण्ड का आधार माना गया है ।

परिणाम - रोगियों की एक माह के चिकित्सा के उपरान्त लक्षणों में मिले लाभ की प्रतिशता (%)सारिणी

Sl. No	Symptoms	Ist degree Piles		IInd degree Piles		IIIrd degree Piles	
		Treated Group	Placibo Group	Treated Group	Placibo Group	Treated Group	Placibo Group
1.	Mucous discharde	68	45	61	32	48	28
2.	Bleeding peranum	65	32	58	30	41	26
3.	Anal irritation	68	30	57	26	45	20
4.	Constiapotion	60	34	61	28	44	27
5.	Anorexia	62	32	41	34	50	18

रोगियों की एक माह की चिकित्सा के उपरान्त मिले लाभ का सारणीयन -

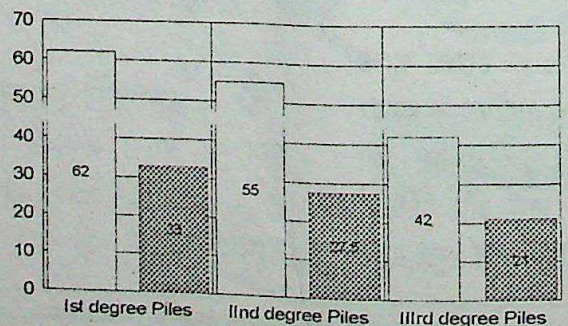

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिणाम विश्लेषण -

इन सारणियों को देखने से ज्ञात होता है कि Ist degree Piles के आतुरों को अन्य वर्गों की अपेक्षा सर्वाधिक लाभ - 62% हुआ है जबकि IInd degree Piles के आतुरों को 55% लाभ तथा IIIrd degree Piles के आतुरों को सबसे कम 42% लाभ मिला ।

इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि औषधि अर्श रोग पर प्रभावी है परन्तु सभी वर्गों पर इसका प्रभाव एक जैसा नहीं है । इसका कारण रोग की जीर्णावस्था है ।

Ist degree Piles के रोगी औषधि चिकित्सा साध्य है ।

IInd degree Piles के रोगी औषधि चिकित्सा याप्य है ।

चिकि-

IIIrd degree Piles के रोगी क्षार, अग्नि व शस्त्र चिकित्सा हेतु साध्य अथवा असाध्य है ।

सूरणकन्द चूर्ण आभ्यन्तर प्रयोग करने से यह अपने प्रभाव से अर्शोघ्न होने के कारण अर्श में लाभ करता है । इसके साथ ही कटु, कषाय रस व विपाक कटु होने के कारण यह कफ वात शामक है । कफ वात शामक होने के कारण इसके प्रयोग से सर्वप्रथम यकृत उत्तेजित होकर अग्नि को दीप्त करके बढ़े हुए कफ का पाचन कर स्रोत शुद्धि करता है । यकृत की क्रिया ठीक होने से वात का अनुलोमन होकर कोष्ठ शुद्धि होती है जिससे गुदामार्ग में उपस्थित सिरा पड़ने वाला दबाव कम होता है जिस कारण अर्शांकुर संकुचित हो जाते हैं । इस प्रकार अर्श में लाभ होता है ।

विमर्श ग्रन्थ -

1. चरक संहिता
2. सुश्रुत संहिता
3. माधव निदान
4. Text Book of Surgery – S .Das.
5. द्रव्यगुण विज्ञान - आ० प्रियव्रत शर्मा
6. भाव प्रकाश निघण्टु

वैद्यनाथ

शिलाजित्वादि बटी

इसके सेवन से वीर्य की क्षीणता, इन्द्रिय शिथिलता, स्वप्नदोष, टट्टी और पेशाब के साथ वीर्य जाना, याद्दाश्त की कमी, प्रमेह आदि रोग दूर होते हैं । पेशाब के साथ में चीनी आना भी रूक जाता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मधुमेह-विकार और सफल उपचार

वैद्य चन्द्रदेव मंडल

भारत की कुल जनसंख्या का लगभग तीन प्रतिशत मधुमेह ग्रस्त है । दुनियाभर में सबसे ज्यादा मधुमेह के रोगी भारतवर्ष में हैं, जो अत्यन्त दु:खद बात है ।

मधुमेह पर नियंत्रण किया जाना परमावश्यक है । यदि नियंत्रण नहीं किया जाता है तो शरीर की रक्त कोशिकाओं में 'कोलेस्ट्राल' (वसा) की बढ़त हो जाती है, जिससे रक्त संचालन में रुकावट होती है । फलस्वरूप आदमी को हृदयाघात, लकवा, टांगों में सूजन, और आँखों तथा गुर्दों का कष्ट भोगना पड़ता है ।

मधुमेह को वंशानुगत रोग भी कहा जाता है । क्योंकि जिसके माता-पिता, दादा-दादी या नाना-नानी को यह रोग हुआ रहता है, उसको भी मधुमेह होने का डर रहता है और लापरवाही बरतने पर उसे अक्सर हो भी जाता है ।

मधुमेह एक तरह से आजीवन ढोया जाने वाला रोग है, क्योंकि यह जड़ से प्राय: नहीं जाता है । उपायों से इस पर काबू पाया जाता है, पर प्रयास घटते ही यह अनियंत्रित हो जाता है ।

मधुमेह क्या है ?

शरीर के अन्त:स्रावी ग्रंथियों में एक है अग्न्याशय ग्रंथि, जिसे पेनिक्रियास ग्लैंड कहते हैं । इसी से इंसुलिन रस स्रावित होता है । इसका काम शरीर में भोजन से मिलने वाले शर्करा को नियंत्रण में रखना होता है । अग्न्याशय ग्रंथि (पेनिक्रियास ग्लैंड) पेट के ऊपरी हिस्से में काफी अन्दर होता है ।

जब अग्न्याशय ग्रंथि किसी कारण से शर्करा को नियंत्रित करने में असमर्थ होती है तो रक्तशुगर (ब्लड ग्लुकोज), शर्करा का बढ़ा हुआ अंश, शरीर में नाना प्रकार के विकार उत्पन्न करता है ।

नियंत्रित शर्करा की मात्रा शरीर को ऊर्जा देती है, किन्तु, बढ़ जाने पर, अनियंत्रण में होने पर, शर्करा का निकलना मूत्र के साथ होने लगता है । तब कहा जाता है कि वह व्यक्ति 'मधुमेह' का शिकार हो गया । इसे ही जन साधारण 'चीनी जाना' या 'चीनी की बीमारी' होना कहता है । इसे 'डायविटीज' भी कहते हैं । इससे शरीर का कार्य-कलाप दुष्प्रभावित होता है, शरीर में कितने ही प्रकार के लक्षण प्रकट होने लगते हैं ।

मधुमेह के खास-खास लक्षण

- मधुमेह होने पर प्रारंभिक दौर में ठीक-ठीक पता नहीं चलता । जब यह ज्यादा बढ़ जाता है और उपसर्ग खड़े करता है, तो पता चलता है । जैसे -पेशाब में शर्करा का उजले रूप में निकलना । उसमें चींटे लगना ।
- बार-बार पेशाब का लगना और पेशाब अधिक मात्रा में होने लगना इसमें होता है । प्यास अधिक लगती है और रोगी बार-बार पानी पीता है ।
- शरीर में ऊर्जा शक्ति की कमी हो जाना, कमजोरी आ जाना, भूख का अधिक लगना, शरीर मोटा होने पर भी कमजोरी महसूस होना इसमें होता है ।
- शरीर की वसा का कम होते जाना, मधुमेह ग्रस्त शरीर का वजन घटते जाना ।
- शरीर में थकान व दुर्बलता का जल्दी अहसास होना थोड़े परिश्रम से ज्यादा थक जाना ।
- आक्रान्त व्यक्ति के शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता कमी हो जाना, मसूड़ों का पकना, फोड़े हो जाना, घाव हो जाने पर या कट-फट जाने पर उसका भरना मुश्किल हो जाता है ।
- मानसिक रूप से भी आदमी इसमें बहुत थकान महसूस करता है । उसकी याददाश्त में भी कमी आ जाती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

- आँखों की ज्योति भी धीमी पड़ जाती है । आँख का रोग 'मोतियाबिन्द' भी उसको लग जाता है ।
- उसके ज्ञान-तंतु भी दुष्प्रभावित होते हैं । त्वचा की स्पर्श-चेतना कम हो जाती है । हाथ-पैर दुखने लगते हैं, उनमें सुन्नता आती है ।
- मन में निराशा घर करती है । यदि वह पुरुष हुआ तो उसमें नपुंसकता आने लगती है । यदि वह स्त्री है तो उसकी योनि के आस-पास खुजलाहट-सी मचती है। यदि स्त्री गर्भावस्था में होती है तो उसके गर्भपात का खतरा रहता है, गर्भ में भी शिशु की मौत हो सकती है, जन्म के तुरंत बाद भी उसके शिशु का मरण हो सकता है ।

मधुमेह की आशंका में जाँच

- मधुमेह होने की आशंका होते ही उसकी जाँच करा लेना उचित है ताकि उस पर समय से नियंत्रण रखा जा सके । जाँच व्यक्ति के खून एवं पेशाब की होती है।
- मधुमेह की जाँच एक बार बिल्कुल भूखे पेट में लिए गए खून से होती है । फिर दूसरी में भोजन के बाद, खासकर मीठा खाने के बाद लिए खून की होती है। मीठा खाने के दो-ढाई घंटे बाद जांच के लिए खून लिया जाता है ।
- पेशाब की जाँच के लिए सर्वाधिक उपयुक्त होता है रात्रि शयन के बाद जगने पर सुबह का पहला पेशाब स्वच्छ बोतल में सुरक्षित कर जाँच के लिए काम में लाना ।
- इसके अलावा उसके 'हिमोग्लोबिन' और 'कोलेस्ट्राल' की भी जाँच की जरूरत होती है, जब चिकित्सक की सलाह होती है ।
- मधुमेह में रक्तचाप की जाँच भी जरूरी हो जाती है, जिससे औषधि की तजबीज हो जाती है कौन-सी औषधि दी जाय, कौन-सी नहीं ।
- यदि मधुमेह का शक पक्का हो जाता है तो चिकित्सक के अनुसार औषधि चलने देना चाहिए । फिर भी खून व पेशाब की जाँच बीच-बीच में करवाते रहते हैं, जिससे पता चलता रहता है कि मधुमेह कितना नियंत्रित हुआ ।

मधुमेह के मुख्य कारण

- मधुमेह का मूलभूत कारण किसी वजह से पेनिक्रियास ग्रंथि का काम करना बंद हो जाना होता है, जिससे रक्त में ग्लुकोज की मात्रा बढ़ जाती है और उसका उपयोग शरीर को ऊर्जा देने में नहीं हो पाता है शरीर रोगी हो जाता है ।
- अन्य कारण को खोजें तो पायेंगे कि जिह्वा का स्वाद भी इसका कारण होता है । रसना के चलते मीठी वस्तु को हम चाव से खाते हैं, ज्यादा खाते हैं तरमाल उड़ाना चाहते हैं ।
- यौन-सुख पाने के लिए हम सहवास पर नियंत्रण नहीं करते हैं, बार-बार, अधिक बार सहवास करते हैं
- आदमी परिश्रम से भागता है, भौतिक सुख व विलास का जीवन ज्यादा से ज्यादा बिताने में लगा रहता है यह भी मधुमेह होने का कारण है ।

मधुमेह से उत्पन्न खतरे

- मधुमेह रोग जब अनियंत्रित हो जाता है, जटिल हो जाता है, तो प्राण पर संकट मंडराने लगता है ।
- मधुमेह रोग पुराना हो जाता है तो रोगी को डायबिटिक कोमा पैदा हो जाता है, जिसको मधुमेह के कारण होनेवाली बेहोशी कहते हैं ।
- मधुमेह के चलते कितनों की किडनी (गुर्दे) फेल हो जाती है और प्राण संकट में पड़ जाता है ।
- मधुमेह की वजह से अनेक लोग हृदय रोग के भी शिकार हो जाते हैं; जीवन के दिन घट जाते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by eGangotri Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

- बहुत से लोग मधुमेह ग्रस्त होने पर टी०बी० यानि यक्ष्मा जैसे प्राण घातक रोग के भी शिकार हो जाते हैं ।
- बच्चे भी मधुमेह रोग से आक्रान्त होकर अकाल मृत्यु की ओर बढ़ते हैं ।

मधुमेह पर नियंत्रण के उपाय

- मधुमेह पर नियंत्रण के तीन उपाय अब तक बहुत कारगर सिद्ध हुए हैं - 1. आहार-विहार को नियंत्रित करना 2. नियमित व्यायाम व योगासन को अपनाना और 3. योग्य-अनुभवी चिकित्सक के परामर्श में रहकर औषधियों का जरूरत के अनुसार सेवन करना ।
- चावल, आलू, गुड़, राब, ईख, शर्करा, मिठाई, ग्लुकोज, चीनी, चाय आदि रक्त में शर्करा उत्पन्न करने वाले खाद्य कम से कम लिए जायं । घी, मक्खन आदि वसा युक्त खाद्य भी मधुमेह के रोग में हानि पहुँचाते हैं । ये रक्तचाप व हृदय रोग को भी बढ़ाते हैं । विटामिन्स एवं खनिज लवण लेना अच्छा रहता है । हरी पत्तेदार साग-सब्जियों, सेव, संतरा, नाशपाती आदि फल लाभकारक हैं ।
- मधुमेह वालों के लिए मांसाहार की तुलना में शाकाहारी भोजन अधिक उपयुक्त होते हैं । अंडे का मन हो तो अंडे की जर्दी (पीले भाग) की बजाय उसका उजला भाग लेना अच्छा है ।
- मीठे के लिए मन ललचाए तो उसकी जगह सैकरीन की टिकिया सेवन करें, दूध-चाय में डालकर जी का जायका बदलें, मगर उबलती चाय या दूध में इसे न डालें ।
- मधुमेह के रोगियों में धूम्रपान, शराब, स्मैक, एल०एस०डी०, मेंड्रेक्स की लत होती है, तो उसे छोड़ देने पर कुछ और उम्र जीने की आशा बढ़ती है । सादा जीवन बितायें, विलास-सहवास कम करें ।
- व्यायाम के अन्य ढंग जरूर चिकित्सक की राय लेकर अपनाएं, पर खुली हवा में सांस लेना-टहलना सबको लाभ पहुँचाता है । बूढ़े और अपाहिज भी इससे ताजगी महसूस करते हैं ।

मधुमेह में घरेलू उपचार

- अमरूद के पेड़ से कुछ पत्ते तोड़ कर चबा लिया करें और ताजा पानी पी लिया करें । बहुत लाभ करता है ।
- ताजा करेला पीसकर रस निकालकर पी लें । मात्रा पाँच ग्राम प्रति खुराक पर्याप्त है । इसकी सब्जी भी खाएँ ।
- रोज कुछ मेथी के दाने जल के साथ निगल लिया करें । यह भी लाभदायक है । इससे रक्त में शर्करा कम होती है, 'कोलेस्ट्राल' भी घट जाता है ।
- बरगद के पेड़ की छाल का काढ़ा भी मधुमेह के रोगियों को लाभ पहुँचाता है ।
- गूलर के कच्चे फल की सब्जी खायें या पके फल खायें समान लाभ करता है । गूलर मधुमेह वालों के लिए बहुत अच्छा है ।

मधुमेह में औषधि-उपचार

- मधुमेह में बैद्यनाथ चन्द्र प्रभावटी का सेवन करें, यह लाभप्रद होता है और अनुभूत है ।
- मधुमेह के रोगियों को करेला, जामुन, मेथी दाना का सतत् उपयोग करते रहने से बहुत लाभ होता है ।
- नीम पत्र और बेल पत्र भी मधुमेह में औषधि स्वरूप हैं । बबूल की पत्तियाँ भी बहुत लाभ करती हैं ।
- बैद्यनाथ शिलाजीत मधुमेह की परीक्षित औषधि है । इसे चार-चार रत्ती की मात्रा में सुबह-शाम दूध के साथ सेवन करते हैं ।
- मधुमेह के बहुत से रोगी तो जामुन की गुठली और गुड़मार बूटी के सेवन से ठीक हो जाते हैं । दोनों का समान भाग चूर्ण रोज दोनों वक्त चार से छह ग्राम मात्रा में पानी के साथ लेना होता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

VACHA

(Acorus calamus Linn.)

*Dr. M. Paramkush Rao, MD (Ay.)
**Prof. Vaidya Mahesh Chandra Sharma

Prelude :

Ayurveda has suggested primarily herbs in whole state as medicines. Several permutations and combinations among limited number of herbs lead to thousands of preparations. Herbs are biological drugs. They probably possess certain amount of intelligence when used in whole state. For example, Opium's ingredient (Nalarphine) prevents or reverses effects of another ingredient i.e. Morphine. However, in the absence of Morphine, Nalarphine produces effects clearly similar to that of Morphine. (Goodman et.al. 1980). An herb used in whole state exerts a cumulative beneficiary effect on the recipient. An indepth multidisciplinary study and continuous reserch is required to appreciate inter and intra play of an herb and its successor (Human body). Enhanced insight into the nature will help in its effective management and conservation. Therefore, the current research on medicinal plants will help an Ayrvedicist to perform in tune with day's demand.

NOMENCLATURE :

Sanskrit	:	VACHA
Latin	:	*Acorus calamus Linn.*
Family	:	*Araceae*
English	:	Sweet Flag
Hindi	:	VACH, GHODHAVACH

PART USED :

Rhizome

HISTORY UPDATE :

Svetha (White) variety of VACHA mentioned by Bhavamisra and Pt. Narahari is also called as HAIMAVATHI. It indicates that the plant is available in the Himalayas. *Acorus gramineus Soland*, a variety found in the Himalayan range can be considered as HAIMAVATHI (Warier, P.K., 1993.)

PROPERTIES : (Bhavamisra, 17 AD)

RASA	:	TIKTA, KATU
GUNA	:	TIKSHNA
VIPAKA	:	KATU
VIRYA	:	USHNA
DOSA HARAKARMA	:	KAPHA VATHA HARA

SYSTEMATIC ACTIONS : (Bhavamisra, 17 AD)

1) AGNI VARDHAKA
2) SULA HARA
3) APASMARA HARA
4) UNMADA HARA
5) BHUTHAGHNA
6) JANTHUGHNA
7) MALA SHODHAKA
8) MUTRA SHODHAKA
9) LEKHANA
10) VAAMAKA (In larger doses)

CURRENT RESEARCHES:

1. SULA HARA KARMA:

The essential oil and crude Acorus root extracts in alcohol and water showed relaxing effect on isolated intestines of guinea pigs and rabbits. They also exhibited relaxing effect on isolated rat's uterus (Bose et.al. 1960).

In another study the essential oil and Asarone extracted from the essential oil of *A calamus* have shown relaxant and antispasmodic actions against various spasmogens on the ileum of rabbit, guinea pig and albino rats, rat's uterus, bronchial muscles of guinea pig, tracheal chain of dog and blood vascular muscles of rats (Das, P.K., 1962).

2. APASMARA & UNMADAHARA KARMA.

α-Asarone, and β - asarone extracted from essential oil of VACHA have prolonged the

* Asst. Professor, Dept. of Dravyaguna Vignyan, S.V.Ayurvedic College, Tirupati - 577501
** Professor & Head, Dept. of Dravyaguna Vignyan, National Institute of Ayurveda, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

hypnosis caused by synthetic sedatives (pentobarbital, hexabarbitol and ethanol) in mice. Asarone has shown hypoglycemic effect of Reserpine and chlorpromazine (Dandiya & Sharma, 1962).

The essential oil of VACHA has exhibited sedative and tranquilizing action in rats, mice, cats and dogs (Dhalla, 1968). Several other studies have also been conducted to establish its effect on central nervous system which has been categorized as anxiolytic drug (Ashok, 1997).

3.LEKHANA KARMA:

In a specific study Vacha along with ARJUNA bark and Sringi Bhasma has been given to rats to find their effect on atherosclerosis changes in rats. It has shown the ability to lower the increased levels of LDL, VLDL, serum cholesterol, Sr. triglycerides levels due both to high cholesterol diet as well as estrogen by parenteral route in albino male adult rat (Dubewar, 1998)

4. JANTHUDHNA KARMA :

The ether extract of VACHA was found stomach poison against *B.mori* larvae and sixty three times less toxic than DDT. It is also found ovicidal without any residual toxicity (Mukherjee, 1960).

SIMPLE THERAPEUTIC APPLICATIONS:

1. APASMARA: Dry and fry the VACHA rhizomes on hot plate until turns brown. Pound the fried into fine powder and preserve in an airtight container. Powder (100 to 200 mg) is given with ghee and honey twice in a day.

2.UNMADA : Add VACHA powder to all other medications prescribed for UNMADA to get better results.

3. BAHYA KRIMI : Pack Vacha Rhizomes in small cloth bags and keep under the pillows and cloths in the wards to avoid flies and bed bugs.

REFERENCES:

Ashok D.B. Vaidya *1997* 'The Status and Scope of Indian Medicinal Plants Acting on Central Nervous System' **Indian Journal of Pharmacology; 29:S340-S343.**

Bhavamisra, 17 AD. **Bhavaprakasha Nighantu** Hindi commentary by K.C. Chunekar et.al. – 1971- Chaukamba Sanskrit Sansthan, Varanasi, India.P.No. 43.

Bose, B.C., Vijay Vargiya, Saifi, A.Q. & Sharma S.K., 1960 'Some aspects of chemical and Pharmacological studies of *Acorus calamus Linn.* **Journal of American Pharmacological Association 49,** 32.

Dandiya, P.C. & Sharma, J.D. 1962 'Studies on *Acorus calamus Linn.* Part - I Pharmacological actions of Aserone and β-aserone on Central Nervous System' **Indian Journal of Medical Reserach 50,** 46.

Das, P.K., Malhotra, C.L. & Dhalla, N.S. 1962 'Spasmolytic activity of Aserone an Essential oil of *Acorus calamus Linn.* **Arch. International Pharmacodynamics, 135,**167.

Dubewa r, V.M. 1998 'Effect of Arjuna, Vacha and Mrugashrunga Bhasma in Dhamanipratichaya (Atherosclerosis) Animal Experiment' ***Proceedings of Update-Ayurveda' 98, PR:4, 11-14*** *Mumbai, India.*

Goodman, L.S.; Gilman, A.G. 1980, **The pharmacological Basis of Therapeutics,** Mac Millan Publishing Co. Inc. New York, P.No. 522, 601 & 603.

Mukherjee, T.D. & Govind Ram. 1960 'Studies on Indigenous Insecticidal Plants Part-I *Acorus calamus Linn.*' **Journal of Science and Industrial Research 19C,**112.

Warrier, P.K., 1993 **Indian Medicinal Plants** Orient Longman Ltd. Madras, India P.No.48

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

FOLK MEDICINE OF PATIALA FOR ARSHA (PILES)

Dr. Rajesh Sannd[1], Dr. Parveen Bansal[2], Dr. R.M.S. Bajwa[3], Dr.M.V.Acharya[4]

Piles are defined as the varicose condition of the internal hemorrhoidal plexus, which develops due to some idiopathic cause like constipation, diarrhoea, dysentery, faulty habits of defecation, dietary habits and some secondary cause like portal obstruction, weak support of hemorrhoidal venous plexus, pregnancy and abdominal tumors.

This disease does not have any exception in regard to the race or sex. Though the exact rate of incident is difficult to evaluate, but it can be said with certainty that a good number of people of both the sex suffer from piles. This disease is quite common in all state of social living. According to the modern medicine, the palliative treatments consist chiefly of injection treatment, which has its own complications. Therefore with the technical advancement in modern medicine recourse to surgical interventions has become the last work for the disease. In Ayurveda, treatment for piles is divided in to four types **THE AUSHADHA, THE KSHARA KARMA, THE AGNIKARMA** and **THE SHASTRA KARMA.** Usually patients want to adopt chronologically lesser drastic measures like medicine and avoid surgical procedures. So the medicinal treatment is quite acceptable and freely advocated by the physicians too.

From the O.P.D. being run at Central Research Institute (Ay.), Patiala, the data indicates that a number of patients suffer from this disease and on enquiring from the patinets, it was concluded that Vaidyas are using a number of different preparations to reduce the agony and cure piles. So with an idea to know about the folk medicine of local and peripheral areas, a personal contact programme was organized with Vaidyas. The plants they use for piles and their properties were enumerated and complied for the ready reference. Authors have tried to compile their specific effects to cure the piles and their actions on other ailments.

1. KATTHA

Local Name	KATTHA
Sanskrit	KHADIRA
Botanical name	Acacia catechu
Family	Leguminosae
Rasa	Tikta,
Guna	Laghu, Ruksha
Veerya	Sheeta
Vipaka	Katu
Prabhava	Kapha Pitta shamaka

Active components : Heartwood contains catechin and catachutanic acid.

Uses : Bark and heart wood used in leprosy, pruritis, wounds, asthma and stomatitis.

Dose : Stem bark powder 1-3 b.i.d. Bark decoction 50ml in divided doses, bark extract ½-1 gm b.i.d.

2. VACHA

Local Name	VACHA
Sanskrit	VACHA
Botanical name	Acorus calamus
Family	Araceae
Rasa	Katu tikta,
Guna	Laghu, tikshana
Veerya	Ushna
Vipaka	Katu
Prabhava	Kapha vata hara,medhya

Active components : Rhizome roots and leaves contain volatile oil asarone and betaasrone. Oil also contains phenyl propane derivatives.

Uses : Root and rhizome is used in rheumatic pain in joints, earache, psychosis, epilepsy, anorexia, distaste, and inflammation of throat, piles, hoarseness of voice, urinary calculi.

Dose : Rhizome powder 125-500 mg b.i.d. for internal use and 1-2 gm for emesis.

3. BIL

Local Name	Bil
Sanskrit	Bilva
Botanical name	Aegle marmelos
Family	Rutaceae

1. Assistant Research Officer (Ay.),
2. Research Officer (Biochemistry),
3. Assistant Research Officer (Ay.), 4. Assistant Director Incharge,
Central Research Institute (Ayu.), Patiala - 147 001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Rasa	Kashay, tikta
Guna	Laghu, ruksha
Veerya	Ushna
Vipaka	Katu
Prabhava	Grahi, dipan, vata hara.

Active components : Aegelinol.

Uses : Anti-oedematous, nervine tonic, antispasmodic, appetiser, digestive, anthelmentic, antidysenteric, hypoglycemic, febrifuge.

Dose : Unripe fruit syrup 20-40 ml in divided doses.

4. PYAJ, GANDHA

Local Name	PYAJ, GANDHA
Sanskrit	PLANDU
Botanical name	Allium cepa
Family	Liliaceae
Rasa	Madhur, katu
Guna	Guru, tikshana, snigdha
Veerya	Ushna (eshta)
Vipaka	Madhura
Prabhava	Vata Kapha hara, Pitta vardhaka

Active components : Bulbs contain essential oils known as onion oil containing alkyl and trisulphides, several phenolic acids, cepanone, nor cepanone and neodecanoic acid.

Uses : Bulb and seed used in sciatica, convulsions, earache, anorexia, piles, jaundice, cardiac diseases, cough, dysuria, skin diseases, haemorrhage and dysmenorrhoea.

Dose : Bulb juice 10-30 ml in divided doses.

5. KUMAR GANDAL

Local Name	KUMAR GANDAL
Sanskrit	kUMARI
Botanical name	Aloe vara
Family	Liliaceae
Rasa	Katu
Guna	Guru, snigdha, pichhila
Veerya	Sheeta
Vipaka	Katu
Prabhava	Kapha Pitta hara

Active components : Leaves contain Barbulion, glycoside and isobarbaloin, free arthraquinone like aloe emodin.

Uses : Fresh juice of leaves cathartic and refrigerent, used in abdominal disorders, worm infestations, skin and spleen diseases, piles, fistula, dysentery and Paittika disorders.

Dose : Leaf juice 10-20 ml, dry leaf mucilage powder 1gm- 3gm in divided doses.

6. BHANG

Local Name	BHANG, SUKHA
Sanskrit	VIJAYA
Botanical name	Canabis sativa
Family	Canabinaceae
Rasa	Tikta
Guna	Laghu tikshana
Veerya	Ushna
Vipaka	Katu
Prabhava	Madaka, Pitta vardhaka

Active components : Plant has cannabilolic acid, cannabidiol, cannabinol and evegenol.

Uses : Leaves, leaf resin, flowering and fruiting tops are used in piles, headache, insomnia, pain, diarrhoea, dysentery, stomach and uterine disorders.

Dose : Leaf poultice for external use and fumigation or fomentation.

7. TAHLI (SHEESHAM)

Local Name	TAHLI, SHEESHAM
Sanskrit	SHINSHPA
Botanical name	Dalbergia sissoo
Family	Papilionateae
Rasa	Kshaya, katu, tikta
Guna	Laghu, ruksha
Veerya	Ushna
Vipaka	Katu
Prabhava	Tridosh shamaka

Active components :

Uses : Leaf powder and decoction is used in diarrhoea and bleeding piles. Root extract powder is used in dysentery & worm infestation.

Dose : Root bark, leaf and stem bark extract 50-100 ml, powder 3-6 gm in divided doses.

8. DHATURA

Local Name	DHATURA
Sanskrit	DHATURA
Botanical name	Dhatura metel
Family	Solanaceae

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Rasa	Tikta, Katu
Guna	Laghu, ruksha
Veerya	Ushna
Vipaka	Katu
Prabhava	Kapha Vata shamaka.

Active components : Whole plant contains dhatura metelin A & B. Leaves contain dhaturilinol, alkaloid scopolamine and aerial parts contain hyoscine, hyoscyamine.

Uses : Leaf and seeds are used in asthma, dyspnoea, cough, eye diseases, scorpion sting bites, psychosis, epilepsy, fever, delirium, burning sensation and pain in piles.

Dose : Pessaries of seed and leaf are put in the anus to reduce pain in piles.

9. VAIVIDANG

Local Name	VAIVIDANG
Sanskrit	VIDANGA
Botanical name	Embelia ribes
Family	Myrsinaceae
Rasa	Katu, Kashaya
Guna	Laghu, ruksha, tikshna
Veerya	Ushna
Vipaka	Katu
Prabhava	Krimighana, Kapha Vata hara

Active components : Fruit contains embelin, quercitol, alkaloids, christembene.

Uses : Fruit used in worm infestations, anaemia, fistula, pain and vomiting.

Dose : Fruit powder 5-10 gm in divided doses.

10. THOHAR

Local Name	THOHAR
Sanskrit	SANUHI
Botanical name	Euphorbia nerrifolia
Family	Euphorbiaceae
Rasa	Katu
Guna	Laghu, tikshna
Veerya	Ushna
Vipaka	Katu
Prabhava	Kapha Vata shamaka

Active components : Latex contains cycloaratana, cycloartenol, cyclo encaenol and caoutchouc.

Uses : Latex in used in piles and fistula, and preparation of *KSHARA SUTRA.*

Dose : local application on pile masses and preparation of KSHARA SUTRA.

11. KUDA

Local Name	KUDA
Sanskrit	KUTAJA
Botanical name	Holarrhena antidysentrica
Family	Apocynaceae
Rasa	Tika, Kashaya
Guna	Laghu, ruksha
Veerya	Sheeta
Vipaka	Katu
Prabhava	Kapha Pitta shamaka

Active components : Root bark contains conessine, holarrhenine, seeds and fruits contain triacontin and drying oil.

Uses : Bark and seeds are used in piles, haemorrhagia, leprosy, worm infestations, thirst, pain, diarrhoea, dysentery and erysipelas.

Dose : Root-bark decoction 20-30, fruit and seed powder 3-6 gm. in divided doses.

12. KARELA

Local Name	KARELA
Sanskrit	Karvellak
Botanical name	Memordica charantia
Family	Cucurbitaceae
Rasa	Tikta, katu
Guna	Laghu, ruksha
Veerya	Ushna
Vipaka	Katu
Prabhava	Tridoshahara.

Active components : Charantin.

Uses : Leprosy, Edema, Anorexia, Rheumatism, Piles, Liver disorders, Obesity, Urticaria, Diabetes, Wound Healing, Antiseptic.

Dose : Dry fruit and seed powder 3g t.i.d., Fresh fruit juice 10-20 ml b.i.d.

13. DHAREK

Local Name	DHAREK
Sanskrit	MAHANIMBA
Botanical name	Melia azadirach
Family	Meliaceae
Rasa	Katu
Guna	Laghu, ruksha
Veerya	Ishta ushna
Vipaka	Tikta Katu
Prabhava	Tridosha hara

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Active components : fruits contain malianoninol, melianol, melianone. Seeds contain limonoid glycoside and drying oil.

Uses : Root, bark and seed kernel is used in leprosy, disorders of blood and abdomen, fever, polyuria, piles, sciatica and dyspnoea, anti-haemorrhagic, astringent.

Dose : Seed kernel powder 1-3 gm. in divided doses. If used in excess it may lead to toxic effects causing paralysis and even death.

14. CHHUI MUI

Local Name	CHHUI MUI
Sanskrit	LAJJALU
Botanical name	Mimosa pudica
Family	Mimosidae
Rasa	Kashaya, tikta
Guna	Laghu ruksha
Veerya	Sheeta
Vipaka	Katu
Prabhava	Kapha Pitta shamaka

Active components : Leaves contain phytochromes.

Uses : Root, whole plant used in diarrhoea, dyspnoea, leprosy, uterine disorders, heamorrhage, wounds, oedema and burning sensations.

Dose : Whole plant is used as juice/ decoction 10-20 ml. in divided doses.

15. ISBGOL

Local Name	ISBGOL
Sanskrit	ASHAVGOLA
Botanical name	Plantago ovata
Family	Plantaginaceae
Rasa	Madhur
Guna	Snigdha, Guru, Pichhila
Veerya	Sheeta
Vipaka	Madhur
Prabhava	Vata Pitta Shamaka

Active components : Seeds contains xylose, arabinose, galacto uronic acid, rhamnose and a fixed oil called aucubin.

Uses : Seed husk is used in diarrhoea, dysentery and piles.

Dose : 5-10 gm. seed husk with warm milk in the evening.

16. CHITRAKA

Local Name	CHITRAKA
Sanskrit	CHITRAKA
Botanical name	Plumbago zeylenica
Family	Plumbaginaceae
Rasa	Katu
Guna	Ruksha, Laghu, Tikshna
Veerya	Ushna
Vipaka	Katu
Prabhava	Kapha Vata Shamaka

Active components : Roots contain plumbagin, droserone, elliptionone and plumbazeylanone. (Sp. Eff.). Increases the process of digestion and metabolism.

Uses : Roots used in piles, worm infestation, anaemia, anorexia, fever, bronchial asthama.

Dose : Root bark powder 1 gm b.i.d.

17. MUNG

Local Name	MUNG
Sanskrit	MUDAK PARNI
Botanical name	Phaseolus trilobus
Family	Leguminosae
Rasa	Madhura
Guna	Laghu, ruksha
Veerya	Sheeta
Vipaka	Madhura
Prabhava	Tridoshahara

Active components : Phaseolin and trilobin.

Uses : It is used in diarrhoea, dysentery, ulcerative colitis, epistaxis and spermato-urea. Antiinflammatory, Anti haemorrhagic and Rejuvenative.

Dose : Whole plant decoction 50-100 ml. in divided doses.

18. KALIHARI

Local Name	KALIHARI
Sanskrit	LANGLI
Botanical name	Gloriosa superba
Family	Liliaceae
Rasa	Katu, tikta
Guna	Laghu, tikshna
Veerya	Ushna
Vipaka	Katu
Prabhava	Kapha Vata shamaka

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Active components : Colchicine, gloriosin, benzoic acid are found in stem.

Uses : Tubers are used in leprosy, piles, worm infestations, oedema, wounds and pain.

Dose : 250-500 mg in divided doses.

19. NAG KESHAR

Local Name	NAG KESHAR
Sanskrit	NAG KESHAR
Botanical name	Masua ferria
Family	Convolvulaceae
Rasa	Kashaya, tikta
Guna	Laghu, ruksha
Veerya	Isht ushna
Vipaka	Katu
Prabhava	Kapha Pitta shamaka

Active components : Flowers contain volatile oils. Stamens contain β-amyrene, β-sitosterol, masuaferol.

Uses : It is used in the diseases of head, throat and urinary bladder, nausea, vomiting, leprosy, thirst and **as antihaemorrhagic in bleeding piles.**

Dose : Stamen powder 1-3 gm in divided doses.

20. MOCHRASA

Local Name	MOCHRASA
Sanskrit	SHALMALI
Botanical name	Salmalia malberika
Family	Bombacaseae
Rasa	Kashaya
Guna	Snigdha, Guru, Pichhila.
Veerya	Sheeta
Vipaka	Katu
Prabhava	Kapha Pitta Shamaka

Active components : It contains catecol, tannins, tannic acid and gallic acid.

Uses : Stem resin is used in piles as a wound healer and antihaemorrhagic. Its fruit is aphrodiasic.

Dose : Stem resin 1-3 gm in divided doses.

References :

1. Charaka Su. Sth.
2. Sushruta Su.Sth.
3. Chakradatta.
4. Bhavaprakasha Nighantu.
5. Ashtanga Samgraha.
6. Wealth of India.
7. Flora of British India.
8. Medicinal Plants of India.
9. Glossary of Indian Medicinal Plants vol. I,II.
10. Botany of Bihar and Orissa.

LIBRARY
Gurukul Kangri Vishwavidyalaya
HARDWAR

बैद्यनाथ
पंचसकार चूर्ण
पेट साफ कर पाचन शक्ति को बढ़ाता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A clinical study of Shankha Bhasma alone and along with Amalaki Churna in the management of Amlapitta

* Z.G. Tank, $ P.R. Joorawon, # A.K. Choudhary, ## Prof. D. Pande

ABSTRACT

Shankha Bhasma and Amalaki Churna are known to have antacid property. A study was conducted to assess the comparative therapeutic efficacy of Shankha Bhasma alone and along with Amalaki Churna in the management of Amlapitta. In the present study, the Shankha Bhasma was prepared by traditional method and tablets were prepared out of it. While marketed Amalaki was utilized in the form of Churna. 104 patients were selected from the O.P.D. of the I.P.G.T. & R.A. hospital, Jamnagar. Both the trial drugs showed very good response clinically, but comparatively the total effect of therapy was better in Shankha Bhasma alone treated group.

Key words - Shankha Bhasma - Amalaki Churna - Amlapitta - antacid effect.

INTRODUCTION

As mentioned in Charak Samhita, life span of human being has been decreasing by ¼th with each Yuga. Various diseases evolving due to changes in human life style is responsible in reducing life span.

'Hurry, Worry & Curry'

These 3 words reflect the life style of man of this century. They also reflect the 3 major causes of various physical, mental & psychosomatic disorders which have cropped up since last few years. Amlapitta is a common disease which has its root cause in hurry, worry & curry. Being a common disease, it is often over looked by man and by the time medical intervention is sought the disease is already associated with several complications.

Shankha Bhasma is a widely used Ayurvedic formulation indicated for various conditions such as indigestion, Amlapitta, loss of appetite, etc. On the basis of references found in Rasa Tarangini :-

Dhatri Churna Samyuktastu Amlapittam Vinashayeta II *(R.T. 12/23)*

An attempt was made to counteract Amlapitta by using Shankha Bhasma & Amalaki Churna on patients attending the O.P.D. of I.P.G.T. & R.A. hospital Jamnagar.

MATERIALS AND METHODS

All the patients with complaints of Amlapitta were included in this study. Initially routine haematological and biochemical investigations such as Hb, TLC, DC, PCV, ESR, TRC, blood sugar, serum cholesterol, serum calcium, total protein, blood urea and routine urine and stool examination where carried out to rule out other associated pathological conditions and diseases.

Out of 104 cases, 52 cases were treated with Shankha Bhasma tablet 500 mg with water thrice a day orally and 52 cases were treated with Shankha Bhasma tablet in the same does along with 2 gm Amalaki Churna with water thrice a day orally. The patients were advised to avoid spicy, fermented, sour food. The duration of treatment was fixed for 21 days in both the groups with 1 month of follow up. The criteria for the assessment of response of therapy were fixed as follows.

1) Complete remission :
   76% to 100% relief in the signs & symptoms.
2) Markedly improved :
   51% to 75% relief in the signs & symptoms.
3) Improved :
   26% to 50% relief in the signs & symptoms.
4) Unchanged :
   Below 25% relief in the signs & symptoms.

PREPARATION OF THE DRUGS

a. Shankha Bhasma

The preparation of the Shankha Bhasma was carried out in 3 phases -

1. *Shankha Shodhana* - Shankha Nabhi obtained from the Pharmacy of Gujarat Ayurved University, was subjected to

* PhD scholar, Dept. of Rasa Shastra & Bhaishajya Kalpana
$ PhD scholar, Dept of Kaya Chikitsa,
# Lecturer, Dept. of Rasa Shastra & Bhaishajya Kalpana
Retired Professor & Head of Dept. of Rasa Shastra & Bhaishajya Kalpana.
Institute of Post Graduate Teaching & Research in Ayurveda, Gujarat Ayurveda University, Jamnagar.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Shodhana in Kanji using Dola Yantra for 3 hours.

Shankha Bhasma - Shuddha Shankha Nabhi thus obtained was incinerated by giving 3 Gaja Putas as per reference of Rasatarangini 12/13. Kumari Swarasa was used as Bhavana Dravya prior to 2nd and 3rd Putas. 300 cow dung cakes were utilized for each Puta and temperature range was between 750-800° C.

Tablet making - Tablets weighing 500 mg were prepared using gum acacia as binding agent in ratio of 1:3.

b. *Amalaki Churna*

Amalaki Churna was purchased from the market.

DISCUSSION

Maximum no. of patients (47.1%) was from the age group of 31-40 yrs. People of this age group are having Pitta Dosha dominancy by nature. 75% of patients were male. This may be due to faulty dietary habit, increased stress and strains among males and also due to habits like smoking, pan chewing, alcohol etc. Majority of patients (43.3%) were labourers. 47.1% were having education up to primary level. 44.2% were having the disease since 1-5 yrs. This may be because patients are reluctant to seek medical advice. Initially they suppress it by taking antacids or home remedies but when they fail, they report to hospital. Shankha Bhasma therapy provided statistically highly significant relief in 19 symptoms of Amlapitta as shown in table whereas 16 symptoms were relieved by Shankha Bhasma given along with total effect of therapy. Although both the trial drugs showed very good response clinically but comparatively the total effect of therapy was better in group treated with Shankha Bhasma group while in combination with Amalaki Churna group it was 25%. Marked improvement was found in 28.8% of patients in combination of Shankha Bhasma and Amalaki Churna group while it was 21.2% in Shankha Bhasma alone group. 5.8% and 3.8% patients remained unchanged in Shankha Bhasma and Amalaki Churna group and Shankha Bhasma group respectively.

CONCLUSIONS

It can be concluded from the above study that :-

1. Shankha Bhasma alone was found to give better clinical response compared to its combination with Amalaki Churna.
2. Shankha Bhasma which is the cheaper, easily available and can be prepared easily is a dependable drug for the treatment of Amlapitta.
3. Shankha Bhasma can be prepared in tablet form while maintaining its therapeutic efficacy, for easy palatability and maintenance of dose.
4. Both the drugs under clinical showed non significant effect on Haematological and Biochemical parameters.

OBSERVATIONS

The age, sex, occupation, education, chronicity, efffect of therapies on signs and symptoms and total effect of therapies have been tabulated.

Table 1

Age wise distribution of 104 patients of Amlapitta

Age	No. of Patients		Total	Percentage
	ASB	SB		
20-30	03	10	13	12.5
31-40	28	21	49	47.1
41-50	12	11	23	22.1
> 50	09	10	19	18.3

Table 2

Sex wise distribution of 104 patients of Amlapitta

Sex	No. of Patients		Total	Percentage
	ASB	SB		
Male	38	40	78	75
Female	14	12	26	25

Table 3

Occupation wise distribution of 104 patients of Amlapitta

Occu-pation	No. of Patients		Total	Percentage
	ASB	SB		
House work	09	07	16	15.4
Service	15	14	29	27.9
Labourer	20	25	45	43.3
Business	08	06	14	13.5

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Table 4

Education wise distribution of 104 patients of Amlapitta

Educational Status	No. of Patients		Total	Percentage
	ASB	SB		
Uneducated	08	06	14	13.5
Primary	24	25	49	47.1
Hi.Secondary	08	12	20	19.2
Graduation	11	08	19	18.3
Postgraduation	01	01	02	01.9

Table 5

Chronicity wise distribution of 104 patients of Amlapitta

Duration of the diseases	No. of Patients		Total	Percentage
	ASB	SB		
< 6 mth.	05	09	14	13.5
6 mth - 1 yr	06	12	18	17.3
1 - 5 yr	29	17	46	44.2
> 5 yr	12	14	26	25.0

Table 6

Effect of signs & symptoms of ASB group

Signs & Symptoms	B.T.	A.T.	% of Relief	S.D. ±	S.E. ±	t value	p value
Amlodgara	2.17	0.74	65.9	0.815	0.138	10.37	<0.001
Tiktodgara	1.88	1.00	46.8	0.333	0.111	08.00	<0.001
Kanthadaha	1.90	0.67	64.7	0.831	0.181	06.83	<0.001
Urovidaha	3.19	1.08	66.1	1.036	0.173	12.23	<0.001
Karadaha	1.83	0.83	54.6	0.632	0.258	03.87	<0.01
Padadaha	1.43	0.43	69.9	0.577	0.218	04.58	<0.01
Shiroruk	1.88	0.35	81.4	0.647	0.127	12.13	<0.001
Vanti	2.13	0.46	78.4	0.724	0.187	08.92	<0.001
Aruchi	2.73	1.27	53.5	1.057	0.225	06.46	<0.001
Murccha	4.00	2.00	50.0	-	-	-	-
Kandu	1.17	0.17	84.5	0.632	0.258	3.87	<0.01
Bhrama	1.87	0.40	78.6	0.640	0.165	8.88	<0.001
Gurukostha	2.79	1.39	50.2	0.945	0.179	7.40	<0.001
Angasada	2.00	0.75	62.5	0.957	0.479	2.61	>0.05
Avipaka	2.62	1.46	44.3	0.80	0.222	5.20	<0.001
Klama	2.38	1.00	58.0	0.744	0.263	5.23	<0.01
Gaurava	2.60	1.00	61.0	0.828	0.214	6.55	<0.001
Kaphanisthi	1.50	0.50	66.7	0.000	0.000	0.00	>0.05
Sleshmalipta	1.50	0.50	66.7	0.000	0.000	0.00	-
Nindra	2.00	0.00	100	1.414	1.000	2.00	>0.05
Trishna	1.00	0.00	100	-	-	-	-
Moha	1.00	0.00	100	-	-	-	-
Hridshula	2.79	1.21	56.6	0.879	0.167	9.46	<0.001
Udaradhman	3.15	1.70	46.0	0.711	0.124	11.75	<0.001
Antrakunjana	2.25	1.50	33.3	0.500	0.250	03.00	>0.05
Romharsh	1.00	0.00	100	-	-	-	-
Tamodarshan	2.00	0.38	81.1	0.518	0.183	8.88	<0.001
Kampa	1.50	0.00	100	0.707	0.500	3.00	>0.05
Jrimbha	1.00	0.00	100	-	-	-	-
Daha	2.36	0.82	65.3	0.820	0.247	6.25	<0.001
Sweda	1.33	0.00	100	0.577	0.330	4.00	<0.02

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Mandal	3.00	2.00	33.3	-	-	-	-
Amlotklesha	2.38	1.00	56.0	0.744	0.263	5.23	<0.01
Utklesha	3.00	2.00	33.3	1.00	0.577	1.73	>0.05
Ahlash	2.00	0.37	81.5	0.692	0.159	8.94	<0.001
Vidbheda	2.4	1.00	58.3	1.34	0.600	2.33	>0.05

Table 7

Effect of ASB on haematological parameters

Haemato. test parameters	B.T.	A.T. Mean diff.	% of Relief	S.D. ±	S.E. ±	t value	p value
Hb. (Gm%)	14.79	14.67	0.81	0.44	0.13	0.89	>0.1
T.L.C. (per Cu.mm)	7835	8089.7	3.25 ↑	1191.7	217.58	1.19	>0.05
E.S.R. (mm 1st hr.)	16	12.72	20.5 ↓	3.82	1.15	2.84	<0.05

Table 8

Effect of ASB on Biochemical parameters

Biochem Value	B.T.	A.T. Mean diff.	% of Relief	S.D. ±	S.E. ±	t value	p value
S.Ca.	10.94	10.93	0.09 ↓	0.66	0.20	0.05	>0.01
S.Chol.	261.85	241.26	7.86 ↑	83.96	34.28	0.34	>0.1
B. Urea	23.33	25.19	7.97 ↑	16.97	1.45	0.63	>0.05
T. Protein	7.34	7.60	3.54 ↑	0.61	0.12	-0.01	>0.05

Table 9

Effect on signs & symptoms of SB group

Signs & Symptoms	B.T.	A.T.	% of Relief	S.D. ±	S.E. ±	t value	p value
Amlodgara	2.03	0.75	57.64	0.872	0.162	10.86	<0.001
Triktodgara	1.71	0.00	100	0.488	0.184	09.30	<0.001
Kanthadaha	1.66	0.39	76.5	0.913	0.200	06.70	<0.001
Urovidaha	2.98	0.56	81.2	0.865	0.135	17.87	<0.001
Karadaha	1.25	0.00	100	0.463	0.164	07.64	<0.001
Padadaha	1.22	0.00	100	0.441	0.147	08.32	<0.001
Shiroruk	1.90	0.45	76.3	0.870	0.161	08.97	<0.001
Vanti	1.66	0.00	100	0.816	0.333	05.00	<0.01
Aruchi	2.22	0.56	74.8	0.784	0.151	11.04	<0.001
Murccha	3.00	0.00	100	-	-	-	-
Kandu	1.83	0.00	100	0.753	0.310	5.97	<0.01
Bhrama	1.44	0.125	91.7	0.602	0.150	8.72	<0.001
Surukostha	2.66	1.30	51.1	0.895	0.156	8.75	<0.001
Angasada	1.29	0.28	78.3	0.577	0.218	4.58	<0.01
Avipaka	2.37	1.00	57.8	0.684	0.157	8.72	<0.001
Klama	1.55	0.11	92.9	0.527	0.176	8.22	<0.001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Gaurava	2.19	0.69	68.5	0.816	0.204	7.35	<0.001
Kaphanisthi	1.66	0.00	100	1.155	0.670	2.50	>0.05
Sleshmalipta	1.00	0.00	100	-	-	-	-
Nindra	1.50	0.00	100	0.707	0.500	3.00	>0.05
Trishna	1.80	0.20	88.9	0.548	0.245	6.33	<0.01
Moha	1.00	0.00	100	-	-	-	-
Hridshula	2.62	0.59	77.5	0.673	0.116	17.57	<0.001
Udaradhman	2.77	1.08	61.0	0.759	0.121	14.13	<0.001
Antrakunjana	2.00	0.625	69.0	0.744	0.263	05.23	<0.01
Romharsh	1.00	0.00	100	-	-	-	-
Tamodarshan	1.66	0.00	100	0.516	0.218	7.90	<0.001
Kampa	1.00	0.00	100	0.00	0.00	0.00	>0.05
Jrimbha	1.50	0.00	100	0.707	0.500	3.00	>0.05
Daha	2.08	0.23	88.9	0.987	0.274	6.74	<0.001
Sweda	1.66	0.00	100	0.578	0.330	5.00	<0.05
Mandal	1.66	0.00	100	0.578	0.330	5.00	<0.05
Amlotklesha	2.29	0.71	69.0	0.534	0.202	7.78	<0.001
Utklesha	1.50	0.00	100	0.707	0.500	3.00	>0.05
Hrilash	1.71	0.09	94.7	0.740	0.161	10.03	<0.001
Vidbheda	1.80	0.20	88.9	0.894	0.400	4.00	<0.02

Table 10

Effect of SB on haematological value

Haemato. test parameters	B.T.	A.T.	% of Relief	S.D. ±	S.E. ±	t value	p value
	Mean diff.						
Hb. (Gm%)	13.99	14.16	1.21 ↑	0.52	0.14	-2.03	>0.1
T.L.C. (per Cu.mm)	8027.1	7892.5	1.68 ↓	1354.2	276.4	0.49	>0.05
E.S.R. (mm 1st hr.)	8.57	7.38	1.19 ↑	3.15	0.28	6.10	<0.05

Table 11

Effect of SB group on biochemical value

Biochem Value	B.T.	A.T.	% of Relief	S.D. ±	S.E. ±	t value	p value
	Mean diff.						
S.Ca.	10.11	10.62	0.51 ↑	1.12	0.32	-1.57	>0.1
S.Chol.	253.77	210.38	17.10 ↓	65.15	29.14	1.28	>0.1
B. Urea	27.00	25.80	4.44 ↓	6.57	1.34	0.84	>0.05
T. Protein	7.49	7.49	-	0.40	0.08	0.15	>0.05

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Table 12

Total effect of both drugs

Result	No. of pt. ASB	%	No. of pt. SB	%
Complete Remission	13	25	25	48.1
Improvement	15	28.8	11	21.2
Partial Imp.	08	15.4	03	05.8
Unchanged	03	05.8	02	03.8

SB - Shankha Bhasma group. ASB- Shankha Bhasma with Amalaki Churna group.
↓ - Decrease ↑ - Increase

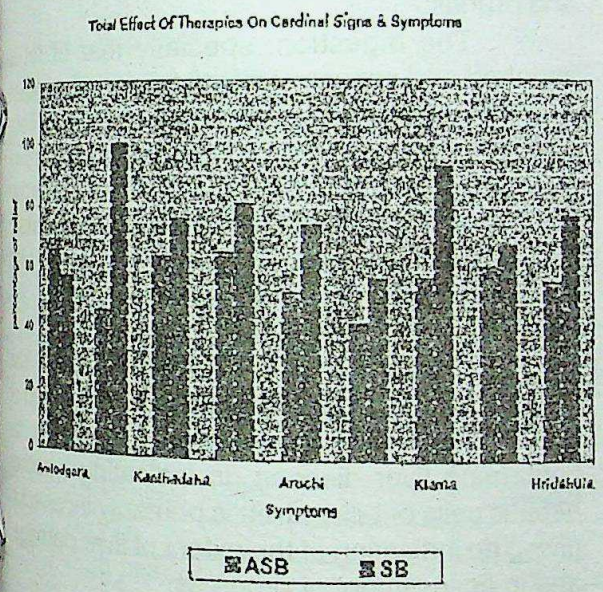

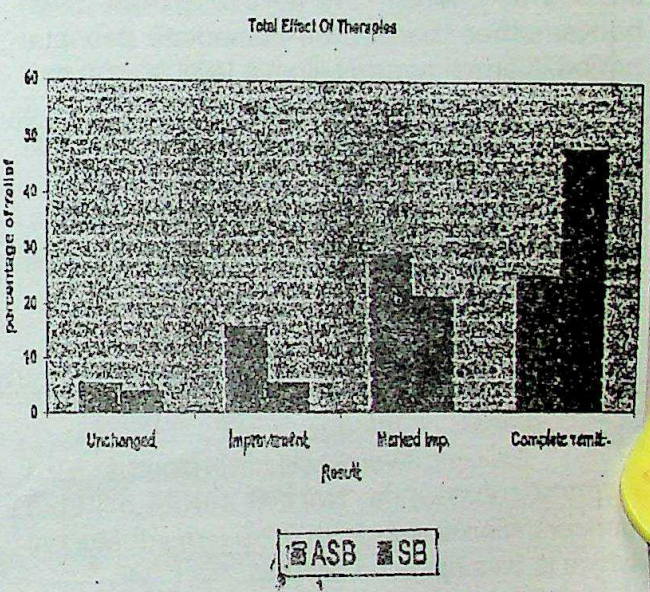

REFERENCES

1. Madhava Kara, ***Madhava Nidana - part 2,*** Madhukosha Sanskrit comm. by Shri Vijay Rakshit & Shri Kantha Dutta - Vidhyotini Hindi comm. by Shri Sudarshan Shastri, Amlapitta Adhyaya, 21st edi. published by Chaukhamba Sanskrit Sansthana, Varanasi 1993, pg. no. 170, 171 & 172.
2. Sadananda Sharma - ***Rasatarangini 12th taranga,*** 11th edi. published by Shri Jainendra Press, New Delhi, 1994, pg.no. - 285, 286, 287, 288.
3. R.S. Satoskar - ***Pharmacology & Pharmacotherapeutics,*** 14th edi. published by Bombay popular prakashana, 1995.
4. Arun Das - A comparative Pharmacoclinical Study of Shukti Bhasma & Shukti Pisti on Amlapitta (MD Thesis), 1994.
5. Momin Ali - Kapardika Tatha Shukti Bhasma Ka Amlapitta Mein Tulnatmak Adhyayan (MD Thesis), 1974.
6. Parmar N.S. & Parmar Shikha, Anti ulcer potential of flavonoids, Indian J. Physio. Pharma. 1998, 42:343-351.
7. Divakar Bhagyashri & Gadkar Swati, Studies on micromeritic & compressional properties of Shankha Bhasma granules, Indian J. Physio. Pharma. 1997, 59:225-229.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Clinical & Diagnostic Study of Jaundice (Kamala) with Management

1. Dr. Avadhesh Kumar, M.D.Sch.
2. Dr. Ashwini Kumar Sharma, Ph.D. (Ay.)
3. Prof. Lok Nath Sharma, M.D., Ph.D. (Ay.)

INTRODUCTION :

Clinical Jaundice is characterised by the yellow appearance of skin, mucous membrane, sclerae of eye. It is caused by excessive circulation of bile pigment (Pitta) in the blood and increased bilirubin concentration in the body fluids. It is detectable clinically when the bilirubin concentration in blood exceeds 2.5 mg/dl. Although internal tissues (elastic tissue) and body fluids are coloured yellow but the brain is not so stained as bilirubin can not cross blood brain barrier other than in the immediate neonatal period. Normal serum bilirubin level is <1.0 mg/dl.

Yellow colouration of tissue body fluid may arise due to -

1. Increased bile pigment load to liver.
2. Affection of bilirubin diffuse into the liver cells.
3. Defective conjugation.
4. Defective excretion &
5. Other cause of jaundice carotenemia & mepacrine therapy.

Elevated level of bilirubin in blood is called hyperbilirubinaemia. Normal serum bilirubin concentration ranges from 0.2-0.8 mg/dl. Most of which is unconjugated bilirubin.

A rise of serum bilirubin between normal and 2 mg/dl is generally not accompanied by visible jaundice and is called Latent Jaundice.

In infants the rise in conjugated bilirubin may produce to toxic injury called Kernicterus.

The liver is responsible for the production of bile. If there is an obstruction in the bile duct, or impairment of the function of the liver or excessive destruction of R.B.Cs., then bile pigment appears in excess in the blood. Normally they came out of the body through urine and stool.

If however, there is an obstruction in the bile duct, then it dose not come out through the bowels. Normal stool gets its characteristics colour because of bile and if there is an obstruction in bile duct, then the stool becomes paler to white in colour (तिलाष्टिनिभ). The urine however, continues to excessively yellow in all types of jaundice.

SIGNS AND SYMPTOMS :

A part from the yellowness of eyes, skin, hepatomegally splenomegally and anaemia, many other symptoms are manifested depending upon the cause of jaundice lead to anorexia, indigestion, pale urine, fever, fatigue, weakness and pruritis.

The digestion; specially that of fat is impaired and consequently the patient becomes exceedingly weak. Destruction of red blood cells and circulating of bile pigment in excessive quantity result in the impairment of the oxidation of the tissue cells resulting in defective metabolism and associate complaints, there may be itching all over the body e.g. obstructive jaundice.

LABORATORY INVESTIGATION :

Jaundice disease develops due to the disorder of liver function, so there is a group of tests done which are useful in revealing or confirming liver disease, in indicating whether hepatic cells or biliary tree is primarily involved in giving an indicating of the extent of liver damage, and in assessment of progress.

We can advise many labcratory tests for diagnosis of jaundice as given bellow -

1. Haemoglobin : Hb%, TLC, DLC, ESR.
2. Urine bilirubin - (Present in obstructive & Hepatocellular jaundice). Urobilinogen in urine. Urobilinogen usually absent in obstructive jaundice, but present in Haemolytic jaundice).
3. Stool test for bilirubin & Urobilinogen.
4. Liver Function Test :
   - A) Serum Bilirubin ↑
   - B) Serum Enzyme
   - a) S.G.O.T. ↑

1. M.D. Scholar (Patho), Deptt. of Rog Vikriti Vigyan, N.I.A., Jaipur - 302002
2. M.D. (Ay.), Ph.D. (Ay.), Medical Officer.
3. Prof. & Head, Deptt. of Rog Vikriti Vigyan, N.I.A., Jaipur- 302003

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

b) S.G.P.T.↑
c) Alkaline Phosphate↑ (Obstructive jaundice)

C) Serum Protein
a) Total Protein
b) Albumin↓ (Chronic liver diseases)
c) Globulin↑ (Viral Hepatitis)
d) A/G Ratio↑ (Chronic liver diseases).

D) Lipid Profile
a) Serum Tryglyceride
b) Serum Cholesterol
c) LDL↑
d) HDL↑
e) VLDL↑

E) Serological test
a) Hepatitis A Virus
b) Hepatitis B- Virus (HBsAg-Australion Antigen) + ve.

F) Immunoelectrophoresis
a) IgG ↑ in cryptogenic cirrhosis and subacute viral hepatitis.
b) IgA ↑ in alcoholic cirrhosis.
c) IgM in biliary cirrhosis.

5. USG of Abdomen do diagnose for liver cirrhosis, hepatomegaly, carcinoma of liver and gall stone, etc.

6. Liver Biopsy : To diagnose the cause of hepatocellular jaundice and of hepatomegaly and in demonstrating the presence of cirrhosis, alcoholic hepatitis, chronic hepatitis, biliary corrhosis and carcinoma.

7. Prothombin Time : Prothrombin time is most valuable prognostic indicator in both acute (Viral hepatitis) and chronic hepatitis.

8. Bromosulphathalein Test (BSP) : By staining with BSP & indocyanine green are taken up by the liver and excreted in the bile.

9. Turbidity and flocculation test of protein e.g. thymolturbidity - for Gamma (β) protein and cephalin flocculation - Gamma globulin.

Abnormal results is seen intrinsic hepatic disease e.g. hepatitis, cirrhosis and normal in patients with obstructive jaundice.

DIFFERENTIAL DIAGNOSIS

		Hepatocellular Jaundice	*Obstructive Jaundice*	*Haemolytic Jaundice*
I.	**HISTORY**			
1.	Abdominal Pain	Absent	Present	Present in cries
2.	Pruritis	Transient	Marked	Absent
3.	Past history	a. Contanct with jaundice patients b. Drugs	a. Pain (stones) b. Weight loss (Neoplasm) c. Surgery (Stricture)	a. of Crisis b. Drugs, blood, transfusion, etc.
II	**Examination**			
1	Tender liver	May be present	Absent	Absent
2	Spleen	May be present	Absent	Absent
3	Gall bladder	Not palpable	Palpable if due to neoplasm	Not palpable
4	Palor	Absent	Present	Present
III	**Investigations**			
1	- Bilirubin in urine - Urobilinogen	Present Present	Present Absent	Absent Present
2	Stool - Stercobilinogen	present	Absent	Present

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

3	Peripheral Smears	Leucopenia in infective hepatitis	Normal	Reticulocytosis sphacrocytosis
4	LFT - S. Bilirubin - S. Alkaline phosphate - S.G.O.T.	++ Raised	++ Markedly raised	+ Normal
5	Barium meal and Cholangigrophy	Normal	May reveal pancreatic growth	Normal
6	RBCs survival	Normal	Normal	Decreased

MANAGEMENT :

1. Purgation in beginning (not strong purgative) and only chalagogue type of purgatives which stimulate the function of the liver and increase the flow of bile in the bile duct are used as -
   i. Barks of Trivit (Opeculina turpetham) &
   ii. Rhizome of Katui (Picorrhiza kurro)

   They use separately or mix together in a powder form. Depending upon strength of patient and seriousness of patient. 1-2 TSF x BD with hot water.
2. Avipatikar Churna - 1 x TSF x BD.
3. Arogyavardhini Vati - 2 Tables x TDS with hot water or mixed with honey.
4. Bhumyamalaki (Juice or paste) TSF x TDS other drugs used in the form of juice with honey is Vasaka, Kakamachi (Solium nigrum) & Triphala etc.

DIET :

Sweet thing in liquied food like sugar cane juice, orange juice and dry grapes are to be given to the patient in large quantity. These things increases urination which helps in the elimination of bile pigments, which are excessive in the blood.

* Vegetable (Bitter taste) and meat soups.
* Salt in limited quantity
* Food articles which are sour, pungent in taste and spices are not good for this.
* Pomegranate although sour but good.
* Curd are not allow but with butter curd is used.
* Alcohol in any form is contraindicated.

Other regimens :

- Complete bed rest, Avoid heat, Sun, Sex and Psychic factor like anger and anxiety.

बैद्यनाथ
अग्निमुख चूर्ण
हाजमा को बढ़ाने वाली उपयोगी दवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद इतिहास

1. प्र०- चरक न्यास टीका के रचयिता कौन थे ?
   उ०- **भट्टार हरिचन्द्र ।**
2. प्र०- निरन्तर पद व्याख्या के रचियता कौन थे ?
   उ०- **जेज्जट ।**
3. प्र०- योगीन्द्रनाथ सेन ने चरक के ऊपर कौन-सी टीका लिखी ?
   उ०- **चरकोपस्कार ।**
4. प्र०- तत्त्वचन्द्रिका किसके ऊपर टीका है ?
   उ०- **चरक संहिता ।**
5. प्र०- जल्पकल्पतरु टीका किस भाषा में लिखी गयी है ?
   उ०- **संस्कृत ।**
6. प्र०- चक्रपाणि ने चरक पर कौन-सी टीका लिखी है ?
   उ०- **आयुर्वेद दीपिका ।**
7. प्र०- स्वामिकुमार ने चरक पर कौन-सी टीका लिखी है ?
   उ०- **चरक पंञ्जिका ।**
8. प्र०- ज्योतिषचन्द्र सरस्वती ने चरक के ऊपर कौन-सी टीका लिखी ?
   उ०- **चरक प्रदीपिका ।**
9. प्र०- काशीनाथ पाण्डेय एवं गोरखनाथ चतुर्वेदी ने चरक के ऊपर किस भाषा में टीका लिखी ?
   उ०- **हिन्दी ।**
10. प्र०- चरक, सुश्रुत एवं वाग्भट्ट-इन तीनों पर व्याख्या लिखने वाले टीकाकार का नाम क्या है ?
    उ०- **जेज्जट ।**
11. प्र०- चक्रपाणि किस कुल में उत्पन्न हुए थे ?
    उ०- **लोध्रवली ।**
12. प्र०- चक्रपाणि के गुरुजी का क्या नाम था ?
    उ०- **नरदत्त ।**
13. प्र०- चक्रपाणि के परिवार में राजवैद्य कौन थे ?
    1. **डा० अनूप कु०गक्खड़, एम.डी.(आयुर्वेद)**
    2. **डा० अनिल गक्खड़**
    उ०- **उनके बड़े भाई भानुदत्त ।**
14. प्र०- चक्रपाणि के पिता का क्या नाम था ?
    उ०- **नारायण दत्त ।**
15. प्र०- चरक चतुरानन की उपाधि किसको मिली ?
    उ०- **चक्रपाणि ।**
16. प्र०- सुश्रुत सहस्रनयन की उपाधि किस को मिली ?
    उ०- **चक्रपाणि ।**
17. प्र०- शिवदास सेन का काल क्या था ?
    उ०- **पन्द्रहवीं शताब्दी का अन्तिम चरण ।**
18. प्र०- सर्वसार संग्रह ग्रन्थ के रचयिता कौन थे ?
    उ०- **चक्रपाणि ।**
19. प्र०- भानुमति टीका के रचयिता कौन थे ?
    उ०- **सुश्रुत ।**
20. प्र०- गंगाधर राय का जन्म कहां हुआ ?
    उ०- **बंगाल के मुर्शिदाबाद जिले में ।**
21. प्र०- गंगाधर राय द्वारा रचित टीका का नाम क्या है ?
    उ०- **जल्पकल्प तरु ।**
22. प्र०- गंगाधर की कुल कितनी रचनायें हैं ?
    उ०- **76 ।**
23. प्र०- योगीन्द्रनाथ सेन का जन्मस्थल कौन-सा है ?
    उ०- **कोलकाता ।**
24. प्र०- योगीन्द्रनाथ सेन कितने वर्ष तक जीवित रहे ?
    उ०- **47 वर्ष ।**
25. प्र०- सुश्रुत संहिता के कौन-से टीकाकार MBBS थे ?
    उ०- **भास्कर गोविन्द घाणेकर ।**
26. प्र०- सुश्रुतार्थ संदीपन के रचयिता कौन थे ?
    उ०- **हाराण चन्द्र ।**
27. प्र०- डल्हण का निवास स्थान कहां था ?
    उ०- **मथुरा के समीप अंकोला ।**
28. प्र०- गयदास का काल क्या था ?

1. दयानन्द आयुर्वेदिक कालेज, जालन्धर शहर - 144 008
2. माई भागो आयुर्वेदिक कालेज, मुक्तसर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उ०- **ग्यारहवीं शताब्दी ।**

29. प्र०- गयदास ने सुश्रुत पर कौन-सी टीका लिखी ?
उ०- **न्यायचन्द्रिका ।**

30. प्र०- डल्हण द्वारा लिखित टीका का क्या नाम है ?
उ०- **निबन्ध संग्रह ।**

31. प्र०- भास्कर गोविन्द घाणेकर ने सुश्रुत के किन स्थानों पर टीका लिखा है ?
उ०- **सूत्र, शारीर व निदान स्थान ।**

32. प्र०- पदार्थ चन्द्रिका टीका के रचयिता कौन थे ?
उ०- **चन्द्र नन्दन ।**

33. प्र०- शशिलेखा टीका के रचयिता कौन थे ?
उ०- **इन्दु ।**

34. प्र०- आयुर्वेद रसायन टीका के रचयिता कौन थे ?
उ०- **हेमाद्रि ।**

35. प्र०- सर्वाङ्गसुन्दरी टीका के रचयिता कौन थे ?
उ०- **अरुणदत्त ।**

36. प्र०- अरुणदत्त का काल क्या था ?
उ०- **लगभग 1225 ई० ।**

37. प्र०- हेमाद्रि का काल कौन-सा माना जाता है ?
उ०- **13 वीं व 14 वीं शताब्दी ।**

38. प्र०- चन्दरनन्दन का काल क्या माना जाता है ?
उ०- **दसवीं शताब्दी ।**

39. प्र०- भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद् द्वारा अष्टाङ्ग संग्रह के उत्तरतंत्र का प्रकाशन किसके निर्देशन में हुआ है ?
उ०- **डा० विवेकानन्द पाण्डेय ।**

40. प्र०- लालचन्द्र वैद्य का काल क्या है ?
उ०- **20 वीं शताब्दी ।**

बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल विटामीन-सी और कैल्सियम युक्त एक संपूर्ण स्वास्थ्य टॉनिक

बैद्यनाथ

च्यवनप्राश

माँ से बढ़कर बच्चों की देखरेख और कौन कर सकता है ? इसीलिए हर माँ अपने नन्हे-मुन्ने के लिए स्वास्थ्यवर्धक व पौष्टिक आहार की कामना करती है।

परन्तु केवल स्वादिष्ट भोजन आपके बच्चों की विटामिन व पोषण संबंधी जरूरतों की पूरा नहीं कर सकता। उसके अनुकूल विकास के लिए आपको चाहिए एक उत्कृष्ट स्वास्थ्य टॉनिक । जैसे बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल । इसमें हैं 52 (परखी हुई) जड़ी-बूटियाँ और केसर । अनेक विटामिन व हर्बो-मिनरल्स से युक्त, इसमें विशेष मात्रा में है, प्राकृतिक विटामिन-सी और कैल्सियम, जो आपके शरीर में जरूरी पोषक तत्वों की कमी को पूर्ण करते हैं ।

स्वस्थ दिमाग और शरीर के लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेदीय ग्रन्थ-साहित्य की पूर्ति आवश्यक

जनवरी, 1964

प्राचीन आर्षकाल में आयुर्वेद अन्य देशों के चिकित्सा शास्त्रों की तुलना में परिपूर्ण था । उस समय हमको बाहर से कुछ भी लेने की आवश्यकता नहीं थी । परन्तु हमारी वर्तमान स्थिति वैसी नहीं है । हमारा आर्ष-ग्रन्थ साहित्य आज नष्टप्राय है । इस समय हमको अपने मूलभूत सिद्धांत और स्वत्व को रखते हुए अन्यत्र जहाँ से संग्राह्य मिले उसको लेकर अपने शास्त्र को बढ़ाने की चेष्टा करनी चाहिए । इस प्रकार का प्रयत्न अत्यल्प मात्रा में भी क्यों न हो, मध्यकाल में हो चुका है । भाव प्रकाश का चोपचीनी का द्वीपान्तर वचा के नाम से संग्रहण करना उसका एक उदाहरण है । रस तरंगिणी में टंकणाम्ल (बोरिक एसिड), जम्बीराम्ल (सायट्रिक एसिड), सोरकाम्लीय रजत (सिल्वर नायट्रेट) आदि का संग्रह हुआ है । रस तरंगिणीकार ने इसका संग्रह संस्कृत पद्यों में उनकी सरल निर्माण-विधि के साथ उनको अपने साँचे में ढाल कर किया है ।

इसी प्रकार आयुर्वेद के सभी अंगों में वर्तमान आयुर्वेदीय ग्रंथों में जो-जो विषय अनुपलब्ध हों उनका अन्य चिकित्सा-शास्त्रों से संग्रह करके आयुर्वेद की पूर्ति कर लेनी चाहिए ।

स्व० यादव जी त्रिकम जी आयार्च ।

कैन्सर विशेषांक पर बिहार के स्वास्थ्य मंत्री की शुभ सम्मति

रोग पर विजय पाने का प्रयास मानव का सदा से होता आ रहा है, शादय आगे भी उसका यह प्रयास चलता ही रहेगा क्योंकि बदलती हुई इस दुनियाँ में अन्य चीजों के परिवर्तन के साथ-साथ रोगों के कारण, रूप और परिणाम आदि में भी परिवर्तन होता ही रहेगा । साथ ही उस पर विजय पाने का हमारा प्रयास करना भी अनिवार्य है ।

कहा जाता है कि आधुनिक युग में औद्योगिक सभ्यता की वृद्धि के साथ-साथ अनेक नये-नये रोगों की उत्पत्ति भी होती जा रही है । कैन्सर भी इन्हीं रोगों में से एक प्रधान रोग है जिसे लोग मौत का दूत भी कहते हैं । कुछ दिन पूर्व तक यक्ष्मा टी०बी० को ही लोग मृत्युदूत समझते थे और जिसको यह रोग पकड़ लेता था उसका अन्त ही कर डालता था, पर आज मानव प्रयास के परिणामस्वरूप उस रोग की विभीषिका खत्म हो गई । निनानवे प्रतिशत लोग अच्छे किये जा रहे हैं ।

लेकिन कैन्सर आज भी अपने भयावह रूप में मानव समाज, विशेषकर चिकित्सा विज्ञान के विशेषज्ञों के सामने चुनौती बन कर खड़ा है । संसार भर में व्याप्त इस रोग से लाखों व्यक्ति असमय ही काल के काल में समा रहे हैं । सिर्फ हमारे देश में ही लाखों आदमी प्रतिवर्ष इस रोग से अपना दम तोड़ रहे हैं । कहा जाता है कि शहरी वातावरण में जहाँ आधुनिक सभ्यता का अधिक प्रसार हुआ है यह रोग अधिक तीव्रता से बढ़ता जा रहा है । समय रहते इसकी रोकथाम के लिए समुचित प्रयास होना आवश्यक है । यह काम करना है - चिकित्सा विज्ञान के विद्वानों को । इसका प्रयास राष्ट्रव्यापी आधार पर होना चाहिए । एलोपैथिक, आयुर्वेदिक, यूनानी, होमियोपैथिक आदि जितनी चिकित्सा पद्धतियाँ प्रचलित हैं उन सबों के विशेषज्ञों को अपनी-अपनी पद्धति के अनुसार इस रोग के कारण का पता और माकूल दवा की खोज करनी चाहिए ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद के प्रमुख 166 औषधीय पौधों पर क्लीनिकल तथा अन्य शोध कार्य पर समालोचना

लेखक :- सारा खान एवं माइकल बालिक

(J. Alt. Compl. Med. 7:405 - 515, 2001)

बड़े आकार की पुस्तिका के रूप में यह वृहत शोध पत्र आयुर्वेद के प्रमुख औषधीय पौधों पर पिछले लगभग तीन दशकों में हुए क्लीनिकल (नैदानिक) तथा अन्य शोध कार्य का सारांश है। समीक्षक को ज्ञात है कि दोनों लेखकों ने भारत में भी भ्रमण करके आयुर्वेद तथा सिद्ध के कुछ विद्वानों से परामर्श किया तथा कुछ संस्थाओं में चिकित्सा तथा औषध निर्माण का कार्य भी देखा।

कुछ पश्चिमी लेखक प्राय: एशियाई चिकित्सा, प्रणालियों में अनेक दोष दिखाते हैं। यह शोधपत्र भिन्न है, तथा रचनात्मक है।

लेखकों ने चार वर्ष तक अनेक कम्प्यूट्रीकृत सूचना स्रोतों तथा अंग्रेजी शोध पत्रिकाओं से सामग्री खोजने का प्रयास किया है। यह सही है कि आयुर्वेद के प्रारंभिक काल में मूलत: प्राचीन साहित्य (जैसे वेद, संहिता, निघंटु आदि) तथा चिकित्सकों के अनुभव के आधार पर ही नाना वनस्पतियां तथा द्रव्य प्रयोग किये जाते थे। शनैः शनैः उन्हें प्रयोगशालाओं में तथा चिकित्सालयों में खोज और सफलता के आंकड़ों पर भी जांचा जाने लगा। इस शोध कार्य पर भारतीय भाषाओं में तथा अंग्रेजी में निरंतर पुस्तकें व शोधपत्र प्रकाशित होते रहते हैं।

ज्ञान के आदान-प्रदान तथा विज्ञान के प्रसार के साथ आयुर्वेद की औषधियों को भी उन्हीं मापदण्डों और परीक्षणों की कसौटी पर जांचने की बात उठने लगी, जिन पर पश्चिमी प्रधानत: रासायनिक, द्रव्य जांचे जाते थे। भिन्न चिकित्सा प्रणालियों के मूल सिद्धांत ही भिन्न होते हैं, अत: एक ही मापदण्ड से सभी द्रव्य सही उतरें यह आवश्यक नहीं। फिर भी आज के विज्ञान तथा प्रमाणिकता की मांग के युग में दोष-गुण सिद्ध करने की बात को पूरी तरह नकारा भी नहीं जा सकता।

उक्त शोधपत्र के लेखकों ने साहित्य की खोज से आयुर्वेद की 166 वनस्पतियों पर प्रयोगशालाओं में दूसरे तथा जंतुओं पर की गई खोज तथा चिकित्सालयों में रोगियों पर (क्लीनिकल/नैदानिक) हुए शोध कार्य पर समालोचना की है। उन्होंने पाया कि 166 में से 103 पौधों के (अर्थात् 62 प्रतिशत) जंतुओं पर परीक्षण हुए हैं, तथा 72 (अर्थात् 43 प्रतिशत) के रोगियों पर भी कुछ परीक्षण हो चुके हैं। एक तालिका में उन वनस्पतियों की सूची है जिनका रोगियों पर नैदानिक शोध हुआ है तथा तालिका में उन व्याधियों का भी विवरण है जिनके लिये वे वनस्पतियां उपयोगी पायी गईं।

लगभग एक सौ पृष्ठों की दूसरी तालिका इस पुस्तिका का मुख्य और उपयोगी भाग है। इसमें निम्न बातें दी गयी हैं :-

1. औषधीय पौधों का वैज्ञानिक (लैटिन) नाम, कुल व अंग्रेजी और संस्कृत नाम।
2. पौधों का प्रयुक्त अंग/द्रव्य, औषधि की मात्रा, सेवन या उपयोग की विधि तथा अवधि।
3. परीक्षणों का मॉडल, डिजाइन, शोध की स्थिति (ट्रायल, फेज 1/2 आदि),
4. शोध के परिणाम सफलता/निदान आदि तथा
5. वह संदर्भ (शोधपत्र) जिस पर उक्त सूचना आधारित है। इस तालिका में पौधों का क्रम लैटिन नामों के वर्णक्रमानुसार है।

विवेचना में लेखकों ने इस भ्रांति को दूर किया है कि आयुर्वेद की औषधियों पर प्रयोगशालाओं तथा चिकित्सालयों में परीक्षण नहीं हुए हैं अथवा उनकी प्रमाणिकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का कोई आधार नहीं है । साथ ही उन्होंने यह भी स्पष्ट किया है कि इस समालोचना का उद्देश्य यह है कि जिन वनस्पतियों की उपयोगिता के संकेत तो मिले हैं, किन्तु परीक्षण अभी अधूरे हैं, वे प्रकाश में आएंगी और उनकी प्रामाणिकता व उपयोगिता पर आगे वांछित लाक्षणिक अथवा वैज्ञानिक परीक्षण हो सकेंगे ।

पुस्तिका में एक चित्र द्वारा आयुर्वेदीय पौधों से जिन रोगों की चर्चा की जाती है, उन रोगों का विश्लेषण दर्शाया है, जैसे मधुमेह में तथा त्वचारोगों में 13%, तथा हृदय एवं रक्तवाहिनियों से संबंधित रोगों में 12% पौधे प्रयोग होते हैं । इसी प्रकार, एक चित्र में अमेरिका में प्रयुक्त औषधियों का विश्लेषण दिया है । पुस्तिका के अंत में 27 पौधों के सुन्दर रेखाचित्र दिये गये हैं ।

शोध में एक कमी यह दिखती है कि भारतीय भाषाओं में छपी तथा भारत में ही छपी अनेक अंग्रेजी शोध पत्रिकाएं लेखकों को उपलब्ध नहीं थीं, अथवा भाषा की कठिनाई भी थी । इससे कुछ औषधीय पौधों पर सूचना अपूर्ण होने की संभावना है, फिर भी निश्चय ही इस शोधपत्र से चिकित्सकों को कुछ रोगों के निवारण में ऐसे नव्य प्रयोग करने की संभावना मिलेगी, जो कुछ रोगियों पर सफल सिद्ध हो चुके हैं, तथा शोधकर्त्ताओं को प्रयोगशालाओं में प्रयोगात्मक तथा चिकित्सालयों में क्लीनिकल परीक्षण हेतु औषधीय वनस्पतियों के सुझाव भी मिलेंगे ।

विशेष :

तालिका - 2 में औषधीय पौधों की सूची लैटिन नामों के क्रम से है, जैसे अर्जुन, हरीतकी तथा विभीतिका पौधे टर्मिनालिआ नाम के अंतर्गत हैं । अधिकांश पाठक पौधों को भारतीय नामों से जानते हैं; वे वांछित पौधे तक सुविधा से नहीं पहुंच सकते; एक सौ पृष्ठों में संस्कृत नाम कहां ढूंढे ? इस कठिनाई के निवारण हेतु, समीक्षक ने कम्प्यूटर की सहायता से तालिका में दिये संस्कृत/हिन्दी तथा अंग्रेजी नामों की शब्द-सूची बना ली है इसकी सहायता से पाठक सुविधा से वांछित पौधे तक पहुंच सकेंगे ।

(जो पाठक अपने व्यक्तिगत उपयोग तथा शोध हेतु इस शोधपत्र तथा शब्द-सूची को प्रति चाहेंगे वे समीक्षक के नाम फोटोकापी, डाकव्यय आदि हेतु 400/- (चार सौ)रु० का डिमांड ड्राफ्ट भेज सकते हैं ।)

समीक्षक :-

डॉ० सुधांशु कुमार जैन, पी.एचडी., एफ.एन.ए.

ए-26 माल अवेन्यू कॉलोनी

लखनऊ - 226001

बैद्यनाथ

आँवला

केश तेल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

d by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देहाती अनुभूत घरेलू नुस्खे

1. शीतपित्त :- वर्षा के दिनों में पीठ पर छोटी-छोटी अरुषिंकायें तथा खुजली हो जाती हैं । किसी-किसी व्यक्ति के विपादिका पैरों में एवं हाथों में विचर्चिका रोग हो जाता है अर्थात् हाथ एवं पैरों में दरारें पड़ जाती हैं । युवान पीडिकायें चेहरे पर हो जाती हैं । अत: अपना अनुभूत प्रयोग लिख रहा हूँ ।

कालीमिर्च 5-7 दाने तुरन्त कूटकर चूर्ण करें एवं दो चम्मच कोष्ण गोघृत के साथ खावें । यह प्रात: खाली पेट खावें, 1 घण्टे तक कुछ भी नहीं खावें तथा 2 माह तक प्रयोग करें । सभी प्रकार के शरीर में होने वाले फोड़े फुन्सियाँ ठीक हो जाती हैं ।

हाथ एवं पैरों पर करञ्जादि तैल का प्रयोग रात के समय करें अर्थात् गर्म पानी से हाथ पैर धोवें तथा स्वच्छ कपड़े से पोंछकर करञ्जादि तैल की मालिश करें । रात को सोते समय मंजिष्ठादि चूर्ण 3 ग्राम कोष्ण जल से खावें । अवधि 2 माह, सभी प्रकार के त्वचा विकार ठीक हो जाते हैं क्योंकि मंजिष्ठा कोष्ठ एन्टिआक्सीडेन्ट होता है ।

2. कटि एवं पार्श्व शूल :- आम बोल-चाल की भाषा में इसे चणक, चस, चस्का, चुस्का, पलटा कहते हैं । यह कोई वजनदार वस्तु एवं व्यायाम के दौरान मांसपेशी या हड्डियों के स्थानच्युत होने से हो जाता है । हड्डियां स्थान च्यूत नहीं होने पर नाड़ी भी स्थानच्युत हो जाती है एवं रोगी से ठीक से खड़ा भी नहीं रहा जाता है एवं श्वास लेने पर पार्श्वशूल एवं हिलने पर कटिशूल हो जाता है । अस्पताल ले जाने पर चिकित्सक पैन कीलर एवं न्यूरोबियोन के इन्जेक्शन लगाते हैं तथा उनसे भी कोई आराम नहीं होता है । अत: अपना अनुभूत प्रयोग लिख रहा हूँ ।

रक्तपुनर्नवा ताजी उखाड़ें । इस पौधे की ऊपरी कोंपले तोड़ लेंवे तथा हाथ से मसलकर लुगदी (कल्क) बना लेवें । हाथ में जो चिकनाई या तैलीय अंश अनुभव होता है वह इसमें पाये जाने वाले स्टेराइडस के कारण होता है । इसको सम्बन्धित वेदना वाले स्थान पर 1 मिनट तक रगड़े जाने मात्र से 1 मिनट में वेदना शान्त हो जाती है एवं रोगी खड़ा हो जाता है । अस्थियों की स्थानच्युति में लाभ नहीं करता है ।

रवि पुष्य नक्षत्र में उखाड़ी गई श्वेत अपामार्ग मूल का एक टुकड़ा मंगलवार या रविवार को 2 गांठ लगाकर रोगी की कमर में बांध देवें, 4-5 दिन में खोल देवें । वेदना शान्त हो जाती है ।

3. जीर्णअम्लपित्त :- लखनवी सौंफ 20 ग्राम, लौंग 4 नग एवं 1 गिलास दूध इन सबको 10 मिनट मिक्सी में मिलाकर रोगी को पिलावें । 5 मिनट बाद ही रोगी को उर:शूल अम्लपित्त, विदग्धाजीर्ण आदि में लाभ हो जाता है एवं 7 दिन तक पिलावें तो अम्लपित्त रोग ठीक हो जाता है ।

4. उच्चरक्तचाप - बड़ी इलायची एक नग फूल खाली पेट उच्च रक्त चाप के रोगी को खिलावें, उसके 1 घण्टे बाद तक वह कुछ नहीं खायें तथा रात को तगर चूर्ण या तगर कैप्सूल एक नग खाये उच्चरक्त चाप में आशातीत सफलता मिलती है ।

5. वृषणशोध:- वृष्णशोथ में जब वृद्धिरोग हो जाये अर्थात् वृषनिका नाड़ी वृद्धि या शोथ हो जाये तो पिण्डखर्जुर 100 ग्राम या छुआरे 50 ग्राम क्षीरपाक करके 7 दिन खिलावें । सद्य: लाभ हो जाता है ।

डा० शरद चन्द्र त्रिवेदी, एम०डी० (आयु०)
द्वारा, 61/7, विजयबाड़ी ठेहरका चालाजी
जयपुर -302023 (राज०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके पत्र

To

Editor
Sachitra Ayurveda
Sri Baidyanath Ayurved Bhavan (P) Ltd.
Baidyanath Bhavan Road, PATNA

Sub: Scope for the development and Introduction of New courses in Ayurveda and Alternative medicines in partime/ Open Univ. (O.U.S.) for the benefit of Inter & Degree Bio Science Students, to solve health requirments of nation, and recognition of Hindi Universtiy Ayu. Med. course, Ayu. Ratna (GAMS) Vaidya visharad (DAMS).

Respected Sir,

I want to bring the kind attention of the following dignitaries through your esteemed paper on the subject cited above

His Excellency
President of India Sri Kalam Ji
Prime minister of India Shri Atal Ji
Central Council of Indian Medicine
Medical Council of India.
Chief minister of A.P.,U.P., Bihar,
Rajasthan, Madhya Pradesh, Delhi.
Ministry of Human Resource Development
Ministry of Health of Family welfare
State Govts. (all states)
Vice Chancellors of all open university in India.
All Major Pharma, Like Baidhyanath,Zandhu etc.
Gujarat Ayu. Univ. Chancellor.

There is need to develope health education in O.U.S. for the rapid development and propagation of Ayurveda and Alt. med.in our country. There should be one seperate health Univ. Eg. like DNUHS (Dhanvantri National University of Health Science) at National level with branches in all states and this should conduct courses in certificate, Diploma, Degree, P.G.level in Ayu. Alt. med. like nature cure yoga, Herbal med., Tribal, Homeo, Bio chemic, Indo allopathy, Accupuncture, massage, manasa roga (psychiatry) Cli. psychology, Hypnotherapy, Dietetics, Nursing and a Basic Diploma cum pre-Degree course say DIMS (Diplo. in Integrated Medicine and Surgery) with modern medical subjects and Ayu, Indian system of medicine Duration of 3-2 years for 10+2, 10+2+3 Bio students. The main objective of this kind of course is to fill the gap between Health worker and Doctor and health needs of the country in sub-urban, rural areas with provision of vertical mobility for further studies to final year BAMS., MD. etc.

There are many professional courses available for Inter, Degree physical science students in O.U.S. eg. AIME, CWE, AMIIM etc., all are equal to B.E. and B.Tech regular. Unfortunately there is no such course available for Inter, Degree, Bio sciences students. So the above mentioned courses solve 80% population health needs and provides qualified med. knowledgeable personnel to the country.

Only one university in whole India i.e., Hindi University (Hindi Sahitya Sammelan; Allahabad, U.P.) conducting courses in Arts, Literature, Education, Law and Ayu. med. i.e., Ayu. Ratna (GAMS) Vaidya Visharad (DAMS) in Hindi medium and encouraging fast development and propagation of Ayu and Hindi as a national languages in Non-Hindi states and fulfilling the Indian community Health needs, doing good service to society in mass education so do recognise Ayu. Courses of Hindi Univ. and for further studies allow Ayu. Ratna Doctors (Ayu. Ratna with B.Sc., (Bio) to admission in Final year of BAMS course.

This kind of courses (Under O.U.S. pattern) in Health Alt. med. in available in foreign

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

countries like USA, UK, Sweden, Israel, China etc. So there is need to develop in India too. As Ayu. is one of the ancient system of health and way of life in our country of about 5000 B.C. So, there should be a provision for every interested student to learn and to propagate it. This helps in eradicating all illegal institutions, colleges, universities and quackery to solve health problems in our country.

With the hope of your kindly regards & reponse.

Thanking you,

Yours truly

Dr. Mahesh Tunk
#15-2-252/1, B/H Maakali Temple
Maharaj Gunj, P.O. Begum Bazar
Bhagyanagar, Hyd - 12, (A.P.)
E-mail : mahesh_tunk@yahoo.com

आने वाला समय आयुर्वेद का होगा

सेवा में,

श्रीयुत् सम्पादक
सचित्र आयुर्वेद
पटना (बिहार)

महोदय,

हमारा देश इक्कीसवीं सदी में प्रवेश कर गया है, जिसके कारण आज की भागमभाग की जिन्दगी में हम कहीं न कहीं महसूस करते हैं कि हम प्रकृति से कटते जा रहे हैं । हम इस तथ्य को स्वीकारें या न स्वीकारें पर हमारा शरीर जरूर स्वीकारता है । यह मूक स्वीकृति परिलक्षित होती है, उन असंख्य बीमारियों में जिनके कारण हमें नित अस्पताल के दर्शन होने लगे हैं । प्रश्न यह उठता है कि क्या यह बीमारियाँ पहले नहीं होती थी ? होती थीं पर चूँकि हम प्रकृति के नजदीक थे और प्रकृति द्वारा प्रदत्त जड़ी-बूटियों पर रोग निवारण के लिए निर्भर थे, इसलिए हमें अस्पताल जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती थी । आज भी इस अप्राकृतिक दिनचर्या ने हमें अपाकृतिक औषधियों एवं दवाइयों का मोहताज बना दिया है ।

अब धीरे-धीरे जनसाधारण में यह धारणा प्रबल होती जा रही है कि प्रकृति के पास ही असाध्य रोगों का साध्य इलाज है । यही वजह है कि मधुमेह जैसी बीमारियों के लिए अब लोग "इन्स्युलिन" इंजेक्शन पर न भरोसा करें, उनके लिए प्रातः काल का व्यायाम आदि नित्यकर्म क्रिया पर निर्भर होना होगा । शीत काल स्वास्थ्य निर्माण की दृष्टि से सर्वोत्तम होता है, क्योंकि तापमान में कमी के कारण विभिन्न उच्च शक्तिशाली जड़ी-बूटियों का इस समय शरीर द्वारा आसानी से पाचन कर लिया जाता है तथा उनका कोई विपरीत असर नहीं होता । विशिष्ट औषधियाँ प्रमुख रोगों का नाश का कारण होती हैं जैसे मधुशून्य चूर्ण, परमवीरपाक, च्यवनप्राश, स्पेशल विशेष च्यवनप्राश, लवणभास्कर चूर्ण आदि । इनका तत्काल प्रभाव शरीर पर देखा जा सकता है । यह प्रमुख रूप से शारीरिक दुर्बलता, मानसिक थकान, रक्त की कमी, सम्बन्धीरोग, प्रमेह, स्वप्नदोष आदि रोगों को नष्ट करते हैं साथ ही यह शरीर में नवीन स्फूर्ति का संचार भी करते हैं ।

भवदीय
डा० राकेश मोहन शर्मा
चिकित्साधिकारी
राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय
वरईशाहपुर - हाथरस (उ.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आरोग्य समाचार
अखबार की कतरनों से

कृत्रिम शुक्राणु बनाने में वैज्ञानिकों को सफलता मिली

दैनिक जनसत्ता के अनुसार वैज्ञानिकों ने प्रयोगशाला में कृत्रिम शुक्राणुओं का सृजन करने में कामयाबी हासिल कर ली है। इससे पुरुषों में प्रजननहीनता से मुक्ति पाने की उम्मीद बन गई है ।

अमेरिका के मैसायुसेट्स के बोस्टन स्थित हार्वड मेडिकल स्कूल व व्हाइटहेड इंस्टीच्यूट फॉर बायोमेडिकल रिसर्च में किए गए प्रयोग के दौरान वैज्ञानिकों ने चूहे से भ्रूण की स्टेम कोशिकाओं को अलग कर उन्हें कृत्रिम शुक्राणुओं के रूप में विकसित किया । इसके बाद इन शुक्राणुओं को अंडे में प्रविष्ट कराकर उन्हें निषेचित कराया गया । इस कामयाबी से प्रजनन संबंधी अनुसंधान की नई संभावनाओं के द्वार खुल गए हैं । इस कामयाबी की बदौलत अब शीघ्र ही वैसे लोग भी संतान सुख पा सकेंगे, जिनमें या तो कम शुक्राणु हैं या जिनके शुक्राणु खराब या निम्न कोटि के हैं या जिनकी अंड ग्रंथियों में शुक्राणुओं का निर्माण नहीं हो पाता । ये वैज्ञानिक अब स्टेम कोशिकाओं से कृत्रिम अंड़े पैदा करने में जुटे हैं ताकि उन महिलाओं को संतान सुख मिल सके जो कैंसर के उपचार या दूसरे कारणों से प्रजनन क्षमता खो चुकी है। कृत्रिम अंडे की मदद से अधिक उम्र की महिलाओं के लिए भी गर्भाधारण संभव हो सकेगा ।

प्रजनन विशेषज्ञ डा० सोनिया मलिक बताती हैं कि तनाव और काम के दबाव के कारण पुरुषों में शुक्राणुओं में आश्चर्यजनक गिरावट आई है और महिलाओं में भी तनाव के कारण अंडा बनने की क्षमता कम हो रही है ।

अन्य प्रजनन विशेषज्ञ डा० याचना ग्रोवर बताती हैं कि हाल के दिनों में बढ़ते प्रदूषण, धूम्रपान व शराब की बढ़ती प्रवृत्ति, नशीली दवाइयों के बढ़ते सेवन, तनाव और गलत किस्म के अर्तपरिधान से शुक्राणुओं के कम बनने की समस्या बढ़ रही है । चिकित्सा विज्ञान की शब्दावली में कम शुक्राणुओं की स्थिति को ओलिगोस्पर्मिया कहा जाता है । वीर्य के नमूने में एक भी शुक्राणु नहीं पाए जाने की स्थिति को जूस्पर्मिया कहा जाता है ।

अमेरिकन सोसायटी पर रिप्रोडक्शन मेडिसिन से संबंद्ध प्रजनन केन्द्र साउथेंड रोटंडा की निदेशक डा० सोनिया मलिक के मुताबिक भारत में एक अनुमान के अनुसार अपने देश में 12-15 प्रतिशत लोग इनफर्टिलियटी के शिकार होते हैं, लेकिन ज्यादातर लोग विभिन्न कारणों से प्रजनन विशेषज्ञों से इलाज नहीं करा पाते और गैर चिकित्सकीय उपायों का सहारा लेते हैं, जिससे उनकी समस्या और बढ़ जाती है । उनके मुताबिक शहरों में नौकरी करने वाले 20 फीसदी युवा दंपत्ति तनाव जनित, प्रजननहीनता का सामना कर रहे हैं । इसके लिए पति और पत्नी में से कोई एक या दोनों जिम्मेदार हो सकते हैं । संतानहीनता के 40 फीसदी मामलों में पुरुष 40 फीसदी मामलों में महिला और 20 फीसदी मामलों में दोनों जिम्मेदार होते हैं । सोने जाने की अनियमितता, ज्यादा भाग-दौड़ और कार्य के अधिक दबाव से हमारी जैविक घड़ी प्रभावित होती है जिसका प्रभाव प्रजनन तंत्र पर भी पड़ता है पुरुषों पर कार्य के प्रभाव प्रजनन तंत्र पर भी पड़ता है । पुरुषों पर कार्य के अधिक बोझ के कारण उनमें शुक्राणु की संख्या कम हो रही है और उनमें महिलाओं की तुलना में इनफर्टिलिटी की समस्या बढ़ रही है ।

सूचना प्रौद्योगिकी और कम्प्यूटर साफ्टवेयर के क्षेत्र में काम करने वाले दंपतियों पर हाल में किए गए एक सर्वेक्षण से पता चला कि उनमें रक्त चाप, मधुमेह, मोटापा और काम वासना में कमी जैसी समस्याएं ज्यादा होती हैं । ऐसे में व्यवसायों से जुड़े होने पर उनमें इन बीमारियों का खतरा बढ़ जाता है । इनके अलावा पुरुषों में शुक्राणुओं में कमी व मासिक स्राव संबंधी बीमारियां हो जाती हैं जिसका प्रभाव उनकी प्रजनन क्षमता पर भी पड़ता है ।

डा० ग्रोवर बताती हैं कि गर्मी का शुक्राणुओं के उत्पादन पर काफी बुरा प्रभाव पड़ता है । यही कारण है कि प्रकृति ने अंडग्रंथि को अंडकोष में शरीर के बाहर रखा है । तंग किस्म के आधुनिक वस्त्र भी शुक्राणु निर्माण पर बुरा असर डालते हैं क्योंकि इन्हें पहने रहने से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंडकोष का तापमान बढ़ जाता है ।

डा० सोनिया के मुताबिक ज्यादा धूम्रपान का भी प्रजनन क्षमता पर बुरा प्रभाव पड़ता है क्योंकि धूम्रपान से शुक्राणुओं की संख्या व शुक्राणुओं की गतिशीलता की कमी आती है । कुछ में यह समस्या वेरिकोसली नामक विकार से संबंधित है ।

डा० मिलक व डा० ग्रोवर के मुताबिक हाल के वर्षों में प्रजननहीनता के उपचार की दिशा में हाल के सालों में काफी अनुसंधान हुए हैं जिनकी बदौलत कारगर औषधियों, हार्मोनों व तकनीकों का विकास हुआ है । दवाइयों व हार्मोनों के कारगर होने पर कृत्रिम गर्भाधान के तरीके अपनाए जाते हैं । दोनों चिकित्सकों का मानना है कि मौजूदा समय में कृत्रिम वीर्य संचलन आर्टिफिशियल इनसेमीनेशन, इन विट्रो फर्टिलाइजेनशन (आईवीएफ) व भ्रूण प्रत्यारोपण, अंतकोशिका द्रव्य शुक्राणु इंजेक्शन (आईसीएसआई) जैसी तकनीकों की बदौलत निसंतान दम्पत्ति संतान का सुख प्राप्त कर सकते हैं ।

किसी पुरुष के वीर्य में शुक्राणु की अत्यधिक कमी होने, कोई अनुवांशिक रोग होने, शीघ्रपतन, कोई जननांग विकास होने या महिला में गर्भाशय ग्रीवा म्यूकस में कोई खराबी होने पर कृत्रिम वीर्य संचलन (आर्टिफिशियल इनसेमीनेशन) नामक तकनीक का इस्तेमाल किया जाता है । इसमें किसी दूसरे पुरुष के वीर्य का भी उपयोग किया जा सकता है ।

साढ़े 42 करोड़ साल पुराना जीवाश्म

दैनिक हिन्दुस्तान के अनुसार दुनिया का सबसे पुराना जीवाश्म ब्रिटेन में सुरक्षित है और वैज्ञानिकों का मानना है कि किसी नर जीव का यह शिश्न कम से कम साढ़े 12 करोड़ वर्ष पुराना है । यह जीवाश्म ऑक्ट्राकोड नामक एक समुद्री जीव का है, जो संभवतः शेलफिश और प्रॉन की मिश्रित प्रजाति का जीव है । सुप्रसिद्ध विज्ञान पत्रिका नेचर में प्रकाशित रिपोर्ट में गिल जैसे नर्म अंगों के जीवाश्मों के संबंध में विस्तृत जानकारी दी गई है और उसी के संदर्भ में इसका भी उल्लेख भी किया गया है । इस अध्ययन का नेतृत्व करने वाले प्रोफेसर डेविड सिंटर ने कहा कि यह पूरा जीव आश्चर्यजनक है । हमें वह चीज मिली है, जिसकी हम सिर्फ कल्पना कर सकते थे । शोधकर्ताओं ने पहले इस अज्ञात जीव का नाम कोलिम्बोकेरिस एक्सलेक्टिकोस रखा था ।

भारतीय चिकित्सा पद्धति के दीवाने हुए अमेरिकी

दैनिक हिन्दुस्तान के अनुसार ऐलोपैथिक चिकित्सा के क्षेत्र में विश्व में अग्रणी होने के बावजूद अमेरिका में भारतीय चिकित्सा पद्धतियों के प्रति दीवानगी बढ़ती जा रही है । एक आकलन के अनुसार अमेरिकी लोग प्रतिवर्ष 48 अरब डॉलर वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों पर खर्च करते हैं जिनमें अधिकांश पद्धतियां भारतीय उप-महाद्वीप से संबद्ध हैं ।

इस संदर्भ में उल्लेखनीय बात यह भी है कि अमेरिकी सरकार द्वारा उपलब्ध कराई जाने वाली स्वास्थ्य सेवाओं से अधिक निजी स्वास्थ्य सेवाओं में वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों का बोलबाला है । अमेरिकी लोग दिनोंदिन ऐलोपैथिक चिकित्सा से मुंह मोड़ते जा रहे हैं । अनेक अमेरिकियों का विश्वास है कि वैकल्पिक चिकित्सा जादू की तरह काम करती है । समय-समय पर समाचार माध्यमों में ऐसी घटनाएं प्रकाश में आती रहती हैं जिनसे यह प्रमाणित होता है कि वैकल्पिक चिकित्सा जैसे होम्योपैथी, आयुर्वेद, एक्यूपंचर आदि ने कमाल का काम किया है लेकिन इस क्षेत्र में वैज्ञानिक शोधों की पर्याप्तता नहीं होने की वजह से वैज्ञानिक प्रमाणों का अभाव है । हाल में एक ऐसी घटना प्रकाश में आई जब 39 वर्षीया महिला एलेक्जेंड्रा वांसी को ऐलोपैथिक डॉक्टरों ने कह दिया कि वह कभी मां नहीं बन सकती । फिर वह एशियाई पद्धति के डॉक्टरों के संपर्क में आई और एक्यूपंचर चिकित्सा से कुछ सत्रों और जड़ी-बूटी से युक्त कुछ दवाओं के प्रयोग से वह मां बनने के योग्य हो गई ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Gujarat

Jamnagar

5th International seminar on Ayurveda for better health Postponed

According to reliable sources the 5th international seminar on Ayurveda for better health rescheduled for second time to be organised as a part of 38th Foundation Day celebration of the Gujarat Ayurved University during January 5–7, 2004 has been postponed. The inconvenience caused to the participants has been regretted by the organiser.

NATIONAL SEMINAR

on

AYURVEDA FOR BETTER HEALTH

and

WORKSHOP ON CLINICAL APPLICATION OF RASA SHASTRA

January 24-25, 2004

Gujarat Ayurved University

Jamnagar - 361 008 (India)

Web: www.ayurveduniversity.com

E-mail : deanipgt@ayurveduniversity.com

The objective of Ayurveda is to accomplish the physical, mental, social and spiritual well being by way of adopting preventive and promotive approach as well as to treat the disease with its various remissive approaches. Due to its simplicity and scientific nature Ayurveda has drawn the attention of the global population. It is well known for its role in management of the chronic, incurable, degenerative and iatrogenic disorders.

Rasa Shastra:

Rasa Shastra is well-established branch of Ayurveda serving ailing humanity with its unique heritage of drugs derived from metallic, mineral and animal origin combined with herbs. These herbo- mineral drugs are prepared by adopting very distinctive processes such as Shodhana, Bhavana, Jarana, Marana, Sattva-patana mentioned very specifically for particular metal, mineral etc used as drugs. These pharmaceutical procedures ascertain the conversion of raw material into the drug, which is easily absorbable and assimilable to metabolism of body without producing any harmful effect. These drugs are commonly practised by Ayurvedic physicians due to their quick action, small doses, better palatability and wide range of therapeutics.

The Workshop :

However, now a days some controversies are being raised regarding their claimed efficacy as well as for their safety profile and this workshop will mainly concentrate on these aspects to clarify some of the doubts. In this workshop topmost experts of Rasashastra are expected to deliberate on the theme. The following points will be convered:

* Fundamental of Ayurveda vis-a-vis Rasa Aushadhi.
* Clinical application of Rasa Aushadhi in chronic disorders.
* Clinical and Experimental studies on the Safety profile of Rasa Aushadhi.
* Role of Rasa Aushadhi in the management of emergenices.
* Quality control of Rasa Aushadhi.
* Practical demonstration of some unique Rasa-preparations.

The Seminar :

The first aim of Ayurveda is to promote and preserve the health of the healthy persons and to highlight this aspect, simultaneously a seminar is also being organized, which will discuss on the following topics.

* Promotion and preservation of Health by Ayurvedic drugs.
* Drugless Ayurvedic apporach for promotion and preservation of Health

Research papers are invited from scholars of Ayurveda and allied disciplines. Last date for submission of abstract (300 words) — December 31, 2003 and full paper should reach to us by January 10, 2004. Only presenting author of the selected research papers on clinical and

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

experimental study of Rasa Shastra will be paid To & Fro sleeper class railway fare. The language of paper and presentation should be English/ Hindi/Sanskrit. In addition guest lectures and key note addresses by the experts in the field will also be arranged.

It is expected that the Post Graduate and doctoral scholars, teachers, researchers and practitioners from the renowned institutes of India and interested individuals will gather here and it will provide a chance for better interaction among participants.

Registration Fee

	Up to Jan 10, 2004	After Jan 10, 2004
Delegates	Rs. 400/-	Rs. 500/-
PG Students	Rs. 300/-	Rs. 400/-
Accompanying person	Rs. 300/-	Rs. 400/-

Registration fee may be remitted by a bank draft drawn in favour of "**Registrar, Gujarat Ayurved University**" payable at Jamnagar. It may also be deposited in cash in the Account Section of the University during working hours.

Privilege :

Registration fee includes free moderate dormitory accommodation (for out side delegates) during seminar days. However, if any delegate is interested for hotal accommodation, the same will be arranged on payment basis if the request is received before January 10, 2004 along with bank draft for hotel charges.

Dr. A.K. Choudhary
Organizing Secretary
0288-2670006 (Residence)
0288 - 3111863 (Mobile)
Dr. A.A. Bhatt
Organizing Secretary
0288 - 2753410 (Residence)
98982 61093 (Mobile)
Prof. Gurdip Singh
Chairman & Dean
0288 - 2753410 (Residence)
98242 87030 (Mobile)

For further detailed information please contact :

Postal Address :
Organizing Secreatary
National Seminar on Ayurveda for better Health & Workshop on Clinical Application of Rasashastra
I.P.G.T. & R.A., Gujarat Ayurved University,
Jamnagar - 361008
Phone : (O) 0288 - 2552014
(R) 0288 - 2750390, 275802
Mobile : 98242 87030
Fax : 0288 - 2676856
E-mail : deanipgt@ayurveduniversity.com

REGISTRATION FORM

Name : Dr./Mr./Ms. .....
Qualification .....
Designation .....
Address for correspondecne .....
Phone Nos. with STD code .....
Office .....
Residence .....
Mobile .....
Fax .....
E-mail .....
Accompanying persons :- .....
Spouse Yes/No. .....
Adults .....
Children .....
Paper Submitted for Presentation : Yes/No
Title of Paper .....
Author (s) .....
Details of Payments :-
Registration fee
Delegate Rs. .....
Accompanying persons Rs. .....
Accommodation charges Rs. .....
TOTAL Rs. .....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Demand Draft No.....

Dated.....

Bank.....

Branch.....

Details of Journey :-.....

.....

SIGNATURE

1. Payments should be made only by Demand Draft in favour of Register, Gujarat Ayurved University payable at Jamnagar.
2. Only vegetarian food will be served during the Seminar/Workshop.
3. Post Graduate Scholars should attach bonafied certificate from the Head of the Institute.

निःशुल्क आयुर्वेद शिविर सम्पन्न

स्वामी कल्याण देव राजकीय आयुर्वेदिक कॉलेज एवं चिकित्सालय, मुजफ्फरनगर (U.P.) में अहमदाबाद (गुजरात) से अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त आयुर्वेद विशेषज्ञ द्वारा पक्षाघात, गठिया, स्पोन्डिलाईटीस, क्षार सूत्र चिकित्सा पद्धति द्वारा दन्त रोग का निःशुल्क आयुर्वेद शिविर संपन्न हुआ।

अहमदाबाद, भावनगर, ईडर से पधारे आयुर्वेद विशेषज्ञों द्वारा मुजफ्फरनगर (U.P.) में स्टेट आयुर्वेद कॉलेज के. प्रो. विष्णुदत्त अग्रवाल, डॉ. सी. एम. कंसल, डा० अक्षयलाल, डा.एस.क. अवस्थी, डॉ० प्रकाश चन्द्र एवं सभी चिकित्सक बंधु एवं आयुर्वेद कॉलेज के छात्र-छात्रायें एवं चिकित्सकगण के अथक प्रयत्नों से दो-दिवसीय ता० 1 एवं 2 नवम्बर 2003 में स्वामी कल्याण देव राजकीय आयुर्वेद कॉलेज, मुजफ्फरनगर (U.P.) में निःशुल्क आयुर्वेद शिविर लगाया गया ।

इस शिविर में अहमदाबाद से पधारे पंचकर्म विशेषज्ञ वैद्य श्री बी०डी० नंदूरबारकर (पूर्व निदेशक, गुजरात राज्य सरकार) एवं पंचकर्म फिजिशयन, वैद्य टी०एल० स्वामी (पंचकर्म विशेषज्ञ, अधीक्षक, राजकीय मणिबेन आयुर्वेदिक चिकित्सालय, अहमदाबाद) डॉ० देवेन्द्र शाह (अन्तरराष्ट्रीय क्षारसूत्र विशेषज्ञ) डॉ० शशीन त्रिवेदी (भावनगर), डॉ०जीज्ञेश कडीया (दंत विशारद) एवं सहायक के रूप में वैद्य विक्रम उपाध्याय, वैद्य कमलेश राजगारे, डॉ० जितेश भट्ट, वैद्य काश्मीरा राजगारे, वैद्य शीतल त्रिवेदी, डा० एन०आर० पारिख थे ।

मुजफ्फरनगर (U.P.) एवं मेरठ, हरिद्वार, सहारनपुर, जनपद में भारी प्रचार-प्रसार के कारण बड़ी भारी संख्या में मरीजों ने इस शिविर का लाभ लिया । पूरे दो दिन चलनेवाले इस शिविर में सभी स्थानिक चिकित्सकों ने सहयोग दिया और इस शिविर को सफल बनाने में मदद की ।

राष्ट्रीय संगोष्ठी : पंचकर्म परंपरा एवं विज्ञान तथा निःशुल्क शिविर चिकित्सा शिविर

नेशनल एकेडमी ऑफ पंचकर्म एन्ड रिसर्च की राष्ट्रीय कार्यकारिणी बैठक के अवसर पर आयोजित राष्ट्रीय परिचर्चा दिनांक 8-9 नवम्बर को भोपाल (म०प्र०) में दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी : पंचकर्म परंपरा एवं विज्ञान तथा निःशुल्क चिकित्सा शिविर एवं नेशनल एकडेमी आफ पंचकर्म एन्ड रिसर्च की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक दन्त मंदिर सभागृह एरेरा कॉलोनी, भोपाल में काफी उत्साह-उल्लास भरे वातावरण में भारी संख्या में वैद्य गण की उपस्थिति में संपन्न हुआ ।

इस कार्यक्रम की अध्यक्षता नेशनल एकेडमी ऑफ पंचकर्म एन्ड रिसर्च के अध्यक्ष वैद्य श्री एच.एस. कस्तुरे ने की ।

Rajasthan
Jaipur
International Seminar Postponed

The international seminar on plant based medicine scheduled for 15-17 December, 2003 has been postponed due to some unforeseen circumstances according to a press released issued by Prof. Mahesh Chandra Sharma, Organising Secretary, National Institute of

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Ayurveda, Madhav Vilas Palace, Amer Road, Jaipur. The Organiser has expressed regret for the inconveninece caused to the participants.

पंजाब

जांलन्धर क्विज प्रतियोगिता आयोजित

दयानन्द आयुर्वेदिक कालेज के प्रांगण में वैद्य पं० हरिदत्त वात्सायन की पुष्य स्मृति में इन्टर कॉलेज चरक क्विज प्रतियोगिता का आयोजन किया गया ।

प्रिंसिपल डा० राजकुमार शर्मा की अध्यक्षता में आयोजित इस क्विज कार्यक्रम में श्री लक्ष्मी नारायण आयुर्वेदक कालेज, अमृतसर, माई भागो आयुर्वेदिक कॉलेज, मुक्तसर राजीव गांधी राजकीय आयुर्वेदिक कॉलेज, पपरोला, राजकीय आयुर्वेदिक कॉलेज, पटियाला, एस.एस.एम.डी. आयुर्वेदिक कॉलेज, मोगा व मेजबान टीम दयानन्द आयुर्वेदिक कालेज, जालन्धर टीमों ने भाग लिया ।

कार्यक्रम का संचालन संहिता एवं मौलिक सिद्धान्त विभाग के रीडर डा० अनूप कु० गक्खाड़ ने किया । मंच संचालन कालेज के सांस्कृतिक सचिव डॉ० उमेश शुक्ला ने किया ।

इस क्विज में पूछे गए प्रश्नों हेतु सभी कालेजों से 20-20 प्रश्न मंगवाए गए थे । क्विज से पहले इन सभी सील्ड लिफाफों को खोलकर प्रत्येक कालेज के सम्बन्धित अध्यापकों की कमेटी ने प्रश्नों को एक निश्चितवार क्रम दिया व बाद में उन्हें परची सिस्टम से A,B,C,D आदि का नामकरण किया गया । क्विज मास्टर की भूमिका निभाते हुए डा० अनूप कु० गक्खड़ ने टीमों से प्रश्न पूछे । प्रथम राउण्ड में पटियाला कालेज की टीम आगे रही जबकि फाइनल व अन्तिम राउण्ड में दयानन्द आयुर्वेदिक कॉलेज जालन्धर की पूनम कटारिया, पूजा सभ्रवाल व गुरप्रीत कौर की टीम 100 में से 100 अंक लेकर प्रथम रही जबकि राजीव गांधी राजकीय आयुर्वेदिक कॉलेज पपरोला की टीम 90 अंक लेकर द्वितीय स्थान पर रही । राजकीय आयुर्वेदिक कालेज पटियाला की टीम 80 अंक लेकर तृतीय स्थान पर

प्रिंसिपल डा० राजकुमार शर्मा, डा० रवीन्द्र वात्सायन, सी.सी.आर.ए.एस. के डायरेक्टर डा. जी. एस.लवेकर, डा. अनूप कु०गक्खड़ व विजेता टीम की छात्राएं-पूनम कटारिया, पूजा सभ्रवाल व गुरप्रीत कौर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ही, अन्तिम व फाइनल राउण्ड में माई भागो आयुर्वेदिक ...लेज मुक्तसर की भी प्रशंसनीय भागीदारी रही ।

क्विज कार्यक्रम के अन्तिम राउण्ड का संचालन मुख्य अतिथि डा०जी०एस०लवेकर डारेक्टर सी.सी.आर.ए. स. दिल्ली की उपस्थिति में किया गया । सम्पूर्ण सूत्र स्थान एवं चिकित्सा स्थान के प्रथम बीस अध्याय पर आधारित इस क्विज में बी.ए.एम.एस. फाइनल प्रोफ के विद्यार्थियों ने भाग लिया ।

प्रथम राउण्ड में प्रत्येक टीम से आठ-आठ प्रश्न पूछे गए थे जबकि अन्तिम राउण्ड में प्रत्येक टीम से दस-दस प्रश्न पूछे गए थे ।

अन्तिम राउण्ड का प्रारम्भ मुख्य अतिथि ...जी०एस०लवेकर, डायरेक्टर, सी.सी.आर.एस.के. स्वागत ...के द्वारा किया गया । प्रिंसिपल डा० राजकुमार ने डा० ...लवेकर व डा० आचार्य, सहायक निदेशक सी.सी.आर.ए. स, पटियाला का पुष्प गुच्छ से स्वागत किया ।

डा० बलदेव सिंह विलखू ने डा० रवीन्द्र वात्सायन को पुष्प गुच्छ प्रदान कर उनका स्वागत किया । कार्यक्रम का आरम्भ रेखा, दिव्या गक्खड़, भारती गौतम, रेणु व रोमा द्वारा धन्वन्तरि वन्दना से प्रारम्भ किया । प्रथम वर्ष की छात्रा रेणु ने वन्देमातरम के गाने पर नृत्य प्रस्तुत किया । क्विज मास्टर का रोल डा० अनूप कु० गक्खड़ ने किया । एवं इंडिया ड्रग कम्पनी ने 1100रु०, 750रु० व 500रु० का प्रथम, द्वितीय व तृतीय नकद पुरस्कार दिया । डा० लवेकर ने सफल प्रतियोगियों को 200 रु० व जो सदस्य अन्तिम राउण्ड में नहीं पहुंच पाए उनके लिए 100-100रु० के पुस्तकें देने की घोषणा की ।

कॉलेज की ओर से भी विजेताओं को पुस्तक व स्मृति चिन्ह प्रदान किये गये । कार्यक्रम के सफल संचालन हेतु प्रश्न बैंक कमेटी में डा०ए.के. त्रिपाठी (जालन्धर) डा० रघुवीर (पटियाला) डा० प्रदीप सेठी, मुक्तसर, डा० सुरभी शारदा (मोगा) व डा० केदारनाथ यादव अमृतसर की प्रशंसनीय योगदान रहा व मंच स्टेज, कमेटी में डा० ...शा शुक्ला ने अपना कार्यक्रम बखूबी निभाया । जलपान ...भोजन कमेटी में डा० विजय गर्ग व डा० गोपेश शर्मा का विशेष योगदान रहा, पुरस्कार कमेटी में डा० श्री.जै. आर.सैनी का प्रशंसनीय योगदान रहा । इसके अतिरिक्त डा० बलदेव सिंह विलखू, डा०एन०एस० त्रिपाठी, डा० पंकज शर्मा, डा० राकेश पवार, डा०जी.णी.गर्ग, डा० रेणु वाला, डा०एस.जे.पी. सिंह, डा०बीनू शर्मा, डा० अश्विनी भार्गव, डा० मधुरिमा भार्गव, डा० कुलदीप पवार, डा० सुमन पवार, डा० अवधेश मिश्रा ने अपनी उपस्थिति से इस समारोह को गौरवान्वित किया ।

कार्यक्रम के अन्त में डा० अनूप कु० गक्खड़ ने आए हुए सभी मेहमानों का धन्यवाद किया । मंच संचालन व साज सज्जा में इकविन्दर कौर, अमनदीप, शिखामंगल, गुरविन्दर, पूजा शर्मा, शबनम प्रीत, गीतिका, रूपिन्द्र भारती, ईशा धवन, निशा रंजू, मन्दाकिनी, अक्षरा आदि ने सहयोग दिया ।

राजकीय आयुर्वेद कालेज पटियाला में री-ओरिएन्टेशन ट्रेनिंग प्रोगाम सम्पन्न

राजकीय आयुर्वेद कालेज पटियाला के रसशास्त्र विभाग द्वारा आयुर्वेदिक मेडिकल अधिकारियों के प्रशिक्षण हेतु भारतीय चिकित्सा पद्धति स्वास्थ्य मंत्रालय भारत सरकार के सौजन्य से चार सप्ताह का रि-ओरिएन्टेशन ट्रेनिंग प्रोग्राम आयोजित किया गया । इसका उद्घाटन पंजाब सरकार के आयुर्वेद के निर्देशक डा०के०के०शर्मा ने भगवान धन्वन्तरि जी की मूर्ती पर दीप प्रज्वलित एवं माला अर्पण द्वारा किया । विशेष अतिथि आयुर्वेदीय वैज्ञानिक सलाहकार कमेटी भारत सरकार के पूर्व सदस्य डा०एस०आर०वत्स ने उपस्थित आयुर्वेदज्ञों, चिकित्साधिकारियों तथा विद्यार्थियों को सम्बोधन करते हुए सतर्क किया कि वर्तमान में आयुर्वेद की प्रतिष्ठा को देखते हुए विदेशी एवं व्यापारी वर्ग इसका परोक्ष रूप से अपहरण करने लगे हैं । कई औषधियों को फूड एवं कोस्मेटिक एक्ट की छाया में निर्मित कर बेच रहे हैं । कई प्रभावशाली औषधियां यथा अश्वगंधा, गुडुची, शतावर को एन्टी-ओक्सिडेन्ट का नाम देकर व्यापार किया जा रहा है । पंचकर्म का प्रयोग हेल्थ रिसोर्ट के नाम से चलाया जाने लगा है । यू.एस.ऐ. द्वारा नीम तथा हल्दी जैसे प्रसिद्ध औषधियों को पेटैन्ट करवाए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

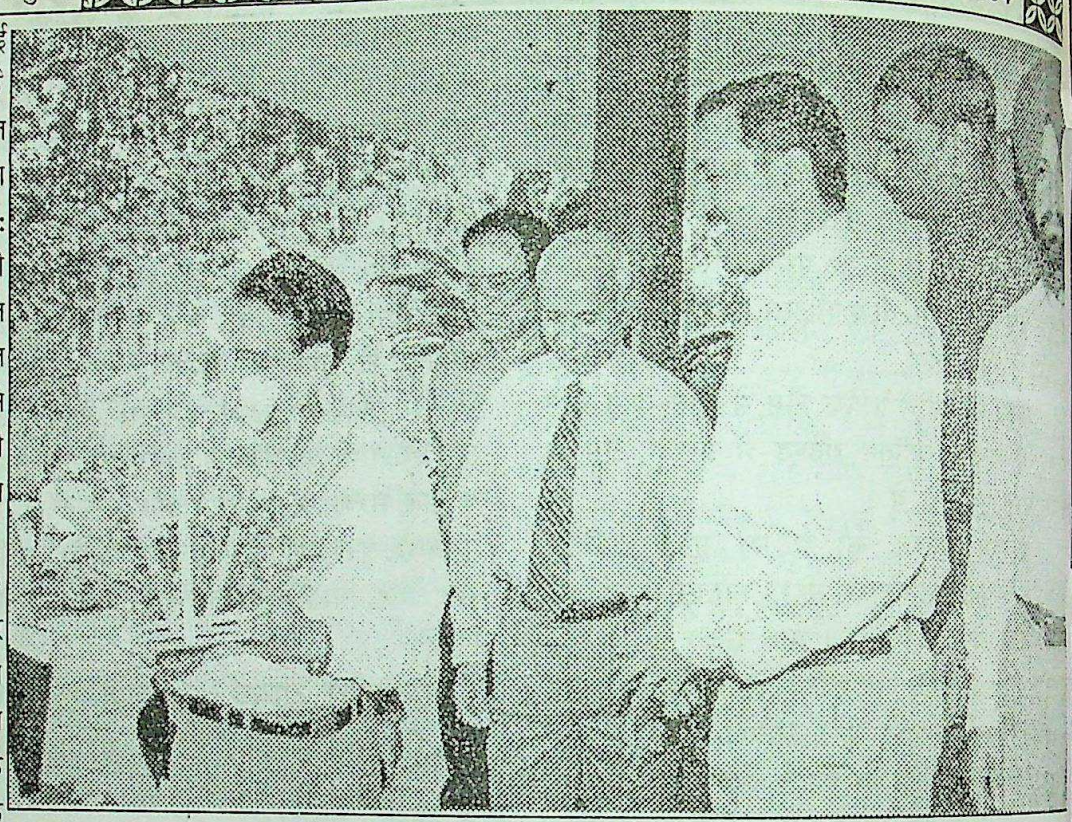

जाने पर कई वर्षों के संघर्षोपरान्त रद्द करवाना पड़ा अत: आयुर्वेद की रक्षा एवं प्रगति हेतु अति जागरूक रहने की आवश्यकता है ।

डा० आदर्श कुमार रस शास्त्र विभागाध्यक्ष इस प्रोगाम के सह-संयोजक थे जिनके सतत प्रयासों द्वारा इसका संचालन अति उत्साह जनक, ज्ञान वर्धक एवं सफल रहा । इस प्रोग्राम में विभिन्न विषयों के प्रतिष्ठित आयुर्वेदज्ञों, वैज्ञानिकों व ऐलोपेथी के डाक्टरों ने व्याख्यान दिये । जिनमें डा० विनय कुमार भूतपूर्व प्रिंसीपल, डा० वेद व्रत शर्मा सदस्य सी.सी.आई. एम. दिल्ली, डा० बी.एन.सिंह प्रिंसीपल मस्तनाथ आयुर्वेदिक कालेज रोहतक, डा०डी०पी०राजनवाल प्रिंसीपल, वैद्य रामानन्द जी (भूतपूर्व फार्मेसी सुप्रीडेन्ट), डा० ईश्वर सिंगला (भूतपूर्व अध्यक्ष रस शास्त्र), डा०के.के.प्राशर (भूतपूर्व अध्यक्ष रस शास्त्र एवं सुप्रीडेन्ट फार्मेसी), डा० मोहन लाल पाठक (भूतपूर्व प्रोफेसर एवं फार्मेसी सुप्रीडेन्ट), डा०बी०के०कौशिक (प्रोफेसर एवं सुप्रीडेन्ट हॉस्पिटल), डा०एन०के०शर्मा, डा०एन०डी० वसिष्ठ एवं डा० पी०के० ऋषि राजकीय आयुर्वेदिक कॉलेज पटियाला, डा०डी०एन० भरद्वाज भूतपूर्व प्रिंसीपल एवं डा० आर.के.डी. गोयल सरकारी मेडिकल कालेज पटियाला, डा.एम.वी.आचार्य एवं डा०संजीव कुमार सैन्ट्रल रिसर्च इंसटिचियूट पटियाला, डा०आर.एस. वेदी भूतपूर्व प्राध्यापक शिमला मैडिकल कालेज, डा० मनजीत सिंह (प्रोफैसर एवं हैड आफ फार्माकालोजी) एवं डा०ए. के.तिवारी फार्माकालोजी विभाग पंजाबी युनिवर्सिटी पटियाला, डा० विकास राना फार्माकालोजी जी.पी. डबल्यु. पटियाला, डा० सुनील जोशी प्रिंसीपल, डा० संतोष भारद्वाज, डा० हरबंस सिंह एवं डा० विशाल वर्मा एस.एस.एम.डी. आयुर्वेदीक कालेज मोगा, डा०एस.एन.सिंह, डा०जे.एन. त्रिपाठी, डा० समिता जोहर, डा० रीटा सिंह एवं डा० अजीत पी. सिंह डी.बी. आयुर्वेदिक कालेज गोबिन्दगढ़, डा० गुरदेव राम गुरू नानक आयुर्वेदिक कालेज मुक्तसर, डा० मदन लाल गुलाटी डि. डायरेक्टर आयुर्वेद चण्डीगढ़, डा० अशवनी कुमार अध्यक्ष रसशास्त्र एवं डा० मधुरिमा डी.ए.वी. आयुर्वेदिक कालेज जालंधर के नाम उल्लेखनीय हैं । इस अवसर पर कालेज के विद्यार्थियों ने सांस्कृतिक प्रोग्राम देकर सब का मनोरंजन किया ।

कालेज के प्राध्यापकों विशेषरूप्या रस शास्त्र विभाग में कार्यरत डा० आदर्श कुमार, डा० वी.के. रैहनी, डा०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधना शर्मा, डा० अशोक कुमार, डा० विजय पाल, डा० राकेश पाठक द्वारा सरकारी सैन्ट्रल आयुर्वेदिक फार्मेसी में प्रतिदिन प्रशिक्षणार्थियों को औषध निर्माण संबन्धी क्रियात्मक एवं सैद्धान्तिक प्रशिक्षण दिया गया । इस प्रोगाम में भाग लेने वाले चिकित्साधिकारियों ने व्याख्यान कर्ताओं, आयोजकों व प्रिंसीपल का इस ज्ञान वर्धक समारोह की सफलता हेतु आभार प्रकट किया ।

प्राग्राम का समापन 4 दिसम्बर 2003 को हुआ । दिसमें कालेज के प्रिंसीपल ने प्रशिक्षार्थियों को प्रमाण-पत्र देकर सम्मानित किया । डा० आदर्श कुमार विभागाध्यक्ष ने प्रिंसीपल का प्रोग्राम में पूर्ण प्रबन्धकीय सुविधाएं प्रदान करने हेतु तथा अभ्यागत प्रशिक्षणार्थियों के सहयोग हेतु धन्यवाद किया ।

उत्तर प्रदेश

धन्वन्तरि अष्टांग आयुर्वेद शोध-संस्थान-दरोगाबाद उन्नाव में धन्वन्तरि जयन्ती धूमधाम के साथ सम्पन्न

उन्नाव, 23 अक्टूबर, तद्नुसार कार्तिक कृष्णपक्ष त्रयोदशी संवत् 2060 को शोध संस्थान के सभागार में उन्नाव जनपद के वैद्यों ने एक सभा का आयोजन कर धन्वन्तरि जयन्ती को हर्षोल्लास के साथ मनाया । वैदिक मंत्रों के मध्य सम्पन्न यज्ञ के बाद विधिवत भगवान धन्वन्तरि का पूजन अर्चन किया गया । इस अवसर पर आधुनिक परिवेश में फैलती महामारियाँ तथा आयुर्वेदिक चिकित्सकों (वैद्यों) के कर्तव्यों एवं दायित्वों विषय पर अपने विचार व्यक्त करते हुए संस्थान के निदेशक वैद्य ओम वीर सिंह "वीर" ने भगवान धन्वन्तरि के शरद ऋतु में ही जन्म लेने पर चर्चा करते हुए कहा कि "जीवेत शरदम् शतम्" का आशीर्वाद देने के पीछे जो वैज्ञानिकता है वही उद्देश्य भगवान धन्वन्तरि के जन्म से जुड़ा है क्योंकि शरद ऋतु में जीवनी शक्ति का क्षय समस्त प्राणियों में हो जाता है । इसी कारण भगवान धन्वन्तरि ने शरद ऋतु में ही जन्म लिया और जीवनी शक्ति किस प्रकार पैदा की जाये इसका उपदेश जनसामान्य को दिया । आगे चर्चा करते हुए उन्होंने संस्थान के शोधों पर क्या-क्या योजनाएं चल रही हैं तथा उनसे जनसामान्य को क्या लाभ मिलने वाला है, के बारे में भी लोगों को जानकारी दी । संस्थान में एड्स, हिपैटाइटिस-बी, वाइरल फीवर, फ्लोराइड जन्य उदर रोग, अस्थिरोग तथा गर्भाशय अर्बुद पर हो चुके सफल शोधों की जानकारी से सभा में उपस्थित समस्त लोगों को अवगत कराया गया । महासम्मेलन के अध्यक्ष वैद्य मुरली प्रसाद लोधी ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि "जरारूजा और मृत्यु के विनाश का उद्घोष करने वाले भगवान धन्वन्तरि के जन्मोत्सव पर आज हम वैद्यों को संकल्प लेना चाहिए कि आजकल जो महामारियाँ फैल रही हैं उन रोगों पर आयुर्वेद में शोध हो । National integrated medical Association के अध्यक्ष तथा धन्वन्तरि अष्टांग आयुर्वेद शोध संस्थान के सहचिकित्सक डॉ० ओमप्रकाश सिंह ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि आधुनिक युग के खान-पान एवं जीवन शैली ने ही आज की महामारी समझी जानेवाली बीमारियों को पनपाया है और एलोपैथिक औषधियों के अविवेकपूर्ण उपयोग ने उनको फैलाने (बढ़ाने) में आग में घी का कार्य किया है । आयुर्वेद में वर्णित आचार रसायन, सद्वृत्त, स्वस्थ वृत, दिनचर्या, ऋतुचर्या, आहार विधि विशेषायतन तथा अपने देश का बना ऋतु अनुकूल आहार-विहार का सम्यक पालन ही महामारियों पर रोक लगा सकता है । Association के कोषाध्यक्ष डॉ०पंकज निगम ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि आयुर्वेद में शोधन चिकित्सा का जो महत्व है उसकी जानकारी को जन-जन तक पहुँचाना हम वैद्यों का कर्तव्य है, क्योंकि जिस प्रकार गन्दे कपड़े को रंगना अच्छा नहीं होगा उसी प्रकार दोषावृत शरीर में औषधियों का प्रयोग निसफल हो जाता है । अतः शोधन का महत्व सर्वोपरि है । ऋतु अनुकूल शोधन करते रहते पर प्राणिमात्र की जीवनी शक्ति सुव्यवस्थित रहती है लेकिन आज तो इषापान भी नहीं किया जाता उसके स्थान पर बेड टी (वैड टी) का प्रयोग हो रहा है । संगठन के उपाध्यक्ष डॉ० संतोष कुमार दीक्षित ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि आज हम दूसरे की रसोई पर निर्भर हैं । बहुराष्ट्रीय कंपनियां हमारा भोजन परोस रही हैं । आये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

दिन वैज्ञानिक विश्लेषण कर पाया जा रहा है उनमें 'विषाक्त पदार्थों' की मात्रा कितनी है। फिर भी आलसीभूत मानव सदियों पुराना वासी भोजन खाने के लिए मजबूर है। एकमात्र कारण आलस्य। अपने घर का भुना चना, छाछ उसे नागवार है। आधुनिकता की चकाचौंध में स्टैन्डर्ड मेनटेन करने के लिए वह विदेशी वासी भोजन खा रहा है। कैसी विडम्बना है महामारियाँ नहीं तो क्या हमें स्वर्ग मिलेगा ? जैसा बोएंगे वैसा ही तो पाएंगें। जैसा खाएंगे वैसा ही हो जायेंगे।

अखिल भारतीय आयुर्वेद उत्थान भारती के अध्यक्ष लक्ष्मण सिंह सोलंकी ने अपने विचार व्यक्त करते हुए जनता-जनार्दन, वैद्य बन्धुओं, पत्रकार बन्धुओं तथा समाजसेवी महानुभावों से यह अनुरोध किया कि अपनी पारम्परिक चिकित्सा पद्धति रहन-सहन तथा कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए जन-सामान्य को प्रेरित करें नहीं तो शीघ्र ही हमारी अस्मिता खतरे में आ सकती है। कहा कि एक ईस्ट इंडिया कंपनी भारत हम व्यापार करने आयी थी अब तो सैकड़ों विदेशी कंपनियाँ भारत में आ चुकी हैं हश्र क्या होगा कल्पनातीत है। अखिल भारतीय आयुर्वेद मंच के कोषाध्यक्ष डॉ० हरिश्चन्द्र सरोज ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि जैसा राजा वैसी प्रजा। स्वदेशी का नारा देने वाले जब विदेशी वेशभूषा में रच बस गये हैं तो हम स्वदेशियों को कौन पूछेगा। अपनी लड़ाई हम सब को मिलकर स्वयं लड़नी है क्योंकि सरकार जनता से बनती है और हम जनता के सेवक हैं। हम अगर जनता के मन को जीत लेंगे तभी हम अपनी अस्मिता को बचा सकेंगे। National integrated Medical Association के सह सचिव डॉ० अरुण कुमार शुक्ला ने उपस्थित विद्वत्जनों का धन्यवाद ज्ञापन करते हुए कहा हम सभी को भगवान धन्वन्तरि का अनुसरण करना पड़ेगा क्योंकि बिना विषपान किए अमरत्व नहीं मिलेगा। कुछ पाने के लिए कष्ट तो उठाना ही पड़ेगा। एलोपैथ को सरकार जो धन मुहैया कराती है उसके परिप्रेक्ष्य में आयुर्वेद को क्या मिलता है। एलोपैथ में क्या शोध हुआ है। सब मशीनों का बोलबाला है। अगर चिकित्सा सिद्धान्तों को निकाल दिया जाये तो उनके पास जीवन भक्षक औषधियों के अलावा कुछ शेष नही हैं। भौतिक विज्ञान की प्रगति को चिकित्सा विज्ञान कहना उचित नहीं है।

आयुर्वेद के सिद्धान्त शाश्वत हैं। क्या आज के युग में जो चिकित्सक आपरेशन करते हैं। भगवान धन्वन्तरि द्वारा कहे यह शब्द उसका वर्णन नहीं करते।

तत्र-तत्र वृणम्कुर्यात यथा दोषो न तिष्ठति।

अन्त में स्वल्पाहार के बाद गोष्ठी का समापन जय आयुर्वेद और जय आयुर्वेद के उद्घोष के साथ सम्पन्न हुआ।

वैद्य ओमवीर सिंह "वीर"
एम.डी.(आयु.)

धन्वन्तरि अष्टांग आयुर्वेद शोध संस्थान में एड्स पर गोष्ठी सम्पन्न

उन्नाव, दरोगाबाग स्थित "धन्वन्तरि अष्टांग आयुर्वेद शोध संस्थान में एक दिसम्बर (विश्व एड्स दिवस) के अवसर पर एड्स विषय पर स्थानीय वैद्यों, डॉक्टरों, समाज सेवियों ने एक संयुक्त गोष्ठी का आयोजन किया जिसमें एड्स की भयावहता व उससे बचाव के बारे में लोगों को जानकारी दी गयी। संस्थान के निदेशक "वैद्य ओमवीर सिंह" ने गोष्ठी में चर्चा के दौरान लोगों को जानकारी देते हुए बताया कि आयुर्वेद में एड्स की चिकित्सा पूर्णरूप से की जा रही है। संस्थान में 2 रोगी एच०आई०वी० निगेटिव किए जा चुके हैं तथा दो रोगियों का इलाज चल रहा है। उनके लक्षणों में दिन-प्रतिदिन सुधार हो रहा है। इसके पूर्व तीन रोगियों का लाक्षणिक आधार पर पूर्ण इलाज किया जा चुका है। जनपद आयुर्वेद सम्मेलन के अध्यक्ष डॉ० मुरली प्रसाद ने एड्स की भयावहता पर प्रकाश डालते हुए कहा कि एड्स रक्त बीज की तरह पूरे विश्व में फैल रहा है। पूरे विश्व में अभी तक इसका इलाज नहीं खोजा जा सका है। यह हमारा सौभाग्य है कि उन्नाव में स्थित शोध संस्थान ने दो रोगियों को एच०आई०वी० निगेटिव कर दिखाया है। नेशनल एण्टीग्रेटेड मेडिकल एसोशिएसन के अध्यक्ष डॉ० ओम प्रकाश सिंह ने अपने विचार व्यक्त करते हुए बताया कि आयुर्वेद का पंचकर्म नाना प्रकार की जटिल व्याधियों में सफलता दिलाने में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपणी है। एड्स ने भी इसके सामने घुटने टेक दिए हैं। आयुर्वेद उत्थान भारती के संयोजक डॉ० राकेश वर्मा ने अपने विचार व्यक्त करते हुए एड्स बचाव एवं पथ्यापथ्य पर चर्चा की। डॉ० राजेश सिंह ने प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग के द्वारा एड्स के रोगी को दी जाने वाली राहत की लोगों को जानकारी दी। जनपद आयुर्वेद महासम्मेलन के अध्यक्ष तथा एन०आई०एम०ए० के कोषाध्यक्ष डॉ० पंकज निगम ने ऋतुचर्या दिनचर्या तथा ब्रह्मचर्य पर जोर देते हुए बहुराष्ट्रीय कम्पनियों से सतर्क रहने की सलाह दी। अन्त में नेशनल इण्टीग्रेटेड मेडिकल एशोसिएसन (NIMA) के उपाध्यक्ष डॉ०एस०के० दीक्षित ने लोगों का धन्यवाद ज्ञापन किया और अल्पाहार के बाद सभा का समापन किया गया।

बिहार

बिहार राज्य में औषधीय पादप बोर्ड का गठन

बिहार सरकार

स्वास्थ्य (चिकित्सा शिक्षा, परिवार कल्याण एवं देशी चिकित्सा) विभाग

संकल्प

औषधीय पादप न केवल स्वास्थ्य रक्षक के रूप में प्रयुक्त होने वाले पौधे हैं बल्कि आय का एक स्रोत भी है। इसका उपयोग न केवल शास्त्रीय पद्धति से निर्मित होने वाले औषधियों में किया जाता है बल्कि आधुनिक चिकित्सा पद्धति के औषधि निर्माण में भी इसका महत्वपूर्ण योगदान है। विश्व में उभरती प्रवृतियों के अनुसार औषधि पादप से निर्मित परम्परागत औषधियों का उपयोग आस्ट्रेलिया, कनाडा, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, फ्रांस, हॉलैण्ड, निर्जरलैण्ड, जापान, मलेशिया आदि देशों में इसके उपयोग में उत्तरोत्तर वृद्धि के संकेत मिल रहे हैं। अन्य देशों के वनिस्बत कॉमन वेल्थ सिक्रेटेरियट के आंकड़ों के अनुसार भारत का निर्यात ऑकड़ा मात्र 0.5% आंकालत किया गया है।

इस परिप्रेक्ष्य में भारत सरकार के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने औषधि पादपों के विकास, संरक्षण एवं सम्वर्द्धन की दिशा में ठोस कार्रवाई करने तथा इसके उत्पादन तकनीक में विकास, प्रोत्साहन, दवा कम्पनियों से क्रय का सम्पर्क सूत्र, बनाने के उद्देश्य से औषधि पादप बोर्ड के गठन का सुझाव राज्य सरकारों को दिया है ताकि कृषि, वन, स्वास्थ्य एवं कृषि विश्वविद्यालय के सहयोग एवं सौजन्य से इसका विकास किया जा सके। बोर्ड पर होने वाला व्यय भारत सरकार द्वारा सम्पोषित होगा। औषधि पादप बोर्ड का कार्यकाल तीन वर्षो का होगा या उस समय तक जब तीन वर्षों बाद राज्य सरकार इसका पुनर्गठन नहीं कर दें।

उपर्युक्त परिप्रेक्ष्य में बिहार राज्य के लिए निम्न रूप में राज्यस्तरीय औषधीय पादप बोर्ड के गठन किया जाता है :-

1. मंत्री, स्वास्थ्य (चिकित्सा शिक्षा, परिवार कल्याण एवं देशी चिकित्सा) विभाग, बिहार, पटना।	अध्यक्ष
2. राज्य मंत्री, स्वास्थ्य (चिकित्सा शिक्षा, परिवार कल्याण एवं देशी चिकित्सा) विभाग, बिहार, पटना।	उपाध्यक्ष
3. मंत्री, कृषि विभाग, बिहार, पटना।	स्थायी विशेष आमंत्रित
4. मंत्री, वन एवं पर्यावरण विभाग, बिहार, पटना।	स्थायी विशेष आमंत्रित
5. सचिव, स्वास्थ्य (चिकित्सा शिक्षा, परिवार कल्याण एवं देशी चिकित्सा) विभाग, बिहार, पटना।	सदस्य
6. सचिव, वन एवं पर्यावरण विभाग, बिहार, पटना।	सदस्य
7. सचिव, उद्योग विभाग, बिहार, पटना।	सदस्य
8. सचिव, विज्ञान एवं प्रावैधिकि विभाग, बिहार, पटना।	सदस्य
9. सचिव, वित्त (वाणिज्य कर) विभाग, बिहार, पटना।	सदस्य
10. सचिव, कृषि विभाग, बिहार, पटना।	सदस्य
11. सचिव, सहकारिता विभाग, बिहार, पटना।	सदस्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

12. सचिव, उच्च शिक्षा विभाग, बिहार, पटना । सदस्य
13. सचिव, योजना एवं विकास विभाग, बिहार, पटना । सदस्य
14. सचिव, कल्याण विभाग, बिहार, पटना । सदस्य
15. निदेशक, (बागवानी) कृषि विभाग । सदस्य
16. प्रधान मुख्य वन संरक्षक, वन एवं पर्यावरण विभाग । सदस्य

देशी चिकित्सा पद्धतियों के फार्मास्यूटिकल उद्योग, विपणन और व्यवसाय राजकीय क्षेत्र के अध्यक्ष द्वारा नामित चार सदस्य :-

17. श्री जगदीश चौधरी, फर्मासिस्ट, केन्द्रीय सरकार, स्वास्थ्य योजना औषधालय, बुद्ध मार्ग, पटना । सदस्य
18. डा० बैद्यनाथ चौधरी, सदस्य, सुनीता मानव कल्याण केन्द्र, ग्राम-मिर्जापुर, पो०- सिरसियाँ, भाया-कलवारी, मुजफ्फरपुर । सदस्य
19. प्रबन्धक, हमदर्द दवाखाना, मुरादपुर, पटना । सदस्य
20. प्रबन्धक, बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन, चिरैयाटाड़, पटना । सदस्य

देशी चिकित्सा पद्धतियों एवं होमियोपैथिक औषधि के निर्यातको औषधीय पादपों के संबंध में जागरूकता पैदा करने और उनकी उपलब्धता बढ़ाने के लिए उत्तरदायी गैर सरकारी, संगठनों औषधीय पौधों के उगने वालों औषधीय पादपों के क्षेत्र में अनुसंधान और विकास करने वाले वर्गों के प्रतिनिधितत्व करने वाले अध्यक्ष द्वारा नामित चार सदस्य :-

21. औषधीय सुगंधित पौधा उत्पादक संघ, बिहार द्वारा सृष्टि फाउण्डेशन, श्री एस०के०पुरी, पटना । सदस्य
22. डा० मोइजउद्दीन, होमियोपैथिक लेबोरेटरी, सहरसा सदस्य
23. डा० (प्रो०) रामजी सिंह, उपाध्यक्ष, सी०सी०एच० शंकर होमियो हॉल कदमकुआँ, पटना । सदस्य
24. डा० रामेश्वर सिंह, पिता श्री फौजदार सिंह, एल०आई०जी० 10/360, हनुमाननगर, पटना । सदस्य

औषधीय पादपों से संबंधित परिसंघों/सहकारी समितियों का प्रतिनिधित्व करने वाले दो अध्यक्ष द्वारा नामित सदस्य :-

25. प्रभारी अधिकारी, एपेडा, द्वारा बिहार स्टेट एक्सपोर्ट डेवलपमेन्ट कॉरपोरेशन, एल०वी०ब्लिडिंग, बुद्ध मार्ग, पटना । सदस्य
26. डा० मो० सलीम, दरभंगा । सदस्य

भारतीय चिकित्सा पद्धति एवं होमियोपैथी की अनुसंधान परिषदों का एक सदस्य भारतीय चिकित्सा भैषज्य संहिता, प्रयोगशाला/होमियोपैथी भैषज्य संहिता प्रयोगशाला, गाजियाबाद का एक सदस्य और राज्य सरकार का प्रतिनिधित्व करने वाले तीन सदस्य:-

27. सहायक निदेशक, क्षेत्रीय आयुर्वेद अनुसंधान संस्थान, पटना सदस्य
28. अनुसंधान पदाधिकारी, क्लीनिकल भेरीफिकेशन यूनिट सी०सी०आर०एच०, कंकडबाग, पटना । सदस्य
29. डा० दिनेश्वर प्रसाद, व्याख्याता, काय चिकित्सा विभाग, रा० आ० का०, पटना । सदस्य
30. डा० नजमूल हसन, अध्यक्ष, बिहार फार्मेसी कॉन्सिल जोनीपुर, सदस्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाया-कमतोल, जिला-मधुबनी ।

31. डा० ज्योति चन्द्र सिंह, होमियोपैथिक चिकित्सक, जिला संयुक्त औषधालय, हाजीपुर, वैशाली । — सदस्य

32. निदेशक, देशी चिकित्सा, स्वास्थ्य (चिकित्सा शिक्षा परिवार कल्याण एवं देशी चिकित्सा) विभाग, बिहार, पटना — कार्यपालक अधिकारी सह सदस्य सचिव

4. राज्य स्तरीय औषधीय पादप बोर्ड के निम्नांकित कर्त्तव्य होंगे :-

1. औषधीय पादपों के विकास के लिए योजनाओं एवं कार्यक्रमों से संबंधित नीति संबंधी मामले पर सरकार को सलाह देना ।
2. खेती के लिए पर्याप्त भूमि और औषधीय पादपों को एकत्र करने, भण्डार, परिवहन के लिए आधारित संरचना वाली एजेन्सियाँ द्वारा प्रस्तुत योजना और कार्यक्रम आदि तैयार करने के लिए मार्गदर्शन प्रदान करना ।
3. औषधि पादपों की पहचान, सूचीकरण एवं परिमाणन ।
4. औषधीय पादपों के बाह्य स्थायी/अस्थायी खेती एवं संरक्षण को बढ़ावा देना ।
5. एकत्र करने वाले और उगाने वालों में सहयोगी प्रयास बढ़ाना और अपने उत्पाद के प्रभावशाली भण्डारण, परिवहन और विपणन के लिए उनकी सहायता करना ।
6. सूचीकरण, सूचना के प्रसार और जनता के अधिकार क्षेत्र में मौजूद पादपों के चिकित्सीय उपयोग के लिए प्राप्त किये जा रहे पेटेन्टों के निर्धारण को सुविधाजनक बनाने के लिए डाटा-वेस प्रणाली की स्थापना करना ।
7. उत्पादों की गुणवत्ता और विश्वसनीयता की प्रतिष्ठा को बढ़ाने के लिए बेहतर तकनीक को अपनाने सहित कच्ची सामग्री की आयात-निर्यात में मार्गदर्शन एवं सहयोग प्रदान करना ।
8. वैज्ञानिक तकनिक, अनुसंधान और किमत के अनुरूप प्रभावकारिता का अध्ययन करना और करवाना ।
9. खेती और गुणवत्ता नियंत्रण के लिए प्रोटोकॉल विकसित करना ।
10. पेटेन्ट के अधिकार और बौधिक सम्पदा अधिकार की सुरक्षा को प्रोत्साहन देना ।

5. बोर्ड आवश्यकतानुसार वित्त समिति, अनुसंधान समिति, मांग एवं आपूर्त्ति समिति इत्यादि गठित कर सकती है और ये समितियाँ बोर्ड को आवश्यक परामर्श दे सकेगी ।

6. बोर्ड द्वारा कोई नई नियुक्ति नहीं दी जायेगी । बोर्ड का कार्य देशी चिकित्सा प्रक्षेत्र को कार्मिको से सम्पादित होगा ।

7. बोर्ड इस संकल्प के सरकारी राजपत्र में प्रकाशन की तारिख से स्थापित होगा और कार्य करना प्रारम्भ करेगा ।

आदेश:- आदेश दिया जाता है कि इस संकल्प को असाधारण गजट में सर्व साधारण की जानकारी हेतु प्रकाशित किया जाय एवं विभाग के प्रयोजनार्थ राजपत्र की 200 मुद्रित प्रतियाँ विभाग को उपलब्ध करायी जाय ।

(अफजल अमानुल्लाह)
सरकार के सचिव

मध्यप्रदेश

श्रीयर पाटीदार को सफेद मूसली की खेती में विशिष्ट कार्य करने हेतु "नेशनल मैग्नम अवार्ड-2000" "भारतीय उद्योग रत्न अवार्ड-2003", "वनौषधि कृषि भूषण पुरस्कार-2003", "विकास रत्न अवार्ड-2003" एवं "नेशनल एचिवमेन्ट अवार्ड फॉर कार्पोरेट लीडरशीप-2003" प्रदान किया गया एवं उनके सुपुत्र मुकेश पाटीदार को "इंडिरा गाँधी इफ्जा अवार्ड-2003" से सम्मानित किया गया ।

हमारे फार्म पर वैज्ञानिक कृषि तकनीक से खेजी की जाती है । मूसली की उन्नत किस्म विकसित करने पर अनुसंधान किया जा रहा है । फार्म का अवलोकन करने आप कभी भी आ सकते हैं । हम हमेशा फार्म पर ही उपलब्ध रहते हैं ।

देश में सफेद मूसली की 20 से अधिक किस्में है, जिसमें सिर्फ Cholorophytum borivilianum ही श्रेष्ठ है । इसमें औषधीय गुण अधिक होने से इसका बाजार भाव अधिक है व इसी की देश व विदेशों में बहुत मांग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है । सफेद मूसली के नाम से यह पूरे देश में पहचानी जाने लगी है । यह त्रिदोषनाशक, बलवर्धक, शुक्रवर्धक, पुष्टिकारक व सर्वोत्तम बॉडी टॉनिक है ।

कृषि तकनीक - इसे ज्यादा ठण्डे प्रदेशों में को छोड़कर देश के लगभग सभी प्रांतों में सफलतापूर्वक पैदा की जा सकती है । भुरभुरी, उत्तम जल निकास वाली, जीवांशयुक्त व क्षार सहित भूमि इसके लिए उपयुक्त है । इसे बोने का ठीक समय 20 मई से जुलाई के प्रथम सप्ताह तक है । इसे बोने की दो विधियाँ है । रिज व फरो (आलु के समान मेढ़) बनाकर व दूसरी 3.5' चौडे रेन्ड बेड़ । बोने हेतु एक एकड़ में 3 से 5 क्विंटल गीले मूसली कंदों की आवश्यकता होती है । मूसली कंदों को 10 से 15 ग्राम के क्राउन युक्त हिस्सों में विभक्त कर 8 से 10 इंच की दूरी पर 2 इंच की गहराई पर बोयें । फसल को 6 से 7 माह के बीच निकालें । औसतन 5 से 7 गुना गीली मुसली (20 से 30 क्विंटल) का उत्पादन होता है, जिसे सुखाने पर 4 से 5 क्विंटल सूखी मूसली प्राप्त होगी । सूखी मूसली का देश में बाजार भाव 1500 से 2000 रु०/किलो तथा अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में लगभग 2 से 3 गुना अधिक भाव रहता है । बीज का मूल्य व कृषि व्यय काटकर प्रतिएकड़ लगभग 2 से 3 लाख रुपये शुद्ध लाभ प्राप्त होता है । देश के सभी प्रमुख शहरों में आसानी से बिक जाती है । देहली प्रमुख मण्डी है । वर्तमान में कई देशों की मांग भी बनी हुई है । मूसली कंदों को प्रोसेस या बुआई दोनों काम में ले सकते है ।

मुसली की फसल रोग और कीड़ों के प्रति सहनशील तथा कम पानी में सुनिश्चित उत्पादन देने वाली एक मात्र फसल है ।

आकर्षक विज्ञापनों, पॉम्पलेट्स, बिचौलियों एवं जंगली मूसली प्रदायकों से सचेत रहें । नकली मूसली, कम चिकनाई वाली सस्ती मूसली व अन्य किस्मों के धोके से बचें । स्वयं किसी भी प्रतिष्ठित फार्म का अवलोकन कर पूर्ण संतुष्टि के बाद ही कन्द बुक करें ।

पुरे देश में निरोग एवं शुद्ध कंद प्रदाय करने वाला एक मात्र संस्थान । हमसे जुड़े किसानों को हमारे अनुभवों का लाभ निश्चित रूप से अधिक उत्पादन लेने में सहायक सिद्ध होता है । हमारी एग्रोटेक्नीक से अधिकतम उत्पादन 7 से 12 गुना तक होता है । प्रोसेसिंग, स्टोरेज एवं विपणन में नि:शुल्क मार्गदर्शन भी मिलेगा ।

हमारे अनुभवों के आधार पर ये जानकारियाँ दी जा रही है । विस्तृत व नवीनतम जानकारी हेतु फार्म पर पधारें । सम्पर्कित मूसली उत्पादकों को हम अधिक उत्पादन लेने हेतु समय-समय पर मार्गदर्शन देते रहते है, जिससे औसत से 1.5 से 2 गुना अधिक उत्पादन लिया जा सकता है । हमारे फार्म पर उत्तम क्वालिटी के शुद्ध एवं स्वस्थ मूसली कंद उचित दर पर मिलते हैं ।

कृषि के अतिरिक्त हमारा अन्य कोई भी व्यवसाय नहीं है । पाटीदार मूसली फार्म देश का बड़ा एवं प्रतिष्ठित मूसली उत्पादक फार्म है । अभी 100 एकड़ में मूसली लगी है । मौसम्बी 20 एकड़ में, 10 एकड़ में नींबू व चिकू, 12 एकड़ में लेमन ग्रास एवं 25 एकड़ में घृतकुमार लगी है । एलोवेरा (बारबाडेन्सीस) व लेमन ग्रास का प्लांटिंग मटेरियल भी उपलब्ध है ।

कंदों का प्रारम्भिक बुकिंग कम दर पर शुरू है, कुछ समय पश्चात मूल्य वृद्धि सम्भव । 100 किलो से कम कंद प्रदाय नहीं किया जाता । 100रु०/किलो बुकिंग के समय व शेष मूल्य खुदाई के समय लिया जाता है । आप चाहें ता कंदों को जून अन्त तक हमारे फार्म पर स्थित एयर कुल्ड स्टोरेज में रख सकते हैं । आज ही वेबसाइट देखें व फोन करें ।

कुछ किसानों ने हमारे मोनों, पॉम्पलेट्स व मूसली फार्म के नाम की नकल की है । हमारा कोई अन्य फार्म व ब्रांच नहीं है । श्रीधर पाटीदार व पाटीदार मूसली फार्म ही उत्तमता एवं विश्वास का प्रतीक है । सुखी मूसली उपलब्ध है ।

"पहले आओ-कम कीमत में पाओं", कहीं ऐसा न हो कि पिछले वर्षो की भाँति आप हमारी फार्म सिलेक्शन शुद्ध बोरिविलिएनम मूसली कंदों के बुकिंग से वंचित रह जायें ।

हमारा सम्पर्क सुत्र है :-

पाटीदार मूसली फार्म एण्ड रिसर्च सेन्टर
ग्राम-पो०- जोतपुर, तह.-मनावर जिला - धार (म०प्र०) 454446
Ph. (07294)267251, 267351 (F/R), 267250,267350(R)
FAX - 07290 - 233217
Emergency Contact - 07290 - 282431
E-Mail-Shridha@patidarmuslifarm.com
Web Site - WWW.patidarmuslifarm.Com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

मानव-अंगों का व्यवसाय - एक घृणित कार्य

आज के भौतिकवादी युग में मनुष्य धर्म, नैतिकता, करुणा, दया एवं संवेदना खो चुका है। उसे केवल पैसा चाहिये। भले ही उसके लिए घृणित कार्य की क्यों नहीं करना पड़े। इन घृणित कार्यों में से सर्वाधिक घृणित कार्य मानव-अंगों का व्यवसाय करना है। इस व्यवसाय में चिकित्सक भी शामिल रहते हैं। रोगी का किसी बहाने आपरेशन करते हैं और आपरेशन के दौरान गुर्दा निकाल लेते हैं। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आई. आई.टी.) चेन्नई के द्वारा किये गये एक अध्ययन के अनुसार इस व्यवसाय में काफी तेजी आयी है। अध्ययन में निम्नलिखित कारण बताये गये हैं।

1. शव के अंगों के प्रत्यारोपण कार्यक्रम का कमजोर होना।
2. राष्ट्रीय या राज्य स्तर में अंगों के निबन्धन हेतु कार्यक्रम का नहीं होना।
3. मस्तिष्क, मृत्यु प्रमाणीकरण प्रक्रिया का विकसित नहीं होना।
4. निधर्नता।
5. स्वास्थ रक्षा में निजी क्षेत्रों की भूमिका।

आकड़ों के अनुसार अधिकांश मनुष्य अपना-अपना गुर्दा वित्तीय कारणों से बेचते हैं। विदित है कि मानव अंग प्रत्यारोपण अधिनियम के यावजूद व्यवसाय बढ़ है। कानून में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है कि दाता रोगी के स्वास्थ्य की देखभाल की जा सके। आंकड़ों के अनुसार प्रतिवर्ष एक लाख व्यक्तियों के गुर्दे खराब होते हैं। 20 से 30 प्रतिशत गुर्दे उच्च रक्तचाप एवं मधुमेह के कारण खराब होते हैं। लगभग दो लाख व्यक्ति प्रतिवर्ष इस रोग से मरते हैं क्योंकि उनके पास चिकित्सा के लिए पैसे नहीं होते हैं। गुर्दा खरीदना काफी मंहगा होता है। यही कारण हैं कि चिकित्सा समुदाय अनैतिकता का सहारा लेते हैं एवं बिना रोगी को सूचित किये गुर्दे निकाल लेते हैं। यद्यपि कानून में प्रावधान है कि प्रत्येक राज्य में अधिकृत समिति होनी चाहिए एवं जो दाता रोगी के संबंधी नहीं हैं उन्हें उस समिति से अनुमोदन लेना चाहिए किन्तु व्यवहार में ऐसा होता नहीं है। रोगी दाता को अपना संबंधी बता देते हैं एवं रजिस्टर पर गलत पता लिखते हैं ताकि कानूनी कार्रवाई से बचा जा सके। सरकार को चाहिए कि नियम में जो खामियां हैं उन्हें दूर करे ताकि मानव अंगों के प्रत्यारोपण को नियंत्रित किया जा सके।

मधुमेह चिकित्सा अब आसान

आयुर्वेद में मधुमेह की चिकित्सा का विस्तृत विवरण मिलता है। कौन-कौन पादप मधुमेह में लाभकारी हैं, इसका भी वर्णन है। आधुनिक चिकित्सक अपने व्यवस्था पत्र में आयुर्वेदिक औषधियों का जिक्र नहीं करते हैं। प्रसन्नता की बात है कि भारतीय विज्ञान कांग्रेस ने अपने 51वें अधिवेशन में इस बात की पुष्टि की है कि मधुमेह पौधों के अणुओं (मोलीकूल) से भी समाप्त किये जा सकते हैं। कलकत्ता स्थित भारतीय रसायन जीव विज्ञान संस्थान में शोधकर्मियों ने पश्चिम बंगाल के पुरुलिया क्षेत्र में पाये जाने वाले औषधीय पादपों पर अनुसंधान किया है। जानवरों पर किये गये प्रयोग में उन्हें सफलता मिली है। अब वे मनुष्यों पर प्रयोग कर रहे हैं। ये अणु मधुमेह रोगियों के रक्त में पाये जाने वाले फैटी एसिड की गतिविधियों को रोक देते हैं। परिणाम यह होता है कि शरीर में ग्लूकोज के पाचन की क्रिया आसान हो जाती है। सामान्य व्यक्ति में ग्लूकोज और फैटी एसिड साथ-साथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहते हैं, किन्तु मधुमेह के रोगियों में फैटी एसिड ग्लूकोज का पाचन करने से इन्सुलिन को रोकती है। यद्यपि आयुर्वेदिक ग्रन्थों में प्रमेह का विस्तृत विवरण है, किन्तु आधुनिक चिकित्सक केवल दो प्रकार के मधुमेह को जानते हैं। प्रथम प्रकार के रोगी इन्सुलिन पर निर्भर रहते हैं जबकि दूसरे प्रकार के रोगी इन्सुलिन पर निर्भर नहीं रहते हैं। आंकड़ों के अनुसार दूसरे प्रकार (टाईप-II) के रोगियों की संख्या 95% है। वर्तमान खोज केवल दूसरे प्रकार के रोगियों से संबंधित है। इसलिए चिकित्सकों को विश्वास है कि इस खोज से सम्पूर्ण विश्व में चिकित्सा विज्ञान में क्रांति आ जायेगी। संस्थान के निदेशक, डा० समीर भट्टाचार्य ने प्रेस को बताया कि करैला, नीम और जामुन पर भी प्रयोग किये गये हैं, किन्तु पुरुलिया से प्राप्त पौधे पर किया गया प्रयोग काफी उत्साहजनक रहा है।

लघु बजट और आयुर्वेद

आसन्न आम चुनाव की संध्या पर केन्द्रीय सरकार ने कई क्षेत्रों में आकर्षक रियायतों की घोषणा की है। स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी उन्होंने घोषणा की है। उदाहरण के लिए जीवन रक्षक दवाओं में आयात शुल्क 25% से घटाकर 20% कर दिया गया है। रक्त दोष की औषिध 'लिगटिस' की कीमत घटकर 82,000 रुपये से 60,000 रुपये प्रति 20 मिली के हिसाब से हो जायगी। एड्स की औषधि पर भी आयात शुल्क घटा है। कृत्रिम अंगों में भी 5% ड्यूटी घटा दी गयी है। काय चिकित्सा, दन्त चिकित्सा, शल्य चिकित्सा और पशु चिकित्सा में प्रयुक्त अनेक उत्पादों पर ड्यूटी 16% से घटकार 8% कर दी गयी है। ड्यूटी के संबंध में माननीय वित्त मंत्री की घोषणा स्वागतयोग्य है। इन घोषणाओं के साथ ही उन्हें आयुर्वेदिक औषधियों एवं औषधीय पादपों के निर्यात शुल्क में भी कटौती की घोषणा करनी चाहिए थी। इससे आयुर्वेदिक निर्यातकों को प्रोत्साहन मिलता एवं आयुर्वेद के प्रचार-प्रसार में भी सुविधा होती।

सूई देने से बढ़ते खतरे

आम तौर पर हमारी मानसिकता रहती है कि व्याधि पर शीघ्र विजय पाने के लिए हम सूई का सहारा लेते हैं। उन चिकित्सकों की हम प्रशंसा करते हैं जो बिना समझे-बूझे सूई का प्रयोग मरीजों पर नहीं करते हैं। दुर्भाग्यवश इससे उत्पन्न होने वाले खतरों से हम अनजान रहते हैं। केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय द्वारा जारी प्रतिवेदन से ज्ञात होता है कि सिर्फ गलत तरीके से सूई देने से देश में प्रतिवर्ष 20 लाख हेपेटाइटिस 'बी', चार लाख हेपेटाइटिस 'सी' और 30 हजार एच.आई.वी. के मरीज पैदा होते हैं। 'इण्डिया क्लेन' ने एक सर्वेक्षण 60 मेडिकल कॉलेज 9 गैर सरकारी संगठन और 6 सार्वजनिक संस्थान में कराया। इस सर्वेक्षण में 2400 सरकारी और गैर सरकारी अस्पतालों तथा 1200 टीका केन्द्रों को शामिल किया गया। अध्ययन से पता चला कि सरकारी अस्पताल और टीका केन्द्रों में सूई असुरिक्षत तरीकों से दी गयी। निजी क्लीनिकों की भी हालत अच्छी नहीं थी। इसके कारण हैं। (1) डाक्टर स्वयं सूई नहीं देते हैं बल्कि उनके सहायक या प्रशिक्षु सूई देते हैं, (2) डिस्पोजिबल सीरिंज का दुबारा इस्तेमाल होता है, (3) शीशे की सीरिंज को ठीक से साफ नहीं किया जाता है (4) अन्य कारण।

आशय यह है कि हमें सूई लेने की मानसिकता बदलनी होगी। हमें सूई उसी समय लेनी चाहिए जब हमारे पास कोई विकल्प नहीं हो। चिकित्सकों को भी अनावश्यक सूई देने से परहेज करना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारावाहिक

आयुर्वेद का इतिहास–52

[1]पं० बनवारी लाल शर्मा
[2]विमल चन्द्र झा

वामदेव

संस्कृत साहित्य का प्राचीन इतिहास[1] में वामदेव का जिक्र है, किन्तु यह जिक्र ऋग्वेद के आधार पर है। जहां तक ऋग्वेद में पाये जाने वाले ऋषियों का प्रश्न है, वे वस्तुतः मन्त्र के द्रष्टा हैं। ऋग्वेद के ऋषिगण विभिन्न कुलों से सम्बद्ध हैं। एक कुल के ऋषियों के द्वारा दृष्ट ऋचों का संग्रह एक मण्डल में किया गया है। प्रथम मण्डल और दशम मण्डल में तो अनेक कुलों के ऋषियों के द्वारा मंत्रों का संकलन है, किन्तु द्वितीय से लेकर सप्तम तक प्रत्येक में एक ही कुल के ऋषियों के मंत्रों का संकलन है। ये ऋषि हैं - (1) गृत्समद, (2) विश्वामित्र (3) वामदेव (4) अत्रि (5) भारद्वाज (6) वसिष्ठ। वामदेव का जिक्र चतुर्थ मंडल में है। अष्टम मंडल में कण्ववंश और अङ्गिरा गोत्र के ऋषियों के मंत्र हैं। दिलचस्प प्रश्न है कि ऋग्वेद के अनेक ऋषियों का जिक्र आयुर्वेदज्ञ के रूप में आयुर्वेद के विभिन्न ग्रन्थों में आता है।

काठक संहिता 10/5 में लिखा है - स वामदेव एतमग्निमविभस्तम वैक्षत स एतत्सूक्तम पश्यत् - कृणुष्व पाजः प्रसितिं न पृथ्वीम् इति। यह सूक्त भी ऋग्वेद में है। इन तथ्यों से यह तो प्रमाणित होता है कि वामदेव वैदिक ऋषि थे, किन्तु उनके आयुर्वेद के प्रणेता होने के प्रमाण नहीं मिलते हैं। हां, चरक संहिता में अन्य महर्षियों के साथ वामदेव का भी जिक्र है। कविराज सूरमचन्द्रजी[3] ने वामदेव के सम्बन्ध में निम्न विवरण दिया है -

मत्स्य पुराण अ० 145 के अनुसार वामदेव अंगिरा-कुल में उत्पन्न हुए थे। वे तप के प्रभाव से ऋषि बने। यथा -

अत्रेर्यो वामदेवश्च अगस्त्यः कौशिकस्तथा।
एतेमे बालखिल्याश्च विश्रवाः शक्ति वर्धनः॥ 93॥
इत्येते ऋषभः प्रोक्तास्तपसा ऋषितां गताः

वाल्मीकीय रामायण 7/1 के अनुसार वामदेव दशरथ का ऋत्विक तथा मंत्री था। ऋक् सर्वानुक्रमणी के अनेक स्थलों से वामदेव का निम्नलिखित वंश वृक्ष बनाया जा सकता है -

अङ्गिरा
↓
रहूगण
↓
गोतम
↓
वामदेव
↓
बृहदुक्थ

यदि हम कविराज सूरमचन्द्रजी के इस वंश-वृक्ष को स्वीकार करें तो वामदेव अङ्गिरा की चौथी पीढ़ी में आते हैं जबकि चरक संहिता के अनुसार हिमालय पर्वत पर जो महर्षि विचार-विमर्श के लिए एकत्रित हुए थे उनमें अङ्गिरा और वामदेव साथ-साथ थे। यह कैसे सम्भव है कि चौथी पीढ़ी के महर्षि और पहली पीढ़ी के महर्षि एक साथ एकत्रित हों। इस तर्क में विरोधाभास है।

कविराजजी ने वामदेव को आयुर्वेद का कर्त्ता माना है। गदनिग्रह, प्रथम भाग, पृष्ठ 176 पर एक योग उद्धृत है -

प्रमेहे वामदेवेन कथिता गुटिका
कटुत्रिकं वंचा मुस्ता विडङ्गं चित्रकं विषम्।
एतानि समभागानि पथ्या च द्विगुणा विषात्।
पञ्चत्रिंशद् गुडाद् भागाः क्वाथचेन्मृदुनाग्निना।

कविराजजी के अनुसार वामदेव को ज्योतिष का भी ज्ञान था। श्री गिरीन्द्रनाथ मुखोपाध्याय[4] ने कोई खास चर्चा वामदेव के बारे में नहीं की है। उन्होंने केवल गद निग्रह में दिये गये योग का जिक्र किया है। संकट के समय उन्होंने अपना जीवन बचाने के लिए कुत्ते की आंत

1. प्रबन्ध निदेशक, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि०, 2 सम्पादक, सचित्र आयुर्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को पकाया था ।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि वामदेव एक वैदिक ऋषि थे । आयुर्वेद से इनका सम्बन्ध अल्प ज्ञात होता है ।

कात्यायन

धर्मशास्त्र का इतिहास[5] में कात्यायन का जिक्र निम्नलिखित रूप में आता है -

प्राचीन भारतीय व्यवहार एवं व्यवहार विधि के क्षेत्र में नारद, वृहस्पति एवं कात्यायन त्रिरानमण्डल में आते हैं । शंखलिखित, याज्ञवल्क्य एवं पराशर ने कात्यायन को धर्मवक्ताओं में गिना है । बौधायन धर्मसूत्र में भी एक कात्यायन प्रमाण रूप से उद्धृत हैं । कात्यायन का काल-निर्णय सरल नहीं है । वे मनु और याज्ञवल्क्य के बाद आते हैं । प्रस्तुत पुस्तक में जो विवरण दिये गये हैं, वे मुख्यत: व्यवहार सम्बन्धी हैं । उनके आयुर्वेदज्ञ होने का इस पुस्तक में कोई जिक्र नहीं है । हिन्दी विश्वकोश[6] में कात्यायन का निम्न परिचय मिलता है ।

धर्मग्रंथों में जिन कात्यायनों का परिचय मिलता है, उनमें तीन प्रधान हैं -

(1) विश्वामित्रवंशीय कात्यायन

(2) गोमिलपुत्र कात्यायन

(3) सोमदत्त वररूचि कात्यायन

(1) विश्वामित्रवंशीय कात्यायन मुनि ने कात्यायन श्रौतसूत्र, कात्यायन गृह्यसूत्र और प्रतिहार सूत्र की रचना की ।

स्कन्दपुराण के नागरखंड में कात्यायन को याज्ञवल्क्य का पुत्र बताया गया है जिसमें उन्हें यज्ञविद्या-विलक्षण कहा है । उस पुराण के अनुसार इन्हीं कात्यायन ने श्रौत, गृह्य, धर्मसूत्रों और शुक्लयुज:पार्षत् आदि ग्रन्थों की रचना की । वास्तव में स्कन्दपुराण के यह कात्यायन विश्वामित्र वंशीय कात्यायन हैं और यही कात्यायन शुक्ल यजुर्वेद के अंगिरसायन की कात्यायन शाखा के जन्मदाता हैं । शुक्ल यजुर्वेद की कात्यायन शाखा विध्याचल के दक्षिण भाग से महाराष्ट्र तक फैली हुयी है । महाभाष्य से ज्ञात होता है कि कात्यायन वररूचि कोई दाक्षिणात्य ब्राह्मण थे । महाराष्ट्र में व्याप्त कात्यायन शाखा इस [illegible] का द्योतक है । शुक्लयजुर्वेद प्रातिशाख्य के बहुत से [illegible] कात्यायनों के वार्तिकों से मिलते हैं । इससे भी [illegible] सम्बन्ध की पुष्टि होती है । स्कन्द पुराण में याज्ञवल्क्य [illegible] आश्रय गुजरात में बतलाया गया है । बहुत संभव है [illegible] याज्ञवल्क्य मिथिला में जा बसे हों तब उनके पुत्र कात्यायन [illegible] महाराष्ट्र की ओर चले गये हों और वहीं कात्यायन [illegible] वररूचि वार्तिककार का जन्म हुआ हो ।

(2) गोमिलपुत्र कात्यायन ने छंदोपरिशिष्ट [illegible] प्रदीप की रचना की है । कुछ लोगों का अनुमान है कि श्रौतसूत्रकार कात्यायन और स्मृतिप्रणेता कात्यायन एक ही व्यक्ति हैं । परन्तु यह सिद्धान्त ठीक नहीं जान पड़ता । हरिवंशपुराण में विश्वामित्रवंशीय 'कति' के पुत्र कात्यायनगण का नामोल्लेख है । कात्यायनगण में वेदशाखा के प्रवर्तक अनेक व्यक्ति हुए हैं और इन्हीं में से एक याज्ञवल्क्य शुक्ल यजु: अर्थात् वाजसनेयि शाखा के प्रवर्तक हैं । [illegible] सूत्रकार कात्यायन इसी वाजसनेयि शाखा के अनुवर्तक हैं । इसी से अनुमान होता है कि विश्वामित्रवंशीय याज्ञवल्क्य के अनुवर्ती कात्यायन ऋषि ही कात्यायन श्रौत के रचयिता हैं और गोमिलपुत्र कात्यायन स्मृतिकार हैं ।

(3) वररूचि कात्यायन ही पाणिनीय सूत्रों के प्रसिद्ध वार्तिककार हैं । पुरूषोत्तमदेव ने अपने त्रिकांडशेष अभिधान कोश में कात्यायन के ये नाम लिखे हैं - कात्य, पुनर्वसु, मेधाजित् और वररूचि । 'कात्य' नाम गोत्रप्रत्यय है, महाभाष्य में उसका उल्लेख है । पुनर्वसु नाम नक्षत्र संबंधी है, 'भाषावृत्ति' में पुनर्वसु को वररूचि का पर्याय कहा गया है । मेधाजित् का कहीं अन्यत्र उल्लेख नहीं मिलता । इसके अतिरिक्त कथासरित् सागर और बृहत्कथामंजरी में कात्यायन वररूचि का नाम 'श्रुतधर' आया है । हेमचन्द्र और मेदिनी कोशों में भी कात्यायन का 'वररूचि' नाम का उल्लेख है । वररूचि कात्यायन के वार्तिक पाणिनीय व्याकरण के लिए अति प्रभावशाली सिद्ध हुए हैं । इन वार्तिकों के बिना पाणिनीय व्याकरण अधूरा सा रह जाता ।.....

.....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अशोक के शिलालेख में वररूचि का उल्लेख है। प्राकृतप्रकाशकार वररूचि का गोत्र भी यद्यपि कात्यायन था, इसी एक आधार पर वार्तिककार और प्राकृतप्रकाशकार एक ही व्यक्ति नहीं माने जा सकते, क्योंकि अशोक के लेख की प्राकृत से वररूचि की प्राकृत स्पष्ट ही नवीन मालूम पड़ती है। फलतः अशोक के पूर्ववर्त्ती कात्यायन वररूचि वार्तिककार हैं और अशोक के परवर्त्ती वररूचि प्राकृत प्रकाशकार। .....हुयेनत्सांग ने बुद्ध निर्वाण से प्रायः तीन सौ वर्ष बाद हुए पालि व्याकरण जिस कात्यायन की अपने भ्रमण वृत्तांत में चर्चा की है, वह कात्यायन भी वर्तिककार से भिन्न व्यक्ति हैं। वह कात्यायन एक बौद्ध आचार्य था जिसने 'अभिधर्म ज्ञान प्रस्थान' नामक बौद्धशास्त्र की रचना की है।

कात्यायन नाम का एक प्रधान जैन स्थावर भी हुआ है। आफ्रेक्ट की हस्तलिखित ग्रंथसूची में वररूचि और कात्यायन के बनाए अनेक ग्रन्थों की चर्चा की गयी है।

प्रस्तुत कोश में दिये गये वर्णन से निम्नलिखित तथ्य स्थापित होते हैं :-

(1) कात्यायन एक ऐतिहासिक पुरूष थे, भले ही उनका सम्बन्ध आयुर्वेद से हो या नहीं।

(2) अशोक के शिलालेख में वररूचि का जिक्र है और वररूचि कात्यायन हो सकते हैं, अतः कात्यायन अशोक के पूर्व हुए होंगे।

पौराणिक कोश[7] में भी कात्यायन का वही जिक्र है जिसका वर्णन ऊपर दिया जा चुका है। इसके अतिरिक्त निम्न वर्णन है -

डा० रमेशचन्द्र दत्त के अनुसार पाणिनि का समय ईसा से 800 वर्ष पूर्व है। डा० दत्त के अनुसार कात्यायन ईसापूर्व नवीं सदी में रहे होंगे। उनका जन्म कौशाम्बी में हुआ था और इनके पिता का नाम सोमदत्त था। एक बौद्ध आचार्य भी इस नाम के हुए हैं जो बुद्ध से 45 वर्ष बाद हुए थे। पाली व्याकरण के कर्त्ता एक बौद्ध आचार्य जिसे पाली में कच्चायन कहते हैं। ब्रह्मा के यज्ञ के अनेक ऋत्विजों में से एक ऋत्विक् का नाम (वायु० 106.37), एक प्रवर का नाम (मत्स्य 192.10; 196.33)

वैदिक कोश[8] में कात्यायन को प्रतिशाख्य, अनुक्रमणी और कल्पसूत्र का एक प्रसिद्ध आचार्य बताया गया है।

प्राचीन संस्कृत साहित्य[9] में कात्यायन के सम्बन्ध में निम्नलिखित संक्षिप्त चर्चा है -

(1) डा० वेबर ने पाणिनि के लेख से साबित किया है कि व्याख्यान, आख्यायान, कथा, आख्यायिकी, इतिहास और पुराण शब्दों की जानकारी कात्यायन के समय थी। किन्तु कात्यायन का इन शब्दों से अर्थ महाभारत, रामायण और पुराण नहीं है। विदित है कि महाभारत को पुराण, आख्यान और इतिहास कहते हैं।

(2) आश्वालयन, बौधायन, आपस्तम्ब और कात्यायन का एक साथ जिक्र है -

यथैव हि कल्पसूत्रग्रन्थानितराङ्गस्मृतिनिबन्धनानि चाध्येत्रध्यापचितारः स्मरन्ति तथाश्वलायनबौधायनाय स्तम्बकात्यायन प्रभृतीन् ग्रन्थकारत्वेन।

(3) कात्यायन सर्वनुक्रमणि के रचयिता थे।

(4) शिव की पत्नी से अभिशापित कात्यायन वररूचि का जन्म वत्स की राजधानी कौशाम्बी में हुआ था।

(5) कात्यायन ने पाणिनि के व्याकरण का शोधन एवं पूर्ण किया।

(6) कात्यायन का जन्म ईसा पूर्व चौथी शती के मध्य में हुआ था।

उपर्युक्त सारे सन्दर्भों से कात्यायन के आयुर्वेदज्ञ होने का परिचय नहीं मिलता है। दिलचस्प बात यह है कि चरक संहिता के सूत्र स्थान में जिन ऋषियों का वर्णन मिलता है उनमें से कुछ कात्यायन के समकालीन प्रतीत होते हैं; किन्तु उनका सम्बन्ध भी पूर्ण रूप से आयुर्वेद से स्थापित नहीं हो पाता है जैसे आश्वलायन, शौनक आदि।

श्री गिरीन्द्रनाथ मुखोपाध्याय[10] ने भी उनके बारे में संक्षिप्त चर्चा की है। उनके अनुसार कात्यायन वार्त्तिककार थे। वे धर्मशास्त्र, श्रौतसूत्र और यजुर्वेद प्रातिशाख्य के रचयिता थे। मैक्समूलर के अनुसार कात्यायन का काल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चौथी सदी के मध्य, गोल्डस्टकर के अनुसार चौथी सदी के प्रारम्भ में और वेबर के अनुसार 25 ई०पू० था ।

वैदिक वाङ्मय का इतिहास[11] में कात्यायन के सम्बन्ध में दिये गये वर्णन निम्न प्रकार से संक्षिप्त किया जा सकता है -

(1) कात्यायन ऋक्सर्वानुक्रमणी के रचयिता थे ।

(2) कात्यायन वार्त्तिककार थे ।

(3) शौनक, आश्वलायन, कात्यायन, यास्क, पाणिनि, पिङ्गल, व्याडी और कौत्स समकालीन थे ।

(4) कात्यायन (सन्दर्भ : व्याकरण शास्त्र का इतिहास) भी शौनक का शिष्य था । ऋक्सर्वानुक्रमणि में वृत्ति में षड्गुरूशिष्य लिखता है - नन च एको हि शौनकाचार्यशिष्यो भगवान् कात्यायनः । कथ बहुवचनम् ।

शौनकाचार्य का शिष्य भगवान कात्यायन अकेला ही है । षड्गुरूशिष्य की सम्मत्ति में यही कात्यायन है जिसने कात्यायन श्रौतसूत्र, उपग्रन्थसूत्र, वार्तिक पाठ अनेक ग्रन्थ बनाए हैं । इसी का एक श्लोकार्ध निम्नलिखित प्रकार से है - स्मृतेश्च कर्ता श्लोकानां भ्राजनाम्नां च कारकः । मैक्समूलर की नजर में भ्राजमान पद समझ में नहीं आता । यह पार्षद हो सकता है । लेखक महोदय का विचार है कि श्लोक बड़ा सरल है और इसका अनुवाद इस प्रकार होना चाहिए - कात्यायन स्मृति का कर्त्ता था । भ्राज नाम वाले श्लोक कात्यायन ने बनाये थे, ऐसा महाभाष्य यस्यशाह्निक में लिखा है । यदि षड्गुरूशिष्य की यह बात मान ली जाय तो शौनक, आश्वलायन, कात्यायन, या एक और पाणिनि समकालीन हो जायेंगे । कैथ[12] के संस्कृत साहित्य के इतिहास में भी कात्यायन को वार्तिककार माना गया है । एक वैयाकरण के रूप में भी उनकी प्रसिद्धि है । कैथ के कात्यायन का काल ई०पू० तीसरी शती रखा है । किन्तु यह काल प्रामाणिक नहीं माना जा सकता है । एक जगह विद्वान लेखक ने कात्यायन को कोशकार (अभिधान लेखक) प्रमाणित करता है । उनकी प्रसिद्ध रचना 'नाममाला' मानी जाती है ।

प्राचीन ग्रन्थों में कात्यायन के सम्बन्ध में जो सामग्री मिलती है उसमें संस्कृत साहित्य से उनका सम्बन्ध ज्यादा प्रतीत होता है, आयुर्वेद के कर्त्ता के रूप में कम ।

आश्वलायन

इतिहास की दृष्टि से जो स्थिति कात्यायन की है, वही स्थिति लगभग आश्वलायन की है । फिर भी एक दृष्टि विभिन्न ग्रन्थों पर डालना चाहेंगे । वैदिक कोश[13] में आश्वलायन के सम्बन्ध में वर्णन है - प्रश्नोपनिषद् (1.1) में कौशल्य आश्वलायन का उल्लेख एक ऋषि के रूप में है, जो अन्य ऋषियों के साथ पिप्पलाद ऋषि के पास ब्रह्मान्वेषण सम्बन्धी प्रश्न पूछने गए थे । यह निश्चित नहीं कि श्रौतसूत्रों की एक शाखा के प्रवर्तक यही थे या अन्य कोई । (तु० वेबर, इस्तू 1.18) । पौराणिक कोश में वर्णन है - छब्बीसवें द्वापर युग में जब पराशर व्यास हुए तब भगवान् का सहिष्णु अवतार हुआ । उक्त सहिष्णु अवतार के चार पुत्रों में से एक पुत्र (वायु० 23.213) । हिन्दी विश्वकोश[15] में निम्न वर्णन है -

ऋग्वेद की 21 शाखाओं में से आश्वलायन अन्यतम शाखा है जिसका उल्लेख 'चरण व्यूह' में किया गया है । इस शाखा के अनुसार न तो आज ऋक् संहिता की उपलब्ध है और न कोई ब्राह्मण ही, परन्तु कवीन्द्राचार्य (17 वीं शताब्दी) की ग्रन्थसूची में उल्लिखित होने से इन ग्रन्थों के अस्तित्व का स्पष्ट प्रमाण मिलता है । इस शाखा के समग्र कल्पसूत्र ही आज उपलब्ध हैं - आश्वलायन श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र और धर्मसूत्र । आश्वलायन श्रौतसूत्र में बारह अध्याय हैं जिनमें होता के द्वारा प्रतिपाद्य विषयों का और विशेष लक्ष्यकर भागों का अनुसंधान विहित है । इसमें पुरोऽनुवाक्या, याज्या तथा तत्तत् शास्त्रों के अनुष्ठान प्रकार, उनके देश, काल और कर्त्ता का विधान, स्वर-प्रतिगर-मंत्र, प्रायश्चित आदि का विवरण विशेष रूप से वर्णित है । नरसिंह के पुत्र गार्ग्य नारायण द्वारा दी गयी इस श्रौतसूत्र की व्याख्या नितांत प्रख्यात है ।

आश्वलायनगृह्य सूत्र में गृह्य कर्म और घरेलू संस्कारों का वर्णन किया गया है । ऋग्वेदियों की गृहस्थियों के लिए यही गृह्य सूत्र विशेष लोकप्रिय तथा प्रसिद्ध है । इसकी व्यापकता का कुछ परिचय इसकी विपुल व्याख्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने भी लगता है । इसके प्रख्यात टीकाग्रन्थों में मुख्य ये हैं: (1) अनाविला (हरदत्त द्वारा रचित; रचनाकाल 1200 ई० के आसपास), (2) दिवाकर के पुत्र नैध्रुवगोत्रीय नारायण द्वारा रचित वृत्ति (1100 ई०); (3) देवस्वामी रचित गूढभाष्य (11वीं सदी का पूर्वार्ध), (4) जयन्त स्वामी रचित विपलोदयमाला (8वीं सदी का अन्त) । आश्वालयनगृह्य को अनेक ग्रन्थकारों ने कारिका के रूप में निबद्ध किया है जो 'आश्वलायन गृह्य कारिका' के नाम से प्रसिद्ध है ।

आयुर्वेदकर्त्ता के रूप में आश्वलायन का जिक्र अत्यन्त कम ग्रन्थों में मिलता है । चरक संहिता में जरूर जिक्र है ।[16] श्री मुखोपाध्याय[17] ने उन्हें श्रौत एवं गृह्य सूत्र का प्रणेता माना है । उनके अनुसार आश्वलायन शौनक मुनि के पुत्र थे एवं उनका काल लगभग 350 ई०पू० था । आयुर्वेद के अनेक इतिहासकारों ने भी आश्वलायन की संक्षिप्त चर्चा की है । उपलब्ध सामग्री से ज्ञात होता है कि आश्वलायन का सम्बन्ध आयुर्वेद से अल्प था ।

काङ्क्ष.ायन

चरक संहिता में अनेक स्थानों पर काङ्क्षायन का जिक्र है । सूत्र स्थान[18] में काङ्क्षायन का जिक्र उन महर्षियों के साथ है, जो हिमालय पर्वत के सुरम्य प्रदेश में एकत्रित हुए थे । आम तौर पर इस अध्याय में वर्णित कुछ ऋषियों का उल्लेख अन्यत्र आयुर्वेदकर्त्ता के रूप में नहीं मिलता है । किन्तु, सौभाग्यवश इसी ग्रन्थ में इसका उल्लेख कई स्थानों पर है । चरक स्थान के सूत्रस्थान[19] के वातकलाकलीय अध्याय में जिक्र है कि वायु के उपशमन हेतु कौन उपाय है ? बाह्लिक देश के चिकित्सक कांकायन ने इस अध्याय में वर्णित वात के प्रकोपक गुण के सम्बन्ध में अन्य आचार्यों से सहमति प्रकट की है । साथ ही उन्होंने वात की शान्ति के उपाय भी बताये । काङ्क्षायन के वचन पर धामार्गव बडिश[20] ने कहा - "आपने यथार्थ ही कहा है; ये ही वात को कुपित एवं शान्त करने में हेतु होते हैं । इस अमूर्त तथा चल वायु को न पाकर भी ये प्रकोपण तथा प्रशमन किस प्रकार उसे प्रकुपित और शान्त करते हैं, इसकी व्याख्या करते हैं ।"

चरक संहिता के सूत्र स्थान के 25 वें अध्याय में हित एवं अहित आहार का वर्णन है । इसी प्रसंग[21] में काङ्क्ष.ायन ने कहा - नहीं ! यदि स्वभाव से ही विकार शरीर तथा अन्य शुभाशुभ भावों की सिद्धि या असिद्धि हो तो कृषि, वाणिज्य, यज्ञ आदि किये गये कर्मों का कोई फल ही न हो - उनका करना निष्प्रयोजन हो जायगा । इसी तरह रस पर विचार-विमर्श[22] करते हुए काङ्क्ष.ायन ने कहा - रस अनगिनत हैं । रसों के आश्रय (द्रव्य), गुण (गुरू आदि), कर्म (धातुओं को बढ़ाना घटाना आदि) तथा संस्वाद (स्वाद) के भेद अनगिनत हैं ।

आशय यह है कि काङ्क्ष.ायन का जिक्र चरक संहिता में अनेक स्थानों पर हुआ है । निश्चय ही वे आयुर्वेदज्ञ थे । वैद्यराज सूरमचन्द्रजी[23] ने लिखा है - "अष्टांग हृदय के सम्पादक श्री हरिशास्त्री वाग्भट विमर्श शीर्षक भूमिकात्मक लेख के पृ० 17 पर काङ्क्ष.ायन की गणना शालाक्य तंत्रकारों में करते हैं ।

सुश्रुत संहिता 1/3 में धन्वन्तरि से शल्य विद्या सीखने वाले आठ शिष्यों के नामों के पश्चात् प्रभृति शब्द प्रयुक्त हुआ है ।

इसकी व्याख्या करते हुए डल्हण अपने से पूर्ववर्ती टीकाकारों का मत उद्धृत करते हुए लिखता है - प्रभृति शब्देन भोजादयः । अन्ये तु ..... प्रभृति ग्रहणान्निभि-काङ्क्ष.ायन गार्ग्य - गालवाः.....। स्पष्ट है कि डल्हण, प्रभृति शब्द से भोज आदि को धन्वन्तरि शिष्य समझता है, परन्तु अन्य आचार्य निमि, काङ्क्ष.ायन, गार्ग्य तथा गालव को धन्वन्तरि से शल्य सीखने वाले समझते हैं । निमि आदि के शल्याचार्य होने का कोई प्रमाण अभी नहीं मिला । अपितु निमि का शालाक्याचार्य होना पूर्ण प्रमाणित है । निमि के साथी काङ्क्ष.ायन आदि भी शालाक्य तंत्रकार प्रतीत होते हैं । सम्भवतः डल्हण भी उन्हें शल्य-तंत्र सीखने वाला नहीं समझता । अतः उसने भोज के साथ उनका नाम ग्रहण नहीं किया ।"

(निरन्तर जारी)

सन्दर्भ

1. A history of Ancient Sanskrit Literature - F.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Max Muller - The Chowkhamba Sanskrit Series office, Varanasi.
2. अगस्त्यो वामदेवश्च मार्कण्डेयाश्वलायनौ - च०सू० 1/9
3. आयुर्वेद का इतिहास - कविराज सूरमचन्द्र बी०ए० ।
4. History of Indian Medicine - Girindranath Mukhopadhyay - University of Calcutta.
5. धर्मशास्त्र का इतिहास - डा० पाण्डुरङ्ग वामन काणे - हिन्दी समिति, सूचना विभाग, लखनऊ ।
6. हिन्दी विश्वकोश, नागरी प्रचारिणी सभा - वाराणसी ।
7. पौराणिक कोश - ज्ञान मण्डल लिमिटेड ।
8. वैदिक कोश - सूर्यकान्त ।
9. देखें क्र०सं०1 ।
10. देखें क्र०सं० 4 ।
11. वैदिक वाङ्.मय का इतिहास- स्व०पं० भगवद्यत्त ।
12. A history of Sanskrit Literature - A. B. Keith - Oxford University Press.
13. देखें क्र०सं० 8 ।
14. देखें क्र०सं० 7 ।
15. देखें क्र० सं० 6 ।
16. अगस्त्यो वामदेवश्च माकण्डेयाश्वलायनौ । - च०सू० 1/9 ।
17. देखें क्र० सं० 4 ।
18. काङ्क्.ायन: कैकशेयो धौम्यो मारीचि काश्यपौ। - च०सू० 1/12 ।
19. तच्छ्रुत्वा वाक्यं कांकायनो बाह्लीकभिषगुवाच। - च०सू० 12/5 ।
20. तच्छ्रुत्वा वाक्यं बडिशो धामार्गव उवाच एवमेतद्यथा भगवानाह, एतान्येव वात प्रकोप प्रशमनानि भवन्ति। - च०सू० 12/6
21. काङ्क्.ायनस्तु नेत्याह् नहयारम्भ फलं भवेत्। भवेत्स्वभावाद्भावानाम सिद्धि: सिद्धिदेव वा। - च०सू० 25/21 ।
22. अपरिसंख्येया रसा इति काङ्क्.ायनो बाह्लीकभिषगाश्च - गुणकर्म संस्वाद विशेषाणाम परिसंख्येयत्वात्। - च०सू० 26/15
23. आयुर्वेद का इतिहास - कविराज सूरचचन्द्र बी.ए. - दिल्ली ।

बैद्यनाथ

ईसब्बेल

आंव, पेचिश, मरोड़, आमातिसार (डिसेन्ट्री), कब्जियत आदि रोगों में बहुपरीक्षित एवं उपयोगी औषधि ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतिस्थौल्य-एक संक्षिप्त परिचय

वैद्य पी०एस०अंशुमान, एच.पी.ए.

परिचय

आयुर्वेद साहित्य में वैदिक साहित्य में वर्णित आठ विरूपों को आठ निन्दितों के रूप में कहा गया है। इन आठ में भी स्थूल एवं कृश प्रमुख होने से विशेष रूप में उल्लेखित किये गये हैं। यहां अतिस्थूल पर संक्षिप्त विचार स्थौल्य या मेदोरोग के रूप में किया जा रहा है।

अतिस्थूल की व्याख्या या परिभाषा देते हुए कहा गया है कि 'मेद और मांस की अस्वाभाविक वृद्धि के कारण जिस व्यक्ति के नितम्ब, उदर एवं स्तन (चेष्टा या गति करने पर) हिलते हैं तथा जिसके शरीर का उपचय या गठन उचित न हो और जिसमें यथोचित उत्साह न हो उसको अतिस्थूल कहा जाता है।

आधुनिकों द्वारा जब किसी व्यक्ति के देह भार में 10% की वृद्धि (उसके आदर्श भार की तुलना में) अधिक हो गई हो तो उसे स्थूल या भारवृद्धिग्रस्त या मेदोरोग ग्रस्त माना गया है।

मेदोरोग (obesity) या मेदस्विता वह अवस्था है जिसमें देह में वसा (फेट) प्रमाण से अधिक हो जाती है (obesity is a condition in which there is an excessive amount of body Fat - Price) इस प्रकार मेदोरोग के रूप में भी इसका ग्रहण किया जाता है।

हेतु[1]- शरीर की आवश्यकता से अधिक केलोरीयुक्त आहार लेना, पर्याप्त व्यायामादि न करना या निष्क्रिय जीवन मेदस्विता के मुख्य कारण हैं तथापि समग्र निमित्तों को निम्न आहार अनुसार रखा जा सकता है।

(क) **आहार**

रस - मधुर (च) (सु) (अ) (मा)

गुणादि - गुरू (च) शीत (च) स्निग्ध (च)(सु)

कर्म - श्लेष्मलाहार (सु) (मा)

अशन - अति (उदर) सम्पूर्णता (च) अध्यशन (सु)

अनादि - शूकधान्य - नवशालि

शमिधान्य- माषादि

मांस - मत्स्य मांस मेदुर मांस

अन्य - दुग्धविकार, इक्षुविकार, मद्य, घृततैलादि।

(ख) **विहार**

निद्रा- दिवास्वप्न (च) (सु) (या)

व्यायाम- अव्यायाम (च) (सु) (या)

व्यवाय- अव्यवाय (च)

अन्य- आस्यसुख, सुखशीलक्त, शीतजल स्नान, स्नेहाभांग।

(ग) **मानस**

अचिन्तन (निश्चिन्तता) (च)।

(घ) **बीज स्वभाव**

(1) माता पिता के बीज में मेदकारक बीजभागावयव दोषयुक्त होना।

(2) सहजानुबंध- आदिबल प्रवृत्त माता पित की स्थूलता में 75% बच्चे स्थूल जन्मबल प्रवृत्त-दौहदापचारज-वराह रसकृत-मधुर मेदुरमांस।

(3) विभिन्न प्रकृति - श्लेष्म प्रकृति, (स्थौल्य) कुल पुसक्ता, जाति पुसक्ता (मेदस्वी कुल एवं समूह) या स्त्रियों में अधिक, देशानुपातिन (द.जर्मनी, लंका, भारत निवासी)

(4) धात्वाग्नि (अन्त:स्राव) दोष-पियूषग्रंथि चुल्लिकग्रन्थि अग्न्यार्यय (ग्रन्थि, उपवृक्क आदि के अन्त:स्रावदोष)

(5) औषध/उपक्रम

1. अतिस्नेहन, स्नेहवस्तियां, द्वारा चिकित्स अतिरेक।
2. वृहणातिरेक, अतिसंतर्पण चिकित्सा अतिरेक
3. औषध विशेष -

तथा

ओस्ट्रोजेन, एन्टीडिप्रेसेन्ट, सिप्रोहेप्टाडीन

(सेवा निवृत्त प्रोफे/प्राचार्य आ.को.भाव.) निवास:1427,ए2/1, कृष्णानगर रूपाणि सर्कल, भावनगर (गुज०)- 364001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फोनोथाईजीन, लोथियम ।

विकृति/सम्प्राप्ति[3]- मेदोवृद्धि या अतिस्थूलता को समझने के लिये मेद चयापचय क्रिया एवं मेद संचय को निम्नलिखित चरणों में समझा जा सकता है ।

(क) चरण

(1) आम अन्नरस का मधुर होने से, स्नेह से मिलकर मेदोवृद्धि करना (सु)(या) ।

(2) मेदावृत्त मार्ग होने से मात्र मेद का ही उपचय होना और अन्य धातुओं का उपचय (पुष्टि) नहीं होना परिणामतः अधिक मेदोवृद्धि होना । (सु) (मा) तथा विषम उपचय होना ।

(3)

- कफ की वृद्धि एवं मेद की वृद्धि होना विशेषतः शिथिल सुकुमार एवं गुरुमेद वृद्धि होना यथा मेदोरोग उदरादिवृद्धि ।
- मात्र मेद का उपचय होना अन्य का उपचय नहीं होना और मेद स्वभाव एवं मेदोदोष से विकृति करना यथा आयुह्रास तथा जनावरोध आदि ।
- विषम धातुत्व होना एवं तज्जन्य लक्षण करना यथा दुर्बलता आदि ।
- मेदावृत्त मार्ग होने से शुक्रादि कम बनने से विकार करना यथा - व्यवाय कृच्छ्रता ।
- मेद स्वभाव-दोष एवं स्वेदल प्रकृति होने से दोष करना यथा दौर्गन्ध ।
- मेद - श्लेष्म संसर्ग, बहुत्व एवं आयासासहत्व से दोष होना यथा स्वेदाधिक्य ।
- अग्नि की तीक्ष्णता, कोष्ठाश्रितवात संचरणता, तथा मार्ग का मेदावृत्त होने से एवं आहार की शीघ्र जरण-शोषणादि होने से विकारोत्पत्ति यथा -क्षुधातृषा होना ।

(ख) घटक

दोष- कफ

दूष्य- मेदोवृद्धि, शिथिल-सुकुमार-गुरू मेद आम अन्नरस ।

अग्नि- कोष्ठाग्नि-तीक्ष्ण (वातकोपज) ।

आम- साम धात्वाग्नि-मेद ।

स्रोत/मार्ग-मेदावृत्त मार्ग तथा कफ संसर्गता ।

लक्षण[4]-लक्षणों को निम्नानुसार रखकर समझना सरल होगा।

(i) प्रत्यात्मलिंग

1. अयथा उपचय, शरीर स्थूल होना, उदर वृद्धि होना, स्तन, उदर, स्फिग हिलना ।
2. देहभार वृद्धि (आवश्यक भार से 10% या अधिक वृद्धि) ग्रीवा-बाहु-उर-उदर-अरू-जंघा आदि के परिणाह (परितः) माप आवश्यक मान से बढ़ना ।

(ii) स्थूलता जन्य दोष रूप लक्षण (आठ प्रमुखदोष)

आयुह्रास (च) अल्पप्राण (सु)(मा) (आशुमृत्यु) जपावरोध (च) उत्साह अल्पता कृच्छ्रव्यवायता (च) अल्पव्यवाय (सु) अल्पमैथुन (मा) दौर्बल्य (च) सर्वकर्माशक्ति (सु) दौर्गन्ध्य (च) गात्र दुर्गन्ध (सु) (मा) स्वेदाधिक्यता (च) (सु) क्षुधाधिक्य (च) (सु) पिपासा अतियोग (च) (सु) (मा)

(iii) अन्य सम्बद्ध लक्षण

क्षुद्रश्वास (सु) (मा), क्रथन (सु) (गललिप्तता) गात्र सदन (सु) या साद (मा), गदगदत्व (सु) मोह (मा) स्वप्न (निद्रा) (सु)(मा)

उपद्रव[5]

(क) - अग्नि एवं मारूत जन्य उपद्रव (च) (मा)
- दारुण (वातादिके) विकार होना (च)(मा)
- प्रमेह (मेह), पिडका (सु) होना, भगंदर (सु) विद्रधि (सु) विसर्प (मो)
- ज्वर होना (सु) (यो.), अतिसार (यो) अर्श (यो)
- श्लीपद (यो) अपचि (यो) तथा कामला (यो)

(ख) - यमनिरोग, तज्जन्य हृद्रोग,
- वृक्करोग एवं मधुमेहादि के उपद्रव
- यकृत, पित्ताशय आदि के रोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेदोरोग लक्षण

क्र	लक्षण	मेदवृद्धि लक्षण	मेदोदोषज लक्षण	अतिस्थौल्य दोषरूप	शीघ्रमारक उपद्रव रूप ल०	अन्य
	स्निधांग	+ (सु)	–	–	–	–
	उदरवृद्धि	+ (सु)(मा)	–	–	–	चलोदर स्तन स्फिग (मा)
	पार्श्ववृद्धि	+ (सु)	–	–	–	–
	कास	+ (सु)	–	–	–	–
	श्वास	+ (सु) क्षुद्रश्वास (मा)	–	–	–	–
	दौर्गन्ध	+ (सु)(मा)(च)	–	+ (च)(मा)	–	–
	ग्रंथि (मेदोज)	–	+ (सु)	–	+ (यो) अपची	–
	वृद्धि ('')	–	+ (सु)	–	–	–
	गलगण्ड ('')	–	+ (सु)	–	–	–
	अर्बुद ('')	–	+ (सु)	–	–	–
	ओष्ठप्रकोप ('')	–	+ (सु)	–	–	–
	मधुमेह	–	+ (सु)	–	+ (सु)	मेहर (मो)
	स्थौल्य	–	+ (सु)	–	–	अयथा
	अतिस्वेद	+ (मा) (च)	+ (सु)(मा)	+ (च) (मा)	–	उपचय (मा)
	प्रमेहपिडिका	–	–	–	+ (सु)	–
	ज्वर	–	–	–	+ (सु) (यो)	–
	भगन्दर	–	–	–	+ (सु)	–
	विद्रधि	–	–	–	+ (सु)	
	वातविकार	–	–	–	+ (सु)	
	अन्त्रबलवानरोग	–	–	–	+ (सु)	
	आयुह्रास	+ (च)	+ (च)	+ (च)	–	अल्पप्राणं (मा)
	जवावरोध	+ (च)	+ (च)	+ (च)	–	–
	कृच्छ्रव्यवाय	+ (च)	+ (च)	+ (च)	–	अल्पमैथुन (या)
	दौर्बल्य	+ (च)	+ (च)	+ (च)	–	सर्वकर्म अशक्ति (या)
	अतिक्षुधा	+ (मा)	+ (च)	+ (च)	–	–
	अतिपिपासा	+ (मा)	+ (च)	+ (च)	–	–
	प्रमेहपूर्वरूप	+ (च)	+ (च)	–	–	–
	मोह	+ (मा)	–	–	–	–
	स्वप्न	+ (मा)	–	–	–	–
	क्रथन	+ (मा)	–	–	–	–

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साद	+ (मा)	–	–	–	–
अतिसार	–	–	–	–	+ (यो)
अर्श	–	–	–	–	+ (यो)
श्लीपद	–	–	–	–	+ (यो)
कामला	–	–	–	–	+ (यो)

चिकित्सा

(क) अनागत बाधा प्रतिषेध

- उत्पत्ति हेतु परिहार (सु) या निदान परिवर्जन
- पथ्य सेवन
- दिनचर्या-ऋतुचर्या आदि स्वस्थवृत्त पालन

(ख) आगत बाधा प्रतिषेध

I चिकित्सा सूत्र

- विरूक्षण (सु) भेदनीय (सु) उल्लेखन (सु) (यो) चिकित्सा
- रूक्ष (च) ऊष्ण (च) तीक्ष्ण (च) द्रव्य एवं उपक्रम प्रयोग
- उद्वर्तन, स्नान, प्रलेप/लेप
- नस्य, कवल, गण्डूष, विरेचन, वस्ति चिकित्सा
- लंघन (यो) उपवास (यो) अपतर्पण (यो) आतपसेवन (यो) मात्रा एवं पदगणन (भैर.) यान

II औषध कल्प

स्वरस - अग्निमंथ (च) पटोल पुटपाक (भै.)

कल्क/चूर्ण - आमलाक (च) त्रिफला (च) (सु) (यो)

त्रिकटु (भै.) गुडुचि-मुस्ता (च) गोरखमुण्डी (भै.)

क्वाथ - वृ०पंचमूल (च)

जल - क्वथित-कोषण जल (यो.) मधूदक (च)

अन्य -

- शिलाजीत, गूगल, लोह, रसांजन के कल्प
- त्र्यूषण लोह (यो.) विडङ्गाद्यलेह (भै.) विडंङ्गलोह (भै.) वडवाग्नि लोह (भै.) लोह रसायन (भै.)
- नवकष गूगल (यो.) (भै.)अमृताद्यगूगल (भै.)
- रस सिन्दूर (यो) त्रिमूर्त्तिरस (यो) वडवाग्नि रस (यो.)
- तक्रारिष्ट (च) लोहारिष्ट (भै.) गोमूत्र (सु)
- क्षार (च) एरण्ड क्षार (भै.)

वाह्य प्रयुक्त कल्प -

उद्वर्तन - हरीतकी चूर्ण (भै.)हरीतक्यादि (भै.) शैलेयद्य (भै.)

लेप - वदरपत्र कल्क, विल्वपत्र स्वरस, वास शंखलेप इमलीपत्र रस + हरिद्रा (भै.) चन्दन कपूर (यो)

स्नान/परिषेक - जाम्बुक्वाथ (जल)

(ग) पथ्य

I आहार

- कटु, तिक्त, कषाय रस युक्त आहार (भै.)
- रूक्ष, ऊष्ण द्रव्य, वातघ्न-श्लेष्महर (च) मांस मेदहर (च)
- पुराणशालि (यो.) (भै) भ्रष्टान्न (च) लाज (भै.)
- श्यामाक (च) (सु) (यो) (भै.) कोरदूष (कोदो) (सु) वनकोदो (यो) उद्दालक (सु)
- यव (च) (यो.भै.) यवक (च) जूर्ण (ज्वार) (च)
- मुद्ग (मूंग) (च) (सु) (यो)(भै.) कुलत्थ (च)(यो)(भै.) चक्रमुद्ग (वनमूंग/मोठ) (च) आढकी (अरहर) (च) (भै.) चना (भै.) (भै.)
- पत्रशाक (भै.) पटोल (च) भृष्ट वृतांक (भै.) अमलक (च)
- सर्षप तैल, तिल तैल (भै.)
- मधु (च) (सु) (यो) (भै) एवं मधुजल (च)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्वथित जल (भै.) तक्र (भै.) मदिरा (भै.र.)
- चिंगटमत्स्य (भै.)
- मण्ड, पेया, सत्तू, भृष्टान्न आदि कल्पानायें।

II विहार
- प्रजागंद (का क्रमशः अभ्यास) (च) (यो) (भै.)
- व्यायाम (अभ्यास) (च) (सु) श्रम (यो) (भै)
यात्रा-मार्गगमन (यो) हस्त्यानदिसेवन (यो.)
- व्यवाय (क्रमशः अभ्यास)(च)(मो.)(भै.)

III मानसिक
- चिन्तन (क्रमशः अभ्यास) (च) (सु) (मो)(भै)

संदर्भ/आधार (स्थौल्य-मेदोरोग)

1. तत्रातिस्थूलकृशयोर्भूय एवापरेनिन्दित विशेषा भवन्ति ।
च.सू. 21/3

मेदोमांसातिवृद्धत्वाच्चलस्फिगुदरस्नः, अयथापचयोत्साहो नरोऽतिस्थूल उच्यते ।
च.सू. 21/8, मा.नि. 34/9

2. तदतिस्थौल्यमति सम्पूरणाद् गुरूमधुरशीतस्निग्धो पयोगाद-व्यायामादव्यवायादि्दवास्वप्नार्द्धनित्यत्वाद चिन्तनाद् वीज स्वभावाच्चोपजायते xx ।
च.सू. 21/3

तत्रश्लेमलाहार .सेविनोऽध्मशनशीलस्याव्यायामिनो दिवास्वप्नरतस्य xx।
सु.सू. 15/32

अव्यायामदिवास्वप्नश्लेष्माहार सेविनः
मधुरोऽन्नरसः प्रायः स्नेहान्मेदः प्रवर्धयेत् ।
मा.नि. 34/1, यो.र. मेदो.

3. चामएवान्नरसो मधुरतश्च शरीरमनुक्रामन्नति स्नेहान्मेदो जनयति, तदतिस्थौल्यमापादयति
(सु.सू. 15/33)

xxxx
मधुरोऽन्नरसः प्रायः स्नेहान्मेदः प्रवर्धयेत् ।
मेदसाऽऽवृत्तमार्गात्वात्पुष्यन्त्यमेन धातवः ।
मेदस्तु चीयते तस्मादशक्तः सर्वकर्मसुः ।
मा.नि. 34/1-2

4. अतिस्थूलस्य तावदायुषो ह्रासो जवावरोधः कृच्छ्र व्यवायता दौर्बल्य दौर्गन्ध्यं स्वेदाबाधः क्षुदतिमात्रं पिपासातियोगपूचेति भवन्त्मष्टौ दोषाः ।

xxxx
तस्यातिमात्रं मेदस्विनो मेद एवोपचीयते न तथेतरे धातवः तस्मादायुषोह्रासः, शैथिल्यात् सौकुमार्याद् गुरुत्वाच्च मेदसोजवोपरोधः, शुक्राबहुत्वान्मेद सावृत्तमार्गत्वाच्च कृच्छ्रव्यवायता, दौर्बल्यमसमत्वाद्धातूनां, दौर्गन्ध्यं मेदोदोषान्मेदस;, स्वाभावात्स्वेददलत्वाच्च, मेदस; श्लेष्म संसर्गाद्विष्यन्दि्त्वादबहुत्वाद्वायायामा सहत्वाच्च स्वेदावाधः, तीक्ष्णाग्नित्वात्प्रभूतकोष्ठवायुत्वाच्च क्षुदतिमात्रं पिपासातियोगश्चेति । भवन्ति चात्र मेदसावृत्तमार्गत्वाद्वायुः कोष्ठे विशेषतः । चरन् संधुक्षयत्यग्निमाहारं शोषयत्यपि । तस्मात्स शीघ्रं जरत्याहारं चाति कांक्षति । विकारांश्चाश्नुते घोरान् कांश्चित्कालष्यति क्रमात् ।
च०सू० 21/3-4

तमतिस्थूलं क्षुद्रश्वासपिपासाक्षुत्स्वप्नस्वेद मात्रदौर्गन्ध्य क्रथनगात्र साद गद्गदत्वानि क्षिप्रमेवाविशन्ति । सौकुमार्यान्मेदसः सर्वक्रियास्वसमर्थः कफमेदोनिरूद्धमार्ग त्वाच्चाल्प व्यवायो भवति, आवृत्तमार्गत्वादेव शेषा धातवोनाप्यामन्तेऽव्यर्थमतोऽल्पप्राणो भवति ।
सु.सू. 15/32

xxxx
मेदस्तु चीयते तस्मादशक्तः सर्वकर्मसुः ।
क्षुद्रश्वासतृषामोहस्वप्नक्रथनसादनैः,
युक्तः क्षुत्स्वेददौर्गन्धैरल्पप्राणोऽल्पमैथुनः ।
मेदस्तु सर्वभूतानामुदरेष्वस्थिषु स्थितम्
अत एवोदरे वृद्धि प्रायो मेदस्विनो भवेत् ।
मेदसाऽऽ वृतमार्गत्वायुः कोष्ठे विशेषतः
चर-संधुक्षयत्यग्निमाहारं शोषयत्यषि ।
तस्मात् स शीघ्रं जरयत्याहारमभिकांक्षति,
विकारांश्चाप्नुते घोरान्कोश्चित्कालष्यतिक्रमात् ।
मा.नि. 34/2-7

5. एतानुपद्रवकरौ विशेषादिग्रिमारूतौ
एतो हि दहतां स्थूलं वनदावो वन यथा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेदस्यतीव सवृद्धे सहसैवानिलादयः
विकारान् दारूणान् कृत्वानाशयन्याशु जीवितम् ।
च.सू. 21/6-9

प्रमेह पिडिका ज्वर भगन्दर विद्रधिवात विकाराणामन्यतमं प्राप्य पञ्चत्वमुषयाति, सर्व एवं चास्य रोगा वलवन्तो भवन्त्यावृत्तमार्गत्वात् स्रोतसाम् ।
सु.सू. 15/32

xxx
विकारांश्चाप्नुते घोरा कांश्चित्कालव्यतिक्रमात् ।
एवावुपद्रवकरौविशेषादग्निमारूतौ, एतौ तु दहतः स्थूलं वनदावो वनं यथा । भेदस्यतीव संवृद्धे सहसैवानिलादयः, विकारान्दारूणान्कृत्वा नाशमन्त्याशु जीवितम् ।
मा.नि. 34/6-8

स्थूलं स्युर्दुस्तरा रोगाः विसर्पाः सभगन्दरा, ज्वरातिसार मेहार्शःश्लीपदापचि कामलाः ।
(यो.र. मेदो.)

6. स्थौल्यचिकित्सा (चरक)
वातघ्नान्यन्नपानानि श्लेष्ममेदोहराणि च,
रूक्षोष्णा बस्तयस्तीक्ष्णा रूक्षाण्युद्वर्तनानि च । 20
गुडुचीभद्रमुस्तानां प्रयोगस्त्रैफलस्तथा,
तक्रारिष्टप्रयोगस्तु प्रयोगो माक्षिकस्य च । 21
विडङ्ग.नागरं क्षारः काललोहरजो मधु,
यवामलकचूर्ण च प्रयोगः श्रेष्ठ उच्यते । 22
विल्वादिपञ्चमूलस्य प्रयोगः क्षौद्रसंयुतः,
शिलाजतु प्रयोगस्तु साग्निमंथरसः परः । 23
प्रशातिका प्रियंगुश्च श्यामाकायवका यवाः,
जूर्णाह्वाः कोद्रवा मुद्गाः कुलत्थाश्चक्रमुद्गकाः । 24
आढकीनां च वीजानि पटोलामलकैः सह,
भोजनार्थं प्रयोज्यानि xx
xx पानं चातु मधूदकम् । 25
अरिष्टांश्चानुपानार्थे मेदोमांसकफापहान्,
अतिस्थौल्याविनाशाय संविभज्य प्रयोजयेत् । 26
प्रजागदं व्यवायं च व्यायाम चिन्तनानि च,
स्थौल्यंमिच्छन् परिव्मक्तुं क्रमेणाभिप्रवर्धयेत् । 29
स्थौल्य चि० (सुश्रुत) (च.सू. 21/20-29)
xx सर्व एव चास्य रोगा बलवन्तो भवन्ति,
आवृत्तमार्गत्वात् स्रोतसाम् । अतस्तयोत्पत्तिहेतुं परिहरेत्।
उत्पन्नेतु शिलाजतु गुग्गुल गोमुत्रत्रिफला लोह
रजोरसाञ्जन मधु मवमुद्ग कोरदूषश्यामाकोद्दालकादीन
विरूक्षणच्छेदनीयानां च द्रव्याणां विधितदुपयोगः।
व्यायामोल्लेखन वस्त्युपयोगश्चेति ।
सु.सू. 15/-

यो.र. (मेदोरोग)
यो.र. 36

बैद्यनाथ
पंचसकार चूर्ण
पेट साफ कर पाचन शक्ति को बढ़ाता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेदीय ग्रन्थों में गोदधि

[1]डा० मोहनलाल पाठक, एम.डी. (आयु.)
[2]डा० आदर्श कुमार, एम.डी. (आयु.)

आयुर्वेद प्राचीनतम चिकित्सा पद्धति है । यह जीवन को बनाये रखने के लिये सर्वाङ्ग पूर्ण, उत्तम, सर्वश्रेष्ठ तथा सभी स्वस्थ रक्षक पद्धतियों में अग्रणी है । आयुर्वेद में शारीरिक एवं मानसिक दो प्रकार की मुख्य व्याधियां हैं जो शारीरिक एवं मानसिक दोषों के संतुलन न रहने पर उत्पन्न हो जाती हैं । इन व्याधियों को शांत करने तथा स्वस्थ शरीर को स्वस्थ बनाये रखने के लिये अनेक प्रकार के उपाय यथा औषध सेवन तथा उचित आहार विहार आदि का पालन करना चाहिए । क्योंकि धर्म का मुख्य साधन भी स्वस्थ एवं निरोग शरीर है "शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्" इस उद्देश्य पूर्ति के लिये अनेक प्रकार के पशुओं तथा जानवरों से प्राप्त होने वाले बहुमूल्य द्रव्यों का उलेख आता है । अथर्ववेद में सभी पशुओं में गो को श्रेष्ठ पशु माना है । इसलिये गाय से प्राप्त होने वाले उत्तम द्रव्य दूध, दही, घृत, गोमूत्र तथा गोमय है । इनको ही पंचगव्य की संज्ञा दी गई है । वशिष्ठ स्मृति में आत्म शुद्धि के लिये इस पंचगव्य का पांच दिन तक आहार सेवन करने का विधान बतलाया है । पंचगव्य का गो वर्ण के आधार पर ग्रहण करने का उलेख ग्रन्थों में किया गया है । यथा लाल वर्ण की गाय का मूत्र, श्वेत वर्ण का गोबर, कांचन वर्ण का दूध, नील वर्ण का दही, चितकबरी वर्ण का घृत लेना चाहिये । पृथक्-पृथक् वर्ण की गाय न मिलने पर कपिल वर्ण गाय के सभी द्रव्यों का प्रयोग किया जा सकता है । यम स्मृति में गाय के पंचगव्य के लिये विभिन्नता पाई गई है । यहां पर श्वेत वर्ण गाय के दही लेने का विधान पाया गया है । (श्वेताया दधि चोच्यते ।। कपिलाय घृतं ग्राह्यं महापातक नाशनम्)

पंचगव्य सेवन करने से शरीर में किसी प्रकार का पाप नहीं रहता है । इसीलिये धार्मिक पुरूष दूध दही एवं घृत का सेवन करते हैं । ये सभी पदार्थ श्रेष्ठ, शुभ तथा प्रिय माने जाते हैं । दधि 20 दिन तक शरीर में अपना प्रभाव बनाये रखता है । भाग्यवान पुरुष को ही इनके सेवन का सौभाग्य प्राप्त होता है । पंचगव्य तथा गो षड्ङ्ग में गो दही का प्रयोग होता है । गोघृत तथा दही के बिना यज्ञ सम्पत्र नहीं होते तथा इन्हीं से यज्ञ का यज्ञत्व सफल होता है ।

ऋते दधि घृतेनेह न यज्ञः सम्प्रवर्तते ।
तेन यज्ञस्य यज्ञत्वमतो मूलं च कथ्यते ।।

धार्मिक ग्रन्थों में गोदधि में सोम का वास बतलाते हुए कहा है :-

गोमूत्रे च तथा गङ्गा दधिक्षीरघृतेषु च ।
सदा व्यवस्थितं सोमम् रोचनायां सरस्वती ।।

गो के अङ्गों में स्थित देवताओं का अक्षत छोड़ते हुए आवाहन करने के निर्देश दिये गये हैं । "**दधि नर्मदायै नमः नर्मदाम् आवाहयामि ।**" अर्थात् दही में स्थित नर्मदा देवी को नमस्कार है, मैं नर्मदा देवी का आवाहन करता हूँ । "दधिक्राण्णो" इस मन्त्र द्वारा दही को भी अभिमन्त्रित किया जाता है ।

Central Library
Gurukul Kangri University
Haridwar 249404 (U.A.)

भगवान श्री राम जी को भी दही बहुत प्रिय था । इसलिये श्री रामचरितमानस में लिखा है-

"भाजि चले किलकत मुख दधि ओदन लपटाइ ।"

प्राचीन काल में हमारे ऋषियों ने दही के मन्थन को उत्तम कहा है । धार्मिक कार्यो में भी दही की बहुत उपयोगिता है । यज्ञ, पूजन, व्रत, विवाह तथा अनेक प्रकार के उत्सवों में दही का प्रयोग किया जाता है । दही को शगुन का सर्वोत्तम पदार्थ माना गया है । दूध तथा दही का गिरना भी अशुभ माना गया है । ये द्रव्य स्नान तथा पेय के लिये भी श्रेष्ठ कहे गये हैं ।

आयुर्वेदीय चिकित्सा की दृष्टि से दही का बहुत महत्त्व है । चरक, काश्यप संहिता तथा वाग्भट्ट की अपेक्षा सुश्रुत संहिता तथा भावप्रकाश में इसका विस्तार पूर्वक वर्णन पाया गया है। सुश्रुत संहिता में इसकी गणना अम्लवर्ग द्रव्यों में की गई है तथा शिष्योपनयनीयाध्याय में तो दही से आहुति देने का उलेख भी आता है । चरक ने

1. सेवानिवृत्त प्रोफेसर एवं सुपरिंटेंडेंट, राजकीय आयुर्वेदिक कालेज/फार्मेसी, पटियाला ।
2. सहायक प्रोफेसर, रसशास्त्र विभाग, सरकारी आयुर्वेदिक कालेज, पटियाला ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दही की गणना स्नेहन द्रव्यों में की है तथा रोगी गृह में दही तथा दही की कल्पना मस्तु तथा उद्श्वित द्रव्यों का निर्देश दिया है । दही की उपयोगिता तथा पवित्रता को देखते हुए कहा है **''नाशेषभुक्स्यादन्यत्र दधि मधुलवणसक्तुसर्पिर्भ्य---/''** दधि के महत्त्व को देखते हुए सम्पूर्ण खाने का निर्देश दिया है । इसका शेष छोड़ना भी धार्मिक दृष्टि से ठीक नहीं है । इसीलिये दही का उलेख भी प्रशस्त द्रव्यों में किया गया है । अष्टाङ्गहृदय में चिकित्सक के मार्ग में एवं आतुर के गृह प्रवेश के समय दही को शुभ शकुन होने के कारण आरोग्य सूचक माना गया है । काश्यप संहिता में दूध से दही बनने की प्रक्रिया में उष्मा होना अवश्य माना गया है । उत्तम एवं दीर्घायु पुत्र के लिये शालि, सफेद जौ, दूध, दही, तथा घृत को उचित मात्रा में मिलाकर देना लाभप्रद है । विभिन्न प्रकार के दही में गाय का दही सबसे श्रेष्ठ एवं गुणकारी है **''--उक्त दध्नामशेषाणां मध्यं गुणाधिकम् ।''**

दही का प्रयोग ज्वर, विषम ज्वर, अतिसार, प्रवाहिका, ग्रहणी, छर्दि, तृष्णा, अरुचि, आनाह, प्लीहोदर, हृदय शूल, हृदय रोग, वस्ति शूल, मद, मूत्रकृछ्रता, प्रतिश्याय, कास, यक्ष्मा, रक्तभिष्यन्द, कर्ण रोग, अक्षि रोग अर्धावभेदक, सूतिका रोग, मस्तिष्क संताप, कुक्कणक तथा विसर्प में लाभप्रद है ।

कुष्ठ, शोथ, सन्निपातज रोग तथा कृमि में दही को अपथ्य बतलाया गया है । व्रणी पुरूषों में भी दही का निषेध है । प्रमेह, कुष्ठ, शोथ, रक्तदुष्टि, रक्तपित्त, कफज गुल्म, अर्श, उर:स्तम्भ, ध्वजोपघातज नपुंसकता, असृग्दर, स्तन्य रोग तथा कफ कृमि रोगों का उत्पादक कारण होने पर भी अन्य द्रव्यों के साथ दही, दही मस्तु, आदि प्रयोग किया गया है । यथा दही अर्श रोगोत्पादक होने पर भी चित्रकमूल चूर्ण को बर्तन में लिप्त कर बनाये हुए दही तथा शुष्क अर्श में दही के पानी का अनुपानार्थ प्रयोग किया गया है । रक्तपित्त में करंज बीज तथा लवण को उष्ण करके दधिमस्तु से प्रयोग किया गया है । शोथ में पंचगव्य घृत लाभप्रद है । कफ प्रधान वातरक्त में दधिमस्तु तथा अन्य द्रव्यों से साधित घृत से अभ्यङ्ग करना लाभप्रद है । दही से सिद्ध पिप्पली प्रयोग सन्निपात रोग में किया गया है । गुल्म के अन्नपान में दहीमस्तु तथा तक्र बतलाये गये हैं । अत:. केवल दही उक्त रोगों का कारण है लेकिन अन्य द्रव्यों से मिलाकर सेवन करने पर लाभप्रद भी है ।

रस शास्त्र एवं भैषज्य कल्पना में दधि का महत्त्व :-

1. अभ्रक मारण :-

दध्ना घृतेन मधुना स्वच्छया सितया तथा ।
एकमेकं पुटं दद्यादभ्रस्यैवं मृतिर्भवेत् ॥
(र.सा.सं1/160-165)

2. अभ्रक सत्व पातन :-

पञ्चाजं पञ्चगव्यं वा धर्म दत्वा विशोषयेत् ।
---------- सत्वं समाहरेत् ॥
(र.त.10/97)

3. तुत्थ शोधन तथा मारण :-

---- पुटं दध्ना: तथा क्षौद्रैर्देयं तुत्थविशुद्धये ॥
(शा.सं.म.11/58-59)

4. राजावर्त सत्वं पातन :-

सौभाग्यपञ्चगव्येन पिण्डीबद्धन्तु जारयेत् ।
ध्मापितं खदिराङ्गारैः सत्व मुञ्चति शोभनम् ॥
(र.र.समु.4/10-11)

5. पारद भस्म सेवन समय पथ्य द्रव्य :-

गोधूमीर्णशाल्यन्नं गव्यं क्षीरं घृतं दधि ।
हंसोदकं मुद्गरसः पथ्यवर्गः समासतः ॥
(र.र. समु. 11/124-125)

6. रस कार्य सिद्धि में प्रयुक्त पञ्चामृत में दही की गणना :-

गव्यं क्षीरं दधि घृतं माक्षिकञ्चाथ शर्करा ।
पञ्चामृतं समाख्यातं रसकर्मप्रसाधकम् ॥
(र.त.2/21)

7. पञ्चगव्य में दही की गणना:-

गव्यं क्षीरं दधि घृतं गोमूत्रं गोमयं तथा ।
एकत्र योजितं तुल्यं पञ्चगव्यमिहोच्यते ॥
(र.त. 2/23)

8. स्नेह निर्माणार्थ कल्क का परिमाण :-

-- दुग्धे दध्नि रसे तक्रे कल्को देयोऽष्टमांशक: ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कल्कस्य सम्यक्पाकार्थं तोयमत्र चतुर्गुणम् ॥
(शा.सं.म.9/6-7)

अभ्रक मारण एवं सत्व पातन, तुत्थ शोधन तथा रसेन्द्र, राजावर्त सत्वपातन आदि निर्माण के समय दही का प्रयोग होता है । पारद भस्म प्रयोग करते समय दही का प्रयोग पथ्य बतलाया है । परिभाषा विज्ञानीय अध्याय में पारिभाषिक पंचामृत, पंचगव्य शब्दों का उलेख आता है । परन्तु रस विशेषज्ञ वैद्य को रस निर्माण से पूर्व इन पारिभाषिक शब्दों का ज्ञान होना आवश्यक है । गाय का दूध, घृत, दही, मधु एवं शर्करा इन पांचों द्रव्यों को पंचामृत कहते हैं । रस शास्त्र में इनका अनेक कार्यों के लिये प्रयोग किया है । पंचगव्य की परिभाषा में दही की गणना की गयी है । स्नेह (घृत तथा तैल) निर्माण यदि दधि से करना हो तो कल्क का परिमाण स्नेह की अपेक्षा अष्टमांश लेने का विधान बताया गया है । कल्क, यूष, यवागू, चांगेरी घृत, प्रसारणी तैल, सर्षपादि लेप, गोक्षुरादि योग, पिप्पलमूलाद्य चूर्ण, रसमाणिक्य, कनकसुन्दर रस, एवं वृष्य महीष रस, कदलीस्वल्वण स्वेदन आदि अनेक प्रकार की कल्पनाओं का उल्लेख ग्रन्थों में आता है जिनमें दधि का प्रयोग किया जाता है । इसके अतिरिक्त अनेक औषध योगों का प्रयोग करते समय अनुपान रुप यथा श्वित्रारि रस, चन्द्रप्रभा गुटिका, कुमारकल्याणादि चूर्ण, नवायस चूर्ण, लवण भास्कर चूर्ण आदि में पथ्य रूप यथा लोकनाथ रस, रसोत्तम, ग्रहणीगजकेसरी, त्रिभुवनेश्वर रस, अमृतार्णव रस, लोकेश्वर रस में दही प्रयोग करने के अनेक संदर्भ पाये जाते हैं ।

पञ्चकर्म में दधि का महत्त्व :-

1. अभ्यंग :-

पाण्ड्वामयौ पिबेत्सर्पिरादौ कल्याणकाह्वयम् ।
पंचगव्यं महातिक्तं श्रृतं वाऽऽरग्वधादिना ॥
(अ.हृ.चि.16/1-4)

2. अभ्यंग :-

...मूत्रसुराशुक्तमधुकसारिवापद्मकसिद्धं वा घृतमभ्यङ्ग.॥
(सु.सं.चि.5/10)

3. स्नेहन :-

पिप्पल्यो लवणं स्नेहाश्चत्वारो दधिमस्तुकः ।
पीतमैकध्यमेतद्धि सद्यः स्नेहनमुच्यते ॥
(सु.सं.चि. 31/38)

4. नाडी स्वेदन :-

..... । वसादध्यारनालाम्लैः सह कुम्भयां विपाचयेत् ।
नाडी स्वेदं प्रयुञ्जीत.....॥
(च.सं.चि.28/110-112)

5. उष्म स्वेद :-

... मांसरसपयोदाधिस्नेहधान्याम्लवातहरपत्रभङ्ग क्वाथ-
पूर्णा वा कुम्भामनुतप्तां प्रावृत्योष्माणं ग्रह्णीयात् ।
(सु.सं.चि.32/5)

6. सङ्कर स्वेद :-

.....किण्वातसीदधिक्षीरसंयुक्तैः पिण्डकैः कृतैः ।
स्थानस्वेदनमिच्छन्ति सङ्करस्वेद उच्यते ।
(क.सं.सू. 23/41-42)

7. उपनाह स्वेद :-

किण्वातसीदधिक्षीरलवणैः साम्लचिक्कणैः ।
कुष्ठादिभिश्च सस्नेहरूपनाहः प्रशस्यते ॥
(क.सं.सू. 23/43)

8. परिषेक तथा प्रलेप :-

सुरा समण्डा दध्यम्लं मातुलुङ्गरसो मधु ॥
सेके प्रदेहे शस्यन्ते दाहघ्नाः साम्लकाञ्जिकाः ।
(च.सं.चि. 24/161)

9. परिषेक तथा अवगाहन :-

...दशमूलादिवातहरैर्द्रव्यैर्मस्तुसलिलसुराक्षीर
शुक्तादिभि.....परिषेचयेत् ॥
(अ.संग्रह.)

10. वमन कर्म :- इक्ष्वाकु साधित दही प्रयोग :-

जीर्णे मध्योद्धृते क्षीरं प्रक्षिपेत्तद्यादा दधि ॥
जातं स्यात् सकफे कासे श्वासे वम्यां च तत् पिबेत् ।
(च.क. 3/8-9)

11. विरेचन कर्म :-

.....॥ दधिमण्डेन वा युक्तं रसेनामलकस्य वा ।
कृत्वा शीतकषायं तं पिबेत् सौवीरकेण वा ॥
(च.क. 8/9)

12. अनुवासन वस्ति कर्म :-

आनूपौदकमज्जानो वसा तैलं घृतं दधि ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विपक्वमेकतः शस्तं वातगुल्मेऽनुवासनम् ॥
(सु.उ. 42/22)

13. अभ्यञ्जन, पान तथा वस्ति कर्मः-

....क्षीरप्रस्थो दधिप्रस्थो जलप्रस्थस्तथैव च ।
....अभ्यञ्जनेषु पानेषु बस्तिकर्मणि चोत्तमम् ।
(का.सं.दुष्प्रजाता चि.सू. 13-23)

अतः दधि का प्रयोग बाह्य स्नेह अभ्यङ्ग, अन्तः स्नेह पान एवं स्वेदन कर्म यथा स्वेद, शंकर स्वेद, नाड़ी स्वेद, उपनाह स्वेद, परिषेक स्वेद तथा अवगाहन स्वेद में करने के अनेक सन्दर्भ ग्रन्थों में पाये जाते हैं । प्रधान कर्म वमन, विरेचन तथा वस्ति प्रयोग करते समय अनेक स्थलों पर दही प्रयोग करने का उल्लेख प्राप्त होता है । बला तैल का प्रयोग नस्य रूप में भी किया जाता है । इसके अतिरिक्त लेप, स्नान, अभ्यङ्ग, उबटन तथा पान (अर्थात् बाह्य तथा आभ्यन्तर) रूप में दही का प्रयोग होता है । अतः पंचकर्म चिकित्सा में भी दही प्रयोग का विशेष महत्व है ।

गुण एवं वर्ग :- अम्लस्कन्ध एवं दधि वर्ग (चरक) । अम्लवर्ग एवं दधि वर्ग (सुश्रुत) । दधि वर्ग (भावप्रकाश) ।

दधि के विभिन्न भाषाओं में नाम :-

संस्कृत - दधि ।	हिन्दी - दही ।
गु.जराती -दहि ।	क.- मोसर, मोसरू ।
अ.-जुगरात ।	फा.-दोग ।
ते.-हगु, पेरुगु ।	बं.-दह ।

अं.-कर्ड् लड् मिल्क (Curd led Milk) ।

सामान्य गुण :

1. रोचनं दीपनं वृष्यं स्नेहनं बलवर्धनम् ।
पाकेऽम्लमुष्णं वातघ्नं मङ्गलं बृंहणं दधि ।
पीनसे चातिसारे च शीतके विषमज्वरे ।
अरुचौ मूत्रकृच्छ्रे च काश्र्ये च दधि शस्यते ॥
शरद्ग्रीष्मवसन्तेषु प्रायशो दधि गर्हितम् ।
रक्तपित्तकफोत्थेषु विकारेष्वहितं च तत् ।
(च.सू. 27/222-224)

2. तत्कषायानुरसं स्निग्धमुष्णं पीनसविषमज्वरारोचक
रोचकमूत्रकृच्छ्रकाश्र्यापहं वृष्यं प्राणकरं मङ्गल्यं च
(सु.सं.सू. 45

3. अम्लपाकरसं ग्राहि गुरुष्णं दधि वातजित् ।
मेदः शुक्रबलश्लेष्मपित्तरक्ताऽग्निशोफकृत् ॥
रोचिष्णु शस्तमरुचौ शीतके विषमज्वरे ।
पीनसे मूत्रकृच्छ्रे च रूक्षे तु ग्रहणीगदे ॥
(अ.हृ.सू. 5/29-

4. दध्युष्णं दीपनं स्निग्धं कषायनुरसं गुरु ।
पाकेम्लं ग्राहिपित्तास्त्रशोथमेदः कफप्रदम् ॥
मूत्रकृच्छ्रे प्रतिश्याये शीतगे विषमज्वरे ।
अतिसारेऽरूचौ काश्र्ये शस्यते बलशुक्रकृत् ॥
(भा.प्र.दधिवर्ग ।

गव्य दधि :-

(क) स्निग्धं विपाके मधुरं दीपनं बलवर्धनम् ।
वातापहं पवित्रं च दधि गव्यं रुचिप्रदम् ॥
(सु.सं.सू. 45

(ख) गव्यं दधि विशेषेण स्वाद्वम्लं च रुचि प्रदम् ।
पवित्रं दीपनं हृद्यं पुष्टिकृत्पवनापहम् ।
(भावप्रकाश दधि

उत्तम दही :-

(क) विज्ञेयमेवं सर्वेषु गव्यमेव गुणोत्तरम् ।
(सु.सू. 45

(ख) उक्तं दध्नामशेषाणां मध्ये गुणाधिकम् ॥
(भा.प्र. दधिवर्ग

दधिसर गुण :-

(1) दध्नः सरो गुरुर्वृष्यो विज्ञेयोऽनिलनाशनः ।
वह्नेर्विधमनश्चापि कफशुक्रविवर्धनः ॥
(सु.सू. 45

(2) दध्नस्तूपरि यो भागो घनः स्नेहसमन्वितः ।
स लोके सर इत्युक्तो..... ॥
(भा.प्र.

सरः स्वादुगुरुर्वृष्यो वातवह्निप्रणाशनः ।
सोऽम्लो वस्तिप्रधमनः पित्तश्लेष्मविवर्द्धनः ॥
(भा.प्र.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्म :-
- अम्ल (ताजा दही मधुर)
अनुरस - कषाय (सुश्रुत)
गुण - गुरु, स्निग्ध ।
वीर्य - उष्ण ।
विपाक - अम्ल (ताजा दही मधुर विपाक)
कर्म - यह दीपन, वृष्य, स्नेहन, वातघ्न, मंगलकारी, बृंहण, कृशता नाशक, पवित्र, कफपित्त वर्धक, रुचिकर, ग्राही, वातनाशक शुक्रल, कफ-वर्धक, बलवर्धक, मेदवर्धक, शोथ, रक्तपित्त वर्धक, अग्निवर्धक, प्राणदायक, निद्राजनन, अनुलोमन, मूत्रल, अभिष्यन्दी तथा संतर्पण कारक है । अम्ल दही आर्तव जनन भी माना गया है ।

प्रयोग :-

यह पीनस, अतिसार, शीतपूर्वक विषम ज्वर, कृमि, कार्श्यता, मूत्रकृच्छ्रता अग्निमांद्य, दुर्बलता, कृशता में लाभप्रद है । अम्ल दही का प्रयोग रजोरोध में करते हैं । यह दही ग्रहणी में लाभप्रद है ।

दही के गुण कर्म:-

रस - मधुर अम्ल
गुण - स्निग्ध
विपाक - मधुर,
कर्म - बलवर्धक, वातनाशक, पवित्र, रुचिप्रद, हृद्य, अग्निदीपक, पुष्टिकृत तथा उत्तम माना गया है ।

उत्तम दही :-

सुश्रुत में गाय, अजा, भैंस, ऊँटनी, भेड़, घोड़ी, तथा हथिनी आठ प्रकार के दूध से बनाये गये दही के गुण कर्मों का पृथक् पृथक् उल्लेख मिलता है । इन सब द्रव्य दूध से बनाया दही ही उत्तम माना गया है । भाव मिश्र ने गाय, भैंस तथा बकरी के दूध से निर्मित दही के गुणों का पृथक्-पृथक् उल्लेख करते हुये "उक्तं दध्नामशेषाणां गव्यं गुणाधिकम्" अर्थात् सब से अधिक गुण गव्य दही में बताये हैं ।

दही के भेद :-

सुश्रुत में रस भेद से मधुर, अम्ल तथा अत्याम्ल तीन प्रकार के भेद बतलाये हैं । (सु.सू. 45/66)

1. **मधुर रस युक्त :-** यह दधि, महाभिष्यन्दि, कफ तथा मेदवर्धक होता है ।
2. **अम्ल रस युक्त :-** यह दही कफ तथा पित्त वर्धक होता है । प्रियव्रतजी ने अम्ल दही आर्तव जनन बतलाया है तथा इसका प्रयोग आर्तवावरोध में किया है ।
3. **अत्यन्त अम्ल दही :-** रक्त को दूषित करता है ।

भावप्रकाश में दही के पांच भेद बतलाये हैं । (दधिवर्ग 4-9):-

1. **मन्द दही :-** जो दही भलीभांति जम नहीं पाता है, दूध के समान अव्यक्त रस वाला एवं अल्प सान्द्र होता है उसे मन्द दही कहते हैं । चरक ने ऐसे दही के लिये 'मन्दक' शब्द का प्रयोग किया है ।
   गुण:- यह मलमूत्र प्रवर्त्तक, त्रिदोष कारक तथा विदाही होता है । (च.सू. 27/225, सू.सू. 45/67)
2. **स्वादु दही :-** जो दही पूर्णतया जम गया हो अर्थात् जो गाढ़ा हो, जिसमें मधुर रस व्यक्त तथा अम्ल रस अव्यक्त हो उसे स्वादु दही कहते हैं । सुश्रुत ने इसे मधुर दही कहा है ।
   गुण :- अत्यधिक अभिष्यन्दी, शुक्रवर्धक, मेद एवं कफ कारक, वातनाशक, विपाक में मधुर एवं रक्तपित्त प्रसादक होता है ।
3. **स्वाद्वम्ल दही :-** जो दही सान्द्र, मधुर रस युक्त एवं अन्त में कषाय रस वाला हो उसे स्वाद्वम्ल दही कहते हैं ।
   गुण :- साधारण दही सदृश गुण वाला होता है ।
4. **अम्ल दही :** - जिस दही में अम्ल रस व्यक्त तथा मधुर रस अव्यक्त हुआ हो उसे अम्ल दही कहते हैं ।
   गुण :- यह अग्निदीपक तथा रक्त विकार एवं कफ की वृद्धि करने वाला होता है ।
5. **अत्यम्ल दही :-** जिस दही के खाने के समय दन्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हर्षित हो जायें, रोंगटे खड़े हो जायें एवं कण्ठ में दाह उत्पन्न करने लगे उसे अत्यम्ल दही कहते हैं ।

गुण :- यह अग्निदीपक, वात एवं पित्त को अत्यन्त उत्पन्न करने वाला तथा कण्ठ में दाह उत्पादक होता है ।

पक्वदूधजात दही के गुण :- दूध को पकाकर (उबालकर) बनाया गया दही रुचिप्रद, स्निग्ध, गुणों में उत्तम, पित्त तथा वातनाशक, सर्वधातु वर्धक, अग्नि तथा बलवर्धक होता है । (भाव.प्र.दहीवर्ग. 13, सु.सू. 45/77-79)

स्नेह भाग रहित दही के गुण :- मक्खन निकाल कर जमाये गये दही को सुश्रुत में रूक्ष, संग्राही, विष्टम्भि कारक, वातकारक, अग्निदीपक, कषाय रस युक्त, रुचिदायक बतलाया है । भावप्रकाश ने इन गुणों के अतिरिक्त लघु तथा शीतल कहा है । (सु.सू. 45/79-80, भा.प्र. दहीवर्ग. 14)

वस्त्र छानित दही के गुण :- सुश्रुत में दही को वस्त्र से छान लेने पर वातनाशक, कफकारक, स्निग्ध, वृंहण तथा भोजन में रुचि पैदा करने वाला तथा अल्प मात्रा में पित्त वर्धक बतलाया है । भावप्रकाश में इन गुणों के अतिरिक्त गुरू, बलप्रद, पुष्टिदायक, मधुर रस युक्त तथा अतिस्निग्ध भी कहा है । (सु.सू. 45/76-77, भा.प्र. दहीवर्ग. 15)

दधिसर परिभाषा एवं गुण :- दही के ऊपर का स्नेह युक्त भाग (मलाई) दधिसर कहलाता है । यह गुरू, शुक्रवर्धक, वातनाशक, अग्निनाशक एवं कफवर्धक है । (सु. सू. 45/78) भाव प्रकाश में अम्लरस युक्त दधिसर को वस्ति प्रधमन करने वाला तथा पित्त कफवर्धक बतलाया है । चरक में दधिसर को वीर्यवर्धक कहा है ।

दधिमस्तु परिभाषा एवं गुण :- दध्नो मण्डस्तु मस्त्विति (भाव प्रकाश) दही के पानी (मांड) को मस्तु कहा जाता है । इस दही का तोड़ भी कहते हैं । यह थकावट को दूर करने वाला, बलप्रद, लघु, भोजन में रुचि उत्पादक, स्रोत शोधक, कफ, प्यास एवं वातनाशक अवृष्य (अल्प मात्रा में वीर्यवर्धक) शीघ्र सञ्चितमलभेदक है । सुश्रुत में इसे कफवातनाशक, सुखप्रद, अम्ल, कषाय तथा मधुर बतलाया है । (सु. सू. 45/81-82) चरक ने [illegible] मण्ड कफवातनाशक एवं स्रोत शोधक कहा है । (सु.सू. 27/225) अष्टाङ्गहृदय में दधि को तक्र के समान गुण वाला, सर, स्रोतशोधक तथा विष्टम्भ नाशक बताया है । (अ.हृ.सू. 5/35)

शक्कर युक्त दही के गुण :- यह उत्तम माना गया है । तृष्णा, पित्त रक्त विकार एवं दाह शामक होता है ।

गुड़ युक्त दही के गुण :- गुरू, वातनाशक, वीर्यवर्धक, वृंहण तथा तृप्तिकारक होता है ।

दही के उपयुक्त ऋतु :-

1. **शरद्ग्रीष्मवसन्तेषु प्रायशो दधि गर्हितम् ।**
   हेमन्ते शिशिरे चैव वर्षासु दधि शस्यते ।
   (सु.सू. 45/82)
2. **.....वसन्तोषणशरत्सु न ।**
   (अ.हृ.5/3)
3. **हेमन्ते शिशिरे चापि वर्षाशु दधि शस्यते ।**
   शरद्ग्रीष्मवसन्तेषु प्रायशस्तद्विगर्हितम् ॥
   (भा.
4. **शरद्ग्रीष्मवसन्तेषु प्रायशो दधि गर्हितम् ।**
   (च.सू.27/2

सभी आचार्यों ने दही का प्रयोग वसन्त, ग्रीष्म तथा शरद ऋतु में निषिद्ध माना है । हेमन्त, शिशिर तथा वर्षा ऋतु में दही का प्रयोग करना उत्तम माना है ।

विधि रहित दही सेवन के परिणाम :- यदि [illegible] का सेवन नियमानुसार न किया जाये तो शरीर में रक्तपित्त, विसर्प, कुष्ठ, पाण्डु, भ्रम रोग तथा तीव्र [illegible] के कामला रोग से ग्रसित हो जाता है ।

दही बनने की प्रक्रिया :- काश्यप संहिता दही बनने की प्रक्रिया का भी उल्लेख करते हुए [illegible] पात्र सम्पर्क, सन्धान एवं घन, सान्द्र, कषाय आदि [illegible] माने हैं ।

शैत्यात् कषायाद्धनसान्द्रभावात् संपर्कतश्चाभिषवाच्च [illegible]
क्रमेण चोष्मोपचयान्निरूद्धं पयो दधित्वाय शनैरुपैति
पयो हि वातातपपीडितं द्राक्कूर्चीभवत्येष हि तत्र हेतुः
औष्णयाद्धनत्वादथ वर्धमानः संक्लेदनाच्चाभिषव वाच्च [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्वर्तयत्यम्लरसं पयोऽग्निर्मस्तुं तथा चाप्यतिवर्तमानः ।
ऊर्ध्वं सरश्चोत्प्लवते स्वभावात्किट्टं ततोऽधश्च निषीदतेऽस्य ॥
(का.सं.क.भोजनकल्पे. 96-98)

शीतल, कषाय, घन तथा सान्द्र होने के कारण वात सम्पर्क एवं सन्धान के कारण क्रमशः उष्मा वृद्धि (उपचय) के कारण निरूद्ध हुआ दूध धीरे-धीरे दही रूप में परिणत हो जाता है । वात तथा धूप से प्रभावित होने के कारण दूध में शीघ्रता से फुट्टियां (कूर्चीभाव) उत्पन्न हो जाती हैं क्योंकि उष्णता तथा घनता के कारण शनैः-शनैः क्लेद एवं सन्धान (Fermentation) हो जाता है ।

अधिक उष्मा दूध में अम्लरस एवं मस्तु को उत्पन्न कर देती है । स्वाभाविक रूप में इस का पतला भाग (सार) ऊपर ही तैरता रहता है तथा किट्ट भाग भारी होने के कारण अधो भाग में रहता है । अतः दही के लिये उष्मा का होना जरूरी होता है । इसलिये स्वाभाविक रूप से ग्रीष्म ऋतु में दूध से दही शरद ऋतु की अपेक्षा शीघ्रता से जम जाता है । अतः शरद ऋतु में दही बनाने के लिये हमें किसी न किसी रूप में उष्मा देनी पड़ती है ।

चरक संहिता-सूत्र स्थान

अपामार्ग तण्डुलीयाध्याय - मदरोग में पोई शाक एवं दही साधित यवागू लाभकारी है । (च.सं.सू.2/31)

मात्राशितीयाध्याय - 1. कूर्चीक (दही या तक्र से दूध को पकाने) किलाट (फटे दूध का गाढ़ा भाग जो जल से पृथक हो जाता है ।) सूअर मांस, गोमांस, भैंस मांस, मछली, दही, उड़द तथा यवक का लगातार प्रयोग नहीं करना चाहिये । (च.सं.सू. 5/8)

2. भोजन का प्रयोग दही के साथ करने के उपरान्त धूमपान करना हानिकारक है । (च.सं.सू.5/40)

न वेगान्धारणीयमध्याय - दही सेवन काल, विधि तथा विधि पूर्वक सेवन न करने से हानियों का निर्देश किया है । च०सू० 7/60-64

इन्द्रियोपक्रमणीयमध्याय - दही, मधु, नमक, सत्तू, जल तथा घृत को जूठा न छोड़ें..... (च.सू.13/10)

स्नेहाध्याय -

1. स्नेह के अन्तर्गत दही, दूध, घृत, मांस, वसा एवं मज्जा आते हैं । (च.सू.13/10)
2. मृदुकोष्ठ को विरेचन कराने के लिये गुड़, ईख रस, मस्तु, दूध, मक्खन युक्त दही आदि (अधरिड़का) का प्रयोग कराना चाहिये । (च.सू. 13/65-66)
3. दधिसर (दही की मलाई) में फाणित मिलाकर पीने से स्नेह हो जाता है । (च.सू. 13/88)
4. ग्राम्य, अनापू, जलचर पशु पक्षियों के मांस, गुड़, दधि, दूध एवं तिल स्नेहन का सेवन कुष्ठ शोथ एवं प्रमेह में नहीं कराना चाहिए । (च.सू.13/91)
5. स्नेह को द्राक्षा यूष तथा आमला यूष और अम्ल दही तथा त्रिकटु कल्क से साधित कर देने से स्नेहन हो जाता है । (च.सू.13/93)
6. यव, बेर तथा कुलत्थी क्वाथों से दूध, सुरा तथा दही से साधित क्षीर सर्पि स्नेहार्थ घृतों में श्रेष्ठ है । (च.सू.13/94)

उपकल्पनीय अध्याय :- आतुरालय में उपयोगी द्रव्यों के अन्तर्गत दही, दही का पानी (मस्तु) तथा उद्श्वित (आधा जल मिलाकर विलोयी गई छाछ) आदि का भी उल्लेख मिलता है । (च.सू. 15/6)

त्रिशोफीय अध्याय :- दही तथा मन्दक (पूर्णतया न जमा दही) शोथ कारक है । (च.सू.18/4)

अष्टौनिन्दितीयमध्याय :- 1. अति कृशता की चिकित्सा में अन्य द्रव्यों से संस्कृत दही का प्रयोग लाभकारी है । (च.सू.21/29) 2. निद्रा लाने वाले उपायों में दही का उल्लेख है । (च.सू. 21/51)

सन्तर्पणीयमध्याय :- दही, मस्तु दोनों ही रक्तदुष्टि के कारण माने हैं । (च.सू.24/6)

यज्जः पुरीषयमध्याय :- मन्दक दधि (जो पूर्णतया जमा न हो) अभिष्यन्द कारक है । (च.सू. 25/39)

अन्नपानविधिमध्याय :- दही शोथ कारक है । (च.सू. 27/3)

निदान स्थान : -

रक्तपित्त निदान : - दधि मण्ड, उद्श्वित (छाछ जिस में आधा पानी हो), कट्वर (जिस छाछ से मक्खन न निकाला गया हो या अति अम्ल छाछ) ये रक्तपित्त के कारण बतलाये गये हैं । (च.नि. 2/2)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुल्म निदान :- मन्दक दही कफज गुल्म का कारण है । (च.नि.3/10)

प्रमेह निदान :- मन्दक दही कफज प्रमेह का कारण है । (च.नि.4/5)

विमान स्थान :-

व्याधितरूपीय :- कृमियों को प्रेरित करने के लिये दही, दूध, गुड़, तिल, मछली, आनूप मांस तथा पिष्टान्न युक्त आहार देना चाहिये । (च.वि.7/17)

रोगाभिषग्जितीयाध्याय :- 1. दही, दधि मण्ड तथा उद्श्वित आदि का अनेक योगों में विरेचनार्थ प्रयोग करने का उल्लेख है । (च.वि.8/144) 2. अम्ल स्कन्ध के अन्तर्गत दही एवं दधिमण्ड का उल्लेख है । (च.वि. 8/147)

इन्द्रिय स्थान :-

गोमयचूर्णीयमिन्द्रिय :- प्रशस्त द्रव्यों में दही का उल्लेख है तथा दही के दर्शन शुभ बतलाये हैं । (च.इ. 12/77)

चिकित्सा स्थान :-

ज्वर चिकित्सा :- 1. दही मण्ड या मदिरा के साथ बैल गोबर तथा सैन्धव नमक मिलाकर विषम ज्वर में वेग आने से पहले ही पान करना चाहिये । (च.चि. 3/302) 2. पीपर, त्रिफला, दही तक्र, घृत, पंचगव्य एवं दूध प्रयोग करना विषम ज्वर में लाभप्रद है । (च.चि. 3/303)

कुष्ठ चिकित्सा :- दही अपथ्य माना है । (च. चि. 7/83)

श्वयथु चिकित्सा :- 1. निज शोथ के उत्पादक कारणों में दही का भी उल्लेख है । (च.चि. 12/5) 2. दही को शोथ में अपथ्य माना गया है । (च.चि.12/20)

अर्श चिकित्सा :- 1. दही, मण्ड, तक्र पिण्ड का उल्लेख अर्श के कारणों में किया गया है । (च.चि. 14/9) 2. अर्श रोग में स्नेहन पश्चात् तक्र, दधिमण्ड से अवगाहन करना चाहिये । (च.चि.14/47)

अर्शनाशक दही प्रयोग :- 1. चित्रक मूल छाल को बारीक कर मिट्टी के घट के भीतर लेप करें । इसी घड़े के भीतर दूध डालकर दही बना लें । यह दही तक्र अर्श रोग में लाभप्रद है । (च.चि. 14/76) 2. शुष्काशं में निशोथ पत्र, दन्ती पत्र, पलाश पत्र पुष्प, चित्रक पत्र शाक को घृत तथा तैल में भूनकर दही मिलाकर खाना चाहिये। पोई, चौलाई, शतावर, बथुए, मकोय, जीवन्ती, कचू, गाजर आदि शाकों का प्रयोग दही एवं अम्ल अनार रस में पका लें । इसे घृत तैल में भून कर धनियाँ तथा सोंठ चूर्ण मिलाकर देना लाभप्रद है । (च.चि. 14/122-125) 3. शुष्कार्श रोगियों में मट्ठा, दही का पानी अनुपानार्थ देना चाहिये । (च.चि. 14/128) 4. काले तिल तथा मक्खन, नागकेशर चूर्ण-मक्खन तथा चीनी, दही की मलाई तथा तक्र का सेवन लगातार कुछ दिन तक करना रक्तार्श में लाभकारी है । (च.चि.14/210)

ग्रहणी दोष चिकित्सा :- ग्रहणी नाशक यवागू :- चव्य, दालचीनी, पीपरामूल, धाय, मरिच, पीपर, चित्रकमूल, कैंथ गुद्दी, बेल गुद्दी, मोचरस, गजपीपर, पाषाण भेद, तथा जीरा सभी द्रव्यों को जल में पीसकर घृत में भून लें। इसमें दही मिलाकर यवागू बना लें । यह यवागू अतिसार, ग्रहणी, गुल्म तथा अर्श में लाभकारी है । (च.चि.15/112-115)

कास चिकित्सा:- 1. खदिरसार चूर्ण के पश्चात दही या मस्तु पान का विधान बतलाया है या पीपर कल्क को घृत में भूर्जित करके लवण मिलाकर दही या मस्तु के साथ सेवन करने का भी उल्लेख है । (च.चि. 18/64) 2. वातजन्य कास में वथुआ शाक, मकोय पत्र, मूली, तिलपर्णिय शाक, तिल तैलादि स्नेह, दूध ईख रस एवं गुड़ से बने पदार्थ एवं दही, कांजी, अम्लफल रस, प्रसन्ना एवं अम्ल मधुर अम्ल लवण रस युक्त द्रव्यों का प्रयोग करना लाभप्रद है । (च.चि. 18/81-82)

अतिसार चिकित्सा :- 1. अतिसार में शाक :- आम दोष के जीर्ण हो जाने पर जो रोगी शूल एवं आम युक्त बँधा हुआ मल का प्रवाहिका के साथ अल्प-अल्प मात्रा में अनेक बार अतिसार सदृश मल त्याग करता है उसे मूली या बेलों का यूष या पोई-दूधी-यवानी-वथुवा-हुलहुल, चंचु, वकुची, कचूर, छोटा कच्चा तरबूज, जीवन्ती शाक, पाठा या शुष्क शाक को दही एवं अनार रस से बनाकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में घृत अधिक मिलाकर लें । इन शाकों के साथ शाली दि हल्के अन्न सेवन करने चाहिये । (च.चि. 19/30-33)

2. **खण्ड यूष प्रयोग** :- प्रवाहिका में अपक्व बिल्व तथा कृष्ण तिलों का कल्क समान मात्रा में लें । इस कल्क के दधिसर (दही की मलाई) तथा घृत या तैल मिलाकर बना हुआ खण्ड यूष देना लाभप्रद है । (च.चि. 19/34) 3. पुरीष क्षय हो जाने पर यव, मूँग, उड़द, शालि चावल, अम्लबेर तथा अपक्व बिल्व के साथ यूष बना लें । इसे घृत तथा तैल में भून लें । इसमें अम्ल दही तथा अम्ल अनार रस मिश्रित कर शालि चावल भात के साथ सेवन कराने से लाभ होता है । (च.चि. 19/35-36) 4. दधि मण्ड को घृत तथा तैल में भून लें । इसमें गुड़ तथा सोंठ आदि मिलाकर सेवन करना चाहिये । (च.चि. 19/37)

छर्दि चिकित्सा :- रोगी तथा रोग के बलानुसार दधि लेकर उस में त्रिकटु, सैंधव, सौंचर तथा विड़ लवनण इन सब का चूर्ण मिलाकर देना चाहिये । अम्ल दही एवं अम्ल अनार से खट्टा करके आहार देना चाहिये । (च.चि. 20/25)

विष चिकित्सा :- यदि स्थावर विष वात स्थान में फैल जाये तो स्वेदन देकर तगर तथा कूठ कल्क को दही में मिलाकर सेवन कराना चाहिये । (च.चि.23/62)

मदात्यय चिकित्सा :- दाह को शान्त करने के लिये अम्ल कांजी के साथ सुरामण्ड, सुरा अम्ल दधि, जम्बीरी निम्बू रस तथा मधु का प्रयोग परिषेक एवं प्रलेप के लिये श्रेष्ठ है । (च.चि.24/161)

ऊरू स्तम्भ चिकित्सा :- ऊरू स्तम्भ के निदान में दही का उल्लेख है । (च.चि. 27/8)

वात व्याधि चिकित्सा :- वातरोग में वर्णित रोही स्वेद में दही का भी प्रयोग करने का निर्देश दिया है । (च.चि.28/111)

वातरक्त चिकित्सा :- 1. वातरक्त जन्य निदान में दही का भी उल्लेख है । (च.चि. 29/6) 2. त्रिफलादि कल्क के समय दही, शुक्त, क्षार विरूद्ध भोजन का परित्याग कर देना चाहिये । (च.चि. 29/154)

योनि व्यापद् चिकित्सा :- 1. अरजस्का योनि वाली रूग्णा को हरिण या बकरी या भेड़ या सूअर के रक्त को दही अम्लफल रस तथा घृत मिलाकर पीना लाभकारी है । (च.चि. 30/101) 2. ध्वजोपघातज नपुंसकता के कारणों के दही की भी गणना की है । (च.चि. 30/164) 3. अस्त्रदर के कारणों में दही को भी माना गया है । (च.चि. 30/206) 4. दही, मन्दक दही को स्तन्य रोग का कारण भी माना है । (च.चि. 30/324)

कल्प स्थान :-

मदन फल कल्प : - 1. वमन से पूर्व दोषों को उत्क्लेशित करने के लिये दही सेवन कराने का निर्देश दिया है । (च.क. 1/14) 2. जल पिप्पली क्षीर से बनी दधिसर (मलाई) को कफज छर्दि, तमक श्वास तथा कफ प्रसेक में देना चाहिये । (च.क.1/17)

जीमूतक कल्प :- जीमूतक के रोमहीन फल से साधित दूध से बने दही की मलाई का योग तथा जीमूतक फल हरित या पाण्डु वर्ण से साधित दूध से बना अम्ल दही के योगों का प्रयोग वमन के लिये बतलाया है । (च.क. 2/5-6)

इक्ष्वाकु कल्प :- पक्व तितलौकी फल को मध्य भाग से खाली करके उसमें दूध डाल दें । जब दही बन जाये तो उस का प्रयोग कफज कास, श्वास तथा वमन में करें (च.क.3/8)

धामार्गव कल्प :- रोम युक्त धामार्गव फल को दूध में पकाकर दही बनालें । इस दही की मलाई का प्रयोग वमन कर्म में करें । (च.क.4/6)

कृत वेधन कल्प :- कृतवेधन फल को दूध में उबालकर दही जमा लें । इस दही की मलाई का प्रयोग करें । (च.क. 6/4)

चतुरङ्गुल कल्प :- अम्लतास का एक योग दधि मण्ड के साथ विरेचन के लिये बतलाया गया है । (च.क. 8/9)

तिल्वक कल्प :- लोध्र मूल चूर्ण को दही में घोल कर विरेचनार्थ प्रयोग करें । (च.क.9/3-6)

सप्तलाशङ्खिनी कल्प :- सातला तथा यवतिक्त के 16 कषाय योग बतलाये गये हैं जिसमें एक योग दधि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मण्ड से बतलाया गया है । यह योग विरेचनार्थ प्रयुक्त होते हैं (च.क.11/6-8)

दन्तीद्रवन्ती कल्प :- दन्ती द्रवन्ती मूल कल्क के 10 योग बतलाये गये हैं । एक योग दही के साथ विरेचनार्थ प्रयोग किया है । (च.क. 12/7-8)

सिद्धि स्थान :-

विधि अनुसार बनाये हुये बकरे के मांस रस को घृत तथा तैल में भूनकर उस में दही, खट्टा अनार रस मिला दें । अजवायन आदि कल्क मिलाकर निरूह वस्ति दें । यह वस्ति बल वर्ण, मांस, शुक्र तथा जठराग्नि उत्तेजक है । शिरोवेदना, अन्धत्व में लाभकारी है ।

प्रास्रतयोगीय सिद्धि वस्ति :- अम्ल दही, मट्ठा, कांजी, अम्लरस, क्षार तथा ईख रस से यवागू बना लें । शीतल होने पर चीनी तथा मधु मिश्रित कर सेवन करें । यह सभी प्रकार के अतिसार में लाभप्रद है । (च.सि. 8/41-42)

सुश्रुत संहिता :-

सूत्र स्थान :-

शिष्योपनयनीयमध्याय :- उपनय विधि में दही आदि द्रव्यों से आहुति देने का विधान है । (सु.सं.सू.2/4)

व्रणितोपोसनीयमध्याय :- व्रणी पुरुष को दधि के परित्याग करने का निर्देश दिया है । (सु.सं.सू.19/16)

हिताहितीयमध्याय :- 1. दही का प्रयोग किन द्रव्यों के साथ नहीं करना चाहिये, का निर्देश दिया है । (सु.सं.सू. 20/8-13)

व्रणप्रश्नमध्याय :- 1. दधि, तक्र, कूर्च्चिका (विग्रथित-फटी छाछ), मस्तु तथा कट्वर (स्नेह रहित दही) आदि कारण पित्त को प्रकुपित करते हैं । (सु.सं.सू. 21/21) 2. दही प्रयोग से कफ प्रकुपित होता है । (सु. सं.सू.21/23)

विपरीताविपरीतस्वप्ननिदर्शनीयमध्याय :- स्वप्न में दही दिखना शुभ होता है । (सु.सं.सू. 29/28)

रसविशेषविज्ञानीयमध्याय :- दही तथा तक्र की गणना अम्लवर्ग में की गई है । (सु.सं.सू. 42/11)

वमन द्रव्य विकल्पविज्ञानीमध्याय :- 1. मदनफल कल्प में दही का प्रयोग किया गया है । (सु.सं.सू. 43/3) 2. मैनफल मज्जा द्वारा साधित दूध को जमाकर दही बना लें । इसकी मलाई या दही को कफस्राव, वमन, मूर्च्छा, तमक श्वास में दें । (सु.सं.सू. 43/3) 3. जीमूतक के पक्व फलों को दहीसर के साथ तथा जीमूतक के हरे फल फलों को दही के साथ कफ, अरोचक, कास श्वास, पाण्डु तथा यक्ष्मा रोग में प्रयोग करना चाहिये (सु.सं.सू. 43/4)

द्रव द्रव्यविधिमध्याय :- इस अध्याय में दही एवं उससे संबंधित द्रव द्रव्यों के भेद, गुणकर्मों का विस्तार से वर्णन मिलता है । (सु.सं.सू. 45)

अन्नपानविधिमध्याय :- उड़द आदि का अनुपान दधि या मस्तु बतलाया गया है । (सु.सं.सू. 46/425)

चिकित्सा स्थान :-

द्विव्रणीय चिकित्सा :- मिश्रकोक्त अध्याय वर्णित शणमूल बीजक आदि औषधियों को दही, तक्र, सुरा, शुक्त, कांजी में मिलाकर तैल से स्निग्ध करलें । इसमें लवण मिलाकर उत्कारिका बना लें । इसे उष्ण ही एरण्ड पत्र के साथ शोफ पर बान्ध दें तथा हितकर भोजन दें । इससे शोथ का पाचन होता है । (सु.सं.चि. 1/24-27)

महावातव्याधि चिकित्सा :- 1. बिल्व मूल, तगर, देवदारु, निशोथ, रास्ना, सम्भालू, कूठ, सौंफ, इलायची, सुरा, दही तथा मस्तु मिलाकर उपनाह बना लें । यह उपनाह वातरक्त में लाभप्रद है । (सु.चि. 5/7) 2. कफ प्रबल, वातरक्त में मस्तु, गोमूत्र, सुरा शुक्त, मुलहठी, सारिवा तथा पद्माख द्रव्यों से साधित घृत से मालिश करने से लाभ होता है । (सु.सं.चि. 5/10) 3. अपतानक रोगी को स्नेह का अभ्यङ्ग कराके शरीर पर स्वेदन दें । शिर:शुद्धि के लिये तीक्ष्ण अवपीड़न नस्य देने के पश्चात् विदारीगन्धादि क्वाथ, मांस रस, दूध तथा दही से साधित घृत का पान कराना चाहिये (सु.सं.चि.5/18) 4. अपतानक रोगी को अभक्त काल में दध्याम्ल में मरिच तथा वच मिलाकर पिलाने से लाभ होता है । (सु.सं.चि.5/18)

कुष्ठ चिकित्सा :- कुष्ठ रोगी को दही का त्याग करना चाहिये । (सु.सं.चि.9/4)

प्रमेह चिकित्सा :- सभी प्रकार के प्रमेही रोगियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को दही का प्रयोग नहीं करना चाहिये । (सु.चि. 11/5)

स्नेहोपयौगिक चिकित्सा :- शीघ्रता पूर्वक स्नेह कराने के लिये पिप्पली, लवण, घी, तैल, वसा, मज्जा, दही तथा मस्तु सब को मिलाकर पीना चाहिये । (सु.चि. 31/38)

स्वेदावधारणीय चिकित्सा :- उष्म स्वेदन में दही का प्रयोग होता है (सु.चि.32/4)

वमनविरेचनसाध्योपद्रव चिकित्सा :- वमन साध्य रोग होने पर तक्र, दही, दूध, तक्र, यवागू, द्रव्य देकर वमन कराना चाहिये । (सु.चि. 33/7)

कल्प स्थान :-

अन्नपान रक्षा कल्प :- 1. आमाशयगत विष से मूर्च्छा, वमन, अतिसार, आध्मान, जलन, कम्पन तथा इन्द्रियों में विकृति आ जाती है । इस अवस्था में शीघ्रता से मैनफल, कड़वी तुरई के फलों से वमन करावें या दधि तथा तक्र से वमन कराना चाहिये । (सु.क. 1/40-41)

2. विष पान हो जाने पर हृदय रक्षार्थ दधि, घी, दूध, मधु या शीतल जल पान करना चाहिये । (सु.क. 1/80)

सर्पदष्ट विष चिकित्सा :- वात प्रकोप तथा क्षुधा लगने पर विष रोगी को सावधानी से मांस रस, दही, मधु, घी या शुक्त (तक्र, कांजी) पान कराना चाहिये (सु. क. 5/37)

मूषिक विष चिकित्सा :- मूषिका विष के लिये शिरीष, कड़ुवी तुरई दोनों के मूल, मैनफल, कुकड़लता फल इन को दही के साथ पान कराके वमन कराना चाहिये। (सु.क. 7/35)

उत्तर तन्त्र

रक्ताभिष्यन्द प्रतिषेध :- मैरेय, दही, दहीसर इनको ताम्र पात्र में रखकर अञ्जन करने का निर्देश दिया गया है। (सु.उ. 12/40)

नयनाभिघात प्रतिषेध :- शंख तथा सैंधव को दही के साथ रगड़ कर आधा पक्ष (7-1/2) दिन) स्रोताञ्जन पर पुनः पुनः लेप करते रहें । इस स्रोताञ्जन को रगड़ कर वर्ती बना लें । यह वर्ती बालकों के शुक्र रोग नाशक है । (सु.उ. 19/16)

कर्णगत रोग प्रतिषेध :- चौलाई मूल, अङ्कोल फल, केन्द्रक मूल, चीड़, देवदारु, रसोन, सोंठ, वासत्वक इन सब का कल्क दधि, तक्र सुरा, कांजी से चतुर्विध सस्नेह (घृत, तैल, वसा, मज्जा) का पाक करें । इस स्नेह का प्रयोग कर्ण शूल में करें । (सु.उ. 21/14-15)

नैगमेष प्रतिषेध :- प्रियंगु, विरोजा, सारिवा, सौंफ केवड़ी मोथा के कल्क गोमूत्र, दही, दहीमस्तु, बिजौर निम्बू रस तथा कांजी से तैल सिद्ध कर लें । बालकों के लिये इस तैल का प्रयोग किया जाता है । (सु.उ.36/4)

ज्वर प्रतिषेध :- 1. पंच गव्य घृत विषम ज्वर तथा लघु पंचगव्य घृत का प्रयोग ज्वर, शोथ तथा पाण्डु रोग में लाभप्रद है (सु.उ.34/241-44) 2. कफवातज ज्वरों में रोगी को शीत अनुभव होने पर शीतोष्ण कांजी शुक्त, गोमूत्र या मस्तु से अवसेचन करना चाहिये । (सु.उ. 34/272)

अतिसार प्रतिषेध :- त्रिकटु, जीरा तथा चित्रक कल्क, चव्य, पिप्पली मूल तथा अनारदाना इनके कल्क से दही, कांजी से सिद्ध घृत अतिसार जन्य वेदना में लाभकारी है । (सु.उ. 40/77-78) 2. अरलु छाल, प्रियंगु, मुलहठी अनार के कोमल पत्र को पीस लें तथा दही में घोल कर यवागू बना लें । यह पक्वातिसार में लाभकारी है । (सु.उ. 40/92) 3. राव, सोंठ, दही, तैल, को दूध तथा घृत के मिलाकर पिलावें । यह आम युक्त अतिसार में हितकर है । (सु.उ. 40/132) 4. अतिसार में मलक्षय होने पर खरगोश मांस एवं रक्त के साथ मृदु अन्न तथा लाजवन्ती को पकाकर घृत तथा दही के साथ सेवन करें । (सु.उ. 40/134) 5. उड़द, यव तथा कोल रस, घी तथा तैल से संस्कृत दही एवं अनारदाना भोजन में देना चाहिये । (सु. उ. 40/135) 6. विड़ लवण, अपक्व बिल्व, सोंठ को कांजी में रगड़कर दहीसर मिलाकर घृत तथा तैल में भूनकर देने से मलक्षय में लाभ होता है । (सु.उ.40/136) 7. निश्चारक (प्रवाहिका) में मलाई युक्त दही में मधु मिलाकर भोजन करना लाभकारी है । (सु.उ.40/145) 8. मेदुर रक्त या बकरे के रक्त को घृत तथा तैल में भूनकर दे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाकर खाना लाभप्रद है । (सु.सं.उ. 40/148) 9. वाहिका में मूंग मसूर आदि यूषों का सेवन दही के साथ रना लाभप्रद है । (सु.उ.40/149)

गुल्म प्रतिषेध :- 1. वातज गुल्म में हाथी आदि ानूप देशीय तथा मछली आदि औदक प्राणियों की मज्जा, सा, तैल, घृत एवं दही एकत्रित करके वातहर द्रव्यों में द्ध कर अनुवासन देना लाभदायक है । (सुउ. 42/22) दही, निस्तुष कांजी, घृत, मुद्र क्वाथ, कुलथी क्वाथ, वर्चल लवण, सज्जीखार, देवदारू तथा सेंधव लवण से धित घृत अग्निवर्द्धक एवं वात गुल्म नाशक है । (सु. 42/34-35) 3. पानीय क्षार को दही, सुरा, घृत, कांजी, ग्ग जल, कुलथी रस में घोलकर लेने से गुल्म तथा तरोग नष्ट हो जाते हैं । (सु.उ. 42/40-44)

हृद्रोग प्रतिषेध : - 1. वातज हृद्रोग में स्नेहन त्पश्चात् दशमूल क्वाथ में स्नेह एवं नमक मिलाकर वमन राना चाहिये । शोधन पश्चात् पिप्पली, एला, वच, हींग, क्षार, सैंधव, सौवर्चल, सोंठ, अजवायन के चूर्ण को जोरा निम्बू रस, कांजी, कुल्थी यूष, दही, मद्य, आसव सेवन करना हितकर है । (सु.उ.43/10-13) 2. कृमिज रोगी को घृत से स्निग्ध कर मांस भोजन को दही तथा ल कल्क के साथ तीन दिन तक सेवन करना चाहिये । नके पश्चात् सुगन्धित, लवण युक्त, जीरा तथा शर्करा क विरेचन देने चाहिये । (सु.उ. 43/20)

रक्तपित्त प्रतिषेध :- करञ्ज बीज तथा लवण । किञ्चित उष्ण करके दधि मस्तु के साथ सेवन करने रक्तपित्त में लाभ होता है । (सु.उ.45/26)

पानात्यय प्रतिषेध :- घृत, तैल, वसा, मज्जा, ी, भृंगराज रस, विल्व तथा यव क्वाथ में रालादि गण । कल्क मिलाकर चतुःस्नेह सिद्ध करें । यह स्नेह अभ्यंग उत्तम माना गया है । (सु.उ.47/52)

कृमि रोग प्रतिषेध : - 1. मांस, उड़द, गुड़, दधि था तैल से कफज कृमि पैदा होते हैं । (सु.उ.54/17) 2. ु को दधिमस्तु में रगड़कर 7 दिन तक पान करने से मि नष्ट होते हैं । (सु.उ.54/32) 3. दूध, मांस, घृत ी, पत्तों वाले शाक आदि कृमियों में अपथ्य कहे गये हैं । (सु.उ.54/40)

अष्टाङ्ग हृदय :-

सूत्रस्थान :-

ऋतुचर्याध्याय :- शरद ऋतु में दही अपथ्य है। (अ.हृ.सू.3/54)

द्रव-द्रव्य विज्ञानीयमध्याय :- इस अध्याय में दधि, तक्र, मस्तु, नवनीत का वर्णन किया गया है । (अ. हृ.सू.5/29-36)

अन्न रक्षाध्याय :- 1. हरिण तथा मुर्गा मांस का दही के साथ प्रयोग विरोध बतलाया है । (अ.हृ.सू.7/33) 2. वडहर फल का, उड़द, गुड़, दूध, दही तथा घृत से विरोध है । (अ.हृ.सू.7/34) 3. केले फल का दही के साथ विरोध है । (अ.हृ.सू.7/35) 4. अल्प निद्रा वाले व्यक्ति को दूध, मद्य, मांसरस, दही, अभ्यङ्ग, उबटन, स्नान, कान तथा में तर्पण स्नेह प्रयुक्त करना चाहिये । (अ. हृ.सु.7/66)

मात्राशितीयमध्याय :- 1. किलाट, दही, कूर्चिका, क्षार, शुक्त, कच्ची मूली, पिष्टी वाले पदार्थ, शुष्क शाक, कृश प्राणीमांस, शुष्क मांस, उड़द, विरूद्ध धान्य तथा राव आदि का लगातार सेवन नहीं करना चाहिये, इसका लगातार प्रयोग हानिकारक हो सकता है । इसलिये कभी-कभी रुचि बदलने को लेना चाहिये । (अ.हृ.सू.8/42-43) 2. दही का अनुपान शीतल जल, शाक तथा मूंग आदि पदार्थों का अनुपान मस्तु, तक्र तथा अम्ल लेना चाहिये । (अ.हृ. सू.8/47)

रसभेदीयमध्याय :- दही तथा तक्र का उलेख अम्ल स्कन्ध में किया है । (अ.हृ.सू.10/25-26)

द्विविधोपक्रमणीयमध्याय :- स्थौल्य चिकित्सा में मस्तु (दही का पानी) प्रयोग करना लाभप्रद है । (अ. हृ.सू.14/22)

स्नेहविधिमध्याय :- गुड़, अनूप मांस, धारोष्ण दूध, तिल, उड़द के पदार्थ, सुरा तथा दही सद्यः स्नेह कराने वाले हैं । (अ.हृ.सू.16/43)

धूमपानविधिमध्याय :- दही पान करने के पश्चात धूमपान करना निषेध है । (अ.हृ.सू.21/3)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शारीर स्थान :-

दूतादिविज्ञानीयध्याय :- दही भी शुभ शकुन माना गया है । (अ.ह.शा.6/30)

निदान स्थान :-

कुष्ठश्वित्र कृमि निदानाध्याय :- कफ कृमियों का कारण अधिक मात्रा में दही प्रयोग भी माना गया है । (अ.ह.नि.14/46)

चिकित्सा स्थान :-

ज्वर चिकित्सा :- 1. मस्तु के साथ तगर, कूठ, देवदारू, तथा केसर आदि द्रव्यों को पीस कर लेप करना ज्वर में लाभप्रद है । (अ.ह.नि.1/141) 2. विषम ज्वर में पंचगव्य घृत का प्रयोग करना हितकर है । (अ.ह.चि. 1/155)

कास चिकित्सा :- सोंठ तथा मिश्री चूर्ण का प्रयोग दही पानी (मस्तु) के साथ, पीपल एवं संभालू चूर्ण का प्रयोग दही के साथ तथा बेर गिरी चूर्ण का दही या मस्तु के साथ कास रोग में लाभप्रद है । (अ.ह.चि. 3/16-17)

राजयक्ष्मा चिकित्सा :- यक्ष्मा रोगी में दही युक्त उबटन लगाना लाभप्रद है । (अ.ह.चि.5/78)

छर्दिहृद्रोगतृष्णा चि :- 1. वात जन्य हृदयरोग में दही का पानी लाभकारी है । (अ.ह.चि.6/40) 2. वातज तृषा चिकित्सा में गुड़ मिश्रित दही प्रयोग करना चाहिये । (अ.ह.चि.6/66)

अर्श चि :- तक्र योग-1. गो दूध को उबाल कर उसमें चित्रक चूर्ण डालकर दही बनालें । इस प्रकार का दही पान करें तथा दही के साथ भोजन कई मांस तक करने से अर्श का समूल नाश होता है । (अ.ह.चि. 8/30-31) 2. हाऊबेर, भूर्जित हींग तथा चित्रक चूर्ण को दही के साथ सेवन करें । 3. पीपल, पिपलामूल, धनिया एवं अनारदाना का कल्क एक भाग, गोघृत चार भाग, दही चार भाग से घृत सिद्ध करलें । यह घृत वात, मूत्र एवं मलरोध में लाभप्रद है । (अ.ह.चि.8/73) 4. पंचकोल, हरड़, यवक्षार, अजवायन, विडलवण, सैंधवलवण, पाठा, धनिया, मरिच, तथा बिल्व गिरी का कल्क एक भाग, गोघृत 4 भाग, दही 16 भाग लेकर घृत पाक विधि से घृ का निर्माण करलें । यह घृत गुद एवं वंक्षण वेदन प्रवाहिका, गुदभ्रंश, मूत्रकृच्छ्र एवं झाग युक्त पतले पुरीष लाभकारी है । (अ.ह.चि.8/75-77) 5. अर्श रोग भोजन समय तथा प्यास लगने पर दही जल (मस्तु) सेव करना चाहिये । (अ.ह.चि.8/86)

अतिसार चिकित्सा :-

1. निरामातिसार में सोंठ तथा गुड़ प्रयोग-दह तैल, घृत तथा दूध के साथ पान करें । (अ.ह.चि.9/18 2. क्षुधा लगने पर दही एवं अनारदाना से सिद्ध मांस र से शलिचावल प्रयोग करें । (अ.ह.चि.9/19) 3. पक्वातिस में बिल्व गिरी, नागरमोथा, लोध्र, धायफूल, एवं सोंठ सिद्ध तक्र या दही से बनी यवागू देना लाभकारी है । (अ ह.चि.9/23) 4. पुरीषक्षय में बेर, बिल्वगिरी, शालिधान यव, मूंग, उड़द, तिलकल्क योग से धान्य यूष बनाकर घृ तथा तैल में भून लें । इसमें दही तथा अनारदाना डालव प्रयोग करें तथा शालिचावल भात खाने को देना चाहिये दही सर को घृत तथा तैल में पकाकर उसमें गुड़ तथा सो मिलाकर शालिचावल भात के साथ खाने को देने से ला होता है ।(अ.ह.चि.9/30-31) 5. पक्वातिसार में सोनापा छाल, मुलैठी, प्रियंगु एवं अनारदाना के कोंपलों के योग दही तथा अनारदाना मिलाकर देना चाहिये । (अ.ह.चि 9/65) 6. गुद वेदना तथा गुदभ्रंश में दूध, बेर, चांगेरी र तथा दही, सोंठ कल्क, तथा घृत इनसे घृत सिद्ध करें बेर, चांगेरी एवं दही के योग धनिया, मरिच, विडलव जीरा, पंचकोल तथा अनारदाना कल्क से घृत सिद्ध कर पीने को देने से लाभ होता है । (अ.ह.चि.9/48)

गुल्म चिकित्सा :- गुल्म अन्नपान के अंत तक्र तथा मस्तु भी बतलाये गये हैं ।(अ.ह.चि.14/101

उदर रोग चि. :- प्लीहोदर रोगी को भोजन दही का प्रयोग बतलाया गया है । (अ.ह.चि.15/85)

श्वयथु चि. :- चित्रकमूल कल्क को घट लिप्त कर उस में दही जमाकर मथ लें । इसमें से घ निकाल लें । इस घृत को तक्र योग से पका कर चित्र चूर्ण मिलाकर शोथ में देना चाहिये । (अ.ह.चि.17/13

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुष्ठ चि.:- कुष्ठ रोग में दही अपथ्य बतलाया गया है । (अ.ह.चि.19/27) 1. चित्रकमूल तथा सहिंजन छाल 2. अपामार्ग तथा देवदारू 3. खदिरसार तथा धव 4. निशोथ, दन्तीमूल तथा द्रवन्तीमूल 5. लाख, रसांजन, तथा बड़ी इलायची 6. पुनर्नवामूल । इन सबको पृथक्-2 दधि मण्ड में पीस कर लेप करना वात तथा कफ जनित कुष्ठों में लाभ होता है । (अ.ह.चि.19/86-87)

श्वित्र कृमि चि. :- कृमि रोग में दही का प्रयोग नहीं करना चाहिये ।(अ.ह.चि.20/35)

कल्पसिद्धि स्थान :-

वमन कल्प :- 1. मैनफल बीज के योग से दूध सिद्ध कर दही बनालें । इस दही की मलाई खाकर या दही खाकर कफ जन्य छर्दि, लालासाव तथा तमक श्वास में वमन करें । (अ.ह.क.1/13) 2. जीमूतक फलों को दूध में उबाल कर दही बना लें । यह दही या दहीसर खाने को देने से वमन हो जाता है । (अ.ह.चि.1/21) 3. पत्र इक्ष्वाकु फल का गूदा निकालकर उसमें दूध डालकर दही बना लें । इस दही को कफ जनित कास, श्वास, के वमनयोग्य रोगी को पिलादें या इक्ष्वाकु गूदा को मस्तु के साथ पीने को दें । (अ.ह.क.1/29-30)

विरेचन कल्प :- 1. अमलतास की मज्जा का प्रयोग विरेचन करने के लिये मस्तु के साथ दें । (अ.ह.कि. 2/35) 2. तिल्क चूर्ण योग का प्रयोग मस्तु के साथ विरेचन के लिये करें । (अ.ह.क.2/40) 3. सेहुण्ड-थूहर (सुधा) कल्प का प्रयोग मस्तु के साथ करें । (अ.ह.कि. 2/46) 4. दन्ती, द्रवन्ती, कल्क का प्रयोग विरेचनार्थ मस्तु के साथ करने का निर्देश दिया है । (अ.ह.क.2/51-56)

वस्ति व्यापत्सिद्धि :- विरेचन के अधिक कोने से यदि पुरीष क्षीण हो जाये तो उड़द यूष के साथ कुल्माषों का आहार लेना तथा दही या सुरा पीना चाहिये । (अ.ह.क.5/28)

उत्तरस्थान :-

वर्त्म रोग प्रतिषेध :- वर्त्म रोग में श्वेत लोध्र की यथा विधि पोटली बनाकर उसे दही के जल में भिगोकर या केवल दही जल से सेंचन करें । (अ.ह.उ.9/11-14)

सर्वाक्षिरोग प्रतिषेध :- सैंधव नमक योग में दधि सर का प्रयोग भी किया गया है । यह सर्व श्रेष्ठ अञ्जन है । (अ.ह.उ.16/34)

क्षुद्ररोग प्रतिषेध :- व्यङ्ग, नीलिका आदि के लिये जामुन एवंआम के मृदु पत्र, हल्दी, दारूहल्दी तथा गुड़ को दही जल में पीस कर लेप लगाने से लाभ होता है । (अ.ह.उ.32/22)

मूषिकाऽलर्कविषप्रतिषेध :- आखु विष में कोषातकी, जीमूतक एवं मैनफल चूर्ण को दही के साथ प्रयोग कराके वमन कराने का विधान है । (अ.ह.उ. 38/21)

रसायन विधि :- 1. रसायन के लिये भल्लातक का एक प्रयोग दधिसर के साथ बतलाया गया है । (अ.ह.उ.39/80) 2. भिलावे का प्रयोग "कुटि प्रावेशिक" विधि से कराना चाहिये । यदि वातातपिक विधि से सेवन कराना हो तो कुलथी, दधि, सिरका, कांजी तैलाभ्यङ्ग एवं अग्नि ताप का निषेध करें । (अ.ह.उ.39/83) 3. लशुन रसायन का प्रयोग दही जल के साथ बतलाया गया है । (अ.ह.उ.39/118)

वाजीकरण विधि :- चन्द्रमा सदृश दधि सर को वस्त्र से छान कर पनीर के समान निकाल लें । इसमें खाण्ड मिला साठी चावलों के साथ इसका सेवन करने से वृद्ध भी तरूण के समान हो जाता है । (अ.ह.उ.40/33)

काश्यप संहिता-सूत्र स्थान :-

स्नेहाध्याय :- 1. दूध, दही एवं मधु युक्त द्रव्य सेवन उपरान्त एवं पित्तप्रकोप, रक्तस्राव, गर्भच्युति तथा गर्भदाह में उष्ण जल का निषेध है । (का.सू.22/14) 2. काल, जठराग्नि एवं अवस्थानुसार गुरू पान, गुरू भोजन, गुरूमांस एवं गुड़, दधि, तिल, शाक, दूध आदि विविध अन्नपानों में जो भी सात्म्य हो उस के साथ स्नेह की विचारणा बनाकर देनी चाहिये । (का.सू.22/54)

स्वेदाध्याय :- 1. सङ्कर स्वेद में भी दही का प्रयोग किया गया है । (का.सू.23/42) 2. उपनाह स्वेद में सुराबीज, अलसी, दही, दूध, सैंधव लवण, कांजी, कुष्ठादि लक्ष्ण एवं स्नेह पदार्थों का प्रयोग किया गया है । (का.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सू.23/43)

शारीर स्थान :-

जातिसूत्रीय शारीराध्याय :- 1. दीर्घायु पुत्र प्राप्ति हेतु शालि, सफेद जौ, दूध, दही एवं घृत मिलाकर मात्रानुसार सेवन करने का निर्देश दिया है । (का.शा. जातिसूत्रीयाध्याय सू.9) 2. गर्भिणी स्त्री को जल से परिपूर्ण घट, घृत, माला तथा घृत तथा दही से पूर्ण पात्र आदि किसी भी वस्तु का प्रतिरोध नहीं करना चाहिये । (का.शा. जातिसूत्रीयाध्याय)

चिकित्सा स्थाल :-

गर्भिणी चिकित्सिताध्याय :- गम्भारी छाल कल्क, निशोथ मूल एवं यवागू को दधि मण्ड से सिद्ध करें । इसमें अल्प मात्रा में घृत मिलाकर पिलाने से प्रवाहिका रोग शान्त होता है । (का.चि.गर्भिणी चि.)

प्रतिश्याय चिकित्सिताध्याय :- जीर्ण प्रतिश्याय में पंचगव्य घृत का प्रयोग लाभप्रद है । (का.चि.प्रतिश्याय)

कल्पस्थान :-

लशुन कल्प :- शालि एवं सफेद सांठी चावल का भात अल्प मात्रा में तीन दिन तक दही एवं तक्र के साथ सेवन करें,पश्चात् यूष का सेवन करें । इसके साथ 3 दिन तक शुक्त एवं पश्चात् मुग्द मण्ड आदि का सेवन करें। (का.क.लशुन.69-70)

कटु तैल कल्प :- 1. स्नेह जीर्ण हो जाने पर दोपहर काल में उबटन लगाकर हल्के गर्म पान करके कटु तैल में भूर्जित एवं दही के साथ सिद्ध की गई हरीतकी को शालि चावल तथा काम्बलिक के साथ खाना चाहिये । (का.क.कटुतैल.14-15) 2. मछली, सरसों तैल, दही, उड़द, घृत एवं दूध को रोहितक के क्षार के साथ पाक करके प्रयोग करें । यह प्लीहा, गुल्म,ग्रहणी तथा पार्श्व रोगों को शान्त करता है । यह बल्य, दीपन तथा स्नेहन है। (का.क.कटुतैल.16-17) 3. प्लीहोदर रोग में वाम पार्श्व शयन, दधि एवं मछली सेवन एवं हल्के अल्प एवं स्निग्ध पदार्थों का सेवन करना हितकर है । (का.क. कटुतैल.22) 4. प्लीहा रोग में मात्रानुसार दही, उड़द तथा भात सेवन तथा सरसों तैल को कनेर के कल्क चूर्ण या स्वरस के साथ सेवन करना चाहिये । (का.क.कटुतैल.24)

भोजन कल्प :- 1. हृदय को प्रिय लगने वाले एवं पुष्प युक्त पात्रों में मनोनुकूल स्थान पर बैठ कर उन्हें तक्र, शुक्त, दधिमस्तु, गुड़, द्राक्षा, पक्व आहार, सत्तू, शीत एवं श्रेष्ठ अनार रस, सैंधव, भूस्तृण के कोमल पत्र, त्रिवृत, वासा, करेला, कुठेर तथा बिजौरा निम्बू रस, अदरख रस सहित सत्तू, उत्तम घृत, लघु षाडव आदि पानक एवं हल्के श्व पक्व भक्ष्य पदार्थ, सूप, अचार (राग), पानक और मद्य प्रयोग जो सात्म्य हो उसका सेवन करना चाहिये । (का. क.भोजनकल्प.45-48) 2. भोजन कल्प में दही बनने की प्रक्रिया का वर्णन किया गया है । (का.क.भोजनकल्प.सूत्र. 98) 3. प्राचीन काल में ऋषियों ने दिव्य एवं ज्ञान बल से युक्ति पूर्वक दही मन्थन को उत्तम माना है । दही मन्थन से मक्खन, घृत एवं उदश्वि (लस्सी) बनती है । इनसे जगत का पोषण होता है । (का.क.भोजनकल्प-99)

विशेष कल्पाध्याय :- 1. सत्रिपात रोगों में दही अपथ्य माना गया है । (का.क.विशेष कल्प.) 2. सन्निपात रोग में गुड़ एवं घृत से संस्कृत की हुई एवं दही में सिद्ध पिप्पली, गुड़ के विकार, मूंग, भक्ष्य पदार्थ, जौ तथा गेहूँ से बने पदार्थ, दही से बने पदार्थ, शुष्क मूली, मूंग तथा आमला यूष, घृत युक्त तिक्त पदार्थों का यूष आदि पथ्य हैं । ये सभी भोजन में रुचि पैदा करने वाले हैं । (का.क. विशेषकल्प)

खिल स्थान :-

विषम ज्वर :- 1. ज्वर के पश्चात् बल प्रदान करने के लिये पंचगव्य घृत, दूध एवं लशुन का प्रयोग करने का निर्देश दिया है । (का.खि.1/79) 2. वात एवं पित्त प्रधान ज्वर में रोमहर्ष तथा अंगमर्द के लिये पंचगव्य तथा महाकल्याण घृत सेवन करना चाहिये । (का.खि. 1/84)

यूष निर्देशीय :- 1. दही, कांजी, शुक्त तथा दीपन वर्ग आदि से बनाये गये यूषों का निर्यूह पंचकर्म के अतिरिक्त सभी कार्यों में प्रयुक्त होता है । (का.खि.4/33) 2. दधिमण्ड या तक्र से सिद्ध यूष का प्रयोग कर्ण, अक्षि, हृदय रोग, अर्धावभेदक तथा अतिसार में तिल तथा माष के साथ प्रयोग करें । (का.खि.4/44) 3. अतिसार में अनार,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अम्वाड़ा, जामुन, चिर बिल्व छाल का दही मण्ड से क्वाथ करके कल्क यूष बना कर देना चाहिये । (का.खि. 4/50) 4 बला, वृषपर्णी, शालपर्णी, अनार एवं कच्चा बिल्व से युक्त पेया दही के साथ लेने पर रुचिप्रद है । (का.खि. 4/80-81) 5. तक्र तथा दही से सिद्ध यवागू सान्द्र एवं संस्कार युक्त हो, हाथों से जिसका ग्रहण किया जा सके एवं जो उष्ण, घन, शिथिल तथा चावल टोटे से बनाई गई हो । उसका प्रयोग निषेध है । (का.खि.4/75)

अन्तर्वती चिकित्सा :- 1. कुष्ठ, मुलहठी, रास्ना, भूकदम्ब, सौंफ, पद्माख, अनन्तमूल, खस, नीलकमल, मोथा, पृश्निपर्णी, करविन्दी, वच, क्षीरविदारी, हंसपादी तथा नागकेशर इन सब को दधिमण्ड के साथ रगड़ कर क्वाथ बना लें । दशमूल, बला, अतिबला, कोरण्ड, मीठा सहिजना, मेंहदी, यव, बेर तथा कुलत्थ का क्वाथ बनालें । इन दोनों क्वाथों को एकत्रित करके उस में दूध, गोमूत्र, मद्य, दही तथा तैल मिलाकर सिद्ध करें । यह तैल वातज्वर में अभ्यङ्गार्थ उत्तम है । (का.खि.10/34-43) 2. कमल, मंजीठ, आम गुठली, कंटकारी, अपक्व बिल्व का गूदा इन सबके चूर्ण को दही के साथ प्रयोग करने पर वातातिसार में लाभ होता है । (का.खि.10/84) 3. वातातिसार में मोथा, कच्चे बिल्व, सारिवा, मुलहठी के चूर्ण में घृत एवं गुड़ डाल कर दही के साथ सेवन करने से लाभ होता है । (का.खि.10/86-87) 4. कैथ, बिल्व, उड़द, कोमल शल्की एवं पिप्पली तथा अदरख का पृथक्-2 कल्क बनालें । इस में दही तथा मद्य (गुड़ निर्मित) मिलाकर खंड बनालें । इसमें घृत तथा मधु मिलाकर भोजन जीर्ण हो जाने पर सेवन करें । यह प्रवाहिका में लाभकारी है । (का.खि. 10/93-95) 5. श्वास एवं कास रोग में अभया, आमला, शल्यक की त्वचा, गृहधूम तथा ऊँट की अस्थियां इन को पीसकर दही तथा तैल से चटाने पर लाभ होता है । (का. खि.10/138-139)

सूतिकोपक्रमणीयाध्याय :- 1. जौ, बेर कुलत्थ एवं लघु एवं वृहत् पंचमूल क्वाथ में दही, यवक्षार, चव्य, चित्रक, सौंठ एवं पिप्पली से साधित घृत का प्रयोग करने से ज्वर तथा विबन्ध में लाभ होता है । (का.खि. 11/103-104) 2. सन्निपात ज्वर में पंचगव्य घृत देना चाहिये । (का.खि.11/156) 3. दही, राल, चावल तथा अश्वगन्ध को मधु में मिलाकर मस्तिष्क पर लेप करना चाहिये । मस्तिष्क सन्ताप को शान्त करता है । (का.खि. 11/160)

कुक्कुणक चिकित्सिताध्याय :- मरिच तथा आर्द्रक समभाग लें । इन्हें दही तथा कांजी में पीसकर छोटे टुकड़ों पर लिप्त करदें । पुनः-पुनः सात दिन तक इन पत्रों पर लेप करते रहें । फिर उन्हें दही में पीसकर छोटी -छोटी वर्तियां बना लें । ये वर्तियां अंजन में प्रयुक्त होती हैं । (का.खि.13/81-82)

विसर्प चिकित्सिताध्याय :- बला, रास्ना, कण्टकारी, वर्चीव, पुनर्नवा, पाटला, कृष्ण जीरक, मुलहठी, देवदारु इन सबको पीस कर दही के साथ तैल पाक करें। यह विसर्प में अभ्यङ्ग के लिये प्रयुक्त होता है । (का.खि. 14)

शोथ चिकित्सिताध्याय :- 1. शोथ रोगी का आमाशय तथा कोष्ठ लघु हो जाने पर स्नेहन, स्वेदन देकर पंचगव्य घृत, कल्याण घृत या दशमूल घृत से वमन विरेचन कराना चाहिये । तत्पश्चात् 10 दिन तक दूध के साथ भोजन कराना चाहिये । रोगी को बलानुसार तक पंचमुष्टिक यूष अथवा जांगल मांस रस या यवान्न सेवन करायें । (का.खि. 17/28-30)

शूल चिकितत्सिाताध्याय :- हींग, पाठा विडङ्ग, सर्जक्षार, सैन्धव, चित्रक, हाऊवेर, हरीतकी, चव्य अजवायन, धनिया, पुष्करमूल, अम्लवेत, तिन्तिड़ीक, यवानी, अनारदाना, कर्पूरकचरी, सौवर्चल इन सब के सूक्ष्म चूर्ण को उष्ण जल, दधिमस्तु, सुरा एवं आसव से सेवन कराने से आनाह, हृच्छूल, वस्तिशूल एवं गुल्म रोग शान्त होते हैं । (का.खि. 18/18-21)

अतः दही का प्रयोग संशमन एवं संशोधन दोनों प्रकार की चिकित्सा में लाभप्रद है । कल्क, चूर्ण, तैल, घृत, गुटिका, क्षार, लेप, उपनाह, अंजन, तथा भस्म में अनेक विध कल्पनाओं के निर्माणार्थ, अनुपान तथा पथ्य रूप में दही का प्रयोग होता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दही का उचित प्रकार से प्रयोग अनेक प्रकार के रोगों को शांत करने तथा स्वस्थ व्यक्ति के लिये उत्तम माना गया है । यदि दही का प्रयोग भली-भांति विधि अनुसार न किया जाये तो लाभ के स्थान ज्वर, रक्तपित्त, कुष्ठ, पाण्डु, भ्रम, तथा उग्र कामला अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न कर स्वस्थ मानव प्राणी को भी अस्वस्थ बना देता है। इसलिये दही सेवन करने से पूर्व निम्न विषयों पर अवश्य विचार करना चाहिये ताकि किसी भी प्रकार का विकार शरीर में उत्पन्न न हो तथा स्वास्थ्य की प्राप्ति हो सके ।

1. रात्रि को दही सेवन न करें क्योंकि रात्रि को दही सेवन करने से दोष वृद्धि हो जाती है । भावप्रकाश में लिखा है कि यदि रात्रि को दही लेना हो तो जल तथा घृत मिश्रित कर लेना उचित है । लेकिन रक्तपित्त एवं कफज व्याधियों में तो जल घृत मिश्रित दही लेना भी उचित नहीं है ।
2. घृत या शर्करा के बिना केवल दही का प्रयोग न करें क्योंकि घृत के साथ सेवन करने से कफ दोष वृद्धि तथा वातशान्ति होती है । इसलिये दही पित्त कारक होने पर भी पित्त की वृद्धि नहीं करता तथा आहार का पाचन भी हो जाता है । शक्कर के साथ सेवन करने से तृष्णा एवं दाह शान्त हो जाती है ।
3. मूंग यूष के बिना दही न लें क्योंकि मूंग यूष के साथ दही सेवन करने से रक्त एवं वात शान्त हो जाते हैं ।
4. दही मधु के बिना प्रयोग नहीं करना चाहिये क्योंकि मधु के साथ दही सेवन करने से स्वादिष्ट बन जाता है तथा कफ दोष भी अल्प मात्रा में होता है ।
5. उष्ण दही रक्त तथा पित्त को दूषित कर रक्तपित्त रोग को उत्पन्न कर देता है । इसलिये उष्ण दही सेवन का निषेध माना गया है ।
6. दही सेवन आमला के बिना नहीं करना चाहिये क्योंकि आमला के साथ दही का प्रयोग करना दोष हर है ।
7. शरीर तथा प्रकृति के अनुसार दिन में भी दही सेवन समय घी शक्कर, मूँगयूष, मधु, तथा आमला में से किसी एक द्रव्य के साथ सेवन करना चाहिये ।
8. दही तथा दूध का प्रयोग एक समय पर न करें । दूध के पूर्व तथा पश्चात् भी सेवन करना निषिद्ध है । कुक्कट तथा दही एकत्रित नहीं लेने चाहिये क्योंकि यह संयोग के कारण विरोध है । यह विष समान अहितकारक है ।
9. दही का निरन्तर प्रयोग भी नहीं करना चाहिए ।
10. भोजन में दही का सेवन करने के पश्चात् धूम्रपान नहीं करना चाहिये ।
11. कदली फल को दूध, दही, तक्र के साथ वडहल को दूध, दही के साथ तथा वडहल के पूर्व या पश्चात दही सेवन नहीं करना चाहिये ।
12. ग्रीष्म (जेठ, आषाढ़-मई, जून) वसन्त (चैत्र, बैसाख-मार्च, अप्रैल) तथा शरद् (अश्विन, कार्तिक-सितम्बर, अक्टूबर) ऋतु में दही सेवन नहीं करना चाहिये । हेमन्त (मार्गशीर्ष, पौष-नवम्बर, दिसम्बर), शिशिर (माघ, फागुन-जनवरी, फरवरी) तथा वर्षा (श्रवण, भाद्रपद-जुलाई, अगस्त) में दही का प्रयोग श्रेष्ठ माना गया है ।
13. मन्दक दही (जो पूर्णतया जमा न हो) वासी तथा अति अम्ल दही का प्रयोग नहीं करना चाहिये ।

औषध निर्माण, पथ्य एवं अनुपान में प्रयुक्त दही योग तालिका

क्र०	योग नाम	ग्रन्थ नाम एवं सूत्र	दधि कल्पना नाम	रोग नाम	विशेष
		चरक संहिता			
1.	कुष्ठादि चूर्ण	च.सू.23/14-15	दधिमण्ड,	मूत्रकृच्छ्र	.....
2.	वृष्य माहिष रस	च.चि.2/4/15-16	दधि	वाजीकरण	.....
3.	वृष्य दधिसर प्रयोग	च.चि.2/2/24-26	दधिसर	वाजीकरण	.....
4.	अगुर्वादि तैल	च.चि.3/267	दधिमण्ड	शीतज्वर	.....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्र०	योग नाम	ग्रन्थ नाम एवं सूत्र	दधि कल्पना नाम	रोग नाम	विशेष
5.	पञ्चगव्य	च.चि.3/303	पंचगव्य	विषमज्वर	.....
6.	हिंगुसौवर्चलाद्य घृत	च.चि.5/69-70	.....	गुल्म	अनुपान दधि
7.	हपुषाद्य घृत	च.चि.5/71-73	दधि	गुल्म	.....
8.	नीलिन्याद्य घृत	च.चि.5/106-109	दधि	गुल्म	.....
9.	द्वितीय लशुनाद्य घृत	च.चि.9/52-56	मस्तु	उन्माद	.....
10.	पंचगव्य घृत	च.चि.10/17	दध्याम्ल (पंचगव्य)	अपस्मार	.....
11.	महापंचगव्य घृत	च.चि.10/18-24	दध्याम्ल (पंचगव्य)	अपस्मार	.....
12.	पंचगव्य घृत	च.चि.12/57	दध्याम्ल (पंचगव्य)	श्वयथु	.....
13.	चित्रक घृत	च.चि.12/58-59	तक्र, दही	श्वयथु	.....
14.	पंचकोल घृत	च.चि.13/112-114	दधिमण्ड	उदररोग	.....
15.	नारायण चूर्ण	च.चि.13/125-132	.....	उदररोग	अनुपान तक्र या दधिमण्ड
16.	पिप्पल्यादि लवण	च.चि.13/158-161	दधि	उदररोग	अनुपान दधिमण्ड
17.	चव्यादि घृत	च.चि.14/107-109	दधि	अर्श	.....
18.	नागराद्य घृत	च.चि.14/110-112	दधि	अर्श	.....
19.	तृतीय पिप्पल्यादि घृत	च.चि.14/113-118	दधि	अर्श	.....
20.	दशमूलाद्य घृत	च.चि.15/82-86	दधि	ग्रहणी	.....
21.	पंचमूलाद्य घृत	च.चि.15/88-93	तक्र, मस्तु	ग्रहणी	.....
22.	पिप्पलमूलाद्य क्षार	च.चि.15/173-176	दधि	ग्रहणी	.....
23.	पञ्चम क्षार	च.चि.15/188-193	दधि	ग्रहणी	.....
24.	चांगेरी घृत	च.चि.19/43	दध्याम्ल	अतिसार	.....
25.	चव्यादि घृत	च.चि.19/44	दध्याम्ल	अतिसार	.....
26.	गोक्षुरादि योग	च.चि.26/62	.....	अश्मरी	दधि अनुपान
27.	शङ्खेष्टादि चूर्ण	च.चि.27/33-34	.....	उरूस्तम्भ	दधिमण्ड अनुपान
28.	अष्टकट्वर तैल	च.चि.27/47	दधि	अरूस्तम्भ	.....
29.	वत्सकादि लेप	च.चि.27/55	दधि	उरूस्तम्भ	.....
30.	मुस्तादि उपनाह	च.चि.28/113	दधि	वातव्याधि	.....
31.	त्रिफलादि चतु:स्नेह प्रयोग	च.चि.28/129-133	दध्याम्ल	वातव्याधि	.....
32.	मूलक तैल	च.चि.28/136-137	दधि	वातव्याधि	.....
33.	वला तैल	च.चि.28/148-156	दधिमस्तु	वातव्याधि	.....
34.	मूलकाद्य तैल	च.चि.28/167-169	दध्याम्ल	वातव्याधि	.....
35.	मूलक तैल	च.चि.28/172-175	दधि	वातव्याधि	.....
36.	मूलक तैल	च.चि.28/176-177	दधि	वातव्याधि	.....
37.	त्रिफलादि कल्क	च.चि.29/152-154	दधि	वातरक्त	.....
38.	वचादि योग	च.सिद्धि.7/18	दधिमण्ड	वस्ति व्यापद्	.....
39.	चतु:प्रास्रतिक वस्ति	च.सिद्धि.8/12	दधिमण्ड	विबन्ध, आनाह	.....

CC-0. Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्र०	योग नाम	ग्रन्थ नाम एवं सूत्र	दधि कल्पना नाम	रोग नाम	विशेष
		सुश्रुत संहिता			
1.	तिल्वक घृत	सु.चि.4/27	दधि	वातव्याधि	विरेचन के लिये
2.	महा नील घृत	सु.चि.9/34-38	दधि	कुष्ठ	.....
3.	पंचगव्य घृत	सु.उ.39/240-242	पंचगव्य	विषमज्वर	.....
4.	लघुपंचगव्य घृत	सु.उ.39/243	पंचगव्य	विषमज्वर	.....
5.	चित्रकादि घृत	सु.उ.42/25-26	दधि	गुल्म	.....
6.	हिंग्वाद्य घृत	सु.उ.42/27-28	दधि	गुल्म	.....
7.	दाधिक घृत	सु.उ.42/29-30	दधि	गुल्म	.....
8.	रसोनादि घृत	सु.उ.42/31-33	दधि	गुल्म	.....
9.	पंचगव्य घृत	सु.उ.61/34-37	पंचगव्य	अपस्मार	.....
		अष्टाङ्ग. संहिता			
1.	पंचगव्य घृत	अ.ह.चि.1/155	पंचगव्य	विषमज्वर	.....
2.	कणादि घृत	अ.ह.चि.4/48-49	दधिमस्तु	श्वास	.....
3.	अपराजित नामक खल	अ.ह.चि.9/26-28	दधि	अतिसार	.....
4.	पिप्पलादि चूर्ण	अ.ह.चि.10/12-13	.....	ग्रहणी	अनुपान दधि, दधिमण्ड
5.	तालिसादि गुटिका	अ.ह.चि.10/18	.....	ग्रहणी	अनुपान मस्तु
6.	दशमूलादि घृत	अ.ह.चि.10/27-30	तक्र, मस्तु	ग्रहणी	.....
7.	हिंग्वादि क्षार	अ.ह.चि.10/53-55	दही	ग्रहणी	.....
8.	अश्मरी नाशक कल्क	अ.ह.चि.11/21	.....	अश्मरी	अनुपान मधुर दही
9.	हिंग्वादि घृत	अ.ह.चि.14/9-10	दधि	गुल्म	.....
10.	हपुषाद्य घृत	अ.ह.चि.14/11-12	दधि	गुल्म	.....
11.	दाधिक घृत	अ.ह.चि.14/13-20	दधि	गुल्म	.....
12.	लशुनादि घृत	अ.ह.चि.14/22-25	दधि	गुल्म	.....
13.	नीलिनी घृत	अ.ह.चि.14/54-57	दधि	गुल्म	.....
14.	क्षारगद योग	अ.ह.चि.14/102-106	दधि	गुल्म	अनुपान में तक्र
15.	नारायण चूर्ण	अ.ह.चि. 15/14-21	---	उदर रोग	अनुपान तक्र, दधि, मण्ड प्रयोग
16.	हरीतकी घृत	अ.ह.चि.15/28-30	दध्याम्ल	उदर रोग	----
17.	हिंग्वादि क्षार	अ.ह.चि.15/70-75	दधि	उदर रोग	दधिमण्ड अनुपान
18.	पंचगव्य घृत	अ.ह.चि.16/1	पंचगव्य	पाण्डुरोग	---
19.	तिल्वक घृत	अ.ह.चि.21/31-33	दधि	वातव्याधि	---
20.	वला तैल	अ.ह.चि.21/72-80	दधि, मस्तु	वातव्याधि	---
21.	वृद्ध कश्यपोक्त घृत	अ.ह.उ.2/41-42	दधि, मस्तु	दन्तोद्भेद व्याधियाँ	---
22.	पंचगव्य घृत	अ.ह.उ.7/18	पंचगव्य	अपस्मार	---
23.	महापंचगव्य घृत	अ.ह.उ.7/19-23	पंचगव्य	अपस्मार	---

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्र०	योग नाम	ग्रन्थ नाम एवं सूत्र	दधि कल्पना नाम	रोग नाम	विशेष
		काश्यप संहिता			
1.	पंचगव्य घृत	का.सं. प्रतिश्याय चि.	पंचगव्य	प्रतिश्याय	---
2.	राज तैल	का.स. फक्क.चि	दधि	फक्क	---
3.	पंचगव्य घृत	का.सं.खि. 1/84	पंचगव्य	विषमज्वर	---
4.	फल तैल	का.सं.खि.8/89-96	दधि, मस्तु	उदावर्त	---
5.	पंचगव्य घृत	का.सं.खि.11/156	पंचगव्य	प्रसूता ज्वर	
		शार्ङ्गधर संहिता			
1.	अजमोदादि चूर्ण	शा.सं.म. 6/53	---	प्रवाहिका, अतिसार कर प्रयोग।	अनुपान दही के लक्षण
2.	पिप्पल्यादि चूर्ण	शा.सं.म.6/65-66	---	वातज ग्रहणी	अनुपान दही
3.	नारायण चूर्ण	शा.सं.म.6/83-91	---	मल विबन्धता	अनुपान दही
4.	लवणत्रियादि चूर्ण	शा.सं.म.6/91-106	---	आमाशय एवं यकृत् रोग	अनुपान दही
5.	लवण भास्कर	शा.सं.म.6/140-146	---	उदर रोग पानी, तक्र	अनुपान दही
6.	चांगेरी घृत	शा.सं.म.9/20-23	दही अतिसार	ग्रहणी एवं	---
7.	लाक्षादि तैल	शा.सं.म.9/91-96	दही	विषमज्वर	---
8.	प्रसारणी तैल	शा.सं.म.9/117-121	दही	वातकफज रोग	---
9.	लोक नाथ रस	शा.सं.म.12/58-82	--- क्षय ग्रहणी	अतिसार,	दहीभात पथ्य है
10.	हेमगर्भ पोटली रस	शा.सं.म.12/97-106	--- क्षास	कास, क्षय स्वरस एवं दही अनुपान	अतिसार में भात
11.	पंचवक्त्र रस	शा.सं.म.12/131-134	---	त्रिदोष ज्वर में दें।	दही भात अनु
12.	महाशाल्वण योग	शा.सं.उ.2/23-27	दही	वातव्याधि	स्वेदनार्थ
		रसरत्न समुच्चय			
1.	कनकसुन्दर रस	र.र.समु.14/2-13	दधि	राजयक्ष्मा	---
2.	लोकनाथ रस	र.र.समु.14/32-46	---	राजयक्ष्मा दही के साथ	पुराने चावल
3.	आनन्दभैरव रस	र.र.समु.16/7-9	---	अतिसार के बाद भूख लगने पर पुराने	औषध जीर्ण हो

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्र०	योग नाम	ग्रन्थ नाम एवं सूत्र	दधि कल्पना नाम	रोग नाम	विशेष
				चावल को दही के साथ देना पथ्य है ।	
4.	रसोत्तम रस	र.र.समु.16/19-23	---	अतिसार एवं तक्र	पथ्य रूप दही
5.	ग्रहणीगजकेसरी रस	र.र.समु.16/68-78	---	ग्रहणी रूप	दधि तक्र पथ्य
6.	चन्द्रप्रभा वटी	र.र.समु.17/28-29	दही	प्रमेह	---
7.	आन्त्रवृद्धौ पानीय तैलान्तर घृत	र.र.समु.18/36	दही	आन्त्रवृद्धि	---
8.	अग्निकुमार रस	र.र.समु.18/178-195	---	स्थौल्य नाशक उपद्रव हो जाये तो दही में चीनी मिलाकर दें ।	सेवन समय यदि
9.	मृत्युञ्ज रस	र.र.समु.19/7-12	---	उदर रोग चावल का भात पथ्य है ।	दही एवं पुराने
10.	विसर्प नाशन तैल	र.र.समु.20/2-3	दही कुष्ठ	विसर्प एवं	---
11.	क्षित्रारि रस	र.र.समु.20/145-147	---	उद्भत्र कुष्ठ	अनुपान दही
12.	शुल्वादि वर्ती	र.र.समु.23/61	दही	नेत्राभिष्यन्द	---
13.	द्वितीयकान्त रसायन	र.र.समु.26/67	---	रसायन	अनुपान मस्तु
14.	अमृतार्णव रस	र.र.समु.27/65-73	---	वाजीकरण	दही हितकर है
15.	महा कल्क (दिव्यामृत रस)	र.र.समु.27/99-115	---	वाजीकरण	दही पथ्य है
16.	तीक्ष्ण विष कल्प	र.र.समु.29/153	दही	डवषजन्य उपद्रप	---

रसेन्द्र सार संग्रह

1.	पूर्ण कला वटी	र.सा.सं.2/17-21	दधिमस्तु	ग्रहणी	---
2.	महा ग्रहणीकपाट रस	र.सा.सं.2/95-97	---	ग्रहणी करें ।	दही भात प्रयोग
3.	पानीय भक्त वटी	र.सा.सं.2/106-110	---	ग्रहणी	दही तक्र प्रयोग
4.	चन्द्रप्रभा गुटिका	र.सा.सं.2/12-19	---	अर्श अनुपान	तक्र, दधि, मस्तु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्र०	योग नाम	ग्रन्थ नाम एवं सूत्र	दधि कल्पना नाम	रोग नाम	विशेष
5.	कनकसुन्दर रस	र.सा.सं.2/27-33	---	यक्ष्मा अपथ्य है	दही तथा तक्र
6.	लोकेश्वरो रस	र.सा.सं.2/44-58	---	यक्ष्मा	दही पथ्य
7.	वृहछिच्छा भेदी रस	र.सा.सं.2/3-4	---	उदावर्त	दही पथ्य
8.	पंचानन रस	र.सा.सं.2/2-3	---	गुल्म	दही भात पथ्य
9.	उदरारि रस	र.सा.सं.2/24-25	---	उदररोग	दही भात पथ्य
10.	विजयभैरव रस	र.सा.सं.2/95-105	---	कुष्ठ रोग निषेध	दही प्रयोग
		रस तरंगिणी			
1.	प्रथम रसमाणिक्य	र.त.11/83-89	अम्ल दही	वातरक्त, फिरङ्ग, कुष्ठ	---
2.	द्वितीय रसमाणिक्य	र.त.11/90-93	अम्ल दही	कुष्ठादि रोग	---

शुद्ध स्वर्ण भस्म से निर्मित

बैद्यनाथ

रुमार्थो गोल्ड

पुराने जोड़ों के दर्द की प्रभावी दवा

रुमार्थो कैप्सूल में स्वर्ण भस्म का विशेष मिश्रण होने से यह गठिया वात एवं जीर्ण जोड़ों के दर्द पर व मांसपेशियों के रोगों में अत्यंत प्रभावी औषधि है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औषधियों का सागर-समुद्र

सुभाष चन्द्र

निःसंदेह जल जीवन का आधार है तथा एकमात्र जल है समुद्र । पृथ्वी के पूरे क्षेत्रफल (51 करोड़ वर्ग किलोमीटर) का लगभग 70.8 प्रतिशत जलमग्न अर्थात् समुद्र से आच्छादित है । सागर में जल का आयतन लगभग 144.5 करोड़ घन किलोमीटर तथा इसकी आयु अनुमानतः 4.5 अरब वर्ष है । सागरों में सबसे बड़ा एवं गहरा प्रशान्त महासागर है । इसका क्षेत्रफल 17.7 करोड़ वर्ग किलोमीटर, वास्तविक गहराई 11500 मीटर तथा औसत गहराई 4,280 मीटर है । इसके जल का वार्षिक औसत तापमान 19.1 डिग्री सेल्सियस है, जो कि अन्य सागरों की तुलना में सर्वाधिक है । जहां तक इसके नाम का प्रश्न है इसके नाम के अनेक पर्याय युगों से प्रयोग किये जा रहे हैं परन्तु रामचरित मानस के लंका काण्ड में रावण ने समुद्र के नामों की संज्ञा इस प्रकार दी है-

बाँध्यो बन निधि, नीरनिधि, सिंधु, वारीस ।
सत्य तोय निधि, कंपति, उदधि, पयोधि नदीस ॥

इसके अतिरिक्त इसे रत्नाकर भी कहा जाता है क्योंकि समुद्र मंथन के पश्चात् निम्न 14 रत्नों की प्राप्ति हुई थी ।

श्री, मणि, रम्भा, वारुणी, अमिय, शंख, गणराज ।
कल्पद्रुम, शशि, धेनु, धनु, धन्वन्तरि, विष, बाज ॥

समुद्र से धन्वंतरि का निकलना कुछ अविश्वसनीय सा लगता है परन्तु इसका अर्थ समुद्र से प्राप्त होने वाली हजारों वनस्पतियाँ, जीव-जन्तु एवं खनिज पदार्थों से है जिनमें असीमित औषधीय गुणों के कारण इनका उपयोग किया जाता है । शायद इसीलिए इन्हें प्रतीक रूप में धन्वंतरि कहा गया है । जल के प्रमुख स्रोत होने के अतिरिक्त समुद्र से विभिन्न लवण एवं खनिज पदार्थ भी प्रचुर मात्रा में प्राप्त होते हैं । उदाहरण के लिए नमक जिसका एकमात्र स्रोत समुद्र ही है । एक सर्वेक्षण के अनुसार एक घन किलोमीटर समुद्र जल में चार करोड़ 10 लाख टन नमक की मात्रा होती है ।

समुद्र में पाई जाने वाली वनस्पतियाँ, जीव-जन्तु एवं अनेक द्रव्य औषधीय दृष्टि से अति उपयोगी हैं । समुद्री जीवों एवं वनस्पतियों की रासायनिक संरचना उनमें निहित रासायनिक तत्व उनके भौतिक प्रतिरूपों से भिन्न हैं । इसका प्रमुख कारण है कि समुद्र का पर्यावरण थल से बिल्कुल भिन्न होता है । भूमि की वनस्पतियों एवं जीवों में हैलोजनी मिश्रण कम मात्रा में पाये जाते हैं जबकि समुद्री जल में विद्यमान क्लोरिन एवं ब्रोमीन की सान्द्रण प्रतिशतता अधिक होने के कारण इनमें हैलोजनी मिश्रण अधिक मात्रा में होता है । इन मिश्रणों में प्रति जैविक सक्रियता होती है । अनुसंधानों से ज्ञात हुआ है कि समुद्री जीवों में स्टेराल की प्रतिशत मात्रा अधिक से अधिकतम तक होती है । एंटीफर्टिलिटी एजेन्टों और कोर्टिकॉयडों जैसी अनेक औषधियाँ बनाने में इनका प्रयोग किया जाता है ।

समुद्र से प्राप्त अनेक वस्तुओं से प्राचीन काल से औषधि निर्माण किया जा रहा है । उदाहरणतः मुक्ता, शुक्ति, अंबर, घोंघा, कौड़ी, शंख, समुद्र फेन तथा प्रवाल आदि । इसके अतिरिक्त समुद्र जल का एक मुख्य घटक नमक भी खाद्य के अतिरिक्त औषधीय रूप में प्रयोग किया जाता है । प्रस्तुत लेख में समुद्र से प्राप्त जीव-जन्तु, वनस्पतियाँ तथा अन्य सम्पदाओं के औषधीय गुणों एव उपयोगों पर प्रकाश डाला गया है ।

समुद्र से प्राप्त औषधियाँ

1. जीवों से प्राप्त औषधियाँ

अंग्रेजी नाम	वैज्ञानिक नाम	अरबी नाम
अंबरग्रीस	अंब्रा ग्रेसी	अंबर
कास्टोरियम	लूट्रा-लूट्रा	जुंदबीदस्तार
कोरल	कोरलियम रूबूम	बूसाद/मरजान
काउरी	साइप्रिय मोनिटा	वादा
क्रोकोडायल	क्रोकोडिलस पाल्लुसट्रिस	टिम्सह
कटल फिशबोंस	सीपिया आफीसीनालीस	जष्ठ जाबाद
ईल	एनक्वीला प्रजाति	मरमाहीज
इंसिंगलस	एसीपेंसर हूसो	धारा अल समक

रसायन विभाग, राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नरव्हाल 6	मोनोडोन मोनासीरोस	क्यूगा
ऑएस्टर शेल	ओस्ट्रीडूलिस	सदफ
पर्ल	पिंकटाडा प्रजाति	लूलू
स्कारपिअन फिश	पिट्रोइश रूसेली	अकरब बहरी
सी.क्रैब	कैसर मरीना	सारतन बहरी
सी. हेअर	लीपस मैरिंड	अरनाब बहरी
सी. हेजहाग	मरीनस	कूनफूड बहरी
सी. स्नेल	कलनकुलस डिपिक्टस	हालजुन बहरी
श्रिंप	क्रेग्रान वल्गारिस	रूबियन
स्किंक	मायूबा क्रिनाटा	असकंकर/ सकनकर
स्पंज	स्पांगिया आफीसीनालिस	इसफंज
टरटल	चिलोनियां मिडास	सुलहफत
अनुजस	स्ट्रांबस प्रजाति	अजफार अल-तीब

2. वनस्पति से प्राप्त औषधियाँ

सी-मॉस (समुद्री किस्म)	कांड्रस क्रिस्पतसतुहबलुब
लैमिनेरिया (शैवाल प्रजाति)	
पोर फाइरा (शैवाल प्रजाति)	

3. खनिज से प्राप्त औषधियाँ

ओटोलिथ फ्रॉम फिशिज	सिलिकेट ऑफ लाइम	हजर अल-हवत
स्पंज स्टोन	लापिस स्पांगिया	हजर अल-इसफंज

कुछ प्रमुख पदार्थों के औषधीय गुणों एवं उपयोगों का वर्णन आगे किया गया है ।

अंबर :

अंबर नर व्हेल मछली की आँतों से उत्सर्जित होकर कठोर पदार्थ के रूप में परिवर्तित हो जाता है । ताजा अंबर पुरीष के समान दुर्गन्धयुक्त होता है परन्तु सूखने के पश्चात् इसमें हल्की-सी सुगन्ध आती है । इसका रंग पीला, सफेद एवं काला होता है । ये जल में अविलेय किन्तु ईथर एवं क्लोरोफार्म में विलेय है । इसका गलनांक 60 डिग्री सेल्सियस है । इसे गरम एल्कोहल में मिलाने से अंबरीन नामक सफेद दानेदार तत्व प्राप्त होता है । इसकी प्रकृति कटु एवं उष्ण है । यह त्रिदोषघ्न विशेषकर कफ, वातनाशक है । इसका उपयोग दुखार, लकवा, शक्तिहीनता, जोड़ों का दर्द, फेफड़े की बीमारी, शुक्राणु वृद्धि, स्मरण शक्तिवर्द्धक तथा कामवासना वृद्धि के लिए किया जाता है । यह कफवात प्रधान रोगों में भी लाभदायक है । इसे अदरख, लौंग एवं सुपारी के रस में संयोजन से कृष्यम्, कुभा एवं वधा रोगों का उपचार किया जाता है । पक्षाघात, मूर्च्छा, अपतंत्रक, अपसमात, धनुःस्तंभ, उदरशूल, गृहिणी तथा उन्माद रोगों में भी इसका उपयोग हितकर है ।

मुक्ता (मोती) :

इसकी गणना नवरत्नों में की जाती है । संस्कृत में मुक्ता तथा हिन्दी में इसे मोती कहते हैं । इसकी उत्पत्ति मुक्ता सुक्ति के अंदर संप्राप्त किसी वाह्य पदार्थ के पराश्रति के कारण उत्पन्न विक्षोभ से प्राकृतिक सुरक्षा के निमित्त खटिकीय संघात से होती है । इसके रासायनिक संगठन में 4-6 प्रतिशत, कार्बनिक पदार्थ, 2-4 प्रतिशत जल तथा 90-92 प्रतिशत कैल्शियम कार्बोनेट होते हैं । इसका उपयोग त्रिदोष विकारों में किया जाता है । इसका चूर्ण मधु के साथ नेत्र रोगों में अत्यन्त लाभप्रद है । इसके अतिरिक्त यह रक्तार्श, ग्रहणी, रक्तपित, शोथ, श्वासकास, पार्श्वशूल तथा यक्ष्मा में उपयोगी है । सैकड़ों वर्षों से अनेक महत्वपूर्ण औषधियों जैसे मोती भस्म, मोती पिष्टी तथा मुक्ता का योग मुत्थु बरपाम को तैयार करने में इसका उपयोग होता है । यह बरपाम, क्षय रोग, बवासीर तथा खांसी में लाभदायक है ।

शुक्ति (सीप) :

यह भी एक रत्न है परन्तु इसकी गणना उप रत्नों में की जाती है । हिन्दी में इसे सीप, संस्कृत में शुक्ति तथा अंग्रेजी भाषा में इसे आयस्टर कहते हैं । इसका रंग सफेद और चमकदार होता है । इसके दो भेद होते हैं । मुक्ता शुक्ति (पर्लओयस्टर) एवं क्षुद्र शुक्ति । मुक्ता शुक्ति का वैज्ञानिक नाम पिंकटाडा वल्गेरिश है तथा यह समुद्र में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पायी जाती है । क्षुद्र शुक्ति का वैज्ञानिक नाम क्रासोसर्ट्रिया गैडरन्सिस है । यह नदियों एवं तालाबों में पायी जाती है । रसायन विज्ञान के अनुसार इसका मुख्य घटक कैल्शियम कार्बोनेट है । यह गुणों में मोती से निम्न होती है परन्तु आयुर्वेद में इसे मोती की अनुपस्थिति अथवा इसके प्रतिनिधि के रूप में प्रयोग किया जाता है । जहां तक इसके औषधीय उपयोगों का प्रश्न है इसके कड़े छिलकों से एक मलहम तैयार होता है जिसका उपयोग पैरों के खुरदरेपन, बिवाई, दरारें आदि के लिए करते हैं । शुक्ति से बनाई गयी भस्म का उपयोग आंतों की अव्यवस्था तथा अतिसार में किया जाता है ।

शंख :-

इसका वैज्ञानिक नाम जैन्कस पाइरम है तथा सभी समुद्र तटों में पाया जाता है । इसका उपयोग युगों से पूजाअर्चना में ध्वनि उत्पादन के लिए किया जाता है । इसके विषय में एक मनोरंजक बात यह है कि यदि शंख को हम कान में लगाकर ध्यान से सुने तो समुद्र के लहरों जैसी सनसनाहट सुनाई पड़ती है । वेद शास्त्रों के अनुसार दक्षिणावर्ती शंख सबसे उत्तम होता है । इसके रासायनिक संगठन में लोहा, फासफोरस तथा कैल्शियम प्रमुख हैं । आयुर्वेद में इससे सिद्ध पद्धति के अनुसार एक बरपाम तैयार किया जाता है जिसका उपयोग बुखार, आँखों के रोग, गले के रोग, बवासीर तथा आमाशय के रोगों में किया जाता है । यह वात कफनाशक, दीपन तथा पाचन भी है ।

प्रवाल :

इसे महारत्न की संज्ञा दी गयी है । हिन्दी में इसे मूँगा तथा अंग्रेजी में कोरल कहते हैं । इसका वैज्ञानिक नाम कोरेलियम रूबरम है । यह एक कीट का खटिकीय कंकाल होता है । यह आकार में अनेक प्रकार का होता है परन्तु लाल रंग का गोलाकार तथा स्थूल प्रवाल श्रेष्ठ माना जाता है । यह अधिकतर भूमध्य सागर, जापान तथा मलेशिया के समुद्रों में पाया जाता है । इसमें कैल्शियम कार्बोनेट अधिक तथा मैग्नीशियम कार्बोनेट, फेरस ऑक्साइड तथा कैल्शियम सल्फेट न्यून मात्रा में पाये जाते हैं । इसके चूर्ण का उपयोग त्रिदोष तथा नेत्र रोगों में किया जाता है । इसके अतिरिक्त यह अम्लपित्त, मस्तिष्क की कमजोरी, उदरशूल, नाड़ी दुर्बलता, रक्तार्श, रक्त पित्त, रक्त विकार, यक्ष्मा, कास, श्वास, शुक्रमेह, क्षय तथा विष में किया जाता है । इससे बनाये गये बरपाम का उपयोग मुधमेह, मूत्राशय तथा चर्म रोगों में होता है । इससे एक विशिष्ट योग प्रवाल पंचामृत भी बनाया जाता है ।

समुद्र फेन :

यह एक समुद्री जन्तु की अस्थि होती है । समुद्र की सतह पर सफेद झाग के रूप में तैरते रहने के कारण ही इसे समुद्र फेन कहते हैं । अंग्रेजी में इसे कटलफिश के नाम से जाना जाता है । यह सफेद तटवर्ती प्रदेशों में पाया जाता है । इसके रासायनिक संगठन का मुख्य लवण कैल्शियम कार्बोनेट (80-85%) है तथा अल्प मात्रा में कैल्शियम सल्फेट, कैल्शियम फास्फेट एवं सिलिका होती है । यह औषधीय रूप में पित्त नाशक, सतम्भक, शोथहर, दीपन, पाचन एवं अनुलोमक है इसका उपयोग अधिकतर चूर्ण के रूप में नेत्र रोगों, विष, रक्तस्राव, शोथ, चर्म तथा दंत रोगों में किया जाता है । इसके गुणों का वर्णन प्राचीन आयुर्वेद ग्रन्थों में भी मिलता है ।

समुद्रफेन, शिशिरः कर्णपाक निवारणः ।
लेखनो नेत्ररोगाणाम् हितो विषविनाशनः ॥

उपरोक्त औषधीय द्रव्यों की प्राप्ति एवं उपयोग के पश्चात् आज विज्ञान की उन्नति के परिणामस्वरूप समुद्री वनस्पतियों एवं जीवों के विभिन्न पहलुओं पर अनुसंधान किये जा रहे हैं । प्रोटोजोंस, स्पंजों, सीलेंटरेटस, एकिनोडर्मस, मोलस्कस, निमराटइंस, सी. स्नेक्स एवं मछलियों से कई अविषालु उपापचयज पृथक किये गये हैं । इनमें से सर्वाधिक महत्वपूर्ण पालीटॉक्सिन है । कुछ महत्वूर्ण टॉक्सिनों की सक्रियता की सम्पूर्ण क्रिया-विधि का अध्ययन किया गया है । इनमें प्रति जीवाणुक प्रति विषाणुक, प्रति नवद्रव्यीय एवं अन्न भेषज गुण विज्ञान संबंधी सभी गुणधर्मों जैसी अन्य सक्रियताओं के बारे में भी ज्ञात हुआ है ।

इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि यह अथाह एवं विशाल समुद्र हमारे जीवन के लिए कितना महत्वपूर्ण एवं उपयोगी है । इसमें निहित प्राकृतिक सम्पदा जैसे जीव-जन्तु, वनस्पतियाँ, अनेक लवण तथा सैकड़ों द्रव्यों का यथोचित दोहन हमें जीवन रक्षा के साथ-साथ निश्चित रूप से बहुमुखी समृद्धता प्रदान कर सकता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युवानपीडिका (मुहासा)

[1]डॉ० रविकुमार श्रीवास्तव (एम.डी. आयु.)
[2]डॉ० निधि श्रीवास्तव (एम.डी. आयु.)

युवावस्था में इस रोग की उत्पत्ति होने के कारण इसे 'युवानपीडिका' कहा जाता है। इसे 'मुखदूषिका' तथा 'मुँहासे' भी कहा जाता है क्योंकि यह सबसे ज्यादा अपना प्रभाव मुंह (फेस) पर दिखाता है। इस व्याधि में मुख-मण्डल एकदम दूषित तथा विकृत हो जाता है। अष्टांग हृदय में कहा गया है :-

''शाल्मली कंटकाकारः पिटिका सरूजोधनाः।
मेदोगर्भा मुखे यूनां ताभ्यां च मुखदूषिकाः॥''

अध्याय 31/5

मुख पर कठोर, मेदोगर्भित, शाल्मली के कांटों के सदृश जो छोटी-छोटी फुंसियाँ निकलती हैं, उसे 'मुख दूषिका' कहा जाता है। कच्ची अवस्था में यह कांटे के रूप में होती है और मृदु अवस्था में इसको अगर तोड़ने की कोशिश की जाती है तो इसका विष पूर्णरूप से बाहर नहीं निकल पाता, परिणामस्वरूप सूजन तथा पीड़ा बढ़ जाती है। अपरिपक्व अवस्था में इसे अंगुलियों से मसलने के कारण ये दानें बड़े-बड़े हो जाते हैं तथा स्थायी रूप से त्वचा पर अपना स्थान बना लेते हैं। जब यह पक्वावस्था पर पहुंच जाये तब इनका पीप (पस) निकालकर साफ कर लेना चाहिए अन्यथा ये दानें सूखकर काले पड़ जाते हैं तथा मुख को बहुत ही भद्दा बना देते हैं। मुँहासे रोग वाले व्यक्ति अपने अन्दर एक हीनता का अनुभव करने लगते हैं। उनके चेहरे की त्वचा भद्दी, वर्ण काला तथा मोटी व रुक्ष हो जाती है।

कारण- जिन व्यक्तियों का रक्त शुद्ध होता है तथा रक्त में विजातीय तत्वों का अभाव होता है, वह इस व्याधि से पीड़ित नहीं होते। रक्त की अशुद्धता तथा विजातीय तत्व जब अधिक हो जाते हैं तो वह स्वाभाविक मार्गों से बाहर न निकल त्वचा को विस्फोट कर मुँहासों के रूप में बाहर निकलते हैं। यह व्याधि आंतरिक विषों के परिणामस्वरूप ही उत्पन्न होती है, बाह्य कारण सिर्फ इसकी तीव्रता को कम या अधिक करते हैं। सुश्रुत संहिता निदान स्थान में इसे कफ, वात तथा रक्त पुष्टि के परिणामस्वरूप माना गया है।

''शाल्मली कंटक प्रख्याः कफमारुत शोणितैः।
जायन्ते पिडिका यूनां वक्त्रे या मुख दूषिकाः॥''

सु०नि० 13/39

यद्यपि इसके यथार्थ कारणों का निश्चित रूप से पता नहीं लगाया जा सकता है, तथापि मुख्य कारण निम्नलिखित हो सकते हैं :-

1. जीवाणु संक्रमण- एक्नेबेसिलस तथा स्टेफाईलोकोकस का संक्रमण।
2. आंत तथा आमाशय पथ (GIT) के विकार।
3. मंदाग्नि, अजीर्णता, पाचनविकार।
4. रक्त की अधिक उष्णता तथा रक्त दोष।
5. उष्ण, रुक्ष, तीक्ष्ण पदार्थों तथा मद्यपान का अधिक सेवन।
6. मुंह की त्वचा का अधिक घर्षण तथा मर्दन।
7. कब्ज का रहना।
8. स्त्रियों में मासिक धर्म की गड़बड़ी।
9. चेहरे पर गंदगी रहना जिसके फलस्वरूप रोमकूप बंद हो जाते हैं।
10. स्त्री पुरुषों में अन्तःस्रावी ग्रन्थियों का अधिक स्राव- आधुनिक चिकित्सा शास्त्रियों का मानना है कि युवावस्था के दौरान शरीर में काफी परिवर्तन होते हैं। इसी काल में पुरुषों में एन्ड्रोजन तथा स्त्रियों में प्रोजेस्ट्रोन की अधिकता होने से मुंहासे निकलते हैं।

मुँहासों से बचाव :-

1. ऋतु के अनुकूल आहार-विहार पर चलें।
2. रक्त को शुद्ध करें।
3. कब्जियत न होने दें।
4. आहार-विहार का नियमतः पालन करें।
5. संतुलित आहार लें, भोजन में शाक, सब्जियाँ तथा विटामिन-'सी' वाले पदार्थ अधिक मात्रा में लें।

1. आयुर्वेदिक विशेषज्ञ, टी.के.डी.एल., सी.सी.आर.ए.एस., नई दिल्ली
2. व्याख्याता, श्री बाबा मस्तनाथ आयुर्वेदिक कॉलेज, रोहतक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

6. पचने से भारी वस्तुओं का निषेध करें ।
7. दूषित रक्त को शिरावेध द्वारा निकाल दें ।
8. वमन तथा विरेचन करायें ।
9. व्यायाम-शक्ति के अनुसार नियमित रूप से करें ।
10. औषधियों से बने उबटन तथा तैल से मालिश करें ।
11. सुबह (प्रातःकाल) शुद्ध वायु में घूमें ।
12. अत्यधिक तैल, घी, मिर्च व मसालों का कंम से कम प्रयोग करें ।
13. चेहरे पर बाहरी क्रीम, पाउडर, साबुन इत्यादि न लगायें ।

चिकित्सकीय प्रयोग :-

(क) आन्तरिक चिकित्सा -

1. 2 ग्राम अविपत्तिकर चूर्ण + ½ ग्राम शुद्ध गंधक मिलाकर सुबह/शाम दूध के साथ पीने से अच्छा लाभ होता है ।
2. सूखा आँवला 100 ग्राम रात को पानी में भिंगो दें । प्रातःकाल मसलकर छान लें व इसमें शहद डालकर रोजाना पीयें ।
3. ईसबगोल की भूसी रात को पानी के साथ सोते समय लेने से कब्ज ठीक रहती है ।
4. आरोग्यवर्धनी रस की दो गोली रात को पानी के साथ लें ।
5. शुद्ध गंधक ½ ग्राम, अमृतासत्व ½ ग्राम और प्रवालपिष्टी ¼ ग्राम मिलाकर ऐसी 3 मात्रा दिन में तीन बार दूध, मक्खन या गुलकन्द के साथ लेने से मुंहासों में बहुत आराम मिलता है ।
6. अगर मुंहासों ने उग्र रूप धारण कर लिया हो तो मुक्तापिष्टी 125 मि.ग्रा., रस माणिक्य 125 मि.ग्रा., गंधक रसायन ¼ ग्राम मिलाकर सुबह/शाम मक्खन के साथ देने से तुरन्त लाभ दिखलाई पड़ता है । अगर इसके साथ महामंजिष्ठादि क्वाथ का अनुपान लिया जाये तो और अच्छा फायदा होता है ।
7. गिलोय, चोपचीनी, मजीठ, सारिवा, रक्त चंदन, खस, गुलबनफ्शा, गुलाब के फूल, कमल के फूल तथा उशवा इन सबको समान भाग लें । फिर इसमें से 1 तोला चूर्ण को 6 तोला गरम जल में डालकर मिट्टी के पात्र में रख दें । फिर सुबह छान कर पी लें । इस प्रकार से ये क्रम पूरे एक महीने तक जारी रखने से रक्त शोधन के साथ-साथ नया रक्त उत्पन्न होकर त्वचा का रंग निखर जाता है । साधारण फुंसी, मुंहासे, अम्लपित्त, जीर्ण ज्वर तथा दाद आदि रोगों में यह बहुत ही कल्याणकारी सिद्ध हुआ है ।

बाह्य चिकित्सा :-

1. पीली सरसों, शाल्मली कण्टक, मसूर की दाल, चिरौंजी तथा बादामगिरी समान मात्रा में लेकर पीस लें । जब सभी द्रव्य एक सार हो जाये तो थोड़ा सा चूर्ण गोदुग्ध में पीसकर चेहरे पर लेप करें । फिर 2 या 3 घंटे बाद थोड़े गरम जल से धो लें ।
2. मैनफल को पानी में पीसकर लगायें ।
3. जामुन की गुठली को पीसकर लगायें ।
4. गोरोचन व काली मिर्च पीसकर चेहरे पर लेप करें ।
5. शुद्ध शहद में थोड़ा सा सैंधानमक और सिरका मिलाकर रोजाना सुबह के समय मलें व 15 मिनट बाद गर्म जल से धो लें ।
6. जौ का आटा, संतरे के सूखे छिलके व आँवले का चूर्ण को खूब महीन पीसने के बाद उसे तिल के तैल से मिलाकर उबटन करें ।
7. थोड़े से सेमल के कांटे लेकर उसमें 5 गुना गाय या बकरी का दूध मिलाकर भिगोने के लिए रख दें । बाद में उसे सिल पर पीसकर रोज रात को 1-2 घण्टे तक मुख पर मोटा लेप करें । 15 दिन नियमित इस्तेमाल कर इसका असर देखते ही बनता है ।
8. सुहागे की खील और सफेद चंदन जल के साथ पीसकर लगाने से त्वचा के धब्बे तथा मुंहासे सभी का नाश होता है ।
9. अरहर या लाल मसूर की दाल रात भर भिगोकर प्रातःकाल पीस लें । इसमें थोड़ा सा नींबू का रस मिलाकर मुख पर रोज सुबह मलें । इससे मुंहासों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फलस्वरूप कठोर हुई त्वचा कोमल हो जाती है।

10. हल्दी, सरसों, लोध्र, वच, पीपल प्रत्येक 10 ग्राम, बेसन 100 ग्राम तथा चिरौंजी 50 ग्राम। सबको बारीक पीसकर, चमेली का तेल मिलाकर लेप करें।

11. रात भर भिगोये हुए बादामों की गिरी 25 ग्राम, अच्छी कम्पनी का या खुद ही बनाया गुलाब जल 250 मि.ली., रसकपूर ½ ग्राम, शुद्ध चंदन तैल 15 ग्राम लें। सबसे पहले बादाम की गिरी को गुलाब जल के साथ महीन पीस लेते हैं। फिर अन्य वस्तुयें उसमें मिला देते हैं। फिर उसे एक शीशी में भरकर रख लेते हैं। मुख अथवा अन्य अंग जहाँ पर भी इस मिश्रण का प्रयोग होगा त्वचा निर्विकार हो जायेगी।

12. कुंकुमाद्य तैल जोकि बाजार में बना बनाया ही मिलता है, उसकी मालिश करने से युवानपीडिका तथा अन्य क्षुद्ररोग ठक होते हैं।

परहेज :- धूम्रपान, मद्यपान, चाय, तले पदार्थ, मांस, गरम मसाले, लाल मिर्च, अत्यधिक मीठे पदार्थ तथा कब्ज करने वाले पदार्थ।

बैद्यनाथ

प्राणदा

प्राणदा से हर साल मलेरिया के लाखों रोगी प्राणदान पाते हैं। इसलिए इसका नाम प्राणदा बिल्कुल सही है। हिन्दुस्तान के गांव-गांव और कस्बे-कस्बे में यह दवा मशहूर है। इकतरा, तिजारी, चौथिया, फसली, जूड़ी-पारी का बुखार, और तिल्ली मलेरिया के ही भेद हैं। मलेरिया बुखार की हर हालत में यह तुरंत फायदा पहुंचाती है। बुखार के बाद भी दवा पीने से बुखार के फिर लौटने का भय नहीं रहता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फलस्वरूप कठोर हुई त्वचा कोमल हो जाती है।

10. हल्दी, सरसों, लोध्र, वच, पीपल प्रत्येक 10 ग्राम, बेसन 100 ग्राम तथा चिरौंजी 50 ग्राम। सबको बारीक पीसकर, चमेली का तेल मिलाकर लेप करें।

11. रात भर भिगोये हुए बादामों की गिरी 25 ग्राम, अच्छी कम्पनी का या खुद ही बनाया गुलाब जल 250 मि.ली., रसकपूर ½ ग्राम, शुद्ध चंदन तैल 15 ग्राम लें। सबसे पहले बादाम की गिरी को गुलाब जल के साथ महीन पीस लेते हैं। फिर अन्य वस्तुयें उसमें मिला देते हैं। फिर उसे एक शीशी में भरकर रख लेते हैं। मुख अथवा अन्य अंग जहाँ पर भी इस मिश्रण का प्रयोग होगा त्वचा निर्विकार हो जायेगी।

12. कुंकुमाद्य तैल जोकि बाजार में बना बनाया ही मिलता है, उसकी मालिश करने से युवानपीडिका तथा अन्य क्षुद्ररोग ठक होते हैं।

परहेज :- धूम्रपान, मद्यपान, चाय, तले पदार्थ, मांस, गरम मसाले, लाल मिर्च, अत्यधिक मीठे पदार्थ तथा कब्ज करने वाले पदार्थ।

बैद्यनाथ

प्राणदा

प्राणदा से हर साल मलेरिया के लाखों रोगी प्राणदान पाते हैं। इसलिए इसका नाम प्राणदा बिल्कुल सही है। हिन्दुस्तान के गांव-गांव और कस्बे-कस्बे में यह दवा मशहूर है। इकतरा, तिजारी, चौथिया, फसली, जूड़ी-पारी का बुखार, और तिल्ली मलेरिया के ही भेद हैं। मलेरिया बुखार की हर हालत में यह तुरंत फायदा पहुंचाती है। बुखार के बाद भी दवा पीने से बुखार के फिर लौटने का भय नहीं रहता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वास्थ्य संरक्षण में ऋतुचर्या का महत्व

डा० योगेश दत्त शर्मा

हमारे दैनिक जीवन में ऋतुओं का विशेष महत्व है। आयुर्वेद शास्त्र में ऋतुचर्या पर विस्तृत वर्णन किया गया है। ऋतुओं के अनुसार आहार-विहार का उल्लेख किया गया है। यदि इन नियमों का पालन करें तो अधिकांश व्याधियों से हमें स्वतः मुक्ति मिल सकती है।

संवत्सर काल विभाग में एक वर्ष में बारह मास, छः ऋतु एवं दो आयन होते हैं।

माह	ऋतु	आयन
माघ		
फाल्गुन	शिशिर	
चैत्र		
वैशाख	बसन्त	उत्तरायण
ज्येष्ठ		
आषाढ़	ग्रीष्म	
श्रावण		
भाद्र	वर्षा	
आश्विन		
कार्तिक	शरद	दक्षिणायन
मार्गशीष	हेमन्त	
पौष		

उत्तरायण में सूर्य की गति उत्तर दिशा की ओर होती है। इस काल में सूर्य का बल बढ़ता है एवं चन्द्रमा का बल क्रम से क्षीण होता है। तिक्त, कषाय एवं कटु रस क्रम से बलवाले होते हैं। इस काल में सभी प्राणियों का बल क्षीण होता है।

दक्षिणायन में सूर्य की गति दक्षिण दिशा की ओर होती है। इस काल में सूर्य का बल क्षीण एवं चन्द्रमा का बल क्रम से बढ़ता है। अम्ल, लवण एवं मधुर रस क्रम से बलवान हो जाते हैं। इस समय उत्तरोत्तर सभी प्राणियों का बल बढ़ता है।

आयुर्वेद शास्त्रानुसार तथा दोषों के स्वाभाविक संचय प्रकोप और प्रशम के अनुसार ऋतुओं का क्रम इस प्रकार है –

"वर्षा, शरद, हेमन्त, शिशिर, बसन्त, ग्रीष्म"

कहा है –

चयप्रकोप प्रशमा वायोग्रीष्मादिषु त्रिषु ।
वर्षादिषु च पित्तस्य श्लेष्मणः शिशिरादिषु ॥

-अष्टांग हृदय सूत्र स्थान 12/24

तथा च,

तत्र पैत्तिकानां व्याधीनामुपशमो हेमन्ते, श्लैष्मिकाणां निदाघे, वाजिकानां शरदि स्वभावत एव, त एते संचय प्रकोप प्रशमः व्याख्याताः ।

- सुश्रुत सूत्र स्थान 6/13

ज्योतिषशास्त्रानुसार तथा दोष संशोधन की दृष्टि से दोष निर्हरणार्थ ऋतुओं का क्रम इस प्रकार है –

तत्र वर्षा हेमन्त ग्रीष्मेषु संचितानां दोषज्ञणां शरद बसन्त-

प्रावृट्सु व प्रकुपितानां निर्हरणं कर्त्तव्यम्

-सुश्रुत सूत्र स्थान 6/12

अपि च,

हरेत् बसन्ते श्लेष्माणं पित्तं शरदे निर्हरेत् ।
वर्षासु शमयेद्वायुं प्राग्विकार समुच्छ्रयात् ।

-सुश्रुत सूत्र स्थान 6/38

दोष संचयन एवं तदुपरान्त दोष-प्रकोप के समय ऋतुओं के अनुसार संशोधन द्वारा दोष-निर्हरण की सारिणी-

	संचय	प्रकोप	प्रशम
वात-	ग्रीष्म-	प्रावृट्-	शरद
पित्त-	वर्षा-	शरद-	हेमन्त
कफ-	हेमन्त-	बसन्त-	ग्रीष्म

-सुश्रुत सूत्र स्थान 6/12,38

दोष निर्हरण के संबंध में कहा है –

संचयेऽपहृता दोषा लभन्ते चोत्तरागतिः ।
ते उत्तराक्षु वातिषु भवन्ति बलवत्तराः ॥

-सुश्रुत सूत्र स्थान 21/37

अर्थात्, यदि संचय काल में ही दोषों का अपहरण कर दिया जाए तो वे अगली गतियों को प्राप्त नहीं करते। उत्तरोत्तर स्थिति में पहुंचकर दोष अधिक बलवान होते जाते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। अपहरण की प्रक्रिया इस प्रकार है - अधिक में शोधन, मध्यम दोष में लंघन और पाचन तथा अल्प दोष में संशमन क्रिया करनी चाहिये।

दोष निर्हरण (संशोधन) की दृष्टि से मासिक वर्णन इस प्रकार है -

वर्षा - भाद्रपद, अश्विन
दक्षिणायन शरद - कार्तिक, मार्गशीर्ष।
- विरेचन द्वारा पित्त शोधन
हेमन्त - पौष, माघ।
बसन्त - फाल्गुन, चैत्र।
- वमन द्वारा कफ शोधन।
उत्तरायण ग्रीष्म - वैशाख, ज्येष्ठ।
प्रावृट् - आषाढ़ श्रावण।
- वस्ति द्वारा-शोधन।

- सुश्रुत सूत्र स्थान 6/10

प्रावृट् - वर्षा ऋतु के प्रारंभिक समय को प्रावृट् ऋतु कहते हैं।

रोगोत्पत्ति करने में सम्प्राप्ति प्रक्रिया (संचय, प्रकोप, प्रसार और स्थान संश्रय) के अंतर्गत दोष संचय एवं प्रकोप के समय दोष निर्हरण का महत्व है, जिससे कि रोग के पूर्व रूप और लक्षण उत्पन्न न होने पावें, जैसा रोगोत्पत्ति हेतु कहा गया है -

संचयं च प्रकोपं च प्रसरं स्थानसंश्रयम्।
व्यक्ति भेदं च यो, वेत्ति दोषाणां स भवेद्भिषक्॥

-सुश्रुत सूत्र स्थान 21/36

दृष्टव्य है कि व्याधि के निर्मलून एवं चिकित्सा हेतु माधवकर द्वारा पंच निदान में वर्णित उपशय का विचार भी महत्वपूर्ण है जैसा कि कहा है -

हेतुव्याधिविपर्यस्तविपर्यस्तार्थकारिणाम्।
औषधान्नविहाराणामुपयोगं सुखावहम्॥
विद्यादुपशयं व्याधेः स हि सात्म्यमितिस्मृतः।
विपरीतोऽनुपशयो व्याध्यसात्म्याभिसंज्ञितः॥

- माधव निदान

यहां उपशय और अनुपशय की दृष्टि से आहार और विहार का उपयोग, चरक, सुश्रुत और वाग्भट्ट आदि ग्रंथ में वर्णित ऋतुचर्या के अनुसार करना चाहिये।

आयुर्वेद में ऋतुओं का वर्णन दो प्रकार से करने का निम्नलिखित कारण हैं -

1. दोषों के स्वाभाविक संचय, प्रकोप और प्रशम के आधार पर तथा उनके संचय के पश्चात प्रकुपित होने पर संशमनार्थ उनके निर्हरण की दृष्टि से।
2. धर्मशास्त्र और ज्योतिष शास्त्र के विभिन्न वर्णन के कारण।
3. काश्यप संहिता के अनुसार गंगा के उत्तर और दक्षिण में जलवायु की भिन्नता के कारण, गंगा के उत्तर में शीत अधिक होने से हेमंत ऋतु के साथ शिशिर ऋतु की तथा गंगा के दक्षिण में वर्षा अधिक होने से वर्षा ऋतु के साथ प्रावृट् ऋतु की कल्पना की गई है।

शरद ऋतु में पित्त प्रकुपित होता है। अतः इस ऋतु में पित्त की शान्ति विरेचन द्वारा करानी चाहिए। इस ऋतु में तिक्त मधुर एवं कषाय रस वाले हल्के अन्न जैसे चावल, खांड, मूंग, मिश्री, पटोल का शाक आदि का सेवन करना चाहिए। अत्यधिक भोजन, पूर्व की पवन, दिन में सोना, तैल, चर्बी एवं धूप का परित्याग करें।

हेमंत ऋतु में पित्त की शान्ति स्वतः हो जाती है एवं जठराग्नि प्रबल होती है। इस ऋतु में उष्ण, स्निग्ध एवं मधुर पदार्थों का सेवन करना चाहिए। गेंहू, मैदा आदि की मिठाइयों का सेवन करना चाहिए। वातनाशक तैलों की मालिश एवं गर्म जल से स्नान करना चाहिए। नर्म एवं गर्म शय्या का उपयोग करें। ठंडे एवं रुखे अन्न का सेवन वर्जित है। सूर्य की किरणों का सेवन पीठ की ओर से करें।

कार्तिकस्य दिनान्यष्टा वष्टा वाग्रणस्य च।
यमदंष्ट्रा समाख्याता स्वल्प मुक्तो हि जीवति॥

शरद एवं हेमन्त ऋतु का संधिकाल अर्थात् कार्तिक मास के अंतिम आठ दिन एवं अगहन (मार्गशीर्ष) मास के प्रारम्भ के आठ दिन (कुल सोलह दिन) यमदंष्ट्रा की दाढ (यमदंष्ट्रा) कहे जाते हैं। इन दिनों में अल्प आहार सेवन करना हितकर है। (शार्ङ्धर संहिता)

शिशिर ऋतु में शीत और रुक्षता विशेष हो जाती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। अतः इस ऋतु में भी हेमंत ऋतु अनुसार ही चर्या विशेष रूप से करनी चाहिए। बसंत ऋतु में कफ का प्रकोप होता है। अतः वमन, नस्यादि द्वारा कफ की शान्ति करना चाहिए। हल्के रुखे भोजन, व्यायाम, सोंठ से सिद्ध जल का सेवन करना चाहिए। दही, गुड़ जैसे कफकारक पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए। बसंत ऋतु में दिन में शयन, भारी, स्निग्ध, शीत अम्ल एवं मधुर पदार्थों का सेवन त्याग देना चाहिए।

ग्रीष्म ऋतु में कफ का क्षय एवं वायु की वृद्धि होती है। इस ऋतु में वातनाशक, शीतल, स्निग्ध मधुर पदार्थ जैसे चावल का भात, दूध, शर्बत (द्राक्षा, खजूर), मसू का सेवन करना चाहिए। शीतल जल से स्नान एवं दिन में सोना उचित है। ग्रीष्म ऋतु में मद्यपान से सूजन, दाह, शिथिलता आती है। अतः मद्य निषेध है।

वर्षा ऋतु में वात का प्रकोप होता है। अतः वस्ति द्वारा वायु की शांति करना श्रेष्ठ है। इस ऋतु में हल्का भोजन, अम्ल रस युक्त लवण, चिकनाई युक्त नमकीन, मधु युक्त पदार्थ का सेवन करना चाहिए। वर्षा ऋतु में दिन में सोना, व्यायाम एवं धूप का त्याग करना चाहिए। शीत (ठंडी हवा/ओस) एवं अति पित्तकारक आहार वर्जित है।

आहार-विहार का सेवन ऋतुओं के अनुसार ही करना चाहिए। इसके अतिरिक्त धातुओं को साम्यावस्था में रखने के लिए प्रत्येक मनुष्य की प्रकृति, देश एवं देह के अनुरूप अनुकूल आहार-विहार का निर्धारण करना चाहिए। (सुश्रुत संहिता)।

बैद्यनाथ

जन्मघूँटी

जन्म के बाद से ही बच्चों को इसका सेवन कराने से उनके स्वास्थ्य में कोई गड़बड़ी नहीं होती। इससे बुखार, खांसी, सर्दी-जुकाम, अजीर्ण, उल्टी होना, टट्टी होना, पेट फूलना आदि रोग दूर होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिशु स्वास्थ्य

बाल रोग एवं बाल ग्रह की आयुर्वेदीय चिकित्सा

डा० आशुतोष कुमार B.Sc. BAMS (Pat) MD Ay.

अष्टांग आयुर्वेद में कौमारभृत्य का महत्वपूर्ण स्थान है । कौमारभृत्य के अन्तर्गत बालरोग एवं बालग्रह का वर्णन मिलता है ।

''कौमार भृत्यं नाम कुमारभरणधात्री क्षीर दोष संशोधनार्थ दुष्ट स्तन्य ग्रह समुत्थानां च व्याधीनामुपशयनार्थम्''

अर्थात् कौमारभृत्य नामक तंत्र में बालक के भरण-पोषण धात्री, धात्री के दुग्ध के शोधन के लिए तथा विकृत दुग्ध से उत्पन्न होने वाली व्याधियों के शमन की चर्चा है ।

बाल्यावस्था जीवन का निर्माण काल है । इस अवस्था में जो नींव रख दी जाती है वह बराबर बनी रहती है । गर्भावस्था से 16 वर्ष की उम्र तक उसमें निरन्तर वृद्धि (ळतवूजी) एवं विकास (क्मअमसवचउमदज) की प्रक्रिया चलती रहती है ।

आधुनिक आयुर्विज्ञान में इसे निम्न शाखाओं में विभक्त किया गया है ।

1. बाल चिकित्सा विज्ञान (Paediatrics)
2. स्त्री रोग विज्ञान (Gynaecology) एवं
3. प्रसूति विज्ञान (Obstetrics)

काश्यप संहिता आयुर्वेद का अत्यन्त प्राचीन ग्रन्थ है । इस संहिता के प्रधान आचार्य वृद्ध जीवक हैं । इसमें बालकों के लेहन, पारगर्भिक रोग, फक्क रोग, दन्तोत्पत्ति का विशद वर्णन है, जो अन्यत्र नहीं मिलता है ।आयुर्वेदीय सिद्धान्त के अनुसार वात, पित्त और कफ दोष का साम्यावस्था में होना निरोग है तथा इन्हीं की विषमावस्था को रोग कहते हैं ।

धातुसाम्य क्रिया चोक्ता तन्त्रस्यास्यं प्रयोजनम् ।

(च.सू.1/52)

अर्थात दोषों की साम्यावस्था ही स्वस्थावस्था है। बाल्यावस्था में कफ की अधिकता होती है अर्थात् कफ की प्रधानता वाले रोगों से पीड़ित होने की संभावना अधिक रहती है । बालक काफी चंचल होते हैं । फलतः बाल्यावस्था में दुर्घटनाएँ भी अधिक होती हैं । चिकित्सक को बाल रोगी के प्रति अधिक सतर्कता एवं सावधानी बरतनी चाहिये क्योंकि बाल रोगी अपने कष्ट को बोलकर बता पाने में असमर्थ होते है । रोगी जल्दी अपने अंग को प्रदर्शित करने के लिए या परीक्षण के लिए तैयार नहीं होते हैं ।

बालकों को प्रायः उग्रस्वभाववाली औषाधियाँ नहीं दी जाती है । औषाधि का रूप ऐसा हो कि बच्चे को रुचिकर एवं स्वादिष्ट लगे क्योंकि बच्चे कटु तिक्त और कषाय रस वाली औषाधियाँ खाना पसन्द नहीं करते हैं ।

आयुर्वेदशास्त्र में आचार्यों ने बाल्यावस्था को तीन भाग में बाँटा है –

1. क्षीरप 2. क्षीरान्नाद 3. अन्नाद.

1. क्षीरप – बालक जब केवल दूध पर आश्रित रहता हो उसे क्षीरप कहा जाता है । सामान्यतया जन्म से लेकर एक वर्ष तक या जबतक सिर्फ दूध पर आश्रित रहता है ।

2. क्षीरान्नाद – जब बालक दूध पीने के साथ-साथ अन्न को भी ग्रहण करने लगाता है, तो उसे क्षीरान्नाद कहते हैं ।

3. अन्नाद – जब बालक दूध पीना छोड़कर सिर्फ अन्न पर आश्रित हो जाता है, उसे अन्नाद करते हैं ।

प्राचीन काल में बालकों को अनेक प्रकार के योग लेहन (अवलेह) के रूप में चटाने की परम्परा थी जिससे बालकों का स्वास्थ्य, बल तथा बुद्धि की वृद्धि होती थी । आजकल बालकों के स्वास्थ्य एवं बुद्धि के लिए अनेक प्रकार की जन्मघुट्टियों का प्रयोग किया जाता है । उसी प्रयोजन के लिए प्राचीन काल में लेहन योगों का प्रचलन था ।

शिशु के जन्म के पहले भावी माता-पिता के मन में उसकी मानसिक तैयारी रहती है । विवाह योग्य उम्र का निर्धारण पुरुष की पच्चीस वर्ष तथा स्त्री की उम्र अठारह वर्ष से अधिक होने पर ही उपयुक्त माना जाता है । आयुर्वेद में सगोत्रीय विवाह का स्पष्ट प्रतिषेध है ।

श्रीकृष्ण आयुर्वेद क्लिनिक सह पंचकर्म चिकित्सा केन्द्र लंगरटोली गली, नाला रोड, पटना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक आनुवंशिकी विज्ञान की पृष्ठभूमि में स्पष्ट है कि सगोत्रीय विवाह बहुधा मानसिक तथा शारीरिक रूप से अस्वस्थ संततियों का कारण बनते हैं।

गर्भ के मासानुमासिक विकास क्रम के अनुरूप भावी माता के भोजन में मासानुमासिक परिवर्त्तन आयुर्वेदीय दर्शन का मौलिक चिन्तन है जो गर्भ के समुचित विकास को सुनिश्चित करता है । इस प्रकार की परिचर्चा का पालन करने से माँ के साथ-साथ बच्चे को भी भविष्य में होनेवाली अनेक बीमारियों से बचाया जा सकता है ।

बच्चे के जन्म के बाद किये जाने वाले संस्कार अर्थात् जातकर्म संस्कार स्वास्थ्य की दृष्टि से अधिक महत्व का है । जन्म के बाद बच्चे को विषम भाग में मधु तथा घृत एवं स्वर्णभस्म तथा वचा आदि चटवाने का है। स्वर्ण को श्रेष्ठ मेधाकारक माना गया है, वहीं इसकी उपस्थिति नवजात के फेफड़ों तथा हृदय की सम्यक क्रियाशीलता लाने में सहायक सिद्ध होती है । जन्म के तुरत बाद अक्सर फेफड़े तथा श्वासनली सक्रिय नहीं हो पाती हैं और श्वास नली में कफ के जमा रहने के कारण श्वसन में परेशानी उत्पन्न हो सकती है । ऐसी परिस्थिति में शिशु के कण्ठगत कफ का विगलन कर सम्यक श्वसन को सुनिश्चित करता है ।

बच्चे को जन्म के बाद जितना शीघ्र हो सके उसे माँ का दूध अवश्य पिलाना चाहिए । माँ के दूध में आवश्यक वसा अम्लों की उपस्थिति शिशु के तंत्रिका तंत्र एवं मस्तिष्क के समुचित विकास के लिए आवश्यक है ।

विकासशील देशों में प्रतिवर्ष लगभग एक करोड़ बीस लाख बच्चों की 5 वर्ष की आयु के पूर्व ही मृत्यु हो जाती है जिसमें 55% मृत्यु का कारण प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कुपोषण है । इसे रोका जा सकता है। आयुर्वेदीय ग्रन्थों में बालकों के अनेक ऐसे रोगों का वर्णन मिलता है जिसका मूल कारण किसी न किसी रूप में पोषण से सम्बन्धित है, जैसे-फक्क, पारगर्भिक, बाल शोष इत्यादि । बाल कल्याण के लिए भारत में 1993 से नेशनल न्यूट्रीशनल पॉलिसी लागू है ।

ज्वर - शिशुओं के तापमान में अधिक उतार-चढ़ाव मिलता है । यदि बच्चे में ज्वर के साथ आक्षेप के भी लक्षण पूर्व में मिले तो विशेष सावधानी देनी चाहिए ।

चिकित्सा - शिशु को आराम करने दें । ज्वर के मूल कारण का पता लगाने की कोशिश करनी चाहिए । ज्वर की हालत में हल्के वस्त्र पहनाएँ, अधिक कपड़ों से ढँके नहीं । यदि ज्वर तेज हो तो ठोस खाद्य पदार्थ नहीं देना चाहिए ।

अधिक ज्वर में पूरे शरीर को ठंढे पानी से स्पंज करने से तापमान 101^0 F तक आ जाता है ।

बाल चातुर्भद्रिका चूर्ण, बाल संजीवन, गोदन्ती भस्म, शृंग भस्म का प्रयोग चिकित्सक के निर्देश से करने का विधान है ।

अतिसार - अधिक मात्रा में पतला मल का बार-बार निकलना अतिसार कहलाता है । मल तरल, झागदार, दुर्गन्धयुक्त, हरा-पीला चावल की धोवन की तरह होना अतिसार का लक्षण है । अतिसार शुरू होते ही चिकित्सा कराने से शीघ्र लाभ होता है । अन्यथा अधिक मात्रा में जलीय अंश और लवण शरीर के बाहर निकलने से निर्जलीकरण (Dehydration) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है । यह स्थिति खतरनाक होती है ।

अनार का रस, चीनी और नमक के विशेष रूप से तैयार किये गये घोल पिलाना चाहिए ।

अतिसार के साथ मल का अधिक पतला होना या मल के साथ रक्त का आना या वमन होना या 101]१ से अधिक ज्वर रहता है तो चिकित्सा में विलम्ब नहीं करना चाहिए ।

चिकित्सा - 1. जायफल को जल के साथ पत्थर पर घिसकर चटायें ।

2. लोध्र, पीपल और सुगन्धबाला का चूर्ण मधु के साथ दें ।

बालार्क रस, बाल संजीवन रस, आनन्द भैरव रस, बाल चातुर्भद्रिका चूर्ण आदि देने से लाभ मिलता है ।

क्षीरालसक - जब माता दोषों के प्रकुपित करनेवाले आहार-विहार का सेवन करती है, तो तीनों दोष दुग्ध वाहिनी नलिकाओं में प्रवेशकर दुग्ध को दूषित कर देते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं।

इस रोग से ग्रसित बच्चों का मल फुटकीदार, आमगंधी, झागदार, विभिन्न रंगों वाला होता है। पेट में भारीपन, आँतों में गुड़गुड़ाहट, ज्वर, वमन आदि लक्षण मिलते हैं।

चिकित्सा - 1. मोथा, अतीस, कुट, पाठा तथा कुटकी 2. गिलाय, इन्द्र जौ, अनन्तमूल तथा चिरायता किसी एक का क्वाथ बनाकर देनी चाहिए। बालार्क रस, बाल यकृदारि लौह आदि का प्रयोग लाभप्रद है।

छर्दि - यह अन्य रोगों का एक लक्षण मात्र है। आवश्यकता से अधिक दूध पी लेने या बाहरी वस्तुएँ मुख में रखने पर वमन हो सकता है। यदि वमन के साथ ज्वर या अतिसार हो तो तत्काल आवश्यक उपाय करना चाहिए।

चिकित्सा - 1. मुलेठी का चूर्ण मधु से या मां के दूध से तथा 2. बाल चातुर्भद्रिका चूर्ण मधु से इसके अतिरिक्त अमृतधारा का भी प्रयोग किया जाता है।

मलावरोध - बच्चे जब पर्याप्त मात्रा में तरल पदार्थ या भोजन नहीं लेते हैं तो उन्हें मलावरोध की शिकायत हो जाती है। **चिकित्सा** - नवजात शिशु को मल कड़ा और कठनाई से होता हो तो एक चम्मच मधु या थोड़ी सी चीनी उबाले हुए ठंढे जल में मिलाकर दूध के साथ दें। पपीता, संतरा, अंगूर, अंजीर आदि फल कब्ज को दूर करने में सहायक हैं। मुनक्का और किशमिश के सेवन से भी लाभ मिलता है।

शुद्ध एरण्ड तैल, गुलकन्द या बड़ी हरें पानी में घीसकर पिलाने से मलावरोध दूर होता है।

अजीर्ण - खाने के बाद भोजन का सम्यक् पाचन नहीं होना ही अजीर्ण कहलाता है। अजीर्ण से पीड़ित बच्चा सुस्त पड़ा रहता है। जी मिचलाना, पेट का फूलना, पेट में दर्द आदि लक्षण मिलते हैं। कभी-कभी पतला मल त्याग होता है जिसमें बिना पचा भोजन का अंश रहता है।

क्षीरप अवस्था में अधिक दूध पिलाने से अजीर्ण की स्थिति हो जाती है। फटे दूध के समान वमन करता है।

क्षीरान्नाद अवस्था में, स्तन्य विकृति के साथ-साथ अन्न की विकृति के कारण भी अजीर्ण हो सकता है।

चिकित्सा - 1. अजवाइन का अर्क या क्वाथ मिश्री मिलाकर दें। 2. हरें और काला नमक पत्थर पर घिसकर पिलाने से लाभ मिलता है।

लवण भास्कर चूर्ण, बालचतुर्भद्रिका चूर्ण आदि देने से अजीर्ण ठीक होता है।

मृद्भक्षणजन्य पाण्डु - बच्चों में मिट्टी खाने की आदत के कारण उत्पन्न रक्त की कमी को मृद्भक्षणजन्य पाण्डु कहते हैं। मिट्टी स्वयं नहीं पचती और अन्य खाद्य पदार्थों का पाचन एवं शोषण नहीं होने देती है।

आचार्य चरक के अनुसार -

शूनगण्डाक्षिकूट भ्रूः शूनपान्नाभिमेहनः।
क्रिमिकोष्ठोऽतिसार्येत मलं सासृक्कफान्वितम्।

(च०चि०16/30)

मृतिका जन्य पाण्डु में अक्षिकूट (ब्वनसंत ळंहपद)ए कपोल, भौहें, पैर, नाभि तथा मूत्रेन्द्रिय में शोथ उत्पन्न होता है। उदर में कृमि तथा रोगी रक्त और कफ से मिश्रित मल त्याग करता है।

आचार्य भाव मिश्र ने पाण्डु रोग के लक्षण का वर्णन करते हुए कहा है कि रोगी आलस्य एवं तन्द्रा से युक्त रहता है। भोजन के प्रति अरुचि हो जाती है।

चिकित्सा 1. बच्चों को मिट्टी खाने की आदत छुड़ाएं।

2. हल्दी, दारु हल्दी, पाठा, वायविडंग, नागर मोथा, भारंगी, पुनर्नवा, बेलफल, त्रिकटु तथा काकनासा से सिद्ध घृत बालक को खिलाने से पाण्डु रोग ठीक होता है।

पारगर्भिक - पारगर्भिक कुपोषण जनित रोग है। दूध की पोषकता कम रहने के कारण बालक की वृद्धि एवं विकास के लिए आवश्यक तत्व नहीं मिल पाते हैं। क्षीरप तथा क्षीरान्नाद दोनों पारगर्भिक रोग का शिकार हो सकते हैं।

भूख की कमी, वमन, भोजन के प्रति अरुचि, पेट का बढ़ा हुआ होना, कास, दुबलापन आदि लक्षण मिलते हैं। **चिकित्सा** - इस रोग में अग्नि को दीप्त करने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाली चिकित्सा करनी चाहिए ।

"पारगर्भिके रोगे तु पूज्यते बहिन्दीपनम् ।"

2. पिप्पली, पिप्पलीमूल, कुटकी, स्वर्जिका क्षार, यवक्षार, काला नमक, बेलगिरी, जीरा, चित्रक और अजवाइन से निर्मित घृत का प्रयोग कराने से बल वर्ण में वृद्धि और अग्नि दीप्त होता है ।

इसके बाद विदारीकन्द, जौ, गेहूँ और पिप्पली का चूर्ण घी में मिलाकर दें तथा ऊपर से मधु और शर्करा मिश्रित गर्म दूध पिलाएं ।

फक्क रोग - फक्क कुपोषण जनित रोग है । बच्चों के विकास की गति मंद या अवरूद्ध हो जाती है। बच्चे की हड्डियाँ, मांसपेशियाँ आदि कमजोर हो जाती है। आचार्य काश्यप के अनुसार ।

बाल संवत्सरा पादाभ्यां यो न गच्छति ।
स फक्क इति विज्ञेयस्तस्य वक्ष्यामि लक्षणम् ॥

(काश्यप चि. फक्क 3)

अर्थात् एक वर्ष बीत जाने के बाद जो बालक अपने पैरों पर न खड़ा हो सके और न चल पाता हो, उसे फक्क रोग से पीड़ित समझना चाहिए ।

चिकित्सा - फक्क रोगी को फलकल्याण घृत पान कराने के बाद त्रिवृत क्षीर द्वारा शोधन कराना चाहिए। बाद में ब्राह्मी घृत का सेवन कराने से लाभ मिलता है। रास्ना, मुलेठी, पुनर्नवा, एकपर्णी, एरण्ड, सौंफ, द्राक्षा या त्रिवृत के द्वारा पकाये हुए दूध का प्रयोग करना चाहिए ।

शय्या मूत्र - बाल्यावस्था में रोगी द्वारा बिस्तर पर सोते समय अनजाने स्वतः पेशाब हो जाना, शय्यामूत्र कहलाता है ।

गलत आदतें, शारीरिक विकृतियाँ तथा संवेगात्मक तनाव शय्यामूत्र के कारण हैं ।

चिकित्सा - बच्चों को प्रशिक्षण देकर गलत आदतें सुधारनी चाहिए । शारीरिक विकृति कारण है तो भलीभांति जाँच कराकर रोग को दूर करने की कोशिश करनी चाहिए । मानसिक कारण हो तो अभिभावक को सहयोग करना चाहिए । शय्यामूत्र के रोगी अधिकांशतः कब्ज या आन्त्रकृमि के शिकार होते हैं । शुद्ध एरण्ड तैल या मुनक्का को दूध में पकाकर देने से कब्ज ठीक हो जाता है ।

आँवला तथा असगंध के प्रयोग से भी शय्या मूत्र में लाभ मिलता है ।

चन्द्रप्रभा बटी का सेवन उपयोगी है ।

कुकूणक - आचार्य सुश्रुत ने कुकूणक का वर्णन किया है । बताया है कि कुकूणक विशेष रूप से बालक को ही होता है । यह रोग बालक के पलक (म्लमसपक) को प्रभावित करता है ।

इस रोग में शिशुओं के नेत्रों में अत्यधिक खुजली होती है । शिशु अक्षिकूट, नासा और ललाट को रगड़ता रहता है । फलतः फलक में शोथ हो जाता है । आँखों से निरन्तर आँसू बहने लगते हैं, आँखें नहीं खोल पाता है । सूर्य के प्रकाश में देखने में कठिनाई होती है ।

माता के अपथ्य, विधि विपरीत भोजन एवं सद्वृत के नियमों की अवहेलना से तथा दूषित हुए दूध को पीने से शिशु को यह रोग होता है ।

यह रोग क्षीरप या क्षीरान्नाद अवस्था में होता है ।

चिकित्सा - शिशु की आँखों को सावधानीपूर्वक धीरे-धीरे खोलकर साफ करें ।

भृंगराज, तुलसी, हल्दी के कल्क का पलकों पर लेप करें ।

हल्दी, लोध्र, पुण्डरीक, शर्करा और मधु के उ जल मिलाकर आँखों का परिषेक करने से लाभ मिलता है ।

तालुकण्टक - बच्चों के सिर पर पाये जाने वाले कोमल गड्ढे कलान्तराल के रोग ग्रस्त हो जाने के कारण इसे तालुकण्टक कहते हैं । इसमें तालु प्रदेश नीचे झुक जाता है, शिशु कठिनाई से स्तनपान करता तथा कठिनाई से गर्दन को सीधा रख पाता है ।

चिकित्सा - तालु को ऊपर उठाकर उसपर यवक्षार और मधु को मलें ।

हरड़, वच और कूठ के कल्क को मधु या माँ के दूध के साथ दें । सर्वांग सुन्दर रस भी उपयोगी है ।

उपरोक्त बाल रोगों के अतिरिक्त बच्चों में दाँत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकलने के समय काफी परेशानियाँ आती हैं । दाँत निकलने के समय बच्चे ज्वर, अतिसार आदि से पीड़ित रहते हैं ।

बालक के मसूढ़े टीसते रहते हैं, उसे हानि रहित कोई कड़ी वस्तु चूसने के लिए लिए दें । छोहाड़ा या मुलेठी का टुकड़ा चूसने के लिए दिया जा सकता है ।

दाँत निकलने के पूर्व बच्चों के मसूढ़ों पर लगाने के लिए पिप्पली का चूर्ण एवं मधु का प्रयोग किया जाता है । वच, छोटी, कटेरी, बड़ी कटेरी, पाठा, कुटकी, अतीस, मोथा तथा काकोल्यादिगण से सिद्ध घृत खिलाएं ।

दन्तोद्भेदगदान्तक रस प्रसिद्ध योग है । काश्यप संहिता में बालकों के 9 ग्रहों तथा उनके द्वारा आक्रान्त बालकों की चिकित्सा का वर्णन मिलता है । रावणकृत बाल तन्त्र में इन बाल ग्रहों का विस्तार से वर्णन मिलता है । ऐसा प्रतीत होता है कि सभी बाल रोग अपने सम्पूर्ण रूप में व्यक्त नहीं होते हैं । अत: उनको समझना और निदान करना कठिन होता है । इसी क्रम में बालग्रहों की कल्पना की गई होगी । स्पष्ट है कि बालकों के अनेक रोग जिनका कोई विशिष्ट नामकरण नहीं हुआ वे सभी बालग्रह के अन्तर्गत कर दिये गये ।

जो अदृश्य शक्तियाँ बाहर से बालक के शरीर में प्रवेश कर बच्चों के स्वास्थ्य का हरण कर लेती हैं तथा बच्चों को रोगी बना देती है । उसे बालग्रह कहते हैं ।

नवजात शिशु ही ज्यादातर बालग्रह से ग्रसित होते हैं । जन्म के कुछ दिनों के अन्दर तक बालक संक्रमणों के प्रति सबसे अधिक संवदेनशील होता है । प्राचीनकाल में प्रसव की प्रक्रियाएँ एवं गर्भोत्तर देखभाल की विधाएँ इतनी अधिक विकसित नहीं थीं । अत: प्रसवकाल में असावधानी के कारण बालक को आघात लग जाना या किसी प्रकार संक्रमण का प्रवेश कर जाना अपेक्षाकृत आसान था । आचार्य सुश्रुत ने 9 बालग्रहों की संख्या बताई है- 1. स्कन्द 2. स्कन्दापस्मार 3. शकुनी 4. रेवती, 5. पूतना, 6. अन्धपूतना, 7. शीतपूतना, 8. मुखमंडिका, 9. नैगमेय ।

ग्रहों में जिन लक्षण समूहों का समावेश किया गया है । उसका विश्लेषण करने पर पता चलता है कि अधिकांश लक्षण जठराग्नि संस्थान (Gastroin testinal) श्वसन संस्थान (Respiratory System) तथा तंत्रिका संस्थान (Nervous syntem) से संबंधित है ।

बच्चों का हमेशा रोना और ज्वर का होना ग्रहबाधा के पूर्वरूप हैं ।

बच्चों का खिन्न रहना, रोना, दाँत किटकिटाना, जम्भाई लेना, ऊपर ताकना, मुख से फेन निकलना, मल का पतला होना, कण्ठ स्वर का हीन होना, नख एवं दाँतों से अपने आपको काटना आदि समान्य लक्षण मिलते हैं ।

चिकित्सा - 1. करंज, दशांग, सरसों, वच, भिलावा, अजवाइन तथा कूठ को घी में मिलाकर धूप देना चाहिये ।

2. अनंता, आम की गुठली, तगर, मरीच, जीवन्ती आदि मधुर गण की औषधियाँ, पृश्निपर्णी और मोथा इनके कल्क, दशमूल के क्वाथ तथा दूध के साथ घृत को सिद्ध कर सेवन कराएं ।

बैद्यनाथ
घाव मलहम
फोड़े, फुंसी तथा खुजली में लाभदायक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आरोग्यरक्षक आरोग्यवर्धनी

श्री रमणभाई आर.मिस्त्री (एम.डी. (आयु.)

आरोग्यवर्धनीरस भारतवर्ष के एक प्रदेश में प्रसिद्ध है और कुछ भाग में अप्रसिद्ध भी है । इस कल्प को रसरत्नसमुच्चयकार वाग्भट्ट ने 13 शताब्दी में प्रकट किया है।

इस कल्प का नामाभिधान ही सूचित करता है कि इसके सेवन करने से स्वास्थ्य को विशेष ऊर्जस्कर होता है जो रसायन तंत्र का मूलतः सिद्धान्त है ।

वर्तमान शताब्दी के प्रसिद्ध आयुर्वेद उद्धारक महात्मा झंडु भट्टजीका योगदान इसको प्रकाश में लाने में है, कुछ चिकित्सक इसका प्रयोग विशेष रूप में सर्वरोगनाशक के लिए और सन्देहात्मक निदान की अवस्था में भी इसका प्रयोग करते हैं जिससे आशातीत यश प्राप्त होता है ।

इसका विधान रसरत्नसमुच्य के कुष्ठाधिकार में है, इसकी उपयोगिता में कहा गया है कि "हन्ति कुष्ठान्यशेषतः" यह कुष्ठ रोगों का सम्पूर्ण नाश करता है और भी कहा है कि –

पाचनी दीपनी पथ्या हृद्या मेदोविनाशिनी ।
मलशुद्धिकारी नित्यं दुर्धर्ष क्षुत्प्रवर्तिनी ॥
बहुनाऽत्र किमुक्तेन सर्वरोगेषु शस्यते ।
आरोग्यवर्धनी नाम्ना गुटिकेयं प्रकीर्तिता ॥
सर्वरोग प्रशमी श्री नागार्जुन योगीना ।

(रसरत्न समुच्चय, कुष्ठाधिकार)

आरोग्यवर्धनी पाचन करनेवाली, अग्नि को प्रदीप्त करनेवाली, पथ्यकर है, हृदय के लिए हितकर है । अतः हृद्य पद का उपयोग किया है, मेदनाशक, मलस्वरूप विष को नष्ट करके शरीर को शुद्ध करती है, नित्य सेवन करने से क्षुधा का प्रवर्तन करती है, सर्वरोगों में प्रशस्य है, नागार्जुन द्वारा आविष्कृत है ।

आचार्य यादवजी महाराज ने इसके उपयोगों के बारे में विशेष प्रकाश बैद्यनाथ भवन द्वारा प्रकाशित सिद्धयोग संग्रह में तथा रसामृत में भी किया है । रसामृत में यादवजी महाराज ने विविध प्रकार के शोथों में इसका विशेष कर्तृत्व का निर्देश किया है, शोथ के विषय में महर्षि चरक ने विशेष रूप में वर्णन किया है[1] । आध्यन्तर शरीर एवं कोष्ठ में उत्पन्न विविध प्रकार के शोथ की अवस्थाओं में जैसा कि आन्त्रशोथ[2], आमाशय शोथ[3], गलायुशोथ[4], अन्न नलिका का शोथ[5], उदरधराकलाका शोथ[6], हृदयावरण शोथ[7], यकृत शोथ, प्लीहावृद्धि, जलोदर, जीर्णज्वर, इत्यादि में विविध अनुपान से उपयुक्त है ।

यह औषधि सहज सुलभ है । फिर भी कुछ पाठ भेद से नं०-1 और नं०-2 ऐसी दो कल्पानाएं उपलब्ध हैं, नं०-2 की कल्पना में कटुकी (Picrorhiza kurroa) का प्रमाण दुगुना होता है ।

मात्रा - 1 से 2 गोली (30 से 60 मिग्रा)

अनुपान - रोगानुसार जैसा कि जल, दूध, पुनर्नवाष्टक, क्वाथ, तक्र, गोमूत्र आदि ।

इस कल्प में लोह और ताम्र का योग अर्वाचीन चिकित्सा के औषधि विज्ञान में भी स्वीकृत सिद्धान्त है, आयुर्वेद के लिये गौरव का विषय है कि इसी प्रकार पंचामृत पर्पटी आदि कुछ कल्पों में लौह और ताम्र का संयोजन है ही, इससे रक्त बनने की प्रक्रिया अच्छी होती है । ताम्र ने आयुर्वेद में विशेष स्थान पाया है जैसा कि नित्य उपयोग के बर्तन, जिव्हा निर्लेश्वन यंत्र आदि ।

आरोग्यवर्धनी को 'हृद्य' एवं मलशुद्धिकारी कहा है । यह कथन हमारे हृदय से संबंध में विशेष रूप में स्पष्ट होता है । महर्षि अग्निवेश ने कहा है –

सूक्ष्म ताम्र रजस्तस्मै सक्षौद्रं हृद्यशोधनम् ।

च०चि० 23/239

ताम्रभस्म मधुक साथ सेवन करने से हृदय की शुद्धि होती है ।

आज के युग में बहुत से आहार गर विषयुक्त होते हैं । कारण स्पष्ट है कि सब्जी आदि के बगीचे में विषयुक्त जल का सिंचन एवं ऊपर से भी कीटनाशक विषयुक्त औषधियों के प्रयोग से सब्जी विषैली हो जाती है, कुक्कुट को एन्टीबायोटीक तथा रसायनों का सेवन कराकर पालन होता है जिसका सेवन मनुष्य करता है, ऐसे ग्राम्यकुक्कुट का मांस सेवन अपथ्य होने का चरक संहिता का टीकाकार शिवदास सेन का मत है । गोरस के विविध

विभागाध्यक्ष, रोगविज्ञान एवं विकृति विज्ञान विभाग, श्रीमती के.जी.एम.पी. आयुर्वेदिक कॉलेज, चनीरोड, मुम्बई-400 002

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकार के खाद्यान्न आईसक्रीम आदि, शीतजल, शीतल मधुर पेय, वनस्पति घी, इत्यादि गरविष के उदाहरण है। । जिससे रसधातु दूषित होकर रसवहस्रोतस विकृत होता है, इसके अतिरिक्त महर्षि अग्निवेश कहते हैं कि -

व्यायामतीक्ष्णातिविरेक बस्ति चिन्ताभयत्रास गदातिचाराः। छद्यमिसंधारण कर्शनापि हृद्रोगकर्त्तृणि..... ।

(च.चि. 26/77)

यहाँ पर निर्देशित, चिन्ता, भय, मांस इत्यादि रस युग के Tension, stress, Hurries, worries आदि स्पष्ट है, जो हृद्रोग का निदान है । यहाँ पर जिसका उल्लेख है वह '' गदातिचार'' का स्पष्टीकरण करते हुए व्याख्याकार चक्रपाणिदत्तजी लिखते हैं कि ''रोगाणामसम्यगुपचारः ।'' रोगों की मिथ्या चिकित्सा चिकित्सा काल में अपथ्य सेवन करना या चिकित्सक के प्रज्ञापराध उपरिनिर्दिष्ट आहार-विहार का सेवन प्रमादवश कराने से यह रोग होता है । अतः सूक्ष्म ताम्ररजस्तस्मै सक्षौद्रं हृद्यिशोधनम् । (च०चि० 23/239) यह युक्ति युक्त है ।

इस कल्प का दूसरा महत्व की औषध कटुकी है, वह भी पित्तज हृद्रोग नाशक है । कटुकी जठराग्नि एवं धात्वाग्नि को प्रदीप्त करके आमविष नष्ट करता है । अतः ये अपने कटु पौष्टिक गुणों से हृद्य है । इस प्रकार रसशुद्धि होने से धातुओं की शुद्धस्वरूप में उत्पत्ति होकर हृदय की क्रिया एवं रचना को प्राकृत करता है । मैंने चिकित्सा के अनुभव में हृदयशूल नाशक और हृदय की रक्षा करनेवाला पाया है ।

इस कल्प का सेवन 32 साल से सतत करते रहने पर भी हृदय रोग से सुरक्षित रहकर 86 साल की आयु में भी पुरुष स्वस्थ है । विशेष में इस कल्प में उपयुक्त ताम्र, पारद आदि के विष प्रभाव से रहित एवं भस्मों के द्वारा वृक्क विकार न होने का प्रमाण मैं प्रस्तुत कर सकता हूँ । इस केस विशेष ही यह लेखकी विशेषता है क्योंकि ऐसी सत्य घटना विद्वत् समाज के समक्ष आनी चाहिए और इसका प्रमाण रहना आवश्यक है ।

ग्रन्थ संदर्भ :-

1. चरकसंहिता-अग्निवेश प्रणीत ।
2. रसरत्नसमुच्चय-वाग्भट रचित ।
3. रसामृतम्- यादवजी आचार्यकृत ।
4. सिद्धयोग संग्रह - यादवजी आचार्यकृत ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसी

डा० एस०के० श्रीवास्तव, बी.ए.एम.एस., आयुर्वेद रत्न,

तुलसी की हिन्दु संस्कृति में धार्मिक महत्व कह कर पूजा की जाती है लेकिन जितना उसका हमारे औषधि शास्त्र से सम्बन्ध है उतना अन्य किसी भी औषधि से मनुष्य का सम्बन्ध नहीं है । लगभग सभी रोगों में अनुपान, भेद मिश्रण के साथ इसका प्रयोग किया जा सकता है । आयुर्वेद जगत् में प्रत्येक रोग में काम आने वाली औषधियों में प्रमुख तुलसी या मकरध्वज है । इसकी प्रयोग विधिजान लेने से डा०, वैद्य संसार के लगभग सभी रोगों से लड़ सकता है ।

नाम - हिन्दी - तुलसी
अंग्रेजी - सैक्केड बेसिल (Sacred Basil)
लैटिन - Ocimum Sanctumlinn
आंसिमस सैक्टम

कुल - तुलसी
कुल - लेबिएटी (Labiatee)

प्राप्ति स्थान - सर्वत्र भारत में सुगमता से पाई एवं आसानी से उगाई जाती है ।

प्रयोज्यांग - पत्ते, पुष्प, बीज, मूल ।

उत्पत्ति :- विष्णु पुराण, स्कन्ध पुराण, देवी भागवत् के अनुसार तुलसी की उत्पत्ति की अनेक कथाएं हैं । परन्तु एक कथा के अनुसार समुन्द्र मन्थन करते समय जब अमृत निकला तो कलश को देखकर उसकी सार्थकता से वशीभूत होकर देवताओं के नेत्रों से अश्रुस्त्राव हो उठा, और उन बूंदों से तुलसी वृक्ष उत्पन्न हुआ । इसके 22 भेद हैं । लेकिन मुख्यतया - कृष्ण तुलसी, श्वेत (राम) तुलसी, गंध तुलसी, वन तुलसी, बिल्वगंध तुलसी, बर्बरा तुलसी के नाम से जानी जाती है ।

गुण :- आचार्य सुश्रुत के अनुसार सुरसादि, शिरोविरेचन आचार्य चरक के अनुसार श्वासहर ।

तुलसी को सर्वरोग संहारक प्रवृत्ति के कारण घर में घरेलू वस्तु की श्रेणी में रखा है । तुलसी की गंध से मलेरिया के मच्छर दूर रहते हैं । पौधे में प्रबल विद्युत शक्ति होती है जो कि पौधे के चारो ओर दो सौ गज तक रहती है ।

यह लघु, रूक्ष, कटु, तिक्त रस, हृदय ग्राही, पित्तकारक है । यह कुष्ठ, पथरी, रक्त दोष, पसलियों के दर्द चर्मरोग और वायु नाशक है । कृष्ण और शुक्ल दोनों के गुण समान हैं । तुलसी की लकड़ी धारण करने से शरीर की विद्युत शक्ति में और शक्ति देती है, इसी कारण इसकी माला पहनने का प्रचलन है ।

रस - कटु, तिक्त ।
विपाक - कटु ।
वीर्य - उष्ण ।
प्रभाव - कृमिघ्न ।

गुणकारी तुलसी का प्रयोग मानव-शरीर पर बाह्य एवं आभ्यान्तर दोनों ही प्रकार से किया जाता है । तुलसी का शरीर पर प्रभाव या तुलसी के कर्म तुलसी उष्ण वीर्य होने से कारण कफ-वातशामक होती है । बाह्य रूप से प्रयुक्त करने पर यह वेदनाहर, शोथहर, त्वग्दोषहर तथा जन्तुघ्न एवं शिरोविरेचक होती है ।

अभ्यान्तर रूप से प्रयुक्त करने पर वेदनाहर एवं आक्षेप शामक है । पाचन संस्थान के लिये उत्तम दीपन पाचन अनुलोमन एवं कृमिघ्न है । यह उत्तम रक्तशोधक एवं हृद्य है । श्वास-संस्थान के लिए हितकर, कासहर, श्वासहर एवं क्षयनाशक है, इसके बीज उत्तम मूत्रल होने के कारण ही मूत्रवह संस्थान के विकारों में प्रयोग होता है । ये अच्छे शुक्रल भी होते हैं । तुलसी त्वचा के विकारों को हरने वाली, ज्वर नाशक व शीतशमन करने वाली होती है । यह विष तो है किन्तु हितकर विष है । इसके बीज

प्रमुख चिकित्सक, श्री साईनाथ औषधालय, शेख क्लब चौराहा (म०प्र०), देवास-455 001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत अच्छे बल्य प्रदान करने वाले होते हैं ।

उपयोग :- राज वशीकरण में भी तुलसी का प्रयोग बताया गया है । जवाहर लाल स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान एवं अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के वैज्ञानिकों के अनुसार तुलसी के ताजे पत्ते के निरन्तर सेवन से गर्भ निरोध हो सकता है । तुलसी की माला पहनने से किसी भी प्रकार की संक्रामक बीमारी का भय नहीं रहता है । इसके पत्तों को दांतों से नहीं चबाना चाहिए क्योंकि पत्तियों में पर्याप्त मात्रा में पारा होने से दन्तशूल हो जाता है । अत: इन्हें निगलना ही श्रेष्ठ है ।

सांप के काटे को तुलसी के पत्तों को रस पिला देने से विष उत्तर जाता है । बिच्छू, भौंरा, बर्रे काटने पर उस स्थान पर तुलसी के पत्तों का रस या पत्ता पीसकर पुल्टिस की भांति बनाकर बांध देने से जलन नष्ट हो जाती है ।

हिन्दू शास्त्र में लिखा है कि जिनके घर में लहलहाता तुलसी का वृक्ष रहता है उनके यहां वज्रपात नहीं हो सकता । काली तुलसी का रस शरीर के पारे का विष नष्ट कर सकता है । तुलसी की चाय नित्य कई बार पीना सर्वगुण सम्पन्नता का प्रतीक है । कर्ण शूल में और जुकाम में पत्ती का रस निकालकर गर्म करके ठंडाकर डालने से तुरन्त आराम मिलता है ।

मंजरी फूल को सूखाकर उसके बीज निकालकर बच्चों को खाना खाने के बाद देना चाहिए । इससे पेट के कीट मर जाते हैं । यह कमजोरी को नष्ट कर देती है, वाजीकरण की उत्तम दवा है ।

तुलसी का प्रयोग एक निर्दोष धातु औषधि के रूप में नित्य प्रति व्यवहृत किया जाता है । तुलसी के घरेलू उपयोग के कुछ योग निम्नानुसार हैं ।

1. मुखपाक या मुँह में छाले होने पर तुलसी एवं चमेली के पत्तों को एक साथ चबाने से छालों की जलन तुरन्त शान्त होकर छालों में राहत मिलती है ।
2. शि:रशूल की अवस्था में तुलसी के पत्ते एवं नींबू का रस समान मात्रा में पीने से शूल शीघ्र शमन होता है ।
3. बच्चों के पेट फूलना, अफारा आदि होने पर तुलसी-पत्र एवं नगर बेल के पान के स्वरस को गरम कर देने से एक दस्त होकर तुरन्त राहत मिलती है ।
4. कास (खांसी) में आराम के लिए तुलसी के बीजों की चूर्ण शहद में मिलाकर चटावें ।
5. पेचिश एवं आमातिसार में तुलसी-पत्र स्वरस एवं शक्कर मिलाकर सेवन करने से तत्काल लाभ मिलता है।
6. रक्त शुद्धि के लिए तुलसी पत्रों का अर्क निकालकर कुछ समय तक सेवन करने से रक्त विकार दूर हो जाते हैं ।
7. विषम ज्वर, आन्त्रिक ज्वर, शीत से उत्पन्न वाले ज्व एवं पसली के दर्द में तुलसी-पत्र स्वरस व शहद मिला कर सुबह-दोपहर-शाम नियमित देने से आशानुकूल लाभ होता है ।
8. जुकाम में तुलसी पत्र चाय के साथ अदरक, काली मिर्च भी डालकर उबाल के पीने से शीघ्र लाभ होता है ।

तुलसी की मंजरी हारमोन्स की वृद्धि करती है। उसमें प्रोटीन भारी मात्रा में होता है । पत्तों के रस में नींबू का रस मिलाकर प्रयोग करने से चर्म रोगों में काफी लाभ पहुंचाता है जोकि गुप्त, चर्मरोगों में विशेष तौर से प्रयोग किया जा सकता है । तुलसी के पत्तों में एक प्रकार की पीली आभा लिये हरे रंग का तेल है । कुछ देर तक रख देने से इसमें दाना बनता है । इसका नाम बैसिल कैम्फर है जोकि औषधि उपयोग की वस्तु है जिसका उत्पादन कर विदेशों में निर्यात कर विदेशी मुद्रा का साधन बनाया जा सकता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वसन्त ऋतु में स्वास्थ्य की सुरक्षा

कविराज डा० दिवाकर ठाकुर, जी.ए.एम.एस. औनर्स (पटना) डी.एस.सी.ए. (आयुर्वेद वृहस्पति)

वसन्त का आगमन माघ शुक्ल पंचमी से ही स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है । लेकिन वसन्त ऋतु की शुरूआत पंचमी से प्रारम्भ नहीं कर फागुन महीने के अंतिम सप्ताह में या शिशिर ऋतु की समाप्ति के बाद प्रारम्भ मानी जाती है। मधु और माधव ये दोनों शब्द से मधु बने हैं । मधु रस प्राणी एवं वृक्षादि को आह्लादित करता है । वर्षा के बिना ही इस मधु रस से सारे वृक्ष लतादि अंकुरित हो उठते हैं और मनमोहक पुष्प भी खिलने लगते हैं । इसी मन मोहक वसन्त ऋतु में कानन और कान्ता दोनों की अनुभूति विशेष रूप से होती है । इसी समय में प्राणी अद्‌भुत आनन्दानुभव करता है । इसी ऋतु में प्राणियों के अलावे वृक्षादि को पल्लवित करने वाले मधु रस को प्रकृति से प्राप्त करती है । मधु की प्राप्ति होने से इसको मधु मास कहा जाय तो अत्युक्ति नहीं होगी ।

वसन्त ऋतु का आगमन होते ही प्रकृति में प्रफुल्लता के साथ ही सौन्दर्य की भी वृद्धि हो जाने से इस ऋतु को ऋतुराज कहा गया है । यह मुहूर्त्त सृष्टि का यौवन काल कहलाता है । हमारी दिनचर्या से ऋतुऐं भी महत्वपूर्ण योगदान करती हैं । हमारे खान-पान, परिधान आदि मौसम के मुताबिक रहे तो हम सुखी, स्वस्थ एवं प्रसन्न रह सकते हैं अन्यथा रोगी बनने में कोई सन्देह नहीं।

शीत ऋतु में हमारे शरीर के अन्तर्गत कफ संचित हो जाता है और वसन्त ऋतु में सूर्य के ताप से पिघलता है जिससे इमली, जीरा, काली मिर्च मिलाकर पीना भी इस ऋतु में लाभदायक है ।

गरिष्ठ भोजन, शीतल द्रव्य, खट्टे, चिकनई युक्त आहार, पोई शाक, उड़द की चीजें, अरूई, आलू, ईख, सिंघाड़ा, मुर्गा का माँस, खिचड़ी, चिउड़ा, गुड़, भैंस का दूध आदि पदार्थों को वसन्त ऋतु में छोड़ देना चाहिए ।

स्वस्थ रहने के लिए आहार के साथ-साथ विहार पर भी ध्यान देना चाहिए । इस ऋतु में बढ़े कफ को शान्त करने के लिए व्यायाम, टहलना, भ्रमण करना और तेल से देह की मालिश भी हितकर है । मालिश करने से शरीर में विशेष प्रकार की काँति आ जाती है । शरीर का रूखापन, ऐंठन, श्रम, हाथ-पैर का सुस्ती समाप्त हो जाते हैं । मालिश के बाद धूप का सेवन करना भी हितकारी होता है । पैरों की मालिश करने से पैरों में विवाई फटना तथा शिरा स्नायु संकोच नष्ट होते हैं ।

इस मौसम में गरमी महसूस होने लगती है, इसलिए दोपहर में धूप से बचने के लिए ऐसे बगीचे में जाकर बैठना चाहिए जहाँ ठंडी हवा बह रही हो, आस-पास नदी बह रही हो, सुन्दर पुष्प लताऐं फैली हुई हों, घने वृक्ष शाखाओं के कारण सूर्य किरणों की प्रखरता का एहसास न हो, फल-फूल लटक रहे हों, कोकिल कूक रही हो और अनेक प्रकार के रंग-बिरंगे फूलों-पत्तों से मनोहर वृक्ष शोभायमान ऐसा स्थान मन बहलाव के लिए उत्तम प्रतीत होता है ।

इस बात का विशेष ध्यान रहे कि दिन में सोना, ठण्ढे, भारी, स्निग्ध और मीठे पदार्थों से परहेज करना चाहिए । उपर्युक्त दिनचर्या से हम वसन्त ऋतु में अपने स्वास्थ्य को बरकरार रख सकते हैं ।

आयुर्वेद मनीषियों द्वारा बताए गए ऋतुचर्या के नियमों की जानकारी को जन-जन तक पहुँचाने का श्रेय हम वैद्यों को है । जन साधारण को ऋतुओं के नियम की जानकारी होने से भावी शारीरिक कष्ट से सुरक्षा कर सकते हैं । वसन्त ऋतु के नियम जैसे इस ऋतु में औषधों के द्वारा वमन तथा औषधों का नस्य लेना, मधु के साथ हरड़ खाना, कसरत करना, अभ्यंग कफ नाशक औषधियों से कुल्ला करना, गेहूँ, चावल, मूंग, जौ, साठी, चावल, चन्दन, केशर अगर का लेप, रूक्ष, कटु, उष्ण एवं हल्के पदार्थों का सेवन करना हितकर होता है । साथ ही मीठा, खट्टा, स्निग्ध पदार्थ, दही खाना, दिन में सोना, देर में पचने वाले भोज्य पदार्थ, ओस में सोना अहितकर है । अतः वसन्त के मौसम में इन सबों का परित्याग सेवन कर देना चाहिए ।

झण्डू फार्मेसी, जेल रोड, आरा (भोजपुर) - 802301

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

EVIDENCE OF DNA/NUCLEOPROTEINS IN AYURVEDA

[1]Dr. Prasad BS MD (Ay.)., Ph.D.,
[2]Dr Rao BCS MD (Ay.)

A substance namely '*ojas*' has been given utmost importance in Ayurveda. However in spite of its high claims, the '*ojas*' is facing controversy in the present days. Here an attempt is made to throw light from different angles in order to draw the attention of research scholars to work on this aspect which in turn may lead to overcome the present day controversies.

Widely accepted concept is that *ojas* is of two varieties viz. *para* and *apara*. However in classics the description is available under the common heading of *ojas*. So it is the part of physician or scholar to apply the description to that particular context to the respective type of *ojas*. It must be remembered that all the properties or characters described in the classics may not be applicable to both the types of *ojas* in all contexts. Further there are many things which may be brought under the heading of *ojas*. In the present context the references that are suitable to interpret ojas as DNA/Nucleoproteins are considered.

TABLE DEPCTING THE SIMILARITIES BETWEEN *OJAS* AND DNA/NUCLEOPROTEINS

OJAS	DNA/NUCLEOPROTEINS
* Word meaning: *ubjate* means to express itself	DNA is activated by itself and it guides its own synthesis
* *Ojas* is the first one to be born in the zygote or cell[1]	During fertilization and during cell division DNA is the first one to replicate
* *Ojas* enters into hridaya along with the *ojas* already existing there and thus enclosed in hridaya[2]	During the fertilization spermatozoal chromosomes are incorporated into the ovum along with the existing chromosomes of the ovum and thus attained the diploid status.
* *Ojas* is the first essence of embryo and is the rasa of garbharasa[3] (garbharasa = cytoplasm of embryo)	The essence of prime parts of cytoplasm of embryo are nothing but nuclear materials
* *Ojas* is formed by its own action out of the properties in the same manner as honey is collected from different sources of fruits and flowers by honey bees[4]	DNA is the only component of the body which is synthesized by its own guidance, and at the same time, the DNA present in any cell of the body represents the genetic code of all types of cells of the body.
* *Ojas* is produced in between the process of transformation of rasa into raktha[5]	During the development of late normoblast to reticulocyte the nucleus is extruded out from the cell
* *Ojas* is the unctuous part of sarirarasa in which life in situated[6] (sarirarasa = endogenous part of rasa)	Nucleoproteins are not incorporated into the tissues from diet and they have to be synthesized in the body.
* Ahararasa nourishes the rasa, raktha, mamsa, meda, asthi, majja, sukra and *ojas*[7]	Though nucleoproteins are endogenous in origin, the basic consituents have to be supplied through food only.

[1]Research Officer [2] Asst. Research Officer
RRA Podar Central Research Institute (Ay.), Podar Ayurvedic Campus, Worli, Mumbai-400 604

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Properties of *Ojas*[8]: ▪ Picchila/Mrisna (viscous) ▪ Bahalam (thick)	DNA solutions are highly viscous on account of their elongated rigid molecules.
▪ Sweet in taste	Nucleoproteins contain pentose sugar.
▪ Somatmakam/Suddam/Prasannam (pure in form)	Solutions of DNA can be crystalized.
▪ Sthira (stable) ▪ Sara (mobile)	DNA stable in nucles RNA mobile } Both are nucleoproteins
▪ Guru (heary)	Nucleoproteins possess heavy molecular weight
▪ Viviktham (separated distinguished)	DNA kept distinguished inside the nucleus of cell
The very active part of dhatu (rasa, raktha, mamsa, meda, asthi, majja & sukra) is called *ojas*[9]	Tissues are made up of cells and DNA is the governing body of all the cellular activities. In the absence of DNA a cell neither perform its functions nor can survive.
Ojas governs the condition of the body from hridaya[10] (hriday - heart/brain/nucleus)	DNA present in the nucleus governs all the cellular activities.
Ojas performs many functions. So it is called as great fruit[11].	Though the structure of DNA is similar to all the cells, it performs different functions in different tissues.
Hriday is the substratum of *ojas* par excellence and is also center of activity[12]	Nucleus containing DNA is the source of life as well as activity of the cell.
Life can not exist if the *ojas* situated in hridaya is destroyed[13]	Life can not exist if the DNA situated in nucleus destroyed.
Sarira survives as long as *ojas* is not destroyed[14] (Sarira = single cell / unicellular/multicellular organism)	Without DNA cells can not survive.
Without *ojas* there is no life for all living things[15]	All the living beings including plant cells contain the nucleus which is evidence of DNA without which the cells can not survive.

Considering these views, it may be said that, apart from immune systme etc. the physiology of necleoproteins may also be brought under the heading of *ojas*.

References :

1. Charaka Samhita Sutrasthana 17:75
2. Charaka Samhita Sutrasthana 30:10
3. Charaka Samhita Sutrasthana 30:10
4. Charaka Samhita Sutrasthana 17:75 (1)
5. Charaka Samhita Sutrasthana 15:21
6. Charaka Samhita Sutrasthana 30:11
7. Charaka Samhita Sutrasthana 28:4
8. Charaka Samhita Sutrasthana 17:75,75
9. Sushruta Samhita Sutrasthana 15:19
   Asthanga Hridaya Sutrasthana 11:37
10. Asthanga Hridaya Sutrasthana 11:37
11. Charaka Samhita Sutrasthana 30:12
12. Charaka Samhita Sutrasthana 30:7
13. Charaka Samhita Sutrasthana 30:11
14. Charaka Samhita Sutrasthana 17:34
    Sushruta Samhita Sutrasthana 15:22
    Asthanga Hridaya Sutrasthana 11:38
15. Charaka Samhita Sutrasthana 30:9
    Charaka Samhita Nidanasthana 4:37
    Charaka Samhita Chikitsasthana 24:31
    Sushruta Samhita Sutrasthana 15:21
    Asthanga Hridaya Sustrasthana 11:38

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Fracture Management - An Analytical and Retrospective study

* Dr. Umesh Chand Sharma
** Dr. Shyam Sunder Sharma
*** Dr. Amanpreet K. Broca

INTRODUCTION

Dr. Girdlestone (1932) once quoted "there is a danger inherent in the mechanical efficiency of our modern methods, danger lasts as the crafts man forget that union cannot be imposed but may have to be encouraged, when bone is a plant with its roots in soft tissues and when its vascular connections are damaged it often requires not the technique of a cabinet marker, but the patience, care and understanding of a gardener". Keeping this view in mind many research works have been conducted in N.I.A., Jaipur to after using various medicaments both internally and externally.

We have gone through these research works and vague idea hoard in our mind that some thing should be done so that we can exploit our research works fully by which general public is benefited. Moreover, we wanted to know which formulation is the best. To give this idea a practical shape, we have gone through many thesis available in the library and Shalya department out of those some appealed me that something practical can be concluded from them so we have compared the four research works which have been conducted in N.I.A. Jaipur from year 1990-1994. Here I am presenting this retrospective and analytical study so that some practically applicable conclusion would be drawn.

MATERIALS & METHODS

We selected four Research works done in N.I.A. from the year 1990-1994, these are numbered as R-1, R-2, R-3 and R-4. Details of those thesis are given in Table No. 1 and this study has been done in following steps :-

1. Details were collected about researches done in N.I.A., Jaipur.
2. Thesis of Shalya deptt. especially pertaining to fractures were sorted out.
3. Four Research works were selected for this study
4. Research works were thoroughly studied with their data compared and conclusion drawn.

Table No. 1 Research works selected for this study.

S. No.	Thesis	Year	Scholar	Guide	Co-Guide
1.	The clinical studies on the effect of Abha guggul in the management of Fractures **R-1**	1994	Dr. Virendra Singh Yadav. 91/954	Dr. S. S. Sharma H.O.D. Shalya N.I.A., Jaipur	Dr. H.K. Kushwaha Asst. Prof. Shalya N.I.A., Jaipur
2.	Studies on the effect of Sandhaniya Mahakshaya in the management of Fracture **R-2**	1990	Dr. C. Bhardwaj 79/27456	Prof. B. N. Sharma H.O.D. Shalya N.I.A., Jaipur	Dr. H. K. Kushwaha Lecturer, Shalya N.I.A., Jaipur
3.	Role of Asthi Sandhanak lep in the management of fracture **R-3**	1991	Dr. B. S. Sharma 76/9482	Dr. B. N. Sharma H.O.D., Shalya N.I.A., Jaipur	Dr. H. K. Kushwaha Lecturer, Shalya N.I.A., Jaipur
4.	The clinical trial of Lakshadi guggul in the management of Fractrue **R-4**	1992	Dr. B. G. Gupta 79/28476	Dr. S. S. Sharma N.I.A., Jaipur	Dr. Mukut Sharma N.I.A., Jaipur

MATERLALS AND METHODS FOR ABOVE QUOTED RESEARCH WORK.

In the above said research work complete investigations of the patient before, during and after treatment was done, complete history proformas were made, rehabilitation and progress was also considered. But here in this paper we are considering only medicine in detail because our aim is to compare results of principle of treatment and medicament used.

* Deptt. of Shalya, N.I.A., Jaipur ** H.O.D., Deptt. of Shalya, N.I.A., Jaipur *** M.D. Scholar, N.I.A., Jaipur

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

R-1 Name of yoga - **ABHA GUGGUL**

Babool ki chhal	-	Acacia arabica
Harad	-	Terminalia chebula
Baheda	-	Terminalia bellerica
Amla	-	Embelica officianale
Sonth	-	Zingiber officianale
Marich	-	Piper nigrum
Peepali	-	Piper longum
Guggul	-	Commiphora mukul
Ghgee	-	Bytryrum depuratum

Dose-500mg T.D.S x 30-45 days

R-2 Name of yoga- **SANDHANIYA MAHAKSHAYA GHANVATI**

Madhuyashti	-	Glycyrrhiza glabra
Giloi	-	Tinospora cordifolia
Prishniparni	-	Uraria picta
Patha	-	Caesemplos pareira
Majistha	-	Rubia cordifolia
Mochras	-	Bombax malabarica
Dhatki	-	Woodfordia fruiticosa
Lodhra	-	Symplocus racemosa
Priyangu	-	Callicarpa macrophylla
Kayphal	-	Myrica negi

Dose - 1gm B.D.

R-3- Name of yoga - **ASTHISANDHANAK LEP**

Til taila	-	Oleum sesamum
Arkapatra	-	Callotropis gigantica
Lavang	-	Syzigium aromaticum
Apheem	-	Papaver somniferum
Arjuna-twak	-	Terminalia arjuna
Katphal	-	Myrica esculenta

Apply after 7 days

R-4 - Name of Yoga - **Lakhadi guggul**

Laksha	-	Coccus lacca
Asthishrinkhala	-	Cissus quadrangularis
Arjuna	-	Terminalia arjuna
Ashwagandha	-	Withania somnifera
Nagbala	-	Grewia hirsuta
Guggul	-	Commiphora mukul

Dose- 1 gm. T.D.S. X 30 to 45 days

Criteria for selection of patients

R-1 40 Patients of tibia & fibula were selected, 20 patients were given placebo & 20 were given abha guggul 500gm. x 30-45 days.

R-2 30 Patients with immediate or 1-2 days previous injury was taken with all the dignostic symptoms, 10 patients were given placebo and 20 patients were given sandhaniya mahakshaya ghanvati.

R-3 87 Patients of fracture (not in particular), 56 patients were applied this lepa externally and 31 patients were kept on placebo.

R-4 30 Patients (20-40 yrs. of age) with simple fracture of tibia & fibula were selected, 16 patients were given lakshadi guggul and 14 patients were kept on placebo.

Some common points about the methods used by these research workers are -

* History taking of paitnets with investigations
* Selection of patients
* Immoblisation.
* Visualisation of progress.

METHODS :

After thorough study of these research papers **[R-1, R-2, R-3, R-4]** some common points are kept in mind like -

1. Age of the patient
2. Type of fracture whether complete or incomplete
3. Relief of symptoms
4. Time of union
   - Clinical
   - Radiological

Clinical data regarding the above quoted criterion is collected, visualised & classified & results & observations are formed. As the criterion of the selection of the patients is different in all the researches, so it created problems to draw some satisfactory conclusion. In case of **R-1** & **R-4** only the fractures of the tibia & fibula are considered whereas in **R-2** & **R-3,** all the fractures are taken into consideration, moreover, in the **R-4** age between 20 to 40 years is considered but other took even small children & aged people also into consideration so comparison became very difficult, still I took some common point into consideration. As the fractured tibia-fibula was the criterion in both **R-1** & **R-4,** so results are compared easily. **R-2** & **R-3** showed better

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

symptomatic relief. First of all comparison between the control group & treated group is done & then it is compared with each other.

Symptom wise results were listed, inference was drawn which is tabulised in the form of +signs +++ + for the best effect, +++ for better, ++ for good & so on according to the comparative effect of the four formulations & the best formulation is selected by counting the no. of + signs.

OBSERVATIONS -

As we have indicated above that we have taken some criteria into consideration, the results pertaining to those points are tabulised here.

R-1 Age

S.No.	Age	Control group No. of Pts	%	Treated group No. of Pts	%
1	16-25	5	25	3	15
2	26-35	2	10	7	35
3	36-45	6	30	4	20
4	46-55	7	35	6	30

R-2 Age

S.No.	Age	Control group No. of Pts	%	Treated group No. of Pts	%
1	16-25	2	20	4	20
2	26-40	3	30	6	30
3	41-60	4	40	5	25

Note- Patients between 1-15 years of age are eliminated in our study.

R-3 Age

S.No.	Age	Control group No. of Pts	%	Treated group No. of Pts	%
1	16-25	4	12.90	4	7.14
2	26-40	6	19.36	17	30.36
3	41-60	5	16.29	6	10.71
4	60-<	2	6.45	1	1.79

Note- Patients between 1-15 years of age are eliminated in our study.

R-4 *Age*

S.No.	Age	Control group No. of Pts	%	Treated group No. of Pts	%
1	16-25	6	37.5	6	37.50
2	26-35	4	25.0	4	25.00
3	36-45	4	25.0	5	31.25
4	46-55	2	12.5	1	6.25

Results of Symptomatic relief

R-1

Symptoms	Control group BT	AT	Relieved	%	Treated Group BT	AT	Relieved	%
Pain (Severe)	3	2	1	34	5	1	4	80
Swelling	4	2	2	50	4	1	3	75
Loss of function	2	1	1	50	2	0	2	100

R-2

Symptoms	Control group BT	AT	Relieved	%	Treated Group BT	AT	Relieved	%
Pain (Severe)	33	15	18	54.58	64	21	43	67.16
Swelling	28	13	15	53.57	54	17	37	68.51
Tenderness	29	14	15	51.70	57	20	37	64.91
Loss of function	20	8	12	60.00	41	11	30	73.19

R-3

Symptoms	Control group BT	AT	Relieved	%	Treated Group BT	AT	Relieved	%
Pain (Severe)	79	22	57	72.15	141	8	133	94.32
Swelling	87	30	57	65.51	164	17	147	89.63
Tenderness	89	35	54	66.74	148	52	96	64.86
Loss of function	85	36	49	57.64	130	52	78	60.00

R-4

Symptoms	Control group BT	AT	Relieved	%	Treated Group BT	AT	Relieved	%
Pain (Severe)	14	13	1	7.1	16	8	8	50.00
Swelling	14	9	5	35.7	16	3	13	81.25
Tenderness	14	14	0	00.00	16	7	9	56.25
Loss of function	14	12	2	14.2	16	7	9	56.25

Type of fracture -

R-1

Type	Control group No. of Pts	%	Treated group No. of Pts	%
Complete	18	90	17	85
Incomplete	2	10	03	15

R-4

Type	Control group No. of Pts	%	Treated group No. of Pts	%
Complete	14	100.0	15	93.33
Incomplete	0	0.0	1	6.66

Result of union

R-1 ***Clinical union***

Time (in weeks)	Control group No. of Pts	%	Treated group No. of Pts	%
1st	x	x	x	80.0
4th	06	30	16	100.0
8th	16	80	20	x
10th	20	100	x	

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Radiological union

Time (in weeks)	Callus	Control group No. of Pts	%	Treated group No. of Pts	%
1st	Soft	05	25.0	08	40.0
	Hard	x	x	02	10.0
12th	Soft	13	65.0	02	10.0
	Hard	05	25.0	18	90.0
16th	Soft	09	45.0	x	x
	Hard	11	55.0	20	100.0
20th	Soft	x	x	x	x
	Hard	20	100.0	x	x

R-3

It is indicated that fracture is united about 9 days before in treated group in case of R-3, however data is not given.

R-4 **Clinical union**

Time (in weeks)	Control group No. of Pts	%	Treated group No. of Pts	%
1st	x	x	x	x
4-5th	4	25	15	93.75
10th	14	100	16	100.0
10th	8.86			

Radiological union

Time (in weeks)	Callus	Control group No. of Pts	%	Treated group No. of Pts	%
4-5th	Soft	x	x	6	37.50
	Hard	x	x	1	6.25
10th	Soft	10	71.43	1	6.25
	Hard	2	14.29	15	93.75
14-16th	Soft	7	50.00	x	x
	Hard	11	50.00	16	100.0

In case of R-2 & R-3 the union is not considered .It is only indicated that these enhance the fracture healing without any data & details.

RESULTS :-

In R-1 the maximum patients belong to 26-35 years in treated group but in control group most patients belong to 46-55 years of age. In R-2 the maximum patients belong to 41-60 but in treated group 26-40 years of age are maximum. In R-3 maximum patients belong to 26-40 in both control and treated group. In R-4 maximum patients belong to 16-25 years in both control and treated group.

Symptomatic relief in precentage

Symptoms	R-1(%)	R-2(%)	R-3(%)	R-4 (%)
Pain	80	67.18	94.32	50.00
Swelling	75	68.51	89.63	81.25
Tenderness	x	64.91	64.86	56.25
Loss of function	100	73.19	60.00	56.25
Clinical union (upto 4 weeks)	100	x	x	100.00
Radiological union (upto 6 weeks)				
Soft callus	40	x	x	37.50
Hard callus	10	x	x	6.25

Comparative study

Symptoms	R-1	R-2	R-3	R-4
Pain	+++	++	++++	+
Swelling	++	+	++++	+++
Tenderness	-	+++	+++	++
Loss of function	++++	+++	++	+
Clinical union (upto 4 weeks)	+++	-	-	+++
Radiological union	+++	-	-	++
Total no.of +ve signs	15	9	13	12

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Symptoms	Best formulation
Pain	R-3
Swelling	R-3
Tenderness	R-2 & R-3
Loss of function	R-1
Clinical union (upto 4 weeks)	R-1 & R-4
Radiological union	R-1

Thus we see that **R-3** has very good effects in pain swelling & tenderness. It also plays some role in fracture healing but it is not clear from available data. **R-2** plays appreciable role in relief of tenderness. Role of **R-1** & **R-4** are marvellous in fracture healing but here results of **R-1** are better than **R-4.**

DISCUSSION :-

As we see that results of **R-1** seem to be better. In order to visualise the reason behind it, I went through the clinical constituents of all drugs used. The table is given below-

CHEMICAL CONSTITUENTS OF THE INGREDIENTS USED -

Table No.

R- 1

Acacia arabica	- Tannin, Ca, Mg, K, Malic acid, Sugar, Moisture
Terminalia chebula	- Tannin, Gallic acid, Mucilage
Terminalia bellerica	- Gallotannic acid, Greenish yellow oil, Resin.
Embelica officinale	- Gallic acid, Glucose, Iron, Pectin, Ascorbic acid.
Zingiber officinale	- Protein, Starch, Pectin, Ash, Volatile oils, Gingirol, Shogaol, Gingirone.
Piper nigrum	- Piperine, Piperidine, Piperetin, Volatile oil, Pectin, Proteins, Carbohydrates Inorganic material, Ca, P, Fe, Thiamine, Riboflavin, Nicotinic acid.
Piper longum	- Resin, Volatile oil, Starch, Gum, Fatty oil, Inorganic matter, an Alkaloid Piperine
Commiphora mukul	- Volatile oil, Gum resin, Bitter principle.
Bytryrum depuratum	- Fat, Vit. A,D,Ca,Proteins.

R-2

Glycyrrhiza glabra	- Glyrrhizin, Glycyrrhizic acid, Isoliquiritin, Liquiritin, Asparagine, Starch Sucrose.
Tinospora cordifolia	- Berberine, Giloin, Volatile Fatty acid, Strach,
Cissampelos pareira	- Pelosine or Berberine, Saponin.
Rubia cordifolia	- Glucose, Gum, Starch, Limesalts, Purpurin, Manjistin.
Salmalia malbarica	- Minerals, Catechol, Tannin, Tannic acid, Gallic acid, Starch, Glucose, Portein Fats, Cellulose, Tannin.
Woodfordia fruticosa	- Tannin, Glucose, Lawsone, Gum, Colouring Dye.
Symplocos racemosa	- Loturine, Colloturine, Glycosides.
Callicarpa macrophylla	- Oil, Hydrocyanic acid.
Myrica esculenta	- Myricitin, Yellow colouring material, Tannin.

R-3

Oleum sesamum	- Proteins, Pectin, Carbohydrates, Minerals, Ca, P, Vit. A,B,C.
Calotropis procera	- Proteins, Uscherin, Calatoxin, Calotropin, Amyrin, Giganteol, Calotropeol.
Syzygium aromaticum	- Proteins, Fats, Fibres, Carbohydrates, Minerals, P. Ca, Fe, I, Carotene Thiamine.
Papaver somniferum	- Alkaloids, Fats, Glucose, Ammonia, Mg
Terminalia arjuna	- B-setosterol, Alegic acid, Arjunic acid, Arjunetin, Tannin, Ca, Mg, Al.
Myrica esculenta	- Yellow dye, Myricitin, Tannin.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

R-4

Cissus quadrangularis - Proteins, Fats, Fibres, Carbohydrates, Mucilage, Pectin, Ash, Vit. C, Na, P, Mg, K, Ca, Carbonate, Salts of calcium oxalate.

Terminalia arjuna - B-setosterol, Alegic acid, Arjunic acid, Arjunetin, Tannin, Ca, Mg, Al.

Withania somnifera - Cuseohygrine, Anahygrine, Tropine, Anaferine, Glycoside, Starch, Glucose. Amino-acids.

Commiphora mukul - Volatile oil, Gum resin, Bitter principle.

No doubt, **R-1** contains more effective constitutents which play major role in fracture healing.Still, while considering the age group & type of fracture, I noted that in case of **R-1** maximum no. of patients (35%) belonged to 26-45 years of age moreover, about 15% of patients were having in complete fracture so results opted to be better.

R-4 contains ingredients having calcium oxalate which is not having defined role in fracture healing because it is insoluble from of calcium. Calcium in free form is more beneficial which is abundance in **R-1.**

Application of lepa is not only soothing & eliminates risk of complications but also it has certain effect on patients psychologically, as in Ayurveda we give equal importance to mind also so keeping this in view lepa has very good role. Morever, during application of lepa, part is mobilised, nutrients are provided so occurrence of post-cast complications are minimised.

As we see the list of chemical constitutents in table no. so a new formulation can be formed by taking the inference from that table.

CONCLUSION :-

From this critical study I concluded that the results of **R-1** are recommendable the progress in results can be more encouraging with the application of lep withit. Along with this risk of post-cast complications can also be eliminated. The results of **R-4** are also recommendable. But it needs further research by taking similar conditions and criterias into consideration while studying the results of **R-1** & **R-4. R-3** has not any recommendable results.

RECOMMENDATIONS:-

1. As we see that lepa has not only soothing effects but psychological effects also so lepa can be used in practice. Moreover it eliminates the risk of POP complicaion.
2. Due to lack of sources, difference of selection criteria, my work is not up to the mark. So I recommend in spite of taking a single medicine comparative studies of 2-3 medicines should be done in this respect.
3. In spite of medicines patient should follow the does & don'ts (pathya aahaar-vihaar) properly as indicated by Acharya Sushruta.
4. A new formulation can be formed & used in practice according to the chemical constitutents as I have discussed in my paper.

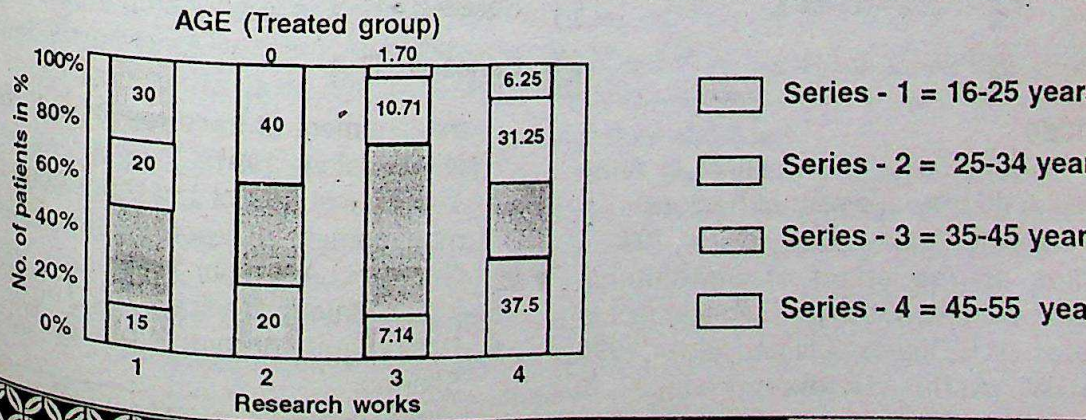

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

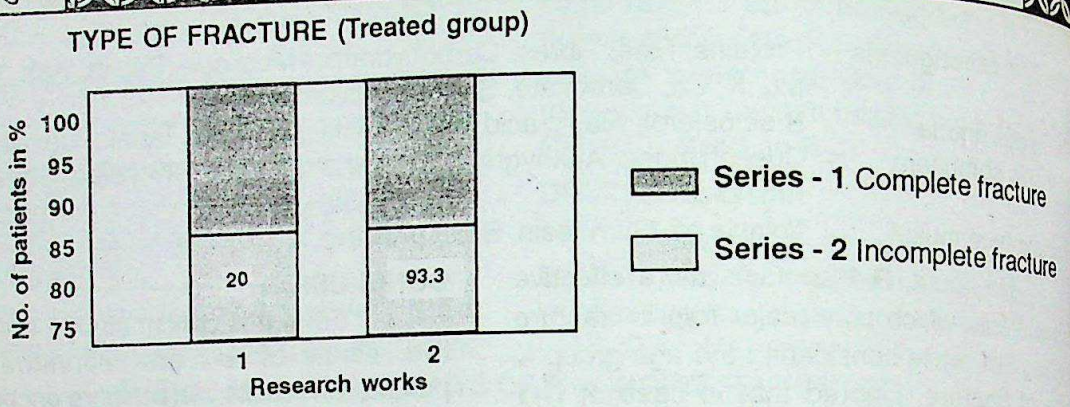

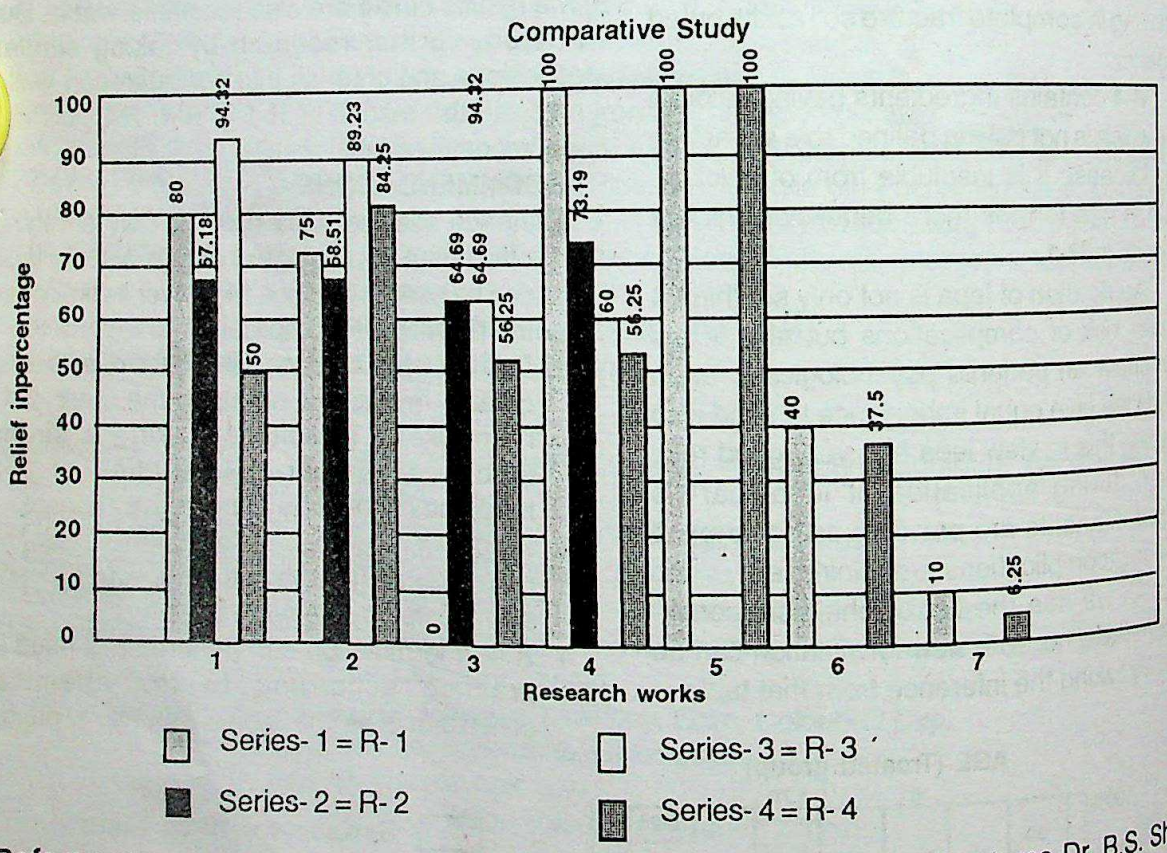

References

1. The clinical studies on the effect of Abha guggul in the management of fractures. Dr. Virendra Singh Yadav. N.I.A., Jaipur. 1994
2. Studies on the effect of Sandhaniya Mahakshaya ghanvati in the management of fractures. Dr. C.Bhardwaj. N.I.A., Jaipur. 1990
3. Role of Asthi Sandhanak lepa in management of fractures Dr. B.S. Sharma. N.I.A., Jaipur. 1991.
4. The clinical trial of Lakshadi guggul in the management of fractures. Dr. Bal Govind Gupta, N.I.A., Jaipur 1992.
5. Indian Materia Medice - Vol.- 1&2,Nadkarni.
6. Dravyaguna Vigyan Vol. -2, Priyavrata Sharma.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ABHRAKA SATVA BHASMA - A MAGIC MEDICINE

Dr. Ajit Kadam[1] B.A.M.S. (Pune) M.D. (Scholar)
Dr. C.B.Jha[2]

troduction :

Abhraka is the first substance of aharasa group. It has got immense importance therapeutics and alchemy too. Abhraka bhasma being used routinely in Ayurvedic practice. bhraka satva bhasma is a medicine, said to be ore potent than Abhraka bhasma. Now a days yurvedic physicinas are using Abhraka satva hasma in treatment of chronic illnesses like alignancies like Leukemia, male Infertility and eurological disorders with different anupanas.

Aim and Objective : Objective of this rticle is to highlight the importance of Abhraka tva bhasma.

Discussion : Properties, uses etc. of bhraka bhasma are described below.

Properties of *Abhraka bhasma* : *bhraka bhasma* is said to possess *madhura* and *shaya rasa, snigdha* and *sheeta gunas* (*RT 10/ 1*). It can overcome all three *doshas* (*ridoshahara*). In some texts it is mentioned that *bhraka* has got its main effect on *vata* and *pitta* ly, while *kapha* is not provoked by it. Hence it is lled as *vata-pittahara*.

Actions of Abhraka bhasma : According Rasa literature (R.Chu. 10/2, R.Chi. 4/12) bhraka is claimed to possess the following tions. Rasayana, Dehadardhyakara, Balakara, harira sthairyakara, Dhatuvardhana, ayasthambhakara (checking of aging process), rgayushyakara (prolongs life span), Arogyakara, yadhihara, Prashamita jara, Vajikarana, amajanana and Virya stambhakara in males and antana janana (imporves reproduction power) d Stanya samvardhana (stimulates lactation) females. Agni sandipana, pachana and chikara (improves digestive power), ragyabodhi, Medhajanana and Smritikara proves memory and intelligence), Keshya (hair tonic) Varnya (improves complexion) and Netrya (improves visual power).

Therapeutic indications of *Abhraka bhasma* : As per the texts, *Abhraka* is said to possess the power of curing almost all the diseases related to vital parts of the body and also slows down the aging process. Regarding doshas, *Abhraka* is found useful mainly in *Vatic* and *Paittika vyadhis*. It is indicated in chronic conditions such as *Rajayakshma, Grahani, Prameha, Kustha, Vatavyadhi, Kasa* and *Jwara*. (RRS 2/2, RT 10/72)

It is indicated in various diseases like- *Kasa* (cough), *Swasa, Kshaya* (Tuberculosis), *Prameha, Bhootonmada* (Psychiatric disorders), *Bhrama* (Vertigo), *Vatavyadhi* (Neuritis and other nervine diseases), *Jirnajwara* (Chronic fevers), *Mandagni* (loss of appetite). Also indicated in *Jatharavyadhi* (pain in abdomen), *Amlapitta, Parinamashoola* (peptic ulcers), *Grahani* (chronic dysentery), *Gulma, Arsha* (piles), *Bhagandara* (Fistula in ano), *Krimiroga, Bandhyatva* (sterility), *Shweta Pradara* (Leucorrhoea), *Kamala* (jaundice), *Pandu* (Anemia), *Hridroga* (Cardiac diseases), *Kustha, Shittapitta* (Urticaria). *Vrana* (wounds), *Granthi, Apachi, Amavata* (Rheumatoid arthritis), *Jararoga* (Senile disorders), *Balakshaya* (General weakness) and *Vishaja Roga* (Diseases caused by poisons) are few other indications.

Abhraka satva is the essence of Abhraka, obtained through a process of satvapatana. Abhraka bhasma is a highly potent medicine and Abhraka satva bhasma is still more potent than Abhraka bhasma.

Importance of *Abhraka Satva* : It is said that *Abhraka Satva Bhasma (ASB)* is 8 times *(R.H.T.)*/10 times (*Rasarnavam)* more potent than *Abhraka*. The goal of *Rasa shastra* is *mokshya* for achieving the goal thermostable Mercury is considered as best substance and for making

1.Dept. of Rasa-Shastra, Institute of Medical Sciences, B.H.U., Varanasi
2. Reader & Head, Dept. of Rasa-Shastra, Institute of Medical Sciences, B.H.U., Varanasi

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Mercury thermostable *Abhraka Satva (AS)* is the most useful substance. (RPS. 21153, RHT. 4/3). *Jarana of Gandhaka* (sulphur) in *Parada* (Mercury) for 6 times makes *Parada,* capable of curing diseases and in the same way without *Jarana of Abhraka satva Parada* can not become *Rasayana (R.Chi.* 2/4).

History of *Satva patana* : In vedic literature metals like Gold, Silver, Iron etc are mentioned. Mention of these metals which are not available in free state in nature means, people of Vedic era were having knowledge principles of *Satvapatana.* But it is a fact that the detailed description of *Satvapatana* process is given by the texts of *Rasa Shastra. Acharya Nagarjuna* in 8th cen. AD described the process in details in his book *Rasendramangala.* The research workers of *Rasa-shastra* have developed newer techniques, decided the fuel and various signs which indicate the melting of mineral substrate and separation of metallic contents (*Satva).*Also various types of fuels, equipment's and furnaces are mentioned in these ancient texts. Further the literature of *Rasa-shastra* describes the form, appearance, colour etc., characters of *Satva,. bhasmikarana* process and used of *Satva.*

Results of the research work in recent past is described below in short -

1. Kajarekar et.al. (1975 Jamanagar) worked on standardization of *Abhraka Satva patana.* He proved that for getting more *Satva* from *Abhraka* 1/4th part *Tankana* (Borax) is necessary, smelting of the charge material in the crucible gives more pure *Satva.* Quantity of fuel required charcoal. Furnace made up of firebricks and fireproof clay of 30" X 30" X 30" size, was good for *Abhraka Satva patana.* In clinical trial of *Abhraka Satva bhasma* on *Pandu* and *Shotha* he found encouraging results.
2. Dwivedi et.al. (1981, Udaypur), prepared *Abhraka Satva bhasma* as per methods described in Rasa Tarangini and conducted a clinical trial on *Madhumeha.* Where he found symptomatic improvement but there was on statistically significant blood sugar level lowering response.
3. Shukla et.al. (1985 Jaipur) has done a comparative study of *Abhraka bhasma* and *Abhraka Satva bhasma'.* He found that the methods and procedures mentioned in the texts of Rasa shastra as very much scientific. About *Abhraka Satva marana* he has mentioned that, kajjali should be added in equal quantity of *Abhraka Satva,* instead of adding ½ part. In a clinical trial of Laximivilas (a compound formulation of *Abhraka bhasma* and *Abhraka Satva bhasma*) in the treatment of '*Kasa*' he has reported encouraging results.
4. Jha et. al. (1990 BHU) worked on standardization of *Satvapatana* process with special reference of *Abhraka* and *Maksika Satvapatana.* He has mentioned that the method mentioned in R.T. in brief and used. He found that heating of charge material 1000°C for three hours (reducing temperature) and continued heating up 1400°C and this temperature is maintained for 1 hour, in silicon carbide electric muffle furnace to obtain maximum yield of *Abhraka Satva.* Reports of chemical analysis done by Dr. Jha are given below -

Chemical Analysis of A.S.B.

Table: Showing the chemical composition of *Abhraka Satva* & Slag :

Abhraka Satva		*Slag*	
Fe	98.2%	Fe	10.7%
Al	0.8	Al_2O_3	87.3
Si	0.45	SiO_2	40.2
Mg	Nill	MgO	7.2
Ca	Nill	Cao	0.8
Ti	0.1	TiO	0.3%

Trace Elements in *Abhraka Satva* & Slag - (in ppm)

	Cu	Co	Ni	Mg	Al	Sn	K	V
Satva	P++	60	Trace	P	P	P	Trace	12.5ppm
Slag	260	nill	nill	trace	nill	nill	P+	nill

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

P+, P++ indicates content in increasing order. T. Maheshwar et.al. (1998 BHU) did 'A comparative study of *Abhraka bhasma* and *Abhraka Satva bhasma*'. He did this work with special reference to their effect on experimentally induced diabetes mellitus in albino rats. He found that in alloxan induced hyperglycemia. ASB in 50 mg/kg dose can significantly lower the blood sugar level after 14 days of treatment, on the other hand *Abhraka bhasma* showed significant decrease in blood sugar level in 50 mg/kg dose after 21 days of treatment. He found putpaka method superior to *kupipaka* method for *Abhraka Satva bhasma* preparation.

About 42 methods of *Satvapatana*, 2 ethods of *Satva* shodhana and 14 methods of atva *marana* are mentioned in various texts of asashastra.

ualities and indications of *Abhraka Satva* hasma:

Aruchi, Arsha, Udara, Kamala, Karsha, rahani, Gulma, Jwara, Pandu, Prameha, andagni, Shosha, Kshaya, Swasa etc. (RT 10/ 14-115, RRS) *Ruchikaraka*, nourishes hairs, est aphrodisiac, increases total life span, there s no other medicine which can nourish our body ke Abhraka *Satva bhasma*. Abhraka satva hasma have all the qualities of Abhraka bhasma ith 10 times more potency.

ose of *Abhraka Satva bhasma* :

gunja (A.K. *Rasatantra sara*)
ratti (*Brihat dravyaguna pradipa*)
masha (*Rasadhatu vigyana, Rasadhatu prakasha*)
valla (*RRS, R. Chi.*)

nupana :

It is said that, if *Abhraka bhasma* is given with suitable *anupana* it can cure all curable disease and may even prevent death (*RRS* 2/2). These words are applicable to Abhrak satva bhasma too.

Food substances contraindicated during treatment with *Abhraka Satva bhasma* :

Karira, karvellaka, karkati, amla badara, tail (oil), kshara, vrintaka are the vegetable which are contraindicated during treatment with *Abhraka Satva* bhasma. (RT 10/116).

Compound formulations of *Abhraka Satva bhasma* :

The compound formulations of *Abhraka Satva bhasma* are given below -

1. *Divyabhra rasayana*
2. *Amarsundari gutika*
3. *Gutika bandha*
4. *Gopya karni gutika*
5. *Vajrangasundari gutika*
6. *Navachitrangada gutika*
7. *Patal charini gutika*
8. *Satvabhra rasayana*
9. *Mritasanjivani gutika*
10. *Hemasiddha gutika*
11. *Golabandhana gutika*
12. *Khechari gutika*

Conclusion :

From the research work fo recent past we may say that, Abhraka satva bhasma is a potnet medicine, useful in treatment of *Karshya* (as a rasayana), Diabetes mellitus, chronic Cough (Kasa), Pandu (Anaemias of different pathologies) and Shotha when prescribed with suitable anupana. Also it may be tried in malignant diseases.

References & Key to abbreviations:

R.T. = Rasa Tarangini
R. Chu. = Rasendra Chudamani
R.Chi. = Rasendra Chintamani
RRS = Rasa Ratna Samucchaya
A.K. = Anand Kand
RHT = Rasa Hriday Tantra

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद इतिहास

1. प्र०- चरक संहिता में किस ऋषि को वाहलीक ऋषि कहा है ?
   उ०- **कांकायन ।**
2. प्र०- चीन में प्रचलित चिकित्सा पद्धति के प्रथम आचार्य कौन थे ?
   उ०- **महर्षि पैङ्गि. ।**
3. प्र०- यूरोप देश की चिकित्सा पद्धति के किसी ऋषि का नाम बताएं ?
   उ०- **हिण्याक्ष ।**
4. प्र०- दक्षिण भारत के प्रथम आचार्य कौन है ?
   उ०- **महर्षि अगस्त ।**
5. प्र०- कौन से आयुर्वेद के महर्षि वेद व्यास के नाम से प्रसिद्ध हैं ?
   उ०- **महर्षि बादरायण ।**
6. प्र०- नाड़ी दर्शन ग्रन्थ के रचयिता कौन थे ?
   उ०- **रावण ।**
7. प्र०- भास्कर ने आयुर्वेद का ज्ञान कितने ऋषियों को दिया ?
   उ०- **16 ।**
8. प्र०- 'चिकित्सा तत्व विज्ञान' के रचयिता कौन थे ?
   उ०- **धन्वन्तरि ।**
9. प्र०- 'चिकित्सा दर्पण' के रचयिता कौन थे ?
   उ०- **चिकित्सा दर्पण ।**
10. प्र०- 'चिकित्सा कौमुदी' किसके द्वारा रची गयी है ?
    उ०- **काशिराज ।**
11. प्र०- चिकित्सा सार तंत्र के रचयिता कौन थे ?
    उ०- **अश्विनी कुमार ।**
12. प्र०- वैद्यक सर्वस्व के रचयिता कौन थे ?
    उ०- **नकुल ।**
13. प्र०- अष्टाङ्ग.हृदय के अनुसार आत्रेय ने आयुर्वेद का ज्ञान किससे प्राप्त किया ?
    उ०- **इन्द्र ।**
14. प्र०- दक्ष परम्परा के उपदेश में किस पक्ष की प्रध
    1. **डा० अनूप कु०गक्खड़, एम.डी.(आयुर्वेद)**
    2. **डा० अनिल गक्खड़**

    नता थी ?
    उ०- **सिद्धान्त पक्ष ।**
15. प्र०- भास्कर की परम्परा में किस पक्ष की प्रधानता थी?
    उ०- **चिकित्सा-प्रधान (रोग नाश) ।**
16. प्र०- कौन-से भरद्वाज दीर्घायुष्य सम्पन्न थे ?
    उ०- **बार्हस्पत्य ।**
17. प्र०- गोपथ ब्राह्मण में भेषज को क्या कहा गया है?
    उ०- **अथर्व ।**
18. प्र०- ऋग्वेद में वैद्य के लिए किस शब्द का प्रयोग किया गया है ?
    उ०- **भिषक् ।**
19. प्र०- वैदिक मंत्रों में कितनी अस्थियों का उल्लेख है?
    उ०- **360 ।**
20. प्र०- ऋग्वेद में औषधियों के राजा के रूप में किस का उल्लेख है ?
    उ०- **सोम ।**
21. प्र०- याज्ञवल्क्य स्मृति में कितनी धमनियां बतायी गयी हैं ?
    उ०- **दो सौ ।**
22. प्र०- 6 वेदाङ्ग. कौन से हैं ?
    उ०- **शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरूक्त, छन्द ज्योतिष ।**
23. प्र०- अथर्ववेद के कल्पसूत्र कितने हैं ?
    उ०- **पांच ।**
24. प्र०- अथर्ववेद की कितनी शाखाएँ हैं ?
    उ०- **नौ ।**
25. प्र०- उपनिषदों में किस काण्ड का वर्णन है ?
    उ०- **ज्ञान काण्ड ।**
26. प्र०- ब्राह्मण ग्रन्थों में प्रधानतः किस काण्ड का वर्णन है ?
    उ०- **कर्मकाण्ड ।**
27. प्र०- भेषज के द्वारा अमृतत्व की प्राप्ति का विधान किस वेद में बताया गया है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उ०- **अथर्ववेद ।**

28. प्र०- ब्रह्मदेव किसे कहा जाता है ?

उ०- **अथर्ववेद ।**

29. प्र०- आयुर्वेद किस का मूल है ?

उ०- **धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष ।**

30. प्र०- किसने आयुर्वेद को पंचम वेद माना है ?

उ०- **कश्यप ।**

31. प्र०- अथर्ववेद का अन्य नाम क्या है ?

उ०- **अथर्वाङ्गिरस ।**

32. प्र०- अथर्ववेद के उपनिषद कौन से हैं ?

उ०- **प्रश्न, मण्डूक एवं माण्डुक्य ।**

33. प्र०- अथर्ववेद का ब्राह्मण ग्रन्थ क्या है ?

उ०- **गोपथ ब्राह्मण ।**

34. प्र०- किन नक्षत्रों के आधार पर ऋग्वेद के काल का निर्धारण किया है ?

उ०- **मृगशिरा एवं पुनर्वसु ।**

35. प्र०- पौष्कलावत के गुरु कौन थे ?

उ०- **धन्वन्तरि ।**

36. प्र०- माधव निदान के किस अध्याय की टीका में विजयरक्षित ने करवीर्य के एक श्लोक को उद्धृत किया है ?

उ०- **अतिसार निदान अध्याय ।**

37. प्र०- उरभ्र शब्द में कौन-सा प्रत्यय लगाने पर औरभ्र शब्द बना है ?

उ०- **तद्धितान्त प्रत्यय ।**

38. प्र०- गोपुररक्षित के गुरु कौन थे ?

उ०- **काशिराज दिवोदास धन्वन्तरि ।**

39. प्र०- चरक संहिता का मूल नाम क्या था ?

उ०- **अग्निवेशतंत्र ।**

40. प्र०- आचार्य अग्निवेश का काल क्या माना जाता है ?

उ०- 1000 ई०पू० ।

बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल विटामीन-सी और कैल्सियम युक्त एक संपूर्ण स्वास्थ्य टॉनिक

बैद्यनाथ
च्यवनप्राश

माँ से बढ़कर बच्चों की देखरेख और कौन कर सकता है ? इसीलिए हर माँ अपने नन्हे-मुन्ने के लिए स्वास्थ्यवर्धक व पौष्टिक आहार की कामना करती है ।

परन्तु केवल स्वादिष्ट भोजन आपके बच्चों की विटामिन व पोषण संबंधी जरूरतों की पूरा नहीं कर सकता । उसके अनुकूल विकास के लिए आपको चाहिए एक उत्कृष्ट स्वास्थ्य टॉनिक । जैसे बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल । इसमें हैं 52 (परखी हुई) जड़ी-बूटियाँ और केसर । अनेक विटामिन व हर्बो-मिनरल्स से युक्त, इसमें विशेष मात्रा में है, प्राकृतिक विटामिन-सी और कैल्सियम, जो आपके शरीर में जरूरी पोषक तत्वों की कमी को पूर्ण करते हैं ।

स्वस्थ दिमाग
और शरीर के लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आरोग्य समाचार अखबार की कतरनों से

अल्प राल युक्त सिगरेट कम खतरनाक नहीं

द ब्रिटिश मेडिकल जरनल में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार " जो व्यक्ति मध्यम राल युक्त सिगरेट (15-12 मि.ग्रा.), अल्प राल युक्त सिगरेट (8-14 मि.ग्रा.) या अत्यन्त अल्प राल युक्त सिगरेट (7 मि०ग्रा०) पीते हैं, उन सबों में फुफ्फुस कैन्सर (Lung cancer) होने का खतरा समान रूप से होता है ।" अमेरिकी वैज्ञानिकों के भी शोध का यही निष्कर्ष है ।

लेन्स लगाने वाले सावधान हों

हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार आंखों में लेन्स लगाने के बाद चेहरा नल के पानी से धोने से आंखों की रोशनी जा सकती है । मूरफील्ड नेत्र अस्पताल के वरिष्ठ नेत्र विशेषज्ञ जान हार्ट ने बुधवार को न्यू साइंटिस्ट पत्रिका को बताया कि लेंस पहनने वाले लोग एक बेहद खतरनाक बीमारी का शिकार बन सकते हैं जो पानी में पाये जाने वाले एक जीवाणु के कारण होती है । उन्होंने बताया कि एकैन्थोएमीबा केराटिटिस नामक इस स्थिति के कारण आंखों की झिल्ली में फोड़ा हो जाता है जिससे रोशनी तक जाने का खतरा रहता है । उन्होंने सुझाव दिया कि लैंस पहनने वाले लोग अपनी आंखों को नल के पानी से बचाएं ।

अल्प कैलोरी और दीर्घ जीवन

द हिन्दू में प्रकाशित एक आलेख के अनुसार भोजन में कम कैलोरी के प्रयोग से ज्यादा दिनों तक जीवित रहने की सम्भावना रहती है । साथ ही, उम्र से सम्बन्धित रोग जैसे कैन्सर, मधुमेह आदि रोगों पर भी काबू पाया जा सकता है । प्रोफेसर ल्योनार्ड पी गारन्टे ने पता लगाया कि अल्प कैलोरी शान्त जीन (SIR2)को सक्रिय करती है । इस जीन का कार्य बुढ़ापा की गति को कम करना है । अध्ययन से पता चला है कि एन ए डी (निकोटिनायाइड एडेनीन डायन्यूक्लूराइड) से सम्बन्धित सह एनजाइम एनएडी की क्रिया को बाधित करके SIR2 बाधित करता है ।

बच्चों पर विकिरण की मात्रा कम करें

ब्रिटिश मेडिकल जर्नल में प्रकाशित एक शोध -पत्र के अनुसार सीटी स्कैन के समय दिये जाने वाले विकिरण से जबरदस्त हानि पहुंचती है । विदित है कि सीटी स्कैन में आयनयुक्त विकिरण या एक्स-रे का इस्तेमाल होता है । वयस्कों की अपेक्षा बच्चों में विकिरण की मात्रा कम करनी चाहिए । अमेरिकी खाद्य एवं औषधि प्रशासन ने इस दिशा में अधिसूचना जारी कर दी है । हमारे देश में भी अणु ऊर्जा नियामक बोर्ड ने भी इस प्रकार के निर्देश जारी किये हैं । विदित है कि विकिरण ट्यूबधारा और पिच को समायोजित करके विकिरण की मात्रा को कम किया जा सकता है । ट्यूब धारा एक्स-रे को उत्पन्न करने वाले एलेक्ट्रान की मात्रा को बताती है । पिच जिस दर से टेबुल पर लेटा रोगी स्केनर में जाने के लिए अग्रसर होता है, उसे बताता है ।

Sperm from stem cells fertilize eggs

MOUSE SPERM grown from stem cells have successfully fertilized eggs. Lab-grown human sperm could follow. The achievement follows the production on fertile eggs from stem cells earlier last year. It could lead to alternative ways to help infertile couples conceived by in vitro fertilization. Such cells could, for instance, help parents who have genetic defects to have normal children.

The fertile sperm were created by George Daley of the Whitehead Institute for Biomedical Research in Cambridge and his colleagues. The researchers used stem cells derived from male mouse embryos and grew them into hollow balls, rather like an early embryo. They then teased out sperm-like cells and injected them into unfertilized eggs. One in five of the resulting embryos began to develop normally.

Normally, as sperm and eggs develop their genetic material is reprogrammed. This switches on the correct genes so that fertilization can proceed. This process may have gone awry in the mouse sperm, Azim Surani of the University of Cambridge speculates - similar problems are thought to occur during animal cloning.

Whether the embryos would have

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

produced live births is not known, as Daley's team halted the experiment five days after fertilization, if reprogramming were affected, the embryos may have aborted later, says Daley. Human sperm will be more difficult to make than mouse sperm.

Reprogramming problems aside, researchers will first need to make their stem cells using therapeutic cloning. Here, DNA from an adult cell is inserted into an egg emptied of its DNA; stem cells are isolated from the resulting embryo. Such stem cells would then be cultured to form sperm.

Helen R. Pilcher
Nature News Service
[with courtesy from the Hindu]

दिल के रोगों से लड़ने में कारगर है फफूंद

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार दिल के रोगों से लड़ने में फफूंद काफी कारगर साबित हो सकता है । वैज्ञानिकों के अनुसार, फफूंद में पाए जाने वाले रसायन धमनियों में वसा को जमने से रोकते हैं। धमनियों में वसा के जमने से वह अवरूद्ध होने लगती हैं । इससे रक्त प्रवाह पर असर पड़ता है । ऐसी स्थिति में व्यक्ति को दिल का दौरा पड़ने की संभावना बढ़ जाती है । जापान की राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी के एक शोध के अनुसार, 'बेयूवेरोलाइड्स' नामक रसायन दिल के रोगों से लड़ने में काफी प्रभावी होते हैं ।

जापान के कितासातो विवि के वैज्ञानिकों के अनुसार यह शोध दिल के रोगों के उपचार को नई दिशा दे सकता है । वैज्ञानिकों के अनुसार, प्रारंभिक स्थिति में धमनियों में मैक्रोफेग्स नामक कोशिकाएं एकत्र होकर कोलेस्ट्राल और वसा अम्ल को जमा करना शुरू कर देती हैं। धीरे-धीरे इस कोलेस्ट्राल और वसा अम्ल की मात्रा इतनी ज्यादा हो जाती है कि धमनियों का मार्ग अवरूद्ध होने लगता है । शोधकर्ताओं के अनुसार, बेयूवेरिया नामक फफूंद में पाया जाने वाला बेयूवे रोलाइड्स नामक रसायन कोशिकाओं में वसा को जमने से रोकता है । दरअसल, कोशिकाएं कोलेस्ट्राल और वसा अम्ल को बूंद के रूप में परिवर्तित होने के बाद ही एकत्र करती हैं और बेयूवे रोलाइड्स इन्हें (कोलेस्ट्राल व वसा अम्ल) बूंद के रूप में परिवर्तित ही नहीं होने देते हैं । इसके अलावा यह रसायन एकैट नामक एक एंजाइम को रोककर कोशिकाओं को ये बूंदे भी एकत्र नहीं करने देता है । वैज्ञानिकों ने चुहियों पर किये एक प्रयोग में पाया कि फफूंद के रसायन धमनियों में जमा वसा को 50 फीसदी तक घटा देते हैं । इसके अलावा इस उपचार का मरीज पर कोई नकारात्मक प्रभाव भी नहीं पड़ता है । यानी उसे उल्टी-दस्त जैसी बीमारियों का सामना नहीं करना पड़ता है ।

फेफड़े के कैंसर की नई दवा नाकामयाब

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार फेफड़े के कैंसर के इलाज की नयी दवा पूरी तरह विफल साबित हुई है । इसे ईजाद करने वाले वैज्ञानिकों ने दावा किया था कि इससे कैंसर रोगियों को काफी लाभ होगा लेकिन इसका परिणाम उत्साहजनक न होने से लोगों को निराशा हुई है । इस संदर्भ में 'एनॉल्स ऑफ ऑनकोलॉजी' के सर्वेक्षण से पता चला है कि नयी दवा 'हेरसेप्टिन' की तुलना में कैंसर रोगियों को शामिल किया गया था । उन्होंने साफ-साफ शब्दों में कहा है कि नयी दवा 'हेरसेप्टिन' ईजाद करते वक्त वैज्ञानिकों को पूरा भरोसा था कि जिन रासायनिक यौगिकों का मिश्रण किया जा रहा है उससे कैंसर रोगियों को लाभ होगा ।

जान के दुश्मन बन सकते हैं कम्प्यूटर और इंटरनेट

कमर व गर्दन दर्द, स्नायु और आंख की बीमारियों का खतरा

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार कम्प्यूटर तथा इंटरनेट कमर व गर्दन दर्द, कार्पल टनल सिंड्रोम तथा नेत्र तनाव जैसी अनेक तकलीफों के भी सबब बन रहे हैं । मौजूदा समय में कम्प्यूटर में तेजी से बढ़ते इस्तेमाल के कारण कमर एवं गर्दन में दर्द, अंगुलियों को बेकार कर देने वाले कार्पल टनल सिंड्रोम (सीटीसी) जैसे स्नायु रोगों और आंखों की समस्याओं का प्रकोप तेजी से बढ़ रहा है । अमेरिका के अटलांटा में किए गए एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यापक अध्ययन के अनुसार रोजाना दो से तीन घंटे अथवा उससे अधिक समय तक कम्प्यूटर का इस्तेमाल करने वाले लोगों को पांच साल के भीतर गर्दन एवं कमर दर्द की समस्या उत्पन्न हो जाती है । अमेरिका में न्यूयार्क के बफालों स्थित मर्सी हास्पीटल के न्यूरोसर्जरी विभाग के पूर्व प्रमुख तथा स्टेट युनिवर्सिटी आफ न्यूयार्क में न्यूरोसर्जरी के प्रोफेसर रह चुके डा० विजय शील कुमार का कहना है कि अमेरिका जैसे विकसित देशों में जहां कम्प्यूटर एवं इंटरनेट का आविर्भाव काफी समय पहले ही हो चुका है, कम्प्यूटर से जुड़ी स्वास्थ्य समस्याओं ने व्यापक रूप ले लिया है और अब ये समस्याएं भारत जैसे विकासशील देशों में प्रकट होने लगी हैं । डा० विजय शील के अनुसार कलाइयों एवं अंगुलियों को बेकार कर देने वाली कार्पल टनल सिंड्रोम (सीटीसी) जैसी बीमारियां अमेरिका जैसे विकसित देशों में महामारी बन चुकी हैं लेकिन अब ये बीमारियां भारत में तेजी से फैल रही हैं । डा० विजय शील कुमार का कहना है कि कार्पल टनल सिंड्रोम का खतरा केवल कम्प्यूटर का बहुत अधिक इस्तेमाल करने वालों को ही नहीं बल्कि उन सभी लोगों को अधिक होता है जिन्हें अपनी अंगुलियों एवं हाथों का बहुत अधिक इस्तेमाल करना पड़ता है । मिसाल के तौर पर टाइपिस्टों, मोटर मैकेनिकों और मांस काटने वालों को यह बीमारी होने की आशंका अधिक होती है । इस बीमारी की शुरुआत में हाथों में सुन्नपन्न, सनसनाहट अथवा झुनझुन, छोटी-मोटी चीजों को पकड़ने में कमजोरी, हाथ को कंधे तक उठाने के दर्द और अंगूठे, तर्जनी एवं मध्यमा में संवेदना की कमी जैसे समस्याएं होती हैं । आधुनिक समय में कम्प्यूटरों के इस्तेमाल के कारण बच्चों में जीवनभर की विकलांगता उत्पन्न होने का खतरा बढ़ रहा है । अगोनोमिक्स नामक एक शोध पत्रिका में प्रकाशित एक रिपोर्ट में कहा गया है कि दरअसल कम्प्यूटर की डिजाइनिंग वयस्कों को ध्यान में रखकर की गई है और अगर बच्चे इसका अधिक समय तक इस्तेमाल करें तो उन्हें कमर, गर्दन, कलाई एवं अंगुलियों में गंभीर समस्याऐं हो सकती हैं ।

टहलने से घट सकता है शरीर का वजन

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार बहुत पुरानी बात है-टहलना स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है । अमेरिकों वैज्ञानिकों ने शोध करके इसकी पुष्टि भी कर दी है । उनका कहना है कि अगर कोई प्रतिदिन आधा घंटा टहलता है तो उसका वजन कभी बढ़ नहीं सकता है । यही नहीं, टहलने से कई और बीमारियों से छुटकारा मिल जाता है । उन्होंने कहा कि शरीर का वजन न बढ़े-इसके लिए लोग 'डाइट' करने के साथ-साथ कई अन्य दवायें लेते रहते हैं जिसका स्वास्थ्य पर बुरा 'साइड इफेक्ट' पड़ता है । इस संदर्भ में किये गये सर्वेक्षण से पता चला कि करीब आठ-नौ महीने तक बिल्कुल न टहलने वालों का वजन बड़ी तेजी से बढ़ा । इसके विपरीत जो एक सप्ताह में करीब 18 किमी या आधा घंटा प्रतिदिन के हिसाब से टहले वे अपने शरीर का भार सामान्य रखने में सक्षम रहे ।

बैद्यनाथ

आयुसिड

अम्लपित्त, उदरशूल एवं कब्जियत दूर करने की दवा है ।

CC-0. In Public Domain. Gangotri Collection. http://www.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके पत्र

भारतीय चिकित्सा पद्धति विभाग का नया नाम 'आयुष' स्वागत योग

सेवा में,

सम्पादक

सचित्र आयुर्वेद

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, पटना

महोदय,

इक्कीसवीं सदी की ओर अग्रसर हमारे देश के प्रधानमंत्री माननीय श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने स्वास्थ्य मंत्रालय के भारतीय चिकित्सा पद्धति एवं होम्योपैथी विभाग का नाम बदल कर ''आयुष विभाग'' रखा है । माननीय प्रधानमंत्री की यह घोषणा स्वागत योग्य है । प्रधानमंत्री जी ने बतलाया 'आयुष' संस्कृत शब्द है, जिसका अंग्रेजी में हिज्जे करने पर -

'ए' - से आयुर्वेद,
'वाई' - से योग और नेचुरोपैथी
'यू' - से यूनानी
'एस' - से सिद्ध
'एच' - से होम्योपैथी

होता है ।

'आयुष' शब्द सभी पैथियों का मिश्रण है जिसका अर्थ है - मानव स्वस्थ्य एवं नीरोग दीर्धायु हो ।

भवदीय

(डा० राकेश मोहन शर्मा)

चिकित्साधिकारी, राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सायल
बरईशाहपुर, हाथरस (उ०प्र०)

वैद्यक और कानून

सेवा में,

सम्पादक

सचित्र आयुर्वेद

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, पटना

महोदय,

हमारे वैद्य बन्धु यदि वैद्य कृति (वैद्यक) से जुड़े कानूनों का अध्ययन कर लें तो निश्चित है कि वे कानूनी उलझनों से निर्भय निर्भीक रहकर आपने कार्य में दत्त-चित्त रह सकते हैं और सरकारी अमला उनको ब्लैकमेल नहं कर सकेगा । ऐसा विशेषत: सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों के वैद्यों व साथ किया जा रहा है जो कि अत्याचार के शिकार हो र हैं । कृपया ध्यान रखें :-

भारतीय संविधान की सूची संख्या तीन क समवर्ती सूची कहा जाता है जिसके तहत् कोई भी कानू केन्द्र (सरकार) व राज्य (सरकारें) पास कर सकती हैं दोनों की ही मान्यता रहेगी । वैद्य वृत्ति इसी समवर्ती सूच की संख्या 26 के तहत है । अनुच्छेद 246 की ही सातव अनुसूची की संख्या तीन के अंतर्गत समवर्ती सूची (Cor current list) हैं ।

राज्यों के वैधानिक (Statutory) राजकीय विभि पैथियों के चिकित्सा बोर्ड या काउन्सिलें अपने-अप राज्यों में लागू कानूनों के तहत् वैद्यों, हकीमों, होम्यो एलोपैथिक डाक्टरों का पंजीयन करते हैं । ऐसा करने व उनको कानूनी अधिकार भी है तथा दायित्व भी । वे इ दायित्व से पीछे भी नहीं हट सकते ।

ध्यान रहे कि किसी भी राज्य के आयुर्वेद/यूना या प्राकृतिक चिकित्सा बोर्ड/परिषद् के रजिस्ट्रार क सचिव (या अन्य पदधारक) भा०चि०केन्द्रीय परिषद् (न दिल्ली-58) कोई भी आदेश नहीं दे सकते । यह अधिक केवल केन्द्र सरकार के पास है, तथा वह भी विधि सुस्पष्ट प्रावधानों के तहत् ऐसा कर सकती है ।

भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद् अधिनिय 1970 की धारा 17-3-[2] ए तथा बी० व सी का ध्य पूर्वक अध्ययन करने पर स्पष्ट हो जाता है कि एक रा में रजिस्टर्ड वैद्य चाहे वह सन् 1967 के पश्चात् व सम्मेलन उपाधियों के आधार पर पंजीकृत हों, वैद्य वृत्ति पूर्ण अधिकारी हैं । छत्तीसगढ़ हाई कोर्ट बिलासपुर ने हाल ही में सम्मेलन स्नातकों का रजिस्ट्रेशन करने आदेश, यहां के बोर्ड को दिया है । यदि गैर कानू (अवैध पंजीयन) होता तो फिर हाईकोर्ट पंजीकरण आदेश दे ही नहीं सकता था । वैद्य बन्धु विचलित न हो पर केवल आयुर्वेदिक शास्त्रीय अथवा प्रतिष्ठित कम्पनि को पेटेन्ट आयुर्वेदिक दवाएँ ही सावधानी पूर्वक अ रोगियों पर व्यवहृत करें ताकि आयुर्वेद बदनाम न हो

विनीत

(वैद्य) परमेश्वर दयाल, एम.ए.एल.एल.बी. आयुर्वेद र
मैत्रीकुंज, भिलाई (छ०ग०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सचित्र आयुर्वेद आज से चालीस वर्ष पूर्व

अनुसंधान में अभिरूचि पैदा करें

फ़रवरी 1964

इण्डियन एकेडमी ऑफ मेडिकल साइन्सेज के थम दीक्षान्त समारोह में भाषण करते हुए राष्ट्रपति डा० स० राधाकृष्णन ने निम्न विचार व्यक्त किये ।

डाक्टरी शिक्षा को सुविधा-वृद्धि सम्बन्धी किये ये सरकारी प्रयासों के बावजूद विश्व में होनेवाले तत्सम्बंधी क्रांतिकारी परिवर्तन के अनुरूप इस देश में महत्वपूर्ण सफलता उपलब्ध नहीं हो सकी ।

यह बात सही नहीं है कि देश में कुशल व योग्य यक्तियों या आवश्यक सामानों या उपकरणों की कमी । यह भी बात नहीं है कि हमारे छात्र और छात्राऐं बुद्धि । योग्यता में किसी अन्य देश के छात्र-छात्राओं से न्यून । किन्तु आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षकगण केवल ज्ञान ही छात्रों को प्रदान न करें बल्कि उनमें अनुसंध न की अभिरूचि भी पैदा करें । यह ध्रुव सत्य है कि कोई ी विज्ञान जो अनुसंधान से अनुप्रमाणित नहीं होता, अन्त में उन्मूलित हो जायगा । मुझे आशा है कि यह नवीन अकादमी इस देश में चिकित्सा विज्ञान के अनुसंधान की एक परम्परा कायम करेगी । उन्होंने कहा कि अकादमी की ग्रीस में प्लेटो द्वारा स्थापना की गयी थी और आज के युग में इसकी वहीं से शिक्षा प्राप्त की है, किन्तु भारतीय भी इस बात से अनभिज्ञ नहीं थे, क्योंकि प्राचीन काल में तपोवनों में स्थापित अकादमियों का हमलोग आज भी स्वागत करते हैं । उक्त तपोवनों में स्थापित अकादमियों में संस्थापक 'जीवक' जैसे महान चिकित्सा-शास्त्री भी थे जो ग्रीस जाने के लिए आमंत्रित किये गये थे । निर्वाण-प्राप्ति के मार्ग एवं उनकी प्राप्ति के साधन संबंधी भगवान बुद्ध के आदेश के अनुरूप ही आरोग्य-प्राप्ति-सम्बन्धी आयुर्वेद के विचार हैं । भगवान बुद्ध भी आयुर्वेद से प्रभावित थे, क्योंकि मानव जीवन के प्रति उनके श्रद्धा और पीड़ा व कष्ट के प्रति सहानुभूति थी ।

डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन
भारत के पूर्व राष्ट्रपति

आयुर्वेद और उसका भविष्य

यदि आयुर्वेद को जिन्दा रखना है और यह ,भाग्य की बात होगी यदि उसे नष्ट होने दिया जायेगा - ो जो लोग उसपर विश्वास रखते हैं, उन्हें चाहिए कि वे बल प्रयत्न करें । सबसे बड़ी जिम्मेदारी उन लोगों के कंधों पर है जिन्होंने आयुर्वेद विज्ञान को बाकायदा पढ़ा है और उसका अभ्यास कर रहे हैं । उन्हें अपनी हीन भावना ा परित्याग कर देना चाहिए । यदि कोई राज्य आयुर्वेद ी कोई ठोस सहायता नहीं करता तो इससे हताश न ोकर उलटे और अधिक उत्साह प्राप्त करना चाहिए । चली आई रूढ़ि के विपरीत जो भी कभी कहीं भी किये गये हैं, और विचारों में जब कभी क्रांति हुई है तभी समाज ने भयंकर विरोध किया है । मगर उसके बाबजूद भी वे सफल हैं, इसलिए जो वैद्य अपने उपर विश्वास रखते हों, और विज्ञान को उन्नत करने की आकांक्षा रखते हों, उन्हें उसी प्रकार की सिद्धान्तवादिता प्रदर्शित करनी चाहिए जैसे उनके पहिले के लोग भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में सफलतापूर्वक विरोध का मुकाबला करके प्रदर्शित कर चुके हैं ।

डा० सम्पूर्णानन्द
प्रख्यात् चिन्तक एवं पूर्व राज्यपाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां

दिल्ली

अल्टरनेटिव मेडिसिन (वैकल्पिक चिकित्सा) केन्द्रीय परिषद् द्वारा मान्य चिकित्सा पद्धति नहीं है।

(अखिल भारतीय आयुर्वेद समाचार सेवा- दिल्ली-110034)

भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद ने एक सार्वजनिक सूचना द्वारा जनता को सावधान किया है कि कुछ संस्थाएं देश के विभिन्न भागों में वैकल्पिक चिकित्सा (अल्टरनेटिव मेडिसन) के नाम से उपाधि/डिप्लोमा/एम. डी.; आर.एम.सी. अनुभव के आधार पर प्रदान कर रहे हैं। इस सम्बन्ध में परिषद् ने सूचित किया है कि अल्टरनेटिव मेडिसन भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद द्वारा मान्य चिकित्सा पद्धति नहीं है। परिषद् के अनुसार आयुर्वेद, सिद्ध और यूनानी तिब्ब भारतीय चिकित्सा की मान्य पद्धतियां हैं। सार्वजनिक सूचना की विज्ञप्ति की फोटोस्टेट प्रति जनता को सावधान करने हेतु पाठक अखिल भारतीय आयुर्वेद सेवा संघ, 24 रिषी नगर, दिल्ली-110034 से मुफ्त मंगवा सकते हैं।

सुप्रीम कोर्ट द्वारा हि०सा०स० प्रयाग द्वारा प्रदत्त आयुर्वेद रत्न/वैद्य विंशारद डिग्री रद्द

सुप्रीम कोर्ट द्वारा हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा वैद्य विशारद/आयुर्वेद रत्न की डिग्री लिए हुए डाक्टरों की प्रेक्टिस पर रोक लगा दी गई है।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग से डिग्री लेने वाले डाक्टरों ने 1993 में उच्च न्यायालय में एक याचिका दायर की थी कि उन्हें प्रेक्टिस करने से रोका जा रहा है लेकिन उच्च न्यायालय ने उनकी याचिका खारिज कर दी थी। बाद में उन्होंने उच्चतम न्यायालय में इसके खिलाफ अपील की जिसे वहां से भी खारिज कर दिया गया।

उच्चतम न्यायालय ने बड़े सीधे शब्दों में कहा है कि किसी भी पद्धति की डिग्री देने वाले संस्थान को यदि भारतीय चिकित्सा अधिनियम 1970 की मान्यता प्राप्त नहीं है तो उस संस्थान से डिग्री लेने वाले डाक्टर प्रेक्टिस नहीं कर सकते। हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग को यह मान्यता प्राप्त नहीं है। आदेश में इस बात का भी जिक्र है कि जिन्होंने 1967 तक प्रयाग से डिग्री ली है, वे अपनी प्रेक्टिस कर सकते हैं। राजधानी में ऐसे 35 हजार डाक्ट हैं जिन्होंने गैर मान्यता प्राप्त संस्थानों से डिग्री ली हुई है

सुप्रीम कोर्ट का फैसला एवं भारतीय चि अधिनियम, अखिल भारतीय आयुर्वेद सेवा संघ, 24 रिषीनगर दिल्ली-110034 के पास उपलब्ध है। सरकार द्वा घोषित फर्जी विश्वविद्यालयों, फर्जी मेडिकल कॉलेजों क सूची मुफ्त मंगवा सकते हैं।

'इलैक्ट्रो होम्योपैथी की डिग्रियां बेचने वाल संस्था फर्जी घोषित'

स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय तथा भारती चिकित्सा परिषद्, उ०प्र० ने आल इण्डिया रिसर्च एं डेवलेपमेंट आर्गेनाइजेशन आफ इलैक्ट्रो होम्योपैथी (सेन्ट्र बोर्ड) नामक संस्था जो यमुना विहार, दिल्ली में स्थित को फर्जी संस्था घोषित कर दिया है। भारतीय चिकित्स परिषद्, उ०प्र० ने 13 मई 92 को जारी एक पत्र क माध्यम से उक्त संस्था पर फर्जी डिग्री बेचने का आरो लगाया है। पत्र में यह भी उल्लेख है कि उक्त संस्था द्वा प्रदत्त कोई भी डिग्री भारतीय चिकित्सा अधिनियम के तह मान्य नहीं है। उक्त संस्था पांच वर्ष के चिकित्सा अनुभ वाले व्यवसायियों को आर.एम.पी. तथा इलैक्ट्रो होम्योपैथ की डिग्री प्रदान कर रही है।

इसके अलावा उक्त संस्था (ए.आई.आर.डी.अ आफ.ई.एच. (सेन्ट्रल बोर्ड) दिल्ली) समाचार पत्रों प्रलोभन भरे विज्ञापनों द्वारा बेरोजगारों को गुमराह कर र है। भारतीय चिकित्सा परिषद्, उ०प्र० के रजिस्ट्रार ने ए प्रेस विज्ञप्ति में कहा है, कि इलैक्ट्रो होम्योपैथी की क भी संस्था मान्यता प्राप्त नहीं है। उन्होंने स्पष्ट किया f उपरोक्त संस्था के किसी भी प्रमाण-पत्र को भारती चिकित्सा परिषद् ने मान्यता नहीं दी है।

इससे पूर्व स्वास्थ्य सेवा निदेशक, दिल्ली प्रशास भी स्पष्ट कर चुका है कि उक्त संस्था द्वारा प्रदत्त उपाf डिप्लोमा, पंजीकरण भारत सरकार या दिल्ली प्रशासन द्व मान्यता प्राप्त नहीं है।

नीम हकीम बनाने के कारखाने देश में कहां-क पर है और जनता को कैसे लूट रहे हैं, की पूरी जानक अखिल भारतीय आयुर्वेद सेवा संघ, रिषी नगर - दिल्ली-1 से नि:शुल्क मंगवा सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महामहिम उपराष्ट्रपति और प्रधानमंत्री ने प्रसिद्ध डा० आर्य नरेश नाणा के 'वर्ल्ड अवार्ड' पर बधाई सम्मान दिया

विश्व वैकल्पिक औषधि सोसाइटी अमेरिका के विश्व सहयोगी अंतर्राष्ट्रीय चिकित्सक सदस्य एवं अखिल भारतीय आयुर्वेद संघ के राष्ट्रीय सदस्य विख्यात् सफेद दाग विशेषज्ञ डा० आर्य नरेश हनुवन्त देव सिह महेचाठाकुर नाणा पाली राज० निवासी को अंतर्राष्ट्रीय हैल्थ साइंस कान्फ्रेंस W.H.O. कोलकाता की संस्था द्वारा चिकित्सा क्षेत्र में यूरोपीय देशों से निराश सफेद दागी ठीक करने से विश्वकीर्ति राष्ट्र गौरव चिकित्सा इतिहास रचाने पर विश्वस्तरीय 'अंतर्राष्ट्रीय हैल्थ ऐक्सीलैंस पुरस्कार'' से सम्मानित होने पर और बढ़ती जनसंख्या पर नियंत्रण पाने के लिए आयुर्वेद विकल्प खोज पर बिना ऑपरेशन परिवार नियोजन मात्र आयुर्वेद दवा की 24 खुराक की सफलता पर ''वर्ल्ड सोसायटी (A.M.) ऑफ अमेरिका में ''वर्ल्ड फेलोमेम्बरशिप'' से सम्मानित करने पर भारत के महामहिम उपराष्ट्रपति भैरोसिंह शेखावत और भारत के प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने डा० आर्य नरेश के विश्व पुरस्कार पाने पर राष्ट्र की गौरव प्रतिभा के विश्वसम्मान पर हार्दिक शुभकामनाएं देते हुए बधाई सम्मान देकर आयुर्वेद को प्रोत्साहन दिया है । राष्ट्राध्यक्षों के बधाई सम्मान डा० आर्य नरेश ने कृतज्ञता और आभार प्रकट किया ।

डॉ० आर्य नरेश एक ऐसे युवा राष्ट्र प्रतिभा हैं जो गांवों को विश्वख्याति देने में चिकित्सा सेवा में कार्यरत हैं । आदिवासी क्षेत्र में डा० आर्य नरेश अपनी चिकित्सा एक दशक में नि:शुल्क दे रहे हैं । जहाँ लोग पैसा कमाने के लिए शहरों की तरफ दौड़ते है उनके लिए यह एक मिसाल ही तो है । देश के कोने-कोने से निराश रोगी नाणागाँव आते है और अपनी-अपनी आशापूर्ण कर डा०आर्य को दुआऐं देते जाते हैं । रोगियों को औषधि मूल्य ही देना पड़ता है शुल्क नही । आदिवासी क्षेत्र के नाणा जैसे गांव में रहकर डा०आर्य आयुर्वेद की विश्वस्तरीय चिकित्सा मिशन चलाते हैं । देश-विदेश के बड़े-बड़े शहरों के निमंत्रण आते है किन्तु डा०आर्य सहर्ष उन्हें मना कर देते हैं । गाँवों में औषधविद्या प्रकृति के निकट रहकर मानवीय चिकित्सा ज्यादा सफल रहती है फिर गाँवों को पुन: विश्व ख्याति देना अपना धर्म समझते हैं । अनेक गहन विषयों पर डा० आर्य नाणा अनुसंधान करते हैं । देश-विदेश के कई डाक्टरों-वैज्ञानिकों को डा०आर्य नरेश के आयुर्वेद अनुसंधान पर उम्मीदें हैं । डा० आर्य व्यक्ति में संस्था इतिहास का गौरव और चिकित्सा में विश्व सम्मान का गौरव फिर भी गांवों मानस सेवा की मिसाल है ।

औषधीय पौधों की खेती का प्रशिक्षण

औषधीय पौधों की बढ़ती मांग व घटते उत्पादन को ध्यान में रखते हुए इनकी खेती करना अब काफी लाभदायक सिद्ध हो रहा है । भारत की जलवायु के अनुसार सिंचित व असिंचित क्षेत्र में विभिन्न जड़ी-बूटियों की खेती की विपुल सम्भावनाएं हैं । कई कृषक एवं उद्यमी इसकी सफलतापूर्वक खेती कर रहे हैं । औषधीय पौधों की बिजाई की विधि, नर्सरी तैयार करना, इनके बीज प्राप्त करने के स्रोत, फसलों की बीमारियों व उनकी सरल ईलाज, फसलों की हार्वेस्टिंग, निराई-गुड़ाई, पैकिंग, गुणवत्ता के मापदण्ड व बिक्री की व्यवस्था आदि की पूर्ण जानकारी विशेषज्ञों द्वारा जहां प्रदान की जायेगी । कार्यक्रम में सोनामुखी, सफेद मूसली, सागरगोटा, जेट्रोफा, सेमल मूसली, कौंच, मुश्कदाना, अश्वगंधा, जीवंती, कलिहारी, शंखपुष्पी, मुलैठी, मिल्क थिस्टल, गुलेनार, बेल, गुगल इत्यादि जड़ी बूटियों में से 10-15 जड़ी बूटियों के बारे में पूर्ण प्रशिक्षण दिया जाएगा । इसके साथ ही सरकारी अनुदान, वित्तीय सहायता हेतु प्रोजेक्ट रिपोर्ट बनाना, जैविक खेती एवं बहुस्तरीय खेती भी सिखाई जाएगी । हर वर्ष की भांति इस वर्ष भी उपरोक्त कार्यों हेतु एक दिवसीय अरहवासी प्रशिक्षण कार्यक्रम निम्न अनुसार रखे गए हैं । प्रशिक्षण प्राप्त कर आप स्वयं इसकी खेती शुरू करके लाभान्वित हो सकते हैं । पिछले वर्ष 35 प्रशिक्षण कार्यक्रम सफलता पूर्वक सम्पन्न हो चुके हैं । इस वर्ष के कार्यक्रम निम्न है-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्यक्रम संख्या	प्रशिक्षण दिनांक
19.	11 जनवरी 2004 रविवार
20.	25 जनवरी 2004 रविवार
21.	8 फरवरी 2004 रविवार
22.	7 मार्च 2004 रविवार
23.	14 मार्च 2004 रविवार
24.	21 मार्च 2004 रविवार
25.	28 मार्च 2004 रविवार
26.	4 अप्रैल 2004 रविवार
27.	11 अप्रैल 2004 रविवार
28.	18 अप्रैल 2004 रविवार
29.	25 अप्रैल 2004 रविवार
30.	2 मई 2004 रविवार
31.	9 मई 2004 रविवार
32.	16 मई 2004 रविवार
33.	23 मई 2004 रविवार
34.	30 मई 2004 रविवार
35.	6 जून 2004 रविवार
36.	13 जून 2004 रविवार
37.	20 जून 2004 रविवार
38.	27 जून 2004 रविवार

प्रशिक्षण स्थल :-सोनामुखी का लाटा, सोनामुखी नगर, सांगरिया फांटा, सालवास रोड, जोधपुर - 342 005 (राजस्थान)

फोन:- 0291-2748488, 2747931

फैक्स:- 0291-5120509

प्रशिक्षण शुल्क :- 600/- (छः सौ रुपये प्रति व्यक्ति)

पंजीकरण शुल्क बैंक ड्राफ्ट या मनीऑर्डर द्वारा 'राजस्थान एग्रो फोरेस्ट्री कॉपोरेशन' जोधपुर के नाम का निम्न पते पर भेजें ।

नोट :-

1. प्रत्येक पंजीकृत प्रशिक्षार्णी को 'जड़ी बूटियों की सरल खेती - सचित्र' (कीमत 500/-) निःशुल्क प्रदान की जायेंगी ।
2. दोपहर का भोजन निःशुल्क उपलब्ध होगा । रहवास की व्यवस्था आयोजक की नहीं होगी ।
3. सीमित सीटें ही उपलब्ध हैं । अतः शीघ्र पंजीकरण आवश्यक है । पत्र व्यवहार केवल डाक द्वारा ही करें । कोरियर सेवा से नहीं । पंजीकरण प्रशिक्षण दिनांक के 5 दिन पूर्व जरूर करावें ।
4. अधिक प्रशिक्षणार्थी होने पर अगले कार्यक्रम में समायोजित किये जायेंगे । प्रशिक्षणार्थी का पंजीकरण होने के बाद यदि वह अपना पंजीकरण कॅंसिल करना चाहे तो पचास प्रतिशत रकम वापस दी जाएगी ।
5. प्रशिक्षण कार्यक्रम में भाग लेने के इच्छुक (आयु, लिंग, शैक्षणिक योग्यता, निवास स्थान का बन्धन नहीं) शीघ्र पंजीकरण करावें ।
6. अपरिहार्य कारणों से कोई भी कार्यक्रम में बदलाव का अधिकार आयोजक को रहेगा ।
7. सोनामुखी नगर, सांगरिया फांटा आने के लिए 6 नं. सिटी बस, घण्टाघर, रेलवे स्टेशन, जालोरी गेट, रोटरी चौराहा होती हुई सोनामुखी नगर आती है ।
8. औषधीय पौधों से सम्बन्धित हिन्दी/अंग्रेजी की पुस्तकों की प्रदर्शनी प्रशिक्षण स्थल पर रहेगी जहां से आप पुस्तकों का चयन करके खरीद सकते हैं एवं औषधीय पौधों के उत्तम बीजों को भी खरीद सकते हैं ।

आयोजक -

राजस्थान एग्रो फारेस्ट्री कॉर्पोरेशन

सोनामुखी नगर, सांगरिया फांटा,
सालावास रोड, जोधपुर-342005
फोन - (0291)2748488, 2747931
फैक्स - (0291) 5120509
मार्गदर्शक - नारायणदास प्रजापति,
सदस्य, नेशनल मेडीसनल प्लान्ट्स बोर्ड,
भारत सरकार, नई दिल्ली

एन.आई.एम.ए. का प्राचीन अधिवेशन सम्पन्न

नेशनल इन्टीग्रेटेड मेडीकल एशोसियेशन, राजस्थान शाखा का प्रान्तीय अधिवेशन, अग्रवाल आदर्श प्राथमिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उच्च बालिका विद्यालय, श्रीगंगानगर में सम्पन्न हुआ । अधिवेशन के मुख्य अतिथि माननीय डा० कृपाल सिंह मल्होत्रा, चैयरमैन, बोर्ड ऑफ इण्डियन मेडिसन, राजस्थान तथा कार्यक्रम अध्यक्ष वैद्य वसन्त कुमार उपाध्याय, जिला आयुर्वेद अधिकारी श्रीगंगानगर रहे । अधिवेशन का शुभारम्भ मुख्य अतिथि द्वारा दीप प्रज्वलित कर तथा धन्वन्तरि चित्र पर माल्यार्पण के साथ हुआ । अग्रवाल आदर्श प्राथमिक उच्च बालिका विद्यालय बच्चों द्वारा स्वागत मान प्रस्तुत किया गया । अतिथियों का माल्यार्पण एवं स्मृति चिन्ह देकर स्वागत किया गया ।

अधिवेशन के मुख्य अतिथि माननीय डा० कृपाल सिंह मल्होत्रा, चैयरमैन, बोर्ड ऑफ इण्डियन मेडिसन, राजस्थान ने चिकित्सकों के रजिस्ट्रेशन सम्बन्धित जानकारी दी तथा अपने विचार व्यक्त करते हुए जनहित में इन्टीग्रेटेड चिकित्सा पद्धति के उपयोग की पुरजोर वकालत की तथा एन.आई.एम.ए. द्वारा इस दिशा में किये जा रहे प्रत्यनों की सराहना की । कार्यक्रम के अध्यक्ष, वैद्य बसन्त कुमार उपाध्याय ने आयुर्वेद जड़ी-बूटियों से निर्मित सौन्दर्य प्रसाधनों (हर्बल कास्मेस्टिक) की महत्ता एवं देश विदेश में इसके बढ़ते प्रचलन पर प्रकाश डाला । इससे पूर्व संगठन के प्रदेश अध्यक्ष डा० धर्मेन्द्र वर्मा ने माननीय अतिथियों का स्वागत किया तथा एन.आई.एम.ए. संगठन का परिचय देते हुए संगठन की मांगों से अवगत कराया ।

संगठन के प्रदेश महासचिव डा० विनोद अग्रवाल ने वार्षिक प्रतिवेदन प्रस्तुत करते हुये कहा कि गत वर्ष के उनके कार्यकाल में संगठन का तीव्र गति से विस्तार हुआ तथा एक नई शाखा सरदारशहर अस्तित्व में आई । डा० अग्रवाल ने आशा व्यक्त की कि संगठन का विस्तार आगामी वर्ष में अति तीव्र गति से होगा । साथ ही उन्होंने संगठन द्वारा किये गये कार्यों का विस्तार से विवरण प्रस्तुत किया । संगठन के प्रान्तीय कोषाध्यक्ष डा० रामनिवास लाम्बा ने वार्षिक आय-व्यय प्रस्तुत किया ।

5 घण्टे चले अधिवेशन के प्रथम सत्र का सफल संचालन डा० अशोक अरोड़ा ने किया । संगठन के द्वितीय सत्र की अध्यक्षता डा० वीरेन्द्र यादव, श्रीमाधोपुर ने की । द्वितीय सत्र में राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण में संगठन के योगदान की चर्चा की गई सदस्यों के समक्ष आ रही विभिन्न समस्याओं के सम्बन्ध में विस्तार से विचार विमर्श हुआ तथा निवारण के लिये समितियों का गठन किया गया । द्वितीय सत्र का सफल संचालन डा० दौलत राम सेन ने किया ।

प्रान्तीय कार्यकारिणी

अध्यक्ष - डा. धर्मेन्द्र वर्मा, हनुमानगढ़ ।

महासचिव - डा. विनोद अग्रवाल, सादुलपुर ।

संयुक्त सचिव - डा. रामानन्द शर्मा, चुरू ।

कोषाध्यक्ष - डा. रामनिवास लाम्बा, सादुलपुर ।

केन्द्रीय कार्यकारिणी सदस्य

डा. विनोद अग्रवाल, सादुलपुर, प्रान्तीय महासचिव ।

डा. अशोक अरोडा, श्री गंगानगर, निवर्तमान प्रन्तीय अध्यक्ष ।

डा. राजेश चुध, सचिव श्री गंगानगर शाखा

राज्य कार्यकारिणी सदस्य

डा. कमल वशिष्ठ, चुरु ।

डा. दौलतराम वर्मा, श्रीगंगानगर ।

डा. वीरेन्द्र यादव, श्रीमाधोपुर ।

डा. धर्मचन्द्र स्वामी, सरदारशहर ।

डा. आर.सी. जैन, निवई ।

बैद्यनाथ
त्रिफला चूर्ण
कब्ज, पांडु, कामला, शोथ, नेत्र विकार आदि को दूर करता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय अंग्रेजी का व्यामोह और आयुर्वेद

भाषा अभिव्यक्ति का माध्यम है । हम अपने विचार उस भाषा में अत्यन्त सहजता के साथ व्यक्त कर सकते हैं जिसका प्रयोग हम अपने घर, बाजार या बातचीत के क्रम में करते हैं । भाषा मनोविज्ञानी कहते हैं कि प्रातःकाल जब हम जागते हैं उस समय से लेकर निद्रा आने तक हमारे मन की क्रिया एक अविच्छिन्न धारा में बहती चलती है । विविध विचार उस धारा में तरंगों के समान हैं, उसी से उठते हैं और उसमें विलीन हो जाते हैं । विचार की प्रक्रिया का माध्यम भाषा है । पाणिनीय शिक्षा में कहा गया है -

आत्माबुद्ध्या समेत्यार्थान् मनोयुङ्क्ते विवक्षया ।
मनः कायाग्निमाहन्ति सः प्रेरयति मारूतम् ॥

स्पष्ट है कि भाषा और विचार का अटूट सम्बन्ध है । आशय यह है कि आयुर्वेद के अधिकांश विद्वान, प्राध्यापक एवं छात्र उस भाषा में अपने-अपने विचार ज्यादा सहज एवं सुगम ढंग से रख सकते हैं जिसका प्रयोग वे दिन-रात करते हैं । स्वाभाविक है कि यह गरिमामय स्थान हिन्दी भाषा को प्राप्त होता है । अंग्रेजी एक विदेशी भाषा है । इसमें हमारी गति अत्यन्त कम है । महात्मा गांधी जो अच्छी अंग्रेजी लिखते एवं बोलते थे, उनका भी मत था भारतीय विद्वान अंग्रेजी लिखने एवं बोलने में गलती करते हैं । लार्ड सच्चिदानन्द सिन्हा अंग्रेजी के अप्रतिम विद्वान थे । लेकिन उन्होंने भी स्वीकार किया है कि अंग्रेजी बोलने में उनसे गलती हो जाती है । दुर्भाग्य है कि आयुर्वेद के अधिकांश विद्वान हीनभावना के शिकार है । अंग्रेजी में बोलने या लेख लिखने में वे श्रेष्ठता का अनुभव करते हैं । राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय अधिवेशनों में भी जिस अंग्रेजी का प्रयोग करते हैं, वह भाषा के साथ अन्याय है । यहां तक कि अधिकांश विद्वान सही-सही हिज्जे भी नहीं लिख सकते हैं । भाषागत अनेक भूलें होती हैं । इस सबके बावजूद वे अंग्रेजी भाषा में अपने विचार प्रकट करके अपने को गौरवान्वित महसूस करते हैं ।

विदित है कि आयुर्वेद का आधार संस्कृत भाषा है । आयुर्वेद विज्ञानी ग्रन्थ में प्रयुक्त एक-एक शब्द पर चिन्तन करते हैं एवं महर्षियों के भाव को समझने का प्रयास करते हैं । आज बहुसंख्यक छात्र समुदाय संस्कृत भाषा में गति नहीं रखते हैं । परिणामतः आयुर्वेद की मूल भावना को समझने में वे असमर्थ होते हैं । हिन्दी या अपनी क्षेत्रीय भाषा में वे अपने विचार ज्यादा सहज ढंग से रख सकते हैं, किन्तु अंग्रेजी का अल्प ज्ञान होते हुए भी वे इसी भाषा में अपने विचार प्रकट करना चाहते हैं । हमें अंग्रेजी से कोई शत्रुता नहीं है । हमारा केवल इतना ही आग्रह है कि यदि अंग्रेजी अभिजात्य भाषा हो सकती है, तो कुछ लोगों के लिए । आयुर्वेद के उत्थान के लिए हमें अंग्रेजी का व्यामोह तोड़ना होगा, अन्यथा इसके जाल में हम फंसते जायेंगे । आयुर्वेद के विद्वानों से हमारा केवल इतना ही अनुरोध है कि हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत या अन्य कोई भाषा जिसमें उन्हें गति प्राप्त है, उसमें ही अपने विचार रखें तो आयुर्वेद का भला तो होगा ही, साथ ही सम्बन्धित भाषा के साथ भी न्याय होगा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारावाहिक

आयुर्वेद का इतिहास–53

[1]पं० बनवारी लाल शर्मा
[2]विमल चन्द्र झा

काङ्कायन

पं० हेमराज शर्मा[1] के अनुसार "यदि सुश्रुत के व्याख्याकार के लेख को मूल रूप में माना जाय तो उसमें काङ्कायन का सुश्रुत के सतीर्थ्य (सहपाठी) के रूप में उल्लेख होने से 'बाह्लीकभिषजां वरः' द्वारा निर्दिष्ट काङ्कायन में भी वैद्यक विज्ञान का स्रोत भारतीय ही प्रतीत होता है।" आचार्य प्रियव्रतजी[2] ने चन्द्रट के आधार पर जिन आचार्यों को उद्धृत किया है, उनमें से कांकायन भी एक थे। डा० ज्योतिर्मित्र[3] के अनुसार काक्कायन एवं कांकायन एक ही व्यक्तित्व के स्वामी हैं। श्री मुखोपाध्याय[4] ने कांकायन के बारे में सम्भावना प्रकट की है कि वे सम्भवतः अरब के कंकाह या कटक थे। उनका नाम अथर्वपरिशिष्ट के शिक्षकों में भी पाया जाता है। उन्होंने बॉवर, गदनिग्रह, शारंगधर आदि ग्रन्थों के आधार पर कांकायन विरेचन, कांकायन गोदक, कांकायन गुटिका आदि योगों का विस्तार से वर्णन किया है। चरक संहिता में कांकायन का न केवल एक जगह जिक्र है, बल्कि कई स्थानों पर आक्रामक रूप में विचार विमर्श में भाग लेते हुए दिखलाया गया है। इससे प्रमाणित होता है कि प्रख्यात् आयुर्वेदिक विद्वान थे। इससे यह भी प्रमाणित होता है कि वे भरद्वाज, भिक्षु आत्रेय, अग्निवेश आदि विद्वानों के समकालीन थे।

गालव

पौराणिक कोश[5] में गालव का निम्न वर्णन है – (1) पुराणों में इस नाम के अनेक व्यक्ति मिलते हैं, परन्तु महाभारत के अनुसार विश्वामित्र के शिष्य हठी गालव प्रसिद्ध हैं। परीक्षा लेने के लिए धर्मराज ने वशिष्ठ का रूप धारण कर विश्वामित्र को 100 वर्षों तक एक ही स्थान पर हाथ में भोजन का थाल ले खड़ा रहने की आज्ञा दी थी। सेवा से प्रसन्न हो विश्वामित्र ने इन्हें पूर्ण विद्वान् होने का आशीर्वाद दिया। इनके हठ करने पर विश्वामित्र ने 800 श्यामकर्ण घोड़े गुरूदक्षिणा में मांगे। इन्होंने रा ययाति की कन्या माधवी की सहायता से यह गुरूदक्षि (800 श्यामकर्ण घोड़े) दी थी। गालव ने माधवी पहले अयोध्यापति हर्यश्व को दिया जिन्होंने माधवी एक पुत्र उत्पन्न कर 200 घोड़े दिये। काशीराज दिवो और भोजराज उशीनर ने भी इसी प्रकार माधवी से उत्पन्न कर प्रत्येक ने गालव को दो-दो सौ घोड़े दि अन्त में 600 श्यामकर्ण घोड़ों सहित गालव ने माधवी विश्वामित्र को अर्पित किया। माधवी के गर्भ से विश्वामि को अष्टक नामक पुत्र हुआ जिसे अपना सर्वस्व विश्वामित्र तपस्या करने चले गये। माधवी राजा य को लौटा ही गयी और गालव भी तप करने वन को गये थे। (2) हरिवंश में इन्हें विश्वामित्रजी का पुत्र लि है। इन्हें गले में बांध 100 गौपर बेचने माता ले गये सत्यव्रत ने माता और पुत्र दोनों के भोजन का भार उठा था (वायु०100.10; ब्रह्मां 3.63.89; वायु० 88.90)। (3) संस्कृत व्याकरण के एक आचार्य। (4) आठ सावर्णि मन्वंतर के एक ऋषि। यह भार्गव गोत्रकार तथा प्रवर प्रवर्तक ऋषि थे (भाग० 8.13.15; ब्रह्मां० 3.66.7 4.1.10; मत्स्य० 9.32; 195.22; 196.31; विष्णु 3. 17)। (5) एक ऋषि जो श्री कृष्ण से मिलने स्यमंतपंच गये थे (भाग० 10.84.4)। (6) एक वाजसनेयी तथा शुक्ल यजुर्वेदी – याज्ञवल्क्य के शिष्यों में से एक (बृहद् 61.25)।

वैदिक कोश[6] में गालव का अर्थ है - वृद्ध आचार्यों की प्रथम दो वंश-सूचियों 2.5.22; 4.5.28 – 2.6.3; 4.6.3 काण्व में विदर्भी कौडिन्य के एक शि का नाम गालव है। ऐआ 5.3.2 में भी संभवतः उन्हीं उल्लेख है। इसका यज्ञविधि के प्रसंग में उल्लेख गया है। निरूक्त 4.3 में इस नाम के एक वैयाकरण उल्लेख है। तु०-पाणिनी, 6.3.61; 7.1.74; 7.3.99;

1. प्रबन्ध निदेशक, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि०, 2 सम्पादक, सचित्र आयुर्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(67)। श्री मूलर[7] ने गालव का नाम वैयाकरणों की सूची में रखी है। शतपथ ब्राह्मण में जिन शिक्षकों की चर्चा है, उनकी चर्चा इन्होंने[8] अपनी पुस्तक में की है। उन शिक्षकों में से एक गालव भी हैं। हिन्दी कोश[9] में गालव का अर्थ है - एक ऋषि जो विश्वामित्र के शिष्य थे; पाणिनि के पूर्ववर्ती एक वैयाकरण; लोध्र; तेन्दू, गलव ऋषि के पुत्र। संस्कृत कोश[10] के अनुसार गालव का अर्थ है - लोध्रवृक्ष, जवासा का एक प्रकार, एक ऋषि, विश्वामित्र का एक शिष्य, हरिवंश पुराण के अनुसार विश्वामित्र का पुत्र। एक अन्य कोश[11] में भी लगभग यही अर्थ है। एक अतिरिक्त अर्थ है - पाणिनि के पूर्ववर्त्ती एक वैयाकरण। स्कन्द पुराण, गरूड़ पुराण और मार्कण्डेय पुराण के अनुसार धन्वन्तरि त्रेता युग में पैदा हुए थे। विदित है कि धन्वन्तरि का जन्म गालव के वरदान स्वरूप हुआ था। कहानी इस प्रकार है - एक बार कुश घास खोजने के चक्कर में गालव वन गये। घास खोजते-खोजते वे काफी थक गये। उन्हें प्यास लगी, किन्तु आस-पास जल नहीं था। उन्हें एक सुन्दरी जल से परिपूर्ण कलश लेते हुए दिखायी पड़ी। उन्होंने सुन्दरी से जल पिलाने का आग्रह किया। उन्हें जल दिया गया और वे संतुष्ट एवं प्रसन्न हुए। उन्होंने प्रसन्न होकर सुन्दरी को आशीर्वाद दिया किया कि "तुम योग्य पुत्र की मां बनो" सुन्दरी ने उत्तर दिया कि वे कुंवारी हैं। जाति से वैश्य है और उनका नाम वीरभद्र है। उत्तर सुनने के उपरान्त गालव उसे मुनियों के पास ले गये। मुनियों ने वरदान दिया कि इस कन्या से धन्वन्तरि पैदा हो। इसके पश्चात् मुनियों ने कुश की एक प्रतिमा बनायी और उसे वीरभद्र के आंचल पर फेंक दी। ऋषियों ने वेद मंत्रों के द्वारा उसमें प्राण प्रतिष्ठा स्थापित की। वे एक सुन्दर युवक बन गये। चूंकि उनका जन्म वेद मंत्रों से हुआ था, इसलिए वे वैद्य कहलाये। स्कन्द पुराण में भी लगभग यही कहानी है। अन्तर केवल इतना है कि वीरभद्र के पिता ने गालव के समक्ष वीरभद्र से विवाह का प्रस्ताव रखा। गालव ने विवाह से तो इंकार कर दिया, किन्तु पुत्र के रूप में धन्वन्तरि दिया। श्री मुखोपाध्यायजी[12] ने भी इसका विस्तृत विवरण दिया है। एक जगह[13] ऋषि गालव को भी विश्वामित्र का पुत्र बताया गया है। माकण्डेय पुराण में कई स्थलों पर गालव को जाति से ब्राह्मण बताया गया है। अब प्रश्न उपस्थित होता है कि विश्वामित्र जाति से क्षत्रिय थे और तप से उन्होंने ब्रह्मर्षि की उपाधि प्राप्त की थी। यदि ब्रह्मर्षि से उत्पन्न पुत्र को ब्राह्मण मान लिया जाय तो गालव ब्राह्मण माने जा सकते हैं। अन्यथा इसमें विरोधाभास का भान होता है। हिन्दी विश्वकोश[14] में गालव के सम्बन्ध में इस प्रकार वर्णन है - विश्वामित्र के शिष्य, एक प्रसिद्ध ऋषि। हरिवंश पुराण में इन्हें विश्वामित्र का पुत्र कहा गया है। गालव का हठ प्रसिद्ध है। विद्याध्ययन के बाद इन्होंने अपने गुरु विश्वामित्र से गुरूदक्षिणा मांगने का बहुत हठ किया। चिढ़कर विश्वामित्र ने 800 श्यामकर्ण घोड़े मांगे। गालव ने बहुत प्रयत्न किया, किन्तु असफल रहे। अन्त में इन्होंने विष्णु की आराधना की और उनकी कृपा से ययाति ने अपनी पुत्री, माधवी इन्हें इस कार्य में सहायता के लिए दी। गालव माधवी को लेकर क्रमशः हरीश्व, दिवोदास और उशीनर के पास गये जिन्होंने बारी-बारी से माधवी से विवाह करके एक-एक पुत्र प्राप्त किया। इस प्रकार 600 घोड़े तो मिल गये। शेष की प्राप्ति असंभव जान गालव ने उसके बदले माधवी को ही विश्वामित्र को समर्पित कर गुरूदक्षिणा पूरी की। विश्वामित्र को भी माधवी से एक पुत्र प्राप्त हुआ। उसके बाद उन्होंने माधवी को लौटा दिया जिसे गालव ययाति को दे आए। माधवी को चिरकुमारी रहने का वरदान प्राप्त था। बाद में गालव जंगल में तपस्या करने चले गये। इन कहानियों से गालव का अस्तित्व तो ज्ञात होता है, किन्तु वे आयुर्वेदज्ञ थे - इस पर प्रकाश नहीं पड़ता है। वैदिक वाङ्मय का इतिहास[15] में गालव के सम्बन्ध में निम्न वर्णन है -

ऋग्वेद की पांच शाकल शाखाएं हैं। उनमें गालव की एक शाखा है। इस शाखा की संहिता अभी तक अप्राप्त है। इस शाखा के ब्राह्मण तथा सूत्र अभी तक नहीं मिले हैं। यह गालव पाञ्चाल अथवा पञ्चाल देश निवासी था। इसी का दूसरा नाम बाभ्रव्य था। प्रपञ्च हृदय में बाभ्रव्य शाखा का नाम मिलता है। कामसूत्र में इसी को बाभ्रव्य पाञ्चाल कहा है। यथा ..... **सप्तभिरधि**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करणै बाभ्रव्यः पाञ्चालः संचिक्षेप । इसी ने ऋग्वेद का क्रम पाठ बनाया था । इसी का उल्लेख ऋक्प्रातिशाख्य, निरूक्त, बृहद्देवता और अष्टाध्यायी आदि में मिलता है । महाभाष्य में पतञ्जलि लिखता है - **आचार्य देशशीलनेन यदुच्यते तस्य तद्विषयता प्राप्तनेति । इको ह्रस्वोऽङ्यो गालवस्य । प्राचागवृद्धात् फिन्वहुलम् इति गालवा एव ह्रस्वान् प्रभुञ्जीरन् पाक्षु चैव हि फिन् स्यात् । तद्यथा जमदग्निर्वा एतत् पञ्चममवदानमवाद्यत् तस्मान्नाजामदग्न्यः पञ्चावत्तं जुहोति ।** पतञ्जलि ने इस लेख से गालव के एक विशेष नियम का परिचय दिया है । इससे इनके ब्राह्मण के अस्तित्व का ज्ञान होता है । प्रस्तुत उद्धरण से भी गालव के आयुर्वेदज्ञ होने का परिचय नहीं मिलता है । शतपथ ब्राह्मण में जिन शिक्षकों की चर्चा की गयी है, उनमें से एक गालव की भी थे । ये मधुकाण्ड के शिक्षक थे । कविराज सूरमचन्द्र जी[16] ने गालव के सम्बन्ध में निम्न चर्चा की है -

1. हरिशास्त्रीजी पराडकर ने अष्टांगहृदय की भूमिका पृ० 17 पर गालव के शालाक्य तंत्र का उल्लेख किया है, परन्तु डल्हण द्वारा उद्धृत अन्य आचार्यों के मतानुसार गालव भी शल्य तंत्र में धन्वन्तरि का शिष्य था । फलतः यह विचारणीय है कि निमि के साथी गालव का शालाक्य तंत्र था अथवा शल्य तंत्र अथवा दोनों तंत्र ।
2. वे चरक संहिता में वर्णित 51 ऋषियों के समकालीन थे ।
3. शालिहोत्र के वचनानुसार गालव सर्वलोक चिकित्सक तथा आयुर्वेद कर्त्ता था ।
4. शैशिर-शिक्षा के प्रारम्भ में गालव को शौनक का शिष्य तथा शाखा-प्रवर्त्तक कहा है ।
5. गालव-प्रोक्त कोई ब्राह्मण ग्रन्थ भी था ।
6. महाभारत शान्तिपर्व 342/103 के अनुसार पाञ्चाल ब्राभ्रव्य गालव ऋग्वेद के क्रमपाठ का प्रवक्ता था ।
7. महाभारत शान्तिपर्व 342/104 के अनुसार गालव ने शिक्षा का प्रणयन किया था।
8. यास्क ने निरूक्त 4/3 में गालव का निर्वचन-विषयक एक पाठ उद्धृत किया है । इससे ज्ञात होता है कि गालव ने कोई निरूक्त रचा था ।
9. बृहद्देवता 1/24 में गालव को पुराण कवि कहा है । इससे आगे 5/39, 6/43 और 7/38 में ऋचाओं के देवता विषयक गालव के मतों का उल्लेख है ।
10. गालव-रचित व्याकरण भी था ।

ऐसा देखा जाता है कि आयुर्वेद के जिन महर्षियों की चर्चा आयुर्वेदिक ग्रन्थों में है, उसकी चर्चा अन्य विषयों के ग्रन्थों में भी है । यह सम्भव है कि प्राचीन काल के महर्षियों को अन्य विषयों का भी ज्ञान हो । इसलिए चर्चा अन्य विषयों के रूप में की गयी हो । ऐसे सैकड़ों उदाहरण हैं जिसमें गुरू अपने शिष्यों को दर्शन, युद्ध नीति, धनुर्विद्या, राजनीति सहित समग्र विषयों की शिक्षा देते थे । इस दृष्टि से गालव की गति अन्य विषयों के साथ आयुर्वेद में भी हो, तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी । जो भी हो, गालव एक आयुर्वेदज्ञ थे एवं चरक से पूर्व थे - इसमें कोई शक नहीं ।

बडिश

चरक संहिता में बडिश के बारे में कई जगह चर्चा है । सूत्र स्थान[17] के प्रथम अध्याय में ही बडिश का जिक्र उन महर्षियों के साथ है, जो हिमालय पर्वत के समीप सुरम्य प्रदेश में एकत्रित हुए थे । ये महर्षि रोग-शान्ति के लिए विचार-विमर्श करने हेतु एकत्र हुए थे । चैत्ररथ वन[18] में एकत्रित महर्षियों में भी इनकी चर्चा है । विचार-विमर्श का उद्देश्य "आहार-रस, वीर्य विपाक तथा प्रभाव द्वारा कर्म करता है", पर चिन्तन करना था । विचार-विमर्श में भाग लेते हुए उन्होंने[19] कहा - रस छः हैं - मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त, कषाय, क्षार तथा अव्यक्त रस । यहां बडिश धामार्गव का प्रयोग किया गया है । वस्तुतः बडिश और बडिश धामार्गव एक ही व्यक्ति हैं । वायु के प्रकोपण एवं प्रशमन के सम्बन्ध में बडिश ने व्याख्या भी कि वात को कुपित करने वाले द्रव्य रूक्ष कर्म शरीरों को निश्चय से ही रूक्ष, लघु, शीतल, खर (शोषक होने से कठिन अर्थात् यहां कृश करना), खर विशद (जो पिच्छिल चिपचिपा न हो), शुषिर (छि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर देते हैं । रूक्ष आदि गुणयुक्त शरीरों में वायु आश्रय पाकर वृद्धि को प्राप्त होता हुआ प्रकुपित हो जाता है । वायु को शान्त करने वाले द्रव्य तथा कर्म शरीरों में विचार करता हुआ आश्रय को न पाकर वायु शान्त हो जाती है । आश्रय से अभिप्राय समानगुण युक्त स्थान से है । इसी तरह चरक संहिता[21] में गर्भाशय में कौन-सा अंग सबसे पहले उत्पन्न होता है - इसका निर्देश है । बहस में भाग लेते हुए बडिश ने कहा कि हाथ, पैर सबसे पूर्व उत्पन्न होते हैं, क्योंकि वह उसका कारण है जिसके द्वारा वह चेष्टा करता है ।

इस तरह चरक संहिता के आधार पर निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि बडिश आयुर्वेद के विद्वान थे । जहां तक उनके काल का प्रश्न है, उनका काल आचार्य चरक के पूर्व एवं भगवान अग्निवेश, आत्रेय आदि महर्षियों के समकालीन था ।

जमदग्नि

पौराणिक कोश[22] में जमदग्नि के बारे में वर्णन है - (1) वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक ऋषि । ये सत्यवती तथा ऋचीक के पुत्र एक प्राचीन गोत्रकार (भार्गव) (मत्स्य० 195.15, 29) ऋषि थे । यह वैष्णवाग्नि लेने से उत्पन्न हुए थे (भाग० 8.13,5; ब्रह्मां०2.32.105; 38.27; मत्स्य० 9.28; 126.21; वायु० 32.46; 65.93; 91.67; 87.86; विष्णु० 4.7.32-6) । इनकी गिनती सप्तर्षियों में होती है (भाग० 9, अध्याय 15 और 16) । महाभारत, हरिवंश और विष्णु पुराण में इनका उल्लेख मिलता है । ऋचीक ने अपनी पत्नी सत्यवती (राजा गाधि की पुत्री) तथा उनकी माता के लिए भिन्न-भिन्न गुणवाले दो चरू तैयार किये थे । तदनंतर चरू बदल गये और सत्यवती का चरू उसकी माता खा गयी और मातावाला चरू सत्यवती को मिला । अत: समय पाकर सत्यवती के गर्भ से जमदग्नि और उसकी माता के गर्भ से विश्वामित्र हुए । (2) एक मंत्रकृत् तथा ऋषि (वायु० 59.96) । फाल्गुन, फाल्गुन सूर्य के साथ (वायु० 52.20; विष्णु०2.10. 16; 3.1.32) । (3) भृगु गोत्र का (उरू का पुत्र) वायु० 64.25; जमदग्नि भार्गव जो सप्तर्षियों में से एक थे (वायु० 100.10) ।

जमदग्नि का विवाह राजा प्रसेनजित् की कन्या रेणुका से हुआ जिसके गर्भ से रूमण्वान्, सुषेण, बहु, विश्वबाहु और परशुराम उत्पन्न हुए थे (भाग० 9.15. 11-13; वायु० 91.86); पर वायु पुराणानुसार रेणुका का दूसरा नाम कामली था जो सुवेणु (इक्ष्वाकु) की पुत्री थी । विष्णु पुराणानुसार हैह्य के राजा कार्त्तवीर्य एक बार इनकी गौ चुरा ले गये थे और इससे परशुराम ने कार्त्तवीर्य के हजार हाथ काट डाले थे । जब यह कार्त्तवीर्य के पुत्रों को मालूम हुआ तब उनलोगों ने आश्रम पर आकर रेणुका के सामने ही जमदग्नि को मार डाला - दे० परशुराम, रेणुका । हरिश्चन्द्र के यज्ञ में यह ब्रह्मा के स्थान पर थे (भाग० 9. 7.23)। यह एक मंत्रकृत थे (ब्रह्मां० 3.21.1; मत्स्य० 145.99)

(निरन्तर जारी)

संदर्भ :-

1. काश्यप संहिता - नेपालराजगुरू पं० हेमराज शर्मा-चौखम्बा संस्कृत सीरिज, बनारस ।
2. आयुर्वेद का वैज्ञानिक इतिहास - आचार्य प्रियव्रत शर्मा, चौखम्बा ओरियन्टालिया, वाराणसी ।
3. History of Indian Medicine from Pre-Mauryan to Kusana Period - Dr. Jyotirmitra - The Jyotirlok Prakashan, Varanasi.
4. History of Indian Medicine - Girindranath Mukhopadhayaya, Vol.II - University of Calcutta.
5. पौराणिक कोश, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी ।
6. वैदिक कोश - सूर्यकान्त ।
7. A history of Ancient Sanskrit Literature - F. Max Muller - The Chowkhamba Sanskrit Series Office, Varanasi.
8. Do .
9. बृहत् हिन्दी कोश - ज्ञानमण्डल लिमिटेड, बनारस ।
10. The Student's Sanskrit - English Dictionary - Vaman Shivram Apte - Motilal Banarasidass.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

11. संस्कृत-शब्दार्थ - कौस्तुभ - राम नारायण - इलाहाबाद ।
12. See S.No. 4 ।
13. The Markandeya Purana - F. Eden Pargiter, B.A. - The Asiatic Society, Calcutta.
14. हिन्दी विश्वकोश - नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी ।
15. वैदिक वाङ्मय का इतिहास - स्व० पं० भगवद्यत प्रणव प्रकाशन, नयीदिल्ली ।
16. आयुर्वेद का इतिहास - कविराज सुरमचन्द्र ।
17. बडिशः शरलोमा च काप्यकात्यायनाबुभौ ।
च०सू० 1/11 ।
18. निमिश्च राजा वेदैहो बडिश्च महामतिः ।
च०सू० 26/4
19. अष्टौ रसा इति बडिशो धामार्गवो मधुराम्ल लवणकटु तिक्त कषाय क्षारा व्यक्ताः ।
च०सू० 2/6/14
20. तच्छ्रुत्वा वाक्यं बडिशो धामार्गव उवाच - एवमेतद्यथा भगवानाह; एतान्येव वातप्रकोप प्रशमनानि भवन्ति, यथा ह्येनमसङ्घातमनवस्थितमनासाद्य प्रकोपणप्रशमनानि प्रकोपयन्ति प्रशमयन्ति वा, तथाऽनु-व्याख्यासामः - वात प्रकोपणानि खलु रूक्षलघुशीत दारूणखर विशदशुषिरकराणि शरीराणां, तथाविधेषु शरीरेषु वायुराश्रयं गत्वाऽऽव्याप्य भृशं प्रकोपमापद्यते, वात प्रशमनानि पुनः स्निग्ध गुरूष्णश्लक्ष्णमृदुपिच्छिल धनकराणि शरीराणां, तथाविधेषु शरीरेषु वायुरराज्यमानश्चरन् प्रशान्तिमापद्यते ।
च०सू० 12/6
21. तदेवमुक्तवन्तमग्निवेशं भगवान् पुनर्वसुरात्रेय उवाच - पूर्वमुक्तमेतद् गर्भावक्रान्तौ यथाऽयमभिनिर्वर्त्तते कुक्षौ, यच्चास्य यदा संतिष्ठतेऽङ्गजात्.....मारूत्ताधिष्ठानत्वात्; हस्तपादमिति बडिशः;..... तस्माद्यथामूतदर्शनं साधु ।
च०सू० 6/20
22. देखे क्र०सं० 5 ।

बैद्यनाथ
मधुमेहारि
योग दाने
मधुमेह (डायबिटीज) व
उससे उत्पन्न विकारों में लाभदायक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बर्ड फ्लू

डॉ० गोविन्द शुक्ला, एम.डी. (आयु.), डॉ० रमेश सिंह, एम.डी. (आयु.)
डॉ० प्रेम चन्द मंगल, एम.डी.(आयु.) पीएच.डी., अध्येता,

सामान्य रूप से बर्ड फ्लू के नाम से जाने वाली बीमारी को एविन एन्फ्लुएंजा के नाम से जाना जाता है। इस बीमारी का वर्ष 2004 में सबसे पहला शिकार बनने वाला देश थाइलैण्ड है हालांकि सबसे पहले चीन ने मनुष्यों में इसकी पहचान की थी। एशिया महाद्वीप में वियतनाम के 6 लोग तथा थाइलैण्ड के 2 लोग इस बीमारी से जनवरी 2004 में जान गवाँ चुके हैं। इस प्रकार यह रोग पहले भी तीन बार सन् 1918-1919, 1957-1958 तथा 1968 से 1969 में महामारी का रूप धारण का चुका है।

इस प्रकार बर्ड फ्लू की बीमारी मनुष्यों में एन्फ्लुएंजा की महामारी का सबब बन सकती है हालांकि भारत के लिए यह बीमारी बिल्कुल नई हो सकती है लेकिन पड़ोसी मुल्कों जैसे - चीन, पाकिस्तान, जापान, दक्षिण कोरिया इत्यादि देशों में अपना रंग दिखा चुकी है। इसलिए आम लोगों को इससे सावधान रहने की आवश्यकता है।

कारण :- बर्ड फ्लू या एविन एन्फ्लुएंजा पक्षियों में होने वाला संक्रामक रोग है। यह रोग एन्फ्लुएंजा "ए" प्रकार के विषाणु से उत्पन्न होता है। सभी पक्षियों के इस रोग के विषाणुओं से संक्रमित होने का खतरा रहता है परन्तु मुर्गी पालन फार्मों में पाली जाने वाली मुर्गियों में यह रोग महामारी (Epidemic) के रूप में अधिक फैलता है।

रोग फैलने का तरीका :-

1. एविन एन्फ्लुएंजा के विषाणु अत्यन्त संक्रमणशील होने के कारण एक मुर्गी फार्म से दूसरे फार्म तक आसानी से पहुँचते हैं।
2. संक्रमित उपकरणों के द्वारा भी इन विषाणुओं का स्थानान्तरण शीघ्र होता है।
3. माल ढोने वाली गाड़ियों के द्वारा भी संक्रमण हो सकता है।
4. कपड़ों के जरिए भी इसका संक्रमण फैलता है।
5. यह विषाणु चिड़ियों की बीट द्वारा भी फैलता है।
6. संक्रमित पक्षी से प्रत्यक्ष सम्पर्क द्वारा भी फैलता है।
7. संक्रमित खून से मनुष्यों में फैल सकता है।
8. मुर्गियों के सम्पर्क में रहने वाले, उनका पालन करने वालों को यह रोग हो सकता है।
9. मुर्गियों को बेचने वालों को यह रोग हो सकता है।
10. मुर्गी पकाने वाले को भी यह रोग शीघ्र ही संक्रमित कर सकता है।

लक्षण :- इसके लक्षण सामान्यतया जुकाम से मिलते हैं-

1. सिर दर्द (Headache)
2. तेज बुखार (Hyperpyrexia)
3. तेज बदन दर्द (Severe bodyache)
4. जुकाम (Coryza)
5. नासा से पानी आना (Running nose)

उपरोक्त लक्षण चिकित्सकों के देखने के अनुसार मिलते हैं।

बचाव :-

1. रोग फैलाने के तरीकों पर नियंत्रण करना।
2. उष्ण जल का प्रयोग करना।
3. मास्क का प्रयोग करना।
4. जहाँ आप रहते हैं, उस स्थान को विसंक्रमित करवाना।
5. व्यवसाय में जो भी उपकरण काम में लिये जायें उनका विसंक्रमण होने पर ही प्रयोग करना।

चिकित्सा :- आयुर्वेद के द्वारा निम्न व्यवस्थापत्र एवं औषधियों के द्वारा इस रोग को ठीक किया जा सकता है :-

प्राध्यापक, श्री बाबा मस्तनाथ आयुर्वेद महाविद्यालय, रोहतक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रथम व्यवस्थापत्र

प्रातः

1. हिंगुलेश्वर रस - 250 मि.ग्रा.
   गोदन्ती भस्म - 500 मि.ग्रा.
   श्रृंग भस्म - 500 मि.ग्रा.
   गिलोय सत्व - 500 मि.ग्रा.
   आर्द्रक स्वरस से (1 x 2)

सायं

2. सुदर्शन चूर्ण - 3 ग्राम
   गर्म जल से (1 x 2)

द्वितीय व्यवस्थापत्र

1. त्रिभुवन कीर्ति रस - 125 मि.ग्रा.
   टंकण भस्म - 500 मि.ग्रा.
   गिलोय सत्व - 250 मि.ग्रा.
   श्रृंग भस्म - 250 मि.ग्रा.
   सितोपलादि चूर्ण - 1 ग्राम
   शहद से (1 x 2)
2. गोजिह्वादि क्वाथ - 20 मि.ली.
   (1 x 2)

इनके अलावा मुस्तक (मोथा), पित्त पापड़ा, खस (उशीर) चन्दन, सुगन्धबाला, सोंठ से पकाये जल का प्रयोग तथा तुलसी, आर्द्रक, काली मिर्च, पिप्पलीमूल, सोंठ, गुड़ का प्रयोग चिकित्सक की सलाह के अनसार किया जा सकता है ।

खिलते यौवन के निशान भला चेहरे पर आए क्यों कर ?

यौवन के साथ-साथ मुहासों का आना भी स्वाभाविक है, पर इनके इलाज के लिए क्रीम आदि से भी पूरी बात नहीं बनती । यह त्वचा की सतह पर ही काम करती है, समस्या की जड़ तक नहीं पहुंच पाती और इसके कारण कभी-कभी रह जाते हैं भद्दे निशान। बैद्यनाथ सुरक्ता रक्त साफ कर, त्वचा में निखार लाती है और आपके चेहरे की दमक बन जाती है खिलते यौवन की निशानी ।

बैद्यनाथ

सुरक्ता

हर्बल रक्त शोधक

सुन्दर त्वचा भीतर से निखरे

कील मुहांसों के लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थायरॉइड ग्रंथि और उसके शारीरिक प्रभाव

1. डॉ० महेन्द्र सिंह मीना
2. प्रमोद मिश्र

मानव शरीर में अनेक तंत्र (System) अपने-अपने कार्यों को करते हुये इस शरीर के स्वास्थ्य का संपादन करते हैं। शरीर की सामान्य क्रियाओं के सुचारु रूप से चलते रहने के लिए इन अलग-अलग तंत्रों के मध्य आपस में सामंजस्य बना रहना आवश्यक है और यह कार्य तंत्रिका तंत्र और अंत:स्रावीतंत्र के द्वारा सम्पन्न होता है।

अंत:स्रावी ग्रंथियों के द्वारा जो स्राव निकलता है उसे हारमोन कहा जाता है। यह स्राव सीधे रक्त में मिलकर रक्त के द्वारा अपने कार्य स्थल में पहुंचता है। अंत:स्रावी ग्रंथियों के बिना शरीर में धातु साम्य की स्थिति नहीं रह सकती है। ये ग्रंथियां केवल शारीरिक ही नहीं वरन् मानसिक स्वास्थ्य के लिए भी जिम्मेदार हैं। आयुर्वेद में स्वस्थ की जो परिभाषा सुश्रुत संहिता में वर्णित है वह इस प्रकार है -

समदोषः समाग्निश्च सम धातु मल क्रियः।
प्रसन्नात्मेन्द्रिय मनाः स्वस्थ इत्यभिधियते॥

इस स्वास्थ्य की स्थिति में अग्नि की जो भूमिका है उसी का कुछ अंशों में साम्य अंत: स्रावी ग्रंथियों के कार्यों से किया जा सकता है। वर्तमान समय में अन्त:स्रावी ग्रंथियों के विकार बहुत अधिक देखे जा रहे हैं व आधुनिक चिकित्सा में इन ग्रंथियों में स्राव (हारमोन) का चिकित्सीय प्रयोग बढ़ता जा रहा है। इस निबन्ध के माध्यम से इन अंत:स्रावी ग्रंन्थियों में से थॉयरायड (अवटुका ग्रंथि) के शारीरिक प्रभाव पर कुछ प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है। थायराइड ग्रंथि का आधुनिक विज्ञान के अनुसार वर्णन इस प्रकार है -

थायराइड ग्रंथि गर्दन में स्वरयन्त्र (Larynx) और श्वासनली (Trachea) के बीच में स्थित रहती है। यह लाल भूरे वर्ण की ग्रंथि है जिसका भार सामान्यत: 20 से 25 ग्राम होता है। इस भार में उम्र, लिंग आदि के कारण कुछ परिवर्तन मिल सकता है। इसकी भीतरी रचना छोटे-छोटे पुटकों (Follicles) से निर्मित होती है। इन पुटकों की भित्ती में स्रावी (Secretory) कोशिकाएं होती हैं।

थाइराइड के कार्य :-

थाठराइड ग्रंथि से तीन प्रकार के हारमोन स्रावित होते हैं :-

1. थायरोक्सिन (Thyroxine) : यह हारमोन T_4 के नाम से भी जाना जाता है। थायरॉइड से स्रावित होने वाले हारमोन में 90% यही होता है।

2. ट्राइआइडोथायरोनिन (Tri-iodothyronine) :- यह हारमोन इस ग्रंथि को 10% से भी कम मात्रा में स्रावित करता है। इसे T_3 भी कहा जाता है।

3. कैल्सीटोनिन (Calcitonin) :- इसे थायरोंकैलसीटोनिन भी कहा जाता है। यह हारमोन कैल्शियम के चयापचय में महत्वपूर्ण कार्य करता है।

थायरोक्सिन एवं ट्राइआडोयायरोनिन को संयुक्त रूप से थाइरोइड हारमोन कहते हैं। इन दोनों हारमोन की उत्पत्ति को अग्रपियूषिका ग्रंथि का हारमोन TSH प्रभावित करता है।

आयोडिन और थायरोइड हारमोन

थायरोक्सिन हारमोन की सामान्य मात्रा के लिए 50 मि.ग्रा. आयोडिन प्रतिवर्ष की आवश्यकता होती है अर्थात् लगभग एक मि.ग्रा. आयोडिन एक सप्ताह के लिए आवश्यक होता है। यह आयोडिन हमें भोजन में आयोडिडेज (Iodides) के रूप में आवश्यक होती है। प्रकृति से हमें आयोडिन की आवश्यक मात्रा जल, कुछ सब्जियां जैसे मूली, प्याज आदि से प्राप्त होती रहती है।

इस आयोडीन की हमारे शरीर में कमी न हो इस के लिए खाने के नमक को आयोडाइज्ड किया जाता है। इस हेतु एक भाग सोडियम आयोडाइड को प्रत्येक 100,000 भाग सोडियम क्लोराइड (नमक) में मिलाया जाता है।

थायराइड की कोशिकाएं थायरोग्लोबुलिन बनाती है। इस थायरोग्लोबुलिन में टाइरोसिन एमिनो एसिड होते हैं जो आयोडिन से संयुक्त होकर क्रमश: मोनोआयडोटायरोसिन

1. विभागाध्यक्ष 2. अध्येता शरीर क्रिया विज्ञान, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं डाइआयडोटायरोसिन बनाते हैं । ये दोनों आयोडिन से संयुक्त होकर ट्राइआइडोथायरोनिन बनाते हैं जिससे कि थायरोक्सिन बनता है ।

ये दोनों हारमोन थायरोग्लोबुलिन से संयुक्त अवस्था में थायरोइड ग्रंथि में रहते हैं और आवश्यकतानुसार रक्त में आ जाते हैं । ये हारमोन थायरोइड के पुटकों में इतनी मात्रा में संग्रहित रहते हैं कि 2 या 3 माह तक की सामान्य आवश्यकता पूरी कर सके । इसीलिए अगर थायरोइड हारमोन का निर्माण बंद भी हो जाये तो इसका प्रभाव कुछ महीनों तक दिखाई नहीं देता है ।

जब थायरोइड हारमोन थायरोइड ग्रंथि से निकलते हैं तब थायरोक्सिन (T_4 90% की मात्रा में व थायरोइड से ट्राइआइडो थायरानिन (T_3 10% से भी कम मात्रा में स्रावित होता है, किन्तु T_4 जब रक्त परिसंचरण से टारगेट उत्तक तक (Target Tissue) तक पहुँचता है तो बहुत ज्यादा मात्रा में T_3 बदल चुका होता है, इस प्रकार उत्तकों में थायरोइड हारमोन T_3 के रूप में ही मुख्यत: पहुँचता है व काम में आता है । थाइरोइड हारमोन धीरे-धीरे उत्तको तक पहुँचता है (Slow Release) इसलिए यदि थायरोक्सिन का इन्जेक्शन किसी व्यक्ति को दिया जाय तो उसके लक्षण (थायरोक्सिन) चयापचय पर 10 वें से 12 वें दिन अधिकतम दिखाई देंगे । अर्थात् 10 या 12 वें दिन चयापचय दर अधिक होगी । T_4 की तुलना में T_3 का कार्य शीघ्रता से शुरू होता है ।

थायरोइड हारमोन T_3 एवं T_4 के कार्य

1. शरीर में ऊर्जा की उत्पत्ति को बढ़ावा देते हैं, अत: शरीर में आक्सीजन के उपयोग में वृद्धि होती है उत्तकों में चयापचय अधिक होता है जिससे आधारीय चयापचय दर (Basal Metabolic Rate) B.M.R. में वृद्धि होती है ।
2. **कार्बोहाइड्रेट के चयापचय पर -**
   - आंत्र द्वारा ग्लूकोज के अवशोषण को उत्तेजित करते हैं ।
   - प्रोटीन तथा स्नेह (Fat) से ग्लूकोज निर्माण में सहायता करते हैं ।
   - यकृत तथा हृत्पेशी की ग्लाइकोजन को ग्लूकोज में परिवर्तित करता है ।
3. राइबोन्यूक्लिक अम्ल (R.N.A.) तथा प्रोटीन के संश्लेषण को बढ़ाता है ।
4. वसा पदार्थों (Lipid) विशेषकर कोलेस्ट्रोल (Cholesterol) के निर्माण एवं अपचय को बढ़ाते हैं। इन हारमोन के कम होने से सीरम लाइपिड (Serum Lipid) का संतुलन बिगड़ जाता है और Serum Lipids बढ़ जाता है ।
5. ये हारमोन पैराथायराइड के विपरीत काम करते हुये कैल्शियम व फास्फोरस को मल व मूत्र द्वारा बाहर निकालते हैं जिससे सीरम में Ca, (कैल्शियम) की वृद्धि नहीं होती है ।
6. **वृक्क पर प्रभाव :**
   1. नाइट्रोजन का उत्सर्जन बढ़ाता है ।
   2. मूत्र की मात्रा बढ़ाता है । यह वृक्क पर सीधा प्रभाव डालकर ऐसा नहीं करता वरन् चयापचय से बढ़े हुये नाइट्रोजन पदार्थों से होता है ।
7. शरीर वृद्धि : बढ़ते हुए बच्चों की वृद्धि में इस हारमोन का भी प्रभाव होता है । जहां थायरोइड की अल्पक्रियाशीलता होती है । वहाँ बच्चों की वृद्धि दर बहुत कम हो जाती है ।
8. थायरोइड हारमोन का महत्वपूर्ण कार्य गर्भावस्था व जन्म के बाद कुछ वर्षों तक मस्तिष्क का विकास करना है ।
   यह सामान्य मानसिक भावना (Normal Emotional Responsiveness) मस्तिष्क की कार्य प्रणाली (Cerebral activity) व संवेदनाओं (Sensory activity) के लिए आवश्यक है ।
9. **विटामिन के चयापचय पर :-** थायराइड हारमोन विभिन्न प्रकार के एन्जाइम की मात्रा को बढ़ाता है चूंकि विटामिन एन्जाइम व को-एन्जाइम के आवश्यक घटक होते हैं । अत: ये हारमोन विटामिन के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपयोग में आवश्यक हैं व शरीर में विटामिन की जरूरत पैदा करते हैं ।

10. शरीर भार पर प्रभाव : बढ़े हुए थायरोइड हारमोन शरीर का भार (Body of Weight) कम करते हैं। व हारमोन कम होने पर शरीर का भार बढ़ाता है । ये कार्य चयापचय के कारण होता है किन्तु हमेशा ऐसा नहीं भी होता क्योंकि थायरॉइड हारमोन भूख भी बढ़ाते हैं । इसलिए यह परिवर्तन कभी-कभी नहीं होता है ।

11. हृदय गति : ये हारमोन हृदय के S.A. नोड पर प्रभाव डालकर हृदय गति (Heart Rate) को बढ़ा देता है, इसके अतिरिक्त इन हारमोन के द्वारा बढ़ी हुई B.M.R. भी हृदय गति बढ़ा देती है । चिकित्सक के लिए यह लक्षण महत्वपूर्ण है, जिससे यह ज्ञात होता है कि थायरॉइड हारमोन कम स्रावित हो रहे हैं या अधिक ।

12. श्वसन क्रिया पर प्रभाव:- चयापचय दर अधिक होने पर आक्सीजन पर शरीर में उपयोग बढ़ जाता है व कार्बन डाइ आक्साइड का निर्माण अधिक होता है जिसके कारण श्वास दर व गहरे श्वास (Depth) की वृद्धि होती है ।

13. यह हारमोन कुछ प्रकार के औषध यथा मोरफीन (Morphine) डिजिटेलिस (Digitalis) आदि को सहने की शक्ति (Tolerance) प्रदान करता है ।

शरीर की चयापचय दर के सामान्य बने रहने से थायरॉइड हारमोन का निश्चित मात्रा में स्रावित होते रहना आवश्यक है । यह कार्य हाइपोथैलेमस एवं अग्रपीयुषिका (Ant. Pituitary) के नियंत्रण द्वारा होता है ।

1. अग्रपीयुषिका का हारमोन TSH थायरोइड को अधिक हारमोन बनाने के लिए उत्तेजित करता है । थायरोक्सिन हारमोन रक्त में सामान्य से ज्यादा होता है तो वह अग्रपीयुषिका के हारमोन TSH को कम कर देता है । इस प्रकार यह परस्पर फीड बैक सिस्टम से एक दूसरे को नियंत्रित करती है ।

2. हाइपोथैलेमस TRF द्वारा अग्रपियुषिका को उत्तेजित करता है, थायरोक्सिन के रक्त स्तर के अनुसार TRF क्रियाशील होता है ।

3. बाहरी तापमान : अत्यधिक शीत के मौसम (Cold Climat) के कारण से भी थायरॉइड हारमोन अधिक स्रावित होता है ।

4. तनाव (Stress) शारीरिक और मानसिक तनाव के कारण भी अधिक हारमोन का स्रवण होता है ।

5. अनुकम्पी व परानुकम्पी तन्त्रिका (Sympathetic-Parasympbtheticnerver) भी रक्तवाहिनियों के संकीर्णन एवं विस्फारण प्रभाव (Vasomotor effect) के कारण थाइरॉइड हारमोन को प्रभावित करते हैं ।

6. स्त्रियों में यौवनावस्था (Puberty) मासिक धर्म, गर्भावस्था स्तनपान (Lactation) कराने वाली महिलाओं में इन अवस्थाओं में थायरॉइड हारमोन का स्राव बढ़ जाता है ।

थायरॉइड ग्रंथि के विकार

थायरॉइड ग्रंथि के विकारों को हम दो भागों में बांट सकते हैं ।

(1) अल्प क्रियाशीलता (Hypo thyroidism)

(2) अतिक्रियाशीलता (Hyper thyroidism)

(1) अल्प क्रियाशीलता : थायरोइड ग्रंथि का यह विकार दो प्रकार का हो सकता है ।

(A) क्रीटिनिज्म (Cretinism)

(B) मिक्सीडीमा (Myxedema)

(A) क्रीटिनिज्म :- गर्भावस्था, शिशु अवस्था अथवा बचपन में जब थायरॉइड हारमोन की कमी होती है उससे उत्पन्न रोग को क्रीटिनिज्म कहते हैं । यह रोग मुख्य रूप से बच्चों की शारीरिक वृद्धि न होने अथवा मानसिक विकास अवरुद्ध होने के रूप में प्रगट होते हैं । यह रोग थायरोइड हारमोन की बहुत कमी होने पर होता है । यह रोग जन्मजात थायरॉइड ग्रंथि की कमी अथवा वंशानुगत कारण (Genetic defect) के द्वारा अथवा भोजन में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयोडिन की कमी के कारण होता है ।

जन्म के बाद भी कुछ समय तक इस रोग के लक्षण दिखाई नहीं देते हैं क्योंकि गर्भावस्था में मां के रक्त से इस ग्रंथि के हारमोन मिलते रहते हैं, जन्म के बाद भी मां के दुग्ध से इस ग्रंथि के हारमोन प्राप्त होते रहते हैं किन्तु यदि बच्चे में इस हारमोन का निर्माण बिल्कुल नहीं हो तो स्तन्य से प्राप्त हारमोन पर्याप्त नहीं होते ।

बच्चों में क्रिटिनिज्म रोग होने पर निम्न लक्षण या इनमें से कुछ लक्षण दिखाई देते हैं ।

1. बच्चों में विकास सूचक लक्षण (Mile Stone) जैसे कि 6 माह की उम्र में बच्चे का बैठना व दंतोद्भव, 12 से 18 माह के उम्र में खड़ा होना, चलना बोलना आदि क्रिटिनिज्म से ग्रसित बच्चों में समय पर प्रकट नहीं होते अर्थात् बच्चों के विकास दर में कमी हो जाती है ।
2. बच्चों की अस्थियों की वृद्धि रुक जाती है । अस्थियां व दांत विकृत हो जाते हैं जबकि मृदु उत्तकों का विकास होता रहता है ।
3. इस रोग से ग्रसित बच्चों की त्वचा रूक्ष, मोटी शुष्क (Dry) झुर्रियों से युक्त होती है ।
4. चेहरा फूला हुआ, मूर्ख जैसा (Idiotic Look) नाक चौड़ी एवं किनारों से झुकी हुई सी होती है । जीभ अधिक लम्बी होती है, कभी-कभी तो जीभ अधिक लम्बी होने से श्वास लेने में कठिनाई व निगलने में भी परेशानी होती है ।
5. मानसिक क्षमता अल्प होती है, अधिकतर बच्चे गूंगे व बहरे होते हैं ।
6. बहुधा बच्चों में भूख एकदम कम हो जाती है, तथा आंत्र की गति बहुत कम हो जाती है जिससे कब्ज की शिकायत हो जाती है ।
7. रक्त पर प्रभाव : इस रोग से ग्रसित बच्चों के रक्त में -

(A) रक्त शर्करा कम हो जाती है ।

(B) शर्करा सहनशीलता अधिक होती है । (High sugar tolerance)

(C) सीरम कोलेस्ट्रोल अधिक होता है ।

(D) रक्त में आयोडिन की कमी होती है ।

8. शीत, विष के प्रभाव व संक्रमण को सहने की क्षमता कम हो जाती है ।
9. लैगिंक ग्रंथियां अंग व द्वितीयक लैगिंक लक्षण (Secondary Sex Characters) का विकास अवरुद्ध हो जाता है ।

(B) मिक्सीडीमा (Myxedema)

मिक्सीडीमा रोग की उत्पत्ति व्यक्ति में थायरोइड हारमोन की बहुत कम मात्रा या एक दम अभाव की स्थिति होने पर होती है । ये रोग महिलाओं में पुरुषों की अपेक्षा 7 से 8 गुना अधिक होता है । इस रोग में आनुवांशिक कारण भी महत्वपूर्ण है ।

इस रोग से ग्रसित रोगी का चेहरा फूला हुआ सा सूजन युक्त होता है जिसे (Mangoloid Appearance) कहते हैं । पूरे शरीर में वसा व श्लेष्म संयोजी उत्तक (Myxomatous tissue) के जमा होने से शरीर सूजन युक्त रहता है । गाल लाल रहते हैं, कक्षा (Axilla) गुप्तांग व सिर के बाल गिरने लगते हैं, भौंह के बाहरी दो तिहाई भाग के बाल गिर जाते हैं ।

इस रोग से ग्रसित पुरूषों में नपुंसकता व स्त्रियों में अनार्तव देखा जाता है । रोगी में स्मृतिनाश हो जाता है । रोगी अधिक निद्रालु हो जाता है । रोगी एक दिन में 12 से 14 घन्टे सोता है । भूख कम हो जाती है, आंत्र की गति मन्द हो जाती है जिससे कब्ज रहने लग जाती है ।

रोगी के शरीर का ताप कम हो जाता है, रोगी शीत के प्रति अतिसंवेदनशील हो जाता है अर्थात् शीत सहन नहीं कर सकता । कभी-कभी शरीर का वजन बढ़ जाता है ।

रोगी के जिह्वा एवं स्वरयंत्र में शोथ हो जाता है जिससे आवाज बदल जाती है (Hoarseness) उच्चारण अस्पष्ट हो जाता है ।

परीक्षण करने पर निम्न लक्षण मिलते हैं -

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोगी की हृदय गति कम हो जाती है, हृदय का आकार बढ़ जाता है (Transverse Enlargement of Heart) इ०सी०जी० में QRT लो-वोल्टेज हो जाता है। रक्तचाप व श्वासगति कम हो जाती है। प्रयोगशाला परीक्षण करने पर रक्त में शर्करा व आयोडिन सामान्य से कम मात्रा में होते हैं। शर्करा सहनशीलता (Sugar Tolerance) बढ़ जाती है। सीरम कोलेस्ट्रोल बढ़ जाता है 300Mg/100 या इससे भी अधिक हो जाता है। जब तक थायरोइड हारमोन की कमी वाले व्यक्ति में 275Mg/100 रस से कम कोलेस्ट्रोल होता है मिक्सीडीमा भी कहलाता है। रोगी में प्लाज्मा प्रोटीन बढ़ जाती है एवं द्वितीय रक्ताल्पता (Secondary Anemia) हो जाता है।

हाइपोथाइराइडिज्म का निदान :-

रक्त की जाँच करने पर (Free Thyroxine) T_4 सामान्य से कम पाई जाती है, कभी-कभी T_3 की भी जाँच कराई जाती है।

आधारीय चयापचय दर (Basal Metabolic Rate)-30 से -50 तक हो जाती है। T.R.H. की टेस्ट डोज देने पर अग्रपियूषिका के हारमोन TSH की मात्रा बहुत अधिक बढ़ जाती है, कुछ अपवाद स्वरूप उन रोगियों को छोड़कर जिन्हें हाइपोथाइरोडिज्म अग्रपियुषिका के TRH को रिस्पोन्स न देने के कारण हुआ हो।

(2) अतिक्रियाशीलता (Hyper Thyroidism)

इसमें थायरॉइड हारमोन का अधिक मात्रा में स्रवण होता है, रोगी में अलग-अलग लक्षण दिखाई देते हैं। रोगी का वजन कम हो जाता है, आधारीय चयापचय दर (B.M.R.) में वृद्धि हो जाती है। रोगी में गलगण्ड हो जाता है अर्थात् थायरॉइड ग्रंथि के आकार में वृद्धि हो जाने पर गले में उभार हो जाता हैं। हारमोन की बहुत कम मात्रा स्रवित होने पर एक्जोप्थालमस की स्थिति जिसमें रोगी की आँखें बाहर को निकली हुई-सी रहती हैं। पलकों को रोगी झपका नहीं सकता है क्योंकि आँखों के पीछे की ओर वसा का जमाव हो जाता है। शरीर में ताप की अधिक उत्पत्ति होती है, त्वचा गरम व अधिक स्वेद युक्त रहती है। हृदय अधिक तेजी से धड़कता है, हृदय गति बढ़ जाती है। रोगी जो भी भोजन करता है ऊर्जा या ताप में परिवर्तित हो जाता है, जिसके कारण रोगी को बहुत अधिक भूख लगती है।

ग्रेव डिजीज (Graves Disease) :-

जब थायरॉइड ग्रंथि का हारमोन बहुत ज्यादा मात्रा में (सामान्य से दस गुणा अधिक) स्रावित होने लगता हैं तो ग्रेव डिजीज हो जाती है। इस रोग में निम्न लक्षण मिलते हैं -

1. थायराइड ग्रंथि का आकार बढ़ने के साथ उसमें (Nodule) बनने लगते हैं।
2. आधारीय चयापचय दर बढ़ कर 50 से 100% तक हो जाती है।
3. रोगी की आँखों में एक्जोप्थालमस की स्थिति हो जाती है।
4. वजन लगातार कम होता रहता है जबकि रोगी को भूख अच्छी होती है।
5. रोगी के शरीर में कैल्शियम व फास्फोरस की कमी होते रहने से अस्थियों का क्षरण (Osteoporosis) हो जाता है।
6. रोगी की त्वचा मुलायम चिकनी व लालिमा युक्त रहती है।
7. रोगी के यकृत की कार्य क्षमता कम हो जाती है।
8. रोगी की हृदय गति 150/मिनट तक बढ़ जाती है। हृदय गति में अनियमितता आने लगती है। आंकुचनीय (Systolic) रक्तचाप बढ़ जाता है।
9. मांसपेशियां दुर्बल हो जाती हैं, हाथ पैरों में कम्पन्न रहता है।
10. रोगी के शरीर में विटामिन की आवश्यकता बढ़ जाती है। विशेषत: विटामिन "A", "B" और "C" की क्योंकि B.M.R. बढ़ी होती है, इन विटामिन की पूर्ति नहीं होने पर इन विटामिन की कमी के लक्षण प्रगट होने लगते हैं।
11. प्रयोगशाला परीक्षण में -

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(i) रक्त शर्करा (Blood Sugar) बढ़ी हुई होती है ।

(ii) Sugar Tolerance कम हो जाता है ।

(iii) रक्त में आयोडिन पदार्थ अधिक मिलते हैं ।

(iv) सीरम कोलेस्ट्रोल कम हो जाता है जोकि सामान्य मात्रा 200 मि.ग्रा./100 मि.ली. रक्त कम होकर 100 मि.ग्रा./100 मि.लि. हो जाता है ।

सीरम थायरोक्सिन सामान्य मात्रा (6 से 11.5 माइक्रोम/100 मि.लि.) से बढ़कर 11.5 माइक्रोग्राम/100 मि.लि. से 30 माइक्रोग्राम/100 मि.लि. तक हो जाता है । TSH सामान्य मात्रा (1-4 माइक्रोग्राम/L) से कम 1 माइक्रोग्राम/L से भी कम हो जाता है ।

गलगण्ड (Goitre)

हमने यहाँ थायरॉइड के जो दो विकार देखे (i) अतिक्रियाशीलता व अल्प क्रियाशीलता, इन दोनों में ही गलगण्ड (Goitre) हो सकता है । यह गलगण्ड इन दोनों विकृतियों के अतिरिक्त केवल थायराइड ग्रंथि की वृद्धि के कारण भी हो सकता है जिसमें ग्रंथि के उपरोक्त दोनों में से कोई भी कारण प्रथमत: नहीं हो । गलगण्ड के आधुनिक मतानुसार निम्न भेद किये जा सकते हैं -

(1) Endemic goitre :- किसी देश विशेष (स्थान) पर उत्पन्न होने वाला गलगण्ड, यह आयोडिन की कमी से होता है व आयोडिन लेने से ठीक भी हो जाता है ।

(2) Nodular :- ग्रंथि के किसी एक भाग में वृद्धि होकर अर्बुद बन जाता है । इस प्रकार के गलगण्ड के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं -

(i) आयोडिन की कमी ।

(ii) भोजन में गलगण्ड पैदा करने वाले पदार्थ जैसे पत्तागोभी या करमकल्ला (Cabbage), सरसों (Brassica seeds) जैसे पदार्थों का अत्यधिक प्रयोग ।

(iii) कुछ औषधियां जैसे कि कार्बिमाजोल (Carbimazol) जो हाइपर थायरॉइड में प्रयुक्त होती हैं, का प्रयोग ।

(iv) गंदे पानी का सेवन करने से ।

(v) ब्राजील जैसे देशों में "ट्राइपेनसोम" (Trypansome) के संक्रमण से भी गलगण्ड देखा गया है ।

(3) होक्काइडो गलगण्ड (Hokkaido goitre):- होक्काइडो जापान का एक स्थान है । यहाँ के लोग भोजन में आयोडिन पदार्थ का अधिक प्रयोग करते हैं, फिर भी गलगण्ड का यह प्रकार देखा जाता है, कहने का तात्पर्य यह है कि अधिक आयोडिन सेवन से भी गलगण्ड होता है जिसे कि होक्काइडो "HOKKAIDO" नाम दे दिया गया है ।

आयुर्वेद साहित्य में थायरॉइड या अवटुकाग्रंथि के हारमोन की अतिस्रवण अथवा अल्प स्रवण का सीधा उल्लेख संहिता ग्रंथों में प्राप्त नहीं होता है किन्तु आयुर्वेद में गलगण्ड नामक रोग का विस्तृत वर्णन मिलता है । सुश्रुत संहिता में गलगण्ड के लिए कहा है -

निबद्धः श्वयथुर्यस्य मुष्कवल्लम्बते गले ।
महान् वा यदि वा ह्रस्वो गलगण्डं तमादिशेत् ॥

चरक संहिता में कहा है -

गलस्य पार्श्वे गण्डः एक ।

गले में बड़ा अथवा छोटा मर्यादित शोफ अण्डकोष के समान लटकता है उसे गलगण्ड कहते हैं ।

सुश्रुत संहिता में इसकी संप्राप्ति में कहा है -

वातः कफश्चैव गले प्रवृद्धौ मन्ये तु संसृत्य तथैव मेदः ।
कुर्वन्ति गण्डं क्रमशः स्वलिंगैः समन्वितं तं गलगण्डमाहुः ॥

वात, कफ और मेद दूषित होकर गले और मन्या में पहुँच कर अपने अपने लक्षणों से युक्त धीरे-धीरे बढ़ने वाले गण्ड को उत्पन्न करते हैं, उसे गलगण्ड कहते हैं ।

गलगण्ड के तीन भेद किये गये हैं -

(1) वातज (2) कफज तथा (3) मेदज गलगण्ड ।

भेल संहिताकार ने पूर्व के देशों में गलगण्ड अधिक होना बताया है तथा मछली का नित्य सेवन भी गलगण्ड का कारण माना है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मत्स्यान्न भोजिनो नित्यं प्राच्याः स्युः कफभितिः नः।
श्लीपदं गलगण्डं च प्राच्या शस्तेषु दृश्यते ॥

आयुर्वेद संहिताओं में जल के बारे में बहुत गहन चिन्तन किया है। आचार्य सुश्रुत ने विभिन्न नदियों के जल का गुण वर्णित करते हुये कहा है -

हिमवत्प्रभवा हृद्रोग श्वयथु शिरोरोग श्लीपद गलगण्डान्।

सु०सू०अ० 45/21

अर्थात् हिमालय से निकली नदियों का पानी हृदय रोग, शोथ, शिरोरोग, श्लीपद तथा गलगण्ड रोग उत्पन्न करता है, वस्तुतः हिमालय के समीप के राज्यों में गलगण्ड अधिक पाया जाता है, इससे ऐसा प्रतीत होता है कि आयुर्वेद ग्रंथों में "आयोडिन" नामक तत्व का नामतः उल्लेख नहीं होते हुये भी गलगण्ड का जल विशेष व स्थान विशेष "प्राच्याशस्तेषु दृश्यते" से सम्बन्ध का ज्ञान था।

गलगण्ड के तीन भेद कर उससे प्रत्येक भेद का वर्णन किया गया है -

1. वातिक गलगण्ड :- सूई चुभाने की पीड़ा से युक्त काली सिराओं से व्याप्त वर्ण में काला या अरुण वातिक गलगण्ड होता है, बढ़ जाने पर चरबी से युक्त स्पर्श में चिकना वेदना रहित होता है, यह कठोरता युक्त, नहीं पकने वाला होता है, आगन्तुक कारणों (संक्रमणादि) से कभी-कभी पक भी जाता है, इस गलगण्ड से पीड़ित रोगी मुख की विरसता तथा तालु और गले में शोष के लक्षण से युक्त रहता है।
2. कफज गलगण्ड :- यह गलगण्ड स्थिर, त्वचा के समान वर्ण का अल्प पीड़ा वाला तेज खुजली से युक्त स्पर्श में शीत आकार में बड़ा देर से बढ़ने वाला व देर से पकने वाला पाक के समय कुछ पीड़ा युक्त होता है। रोगी का मुख मीठा, तालु एवं गले में लेप-सा बना रहता है।
3. मेदज गलगण्ड :- यह चिकना, वर्ण में पाण्डु, दुर्गन्ध युक्त, पीड़ा रहित खुजली वाला होता है। यह शरीर के अनुसार घटता बढ़ता रहता है, इससे पीड़ित रोगी का मुख चिपचिपा-सा रहता है, उसके शब्द अस्पष्ट (भिन्नस्वर) होते हैं।

आचार्य सुश्रुत ने गलगण्ड के रोगी जो श्वासकष्ट, एक वर्ष से अधिक पुराने अरोचक से पीड़ित क्षीण एवं भिन्न स्वर वाले हों उन्हें असाध्य बताया है।

थायराइड विकार की चिकित्सा

आधुनिक ऐलोपैथी विज्ञान में वर्णित हाइपोथाइड व हाइपरथायराइड में इसके निदान कर अलग-अलग चिकित्सा की जाती है।

हाइपोथायरॉइड :- इस रोग से ग्रसित रोगी की चिकित्सा मुख्य रूप से थायरॉइड हारमोन की एक निश्चित खुराक प्रतिदिन देकर की जाती है। इसके साथ आवश्यकतानुसार आयोडिन एवं हाइड्रोकोर्टिसोन या कोर्टिकोस्टेराइड भी दिया जाता है।

हाइपरथाइरॉइड :- इसमें मुख्य रूप से तीन प्रकार की चिकित्सा में से रोगी की स्थिति के अनुसार चुनाव किया जाता है।

(1) औषध प्रयोग :- कार्बिमाजोल (Carbimazol) आदि औषधियों का प्रयोग।
(2) शल्य चिकित्सा :- इसमें थायोरॉइड ग्रंथि का कुछ भाग हटा दिया जाता है।
(3) रेडियो एक्टिव आयोडिन द्वारा भी हायपर थायरॉइड का उपचार किया जाता है।

उपरोक्त चिकित्सा किसी योग्य चिकित्सक की देख-रेख में ही लेनी चाहिए।

आयुर्वेद के उपचार :-

आयुर्वेद विज्ञान द्वारा भी इस ग्रंथि के विकारों का उपचार किया जाता है व नये शोध भी किये जा रहे हैं।

गलगण्ड के लिए कांचनार का अन्तः व बाह्य प्रयोग विशेषतः उल्लिखित है। आयुर्वेद दृष्टि से मनन करने पर थायोरॉइड के हारमोन का कार्य धात्वाग्नियों के कार्य से साम्य रखता है। हाइपोथायराइड व हाइपरथाराइड के विकार धातु अग्नियों की विकृति के ही परिणाम हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धात्वाग्नियों को जठराग्नि के द्वारा ही बल प्राप्त होता है। जठराग्नि के लिए आयुर्वेद में कहा गया है, *"चतुर्विधमन्नपान पचतीति।"*

अर्थात् जठराग्नि भोजन का सम्यक् प्रकार से पाचन करती है जबकि हाइपोथायराइडिज्म में भूख कम हो जाती है, कब्ज रहने लगती है जो कि अस्म्यक् जठराग्नि को इंगित करती है। इसी प्रकार हाइपर थायराइड के विकार में बहुत ज्यादा भूख लगती है व कभी दस्त लगने लग जाते हैं जोकि जठराग्नि का ही विकार है। भस्मक रोग से साम्यता परक है।

अन्य धातुओं की सम्यक निर्मिति के लिए धात्वाग्नियों की सम्यक् स्थिति आवश्यक है। प्रत्येक धातु का कर्म बताते हुये आयुर्वेद में रस धातु के लिए कहा है -

कृत्सनं शरीरमहरहस्तर्पयति बर्धयति धारयति
यापयति प्रीणनं रक्त पुष्टीं च करोति।

रस धातु पूरे शरीर का नित्य तपर्ण करती है, शरीर का वर्धन करती है, शरीर को धारण करती है एवं रक्त की पुष्टि करती है।

हाइपोथायराइड के विकारों के संदर्भ मे हमने देखा कि बच्चों में वामनता (शरीर का वर्धन नहीं होना) तथा इस विकार में द्वितीयक रक्ताल्पता हो जाती है जो कि सम्यक् रस धातु की स्थिति नहीं होने को इंगित करता है। रक्त धातु के शरीर में क्षय होने पर आयुर्वेद में कहा गया है-

"परूषा स्फुटिता म्लाना त्वग्रूक्षा रक्त संक्षये।"

रक्त के क्षय से त्वचा विवर्ण, फटी हुई, व रूक्ष होती है। यही लक्षण हमें हाइपोथायराइड के विकार में त्वचा में दिखाई देते हैं। मांस धातु की कमी से *"गात्रणा सदनं धमनी शैथिल्यं चा।"* कहा है जो कि हाइपोथाराइड के विकार में कहे गये अंगों में शिथिलता व हृदय गति कम हो जाने से समानता रखता है।

हाइपोथायराइड के विकार में कहा गया अधिक मोटापा होना, नपुंसकता बच्चों में अस्थियों की वृद्धि नहीं होना भेद, अस्थि व शुक्र धातु की असम्यक् स्थिति को बताते हैं। हायपरथायराइड के विकार भी धातुओं के सम्यक् निर्माण के नहीं होने व आयुर्वेद में वर्णित भस्मक रोग व पित्त नानात्मज विकारों से साम्य परक है यथा अतिस्वेद, उष्णता का रहना अथवा धातु क्षय से वृद्ध वात की स्थिति हाथ पैरों में कम्पन्न रहना, हृदय गति बढ़ जाना आदि को इंगित करता है।

इस प्रकार आयुर्वेदीय दृष्टि से हाइपोथायराइड व हाइपर थायराइड के विकारों पर चिन्तन, मनन कर चिकित्सा व्यवस्था की जाती है।

इस प्रकार से हाइपोथायराइड से ग्रसित रोगियों के लिए निम्न चिकित्सा क्रम पर विचार किया जाना चाहिए।

1. अनुलोमन नित्य।
2. ओजोवर्धक।
3. बलवर्धक।
4. शोणितवर्धक।
5. अनुवासनबस्ति।
6. क्षीर बस्ति यापना बस्ति।
7. अरिष्ट प्रयोग।
8. अग्निवर्धक एवं स्रोतोशोधक।
9. रसायन प्रयोग।

इस प्रकार के चिकित्सा क्रम में रसायन प्रयोगार्थ वर्धमान पिप्पली पर शोध कार्य भी हुये हैं। इसी के साथ-साथ चूंकि हाइपोथायराइड के विकार में मंद बुद्धि होते हैं व वयस्क भी मानसिक दक्षता में हीन होता है। अतः मेध्य रसायनों का प्रयोग भी आवश्यक है। आचार्य चरक ने शंखपुष्पी, मण्डूकपर्णी, मुलेठी, गुडुचि का प्रयोग मेध्य रसायन के रूप में बताया है।

कांचनार गुग्गुल, पुनर्नवा मंडूर, अरोग्यवर्धनी वटी, नित्यानंद रस, गलगण्ड हरलेप आदि अनेक औषधियों का प्रयोग इस रोग निवारणार्थ किया जा रहा है। हाइपोथायराइड में जो अतिस्थूलता की स्थिति हो जाती है इस हेतु द्विरंग आदि अति स्थूलता की चिकित्सा में वर्णित चिकित्सा प्रयोग भी अनेक चिकित्सक उत्साह वर्धक परिणाम के साथ कर रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"पंचकर्म चिकित्सा"

डॉ०डी०टी० बोम्बार्डे, एम.डी.(कायचिकित्सा) मुंबई
एम.डी.(पंचकर्म) नागपुर, ए.व्ही.पी.जी.(कायचिकित्सा) पूना
एन.डी;डी.एन.वाय.एस.(नॅचरो) दिल्ली

'पंचकर्म' चिकित्सा का प्रधान अंग माना गया है। 'पंचकर्म चिकित्सा' के द्वारा रोगकारक दोषों का शोधन किया जाता है। आचार्य चरक एवं सुश्रुताचार्य - ने भी शोधन प्रधान चिकित्सा सर्वश्रेष्ठ है, ऐसा ही वर्णन किया है। कोई भी चिकित्सा दो प्रकार से की जाती है। (1) संतर्पण (बृंहण) (2) अपतर्पण (लंघन)। चरकाचार्य ने इसका विस्तृत विवेचन कर 6 प्रकार के कर्मों का विवेचन सामान्य चिकित्सा के अंतर्गत किया है। वे हैं 1) बृंहण 2) स्नेहन 3) स्तंभन 4) लंघन 5) स्वेदन 6) रुक्षण इन दोनों उपक्रमों में 'शोधन' चिकित्सा अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। विशिष्ट चिकित्सा का विशेष विचार करते हुए चरकाचार्य ने 1) संशोधन 2) संशमन 3) निदान परिवर्जन यह तीन कर्म बताये हैं। सुश्रुताचार्य ने मात्र 1) शोधन 2) शमन 3) आहार 4) विहार इन 4 कर्मों का उल्लेख किया है। इससे ज्ञात होता है कि शरीरशुद्धि दोषों के क्षय के लिये एवं आयुष्यवर्धन के लिये अत्यावश्यक है।

दोषाः कदाचित् कुप्यन्ति जिता लंघन पाचनैः।
जिता संशोधनार्येतु न तेषाम् पुनरुदभवः॥

च.सु.अ. 16/21

शास्त्र में "शोधन प्रधान" चिकित्सा सर्वश्रेष्ठ हैं ऐसा वर्णन मिलता है। चरक एवं सुश्रुताचार्य ने भी 'शोधनप्रधान' चिकित्सा की प्रशंसा की है। चरकाचार्य कहते हैं कि लंघन पाचनादी शमन चिकित्सा से स्थापित हुआ। धातुसाम्य थोड़े से ही (अल्प) हेतु से भी पुनः विकृत हो सकता है। लेकिन यह धातुसाम्य अगर शोधन उपक्रम के द्वारा किया जाय तो दोषों का एवं व्याधि का पुनरुद्भव होना संभव नहीं है।

शोधन प्रक्रिया यह विकृत एवं विषम दोनों को शरीर से बाहर निकाल देती है। इन्हीं विकृत एवं विष दोषों का बहिर्निर्गमन करने के लिये पंचकर्म का उपयोग किया जाता है। ये हैं वमन, विरेचन, निरुह (बस्ति); शिरोविरेचन (नस्य); एवं असृग्विस्रुति (रक्तमोक्षण) (3) "शोधन चिकित्सा" प्रणाली यह 'आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति का' वैशिष्ट्यपूर्ण अंग है।

यदीरयेद बहिर्दोषान पञ्चधा शोधनंच तत्।
निरुहो वमनं कायशिरेरेकोऽ स्त्रविस्रुतिः॥

अ.हृ.सू. 14/5

जो क्रिया दोषों का शरीर से निष्कासन करे उसे 'संशोधन' कहा जाता है। इसके पांच प्रकार हैं। वे 1) निरुह (आस्थापन), बस्ती, 2) वमन, 3) विरेचन, 4) शिरोविरेचन एवं 5) रक्तमोक्षण इस प्रकार है। चरकाचार्य ने मात्र रक्तावसेचन को छोड़कर तथा अनुवासन या स्नेहबस्ति का समावेश कर वमन, विरेचन, आस्थापन, अनुवासन तथा शिरोविरेचन इन पांच कर्मो के लिये 'पंचकर्म' विशिष्ट संज्ञा का व्यवहार किया है।

वाग्भटाचार्य ने मात्र पंचकर्म के प्रधान लक्ष्य संशोधन को ध्यान में रखते हुये अनुवासन को छोड़कर 'रक्तमोक्षण' का शोधनकर्म में ग्रहण कर लिया है। सुश्रुताचार्य, वाग्भट एवं व्यवहार में उपरोक्त निर्देशित वमन, विरेचन, बस्ति, नस्य, इनको ही 'पंचकर्म' कहते हैं। चरकाचार्य, भावप्रकाश, योगरत्नाकर एवं शार्ङधर ने मात्र रक्तमोक्षण वर्जित कर दोनों बस्तियों का समावेश 'पंचकर्म' में किया है (2) 'पंचकर्म' यह शब्दप्रयोग प्राचीन कालसे ही चलता आ रहा है। सबसे प्राचीन आयुर्वेदिक ग्रंथ चरकसंहिता में भी 'पंचकर्म' शब्द का प्रयोग यत्रतत्र किया गया है। यहां स्पष्टतः पाँचों कर्म हैं। मगर चरक सूत्रस्थान अध्याय । में 'कर्तव्यस्य क्रिया कर्म' द्वारा इसका संकेत दिया है। अर्थात कर्तव्य की क्रिया को कर्म कहते है। शोधन चिकित्सा में, वमन, विरेचन, शिरोविरेचन, आस्थापन तथा अनुवासन ये पाँच प्रकार के कर्तव्य होते हैं। अतः इन पाँच प्रकार के कर्तव्य की क्रिया

प्रपाठक एवं वरिष्ठ कायचिकित्सक, गवर्नमेन्ट पोदार मेडिकल कॉलेज एवं हॉस्पीटल, वरली, मुंबई - 18

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को 'पंचकर्म' कहा जाता है । चरकाचार्य ने सूत्र स्थान के द्वितीय अध्याय अपामार्गतण्डुलीयमध्याय में पंचकर्मार्थ द्रव्य संग्रह का उल्लेख कर प्रथमत: शीर्षविरेचन द्रव्यप्रयोग, वमनद्रव्य प्रयोग, विरेचन द्रव्यप्रयोग, आस्थापन बस्ति (निरुह) द्रव्यप्रयोग एवं अनुवासन बस्ति के द्रव्यप्रयोग का निर्देशन किया है और अंत में कहा है कि ये पंचकर्मोपयोगी द्रव्य हैं तथा दोषों के उत्क्लिष्ठ होने पर प्रथमत: स्नेहन स्वेदनादि कराकर मात्रा काल का विचार कर 'पंचकर्म' का प्रयोग करना चाहिये । (3) अर्थात प्रथमत: स्नेहन स्वेदन कराकर बाद में वमन, विरेचन, नस्य निरूह अनुवासन का प्रयोग करें । अष्टांगहृदय, शार्ङ्गधर, भावप्रकाश के आदि आचार्य ने जैसे स्पष्टत: पाँचकर्मों का अलग-अलग विस्तृत उल्लेख किया है (4) तंत्रयुक्ति के अनुसार इन्हीं को पंचकर्म मानना है । चरक कल्पस्थान एवं सिद्धिस्थान में भी पाँचों पंचकर्मो के कल्प, एवं कर्मसिद्धि की कल्पना का विस्तृत विवेचन किया गया है । सिद्धिस्थान के द्वितीय पंचकर्म किसको करना चाहिए और किसको नहीं इत्यादि कहकर अंत में उपसंहार में पंचकर्म कह दिया है । इसमें भी वमन, विरेचन निरुह, अनुवासन और नस्य को 'पंचकर्म' कहा है। मतलब यह कि शास्त्र में 'पंचकर्म' पंचानाम वमन, विरेचन, नस्य, निरुहावसनम् चिकित्सा इती' ऐसा ही कहा है । अर्थात भावप्रकाश, शार्ङ्गधर, योगरत्नाकर आदि में भी चरकाचार्य के वर्णित 'पंचकर्मों का ही' स्पष्टत: उल्लेख मिलता है । वृद्धमाधवकार ने भी इसकी पुष्टि की है ।

'पंचकर्म' चिकित्सा में प्रमुखता से 'शोधन' किया जाता है । ऐसे शुद्धिप्रधान उपक्रमों का इसमें समावेश होने के कारण इन कर्मों के समूह को 'पंचकर्म' यह नाम योगरुढ़ संज्ञास्वरूप में आगे आया है ।

कायचिकित्सकों ने 'संशोधन' कर्म के अंतर्गत चार प्रकार की संशुद्धियों का यथा वमन, विरेचन, नस्य, निरुह इनका ही ग्रहण किया है (5) चरकाचार्य ने पंचकर्म में निर्देशित अनुवासनबस्ति को छोड़कर शेष उपरोक्त चार कर्मों का शोधनोपक्रम में समावेश किया है जो लंघन का अपतर्पण करता है । मगर पंचकर्मों का व्यापक उद्देश्य ध्यान में रखकर आचार्य चरक ने अनुवासन बस्ति को पंचकर्म अंतर्भूत किया है । निरुहबस्ति से संशोधित हुआ आम, मल, विकृत कफ आदि से वायु का प्रकोप न हो एवं वायु के भी संशोधन व संशमन के लिये अनुवासन बस्ति का प्रयोजन किया गया है । वैसे भी वायु की चिकित्सा संतर्पण ही कही गयी है ।

वाग्भटाचार्य ने निरुह, वमन, विरेचन, शिरोविरेचन एवं रक्तमोक्षण इनको 'संशोधन' कर्म कहा है । (6) न कि 'पंचकर्म' ? इस परिगणना में आचार्य चरक से वाग्भट में केवल इतना भेद है कि चरक की गणना में 'रक्तमोक्षण' को स्थान नहीं है एवं अनुवासन का समावेश किया गया है । वाग्भट के वचन में इसके विपरीत अनुवासन की गणना नहीं है और 'रक्तावसेचन' को स्थान दिया गया है। इससे कई बार यह भ्रान्ति होती है कि चरक और वाग्भट मतों से पंचकर्मों के अंगभूत कर्मों के विषय में कुछ मतभेद है । परंतु यह भ्रांति विचारसह नहीं है । प्रथम तो वाग्भटाचार्य ने इन पाँच कर्मों के लिये 'शोधन' शब्द का प्रयोग किया है । उन्हें संबंधित वचनों में पंचकर्मों का उल्लेख अभिप्रेत होता तो अपने को अभिमत कर्मों का निर्देश कर के उन्हें शोधन न कहकर 'पंचकर्म' ही कहते दूसरे किसी भी आचार्य ने पंचकर्मों के प्रकरण में 'रक्तमोक्षण' का विवरण सभी जगह दूर-दूर एवं भिन्न-भिन्न स्थानों एवं अध्यायों में किया है । आचार्य वाग्भट ने मदात्यय की चिकित्सा में एक ही जगह पर पंचकर्म एवं रक्तमोक्षण इन दोनों की उपचार के स्वरूप में योजना की है । वे कहते हैं कि; कर्म 5 ही गिनाये हैं । इस तरह चरकाचार्य ने एक श्लोक में पाँचों कर्मों का उल्लेख नहीं किया । मगर अपामार्गतण्डुलियध्याय के अनुसार है -

पंचकर्माणि चेष्टानि सेचनं शोणितस्यच ।

अ.हृ.चि. 7/108

यदि वाग्भट रक्तमोक्षण को पंचकर्मान्तर्गत मानते तो पंचकर्माणि शब्द से ही रक्तमोक्षण का ग्रहण हो जाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनके पृथक गणना की आवश्यकता न रहती (7)

वाग्भटाचार्य ने अष्टांगहृदय में 'सिराव्यधविधि' अध्याय में कहा है कि जिसने अभी- अभी स्नेह पिया हो। जिसका 'पंचकर्म' पूर्ण कर दिया हो उसका सिरा द्वारा रक्तमोक्षण न करे (8) यहां मूल में 'पंचकर्म' ऐसा निर्देश है। अरुणदत्त ने टीका में यहां वमनादि पंचकर्म ऐसा स्पष्टार्थ किया है। वैसे ही नस्याध्याय के प्रारंभ में अरुणदत्त ने कहा है कि: 'पंचकर्म के प्रस्ताव में वमन, विरेचन, निरुह, अनुवासन कहकर अब नस्य कह रहे हैं (9) इस तरह के चरकमान्य पंचकर्म के सहायक संदर्भ जहां तहां मिलते हैं।

कुछ आचार्य निरुह अनुवासन इन दोनों प्रकार के बस्तियों का समावेश एक ही में करके रक्तमोक्षण को 'पंचकर्म' में गिनते हैं अर्थात् सुश्रुताचार्य, वाग्भट एवं व्यवहार में पंचकर्म को प्रधान संशोधन' को ध्यान में रखकर अनुवासन को छोड़कर शल्यतंत्रविदो के 'रक्तमोक्षण' का पंचकर्म में ग्रहण कर लिया है। अर्थात वाग्भटाचार्य के जैसा ही सुश्रुताचार्य ने भी साक्षात 'पंचकर्म' शब्द का उपयोग कर उपक्रम का एकत्रित/इकट्ठा वर्णन कहीं भी नहीं किया। सुश्रुत टीकाकार डल्हण ने मात्र इसका विस्तृत विवेचन किया है। इसपर से यह कहा जा सकता है कि चरकाचार्य ने जो पंचकर्म कहे हैं वे साधारणत: सभी शास्त्राज्ञों ने अपना लिये हैं।

किसी-किसी आचार्य ने पंचकर्मो के पूर्व कर्मों का (स्नेहन, स्वेदन) का ग्रहण कर सप्तकर्मों का भी शोधन चिकित्सा में निर्देश किया है। यद्यपि स्नेहन और स्वेदन दोष निर्हरण नहीं करते इसीलिए उनका शोधनोपचार में गिनना ठीक नहीं। स्नेहन स्वेदन पंचकर्म में पूर्वकर्म के रूप में उपयोग में लाये जाते हैं। पूर्वकर्म का लक्ष्य दोष निर्हरण न होकर दोष निर्हरण योग्य बनाना है। संशोधन के पूर्व स्थानसंश्रित एवं रोगोत्पत्ति के अवयव में स्थिर तथा लीन होकर रहे हुये दोषों का उत्क्लेष करना अर्थात उन्हें स्थान संश्रम की अवस्था में चलित कर विलीन एवं चल तथा स्वमार्गगामी बनाना आवश्यक होता है। तात्पर्य स्नेहन तथा स्वेदन द्वारा दोषों का उत्क्लेष कर उन्हें अपने आशय में लाकर यथायोग्य अर्थात् जिस दोष के लिये जो उपयुक्त हो वह पंचकर्माङ्गभूत कर्म यथाकाल तथा मात्रावत करना चाहिए।

संदर्भ

1) चरक सूत्रस्थान अध्याय - 2

2) (अ) प्रथम वमनं पश्चात् विरकश्चानुवासनम्।
एतानि पंचकर्माणि निरुही नावनं तथा ॥
भा.प्र.पू.खं.

(ब) वमनं रेचनं नस्य निरुहाश्चानुवासनम्।
एतानि पंचकर्माणि कथितानीमुनीश्वरैः ॥
शा.उ.अ. 8 - 63

3) तान्युपस्थितदोषानां स्नेहस्वेदोपपादनैः।
पंचकर्माणि कुर्वीत मात्राकालौ विचारयन् ॥
च.सू.अ. 2/15

4) चरक सूत्रस्थान अध्याय 2/3-14

5) चतुष्यकारा संशुद्धि पिपासा मारुतातपौ।
पाचनान्युपवासश्च व्यायामश्चेति लंघनम् ॥
च.सू.अ. 22/18

6) यदीरयेद् बहिर्दोषान पञ्चधा शोधनं च तत्।
निरुहो वमनं कायशिरेकोऽस्त्रविस्रुतिः ॥
अ.हृ.सू. 14-5

7) निदान चिकित्सा हस्तामलक (द्वितीय खण्ड) तृतीय अध्याय पंचकर्म पान, नं. 59।

8) स्नेहपीते प्रयुक्तेषु तथा पंचसु कर्मसु।
अ.हृ.सू. 27-8
तथा पंचसु वमनादिषु अर्मसु। अरुणदत्त

9) पंचकर्मोवितप्रस्तावे वमन विरेकान्वासन निरुहानुक्त्व नस्यविधिमाह।
अ.हृदय सू. 20-1 पर अ.द. टीका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्थराइटिस

- डा० चैतन्य स्वरूप अग्रवाल

बोलचाल की साधारण भाषा में हड्डियों, घुटने, कंधे, कूल्हे आदि जोड़ों के दर्द को आर्थराइटिस कहते हैं।

आजकल की भागदौड़ वाली जिन्दगी में तनाव व दबाव जीवन का एक हिस्सा बन गया है। ज्यादा तनाव व दबाव जिन शारीरिक एवं मानसिक रोगों को जन्म देता है उनमें जोड़ों का दर्द प्रमुख होता है, दबाव और तनाव से मासपेशियों में खिचाव उत्पन्न हो जाता है जो कार्टिलेज को जल्दी घिसकर जोड़ों के बीच का स्थान कम करके दर्द बढ़ाता है।

व्यक्ति को तनाव यदि ज्यादा हो तो वह शरीर में कुछ रासायनिक तत्वों के संचार को कम कर शरीर में कुछ बदलाव लाता है, इससे बीमारियों से लड़ने की शक्ति क्षीण हो जाती है। इसके चलते थकावट रहने लगती है और अन्य अनेक शारीरिक समस्याएं पैदा हो जाती हैं। अधिक भाग-दौड़ मय जीवन के कारण, सोने, उठने-बैठने, चलने के सही तरीकों को नजरअंदाज किया जाता है - इस तरह गलत तरीकों का सबसे ज्यादा कुप्रभाव जोड़ों पर पड़ता है और यही कारण है कि आज हर व्यक्ति किसी न किसी तरह के जोड़ों के दर्द से ग्रस्त देखा जा सकता है।

आजकल की ग्लैमरस और तथाकथित "स्मार्ट" जिन्दगी में शराब, तम्बाकू जैसे नशीले पदार्थों का सेवन स्टेटस सिंबल बन गया है। नशीले पदार्थों का यही सेवन मनुष्य की हड्डियों को बुरी तरह खोखला बना रहा है यथा अधिक सिगरेट पीने से ऑस्टियो पोरोसिस होने के चान्स बन जाते हैं जो अन्ततः ऑस्टियो आर्थराइटिस का कारण हो जाता है। अधिक नशा करने से कमर के निचले हिस्से में दर्द होना शुरू हो जाता है। इसके कारण लंबर एथरोसक्लेरोसिस होने के खतरे बढ़ जाते हैं। चर्बी के थक्कों के कारण रक्त वाहिकाओं में भी रुकावट हो सकती है। इससे लंबर-स्पॉन्डिलाइटिस, लंबर-स्टेनोसिस, कमर के निचले हिस्से में पीड़ायुक्त दर्द हो जाता है।

महिलाओं में भी धूम्रपान करना आधुनिकता सम्पन्नता में एक फैशन बन गया हैं, महिलाएं इसका खामियाजा शरीर में इस्ट्रोजन की कमी और हड्डियों के घनत्व की कमी के रूप में उठाती हैं।

एक बार हड्डियों का घनत्व कम हो जाए तो दुबारा उसकी भरपाई मुश्किल से होती है। यही कारण है कि इससे कूल्हे के फ्रेक्चर का खतरा बढ़ जाता है। जोड़ों के दर्द के कारण व्यक्ति को छोटे-छोटे काम करने, लिखने, उठने, बैठने, सीढ़ियां चढ़ने, चलने में दिक्कत होती है। रह्यूमेटॉयड आर्थराइटिस से प्रभावित जोड़ में सूजन आ जाती है तथा आसपास की जगह लाल व गर्म हो जाती है।

रह्यूमेटॉयड आर्थराइटिस ऑटोइम्यून बीमारी है, इसमें उगलियाँ, कलाई, कोहनियां, कंधे, पंजे, टखने प्रभावित होते हैं। इसमे जोड़ों की लाइनिंग खराब होकर सूजन जकड़न डीफॉर्मिटी और मानव के कार्य करने की शक्ति कम होती है, चली जाती है। शरीर में हीमोग्लोबिन कम हो जाता है।

यह आनुवांशिक बीमारी भी मानी गई है। उपरोक्त लक्षणों और रोग के कारणों को समझते हुए उन कारणों का निवारण करना चाहिये जिनसे रोग होता है या बढ़ता है। प्रभावित जोड़ों पर गर्म या ठंडी सिकाई से रक्तप्रवाह बढ़ता है। पर सिकाई से रोगी की चमड़ी पर कोई गलत प्रभाव न पड़े इसका ध्यान रखना आवश्यक है क्योंकि यह रोग त्वचा और दूसरे ऊतकों को भी प्रभावित करता है।

कभी-कभी रह्मेटॉयड आर्थराइटिस का प्रभाव शरीर के अन्य अंगों, जैसे हृदय, आँख, फेफड़े, गुर्दा तथा जिगर पर भी पड़ता है। अतः रोग को प्रारम्भिक अवस्था में ही समझ, रोग मुक्त होने के उपाय आवश्यक हैं। आर्थराइटिस की जांच के सम्बन्ध में भी कुछ जानकारी आवश्यक है।

आर्थाराइटिस के लिए इरीथोसाइट सेडिमेनटेशन रेट (ई.एस.आर.) रह्यूमेटॉयड फैक्टर टैस्ट (आर.एफ.टी.) एंटी न्यूक्लियर एंटीबाडीज टैस्ट (ए.एन.ए.) फुल ब्लड काउन्ट (एफ.बी.सी.) साइनोवियल फ्लूड एनालिसिस (एस.

30-ए, रामगंज बाजार, जयपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एफ.ए.) एक्सरे बायोप्सी, कंप्यूटराइज्ड टोमोग्राफी आर्थोस्कोपी मैगनेटिक रिसोनेंस इमेजिंग अल्ट्रासाउन्ड, बोन डेक्सा स्कैन आदि टैस्ट कराने चाहिये । आर्थाराइटिस कोई संक्रमण रोग नहीं है इस रोग के व्यक्ति के आस-पास रहने वाले व्यक्तियों पर इस रोग का कोई कुप्रभाव नहीं पड़ता ।

स्त्री-पुरुष का शारीरिक सम्बन्धों पर आर्थाराइटिस का प्रभाव पड़ सकता है । मिलन, सम्पर्क, संभोग में कठिनाई आ जाती है इसके लिए कुछ विशेष मुद्राओं को अपनाकर इसका निदान किया जा सकता है ।

रोग की रोकथाम के लिए मोटापा दूर करना आवश्यक है । यदि व्यक्ति का वजन अधिक है तो शरीर के अलग-अलग जोड़ों पर भार पड़ता है जैसे कमर, कूल्हे, घुटने, पंजों पर भार को न पड़ने देने के लिए वजन घटाएं। वजन घटाने के लिए संतुलित भोजन लें । ज्यादा से ज्यादा फल सब्जियाँ खाएं इससे शरीर में विटामिन एवं मिनरल सही मात्रा में मिलेंगे ।

फास्ट फूड जो आज फैशन में आ गया है और बच्चों का प्रिय भोजन है । इससे दूरी बनाए रखें क्योंकि यह खोखला बनाता है - इससे तो अच्छा है ब्रेड पर दालें, आलू फल सब्जियाँ रखकर खाई जा सकती हैं । इससे स्वाद भी बनेगा और पोषण भी मिलेगा । वसायुक्त भोजन, चिकनाईयुक्त भोजन, तली हुई चीजों का त्याग लाभदायक है । चीनी, मिठाई की मात्रा कम करने से बढ़ा वजन घटेगा ।

विश्व स्वास्थ्य संगठन व्यक्ति को कम से कम पांच तरह के फल तथा सब्जियाँ खाने का परामर्श देता है इससे शरीर को एंटीऑक्सीडेंट व विटामिन मिलते हैं । नियमित व्यायाम भी माँसपेशियों को मजबूत करता है, हड्डियों को स्वस्थ रखता है । व्यायाम से जोड़ों में हरकत के कारण जोड़ों की चिकनाई (साइनोवियल फ्लूइड) का बहाव सही करता है । इससे कार्टिलेज स्वस्थ रहते हैं ।

जोड़ों के दर्द में तीन तरह के व्यायाम लाभप्रद हैं पहला है - रेंज ऑफ मोशन । यह शरीर के हर हिस्से को लचीला बनाता है । यह प्रतिदिन करना चाहिए । दूसरा हैं- शक्तिवर्धक व्यायाम और तीसरा है एरोबिक व्यायाम । इससे शरीर की नाड़ियों को मजबूती मिलती है । योग भी अच्छा व्यायाम है । व्यक्ति का वजन कितना होना चाहिए - इसके भी सिद्धान्त हैं ।

सामान्यतया पांच फुट की लम्बाई वाली महिला का वजन पचास किलो होना चाहिये । इसके बाद हर एक इंच लम्बाई पर एक किलो वजन अधिक होना चाहिये और इसी तरह एक इंच लम्बाई कम होने पर एक किलो वजन कम करते चले जाएं ।

इस सिद्धान्त में पुरुषों की लम्बाई में पांच-दस किलो की छूट दी जाती है अर्थात् पांच फुट लम्बाई वाले पुरुष का वजन पचपन या साठ किलो वजन भी उचित एवं स्वस्थता का प्रतीक है । थकान और जोड़ों के दर्द में काफी गहरा सम्बन्ध है अतः थकान से उबरने के लिए काम काज का स्टाइल में बदलाव लाना चाहिये । सकारात्मक दृष्टिकोण रखने से रोग पर काबू पाया जा सकता है । रोग मुक्ति के लिए अच्छे चिकित्सक की सेवाएं भी आवश्यक हैं ।

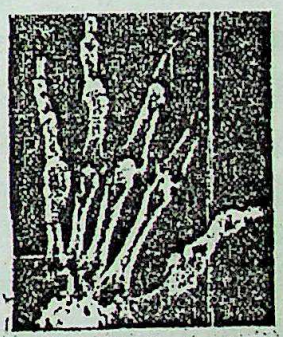

रूमेटॉयड आर्थराइटिस से प्रभावित हाथ

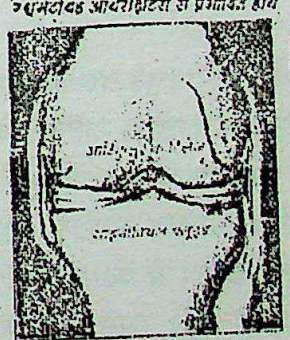

यह है स्वस्थ घुटने की बनावट

जोड़ों में जकड़न, सूजन तथा अकड़न आर्थराइटिस की निशानी है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टमाटर (Tomato) - कितना गुणकारी है !

डा० इन्द्रमोहन झा 'सच्चन' पी.एच.डी. (आयुर्वेद)

टमाटर भारत के सभी प्रान्तों में सलाद एवं सब्जी के रूप में खाया जाता है जो अपने गुणों के कारण सब्जी ही नहीं बल्कि अन्य फलों की भाँति ही एक उत्तम और परमगुणकारी फल है क्योंकि मनुष्य की जीवन रक्षा के लिए जिन-जिन तत्त्वों की आवश्यकता होती है, वे सब तत्त्व प्राय: इसमें पाये जाते हैं । इसमें जल 94.10%, प्रोटीन 0.90%, वसा (चिकनाई) 0.20%, कार्बोहाइड्रेट 3.75%, खनिज पदार्थ 1.05%, पोटाशियम 82.50%, सोडियम 32.90%, कैल्शियम 11.35%, मैग्नेशियम 13.55%, आयरन (लौह) 1.00% मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम, फास्फोरस 10.75, सल्फर (गंधक) 5.00, सिलकोन 1.75 क्लोरीन 18.00% के अतिरिक्त इसमें विटामिन 'ए', 'बी' तथा 'ई' भी होता है । इसमें पाये जाने वाले विटामिन्स में यह विशेषता है कि जहाँ दूसरे पदार्थों में पाये जाने वाले विटामिन्स जरा-सी आँच लगने से ही नष्ट हो जाते हैं, वहाँ इसमें पाये जाने वाले विटामिन्स साधारण अग्नि से नष्ट नहीं होते । डाक्टर क्रिनसन ने यह सिद्ध किया है कि जो विटामिन्स ताजे टमाटर में होते हैं वे ही सूखे तथा डिब्बों में बन्द और अचार, मुरब्बे या चटनी के रस में सुरक्षित रखे हुए टमाटरों में भी पाये जाते हैं । इसके अन्दर जो खट्टापन है कई लोग उसको आक्फेलिक एसिड मानते हैं मगर यह उन लोगों का भ्रम है । इसका खट्टापन सायट्रिक एसिड का है जो कि नींबू और नारंगियों में भी पाया जाता है ।

इसके फल शुरू में हरे और पकने पर लाल हो जाते हैं । यह कुछ खट्टा, मीठा, रुचिवर्द्धक, अग्निदीपक और शक्तिवर्द्धक है । मधुमेह ग्रस्त रोगियों के लिए टमाटर सेवन विशेष लाभप्रद है । डा०पी०जे०केब्रेज ने लंदन रिपोर्ट में लिखा है कि मधुमेही के लिए टमाटर से बढ़कर विशेष लाभदायक कोई खाद्य-पदार्थ नहीं है । इससे खून की कमी या रक्ताल्पता दूर होती है । मूत्र में शक्कर का परिमाण भी धीरे-धीरे कम होकर मधुमेह अनायास ही दूर हो जाता है । शरीर की स्थूलता, उदर रोग, अतिसार, अपेंडिसाइटिस आदि रोगों में टमाटर का सेवन लाभदायक सिद्ध हुआ है । यूँ तो इसके सेवन से दस्त साफ होता है, रक्त विकार दूर होता है और बेरी-बेरी, गठिया और एक्जिमा की हालत में बहुत फायदा होता है । बच्चों को सूखा रोग में पके टमाटर यानि लाल टमाटर का रस देने से अच्छा लाभ होता है । पके (लाल) टमाटर को कच्चा ही खाना चाहिए । सब्जी में डालकर खाने से इसके गुण कुछ कम हो जाते हैं । छोटे-छोटे टमाटर लाभदायक नहीं होते । वात प्रधान या वात-पित्त प्रधान व्याधि के लिए इसका सेवन लाभदायक नहीं होता, क्योंकि ऐसे व्यक्ति को खुजली पैदा करता है । विशेषकर उस हालत में जबकि वह इसे बेसन में मिलाकर तेल में पकाकर खाते हैं । इसलिये इसको बेसन और तेल के साथ नहीं खाना चाहिए ।

उपयोग

चर्मरोग - रक्तदोष के कारण जब त्वचा पर लाल चट्ठे (चकत्ते) उभड़ते हों, मुँह पर सूजन हो, दाँतों से रक्त आता हो, स्कर्वी रोग हो गया हो, तब लाल पके टमाटरों का दो-दो तोले रस दिन में चार बार देने से लाभ होता है ।

ज्वर - टमाटर का रस या क्वाथ बनाकर सेवन करने से ज्वर के प्रकोप की वजह से रक्त में जो हानिकर पदार्थों की वृद्धि होती है, वह शीघ्र ही दूर हो जाती है और रोगी को शान्ति मिलती है ।

जीभ का मैलापन - जीभ पर सफेदी छा गई हो तो उसे । या 2 टमाटर प्रतिदिन सेंधा नमक के साथ सेवन करने से लाभ होता है ।

दुर्बलता (कमजोरी) - टमाटर का रस पीने से लाभ होता है, थकावट दूर होती है, भूख बढ़ती है और पाण्डु रोग में लाभ होता है ।

नेत्र विकार - अल्पदृष्टि, रतौंधी इत्यादि नेत्रविकार में टमाटर का रस सेवन करने से लाभ होता है । (वनौ०च०)

सदस्य, भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद्, बटेश्वर भवन, पो०-राँटी, मधुबनी-847211 (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पञ्चकर्म विवेचन भेषज चतुष्क के सन्दर्भ में

[1]डा० अनूप कु० गक्खड़, एम०डी० आयुर्वेद
[2]सीमा चोपड़ा, बी०ए०एम०एस०, तृतीय व्यवसायिक

आयुर्वेद शास्त्र में पंचकर्म चिकित्सा पद्धति का एक अतीव विवादास्पद स्थान है ।

पंचकर्म शब्द का चरक ने ही काफी प्रयोग किया है। सुश्रुत और वाग्भट्ट ने इस शब्द का आग्रह नहीं किया है।

पंचकर्म का चरक संहिता में प्रथम संदर्भ :- पंचकर्म शब्द का प्रथम उल्लेख सूत्रस्थान के द्वितीय अध्याय में जिसका नाम 'अपामार्गतण्डुलीय' है, में मिलता है ।

तान्युपस्थित दोषाणां स्नेह स्वेदोपपादनैः ।
पंचकर्माणि कुर्वीत मात्राकाल विचारयन् ॥

(च०सू० 2-15)

आरम्भ में पंचकर्मांगभूत द्रव्यों का वर्णन कर अन्त में कहते हैं कि जिसके दोष उत्क्लिष्ट हुए है, उसे स्नेह, स्वेद कराकर मात्रा और काल के ध्यान में रख 'पंचकर्म' करना चाहिए ।

दीर्घञ्जीवितीय अध्याय में पंचकर्म

1. **जांगम द्रव्य** - जांगम प्राणियों में प्राप्त वस्तुओं में विविध जाति के मधु, घृत, वसा, मज्जा आदि का वर्णन है जो स्नेहार्थ प्रयोग में लाए जाने वाले द्रव्य हैं ।
2. **औद्भिद द्रव्यों के प्रयोज्यांग में** - तेल का वर्णन है जो स्नेहानादि कर्मों में प्रयुक्त होता है ।
3. **मूलिनी द्रव्यों में** - 16 मूलिनी द्रव्यों में
   A. वमन के लिए प्रयुक्त द्रव्य - शंखपुष्पी, बिम्बी, वचा ।
   B. शिरोविरेचन के लिए प्रयुक्त द्रव्य- श्वेता, ज्योतिष्मती ।
   C. विरेचन के लिए प्रयुक्त द्रव्य - हस्तिदन्ती, श्यामा त्रिवृत्, अधोगुडा, सप्तला, दन्ती, गवाक्षी, विषाणिका अजगन्धा, द्रवन्ती, क्षीरिणी ।
4. **फलिनी द्रव्यों में** - 19 फलिनी द्रव्यों में
   A. वमन एवं आस्थापन के लिए प्रयुक्त द्रव्य - धामार्गव, इक्ष्वाकु, जीमूत, कृतवेधन, मदन, कुटज, त्रपुष, हस्तिपर्णी ।
   B. नस्य के लिए - अपामार्ग ।
   C. विरेचन के लिए - शेष 10 औषधियां ।
5. **चार महास्नेह** - घृत, तेल, वसा, मज्जा ये चार प्रकार के स्नेह बतलाए गए हैं । इनका प्रयोग पान, अभ्यञ्जन, बस्ति, नस्य के लिए होता है ।
6. **लवण के गुणों के वर्णन में** - इसका प्रयोग लेप लगाने, शरीर के नीचे तथा ऊपर के भाग का स्नेहन, स्वेदन करने, निरूह और अनुवासन देने, शिरोविरेचन करने हेतु किया जाता है ।
7. **मूत्र के गुणों का वर्णन करते समय** - इसका उपयोग आस्थापन, विरेचन और स्वेदन कर्मों में बताया है ।
8. **दूध के सामान्य गुणों में** - नस्य, आलेप, अवगाहन, वमन, आस्थापन बस्ति, विरेचन और स्नेहन इन सबमें दूध का प्रयोग समुचित होता है ।
9. **शोधनार्थ तीन वृक्ष** -
   1. अश्मन्तक - वमन के लिये प्रयोग ।
   2. स्नुही - विरेचन के लिये प्रयोग ।
   3. अर्क दुग्ध - वमन एवं विरेचन में प्रयुक्त ।
10. **शोधनार्थ अन्य तीन वृक्ष** -

प्रतीक, तिल्वक की छाल प्रयोग - विरेचन हेतु

अपामार्गतण्डुलीय अध्याय

इस अध्याय में पंचकर्मांगभूत द्रव्यों का वर्णन है । प्रथम अध्याय में भी मूलिनी द्रव्य वर्णित है परन्तु वहां 'पंचकर्म' विषय में द्रव्य नहीं बताए गये हैं । अतः यहां पंचकर्म प्रवृत्ति के साथ उनका अभिधान किया है ।

शिरोविरेचन द्रव्यों का प्रधान वर्णन है क्योंकि शिर उत्तमांग है । जिस प्रकार मूल से सिंचन करने से शरीर निरोग रहता है उसी प्रकार ऊर्ध्वांग रोगरहित रहने से शरीर स्वस्थ रहता है ।

1. **शिरोविरेचन** - में श्रेष्ठ द्रव्य होने से अपामार्ग का उल्लेख सबसे पहले किया गया है, इसीलिए इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अध्याय का नाम अपामार्ग तण्डुलीय अध्याय रखा गया है ।

2. **वमनार्थ द्रव्यों में** - मदनफल श्रेष्ठ है वं उपद्रव रहित है ।
3. **विरेचनार्थ द्रव्यों में** - त्रिवृत श्रेष्ठ ।
4. **आस्थापन बस्ति में** - पाटला श्रेष्ठ ।
5. **अनुवासन बस्ति में** - आस्थापन बस्ति के द्रव्यों को स्नेह से सिद्ध कर प्रयोग करना चाहिये ।
6. **वमन द्रव्य प्रयोग समय** - आमाशय आश्रित श्लेष्मा तथा पित्त उत्क्लेश की स्थिति में ही करना चाहिए यद्यपि पित्त उत्क्लेश साक्षात वमन का विषय नहीं ।
7. **बस्ति क्रम** - में निरूह का वर्णन पहले किया है क्योंकि यह दोष हरण कार्य प्रधान रूप से करता है ।
8. **पंचकर्म का प्रयोग कैसे और कहाँ करना चाहिये** - इसके बारे में चरक का कथन है कि स्नेहन स्वेदन द्वारा दोष जब उत्कलेश की स्थिति में आ जाये तो मात्रा और काल का विचार कर पंचकर्म करना चाहिये । दोष उल्कलेशनार्थ एवं शोधन के क्षोभ से वात की वृद्धि न हो, इस हेतु पूर्वकर्मों का प्रयोग प्रशस्त है ।
9. **इह वमनादिषु कर्म लक्षण बहितिधकर्त्तव्यता योगि दोष निर्हरण शक्तिज्यापस्त्वम् ॥**

चक्रपाणि ने अपनी टीका में पंचकर्म की अनिवार्यता का वर्णन किया है ।

1. बहुत इति कर्त्तव्यता ।
2. दोष निर्हरण शक्ति ।

स्नेहन - स्वेदन के पूर्वकर्म - इसलिये कहा है क्योंकि उनके-उनके द्वारा शोधन का कार्य सम्पन्न नहीं होता अपितु संशमन का कार्य ही सम्पन्न होता है ।

अनुवासन का पंचकर्म में समावेश - इसलिये किया है क्योंकि यह पुरीष तथा पक्वाशयगत वात का निर्हरण करता है । पक्वाशय वात का मूल स्थान है और मूल स्थान से दोषों का निर्हरण होने से सम्पूर्ण शरीर में उसका प्रकोप नहीं होता है ।

10. **यवागू** - शोधन के अयोग के कारण मंदता को प्राप्त हुई जठराग्नि की वृद्धि के लिये एवं वमनादि के अतियोग से अत्यन्त शूलादि की चिकित्सा हेतु यवागुओं का वर्णन किया गया है ।

आरग्वधीय अध्याय - उपनाहों के कुछ प्रयोग आरग्वधीय अध्याय में कहे गये हैं । इसका प्रयोग स्वेदन कर्म हेतु किया गया है

उदाहरण - गेहूं का आटा, बकरी का दूध और घृत एकत्र मिलाकर पुल्टिस बाँधने से वातरक्त की वेदना शान्त होती है ।

स्वेदहर लेप - शिरीष की छाल, लाम्ज्जक, हंस तथा लोध्र इन सबका लेप लगाने या त्वचा पर पूर्ण मलने से त्वचा के विकार और अतिस्वेद विकार नष्ट होते हैं ।

षड्विरेचनशतीय अध्याय - इस अध्याय में 600 विरेचन योग हैं । यहाँ विरेचन शब्द से वमन और विरेचन दोनों का ग्रहण होता है ।

1. वमन योग - 355

मदन फल	-	133
जीमूतक	-	39
इक्ष्वाकु	-	45
धामार्गव	-	60
कृतवेधन	-	60
वत्सक	-	18

(च०सू० 4-4)

विरेचन योग	-	245
श्यामा त्रिवृत	-	100+10
चतुरङ्गल	-	12
लोध्र	-	16
महावृक्ष	-	20
दन्ती द्रवन्ती	-	48

(च०सू० 4-4)

2. **विरेचन द्रव्यों के आधार** - क्षीरमूलत्वक् पत्रपुष्पफल (च०सू० 4-5)

3. **भेदनीय महाकषाय** - यह 10 द्रव्य कर भेदन विरेचन करते हैं । सुबहा, अश्र्य, उरुबक, अग्निमुख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्रा, चित्रक, चिरबिल्व, शङ्खिनी, शुक्लादनी, स्वर्णक्षीरी (4)

4. **स्वेहोपग** - मृद्वीक, मधुक, मधुपर्णी, मेदा, विदारी, काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, जीवन्ती शालपर्णी (श)
5. **स्वेदोपग** - शेभाञ्जन, एरण्ड, अर्क, वृश्चीर, पुनर्नवा, यव, तिल, कुलत्थ, माष, बदर (22)
6. **वमनोपग** - मधु, मधुक, कोविदार, कर्बुदार, नीप, विदुल, बिम्बी, शणपुष्पी, सदापुष्पी, प्रत्यक्पुष्पी (23)
7. **विरेचनोपग** - द्राक्षा, काश्मर्य, परूषक, अभया, आमलक, विभीतक, कुवल, बदर, कर्कन्धु, पीलु (24)
8. **आस्थापनोपग** - त्रिवृत, बिल्व, पिप्पली, कुष्ठ, सर्षप, वचा, वत्सकफल, शतपुष्पा, मधुक, मदनफल (25)
9. **अनुवासनोपग** - रास्ना, सुरदारु, बिल्व, मदन, शतपुष्पा, वृश्चीर, पुर्ननवा श्वदष्ट्रा, अग्निमांद्य, श्योनाक (26)
10. **शिरोविरेचनोपग** - ज्योतिष्मती, क्षवक, मरिच, पिप्पली, विङङ्ग, शिग्रु, सर्षप, अपामार्गतण्डुल, श्वेता, महाश्वेता (27)
11. **पुरीष विरजनीय** - पुरीष में रहने वाले दोषों का जो निराश करते हैं उन्हें पुरीष विरजन कहते हैं । इनमें जो द्रव्य कहे गए हैं उनमें से कुछ यत्र-तत्र विरेचन में भी उल्लखित हैं । (32)
12. **मूत्रविरेचनीय** - वृक्षादनी, श्वदंष्ट्रा, वसुक, वशिर, पाषाण भेद, दर्भ, कुश, काश, गुन्द्रा, इत्कट (35)

शुद्ध स्वर्ण भस्म से निर्मित

बैद्यनाथ

रुमार्थो गोल्ड

पुराने जोड़ों के दर्द की प्रभावी दवा

रुमार्थो कैप्सूल में स्वर्ण भस्म का विशेष मिश्रण होने से यह गठिया वात एवं जीर्ण जोड़ों के दर्द पर व मांसपेशियों के रोगों में अत्यंत प्रभावी औषधि है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुनर्जन्म की पृष्ठभूमि में त्रिदोष की भूमिका

दिवाकर ठाकुर

विज्ञान की प्रगति तीव्र गति से क्रियाशील है जिससे विज्ञान उत्तरोत्तर विकासोन्मुख है । नित्य नये-नये आविष्कार कर लोगों को आरामतलवी बनाता जा रहा है । अतएव कोई भी कठिन समस्या का समाधान संभव कर दिया है । यह सद्य: देखा जा रहा है कि विज्ञान ही मानव को चन्द्रमा और अन्य ग्रहों पर ले जाकर वहाँ के वातावरण की जानकारियों को विश्व के सामने प्रसारित कर दिया है । इतना होने के बावजूद विज्ञान की ओर उंगली उठ जाती है । आश्चर्यों में एक आश्चर्य यह है कि मृत्यु के सम्बन्ध में अर्थात् मृत्यु क्यों होती है, मृत्यु के बाद मृत आत्मा का क्या होता है, मृतात्मा किस जगह पर जाता है, वहाँ क्या देखता है, आत्मा की अमरता और उसमें भूत, वर्तमान व भविष्य के बारे में कोई सिद्धान्त वह प्रकट नहीं कर पाया है ।

हमारे प्राच्य उद्भट विद्वान इस विषय की जानकारी के सम्बन्ध में बहुत कुछ लिखकर छोड़ गए हैं । हमारे पूर्वज अपने दिव्य ज्ञान से शास्त्र, वेद, पुराण, महाकाव्य आदि दुर्लभ ग्रन्थों की रचना कर हमें धरोहर के रूप में छोड़ गए हैं । आधुनिक विज्ञान के उत्तरोत्तर विकास करने में इन्हीं ग्रन्थों का योगदान रहा है, यह निर्विवाद है । पुराण के अठारहों अंगों में गरुड़ पुराण में ही इस विषय की जानकारियों का समावेश है । सनातनी, आस्तिक मत के मतावलम्बी एवं समृद्धशाली परिवार में जब कोई अतिवृद्ध व्यक्ति की मृत्यु होती है तो मृत शरीर का दाह संस्कार कर दूसरे दिन से कर्मकांडी पंडित द्वारा गरूड़ पुराण पाठ का आयोजन कर पूरे दस दिनों तक पाठ सुनाया जाता है । यानि क्षौर कर्म दस दिन में होता है । पाठ के अंतिम दिन पाठ सुनाने वाले पंडित को यथासाध्य दक्षिणा देकर विदा कर दिया जाता है ।

मृत्यु के बाद जीव कहाँ और किस मार्ग से जाता है, स्वकर्मानुसार नरक या स्वर्ग में पहुँचकर वहाँ क्या देखता है, कितने दिनों तक वहाँ रहकर पुनः मृत्युलोक में कब आता है, इन विषयों की जानकारी गरुड़ पुराण में ही दिया गया है ।

गरुड़ पुराण में वर्णित कुछ अंश जैसे मृत्युस जीव की उत्पत्ति के बारे में जो भी अन्वेषण किया है उसे हमारे पूर्वजों ने पूर्व ही अपना मन्तव्य प्रतिपादित कर दि हैं । उनके इस प्रकाण्ड विद्वता के सामने नतमस्तक होन पड़ता है । जीव की उत्पत्ति के सम्बन्ध में गरुड़ पुराण क दृष्टान्त संक्षेप में दिया जा रहा है ।

यह मानव काया पाँच तत्व जैसे क्षिति, जल, पावक, गगन और समीर से निर्मित है । हर मानव शरी में यह पंच तत्व विद्यमान रहता है । इन पाँच तत्वों क कितना अंश किस रूप में मिला रहता है, इसकी जानकार के लिए आधुनिक विज्ञान जी तोड़ अध्ययन मननशील हैं । चरक, सुश्रुत और वाग्भट आदि आयुर्वेद के ग्रन्थों त्रिदोष के बारे में विशद वर्णन दिया है । जो चिकित्सक त्रिदोष को समझ-बुझकर अपने रोगी के शरीरस्थ त्रिदो के अस्तित्व की सही जानकारी कर लेते हैं, वे अपने रोग की चिकित्सा करने में सफलीभूत होकर यश-अर्थ प्राप्त कर लेते हैं ।

पुनर्जन्म की पृष्ठभूमि पर गौर करने से पहले त्रिदोष की जानकारी संक्षेप रूप में होना पाठकों के लि जरूरी है । यह प्रसंग अपने आप में इतना विस्तृत है कि सामान्य रूप से ही जिक्र किया जा सकेगा, अत्यन्त लघुनिबंध वृहत् रूप ले लेगा । जिस तरह मकान बनाने के लिए तीन खंभों का रहना आवश्यक है, उसी तरह हमा शरीर तीन दोषों पर ही आधारित है । वायु, पित्त और कफ को त्रिदोष कहते हैं । इन तीन दोषों में वायु की प्रभावन एवं सक्रियता सर्वाधिक्य है । यह वायु शरीर रूपी यंत्रव अवयव और सभी धातुओं का संचालक और शरीर के विविध प्रकार की चेष्टाओं का प्रवर्त्तक है । जिस प्रकार बिजली की तारें बिजली को एक जगह से दूसरी जगह ले जाती हैं, उसी प्रकार स्पर्श तथा शब्दादि इंद्रियों को ए

झंडु फार्मेसी, जेल रोड, आरा, बिहार - 803301

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जगह से दूसरी जगह ले जाने वाला वायु ही है । यह वायु गति का कारण, अक्षय, प्राणियों का उत्पादक एवं संचालक है, सुख-दुखकारक मृत्यु-यम का नियामक, सर्वकर्मा, विश्वरूप, सर्वांग, विष्णु, विभु, पृथिव्यादि सूक्ष्मों को एक लोक से दूसरी लोक ले जाने वाला वायु होता है। जब हम कोई काम करते हैं तो यह वायवीय तत्व, मन और माँसपेशियों के बीच माध्यम बनता है । अतएव यह स्पष्ट है कि वात नाड़ी स्वयं संकुचित होकर गति पैदा करती है तथा हर्षोत्साह का जनक है ।

मिथ्या आहार-विहार के कारण वायु के प्रकुपित होने पर नानाविध विकारों को उत्पन्न करता है, बल-वर्ण, सुख एवं आयु को क्षीण करती है । मन को दुखित करना, सम्पूर्ण इंद्रियों को नष्ट करना, गर्भ को अनिष्ट पहुँचाना तथा भय, शोक, मोह, दीनता, अति प्रलाप को उत्पन्न करता है । मानव जीवन के अस्तित्व को बरकरार रखने में अहम भूमिका अदा करता है । जो वैद्य विकृत एवं अविकृत वायु के लक्षणों को भली-भाँति नहीं जानते हैं वे दोषोद्ध्वंसक का कारण और निवारण करने में असमर्थ होते है वे चिकित्सा कुशल नहीं होते हैं ।

पित्त भी शुभ और अशुभ का कारण है । पित्त जब साम्यावस्था में रहता है तो शुभ और विषम अवस्था की स्थिति में रहता है तो अशुभ का कारण बनता है । पित्त जब प्रकृतिस्थ (अविकृत) रहता है तो पाचन-अपचन, क्षुधा, न देखना, शरीरस्थ उष्णता को मात्रावत् रखना, हर्ष, भय, क्रोध, हर्ष, मोह-प्रसाद और दुख-सुख को उत्पन्न करता है और मिथ्याहार-विहार से कुपित होने पर अपचन, न देखना, शरीर में उष्णता का अनियमित रहना, मृत्यु का कारण, शरीर के वर्ण का बदल जाना, भय क्रोध, मोह आदि अशुभ कर्म करता है ।

कफ के अविकृत रहने पर दृढ़ता, पुष्टि, उत्साह, बलवान, मैथुन सामर्थ्यवान, वीर्यवान, ज्ञान तथा बुद्धिदायक होता है । कफ जब विकृत हो जाता है तब शिथिलता, जड़ता, आलस्य, नपुंसकता, अज्ञान एवं मोहादि अशुभ का कारण बनती है । उपरोक्त त्रिदोष के बारे में संक्षिप्त जानकारी है ।

आदमी जब मर जाता है तो पित्तांश (उष्णता) के निकल जाने से शरीर शीतल हो जाता है और नलिकाओं (वायुवाहक नाड़ी) में वायु भरा रहता है, यही वायु जब निकल जाती है तो श्वास-प्रश्वास की क्रिया बन्द हो जाने से श्वासावरोध कहा जाता है । जब तक किसी नालिका में वायु बची रहती है तब तक मृत घोषित नहीं किया जा सकता है क्योंकि अंगों में फड़कन होता रहता है । पित्तांश के निकल जाने के बाद जलोदर, उदर आदि रोगों से ग्रसित भी जीवित रहता है । यही वायु अंतिम तत्व है जो शरीर को अंत में छोड़ देती है । यही वायु शरीर छोड़कर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में विलीन हो जाती है । यदा-कदा ऐसा भी होता है कि शरीर से निकली वायु किसी कारण वश ब्रह्माण्ड में नहीं मिल पाती है तो गोलदार गाँठ बन कर विचरण करती रहती है ।

वायु मंडल के तरंगों से तरंगित होकर वायु की विचरणशीतला से सुदूर देशों से बात की बात में सम्पर्क स्थापित कर लेते हैं, ठीक उसी प्रकार जीव विशेष के मुँह से मृत्यु के समय निकली वायु विचरण करती हुई कहाँ से कहाँ पहुँच जाती है जो अनुमान से परे है । कभी-कभी यही वायु अपने स्थूलरूप में श्वास द्वारा किसी अन्य जीवित व्यक्ति के शरीर में प्रविष्ट कर जाती है । हाँ ! यह गौरतलब है कि यदि वह व्यक्ति उस समय औरत के साथ हम बिस्तर पर संभोगरत हो तो इस शारीरिक संबंध से जो महिला गर्भधारण करती है तो उसके गर्भ में उस मृतक आत्मा का समावेश हो जाता है । ऐसी घटना बिरले ही घटित होती है, अतः यह दुर्लभ संयोग है । लेकिन होता है । अतएव जब कभी इस तरह दुर्लभ संयोग से कोई जीव इस संसार में जन्म धारण करता है तो वह पिछली जन्म कथा का वृतान्त सुनाकर लोगों को आश्चर्य में डाल देता है ।

यह है पुनर्जन्म की पृष्ठभूमि जिसे हम यदा-कदा सुनते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उदर रोग और आयुर्वेद

वैद्य चन्द्रदेव मंडल

महत्वपूर्ण होते तो शरीर के सभी-अंग हैं; पर उदर का महत्व कुछ बढ़ कर होता है । आँखें दो हैं; कान दो, हाथ-पैर भी दो-दो हैं । यदि एक में कुछ गड़बड़ भी हो जाए, तो दूसरा भी है, काम तो चल ही जाना है । नाक एक है, मगर सांस लेने व छोड़ने के लिए रंध्र दो हैं, मगर उदर एक, अगर यह बिगड़ जाए तो क्या हो ? मुश्किल तो होगी न ! इसी तरह जननेन्द्रिय भी एक है प्रत्येक शरीर में । इसकी साज-संभाल जरूरी हो जाता है, बहुत जरूरी ।

पेट की देख-भाल संबंधी सावधानियाँ

※ खाना भूख लगने पर जरूर खाएँ, क्योंकि शरीर रूपी गाड़ी को सुचारू रूप से चलाने में भोजन ईंधन का काम करता है । ईंधन न मिले तो गाड़ी न चले, दूसरे अंग भी कमजोर हो जायँ ।

※ खाना समय पर खाना अच्छा है, लेकिन ज्यादा खाना पेट को बिगाड़ता है ।

※ खाने के बाद पेशाब कर लेना अच्छा होता है, इससे मूत्र-संबंधी रोगों से शरीर बचा रहता है ।

※ ज्यादातर लोग हिसाब से नहीं खाते, गलत आहार करते हैं । कब्ज पैदा होता है तो जुलाब लेते रहते हैं । यह भी पेट के लिए गड़बड़ है । इससे पाचन-क्रिया कमजोर पड़ जाती है ।

※ भोजन करने के बाद तुरन्त सोना हानिकर है । इससे कई तरह की बीमारियाँ पैदा हो सकती हैं ।

※ गेहूँ के आटे से चोकर निकाल कर रोटी खाना ठीक नहीं; क्योंकि इससे कब्ज का जन्म होता है । चावल खायें तो माड़बंधा, यह ताकतवर-पौष्टिक होता है ।

※ छिलके रहित दाल खाने की आदत डालें, ज्यादा फायदेमंद हैं । सब्जियाँ व फल जरूर लें । हरी सब्जियाँ व रेशेदार फल पेट को अच्छा लाभ पहुँचाते हैं ।

※ भोजन सुपाच्य हो । उसे भी चबाकर खाना उचित है । पेट में पचाने की आँत है, दाँत नहीं हैं वहाँ जो चबाएँ ।

※ भोजन में अधिक तेल-घी-मसाले का प्रयोग अनुचित है । बर्फ, सोडा, लेमन, आइसक्रीम, चॉकलेट न लें तो बेहतर । अगर लेना ही हो तो जहाँ तक बने कम लें । ये पेट को सुधारते नहीं बिगाड़ते ही हैं ।

※ भोजन करने का स्थान साफ-सुथरा हो, भोजन पाक-साफ हो, शाकाहार हो तो अति उत्तम । भोजन एकान्त में, शान्त भाव से ग्रहण करें ।

※ पानी छान कर पीयें; शुद्ध पीयें; धीरे-धीरे पीयें; गटगटा कर नहीं । पानी भोजन के एक घंटा पहले या आधा घंटा बाद पीयें । इससे भोजन जल्दी से पचता है, आसानी से पचता है ।

※ दूध के साथ खटाई लेना या खट्टी वस्तु का आहार लेना बहुत हानिकारक है । कई बीमारियाँ इससे उत्पन्न होती हैं ।

※ फल खाली पेट न लें तो अच्छा । इन्हें भोजन के साथ या बाद में लें । खासकर खीरा, ककड़ी, तरबूज खाली पेट न लें ।

※ रात में तांबे के पात्र में रखा जल का पान सुबह में करना पेट और स्वास्थ्य के लिए हितकर है । पर तांबे-पीतल के बिना कलई वाले बर्तन में खाना पकाना व खाना दोनों अहितकर हैं ।

उदर रोग से जुड़े कारण

※ जब हम कुछ ऐसा-वैसा, अनर्गल खा-पी लेते हैं; जो पेट को सहन नहीं होता तब पेट गड़बड़ हो जाता है । आहार-विहार दोनों का सही होना जरूरी होता है । आहार-विहार संबंधी गड़बड़ होने से उदर और शरीर से परेशान होना पड़ता है ।

※ कर्मज, दोषज और उभयज तीन तरह के रोगों में उदर विकार दोषज रोग की श्रेणी में आता है । उदर के रोग वायु, पित्त व कफ दोष की असाम्यता से उत्पन्न होते हैं; जो औषधि सेवन व आहार-विहार में सुधार से ठीक हो जाने वाले होते हैं ।

※ जो भी रोग शरीर को कष्ट देते हैं, शारीरिक कहलाते हैं । ये औषधि से शमित होने वाले होते हैं । उदर रोग शारीरिक ही होते हैं । चिन्ता की बात यह है कि

ग्राम-हरिचक, पोस्ट-काशडी, जिला-भागलपुर - 813202

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बदली जीवन-शैली और खान-पान के अनियंत्रण ने उदर रोगों को भी जटिल बना दिया है । आज की भाग-दौड़ में स्वास्थ्य-रक्षक मान्यताएँ पीछे छूट रही हैं, सेहत दांव पर लगी हुई है ।

नतीजा यह है कि आज कल बहुत लोग उदर के रोग से घिरे हुए हैं । गिनती के लोग ही पेट की ओर से पूर्ण सुखी मिलते हैं । बच्चे, जवान और बूढ़े सभी उदर संबंधी परेशानियों के बोझ तले दबे कुहर रहे हैं। हो भी ऐसा क्यों नहीं, जबकि अधिक लोग बीड़ी-सिगरेट का धुआं घोंट रहे हैं । अफीम, भांग, गांजा, मेंड्रेक्स, एल०एस०डी०, हिरोइन आदि के इस्तेमाल के पीछे दौड़ रहे हैं । शराब के ग्लास भर-भर कर हलक में उतार कर उदर में पहुँचा रहे हैं ।

आजकल सामान्य जन शुरू में उत्पन्न हुई बीमारियों के प्रति जागरूक नहीं रहते । ज्यादा बढ़ जाने पर वह उसे जैसे-तैसे नीम हकीमों, झोला-छापों की सलाह पर अनुकूल-प्रतिकूल जैसी-तैसी दवाओं से उसे दबाना चाहता है, सिर्फ राहत चाहता है । नतीजन जब रोग बेकाबू होकर सिर चढ़ जाता है तो रोगी चिकित्सकों के यहाँ लाइन लगाता है ।

आज सस्ती, सरल, प्रभावी निरापद और घरेलू उपलब्ध औषधियों को छोड़ कटु, महंगी, साइड इफेक्ट वाली दवाओं के प्रयोग का माहौल व चलन बन गया है । पैसा ही सब कुछ है, अनाप-सनाप कुछ भी करो, पैसा खर्च करने से सब ठीक हो जाएगा, ऐसी मानसिकता बन गई है । ऐसे में भी रोगों को तो बढ़ना ही है ।

वर्त्तमान समय में आमतौर पर उदर संबंधी जिन रोगों से ज्यादातर लोग परेशान हैं, वे हैं - पेट-दर्द, भूख न लगना, बदहजमी, पेट में कीड़े होना, अम्ल-पित्त, तिल्ली बढ़ना, वायु गोला, गैस, पेचिश आदि ।

उदर संबंधी रोग और आयुर्वेदिक नुस्खे

पाचन संबंधी विकार - नींबू, सेव, पालक, गोभी, गाजर, पपीता आदि का रस पाचन-विकार को दूर कर देता है; आसानी से तब खाया-पीया हजम होने लगता है । सेव के रस को तो इतना उत्तम पाया गया है कि इससे मलाशय व नीचे के आंतों की सड़ांध, संक्रमण, दुर्गन्ध और गैस भी दूर हो जाती है । काली मिर्च, पीपल, छोटी इलायची, दालचीनी, तेजपात, सूखापत्ता, पोदीना के बीस-बीस ग्राम, अनार दाना, सोंठ चालिस-चालिस ग्राम, भुना जीरा एक सौ पचीस ग्राम और धनिया अस्सी ग्राम लेकर कूट-पीस-कपड़छन कर रख लें । नींबू सत्व पद्रंह ग्राम को थोड़े जल में खरल कर इसमें कपड़ छन किया मिश्रण मिलाकर फिर खरल करें । इसी में डेढ़ सौ ग्राम मिश्री खूब मिश्रित होने दें । तब इसमें सौ ग्राम सेंधा नमक मिल-जुल जाने दें । यह योग स्वादिष्ट पाचन चूर्ण कहलाता है, जो पाचन शक्ति की कमी, अरुचि जैसे उदर रोग को दूर करता है । इसे बड़ों को चार ग्राम की मात्रा में सुबह-शाम जल अनुपान से लेना होता है । काली मिर्च, ठीकरी नौसादर दस-दस ग्राम और स्वर्ण गेरू बीस ग्राम शुद्ध घी में भुने हुए मिश्रण को सौंफ अर्क से लेने पर बदहजमी, अफरा व पेटदर्द मिट जाता है, बैद्यनाथ हिंग्वाष्टक चूर्ण लाभदायक है।

※ **आंतों की सूजन व कब्ज** - आसान उपाय है, सुबह-सबेरे एक बड़ा चम्मच ईसबगोल ताजा जल से सेवन करना खाली पेट । इसके लिए गोभी के रस को एक ग्लास रोज पीना लाभ पहुंचाता है । ककड़ी, पपीता, आँवला व गिलोय का रस-सेवन भी लाभदायक है । कब्ज में त्रिफला चूर्ण सुबह-शाम जल से लें ।

※ **पेट का दर्द** - एलुआ, सोंठ, भुनी हींग प्रत्येक पांच ग्राम, काला नमक दस ग्राम, अश्वगंध बीस ग्राम व ग्वारपाठे के पचास ग्राम गूदे को कूट-पीसकर टिकिया बनाते हैं और थोड़ी-थोड़ी मात्रा में गरम जल से लेते हैं । अदरख व नींबू के रस में कुछ काली मिर्च पीसकर पीने से भी पेट दर्द रफा-दफा हो जाता है ।

※ **पेट के कीड़े** - ये तीन प्रकार के होते हैं - हुकवर्म, थ्रेड वर्म व राउण्ड वर्म । घी में भुना हीरा हींग, कमीला व मुश्क काफूर समभाग में मिश्रित चूर्ण की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फक्की रात में सोने से पहले गुड़ खाकर लेना और सुबह में भोजनोपरान्त गुड़ खाकर चूर्ण लेना सभी प्रकार के कीड़े नष्ट कर देता है । रोज सुबह ग्लास भर गुनगुने पानी में एक नींबू का रस लिया करना पेट के कीड़ों से मुक्ति दिला देता है ।

※ **हिचकी होने पर** - हिचकी हो तो बड़ी इलायची के दाने, लौंग, जायफल, सूखा पोदीना, रूमी मस्तगी पांच-पांच ग्राम व गुलकन्द पचीस ग्राम कूट-छान कर रख लें और एक छोटा चम्मच लेने लगें तो यह दूर हो जाती है । पोदीने को चीनी में मिलाकर चबायें या सोंठ को गुड़ में मिलाकर सुंघायें, शान्त होती है इससे हिचकी नहीं होती ।

※ **संग्रहणी** - लगभग बीस-बीस ग्राम छोटी इलायची के बीज, शीतल चीनी व तबाशीर, पाँच ग्राम लौह भस्म, पचास ग्राम कुड़े की छाल मिलाकर कुछ दिन दो बार रोज दही के साथ दो ग्राम की मात्रा में लेने से संग्रहणी छूट जाती है । काला नमक, चित्रक व काली मिर्च का चूर्ण छाछ में मिलाकर पीयें, लाभ करता है ।

※ पलास के निर्यासासव को रोजाना सुबह, दो पहर, शाम को तीन माशे की मात्रा में सेवन करने से संग्रहणी से छुटकारा मिल जाता है । किसी एक नुस्खे को अपनाएँ ।

※ **पेट गैस के रोग** - खाना-खाने के बाद भुनी हुई हीरा हींग, लौंग, ठीकरी नौसादर, नींबू का सत्व, नमक लाहौरी, मुलहठी और देशी अजवायन की दस-दस ग्राम लेकर तैयार हुए चूर्ण की दो ग्राम मात्रा लेते रहने से गैस की शिकायत नहीं रहती ।

※ **कॉलरा (विसूचिका)**- सत्त अजवायन, पिपरमेंट, दस-दस ग्राम, मुश्क कर्पूर बीस ग्राम, लौंग का तेल पाँच ग्राम-सब मिलाकर रखें, कुछ देर धूप में रखने के बाद जरूरत पड़ने पर पाँच-दस बूंद सौंफ के अर्क के साथ लेना तुरंत कॉलरा मिटा देता है । अजवायन सत्व, कपूर देशी व पिपरमेंट के योग से बने द्रव की कुछ बूंदें कॉलरा पर अकसीर हैं ।

※ **उल्टियाँ होना** - राई को पानी के साथ पीसकर नाभि पर कुछ देर लेप कर देने से उल्टी थम जाती है । नमक के साथ काली मिर्च पीस कर चूर्ण की फक्की लेने से भी उलटी बंद हो जाती है ।

※ **यकृत विकार** - मूली एवं मूली के पत्तों का रस रोज थोड़ी मात्रा में नियमित लें, लाभकर है । पलास के पचांग की भस्म बना लें, एक ग्लास में रात को घुलने दें सुबह कुछ भुने चने खाकर रात रखे निथरा जल पी लिया करें ।

※ **पेचिश** - ढाक की छाल के चूर्ण को जरा-सा दालचीनी के चूर्ण के साथ जल से लें ।

※ **प्लीहा** - प्लीहा की सूजन पर ढाक के पत्तों से निकाला गया तेल चुपड़ कर पट्टी बांधने से अकसर लाभ होता है ।

※ **अम्लपित्त** - मात्र दो माशे पलास गोंद नारियल के पानी में सेवन से अम्ल-पित्त का नाश हो जाता है । ढाई तोले ढाक की छाल, धनियाँ व सौंफ छह-छह माशे मिलाकर बनाऐ काढ़े को मिश्री के साथ लेने से भी लाभ होता है ।

※ **आमाशय के विकार** - पलास व सिरस के बीज बराबर चूर्ण बनाते हैं, इसमें थोड़ी मिश्री मिलाते हैं दूध से कुछ दिन नियमित लेते हैं ।

※ **वायुगुल्म** - ढाक के पत्तों के पास की घुंडी की बीस-बाईस नग तोड़कर ताजा पानी में नियमित पीते रहने से कुछ दिनों में वायुगुल्म रोग खत्म हो जाता है ।

※ **पेट की पथरी (अश्मरी)**- ढाक के फूलों को पानी के साथ पीसकर नाभि के आस-पास लेप करते हैं ।

※ **वृक्क (गुर्दे) के विकार** - ताजा लाल टमाटर लेकर रस निकाल कर सुबह-शाम रोज एक गिलास पीते रहने पर आदमी इस विकार से बचा रहता है । रोग होने की स्थिति में भी उपकार होता है ।

चिकित्सा जाने-माने अनुभवी योग्य चिकित्सक के परामर्श व देख-रेख में होनी चाहिए । नीम हकीम खतरे जान कहावत पुरानी तो है, मगर गलत नहीं है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृत्तिकाभक्षणजन्य व्याधियाँ एवं चिकित्सा

डॉ० शम्भु दयाल शर्मा, एम०डी०(आयु०),पी०एच०डी०(अध्येता)

शिशुओं में मिट्टी खाना एक मुख्य समस्या है । ऐसा प्राय: देखने को मिलता है । मिट्टी खाने पर न तो स्वयं पचती है और न ही खाये गये खाद्य पदार्थों का पाचन व शोषण होने देती है, जिससे धातु निर्माण बाधित होता है । परिणामस्वरूप रस धातु का निर्माण सम्यक् रूप में न होने से रक्तादि धातुओं का पोषण नहीं हो पाता है । धातुओं का पोषण न होने से शरीर व इन्द्रियों की कार्यक्षमता में कमी आ जाती है और शरीर का बल घटने लगता है । परिणामस्वरूप ओज का क्षय हो जाता है । शरीर का रंग पाण्डु हो जाता है ।

निदान :

बच्चों में मिट्टी के अनुरूप (रसानुसार) दोष का प्रकोप होता है । यथा -

मिट्टी का रस	दोषप्रकोप
कषाय	वात
ऊसर (क्षार युक्त)	पित्त
मधुर	कफ

आधुनिक मतानुसार इसको Pica (Geophagia) कहा गया है जब बालक भोजन के अलावा अभक्ष्य पदार्थों जैसे - Dust, clay, sand, flakes of paint, plaster from wall, fabrics आदि का सेवन करता है तो इस रोग की उत्पत्ति होती है । यह सामान्यत: जीवन के प्रथम चार वर्षों में अधिक होता है ।

सहायक कारण (Predisposing factors)

- Poor Socio economic condition
- Parental neglect, poor supervision
- Malnutrition with worm infestation and vitamins & mineral deficiencies.

उपर्युक्त अभक्ष्य पदार्थों के अधिक सेवन से पाण्डु व कृमि रोग की उत्पत्ति होती है ।

मृत्तिकाभक्षणजन्य पाण्डु रोग के लक्षण:-

शूनगण्डाक्षिवूटभ्रु: शूनपान्नाभिमेहनः ।
क्रिमिकोष्ठोऽतिसार्येत मलं सासृक् कफान्वितम् ॥

(च०चि० 16/30)

अर्थात् - मृत्तिकाभक्षण जन्य पाण्डु में अक्षिकूट (Occular Margin) में शोथ, भौंहें, पैर, नाभि तथा मूत्रेन्द्रिय में शोथ उत्पन्न हो जाता है । उदर में कृमि उत्पन्न हो जाते हैं । रोगी रक्त एवं कफ से मिश्रित मल का त्याग करने लगता है । बच्चे में मिट्टी खाने के अनुरूप दोष कुपित होते हैं ।

आधुनिक मतानुसार :

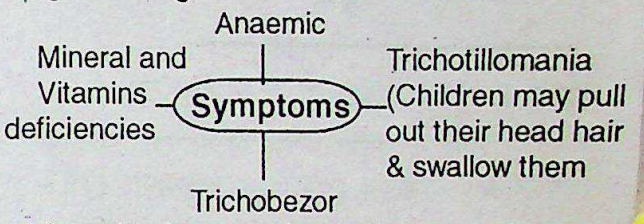

चिकित्सा :-

※ सबसे पहले बच्चे की यत्नपूर्वक मिट्टी खाने की आदत छुड़ानी चाहिए अन्यथा कोई भी औषधि काम नहीं करेगी ।

※ जब बच्चे घुटनों के बल चलने लगते हैं, तभी उन्हें इधर-उधर से उठाकर मिट्टी खाने की आदत पड़ जाती है । जहां बच्चा घुटनों के बल चलने लगे उसे कभी-कभी थोड़ा सा च्यवनप्राश चटा देना चाहिए ।

※ यदि मिट्टी खाने की आदत पड़ गयी हो मिट्टी में कटु, तिक्त रसों को मिश्रित कर उसे खाने को दें । बालक स्वत: मिट्टी खाना छोड़ देगा ।

※ पाठा, वायविडंग, हल्दी, दारुहल्दी, नागरमोथा, भारंगी, पुनर्नवा, बेलफल, त्रिकटु तथा काकनासा-इनसे सिद्ध किया हुआ घृत बालक को चटाने से मृतिकाजन्य पाण्डु से वह मुक्त हो जाता है ।

※ छोटी एला। भाग शुद्ध गन्धक 2भाग, मुर्दा शंख 2भाग शतपुष्पा 3भाग का चूर्ण 5 दिन गोदुग्ध से

※ व्योषाद्य घृत (चरक) - 5 ग्राम

※ नागकेशर, मधुयष्टी, पिप्पली एवं दूर्वा साधित घृत प्रयोग

बालक को बलाबल के अनुसार मृदु विरेचन देना

रीडर एवं विभागाध्यक्ष, कौमारभृत्य विभाग, श्री बाबा मस्तनाथ आयुर्वेदिक महाविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिए । इसके लिए अमलतास फल मज्जा (गूदा) 5-10 ग्राम दूध से दें । शरीर शुद्धि के उपरान्त बल्य तथा रक्त वर्धक औषध दें । यथा - धात्री लौह, नवायस लौह, कुमार कल्याण रस, योगराज रसायन आदि ।

मृतिका सेवन से पाण्डु के साथ-साथ उदरकृमि भी बालकों में पाये जाते है ।

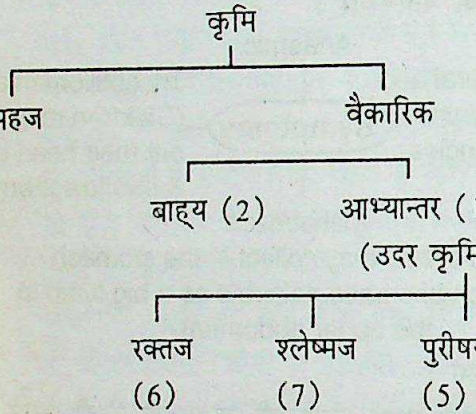

निदान :- उदर कृमि का एक कारण मृतिका सेवन भी है ।

लक्षण :- ज्वर, विवर्णता, शूल, हृद्रोग, अंग शैथिल्य, भ्रम, अरुचि एवं अतिसार, लालास्राव, आनाह, कृशता, पीनस इत्यादि ।

चिकित्सा सूत्र :-

1. निदान परिवर्जन 2. अपकर्षण 3. प्रकृति विघात

चिकित्सा:-

- ※ मुस्ता, विडंग, मगधा, आखुपर्णी, कम्पिल्लक, दाडिम, बिल्व चूर्ण मधु के साथ चटाने को दें ।
- ※ विड्ंग, पुष्कर, बाल शिग्रु, आखुपर्णी चूर्ण मधु से चटाने को दें ।
- ※ बालक को प्रातः गुड़ खिलाकर पारसीक यवानी का सेवन गुनगुने जल से कराया जाये तो उदर कृमि नष्ट हो जाते हैं ।
- ※ विडंग, सैन्धव क्षार, कम्पिल्लक एवं हरीतकी चूर्ण मधु से दें ।
- ※ पलाश बीज, इन्द्रयव, विडंग, निम्ब, भूनिम्ब को गुड़ के साथ दें ।
- ※ पलाश बीज, यवानी को मधु के साथ दें तथा कृमि कुठार रस, कृमि मुद्गर रस आदि का प्रयोग करें।

उपरोक्त चिकित्सा यदि विधिवत् की जाए तो बालकों में कृमियों की सम्भावना नगण्य हो जाती है।

बैद्यनाथ
शिलाजित्वादि बटी
इसके सेवन से वीर्य की क्षीणता, इन्द्रिय शिथिलता, स्वप्नदोष, टट्टी और पेशाब के साथ वीर्य जाना, याद्दाश्त की कमी, प्रमेह आदि रोग दूर होते हैं । पेशाब के साथ में चीनी आना भी रूक जाता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोध्र के गुणकर्म का तुलनात्मक अध्ययन श्वेतप्रदर एवं रक्त प्रदर के परिप्रेक्ष्य में

❶ डा० पूनम, एम.डी. (द्रव्यगुण)
❷ डा० लालजी, एम.एस.(आयु.)
❸ डा० ए.के.सिंह, एम.डी. (द्रव्यगुण)

आयुर्वेद में तीन शारीरिक दोष वात, पित्त, कफ की विषमता एवं मिथ्याहार-विहार को रोगों का कारण माना गया है । इनमें कुछ रोग ऐसे हैं जिन्हें स्त्रियां लज्जावश प्राय: बहुत दिनों तक प्रकट नहीं कर पातीं । फलत: समय व्यतीत हो जाने पर रोग दु:साध्य बन जाता है । ''श्वेत प्रदर'' एवं ''रक्त प्रदर'' भी इसी प्रकार का एक रोग है जो आज भी स्त्रियों की एक प्रमुख समस्या बना हुआ है । अत: अनुसंधान के विषय के रूप में ''लोध्र'' नामक द्रव्य ''श्वेत प्रदर'' एवं ''रक्त प्रदर'' के स्थायी निराकरण में कितना सक्षम हो पाता है इसका ग्रहण किया गया है ।

लोध्र

Family - Symplocaceae
Latin Name - Symplocos racemosa

पर्याय -

रोध्र, गालव, तिल्व, आक्षिभेषज, स्थूलवल्कल आदि हैं ।

स्वरूप -

लोध्र सदाहरित मध्यप्रमाण का वृक्ष होता है । इसके पत्र-लम्बे गोलाकार या अंडाकार-आयताकार चर्मवत् 3 से 5 इंच लंबे होते हैं । पुष्प-पीताभ श्वेत अक्षीय मञ्जरियों पर लगते हैं । फल-1/2 इंच लंबा बैंगनी कृष्णवर्ण का 1-3 बीजयुक्त होता है । छाल-धूसर रक्तवर्ण की होती है ।

इसकी अनेक प्रजातियां तथा S.Laurina, S.Paniculata, S.Sumuntia आदि हैं ।

उत्पत्ति स्थान :-

उत्तर तथा पूर्व भारत तथा मालाबार में विशेष रूप से पाया जाता है ।

रासायनिक संघटन -

इसकी छाल में क्षाराभ होते हैं । Loturine 0.25%, Colloturine 0.02%, Loturidine 0.06% इसके अतिरिक्त दो ग्लाइकोसाइड भी निकलते हैं ।

प्रयोज्य अंग -

त्वक्

प्रदर

स्त्रियों की योनि से अनियमित रूप से प्राय: वेग के साथ निकलते रहने वाले सफेद या लाल रंग के चिपचिपे स्राव को प्रदर कहते हैं । यदि स्राव श्वेताभ होता है तो उसे श्वेत प्रदर और यदि रक्ताभ या रक्त मिश्रित होता है तो उसे रक्त प्रदर कहते हैं ।

आयुर्वेद में रक्त प्रदर को असृग्दर की संज्ञा दी गई है । ऋतुकाल या उसके अतिरिक्त काल में योनि से जो अत्यधिक मात्रा में और अधिक काल तक रक्त स्राव होता है उसे प्रदर या असृग्दर (रक्तप्रदर) कहते हैं ।

प्रदर कफज, पित्तज, वातज, सन्निपातज चार प्रकार का होता है । यहाँ पर कफ को पित्त, वात से पहले कहा गया है । इसका कारण यह है कि कफज प्रदर में स्राव अत्यधिक मात्रा में होता है । इसी को अन्य आचार्यों ने श्वेत प्रदर माना हैं ।

श्वेतप्रदर एवं रक्तप्रदर में लोध्र त्वक की कार्मुकता

विभिन्न द्रव्य गुणवेत्ताओं ने लोध्र त्वक् के निम्नलिखित गुणधर्म बताए हैं जिसके द्वारा ही यह प्रदर रोग में कार्यकारी होता है ।

गुण	- लघु, रुक्ष ।
रस	- कषाय ।
विपाक	- कटु ।
वीर्य	- शीत ।
दोषकर्म	- कफपित्तशामक ।
सांस्थानिक कर्म	- शोथहर, कुष्ठघ्न, रक्तस्तम्भक, व्रणरोपण एवं संकोचक है ।

❶ ल.ह.रा.स्ना.आयु. महाविद्यालय, पीलीभीत (उ०प्र०) ❷ एन.आई.ए. जयपुर (राज.)
❸ निदेशक, प्रभारी चिकित्साधिकारी, रा.आयु. औषधि निर्माणशाला, ल.ह.रा.स्ना.आयु.महाविद्यालय, पीलीभीत (उ.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्मुकता

कफपित्तशामक - यह कषाय एवं शीत होने से कफ और पित्त दोनों का शमन करता है ।

शोथहर - यह कषाय होने से छोटी रक्तवाहिनियों को संकुचित करता है जिससे रक्तस्राव बंद होकर शोथ शांत हो जाता है ।

रक्तस्तम्भन - यह ग्राही एवं कषाय होने से रक्तस्तम्भक का कार्य करता है । इसलिए प्रदर रोग में भी उपयोगी है ।

संकोचक - यह कषाय रस प्रधान होने से छोटी रक्तवाहिनियों का संकोच करता है और इसी से यह श्वेतप्रदर में उपयोगी है क्योंकि यह रोग गर्भाशय की शिथिलता को दूर करता है ।

आतुरों में उपलब्ध लक्षण

श्वेतप्रदर

1. योनि से सतत् जलीय स्राव ।
2. लसदार स्राव ।
3. श्वेत वर्ण का स्राव ।
4. योनि आर्द्रता ।
5. कटिशूल ।
6. अधः उदरप्रदेश में वेदना ।
7. अरुचि ।
8. दुर्बलता ।
9. योनि दाह ।
10. योनि कण्डू ।
11. मानसिक अशांति ।
12. हस्तपाददाह ।
13. रक्ताल्पता ।
14. गति करने पर जंघा में वेदना ।
15. चिड़चिड़ापन ।
16. बार-बार मूत्र प्रवृत्ति ।

रक्तप्रदर

1. अंग-प्रत्यंग में ऐंठन एवं टूटने के समान पीड़ा ।
2. कटि, वंक्षण, उरु आदि गर्भाशय के समीपस्थ अंगों में वेदना ।
3. आर्तव की अत्यधिक प्रवृत्ति ।
4. स्राव-रुक्ष, अरुण, फेनयुक्त, मात्रा में न्यून, वेदनायुक्त मांस प्रक्षालित जल के समान ।
5. स्राव-पीला, नीला या कृष्ण रक्त वर्ण का, उष्ण, ओष-चोष तीव्र वेदना के साथ ।
6. स्राव-आम रस से युक्त पिच्छिल पाण्डुवर्ण एवं मांस के धोवन के समान ।
7. स्राव-मधु, घृत, हरताल तथा मज्जा के वर्ण का शवगंधी होता है ।
8. दुर्बलता, भ्रम (चक्कर आना) ।
9. मूर्च्छा, तम (आंखों के सामने अंधेरा छाना) ।
10. तृष्णा ।
11. दाह (हाथ व पैरों के तलवे व आंखों में) ।
12. त्वचा का वर्ण पाण्डुवर्ण ।
13. शिरःशूल ।
14. निद्रानाश ।
15. कम्प, कार्श्य ।
16. चिड़चिड़ापन ।
17. कर्णनाद ।
18. तन्द्रा ।

आतुर चयन प्रक्रिया -

ल.ह.रा.स्ना.आयु. महाविद्यालय एवं चिकित्सालय पीलीभीत (उ.प्र.) के बहिरंग व अन्तरंग विभाग से श्वेत प्रदर एवं रक्त प्रदर रोग के शास्त्रोक्त प्रमुख लक्षणों के आधार पर आतुरों का चयन किया गया है । आतुरों में उपस्थित लक्षणों की क्षयवृद्धि के अनुसार लाभालाभ की स्थिति का ज्ञान, उसका निरूपण अग्रिम सारणियों में किया गया है ।

औषध मात्रा -

प्रयोग करने के लिये लोध्र त्वक् चूर्ण की निम्नांकित मात्रा निर्धारित की गयी है :-

योगनाम	मात्रा	अनुपात
लोध्रत्वक चूर्ण	3 ग्राम (प्रातः-सायं)	गोदुग्ध या जल

आतुर संख्या - श्वेत प्रदर एवं रक्त प्रदर में निर्धारित लक्षणों के आधार पर प्रत्येक वर्ग में 15-15 रोगियों का चयन किया गया है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा अवधि - रोगियों में औषध प्रयोग कालावधि तीस दिन (30 दिन) रखी गयी है । औषध सेवन काल में रोगियों का 15-15 दिन के अन्तराल पर लक्षणों का आकलन किया गया है । तत्पश्चात् उपलब्ध लक्षणों के आधार पर परिणामों का निर्धारण किया गया है ।

आतुरों पर ल.ह.रा.स्ना.आयु. महाविद्यालय एवं चिकित्सालय, पीलीभीत के अन्तरंग एवं बहिरंग विभाग में आतुरों का प्रायोगिक अध्ययन हेतु लोध्रत्वक् चूर्ण का प्रयोग कराया गया है ।

औषध सेवन के पूर्व (B.T.) एवं पश्चात् (A.T.) आतुरों में उपस्थित लक्षणों की संख्या एवं प्रतिशत

(अ) **श्वेत प्रदर के आतुरों में -**

क्र. सं.	औषध सेवन के पूर्व (B.T.)		औषध सेवन के 15 दिन पश्चात् शेष		औषध सेवन के 30 दिन पश्चात् शेष (A.T.)		औषध सेवन के 30 दिन पश्चात् अनुपस्थित लक्षण (लाभान्वित) (B.T.-A.T.)	
	लक्षण	प्रतिशत	लक्षण	प्रतिशत	लक्षण	प्रतिशत	लक्षण	प्रतिशत
1.	14	87.50	11	68.75	10	62.50	4	25.00
2.	13	81.25	9	56.25	7	43.75	6	37.50
3.	13	81.25	5	31.25	4	25.00	9	56.25
4.	13	81.25	8	50.00	7	43.75	6	37.50
5.	12	75.00	4	25.00	2	12.50	10	62.50
6.	14	87.50	6	37.50	5	31.25	9	56.25
7.	12	75.00	3	18.75	2	12.50	10	62.50
8.	12	75.00	3	18.75	1	6.25	11	68.75
9.	12	75.00	9	56.25	8	50.00	4	25.00
10.	12	75.00	8	50.00	7	43.75	5	31.25
11.	11	68.75	7	43.75	5	31.25	6	37.5
12.	11	68.75	3	18.75	2	12.50	9	56.25
13.	10	62.50	2	12.50	1	6.26	9	56.25
14.	11	68.75	8	50.00	7	43.75	4	25.00
15.	11	68.75	4	25.00	1	6.25	10	62.25

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

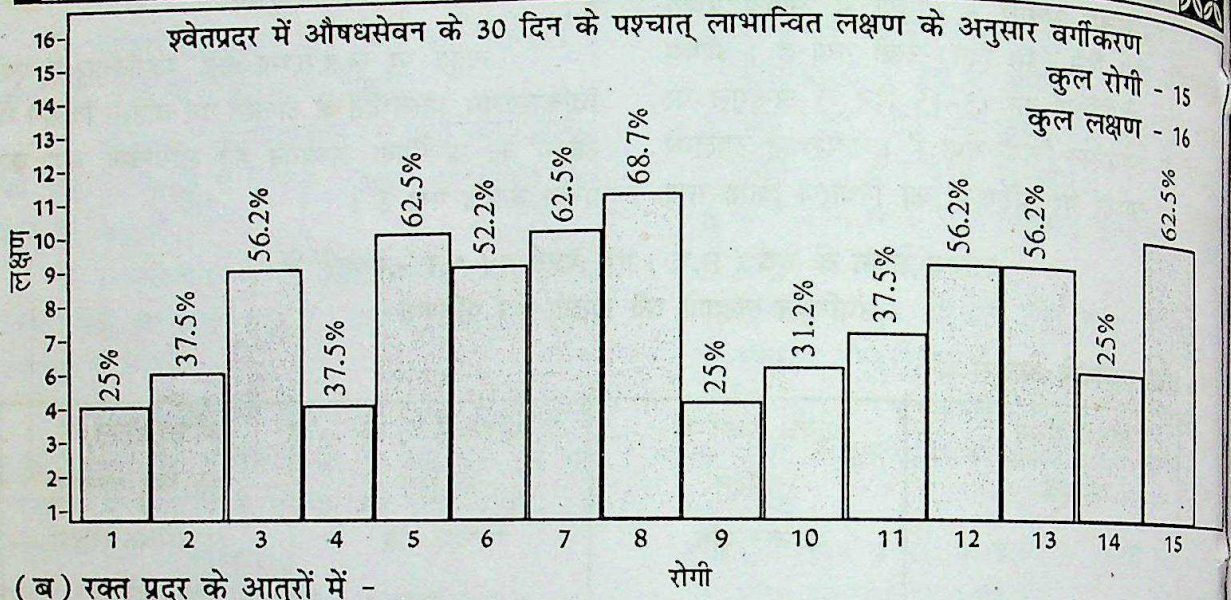

(ब) रक्त प्रदर के आतुरों में -

क्र. सं.	औषध सेवन के पूर्व (B.T.)		औषध सेवन के 15 दिन पश्चात् शेष		औषध सेवन के 30 दिन पश्चात् शेष (A.T.)		औषध सेवन के 30 दिन पश्चात् अनुपस्थित लक्षण (लाभान्वित) (B.T.-A.T.)	
	लक्षण	प्रतिशत	लक्षण	प्रतिशत	लक्षण	प्रतिशत	लक्षण	प्रतिशत
1.	13	72.22	7	38.80	5	27.78	8	44.44
2.	14	77.78	8	44.44	6	33.33	8	44.44
3.	13	72.22	5	27.78	4	22.22	9	50.00
4.	13	72.22	8	44.44	6	33.33	7	38.89
5.	12	66.67	6	33.33	4	22.22	8	44.44
6.	12	66.67	4	22.22	2	11.11	10	55.56
7.	11	61.115	5	27.78	4	22.22	7	38.89
8.	11	61.11	4	22.22	3	16.67	8	44.44
9.	12	66.67	5	27.78	3	16.67	9	50.00
10.	12	66.67	7	38.80	5	27.78	7	38.89
11.	9	50.00	6	33.33	5	27.78	4	22.22
12.	11	61.11	8	44.44	7	38.80	4	22.22
13.	10	55.00	5	27.78	4	22.22	6	33.33
14.	11	61.11	7	38.80	5	27.78	6	33.33
15.	11	61.11	5	27.78	4	22.22	7	38.89

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

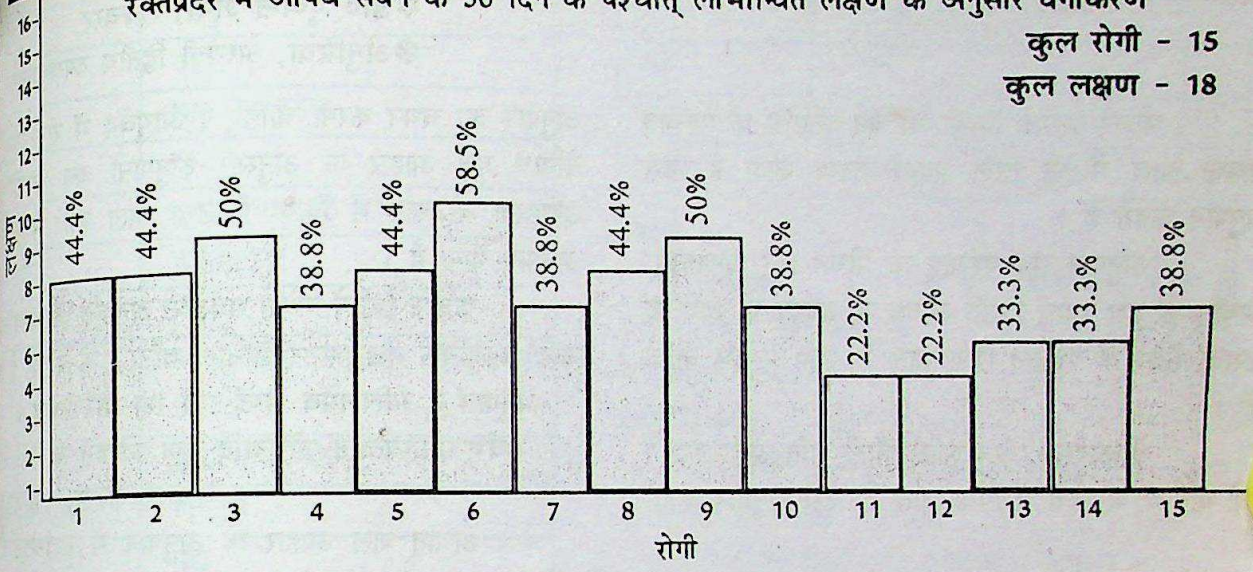

निष्कर्ष

(अ) 15 दिन पश्चात् श्वेतप्रदर एवं रक्त प्रदर की तुलनात्मक तालिका

S. No	Group	B.T. (Total Symptom) of 15 patient	A.T. (Total Symptom) of 15 patient	Perce-ntage
1.	श्वेतप्रदर	181	91	50.27%
2.	रक्तप्रदर	175	85	48.57%

(ब) 30 दिन पश्चात् श्वेतप्रदर एवं रक्त प्रदर की तुलनात्मक तालिका

S. No	Group	B.T. (Total Symptom of 15 patient)	A.T. (Total Symptom of 15 patient)	Perce-ntage
1.	श्वेतप्रदर	181	112	61.87%
2.	रक्तप्रदर	175	108	61.71%

परीक्षण काल में उपलब्ध परिणामों एवं उपयुक्त कार्यकारिता से सिद्ध होता है कि लोध्रत्वक् चूर्ण श्वेतप्रदर एवं रक्तप्रदर में कार्यकारी है । साथ ही यह भी पाया जाता है कि लोध्र चूर्ण औषध प्रयोग काल में रक्तप्रदर की अपेक्षा श्वेतप्रदर में कुछ अधिक उपयोगी सिद्ध हुआ है ।

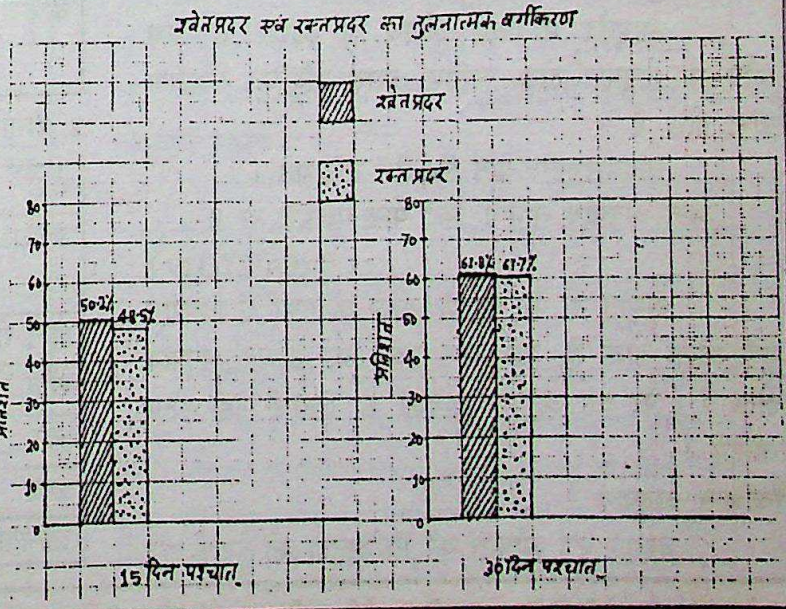

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

चरक संहिता

सुश्रुत संहिता

द्रव्यगुण विज्ञान-आ०प्रियव्रत शर्मा

भाव प्रकाश निघण्टु

स्त्री रोग एवं प्रसूत विज्ञान - प्रेमवती तिवारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुपान

✡डॉ० पुष्पेन्द्र शर्मा, लेक्चरर
❋अनुप्रिया, अध्येत्री द्वितीय व्यवसायिक

भोजन अथवा किसी भी घन औषधि के पश्चात् अथवा साथ में जो तरल पदार्थ लिया जाता है, उसे अनुपान कहते हैं ।

'अनुपान सह पश्चाद् वा पीयते इति अनुपानम्' अर्थात् जो द्रव पदार्थ किसी औषध या आहार के साथ या उसके सेवन के पश्चात् दिया जाता है, उसे अनुपान कहते हैं ।

चरकानुसार 'अनु साकं पीयते, इति अनुपानम्' । जो बाद में या साथ में पिया जाता है, उसे अनुपान कहते हैं ।

आयुर्वेद में आहार का परिपाक करने वाले 6 भाव बताए गये हैं - (1) ऊष्मा (2) वायु (3) क्लेद (4) स्नेह (5) काल (6) समयोग । अनुपान इन भावों के सहायक के रूप में कार्य करता है ।

आधुनिक विज्ञान भी भोजन के साथ द्रव ग्रहण करने की महत्ता को मानता है । इससे आन्त्रगति सहज हो जाती है तथा भोजन के ठोस अंश का विघटन हो, सरल यौगिकों में परिणत होकर भली प्रकार अवशोषण हो जाता है ।

उचित अनुपान -

आयुर्वेद में किस औषध या आहार के साथ कौन-सा अनुपान लेना चाहिए, इससे संबंधित निर्धारण प्राप्त होता है -

यदाहारगुणैः पानं विपरीतं तदिष्यते ।
अन्न अनुपानं धातूनां इष्टं यन्न विरोधि च ॥

(च०सू० 27/319)

अर्थात् जो पेय पदार्थ आहार के गुणों के विपरीत गुण वाला होता है, वह अन्न द्रव्यों का उचित अनुपान होता है । पर वह अनुपान धातुओं का विरोधी नहीं होना चाहिए ।

विभिन्न अनुपान -

आहार एवं औषधि की विशिष्टता को देखते हुए अनुपान का चयन करना चाहिए । आयुर्वेद में रोगानुसार, औषध एवं आहार के अनुसार अनुपानों का निर्धारण उदाहरण के रूप में किया है तथा जल को सर्वश्रेष्ठ अनुपान माना है ।

प्राचीन वेदों में वर्णित सर्वश्रेष्ठ अनुपान 'आकाशीय जल' आधुनिक मतानुसार (मिनिरल वॉटर) के सदृश है।

अनुपानं तु सलिलमेव श्रेष्ठं सर्व रस योनित्वात् ।
सर्वभूतसात्म्यत्वात् जीवनादि गुण योगात् च ॥

(अ०सं०सू० 10/42)

अर्थात् जल आहार के अनुपान में सर्वश्रेष्ठ है क्योंकि वह सभी रसों की उत्पत्ति का कारण तथा सभी प्राणियों के लिए सात्म्य तथा जीवन आदि गुणों में युक्त है । इसे शीत एवं उष्ण रूप में प्रयोग करते हैं ।

1. दोषानुसार अनुपान

दोष	अनुपान
वातज व्याधियाँ	स्निग्ध एवं उष्ण पदार्थ । यथा - उष्ण जल
पित्तज व्याधियाँ	मधुर एवं शीतल पदार्थ । यथा - शीतल जल
कफज व्याधियाँ	रूक्ष एवं उष्ण पदार्थ । यथा - मधु मिश्रित - त्रिफला का जल ।

2. रोगानुसार अनुपान

रोग	अनुपान
श्वास रोग	शहद मिश्रित त्र्यूषण (सोंठ-मरिच-पीपल)
शूल रोग	घृत मिश्रित हींग
शीत रोग	पान के रस के साथ मरिच
ज्वर	नागरमोथा और पित्तपापड़ा
प्रमेह	शर्करा के साथ त्रिफला
सन्निपात रोग	शहद के साथ अदरख

✡लेक्चरर, ❋अध्येत्री द्वितीय व्यवसायिक, मौलिक सिद्धांत एवं संहिता विभाग, एम०एस०एम० महिला आयु० कॉलेज, खानपुर कलां (सोनीपत)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोग	अनुपान
ग्रहणी रोग	तक्र
वमन	धान का लावा
अतिसार	कुटज
रक्तपित्त	दुग्ध तथा सांठे का रस
कृमिरोग	वायविडङ्ग
अर्श	चित्रक
विष	आक, लिसोड़ा और शिरीष के आसव
श्रम	दुग्ध तथा मद्य
धातुक्षय (यक्ष्मा)	मांसरस
अनिद्रा, तन्द्रा	मद्य
मन्दाग्नि	मद्य

3. ऋतु अनुसार अनुपान

ऋतु	अनुपान
ग्रीष्म	शीतल जल
शरद्	शीतल जल
हेमन्त	उष्ण जल

4. औषधाहार अनुसार अनुपान

औषध आहार	अनुपान
शालि चावल	दुग्ध
साठि चावल	दुग्ध
रोटी से बने पदार्थ	उष्ण जल
उड़द आदि गरिष्ठ पदार्थ	मस्तु (दही के ऊपर का पानी)
दही एवं दुग्ध से बने पदार्थ	सुखोदक
मांस सेवन	मद्य, फलाम्ल
शहद	शीतल जल
विदाहकारक आहार	शीतल जल

5. स्नेहानुसार अनुपान

स्नेह	अनुपान
घृत	उष्ण जल
तैल	यूष
वसा	मण्ड
मज्जा	मण्ड

विशेष :-

सामान्यतः उष्ण जल का प्रयोग सभी स्नेहों के पश्चात् किया जा सकता है किन्तु भल्लातक तथा तुवरक तैल इसके अपवाद हैं ।

अनुपान सेवन के गुण एवं लाभ :-

आयुर्वेद के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ चरक संहिता में अनुपान के लाभों का विस्तार वर्णन है ।

अनुपानं हितं युक्तं तर्पयत्याशु मानवम् ।
सुखं पचति च आहारम् आयुषे च बल य च ॥

(च०सू० 27/326)

अर्थात् उचित रूप में सेवन किया गया अनुपान मनुष्य को शीघ्र तृप्त करता है । आयु तथा बल के लिए आहार को सुखपूर्वक पचाता है ।

अनुपान शारीरिक धातुओं को पूर्ण करता है । खाए हुए पदार्थों को आमाशय से अधोभाग में सुखपूर्वक ले जाता है । खाए हुए अन्न के पिण्ड रूप को टुकड़े-टुकड़े कर देता है, उसे कोमल बना देता है, उसे गीला करता है । यदि कोई आहार द्रव्य पचने में गुरु होता है तो उसे शीघ्रता में सुखपूर्वक पचने योग्य बनाता है और उस आहार को शरीर के सभी भागों में शीघ्र फैलने योग्य कर देता है ।

अनुपान काल -

यद्यपि विभिन्न अनुपान बहुत से महत्त्वपूर्ण कार्य करते हैं तथापि इसके लिए अनुपान का उचित समय एवं मात्रा में प्रयोग करना अत्यावश्यक है । अन्यथा लाभ के स्थान पर हानि हो सकती है । सुश्रुत के अनुसार -

भोजन से पूर्व किया गया अनुपान शरीर को कृंश करता है । भोजन के मध्य में किया गया अनुपान शरीर को उसी अवस्था में स्थिर रखता है एवं भोजन के बाद किया हुआ अनुपान शरीर को पुष्ट करता है । अतः व्यक्ति को स्वयं की देह एवं प्रकृति देखते हुए उचित काल एवं मात्रा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में उचित अनुपान का सेवन करना चाहिए ।

अनुपान का निषेध -

हालांकि सभी औषध, आहार के साथ अनुपान का विधान है किन्तु कुछ अवस्थाओं एवं रोगों में अनुपान निषिद्ध बताया गया है । उनमें से मुख्य निम्नलिखित हैं -

1. ऊर्ध्वजत्रुगत रोगों से ग्रस्त व्यक्तियों में अनुपान वर्णित है ।
2. हिक्का, कास, श्वास, स्वरभेद में अनुपान देने से आमाशय को दूषित करके उर एवं कण्ठ में स्थित आहार जन्य स्नेह से मिलकर अभिष्यन्द, मन्दाग्नि और छर्दि आदि रोग उत्पन्न कर देता है ।
3. जो व्यक्ति भाषण, गायन, अध्ययन में लगे हों, उन्हें भोजन के बाद जल पीने से वह जल कण्ठ एवं उर:प्रदेश में रहने वाले आहारजन्य स्नेह को नष्ट कर उन-उन रोगों में जो-जो दोष प्रधान होते हैं, उनको बढ़ाकर पुन: अधिक उपद्रव करता है ।

इस प्रकार से स्वस्थावस्था में भोज्य पदार्थों के साथ लिया गया विशिष्ट अनुपान भोजन के सम्यक् पाचन, अवशोषण एवं शरीर में तत्वत् गुणों की अभिवृद्धि करता है । इसी प्रकार रुग्णावस्था में भी विशिष्ट अनुपान औषधि की कार्मुकता को बढ़ा कर शीघ्र रोगनाशक प्रभाव वाला बनाता है । अत: अनुपान का ज्ञान स्वस्थ एवं रूग्ण दोनों ही अवस्थाओं में उपयोगी है ।

संदर्भ ग्रन्थ :-

1. चरक संहिता
2. सुश्रुत संहिता
3. अष्टांङ्ग संग्रह

बैद्यनाथ

जन्मघूँटी

जन्म के बाद से ही बच्चों को इसका सेवन कराने से उनके स्वास्थ्य में कोई गड़बड़ी नहीं होती । इससे बुखार, खांसी, सर्दी-जुकाम, अजीर्ण, उल्टी होना, टट्टी होना, पेट फूलना आदि रोग दूर होते हैं ।

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अम्लपित्त एक व्यापक रोग (Hyper Acidity)

डा० विनय शौनक, आयुर्वेदाचार्य, (डी.आई.एम.एस.), पी.एच.डी.

विदाही, तीक्ष्ण, तिक्त, तले हुये, वासी भोजन, दालमोंठ, बिस्कुट, समोसा तथा शराब, मीट, मछली जैसे फास्ट फूड आजकल Hyper Acidity को पैदाकर देते हैं जिसे आयुर्वेद चिकित्सा विज्ञान में अम्लपित्त कहा जाता है। समय-कुसमय भोजन करना, अध्यसन भी इस रोग में एक कारण है ।

अम्लपित्त के कारण -

भूख न लगना, चक्कर आना, जी मिचलाना, कड़वी हरी, पीली, नीली, काली उल्टियाँ होना, वमन होना, खट्टी डकारें आना, हृदप्रदेश के आसपास जलन होना अम्लपित्त रोग के प्रधान लक्षण हैं । यह रोग पित्ताश्मरी कोली सिस्टोसिस कोली लिथोसिस रोग को पैदा करने में सहायक होता है पित्त प्रकृति वाले रोगियों को उपरोक्त खान-पान से बचने की जरूरत है ।

चिकित्सा -

चिकित्सा में सर्वप्रथम दोषनाशक चिकित्सा अर्थात् त्रिफला के साथ निशोथ, अमलतास का गूदा, मुनक्का आदि का क्वाथ, विरेचन के लिए । मैनफल आदि वमन के लिए रोगी को देनी चाहिए । इसमें पंचामृत पर्पटी प्रातः सायं पानी से देनी चाहिए । यह मस्तिष्क को बल देती है, शीत होने के कारण पित्तशामक है । जी मिचलाना तथा वमन में लाभ करती है । अम्ल पित्त का नाश करती है । कपर्दभस्म मुक्ताशुद्धि भस्म 2-2 रत्ती स्वर्णमाक्षिक भस्म 1-1 रत्ती गुडूची सत्व 2 रत्ती मिलाकर सुबह-शाम पानी से सेवन करना लाभकारी है । लीला विलास रस अम्लपित्त के सभी लक्षणों को दूर करती है । कामदुधा रस, लघुसूतशेखर रस, वृहद सूत शेखर रस, वराटिका भस्म, अम्लपित्तान्तक, अम्लापित्तान्तक लौह, अविपत्तिकर चूर्ण बहुत अच्छा कार्य करते हैं ।

कामदुधा रस, संसमनी वटी सुबह-शाम पानी के साथ लेने पर अच्छा लाभ करती है । गुडूच्यादि क्वाथ लेना भी श्रेयस्कर है ।

आयुर्वेदिक चिकित्सा विशेषज्ञ, महावर गेट, कासगंज

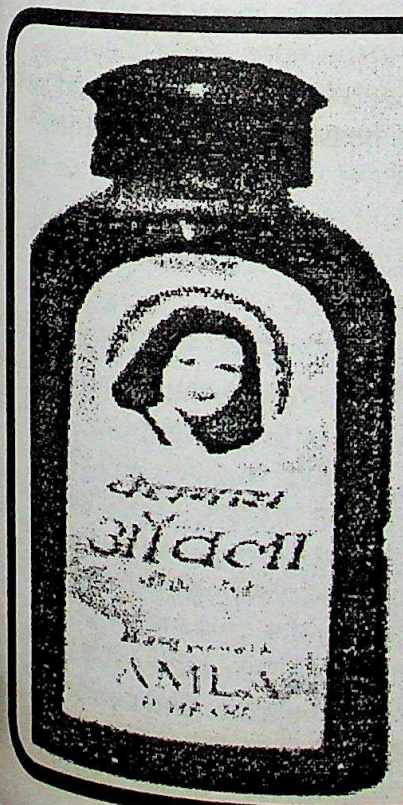

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Classical description of Aam-vata; Role of Aam-vish in its production and Concept of Treatment

*Dr. Manjot Kaur
**Dr. S.V. Tripathi

Aam-vata disease is characterized by pain, swelling in all the joints of the body with or without fever. The name of this disease is well described by Madhavkar in the name of Aam-vata Rog-nidan as by term "Aam + vata" which means Aam is combined with the vata and produces the following symptoms-

अङ्गमर्दोऽरूचिस्तृष्णा ह्यालस्यं गौरवं ज्वरः ।
अपाकः शूनताऽङ् गानामामवातस्य लक्षणम् ॥6॥

आमवात निदान । (मा० नि०) मधुकोश टीका ।

Malaise, anorexia, thirst, lethargy, heaviness in the body, fever and swelling without putrefaction or inflammation.

The well known commentator of Madhav-Nidan Sri Vijayrakshit has described in his Madhukosh tika about Ama definition that any kind of food in the form of protein, fat, carbohydrate etc. if not digested or metabolized by the thirteen kinds of Agnis then Ama-rasa or Ama-dosa is produced.

यदुक्तम् -

ऊष्मणोऽल्पबलत्वेन धातुमाद्यपाचितम् ।
दुष्टमामाशयगतं रसमामं प्रचक्षते ॥

वा०सू०स्था०आ० 13

- आमाशयस्थः कायाग्नेर्दौर्बल्यादविपाचितः ।
आद्य आहारधातुर्यः स आम इति कीर्तितः ।
- अविपक्वमसंयुक्तं दुर्गन्धं बहु पिच्छिलम् ।
सदनं सर्वगात्राणामाम इत्यभिधीयते ।
- आहारस्य रसः येषो यो न पक्वोऽग्निलाघवात् ।
स मूलं सर्वरोगाणामाम इत्यभिधीयते ।
- आममन्नरसं केचित् केचित्तु मलसंचयम् ।
प्रथमां दोषदुष्टिं च केचिदामं प्रचक्षते ।

॥6॥ आमवात निदान । मधुकोश टीका ।

After establishment of this fact that Ama is generated by improper digestion and metabolism, now one should further understand that what are the conditions, (physical; mental; or behavioural) responsible for the production of Ama. Our authentic text presently known as Charak Samhita has well elaborated the facts responsible for generating the Ama-dosa. These are described as following -

1. Intake of food in improper quantity.
2. Intake of food against ethics of food intake and habits.
3. Mental factors-
4. Improper behaviour during and after the intake of food-
5. Virudh-ahar sevan.
6. Ahar parinamkar bhava - Errors in factors responsible for transformation of food.

The signs and symptoms of the intake of food in proper quantity.

1. कुक्षेरप्रपीडनमाहारेण - There should be no undue pressure on the stomach due to the food taken.
2. हृदयस्यानवरोधः - There should be no obstruction to the proper functioning of the heart.
3. पार्श्वयोरविपाटनम् - There should not be any pressure in the sides of the chest.
4. अनतिगौरवमुदरस्य - There should not be excessive heaviness in the abdomen.
5. प्रीणनमिन्द्रियाणां - There should be proper nourishment of the senses.
6. क्षुप्तिपासोपरमः - There should be relief from hunger and thirst.
7. स्थानासनशयनगमनोच्छ्वासप्रश्वासहास्यसंकथासु सुखानुवृत्ति - There should be the feeling of comfort in standing, sitting, sleeping, walking, exhaling, inhaling, laughing and taking.
8. सायं प्रातश्च सुखेन परिणमनं - Food taken in the morning should get digested by the evening and the food taken during the evening should get digested by the next morning.
9. बलवर्णोपचयकरत्वं - There should be promotion of strength, complexion and plumpness.

* Ayurvedic Physician & Clinical Trainee in MCKRH
** Chief and Head of Ayurvedic Research Institute, Moolchand Hospital, Lajpat Nagar, New Delhi.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Capacity of stomach for intake -

त्रिविधं कुक्षौ स्थापयेदवकाशांशमाहारस्याहारमुपयुञ्जानः ।
च०वि० 2/3

For the purpose of taking food, the stomach capacity should be divided into there parts; one part of it should be filled up with solid food, the second part with liquids and the third part should be left for *vata, pitta* and *kapha*. One who takes food with due regard to this principle, does not fall a victim to any of the harmful effects which arise out of food taken in improper quanity.

न च केवलं मात्रावत्त्वादेवाहारस्य कृत्स्नमाहारफलसौष्ठवमवाप्तुं शक्यं प्रकृत्यादीनामष्टानामाहारविधिविशेषायतनानां त्रिविभक्तफलत्वात्: । च०वि० 2/4

It is not possible to derive the entire benefit out of food, simply on the basis of the quantity of intake. For all the eight factors like *prakrti* (nature) etc., which determines the utility of food are jointly responsible for bringing about the requisite benefits.

न च मोहात् प्रमादाद्वा प्रियमहितमसुखोदर्कमुपसेव्यमाहारजातमन्यद्वा: । च०वि० 1/23

These eight factors are associated specifically with useful and harmful effects and they are conditioned by one another. One should try to understand them and after understanding, he should resort to useful things alone. Neither due to ignorance nor intentionally, one should resort to such food articles or things (drugs, regimens etc.) as are instantaneously pleasing but harmful in the long run leading to unhappy consequences.

Eight factors determining the utility of food.

प्रकृतिकरणसंयोगराशिदेशकालोपयोगसंस्थोपयोक्तृष्टमानि ।।21।।
च०वि० 1

1. प्रकृति (Nature of food articles) —

Prakrti indicates the nature of the substance having inherent attributes (heaviness etc) of diet and herbs. For e.g. *masa* (*Phaseolus radiatus* Linn.) is heavy and *mudga* (*Phaseolus mungo* Linn) is light and meat of *sukara* (Boar) is heavy and that of *ena* (Deer) is light and milk of goat and cow is light and that of buffalo is heavy.

2. करण (Method of processing of the food articles) —

Processing results in the transformation of the inherent attributes of substances. The natural quality of substances can be transformed by the following factors :

1. तोयसन्निकर्ष - Contact with water or dilution
2. अग्नि सन्निकर्ष - Application of heat
3. शौच - Cleansing
4. मन्थन - Churning
5. देश - Place of storage
6. काल - Duration of time & maturing.
7. वासन - Flavouring
8. भावना - Impregnation
9. कालप्रकार्ष - Preservation for long duration.
10. भाजन - Container

3. संयोग (Combination of two or more food substances) —

Samyoga is the combination of two or more food substances. This results in the manifestation of specific attributes which cannot be manifested by individual substances e.g. combination of honey and ghee or honey, fish and milk and milk with citurs fruits.

4. राशि (Quantity of food) —

Rasi is the quantum of total (*sarvagraha*) or individual (*parigraha*) substances which determines the results of their administration in proper & improper dosage. The quantity of food taken in its entirety is '*sarvagraha*' and the quantity of each of its ingredients is '*parigraha*'. Quantity of all things involved is *sarvagraha* and that of each and everything individually is *parigraha*.

5. देश (Habitat of substance) —

It is the land and the environment in which a particular food substance is grown, either naturally or artificially cultivated. It determines the attributes due to procreation (growth) or movement of substances in a particular locality or their acclimitisation

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

to that region.

6. काल {Time [season/state of an individual/stage of disease]} —

Kala stands of individual, (viz. condition of age & health). The latter is relevant to the disease (e.g. manifestation of diseases due to *kapha* during childhood and fever etc. due to dietetic errors) whereas the former for the determination of the wholesomeness to different types of seasons.

7. उपयोगसंस्था (Rules governing the intake of food) – *Upayogasamstha* stands for the dietetic rules. They are for the most part dependent on the symptoms of digestion.

8. उपयोक्ता (Individual who takes food) – *Upayokta* is he who takes food. He is mainly responsible for the wholesomeness by the habitual intake of things (*okasatmya*) and for intake of allergic, harmful and useful foodstuffs.

आहार विधि-विधान Ethics of intake of food

1. उष्णमश्नीयात One should take warm food. When taken warm, it is delicious;
after intake, it provokes the factors (enzymes) in the abdomen responsible for digestion; it gets digested quickly; helps in the downward passage of *vata* (flatus); detachment of *kapha*.

2. स्निग्धमश्नीयात् One should take unctuous food as, it is delicious; after intake, it provokes the subdued power of digestion; it gets digested quickly; it helps in the downward passage of *vata* (flatus) it makes the body stout; strengthens the sense faculties; promotes strength; brings out the brightness of complexion.

3. मात्रावदश्नीयात् One should take food in proper quantity as, it promotes longevity in its entirety without afflicting *vata, pitta* and *kapha;* it easily passes down to the rectum; it does not impair the power of digestion; it gets digested without any difficulty.

4. जीर्णेऽश्नीयात् One should take food only when previous meal is digested. If one takes food before the digestion of the previous meal, the digestive product of the previous food, i.e. immature *rasa* gets mixed up with the product of food taken afterwards, resulting in the provocation of all the *dosas* instantaneously. If food is taken after the digestion of the previous food while the *dosas* are in their proper places and *agni* (digestive enzymes) is provoked, then there is appetite; the entrance of the channels of circulation are open; eructation is purified; there is unimpaired cardiac function; unimpaired downward passage of the *malvaat;* proper manifestation of the urges for voiding flatus, urine and stool; then the product of food does not vitiate the *dhatus* of the body, but on the other hand it promotes longevity in its entirety; So one should take food only after digestion of the previous meal.

5. वीर्याविरूद्धमश्नीयात् One should take food having no contradictory potencies, like *usna* (hot) & *sita* (cold) together. By taking such food one does not get afflicted with such diseases as may arise from the intake of food having mutually contradictory potencies. Therefore, one should take food having no contradictory potencies.

6. इष्टे देशे इष्टसर्वोपकरणं चाश्नीयात् One should take food in proper place, served by amiable person in a pleasing manner, equipped with all the accessories. By doing so he does not get afflicted with such of the factors as would result in emotional strain which (normally) occurs when one takes his food in improper places without the required accessories. Therefore one should take food in proper place equipped with all accessories.

7. नातिद्रुतमश्नीयात् One should not take food too hurriedly. If food is taken too hurriedly it enters into the respiratory tract; it gets depressed and it does not enter into the stomach properly. In this situation one can never determine the taste of food articles and dietetic foreign bodies like hair etc., mixed with them. Thus, one should not take food too hurriedly.

8. नातिविलम्बितमश्नीयात One should not take food very slowly because this will not give satisfaction to the individual. In this situation, he would take more than what is required; the food would become cold and there will be irregularity in digestion. Therefore, one should not take food very slowly.

9. अजल्पन्नहसन् तन्मना भुञ्जीत One should not talk

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

laugh or be unmindful while taking food. One, ing food while talking, laughing or with detracted nd subjects himself to the same trouble as the e eating too hurriedly. So one should not talk or gh or be unmindful while taking food.

आत्मानमभिसमीक्ष्य भुञ्जीत One should take food a prescribed manner, with due regard to his own f. The knowledge of the usefulness or other-se of food articles is the reason for self-preser-tion. So one should take food in a prescribed anner with due regard to his own self.

mptoms generated by intake of food in im-oper quantity

proper quantity of food is again of two types–

1. deficient in quantity - हीन मात्रा
2. excessive in quantity - अति मात्रा

Food deficient in quantity will produce the lowing symptoms :

1. impairment of the strength, complexion and plumpness;
2. distension and misperistalsis in the abdomen;
3. impairment of longevity, virility and *ojas;*
4. affliction of body, mind, intellect and senses;
5. impairment of the excellence of *dhatus;*
6. manifestation of the inauspicious conditions and;
7. causation of eighty varieties of *vatika* diseases.

अतिमात्रं पुनः सर्वदोषप्रकोपणमिच्छन्ति कुशलाः ।

च०वि० 2/7

Food taken in excessive quantity aggravates all the three *dosas.* One who fills up his stomach with solid food and then takes liquid food in excessive quantity, all the three *dosas,* viz. *vata (samana vayu), pitta* and *kapha* residing in the stomach get too much compressed and simultaneously aggravated. These aggravated *dosas* affect the undigested food and get mixed up with it. Then they obstruct a part of the stomach and instantaneously move through upward and downward tracts separately to produce various diseases according to *dosas* in the individual, taking food in excess.

mptoms produced by Amadosa combined with dosas

वात + आम दोष		पित्त + आम दोष		कफ + आम दोष	
शूल	any pain in body	ज्वर	fever	छर्दि	vomiting
आनाह	constipation	अतिसार	diarrhoea	अरोचक	anorexia
अंगमर्द	malaise	अन्तर्दाह	internal burning sensation	अविपाक	indigestion
मुख शोष	dryness of mouth	तृष्णा	thirst	शीतज्वर	fever with shivering
मूर्च्छा	fainting	मद	intoxication	आलस्य	laziness
भ्रम	giddiness	भ्रम	giddiness	गात्रगौरव	heaviness in body
अग्नि वैषम्य	irregular power of digestion/ metabolism	प्रलाप	delirium		
पार्श्व ग्रह	rigidity & stiffness of flanks/sides				
पृष्ठग्रह	rigidity & stiffness of back				
कटिग्रह	rigidity & stiffness of waist				
सिरा	contraction of tendons, muscles, nerves.				
आकुञ्चन					
सिरा स्तम्भन	stiffness of muscles				

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Other factors responsible for generation of Ama :

In addition to the intake of food in excess, the following factors also effect the body by vitiating the undigested food product :

गुरू आहार	Heavy
रूक्ष आहार	Ununctuous
शीत आहार	Cold
शुष्क आहार	Dry
द्विष्ट आहार	Despisable
विष्टम्भि आहार	Constipative
विदाही आहार	Irritant
अशुचि आहार	Unclean
विरूद्ध आहार	Mutually contradictory
अकाल भोजन	Untimely intake
Mind afflicted with following:	
काम	Passion
क्रोध	Anger
लोभ	Greed
मोह	Confusion
ईष्या	Envy
ही	Bashfulness
शोक	Grief
मान	Pride
उद्वेग	Anxiety
भय	Fear
Behaviour	
दु:खशय्या	Improper unsatisfactory sleep due to uncomfortable place/bed/environment
प्रजागरण	Mental & physical work during the night without sleeping.

Unwholesome diet

यत् किञ्चिद्दोषमुत्क्लेश्य न निर्हरति कायत: ।
आहारजातं तत् सर्वमहितायोपपद्यते ॥ 85 ॥

च०सू० 26

All drugs and diets which generate/ increase the various *dosas* (toxins; allergens; infections) but do not expel them out of the body are to be regarded as virudh-ahar. Any harmful agent which can disturb the normal anatomy and physiology of the body.

1. देश विरूद्ध –
   Variance with place
   1. जांगल देश में रूक्ष, तीक्ष्ण आहार
   2. आनूप देश में स्निग्ध, शीत आहार
2. काल विरूद्ध –
   Variance with time
   1. शीत काल में शीत भोजन
   2. उष्ण काल में उष्ण भोजन
3. अग्नि विरूद्ध –
   Variance with power of digestion
   कोष्ठाग्नि के बलाबलानुसार विरूद्ध (अशित, पीत, लीढ, खादित)
   तीक्ष्णाग्नि में अल्प मन्दाग्नि में गुरू विषमाग्नि में विषम
4. मात्रा विरूद्ध –
   Variance with dosage
   मधु व घृत सम मात्रा में ।
5. सात्म्य विरूद्ध –
   Variance with habit
   कटु, उष्ण सात्म्य के विरूद्ध स्वादु, शीत भोजन
6. दोष विरूद्ध –
   Variance with *dosa*
   वात वर्द्धक आहार
   पित्त वर्द्धक आहार
   कफ वर्द्धक आहार
7. संस्कार विरूद्ध –
   Variance with mode of preparation
   अन्नपाक विधि में ऐसे द्रव्यों का प्रयोग जिनका संयोग पाक के पश्चात् विषवत् परिणामकारी हो जैसे मयूर माँस का एरण्ड कोष्ठाग्नि पर पाक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

8. वीर्य विरूद्ध –
Variance with potency
उष्ण चाय / काफी के साथ शीतल पेय

9. कोष्ठ विरूद्ध –
Variance with bowel
1. मृदु कोष्ठ में तीक्ष्ण विरेचन या आहार
2. क्रूर कोष्ठ में मृदु विरेचन या आहार

10. अवस्था विरूद्ध –
Variance with occupational state
1. श्रम, वयवाय, व्यायाम नित्य पुरुषों को वात कोपक आहार,
2. निद्रा, आलस्य युक्त पुरुषों को श्लेष्म प्रकोपक आहार

11. क्रम विरूद्ध –
Variance with order
1. मूत्र परीक्षा उत्सर्ग किए बिना भोजन
2. अजीर्ण में भोजन
3. अतिक्षुधा में भोजन

12. परिहार विरूद्ध –
Variance with proscription; to be avoided
वाराह माँस सेवन के पश्चात् उष्ण पान

13. उपचार विरूद्ध –
Variance with prescription;
अतिस्निग्ध सेवन के पश्चात शीत पान

14. पाक विरूद्ध –
Variance with cooking
1. विषैले ईंधन से भोजन का पाक
2. अपक्व अन्न
3. अतिपक्व अन्न
4. दग्ध अन्न

15. संयोग विरूद्ध –
Variance with combination
अम्ल पदार्थ के साथ दुग्ध सेवन

16. हृत् विरूद्ध –
Variance with liking
मन के प्रतिकूल भोजन

17. संपत् विरूद्ध –
Variance with richness of quality
1. असंजात रस
2. अतिक्रान्त रस
3. विपन्न रस

18. विधि विरूद्ध –
Variance with ethics of intake of food
द्वादश विधि विधान के विरूद्ध

Diseases caused by intake of unwholesome food

षाण्ढ्य	Sterility
आन्ध्य	Blindness
विसर्प	*Visarpa*
दकोदर	Ascitis
विस्फोट	Eruptions
उन्माद	Insanity
भगन्दर	Fistula
मूर्च्छा	Fainting
मद	Intoxication
आध्मान	Tympanitis
गलग्रह	Spasmodic obstruction in throat
पाण्डु	Anemia
आम-विष	Poisoning due to *Ama*
किलास	*Kilasa*
कुष्ठ	Obstinate skin disease including leprosy
ग्रहणी	Sprue
शोथ	Oedema
अम्लपित्त	Acid dyspepsia
ज्वर	Fever
पीनस	Rhinitis
सन्तान-दोष	Foetal diseases
मृत्यु	Death

षाण्ढ्यान्ध्यविसर्पदकोदराणां विस्फोटकोन्मादभगन्दराणाम् ।
मूर्च्छामदाध्मानगलामयानं पाण्ड्वामयस्यामविषस्य चैव ॥142॥
किलासकुष्ठग्रहणीगदानां शोषास्रपित्तज्वरपीनसानाम्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्तानदोषस्य तथैव मृत्योर्विरूद्धमन्नं प्रवदन्ति हेतुम् ॥103॥
च०सू० 26

Factors responsible for transformation of food

ऊष्मा	Heat (pitta)
वायु	Vata
क्लेद	Kleda (moisture)
स्नेह	Unctuousness
काल	Time of digestion
समयोग	Appropriate administration

Specific actions of transforming factors :

1. ऊष्मा पचति - *Pitta* (heat) digests
2. वायुरपकर्षति - *vata* transports food nearer to *pitta* for digestion.
3. क्लेदः शैथिल्यमापादयति - moisture loosens the food particles
4. स्नेहो मार्दवं जनयति - unctuousness softens the ingredients
5. कालः पर्याप्तिमभिनिर्वर्तयति - time brings about the maturity of the process of digestion.
6. समयोगस्त्वेषां परिणामधातुसाम्यकरः संपद्यते ॥ 15॥
च०शा० 6

appropriate administration of food brings about equilibrium of *dhatus.*

Management of amapradosa

1. दोषपाचनार्थ औषध -

Even after the digestion of the food which was responsible for the causation of *amadosas, dosas* remain adhered to the stomach and during the meal-time also, the patient feels timidity, heaviness of the abdomen and disinclination for food. At this stage, the patient should be advised to take medicines in order to bring about the maturity of the remaining *dosas.*

2. अग्नि संधुक्षणार्थ औषध -

Medicines to stimulate power of digestion.

3. न तु अजीर्णाशनम् -

Food should never be given when there is indigestion because the *agni* (digestive fire) which is already weak due to the vitiation by *ama* will not be able to digest the *dosas,* drugs and food simultaneously.

4. आतंक विपरीत चिकित्सा -

If the disease continues even after fasting, then therapies contrary to the respective diseases should be administered which act as antidote to the disease.

5. असम्यक चिकित्सा से हानि -

सहसैवातुरमबलमतिपातयेत् । च०वि० 2/13

The patient who is weak and whose *kayagni* (enzymes responsible for the digestive and metabolic events in the body) is also weak will be seriously affected by the dominance of the untoward effects produced by *amapradosa,* food and drugs simultaneously.

Summary -

By understanding the above mentioned several interrelated factors responsible for generation of Ama, one should follow the principle of Ayurvedic treatment for the Ama-vata disease because if Ama production is continuous in the patients no desired result of treatment will be gained.

बैद्यनाथ
लवणभास्कर चूर्ण
मन्दाग्नि को दूर कर पाचन क्रिया को बढ़ाता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

DEVELOPMENT OF MEDICAL SYSTEM THROUGH SANSKRIT : A SCIENTIFIC INSIGHT

* Dr. G.C. Nanda
** Dr. M.K. Chaturvedi

शृण्वन्तु सर्वे अमृतस्य पुत्राः

UNDERSTANDING MEDICAL SCIENCES OF ANCIENT SYSTEM IS A GIFT OF SANSKRIT.

Introduction :

Ayurveda, the ancient system of medical sciences, is the medical content of *Athervaveda*, the first documented script in sanskrit of human being as per Hindu mythology. Though a lot of corrections, rectifications and additions, alterations have been made in vedic literatures, but all are basically from Sanskrit version and their analysis. Max muller says "There is no other text in the world providing peace other than *veda* with its sanskrti version". Sopen Haur says mind gets peace even after death through *upanishad*. When Histegs writes in his commentary of *Bhagvat Gita's* translation in 1784 that the people can forget the British administration but Hindutwa on its indology can not be forgotten due to Sanskrit language, So, a lot of comments on Sanskrit are found and they indicate the viability of Sanskrit language not only in India but in the world.

"भारते संस्कृत भाषा कामधेनु प्रकीर्तिता
जननी विश्वभाषाणां विज्ञानस्योपकारिणी"

It is well known to all of us that the Science is the product of Sanskrit.

"विज्ञान औषधियानम्"

Inside Thought :

I will now just touch the science part, the ancient medical science, the Ayurveda written in Sanskrit. Not only written rather than to-day's modern medical system has peeped into this Sanskrit versed ancient science. The authors of classcial Ayurvedic texts have purposefully elaborated the thoughts of Vedic version into most scientific presentation.

The Ayurveda along with *Yoga & Vyakarana* have got their special position due to only in Sanskrit language as :

"योगेनचित्तस्य पदेन वाचां मलंशरीस्य तु वैद्यकेन"

The ancient authors also mention that, it is so vast which cannot be limited within 1 lac slokas as :

"नास्ति आयुर्वेदस्य पारम् समुद्रइव गम्भिरम
नैव शक्यं चिकित्सितुं श्लोकानां अयुतैरपि"

We will go for certain examples that how the to day's medical thoughts have been brought filtered from our Sanskrit versed slokas as :

"हिताहितं सुखं दुःखं आयुस्तस्य हिताहितम्
मानं च तत्र यत्रोक्तं स आयुर्वेद उच्यते"

Here they have inscripted the main aim of Ayurveda, the identity of Ayurveda and what we find in Ayurveda etc.

It will make the point clear with some examples how the science in Sanskrit with burried thoughts and unshakable efforts of the ancestors.

The dreaded figure of AIDS is wellknown to all of us for which HIV, one super micro organism is proved to be the cause and a matter of astonishment that this similar description is found is *Atharvaveda*.

"ओजोऽशनानां रजनीचराणां आहार हेतु न शरीरमिष्टम्"

There are certain invisible creatures who only eat *ojah*, the immunopower and the person dies. So for ojah is concerned they speak :

"प्राकृतस्तु बलं श्लेष्मा विकृतोमलरूच्यते
स च एव ओजः काये पाप्मोपदिश्यते"

(चरक)

The natural condition of body where there is resistance to disease is called *ojah*, or the immuno system or *Vyadhi Khyamatwa* and which is equal as modern says, the same is also in Ayurveda as :

"नहि सर्वाणी शरीराणी व्याधिक्षमत्वे समर्थानि भवन्ति"

(चरक)

Let us come for blood or Rakta, today every where of the world has emerged on its donation to save life. The same thought is well described thousands of years back in *Charak*

* Officer in charge ** Research Officer (Ay.)
Regional Research Institute (Ayu.) (AYUSH, Govt. of India) Agam Kuan, Patna

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Samhita as :

"नहि जीवित दानाद्धि दानमन्यम विशिष्यते
देहस्य रूधिरं मूलं रूधिरेणैव धार्यते
तस्मात् यत्नेन संरक्षरक्तं जीव इति स्थिति"

(चरक)

No other gift is better than gift of life

We can go for a lot of examples related to digestion, metabolism, circulation of blood. Respiration process, urination process, the drug, its multidimensional actions, the cosmus, the relationship between the universe & body, the nervous system, the chemistry, the physics, the purification measures of the body, the organs and their scientific description, the wear & tear process of the body, even the latest invention of gene theory, the germ theory etc.

We can go for another example of gene theory how it is practically understood and presented in Sanskrit version as :

"यस्य यस्य हि अंग अवयवस्य बीजे
बीजभागे बीजभागावयवे विकृतिं आपादयति.."

(चरक)

means the cell, chromosome, the neuclear, DNA & RNA division, how important for the next generation and if one is suffering from any disease related to that cell or chromosome, the child of that person gets hereditary chain ! and how and when it starts, they speak.

"शुक्र शोणित संयोगे यो भवेत् दोषउत्कट:
प्रकृति जायतेस्तेन तस्यामे लक्षणं शृणु"

(चरक)

So far germ theory what modern science believes to be the cause of major portions of the total diseases were also scientifically proved and described by Sushruta, the father of surgery as :

"निशाचरेभ्यो रक्षस्तु नित्यमेव क्षतातुर:"

(सुश्रुत)

The wound must be protected from invisible creatures.

How these germs get entry to our body and what are the easiest sources they are also well described which modern science fails to control as :

"प्रसंगात् गात्र संस्पर्शात् निश्वासात् सहभोजनात्
सहशय्याशनाच्चापि वस्त्र माल्यानूलेपनात्
ज्वर शोषश्च कुष्ठस्च नेत्राभिष्यन्दमेवच
ओपसर्गिक रोगास्ते संक्रमन्ति नरान्नरम"

(चरक)

The viral fever, the T.B. and all sorts of leprosy & skin diseases are transmitted through various modes as described above.

The sexually transmitted diseases have come to India. It was not previously in our country as all of you know that HIV first came to India from South Africa. The same is found to be described in *Bhava Prakash* text of 16th century as :

"गंधरोग फिरंगोऽयं जायते देहिनां धृवम्
फिरंगिणो अंग संस्पर्शात् फिरंगिण्या प्रसंगत:"

(भा.प्र.)

Here he explains how the disease is infected through foreigners.

The Sursuta, father of surgery has finely described the entire surgical management through sloka which is exactly followed by modern surgeons as :

आदौ शोथहरोलेपो द्वितीये श्चापतर्पणम्
तृतीये श्चोपनाहस्यात चतुर्थे पाटनक्रम:
पंचमे शोधनं भूयात् षष्ठे रोपणंइष्यते
सप्तमे बर्णीकरणो व्रणस्येते क्रमामता: (सु.)

There are a lot of descriptions in the system of medicine which still need to be analysed for example the mode of action of the drugs is still on process to understand as :

"किंचित् रसेन कुरुते कर्म गुणेन वीर्येणचापरम
प्रभावेन च किंचित् द्रव्याणाम् विविधागति:"

So, a drug it has taste, it has certain qualities, it has also overall superpower to act but how it acts no body knows.

Similarly the मन: or mind its existence or places in the body, its qualities, its different conditions, its faculity, and its way of movement, its relation to disease, body, soul, etc. and a lot of intresting hidden treasure are there, which will

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ke how many years no body can say.

To-day though this Ayurveda is only derstood as herbal medicine in countries utside India but the basic qualities are in our ternational vedic thought.

Conclusion :

Development and practice of Ayurveda n Indian subcontinent has been a continuous rocess during all political cultural and religious pheaveals. Charak, Sushruta, Vagbhatta ecame the most acceptable texts of Ayurveda roughout the country. Several scholars in ifferent parts of the country wrote and compiled terature in the form of manuscripts in all the branches of Ayurveda. Now we see them stored in different museums and libraries and are gradually deteriorating due to lack of attention as it is written in Sanskrit. Recently for the first time I have sorted out 743 nos. of Ayurvedic manuscripts in OSM and 101 nos. of Ayurvedic mss. in Parija library, Utkal University about 30 nos. in JSU., about 10 nos. in SKSV, Puri, and a lot in different repositories. So, emphasis should be given on the learning & teaching of Ayurveda in Sanskrit language then only the scholars & vaidyas can revive the scientific thoughts of classical pundits and can be utilised for human beings.

बैद्यनाथ

अग्निमुख चूर्ण

हाजमा को बढ़ाने वाली उपयोगी दवा

बैद्यनाथ

अश्वगंधारिष्ट

मूर्च्छा, भय, घबराहट, अनिद्रा, मंदाग्नि आदि में लाभकारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A Comparative clinical study with Rajani vidangadi yogam and Nishamaki in Madhumeha (Diabetes Mellitus)

❐ Dr. V. Bindu Madhavi, Final Year M.D. (Ay.)
◆ Dr. S. Suresh Babu, M.D. (Ay.)
❖ Dr. Prakash Chander, M.D. (Ay.)

1. Introduction :

Madhumeha is having very ancient back ground from Vedic period itself. It is included under Asrava vyadhis in Athervana veda. However during samhita period it was further elaborated.

2. Aim :

There are numerous yogas described in Ayurvedic classics. Rajani Vidangadi Yogam and Nishamalaki appear to be simple and easily available medicines; as such their efficacy has been put on test in this clinical study.

3. Selection of patients :

Patients were selected as out patients in order to asses the practical utility of two Ayurvedic preparations.

Exclusion criteria :

(1) Patients with F.B.S. more than 300 mg/dl and P.L.B.S. more than 400 mg/dl
(2) Patients with I.H.D., Renal failure, Pulmonary T.B., and Osteoporosis.
(3) Patients with acute conditions like Systemic respiratory tract & Urinary infection, Gangrene and carbuncle.
(4) Increase of sugar levels after 15 days of treatment.
(5) When patients made grave errors against medical advice.
(6) Patients who discontinued the treatment before a minimum period of 20 days.

4. Allocation of patients :

Patients were made into 2 groups by Random allocation. Nishamalaki was given to Group A patients & Rajani Vidangadi Yogam was given to Group B patients. 6 patients were selected for each group.

5. Drug Selection :

Composition of Nishamalaki :

(1) Nisha (2) Amalaki both in equal parts

Composition of Rajani Vidangadi Yogam :

(1) Rajani (2) Vidanga (3) Gokshura
(4) Shunti (5) Yasti Madhu
All five in equal parts

References:

Nishamalaki - Astanga Hrudaya Chikitsa Sthanam
Rajani Vidangadi Yogam - Yogaratnakaram Pramehadhikaram

Duration of treatment - 30 days

Dose : Nishamalaki - 5gms bd
Rajani Vidangadi Yogam- 5 gms bd

Anupanum : Hot water

Administration : On Empty stomach

6. Parameters :

Objective parameters :

1. Weight
2. B.P.
3. F.B.S. & P.L.B.S.
4. F.U.S. & P.L.B.S.

Subjective parameters

1. Poly uria
2. Poly phagia
3. Polydypsia
4. Fatigue
5. Neural problem - Burning sensation and numbness in hands and feet
6. Digestive capacity
7. Bowel movement
8. Optic involvement
9. Sexual weakness
10. Discouloration of urine
11. Skin involvement
12. Sleep
13. Joint involvement
14. Muscle cramps

7. Observation :

Criteria for assesment of sugar levels before Rx :

	F.B.S.	P.L.B.S.
Mild	Below 200	Below 250

◆ Gazetted Lecturer ❖ Reader
Post Graduate Dept. (K.C.), Dr.B.R.K.R. Govt. Ayurvedic College, Hyderabad (A.P.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Moderate	200-275	250-300
Severe	Above 275	Above 300

According to sugar levels before Rx :

	Group A	Group B
Mild	3	0
Moderate	1	3
Severe	2	3

Positive results were observed in the following subjective parameters :

1. Burning sensation in hands and feet.
2. Polyuria
3. Polydypsia
4. Muscle cramps

No improvement was observed in the following subjective parameters :

1. Fatigue
2. Disgestive capacity
3. Bowel movement
4. Optic involvement
5. Sexual weakness
6. Sleep
7. Joint involvement.

Aggravation of symptoms was not observed in any patients in subjective parameters in both groups.

Dryness of mouth and Burning sensation in epigastrium was observed in few patients with Nishamalaki.

Criteria of results (Objective parameters)

1. Poor-Further raise of sugar levels
2. Mild-No change in sugar levels or Maintenance at the same levels even after withdrawal of oral hypoglycemics
3. Moderate - Decrease of sugar levels to a minimum of 30 units.
4. Good-Control of sugar levels to normal.

Result assessment after Rx:

	Group A (N.A.)		Group B (R.V.)	
	No. of Pts.	%	No. of Pts.	%
1. Poor	0	0	0	0
2. Mild	1	16.66	0	0
3. Moderate	2	33.32	3	49.98
4. Good	3	49.98	3	49.98

8. Discussion :

1. Group B patients are having high sugar levels when compared with Group A. But control of sugar level was more in Group B than Group A. Rajani Vidangadi yogam controlled high sugar levels (F.B.S. more than 250mg/dl and P.L.B.S. more than 350 mg/dl) even without aliopathic and other Ayurvedic medicines in a better way and in short duration of time when compared to Nishamalaki.
2. Nishamalaki is mainly effective when sugar level is mild. It can be given as a supportive therapy along with some other medicines.
3. Poly uria was controlled in a better way with Rajani Vidangadi yogam than Nishamalaki.

Conclusion :

The following conclusions can be drawn safely from this clinical study :

1. Rajani Vidagadi yogam is more effective in controlling sugar level than Nishamalaki.
2. Nishamalaki is better at mild levels of sugar (F.B.S. below 200 mg/dl and P.L.B.S. below 250 mg/dl
3. Rajani Vidangadi yogam is better in controlling polyuria
4. Rajani Vidangadi yogam can control high sugar level even without other modern or Indigenous drugs.

10. Acknowledgements :

We are thankful to Professor, Post Graduate Department (K.C.), Principal Government Ayurvedic College, Superintendent Government Ayurvedic Hospital and others for their kind help in carrying out this work

11. References :

1. Caraka Samhita
2. Susrutha samhita
3. Astanga samgraha
4. Astanga hrudaya
5. Yogaratnakaram

} Relevant Chapters

6. Harrision's Text book of internal medicine
7. Davidson' Principles and Practice of medicine

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
This Lecture was delivered on Key Note adress (Guest Lecture) in National Seminar on Ayurveda for Better health and Workshop on Clinical Application of Rasashastra in Gujarat Ayurved University, Jamnagar

Dose Schedule of Rasa Aushadhi - A Critical Study

Dr. Vijay S. Jadhav

Dose schedule of Rasa Aushadhi is a very important subject to deal with but always neglected and ignored. When in the present time we talk about drug standardization in Ayurved which has now become a very hot topic in Ayurved Pharmaceuticals now a days. The drug standardization is only applied for 3 stages and they are as follows.

1] Raw Drug
2] Manufacturing Process
3] End product.

But the most important stage in the standardization is neglected & that is the actual use of that drug in patients in standard & exact dose. Though the diagnostic part is important the authenticity of the product & dose which are going to be used according to the diagnosis is also equally important because the product is actually going to work for the human beings. Therefore the 4th stage of standardization i.e. Dose (Matra) or the exact dose should not be neglected. Here it means a exact dose not the standard dose because it may vary from person to person.

So when discussing the subject we will very briefly see the definition of :

Dose - A measured quantity of drug to be given to patient.

Dosage - It is also a measured quantity of drug to be given which will vary according to the raw drug used & manufacturing process adopted.

So we can say that dose of medicine or food can vary according to person but dosage will depend upon the constituent drugs.

The parameter deciding the dose can be as follows :

1] Dravya Swabhava
i.e. Nature or original properties of Raw drug.
2] Vyakti Swabhava
i.e. which includes Desh, Kala, Bala, Sharira
i.e. why we say पुरूषं पुरूषं वीक्ष्य

Thus dose of Aushadhi varies according to raw drug, as well as the person & disease in which are using it. Being specific about dose of Rasa Aushadhi as well all know.

अल्पमात्रोपयोगित्वाड् अरूचेः अप्रसंगतः
क्षिप्रमारोग्यदायित्वाद् औषधिभ्यो धिको रसः ॥
र.र.सं

Though the above verse is generally applicable to all Rasa Aushadhis; in my opinion the word can again be classified on the basis of various criteria the & this can be the main cause of dose variations, as well as route of drug administration.

Criteria for cause of dose variation can be seen in the diagrammatic presentation, as follows :

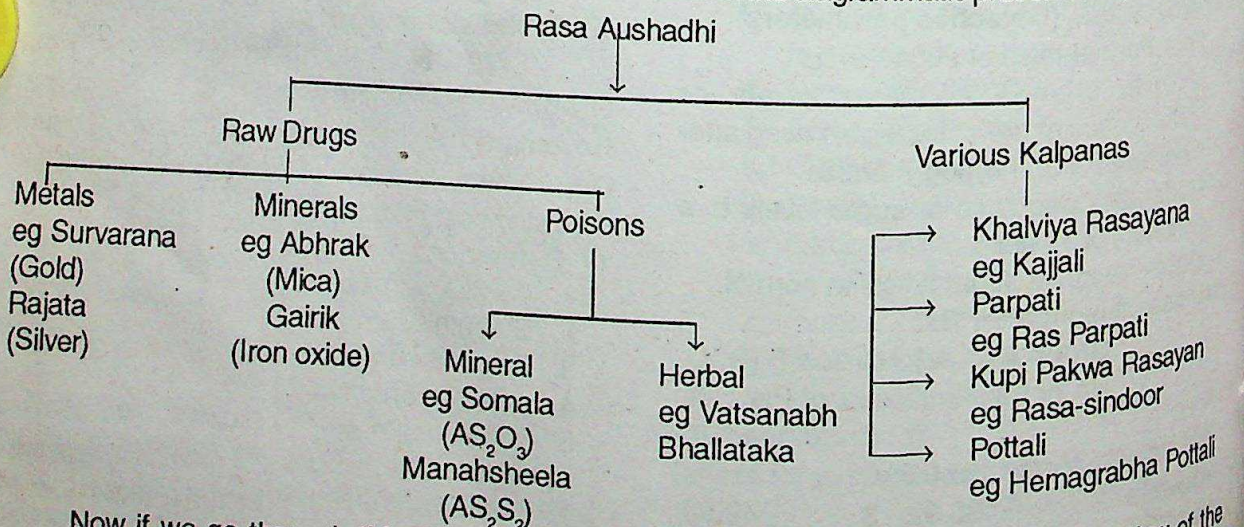

Now if we go through this diagrammatic presentation, we can notice a critical review of the dose of final product of each raw drug. We can notice the difference in their dosage & not dose,

Prof. & H.O.D., Dept. of Ras. & Bhai. Kal., Pune Dist. Edu. Association's College of Ayu. & Res. Centre, Sector No. 25, Pradhikaran, Nigdi, Pune - 411 044, Maharashtra

CC-0. Prof. Satya Dev Vidyalankar Jijnasu Research Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Because dose is going to vary from person to person.

If we carefully scrutinize all the samhitas for the dose of various end products of these raw drug we can clearly see a scientific dose variation as follows :

A] Raw drugs -

I] Minerals -

Classified Group	Mineral	Form of end product	Dosage in classics	Dosage in mg.	Ref.
Maharasa	1) Abhraka	Bhasma	1-2 Ratti	125-250 mgm	R.T.
	2) Vaikranta	Bhasma	1/24-1/11 Ratti	5.21-11.36 mgm	R.T. 23/170
	3) Makshika	Bhasma	½ - 2 Ratti	60-250 mgm	R.T. 21/29
	4) Aadrija	Niryasa	a) ¼ - ½-1 Pala	10/20/40 gms	C.Chi 1/3/54
			b) 2 - 8 Ratti	250 - 1000 mgm	(RT 22/37)
	5) Sasyaka	Bhasma	1/8 - 1/4 Ratti	15.63-31.25 mgm	RT 21/130
Uparasa	1) Gandhak	Purified	1 - 8 Ratti	125 - 1000 mgm	R.T. 8/39
	2) Gairik	Purified	2 - 4 Ratti	250 - 500 mgm	R.T. 22/119
	3) Kasisa	Bhasma	½ - 2 Ratti	62.5 - 250 mgm	R.T. 21/242
	4) Hartala	Bhasma	¼ - ½ Ratti	31.25 - 62.5 mgm	R.T. 11/56
	5) Manasheela	Purified	1/32 - 1/16 Ratti	3.91 - 78.1 mgm	R.T. 11/117
	6) Kamkushtha	Purified	1 Yava	62.5 mgm	R.R.S. 3/115
Sadharana Rasa	1) Gauripashan	Purified	1/120-1/30 Ratti	6 -1 mgm	R.T. 11/145
	2) Navsagar	Purified	2-8 Ratti	250-1000 mgm	R.T. 14/8
	3) Kaparda	Bhasma	2 Ratti	250 mgm	R.T. 12/96

Herbal Poisons

Name	Dosage	Dosage in mg	Ref.
1) Vatsanabh *Aconitum ferox*	1/8 - 8 Yava	31.5 - 125 mg	A.P. 5/71
2) Ahiphena *Papaver Somniferous*	¼ - 1 Ratti	15.63 - 31.25 mg	R.T. 24/262
3) Jaipal *Croton tiglium*	1/8 - 1/4 Ratti	31.25 - 62.5 mg	R.T. 24/320
4) Dhattura *Dhatura metal*	Beeja ¼ - 1/2 Ratti Patra ½ - 3/2 Ratti	62.5 - 187.5 mgm	R.T. 24/367-368
5) Bhanga *Cannabis sativum*	2-4 Ratti	250 - 500 mgm	R.T. 24/414
6) Gunja *Abrus precatorius*	½ - 3/2 Ratti	62.5 - 187.5 mgm	R.T. 24/453
7) Bhallatak *Semicarpus anacardium*	1-3 Ratti	125 - 375 mgm	R.T. 24/482

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

III] Metals - Dosage Pattern of metallic Bhasmas described in A.P. 3/42

Metallic Bhasma	Dosage (Ratti)	Dosage (mg)
1) Suvarna (Gold)	1 Yava - 8 Ratti	62.5 mg - 1 mg
2) Tamra (Copper)	2 Yava to 16 Ratti	125 mg - 2 gm
3) Rajata (Silver)	2 Yava to 16 Ratti	125 mg - 2 gm
4) Anya Dhatu Vanga, Naga (Tin & Lead)	3 Yava to 24 Ratti	87.5 - 3.75 gm
5) Any Dhatu Bhasma	1 Ratti to 9 Ratti according to Doshabala	120 mg - 1.125 mg

B] Dosage pattern for metallic Bhasmas according to Rasatarangini -

Name of the metallic Bhasma	Dosage in (Ratti)	Dosage in mg/gm	Ref.
1) Gold	1/8 - 1/4 Ratti	15.63 - 31.25 mgm	15/81
2) Silver	¼ - 1 Ratti	31.25 - 125 mgm	16/52-53
3) Copper	1/8 - 1/2 Ratti	15.63 - 62.5 mgm	17/52
4) Iron-Lauha	¼ - 2 Ratti	31.25 - 250 mgm	20/98
Mandoor	¼ - 2 Ratti	31.25 - 250 mgm	20/135
5) Lead	¼ - 1 Ratti	31.25 - 250 mgm	19/46
6) Tin	1-2 Ratti	125 - 250 mgm	18/46
7) Zinc	½ - 1 Ratti	62.5 - 125 mgm	19/108-111
8) Brass	½ - 1 Ratti	62.5 - 125 mgm	22/18

Comparative dosage review of these metallic bhasma according to the lowest prescribed dose is as follows :-

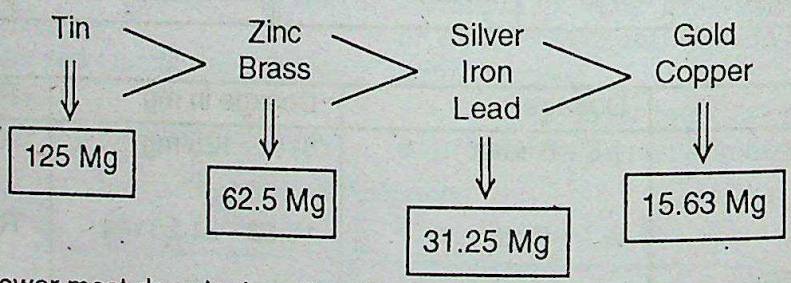

Thus, the lower most dose is described for Gold & Copper

In the same pattern if we review the highest dosage prescribed for all bhasmas in a gradually raising pattern

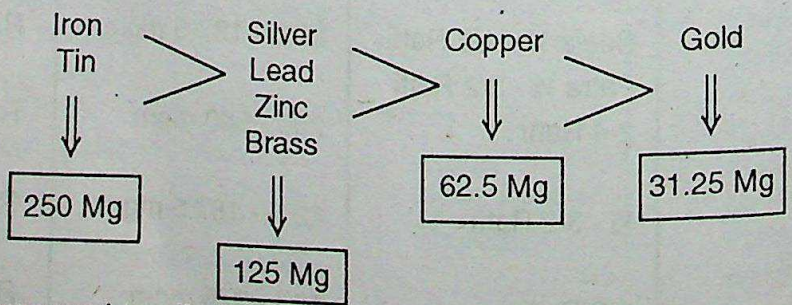

So if we summarise all the data we can classify the various dosage of bhasmas as follows:

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Maximum Dosage ⇓ Tin

Medium Dosage ⇓ Silver, Lead, Zinc, Brass

Minimum Dosage ⇓ Gold, Gold, Copper

But Iron appears to be exclusive with medium lower dose & maximum highest dose.

Thus, the so called heavy metals like Gold & Copper remain at base in case of dose of metallic bhasmas with 15.63 mg as its lower dose.

Silver, Lead, Zinc, Brass show the medium range of dosage.

And the Putiloha i.e. Vanga shows maximum dosage

* Various Kalpana in Rasashastra (Brief Review of various Kalpanas in R.S. with eg. of most commonly used drug).

A] K.R.

- With Parada
  - Sagnadha
    - eg Arogyavardhini (RRS/20)
    - Rajkolaphalopama i.e. Karsh
    - 5.6 gm
  - Nirgandha
    - Mugdha Rasa (RT 6)
    - Youth: ½-2.5 Ratti; 62.52-312.5 Mg
    - Child: 1/8-¼ Ratti; 15.63-31.5 Mg
- With Hingula
  - Sagandha
    - Kanaka Sundar Rasa (RRS/15)
    - 1 Ratti
    - 125 mg
  - Nirgandha
    - Trbhuvana Kirti Rasa (YR/Jvara)
    - 1 Ratti
    - 125mg
- Without Parada or/& Hingula
  - Sagandha
    - Ghandhaka Rasayana (R.T. 8/84)
    - 1 Masha = 8 Ratti
    - 1 gm
  - Nirgandha
    - Prawala Panchamruta (YR/Gulma)
    - 3 Ratti
    - 375 mg

B] Prapati Kalpana - Rasa Parpati – Dose – 2 – 10 Ratti (250 mg – 1.25 mg) [R.T. 6/143]

C] Pottali Kalpana - Hemagarbha Pottali – Dose – 4 Ratti (500 mg) [R.R.S./Utt A.14]

D] Kupi Pakva Rasayana- Rasa Sindoor–Dose– [R.T. 6/235 – 237]

Age	Dose in Ratti	Dose in mg
1 yr	1/16	7.81
2 yr	1/7	17.86
6 yr	1/3	41.66
12 yr	1/2	62.5
Above 12 yr.	1	125

This variation in the dose of various drugs has been observed due to following factors related

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

to drugs –.

1] Raw Drugs i.e. Number & quality of the raw drugs used
2] Process of manufacturing –
   * Samskaras done
   * Agni Pramana given
   * Type of fuel used
   * Final drug – Form & its Properties

Conclusions :-

1] Dosage of various Rasa Aushadhis vary according to raw drug & manufacturing process.
2] Dose/Dosage may also vary according to practitioners in various regions
3] According to the constituents, end products of various minerals, have been mentioned with their dose specifications in all the Rasa Granthas.
4] Metallic Bhasmas show significant variation in dose which should be taken in consideration while prescribing the same.

ACKNOWLEDGEMENT

Dr. Rajkumar Bobade, I/C Principal
Dr. Deepali Korde, Lecturer, Dept. of R.S. & B.K.
College of Ayurved & Research Center, Akurdi, Pune - 44

प्रसूता के लिए बलवर्द्धक श्रेष्ठ टॉनिक

बैद्यनाथ

दशमूलारिष्ट

तेज, बल एवं कान्ति बढ़ाने में प्रसिद्ध । संग्रहणी, मंदाग्नि, अरुचि, उदर रोग, खांसी, दमा, कमजोरी आदि रोगों की शास्त्रोक्त दवा है । इससे बल और कान्ति बढ़ती है तथा शरीर पुष्ट होता है । प्रसव के बाद इसके सेवन द्वारा माताएं अपने और शिशु के स्वास्थ्य की रक्षा करती हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Relevance of Dinacharya to the present day

* Dr. Guruprasad K
** Dr. Ramana G.V.
*** Dr. Sajitha

In Charaka Samhita it is mentioned that

धर्मार्थ काम मोक्षाणाम् आरोग्याम् मूलम् उत्तमम् ।
रोगास्तस्यापहर्तारः श्रेयसो जीवतस्य च ॥

i.e., one should achieve Chathushtaya Purusharthas in his life span. For this a healthy and disease free life is requied. Our ancestors have sufficient time to follow the regimen whatever described in texts. Hence they used to live even beyond 100 years. But at present we hardly live for 65 years. With plenty of diseases right from the 1st decade of life, morbidity rate has increased considerably. The reason for this may be busy schedule, stress, lack of concentration towards self, pollution, adaptation of modern techniques etc. All these act as etiological factors for the formation of free readicals, which in turn cause the diseases and reduce life span.

For the primary prevention of the diseases rising individual immunity, adapting specific protective measures, improving personal hygiene and social hygiene are the means. By following Dinacharya most of these objectives are fullfilled and hence by maintaining it not only brings a disease free body, but also a disease free society.

An effort is made in this article to interpret scientifically the procedures described under Dinacharya.

BRAHMI MAHURTHA : Dinacharya starts from getting up from the bed. Ayurveda advocates that to be healthy a person must rise early in the morning.

INTERPRETATION :

- It is the setting of the biological clock of our life or the body.
- Due to variation in the hormonal levels (circa dim rhythm) in the early morning our body utilizes more of Oxygen, which is essential for normal functions of the body.

NATURAL URGES : After getting up from the bad one should go for attending the natural urges.

INTERPRETATION :

- If the faeces are not passed regularly then the stored one will liberate gases like indol, skatol, phenol, hydrogen sulphide and ammonia which cause some ailments like headache, abdominal discomfort. Hence it is required for each individual not to with hold faecal urge.

DANTA DHAVANA :- Dantha dhavana is a cleaning procedure in which cleaning of the teeth has been described by using katu, tiktha, Kashaya, Rasayuktha dantha kashtas.

Now a days we are using toothpastes which contain calcium phosphate di hydrate, chalk, Alumina, Glycerin, Sodium carboxymethyl, cellulose and florid which have a 'cumulative effect'. Once entered then cannot be excreted. So population subjected to excess of these minerals may suffer in a period of time.

INTERPRETATION :

- Instead of using toothpaste we can use our Ayurvedic preparations which contain Katu, Tiktha and Kashaya Rasas. Katu Rasa has a corrosive action, which does the Kapha chedhana and also has a disinfective action. Tiktha Rasa has Visha-datva property and removes bad smell from the mouth. Kashaya Rasa has healing property, which is proved to be good for gums and teeth.

JIWHA NIRLEKHA

- Tongue should be cleaned by using tongue cleaners or by using twigs.

INTERPRETATION :

- It stimulates taste perception and increases the salivation.
- Saliva contains ptyalin & lysozome which act as bacteriocidal.
- Increases the stimulation levels of unconditioned reflex in cephalic phase for

* P.G. Scholar, ** Professor, *** Asst. Professor
Department of Swasthavritha, S.D.M. College of Ayurveda & Hospital, Hassan - 573 201

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

gastric secretion. Hence increases the appetite and also aids in proper digestion.

- Jivha Nirleka has it impact on the internal organs like liver, kidney, spleen etc. same as accupressure (The science of self healing - Dr. Vasanth Lad.)

ANJANA

- Applying of collyrium to the eyes.

INTERPRETATION

- Systemic medication has little impact in eye diseases.
- All tropical applications used for eye usually cotain heavy metals like silver etc.
- Bioavailability of drugs will be more.
- Sustained release action is found when applied locally.
- Anjana drugs get absorbed through episcleral and perilimbal vessels and released to aqueous flow. Thus, the effect of Anjana spreads through out the eyeball.

NASA:- Procedure by which the drugs are administered through nasal route.

INTERPRETATION

- By doing the Nasya every day it initiates the C.N.S., which controls the normal physiological functions through out the day.
- The oil, which is used in the Nasya, will increase the stickiness of the mucus, thus filters more of the dust particles.
- As it is known that the venous drainage of the nose is in cavernous sinus, which is by emissary veins, which also drains the brain. Hence the potency of the drug, which is present in the oil, can act on the brain through cavernous sinus.

KAVALA & GANDUSHA :- Holding the drug in the mouth without any movement is known as Gandusha and with the movement is Kavala.

INTERPRETATION

- The oral mucus membrane has capacity to absorb the lipid soluble drugs. Hence the lipid soluble constituents present in the drugs get absorbed.
- By doing Kavala there will be proper movement of jaw and facial muscles, which help for speech and mastication.

DHUMAPANA :- Dhumapana is carried out by using drugs like Priyangu, Chandana, Madhuka, Jatamamsi, Guggulu etc.

INTERPRETATION

- Some of the drugs like Jatamansi having Samgnyasthapana Prabhava exert its action and also freshly liberated Carbon di oxide will stimulates the respiratory center in the brain stem.
- Disinfective action is seen in the upper respiratory passages and oropharrynx.

VYAYAMA

- Procedure by which body gets tired is known as Vyayama.

INTERPRETATION

- It will increase the basal metabolic rate.
- Reduces the body weight and thus, increases the life span.
- It develops the Musculature.
- It helps for the lipolysis of accumulated adipose tissue and also metabolizes the carbohydrates.
- Increases the Oxygen supply to all the remote tissues.
- It maintains healthy state of body and mind.

ABHYANGA :- Applying oil to all over the body and massaging is known as Abhyanga.

INTERPRETATION

- It will increase the blood circulation, hence provides the better transportation in the body.
- It increases the nerve stimulation.
- It increases the skin texture.

UDVARTANA

- Applying powder over the body and rubbing is known as Udvartana.
- It will elevate Kapha and Medhus from the body.

MODE OF ACTION OF UDVARTANA & ABHYANGA :- The thiryaggata dhamanis divide into many branches and spreads to roma koopa. The potency of drugs, which are used for Abhyanga or Udvartana, enter the body through these dhamanis (Su.Sha. 9/9).

SNANA

- Bathing improves the appetite.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

- Improves the sexual vigour.
- Increases the enthusiasm and physical strength.
- Removes itching, alleviates exhaustion, thirst, burning sensation.

VASTRA, GANDHA, MALYA DHARANA :- Acharyas advocate using clean garments for the purpose of dheerghayu. These will preserve peace of mind and increase gentlemanlines.

INTERPRETATION

- Explained as general hygienic measures.

THAMBOOLA SEVANA :- Indicated after consuming the food by using Thamboola patra, pooga phala, Kadirasana churna etc.

INTERPRETATION

- These drugs have thridosha shamaka property.
- Improves the digestive power and aids digestion.
- Removes the bad smell from the mouth.

SAD VRITTA & ACHARA RASAYANA

- General principles of healthy living to prevent the psychic and psychosomatic disturbances are explained under this context.
- Code of conducts for taking food.
- Code of conducts regarding
  - Natural urges.
  - Relation with ladies.
  - Social behavior
  - Study
  - Self control

  are explained under this context.

Effort is made in this article to evolve an easily practicable daily regimen for implementation. One can devote at least two hours in a day for conducting following procedures, which keep an individual away from the diseases.

Procedure	Time taken	Special Tips
1. Shoucha Vidhi	15 Minutes	
2. Dantha dhavana	10 Minutes	
3. Jiwha Nirleka	02 Minutes	
4. Anjana	02 Minutes	Souviranjana
5. Gandusha	05 Minutes	
6. Nasya	05 Minutes	Prathimarsha Nasya is indicated to perform in daily regimen.
7. Dhoomapana	03 Minutes	Prayogika.
8. Abhyanga	15 Minutes	It can be followed weekly thrice.
9. Vyayama	20 Minutes	It includes Yogasana, Chankramana etc.
10. Udvartana	15 Minutes	Whenever needed or once in a week.
11. Snana	10 Minutes	
12. Vasthramala Abhooshana	10 Minutes	
13. Devatharchana	15 Minutes	

Hardly we have to spend 2 hours daily to implement all these procedures. By following simple tips we can save our money and time spent on diseases and can achieve the goal of health for all by 2005 A.D.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A CLINICAL STUDY ON GRAHANI SARDULA VATI IN THE MANAGEMENT OF CHRONIC DIARRHOE IN CHILDREN

Dr. Subash Sahu*
Dr. P.K. Sahu**

INTRODUCTION :

Diarrhoea is defined as increased in frequency fluidity and volume of faeces i.e. passage of liquid, watery stools more than 3 times per day is known as diarrhoea. Chronic diarrhoea is defined as diarrhoea lasting for 3 weeks or more or 3 attacks of diarrhoeal episodes during the last 3 months.

Chronic diarrhoea associated with weight loss in known as protracted diarrhoea. It is estimated that 10-15% acute diarrhoeal episodes get chronic diarrhoea.

In Ayurvedic Text, the chronic diarrhoea has been described in the name of Grahani and Jirnatisara. Children are the worst victim to the disease which occur in the infantile life and mostly within 6 months to 1½ years of age.

LITERATURE REVIEW :

The etiopathogenesis of the disease has been described in detail in both Ayurvedic and modern text. The causative factors of the disease have been described as follows :-

PREDISPOSING FACTORS :

A. Malnutrition :

The malnaurished children suffer more in comparison to healthy one because of the decreased local and systemic immuno functions and decreased repairative capacity of jejunal mucosa with decreased lactose contents.

B. Immunological status :

Chronic diarrhoea is mostly seen in children with impaired C.M.I. Impaired C.M.I. may lead to decrease ability of the host to get rid of the enteropathogens dwelling in the intestinal mucosa.

C. Bottle feeding :

Incidence of acute and chronic diarrhoea is much higher among bottle fed infants in comparison to the breast feeding infants.

D. Recurrent bacterial infection :

Children suffering from recurrent G.I.T. infections and inappropriate treatment (both in duration and dose of the drug) may lead to resistance of the organisms leading to chronic diarrhoea.

E. Systemic infections.

Systemic infections like septicemia, RTI, may lead to diarrhoea known as parenteral diarrhoea.

F. Lactose intolerance :

About 20-30% of chronic diarrhoea shows lactose intolerance where milk may be stopped because of lactose contents.

G. Cow's milk protein intolerance :

In some children diarrhoea used to occur after introduction of cow's milk in the diet after 6 months of age when the quantity and quality of mother's milk used to decline. Though the exact mechanism is not clear but cow's milk protein may have certain antigenisity in the mucous membrane of the intestine which may cause inflammation in the mucosal epithelium leading to diarrhoea.

H. Gluten induced enteropathy :

Some children develop chronic diarrhoea after the introduction of weaning food containing wheat, rye, barley which contains gluten which produces inflammatory reaction in the intestine due to its antigenicity leading to diarrhoea.

Chronic diarrhoea has been described in the Ayurvedic Text in the name of Grahani. It has been described that the disease used to occur after acute diarrhoeal episodes when the patient used to take apathy. Chronic diarrhoea has also been described in Bhaisajya Ratnavali in the name of Jirnatisara. There is no clear cut description of division of atisara in Kasyap Samhita.

SELECTION OF CASES :

20 cases of chronic diarrhoea from the OPD of G.A.H., Bolangir and from our clinic had taken into trail. These patients had been treated in the D.H.H. Bolangir and in other private clinics with some antibiotics.

All the cases were from poor to middle

* M.D. Scholar, Department of Dravyaguna, I.P.G.T. & R.A., G.A.U., Jamnagar.
** M.D. (Ayu.), B.H.U., Lecturer, Department of Kaumarbhritya, G.A.C., Bolangir

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

economic status families and within the age of 6 months to 1½ years. The female children were suffering more as per the table.

Table No. of cases	Male	Female
20	5	15

Table No. of cases	No. of cases <10 months	No. of cases > 10 months
20	6	14

The children having low sanitation use to suffer more which can be seen from the table.

Table No. of cases	Use tubewell water	Use ponds water/ common well water	Use boiled water	Use water without boiling
20	8	12	6	14

The breast feeding children suffered less in comparison to bottle feeding children.

No. of cases	Exculsive breast feeding	Exclusively bottle feeding	Mixed feeding
20	0	13	7

All the patients were suffering from PEM of different grades.

Before giving trail all the patients had been sent for routine blood examination like DC, TLC and Hb% along with routine and microscopic exam of stool to exclude the infective ones. Culture of the stool has not been done due to lack of facilities.

Table No. of cases	Pus cell in the stool	RBC and pus cell in the stool	No. of cases having pH5 or less	Yeast cell in the stool
20	3	NIL	8	NIL

All the cases were having normal DC and TLC count and Hb within 7-9 gm%. The patients having pus cells in the stool were given parenteral antibiotics for 5 days before giving the trial drug. All the patients having the stool pH5 or less were given lactose free diet as available in the market who were below 10 months of age and rest were given lactose free diet as per the text. The lactose free diet we have adopted for the children was purely home made containing old rice, mung dal, sugar and salt as required and coconut oil or ghee about 1-2 tea spoon full. The diet was well tolerated by the older children having age group more than 10 months.

MATERIALS AND METHODS OF STUDY :

All the cases we have given the trial drugs Grahani Sardula Vati from the beginning except those are having pus cells in the stool. The children were allowed for the breast feeding or full strength cow's milk by Koutery spoon except those who are having lactose intolerance.

After 5 days of parenteral antibiotics and lacto bacilli the children having pus cells in the stool were given the medicine Grahani Sardula Vati.

COMPOSITION OF THE MEDICINE :

The medicine was prepared by a pharmacist of Govt. Ayurvedic pharmacy, Bolangir taking the reference from Bhaisajya Ratnavali Grahani chikitsa. As per the text the medicine contains -

Jatiphala,	Lavanga
Sweta jira	Kusta
Tankana,	Dal chini

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Ela, Ahiphena
Vid lavana, Dhatura

But in our trial drug we had given only Karpur in place of Ahiphena. The total drug has been triturated with Prasarani Swarasa (Bhawana).

Dose : 30 mg/kg/dose thrice daily for 7 days.

ANUPANA :

In all the cases, boiled and cooled water is used as Anupana, but Mutharasa or Dadima, Swarasa and Madhu can be used for better efficacy.

RESULTS :

After 7 days of treatment the improvement was assessed on the basis of clinical symptoms which can be seen in the table.

Symptoms	*Before treatment*	*After treatment*	*No. of cases improved*	*No. of cases not improved*	*Percentage of success*
Frequency of stool	8-10 times/day	2-3 times/day	15	2	88.23%
Consistency of stool	Liquid to semi liquid	semi liquid to solid	12	5	70.58%
Appetite	Decreased	Improved	13	4	76.47%
Weight	-	Same	NIL	-	-

N.B. - Out of 3 patients having pus cells in the stool, one patient improved after 5 days of parenteral antibiotics. The rest two patients were given the trial drug. More over two patients discontinued their treatment. Hence N=15+2=17.

DISCUSSION :

In young children, the G.I. system used to be deranged after acute attack of infective diarrhoea and prolonged antibiotic therapy. Their appetite used to be decreased. As per the Ayurvedic priniciple care should be taken for the improvement of Jatharagni. The ingredients of Grahani Sardula Vati take care of it. Karpura used to reduce the gut motility and the frequency of stool was reduced.

CONCLUSION :

1. Grahani Sardula Vati is a herbal preparation.
2. It has no adverse effects.
3. It improves the appetite and digest the food.
4. It reduces the gut motility and helps in binding the stool. So the frequency and fluidity of the stool is reduced.
5. It is safe for all age groups and can be used for a prolonged period too.

बैद्यनाथ
पंचसकार चूर्ण
पेट साफ कर पाचन शक्ति को बढ़ाता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुण विवेचन पर आधारित

1. डा० अनूप कु०गक्खड़, एम.डी.(आयुर्वेद)
2. डा० अनिल गक्खड़, एम.डी. (आयुर्वेद)

प्र०- गुरू गुण की मूल प्रकृति क्या है ?
उ०- तमस् ।
प्र०- लघु गुण की मूल प्रकृति क्या है ?
उ०- सत्त्व ।
प्र०- स्थिर गुण में किस महाभूत की प्रधानता होती है ?
उ०- पृथिवी ।
प्र०- सूक्ष्म गुण में किस महाभूत की प्रधानता होती है ?
उ०- वायु, अग्नि एवं आकाश ।
प्र०- सर गुण में किस महाभूत की प्रधानता होती है ?
उ०- जल ।
प्र०- आशु गुण की मूल प्रकृति क्या है ?
उ०- रजस ।
प्र०- विकासी गुण की मूल प्रकृति क्या है ?
उ०- रजस् ।
प्र०- विकासी गुण में किस महाभूत की प्रधानता होती है ?
उ०- वायु ।
प्र०- तीक्ष्ण गुण में किस महाभूत की प्रधानता होती है ?
उ०- अग्नि ।
प्र०- व्यवायी गुण में किस महाभूत की प्रधानता होती है ?
उ०- वायु व आकाश ।
प्र०- स्पर्श गुण की मूल प्रकृति क्या है ?
उ०- रजस् ।
प्र०- द्रव गुण की मूल प्रकृति क्या है ?
उ०- सत्व व तमस् ।
प्र०- सुख गुण की मूल प्रकृति क्या है ?
उ०- सत्व व रजस् ।
14. प्र०- दु:ख गुण की मूल प्रकृति क्या है ?
उ०- तमस् व रजस ।
15. प्र०- प्रयत्न गुण की मूल प्रकृति क्या है ?
उ०- रजस्
16. प्र०- इच्छा गुण की मूल प्रकृति क्या है ?
उ०- रजस् ।
17. प्र०- अपरत्व गुण की मूल प्रकृति क्या है ?
उ०- रजस एवं सत्व ।
18. प्र०- द्वेष गुण की मूल प्रकृति क्या है ?
उ०- तमस् ।
19. प्र०- रूप गुण में किस महाभूत की प्रधानता होती है ?
उ०- अग्नि ।
20. प्र०- गन्ध गुण की मूल प्रकृति क्या है ?
उ०- तमस् ।
21. प्र०- परिमाण गुण की मूल प्रकृति क्या है ?
उ०- सत्व व रजस् ।
22. प्र०- कठिन गुण में किस महाभूत की प्रधानता होती है ?
उ०- पृथिवी ।
23. प्र०- पिच्छिल गुण में किस महाभूत की प्रधानता होती है ?
उ०- जल ।
24. प्र०- श्लक्षण गुण में किस महाभूत की प्रधानता होती है ?
उ०- अग्नि ।
25. प्र०- शुष्क गुण में किस महाभूत की प्रधानता होती है ?
उ०- भूमि, अग्नि, वायु ।
26. प्र०- विशद गुण की मूल प्रकृति क्या है ?
उ०- रजस् व तमस् ।
27. प्र०- विशद गुण में किस महाभूत की प्रधानता होती है ?

1. दयानन्द आयुर्वेदिक कालेज, जालन्धर शहर - 144 008
2. माई भागो आयुर्वेदिक कालेज, मुक्तसर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उ०- पृथिवी, वायु अग्नि व आकाश ।

28. प्र०- स्निग्ध गुण में किस महाभूत की प्रधानता होती है ?

उ०- जल ।

29. प्र०- स्निग्ध गुण की मूल प्रकृति क्या है ?

उ०- सत्व व तमस् ।

30. प्र०- रूक्ष गुण की मूल प्रकृति क्या है ?

उ०- तमस् व रजस् ।

31. प्र०- रूक्ष गुण में किस महाभूत की प्रधानता होती है ?

उ०- पृथिवी, अग्नि व वायु ।

32. प्र०- मन्द गुण की मूल प्रकृति क्या है ?

उ०- तमस् ।

33. प्र०- मन्द गुण में किस महाभूत की प्रधानता होती है ?

उ०- पृथिवी व जल ।

34. प्र०- गन्ध गुण की मूल प्रकृति क्या है ?

उ०- तमस्

35. प्र०- शब्द गुण की मूल प्रकृति क्या है ?

उ०- सत्व ।

36. प्र०- पृथक्त्व गुण की मूल प्रकृति क्या है ?

उ०- रजस् व सत्व ।

37. प्र०- संस्कार गुण की मूल प्रकृति क्या है ?

उ०- रजस व सत्व ।

38. प्र०- स्वर गुण की मूल प्रकृति क्या है ?

उ०- रजस + तमस् ।

39. प्र०- संख्या गुण की मूल प्रकृति क्या है ?

उ०- सत्व व रजस् ।

40. प्र०- बुद्धिगुण की मूलप्रकृति क्या है ?

उ०- सत्व, रजस व तमस् ।

बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल विटामिन-सी और कैल्सियम युक्त एक संपूर्ण स्वास्थ्य टॉनिक

च्यवनप्राश

माँ से बढ़कर बच्चों की देखरेख और कौन कर सकता है ? इसीलिए हर माँ अपने नन्हे-मुन्ने के लिए स्वास्थ्यवर्धक व पौष्टिक आहार की कामना करती है।

परन्तु केवल स्वादिष्ट भोजन आपके बच्चों की विटामिन व पोषण संबंधी जरूरतों की पूरा नहीं कर सकता। उसके अनुकूल विकास के लिए आपको चाहिए एक उत्कृष्ट स्वास्थ्य टॉनिक । जैसे बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल । इसमें हैं 52 (परखी हुई) जड़ी-बूटियाँ और केसर । अनेक विटामिन व हर्बो-मिनरल्स से युक्त, इसमें विशेष मात्रा में है, प्राकृतिक विटामिन-सी और कैल्सियम, जो आपके शरीर में जरूरी पोषक तत्वों की कमी को पूर्ण करते हैं ।

स्वस्थ दिमाग और शरीर के लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद-दर्शन तथा विज्ञान का समन्वय

मार्च, 1964

आयुर्वेद की मूल भावना वही है, जो किसी विज्ञान की होती है और आयुर्वेद विज्ञान की एक विशेषता यह है कि इसमें दर्शन एवं विज्ञान का समन्वय किया गया है और जीवन की उन सूक्ष्म प्रक्रियाओं, जिनका अभी तक आधुनिक वैज्ञानिक तरीकों से अध्ययन सम्भव नहीं हो सका है, का अध्ययन आयुर्वेद में बुद्धि और युक्ति के द्वारा किया जाता है । इसीलिए प्राय: मैं आयुर्वेद को श्रेष्ठ विज्ञान (सुपीरियर सायंस) कहा करता हूँ; क्योंकि यह (आयुर्वेद) न केवल जड़ पदार्थों का ही, प्रत्युत् 'स्पिरिट' और उसके निरन्तर जीवन विकास का भी अध्ययन करता है । आयुर्वेद के अनुसार मनुष्य का जीवन निरूद्देश्य नही होता; और मात्र भौतिक सुख संशय ही मानव जीवन का ध्येय नही है । उसका एक निर्दिष्ट लक्ष्य गंतव्य है, जिसे पुरुषार्थ कहा गया है - इसकी प्राप्ति में हीं मनुष्य जीवन की सार्थकता मानी गयी है ।

स्व० डा० लक्ष्मीपति

शरीर-संस्कार और सुकरात

स्वास्थ्य और सहनशक्ति स्वयम् लक्ष्य नहीं बल्कि वास्तविक लक्ष्य की, जो सुख है, प्राप्ति के साधन मात्र हैं और मानसिक अवस्था ठीक रखते हुए शरीर का संस्कार करना सुख की दिशा में अग्रसर होना है ।

सुकरात की दलील थी कि शुद्ध और सशक्त बने रहने का नैतिक पहलू भी है । वह कहा करता था कि हमारे आप बलवान पशु हैं तो इस तरह का बलवान होने का कोई महत्व नही है । मानव जीवन का उद्देश्य सुख है, और जब तक आप अपने मन को संयत कर बाह्यरूप के साथ उसका सामंजस्य नहीं स्थापित करेंगे तबतक आपको उसकी प्राप्ति नहीं होगी । उसने स्पष्टत: देखा कि मरा हुआ मनुष्य, मनुष्य नहीं, केवल शव, लिए शरीर है । इसलिए जीवित मनुष्य का शरीर और मन एक दूसरे से पृथक् नहीं किया जा सकता । आपको उसे अखंड रूप में एक मानना होगा और आप एक की उपेक्षा कर दूसरे का विकास नहीं कर सकते । उसका पहला उपदेश था - 'आप अपने को समझें और दूसरा था' किसी बात में अति न करें - संतुलन बनाए रखें, मिताचारी बनें । किन्तु उसका मिताचार केवल खान-पान तक सीमित नही था, वह जीवन के हर एक क्षेत्र में उसका प्रयोग करता था । राज्य के लिए दृढ़ वैधानिक शासन आवश्यक है । युद्ध और तज्जनित स्थिति ने प्रत्येक देश में इसे स्पष्ट कर दिया है । किन्तु यह शासन पहले मनुष्य में ही होना चाहिए । सुकरात का कहना है कि राज्य का कर्त्तव्य हमलोगों में जो पाशववृत्ति वाले हैं उनको दवायें रखना है (पर इसमें भी अति नहीं होनी चाहिए/शासन भी बहुत कठिन न हो क्योंकि उस अवस्था में वह अत्याचार का रूप ग्रहण कर लेगा ।) व्यक्ति के संबंध में भी यही बात है । हम अनुशासन के जो नियम प्रयोग में लाते हैं उनका उद्देश्य, वासनाओं को नियंत्रण में रखना है जिसमें ऐसा न हो कि वे प्रबल होकर हम पर शासन करने लगें, पर यहाँ भी संतुलन का ही आदर्श सामने रहना चाहिए । इसलिए सुकरात कहा करता था कि हम शरीर संस्कार का जो रूप समझा करते हैं, उससे वह बड़ी चीज है । अगर हम अपना समझ अपने को सिर्फ तगड़ा बनाने के लिए शरीर संबर्द्धन में लगाते रहें तो इससे हम सुखी नही हो सकेंगे । तगड़ा बदन लेकर आप क्या करेंगे ? क्या आप चारों ओर अपना भार डालकर लोगों को स्पष्ट करना और 'वृषभकाय' पर 'श्वानमति' की उपाधि प्राप्त करना चाहेंगे ? सुकरात का विचार इससे ऊँचा था । उसका कहना था कि स्वास्थ्य और शक्ति लक्ष्य न होकर वास्तविक लक्ष्य-सुख-की प्राप्ति के साधनमात्र हैं और यह सुख उस बूढ़े वीर और दृढ़ व्यक्ति के, जो बहुत बुद्धिमान् भी था, शब्दों में पूर्णतया मनुष्य, शरीर और मन दोनों के योग से बने नैतिक मनुष्य का व्यापार है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आरोग्य समाचार अखबार की कतरनों से

गर्भवती महिलाओं के लिए आराम करना आवश्यक नहीं

न्यूयॉर्क टाइम्स में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार गर्भवती माताओं को अत्यधिक आराम करने से निम्न समस्याएं पैदा होती हैं :-

1. शिशु छोटे पैदा होते हैं ।
2. पीठ, नितम्ब और मांसपेशियों में दर्द पैदा होते हैं ।
3. सिरदर्द होता है ।
4. नासा मार्ग में अवरोध पैदा होता है ।
5. अवसाद होता है ।
6. मांसपेशी में क्षीणता होती है ।
7. थकावट शीघ्र हो जाती है ।
8. या तो शरीर के भार में हानि होती है या भार कम बढ़ता है ।
9. चयापचय पर असर पड़ता है ।
10. रक्त परिमाण कम रहता है ।
11. लाल रक्त कोष में कमी होती है ।

उपर्युक्त निष्कर्ष केस वेस्टर्न रिजर्व विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित बोल्टन नर्सिंग स्कूल के अध्ययन-प्रतिवेदन में बताया गया है । इस सम्बन्ध में बिरमिंघम स्थित अल्बामा विश्वविद्यालय के प्रसूति तंत्र विभाग के डा० राबर्ट एल. गोल्डेनवर्ग ने बताया कि अनेक प्रसूति तंत्र के विशेषज्ञ समझते हैं कि आराम करने से प्रसव की समस्य कम होगी ।

सार्स की चिकित्सा सम्भव

द हिन्दुस्तान टाइम्स में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार अमेरिकी शोधकर्मियों ने एकपरतीय एण्टीबॉडी की पहचान कर ली है । यह विशेषीकृत प्रतिरोधी पद्धति प्रोटीन सार्स वायरस (विषाणु) को कोष को संक्रमित करने से रोक सकता है । आंकड़ों के अनुसार अबतक 800 लोगों की मृत्यु सार्स से हो चुकी है ।

स्तन कैन्सर और एण्टीबायोटिक्स में गहरा सम्बन्ध

यू.एस.ए. टुडे में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार सियेटल स्थित ग्रुप हेल्थ काअपरेटिभ के शोधकर्मियों ने 10,219 महिलाओं के अभिलेख की जांच की । इसमें से 2,266 महिलायें स्तन कैंसर से पीड़ित थीं । शोध से पता चला कि जो महिला ज्यादा एण्टी बायोटिक्स का प्रयोग करती थी, उसमें बीमारी का प्रतिशत ज्यादा था । फिर भी, शोधकर्मियों का कहना है कि निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए शोध की ज्यादा आवश्यकता है ।

निकोटिन के उत्सर्जन से आता है गुस्सा

दैनिक हिन्दुस्तान के अनुसार यदि आपको जल्द ही गुस्सा आ जाता है तो यह जानिये की आपके मस्तिष्क के किसी हिस्से में तेजी से निकोटिन का उत्सर्जन हो रहा है । वैज्ञानिकों ने इसका खुलासा एक अति शक्तिशाली स्कैनर के जरिये मस्तिष्क में होने वाली निकोटिन की गतिविधियों की स्थिति को देखकर दिया है । वैज्ञानिकों ने शोध के लिए निकोटिन पेबंद लगाकर जिन लोगों पर अध्ययन किया उनमें ऐसी स्थिति देखने को मिली । दिमागी हलचल उन लोगों में ज्यादा देखी गई जो सिगरेट नहीं पीते हैं या फिर कभी-कभार इसका सेवन करते हैं । वैज्ञानिकों ने पहली बार इस शोध से संकेत दिए हैं कि सिगरेट पीने वालों से ज्यादा खतरनाक स्थिति उन लोगों में निकोटिन उत्सर्जन की हो सकती है जिन्हें पल भर में गुस्सा आ जाता है ।

बैद्यनाथ सितोपलादि चूर्ण
पुराना बुखार, यक्ष्मा एवं खांसी की उत्तम दवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके पत्र

वैदिक चिकित्सा यज्ञ द्वारा क्षय रोग का समूल नाश : W.H.O. व भारत सरकार स्वास्थ्य मंत्रालय के नाम संदेश

सेवा में,

श्रीयुत् सम्पादक

सचित्र आयुर्वेद, पटना

महाशय,

आज के आधुनिक समाज में विभिन्न भयावह व्याधियों पर नियंत्रण पाने के लिये विश्व के देश, विश्व स्वास्थ्य संगठन (W.H.O.) के साथ संयुक्त प्रयास में लगे हैं। इन्हीं व्याधियों में से एक व्याधि क्षय रोग है जिसे टी०बी० तपेदिक, राजयक्ष्मा के नाम से जाना जाता है। इसका वर्णन वैदिक काल से आज के आधुनिक समय तक चला आ रहा है। इसका प्रकोप भारत वर्ष में समस्त राज्यों में कम या ज्यादा स्तर पर है। कोई भी राज्य इससे अछूता नही है। हर रोज भारत में तपेदिक से 1053 लोग मरते हैं, जबकि 5000 इसकी चपेट में आते है। पिछले साल करीब 400000 मौत इस क्षय रोग के कारण हुई।

केन्द्र सरकार के एक नीतिगत फैसले के तहत एक देशव्यापी कार्यक्रम वर्ष 1962 से शुरु किया गया। इस नेशनल टी०बी० कंट्रोल प्रोग्राम का परिणाम भी सार्थक नही रहा। वर्ष 1992 के आंकलन के अनुसार इससे 30 प्रतिशत बीमारी पर भी अंकुश लगाया जाना संभव नहीं हुआ। अंततः केन्द्र सरकार व W.H.O. के बीच एक करार के तहत 'डाट' (डायरेक्टली आब्जर्वड ट्रीटमेन्ट) योजना को 1993 में पायलट प्रोजेक्ट के रूप में शुरू किया गया। योजना का कारगर स्वरूप देखते हुये इसे देश के सभी प्रदेशों में शुरू करने का फैसला लिया गया। विश्व बैंक के आर्थिक सहयोग से चलाए जा रहे इस प्रोग्राम के परिणाम चिन्ताजनक हैं। स्वास्थ्य विशेषज्ञों का मानना है कि साइंस भी इस बीमारी के साथ सौतेला व्यवहार कर रहा है। अब तक इस बीमारी की सिर्फ पांच दवाइयों की ही खोज की गई है। ये स्ट्रेपटोमाइसिन, आइसोनेक्स, रिफेम्पासिन, पाराजेनामाइट और इथमब्यूटल है। सन् 2000 में सरकार ने वादा किया था कि संक्रामक टी०बी० वाले 10 मरीजों में से 7 का इलाज डाट्स से किया जायेगा और 2005 तक करीब 6 स्वस्थ हो जाएगे पर हकीकत कुछ और ही है। टी०बी० सम्बन्धी आंकड़े बताते है कि 56% आबादी ने टी०बी० को लेकर आधे अधूरे कार्यक्रम देखे है जबकि 3% ने कुछ देखा ही नही हालांकि विश्वबैंक देश में टी०बी० के लिये सलाना 142 करोड़ रुपये देता है। अगले पांच साल में ग्लोबल फंड से 190 करोड़ रुपये आयेंगे। जबकि 2003 के बजट में टी०बी० के लिये 169 करोड़ रुपये थे। 75 प्रतिशत रोगी 15 से 50 वर्ष की आयु के व्यस्क होते हैं।

ऐसी निराशाजनक स्थिति में वेद भगवान आशापूर्ण शब्दों में आदेश देते हैं कि हे रोगिन हवियों के द्वारा क्षय रोग से मैं तुझको छुड़ाता हूँ। अथर्ववेद काण्ड उ०दीर्घायुप्राप्ति सूक्त 11, मंत्र प्रथम कहता है।

मुञ्चामि त्वा हविषा जीवनाय कमज्ञातयक्ष्मादुत राजयक्ष्मात्।
ग्राहिर्जग्राह यद्येतदेनं तस्या इंद्राग्नी प्र मुमुक्तमेनजम् ॥

अर्थात् हे व्याधि ग्रस्त। तुमको सुख के साथ चिरकाल तक जीने के लिये गुप्त यक्ष्मारोग और सम्पूर्ण प्रकट राजयक्ष्मा रोग से हवन के द्वारा छुड़ाता हूँ। हे इन्द्रदेव और मानिदेव। इस व्यक्ति को इस समय जिस पीड़ा या पुराने रोग ने जकड़ रखा है। उसको इसके अवश्य छुड़ाये। इससे अलगा मंत्र जो कहता है उसका भाव है। यदि रोगग्रस्त मनुष्य मृत्यु को प्राप्त होने वाला हो या उसकी आयु क्षीण हो गई हो तो भी मैं विनाश समीप से उसे वापिस लाता हूँ और सौ वर्ष की पूर्ण आयु तक के लिये सुरक्षित करता हूँ।

इसी तरह अथर्ववेद के काण्ड 2 सूक्त 33 के यक्ष्माविवर्हण सूक्त के सात मंत्रों में कहा गया है कि हे रोगिन्। आपके प्रत्येक अंग, प्रत्येक लोम और शरीर के प्रत्येक संधि भाग जहां कही भी यष्मा रोग का निदान है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहां से हम उसे दूर करते है । इसके आगे कांड 6 सूक्त 5 एवं 127 यक्ष्मनाशन सूक्त में, गंडमाला चिकित्सा सूत्र 76 में हवन द्वारा क्षय रोग दूर करने का उल्लेख हैं । क्षय रोग किन कारणों से उत्पन्न होता है । इसका स्पष्ट उल्लेख अथर्ववेद में कांड 7, सूक्त 76 में किया गया है । इसका भावार्थ है । जो क्षयरोग पसलियों को तोड़ डालता है । फेफड़ों में जाकर बैठ जाता है, पृष्ठभाग के ऊपरी हिस्से में स्थित हो जाता है । अति स्त्री प्रसंग से उत्पन्न होने वाले उस क्षयरोग को, हे यज्ञीय हवि ! तू शरीर से बाहर निकाल दे । इस क्षयरोग को उत्पन्न करने वाले विषाणु पक्षी की भांति हवा में उड़ते हुय एक से दूसरे व्यक्ति में प्रलिष्ठ हो उसे संक्रमित कर देते है । चाहे रोग ने जड़ जमा ली हो । चाहे जड़ न जमाई हो, हवि चिकित्सा दोनो की ही उत्तम चिकित्सा है । असंयमित जीवन जीने से उत्पन्न हे क्षय रोग ! हम तेरी उत्पत्ति को जानते है, किन्तु जिस घर में नाना प्रकार की औषधियों से या रोगनाशक हवि, चरू या अन्न द्वारा हवन होता है, उस घर तू कैसे पहुंच सकता है ।

प्राकृतिक नियमों का पालन करते हुये जो व्यक्ति, नित्यप्रति, नियमपूर्वक वनौषधि युक्त हवन सामग्री के गायत्री महामंत्र या सूर्य गायत्री मंत्र के साथ हवन करता है । वह कदापि रोगी नहीं हो सकता । यह वेद वर्णित मत है ।

अथर्ववेद काण्ड 19 सूक्त 78 मंत्र 1-2 का इस संबंध में स्पष्ट आदेश है ।

न तं यष्मा अरून्धते नैनं शपथो अश्नुते ।
यं भेषजस्य गुतगुलोः सुरभिर्गधो अश्नुते ॥
विष्वम्चस्तस्माद् यष्मा मृगा अश्वा इवरेते ।
यद् गुल्गुलु सैधवं यद् वाप्यसि सामुदियम ॥

अर्थात् जिसके शरीर को औषधिरूप रोगनाशक गुग्गुल का उत्तम गंध व्यापता है । उसको राजयक्ष्मा का रोग एवं दूसरों के द्वारा दिये गये आभिशाप स्पर्श तक नही करते । इस गुग्गुल की सुगन्धि से यष्मा आदि रोग इसी प्रकार सभी दिशाओं में पलायन कर जाते है, जिस प्रकार शीघ्रगामी अश्व और हिरण दौड़ जाते है ।

आयुर्वेद ग्रन्थ चरक संहिता के चिकित्सा स्थान के राजयक्ष्मा चिकित्सत् नामक आठवें अध्याय के 186 वे श्लोक में कहा गया है -

प्रयुक्त्या यथा चेष्ट्या राजयक्ष्मा पुराजितः ।
तां वेद विहितमिष्टमारोग्यार्थी प्रयोजयेत ॥

अर्थात् जिस यज्ञ के प्रयोग से प्राचीन काल में राजयक्ष्मा रोग नष्ट किया जाता था, आरोग्यता चाहने वाले मनुष्य को उसी वेदविहित यज्ञ का अनुष्ठान करना चाहिए। तात्पर्य यह है कि क्षय रोगी के लिये यज्ञ चिकित्सा एक ऐसा महत्वपूर्ण एवं सर्वागपूर्ण उपाय उपचार है कि इसके पश्चात् किसी अन्य उपाय की आवश्यकता नहीं रहती ।

यज्ञोपचार द्वारा यक्ष्मा रोग को दूर करने का वर्णन पुराणों में भी मिलता है । लिंग पुराण अध्याय 49, श्लोक 8 से 13 तक विभिन्न प्रकार के रोगों के शमनार्थ यज्ञोपचार का वर्णन है । यथा

षण्मास तु घृतं हुत्वा सर्वव्याधिविनाशनम् ।
राजयक्ष्मा तिलैहोमन्नश्यते वत्सरेणु तु ।
यवहोमेन चायुष्यं घृतेन च जयस्तदा ।

अर्थात 6 महीने तक घी का हवन करने से सब प्रकार की व्याधियों का नाश होता है । एक वर्ष तक तिल का हवन करनें से राजयक्ष्मा अर्थात् टी०बी० का नाश होता है । जौ का हवन करने से आयुवृद्धि एवं घी के हवन से जय प्राप्त होती है ।

इसी तरह देवी भागवत् 11/24-26 में स्पष्ट उल्लेख है

वचाभिः पयशक्ताभिः क्षय हुत्वा विनाशयेत् ।
मधुत्रितपहोमेन राजयक्ष्मा विनश्यति ॥
लताः पुर्वसु विच्छिद्य सोमस्य जहुयाद्द्विजः ।
सोमे सूर्येण संयुक्ते प्रयोक्ताः क्षयशांतये ।

अर्थात् दूध से बच को अभिषिक्त करके हवन करने से क्षयरोग दूर होता है । दूध दही और घी इन तीनो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होमने से भी राजयक्ष्मा नष्ट होता है । अमावस्या के सोमलता की डालो को गांठो पर से अलग करके करने से क्षय रोग दूर हो जाता है ।

इन मंत्रों से स्पष्ट है कि क्षयरोग चाहे प्रारंभिक अवस्था में हो अथवा बहुत बढ़ गया हो । चतुर्थ अवस्था पहुंच गया हो यहां तक कि उसके कारण रोगी बिल्कुल आसन्न हो गया हो तो भी यज्ञोपचार के द्वारा व ठीक सकता है और सौ वर्ष तक जीवित रह सकता है । अथर्ववेद काण्ड 3 दीघायुः प्राप्ति सुक्त । मंत्र 4 की पंक्ति है ।

जीव शरदो वर्धमानः शतं हेमंताञ्छतमु बसंतान शंत त आनिः सविता वृहस्पतिः शतायुषा हविषाहार्षमेनम्

अर्थात् हे हवि चिकित्सा द्वारा क्षयरोग से लाभ हुये मनुष्य ! तू दिनो दिन बढ़ता हुआ सौ शरदो तक, हेमंतो तक, और सौ वसन्तों तक जीवित रह । वायु सूर्य और वृहस्पति पर्जन्य ने सौ वर्ष की आयु देने हानि की सहायता से पुनः तुझे सौ वर्ष की आयु करा दी है ।

यज्ञोपचार प्रक्रिया द्वारा क्षयरोग निवारण के लिये दृढ़ भावना के साथ सूर्य गायत्री मंत्र से विशिष्ट प्रकार वनी हवन सामग्री के साथ किया गया हवन आरंभिक अवस्था से लेकर असाध्य स्थिति तक पहुंचे यक्ष्मा टी०बी० को समूल नष्ट करने से समर्थ है । सूर्य गायत्री मंत्र प्रकार है ।

ॐ भूभुर्वः स्वः भास्कारय विद्महे दिवाकराय धीमहि तन्नः सूर्यो प्रचोदयात् ।

यज्ञ से जो औषधियां होमी जाती है । उससे जो धूम्र निस्सृत होती है, वह हल्की होने के कारण ऊपर को उठती है । जब यह नासिका द्वारा अंदर खीची जाती है तो सर्वप्रथमा मस्तिष्क तदुपरातं फेफड़ो में फिर सारे शरीर में फैलती है । इसके साथ औषधियों के जो अत्यन्त उपयोगी सम्मिश्रित सूक्ष्म अंश होते है, वे मस्तिष्क के उन क्षेत्रों तक भी पहुंचते है जहां अन्य उपायो से उनका स्पर्श तक नहीं किया जा सकता । अचेतन की गहन परतो तक यज्ञीय ऊर्जा की पहुंच होती है । और वहां जड़ जमाये मनोविकारों बीमारियों को निकाल बाहर करने में सफलता मिलती है ।

यज्ञ चिकित्सा में विशेष रोगों के लिये विशेष प्रकार की रोगानुसार हवन सामग्री तैयार की जाती है । परन्तु जो औषधिया सभी रोगों मे समान रूप से एक सम्मान है उनके नाइ इस प्रकार है ।

1. अगर	2. तगर	3. देवदार
4. चन्दन	5. लालचन्दन	6. जायफल
7. लौंठा	8. गूगल	9. चिरायता
10. गिलोय	11. असगन्ध	

इस औषधियों को बराबर मात्रा में लेकर कूटपीस कर दरदरा चूर्ण बना लिया जाता है । इस प्रकार तैयार हवन सामग्री को एक डिब्बे में रखकर उस पर 1 नवम्बर का लेव चिपका दें ।

क्षय रोग की विशेष हवन सामग्री के लिये जिन औषधियों को बराबर मात्रा में लिया जाता है, वे इस प्रकार है :-

1. स्दंती	2. रूदवती
3. शरपुंखा	4. जावित्री
5. बिल्व की छाल	6. छोटी कटंकारी
7. बड़ी कटंकारी	8. तेजपत्र
9. पाढल	10. वासा
11. गंभारी	12. श्योनक
13. प्रश्निपर्णी	14. शालिपर्णी
15. शतावर	16. अश्वगन्धा
17. जायफल	18. नागकेशर
19. शखांहुली	20. नीलकमल
21. लौंग	22. जीवंती
23. कमलगट्टा की गिरी	24. मुनक्का
25. केशर यज्ञाक्ति	

इन सभी औषधियों का जौकुट पाउडर बनाकर एक अलग डिब्बे में रखकर उसपर 2 नम्बर का लेबल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिपका दें । इसी 2 नम्बर की सामग्री की बारीक कपड़ छान चूर्ण एक-एक चम्मच सुबह शाम घी एवं शक्कर के साथ नियमित रूप से लें ।

हवन करने के लिये क्षीरवृक्षों की समिधा का चयन करना चाहिए । जैसे:- पीपल, गूलर, पाकर, पलाश, रामी देवदार, सेमल या आम की छाल युक्त सूखी समिधा ।

यज्ञोपचार करते समय हवन सामग्री न० 1 व न० 2 को डिब्बों में से समान मात्रा में औषधीय हवन सामग्री को अलग पात्र में निकाल कर मिश्रित करले । फिर सूर्य गायत्री मंत्र से कम से कम 24 आहुतिया प्रदान करनी चाहिए । सूर्योदय के समय किया गया यज्ञ सर्वाधिक लाभकारी होता है । आश्यकता अनुसार दिन में भी 3 बार और रात में एक दो बार किसी पात्र में अग्नि रखकर थोड़ी-सी औषधीय हवन सामग्री थोड़ी देर के लिये रोगी के निकट धूप की भांति जलाई जा सकती है ।

हवन करते समय तैयार औषधियों का 10वां भाग शर्करा व 10वां भाग घृत मिला देना चाहिए । हवन के पश्चात् समीप रखे जल पात्र में दुर्वा, कुश अथवा पुष्प डुबोकर गायत्री एवं पढ़ते हुये रोगी पर अभिसिंचन करना चाहिये । साथ ही यज्ञ की भस्म मस्तक हृदय कंठ पेट नाभि एवं दोनों भुजाओं पर लगानी चाहिये । इसी प्रकार घृत पात्र में जो घृत वचा रहता है । उसमें से कुछ बूंदे लेकर रोगी के मस्तक एवं हृदय पर लगानी चाहिए । इसका प्रभाव रोगी के शारीरिक व मानसिक दोनों ही क्षेत्रों में पड़ता है परिणामस्वरूप जीवनीय शक्ति बढ़ जाने से वह जल्दी स्वस्थ हो जाता है ।

क्षय रोगी को मल मूत्रादि के उपस्थित वेगों को रोकना, श्रमोत्पादक कर्म, मैथुन, रात्रि में जागरण, अति साहस के कार्य, रूखा भोजन अनियमित समय पर कम या ज्यादा खाना, तरबूज, कुलथी, उड़द, लहसुन, हींग, खट्टे तीते कसैले और कड़वे ये सब रस, पत्तों का शाक, परस्पर विरूद्ध भोजन सेम, बेंगन, करेला तेल राई व्यायाम दिन में सोना, क्रोध करना ये सब क्षययुक्त रोगियों के लिये व्याज्य है ।

क्षय रोगी को मूर्ग, साठी चावल, गेहूँ, जौ, चना, लाल चावल, सूर्य चन्द्र की किरणे, मधुर रस पके केले, आम, आंवला, खजूर, फालसा, नारियल, सहिजना, राख, सौंफ, सैंधा नमक, अडूसे की पत्ती, गाय, भैंस का घी, बकरी जहां बंधी हो वहां रहना, मिश्री, सिवरन (दही चीनी व पानी के योग से बना पदार्थ, कपूर, सफेद चन्दन, सुगन्धित द्रव्यों का लेप स्नान, शीतल मन्द सुगन्ध वायु का सेवन, हवन करना, दान देना, देवताओं का पूजन, हृदय के लिये हितकर अन्नपान ये सब वस्तु राजयक्ष्मा रोग में पथ्य है ।

भारत सरकार के स्वास्थ्य मंत्री से अनुरोध है कि यज्ञ चिकित्सा के व्यापक प्रभाव को देखते हुए इसे टी०बी० उन्मूलन कार्यक्रम प्रोजेक्ट का एक प्रभावी अंग बनाये । इस प्रोजेक्ट की सफलता में मनुष्य के सांसारिक पुरुषोर्थ के साथ अध्यात्मिक पुरुषार्थ भी कारगार सहायक हो सकता है । आध्यात्मिक पुरुषार्थ में यज्ञ की बड़ी महिमा बतायी गयी है । दूषित वातावरण का प्रभाव, दूषित वायुमंडल का प्रभाव, विकिरणों का प्रभाव, इनके कारण उत्पन्न प्रेरणा से जगह-जगह द्वेष, मारकाट, आतंकवाद, प्राकृतिक प्रकोप व विश्वस्तर पर फैलते विभिन्न असाध्य संक्रामक रोग इन सबका परिवर्तन करने के लिये/वायुमंडल का संशोधन करने के लिये/सारे संसार में सुख, शान्ति लाने के लिये, कलह, क्लेशों को दूर करने के लिये, यज्ञ भारतीय धर्म में सबसे बड़ी देन है । यज्ञ से बड़ी कोई और वस्तु नहीं जो सूक्ष्म जगत् का परिष्कार कर सके ।

अगर टी०बी० हस्पतालों में इसके विभिन्न वार्डो में रोगी के घर में व सार्वजनिक स्थानों पर हो; या जहां पर क्षय रोग के संक्रमण फैलने का भय हो । उपरोक्त विधि से औषध यज्ञों का आयोजन हो तो कोई सन्देह नहीं भगवान वेद के आर्शीवाद से यह रोग जीत लिया जायेगा ।

ओं द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष॰ शान्तिः पृथ्वि शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शान्तिः सर्वेऽशान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि
ओउम् शन्तिः शन्तिः शन्तिः

भवदीय

वैद्य (डा०) कुलदीप सिंह सोहल
योगमार्त्तण्ड आयुर्वेदाचार्य
महर्षि चरक आयुर्वेद चिकित्सा मन्दिर
ए ब्लाक, गुरद्वारा बिल्डींग, पाण्डव नगर
(मदर डेयरी के नजदीक)
दिल्ली - 110092

Godadhi in Ayurveda Literature

To

The Editor,
Sachitra Ayurveda
Baidyanath Bhavan, Patna - 800 001

Sir,

In the issue of February'04 you have published an article 'Godadhi in Ayurveda Literature'.

It is too lengthy and has occupied about 22 pages i.e. 25% of tatal pages. Besides it does not provide any substantial knowledgeable material for readers but seems to be more tedious.

Many periodicals instruct writers about limitation for pages. This will provide more exahaustive varieties of subjects with substantial materials from different authors.

Mere bulk of articles and adding quotations from texts do not reflect any innovation or originality of wirters.

Articles should be research oriented, comprehensive with comparative study acceptable to readers of scientific outlook.

Another important issue, mere herbal drug therapy is not the aim of Ayurveda. But its fundamental principles like Tridosha, Saptadhatu, Drvyaguna shastra, Shadrasa and its value to determine nutritive and therapeutic value should be given priority.

It is hoped you will pay more attention to maintain high standard of your publication.

Yours sincerly
M.M. Pandya
"DIKPAL"
Madhi - 394340
Dist. Surat (Gujrat) Ph.No. 02622-241095

बैद्यनाथ

प्राणदा

प्राणदा से हर साल मलेरिया के लाखों रोगी प्राणदान पाते हैं । इसलिए इसका नाम प्राणदा बिल्कुल सही है । हिन्दुस्तान के गांव-गांव और कस्बे-कस्बे में यह दवा मशहूर है । इकतरा, तिजारी, चौथिया, फसली, जूड़ी-पारी का बुखार और तिल्ली मलेरिया के ही भेद हैं । मलेरिया बुखार की हर हालत में यह तुरंत फायदा पहुंचाती है । बुखार के बाद भी दवा पीने से बुखार के फिर लौटने का भय नहीं रहता ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां

उत्तरांचल

प्रस्ताव पारित

आज दिनांक 22.12.2003 को उत्तरकाशी मुख्यालय पर फार्मेसिस्ट एसोसियेशन की आम बैठक संघ के अध्यक्ष डा० सुशील चन्द्र बिजल्वाण की अध्यक्षता में सम्पन्न हुयी । बैठक में संघ के मंत्री द्वारा पिछली कार्यवाही पढ़ी गई एवं उसकी पुष्टि की गई । संघ के सभी साथियों ने अपनी समस्या तथा विचार, सुझाव बैठक में रखे तथा सर्व सम्मति से निम्नलिखित प्रस्ताव एवं मांग पत्र पारित किये गये ।

क्षेत्रीय आयुर्वेदिक कार्यालय स्तर की मांग एवं प्रस्ताव :-

1. समस्त फार्मेसिस्टों की भविष्य निधि पासबुकों में सही अंकन पर संबंधित फार्मेसिस्टों से हर 6 माह में उनके हस्ताक्षर करवाये जायें ।
2. श्री दयालसिंह चौहान फार्मे०रा०आ०चि०, चिंवा द्वारा अवगत कराया गया है कि उनके द्वारा भविष्य निधि से अस्थाई अग्रिम मात्र 60,000=00 लिये थे तथा 2000=00 प्रति माह कटौती के हिसाब से कुल 30 किस्ते काटनी चाहिये थी, जबकि उनके वेतन से 34 किस्ते कट चुकी हैं । अत: यह कटौती शीघ्र ही बन्द की जाय ।
3. सभी इन्चार्ज फ़ार्मेसिस्टों को उनके वेतन में इन्चार्ज एलाउन्स शासनादेश के अनुसार शीघ्र एरियर सहित भुगतान किया जाय ।
4. कर्मचारियों के सभी देयक, एरियर, बोनस आदि का भुगतान बैंक खाते के माध्यम से समय पर कर दिया जाय ।
5. श्री के०एन० बैजवाल, फार्मेसिस्ट, रा०चि०, स्यालना का प्रोन्नति एरियर तथा 2002 का महंगाई भत्ता एरियर 3 प्रतिशत का शीघ्र भुगतान किया जाय ।
6. श्री देवी प्रसाद त्रिवेदी फार्मेसिस्ट रा०आ०चि० कुथरौर का व्यवस्था पर स्थानान्तरण नवीन चिकित्सालय भराणगांव हुआ है, इनकी परिस्थिति को ध्यान में रखते हुये स्थानान्तरण निरस्त किया जाय ।
7. श्री बच्चीराम नौटियाल, फार्मेसिस्ट, रा०आ०चि०, चिंवा की भविष्यनिधि पासबुक जनपद पौडी से अभी तक नहीं आया है जिस कारण पास बुक की कटौतियों का अंकन नही हो पा रहा है । कृपया पौडी कार्यालय से इनकी पासबुक, भविष्यनिधि खाते का पूर्ण विवरण मंगाया जाय तथा इनका खाता सही किया जाय ।
8. रा०आ०चि० चिंवा में केवल फार्मेसिस्ट ही तैनात हैं -वहां पर शीघ्र ही अन्य स्टाफ चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी की व्यवस्था की जाय ताकि चिकित्सालय सुव्यवस्थित संचालित किया जा सके ।
9. श्री जीतपाल सिंह रावत, फार्मेसिस्ट, रा०आ०चि० डोभालगांव की वेतनवृद्धि अल्मोड़ा से 150.00 के स्थान पर 125.00 दिया जा रहा है जबकि सेवा पुस्तिका में 150.00 अंकित है । इसे ठीक किया जाय शेष एरियर बनाकर भुगतान किया जाय ।

निदेशालय स्तर की मांग एवं प्रस्ताव

1. कुछ फार्मेसिस्टों का विनियमितीकरण अभी तक नहीं हुआ है । कृपया इस पर शीघ्र कार्यवाही की जाय।
2. निदेशालय से फार्मेसिस्टों की पूर्व में जो वरिष्ठता सूची प्रकाशित की गई है वह त्रुटिपूर्ण थी । इसे सही कर शुद्ध वरिष्ठता सूची प्रकाशित की जाय। वरिष्ठता क्रम चिकित्सालयों में योगदान सूचना का सेवा पुस्तिका में मिलान कर किया जाना चाहिये । यह न तो कमीशन का पद है और नहीं प्रशासनिक सेवा का पद, जिसे नियुक्ति आदेश से वरिष्ठता सूची बने। यह साधारण तृतीय श्रेणी का पद है । अत: योगदान तिथि के आधार पर ही वरिष्ठता सूची तैयार की जानी चाहिये ।
3. श्री राजेन्द्र सिंह शाह, फार्मे०, रा०आ०चि०, बरसाली का 7 माह पूर्व स्थानान्तरण जनपद उत्तरकाशी से जनपद टिहरी गढ़वाल हुआ था । जनपद में फार्मेसिस्टों एवं चिकित्साधिकारियों की कमी के कारण तथा इनके स्थान पर बाहर से कोई फार्मेसिस्ट न आने के कारण तथा जनपद की व्यवस्था को देखते हुये क्षे०आ०एवं युनानी अधिकारी महोदय इन्हें समय पर कार्यमुक्त न कर सके, जिस कारण इन्होंने अपने बच्चों को यहीं पर प्राईवेट विद्यालयों में दाखिला दिला दिया । अब 7 माह बाद इन्हें स्थानान्तरण पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाने के लिये बाध्य किया जा रहा है, जिसका संघ घोर विरोध करता है। स्पष्ट हो कि 6 माह बाद आदेश स्वत: ही निरस्त हो जाते हैं । अत: इनके बच्चों की शिक्षा व्यवस्था बाधित न हो तथा बीच सत्र में इनको स्थानान्तरण पर जाने को बाध्य न करते हुये इनका स्थानान्तरण निरस्त किया जाय ।

4. श्री प्रकाशचन्द्र व्यास, फार्मेसिस्ट, रा०आ०चि०, भराणगांव नवीन चिकित्सालय में व्यवस्था पर तैनात हैं क्योंकि मुख्यालय में 25 शय्यावाला चिकित्सालय हो गया है तथा योग एवं पंचकर्म यूनिट खोलने से कार्य की अधिकता के कारण इन्हें अपने मूल तैनाती स्थान पर बुलाया गया है तथा बीच-बीच में नवीन चिकित्सालय की व्यवस्था भी देखते हैं, कार्यालय में इनकी नियुक्ति नहीं है । प्रान्तीय संघ द्वारा बिना जनपद शाखा को विश्वास में लिये गलत सूचना दी गई है ।

5. श्री जीतपाल सिंह रावत, फार्मे०रा०आ०चि०, बागेश्वर अल्मोड़ा में प्रशासनिक आधार पर स्थानान्तरित होकर डोभालगांव उत्तरकाशी आये हैं । श्री रावत जनपद शाखा अल्मोड़ा के शाखा अध्यक्ष भी हैं । बैठक मांग करती है कि शाखा अध्यक्ष श्री रावत का प्रशासनिक आधार पर कैसे स्थानान्तरण हुआ । श्री रावत तथा शाखा संघ को सही परिस्थितियों से अवगत कराया जाय ।

जनपद टिहरी में कुछ कर्मचारियों के दिसम्बर 1997 के वेतन भुगतान के संबंध में :- कुछ कर्मचारियों को दिसम्बर 1997 का वेतन अभी तक प्राप्त नहीं कराया गया है । तत्कालीन क्षे०आ० एवं यूनानी अधिकारी डा०जे०पी० शर्मा द्वारा वेतन को गबन दिखाया गया है तथा उसकी प्राथमिकी माह मार्च 1998 में लिखाई गई । जबकि कर्मचारियों का वेतन 9 जनवरी 1998 को कोषागार से आहरित किया गया था, क्या कर्मचारियों का वेतन आहरित कर बिना कारण बताये 2-3 माह तक कार्यालय में रखा जा सकता है, अर्थात् नहीं । इससे स्पष्ट होता भी है कि या तो अधिकारी अपने कर्त्तव्य से लापरवाह हैं या इस गबन में अधिकारी की भी भूमिका थी ।

नवोदित उत्तरांचल राज्य की जब आप नोडल अधिकारी रहीं, उस समय भी यह प्रकरण आपके सम्मुख प्रस्तुत किया गया था और आपके द्वारा यह आश्वासन दिया गया था कि मामला न्यायालय में ले जाने से विभाग बदनाम होगा । आप लोग न्यायालय में न जायं मैं मामले का समाधान कर लूंगी । सौभाग्य से आप वर्तमान में विभाग में निदेशक पद पर आसीन हैं । अत: आशा ही नहीं अपितु विश्वास है कि आप इस समस्य का शीघ्र समाधान कर कर्मचारियों का रूका हुआ वेतन शीघ्र भुगतान करने के आदेश करेंगी तथा दोषी अधिकारी के विरूद्ध आवश्यक कार्यवाही करेगी ताकि भविष्य में इस प्रकार की अनियमितता न होने पाये ।

डा० सुशीलचन्द्र बिजल्वाण, अध्यक्ष
रा०आ०फार्म०संघ, उत्तरकाशी

प्रकाश चन्द्र व्यास
रा०आ०फार्मे०मंत्री संघ, उत्तरकाशी

प्रस्ताव पारित

आज दिनांक 22.1.2004 की राजकीय आयुर्वेदिक चतुर्थ वर्गीय संघ उत्तरकाशी की बैठक मुख्यालय उत्तरकाशी के योग कक्ष में सम्पन्न हुई । बैठक की अध्यक्षता श्री परमानन्द नौटियाल एवं संचालन श्री अशोक कुमार ने किया । बैठक में सभी सदस्यों ने अपने-अपने विचार व्यक्त किये एवं संघ ने अपनी मांगों के सम्बन्ध में प्रस्ताव पारित किया ।

1. 8, 14, 19 तथा 24 वर्ष की सेवा में सभी कर्मचारियों को वेतन वृद्धि का लाभ दिया जाय ।
2. माह जुलाई 2003 से माह नवम्बर 2003 तक का डी०ए० एरियर भविष्य निधि खातों में जमा किया जाय ।
3. कर्मचारियों को प्रत्येक वर्ष मार्च में जी०पी०एफ० स्लिप दी जाय तथा जी०पी०एफ० पास बुक में साल में एक बार कर्मचारी के हस्ताक्षर करवायें जाय ।
4. कर्मचारियों को अन्य विभागों के भांति 2750/4400 का वेतन शीघ्र लगाया जाय तथा भुगतान किया जाय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

।

5. चतुर्थ वर्गीय कर्मचारियों का औषधि ढुलान का भुगतान तुरन्त किया जाय ।
6. तीन वर्ष की सेवा पर कर्मचारियों का स्थायीकरण किया जाय ।
7. चतुर्थ वर्गीय कर्मचारियों को शीतकालीन कोयले की धनराशि दी जाय एवं अन्य विभागों की भांति धुलाई भत्ता एवं वर्दी दी जाय ।
8. चतुर्थ वर्गीय कर्मचारियों की मांग है कि समस्त गढ़वाल मण्डल में चतुर्थ वर्गीय पदों पर जनपद के ही अभ्यार्थियों को प्राथमिकता के आधार पर नियुक्ति दी जाय तथा नियुक्ति का अधिकार श्रीमान क्षेत्रीय अधिकारी को दिया जाय ।
9. वरिष्ठता के आधार पर पदोउन्नति की जाय ।

बिहार

आज दिनांक 3/1/04 को स्थानीय राजस्थान भवन, गया में प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन बिहार की जिला शाखा की एक अत्यावश्यक बैठक जिला सम्मेलन के अध्यक्ष वैद्य शिवदयालु मिश्र की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई । इसमें मुख्य अतिथि के रूप में स्वा०रा०वि०आयुर्वेद महाविद्यालय करजरा, गया के सचिव-जगद्गुरु श्री स्वामी राघवाचार्य जी एवं बिहार प्रान्तीय अध्यक्ष वैद्य अलख नारायण सिंह जी भी उपस्थित थे ।

इस बैठक में प्रान्तीय अध्यक्ष वैद्य अलख नारायण सिंह ने भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद् के उपर भारत सरकार के द्वारा न्यूनतम मानकों को जबरन लादने के प्रयास के सारे तथ्यों पर प्रकाश डाला ।

सर्वसम्मति से यह निर्णय लिया गया कि "आयुष विभाग" स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा आयुर्वेद महाविद्यालयों को प्रकारान्तर से बन्द किये जाने के लिये किये जा रहे कुचक्र का विरोध करने का निर्णय लिया गया ।

सर्व सम्मति से यह भी निर्णय लिया गया कि भारत सरकार के अधिकारियों के द्वारा आयुर्वेद महाविद्यालयों के लिए जो मानक तैयार किये गये हैं, वे सर्वथा अनुचित असम्भव एवं अव्यवहारिक हैं, इन मानकों को लागू करने के पीछे आयुर्वेद महाविद्यालयों को बन्द कर दिये जाये की मंशा साफ परिलक्षित होती है जिसका यह समिति घोर विरोध करती है । यह समिति भारत सरकार के स्वास्थ्य परिवार कल्याण मंत्रालय के "आयुष विभाग" से मांग करती है कि पुन: विचार करते हुए आयुर्वेद के हित में इसे निरस्त करें ।

उत्तर प्रदेश

105 वर्षीय वैद्यराज पंडित सूर्यबली मिश्र नहीं रहे

जनपद के ख्यातिलब्ध, ज्योतिष एवं आयुर्वेद के मर्मज्ञ 105 वर्षीय वैद्यराज पंडित सूर्यबली मिश्र नहीं रहे। उनके निधन से आयुर्वेद जगत को अपूरणीय क्षति पहुंची है । उनकी मृत्यु के समाचार से जनपद में शोक की लहर दौड़ गयी ।

उल्लेखनीय है कि वैद्यराज पंडित सूर्यबली मिश्र जनपद के सदर जनपद के सदर तहसील क्षेत्रान्तर्गत ग्राम खजुरिया में सन् 1899 में पैदा हुए थे । उन्होंने प्राथमिक शिक्षा का अध्ययन ग्राम पनेवा-पनेवी में किया । जूनियर हाई स्कूल की शिक्षा उन्होंने महराजगंज से प्राप्त की । संस्कृत एवं व्याकरण की शिक्षा एवं ज्योतिष शास्त्र की पढ़ाई उन्होंने घुघली विकास खण्ड के ग्राम बांसपार-ढेकही में किया था । आयुर्वेदिक शिक्षा श्रीचन्द्र आयुर्वेदिक महाविद्यालय, रतनमाला, पश्चिम चम्पारण, बिहार से अर्जित की थी । श्री धन्वन्तरीय प्रतिष्ठानम्, गोरखपुरम् में उन्होंने 'आयुर्वेद प्रवीण' की मानद उपाधि प्रदान किया था । स्व० श्री मित्र का उद्देश्य था कि "परोपराय इदम् शरीरम्" । इसी उद्देश्य को आत्मसात करते हुए 'सादा जीवन उच्च विचार' के सिद्धान्त पर वे नि:स्वार्थ भाव से आजीवन लोगों की नि:शुल्क सेवा करते रहे ।

जनपद में जब संसाधनों की कमी थी तो उस समय श्री मिश्र असमर्थ रोगियों के घर जाकर उपचार करते थे । श्री मिश्र के इलाज का तरीका ही अलग था । वे नाड़ी से रोगों की जानकारी करते थे । कहना न होगा कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की तीन उंगलियां ही असाध्य रोग की जांच के लिए काफी थीं। कुछ औषधियां वे स्वयं रोगियों को देते थे निकट के जंगलों से मंगाकर सेवन कराते थे। इतना ही उन्हें जड़ी-बूटियों का विलक्षण ज्ञान प्राप्त रहा। श्री साधारण प्रतिभा के धनी व्यक्ति थे। उनकी प्रतिभा सराहना करते गोरखपुर के प्रसिद्ध चिकित्सक डा० लहरी (डा०लहरी) ने कहा था कि 'मुझे नहीं मालूम था इस साधारण सफेद कुर्ता में इतना गुण छिपा है।' सामाजिक कार्यों में भी वे पीछे नहीं रहे। पंचायती राज की स्थापना के समय से ही वे खजुरिया एवं नन्दाभार के सदस्य भी रहे। उन्होंने 24 वर्षों तक प्रधान के रूप में कार्य किया और स्वेच्छा से पदभार त्याग दिया।

श्री मिश्र चिकित्सा के क्षेत्र में निदान, चिकित्सा सूत्र, जड़ी-बूटियों का परिचय एवं गुण उपयोगिता क्षेत्र के अद्वितीय ज्ञाता रहे। उनकी सौ वर्ष की आयु पूरी होने पर श्री धान्यान्तरीय प्रतिष्ठान गोरखपुर एवं मुख्यालय सभी निजी चिकित्सकों की ओर से 9 नवम्बर 2001 को तत्कालीन जिलाधिकारी रामजनम सिंह ने शाल एवं प्रशस्ति पत्र भेंट करके 'आयुर्वेद प्रवीण' की मानद् उपाधि से विभूषित किया था। श्री मिश्र गांधीवादी विचारधारा के प्रबल समर्थक रहे।

उन्होंने अपने दुश्मन को भी रोगमुक्त कर द्वेषभाव को दूर किया था। इतना ही नहीं वे अध्यात्म, ज्योतिष एवं धर्मकाण्ड के भी प्रखर ज्ञाता थे। ज्योतिष एवं दैवीय वैदिक अनुष्ठान जिन भी लोगों ने उनसे कराया वे आज भी उनका यशोगान करते हैं। श्री मिश्र को कुछ दिन पूर्व ही अपने मृत्यु का ज्ञान हो गया था और वे प्राय: यह कहा करते थे कि अब समय कम है। एक सप्ताह पूर्व से ही श्री मिश्र ने अन्न का त्याग कर दिया था।

ग्यारह नवम्बर को उन्होंने अपने पुत्रों से तिल व कुश इत्यादि का प्रबन्ध करने को कहा और यह भी कहा कि आज उनकी अंतिम रात्रि है। फलाहार करने के बाद गंगाजल पीने के बाद 10 बजकर 20 मिनट पर वे चिर निद्रा में हमेशा-हमेशा के लिए सो गये।

श्री मिश्र के 105 वर्ष तक स्वस्थ प्रसन्न जीवन जीने के पीछे उनकी नियमित दिनचर्या व संयमित खान-पान ही था। वे रोटी, दूध व सस्ते उपलब्ध फलों के सहारे जहां संतुष्ट रहते थे वहीं प्रात: चार बजे उठकर टहलना और स्नान-ध्यान के साथ पूजा-पाठ करना उन्होंने अंतिम समय तक नहीं छोड़ा। उनके परिवारजनों ने बताया कि मृत्यु को प्राप्त होने के पूर्व भी उन्होंने अपनी सारी दिनचर्या पूरी की और पराश्रित नहीं रहे।

गुजरात

डायबिटीज एवं पुसंवन संस्कार क्लीनीक का उद्घाटन

(1) गुजरात आयुर्वेद यूनिर्वसिटी, जामनगर इन्स्टीच्यूट ऑफ आयुर्वेदिक फार्मास्युटिकल सायन्स द्वारा संचालित निदान चिकित्सा केन्द्र, पालडी अहमदाबाद में दि. 7/2/2004 के दिन सायं 4.00 बजे आयुर्वेदीय डायबीटिज क्लीनिक एवं आयुर्वेदीय पुंसवन संस्कार क्लीनिक का उद्घाटन गुजरात आयुर्वेद यूनिवर्सिटी के कुलपति श्री पी०एन०वी० कुरूप के कर-कमलों से संपन्न हुआ।

इस समारोह में अतिथि के रूप में सचिव श्री आर. एम.झालगु, डीन, श्री जे.ए. जे.वीश्री एवं गुजरात प्रदेश भाजपा मंत्री श्री वैद्य प्राध्यापक हितेश जानी तथा गुजरात प्रदेश आयुर्वेद सम्मेलन का प्रधानमंत्री, श्री डा०देवेन्द्र शाह, गुजरात आयुर्वेद यूनिवर्सिटी के सेनेट मेम्बर वैद्य गनी मनसुरी, वैद्य हसमुख सोनी, वैद्य बी.डी. नंदुरबारकर (Ex. Director Ayu.Guj.), वैद्य धैवन वारो एवं बड़ी संख्यायों में वैद्य अतिथिगण उपस्थित थे। सभी महानुभावों का स्वागत एवं आभार दर्शन संस्थान के मेडीकल ऑफिसर डा० प्रज्ञा मेहता ने किया।

(2) पारंपरिक आशियाई स्वास्थ्य परिषद्-भारत (JASTAM) की जनरल बोडी मीटींग- नई वर्कीग कमिटि की नियुक्ति हेतु दि०- 04/03/2004 सायं 4.30 बजे एसोशिएशन की रजि० ऑफिस (झंडु) मुंबई में होनेवाली है। डा० नरेन्द्र भट्ट जनरल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेक्रेटरी की विज्ञप्ति अनुसार सभी सदस्यों को विशेष रूप से आमंत्रित किया है ।

सिनेट का चुनाव सम्पन्न

गुजरात आयुर्वेद युनिवर्सिटी के संचालन में प्रेरणास्रोत गुजरात आयुर्वेद यूनिवर्सिटी सेनेट का चुनाव दि०- 23/11/2003 को संपन्न हुआ और दि०- 27/11/2003 के दिन चुनाव का परिणाम घोषित हुआ, उनमें (सात) 7 आयुर्वेद स्नातक चुने गये (1) वैद्य हसमुख सोनी (अहमदाबाद) (2) वैद्य प्रकाश उपाध्याय (भावनगर) (3) वैद्य रविन्द्र अमीन (बड़ोदरा) (4) वैद्य एन०टी०शाह (5) वैद्य के०एल० कारेडीया (जूनागढ़) (6) वैद्य सुखदेव सिंह, वांसिया (सूरन) (7) वैद्य सुधीर जोशी (भावनगर)।

सभी वैद्यों मित्रों को गुजरात प्रदेश आयुर्वेद सम्मेलन द्वारा सम्मानित किया गया ।

आयुर्वेदीय पर्यटन - अन्तर्राष्ट्रीय संभावनाएं - विषय पर सेमिनार सम्पन्न

जर्मन इण्डियन सोसायटि फॉर आयुर्वेद द्वारा आयोजित अहमदाबाद मेनेजमेन्ट ऐशोशिएशन के संकुल में आयुर्वेद टूरिज्म: इन्टरनेशनल पर्सपेक्टीव विषय पर आयोजित सेमिनार का उद्घाटन हेल्थ सेक्रेटरी श्री एस०के०नंदा के कर कमलों से लिया गया, इस समारोह में *Agnaldo–Brazil *Helga Hastman–Spain Vd. Kirit Pandya Dr. Bhaskar Gawai ने अपना विषयोचित्त वक्तव्य दिया ।

समारोह के संयोजक वैद्य प्रेरक शाह ने भली-भांति कार्यक्रम को संभाला । गुजरात आयुर्वेदीय मेडीकल एसोशिएशन, अहमदाबाद ब्रांच द्वारा आयोजित सम्मान समारोह एवं इंडीयन सोरायसिस फाउन्डेशन द्वारा आयोजित C.M.E. प्रोग्राम ।

अहमदाबाद में दि० 17/11/2003 के दिन अपोलो हॉस्पिटल के सभागृह में ऐशोसिएशन द्वारा सम्मान समारोह आयोजित किया गया । समारोह में गुजरात आयुर्वेद यूनिवर्सिटी के चुनाव में चुने गये । वैद्यों का सम्मान समारोह आयोजित किया गया । वैद्य श्री डा० हसमुख जे सोनी, डा० प्रकाश एम० उपाध्याय, डा० रविन्द्रभाई अेम.अमीन, डा०कान्तिलाल एन० कोरडीया एवं अन्य महानुभाव डा० जनकभाई उपाध्याय, डा०मेधावन जानी, वैद्यराज हरिनाथ झा का सम्मान किया गया ।

इस समारोह के उद्घाटक डा० हितेशभाई जानी (प्रदेशमंत्री श्री भाजपा, गुज०), मुख्य मेहमान डा०जीतुभाई पटेल (M.L.A.), अतिथि विशेष डा० अनिलभाई पटेल (काचीनर, डॉक्टरसेल, भाजपा) एवं अतिथिश्री वैद्य एम०एम० बारोट (सीनी०आयु०कन्सलन्ट):- डा०बीपीनभाई वैष्णव (प्रमुख श्री ऑल गुज.आयु.मेडी.एसोशिएसन), डा०हसमुखभाई वैद्य (प्रमुख श्री गुज.आयु.बोर्ड), वैद्य शांतिभाई अग्रवाल (प्रमुख श्री गुज.आयु. विकास मंडल), डा० गनीभाई मनसुरी (प्रमुख श्री गुज. सरकारी आयु. कोलेज अध्यापक मंडल), डा० योगेन्द्र भाई मोदी (प्रमुख श्री अहमदाबाद मेडी.एशोसिएशन), डा० देवेन्द्र के शाह (प्रधानमंत्री गुज०प्रदेश, आयु० सम्मेलन) उपस्थित रहे ।

इन्डियन सोरायसिस फाउन्डेशन के डायरेक्टर वैद्य डा० प्रमोद अंबलकर ने सोरायसिस जैसी भयंकर व्याधि के लिये जनजागृति अभियान शुरू किया है । इसके बारें में विस्तृत जानकारी इस समारोह में दी गई ।

इस समारोह में विशेष रूप से जामनगर से पधारे हुये वैद्य ऐम.अेव.गोहिल (प्रिन्सीपल) गुलाब कुंवरबा आयुर्वेद महाविद्यालय, जामनगर) उपस्थित रहे और मार्मिक वक्तव्य प्रस्तुत किया ।

बैद्यनाथ
कुटजावलेह
खूनी बवासीर में उपयोगी दवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

आसन्न लोक सभा चुनाव एवं वैद्यों का कर्त्तव्य

समय से पूर्व लोकसभा का चुनाव 20 अप्रैल, 2004 से प्रारम्भ हो रहा है । यद्यपि चुनाव 10 मई को समाप्त हो रहा है, किन्तु सम्भावना है कि चुनाव-प्रक्रिया 20 मई, 2004 तक चलेगी । ऐसी आशा है कि आगामी मई, 2004 के अन्तिम सप्ताह तक केन्द्र में एक स्थायी सरकार की नियुक्ति हो जायेगी । हमारा देश एक जनतांत्रिक देश है । जनतंत्र में अपेक्षा की जाती है कि जनता जिम्मेवार एवं कर्त्तव्यनिष्ठ व्यक्ति को अपने प्रतिनिधि के रूप में चुनेगी । आज समाज बुरी तरह जाति, धर्म एवं क्षेत्र में विभाजित है । आज व्यक्ति कितना भी अयोग्य क्यों नहीं हो, वह जाति के नाम पर निर्वाचित हो सकता है । इसके विपरीत योग्य व्यक्ति यदि वह अल्पसंख्यक जाति का है, तो उसका निर्वाचित होना अत्यन्त कठिन है । इसी तरह मतदाता धर्म, क्षेत्र एवं भाषा के नाम पर भी विभाजित हैं । इसके अतिरिक्त बाहुबली भी हैं । बन्दूक एवं पैसे का खेल व्यापक स्तर पर खेला जाता है । चुनाव आयोग के अनुसार आमतौर पर प्रतियोगिता में आने वाले उम्मीदवार कम से कम एक करोड़ रुपये प्रति उम्मीदवार की दर से चुनाव में खर्च करते हैं । ऐसी विपरीत परिस्थिति में एक निर्धन उम्मीदवार, भले ही वह कितना भी योग्य एवं राष्ट्र के प्रति समर्पित क्यों नहीं हो, उसका निर्वाचित होना अत्यन्त कठिन है । जो मतदाता योग्य एवं समर्पित उम्मीदवार को अपने प्रतिनिधि के रूप में निर्वाचित करना चाहते हैं, उनकी अभिलाषा अधूरी रह जाती है । फिर भी हमें हार नहीं माननी चाहिए ।

एक समय था जब अनेक सांसद आयुर्वेद प्रेमी हुआ करते थे । पं० शिव शर्मा, वैद्य धर्मदत्तजी, पं० राम नारायण शर्मा, पं० विश्वनाथ शर्मा जैसे अनेक आयुर्वेदज्ञ थे जो राजनीति में काफी दिलचस्पी रखते थे । पं० शिव शर्मा के प्रयास से तो भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद् अधिनियम भी बना । अनेक आयुर्वेदज्ञ जनप्रतिनिधियों पर अच्छा प्रभाव रखते थे और अपने प्रभाव का उपयोग वे आयुर्वेदहित में करते थे । आज ऐसी स्थिति नहीं है, किन्तु हम आयुर्वेदज्ञों को ऐसा वातावरण बनाना पड़ेगा जिसके दबाव में जन-प्रतिनिधि आवें । हम आयुर्वेदज्ञ भी अपने-अपने क्षेत्र के मतदाता हैं । हमें ऐसे लोगों को अपना मत देना चाहिए जो आयुर्वेद के हित में अपनी आवाज संसद में जोरदार ढंग से रख सकें ।

अत: हम समस्त वैद्यों, आयुर्वेद के प्राध्यापकों, छात्रों, हितैषियों सहित तमाम आयुर्वेद प्रेमियों से अनुरोध करते हैं कि वे अपना कीमती मत उन्हें दें जो आयुर्वेद-हित में कार्य करने का संकल्प ले ।

टी०बी० अभी भी खतरनाक व्याधि

यह मानव जाति का दुर्भाग्य है कि विश्व की एक तिहाई जनसंख्या राजयक्ष्मा जैसी व्याधि से पीड़ित है । व्याधि से मरने वालों में अभी भी टी०बी० रोगी सर्वाधिक हैं । सरकार दावा करती है कि टी०बी० पूर्णत: साध्य बीमारी है । इस व्याधि पर औषधियों से नियंत्रण पाया जा सकता है । हां, हम कुछ हद तक सहमत हो सकते हैं कि आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में औषधियों की खोज के सिलसिले में क्रान्ति आयी है । इंजेक्शन से लेकर आग औषधियों तक की खोज हुयी । ऐसा लगा कि यह बीमारी पूर्णत: मनुष्य के अंकुश में है, फिर क्या कारण है कि अभी तक यह व्याधि सर्वाधिक विनाशकारी व्याधि प्रमाणित हुयी है । विगत दिनों विश्व स्वास्थ्य संगठन का एक प्रतिवेदन जनता के समक्ष आया है । प्रतिवेदन में कहा गया है कि अनेक नवीन औषधियां प्रतिरोधी साबित हो रही हैं । जब औषधि ही कारगर नहीं होगी, तो व्याधि दूर कैसे होगी । यह समस्या सम्पूर्ण विश्व के चिकित्सा विज्ञानियों को चिन्तित कर रही है । विज्ञानियों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पास इसका निदान नहीं है । यदि वे निदान का विकल्प भी खोजें, तो एक नयी औषधि की खोज कर लेंगे । यह औषधि भी कुछ दिनों तक प्रभावी रहेगी, किन्तु बाद में निष्प्रभावी हो जायेगी । समस्या पूर्ववत् रहेगी । फिर उपाय क्या है ? हमारी दृष्टि में निम्न उपाय हो सकते हैं :-

जीवन-शैली में संयम का पालन करना :- दुर्भाग्य है कि हमारे देश में हर अच्छी चीज को जाति के चश्मे से देखते हैं । यदि हम परहेजवश किसी का जूठा भोजन नहीं खाते हैं, तो लोग यह शिकायत कर सकते हैं कि फलां आदमी ऊंची जाति का है, इसलिए जूठन नहीं खा रहा है । यह एकदम असत्य है एवं व्यावहारिक भी नहीं है । प्राचीन काल में भी जूठन नहीं खाने का रिवाज था, वह सम्भवतः प्रारम्भिक अवस्था में स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से होगा, न कि ऊँच-नीच लेकर । समय के साथ इसमें परिवर्त्तन होता गया और स्वास्थ्य सम्बन्धी अवधारणा ने जातिगत स्थान ले लिया ।

आज भी हम बाजार में, घर में, दोस्तों के यहां एवं सम्बन्धियों के यहां जूठन नहीं खाने सम्बन्धी मूल नियम का पालन करें, तो निश्चित रूप से बहुत हद तक संक्रमण सम्बन्धी व्याधियों पर काबू पाया जा सकता है । विदित है कि टी०बी० संक्रमण सम्बन्धी व्याधि है ।

निर्धनता पर विजय :- यह एक ऐसा प्रश्न है जिसका उत्तर देना आसान नहीं है । निर्धनता पर विजय प्राप्त करना आम आदमियों के वश में भी नहीं है । इस पर विजय केवल सरकार अपनी आर्थिक नीतियों के बूते कर सकती है । विदित है कि निर्धनता एवं व्याधि का घनिष्ठ सम्बन्ध है । अनेक व्याधियों का जन्म कुपोषण से होता हैं । आम तौर पर कुपोषण तभी होता है, जब हमारे पास पौष्टिक भोजन का इन्तजाम करने के लिए पैसे नहीं हों । फल, सब्जी, दूध, अनाज आदि वस्तुओं को क्रय करने के लिए पैसे चाहिए । आम आदमियों की आमदनी इतनी कम होती है कि वे पर्याप्त मात्रा में इच्छित वस्तु क्रय नहीं कर पाते हैं । परिणामतः वे कुपोषण का शिकार होते हैं एवं उनमें कुपोषणजन्य व्याधियों का प्रार्दुभाव स्वाभाविक है । जहां तक राजयक्ष्मा का प्रश्न है, शब्द से ही ज्ञात होता है कि यह राज बीमारी है । अर्थात् जिस व्यक्ति को इस व्याधि ने दबोच लिया है, उसकी चिकित्सा एवं पथ्य का सेवन राजा की तरह होना चाहिए । आशय यह है कि रोगी को विश्राम एवं औषधि के साथ-साथ पौष्टिक भोजन भी चाहिए । बहुमत जनसंख्या की आमदनी इतनी कम है कि वह लम्बे समय तक औषधि खरीद नहीं सकती है । देखा गया है कि जब टी०बी० उग्ररूप से मनुष्य को ग्रसित कर लेती है, तो वह चिकित्सक के पास जाता है और कुछ दिनों तक औषधियों का भी सेवन करता है । जैसे ही व्याधि की तीव्रता कम हो जाती है, वैसे ही सम्बन्धित व्यक्ति औषधि के साथ-साथ विश्राम एवं पौष्टिक भोजन का प्रयोग भी कम कर देता है जबकि इस व्याधि में दीर्घकाल तक औषधि, विश्राम एवं पौष्टिक भोजन का प्रयोग होना चाहिए ।

प्रदूषण एवं जीवन-शैली :- इस व्याधि के प्रचार-प्रसार में प्रदूषण काफी हद तक जिम्मेवार हैं । प्रदूषण के चलते श्वास के माध्यम से अनेक प्रदूषित चीजों का आगमन शरीर में हो जाता है । फलतः इस आगमन का असर कास पर पड़ता है । मनुष्य या तो शीघ्र ही व्याधि से संक्रमित हो जाता है अथवा यदि व्याधि पहले से मौजूद है, तो ठीक नहीं हो पाती । यही स्थिति जीवन-शैली की भी है । आयुर्वेद में आहार-विहार का काफी महत्व है । यदि आहार-विहार आयुर्वेद के सिद्धान्तों के अनुसार हो, तो व्याधि का संक्रमण भी कम हो जायेगा ।

इस तरह कारण अनेक हैं । चिकित्सा-विज्ञानी नये-नये कारणों को खोजें एवं विश्व को इस खतरनाक बीमारी से मुक्त करावें । हमारी सरकार से भी आग्रह है कि वे चिकित्सा-समुदाय को पूर सहायता प्रदान करे ताकि वे इस व्याधि पर अंकुश प्राप्त कर सके ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारावाहिक

आयुर्वेद का इतिहास–54

[1]पं० बनवारी लाल शर्मा
[2]विमल चन्द्र झा

जमदग्नि

वैदिक कोश[1] में जमदग्नि का अर्थ है – प्रयमिताग्नि, प्रज्वलिताग्नि, प्रभूताग्नि (जिसे बहतु आगे हो) । यमदग्नि से जमदग्नि शब्द बना है और जमदग्नि का अपत्य जमदग्न्य (परशुराम) के लिए आया है । जम धातु गत्यर्थक है । जमदग्नि ऋषि के सम्बन्ध में बताया गया है– (1) सबका द्रष्टा सूर्य (2) जमदग्नि नामक ऋषि । जमदग्निर्ऋषिः । वाज०सं० 13.56, मै०सं० 2.7.19, 104.8, का०सं० 16.19. श. ब्रा० 8.1.2.3 । एक अन्य वैदिक कोश[2] में जमदग्नि का आशय है – जमद्-अग्नि–ऋग्वेद के एक देवशास्त्रीय ऋषि जमदग्नि हैं, जहां वे अनेक बार आये हैं। ऋग्वेद, 3.62.18; 8.101.8; 9.62.24; 9.65.25 में तो उनका नाम इस प्रकार आया है मानो वे सूक्त के रचयिता हों । इसी प्रकार एक बार उनका उल्लेख विश्वामित्र के साथ आया है; ऋ० 10.167.4; ऋग्वेद 7.96.3; 9.97.51 में उनका उल्लेख मात्र हुआ है । एक बार जमदग्नियों = जमदग्नि के वंशजों का उल्लेख है; ऋ० 3.53.15; 16 । अर्थ. में (2.32.3; 5.28.7; 6.137.1; 18.3.15.16); याजुष संहिताओं में = तै.सं. 2.2.12.4; 3.1.7.3; 3.3.5.2; 5.2.10.5; 5.4.11.3; मै. सं. 2.7.19; 4.2.9; का सं. 16.19; 20.9; वा सं. 3.62; 13.56 एवं ब्राह्मण आदि में = पं० बिब्रा 9.4.14; 13.5.15; 21.10.5.7; 22.7.2; ऐब्रा 7.16; शब्रा. 13.2.24; तैआ, 1.9.7; बृह. 2.2.4; जैउब्रा, 3.3.11; 4.3.1 उनका नाम आया है । यहां वे विश्वामित्र (तैसं; 3.1.7.3; 5.4.11.3; पं विब्रा, 13.5.15) के मित्र और वसिष्ठ (तैसं. उपर्युक्त) के विरोधी के रूप में उभरे हैं । वे अपनी संपत्ति का आधार चतूरात्र यज्ञ को बताते थे; और उनके वंश लोग भी उसी से सफल हुए थे; पंविब्रा 7.16 । अवे. 2.32.3; 6.137 । में उनका अत्रि कण्व, असित और वीतहव्य से सम्बन्ध है । वे पुनः शेप के यज्ञ में पुरोहित थे; ऐब्रा, 7.16. । तु० चक्षुर्वै जमदग्नि ऋषि र्यदेनेन जगत पश्यत्यथो मनुते तस्माच्चक्षुर्ज मदग्नि; शब्रा. 8.1.2.3 ।

प्राचीन संस्कृत साहित्य[3] के अनुसार राम के पिता का नाम जमदग्नि था । संभवतः वे परशुराम के वंशज थे । कविराज सूरमचन्द्रजी[4] का भी लगभग यही दृष्टिकोण है । उन्होंने निम्न वंशक्रम दिया है –

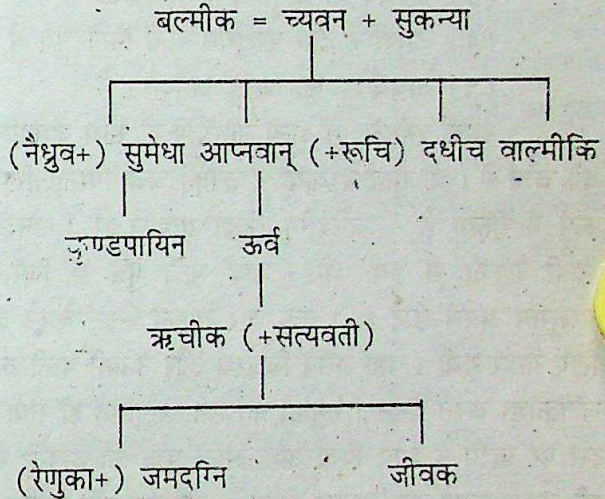

इससे ज्ञात होता है कि च्यवन–प्रपौत्र तथा ऋचीक का पुत्र जमदग्नि था । जमदग्नि और उसका भ्राता जीवक दोनों आयुर्वेद के पंडित थे । दिलचस्प बात यह है कि न तो अनेक ऐतिहासिक पुस्तकों में जमदग्नि को राम के पिता के रूप में बताया गया है और न आयुर्वेदिक ग्रन्थों में जीवक के भ्राता के रूप में ।

जहां तक जमदग्नि के काल का प्रश्न है, वे त्रेता के आरम्भ में हुए थे । वह द्वापर के आरम्भ में हिमालय पर होने वाले ऋषि–सम्मेलन में उपस्थित थे । यहां भी विरोधाभास है । कविराजजी का कहना है कि जमदग्नि द्वापर के आरम्भ में होने वाले ऋषि सम्मेलन में उपस्थित थे । उन्होंने अपने प्रमाण के समर्थन से चरक संहिता का उदाहरण दिया है । एक जगह वे जमदग्नि का काल त्रेता लिखते हैं, तो दूसरी जगह द्वापर के आरम्भ का उल्लेख करते हैं । इस विरोधाभास से ज्ञात होता है कि वे स्वंय

1. प्रबन्ध निदेशक, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि०, 2 सम्पादक, सचित्र आयुर्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भ्रमित हैं । जमदग्नि माहेयों के पुरोहित थे । जैमिनीय ब्राह्मण 1/152 में सन्दर्भ है -

जमदग्निर्ह वै माहेयानां पुरोहित आस ।

इसके अतिरिक्त संक्षेप में कविराजजी ने निम्न वर्णन किया है -

(1) ब्रह्माण्ड पुराण में जमदग्नि के हैहय-राज द्वारा मारे जाने का उल्लेख है ।

(2) जमदग्नि आयुर्वेद का कर्त्ता एवं सर्वलोक चिकित्सक था ।

(3) ऋग्वेद के अनुसार वे मन्त्रद्रष्टा थे ।

(4) जमदग्नि तथा परशुराम दोनों पिता-पुत्र थे ।

(5) अथर्ववेद का ऋषि जमदग्नि है ।

चरक संहिता[5] में अन्य महर्षियों के साथ जमदग्नि की चर्चा है । श्री मुखोपाध्याय[6] ने उनकी चर्चा निम्नलिखित रूप में किया है - जमदग्नि योद्धा ब्राह्मण थे । उनकी शादी रेणुका से हुयी थी । उन्हें पांच पुत्र थे जिसमें परशुराम सबसे छोटे थे । एक ब्रार रेणुका स्नान करने के लिए बाहर गयी । वहां उसने चित्ररथ और उनकी पत्नी को जलक्रीड़ा करते देखा । रेणुका का मन कलुषित हो गया । इस पर ऋषि ने शाप दिया और अपने पुत्रों को अपनी मां की हत्या करने का आदेश दिया । परशुराम को छोड़कर सभी पुत्रों ने इंकार कर दिया । केवल परशुराम ने अपने पिता के आदेश का पालन किया । हत्या करने के पश्चात् परशुराम को वरदान मांगने के लिए कहा गया । परशुराम ने वर के रूप में अपनी मां का जीवन एवं अपने भाइयों की मेधा देने का निवेदन किया । ऋषि ने ऐसा ही वर दिया । एक दूसरी घटना में हैहय राजा कार्स्तवीर्य ऋषि के आश्रम आये । उन्होंने बलपूर्वक सुरभि नामक गाय का अपहरण किया । परशुराम ने पीछा करके कार्त्तवीर्य की हत्या कर दी । प्रतिशोध में कार्त्तवीर्य के पुत्र ने जमदग्नि की हत्या कर दी । इस पर परशुराम ने इस संसार के क्षत्रियों को नाश करने का प्रण लिया । पौराणिक कहानी के अनुसार उन्होंने इक्कीस बार क्षत्रिय को पराजित किया ।

इन दोनों घटनाओं से जमदग्नि के आयुर्वेदज्ञ होने का प्रमाण नहीं मिलता है । केवल चरक संहिता में दिये गये व.न के अनुसार जमदग्नि का आयुर्वेदज्ञ होने का बोध होता है ।

गौतम

धर्म सूत्र के रूप में गौतम का धर्मसूत्र काफी पुराना माना जाता है । इसे विशेषत: सामदेव के अनुयायी पढ़ते थे । सामवेद के लाट्यायन श्रौत सूत्र (1.3.3. तथा 1.4.17) तथा द्राह्यायण श्रौतसूत्र (1.4.17; 9.3.15) में गौतम नामक आचार्य का वर्णन आया है । धर्मशास्त्र का इतिहास[9] के अनुसार गौतम एक जातिगत नाम है । कठोपनिषद् में नचिकेता (2.4.15; 2.5.6) एवं उसके पिता (1.1.10) दोनों के गौतम के नाम से पुकारे गये हैं । गौतम के विषय में सबसे प्राचीन संकेत बौधायन धर्मसूत्र में मिलता है । उत्तर या दक्षिण में किसी नियम की मान्यता के विषय में चर्चा करते हुए बौधायन ने गौतम का हवाला दिया है और कहा है कि नियम सबके लिए, चाहे वह उत्तर का हो या दक्षिणक बराबर है (गौ.ध.सू. 11.20)।

वैदिक कोश[7] में गौतम का आशय है - ऋग्वेद ऋ. 1.62.13; 1.78.2; 1.84.5; 1.85.11; 4.4.11 में गौतम नाम आया है, किन्तु कहीं भी उनके सूक्त - रचयिता होने की बात नहीं आयी है । यह स्पष्ट है कि वे आङ्गिरसों से सम्बद्ध थे: ऋ. 1.62.1; 1.71.2; 1.74.5; 1.75.2; 1.78.3; 4.2.5; 4.16.8 आदि । ऋग्वेद 1.78.5 से संकेत मिलता है कि राहूगण उनका पैतृक नाम था । शब्रा 1.4.1.10; 11.4.3.20 से इसका समर्थन होता है जहां उन्हें वैदिक संस्कृति को बढ़ाने वाला एवं माधव विदेघ का पुरोहित बताया गया है । उसी ब्राह्मण 11.4.3.20 में उन्हें विदेह के जनक एवं याज्ञवल्क्य का समकालीन कहा गया है । उन्हें एक स्तोम का रचयिता भी कहा गया है । शब्रा 13.5.1.1; आश्रौसू. 9.5.6; 9.10.8 आदि । अथ के दो स्थलों पर भी उनका उल्लेख है; 4.29.6; 18.3. 16; प्र० पंविब्रा, इस्तू. 1.38; बृउ 2.2.6 । गोतमों का उल्लेख ऋग्वेद के कई स्थलों पर है; 1.60.5; 1.61.16; 1.63.9; 1.77.5; 1.78.1; 1.88.4; 1.92.7; 4.32.9; 12; 8.88.4; तु आश्रौसू. 12.10 । वामदेव और नोधस इनमें प्रमुख माने गये हैं । वाजश्रवस् लोग भी उन्हीं में हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गौतम । तु०- लुड् विग, डा० 3.110.123; वैदिक शब्दकोश में गौतम का आशय है - (1) वेदवेत्ता ब्राह्मण - (2) गौतम ऋषि । (3) उत्तम किरण 'अकारि त ब्रह्म गोतमेभिः' - ऋ० 1.63.9

हिन्दी विश्वकोश[9] में गौतम के सम्बन्ध में विशद चर्चा है । इस कोश में वर्णन है कि गौतम संस्कृत साहित्य में गौतम का नाम अनेक विधाओं से संबंधित है । वास्तव में गौतम ऋषि के गोत्र में उत्पन्न किसी व्यक्ति को गौतम कहा जा सकता है । अतः यह व्यक्ति का नाम न होकर गोत्रनाम है । वेदों में गौतम मंत्रद्रष्टा ऋषि माने गये हैं । एक से मेघातिथि गौतम धर्मशास्त्र के आचार्य हो गये हैं । बुद्ध को भी गौतम अथवा (पाली में गोतम) कहा गया है । न्यायसूत्रों के रचयिता भी गौतम माने जाते हैं । उपनिषदों में भी गौतम नामधारी अनेक व्यक्तियों का उल्लेख मिलता है । पुराणों महाभारत तथा रामायण में भी गौतम की चर्चा है । यह कठिन है कि ये सभी गौतम एक थे हैं । रामायण में ऋषि गौतम तथा उनकी पत्नी अहल्या की कथा मिलती है । अहल्या के शाप का उद्धार राम ने मिथिला के रास्ते में किया था । अतः गौतम का निवास मिथिला में ही होना चाहिए और यह बात मिथिला में 'गौतम स्थान' तथा 'अहल्या स्थान' नाम से प्रसिद्ध स्थानों से भी पुष्टि होती है । चूंकि न्यायशास्त्र के लिए मिथिला विख्यात् रही है, अतः गौतम (नैयायिक) का मैथिल होना इसका मुख्य कारण हो सकता है । नैयायिक गौतम के बारे में अनेक विद्वानों ने लिखा है । महामहोपाध्याय पं० हर प्रसाद शास्त्री का कहना है कि चीनी भाषा में निबद्ध प्राचीन ग्रन्थों के अनुवाद के आधार पर गौतम, बुद्ध के पहले हो गये थे, परन्तु उनके नाम पर प्रचलित न्यायसूत्र ईसा की दूसरी शताब्दी की रचना है । पूरे कोश में गौतम का सम्बन्ध न्यायसूत्र से जोड़ा गया है । विदित है कि आयुर्वेद पर न्याय-दर्शन का भी गहरा प्रभाव है । विदित है कि प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टांत, सिद्धान्त, अवयव, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितंडा, हेत्वाभास, छल जाति और निग्रहस्थान इन 16 विषयों के तत्वज्ञान से निःश्रेयस की प्राप्ति न्यायशास्त्र में मानी गयी है । प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और शब्द इन चार प्रमाणों से ज्ञान उत्पन्न होता है । वैशेषिक दर्शन में स्वीकृत सात पदार्थों का प्रमेय में अन्तर्भाव हो जाता है । इसलिए परवर्ती नैयायिकों ने न्याय को वैशेषिक के साथ संबद्ध कर दिया है ।

पौराणिक कोश[10] में निम्न वर्णन है -

गौतम ऋषि के पुत्र शतानन्द ऋषि का नाम । रामायण, महाभारत और पुराणानुसार एक प्रसिद्ध ऋषि का नाम । इनके पिता ने अपनी पत्नी अहल्या को इन्द्र के साथ अनुचित सम्बन्ध करने के कारण शाप देकर पत्थर बना दिया था । इसका उद्धार श्री रामचन्द्र ने जनकपुर जाते समय विश्वामित्र के आदेशानुसार किया था (भाग० 9.21. 34; ब्रह्मां 2.27.23) । (2) एक ऋषि जो न्यायशास्त्र के आचार्य और प्रणेता थे (न्याय दर्शन = गौतम महामुनि प्रणीत) । (3) कृपाचार्य का नाम जो द्रोणाचार्य के साये थे (भाग० 10.49.2; 74.7, 84.3;)। (4) नासिक के पास का एक पर्वत जहां से गोदावरी का उद्गम हुआ है (भाग० 5.19.18; ब्रह्मां 1.12.15; 2.16.34, 45; वायु० 45.104,112; विष्णु० 2.3.12) । (5) स्मृति के रचयिता एक ऋषि (गौतमधर्मसूत्र - हरदत्त प्रणीत वृत्ति सहित) । (6) एक ऋषि, जो शरशय्या पर पड़े भीष्म से मिलने आये थे तथा प्रायोप वेश करते परीक्षित से भी भेंट की थी (भाग० 1.9.7; 10.9; 18.10) । (7) वैवस्वत युग के एक ऋषि जो अम्बरीष के अश्वमेध यज्ञ में थे (भाग० 8. 13.15; 9.4.22; मत्स्य० 9.27)। (8) तपस (माघमास) (वायु और ब्रह्मां के अनुसार शरद् ऋतु में) में अन्य गणों के साथ सूर्यरथ पर अधिकृत एक ऋषि (भाग० 12.11. 39; ब्रह्मां० 2.23.12; वायु० 52.12; 61.45) । (9) उतथ्य के पुत्र जिन्हें शरद्वान् भी कहते हैं, ये कृत के शिष्य थे (ब्रह्मां 2.35.52; 38.28) । (10) बीसवें द्वापर के वेदव्यास (ब्रह्मां 2.35.121; विष्णु० 1.9.21; 3.1.32; 3. 16) । (11) परशुराम के यज्ञ में ये उद्गाता के रूप में वृत हो उपस्थित थे (ब्रह्मां 3.36.5; 47.48) । निमि द्वारा बसाये हुए जयन्त नगर के निकट इनका आश्रम था (ब्रह्मां० 3.64.2; वायु० 59.2) । (12) चौदहवें द्वापर के विष्णु के अवतार, जो अंगिरस परिवार के थे तथा जिनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चार पुत्र थे, का नाम (वायुं० 23.152) । (13) उशिज का पुत्र जो दीर्घतपा का भाई था (मत्स्य० 48.53; 126. 13; 133.67) । (14) ब्रह्मा के एक मानस पुत्र (मत्स्य० 171.27, 192.11) । (15) अङ्गिरा और सुरूपा (वायु० स्वरति) के दस पुत्रों में से एक पुत्र जो आंगिरस देव और गोत्रकार थे (मत्स्य० 196.45; वायु० 64.26; 65.97, 100) । (16) ये अन्य गणों के साथ आश्विन मास में सूर्य के रथ पर रहते हैं (विष्णु० 2.10.11)। (17) निमि के यज्ञ का एक होता (विष्णु 4.5.6) । (18) कक्षीवान् के पुत्रों का सामूहिक नाम (मत्स्य० 48.88) ।

संस्कृत साहित्य का इतिहास[11] में न्याय-दर्शन के सिलसिले में गौतम की चर्चा है । सम्भवत: ये गौतम तृतीय शतक ई०पू० थे ।

भारत का सांस्कृतिक विरासत[12] में गौतम के विषय में निम्न चर्चा है -

(1) गौतम और बादरायण पारिवारिक उपाधि है ।

(2) अक्षपाद और गौतम संभवत: दोनों एक हैं ।

(3) गौतम ने निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए पांच चरण बताया है ।

प्रस्तुत पुस्तक में गौतम के आयुर्वेदज्ञ होने का प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं मिलता है । हां, चरक संहिता के न्याय-दर्शन को आधार बनाया जाय, तो निश्चय ही गौतम का सम्बन्ध आयुर्वेद से हो सकता है ।

दिलचस्प बात है कि विद्वान लेखक[13] ने पृष्ठ सं० 126 में जिन विद्वानों की सूची दी है, उनमें से अधिकांश आयुर्वेदज्ञ हैं । जैसे - अग्निवेश, वात्स्य, आत्रेय, काश्यप, गार्ग्य, गालव, शौनक, हारीत आदि । विदित है कि पुस्तक में जो सूची दी गयी है, वह विशेषकर आयुर्वेदज्ञों के सम्बन्ध में नहीं है । इसी पुस्तक में पृ०सं० 345 में गौतम को गोत्र के रूप में दिखलाया गया है । इसी तरह शतपथ ब्राह्मण में शिक्षकों की जो चर्चा की गयी है, उनमें से गौतम भी थे । डा० ज्योतिर्मित्र[14] ने अपनी पुस्तक में गौतम धर्मसूत्र में वर्णित मानव स्वास्थ्य से सम्बन्धित कुछ बातों की चर्चा की है । उदाहरण के लिए उन्होंने खाद्य पदार्थ, पेय पदार्थ, सदाचार, रोग आदि विषयों की चर्चा की है । संक्षेप में डा० ज्योतिर्मित्र ने अपनी पुस्तक[15] में गौतम के सम्बन्ध में निम्न चर्चा की है -

1. वाद विधा और प्रामाण्यवाद इन विषयों का चरक ने एक अध्याय के रूप में स्वतंत्र रूप से विशद विवेचन किया है । इस न्यायदर्शन के प्रवर्तक अक्षपाद गौतम हैं, किन्तु म.म. डा० सतीश चन्द्र विद्याभूषण का कथन है कि मेघातिथि गौतम इसके प्रवर्त्तक हैं और अक्षपाद इससे भिन्न व्यक्ति हैं ।
2. डा० विद्याभूषण ने जो न्याय कुसुमांजलि, नैषधचरित और न्यायसूत्रवृत्ति में गौतम को आन्वीक्षिकी सिद्धान्त के संस्थापक के रूप में निर्देश किया है, वह ग्राह्य मान्य नहीं क्योंकि ये सभी ग्रन्थ दशम शताब्दी के पूर्व के नहीं हैं । पद्मपुराण, स्कन्दपुराण और गन्धर्वतंत्र में भी यद्यपि गौतम का नाम आता है, पर इनमें कोई प्राचीन कृति नहीं मानी जाती ।
3. गौतम का नाम ऋग्वेद (1/62/78/85; 4/4), शतपथ ब्राह्मण (1/4/10; 3/3/4/ 19 आदि), तैत्तिरीय प्रातिशाख्य (1/5) एवं आश्वालयन श्रौतसूत्र (1/3, 2/6) जैसे प्राचीन ग्रन्थों में दृष्टिगोचर होता है, किन्तु कहीं भी उन्हें न्यायसूत्र का कर्त्ता नहीं कहा गया है । महाभारत में अनेक स्थलों पर गौतम का अभिधान है, किन्तु उपर्युक्त कथन कहीं भी संगत नहीं होता और न ही महाभारत से यह भी पता लगता है कि मेघा तिथि और गौतम एक व्यक्ति थे ।
4. वास्तव में गौतम गोत्रवाची है ऐसा कहा जा सकता है कि गौतम गोत्र का मेघातिथि एक उच्च मननशील व्यक्ति थे और यह कथन विद्याभूषण द्वारा भास के प्रतिमा नाटक में उल्लिखित मेघातिथि के लिए ठीक बैठ सकती है । अत: विद्याभूषण के मेघातिथि गौतम न्यायशास्त्र के कर्त्ता थे - यह विचार धराशायी हो जाता है ।
5. चरक ने 44 वादमार्गों का उल्लेख किया है, गौतम के न्यायसूत्र में 16 पदार्थों का वर्णन है, उनमें से बहुतों का साम्य इन चरकीय वादपदों के साथ देखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जा सकता है ।

यह सम्भव है कि गौतम के न्यायसूत्र में वर्णित 16 पदार्थों का समावेश 44 वाद मार्गों में हो गया हो । यदि इस तर्क को माना जाय तो निश्चय ही गौतम चरक के पूर्व रहे होंगे, क्योंकि किसी भी तर्क या सिद्धान्त का समावेश तभी होता है जब वे पहले से मौजूद हों ।

6. यदि न्यायदर्शन के निर्माण के पूर्व आयुर्वेद न होता तो महर्षि गौतम अपने सूत्र की रचना में किस आयुर्वेद का उल्लेख करते ।

चरक संहिता[16] में कई स्थलों पर गौतम की चर्चा है। इस ग्रन्थ के सूत्रस्थान में गौतम की चर्चा उन महर्षियों के साथ है जो हिमालय पर्वत के समीप एकत्रित हुए थे । चरक संहिता के सिद्धिस्थान[17] में विभिन्न ऋषिगणों द्वारा व्यक्त मतों की चर्चा है । गौतम[18] मानते थे कि धामार्गव श्रेष्ठ होता है । माधव निदान[19] में भी श्लेष्मा एवं उसके कर्म के सम्बन्ध में गौतम की चर्चा है । हिमाद्रि[20] की लक्षण प्रकाश नामक पुस्तक में भी गौतम की चर्चा है ।

वैदिक वाङ्मय का इतिहास[21] में गौतम के सम्बन्ध में निम्न तथ्य निरूपित होते हैं :-

1. उद्यालक (अरुण का पुत्र) गौतम कुल का था ।
2. महर्षि गौतम एक साधारण ग्रन्थकार नहीं, प्रत्युत ऋषि हैं । वह महाभारत काल अथवा उससे भी बहुत पहले के हैं । वे कहते हैं - स्तुतिर्निन्दां पर कृतिः पुराकल्प-इत्यर्थवादः ।

- 2/1/64

पुराकल्प शब्द पर भाष्कार वात्स्यायन लिखते हैं- ऐतिह्यसमाचरितो विधिः पुराकल्प इति । तस्माद्वा एतेन पुरा ब्राह्मणा बहिष्पवमानं सामस्तोममस्तौषन् । यज्ञं प्रतनवामह इत्यादि ।

(ताण्ड्य ब्रा० 8/6/4)

आशय यह है कि ईसा से सैकड़ों वर्ष पूर्व वात्स्यायन हो चुके हैं । गौतम सूत्र पर उन्होंने भाष्य लिखा है । इस आधार पर गौतम निश्चय ही वात्स्यायन से पूर्व हो चुके थे । इसके विपरीत पाश्चात्य लेखक गौतम सूत्र को ई.पू. की प्रथम शताब्दी के समीप मानते हैं ।

श्री दासगुप्ता[22] ने गौतम के सम्बन्ध में निम्न प्रकाश डाला है -

1. कथा उपनिषद के आधार पर गौतम के पुत्र का नाम नचिकेता था ।
2. गौतम अर्थात् अक्षपाद से सम्बन्धित न्याय-दर्शन के अधिकांश-सूत्र हैं ।
3. इन सूत्रों पर सर्वाधिक प्राचीन भाष्य वात्स्यायन ने लिखा था ।
4. वे गौतम बुद्ध भी कहलाते थे जिनका जन्म ई०पू० 500 हुआ था ।
5. डा०ए०सी० विद्याभूषण का मानना है कि न्याय का पूर्ववर्त्ती भाग 550 ई०पू० लिखा गया था जबकि अक्षपाद का न्यायसूत्र 150 ई० में लिखा गया था डा० दासगुप्ता उनकी इस मान्यता से सहमत नहीं हैं ।
6. चरक की 'हेतु' पर परिभाषा का सम्बन्ध गौतम से अलग नहीं है ।
7. डा० विद्याभूषण का मेघातिथि गौतम एक मिथक व्यक्तित्व के स्वामी हैं । इसका कोई प्रमाण नहीं कि उन्होंने कभी लिखा । यह भी प्रमाण नहीं कि चरक संहिता में वर्णित न्याय सिद्धान्त अप्राप्त अग्निवेश तंत्र में था ।
8. गौतम प्राचीन नाम है । वे ऋग्वेद में वर्णित ऋषियों में से थे । उनका वर्णन शतपथ-ब्राह्मण, तैत्तिरीय प्रतिशयाय और आश्वलायन श्रौत-सूत्र में पाया जाता है, किन्तु कहीं भी न्याय-शास्त्र के रचयिता के रूप में उनका वर्णन नहीं है । इसी तरह उनका ज़िक्र महाभारत में भी आया है, किन्तु कहीं भी न्याय-शास्त्र के प्रणेता के रूप में उनका नाम नहीं आया है । गौतम गोत्र है ।

उपर्युक्त सभी तथ्यों पर विचारोपरान्त निम्न निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं -

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

1. यदि दासगुप्ता की बात सत्य मान ली जाय कि गौतम न्यायशास्त्र के प्रणेता नहीं थे, इसके बावजूद उस तथ्य के स्पष्ट प्रमाण हैं कि न्याय-शास्त्र अर्थात् न्याय-दर्शन से गौतम का सम्बन्ध था ।
2. चरक संहिता में न्याय-दर्शन के प्रभाव से यही स्वीकार किया जा सकता है कि गौतम का प्रभाव चरक संहिता पर है ।
3. चरक संहिता के आधार पर यह कहा जा सकता है कि गौतम एक आयुर्वेदज्ञ थे एवं इनका काल निश्चित रूप से चरक-संहिता के निर्माण के पूर्व था ।
4. चरक संहिता के अतिरिक्त अन्य आयुर्वेदिक ग्रन्थों में गौतम के छिट-पुट जिक्र से उनके आयुर्वेदज्ञ होने का स्पष्ट प्रमाण मिलता है ।
5. आयुर्वेद का घनिष्ठ सम्बन्ध दर्शन-शास्त्र से है । इस आधार पर भी गौतम के आयुर्वेदज्ञ होने का परिचय मिलता है ।

(निरन्तर जारी)

सन्दर्भ

1. वैदिक कोश - पं० चन्द्र शेखर उपाध्याय एवं अनिल कुमार उपाध्याय - नाग प्रकाशक, दिल्ली ।
2. वैदिक कोश - सूर्यकान्त ।
3. A history of ancient Sanskrit Literature - F. Max Muller - The chowkhamba Sanskrit Series office, Varanasi.
4. आयुर्वेद का इतिहास, प्रथम भाग - कवि० सूरमचन्द्र, नयी दिल्ली ।
5. अङ्गिरा जमदग्नि वशिष्ठः काश्यपो भृगुः । च०सू० 1/8
6. धर्मशास्त्र का इतिहास - डा० पाण्डुरङ्ग वामन काणे - हिन्दी समिति, सूचना विभाग, लखनऊ ।
7. देखें क्र०सं० 2 ।
8. देखें क्र० सं० ।
9. हिन्दी विश्वकोश, खण्ड-4, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी ।
10. पौराणिक कोश - ज्ञानमंडल लि०, वाराणसी ।
11. संस्कृत साहित्य का इतिहास - आचार्य श्री बलदेव उपाध्याय - शारदा मन्दिर, वाराणसी ।
12. The cultural Heritage of India - The Ramakrishna Mission, Institute of Culture - Calcutta.
13. देखें क्र० सं० 3 ।
14. History of Indian Medicine from Pre Mauryan to Kusana Period - Jyotirmitra - The Jyotiralok Prakashan, Varanasi - 1
15. चरक एवं सुश्रुत के दार्शनिक विषय का अध्ययन - डा० ज्योतिर्मित्र आचार्य - श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा०लि०, पटना ।
16. आत्रेयो गौतमः सांख्यः पुलस्त्यो नारदोऽसितः । च०सू० 1/8
17. कटुतुम्बममन्यतोत्तमं वमने दोष समीरणं च तत् । तदवृष्यमशैत्यतीक्ष्णताकटुरौचयादिति गौतमोऽब्रवीत् ॥ च०सि० 11/6
18. कफपित्तनिवर्हणं परं स च धामार्गवमित्यमन्यत । तदमन्यत वातलं पुनर्बडिशो ग्लानि करं बलापहम् । च०सि० 11/7
19. यदाह गौतमः - श्लेष्मा पञ्चविधोरस्थः श्लेष्मकादि स्वकर्मणा.....सम्यक् श्लेष्णात्सन्धिषु स्थितः। - मा०नि०, अर्शनिदान, मधुकोष टीका ।
20. वसिष्ठो वामदेवश्च च्यवनो भारविस्तथा । ..... गौतमश्च.....भागश्च काश्यपस्तथा । - अनवप्रकरण - शालिहोत्र के वचन
21. वैदिक वाङ्मय का इतिहास - पं० भगवद्यत-प्रणव प्रकाशन, नयी दिल्ली ।
22. A History of Indian Philosophy - Vol.I - S.N. Dasgupta - Cambridge University Press.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में साइटिस के तहत संकटापन्न उपयोगी आयुर्वेदिक वनौषधियाँ

डा० मायाराम उनियाल, वनौषधि विद्यापति (श्रीलंका)

दुनिया में आज कोई भी आर्थिक गतिविधि ऐसी नहीं हो जो विश्वव्यापार संगठन और इसके समझौतों तथा उप विधियों के प्रभाव से अछूती रह सके । इन नियमों को जितनी जल्दी समझ सकें उतना ही अच्छा होगा । जो लोग अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से जुड़े हुये हैं सम्बन्ध केवल उन्हीं लोगों तक सीमित है ऐसी धारणा गलत है । यह किसानों, वैज्ञानिकों, डाक्टरों, गायकों, लेखकों आदि के लिये भी उतना ही महत्वपूर्ण है, जितना उद्यमी, व्यापारी, बैंकर या विविध सेवा प्रदान कर्त्ता के लिये ।

लघु उद्यमों को इस सामान्य तथ्य से अवगत कराना भारत जैसे विशाल देश में एक बड़ी चुनौती है । आज बौद्धिक सम्पदा और अन्य उभरते मुद्दों जैसे पारम्परिक ज्ञान, जैव तकनीक, जैवविभिन्नता और पर्यावरण संरक्षण के बीच सम्बन्ध बनाये रखने की दिशा में कार्य करना जरूरी है । प्राचीन भारतीय ज्ञान से सम्बन्धित पेटेन्ट संरक्षण के मुद्दे ट्रिप्स एवं बौद्धिक सम्पदा के अधिकार आदि विधाओं के लिये विश्व व्यवस्था में विकासशील देशों के हितों के संरक्षित रखने के लिये प्रयास करने की विशेष आवश्यकता है ।

प्रस्तुत लेख में अर्न्राष्ट्रीय व्यापार में साइटिस के तहत संकटापन्न उपयोगी आयुर्वेदिक वनौषधियों के सन्दर्भ में संक्षिप्त जानकारी औषधि उद्योग में संलग्न औषधि निर्माताओं के जानकारी हेतु देने का प्रयास किया गया है । 1 जुलाई 1975 को साइटिस का गठन वन्यजीवों और वनस्पतियों की संकटापन्न प्रजातियों के नियंत्र हेतु किया गया । यह कतिपय देशों के बीच हुआ एक ऐसा समझौता है जो वन्यजीवों एवं औषधीय पादपों के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को नियंत्रित करता है, ताकि इनके अस्तित्व के खतरों से बचाया जा सके ।

भारत में साइटिस एक्जिम पालिसी के अधीन लागू किया जाता है जोकि सरकार की वैधानिक सीमा के अन्तर्गत कस्टम एक्ट 1962 द्वारा क्रियान्वित होता है । निर्यात के लिये निषेध पादपों की नेगेटिव सूची सरकार द्वारा तैयार की गई है एवं अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के समझौतों के आधार पर 18 अक्टूबर 1976 को भारत भी साइटिस में शामिल हुआ । इस समझौते में शामिल होने वाला भारत 25 वां सदस्य बना । इस वक्त लगभग 155 देश साइटिस के सदस्य देश हैं और वन्यजीव संरक्षण पर यह सबसे बड़े समझौते में से है । भारत में ऐसी संकटापन्न प्रजातियों के व्यापार पर सरकार विशेष नजर रखती है क्योंकि इन प्रजातियों के विदोहन से प्राकृतिक संसाधनों के अस्तित्व का खतरा है । इसके लिये साइटिस के तहत सूचीबद्ध औषधीय पादपों पर नियंत्रण रखना सदस्य देशों के लिये अनिवार्य है । समझौते से परिशिष्ट I, II और III में क्रमशः सबसे ज्यादा संकटापन्न प्रजातियाँ हैं । उपरोक्त साइटिस की परिशिष्ट सूची में वर्णित वनौषधियाँ लुप्तः प्राय हैं । इनकी कृषि (खेती) किये बिना व्यापार करने में इन प्रजातियों की उपलब्धता का खतरा हो सकता है । उनकी सूची निम्न प्रकार से है ।

1.	कूठ	*Sassurea Costus C syn.s.lappa*	मूल
2.	सर्पगन्धा	*Rauwolfia serpentina*	मूल
3.	वन्यकर्कटी	*Podophyllum hexandrum*	मूल
4.	सिंगली-मिंगली	*Dioscorea deltoidea*	मूलकन्द
5.	सालमपंजा	*Orchis Latifolia*	मूलकन्द
6.	सालपदाना	*Eulophia Campestris*	मूलकन्द
7.	रक्तचन्दन	*Pterocarpus santalinus*	काष्ठसार
8.	थुनेर, विरमी	*Taxus Wallichiana*	पत्र
9.	अगुरु, अगर	*Aquilaria malaccensis Syn. (A.agallocha)*	काष्ठसार

निदेशक (फार्म) महर्षि आयुर्वेदिक प्रोडक्ट लि०, नोयडा, उ०प्र०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

10.	अतीस, अतिविषा	*Aconitum heterophyllum*	मूलकन्द
11.	वत्सनाभ, विष	*Aconitum ferox*	मूलकन्द
12.	विख, मीठाविष	*Aconitum falconeri*	मूलकन्द
13.	पीतदारु, पीतचन्द	*Coscinium fenestratum*	काष्ठ
14.	ममीरा, पीतशूला	*Coptis teeta*	मूल
15.	कुटकी	*Picrorhiza Kurroa*	भौमि काण्ड
16.	त्रायमाण	*Gentiana Kurroo*	पंचाग
17.	जटामांसी	*Nardostachys garandiflona*	भौमिक काण्ड
18.	चिरायता	*Swertia chirata*	पंचाग
19.	जिनसेंग	*Panax pseudoginseng*	मूल

इस तरह करीब 30 के लगभग प्रजातियाँ साइटिस की सूची में प्रतिबन्धित हैं ।

उपरोक्त वन्य प्रजातियाँ अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिये बिना कृषि (खेती) के एवं वन्यजीव अधिनियम के तहत बिना मुख्यवन संरक्षक या क्षेत्रीय वन अधिकारी के कृषि उत्पाद प्रमाण-पत्र लिये प्रतिबंधित हैं । निर्यात परमिट भी दिया जाता है, यदि आयात करने वाले देश ने आयात परमिट जारी किया हो । विशेष शर्त्तों के तहत अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की अनुमति है । इन उपरोक्त प्रजातियों के निर्यात के लिये परमिट की आवश्यकता होती है । यह तभी जारी किया जाता है, जब देश के वैज्ञानिक यह सुनिश्चित कर लें कि इन प्रजातियों के निर्यात में जैविक सम्पदा के अस्तित्व का कोई खतरा नहीं होगा । इन प्रजातियों के आयात के लिये निर्यातक देश का निर्यात परमिट प्रस्तुत करना जरूरी है ।

साइटिस के क्रियान्वयन हेतु कानूनी ढांचा निम्न है ।

1. वन्यजीव संरक्षण अधिनियम 1972 को देखें ।
2. निर्यात व आयातनीति वाणिज्य मंत्रालय, भारत सरकार ।
3. सीमा शुल्क अधिनियम 1972 ।

(1) वन्यजीव (संरक्षण) 1972 अधिनियम का सन् 1986 में संशोधन कर इस कानून अध्याय V A जोड़ा गया । इस अध्याय में अधिसूचित प्रजातियों से बनी सामग्रियों और ट्राफियों के व्यापार या व्यावसायिक इस्तेमाल को पूरी तरह प्रतिबन्धित कर दिया गया है । समुद्र और जमीन पर पाये जाने वाली उन वनस्पति प्रजातियों को भी शामिल कर दिया गया जो पारिस्थितिकी का हिस्सा है । **II निर्यात आयात नीतिः-** निर्यात आयात नीति विदेश व्यापार अधिनियम 1972 के प्रावधानों के तहत लाई जाती है । यह नीति वन्यजीवों समेत सभी वस्तुओं के आयात और निर्यात को नियंत्रित करती है ।

वन्यजीवों और वनस्पतियों से सम्बन्धित निर्यात, आयात नीति भारत के साइटिस प्रबन्ध प्राधिकरण से विचार विमर्श करके सीमा शुल्क अधिनियम 1962 के तहत लागू की जाती है । आमतौर पर आयात/निर्यात नीति विशेष तौर पर साइटिस का उल्लंघन सीमा शुल्क 1962 के तहत अपराध है । इसके लिये सीमाशुल्क अधिकारी और वन्यजीव संरक्षण के क्षेत्रीय उपनिदेशक, सीमाशुल्क अधिनियम 1962 के तहत आयात तथा निर्यात के मार्गों या द्वारों पर साइटिस के प्रावधानों को अमल में लाते हैं । वनस्पतियों का सारा निर्यात दिल्ली, मुम्बई, कोलकाता, चेन्नई, कोच्ची और अमृतसर के सीमाशुल्क दरों से स्वीकृत है । उत्पाद के निर्यात और आयात से जुड़ी दो जरूरी शर्तें हैं ।

1. साइटिस के प्रावधानों को पूरा किया जाय ।
2. सीमा शुल्क दरों पर वन्यजीव संरक्षण क्षेत्रीय उपनिदेशकों की देखरेख में माल की जांच हो । माल की वैधता साबित करने के लिये वनौषधियों के निर्यातकों को वैधता प्रमाण-पत्र जारी करते हैं । साइटिस की सूची में शामिल उगाई गई प्रजातियों के सम्बन्ध में उस प्रजाति के मूल क्षेत्र के क्षेत्रीय उपनिदेशक (वन्यजीव) या मुख्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वनसंरक्षक, या क्षेत्रीय वन अधिकारी खेती द्वारा उत्पाद का प्रमाण पत्र जारी करते हैं । खेती का प्रमाण-पत्र तभी जारी किया जाता है जब ऊपर उल्लेखित अधिकारी इस बात से

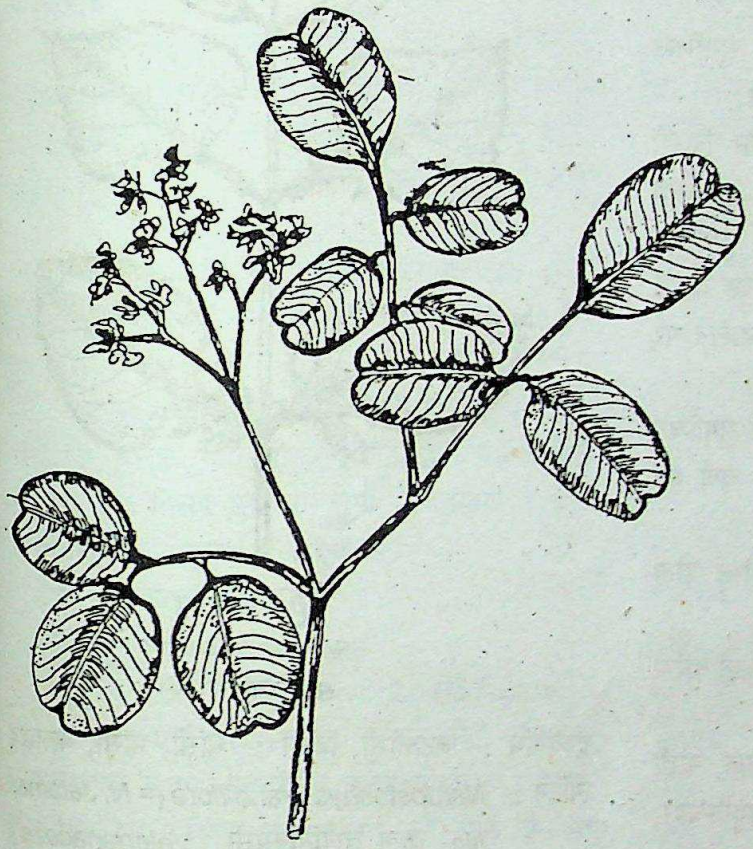

लालचन्दन
Pterocarpus santalinus
टैरोकार्पस सेंटालीनस

पूरी तरह संतुष्ट हों कि उस पौधे की खेती की गई है जिसका नाम पूर्व उल्लेखित साइटिस की सूची में है।

निर्यात और आयात नीति :- सरकार द्वारा निर्यात-आयात नीति 1 अप्रैल 1977 से 31 मार्च 2002 की समयाविधि में मान्य है । हालांकि इसमें समय-समय पर संशोधन किया जाता है जिसकी अधिसूचना सरकार द्वारा निर्गत की जाती है । निर्यात-आयात नीति साइटिस की सूची में जिन क्षेत्रों से प्राप्त 29 पौधों की सूची में उल्लेखित आयुर्वेदिक पौधों के हिस्सों, उनके उत्पादों और उनके रस का निर्यात, फार्मुलेशन उन उत्पादों से है जोकि प्रतिबन्धित सूची में शामिल पौधों के हिस्से हैं उनका परमिट लेना अनिवार्य है । प्रतिबन्धित उगाई गई प्रजातियों के लिये साइटिस निर्यात परमिट की आवश्यकता होती है । जिस राज्य से पौधे के हिस्से प्राप्त किये गये हैं वहाँ के क्षेत्रीय उपनिदेशक (वन्यजीव) या मुख्यवनसंरक्षक, या डिविजिनल वन अधिकारी द्वारा प्रमाण-पत्र जारी किया जाना जरूरी है । वन्य उत्पाद से सम्बन्धित मामलों में साइटिस का निर्यात परमिट तभी जारी किया जायेगा जबकि आयातक देश आयात परमिट जारी कर दे । खेती से प्राप्त उत्पाद के मामले में क्षेत्रीय मुख्य वन संरक्षक या डिविजिनल वन अधिकारी का अनापत्ति प्रमाणपत्र (एन०ओ०सी०) छूट का प्रमाण-पत्र प्राप्त किये जाना जरूरी है । प्रतिपादन (फार्मुलेशन) के निर्यात के मामले में ऐसा शपथ पत्र आवश्यक है जिसमें लिखा हो कि उसके निर्माण में केवल आयातित कृषिरोपित प्रजाति का इस्तेमाल किया गया है । अतः प्रतिबन्धित उगाये गये वनौषधियों का किसी भी स्थिति में उपरोक्त आधिकारिक अधिकारी का अनापत्ति प्रमाण-पत्र क्षेत्रीय वन अधिकारी का अनिवार्य है । पाठकों एवं औषधि उद्योग में कार्यरत फार्मेसियों एवं कृषि (खेती) करने वाले किसानों की जानकारी के लिये इन पौधों की पहचान संक्षिप्त रूप से निम्न प्रकार से दी जा रही है ।

1. आयुर्वेदिक नाम - अगुरु, हिन्दी - अगर लकड़ी
   अंग्रेजी - ईगल वूड
   लैटिन - *Aquilaria malaecensis (= syn. A. agallocha) N.O.* कुल *Thymelaeaceae*)

स्वरूप एवं प्राप्तिस्थान :- अगुरु के मध्यम आकार के सदाहरित वृक्ष होते हैं । ग्रीष्मऋतु में पुष्प खिलते हैं । पुराने वृक्ष के सारकाष्ठ में फंगस जन्य जो तैलीय, सुगन्धित कृष्णावर्ण को भारी, वजनी काष्ठ सार है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसे अगुरु काष्ठ कहते हैं । अगुरु (अगर) के वृक्ष प्राय: अरुणाचल प्रदेश के जंगलों में वन्यरूप में एवं वृक्षारोपण के रूप में, असम के पर्वतीय क्षेत्रों, मणिपुर, मेघालय, नागालैण्ड और त्रिपुरा में पाया जाता है ।

प्रयोज्य अंग :- भारी वजन वाला सुगन्धित कृष्णावर्ण का काष्ठसार एवं सुगन्धित तैल (ईत्र)

व्यापारिक रूप से अगुरुकाष्ठ की चार किस्में प्राय: बाजार में मिलती हैं । यथा ग्रेड-I यह संक्रमित (फफूंद) पुराने पेड़ों के वजनी कृष्णावर्ण का सुगन्धित तैलीय काष्ठ होता है जोकि असली अगरु है । यह काष्ठ काफी महंगा होता है । इस काष्ठ को पानी में डालने पर डूब जाता है ।

ग्रेड नं०-2 यह काष्ठ बिना काले रंग का काष्ठ से सुगन्धित तैल निकला हुआ भूरे हल्के पीताभ वर्ण का होता है ।

ग्रेड नं०-3 इस काष्ठ हलक, पतला चपटा काष्ठ होता है ।

ग्रेड नं०-4 यह आमतौर पर पीलासा, हल्का एवं कालीधरियों वाला होता है ।

औषधि उपयोग :- शोथहर, वेदनास्थापक, नाड़ी संस्थान पर उत्तेजक, चर्मरोगों में उपयोगी, मुखदुर्गन्धहर, दीपन-पाचन; कटु, तिक्त, उष्णवीर्य एवं वात-कफशामक है । अगुरु काष्ठ का ईत्र सबसे महंगा होता है । आसवन के बाद अगर काष्ठसार से अगरुतैल निकाला जाता है । आजकल बाजार में ग्रेड - 2,3,4 की अगुरू लकड़ी मिलती है या जो बाजार में काली लकड़ी अगुरु के नाम से आती है वह भी प्रामाणिक नहीं है । या अगुरु तैल निकाली हुई काली कुछ वजनी अगुरु काष्ठ बाजार में बिकता है । पहचान के बाद ही औषधि निर्माण में अगुरु का उपयोग करना आयुर्वेदिक औषधि गुणवत्ता हेतु जरूरी है ।

कुष्ठ मुष्णं कटु स्वादु शुक्रलं तिक्तकं लघुः ।
हन्तिवातास्र विसर्प, कास कुष्ठ मरुत्कफान् ॥

भा०प्र०वि०

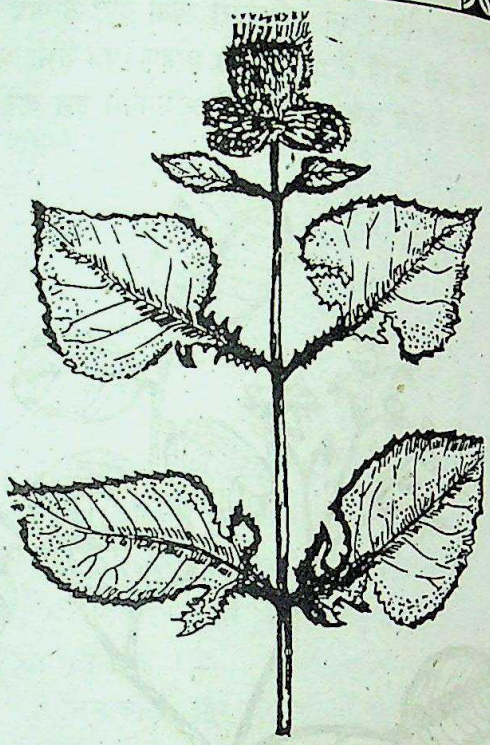

कूठ (कुष्ठ)
Saussurea costus
सॉसुरिया कॉस्ट्स

द्रव्यनाम :- जटामांसी, हिन्दी :- मांसी, मासी, बालछड़ ।
लैटिन :- *Nardostachys grandiflora (= N. Jatamansi*
No. कुल वलैनिनियेसी (*Valerianaceae*)

स्वरूप एवं प्राप्ति स्थान :- यह पौधा भारत सरकार के वाणिज्य मंत्रालय की नकारात्मक निर्यात सूची एवं रेंटिस के परिशिष्ट II में शामिल है । यह प्रजाति हिमालय के एलपाईन जोन 3,300 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,900 मीटर की ऊँचाई पर पाई जाती है । विशेषकर उत्तरांचल हिमालय के भागीरथी घाटी, भिलंगना घाटी, मन्दाकिनी घाटी, अलकनंदाघाटी, जमुनाघाटी, पिंडार एवं हिमाचल प्रदेश के पार्वतीघाटी, जम्मू-काश्मीर, सिक्किम, नैपाल, भूटान के हिमालयी पर्वत शिखरों में सुलभ हैं । पौधों का काण्ड एकवर्षायु मूल बहुवर्षायु सुगन्धित बालों सदृश गुच्छों में होता है । इसी कारण इसे बालछड़ कहते हैं ।

प्रयोज्य अंग- रोमिल भौमिककाण्ड एवं सुगन्धित,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूल आपस में जुड़े हुये रोयेंदार कुछ अन्दर से पोली मूल पतली लकड़ी जैसी होती है । इसकी गंध तेज होती है । स्वाद में कुछ कटु होता है । इसके मूल में उड़नशील तैल पाया जाता है ।

औषधीय उपयोग :- इसके मूल का उपयोग मानसिक तनाव, रक्तचाप, हीस्टीरिया के दौरे (उन्माद/अपस्मार, दमा, कुष्ठ में किया जाता है । खांसी, चर्म रोगों, उदरशूल, परिणामशूल एवं मानसिक बीमारियों में उपयोगी है ।

मांसी तिक्ता कषाय च, मेध्या कान्तिबलप्रदाः ।
स्वाद्वी हिमा त्रिदोषास्त्र दाह विसर्पकुष्ठनुत् ॥

(भा०प्र०नि०)

बालछड़ तिक्त, कषाय रसयुक्त, मेधाजनक, कान्तिकारक, बलप्रद और शीतवीर्य होती है । यह त्रिदोष, रक्तप्रकोप, दाह विसर्प एवं चर्म रोगों में उपयोगी है ।

द्रव्यनाम : - कुटकी, कटुकी ।

हिन्दी - कुटकी, कौड़

लैटिन - *Picrorhiza Kurroa*

No. कुल स्क्रोफुलेरियेसी (*Scrophu Pariaceae*)

स्वरूप एवं प्राप्तिस्थान :- प्रसरणशील बहुवर्षायु मूल वाला एवं काण्ड एकवर्षायु वाला पौधा है । इसके काण्ड भूमि पर परिसृत एवं काण्ड की गांठ से पत्ते निकलते हैं । काण्ड एवं मूल 3.8 से.मी. टुकड़ों में बाजार में मिलते हैं । आकार गांठनुमा एवं भूरी परत लिये होता है । पत्र दन्तुर, पुष्प-पुष्पदण्ड पर समूह रूप में हरिताभ नील वर्ण के होते हैं । जड़ों में छोटे और स्पष्ट कटाव होता है । हल्की अप्रिय गन्ध एवं स्वाद तिक्त होता है । इसकी पौध प्राकृतिक रूप से हिमालय में 2,700 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,900 मीटर की ऊँचाई तक छायादार ढलानों पर पाये जाते हैं । विशेषकर उत्तरांचल हिमालय के सभी घाटियों हिमाचल प्रदेश, जम्मू-काश्मीर, अरुणाचल प्रदेश, सिक्किम, नेपाल, भूटान आदि पर्वतीय राज्यों में पाया जाता है । अनैतिक विदोहन के कारण यह प्रजाति संकटापन हो गई है ।

प्रयोज्य अंग - मूल - भौमिक काण्ड ।

औषधीय उपयोग - उत्तम कटु पौष्टिक, दीपन, पाचन, तिक्त, कटु, रसयुक्त, मलभेदक, यकृत रोग में विशेष उपयोगी एवं श्वास कास, रक्तदोष, दाह, कुष्ठ एवं कृमिरोग में उपयोगी ।

भारत सरकार के वाणिज्य मंत्रालय एवं साइटिस के परिशिष्ठ II सूचि के आधार पर यह प्रजाति नकारात्मक सूची (नेगिटिव) लिस्ट में प्रतिबन्धित है । कृषि द्वारा उत्पादित प्रजाति निर्यात के लिये मान्य है ।

कद्वी तु कटुका पाके तिक्ता रूक्षा हिमालघुः ।
भेदनी दीपनी हृद्या, कफ पित्त ज्वरापहा ॥

भा०प्र०नि०

द्रव्यनाम :- अतीस, अतिविषा ।

हिन्दी - अतीस, पतीस ।

लैटिन - *Aconitum heterophyllum*

कुल *No.* रैननकुलेसी (*Ranun culaceae*)

स्वरूप एवं प्राप्तिस्थान :- अतीस का पौधा एकवर्षायु एवं मूल द्विवर्षायु कन्दिल होता है । काण्ड सीधा तलोत्थ होता है । पत्र, ताम्बुलाकार, पुष्प-हरित नील वर्ण के फणाकार होते हैं । मूलकन्द दो की संख्या में श्वेतवर्ण के स्वाद में तिक्त होते हैं । कन्द आसानी से टूट जाता है, भीतर से श्वेत वर्ण का स्टार्च युक्त एवं कड़वा होता है । हिमालय से इसके पौध 2,700 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,900 मीटर की ऊँचाई तक एलपाईन मेडोज में प्राकृतिक रूप से पाये जाते हैं । उत्तरांचल हिमालय में प्राकृतिक रूप से कहीं-कहीं सभी घाटियों में हिमाचल प्रदेश, जम्मू-कश्मीर, लेह-लद्दाख, पूर्वी पहाड़ी राज्य एवं सिक्किम, नेपाल, भूटान में इसके पौधे प्राकृतिक रूप से संकटापन्न हो गये हैं ।

प्रयोज्य अंग - मूलकन्द

औषधीय उपयोग :- मूलकन्द-दीपन, पाचन, तिक्तपौष्टिक, ज्वरघ्न, विषमज्वरनाशक, अतिसार, आमदोष, कास, वमन (उल्टी) एवं कृमि में उपयोगी । रस - कटु, तिक्त, उष्ण वीर्य एवं अग्निदीपक ।

विषा सोष्णा कटु स्तिक्ता, पाचनीदीपनी हरेत् ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कफ पित्तातिसाराम विष कास वमिक्रिमीन् ॥

भा०प्र०नि०

भारत सरकार के वाणिज्य मंत्रालय एवं साइटिस सूची (नेगेटिव) लिस्ट में प्राकृतित वास से संग्रह करना प्रतिबन्धित है । कृषि द्वारा उत्पादित यह प्रजाति औषध उपयोग एवं निर्यात के लिये मान्य है । इसके अतिरिक्त भारत सरकार वाणिज्य मंत्रालय एवं पर्यावरण मंत्रालय द्वारा परिशिष्ट सूची I, II एवं III में अन्य पूर्वप्रसङ्ग में दी गई सूची के आधार पर डायस्कोरिया, वत्सनाभ (विष), रक्तचन्दन (लालचन्दन), सर्पगन्धा, पीतचन्दन, वनकड़ी, सालमपंजा (आर्किढ) थुनेर, विरमी (टैक्सस) आदि प्रजातियाँ नकारात्मक सूचि (नेगेटिव) लिस्ट में समाहित हैं । इन किस्मों को कृषि द्वारा उत्पादित कर औषध उपयोग एवं निर्यात करने हेतु मान्य है । विस्तार भय से इन पौधों की विस्तृत जानकारी इस लेख में नहीं दी जा रही है ।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार सम्बन्धी भारतीय औषधीय पौधे के निर्यात सम्बन्धी विशेष जानकारी हेतु साइटिस के महत्वपूर्ण पत्राचार हेतु निम्न पतों से जानकारी प्राप्त कर सकते हैं ।

1. वनमहानिरीक्षक
   पर्यावरण व वन मंत्रालय
   भारत सरकार, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स
   लोदी रोड, नई दिल्ली - 03
   दूरभाष :- 011 - 24361509
2. क्षेत्रीय उपनिदेशक (वन्यजीव संरक्षण)
   उत्तरीक्षेत्र, बीकानेर हाउस
   एनेक्सी, शाहजहाँ रोड, नई दिल्ली -011
   दूरभाष - 011 - 23384556
3. निदेशक
   भारतीय वन्यजीव संस्थान
   चन्द्रवनी, पी०ओ०बाक्स नं०-18
   देहरादून (उत्तरांचल-248001)
   दूरभाष : 1035-2640112, 13, 14

बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल विटामीन-सी और कैल्सियम युक्त एक संपूर्ण स्वास्थ्य टॉनिक

बैद्यनाथ
च्यवनप्राश

माँ से बढ़कर बच्चों की देखरेख और कौन कर सकता है ? इसीलिए हर माँ अपने नन्हे-मुन्ने के लिए स्वास्थ्यवर्धक व पौष्टिक आहार की कामना करती है ।

परन्तु केवल स्वादिष्ट भोजन आपके बच्चों की विटामिन व पोषण संबंधी जरूरतों की पूरा नहीं कर सकता । उसके अनुकूल विकास के लिए आपको चाहिए एक उत्कृष्ट स्वास्थ्य टॉनिक । जैसे बैद्यनाथ च्यवनप्राश स्पेशल । इसमें हैं 52 (परखी हुई) जड़ी-बूटियाँ और केसर । अनेक विटामिन व हर्बो-मिनरल्स से युक्त, इसमें विशेष मात्रा में है, प्राकृतिक विटामिन-सी और कैल्सियम, जो आपके शरीर में जरूरी पोषक तत्वों की कमी को पूर्ण करते हैं ।

स्वस्थ दिमाग
और शरीर के लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डेङ्गयू ज्वर (Dengue Fever)

वैद्य पी०एस० अंशुमान, एच.पी.ए., निवृत्त प्रो०/प्राचार्य आयु.मो.भाव.)

परिचय

यह एक नवीन ज्वर संज्ञा प्रकार के रूप में परिचित रोग है । प्रायः मच्छर युक्त शहरी-जनपदों में सामूहिक रूप से रोग ग्रस्त करने वाले रोग के रूप में मिलता है । यह बच्चों एवं वृद्धों को अधिक कष्ट देता है यद्यपि इस के शिकार सभी वय एवं लिङ्ग के लोग होते हैं ।

उत्पादक निमित्त

यह मच्छरों से उत्पन्न मलेरिया, फाईलेरिया, येलोफीवर (पीतज्वर) ही श्रेणिका डेन्मयु संज्ञक ज्वर है । इस का उत्पादक कारण (एवं प्रसारक कारण) मच्छर ही हैं । जैसा कि विदित है मच्छरों के 80 प्रकारों में से यह एडीस संज्ञक मच्छर द्वारा उत्पन्न रोग है । भारत में पाये जाने वाले मच्छरों में ऐनाफिलीस, मेन्सोनिया, क्युलेक्स एवं एडीस ही मुख्य प्रजातियां हैं ।

एडीस मच्छर को टाईगर (चीता) मच्छर भी कहते हैं क्योंकि इसके शरीर पर सफेद पट्टी या बिन्दु होते हैं । इसकी इजीप्ताई, आल्वेयिकचस, विटेटिस अनुप्रजातियां है ।

अन्य मच्छरों की तरह से इसकी भी चार अवस्थाऐं होती हैं - (1) अण्डावस्था-यह पानी पर लम्बगोलाकार रूप में 1-2 दिन रहता है (2) लार्वा अवस्था - पानी में स्थित, लम्बाकार, शैवाल एवं वैक्टीरिया पर जीवित (खानेवाली), 5-7 दिन तक रहने वाली स्थिति होती है । (3) प्यूपा अवस्था भी पानी पर ही रहती है परन्तु खाना बंद कर 1-2 दिन रहने वाली अवस्था है । (4) राडल्ट या मच्छर रूपावस्था - प्यूपा की ऊपरी कवच टूटकर वयस्क मच्छर निकलता है जो पंख निकलते ही उड़ सकता है । इस प्रकार 11 दिन में यह विकसित हो जाता है ।

यह मच्छर पानी भरे गड्ढों पर, पानी भरे टायरों, खुले पानी की टंकी में विकसित होते हैं ।

यह मच्छर डेंग्यू वायरस को दंशपूर्वक फैलाकर डेंग्यु को एपेडेमिक रूप दे देता है ।

इसका इन्क्युवेशन पीरियड 9 से 10 दिन का होता है ।

संज्ञाभेद

सप्ताहज्वर - सप्ताह तक रहने से ।

दण्डकज्वर - दण्डाघात वत मांसशूल होने से ।

अस्थिमंजन ज्वर - अस्थि तोड़ वत पीड़ा होने से ।

डेंग्यू - डेंग्यू वायरस से उत्पन्न होने के कारण

दोषानुबंध

1. कफवातानुबंधी । 2. रक्तानुबंधी ।

प्रकार भेद

1. अल्पस्रावी - सामान्य प्रकार -कफवातानुबंधी प्रकार ।
2. रक्तस्रावी घातक प्रकार - रक्तानुबंधी प्रकार ।

पूर्वरूप

1. कोठोत्पत्ति, शीत पित्त होना ।
2. पाण्डुत्व एवं असहत्व होना ।
3. शिरशूल, अंगमर्द, अति (बेचैनी) होना ।
4. अरुचि, क्लम, अवसाद, होना ।

लक्षण

(क) सामान्य

- शीताभास-कम्प पूर्वक, और वाद में शिरशूल युक्त तीव्र ज्वर (100^0-105^0) आना ।
- 3रे - 4 थे दिन ज्वर कम होना (100^0) स्वेदन पूर्वक ज्वर कम होना, या अतिसार होकर, कुछ अच्छा लगना (शीघ्रोत्पत्ति-उपशय) ।
- 3-4 दिन बाद ज्वर का पुनः बढ़ने लगना तथा 2-3 दिन रहना, 6ठे-7वे दिन पुनः आना ।
- नेत्ररक्तिमा युक्त एवं प्रकाशासहत्व होना, दृष्टिक्षीणता, वाधिर्यता ।
- चेहरा रक्तिमा युक्त साथ में ग्रीवा-वक्ष-भी रक्तिमा

निवास : 1497, ए 2/1, कृष्णनगर, रूपाणि सर्कल, भावनगर (गुज०) 364001

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युक्त होना ।
- नाड़ी प्रथम दिन तीव्र फिर बाद में मंद होना ।
- अरति (बेचैनी), अनिद्रा, होना ।
- उत्क्लेश, अरुचि बढ़ना, वमन होना या प्रवाहिका होना ।
- हाथ-पैर-कमर में वेदना होना (रोगी हाथ पैर पटकता है) ।
- शिर-शंख में तीव्र शूल होना ।
- मांस पेशियों में गड़बड़ी होना (दण्डाघातवत) शोथ भी ।
- अस्थि संधि शूल; संधिशूल-शोथ; परिसंधि रक्ताभता ज्वर उतरने पर भी संधिशूल बना रहना ।
- प्रतिश्याय, कास, कण्ठशूलक्षत अण्डग्रंथि प्रदाह या फुप्फुस प्रदाह भी होता है ।

(ख) रक्तस्रावी
- लसिका ग्रंथि शोथ युक्त (विशेषत: ग्रीवा-वंझणादि)
- त्वक पर रक्त मण्डोत्पत्ति (विशेषत: ऊरू कर्पूर गले पर) चार दिन तक बने रहना तथा बाद में कंडु होना ।
- सरक्त मल प्रवृत्ति, रक्त छर्दन, नासारक्तस्राव ।
- यकृत वृद्धि या विकार ग्रस्त होना ।
- रक्त में थ्रोम्बोसाईट ह्रास होना, रक्तदबाव फटना तथा रक्त चट्ट बनना ।
- कभी-कभी पीडिका, विस्फोट, व्रण होना ।

(ग) अन्य विशेषता में ।
- बच्चों में घातक रूप शीघ्र ले लेना, विशेषत: नासा-रक्तस्राव एवं प्रलाप आदि होना या आक्षेप युक्तता मिलना ।
- गर्भिणियों में जरायु-रक्त स्राव पूर्वक गर्भपात होना ।
- वृद्धों एवं कमजोर लोगों में दुर्बलता, अवसाद उन्माद आदि होना ।
- बच्चों-वृद्धों में घातक होना ।

(घ) रोगविनिश्चय
- रक्तपरीक्षा पूर्वक श्वेताणुन्यून, लिम्फोवृद्ध, होना ।
- डेंग्युवायरस प्राप्ति तथा वायशेलोजीकल सीरीयोपोजिटिव ।

(ड) साध्यता
1. सामान्य प्रकार सुसाध्य ।
2. रक्तस्रावी प्रकार घातक, बाल-वृद्धों में भी घातक संघाती रूपा प्रकार ।

चिकित्सा

(क) अनागतबाधाप्रतिषेध

(I) मच्छरों की उत्पत्ति को रोकना ।
- मच्छरों के अण्डों को नष्ट करना - पानी ढके, गड्ढे भर दें ।
- लार्वा को नष्ट करना - ढहरे पानी पर केरोसीन, डीजल, क्रूडतैल या मास्क्यूटा लार्वीसाईडल छिड़कना ।
- प्यूपा को नष्ट करना - मोस्क्युटो लार्वीसाईडल दवा डालना ।
- मच्छरों को नष्ट करना - मच्छरनाशक मेलेथीन या सुमीथीमोन का धूम प्रयोग करना ।

(ख) शमनोपचार

I. सामान्य प्रकार में
- शूलघ्न - शूलप्रशमनकषाय (च) धत्तूर, अहिफेनकल्प
- अगंमर्दघ्न - अंगमर्दप्रशनकषाय (च) त्रिभुवनकीर्ति
- ज्वरघ्न - विषमज्वरघ्न, सिनकोनाटेबलेट, आयुष 64 रत्नगिरिरस आदि ।

II. रक्तस्रावी प्रकार में
- रक्तपित्तघ्न - रक्तपित्तान्तकलोह ।
- रक्तस्तंभक - चन्द्रकला ।
- सम्यक संतर्पणार्थ - ग्लुकोज (इन वे) प्लाज्मा या रक्ताधान (बी.टी.) प्रयोग ।

III. लक्षणानुसारी चिकित्सा

(ग) उपयोगी कल्प ।

स्वरस - गुडुचि ।

कल्प/चूर्ण - मामञ्जक, सुदर्शन ।

क्वाथ - गुडुच्यादिक्वाथ, महासुदर्शनक्वाथ, दशमूल,

वटी -

रसकल्प -

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घ) शीतपूर्वकज्वरागमन-शीतभंजीरस, वैतालरस+पीपरमधु से
वरध्नोपचार - शीतजलपट्टिका प्रयोग या क्लेंकटवाथ का प्रयोग ज्वर के 104° तक हो जाने पर । साथ ही रत्नगिरी रस आदि का प्रयोग ।
ंधिशूल - अहिफेन कल्प (निद्रोदय रस), धत्तूरकल्प तथा बेलाडोना कल्प, अर्क पत्र बंधन या शूलशामक मलहर (अहिफेन युक्त) प्रलेय, ज्वरमुरारिरस ।
रक्तमलप्रवृत्ति - कालेरंग की मलप्रवृत्ति होने पर इन्द्रायण, रसपुष्प या कुटज, शोणितार्गल मोचरस आदि ।
वाहण - कुटज, बिल्व, इन्द्रयव ।
क्षेप - निद्राजन्य कल्प यथा निद्रोदय रस, द्राक्षासव, लक्ष्मीनारायण रस ।
लाप - ब्राह्मीवटी, निद्रोदय रस ।
लेष्मग्रंथिप्रदाह- त्रिफलागूगल, कांचनार गूगल ।
वं अण्ड ग्रंथि प्रदाह
तिश्याय, शिरशूल - कफकेतु, लक्ष्मीविलास
ास - श्वास - कफकेतु ।
फ्फुस प्रदाह - महालक्ष्मीविलास + दशमूलक्वाथ ज्वरमुरारि
कृत विकार - पुनर्नवामण्डूर, नवायस लौह, चिन्तामणि रस ।
स्फोट - विसर्प, कुष्ठहर, ज्वरघ्नकल्प यथा ज्वर मुरारि आदि ।
क्तअण्ड, रक्तस्राव - चन्द्रकला रस, सर्वतोभद्ररस, जीवनानंद रस आदि ।
स्थि - मज्जाश्रतज्वरावस्था - जयमंगल रस, ज्वरमुरारी
ङ) अपुनर्भवार्थ
विगत ज्वरावस्था हो जाने पर - बल्य, सुपाच्य पथ्य पूर्वक गुडुचित यष्टि, सर्वज्वरहर लौह प्रयोग ।
कार्श्य एवं अपतर्पण नाशनार्थ - खर्जूर मंथ, पीपरसिद्धक्षीर, पीपर अश्वगंधा मिश्रण सेवन ।
* दौर्बल्य शमनार्थ - नवजीवन रस, विषतिन्दुक वटी, लोहासव, अश्वगंधारिष्ट, अमृतारिष्ट आदि का प्रयोग ।

संदर्भ/आधार

विशिष्टमशकोद्भवो जगति दण्डकाख्यो ज्वरः,
सदाऽस्थिनिचयं नरस्य परिपीड़य निर्भरम् ।
स्थिति मुनिमिताम्यहानि विदधाति नित्यं तनौ,
ततो षिगदितो ज्वरो मुनिभिरेन सप्ताहकः ।
एनं डेङ्गयूफीवरं त्वाङ्ग्लभाषा विज्ञावैद्यादण्डकाख्यं ज्वर च ।
अस्थ्नां नूनं भञ्जनं भूमिमध्ये संभाषन्ते नामधे यैर मरिभिः
यदा मानवस्याङ्गमध्येऽङ्गमर्दः क्लमश्चारूचिर्घश्यते दैवयोगात्।
अथोत्क्लेशसादौ तदा दण्डकाख्य ज्वरस्याग्र रूपं जनैर्वेदितव्यम् ।।
अस्थ्नां सन्धिषु घोराः दण्डाहनमजसमा पीडा
क्षिप्रोदयलयशाली समस्ततनुगोऽपिवीसर्पः ।
संचारि संधिशूलं शोथयुतं लक्ष्यते यत्र ।
ज्वर मध्येऽपि च कासः कण्ठे पीड़ा प्रतिश्यायः ।
पुनरावर्तनशीलो, भुञ्चत्यष्टाहयो ज्वरं यत्र ।
संधिरूजाश्चिरकालं सन्ति वदन्ति च दण्डकज्वरंतम् ।
प्रायो जनपदजन्माः कफमारूतकोपजातनिजवर्त्मा
बालानामथ जरतां जातो दारूण उदीरितो वैद्यैः ।

मा.नि.परि.दण्डकज्वर 1-7

तुलनार्थ

भेदोऽस्थ्नां कूजनं श्वासो विरेकछर्दि रेवच ।
विक्षेपर्ण च गात्राणामेतदस्थिगते ज्वरे ।
तमः प्रवेशनं हिक्का कासः शैत्यं वमिस्तथा
अन्तर्दाहो महाश्वासो मर्मच्छेदश्च मञ्जको ।

मा.नि. 1/52, 53

संक्रामक रोग विज्ञान, बालमुकुन्द शुक्ल पृ० 146 ।
भै.र० 5/-
च०चि० 3/-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अच्छे स्वास्थ्य के लिये आयुर्वेदिक दृष्टिकोण

वैद्य हरिभाई के० त्रिवेदी

आयुर्वेद में स्वस्थ की व्याख्या में शरीर में स्थित दोषधातु एवं मल की समता और विशेष रूप से आत्मा, इन्द्रिय और मन की प्रसन्नता पर जोर (भार) दिया गया है, क्योंकि इस षड्धात्वात्मक देह में शरीर, इन्द्रिय, मन और आत्मा के संयोग को आयु कहते हैं । स्वस्थ की व्याख्या देते हुए कहा है कि -

समदोषः समाग्निश्च समधातु मलक्रियः । सु.सू.
प्रसन्न आत्मेन्द्रिय मनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते ॥ 15/41

यहाँ शरीरस्थ दोष धातु, मल एवं जठराग्नि जब सम होते हैं तब ज्ञानेन्द्रिय, कर्मेन्द्रिय एवं मन प्रसन्न रहता है, अपितु जठराग्नि की समानता से शुद्ध आहार रस का निर्माण होने से उनमें से सार-किट्ट मल विभाजित होते हैं, यह सबको तृप्त करते हैं, मन आदि इन्द्रियों को भी सूक्ष्म सार पुष्टि करते हैं, वह पुष्टि शरीर की रस रक्तादि धातुओं और ओज की पुष्टि करते हैं । ओज मेधा, कान्ति प्रभा, बल की भी पुष्टि करते हैं, ओज शरीर में प्राण स्वरूप है ।

स्वस्थ रहने में दिनचर्या एवं ऋतुचर्या का विचार

दिनचर्या में दंतधावन, व्यायाम, स्नान इत्यादि शरीर स्वस्थ रखने में साधनरूप हैं किन्तु विशेषरूप में तैलाभ्यंग शरीर को सुदृढ़ एवं कोमल रखते हैं ।

नियमानुसार मन का अधिपति मारुत अर्थात वायु है, वायु को आयुर्वेद में "स्तंत्रान्यंत्र धरः" कहा है । तंत्र अर्थात् शरीर और यंत्र अर्थात् शरीरावयवों को धारण करने वाला है । तंत्र अर्थात् शरीर की रस-रक्तादि का परिभ्रमण (रूधिराभिसंरण क्रिया) सम्यक् वायु ही करती है और यंत्र अर्थात् शरीर के प्रधान अवयवों (मर्मों) जैसे कि हृदय शिर (मस्तिष्क) और वस्ति (किडनी) को समस्थिति में वायु ही रखती है । तात्पर्य यह है कि वायु को शास्त्र में इश एवं चैतन्य स्वरूपी कहा है, अतः प्राण स्वरूपी वायु को शरीर में सम्यक् रखने के लिये शरीर पर तैलाभ्यंग उत्तम प्रक्रिया है ।

जिस तरह दिनचर्या शरीर को स्वस्थ रखने में उपकारी है, उसी तरह ऋतुचर्या का भी महत्वपूर्ण योगदान है । हरेक ऋतु का प्रभाव शरीर में होता है, किन्तु विशेष रूप से ऋतुओं के संधि काल में दोषों का चय-प्रकोप होने से शरीर में भिन्न-भिन्न प्रकार की व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं । अतः शरीर में व्याधि का उद्भव ही न हो इसलिये दोषों को संचयावस्था में प्रतिकार करने का शास्त्र में कहा है हम संचयावस्था में ही शोधन कर्म करें जैसे :-

श्रावणे कार्तिके चैत्रे मासि साधारणे क्रमात् ।
अ.ह.सू. 13/33
ग्रीष्मवर्षाहिमचितान् वाय्वादीनाशु निर्हरेत् ॥
अत्युष्णवर्षशीता हि ग्रीष्म वर्षा हिमागमाः - 34
सन्धौ साधारणे तेषां दुष्टान् दोषान् विशोधयेत् ।
स्वस्थवृत्तमभिप्रेत्य व्याधौ व्याधिवशेन तु ॥
अ.ह्य.सू. 13/35

श्रावण मास, कार्तिक मास तथा चैत्र मास साधारण (समशीतोष्ण) होते हैं । अतः इन्हीं मासों में क्रमशः ग्रीष्म ऋतु में संचित वात का, वर्षा ऋतु में संचित पित्त का और हेमंत ऋतु में संचित कफ का शोधन करें क्योंकि - ग्रीष्म में उष्ण (गर्मी) । वर्षा में वर्षा एवं हेमंत में शीत अत्यधिक होते हैं, इसलिये ऋतुओं के सन्धिकाल-उक्त साधारण कालों में दुष्ट संचित दोषों का शोधन करन चाहिए । परन्तु उक्त विधि स्वस्थ के लिये है ।

महर्षि सुश्रुत कहते हैं कि रोग उत्पन्न होने के पूर्व वसन्त ऋतु में वमनादि विधि से कफ का हरण, शरद ऋतु में विरेचन द्वारा पित्त का हरण और वर्षा ऋतु में स्नेहपान, वस्ति आदि उपायों से वात का संशमन कर देन चाहिए ।

(सु.सू.अ. 6/40)

सदाचार एवं सद्वृत्त का पालन ।

जीवन में सद्वृत्त एवं सदाचार के पालन से शरीर एवं मन निर्मल रहता है । शास्त्र में कहा है कि "आचार प्रथमोधर्मः" सत्य, अहिंसा एवं अस्तेय का पालन से इह और परलोक कल्याणकारी बनता है । महात्मा गांधी जी ने गीता के अनुशीलन से सत्य, अहिंसा के व्रत लेकर देश

निवृत्त प्रो०(कायचिकित्सा) 78, अजीतनगर सोसा०, अकोटा, बड़ौदा (गुजरात)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ो आजाद कराया । महर्षि चरक ने सू.अ. 30 में
ाहिंसा प्राणिनां प्राणवर्धनानामुत्कृष्टतम् । अर्थात् मनुष्यों
प्राणों को बढ़ाने वाले पदार्थों में अहिंसा सर्वश्रेष्ठ है ।

महर्षि वाग्भट्ट ने सू.अ. 2/23 में सद्वृत्त का
र्णन करते हुए कहा है कि "आत्मवत्सततं
येदपिकीटपिपीलिकम् । अर्थात् कीड़ों को भी सदा अपने
मान देखें ।

आहार पाचन काल में अग्नि एवं मात्रा की
ानार्थ बातें ।

आहार ही प्राणियों का मूल है । अतः आहार को
वन करने में अग्नि एवं मात्रा का सर्वशेष ध्यान रखना
हिये क्योंकि प्रतिक्षण शारीरिक धातुओं का क्षय होता
ता है, उस क्षय की पूर्त्ति के लिये आहार की आवश्यकता
ती है । जब आहार द्रव्य पाचकाग्नि द्वारा पचित होता है
र रस धातु का निर्माण होता है और इसके बाद सात
तुओं की सात धात्वाग्नियों द्वारा पाचन होकर पोषक रूप
ता है, जिनके द्वारा शरीर का पोषण, आयु, बल, वर्ण,
न्ति आदि की स्थिति बनी रहती है ।

आयुर्वर्ण बलं स्वास्थ्यमुत्साहोपचयो प्रभा ।
ओजस्तेजोऽग्नयः प्राणाश्चोक्ता देहाग्निहेतुकाः ।।
शान्तेऽग्नौ म्रियते युक्ते चिरं जीवत्यनामयः ।
रोगी स्याद्विकृते मूलमग्निस्तस्मान्निरूच्यते ।।

च०चि० 15/1-4

यहाँ महर्षि चरक देहाग्नि की महत्ता बताते हुए
हते हैं कि जो अन्न शरीर, धातु, ओज, बल और वर्ण
दि का पोषक है उसमें अग्नि (जठराग्नि) ही प्रधान
रण है क्योंकि अपक्व आहार से रस आदि धातुओं की
त्ति उचित रूप से नहीं हो सकती ।। (च.सू. 5/5)

आहार को पचन कर रसादि धातुओं की पुष्टि
ने में उष्मा, वायु क्लेद स्नेह एवं काल की सम्यक्
ति महत्वपूर्ण कारण है और वह आहार लेने में प्रकृति,
रण, संयोग, राशि, देश, काल, उपयोग संस्था और
योक्ता इत्यादि आठ आहार-विधि विशेषायन को ध्यान
रखकर आहार की मात्रा लेनी चाहिए ।

हार की मात्रा जठराग्नि पर निर्भर है

आहारमात्रा पुनरग्निबलापेक्षिणी ।

(च. सू. 5/2)

प्रत्येक मनुष्य को नामसर आहार लेना चाहिए क्योंकि आहार की मात्रा एवं आहार का माप जठराग्नि के बल के आधार पर तथा आहार द्रव्य के गुरु-लघु गुण पर निर्भर है अर्थात् जठराग्नि जितनी ही प्रबल होती है उतना ही आहार ज्यादा ले सकते हैं और जठराग्नि जितना निर्बल होगी उतना ही आहार अल्प मात्रा में ले सकते हैं । चरक के टीकाकार श्री चक्रपाणि यहाँ कहते हैं कि हर मनुष्य में एक वक्त जठराग्नि के बल अनुसार आहार (खुराक) का जो नाप (माप) नहीं किया हो वह सर्वकाले (अन्य दूसरा समय) समान नहीं हो सकता क्योंकि (1) ऋतुओं के परिवर्तन और (2) उम्र (वय में) वृद्धि (बाल्यावस्था, युवावस्था और वृद्धावस्था की उम्र में) उलट के अन्तर होने से मनुष्य की जठराग्नि की वृद्धि या ह्रास (वृद्धि-क्षय) होता है यथा हेमंतऋतु में तथा युवावस्था में मनुष्य की अग्नि (जठराग्नि) बढ़ती है और वर्षाऋतु में तथा वृद्धावस्था में जठराग्नि मंद होती है । इस तरह अग्नि का बल वृद्धि-ह्रास (अल्प-ज्यादा) होने से आहार की मात्रा समान नहीं होती । जठराग्नि के वृद्धि-ह्रास के अनुसार कर बारंबार आहार की मात्रा में भी घटना या बढ़ना चाहिये ।

संतुलित आहार के परिप्रेक्ष्य में कैलोरी (ऊर्जा) का योगदान

स्वास्थ्य यापन के लिये व्यक्ति की प्रकृति, अग्नि, देश-कालादि को ध्यान में रखते हुए छह रस वाले आहार द्रव्य एवं उनमें से प्राप्त होने वाली ऊर्जा (केलोरी) का परस्पर संबंध देखना जरूरी होता है ।

आयुर्वेद में निर्दिष्ट सिद्धान्तों को देखते हुए किसी एक खाद्य पदार्थ से या आहार घटक से मिलने वाली ऊर्जा का जो निश्चित अंक आधुनिक दृष्टिकोण से दिया जाता है, उसकी यथार्थता अपर्याप्त दिखती है, उदाहरणार्थ एक ग्राम फेट से नौ किलो केलोरी (ऊर्जा की) की उपलब्धि वातादि तीनों प्रकृतियों के मनुष्य में समान रूप से सिद्धान्तः होना संभावित नहीं लगता । अतः फेट का निर्दिष्ट केलोरी मूल्य वस्तुतः औसत योगदान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहना उचित होना, जो कि मध्य शरीर वाले पित्त प्रकृति के मनुष्यों में सर्वाधिक रुप से मिलने की संभावना रहती है। वातिक और श्लेष्मिक प्रकृत्तिवाले मनुष्यों में एक ग्राम फेट से निश्चित रूप में उपरी निर्दिष्ट से अन्य स्तर की केलोरी मिलेगी जिनको संशोधन द्वारा प्रस्थापित करके आहार के सभी मूलभूत घटकों से तथा तदनुसार आहार के विविध प्रकार एवं व्यजनों से मिलने वाली ऊर्जा (कैलोरी) के निर्धारण करने से हमें निश्चित मात्रा में लिये गये आहार घटक से मिलने वाली कैलोरी की महत्तम-लघुत्तम मात्रा की प्राप्ति होगी, जिसके ज्ञान से स्वस्थवृत्त के दृष्टिकोण से वातादि प्रकृति वाले मनुष्यों में आहार घटकों की कैलोरी का समुचित चयन करके संतुलित आहार की व्यवस्था कर सकते हैं ।

योग से मनोनिग्रह विचार

योग से मन निर्मल एवं सम स्थिति में रहता है। मन सम स्थिति में रहने से अन्य ज्ञानेन्द्रिय एवं कर्मेन्द्रिय सम अवस्था में अपने-अपने कार्य करते हैं । समत्व होने से कभी प्रज्ञापराध नहीं करेंगे । अतः मन को समत्व-साम्य रखने के लिये योग उत्तम प्रक्रिया है ।

समत्वं योग उच्यते ।

इसलिये जिनका मन समत्व भाव में स्थित है उनके द्वारा इस जीवित अवस्था में ही सम्पूर्ण संसार जीत लिया गया, अर्थात वे जीते हुए ही संसार से मुक्त हैं क्योंकि सच्चिदानन्दघन परमात्मा निर्दोष और सम है, इससे वे सच्चिदानन्दघन परमात्मा में ही स्थित है ।

मनो निग्रह कैसे होता है

गीता में योग की किस तरह साधना करे - इस बात का उल्लेख करते हैं कि बाहर के विषय भोगी का चिंतन समाप्त कर, नेत्रों की दृष्टि को भृकुटि के बीच में स्थित करके तथा नासिका में विचरने वाले प्राण और अपान वायु को सम करके मन को केवल परमात्मा में लगाना बोहत्रही व प्राप्ति अवस्था है । इस अवस्था को समत्वं योग (परमात्मा के साथ मन बुद्धि को जोड़ना) कहा जाता है । यह अवस्था जब मनुष्य में सपूर्ण तृष्णा को भस्मीभूत (ज्ञानाग्नि द्वारा) किया हो और इस संसार के समस्त विषय भोगों में सत्ता, सुख, प्रीति और रमणीयता का न भाना ही अर्थात् उसको दृढ़ वैराग्य रूप शस्त्र से (असंगशस्त्रेण दृढेन छित्वा) काट दिया हो वही ब्रह्म स्थिति है । आगे गीता में कहा है कि -

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राच्य विमुह्यति ।
स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति ॥

गीता 2/72

इस बाह्य अवस्था वाले मनुष्य ही बह्म की प्राप्ति कर सकते हैं ।

योग दुःखों का नाश करनेवाला है ।

श्री कृष्ण अर्जुन को कहते हैं कि उपरोक्त योगविध अर्थात् आध्यात्मिक साधना जो बनाई गयी वह योग सब दुःखों को नाश करने वाला है योगी मनुष्य जो योग्य आहार और विहार करनेवाला तथा कर्मों में योग्य चेष्टा करनेवाला हो और यथायोग्य शयन करने वाला तथा ब्राह्म मुहूर्त में जागनेवाले को सिद्ध होता है । जैसे कि -

युक्ताहारविहारस्य युक्तवेष्टस्य कर्मसु ।
युक्तस्वप्नाबोधस्य योगो भवति दुःखहा ॥

गीता 6/17

आयुर्वेद में उपरोक्त प्रमाण की पुष्टि करते हुए महर्षि चरक कहते हैं यथा

नरो हिताहार विहार सेवी समीक्ष्यकारी विषयेष्वसक्तः ।
दाता समः सत्यपरः क्षमावानाप्तोपसेवी च भवत्यरोगः ॥

हिताहार एवं विहार करने से सुख देने वाली मति, सुख कारक वचन और सुखकारक कर्म होता है ।

च.शा. 2/46

अपने अधीन मन, शुद्ध पाप रहित बुद्धि जिनके पास है, और जो ज्ञान प्राप्त करने, तपस्या करने और योग सिद्धि करने में तत्पर रहते है उन्हें शारीरिक एवं मानसिक कोई भी रोग नहीं होते ।। च.शा. 2/47

मतिर्वचः कर्म सुखानुबन्धं विधेयं विशदा च बुद्धिः ।
ज्ञानं तपस्तत्परता च योगे यस्यास्ति तं नानुपतन्ति रोगाः ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हवन में प्रयुक्त औषधियों की वैज्ञानिकता

डा० शरद चन्द्र त्रिवेदी, एम०डी० (आयु०)

मानव शरीर ईश्वर की एक सर्वश्रेष्ठ कृति है जिसे स्वस्थ रखना प्रत्येक मनुष्य का प्रथम कर्त्तव्य एवं धर्म है । वर्तमान समय में जीवन की जटिलताएँ इतनी बढ़ती जा रही हैं कि मनुष्य विभिन्न शारीरिक एवं मानसिक रोगों से आक्रान्त हो रहा है । प्राचीन काल से भारत में विभिन्न चिकित्सा पद्धतियाँ प्रचलित हैं । जहाँ एक ओर ब्रह्मा ने ब्रह्मसंहिता का निर्माण कर स्वस्थ रहने के सूत्र निर्दिष्ट किये वहाँ भगवान धन्वन्तरि आयुर्वेद के जन्मदाता के रूप में प्रसिद्ध हुए ।

वैदिक काल से स्वस्थ, दीर्घायु हेतु औषधियों का प्रयोग रसायन एवं आरोग्य प्राप्ति हेतु किया जाता रहा है । उस समय व्यक्ति औषधियों से वार्ता कर सकता था तथा नियमानुसार उसका उपयोग कर धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष की प्राप्ति करता था । प्राचीन समय से ही मानव ईश्वर की प्राप्ति हेतु कर्मकाण्ड करता रहा है जिसमें मंत्रजप, वैदिक स्रोत पठन, हवन, यज्ञ, तर्पण, ब्राह्मण भोज आदि उस अनुष्ठान ही सफलता हेतु करता है ।

मंत्रों एवं स्रोत पाठ से शरीर की रक्षा होती है । तुलसीदास जी ने कहा है : " मंत्र महामनि विषय व्याल के । मेढत कठिन कु अंक भालके ।। तदुपरान्त हवन एवं यज्ञ किया जाता है, किसी भी शुभकार्य का प्रारम्भ हवन करके ही किया जाता है । इस हवन सामग्री में विभिन्न औषधियाँ प्रयुक्त होती हैं जैसे :- गुग्गुलु, चन्दन, अगर, तगर, पीली सरसों, जटामांसी, शतावरी, नागरमोथा, कालीमिर्च, इन्द्र जौ, सरल, देवदारु, राल, गुडूची, गोरखमुण्डी, गोक्षुर, मूसली, जायफल, कपूर, शैलेय, लौंग, एला, केशर, राई, दुर्वा, आंवला, मंजिष्ठा, हल्दी, शालपर्णी, हरड़, काकोली, निम्बपत्र, वचा, द्रोणपुष्पी, अपामार्ग, सहदेवी, अर्कमूल, त्रिकटु, सर्पगन्धा, घृत, शहद, गोदुग्ध, दही, गोमूत्र, गोमय, पलाश, अश्वत्थ, बिल्व आदि अनेक औषधियाँ हैं जो वैदिक काल से हवन सामग्री में प्रयुक्त होती रही हैं ।

इन औषधियों के वैज्ञानिक महत्व पर दृष्टि डालें तो हमें उपयोगी तथ्य दृष्टिगोचर होते हैं । जिससे द्रव्य में विशिष्ट सामर्थ्य शक्ति होती है उसे प्रभाव कहते हैं; इन औषधियों का भी हवन सामग्री में प्रयुक्त करने का मुख्य कारण यही है कि ये औषधियाँ अपने विशिष्ट प्रभाव के कारण अनेक रोग, शोक, भूतप्रेत बाधा, वशीकरण, औषधोयकर्म, अगदीयकर्म, रक्षोघ्न कर्म, मानसकर्म, भौतिक कर्म संपादित करती हैं ।

इनमें से कुछ औषधियों की काष्ठ अग्नि प्रज्वलित करने हेतु काम में ली जाती है जैसे - बिल्व, पलाश, अश्वत्थ, देवदारु, चन्दन, अर्क, निम्ब आदि । कुछ औषधियों के पत्र काम में लिये जाते हैं जैसे- आम के पत्र, जामुन, बिल्व, कपित्थ, बीजपूर के पत्र, मङ्गलकलश पर लगाये जाते हैं, द्वार पर बाँधे जाते हैं । वट, उदुम्बर, अश्वत्थ, पारीष, प्लक्ष की छाल समिधा हेतु काम में ली जाती है ।

अगदीय कर्म (विषघ्न प्रभाव) हेतु शिरीष, कालीमिर्च, मंजिष्ठा, खदिर आदि औषधियों का प्रयोग किया जाता है । रक्षोघ्न कर्म हेतु जटामांसी, गूगल, गोरखमुण्डी, अपामार्ग, कुशा, आंवला, दुर्वा, पंचामृत आदि औषधियों को हवन में प्रयुक्त किया जाता है । सर्वोषधि गण की औषधियों से स्नान किया जाता है । जैसे - कूठ, जटामासी, हरिद्रा, वचा, शैलेय, चन्दन, मुरा, कुर्चर, मुजा आदि ।

आयुर्वेद में औषधियाँ प्रभाव से कार्य करती हैं । इनकी उपयोगिता के बारे में हमारे ऋषि मुनि पूर्व से ही परिचित थे । इसी कारण वैदिक काल से इनका प्रयोग होता आया है । जन्म से मृत्यु पर्यन्त कोई भी संस्कार हो इनकी उपस्थिति हर समय पायी जाती है । हवन में इनको प्रयुक्त करने का मुख्य कारण वातावरण की शुद्धता है । इन औषधियों के साथ घृत आदि की धूम वायुमण्डल को संक्रमण से मुक्त करती है । पृथ्वी, जल, तेज, वायु एवं आकाश इन पंचमहाभूतों की शुद्धता होती है जिससे व्यक्ति को रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में मदद मिलती है ।

नवग्रह बाधा हो, या संक्रमण हो, भूत बाधा, वशीकरण हो या रोग मानसिक व शारीरिक हो इन औषधियों के आभ्यन्तर एवं बाह्य प्रयोग जैसे - हवन

प्रभारी, राज०आयु० फार्मेसी, माजरा, 61/1, विजयवाडी ठेह- का बालाजी, जयपुर - 302023 (राज०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

करना, धूपन करना, औषधि का पान करना, धारण करने मात्र से ही लाभ प्राप्त होता है । दीर्घायु हेतु पंचमहाभूत का प्रदूषण रहित होना आवश्यक है । तुलसीदास जी ने लिखा है –

"गगन समीर अनल जल धरनी ।
इनकी नाथ सहज जड़ करनी ॥"

ग्रहों, नक्षत्रों की शान्ति हेतु, शारीरिक मानसिक कष्ट निवारण हेतु, पर्यावरण शुद्धि हेतु, नवीन रोगों के प्रादुर्भाव को रोकने हेतु निम्न औषधियों को गृहवाटिका में लगायें एवं इनके वैज्ञानिक गुणों का लाभ उठावें ।

ग्रहों से संबंधित पौधे :-

1. रवि – अर्क (मदार), बिल्व मूल ।
2. सोम – पलाश, खिरनी मूल ।
3. मंगल – खदिर, खैरी, अनन्त मूल ।
4. बुध – अपामार्ग या विधारामूल ।
5. गुरु – केले की मूल या पीपल ।
6. शुक्र – शरपूंखा मूल या गूलर ।
7. शनि – बिच्छु बूटी मूल, शमी ।
8. राहु – सफेद चन्दन, दूब ।
9. केतु – असगन्ध मूल या कुशा ।

2. नक्षत्रों से संबंधित औषधीय पौधे :-

1. अश्विनी – कुचला
2. भरणी – आंवला
3. कृतिका – गूलर
4. रोहिणी – जामुन
5. मृगशिरा – खैर
6. आर्द्रा – शीशम
7. पुनर्वसु – बांस
8. पुष्य – पीपल
9. आश्लेषा – नागकेसर
10. मघा – बरगद
11. पूर्वा फाल्गुनी – पलाश
12. उत्तरा फाल्गुनी – पाकड़
13. हस्त – रीठा
14. चित्रा – बिल्व
15. स्वाति – अर्जुन
16. विशाखा – विकंकत (कटाई)
17. अनुराधा – बकुल
18. ज्येष्ठा – सरल (चीड़)
19. मूला – शाल
20. पूर्वाषाढ़ा – जलवेतस
21. उत्तराषाढ़ा – कटहल
22. कावण – अर्क
23. धनिष्ठा – शमी
24. शतविषा – कदम्ब
25. पूर्वाभाद्र – आम
26. उत्तराभाद्रपद – नीम
27. रेवती – महुआ

बैद्यनाथ
पंचसकार चूर्ण
पेट साफ कर पाचन शक्ति को बढ़ाता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अम्लपित्त : एक निदान चिकित्सापरक अध्ययन

डा० ईश शर्मा, एम.डी. (रोग विकृति वि०)

आजकल की अस्तव्यस्त जीवन शैली विभिन्न प्रकार की व्याधियों के लिये आमंत्रण-पत्र ही बन गयी है। न्यून से न्यूनतम होता जाता शारीरिक श्रम तथा अधिक से अधिकतम होता जाता मानसिक दबाव, प्रजापराध यानि कि 'जानते समझते हुये भी मिथ्या आहार-विहार'' आदि रोगों के प्रधानतम मूल सिद्ध हो रहे हैं। इन दोनों कारणों के सामूहिक प्रयासों से उत्पन्न होने वाले रोगों में अम्लपित्त का प्रमुख स्थान है। इस रोग का समाज में अत्यधिक प्रसार है; यही कारण है कि इस रोग की एक आधुनिक औषध को विश्वभर में सबसे अधिक बिकने वाली औषध का ओहदा प्राप्त है।

आयुर्वेद साहित्य में इस व्याधि पर पर्याप्त साहित्य सुलभ हैं। अम्लपित्त शब्द में 'अम्ल' गुण-वाचक तथा 'पित्त' द्रव्यवाचक शब्द हैं। इसे निम्न प्रकार से कहा गया है -.

अम्लं विदग्धं च तत् पित्तं अम्लपित्तम् ॥

यद्यपि पित्त प्राकृत रूपेण ही अम्ल होता है परंतु इस अम्लता की प्रतीति स्वस्थ में नहीं होकर व्याधि काल में ही होती है।

निदान :- आचार्यों ने न्यूनाधिक मतभेद के साथ अम्लपित्त रोग के प्रमुखतः निम्न निदान बताया है -

क) आहार :- विरुद्धाशन, रूक्ष, पर्युषित, अम्लरस तथा पैत्तिक भोजन, विदाही, अतिद्रव, अतिकटु, अतिगुरु स्निग्ध, तीक्ष्ण आहार, मद्यातिसेवन, अध्यशन आदि।

ख) विहार :- वेगधारण, अतिस्नान, आदि।

ग) मानसिक:-चिंता, भय, क्रोध, तनाव, दुःख आदि।

घ) निदानार्थकररोग :- अग्निमांद्य, अजीर्ण, ग्रहणी, अरोचक।

आधुनिक चिकित्साविज्ञान भी अन्य निदानों के साथ मानसिक कारणों को प्रमुखता देते हैं। चिंता, क्रोधादि के कारण एड्रेनिल का स्राव अधिक होता है, रक्तवाहिनियाँ संकुचित होती हैं, रक्तदाब बढ़ता है तथा आमाशयिक श्लेष्मकला के व्रणयुक्त (Ulcers) होने की आशंका बढ़ जाती है। मिथ्या आहार का भी प्रमुख स्थान स्वीकार्य है।

सम्प्राप्ति :- उपरोक्त निदानों से सभी दोष; विशेषतः पित्त प्रकुपित होकर मंदाग्नि उत्पन्न कर भुक्त अन्न को विदग्ध कर देते हैं जिससे विदग्ध अन्न शुक्त पाक को प्राप्त हो अम्ल हो जाता है। इससे उत्पन्न विदाहयुक्त अवस्था को अम्लपित्त कहते हैं।

अर्थात् अविपाक के कारण अन्न में शुक्रता उत्पन्न होती है और पित्त को विदग्ध कर देती है यानि प्राकृत पित्त एवं लवणाम्ल न बन कर ऐसी अम्लता उत्पन्न होती है जो कि अन्न पाचन में असमर्थ किन्तु दाहोत्पत्ति में समर्थ होती है।

संप्राप्ति श्रृंखला में माधव एवं भावमिश्र कहते हैं कि वर्षा ऋतु में संचित पित्त तथा पित्तप्रकोपक आहार-विहार से पित्त प्रकोप तथा अम्लोत्कर्ष होकर अम्लपित्त रोग की उत्पत्ति होती है। काश्यप इसी श्रृंखला में अग्निमांद्य को भी प्रमुख स्थान देते हैं। जहाँ माधव ने वर्षा ऋतु को प्रधानता दी है वहीं काश्यप ने आनूप देश को प्रधानता दी है। दोनों परिस्थितियाँ ही जल प्रधान हैं।

संप्राप्तिघटक :-

दोष	- पाचक पित्त।
दूष्य	- रस, मांस।
स्रोतस्	- अन्नवह।
स्रोतोदुष्टि	- संग, विमार्गगमन, अतिप्रवृत्ति।
उद्भव	- आमाशयोत्थ।
स्वरूप	- चिरकारी, साध्य।
अग्नि	- जठराग्नि-रसाग्नि द्वय मांद्य।
व्यक्ति	- मुख, गुद।
द्रव्य	- आम।

i) संख्या संप्राप्ति - काश्यप-3 (वातज, पैत्तिक, कफज) माधव, भावप्रकाश-4 (वातज, कफज, वातकफज, पित्तकफज)

ii) विधि संप्राप्ति - दोषानुसार :- उपरोक्त त्रिविध, चतुर्विध

मार्गानुसार :- द्विविध -ऊर्ध्वग, अधोग

लेक्चरर एवं विभागाध्यक्ष, रोग एवं विकृति विज्ञान विभाग, S.K.S.S. आयुर्वेद महाविद्यालय, सराभा, लुधियाना, पंजाब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

iii) विकल्प संप्राप्ति- पित्तगत अम्लत्वतीक्ष्णता एवं द्रवत्व की वृद्धि ।

iv) प्राधान्य संप्राप्ति - पित्त वृद्धतर, कफ वृद्ध ।

v) बलकाल संप्राप्ति- ऋतु - वर्षा ।

अहोरात्रगत - मध्याह्न, मध्यरात्रि ।

भोजन - पच्यमानावस्था ।

षड्विधक्रियाकालानुसार विमर्श

i) संचयावस्था में दूषित पित्त का संचय होने लगता है ।

ii) प्रकोपावस्था में खट्टी डकारें आती हैं तथा शीतल मधुर आहारविहार की आकांक्षा रहती है ।

iii) प्रसरावस्था में दाह, अम्लोद्गार, अजीर्ण होता है ।

iv) स्थानसंश्रयावस्था में आमाशय में शोथ संभव है ।

v) व्यक्तावस्था में व्याधि के विशिष्ट लक्षण प्रकट होते हैं ।

vi) भेदावस्था में असाध्यत्व (Perforated peptic ulcer) होता है ।

भेद - अम्लपित्त रोग के भेद माने गये हैं -

क) ऊर्ध्वग-वान्ति, दाह, कोठ, कण्डू, पीड़िका, ज्वर युक्त ।

ख) अधोग - तृष्णा, मूर्च्छा, मोह, हल्लास, अग्निमांद्य, अधःप्रवृत्ति युक्त ।

लक्षण :- आचार्य माधव ने अम्लपित्त के लक्षण इस प्रकार कहे हैं -

अविपाक क्लमोत्क्लेश तिक्ताम्लोद्गार गौरवैः ।
हृत्कंठदाहारूचिभिश्चाम्लपित्तं वेदत् भिषक् ॥

अर्थात् अविपाक, बिना परिश्रम के ही थकावट, मिचली, खट्टी डकारें, शरीर में भारीपन, हृत्कंठदाह, अरुचि आदि लक्षणों को देखकर चिकित्सक इसे "अम्लपित्त" रोग कहते हैं ।

आधुनिक मत :-

'अम्लपित्त' व्याधि से निम्न रोगों का साम्य किया जा सकता है -

1) Hyperchlorhydria
2) Hypochlorhydria
3) Gastrinoma (Zollinger Ellison Syndrome)
4) Peptic Ulcer
5) Gastritis

इन सभी रोगों में प्रायः Hcl को अत्यधिक उत्पत्ति तथा श्लेष्मकला की दुर्बलता से व्रणोत्पत्ति हो जाती है जिससे कि अत्यधिक पीड़ा, वमन, दाह आदि लक्षण तथा अल्परक्तस्राव लम्बे समय तक रहकर Anaemia कर सकता है ।

इस प्रकार की व्याधियों की उत्पत्ति में HELICOBACTER PYLORI नामक जीवाणु, आनुवांशिकी, धूम्रपान, रक्तवर्ग 'ओ' होना, मध्यम आयु का पुरूष आदि प्रमुख कारण हैं । इसके अतिरिक्त मद्य, पीड़ाहर औषधातिप्रयोग (NSAID OVERUSE) आदि भी रोगोत्पत्ति करते हैं । DIAGNOSIS : BARIUM MEAL X-RAY, ENDOSCOPY, Hb., STOOL EXAM. आदि ।

चिकित्सा :-

संक्षेपतः क्रियायोगो निदान परिवर्जनम् ।

आचार्य सुश्रुत ने निदान परिवर्जन को ही प्रमुख चिकित्सा माना है । अतः अम्लपित्तोत्पादक निदानों का सेवन रोके बिनां चिकित्सा संभव नहीं है ।

आचार्य काश्यप ने खिलस्थान - 16 में इस व्याधि की चिकित्सा का विशद वर्णन किया है तथा "वमन" को इस हेतु सर्वश्रेष्ठ माना है । इससे आमाशयाश्रयी कफ की उत्तम शांति होती है । वमनोपरांत लंघन, लघु भोजन, अन्य शामक योग लाभ करते हैं । वमनोपरांत विरेचन भी लाभप्रद है तथा दाहकारक दोष "पित्त" की शांति के लिये आवश्यक भी है ।

अम्लपित्त हर योगों में निम्न प्रमुख हैं :-

लीलाविलासरस, अम्लपित्तांतक लौह, त्रिफलामंडूर, सूतशेखर रस, पिप्पली चूर्ण, अविपत्तिकर चूर्ण, पथ्यादि चूर्ण, एलादि चूर्ण, हिंग्वादि चूर्ण, नारिकेल खंड, फलत्रिकादि क्वाथ, खंडाम्लकी अवलेह, वासा गुग्गुलु, खंडकूष्मांडावलेह, वासाघृत, तिक्तघृत, शतावरीघृत, सौभाग्यशुंठी मोदक आदि ।

इनका प्रयोग पित्तहर अनुपानों के साथ युक्ति पूर्वक कराना चाहिये तथा इनमें से 1-2 योगों का चयन रोगी विशेष की परीक्षा के बाद करना चाहिये ।

इस प्रकार आयुर्वेदीय सिद्धांतों तथा चिकित्सा का पालन करते हुए अम्लपित्त रोग पर विजय पायी जा सकती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फलों का औषधीय महत्व

सुभाष चन्द्र एवम् प्रेमनाथ शुक्ला

संसार में अनेक बहुमूल्य पदार्थ हैं जिनमें जीवन सर्वोपरि है । जीवन की सार्थकता स्वास्थ्य से है । इसके ठीक रहने से जीवन स्वर्ग और स्वास्थ्य ठीक न रहने पर नरक के सदृश्य दु:खदायी । इस अमूल्य रत्न को एक बार खोकर पाना अत्यन्त कठिन है । शायद इसलिए हमारे पूर्वज स्वास्थ्य के प्रति खान-पान का विशेष ध्यान रखते थे। मनुष्य को अपने स्वास्थ्य के प्रति सदैव पूर्णतया: सजग रहना चाहिए । प्राचीनकाल की अपेक्षा मानव जीवन अब अति सुलभ हो गया है । हमारा रहन-सहन, खान-पान का रूप पूर्णत: परिवर्तित हो चुका है । शायद यह पश्चिमी सभ्यता की देन है । हमारे लिए भोजन एवं अन्य पदार्थों का महत्व केवल स्वाद का स्रोत मात्र रह गया है । डिब्बा बन्द एवं रसायनों द्वारा संरक्षित खाद्य पदार्थों का उपयोग हमारे स्वास्थ्य एवं जीवन के लिए कितना घातक है इसका अनुमान लगाना कठिन है । इन संरक्षित खाद्य पदार्थों में प्रसंस्करण के पश्चात् भी अनेक पोषक तत्व अप घटित होकर अपने गुणों को खो देते हैं । परिणामस्वरूप इनके स्वाद में भी परिवर्तन आ जाता है । ऐसे प्रसंस्कृत खाद्यों को प्राकृतिक खाद्य की संज्ञा देना केवल लोगों को भ्रमित करना है । पाठकों को आगे दिए हुए उदाहरण से पूर्णतया स्पष्ट हो जायेगा ।

यह सर्वविदित है कि दूध का सेवन हमारे स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त उपयोगी है । इसे हम चाहे गरम, ठंडा या इसके अन्य उत्पादों को किसी भी रूप में प्रयोग करें, इसका स्वाद सदैव रुचिकर लगेगा क्योंकि यह पूर्णतया: प्राकृतिक है । इसके समानान्तर पूरे विश्व में प्रचलित पेय पदार्थ जैसी पेप्सी, कोका-कोला आदि जिनकी कि आज सर्वाधिक खपत है, केवल शीतलता के कारण ही लोग इसे पीते हैं जबकि सामान्यावस्था में मनुष्य इसकी एक घूँट भी नहीं पी सकता क्योंकि इसमें स्वाद एवं स्वास्थ्यवर्धता के लिए कुछ होता ही नहीं है । यदि हम इसे एक अच्छा पेय पदार्थ मानें तो इसे अपनी प्रत्येक अवस्था में स्वादपूर्ण होना चाहिए । मेरे व्यक्तिगत विचारों से विज्ञान की प्रगति का यह दुष्परिणाम है । हमें दूसरों का अनुयायी अवश्य होना चाहिए परन्तु आँख खोलकर, अच्छी वस्तुओं का न कि अन्धे होकर । वानस्पतिक संपदा के संदर्भ में भारतवर्ष एक अद्वितीय देश है । विभिन्न जलवायु एवं अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण यहाँ लगभग सभी अन्न, फल, मसाले आदि का उत्पादन होता है । हमें रसायनयुक्त एवं प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों का सेवन न करके प्रत्येक ऋतु में प्राप्त खाद्य पदार्थों का उपभोग करना चाहिए । फलों के संदर्भ में यहाँ लगभग 75% फल मौसम के अनुसार उपलब्ध रहते हैं । स्वास्थवर्धता के लिए हमें इनका पूर्ण उपयोग करना चाहिए । इसके अतिरिक्त इनमें असीमित औषधीय गुण भी विद्यमान हैं जिनके उपयोग से हम सैकड़ों रोगों से अपने स्वास्थ्य की रक्षा भी कर सकते हैं ।

आम

यह सम्पूर्ण विश्व का सर्वप्रिय फल है परन्तु इसका उत्पादन केवल उत्तर भारत तक ही सीमित है । यहीं से आम की देश-विदेश में आपूर्ति की जाती है । इस फल की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसे समाज के प्रत्येक स्तर का आदमी उपभोग कर सकता है जबकि अन्य फल जैसे- सेब, संतरा, अंगूर का उत्पादन अति सीमित होने के कारण महँगे होते हैं जोकि सामान्य तथा निम्न स्तर के लोगों की आर्थिक परिधि के बाहर हैं । इसकी लोकप्रियता का मुख्य कारण यही है । स्वास्थ्य की दृष्टि से भी यह गुणों में सर्वोत्तम है । इसका वानस्पतिक नाम मैंगीफिराइन्डिका है । इसकी सैकड़ों प्रजातियाँ हैं, परन्तु ख्याति दशहरी प्रजाति को ही प्राप्त है । पके आम का रासायनिक संघटन निम्नवत् है । इसमें पोषक तत्व की मात्रा 0.6, जल 87.4, वसा 0.4, खनिज पदार्थ 0.5, कार्बोहाइड्रेट 10, कैल्शियम 0.01, लौह तत्व 0.3 तथा फासफारस 0.02 प्रतिशत तक होता है । इसके अतिरिक्त लिकोटेनिक अम्ल 0.3 मि.ग्रा., विटामिन सी 13.0मि.ग्रा., विटामीन बी. 40 मि.ग्रा., राइबोफ्लेबिन 50 मि.ग्रा. प्रति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

100 ग्राम ।

औषधीय गुण एवं उपयोग

कच्चा आम स्वाद में खट्टा, वातपित्त पैदा करता है । इसके अधिक उपयोग से रक्त विकार, मंदाग्नि तथा नेत्र रोग उत्पन्न होते हैं । अतियोग्य जन्य विकारों के लिए शुन्ठी जल का सेवन अथवा जीरा तथा काला नमक के साथ सेवन करना चाहिए । भाव प्रकाश में भी इसके गुणों को वर्णित किया गया है ।

मन्दानलत्वं विषमज्वरंच रक्तामयं बद्धगुदोदरंच ।
आम्रातियोगे नयनामयं वा करोति तस्मादति तानि नाद्यात् ॥
. . . . . ।
शुण्ढयम्भसोऽनुपानं स्यादाम्राणामति भक्षणे ।
जीरकं वा प्रयोक्तव्यं सह सौवर्चलेन च ॥

(भा० प्र०)

पका आम मीठा, शक्तिदायक, मांसवर्धक तथा वातनाशक है । डाल का पका आम मलरोधक, शीतल, स्निग्ध, वायुनाशक, रक्तशोधक, रुचिकारक तथा प्रमेह नाशक है । आम के गुण खाने की विधियों पर निर्भर करते हैं । जैसे - चाकू से काटकर आम खाने से यह धातु एवं बलवृद्धि के साथ वात को समाप्त करता है जबकि आम को चूसकर खाने से वात पित्तनाशक, वीर्यवर्धक, शीतल, रुचिवर्धक तथा दस्तावर हो जाता है । इसका रस "तपेदिक" (टी०बी०) रोग के लिए शहद के साथ मिलाकर पीना चाहिए । इसके सेवन का सबसे गुण यह है कि यह भूख तथा प्यास दोनों को समाप्त करता है । आम की भुनी गिरी (गुठली) में नमक मिलाकर खाने से पेट साफ हो जाता है तथा गिरी को पानी में पीसकर नाभि पर लेप करने से दस्त रुक जाते हैं । रेशेदार आमों का उपयोग रतौंधी रोग में लाभकारी है । आम के निरन्तर प्रयोग से वृक्क की दुर्बलता समाप्त हो जाती है । पैरों की बिवाई फटने पर अमचूर या बिना नमक मसाले की चटनी का लेप लाभदायक है । लहसुन तथा आम का चूर्ण (समान मात्रा में) पीसकर बिच्छू के दंशित स्थान पर लगाना चाहिए । आम के नित्य सेवन से जलोदर रोग (पेट में जल एकत्रित होना) ठीक हो जाता है । निद्रा लाने के लिए रात को आम खाकर दूध पीना चाहिए । इसके पत्तों की राख जले हुए स्थान पर रखने से लाभ मिलता है । हैजा एवं प्लेग को रोकने के लिए भुने हुए आम का पन्ना प्रयोग करना चाहिए । आम के बौर (फूल) को शरीर में जलन के स्थान पर मलने पर आशातीत लाभ पहुँचाता है । पिसी आम की गिरी जल के साथ पिलाने से बच्चों की मिट्टी खाने की आदत से छुटकारा मिल जाता है । 100 ग्रा० आम का रस, 1 चम्मच अदरक का रस, लगभग 25 ग्रा० दूध तथा स्वादानुसार चीनी व मिश्री मिलाकर नित्य सेवन करने से मस्तिष्क की कमजोरी, पुराना सिर दर्द, आंखों की कमजोरी दूर होती है । इसके अतिरिक्त यह रक्तशोधक, यकृत व हृदय को बल प्रदान करता है । आम के पत्ते छाया में सुखाकर पीसकर हल्के कपड़े में छान लें । आधा चम्मच फंकी गर्म पानी से सेवन करने से पथरी में अत्यन्त लाभ पहुँचता है । सूखा रोग से पीड़ित बच्चों को पिसे हुए अमचूर में शहद मिलाकर चटाने से लाभ प्राप्त होता है ।

केला

केला भी एक लोकप्रिय एवं प्रचलित फल है । यह विश्व के लगभग 75% देशों में उगाया जाता है । भारतवर्ष में इसकी खेती मुख्य रूप से महाराष्ट्र, आसाम, बिहार तथा उत्तर प्रदेश में की जाती है । यह भारतवर्ष का प्राचीनतम फल है । इसका महत्व आदिकाल से है । पूजा, अर्चना, यज्ञ तथा शुभ कार्यों में इसके फल तथा पत्तों का प्रयोग किया जा रहा है । वनस्पति शास्त्र में इसे "मूसापराडिसयाका" लिन कहते हैं । संस्कृत में इसे मोचा, रम्भा आदि कहते हैं । इसके पके फल में निहित प्रोटीन, वसा और स्टार्च के कारण इसे कुछ आयुर्वेद शास्त्री दूध के समतुल्य मानते हैं । इसमें कुल पौष्टिक पदार्थों की मात्रा 95% तक होती है । अन्य रासायनिक तत्वों में कार्बोहाइड्रेट 36.4%, प्रोटीन 0.5 से 1.7% (जलवायु के अनुसार) स्टार्च 20.5%, विटामीन बी 150% तथा राइबोफ्लेविन 30 मि.ग्रा. प्रति 100 ग्रा० में होता है । इसके अतिरिक्त कैल्शियम, फासफोरस, सोडियम, पोटैशियम, लौह तत्व तथा मैगनीशियम पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है । इसमें टैनिन (कषाय द्रव्य) 1.75% तक होता है । केले में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निहित स्टार्च फल के पकने के साथ शर्करा में परिवर्तित होकर इसका प्रतिशत 15-20 तक पहुँच जाता है ।

औषधीय गुण एवं उपयोग

इसका फल प्रकृति में शीतल, स्वाद में कषाय एवं मधुर है । यह रक्तपित्त नाशक, कफवर्धक, वातघ्न तथा शक्तिदायक है । आयुर्वेद शास्त्रों में भी इनके गुणों का उल्लेख है ।

मधुरं पित्तनुत्तेषां तद्विदाडिम मुत्तमम् ।

(च०सू० 27)

मधुरं बृंहणं वृष्यं खर्जूरं गुरूशीतलम् ॥
क्षयेऽभिघाते दाहे च वातपित्ते च तद्वितम् ॥

(च०सू० 27)

सर्पदंश में 20 ग्रा० केले के पेड़ के छिलके का रस, 10 काली मिर्च के साथ पीसकर रोगी को पिलाने से आश्चर्यजनक लाभ मिलता है । केले के सूखे पत्ते को जलाकर उसका भस्म शहद में मिलाकर खाने से काली खांसी ठीक हो जाती है । श्वेत प्रदर के लिए दो केले का सेवन नित्य करना चाहिए । केले में लौह तत्व की उपस्थिति के कारण यह पाण्डु रोग में अत्यन्त लाभकारी है । रक्त तथा श्वेत प्रदर रोग के लिए केला, गौघृत, मिश्री को समान मात्रा (लगभग 250 ग्राम) में लेकर मथ लें तत्पश्चात् इसमें 18 ग्रा० दालचीनी, 11 ग्रा० लोध्र, 3 ग्रा० माजूफल, 6-6 ग्रा०, धाय का फूल तथा इलायची 8 ग्रा० सोंठ को पीसकर मिला दें । 24 ग्रा० की मात्रा में सुबह-शाम प्रयोग करना चाहिए । पके केले का दही के साथ सेवन करने से दस्त, पेचिश, संग्रहणी तथा मुँह के छाले ठीक हो जाते हैं । केले और दूध का सेवन गैस्ट्रिक तथा अल्सर में लाभप्रद है । तपेदिक (टी०बी०) जैसी बीमारी के लिए कच्चे केले का सेवन तथा ताजा केले के तने का रस 100 मि०ग्रा० की मात्रा के सेवन से यह रोग छूमंतर हो जाता है । दो केलों को 10 ग्रा० मिश्री या शहद के साथ खाने से हृदय का दर्द समाप्त हो जाता है । चर्म रोगों के लिए पके केले को नीबू के रस में पीसकर पेस्ट बनाकर लेप करना अत्यन्त लाभकारी है । पके केले में देशी खाण्ड (गुड़) तथा इलायची मिलाकर सेवन करने से अम्लपित्त में राहत मिलती है । मूत्र रोगों में केले को चीनी, शहद तथा आंवले के रस के साथ सेवन करने से यह व्याधि दूर हो जाती है ।

अमरूद

यह साधारणतया सम्पूर्ण भारतवर्ष में उगाया जाता है परन्तु पूर्वोत्तर भारत का यह सर्वसुलभ फल है । इसका उपयोग समाज के प्रत्येक वर्ग की आर्थिक परिधि में है । इसका वानस्पतिक नाम सीडियम गुआजावा है । हिन्दी में इसे अमरूद तथा संस्कृत में पेरूक, अमरूफल, आमरूद आदि कहते हैं । इसमें विटामिन "सी" की मात्रा नीबू से लगभग 10 गुना अधिक होती है । इसमें निहित विटामिन, अन्य खनिजों एवं रसायनों की मात्रा निम्नवत् है । प्रोटीन 0.9, आर्द्रता 81.7, कार्बोहाइड्रेट 11.2, सूत्र 5.2, वसा 0.3 तथा खजिन द्रव्य 0.7 प्रतिशत, विटामिन "बी" काम्प्लेक्स तथा "सी" 260 मि०ग्रा० प्रति 100 ग्रा० में होता है । यह कैल्शियम तथा फॉस्फोरस का अच्छा स्रोत है । पूरे फल में लौह तत्व की 80% मात्रा इसके बीजों में तथा 20% गूदे में निहित होती है । इसका फल गुणों में मूत्रल, मधुर, कषाय, आमशोधन, पित्तनाशक, शीतल तथा कफवातवर्धक है ।

विष्टम्भि सुस्वादु सरं समीर समीरणं क्षुत्क्षपणं सुगन्धि ।
गुणौघ विन्तं परिजित्य पित्तं मुदं मिम् दज्यति नामरूदन ॥

(सिद्धिभेषज मणिमाला)

औषधीय उपयोग

इसकी पत्तियों की राख एवं मधु खांसी के लिए लाभप्रदायक है तथा हरी पत्ती का रस उदरशूल, डायरिया, में उपयोगी होने के साथ-साथ भांग का नशा उतारता है । इसकी पत्तियों का काढ़ा दन्त रोग के लिए सर्वोत्तम है । अमरूद का नियमित सेवन आंतों का घाव तथा सूजन में प्रयोग करना चाहिए । इसके अतिरिक्त इसका सेवन मलेरिया तथा कब्ज के लिए दूध के साथ करना चाहिए । दिन में अमरूद का सेवन रक्तशोधन, त्वचा रोग तथा कब्ज को दूर करता है । इसके फलों की जैली, जैम, शरबत तथा आइसक्रीम बनाने में भी प्रयोग किया जाता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेब

यह पश्चिमोत्तर भारत, कश्मीर राज्य में सर्वाधिक पाया जाता है क्योंकि वहाँ की जलवायु इसकी सफल खेती के लिए अत्यन्त उपयुक्त है । इसका वानस्पतिक नाम मैलसप्युमिला मिल है । संस्कृत में इसे सितिम्बिका कहते हैं । इसके अन्य नाम अम्भःफल, महत्सिञ्चित का फल, सितिकाः फल, मुष्टिप्रमाण, बदर, सीव फल और सेव आदि हैं । स्वास्थ्यवर्धता की दृष्टि से इसका महत्व सर्वविदित है ।

रासायनिक संगठन

सेव के फल में अम्ल की मात्रा 0.63%, रिड्युसिंग शर्करा 10.09%, सूत्र 1.60%, कषाय द्रव्य 0.13%, नानरिड्युसिंग शर्करा 2.10%, भस्म 0.34% तथा प्रोटीन 0. 38% तथा खनिज तत्वों में अम्ल 7.52, कैल्शियम 9.78, लौह 1.34, ऐसकार्बिक अम्ल 7.52 तथा फॉसफोरस 12. 02 मि०ग्रा० प्रति 100 ग्रा० में पाये जाते हैं ।

औषधीय गुण एवं उपयोग

यह प्रकृति में ठंडा, चिकना, झिराने वाला, स्वादिष्ट एवं मूत्रकारी है । इसके अतिरिक्त यह मल, ज्वर, विष आदि को समाप्त करता है । भारी होने के कारण यह वीर्यवर्धक एवं शरीर की पुष्टि करता है । फॉसफोरस शरीर में स्नायु एवं मस्तक के लिए अत्यन्त आवश्यक एवं उपयोगी तत्व है । सर्वेक्षणों से ज्ञात हुआ है कि सभी फलों से सेब में फॉसफोरस की मात्रा सर्वाधिक होती है । इसलिए यह अनेक रोगों जैसे- उन्माद, सिरदर्द, बेहोशी, स्मरणशक्ति की क्षीणता, चिड़चिड़ापन आदि में अत्यन्त प्रभावी है । सेब को कदाचित काटकर नहीं खाना चाहिए और यथा-सम्भव भोजन से पूर्व खाना चाहिए । पथरी जैसे रोगों के लिए यह सर्वोत्तम औषधि है । इसके निदान के लिए 4-5 सेबों का सेवन नियमित रूप से 3-4 सप्ताह तक करना चाहिए । यकृत के रोग जैसे पीलिया आदि के लिए भोजन से पहले दो सेबों का उपयोग अमृततुल्य है । गठिया रोग जिनका कारण है मैलिक एसिड का जोड़ों में जम जाना में सेब का सेवन अद्वितीय है । ज्वर रोगों में सेब के रस का सेवन आशातीत लाभ पहुँचाता है । इससे प्यास, थकान, जलन, बेचैनी तथा ज्वर की गर्मी समाप्त हो जाती है । सेब की चाय एक रोगनाशक पेय है । इसका उपयोग यकृत रोगों, ज्वर आदि में करना चाहिए । इसे निम्न विधि द्वारा तैयार किया जा सकता है - दो छिलके सहित सेबों को महीन टुकड़ों में काटकर उसमें एक नीबू के 3-4 टुकड़े डाल दें । इसे 500 एम०एल० खौलते जल में डाल दें, 10 मिनट पश्चात् इसे उतारकर ठंडाकर छान लें तथा स्वादानुसार चीनी या मिश्री मिलाकर प्रयोग करें । उल्टी (वमन) रोकने के लिए सेब के रस में थोड़ा नमक मिलाकर पीना चाहिए । सेब को नमक के साथ खाने से सिरदर्द समाप्त हो जाता है । पके सेब का रस मिश्री मिलाकर पीने से पुरानी से पुरानी खांसी में आराम मिलता है । उदर कृमि नाश के लिए सेब का नियमित सेवन रात में सोने से पूर्व करना चाहिए । सेब का मुरब्बा खाने से अच्छी नींद आती है । खट्टे सेब का रस मस्सों पर नियमित लगाने से मस्से जड़ से नष्ट हो जाते हैं । रात्रि में सोने से पहले सेब का सेवन बहुमूत्र को समाप्त करता है । पके एवं छिले सेब में अधिकाधिक मात्रा में लौंग चुभोकर एक सप्ताह के लिए चीनी मिट्टी के बर्तन में रख दें, तदोपरान्त सेब से समस्त लौंगों को निकालकर अलग रख दें । चार लौंग की मात्रा को प्रति दिन सुबह दूध के साथ चबाकर खाने से स्तम्भन शक्ति एवं पुरुषत्व में वृद्धि होती है । श्वेत कुष्ठ के लिए वाकुची के बीजों को सेब के रस में तीन बार सुखा लें तत्पश्चात् इसमें थोड़ा सफेद जीरा मिलाकर चूर्ण तैयार कर लें । इस चूर्ण का निरन्तर सेवन सफेद कुष्ठ रोग के लिए अद्वितीय है । परन्तु यह प्रयोग रोगी की दशा पर निर्भर करता है । प्राचीन ग्रन्थों में भी इसके गुणों का वर्णन मिलता है ।

मुष्टि प्रमाणं बदरं सेबं सिम्बितिका फलम् ।
सेबं समीर पित्तघ्नं बृंहणं कफकृद गुरू ॥
रसे पाके च मधुरं शिशिरं रूचि शुक्रकृत ।

(भाव प्रकाश)

कषाय, मधुरं, शीतं, ग्राहि सिम्बितिका फलम्

(चरक सूत्र 27)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कषायं स्वादु संग्राहि शीतं सिंचित का फलम्
(सुश्रुत सू० 47)

पपीता

फलों की श्रेणी में इसका महत्वपूर्ण स्थान है । साधारण फल होते हुए भी यह स्वास्थ्य के लिए अति उत्तम है । वनस्पति शास्त्र में इसे कैरिका पपाया लिन० के नाम से जाना जाता है । हिन्दी में इसे पपीता, संस्कृत में वातकुम्भ तथा प्रियव्रत शर्मकृत में इसे एरण्डकर्कटी नामित किया गया है । साधारणतया यह सम्पूर्ण भारत में फैला है परन्तु इसकी व्यावसायिक खेती उत्तर भारत में अधिकतम होती है । इसके फल के रासायनिक संघटन में नमी 89%, प्रोटीन 0.5%, कार्बोहाइड्रेट 9.5% तथा अल्प मात्रा में लौह कैल्शियम, फॉसफोरस तथा वसा होती है । अन्य रसायनों में राइबोफ्लेविन तथा निकोटेनिक एसिड मुख्य हैं । विटामिनों में विटामिन ''ए'' बी 2 तथा ''सी'' भी पाये जाते हैं ।

औषधीय गुण एवं उपयोग

इसका कच्चा फल ग्राही उष्णवीर्य तथा कफ वातनाशक है जबकि पके फल शीत, मधुर तथा पित्त को समाप्त करते हैं । निघण्टुरत्नाकर के अनुसार इसके गुण निम्नवत् हैं ।

''वातकुम्भ फलं ग्राहि, कफवात प्रकोपणम् ।
तत् पक्वं मधुरं रूच्यं पित्तनाशं करं गुरू ।

पका पपीता-पित्तनाशक, उन्मादहारी, भोजन को पचाने वाला, क्षुधावर्धक, वीर्यवर्धक तथा पथरीनाशक है । इसके रस का सेवन सिरदर्द, अजीर्ण, अनिद्रा को समाप्त करता है । विटामिन ''ए'' और ''सी'' की उपस्थिति के कारण यह गुर्दे, नेत्र विकृत, मूत्राशय, लकवा, रक्तभार में गुणकारी है । कच्चा पपीता उबालकर खाने से पुराने दस्त समाप्त हो जाते हैं । इसका दूध यकृत, प्लीहा तथा दांतों के दर्द में उपयोगी है । इसके पिंसे बीजों का जल के साथ सेवन उदरकृमि को नष्ट करता है ।

बेल

इसकी गणना भारत के प्रमुख फलों में की जाती है । इसका मुख्य कारण इसमें निहित औषधीय गुण है । सम्पूर्ण भारत में लगभग सर्वत्र पाया जाता है । पौराणिक दृष्टि से भी यह महत्वपूर्ण वृक्ष है । वेद एवं पुराणों में भी इसकी उत्पत्ति एवं महिमा का वर्णन मिलता है । भगवान विष्णु ने इसे अनेक नामों जैसे - श्रीफल, शाण्डिल्य, शिव, बिल्व, त्रिनयन एवं श्राददेवक आदि नामों से सम्बोधित किया है । यह वृक्ष पूज्यनीय है । भगवान शिव की पूजा में विशेषतया इसके सर्वांगों का ही प्रयोग किया जाता है । पका फल मीठा एवं स्वादिष्ट होने के साथ अनेक रोगों से हमारे शरीर की रक्षा करता है एवं कच्चा फल केवल औषधि उपयोग में प्रयुक्त होता है । वनस्पति शास्त्र में इसे एगिल मारमिलास लिन० कोर कहते हैं । इसके पेड़ में अनेक रासायनिक तत्व जैसे- एककलाइड, स्टिलॉयड तथा फलों में आर्द्रता, वसा, खनिज, लवण, प्रोटीन एवं सर्वाधिक मात्रा में कार्बोहाइड्रेट (31.8%) पाये जाते हैं । जबकि इसके गूदे में राइबोफ्लेविन् नामक रसायन की मात्रा सर्वाधिक होती है । इसके बीजों में तेल की प्रतिशत मात्रा 32 तथा प्रोटीन की उच्चतम मात्रा 62% तक होती है । इसका कच्चा फल डायरिया तथा पेचिश में उपयोगी है । इसका कारण है फल में लसलसे पदार्थ (एक प्रकार का गोंद) का उपस्थित होना है ।

औषधीय गुण एवं उपयोग

इसका पका फल गुरू, विष्टंभी तथा कोष्ठ वातवर्धक होता है जबकि कच्चा फल उष्ण, तीक्ष्ण, दीपन, संग्राही तथा कफ वातनाशक होता है । सूंखा हुआ गूदा मलरोधक, ज्वरनाशक, अतिसार, शूल, वात एवं कफनाशक है । बेल के गूदे के चूर्ण का सेवन तीक्ष्ण रोगों में अत्यन्त प्रभावशाली होता है । यह टाइफाइड ज्वर के लिए भी उपयोगी है । यह ज्वर से उत्पन्न शरीर के अधिक तापमान को तुरन्त कम कर देता है । गूदे को किसी मीठे तेल में एक सप्ताह तक पड़ा रहने दें तदोपरान्त इस तेल की मालिश स्नान से पूर्व करने से सम्पूर्ण शरीर का दाह समाप्त हो जाता है । पुराने घाव पर इसकी पत्ती (बिना जल के) पीसकर बाँधनी चाहिए । महर्षि चरक के अनुसार इसकी-लकड़ी की चारपाई का उपयोग करना चाहिए । इसकी जड़ का क्वाथ (काढ़ा) अर्श रोग में अत्यन्त लाभप्रद है । इस क्वाथ को शहद के साथ पीने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से समस्त वमन मिट जाते हैं । बहरेपन के लिए गूदे को गोमूत्र में पीसकर तेल में पकाकर प्राप्त तेल को कान में डालना चाहिए । गुड़ के साथ इसका सेवन विबन्ध, रक्त अतिसार तथा कृमि रोग नष्ट करता है । इसकी पत्तियों का रस बहुमूत्रता को समाप्त करता है ।

श्रीफल स्तुवरस्तिक्तो ग्राही, रूक्षोग्नि पित्तकृत् ।
वातश्लेष्म हरो बल्यो, लघुरूष्णाश्रय पाचनः ॥

(भाव प्रकाश, 13)

उपरोक्त गुणों के अतिरिक्त बेल के फल में असीमित औषधीय गुण विद्यमान हैं । इसके समस्त उपयोगों का वर्णन करना सम्भव नहीं है ।

अंगूर

यह उत्तरी भारत में सर्वाधिक पाया जाता है । स्वास्थ्य के लिए अति उत्तम फल है । इसका वानस्पतिक नाम बिटिसविनीफेरा लिन० है । इसे मृदीका, द्राक्षा या अंगूर के नाम से जाना जाता है । इसमें मौजूद रासायनिक संघटन निम्नवत् हैं । इसके फलों में विटामीन "ए" "बी" "सी" तथा अन्य खनिज लवण विद्यमान रहते हैं । इसमें निहित शर्करा के कारण ही स्वाद एवं पौष्टिकता में वृद्धि करती है ।

इसका पका फल गुणों में मधुर, स्निग्ध, ज्वर को हरने वाला, शीतवीर्य, वातपित्तनाशक, पौष्टिक, खून पैदा करने वाला है । इसके अतिरिक्त प्यास, ज्वर, रक्तपित्त, कमलवाय, मूत्रकृच्छ्र, क्षतक्षय, मोहदाह आदि रोगों में उपयोगी है । आयुर्वेद शास्त्रों में भी इनके गुणों का वर्णन मिलता है ।

तृष्णा दाह ज्वर श्वास रक्त पित्त क्षत क्ष्यान् ।
वात पित्त मुदावर्त स्वर भेदं मदात्ययम् ॥
तिक्तास्य तामास्य शोषं कासं चाशु व्यपोहति ।
मद्वीका बृंहणी वृष्या मधुरा स्निग्ध शीतला ॥

(चरक सूक्ति 27)

फल की अपेक्षा इसका रस अत्यधिक महत्वपूर्ण एवं स्वास्थ्यवर्धक होता है । इतना ही नहीं, इसका नियमित सेबन मासिक धर्म के कारण उत्पन्न समस्त विकारों को समाप्त कर देता है । इसके अतिरिक्त बच्चों का दांत निकलना, सिरदर्द, क्षय, उदर-शूल आदि में भी लाभदायक है । आजकल सबसे अधिक उपयोग उच्चकोटि की मदिरा बनाने में किया जाता है । सर्वसुलभ एवं सदैव उपलब्ध न होने के कारण इसका महत्व उतना अधिक नहीं है जितना कि अन्य साधारण फलों का है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वसुलभ खीरा (त्रपुस)

डा० इन्द्रमोहन झा 'सच्चन', पी०एच०डी०(आयुर्वेद)

यह एक ऐसा बरसाती फल है जो हमारे जीवन में नित्य उपयोगी फल के साथ-साथ भोजन में शाक एवं सलाद के रूप में सेवन किया जाता है और यह भारत में प्रायः सर्वत्र उत्पन्न होती है । खीरा को संस्कृत भाषा में त्रपुस, कष्टकिफल, सुधावास तथा सुशीतल, हिन्दी में खीरा, बालम खीरा, गुजराती में तांसली, तासली, बंगला में क्षीरा, शशा, कर्णाटकी में तसेयकाडि, तेलुगु में दोजकइअ, दोजकाई, तमिल में महेबेहरी, मुल्लुवेल्लेरी, फारसी में शियार खुर्द, खयार, बावरङ्ग, अंग्रेजी में Cucumber (क्युकम्बर) तथा लैटिन में Cucumis sativus कहते हैं । इसका फल बेलनाकार, पहले दृढ़ रोमों अथवा तीक्ष्णाग्र अवयवों से ढके हुए और तैयार होने पर खुरदुरे होते हैं ।

आधुनिक पोषण-शास्त्र की दृष्टि से खीरे में 83 प्रतिशत अंश खाद्य है तथा जलीय अंश 96.3 प्रतिशत, प्रति 100 ग्राम प्रोटीन 0.4 ग्राम, वसा (चिकनाई) 0.1 ग्राम, खजिन द्रव्य 0.3 ग्राम, कार्बोहाइड्रेट 2.5 ग्राम, कैल्सियम 10 एम.जी., फास्फोरस 25 एम.जी. लौह 1.5 एम.जी., कैरोटीन 0, थियामिन 0,03 एम.जी., नियासीन 0. 2 एम.जी. तथा विटामीन सी 7 एम.जी. होते हैं । इसके अतिरिक्त प्रति 100 ग्राम में 11 एम.जी. मैग्नेसियम, 10. 2 एम.जी. सोडियम, 50 एम.जी. पोटाशियम, 0.70 एम. जी. ताँबा, 16 एम.जी. सल्फर (गंधक), 15 एम.जी. क्लोरिन होते हैं । धन्वन्तरिनिघण्टुकार के मत से यह वमन को नष्ट करने वाला तथा मूत्र और बस्ति विशोधक है । भाव प्रकाश निघण्टु के प्रणेता के अनुसार छोटा नीला और नवीन खीरा मधुर, शीतल और तृषा, दाह (जलन), ग्लानि, पित्त तथा रक्तपित्त नाशक है; पका खीरा खट्टा, गरम, पित्त कारक और कफ तथा वातनाशक है तथा खीरे का बीज मूत्रकारक, शीतल, रूखा और पित्त तथा मूत्रकृच्छ्र नाशक है । चरक संहिता सूत्रस्थान अन्नपानविधमध्यायः 27/111 के अनुसार खीरा मधुर, भारी, विष्टम्भी, शीतल स्वादिष्ट (मुखप्रिय), रूखा तथा अतिमूत्रल (मूत्र लानेवाला) है । लगभग चरक संहिता के समान ही सुश्रुत संहिता (सू०अ०46) योगरत्नाकर, अष्टांग संग्रह (सू०अ० 7) आदि ग्रंथों में भी उल्लेख किया गया है ।

आयुर्वेद में वर्णित तथ्यों के आलोक में खीरा में विशिष्ट निम्न दो गुण हैं -

1. मूत्रोत्पादक (Diuretics)
2. मूत्रबस्तिविशोधकः (Urinary tract disinfectant and anti urolithiasis)

इन दो गुणों के आधार पर मूत्रवहसंस्थान के निम्न विकारों में खीरा उपयोगी है -

1. मूत्रकृच्छ्र (Dysuria कठिन अथवा पीड़ाजनक मूत्रोत्सर्ग) या कहें कि मूत्रावरोध (Retension of urine) मूत्राश्मरी (Urinary stone - मूत्रपथ की पथरी)
2. मूत्रवहस्रोतस् की शोथजन्य विकृतियाँ, यथा-वृक्क शोथ (Nephritis - वृक्क का प्रदाह), मूत्रबस्ति एवं नलिकाशोथ (Urinanary bladder & urethra inflammation)
3. पौरुष ग्रंथि (Prostate) शोथ एवं वृद्धि ।
4. रक्तमूत्र विषाक्तता (Uraemia)।,
5. मूत्रदाह आदि ।

मूत्रवहसंस्थान के उपर्युक्त विकारों के अतिरिक्त खीरा उदर विकार यथा दाह, अफरा (आध्मान - Tympanites आन्त्र में अथवा उदरावरणी गुहा में वायु के संचय के कारण उदर का फूलना); कब्ज (Constipation), यकृत-विकार, पैत्तिक विकार, पाण्डु; कामला, मधुमेह रोगादि में भी पथ्य एवं औषध रूप में सेवन करने योग्य हैं ।

यूनानी के अनुसार खीरा एक बेलदार दरख्त का बालिश्तभर का फल है जो खून की गर्मी, पेट की आंतो की सोजिश को तस्कीन देता है, प्यास रफा करता हैं । गर्म दिमाग की बीमारियों और बेखाबी व गर्मी के बुखारों की नाफे है और भुलभुलाया हुआ पानी पित्त सफरावी व बलगमी को मोफीद है और गर्मी के दर्द सर में इसको तराश कर सूंघना मुफीद है ।

खीरे के बीज - पेशाब लाये और पेशाब की जलन, चिनक, वरम तहाल की नाफे है और गर्मी के बुखारों को मुफीद है ।

उपर्युक्त विवेचित तथ्यों से सुस्पष्ट है कि खीरा का सेवन स्वास्थ्योपयोगी है ।

सदस्यः भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद्, बटेश्वर भवन पो०-राँटी, मधुबनी - 847 211 (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गर्भपात अर्थात् भ्रूण हत्या

डा० चैतन्य स्वरूप अग्रवाल

आधुनिक स्वच्छन्द जीवन में मौज-मस्ती भरी दिनचर्या के साथ स्वतंत्र विचारों के समर्थक माँ-बाप के लाडलों-लाडलियों के आपस में मेल-जोल, गप्प-शप्प, प्यार-व्यार, आकर्षण, स्पर्श और शारीरिक यौन संबंध एक आम बात हो गयी है । यौन क्रियाओं को हवा देने में "को-एजुकेशन" का भारी प्रचलन और ज्ञान मन्दिरों में ज्ञान प्राप्त करने वाले लाडले-लाडलियों का देर-सबेर आना, पारिवारिक सदस्यों व माता-पिता से अनमना सा मिलना - ये सभी बातें, लक्षण और प्रक्रियाएं आधुनिक युग की ऐसी ही देन है । इसके प्रचार-प्रसार में टी०वी० चैनलों पर खुले परिधानों में युवक युवतियों के मिलन की दर्शाना भी आहुति का काम कर रहा है ।

अनब्याही लड़कियों को जब अपनी भूल का अहसास होता है तब तक बहुत देर हो चुकी होती है और वह फिर गर्भ-पात की ओर मुखातिब हो डाक्टरों के चक्कर लगाती हैं और ऐसे ही सिलसिला शुरू होता है गर्भपात अर्थात भ्रूण हत्या का । चूंकि गर्भपात में जीव हत्या होती है इसलिए भारत में सन् 1971 तक गर्भपात करना व कराना कानूनन अपराध माना जाता था । इंडियन पैनिलकोड की धारा 312 बी के अनुसार गर्भपात कराने वाला, कराने को उकसाने वाला और गर्भपात करने वाला तीनों ही के लिए 3 वर्ष या आजीवन कारावास तक की सजा का प्रावधान था ।

भारत सरकार ने सन् 1971 में एक नया कानून "दी मेडिकल टर्मिनेशन ऑफ प्रेगनेन्सी एक्ट 1971 बनाकर तो गर्भपात करने व कराने की प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष एक तरह से कानूनी मान्यता ही दे दी । दो डाक्टरों की सलाह पर गर्भवती को शारीरिक अथवा मानसिक कष्ट होने के भय से गर्भपात करने तथा गर्भस्थ शिशु के विकलांग, अपंग होने के संदेह में तीन डाक्टरों के परामर्श से कानूनी गर्भपात किया जा सकता है ।

इस एक्ट की आड़ में मौज-मस्ती आधुनिकता की धारा में बह जाने वाली युवतियां गर्भपात कराकर अपने को फिर पूर्ववत सती सावत्री कुंवारी युवती के रूप में अपने माता-पिता एवं समाज में अपने को स्थापित करने लगी हैं। डाक्टरों को गर्भपात करने में अत्यधिक आर्थिक आमद होने लगी । दो और तीन डाक्टर मिलकर किसी भी स्थिति में गर्भपात कराने के लिए कानूनन सक्षम हैं ही । अब तो अनचाहे गर्भ से गर्भपात कराने के लिए प्रचारित क्लीनिक्स भी खुल गये हैं - जिन में खुलकर गर्भपात भ्रूण हत्या होती है । जनसंख्या कम करने के आवरण में ऐसी भ्रूण हत्याएं क्षम्य "अपराध" हैं ।

गर्भपात को एक साधारण क्रिया नहीं माना जाना चाहिए यह तो जीते-जागते निर्दोष प्राणी की सुनियोजित नृशंस हत्या है क्योंकि गर्भ में जीव का अस्तित्व तो गर्भाधान "क्षण" से ही हो जाता है । नौ-मास के बाद जब बच्चा गर्भ से बाहर आता है तो वह नौ-मास का होता है किन्तु उसे उसी वक्त का जन्म मानकर उस दिन से उसकी उम्र भी रखी जाती है । जबकि गर्भस्थ शिशु गर्भाशय से बाहर नौ-मास का होकर ही आता है ऐसे बच्चे को गर्भ-पात द्वारा निकाल दिया जाना सरासर एक जीव की भ्रूण हत्या होती है ।

एबोर्शन (गर्भपात) की विभिन्न विधियों में चार विधि है जिनमें सर्वाधिक प्रचालित सरल और 2 मास के गर्भावस्था तक के लिए सुरक्षित विधि चूषण पद्धति (सक्शन एस्प्रेशन) है ।

अनचाहा गर्भपात इसी विधि से साफ किया जाता है । यह पूर्णतया भ्रूण हत्या है ।

आधुनिकता के "अंधे, ये धन्धे" निश्चय ही गर्भपात कराने वाली स्त्री के लिए भी कम खतरनाक नहीं होते - गर्भपात कराने पर तात्कालिक जटिलता तो है, हैमरेज (रक्तस्राव) इन्फेक्शन (संक्रमण), गर्भाशय का क्षतिग्रस्त होना, गर्भाशय में छेद होना, अँतड़ियों में सुराख होना आदि के अलावा दीर्घकालीन जटिलताएं भी होती हैं । अतः गर्भपात कराने वाली स्त्री को सदैव खतरों में जीना पड़ता है ।

30-ए, रामगंज बाजार, जयपुर - 302003 (राजस्थान) फोन :- 2650088, 2561715

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रद्धेय मदर टेरेसा ने काहिरा में 1994 में हुई वर्ल्ड पॉप्यूलेशन कान्फ्रेंस में कहा था - "गर्भपात आज विश्व शांति को नष्ट करने का सबसे बड़ा कारण है, जिसने जीवन दिया केवल एक उसी प्रभु को जीवन लेने का अधिकार है और किसी को भ्रूण हत्या कर जीवन लेने का अधिकार नहीं है चाहे वह माता-पिता, डाक्टर संस्था या सम्मेलन हो" । मदर टेरेसा ने अमरीका में बढ़ती हुई हिंसा का संबंध भी भ्रूण-हत्या से जोड़ा था । उनका कहना है "चाहे अनचाहे गर्भ हो चाहे अन ब्याही मां हो, चाहे सामाजिक प्रतिष्ठा का डर हो और चाहे मौज शौक में किए गये अविवाहिता का पर पुरुष से किया गये संगम का फल हो जब भ्रूण हत्या की जा सकती है तो हम दूसरों से कैसे कह सकते हैं कि वे एक दूसरे की हत्या न करें" ।

भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने एक निर्णय सुनाते हुए वेदों का उदाहरण देते हुए कहा है कि किसी का जीवन लेना केवल अपराध ही नहीं पाप है..... ।

यत्पांप ब्रह्महत्याया द्विगुणं गर्भपातने ।
प्रायश्चितं न तस्यास्ति तस्यास्त्यागो विधीयते ॥

हत्या से जो पाप लगता है, उससे दुगुना पाप गर्भ-पात करने से लगता है, गर्भपात जैसे पाप का प्रायश्चित भी नहीं है ।

एक निश्चित सत्य है कि गर्भपात भ्रूण-हत्या का महा पाप है, एक भारी भूल और पाशविकता है ।

बैद्यनाथ

प्राणदा

प्राणदा से हर साल मलेरिया के लाखों रोगी प्राणदान पाते हैं । इसलिए इसका नाम प्राणदा बिल्कुल सही है । हिन्दुस्तान के गांव-गांव और कस्बे-कस्बे में यह दवा मशहूर है । इकतरा, तिजारी, चौथिया, फसली, जूड़ी-पारी का बुखार, बरबट और तिल्ली मलेरिया के ही भेद हैं । मलेरिया बुखार की हर हालत में यह तुरंत फायदा पहुंचाती है । बुखार के बाद भी दवा पीने से बुखार के फिर लौटने का भय नहीं रहता ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रवाहिका (DYSENTERY) रोग - एक विवेचन

* डॉ०. मन मोहन शर्मा, एम.डी. (स्कॉलर)
** प्रो० लोकनाथ शर्मा
*** डॉ० अश्विनी कुमार शर्मा

प्रस्तावना

मिथ्या आहार-विहार के कारण, विशेष रूप से वर्तमान आधुनिक युग में प्रचलित फास्टफूड संस्कृति में लोगों द्वारा अहित आहार एवं निरन्तर दूषित होते जा रहे जल के सेवन के कारण मनुष्यों के पाचन संस्थान पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा है जिसके कारण पाचन संस्थान से सम्बन्धित कई प्रकार के रोग सामान्य रूप से देखने को मिल रहे हैं जैसे - अजीर्ण, अम्लपित्त (हायपरएसिडिटी), गैस बनना, कब्ज, अतिसार, आँव युक्त अतिसार (प्रवाहिका या पेचिश) आदि ।

प्रवाहिका जिसे पेचिश, निःसारक, निश्चारक तथा Dysentry भी कहा जाता है एक अत्यन्त कष्ट साध्य रोग है और यदि इसकी चिकित्सा उचित समय पर एवं पथ्य के साथ आहार-विहार का सेवन नहीं किया जाय तो यह व्याधि जीर्ण प्रवाहिका में परिवर्तित होकर शरीर में बार-बार आक्रमण करते हुये जीवन भर कष्ट देने वाली बन जाती है ।

निदान

इस रोग की उत्पत्ति स्वतंत्र या परतंत्र रूप से अर्थात् दोनों प्रकार से हो सकती है । दोनों रूपों में इसके निदान (कारण) निम्नलिखित हो सकते हैं -

(अ) स्वतंत्र प्रवाहिका के निदान -

1. दूषित जल, दूषित आहार, आर्द्र वायु, सीलन वाले स्थान में निवास करना ।
2. अतिसार उत्पन्न करने वाले सभी निदान प्रवाहिका की उत्पत्ति में भी कारण हैं ।
3. मिथ्या आहार-विहार, विरुद्धाशन, अध्ययशन, विषमाशन आदि ।
4. वात प्रकोपक तथा कफ प्रकोपक सभी निदान ।

(ब) परतंत्र प्रवाहिका का निदान -

1. अतिसार के कारण जब प्रवाहिका परतंत्र रोग के रूप में होती है या अन्य किसी रोग के बाद होती है तब इसका निदान इसके पूर्व का रोग होता है ।
2. दोष या लक्षण की दृष्टि से इसके चार भेद किये गये हैं उनमें कफज का निदान स्नेह (घी-तैल) का अधिक प्रयोग, वातज का रूक्षाहार और पित्तज तथा रक्तजा का तीक्ष्ण एवं उष्ण पदार्थ सेवन है ।

सम्प्राप्ति

इस रोग की सम्प्राप्ति में सर्वप्रथम मिथ्या आहार-विहार से अग्निमांद्य होकर अजीर्ण की स्थिति बनती है साथ ही कफ की वृद्धि होती है एवं वायु (समान + अपान) का प्रकोप होता है । साम कफ पिच्छिल होने के कारण आँतों की दीवारों से चिपका रहता है । प्रकुपित वायु कफ को पुरीष के साथ बाहर निकालती है और इसके लिये प्रवाहण (जोर लगाकर कांखना) करना पड़ता है जिससे आंतों में कूंथन या कर्तनवत् पीड़ा होती है तथा प्रवाहिका रोग की उत्पत्ति होती है ।

प्रवाहिका रोग की उत्पत्ति में मूल कारण अजीर्ण तथा उसके बाद बनने वाली आम की स्थिति को बताया गया है । अजीर्ण के विषय में कहा गया है कि -

न जीर्यति सुखेनान्नं विकारान् कुरूतेऽपि च ।
तदजीर्णमिति प्राहुस्तन्मूला विविधा रूजः ॥

अर्थात् जब मनुष्य के शरीर में अन्न का समुचित रूप से पाचन नहीं हो पाता है तो उसे अजीर्ण कहते हैं तथा इस स्थिति के उपरान्त कई रोगों का जन्म होता है ।

आयुर्वेद में अजीर्ण के आम, विदग्ध, विष्टब्ध, रसशेषाजीर्ण दिनपाकी अजीर्ण और प्राकृताजीर्ण ऐसे 6 भेद किये गये हैं । इनमें आमाजीर्ण के बारे में वर्णन है कि शरीर में जब जठराग्नि (पाचकाग्नि) सम्पूर्ण आहार रस को पचाने में असमर्थ होती है तो जो शेष अपचित आहार

* रोग एवं विकृति विज्ञान विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर
** विभागाध्यक्ष, रोग एवं विकृति विज्ञान विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर
*** आयुर्वेद चिकित्साधिकारी, जयपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रस है वही आम है । कहा है कि -

आहारस्य रसः शेषो यो न पक्वोऽग्निलाघवात् ।
स हेतुः सर्वरोगाणामित्यभिधीयते ॥

चरक संहिता विमान स्थान में चरकाचार्य ने आम को विष की संज्ञा देते हुये इसकी भयंकरता का निर्देश किया है यथा -

विरूद्धाध्यशनाजीर्णशन शीलिनः पुनरामदोषमामविषमित्याचक्षते भिषजः, विषसदृशलिङ्गत्वात्: तत् परमसाध्यम्, आशुकारित्वाद्विरूद्धोपक्रमत्वाच्चेति ॥ च०वि० 2/12

अर्थात् विरुद्ध भोजन करने वाले एवं अजीर्णाशन करने वाले व्यक्ति के आम दोष को, विष के समान लक्षणों को उत्पन्न करने से चिकित्सक समुदाय आमविष कहता है । यह आशुकारी एवं चिकित्सा में विरुद्ध होने से अत्यन्त असाध्य होता है ।

उपरोक्त कारणों के साथ ही चरकाचार्य ने कई मानसिक कारणों को भी आम की उत्पत्ति में हेतु बताये हैं यथा -

मात्रयाऽप्यभ्यवहृतं पथ्यं चान्नं न जीर्यति ।
चिन्ताशोक भय क्रोध दुःख शय्या प्रजागरैः ॥

च.वि. 2/9

अर्थात् चिन्ता, शोक, भय, क्रोध, दुःख, शय्या और जागरण के कारण मात्रा में खाया हुआ पथ्य आहार भी नहीं पचता है जिससे आम की उत्पत्ति होती है ।

लक्षण

उदर रोगों को उत्पन्न करने में इस आमविष का मुख स्थान है । इसके कारण प्रथमतः मनुष्य में अतिसार की स्थिति उत्पन्न होती है । अतिसार के बारे में कहा गया है कि -

अतिशयेन सारयति रेचयति इति अतिसारः ।

इस अतिसार की स्थिति में जब मल में चिकनापन अधिक हो, मल निकलते समय पेट में मरोड़ होती हो और मल विसर्जन में पीड़ा का अनुभव हो तथा कुपित वायु द्वारा से मल और कफ को बार-बार थोड़ी-थोड़ी मात्रा में या कभी ज्यादा मात्रा में बाहर निकालती हो यानि प्रवाहित करती हो तो उस स्थिति को प्रवाहिका कहते हैं ।

योग रत्नाकर में कहा गया है कि -

प्रवाहतोऽल्पं बहुशोमलाक्तं प्रवाहिकां तां प्रवदन्ति तज्ज्ञाः

सुश्रुत संहिता उत्तर तंत्र में भी ऐसा ही वर्णन पाया जाता है -

वायुः प्रवृद्धो निचितं बलासं नुदत्यधस्तादहिताशनस्य ।
प्रवाहमाणस्य मुहुर्मलाक्तं प्रवाहिकां तां प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ॥

सु.उ. 40/139

मधुकोषकार ने द्रवसरण तथा आम और पक्व लक्षणों के साधर्म्य के कारण अतिसार के प्रकरण में ही प्रवाहिका का वर्णन किया है तथा चरक एवं वाग्भट ने भी इसका अतिसार के अन्तर्गत ही वर्णन किया है । चरकाचार्य के अनुसार वातातिसार में आम एवं कफ का अनुबंध होने पर प्रवाहिका होती है तथा कफज अतिसार के लक्षणों में भी उन्होंने कहा है कि -

स्निग्धं श्वेतं पिच्छिलं तन्तुमदामं गुरू दुर्गन्धं श्लेष्मोपहितमनुबद्ध शूल मल्पाल्पमभीक्षणमतिसार्यते स प्रवाहिकं .... ।

च.चि. 19/7

अर्थात कफज अतिसार से पीड़ित व्यक्ति में स्निग्ध, श्वेत, पिच्छिल, तन्तुदार, आम, गुरू, दुर्गन्ध तथा कफ से युक्त थोड़ी-थोड़ी मात्रा में बार-बार मल का निस्सरण होता है तथा प्रवाहिका अर्थात मलत्याग करते समय बार-बार प्रवाहण करना पड़ता है ।

वहीं चरकाचार्य ने कफज अतिसार चिकित्सा प्रकरण में पिच्छाबस्ति का प्रयोग बताते समय भी कहा है-

वातश्लेष्म विबन्धे वा कफे वाऽति स्रवत्यपि ।
शूले प्रवाहिका यां वा पिच्छाबस्तिं प्रयोजयेत् ॥

अर्थात् कफज अतिसार में यदि वात और कफ का विबन्ध हो या मल के साथ यदि कफ का अधिक स्राव हो तथा शूल या प्रवाहिका हो तो पिच्छा बस्ति का प्रयोग करना चाहिये ।

सुश्रुताचार्य ने अवस्थानुसार प्रवाहिका के वातिक, पैत्तिक, कफज एवं रक्तज ऐसे चतुर्विध प्रकार बताकर कहा है कि प्रवाहिका मुख्य रूप से वातकफजन्य ही होती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सापेक्ष निदान

क्र०सं०	अतिसार	प्रवाहिका
1.	विविध द्रवधातुओं का सरण होता है यथा जल, रक्त, वसा आदि	इसमें मल के साथ केवल कफ ही निकलता है ।
2.	अतिसरण मात्रा एवं संख्या दोनों रूपों में ज्यादा होता है ।	मल मात्रा में कम एवं संख्या में ज्यादा होता है ।

क्र०सं०	आमातिसार	प्रवाहिका
1.	अनेक धातु क्षरण	केवल कफ का ही क्षरण
2.	मल त्याग के समय शूल	मल त्याग से पूर्व ऐंठन
3.	मल की मात्रा अधिक	मल की मात्रा कम
4.	अपक्व अन्न भी निकलता है ।	अपक्व अन्न नहीं निकलता है ।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के दृष्टिकोण से -

"Dysentery is an acute inflammation of the large intestine characterised by diarrhoea with blood and mucus in the stools." — DEVIDSON

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में प्रवाहिका के दो प्रकार बताये गये हैं ।

(1) बेसीलरी डीसेन्ट्री - Bacillary Dysentery (Shigellosis)

(2) अमीबिक डीसेन्ट्री - Amoebic Dysentery (Amoebiasis)

बेसीलरी डीसेन्ट्री -

इसमें रक्तमिश्रित कफ एवं पूययुक्त पतला मल निकलता है । यह मुख्य रूप से शिगेला (Shigella) वर्ग के दण्डाणुओं (जीवाणुओं) द्वारा फैलता है । शिगेला वर्ग को चार जातियों में विभाजित किया है ।

1. Sh. Dysenteriae 2. Sh. Plexneri
3. Sh. Boydie 4. Sh. Sonnei

Sh. Dysenteriae को serologically 10 (types) भागों में विभाजित किया है, इसमें Type -I Shigella Shiga है जो विषमतया (Toxicity) को उत्पन्न करता है इसलिये इससे होने वाली Dysentery अधिक घातक होती है जबकि Sh. Sonnei से होने वाली Dysentery में लक्षणों में मृदुता रहती है । उष्ण कटिबंधीय प्रदेशों में होने वाली Bacillary Dysentery का मुख्य कारण Sh-Flexeri है जिसने कई बार इन प्रदेशों में महामारी का रूप लिया है । वहीं शीत प्रदेशों में इसका कारण Sh - Sonnie है ।

संक्रम ण -

यह मुख्य रूप से दूषित (संक्रमित) वस्तुओं को छूने के उपरान्त भोजन करने से, मल त्याग के पश्चात अच्छी प्रकार से हाथ नहीं धोने से फैलने वाला संक्रामक रोग है । संक्रामक के कारण प्रवाहिका आगन्तुक तथा पाचन संस्थान की विकृति के कारण होने से निज रोग है । इसके कीटाणु मुख मार्ग से शरीर में प्रवेश करते हैं । शरीर में वृहदांत्र (Large intestine) में प्रवेश कराने के पश्चात् ये वृहदांत्र की उपकला कोशिकाओं (Epithelial cells) को संक्रमित करते हैं तथा वहीं पर वृद्धि करते हुए शोथपूर्वक घाव उत्पन्न करते हैं तथा इनके कारण अन्तर्विष और बहिर्विष उत्पन्न होने के कारण विषाक्त प्रभाव होता है ।

बैसीलरी डीसेन्ट्री का आक्रमण प्राय: अकस्मात होता है तथा इसकी संचयावस्था (Incubation period) 1 से 7 दिन है, सामान्य रूप से 48 घण्टे होती है ।

लक्षण -

बार-बार पेट में मरोड़ और दर्द के साथ रक्त अथवा श्लेष्मा मिश्रित पतला मल निकलता है । रक्त आने पर उसे खूनी पेचिश भी कहा जाता है । इस अवस्था में ज्वर तथा वमन भी पाया जा सकता है । यदि इसकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समुचित एवं शीघ्र चिकित्सा न की जावे तो शरीर में कई जटिलतायें (Complications) उत्पन्न होती है । विशेष रूप से Sh. Dysentery type - I (Sh. Shiga) के कारण से जैसे संधिशोथ (Arthritis), विषाक्त तंत्रिका शोथ (Tropic neuritis) नेत्र श्लेष्मकलाशोथ (Conjuctivitis) कर्ण मूलिकग्रंथि शोथ (arotitis) एवं बच्चों में आन्त्रावरोध (Intussusception)

ऐमीबिक डीसेन्ट्री

यह रोग 'एण्टमीबा हिस्टोलिटिका (Entamoeba Hystolytica) नामक अमीबा (जीवाणु) द्वारा होता है, इस परजीवी की दो प्रजातियाँ होती हैं ।

1. Entamoeba dispar (Nonpathogenic)
2. Entamoeba Hystolytica (Pathogenic)

इन दोनों में से Entamoeba Hystolytica के कारण ही यह होती है ।

संक्रमण

E. Hystolytica से संक्रमित मल का किसी भी प्रकार से खाद्य पदार्थों के साथ सम्पर्क में आने पर इसकी Cyst का मुख मार्ग द्वारा आंत्र में प्रवेश कर वहाँ घाव कर देने से होता है जिसका मुख्य कारण स्वच्छता की कमी है ।

संचयावस्था

2 सप्ताह से कई महीने तथा सामान्यतया 21 दिन ।

लक्षण

यह धीरे-धीरे पनपता है तथा जीर्ण प्रकार का होता है, इसमें विषाक्तता नहीं मिलती है । इसमें मल, रक्त एवं आँव मिश्रित होता है । इसमें अतिसार की अपेक्षा कोष्ठबद्धता अधिक पायी जाती है । कभी-कभी पतला दस्त भी होता है, लेकिन उनकी संख्या घटती बढ़ती रहती है । रोगी में आलस्य एवं अनुत्साह रहता है । वह दिन प्रतिदिन दुर्बल होता जाता है । इसका उपचार करने पर लाभ होता है लेकिन मिथ्या आहार-विहार से पुन: प्रकट हो जाता है । इसके रोगी में यकृत विकार पाया जाता है तथा जीर्ण होने पर यकृत विद्रधि (Amoebic Liver Abscess) भी बन जाती है ।

भेद

रोग की स्थिति के अनुसार प्रवाहिका को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है ।

1. तीव्र प्रवाहिका - Acute Dysentery
2. जीर्ण प्रवाहिका - Chronic Dysentery
3. लीन प्रवाहिका - Latent stage of Dysentery

1. तीव्र प्रवाहिका

इसमें आँव और रक्तमिश्रित दस्त दिन में कई बार लगते हैं तथा मरोड़ और दर्द अधिक रूप में होते हैं । शौच के पहले और बाद में बहुत देर तक मरोड़ बनी रहती है । इसमें अग्निमांद्य मुख्य रूप से होता है तथा पेट को दबाने पर शूल अधिक होता है । इसे तीव्र प्रवाहिका कहते हैं ।

2. जीर्ण प्रवाहिका

यह व्याधि दीर्घकाल तक बनी रहती है तथा रोगी को दिन में तीन-चार बार शौच जाना पड़ता है । शौच जाने पर भी पेट साफ और हल्का नहीं होता है । मल चिकना, पतला, बदबूदार होता है । रोगी में आलस्य और दुर्बलता रहती है । गुरू आहार नहीं पचता है जैसे दूध पीने के तुरन्त बाद शौच की हाजत होती है । इसे जीर्ण प्रवाहिका कहते हैं ।

3. लीनावस्था

चिकित्सा करने पर अथवा स्वयं ही व्याधि के लक्षण थोड़े समय के लिये क्षीण हो जाये और रोगी अपने आपको स्वस्थ अनुभव करे लेकिन उदर में आध्मान, कब्ज एवं अपच की स्थिति बनी रहे तो यह रोगी की पूर्ण निरोगावस्था न होकर रोग की लीनावस्था होती है यानि थोड़े से भी अपथ्य सेवन से रोग का पुन: आक्रमण हो जाता है ।

रोग का परीक्षण -

इस रोग का परीक्षण मल परीक्षा (Stool Examination) से तथा इसके लक्षणों के द्वारा होता है ।

चिकित्सा -

1. रोगोत्पत्ति के निदान को जानकर उसका शीघ्र परित्याग करना चाहिये ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

2. प्रारम्भ में लंघन एवं पाचन करना तत्पश्चात् स्तंभन करना चाहिये । पथ्य में प्रद्रव एवं लघुभोजन देना चाहिये ।
3. जल प्रयोग - रोगी को कच्चे जल की अपेक्षा औषध सिद्ध जल यथा सुगंध वाला/शुंठी/मुस्तक/पर्पट/नागरमोथा अथवा षडङ्गपानीय विधि से बनाया गया जल पीने को देना चाहिये ।
4. इसबगोल को दही के साथ रोगी को देना चाहिये ।
5. कच्चे बेल (बील) को उबालकर उसका जल या आग में भूनकर उसमें सौंफ और मिश्री मिलाकर देना चाहिये ।

पथ्य पालन

रोगी को बाहर का खाना, पानी आदि के सेवन से बचना चाहिये तथा अपने दैनिक जीवन में स्वच्छता का पालन करना चाहिये ।

चिकित्सायोग

आयुर्वेद में प्रवाहिका रोग निवारणार्थ अनेक योगों का उल्लेख है. जिनका प्रयोग रोग की अवस्थानुसार करना चाहिये यथा कुटजाष्टक क्वाथ, लघुगंगाधर चूर्ण, कनक सुन्दर रस, शंखोदर रस, जातीफलादि वटी, सिद्ध प्राणेश्वर रस, कुटजावलेह, वृद्ध गंगाधर चूर्ण, कपित्थाष्टक, कुटजादिवटी, दाडिमावलेह, रामबाण रस, पीयूषवल्ली रस, अग्नितुण्डी वटी, हिंग्वष्टक चूर्ण, कुटजारिष्ट आदि ।

बैद्यनाथ

जन्मघूँटी

जन्म के बाद से ही बच्चों को इसका सेवन कराने से उनके स्वास्थ्य में कोई गड़बड़ी नहीं होती । इससे बुखार, खांसी, सर्दी-जुकाम, अजीर्ण, उल्टी होना, टट्टी होना, पेट फूलना आदि रोग दूर होते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रमेह और मधुमेह - एक शास्त्रीय विवेचन

डा० नितीन कुमार अरोरा, बी.ए.एम.एस., एन.डी. (दिल्ली), आयुर्वेद रत्न, एफ.सी.सी.एम.
डा० जगदीश कुमार अरोरा, डाक्टर ऑफ साइंस् (आयुर्वेद), एफ.आर.ए.एस.(लंदन)

[लेख का प्रथम भाग जनवरी, 2003 एवं द्वितीय भाग अगस्त, 2003 में प्रकाशित हो चुका है - सम्पादक]

अब प्रमेह और मधुमेह से सम्बंधित अन्य रोगों का वर्णन किया जायेगा। प्रमेह के जितने भी पूर्व रूप होते हैं वे सभी "मेद" के दोष से होते हैं अर्थात् महर्षि चरक ने दुष्ट "मेद" से प्रमेहों की तथा प्रमेह पिडिकाओं की उत्पत्ति का भी संकेत दिया है। इसलिए प्रथम "मेदोज रोगों" का वर्णन किया जा रहा है :-

"मेदोज रोग"

(मेदोदोषज - मेदः संश्रय रोग)

अव्यायामदिवास्वन्न श्लेष्मला हार सेविनः।
.....अत एवोदरे वृद्धिः प्रायो मेदस्विनो भवेत् ॥1-4॥

(माधव निदान, अध्याय 34)

अर्थात्- व्यायाम का अभाव, दिवास्वप्न तथा श्लेष्मवर्धक आहार का सेवन करने से, अन्न रस मधुरतायुक्त और स्निग्ध होने से "मेद" को उत्पन्न करता है। मेद के द्वारा स्रोतों में अवरोध हो जाने से अन्य धातुओं का पोषण नहीं होता, केवल "मेद" की ही वृद्धि निरन्तर होती रहती है। इससे रोगी कोई भी काम नहीं कर पाता। वह क्षुद्रश्वास (थोड़े श्रम से श्वास-वेग का बढ़ जाना), प्यास, अज्ञान, निद्रा, कभी-कभी अकस्मात्, श्वासावरोध, अंग शैथिल्य, अत्यधिक भूख, स्वेद तथा शरीर की दुर्गन्ध से पीड़ित रहता है। उसकी जीवनी एवं मैथुन शक्ति का भी ह्रास हो जाता है। सभी प्राणियों के उदर एवं छोटी अस्थियों में "मेद" का संचय हुआ करता है। अतः मेदस्वी व्यक्ति का उदर ही अधिक बढ़ता है।

"मेद" के द्वारा आवृत्त हुआ वायु विशेषतया आन्त्र में घूमता हुआ अग्नि को प्रदीप्त करके आहार शोषण करता है। इस प्रकार वह भोजन का शीघ्र परिपाक कर भूख को बढ़ा देता है। इस अवस्था में यदि भोजन न दिया जाय तो अनेक भयंकर उपद्रवों को उत्पन्न करता है। इस स्थिति में वायु और अग्नि ही विशेष रूप से उपद्रवों को उत्पन्न करते हैं। भोजन न मिलने पर ये स्थूल व्यक्ति को इस प्रकार जला देते हैं जैसे वनाग्नि वन को जला देती है।

महर्षि चरक ने भी इस प्रकार विवरण दिया है -

मेदसाऽऽवृतमार्गत्वाद्वायुः कोष्टे विशेषतः।
चरन् संधुक्षयत्यग्निमाहारं शोषयत्यपि.....
अयथापचयोत्साहो नरोऽतिस्थूल उच्यते ॥ 5-9॥

(चरक सूत्र स्थान, अध्याय - 21)

आचार्य चरक ने मेदोवृद्धि के आठ दोष और उनके कारण निम्न प्रकार से वर्णित किया है :-

1. स्थूल होने पर सबसे अधिक शरीर में मेदा धातु की वृद्धि होती है तब मनुष्य मोटा होता है जिसके शरीर में मेद अधिक रूप में बढ़ गया होता है तो पुनः उसके शरीर में अधिक मात्रा में मेदा धातु की ही वृद्धि होती है। दूसरे धातु यद्यपि कुछ मात्रा में बढ़ते हैं पर उतनी मात्रा में नहीं बढ़ते हैं। जब रसादि धातुओं का उचित मात्रा में निर्माण न होगा तो आयु का क्षय होना स्वाभाविक हो जाता है।
2. जब शरीर अधिक मोटा होता है तो शरीर में शिथिलता, सुकुमारता आ जाती है क्योंकि "मेद" स्वभाव से ही गुरू होता है। इसलिए अधिक मोटे मनुष्यों में कार्य करने का वेग (उत्साह) नहीं रहता है।
3. मेद के अधिक बढ़ जाने से अन्य धातुओं के स्रोत बन्द हो जाते हैं तो अधिक मात्रा में मेद धातु की वृद्धि होती है। रस आदि धातुएँ अल्प मात्रा में बनती हैं। फलस्वरूप शुक्र बहुत ही कम मात्रा में बनता है। शुक्र के कम बनने से मैथुन करने में कठिनाई होती है।
4. धातुओं के समान रूप से न बनने के कारण दुर्बलता अधिक रहती है।
5. मेद धातु के विकृत होने से तथा मेद के स्वेदोत्पादन स्वभाव के कारण शरीर में दुर्गन्धि होती है।

330, पटेल नगर, हापुड़ - 245101 (उत्तर प्रदेश) दूरभाष :- 0122 - 2312903

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

6. मेद कफ का सम्बन्धी होता है अर्थात् कफ और मेद समान धर्मी है और विष्यन्दी होता है अर्थात् "मेद" पसीना को निकालने वाला होता है । मेद शरीर में अधिक बढ़ जाता है जिसके कारण अतिस्थूल पुरुष व्यायाम (परिश्रम) करने में सर्वदा असमर्थ रहता है । इसलिए अधिक पसीना होता है । इससे और अधिक कष्ट भी होता है ।
7. अतिस्थूल मनुष्य के कोष्ठ में वायु सदा अधिक रहती है जिससे अग्नि का संधुक्षण बराबर होता रहता है । फलस्वरूप अग्नि अति तीव्र हो जाती है जिससे भूख की मात्रा सदा अधिक रहती है ।
8. अग्नि की तीव्रता से ही प्यास भी अधिक लगती है ।

मेदो धातु में दोषों का स्थान संश्रय होने पर स्थान-प्रभाव से नीचे लिखे रोग-विशेष होते हैं -

महर्षि चरक कहते हैं कि "प्रमेह" के पूर्वरूप तथा "अष्टौनिन्दितीय" अध्याय में कहे "मेदस्विता" (अतिस्थौल्य) के दुष्ट लक्षण मेदोधातु की दुष्टि से होते हैं ।

"इह खलु शरीरमधिवृत्यास्टौ.....अतिस्थूलश्च, अतिकृश्चेति ॥.3 ॥

(चरक, सूत्र स्थान अध्याय 21, अष्टौनिन्दितीय अध्याय)

इस प्रकार महर्षि चरक ने आठ निन्दनीय शरीर की व्याख्या की है :-

1. अतिदीर्घ :- चिकित्सा की दृष्टि से यह विशेष रूप से निन्दित नहीं है, किन्तु लोक दृष्टि से असुन्दर है । अतः इस निन्दित प्रकरण में इसे पढ़ा गया है । शरीर के अधिक बड़े होने में वायु का महत्व रहता है, इसलिए इसे "वातज" पुरुष भी कहा जा सकता है । प्रकृतियों में "वातज" प्रकृति सबसे निम्न मानी गई है, सम्भवतः अत्यन्त लम्बे आदमी को निन्दित कहने का यही कारण है । आजकल के GIGANTISM की आभा इस वर्णन में मिलती है ।

2. अतिह्रस्व :- शरीर के अनुसार यह भी असुन्दर होता है । दूसरी बात यह है कि यह ओजस्कर किसी भी कार्य को करने में असमर्थ होता है । इसके मानसिक तथा शारीरिक केन्द्र पूर्ण विकसित नहीं रहते हैं । इस प्रकार के मनुष्य प्रायः मन्दाग्नि से पीड़ित रहते हैं । अतः इसे निन्दित माना गया है । आजकल की भाषा में इसे DWARFISM कह सकते है । शरीर के अत्यन्त छोटे होने के कारण औषधियों के वीर्य को सहन करने में भी असमर्थ होता है ।

3. अतिलोमा :- शरीर में साढ़े तीन करोड़ रोमों की संख्या आचार्यों ने मानी है और उतने ही "लोमकूप" माने हैं । लोमकूपों के द्वारा शारीरिक "मल" "स्वेद" रूप में निकला करते हैं । अधिक रोम होने से उपर्युक्त क्रिया का पूर्णतः सम्पादन होना कठिन है । "अतिलोमा" का तात्पर्य, बड़े, मोटे एवं एक लोमकूप में अनेक रोम के होने से हैं । इन लोमों के होने के कारण लोमकूपों का मार्ग अवरुद्ध रहता है । स्वास्थ्य की दृष्टि से अभ्यंग, परिषेक करना प्रत्येक के लिए आवश्यक है, रोम के अधिक होने से इन दोनों कार्यों में बाधा आती है । अभ्यंग करते समय रोम के टूट जाने से व्रण आदि हो जाते हैं । लेप लगाने से उसका वीर्य रोमों से रुँधकर अन्दर प्रविष्ट नहीं हो पाता है, अतः निन्दित माना गया है ।

4. अलोमा :- लोम न होने या कम होने पर लोमकूपों की संख्या भी तदनुसार अल्प होती है । अतएव स्वेदादि मल का पूरा निष्कासन न होने से निन्दनीय हैं ।

5. अतिकृष्ण :- इस प्रकार के व्यक्तियों में MELANIN PIGMENTS की अधिकता होती है । अतएव ये निन्दनीय हैं ।

6. अतिगौर :- देखने में ये असुन्दर होते हैं, इनके शरीर में पित्त की प्रधानता होती है । रक्त की विकृति इन्हें अधिक होती है । साथ ही इनके शरीर में रोम भी अल्प होते हैं - जिसमें सूर्य का ताप ये सहन नहीं कर सकते हैं । गर्मी के दिनों में इन्हें अधिक कष्ट होता है । विशेष कर इन्हें "पित्तज" रोग होते हैं । सदा चिकित्सा करते समय "शीतवीर्य" औषधियों का ही प्रयोग करना पड़ता है । इसलिए इन्हें निन्दित माना गया है । इसे आधुनिक दृष्टि से ALBINISM कह सकते हैं । इसमें त्वचा का वर्ण श्वेत तथा PHOTOPHOBIA नामक लक्षण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होते हैं ।

7. अतिकृश
8. अतिस्थूल

उपरोक्त दोनों ही चिकित्सा की दृष्टि से अत्यन्त निन्दित हैं । इसलिए आचार्य ने इनका वर्णन विस्तृत रूप में किया है । उपर्युक्त 6 मनुष्य - जो रचना के अनुसार निन्दित है - उन पर आचार्य ने विशेष विवेचन नहीं किया है । उसका एक मात्र कारण यही है कि चिकित्सा में ये विशेष निन्दित नहीं हैं पर इनकी आकृति देखने में निन्दित है ।

अतिकृश और अतिस्थूल पुरुषों के निन्दित होने में विशेष कारण :-

1. अतिस्थूल पुरुष की आयु का क्षय शीघ्र होता है ।
2. उनके शरीर में किसी भी कार्य के करने का विशेष उत्साह नहीं होता है ।
3. मैथुन कार्य में कठिनाई का सामना करना पड़ता है ।
4. दुर्बलता ।
5. शरीर में दुर्गन्धि का होना ।
6. पसीना से अधिक कष्ट होना ।
7. अधिक मात्रा में भूख का लगना और
8. अधिक प्यास का लगना, ये आठ दोष अधिक मोटे आदमी के होते हैं ।

इस प्रकार आचार्यों ने संक्षेप में निम्नलिखित लक्षण दिये हैं :-

1. मेद की अति वृद्धि होने पर अङ्गों की स्निग्धता ।
2. स्फिक् (चूतड़), स्तन-द्वय, पार्श्व तथा उदर में मेद के संचय की वृद्धि होकर इन अवयवों का लटक आना (लम्बनम्) ।
3. दौर्गन्ध्य ।
4. अल्प भी चेष्टा करने पर श्रम (थकावट) तथा श्वास (हाँफ चढ़ जाना)।
5. कास इत्यादि के लक्षण ।
6. माँस वृद्धि से होने वाले गलगण्ड, गण्डमाला, अर्बुद, ग्रन्थि एवं कण्ठादि में मांसवृद्धि - ये लक्षण भी मेदोवृद्धि में होते हैं ।

मेदस्विता से जो श्वास होता है वह क्षुद्र श्वास का एक प्रकार है -

किंचिदारभमाणस्य यस्य श्वासः प्रवर्तते ।
निषण्णस्यैति शान्तिं च स क्षुद्र इति संज्ञितः ॥7॥

(सुश्रुत, उत्तरतंत्र अध्याय - 51)

अर्थात पुरुष कोई कर्म करने को उद्यत हो कि श्वास का वेग हो जाय और पुरुष बैठ जाये कि श्वास का वेग भी शान्त हो जाए तो इस श्वास को क्षुद्र श्वास कहते हैं ।

क्षुद्र श्वास के अन्य कारण यक्ष्मा, उदावर्त (कब्ज), वातिक कास इत्यादि होते हैं ।

मेदोवृद्धि में क्षुद्र श्वास का कारण यह है कि मेद की अतिवृद्धि होने पर हृदय भी श्लेष्मधरा-कला (पेरीकार्डीअम) पर भी मेद का संचय हो जाता है । चेष्टारम्भ काल में चेष्टायुक्त अवयव में अधिक प्रमाण में रस-विक्षेपण हो - इस प्रयोजन से हृदय का प्रसारण अधिक होता है । श्लेष्मधरा-कला में स्थित मेद इस कार्य में विक्षेप डालता है । परिणाम तथा हृदय का "आकुञ्चन" भी उचित मात्रा में नहीं हो पाता । आकुञ्चन यथावत् न होने से रस-रक्तगत अधिक निर्मित प्राण वायु (कार्बन-डाइ-आक्साइड, CO_2) का शोधन पूर्णतया नहीं होता । संचयवश प्रकुपित इस प्राणवायु का श्वसनात्मक प्राकृत कर्म वृद्धि को प्राप्त करता है । इसी को "श्वास" कहते हैं ।

अब सुश्रुत के स्पष्ट शब्दों में दिये गये रोगों का वर्णन करते हैं । ग्रन्थि वृद्धि गलगण्डार्बुद मेदो जौष्ठ प्रकोप मधुमेहाति स्थौल्याति स्वेद प्रभृतयो मेदा दोषजाः ॥ 13 ॥

(सुश्रुत - सुत्रस्थान अध्याय 24)

अर्थात् मेदोधातु की दुष्टि से ग्रन्थि, मेदोवृद्धि, गलगण्ड, अर्बुद, मेदोजन्य ओष्ठ प्रकोप, मधुमेह, अतिस्थौल्य, अति स्वेद आदि रोग उत्पन्न होते हैं ।

1. मेदोग्रन्थि

...तश्च मेदःश्रितः कुर्याद् ग्रन्थीन्मन्द रूजोऽव्रणान् ॥26॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(सुश्रुत, निदान स्थान अध्याय ।)

अर्थात् मेदो धातु में कुपित हुई वात-मन्द पीड़ा वाली तथा व्रण रहित गांठों को उत्पन्न करती है । अर्थात् इसमें मेदोगत वात के लक्षणों में ग्रन्थियों की गणना है वही ये ग्रन्थियाँ होनी चाहिए तथा उनका लक्षण बताते हुए कहा है कि मेदोगत वात से हुई ग्रन्थियां मन्द वेदना वाली तथा व्रण-भाव को प्राप्त न होने वाली होती है ।

वातादयो मांसमसृक् च दुष्टाः सन्दूष्य मेदश्च कफानुविद्धम् ।
वृत्तोन्नतं विग्रथितं तु शोंफ कुर्वन्त्यतो ग्रन्थिरिति प्रदिष्टः॥3॥

(सुश्रुत, निदान स्थान अध्याय ।।)

अर्थात्, दूषित हुए वातादि दोष मांस, रक्त, कफ और मेदोधातु को दूषित करके गोल, ऊंचा उठा हुआ गांठदार शोफ उत्पन्न करते हैं अतः इसका "ग्रन्थि" ऐसा नाम रखा है ।

शरीर वृद्धि क्षय वृद्धि हानिः स्निग्धो महानल्प रूजोऽति कण्डूः ।
मेदः कृतो गच्छति चात्र भिन्ने पिण्याकसर्पिः प्रतिमंतु मेदः ॥ 7 ॥

(सुश्रुत, निदान स्थान, अध्याय ।।)

मेदोग्रन्थि - शरीर वृद्धि के साथ बढ़ता है तथा शरीर के क्षय के साथ घटता है एवं स्पर्श में स्निग्ध, आकार में बड़ी, स्वल्प पीड़ा तथा अधिक कण्डूकारिणी होता है तथा फूटने पर तिल की खली और घृत के समान मेद का स्राव बहाता है ।

ये मेदो ग्रन्थियाँ आधुनिकों की रस-ग्रन्थियों (लिम्फ-ग्लैंडस) की उस वृद्धि का नाम है जो दारुण (घातक, फेटल) नहीं होती । इसे मृदु (विनाइन) कहते हैं। इस ग्रन्थियों की दारुण वृद्धि आयुर्वेदोक्त कफज ग्रन्थि- विसर्प है । इसें अंग्रेजी में "हाजकिन्स-डिसीज" लिम्फेडी-नोमा या स्यूडोल्यूकीमिआ कहते हैं ।

2. मेदोज वृद्धि :- इसे आधुनिक भाषा में FILARIA कहा जा सकता है । मेदा अण्ड-कोष में वृद्ध होकर शोथ उत्पन्न करता है । यह शोथ स्पर्श में कठिन होता है ।

दोषास्त्रमेदो मूत्रान्त्रैः स वृद्धिः सप्तधागदः ।
मूत्रान्त्र जावप्यनिलाद्धेतु भेदस्तु केवलम् ॥ 23 ॥

(अष्टाङ्ग हृदय निदानस्थान, अध्याय - ।।)

यह वृद्धि रोग वातादि दोषों अर्थात् जिसमें वातज, पित्तज, कफज, रक्तज, मेदोज, मूत्रज और आंत्रज - ये सात रोग भेद माने गये हैं । आन्त्रज को ही HERNIA माना है । शेष 6 को अण्डज वृद्धि माना जाता है । यह वृद्धि अण्डकोष, अण्ड रज्जु, अण्डग्रन्थि, इन तीन स्थानों में पाई जाती है । अण्डकोष के आवरण के अधस्त्वक् का शोथ (CELLULITIS), मेदो ग्रन्थि (SEBACEOUS CYST) और मेदोज वृद्धि (FILARIA) ये तीनों शोथ अण्डकोष में पाये जाते हैं । इसके अतिरिक्त अण्ड रज्जु या वृषणावरण (SPERMATIC CORD AND TUNICA VAGINALIS) में भी शोथ होता है । यदि जल संचय होता है तो उसे HYDROCELE और यदि रक्त की वृद्धि होती है तो उसे HAEMATOCELE और यदि सिराओं में वृद्धि होती है तो उसे VARICOCELE कहते हैं । HYDROCELE अर्थात् थैलीनुमा गुहा (SACLIKE CAVITY) में तरल का संचित हो जाना विशेष कर शुक्र ग्रंथि (TESTIS) के अण्डधर कंचुक (TUNICA VAGINALIS) में तरल का संचित होना, जल-वृषण कहलाता है । अण्ड ग्रन्थि (TESTICLE) में यदि वातादि दोष के कारण शोथ हो जाय तो ORCHITIS कहते हैं। वृद्धि के अनेक प्रकारों में यहाँ प्रकरण-वश मेदोज वृद्धि का ग्रहण है । यदि अण्ड कोष मेदा से पूर्ण हुआ रहता है तो स्पर्श में स्निग्ध और शोथ कठिन होता है । मेदोज-वृद्धि को वृषण गत श्लीपद (ELEPHANTIASIS OF THE SCROTUM), मूत्रज वृद्धि को हाइड्रोसील (HYDROCELE) तथा आंत्र-वृद्धि को हार्निया (HERNIA) कहते हैं ।

उपर्युक्त आयुर्वेदीय स्थौल्य या मेदोवृद्धि का वर्णन आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान द्वारा भी सम्मत है । आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान इस रोग को अवेसीटी (OBESITY) कहता है । यह एक प्रकार के त्वचाओं तथा गम्भीर धातुओं के अन्तराल में अधिक रूप में संचित मेद का नाम है । यह अवस्था आवश्यकता से अधिक तापोत्पादक आहार के सेवन से (स्निग्ध एवं मधुर द्रव्यों के सेवन)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्पन्न होती है । आधुनिक विज्ञान भी बीज दोष को स्थौल्य का एक कारण मानता है और कहा गया है कि कुछ परिवारों में वंश परम्परा से स्थौल्य रोग देखा जाता है ।

3. गलगण्ड :-

वातः कफश्चैव गले प्रवृद्धौ मन्ये तु संसृत्य तथैव मेदः ।
कुर्वन्ति गण्डं क्रमशः स्वलिङ्गैः समन्वितं तं गलगण्ड माहु : ॥23॥

(सुश्रुत, निदान स्थान, अध्याय ।।)

अर्थात वायु और कफ गले में बढ़ कर मज्जा और मेद का आश्रय करके क्रमशः अपने-अपने लक्षणों से युक्त गण्ड रोग को उत्पन्न करते हैं उसे गलगण्ड कहते हैं । इसे मेधा या ग्वाइटर (GOITER) कहते हैं ।

मेदोजन्य गलगण्ड - यह स्पर्श में चिकना और मुलायम, वर्ण में पाण्डु, बुरी गन्ध वाला, पीड़ा रहित तथा अधिक खुजली वाला होता है तथा गले में तुम्बी के समान लटकता है । मूल भाग में पतला होता है तथा शरीर के अनुसार ही घटता और बढ़ता है । इससे पीड़ित मनुष्य का मुख चिपचिपा-सा रहता है तथा उसके गले में सदा अस्पष्ट शब्द होता रहता है ।

4. मेदोऽर्बुद

गात्रप्रदेशे क्वचिदेव दोषाः.....ग्रन्थेः समानानि सदा भवन्ति ॥ 13-15॥

(सुश्रुत, निदान स्थान अध्याय - ।।)

अर्थात् शरीर के किसी भाग में बढ़े हुए दोष मांस तथा रक्त को दूषित करके गोल, निश्चल, अल्प पीड़ा वाले, बड़े, गहरे, देर में बढ़ने और न पकने वाले मांस पिण्ड के समान उन्नत सूजन को उत्पन्न कर देते हैं - विद्वान उसे "अर्बुद" कहते हैं । वह "अर्बुद" वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, रक्तज, मांसज तथा "मेदज" भेद से 7 प्रकार का होता है, उसके लक्षण ग्रन्थि के समान होते हैं ।

इस प्रकार अर्बुदों के नाना भेद हैं, उनमें प्रकरण वश "मेद" के संचय से हुए अर्बुद का यहाँ ग्रहण है अंग्रेजी में इसको "लायपोमा" कहते हैं ।

5. मेदोज ओष्ठ-प्रकोप

तत्रौष्ठ प्रकोपा वातपित्त श्लेष्म सन्निपात रक्त मांस मेदोऽभिघात निमित्ताः ॥ 5 ॥

(सुश्रुत, निदान स्थान अध्याय ।6)

अर्थात् वात, पित्त, कफ, सन्निपात, रक्त, मांस 'मेद' तथा आघात भेद से आठ प्रकार के ओष्ठ रोग होते हैं । इन्हें ओष्ठ प्रकोप भी कहते हैं । इनमें मेदोज यहाँ ग्रहीत हैं ।

मेदसा घृतमण्डा भौ कण्डूमन्तौ स्थिरौ मृदु
अच्छ स्फटिक सङ्काशमास्रावं स्रवतो गुरू ॥ 12॥

(सुश्रुत, निदान स्थान अध्याय ।6)

अर्थात मेदो दुष्टि से ओष्ठ घृतमण्ड के समान रङ्गवाले, कण्डु युक्त स्थिर तथा मुलायम होते हैं एवं स्वच्छ स्फटिक के समान स्राव बहाते हैं और भारी होते हैं ।

6. मधुमेह :- मेदोदुष्टि मधुमेह में अत्यन्त उल्लेखनीय है । आचार्यों ने प्रधान "दूष्य" के रूप में "मेद" को वर्णित किया है । अधिकांशतः मेदो रोग से पीड़ित व्यक्तियों में ही यह विशेष मिलता है । आहार के पाचन की विकृति के परिणाम स्वरूप मेदसंचयाधिक्य एवं तदजन्य रक्त शर्करा की वृद्धि हो कर मधुमेहोत्पत्ति होती है । मेदो दुष्टि की प्रक्रिया अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं विस्तृत होने से एक स्वतंत्र निबन्ध का विषय है । मधुमेह को मात्र अग्नि की दृष्टि से उत्पन्न विकार भी माना जा सकता है । जठराग्नि, भौतिकाग्नि (विशेषतः आप्याग्नि) तथा धात्वाग्नि (विशेषतः मेदोग्नि) सभी इस महद्विकारोत्पति में अपना सम्पूर्ण सहयोग प्रदान करती हैं । श्लेष्मवर्धक हेतु अग्नि-विकृति एवं मन्दता उत्पन्न कर सभी अग्नियों का सहयोग लेते हुए पाचन योग्य अंशों के अविपक्व रखने की स्थिति पैदा करते हैं । जाठराग्निमान्द्य होकर अवस्थापाक की सम्पूर्ण प्रक्रिया आप रूप ही धारण नहीं करती, वरन् मधुराति सेवन से उत्पन्न मधुर विपाक की उष्णता भी इसमें अधिकतम सहयोग देती है ।

वातज मधुर प्रमेह को चरक ने "मधुमेह" नाम दिया है तथा सुश्रुत ने क्षौद्रमेह । क्षौद्र और मधु पर्याय हैं । सुश्रुत ने "मधुमेह" संज्ञा स्वीकारी है, पर अन्य अर्थ में /

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रमेह मात्र प्रतीकार न होने पर या मिथ्या प्रतिकार हो, उस स्थिति में मधुर प्रमेह के रूप में परिणत एवं शरीर पिडकाक्रान्त हो जाता है तथा अन्य लक्षण-प्रादुर्भूत हो जाते हैं । इस स्थिति को ''मधुमेह'' नाम सुश्रुत ने दिया है ।

7. अति स्थौल्य - अति मेदस्विता;

8. अति स्वेद ।

आयुर्वेद के अनुसार किसी भी रोग की उत्पत्ति में ''दोष'' ही विषम हो जाते हैं अर्थात् घट-बढ़ जाते हैं तभी रोगों का प्रादुर्भाव हो जाता है । ''प्रमेह'' में भी यही ''दोष'' कारण दिखाये हैं ।

आचार्य सुश्रुत ने भी कहा है :-

''दोषधातु मल मूलं हि शरीरं, तस्मादेतेषां लक्षणमुच्य मानमुपधारय''

(सुश्रुत, सूत्र अध्याय 15)

और भी कहा है :-

''वातपित्त श्लेष्माण एवं देह सम्भवहेतवः''

(सुश्रुत, सूत्र अध्याय 21)

महर्षि चरक ने भी कुछ इस प्रकार कहा है :

''नित्याः प्राणभृतां देहे वात पित्त कफास्त्रयः ।
विकृताः प्रकृतिस्था वा तान् बुभुत्सेत पण्डितः ॥''

(चरक सूत्र स्थान, अध्याय 18)

परन्तु ''दोषों'' की विषम स्थिति के सम्बन्ध में एक बड़ा भारी तथा महत्वपूर्ण यह प्रश्न उठता है कि यदि शरीर में ''दोष'' बढ़ रहा है तो उसकी वृद्धि किस परिमाण में हुई या हो रही है - इसको देखने-जानने का हमारे पास साधन क्या है ?

आज के वैज्ञानिक युग में, विज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र में बहुत उन्नति हो रही है तथा नये-नये वैज्ञानिक आविष्कार हो रहे हैं और समय के साथ-साथ आण्विक जीव-विज्ञान में तेजी से प्रगति हो रही है । जैव-प्रौद्योगिकी में नए-नए आयाम खुल रहे हैं और एक बिलकुल नए चिकित्सीय विधान के रूप में ''जीन थैरेपी'' के प्रवेश के लिए मंच पूरी तरह तैयार हो गया है । किसी भी जीव की सम्पूर्ण ''आनुवंशिक सामग्री'' उसका ''जीनोम'' कहलाती है । रोगों का पता लगाने के लिए वैज्ञानिकों ने परोक्ष तकनीक अपनायी है ।

पिछले कुछ समय से जीवन का महत्वपूर्ण तत्व ''प्रोटीन'' के अतिरिक्त न्यूक्लीक अम्ल की विद्यमानता सिद्ध किया है जो आनुवंशिक सूचना के संरक्षण तथा माता-पिता से संतान तक उसके संप्रेषण के लिए सबसे अधिक महत्व रखता है ।

हृदय-रोग में ई०सी०जी०

प्रत्येक मनुष्य की हृद-पेशियों में विद्युत-लहरें दौड़ती हैं जिनका उद्गम दाहिना अलिन्द (आरिकल) है ये दोनों अलिन्द से होती हुई निलयों (VENTRICLE) के मध्य भाग में पहुंचती हैं और वहां से दोनों निलयों के द्वारा समस्त शरीर में दौड़ती है । इस विद्युत-तरंग को मापने की क्रिया के यंत्र को इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम (ई०सी०जी०) कहते हैं । इसके लिए Unipolar एवं BLPOLAR LEADS का प्रयोग होता है जिसे रोगी की बाहों, छाती व टाँगों में लगाया जाता है और अब हृदय रोगों में अति आधुनिक यंत्रों का प्रयोग हो रहा है जिससे रोगों के कारण जानने में सहायता करने वाला ''कलर डापलर इको कार्डियोग्राफी व अल्ट्रासाउण्ड की अत्याधुनिक तकनीक'' भी उपलब्ध है । अब हृदय के रोगियों के इलाज में अपनायी जाने वाली उक्त नई तकनीक की सबसे विशेष बात यह है कि यह बीमारी की जड़ तक पहुँचने में सहायता करती है । हृदय रोग का कारण मिल जाने पर, चिकित्सा करना और भी आसान हो जाता है और साथ ही रोगी के जल्द स्वास्थ्य लाभ की संभावनाएं भी बढ़ जाती हैं । इस नई तकनीक से बीमारी के दुष्परिणामों को समय रहते न केवल पहचाना जा सकता है बल्कि बच्चों में हृदय की संरचना व वाल्व की खराबी की पहचान होने पर आपरेशन करके उसे अच्छा जीवन दिया जा सकता है । ''कलर डापलर इकोकार्डियोग्राफी'' की सहायता से हार्ट अटैक के बाद हृदय की निष्क्रिय मांस पेशियों को देखा जा सकता है । हृदय की पंपिंग क्षमता को देखते हुए ''एंजियोग्राफी'' की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवश्यकता या अन्य आपरेशन के बारे में भी निश्चित किया जा सकता है ।

आज के वैज्ञानिक युग में वायु को और उसमें विद्यमान प्रत्येक वायवीयों (गैसों) का विश्लेषण किया जा सकता है तो कोई कारण ऐसा नहीं कि इस "वात" दोष का स्वरूप और उसका परिणाम न निकाला जा सके । इसलियें आयुर्वेदिक वैज्ञानिकों को शरीरस्थ "वात" के स्वरूप को स्पष्ट करना है जैसे पित्त और श्लेष्म के स्वरूप को बतलाया है और महर्षि चरक ने उसे नापा भी है यथा :-

------ अष्टौ शोणितस्य, सप्त पुरीषस्य, षट् श्लेष्मणः, पञ्च पित्तस्य, चत्वारो मूत्रस्य, त्रयो वसायाः, द्वौ मेदसः, एको मज्जायाः, मस्तिष्क स्पार्धाञ्जलिः शुक्रस्य तावदेव प्रमाणं तावदेव श्लैष्मिक स्यौजस इति ।

(चरक, शरीर स्थान अध्याय - 7)

अर्थात जल शरीर में 10 अंजलि (लगभग 1920 मि०लि०) आहार के परिणाम (पाक) स्वरूप पहला जो धातु जिसे "रस" कहा जाता है वह शरीर में 9 अंजलि है ।

रक्त	-	8 अंजलि
पुरीष	-	7 अंजलि
कफ	-	6 अंजलि
पित्त	-	5 अंजलि
मूत्र	-	4 अंजलि
वसा	-	3 अंजलि
मेदा	-	2 अंजलि
मज्जा	-	1 अंजलि
मस्तिष्क	-	½ अंजलि
शुक्र	-	½ अंजलि

कफ के समान गुण वाला ओज - ½ अंजलि

स्वअंजलि प्रमाण सम्भवतः इस बात की तरफ संकेत करता है कि INDIVIDUAL NORMS अलग-अलग होने चाहिए क्योंकि सबकी अंजलियां प्रमाण में एक-सी नहीं हैं ।

आचार्य सुश्रुत भी इस विषय पर कहते हैं:-

वैलक्षण्याच्छरीराणाम स्थातित्वात् तथैव च ।
दोषधातुमलानां तु परिमाणं न विद्यते ॥ 44 ॥

(सुश्रुत संहिता, सूत्रस्थान अध्याय 15)

अर्थात, प्रत्येक मनुष्य के शरीर की हर एक बातों में भिन्नता होने से एवं अस्थायी होने से वातादि दोष, रसादि धातु और विण्मूत्रादि मलों का निश्चित परिमाण, तोल नहीं हो सकता है ।

काश्यप संहिता में भी इसका वर्णन मिलता है ।

परन्तु यहाँ यह प्रश्न यह उठता है । यदि दोष, धातु और मल एक जैसे परिणाम में नहीं रहते यदि यह न्यूनाधिक रहते हैं तो किस में इनकी मात्रा कितनी है उसका तो प्रत्यक्ष ज्ञान होना चाहिए ?

प्रथम, वात, पित्त और कफ यह देह व्यापी माने जाते हैं परन्तु आज तक किसी आयुर्वेद अनुसंधानकर्ता ने वात, पित्त, कफ - शरीर व्यापी है, सिद्ध करने का प्रयत्न नहीं किया, जिसकी आज के समय में बहुत बड़ी आवश्यकता है, वरना यह बतलाना कठिन हो जायेगा कि महर्षि चरक ने किस आधार पर कहा है कि किसी मनुष्य के शरीर में कफ की मात्रा 6 अंजलि (लगभग 1 लीटर, 152 मि०लि०) होती है तथा पित्त की मात्रा 5 अंजलि (लगभग 960 मि०लि०) होती है । महर्षि चरक के समय कोई माप-दण्ड तो अवश्य रहा होगा, जिसके आधार पर उन्होंने उपरोक्त परिमाण कहे । इस पर आज अनुसंधान की बहुत आवश्यकता है ।

ऊपर हमने हृदय रोगों में ई०सी०जी० तथा हृदय रोगों से सम्बन्धित कई आधुनिक यंत्रों का विवरण दिया है जिसका अभिप्राय आयुर्वेद को भी उसी स्तर पर लाना है, जिससे निदान में दोष-ज्ञान, नाड़ी गति, रोग विनिर्णय, रोग-लक्षण इत्यादि का स्पष्टीकरण हो सके ।

आज के वैज्ञानिक युग में, आयुर्वेद जगत को ELECTRONICS SCIENCES, COMPUTER SCIENCE की सहायता लेना अति आवश्यक हो गया है जिसे नाड़ी गति, दोष ज्ञान आदि के SIGNALS को DISPLAY किया जा सके । (सावशेष)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरुषोऽपि बंध्यो भवति तस्य निदान चिकित्सा

वैद्य पं०महावीर प्रसाद मिश्र, आयुर्वेदाचार्य

जबतक इस विषय में अनुसंधान नहीं हुआ था तब तक स्त्री को ही बंध्या मानी जाती थी । पुरुष पुरुष ही ऐसा माना जाता था । किन्तु स्त्री की सब तरह से प्रकृतिस्थ सब तरह से नोर्मल रिर्पाट होने पर भी तथा पुरुष के रति क्रिया में कमजोरी नहीं होने पर जब स्त्री को गर्भाधान नही होता है तब इस पर अनुसंधानात्मक विवेचन हुआ तब पुरुष के शुक्र में सन्तानोत्पादक जो सूक्ष्माणु हैं उनका अभाव या उनकी कमी पायी गयी तब यह निश्चय हुआ कि जैसे स्त्री बंध्या होती है, वैसे ही पुरुष भी बंध्य होता है । इसके पहले पुरुष को क्लीव ही माना जाता था किन्तु क्लीव रति क्रीड़ा करने में असक्त होता है तथा संतानोत्पादक शुक्राणु रहित पुरुष रति क्रीड़ा में सबल रहता है । अत: इसको क्लीव नहीं कहा जाता तब पुरुष को भी बंध्य संज्ञा से निहित माना जाय उपयुक्त समझा गया । पूर्व समय में स्त्री को ही बंध्या मानकर उसका अनादर किया जाता था । अब सम्पन्न वर्ग में यह भावना नहीं रही है । ऐसी शारीरिक स्थिति में स्त्री की सब रिपोर्ट नार्मल होने पर स्त्री जाति का जो अपमान होता था वह अब निर्मूल हो गया है ।

जिस तरह से स्त्री बन्ध्यत्व कारणों से बन्ध्या होती है उसी तरह पुरुष भी शुक्राणुओं में सूक्ष्म सन्तोनात्पादक सूक्ष्म कीटाणुओं की कमी या अभाव होने से स्त्री को सन्तानोत्पत्ति नहीं होती है ऐसी स्थिति में पुरुष को नि:संतान कहा जाता है । संतानोत्पादक शुक्राणुओं की कमी या अभाव होने के बहुत से कारण हैं । किन्तु मुख्य कारण चौदह पंद्रह वर्ष की उम्र में हस्त मैथुनादि प्रक्रिया से अथवा कुसंगति से गनोरिया आदि विकार हो जाते हैं । तब शुक्राणुओं में सन्तानोत्पादक शुक्राणुओं का अभाव हो जाता है या उनमें कमी हो जाती है । इसका निश्चय लेबोटरी में परीक्षण करवाने से ही ज्ञात हो सकता है क्योंकि इन चौहद-पन्द्रह वर्ष की उम्र के बाद ही वीर्य में परिपक्वता "शुद्ध स्फटिक संनाभम्" प्रारम्भ होती है । पुरुष के शुद्ध वीर्य स्त्री के शुद्ध रज होने से ही गर्भधारण है । समाज में प्रचलित मान्यता है कि पुरुष तो पुरुष ही होता है स्त्री ही बन्ध्या "बांझ" होती है । यह अवधारणा अब भिन्न समाज में निर्मूल हो गयी है फिर भी विवाह के बाद समयातीत होने पर जब सन्तान नहीं होती है तब स्त्री की ही सब तरह से परीक्षण करवाया जाता है । स्त्री में किसी तरह की कमी नहीं होने के बाद चिकित्सक राय के अनुसार पुरुष का परीक्षण करवाया जाता है । जब पुरुष के शुक्राणुओं में सन्तानोत्पादक शुक्राणुओं में अभाव या अल्पता का निदान हो जाता है तब उसके लिए चिकित्सा की व्यवस्था की जाती है किन्तु ऐसी चिकित्सा दीर्घकालिक 6 महीना से वर्ष पर्यन्त की होती है । इस अवधि में नियमित पथ्य पालन तथा संयम "ब्रह्मचर्य" पालन अंतीव आवश्यक होता है । आधुनिक जमाने में पुरुष इन दोनों का पालन करे ऐसा असंभव हो रहा है । अत: वह पुरुष "नि:संतान ही" रहता है ।

बन्ध्यत्व निवारण के लिए आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में अन्वेषणात्मक अनुसंधान किया है और अभी हो भी रहा है इसमें भी बारह महीना पर्यन्त मासिक चिकित्सा की जाती है । यह चिकित्सा अति व्यय साध्य है । फिर भी इसमें पूर्ण सफलता का अनुभव नही हुआ है । "क्वचित अपवाद भी नही है" यह मेरा अपनी चिकित्सा के साथ में अनुभव हुआ है ।

ऐसे रोगी के लिए आयुर्वेदिक चिकित्सा में बृंहण और वाजीकरण चिकित्सा का प्रयोग सद्य: लाभप्रद होता है । इस चिकित्सा में जंगल में चरने वाली घर की पालतू गौ का घृत तथा दुग्ध के साथ वाजीकरण योग का सफल प्रयोग होता है । किन्तु वर्तमान समय में भी यह भी सर्वसाधरण जन के लिए अलभ्य होता जा रहा है तथा आधुनिक मानव की दिनचर्या और खानपान की प्रवृति के अनुकूल "सात्मय" नहीं रहता है । ऐसी स्थिति में मेरा चिकित्सा अनुभव यह है कि जब परिपक्व हो, आंवले का मौसम चालू हो तभी से जब तक आंवला मिले तब तक चार बड़े आंवलों का रस निकालें उसको किंचित गर्म करके उसमें छोटी मक्खी के छाते का शुद्ध शहद एक चाय का चम्मच मिला के उसके साथ में दो रत्ती चन्द्रपुटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रवाल पिष्टी का प्रति दिन सेवन करें । रस लेने के आधा घंटा पीछे दूध या दूध में ही साधारण चाय बना के पीवें । जैसा प्रकृति के अनुकूल हो । साधारण दूध में दो ग्राम केशर दस ग्राम सूंठ का पाउडर और दसग्राम इलाइची का दाना बारीक पाउडर बना के रखें । जब दूध गर्म करें तब उसमें एक चपटी भर पाउडर दूध में डालकर पकने देवें उसमें मिश्री का पाउडर मिला के दूध पीवें । इस प्रयोग के चालू करने से पहले स्वादिष्ट विरेचन आदि से पेट के मल को अवश्य साफ करें । इस चिकित्सा प्रयोग से जो सन्तानोत्पादक शुक्राणुओं की अल्पता होती है उसकी वृद्धि होकर प्रकृतिस्थ हो जाती है किन्तु दो-दो महीना से लेबोटरी में शुक्र का अवश्य परीक्षण करवाना चाहिए जब तक शुक्राणु तथा वीर्य प्रकृतिस्थ नहीं हो तबतक यह चिकित्सा चालू रखनी चाहिए । जब हरे आंवला का मौसम नहीं रहे तब उसके बाद प्रति दिन बड़े आंवले का मुरब्बा खाके ऊपर से दूध पीना चाहिए । इस प्रयोग के साथ में ज्यादा खट्टी तथा मिर्ची-मसाले के द्रव्यों से परहेज रखना चाहिए ।

पुरुष को बीजवाही दो नलिकायें होती हैं । मैथुन के समय स्खलन होते वक्त इनमें से ही शुक्राणुओं का निःस्सारण होता है । यदि इनमें अवरोध हो तो इनकी शल्य चिकित्सा डाक्टर से शस्त्रक्रिया करवानी चाहिए । इनके अवरोध से भी पुरुष संतान हीन होता है ।

प्रशस्त बीजाणु उत्पादक चिकित्सा में वर्षा ऋतु के बाद खेतों में दडगल नाम से प्रसिद्ध एक आशा पालो औषध की जड़ होती है जो जमीन में गड़ी हुई रहती है इसको लाकर सुखाकर इसका चूर्ण बना लिया जावे । इसमें बराबर का मिश्री का पाउडर मिलाकर प्रतिदिन 10 ग्राम मात्रा से सुबह-शाम दूध के साथ सेवन करने से शुक्राणुओं की वृद्धि होती है तथा सम्भोग शक्ति भी बढ़ती है । नियमित एक किलो सेवन करने से बीजाणुओं की वृद्धि तथा उत्पत्ति भी हो जाती है जिससे निःसंतान पुरुष संतान उत्पन्न करने में समर्थ हो जाता है ।

शिश्न "लिंग" शैथल्यता के लिए उसके ऊपर बादाम तेल 50 ग्राम में 3 ग्राम भीम सेनी कपूर डालकर रखें । इसकी स्नान पहले या रात्रि में हलके हाथ की अंगुलियों से मालिश करें, फिर स्नान के वक्त किंचित गर्म पानी से उष्मा देकर साफ कर देवे । प्रतिदिन लंगोट का प्रयोग अवश्य रखें ।

किसी सम्पन्न व्यक्ति के लिए घृत चिकित्सा की आवश्यकता हो तो घर में जो गौ हो उसके घृत से कामदेव घृत को शुरू करें । इस कामदेव घृत के सेवन से संतान हीन व्यक्ति के शुक्राणुओं का निर्माण भी होता है और बीजाणु की अभिवृद्धि होकर पुरुष-प्रकृतिस्थ स्वस्थ होकर संतानोत्पादन में समर्थ हो जाता है । इस कामदेव घृत के साथ पुष्यधन्वा रस-मन्मथाभ्ररस-वृहत काम चूणमणि रस इनमें से किसी भी एक का प्रयोग सद्यः लाभ प्रद होता है । कामदेव घृत की निर्माण विधि-चक्रदत्त-यादवजी त्रिकम जी आचार्य की सिद्धयोग संग्रह या बैद्यनाथ से प्रकाशित आयुर्वेद संग्रह में वर्णित है । उसके अनुसार चिकित्सक से निर्माण करा लेवें । मैंने जितने भी इस विषय में लिखे हैं ये सब स्वानुभव सिद्ध प्रयोग हैं ।

नोन वेजीटेरियन समाज के व्यक्ति के लिए मेरा यह भी अनुभव है कि उसको बस्ताण्ड सिद्ध दुग्ध का प्रयोग करें ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

AYURVEDIC EDUCATION - AN ANALYTIC REVIEW

* Dr. Gupta Gaurish Kumar
** Prof. Sharma Ajay Kumar

In the present times people are attracted more towards western civilization. The impact of western culture has changed the life style of Indians to a large extent. It is surprising that the western people are highly impressed with the Indian culture whereas more Indians are turning towards western civilization.

Ayurveda is a science of life with two main objectives -

1. Maintenance and promotion of positive health of healthy individuals.

2. To cure the disease of diseased people.

It is well established fact that Ayurvedic science has lot of potential that is why many scholars of other sciences are adopting Ayurveda as the way of leading their lives. Ayurveda had a glorious past. But unfortunately due to various reasons there had been a constant decline in the modern times in the status of Ayurveda. When we speak of medical education the young generation is tempted to study modern system of medicine. A very small fraction of younger generation is coming forward to study Ayurveda as medical science. What is the reason for the change in basic approach has to be critically analysed.

It appears that poor standard of Ayurvedic education, degradation of Ayurvedic science at various fronts, various lacunas at different levels and constant struggle and stressful life of an Ayurvedic man are some of the important factors of the deterioration of interest of people and students in Ayurveda.

The limitations of modern medical science in controlling various diseases like Articular disorders, Liver disorders and Stress induced disorders etc. have forced modern scientists to search for various systems of medicines for controlling such challenging disorders. Adoption of Ayurveda seems to be one of the best possible solutions because of its cost effective and safe medicines.

If this is to be done the interest of the people and younger generation has to be increased in Ayurvedic medicines. Improving the standards of Ayurvedic education is one of the possible methods for increasing the popularity and acceptability of Ayurveda amongst the masses.

The authors are tempted to suggest a few strategies to improve the teaching/academic activities in Ayurveda. There is a need of uniformity in teaching degree and formulating minimum standards of Ayurvedic education. The syllabus to be implemented at Undergraduate, Post graduate and Doctorate levels has to be uniform throughout India. Minimum standards of Ayurvedic education must be made mandatory to be followed by various Ayurvedic institutions.

Similarly the basic qualifications for selection of students to be selected for various Ayurvedic courses have to be the same throughout the country. It is to be seen that the period and pattern of courses, the pattern of examination and implementation of the norms are to be strictly followed by C.C.I.M. Selection of teachers/physicians/medical officers for various Ayurvedic institutions should be made on standard parameters for basic qualifications of the concerned post.

Greater need is felt for creating cordial relationship between teachers and students for making the teaching/academic atmosphere in Ayurvedic institutions. It is expected that Ayurvedic scholars should have adequate knowledge of Hindi, Sanskrit and English language. This will help in better understanding of the subject to Ayurvedic people. While imparting education to students it is expected from a teacher to impart subjective, objective and analytical knowledge to a student with an approach of correlation of Ayurvedic concepts with modern concepts on scientific background. This approach will develop interest of Ayurvedic scholars in Ayurvedic science.

Regular conduct of seminars, symposia,

* M.D. (Ay.) Scholar, P.G. Deptt. of Kayachikitsa, N.I.A., Jaipur-302002
** Prof. & Head, P.G. Deptt. of Kayachikitsa, N.I.A., Jaipur - 302002

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

workshops and extension lecturers wil help in upgrading the knowledge and standards of Ayurvedic education. More of Ayurvedic people should be encouraged to participate in such activities. Regular reorientation courses for teachers in their respective subjects should be made compulsory which will help in free flow of knowledge at different levels. There has to be clearcut difference in the quality and quantity of teaching materials to the Undergraduate, Postgraduate and Doctorate levels. For the purpose the existing literature whether published, hand written, Ayurvedic or allied literature has to be screened and incorporated in Ayurvedic courses logically.

It is felt that there is a serious lacuna in imparting of practical training to students. There seems to no way out except to emphasize on clinical/bedside/practical teaching or demonstrations to the students for better grasping of the subject by the students. Practical demonstrations are likely to induce lot of confidence in youngsters. Teaching methodology has to be modernized by the introduction of Audio-visual methods for teaching purpose. It will improve the reception of the subject and make the teaching activities more interesting.

Academic tours, mobile camps and surveys from different angles are to be conducted regularly. This activity will encourage the exchange of knowledge at different levels and ultimately lead to better standards of Ayurvedic education.

There is need for well organised and standard valuation and examinations systems throughout the country. Minimum standard of examinations must be maintained at all costs in different Ayurvedic institutions throughout the country. Meritorious students should be encouraged by awarding them various prizes, appreciations and honours. This will encourage Ayurvedic students for involving themselves in Ayurvedic studies regularly.

There is urgent need to supplement Ayurveda with modern scientific developments of allied sciences to improve the standards of teaching and practice of Ayurveda.

CONCLUSIONS :-

Ayurveda is struggling hard to regain its lost past glory. Measures like scientific research in Ayurveda, validation of Ayurvedic principles on scientific parameters, improving the standards of teaching in Ayurveda and creating awareness about the importance of Ayurveda amongst the masses are some of the measures which need to be pursued at war level.

REFERENCES :-

1. Ayurveda Ka Vaigyanika Itihas by Acharya Priyavrata Sharma.
2. Shiksha Ke Naye Prayog Evam Vidhana by Pandit Sita Ram Chaturvedi.
3. Vigyana Aur Vishwavidyalaya by Dr. D.S. Kothari.
4. Shaikshika Anusandhana by Prof. H.C. Sinha.
5. The Journal of Research and Education in Indian Medicine Vol. VI, 1987.

बैद्यनाथ

घाव मलहम

फोड़े, फुंसी तथा खुजली में लाभदायक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CLINICAL EFFECT OF USTOOKHUDUS CHURANA ON MIGRAINE (VATIC SHIRAHSHOOL)

* Dr. Sanjiv Kumar, ** Dr. Sanjay Sharma, *** Dr. Parveen Bansal, **** Dr. M.V. Acharya

INTRODUCTION :

As India is one of the densely populated countries and maximum part of population especially in the big cities are attending the neurological OPD with the headache because of their unnecessary tension, heavy workload, modern living style and erratic dietary habits. The term migraine, which is one type of headache, has been derived from Greek word hemi crania, which means 'half a head'. It is a periodic headache that is usually unilateral in onset but may become generalized. It is more common in women than men and about 60% sufferers are women. It may appear in childhood and usually begins before the age of 40 and more commonly in second or thrid decades of life. According to an estimate about 70% sufferers have positive family history. Most common factors influencing attacks are stress, fatigue, alcohol, tyramine, cured meats, hypoglycemia and some hormonal changes. Nausea and vomiting, cranial tenderness, photophobia, lacrimation, excessive sweating, local and generalized oedema and polyuria are some of the important symptoms. Medical science has been trying for its treatment since 10th century A.D. in which a Spanish born physician suggested application of hot iron to the head or insertion of garlic into an incision made in the temple. Now a days there are so many durgs on which trials are continued to find out some treatment, but till now nothing positive could come out and whatever is available has a number of side effects. Keeping this view in mind Ustookhudoos (Lavandula stoechus) was put under trial for its efficacy in treatment of migraine or vatic shirah shool in Ayurvedic terms.

MATERIAL AND METHOD :

Fifteen patients with sign and symptoms of migraine (Vatik Sirah Shool) were registered in the trial. The trial was conducted at Govt. Ayurvedic College, Patiala on 15 voluntarily accepted patients of either sex and age between 16-17 years. Study group was given Ustookhudus (Lavandula stoechus – flowers and leaves powder) in a dose of 8 gm daily in divided doses with tap water for a period of 60 days. Symptomatic analysis was made after every 15 days. Symptoms that were taken into consideration are as in Table 1. Results of study were calculated from symptomatic relief. The formulations used were procured from the Pharmacy of the Institute. The patients were put on a restricted diet and were instructed to avoid chocolate, vinegar, sour cream, yoghurt, nuts, peanut better, Chinese foods, onions, canned figs, citrus foods, hot fresh breads, pizza, excessive tea, coffee, cold beverages fermented sausage, chicken liver and alcoholic beverages.

RESULTS AND DISCUSSION:

In patients suffering from migraine, it was observed that several factors such as living style, dietary habits, excess tension, less sound sleep and long time journey are involved in the pathogenesis of migraine. Ustookhudus Churan was found very effective on five symptoms out of the total seven symptoms included in the studies. As shown in the table No.1, there was 75-100% relief in 3 symptoms and 2 symptoms were relieved to the extent of 50-65%, However, rest symptoms could not be relieved satisfactorily. The result of trial medicine seems to be outcome of effect of oil of the plant, which is useful in nervous headache. Fomentation with flowers relieves rheumatic and neurological pain[1]. The drug has an agreeable odour of lavender. Mohammedan physicians regard it as cephalic resolvent and deobstruent. In MAKHZAN-EL-AJWIYA it is called the broom of brain. It is said to sweep away all Kapha impurities, remove obstructions, strengthen brainpower, expel brain crudities and clarify intellect[2]. According to Ayurvedic text also

* Research Officer (Ay), Central Research Institute (Ay), Patiala
** Ayurveda Expert, TKDL Project (CCRAS), New Delhi
*** Research Officer (Biochem), Central Research Institute (Ay), Patiala
**** Assistant Director Incharge, Central Research Institute (Ay), Patiala

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Ustookhudus has been found effective in headache[3]. Hence Ustookhudus flowers and leaf churan (powder) can be recommended to the patient of migraine with almost negligible side effects.

REFERENCES:

1. Anonymous, Wealth of India, VI 47: Perfume essential oil, Rec., 1956, 232.
2. Nadkarni, A.K. (1982) - Indian Materia Medica Vol. I, PP-1261 (Popular Parkashan Pvt. Ltd., Bombay)
3. Bhandari, C. Vanaushadhi Chandrodya (Chaukhamba Sanskrti Series, Varanasi).

TABLE-1

S. No.	Symptoms	No. of patients					
		BT	15 days	30 days	45 days	60 days	% relief
1.	Pain in temporal region	4	4	4	4	1	75%
2.	Giddiness	6	6	3	0	0	100%
3.	Photophobia	5	5	4	4	4	20%
4.	Nausea and vomiting	9	9	5	5	5	33%
5.	Hemicrania	8	8	8	6	3	62.5%
6.	Feeling as if eyes are coming out	4	4	4	3	2	50%
7.	Pain as if bones are separating	4	4	4	3	1	75%

खिलते यौवन के निशान भला चेहरे पर आए क्यों कर ?

यौवन के साथ-साथ मुहासों का आना भी स्वाभाविक है, पर इनके इलाज के लिए क्रीम आदि से भी पूरी बात नहीं बनती। ये त्वचा की सतह पर ही काम करती है, समस्या की जड़ तक नहीं पहुंच पातीं और इसके कारण कभी-कभी रह जाते हैं भद्दे निशान। बैद्यनाथ सुरक्ता रक्त साफ कर, त्वचा में निखार लाती है और आपके चेहरे की दमक बन जाती है खिलते यौवन की निशानी।

बैद्यनाथ सुरक्ता

हर्बल रक्त शोधक

कील मुहांसों के लिए

सुन्दर त्वचा भीतर से निखरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

STUDY OF URINARY DISORDER AND PRAMEHA (DIABETES) IN BRIHATRAYEE "SEARCHING FOR PROBABLE RISK - FACTORS"

* Dr. O.P. Gupta
**Dr. SANGRAM MISHRA

The trends of urinary disorders and diabetes are increasing day by day throughout the world from metros to tiny village, though various synthetic and non-synthetic medicines are available these days with different claims and hypothesis. In spite of various technological and diagnostic advancement of medical science the incidence of urinary trouble is now prevalent to minor age group also which is hampering entire human power and resources throughout the world. It is very important at this juncture to think again about the preventive and curative medicine written in Ayurvedic classics. The disorders mentioned are Urinary disorders or they are concerned about metabolic or hormonal disorder. The source of infective urinary disorder are also not very clear. All the above documents will be evaluated and recollected properly with drugs written in Brihatrai. As example diuretic agent or other agent which may effect urinary passage through its antiseptic properties are also used even in prameha.

In Ayurveda the urinary problems are included mainly in following groups of disease. They are as

* Mutra Kruchhra
* Somroga
* Mutraghat
* Shajya mutra
* Prameha
* Mutra baha srotas Abrodha.

All these are classified along with its cause and treatment to search for probable risk factors.

Sl. No.	Named by Madhab	Sign and symptoms	Probable comparative Diseases
1.	Vataj	Pain in Bankhana Basti & Mutreindriya. Scanty urination with frequency	Stenosis or stricture anamoly
2.	Pitaja	Burning sensation at muska m :reidriya Colour will the slightly yellowish or reddish Painful scanty hot urination.	Infection U.T.I./S.T.D.
3.	Kappaj	Heavyness on Basti, Scrotum and mutreindriya of Basti Andakosa. Urine is cold, snigdha & pichhila.	Full hen of abdomen Gas, Constipation Pregnancy with infection.
4.	Sannipataj	Mixed type of sign and symptoms can be seen. Very painful micturition.	U.T.I.
5.	Abhighataj	It is due to injury to mutrabaha srotas by externally or internally. Painful micturition with blood	Urolithiasis or Traumatic
6.	Sakritpratighataj	It is caused due to bega dharana of Apan baya. There will be Adhmana, Vataj sula and mutrabrodha.	Constipation
7.	Asmarija Mutrakrichhra	The Sarkara formed from Asmari by vayu gives much more pain when it passes through mutrabaha srotas. Hritsula, cramps on hands and feet, pain on kukhi & Basti, murchha severe mutrakrichhra	Urolithiasis

* Professor, Head of the Dept. (Kayachikitsa) P.G. Sections ** P.G. Scholar Deptt. of Samhita & Siddhant)
Govt. Ayurvedic College, Jalukbari Guwahati - 14 (ASSAM)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Sl. No.	Named by Madhab	Sign and symptoms	Probable comparative Diseases
8.	Sukraj mutrakrichhra	Sukra solidifies on the mutrabaha srotas and it passes through urine Pain on Bankhyana sandhi (inguinal region). Basti sisna	spermaturia

Division

Madhab Nidan	Charak Samhita	Sustuta Samhita
Vataj	—	—
Pitaj	—	—
Kaphaj	—	—
Sannipataj	—	—
Abhighataj	—	—
Sakrit Pratighataj	Sukraj	—
Asmarija	—	Asmarijat Sukraj mutrakrichhra
Sarkaraja Asmarija	—	—

MUTRAGHAT

Sl. No.	Name of the Mutraghat	Sign Symptoms	Probable Correlations
1.	Batakundalika	Excess Rukhya Padartha and holding the natural urges like mutra, Vayu aggravates. It obstructs the mutras and makes a movement like kundala. Patient passes very less quantity of urine with pain.	Spasmodic stricture Dehydration
2.	Asthila	Vitiated vata makes Adhman at vasti and Guda prades like a granthi which is known as Asthila. Patient passes very painful scanty urination.	Enlarged Prostate (Old – age) or growth
3.	Batabasti	If the urine is obstructed, then bayu of Basti aggravates and obstructs the Channels of vasti. The urination completely stops severe pain occurs on kukhi and Basti region which as known as Batabasti	Retention of urine Urolithiasis
4.	Mutratita	This condition happens when urine is held up for a long time and urine comes very slowly at the time of urination.	Incontinence of urine, BHP
5.	Mutrajathar	If urine is held up at the time of urge, then the Apan bata aggravates and forms udabarth. There will be painful adhman below the umbilicus some amount	Distended Bladder Stricture urethras or inflamed

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Sl. No.	Name of the Mutraghat	Sign. & Symptoms	Probable Correlations
6.	Mutratsang	Urine remains in the Basti, Sisnanala, or sisnamani and it comes out with blood after giving pressure. Then urine comes with or without pain slowly.	Stricture of urethra
7.	Mutrakhaya	Pitta and Bata aggravates in persons having Rukhya prakruti and lean & thin body makes the urine scanty, painful and burning sensation.	Anurea or suppression of urine - C R F
8.	Mutragranthi	One small round fixed granthi destructs the basti and gives pain like asmari.	Enlarged prostate or tumour of the bladder or stone obstructing the bladder neck.
9.	Mutrasarkra	If sexual act is done at the time of urge of urine, the sukra, is covered by urine, comes with urine. The colour will be white, like lime water.	Stagnation of semen or U.T.I.
10.	Usnabata	Excessive Bayam (Exercise), walking, exposure to sun rays, causes the Vayu & Pitta to be vitiated at Basti so there will be burning. Sensation at medhra & guda prades, Urine colour will be Haridra barna or mixed with blood.	Any type of bacterial infection of urinary tract including Gonococci.
11.	Mutrasada	When Pitta, Kapha vitiated by vata, then the urine colour will be pitarakta or sweta and dense, painful, scanty urine occurs. This can be compared with the colour of Gorachan or Sankhachurna.	Retention of urine or scanty urination, oleguria HTN C DM
12.	Bidbighta	Mala vitiated by vata comes to mutramarga of Rukhya & weak people, then the urine is passed with mala or odour of mala comes on the urine.	Retention of urine due to severe or rectovesical fistula or Pregnancy
13.	Bastikandala	By doing excessive exercise by walking, jumping, or any external trauma, Basti displaces from its original place and occupies some upper position like Garbha. There will be burning sensation on Basti, scanty drop wise urination occurs but it flows freely after getting pressure.	Atomic condition of the bladder.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Types

	Charak 13 types		Susruta 12 types
(1)	Mutroukasada	(1)	Pittaj Mutraukasada
(2)	Mutrajathara	(2)	Kaphaj Mutroukasada
(3)	Mutrakrichhra	(3)	Mutrajathar
(4)	Mutrasanga	(4)	Mutrasukra
(5)	Mutrakhaya	(5)	Mutrasanga
(6)	Mutratita	(6)	Mutrakhaya
(7)	Batasthila	(7)	Matratita
(8)	Batabasti	(8)	Asthila
(9)	Usnabata	(9)	Batabasti
(10)	Bata kundalika	(10)	Usnabata
(11)	Mutragrarthi	(11)	Batakundalika
(12)	Bidbighat	(12)	Mutragranthi
(13)	Basti kundal		

PRAMEHA

Kaphaja Prameha

1.	Udak meha–	Due to kapha, the urine colour will be more.white, clean, cold, odourless like the water.	Diabetes insipidus Or Poly-urea
2.	Ikhubalikarasameba-	The urine will be more sweet, cold, slightly sticky with bad odour like the juice of sugar cane.	Alimentary glycosuria
3.	Sandhrameha–	If the urine is kept for sometimes (Basti) it becomes more dense. It is called as Sandhramehi.	Phosphoturia Or Albuminoria
4.	Sandhraprasadmeha-	The urine will become dense partly and fluid will also become the same partly after keeping some times in a pot.	STD/UTI
5.	Suklameha–	Some white material like atta o. rice will come with urine.	Chyluria
6.	Sukrameha–	The urine colour will be like sukra or mixed with sukra and repeated urination occurs.	Spermaturia Or STD
7.	Sitameha–	The urine will more be cold and sweet and frequent urination occurs.	Renal glycosuria
8.	Sikatameha–	The dosa of mutra will come out as particles through urine.	Urolithiasis
9.	Saneimeha–	The patient will pass urine very painfully slowly and having no urge.	BHP
10.	Alalameha–	The urine will be very much sticky like wire.	Albuminuria. Or Phosphoturia Or UTI

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Pitaja Prameha

1.	Kharameha	The odour, smell colour, and touch.	Uralmig Gout
2.	Kalamcha (Charak) Amlamcha (Susruta)	The colour of the urine will be black and hot urine.	Malaena (black stool) P.U. cirrhotic S.
3.	Nilameha	The colour of urine is blue like the the neck of chasyapakhi.	Cirrhotic
4.	Raktameha	The colour of urine will be red like blood, Bisra (Aamgandhi), Salty, and hot.	Hematuria Lithiasis
5.	Manyistham Prameha	The colour of the urine will be like decoction of manjistha.	Haemoglobinuria.
6.	Haridrameha	The colour of the urine will be yellow like the juice of turmeric with Katu rasa.	Bilirubinuria.

Vataj Prameha

1.	Basameha	The urine is like mixture with basa or the colour is like basa	DM NIDDM
2.	Majjameha (Charak)	The person passes urine mixed with majja frequently.	DM NIDDM
3.	Hastimeha	The person passes urine a huge quantity like a mad elephant.	Polyurea (Metabolic)
4.	madhumeha	The person passes urine with Kasaya, madhura rasa and pandu varna & Rukhya guna.	IDDM

SOMROGA

Disease of mutramarga in which secretion of watery substance takes harewithout odour and sticky. The secretion is very clear and cold and painless.	Leucorrhoea or diabetes insipidus in women.

SHAJYA MUTRA

It occurs in the Paediatric group of patient within 3 - 5 yrs. Child passes urine unknowingly and cann't control the urge. It may be due to bad habits deformity in organ and mental stress coming from the family or environment.	Parasites and worm infestation.

MUTRAVAHA SROTAS AVARODHA

Excess urination with slow motion dense with frequency. There will be inflammation of basti and stabdhata in sisna.	UTI

SOME TREATMENTS DESCRIBED IN BRIHATRAI

Kaphaj Prameha

Charak	Susruta	Bhaisajay Ratnavalli
Daruharida	Baijayanti	Bayavidanga
Devadaru	Neem	Patha
Nagarmutha	Citrak	Kadamba

Pittaj Prameha

Khás	Manjistha	Lodhra
Lalchandan	Guduchi	Puskarmula
Nagarmutha	Tinduka	Sunth

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Vataj Prameha

Kutaja
Aruni
Sirisa Kutki
Giloya
Amlatas

Some Yogas like

Haldi, Amla juice, Honey

Triphala, Indrayan, Devadaru, Nagarmutha Decoction Sal, Kampillak, Patal bark, Karsa, Haldi powder, Madhu, Amlarasa Kutaj, Kaitha, Rohitak, Bibhitak, Saptaparna flower with Amla swaras Neem, Amlatas, Saptaparna, Murva, Kutaja, Samabrikhya, Palas (bark, leaf, root, fruit) decoction with Madhu and Amla decoction.

Ghrit and oil preparation :

Dhanvantar ghrita
Tubarak Tail
Bidangadi Tail as Anuvasana basti

DISCUSSION AND CONCLUSION

The clinical pictures and treatment described in above, pathogenesis indicates that Prameha, is not only DM, it may be various other urinary troubles, including DM, where as the mutra krichhra can be correlated with UTI, BHP, Hypertension, Dehydration and their urinary disorders including infections where as Mutraghat may be correlated with the diseases concerned with Kidney - disorders, and STD, shaiya mutra may be due to parasites and worms, and soma-roga are infective and metabolic disorders. It has been observed during the study that Meda (Lipids) have specific role in pathogenesis, and Kaphaj Ahar (Fatty & sweet) and Kaphaj vihar (sedentary life style) also, behave as risk factor, it is also observed that there is relation between Medovah srotas and Brikka (root of medovah–srotas) (Ch.Vi. 5/16, Su.Sa. 9/12). The chronic indig- stion, with mal absorption, which lead to a syndrome known as Grahani, also behaves as risk factor (Ch. Chi. 15/52-54). Thus for prevention of the disease Nidanam Parivarjanam is highly effective, and for the treatment, the drugs and diet (pathys) which reduces the Meda dhatu (Lipid) may be considered for total cure.

प्रसूता के लिए बलवर्द्धक श्रेष्ठ टॉनिक

बैद्यनाथ

दशमूलारिष्ट

तेज बल एवं कान्ति बढ़ाने में प्रसिद्ध । संग्रहणी, मंदाग्नि, अरुचि, उदर रोग, खांसी, दमा, कमजोरी आदि रोगों का शास्त्रोक्त दवा है । इससे बल और कान्ति बढ़ती है तथा शरीर पुष्ट होता है । प्रसव के बाद इसके सेवन द्वारा माताएं अपने और शिशु के स्वास्थ्य की रक्षा करती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परीक्षोपयोगी प्रश्नोत्तरी

1 नवम्बर 2003 को दयानन्द आयुर्वेदिक कालेज जालन्धर में आयोजित इन्टर कालेज चरक क्विज प्रतियोगिता में पूछे गए प्रश्न (सूत्र स्थान एवं चिकित्सा स्थान के प्रथम 20 अध्याय पर आधारित)

डा० अनूप कु० गक्खड़, एम०डी० (आयुर्वेद)

1. पित्त प्रमेह के भेदों का वर्णन करते हुए अन्तिम भेद कौन-सा बताया है ?
   (क) क्षार मेह (ख) नीलमेह
   (ग) रक्तमेह (घ) हरिद्रामेह
2. द्विष्टार्थसंयोगत भेद किस रोग का है ?
   (क) हिक्का (ख) कास
   (ग) छर्दि (घ) अतिसार
3. कुष्ठ रोग में वर्णित तिक्तषटपल घृत निर्माण हेतु किस प्रकार के घृत ग्रहण करने का निर्देश है ?
   (क) नव घृत (ख) 10 वर्ष पुराना
   (ग) 100 वर्ष पुराना (घ) 1000 वर्ष पुराना
4. किस द्रव्य का प्रयोग वमन एवं विरेचन दोनों के रूप में होता है ?
   (क) अर्क (ख) अश्मन्तक
   (ग) स्नुही (घ) पुतीक
5. मूत्र को किस रोग के रोगियों के लिए विशेष कल्याणकारी कहा गया है ?
   (क) पाण्डु (ख) कामला (ग) कुष्ठ (घ) शोथ
6. वातरक्त किस रस के अतिसेवन से होता है ?
   (क) मधुर (ख) अम्ल
   (ग) लवण (घ) कषाय
7. सर्वश्रेष्ठ मूत्रजनन द्रव्य कौन-सा है ?
   (क) जल (ख) मूली (ग) दूध **(घ) इक्षु**
8. आयुर्वेद में शाखा शब्द किसके लिए प्रयुक्त हुआ है ?
   (क) हस्तपाद
   (ख) रस को छोड़कर सभी धातुएं
   (ग) रसादि सात धातुएं
   (घ) रसादि धातु एवं दोष
9. शस्त्र का प्रयोग किस प्रकार के गुल्म में नहीं करना चाहिए ?
   (क) वातज गुल्म (ख) पित्तज गुल्म
   (ग) कफज गुल्म (घ) सन्निपातज गुल्म
10. मधुमेह के निदान व सम्प्राप्ति का वर्णन किस अध्याय में किया गया है ?
    (क) प्रमेह चिकित्सा अध्याय
    (ख) प्रमेह निदान अध्याय
    (ग) कियन्त शिरसीय अध्याय
    (घ) सन्तर्पणीया अध्याय
11. गुल्म रोग में किसकी रक्षा करनी चाहिए ?
    (क) जठराग्नि (ख) मल
    (ग) स्वेद (घ) मूत्र
12. उन्माद में किस स्थल की शिरा का वेधन करना चाहिए ?
    (क) नाभि (ख) वस्ति (ग) गुल्फ **(घ) शंख**
13. बेर के क्वाथ के साथ नारायण चूर्ण का सेवन किस रोग में निर्दिष्ट है ?
    (क) गुल्म (ख) अर्श
    (ग) ग्रहणी (घ) अतिसार
14. दृढ़बल ने चरक के कितने अध्यायों की पूर्ति की ?
    (क) 17 **(ख) 41** (ग) 12 (घ) 15
15. पाण्डु किस दोष की विकृति का लक्षण है ?
    (क) वात (ख) पित्त **(ग) कफ** (घ) रक्त
16. सूत्र स्थान के 26 वें अध्याय में षडरस सिद्धान्त का पक्ष किस महर्षि ने रखा ?
    (क) विदेह राज निमि **(ख) वार्योविद**
    (ग) आत्रेय (घ) कांकायण
17. उत्तमशुद्धि हेतु संसर्जन क्रम हेतु कितने अन्नकाल बताए हैं ?
    (क) 7 (ख) 3 (ग) 5 **(घ) 12**
18. दाहकण्डू रूजा रागपरीतं लोभ पिञ्जरम् - यह लक्षण किस कुष्ठ के है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(क) औदम्बुर (ख) मण्डल
(ग) पुण्डरीक (घ) क्षुद्र

19. वातकलाकलीय अध्याय में आचार्य कुश ने वात के कितने गुण बताए हैं ?
(क) 8 **(ख) 6** (ग) 7 (घ) 10

20. मन्दविभ्रशः क्या है ?
(क) विचारणा (ख) प्रविचारणा
(ग) स्नेह की मध्यम मात्रा (घ) स्नेध्येनि

21. निम्नलिखित में से महागद शब्द का प्रयोग किसके लिए किया गया है ?
(क) ज्वर (ख) राजयक्ष्मा **(ग) खयथु** (घ)प्रमेह

22. यक्ष्मा में रक्त निष्ठीवत का कारण क्या है ?
(क) समशन (ख) विरुद्धाशन
(ग) विषमाशन (घ) अजीर्ण

23. रात्रि में किस प्रकार के शोथ की वृद्धि होती है ?
(क) वातज (ख) पित्तज
(ग) कफज (घ) सन्निपातज

24. वातनानात्मक रोग कौन-सा नहीं है ?
(क) अवबाहुक (ख) ग्रधृसी
(ग) आक्षेपक (घ) उन्माद

25. आयुर्वेद शास्त्र का अधिकरण क्या है ?
(क) सत्वात्मा शरीर (ख) हेतु लिङ्ग औषध
(ग) वात पित्त कफ (घ) सत्वरजतम

26. रोगवर्धक भावों में अग्रय क्या है ?
(क) विषाद (ख) अपथ्य सेवन
(ग) चिकित्सक के निर्देश का पालन न करना ।
(घ) चिकित्सा के चतुष्पाद का सम्पन्न न होना ।

27. मुलेठी (मधुक) का उल्लेख कितने महाकषायों में किया गया है ?
(क) 3 (ख) 5 (ग) 7 **(घ) 11**

28. अरुष्कर पिडिका कण्डू पाष्मया..... इन रोगों में स्नेह की किस प्रकार की मात्रा के प्रयोग का निर्देश है ?
(क)उत्तम **(ख)मध्यम** (ग) हीन (घ)शुद्ध क्लेह

29. किस महाकषाय में मिट्टी के प्रयोग का उल्लेख मिलता है ?
(क) छर्दि निग्रहण (ख) हिक्का निग्रहण
(ग) मूत्र विरजनीय (घ) मूत्र विरेचनीय

30. किस ऋतु में आहार में विशेषतः मधु मिलाकर प्रयोग करने का निर्देश है ?
(क) वर्षा (ख) शरद (ग) हेमन्त (घ) शिशिर

31. तक्र का विपाक क्या है ?
(क) मधुर (ख) अम्ल (ग) कटु (घ) लवण

32. कास में खदिर सार का प्रयोग किस के साथ करने का निर्देश है ?
(क) मदिरा (ख) उष्ण जल
(ग) दूध (घ) षडंगपानीय

33. निद्रा के भेद कितने हैं ?
(क) 1 (ख) 4 **(ग) 6** (घ) 8

34. एक कुष्ठ में किस दोष की प्रधानता होती है ?
(क)वातकफ (ख)वातपित्त (ग)पित्तकफ (घ) त्रिदोष

35. तीक्ष्ण अंजन, धूम ताड़ना किस उन्माद में नहीं करना चाहिए ?
(क) कफज उन्माद (ख) पित्तज उन्माद
(ग) सन्निपातज उन्माद **(घ) भूतोन्माद**

36. आचार रसायन में द्रव्यों की संख्या कितनी है ?
(क) 52 (ख) 31 (ग) 33 **(घ) शून्य**

37. आमातिसार में सर्वप्रथम क्या करना चाहिए ?
(क) संग्राहक औषधि नहीं देनी चाहिए ।
(ख) जल अधिक मात्रा में देना चाहिए ।
(ग) संग्राहक औषधि देनी चाहिए ।

38. वमन शब्द का प्रयोग किस धातुगत ज्वर के लक्षण के रूप में किया गया है ?
(क) रसगत (ख)रक्तगत (ग)मांसगत **(घ)अस्थिगत**

39. क्षतक्षीण में गुडूचक का सेवन कितनी देर तक करना चाहिए ?
(क)1सप्ताह **(ख)1मास** (ग) 3 मास (घ)1वर्ष

40. अर्जुन का उल्लेख किस महाकषाय के अन्तर्गत किया गया है ?
(क) हृद्य (ख)विषघ्न
(ग)उर्दह प्रशमन (घ) दीपनीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अरोग्य समाचार अखबार की कतरनों से

धूम्रपान और वजन पर नियंत्रन पाने के लिए एक नयी औषधि की खोज

द हिन्दू में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार अमेरिका के शोधकर्मियों ने एक ऐसी औषधि की खोज करने में सफलता पायी है जो वजन को कम कर सकती है। साथ ही धूम्रपान भी छुड़ा सकती है। परीक्षण से ज्ञात हुआ है कि 20 मि.ली. ग्राम की औषधि का नियमित सेवन से रक्त वसा (ट्राइग्लिसराइड) 10% तक घट सकता है एवं उत्तम कोलेस्ट्राल (एच डी एल) में वृद्धि हो सकती है।

जले हुए बच्चों में विटामिन डी की कमी

द लान्सेट में टेक्सास मेडिकल शाखा का एक शोध पत्र प्रकाशित हुआ है। शोध कर्मियों के अनुसार जले हुए 40% बच्चे अपने आप विटामीन डी का पर्याप्त निर्माण नहीं कर सकते हैं। फलतः उनकी हड्डियां कमजोर होती हैं। विदित है कि आमतौर पर प्राकृतिक रूप से विटामिन डी का निर्माण सूर्य की किरणों से होता है। विटामीन डी की कमी से हड्डी मुलायम हो जाती है। इसके टूटने का भी खतरा बढ़ जाता है। रिकेट होने की भी सम्भावना हो जाती है।

नियमित एवं पौष्टिक जलपान नहीं करने से दातों में सड़न पैदा होने का खतरा

जरनल ऑफ द अमेरिकन डेन्टल एसोसियेशन के द्वारा किये गये शोधकर्मियों के अनुसार जो बच्चे या वयस्क प्रतिदिन भरपूर फल एवं सब्जियों का सेवन जलपान में नहीं करते हैं, उन्हें दातों में सड़न पैदा होने का खतरा बढ़ जाता हैं। शोधकर्मियों के अनुसार निर्धनता इसका एक कारण हो सकता है, किन्तु पैसों के बावजूद नियमित एवं पौष्टिक जलपान करने की आदत का नहीं होना भी एक कारण है।

एड्स वायर की खोज

प्रोसिडिंग्स ऑफ द नेशनल एकेडमी ऑफ सायन्स में प्रकाशित एक शोध-पत्र के अनुसार फ्लोरिडा विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने एड्स वायरस की खोज करने का दावा किया है। वैज्ञानिकों के अनुसार मानव शरीर पर आक्रमण करने वाले एच.आई.व्ही. वायरस तीन पृथक, किन्तु समरूप इकाई होते हैं। इस वायरस की खोज से एड्स रोगियों की चिकित्सा करने में मदद मिलेगी।

डीजल के धुएं के परिणामस्वरूप श्वास क्रिया प्रभावित होने के लिए जीन जिम्मेवार

द लान्सेट में प्रकाशित एक शोध-पत्र के अनुसार वायु प्रदूषण के लिए डीजल का धुआं उत्तरदायी है। शोध कर्मियों ने पता लगाया कि एण्टीआक्सीडेन्ट से सम्बन्धित जीन जैसे- GSTMI, GSTTI और GSTPI डीजल के प्रदूषण के साथ जबरदस्त प्रतिक्रिया करता है। शोध कर्मियों का निष्कर्ष है कि जिन व्यक्तियों में एण्टीआक्सीडेन्ट का निर्माण करने के लिए जीन का अभाव है, उन्हें वायु-प्रदूषण से लड़ने में काफी कठिनाई होती है।

मां बनने की इच्छुक कैंसर पीड़ितों के लिए आशा की किरण

दैनिक जनसत्ता के अनुसार अमेरिका में किये गए एक शोध से पता चला है कि एक नई तकनीक से वे महिलाएं भी मां बन सकती हैं जो कैंसर से विभिन्न इलाजों जैसे कीमोथेरेपी, रेडियो थेरेपी या आपरेशन आदि के बाद मातृत्व पाने की क्षमता खो चुकी हैं। किन्तु, अब कैन्सर पीड़ित महिलाओं के गर्भधारण की क्षमता बरकरार रखने के लिए उनका इलाज शुरू करने से पहले ही उनके अंडाशय के उतकों को संरक्षित कर रख दिया जाता है और बाद में उन्हें पुनः प्रत्यारोपित किया जाता है।

एड्सरोधी क्रीम का मानव पर परीक्षण जल्द

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार ब्रिटेन के वैज्ञानिक पुरुषों और महिलाओं में एड्स के लिए जिम्मेदार एचआईवी वायरस के संक्रमण को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोकने के लिए दो नई माइक्रोबिसाइड क्रीम का व्यापक स्तर पर मानव परीक्षण करने की योजना बना रहे हैं । वैज्ञानिकों के अनुसार यह माइक्रोबिसाइड क्रीम एक अदृश्य कंडोम की तरह काम करेगा जिसके इस्तेमाल से लोगों को एचआईवी वायरस के संक्रमण से मुक्ति मिल सकेगी । इस समय दुनिया भर में करीब चार करोड़ लोग एड्स से संक्रमित हैं । एड्स के विशेषज्ञों का मानना है कि आंशिक तौर पर भी कारगर इस तरह की क्रीम के इस्तेमाल से तीन वर्षो के दौरान एड्स के कारण करीब 25 लाख लोगों को मौत के मुंह से निकाला जा सकेगा ।

धूम्रपान छोड़ देंगे विश्व के चिकित्सक

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार आगामी 31 मई के उपलक्ष्य में विश्व तम्बाकू विरोधी दिवस पर दुनिया भर के चिकित्सकों ने विश्व स्वास्थ्य संगठन के कार्यालय पर मिल कर एक नई आचार संहिता निकाली है । इसके अंतर्गत सारे चिकित्सकों का कहना है कि वे धूम्रपान छोड़ देंगे । अभी तक तो यही था कि वे जनता के सामने धूम्रपान नहीं करते थे । उन्होंने कहा कि जहां डाक्टरों के काम करने का स्थान है वहां पर भी धूम्रपान नहीं होने देंगे । इस मामले में चिकित्सकों के अतिरिक्त डेन्टिस्ट, मिडवाईफ, नर्सें आदि भी उनके धूम्रपान विरोधी इस अभियान में शामिल हैं । उनका कहना है कि वे जनता के सामने धूम्रपान को छोड़ कर अपना एक आदर्श नमूना पेश करेंगे ।

सूत्रों के अनुसार वर्तमान समय में आम जनता से कहीं ज्यादा चिकित्सक धूम्रपान करते हैं । सऊदी अरब में अगर 13 प्रतिशत आम जनता धूम्रपान करती है तो वहां के 20 प्रतिशत चिकित्सक धूम्रपान करते हैं । अल्बानिया में 44 प्रतिशत मेडिकल छात्र धूम्रपान करते हैं तो 39 प्रतिशत आम लोग सिगरेट पीते हैं । भारत में भी सिगरेट पीनेवालों की कमी नहीं है । चिकित्सकों में धूम्रपान अधिक करने का कारण काम का तनाव बताया जाता है । विश्व के चिकित्सकों का कहना है कि अब समय आ गया है कि धूम्रपान छोड़कर चिकित्सक एक आदर्श नमूना पेश करें ।

हाथ लगाए बिना चंगे होंगे कैंसर के मरीज

दैनिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार अमेरिकी वैज्ञानिक ऐसी विधि विकसित करने में जुट हुए हैं जिससे कोशिकाओं के भीतरी अवयव आसानी से तोड़े-मोड़े जा सकेंगे । इस विधि की खासियत यह होगी कि इसमें मरीज को डॉक्टर हाथ तक नहीं लगाएगा और सारा काम हो जाएगा ।

स्वास्थ्य विशेषज्ञों का मानना है कि इस विधि के विकसित होने के बाद असाध्य बीमारी कैन्सर के इलाज में नई क्रान्ति आ जाएगी ।

कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के टॉम वर्नियर ने बताया कि वैज्ञानिक अभी कोशिकाओं के भीतरी अवयवों को तोड़ने-मोड़ने की विधि विकसित करने में लगे हुए हैं । ऐसे में अभी इसके बारे में कुछ भी कहना जल्दबाजी होगी । प्रारंभिक परीक्षण से लगता है कि आने वाले दिनों में यह असाध्य बीमार कैंसर के इलाज में कारगर होगी । उन्होंने बताया कि इस विधि में अति सूक्ष्म समय के लिए कोशिका के भीतर बिजली का करंट दौड़ाया जाता है । इससे कोशिका के भीतरी अवयवों को आसानी से तोड़ा-मोड़ा जा सकता है । वर्नियर का कहना है कि कोशिकाओं में बिजली का करंट प्रवाहित करने की विधि नई नहीं है ।

नया सिर्फ यह है कि वैज्ञानिक अति सूक्ष्म समय में अधिक से अधिक बिजली कोशिकाओं में प्रवाहित करने की कोशिक कर रहे हैं । उनका कहना रहा कि इस विधि के ईजाद होने के बाद कोशिकाओं के भीतर दवा और अन्य जैविक तत्व पहुंचाना आसान हो जाएगा ।

हवाई यात्रा के माध्यम से टी०बी० का फैलाव

गार्जियन में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार पूर्वी यूरोप एवं विकासशील देशों में हवाई यात्रा के माध्यम से टी०बी० तेजी से फैल रही है । दुर्भाग्यवश इस भयंकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीमारी की चिकित्सा में जिन औषधियों का प्रयोग हो रहा है, उनमें से अधिकांशत: कार्य नहीं कर पा रही हैं । विश्व स्वास्थ्य संगठन के आंकड़ों के अनुसार सम्पूर्ण विश्व में लगभग तीन लाख रोगी ऐसे हैं जिनपर औषधि प्रभावकारी नहीं हो पा रही है ।

Huge variability in vitamin E absorption

Vitamin E absorption by the body depends on how it is taken. Cereal fortified with vitamin E has a high rate of absorption into the bloodstream, whereas pills taken separately with the same food have inconsistent effects, and taking the supplements alone is largely useless. This is the finding of a new study. Vitamin E is a commonly taken as an antioxidant, and is included in all antioxidant, and is included in all multivitamin pills. More effective methods of taking this essential vitamin are indicated by the study if people wish to supplement their diet, said Maret Traber, a professor with Oregon State University's Linus Pauling Institute.

The answer to why many past research studies done with vitamin E have varied findings may be revealed by the research, Traber said. It may also be time to consider routine fortification of more foods with this vitamin, Traber said. The research was published in the *Journal of Clinical Nutrition* by scientists from the Linus Pauling Institute at Oregon State University.

"Average low-fat diets provide only about 5-8 international units a day of vitamin E. The recommended dietary allowance of vitamin E is 30 I.U. and it's possible that higher amounts than that are useful for optimal health." A glitch, the researchers say, is that people are now being told to use oils. The most common way that people get vitamin E is through rich desserts and cooking oils. It can be found in nuts, oily fish, some vegetables and oils such as safflower, olive and canola oil.

Four different. types of breakfasts were tested by scientists: a pill of 400 I.U. of vitamin E with skim milk; a serving of a wheat breakfast cereal fortified with 30 I.U. of vitamin E; a serving of wheat breakfast cereal fortified with 400 I.U. of vitamin E; and a serving of wheat breakfast cereal with a pill of 400 I.U. vitamin E taken separately.

In theory, more than 13 times the RDA of this nutrient should have been provided by the pill of 400 I.U. vitamin E taken with just a glass of milk, But, in fact, it raised the level of new vitamin E in the blood by only 3 percent. By comparison, the blood plasma level of new vitamin E was raised five times higher than that by the cereal fortified with 30 I.U. vitamin E and the cereal fortified with 400 I.U. raised the new blood plasma level 30 times higher.

The effect of a pill of 400 I.U. taken with a serving of plain wheat cereal was inconsistent; some participants had a significant increase in blood plasma levels of vitamin E, others almost none.

"This study clearly showed that applying vitamin E into a grain cereal provided a huge and consistent increase in its bioavailability," said Scott Leonard, an LPI research assistant who conducted the study. "Even 30 I.U., the RDA for this vitamin, produced a large increase in new blood plasma levels."

According to Traber and Leonard, this indicates that people who are taking vitamin E supplements only with liquids on an empty stomach are accomplishing nothing and getting few if any benefits from the supplements. The vitamin clearly is absorbed better if it is part of, or closely associated with the digestion of a food that has some fat in it.

The results of this study may explain in part why the other research has often yielded inconsistent results, Traber said, Vitamin E has been explored in recent years for its potential value in prevention of heart disease, cancer,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Alzheimer's disease and other health concerns.

"It's now clear that vitaminn E must be taken in a certain way to be effective, either in a food containing vitamin E or in a supplement properly associated with a food," Traber said. There were a number of deficiency diseases in the early 1900s that have been largely eliminated with routine vitamin supplementation of food staples like flour and milk, Traber said.

Chronic deficiencies of vitamin D led to rickets, vitamin A to blindness and the B-vitamin niacin to pellagra. In the developed world those diseases are now a thing of the past. Vitamin E, an antioxidant prevents oxidation of polyunsaturated fats in membranes and lipoproteins, including LDL and HDL forms of cholesterol. Studies suggest vitamin E has a main role to play in a healthy cardiovascular, neurological and immune system **(with courtesy from The Hindu)**

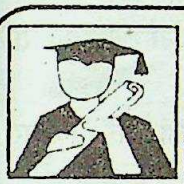

परीक्षा के समय आपके लाड़ले को जरूरत है
एकाग्रता और अधिक कार्यक्षमता की

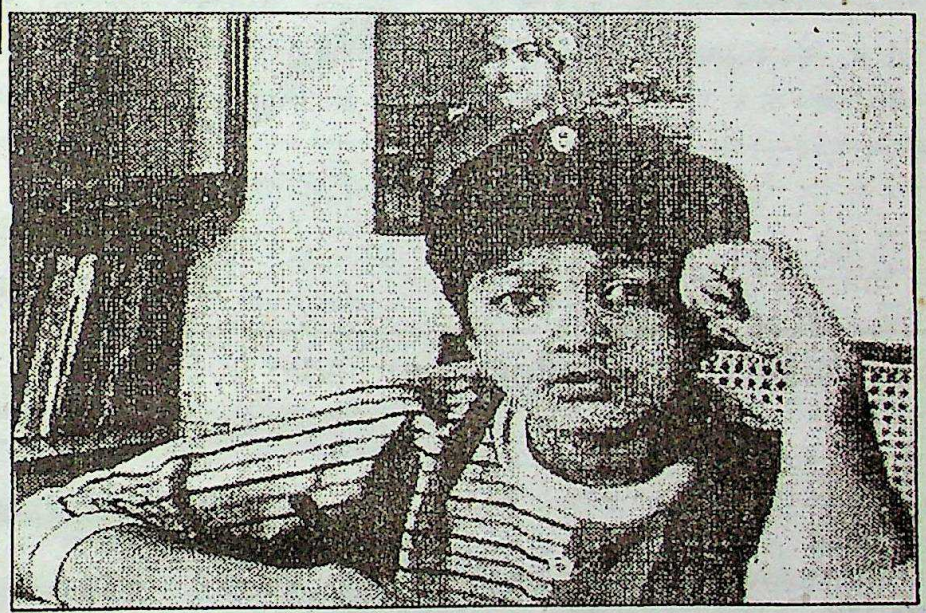

आपके लाड़ले का उज्ज्वल भविष्य आपका सपना है । पर आज की तीव्र प्रतिस्पर्धा व पढ़ाई का बोझ आपके लिए चिंता का विषय भी है । ऐसे माहौल में आपके बच्चे को जरूरत है एकाग्रता व समझने की क्षमता की, उसे जरूरत है बैद्यनाथ शंखपुष्पी की, तो आज ही से अपने लाड़ले को दीजिए ...

बैद्यनाथ
शंखपुष्पी
शरबत

एकाग्रता लाए, समझ जगाए

आज, हररोज और वर्षभर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके पत्र

आयुर्वेद को भी एलोपैथी के बराबर सम्मान

सेवा में

सम्पादक
सचित्र आयुर्वेद
श्री बैद्यनाथ भवन प्रा०लि०, पटना (बिहार)

महोदय,

निवेदन है कि मैं महामहिम उपराष्ट्रपति के विचार से सहमत हूँ कि आयुर्वेद को भी एलोपैथी के बराबर सम्मान मिलना चाहिए । उपराष्ट्रपति महोदय ने कहा कि आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति अब तक सरकारी उपेक्षा का शिकार रही है, लेकिन अब आगे ऐसा नहीं होगा । आयुर्वेद को भी एलोपैथ के बराबर सम्मान मिलेगा । उन्होंने कहा कि यदि आयुर्वेद की इतनी उपेक्षा नहीं हुई होती तो निश्चित रूप से यह भारत में भी उतनी ही लोकप्रिय और विकसित होता जितना आज चीन में है । उन्होंने कहा आयुर्वेद संस्थान के खुलने से आयुर्वेद का तेजी से विकास होगा । उन्होंने कहा कि आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के प्रति लोगों का दृष्टिकोण बदलना होगा और उन्हें इसके महत्व को जानकारी देनी होगी । उन्होंने कहा कि इसके लिए हमें अच्छी किस्म की जड़ी-बूटियाँ पैदा करनी चाहिए और आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति को और अधिक विश्वसनीय बनाना होगा । इसके महत्व और लाभकारी गुणों को घर-घर तक पहुँचाना ।

हमारे महामहिम उपराष्ट्रपति का यह विचार स्वागतयोग है, हमलोगों को आयुर्वेद के प्रचार एवं प्रसार के लिए अथक परिश्रम करना चाहिए ।

(डा० राकेश मोहन शर्मा)
चिकित्साधिकारी
राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय
बरई शाहपुर - अलीगढ़

Ayurvedic physicians must adopt Ayurvedic System of Treatment

To

The Editor
Sachitra Ayurved
Shree Baidyanath Ayurved Bhawan Ltd.
Patna - 800 001

Sir,

Through your esteemed paper I draw the kind attention of the Ayurvedic physicians to their practices of medicine based on mixed system. Ayurved is a separate science so far as the system of medicine is concerned. Allopathic system of medicine is a different science. Only prescribing medicines to the patients do not entitle them to adopt other systems in the matter of diagnosing and giving treatment. As for example, the treatment according to Ayurvedic science is based mainly on Tridosha theory. A good physician while applying his/her skill in the matter of diagnosis a disease, pays attention to the equilibrium of Dhatus whereas Allopathic practitioners donot have such compulsion.

It shall, therefore, be in the interest of Ayurveda if the practitioners belonging to this system of medicine treats a patient according to Ayurvedic system of treatment.

Thanking you,

Yours faithfully
Radha Rani Mitra
Exhibition Road, Patna

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद का परिशोधन एवं प्रतिसंस्कार

अप्रैल, 1964

वर्तमान युग में जबकि विज्ञान ने हमारी सम्पूर्ण जीवन-पद्धति एवं विचारधारा में आमूल परिवर्तन कर दिया - और प्रत्येक वस्तु का मूल्यांकन परीक्षण-प्रणाली से ने लगा है, यह समीचीन प्रतीत होता है कि आयुर्वेद के लभूत सिद्धांतों का परीक्षण वैज्ञानिक आधार हो और नित बीन प्रयोगों के द्वारा इस प्राचीन विज्ञान को उन्नत किया ाय ।

आयुर्वेद जैसी चिकित्सा-पद्धति किसी देश विशेष ों नहीं हो सकती- अपितु पूरी मानव जाति की है । तएव, प्रत्येक युग में नयी साज-सज्जा या परिधान एवं नयी भाषा एवं शब्दावली में आयुर्वेद को प्रतिसंस्कारित करते रहने की आवश्यकता है । आयुर्वेद को समस्त विश्व में एक वैज्ञानिक चिकित्सा-पद्धति के रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए यह आवश्यक है कि आयुर्वेद-विज्ञान के 'सत्यों' को नयी वैज्ञानिक परीक्षण-प्रणाली के आधार पर इस प्रकार प्रतिसंस्कारित किया जाए कि आधुनिक युग उससे पूर्णतया आश्वस्त हो सके । क्योंकि, प्रायोगिक पर्यवेक्षण (प्रैक्टिकल आवजरवेशन) के आधार पर ही कोई चिकित्सा समृद्ध होता और अपनी उपादेयता सिद्ध करता है ।

डा० प्राणजीवन मेहता

भारतीय औषध-निर्माता सम्मेलन

विगत 8 मार्च को दिल्ली में देशभर के आयुर्वेद वं सिद्ध औषध-निर्माताओं का एक सम्मेलन धूमधाम से म्पन्न हुआ । सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष-पद से भाषण रते हुए श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० के मैनेजिंग यरेक्टर श्री रामनारायण वैद्य ने कहा - औषध-निर्मातागण रकाल से देश की स्वास्थ्य और रोग-निवारण-समस्या महत्वपूर्ण योगदान कर रहे हैं और परम्परागत आयुर्वेदीय षधों द्वारा भारत की करोड़ों जनता की सेवा कर रहे हैं । देशी शासन काल में निरन्तर और नितान्त उपेक्षित रहकर देशी औषध उद्योग जीवित रह सका, इसका बहुत कुछ श्रेय आयुर्वेदानुरागी वैद्य समुदाय और इस उद्योग में लगे र्माताओं की त्याग और सहिष्णुता की भावना को है । निर्माताओं के अन्तर्मनों में, पराधीनताकाल की विपन्न स्थिति में, यह आशा आकांक्षा स्वाभाविक रूप से विद्यमान कि मातृभूमि के स्वतंत्र होने पर भारत की अपनी कृति, कला, विज्ञान, उद्योग आदि की उन्नति के साथ देशी औषधि उद्योग को भी विकास का समुचित अवसर प्राप्त होगा ।

हमें यह कहने में संकोच नहीं है, प्रत्युत गर्व है स्वाधीनता काल में देशी औषधि उद्योग विकसित और विवर्द्धित हुआ है । परन्तु उसका वह विकास उसके स्वावलम्बन और जनता के सहयोग मात्र से हुआ है । अपने ही राज्य से उसे जो उचित प्रोत्साहन और प्रश्रय मिलना चाहिए था, वह नहीं मिला; यह ज्वलन्त सत्य है और हमारे मन को ठेस पहुँचाता है ।

राज्य का प्रश्रय और प्रोत्साहन न मिलना एक तथ्य है, और दूसरा तथ्य यह है कि राज्य ने कदाचित असावधानतावश, जो नीति-रीति देशी औषध उद्योग के संबंध में अपनायी है, वह इस उद्योग की जड़ें हिलाने वाली सिद्ध हो रही है । स्वालम्बन और जनप्रियता के आधार पर जो विकास देशी औषध-उद्योग ने किया, वह भी, अब राज्य द्वारा उपस्थित कतिपय बाधाओं के कारण अवरूद्ध और कुंठित-सा हो चला है । भारत का परम्परागत देशी औषध उद्योग, अब निश्चित रूप से जीवन-मरण की स्थिति में आ गया है । स्वतंत्र भारत में हम आशा करते थे राज्य से सहायता सहयोग की, हमें मिल रही हैं - निराशा, कुण्ठा और प्रतिबन्धों का अवरोध । ऐसी दशा में हमारी मनःस्थिति कैसी हो सकती है यह राज्य के कर्णधारों को विचार करना चाहिए ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके अनुभूत प्रयोग

अरिष्ट लक्षणों पर मेरे अनुभव

अरिष्ट शब्द का सामान्य अर्थ है - अशुभ, बुरा। आयुर्वेद की भाषा में मृत्यु के पूर्व त्रिदोष कुपित होकर शरीर के अंदर और बाहर कुछ निश्चित अशुभ चिन्ह प्रकट करते हैं, उन्हीं का नाम अरिष्ट है। उत्पन्न हुये अरिष्ट का मरण के सिवाय कोई प्रतिकार नहीं और ऐसा कोई मरण भी नहीं जो अरिष्ट पूर्वक न हो। बहुत से व्यक्ति शंका करते हैं कि हृदय रोगी की मृत्यु आकस्मिक होती है, उनमें कोई अरिष्ट लक्षण देखने में नहीं आता। यदि हृदयाघात से मृत रोगी के इतिहास की जांच की जाये तो यह शंका निर्मूल दिखाई पड़ती है। मुझे अपने इलाके 5-7 हृदयरोगियों का इतिवृत जानने का अवसर मिला। जिनकी मृत्यु हुई थी वे मधुमेह से, बढ़े हुये वजन से, नींद न आने से, सांस सरलता से न लिये जाने से, सीने-पीठ और हृदय के ज्ञान-अज्ञान दर्द से परेशान थे। इस प्रकार अरिष्ट लक्षण अवश्य ही पैदा होते हैं लेकिन हमारी लापरवाही या अज्ञानता से हम उन्हें पहचान नहीं पाते।

पिछले 40-42 वर्षों में मुझे अरिष्ट लक्षणों पर पुस्तकें एवं विविध लेख पढ़ने को मिले हैं। मुझे खेद है कि प्राय: सभी लेखकों ने केवल शास्त्रीय ग्रंथों (चरक, सुश्रुत आदि) के संकलन प्रस्तुत कर दिये। लेखक विवरण देते हैं कि जिस व्यक्ति को अपनी छाया खण्डित दिखाई दे या कानों में उगलियां डालने पर घट्टी पीसने की सी आवाज न सुनाई दे, उसे गतायु समझें। व्यावहारिक दृष्टि से ये शायद ही घटित हो या दिखाई दे।

मुझे पिछले वर्ष की एक रुग्णा की अभी भी भलीभांति याद है। उसकी बहू ने उसे स्नान कराकर बिस्तर पर लिटा दिया था। मुँह में या चेहरे पर कोई भी मीठी या चिकनी वस्तु नहीं लगी थी। फिर भी कुछ मक्खियां बार-बार वहां मंडराती रहीं। डाक्टर कह रहे थे कि सुधार हो रहा है। रुग्णा अच्छी तरह बोल रही थी लेकिन दरअसल उसके शरीर में मृत्यु की क्रिया प्रारम्भ हो चुकी थी। मक्खियां उसे भांप चुकी थीं। 14 घण्टे के अंदर उसकी मृत्यु हो गई। मृत्यु के उपरांत स्नान कराते वक्त देखा गया कि कुछ चींटियां भी चेहरे पर चिपकी हुई थीं।

मृत्यु के समय प्राय: दस्त लगते हैं और सब प्रकार की चिकित्सा के बावजूद वे बंद नहीं होते। कभी-कभी मृत्यु के पूर्व कब्ज रहती है और 10 ग्राम से बढ़ाते हुए 200 ग्राम तक अरण्ड तैल पिलाने पर भी दस्त नहीं लगते। इस प्रकार के रोगियों की मृत्यु दस्त के साथ ही आती है। कब्ज वाला रोगी भी मृत्यु के समय टट्टी से ही मरेगा। कतिपय परिवारों में यह भी देखा गया कि जिस रोग से उसके पूर्वज गये उनका वारिस भी प्राय: उसी प्रकार के रोग से मरता है।

यदि किसी आदमी का स्वभाव अचानक परिवर्तित हो जाय तो प्राय: ऐसा व्यक्ति 30-40 दिन में या 4-6 माह में मर सकता है। यह प्रकृति के विपरीत बात है। अत: अरिष्ट है। मेरे एक रिश्तेदार कट्टर आर्यसमाजी थे और भगवान के विग्रह को भाटा (पत्थर) कहते। 80 वर्ष की उम्र के बाद अचानक वे सनातनी बन गये। देवी दुर्गा का यज्ञ कराया। मंदिर जाकर साष्टांग प्रणाम करते। वे एक माह के अंदर संभवतया बिना किसी ज्ञात रोग के या वृद्धावस्था के कारण चल बसे।

पं० सत्यदेव वशिष्ठ ने अपनी पुस्तक नाड़ी तत्व दर्शन में सूजन के संबंध में एक अरिष्ट लक्षण लिखा है। उसकी सत्यता का भी मैंने प्रत्यक्ष अनुभव किया है। वे लिखते हैं स्त्री जाति का निचला भाग प्रधान है अत: उसका मुख शोथ अरिष्ट है एवं पुरुष का उर्ध्व अंग प्रधान है। अत: उसके पैरों का सूजन मृत्युकारक है। तात्पर्य यह है कि दोषों की गति विपरीत होती है।

स्वभाव परिवर्तन के सम्बन्ध में श्री संतराम, बी. ए. (आज से 40-50 वर्ष पूर्व के प्रसिद्ध लेखक) के भाई का उदाहरण देना पाठकों के लिए ज्ञानवर्द्धक रहेगा। मेरे लेख की प्रमाणिकता बढ़ेगी। संतरामजी के बड़े भाई लक्ष्मणदासजी पंजाब में स्कूलों के डिप्टी इंस्पेक्टर थे। वे अपने जीवन में बड़े उदार और त्यागी थे। वे धन की कुछ भी परवाह नहीं करते थे। मृत्यु से लगभग एक वर्ष पूर्व उनकी प्रकृति में एकाएक परिवर्तन आ गया। वे सदा अपने भविष्य की चिंता में डूबे रहते, यद्यपि वे पर्याप्त स्थायी सम्पत्ति के स्वामी थे। प्राय: हर दिन गली-मुहल्ले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लोगों से पूछते सरकारी नौकरी से अवकाश ले लेने के बाद मुझे अपने परिवार के भरण-पोषण के लिए क्या करना चाहिए । यह चिंता एक प्रकार से उन्माद की सी हो गई । एक वर्ष के अंदर ही उनकी मृत्यु हो गई ।

नाड़ी से भी मृत्यु का अनुमान किया जा सकता है । नाड़ी ज्ञान प्रायः अनुभव पर ही आधारित है । मृत्यु के समय नाड़ी ठहर-ठहर कर चलती है । पांच या सात स्पंदन के बाद में अगला स्पंदन रुककर होता है । नाड़ी अरिष्ट में एक विशेष बात देखी । उपवास के अभ्यस्त रोगी और साधारण रोगी के अरिष्ट समय में बहुत अंतर आता है । दो वर्ष पूर्व मुझे आमरण तपस्या - अनशन ग्रहण किये एक साध्वी की नाड़ी परीक्षा का अवसर मिला । शायद तीसवां दिन था । मैंने बहुत सावधानी से नाड़ी देखी । रुक-रुक कर चलती थी । शीतल थी । मैंने आगामी 24 घण्टे में मुक्ति की संभावना व्यक्त की । स्थानीय विश्वभारती से भी प्रसिद्ध सेवानिवृत्त वैद्य आये । उनका अनुमान भी लगभग मेरे समान ही था । लेकिन साध्वीजी का महाप्रयाण 96 से 100 घण्टे के बाद हुआ ।

यदि कोई व्यक्ति या रोगी अल्प भोजन करता हो लेकिन मल की मात्रा बहुत ज्यादा हो तो अरिष्ट है । इसी प्रकार पर्याप्त खाद्य पदार्थ खाने पर भी मल की मात्रा बहुत कम होना जीवन को खतरे में डालता है । इसी प्रकार यदि रोगी की उल्टी में टट्टी आना शुरू हो जाय तो उसका बचना मुश्किल होता है ।

पुरुष या स्त्री के शरीर से स्नान के बाद भी सुगंध या दुर्गंध आना अरिष्ट लक्षण है । प्रायः दुर्गंध देखी गई है ।

यदि किसी स्त्री या पुरुष के मुँह पर अचानक ही, कभी-कभी एक ही रात में कोई तिल, मस्सा या गांठ भी उत्पन्न हो जाय तो अशुभ है । प्रायः मृत्यु के मुख में जाने वाले रोगी के होठ, नाखून, दांत, आंखें बदरंग हो जाते हैं ।

प्रायः सम्पूर्ण भारत में यह रिवाज है कि जब वे किसी वृद्ध से, जो बीमार हो, मिलने जाते हैं तो पूछते हैं कि क्या वे उसे पहचान रहे हैं । रोगी अपनी आंखों पर हाथ से छज्जा सा बनाते हुये कहता है कि हो, तुम अमुक हो । ऐसी स्थिति में यह समझा जाता है कि निकट भविष्य में जीवन को कोई खतरा नहीं । अगर रोगी साफ इंकार कर दे या असम्बोधित उत्तर देवें तो उसे अरिष्ट लक्षण ही मानना चाहिए ।

ऐसा देखा जाता है कि मृत्यु के निकट आया हुआ रोगी अपनी गर्दन पर अपना सिर धारण नहीं कर सकता, मुँह में हुये ग्रास को चबा न सके उसे उलट दे, ये सभी लक्षण अशुभ है । कभी-कभी रोगी के हाथ-पैर, तालु आदि अत्यंत शीतल हो जाते हैं या अत्यंत कठोर हो जाते हैं ।

इस प्रकार अरिष्ठ लक्षणों को पहचान कर रोगी की चिकित्सा चालू रखते हुये भी उसे 'राम' रूपी औषध देने के लिए परिवार के सदस्यों को कह देवें । यदि कोई स्त्री अंतकाल में अपथ्य सेवन के लिए भी कहे तो उसकी इच्छा पूर्ति करें ।

विद्वान लेखकों से निवेदन है कि वे अपने अनुभव के आधार पर इस श्रृंखला को आगे बढ़ायें और शोध में मदद करें ।

वैद्य पं० परमानन्द शर्मा "नन्द" एम.ए. आयुर्वेदरत्न
हनुमान गेट, लाडनूँ (राज०) - 341306
दू०भा० (01581) 222360
E-mail : in and sharma @ yahoo.com

बिन्दल राम गन्धा बूटी

(बवासीर नाशक एक दिव्य बूटी)

हमारा परिवार पिछले 148 वर्षों से चिकित्सा कार्य में रत है । सन् 1855 में सकड़ दादा वैद्य राम जी दास जी ने आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रारम्भ की थी । पश्चात् परदादा वैद्य श्री झण्डू राम जी व दादा श्री राज वैद्य आशा राम जी बिन्दल करनाल जिले के प्रसिद्ध चिकित्सक रहे हैं । वे जड़ी-बूटियों के विशेषज्ञ थे, विभिन्न रोगों की चिकित्सा व शोध कार्य के लिए दूर-दूर तक प्रसिद्ध थे । प्रसिद्ध समाजसेवी, दानी व क्रान्तिकारी थे । गाँव में पाठशालाएँ, धर्मशालाएँ, कुएँ, तालाब, मन्दिर आदि बनवाये ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जोकि अब तक मरम्मत आदि होने कारण चल रहे हैं। बढ़-चढ़ कर स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेते थे। पिता-पुत्र दोनों ने जेल काटी। पिता श्री वैद्य बालमुकुन्द जी बिन्दल हकीमे हाजिक् उल हुकमा, आयुर्वेद बृहस्पति प्रसिद्ध समाजसेवी, महान दानी, क्रान्तिकारी स्वतंत्रता संग्राम में खूब सक्रिय रहे हैं, उत्तरी भारत के प्रसिद्ध चिकित्सकों में एक थे जिनका स्वर्गवास 99 वर्ष की आयु में 1999 में हुआ। सन् 1918 के अकाल व 1926 की महामारी में पिता-पुत्र दोनों ने जान की बाजी लगाकर खूब सेवा कार्य कर समाज में महान प्रसिद्धि प्राप्त की। वैद्य रामकुमार बिन्दल व रमेश कुमार बिन्दल जड़ी-बूटियों की खोज के क्षेत्र में नई क्रान्ति लाये हैं। पिता, दादा व बुजुर्गों से प्राप्त ज्ञान, धार्मिक शिक्षा, त्याग भाव, सेवा भाव आदि वंशानुगत क्रम में प्राप्त गुणों के कारण त्याग और सेवा भाव के साथ आयुर्वेद की व जड़ी-बूटियों की खोज में भी भगीरथ प्रयास किया है व करते रहते हैं। हिमाचल व उत्तरांचल के पहाड़ों में 15000 फुट तक की ऊँचाई पर 10000 मील से भी अधिक पैदल जंगलों, पहाड़ों की खाक छानकर जड़ी-बूटियों की खोज में नये-नये कीर्तिमान स्थापित किये हैं। लुप्त हो चुकी बूटी 'श्वेत पुष्पा कंटकारी' (लक्ष्मणा) की खोज 1972 में की। लुप्त हो चुके अष्टवर्ग की खोज 1976 में की, लुप्त हो चुकी असली लक्ष्मणा की खोज 1985 में की। 'हिम संजीवन बिन्दलम' बूटी की खोज 1987 में की और अन्य कितनी ही नई-नई अज्ञात बूटियों की खोज व दुर्लभ बूटियों का संकलन परिरक्षण, पोषण के लिए भगीरथ प्रयास किये व करते रहते हैं।

इस **'राम गन्धा'** बूटी की अन्य बूटियों की खोज की तरह एक अपनी ही कहानी है। 1940 में पूज्य पिता श्री के साथ खोजी दल वन पर्वतों में जड़ी-बूटियों की खोज व दुर्लभ बूटियों के संग्रह हेतु जंगलों में थे तो एक बूटी सुगन्धित छोटा क्षुप के बारे में एक स्थानीय बुजुर्ग ने घटना बताई कि इस बूटी को एक व्यक्ति ने खाया जो कि बवासीर से पीड़ित अत्यन्त कष्ट में था इसे कड़वी जहरीली समझकर मरने हेतु आत्म हत्या के लिए खाया परन्तु कड़वी होने के कारण अधिक मात्रा में नहीं खा सका और कुछ समय बाद जो चमत्कार हुआ तो वह भी आश्चर्यचकित हो गया। उसे बवासीर का दर्द कम हो गया, रक्त स्राव कम हो गया तो स्वाभाविक ही उसने यह बूटी और खाई और 5-7 दिन खाने से उसे सम्पूर्ण लाभ हो गया तो उस बुजुर्ग ने कहा कि आप बड़े योग्य वैद्य हैं आप इस पर शोध कार्य करें। पिता श्री वैद्य राज बालमुकन्द जी बिन्दल ने उस व्यक्ति से मिलकर पूरी जानकारी हासिल की और फिर इस बूटी पर शोध कार्य शुरू किया और सैंकड़ों बवासीर रोगियों पर प्रयोग कर इसे अत्यन्त कारगार पाया और 100 प्रतिशत रोगियों को इससे कुछ न कुछ लाभ अवश्य हुआ। 80 प्रतिशत रोगियों को तो कमाल का लाभ हुआ और वे शीघ्र ही 10-15 दिन में रोग मुक्त हुये। फिर तो इस बूटी का प्रयोग निरन्तर करने लगे। अब तक 63 वर्षों में लाखों बवासीर के रोगियों की चिकित्सा हमारा परिवार कर चुका है। इस समय हमारा परिवार 7 क्लीनिक व नर्सिंग होम चला रहा है। जहां दैनिक बवासीर व भगन्दर के 30-40 रोगी होते हैं और हर रोगी को निश्चित लाभ होता है चाहे किसी भी प्रकार व कारण से हो। हम केवल उपरोक्त बूटी ही नहीं अपितु अधिकाधिक लाभ के लिए अन्य दवाइयां भी साथ-साथ प्रयोग करते हैं ताकि किसी प्रकार की कमी न रहे और वह भी पूर्णतयः लाभ पावे। हम आवश्यकता पड़ने पर 'क्रायो सर्जरी (CRAYO Surgery) से ऑप्रेशन भी करते हैं व क्षार सूत्र से भी भगन्दर का इलाज करते हैं। इस प्रकार 95 प्रतिशत से भी ज्यादा रोगी लाभ पाते हैं।

बूटी विवरण :- यह बूटी जमीन पर प्रसर कर फैलती है व क्षुप में 1-2 फुट का बाद में सिट्टा निकलता है जिस पर मंजरी लगती है। पत्र बिल्कुल गुलदाऊदी से मिलते हैं। पीछे से श्वेत अपेक्षाकृत थोड़े मोटे होते हैं। इसमें सुन्दर व तीक्ष्ण कर्पूर से मिलती-जुलती कड़वी गन्ध होती है। पत्र 1 से 2 ईंच तक गोलाई में नोकीले कटावदार प्रायः श्वेताभ, द्विपक्षवत खण्डित (Two Pinnatisect) होते हैं। खण्ड पतले रेखाकार होते हैं, ऊपर की पत्तियां प्रायः अखण्डित होती हैं। पुष्पमुण्डक 1/4

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेन्टीमीटर तक के लम्बे अण्डाकार, आयताकार या लम्ब गोल तथा पत्र कोणों से गुच्छों के रूप में निकलते हैं। प्रत्येक मुण्डक में 4 से 6 पुष्प गुच्छों में लगते हैं। पत्ते व पुष्प अति सुगन्धित होते हैं। यह आर्टीमिसिया प्रजाति का पौधा है, इस प्रजाति में 200 से भी अधिक किस्में हैं। यह 6 से 9000 फीट तक अर्थात् 2 से 3 हजार मीटर तक की उँचाई पर अल्प मात्रा में पाया जाता है। परिपक्व काल सितम्बर-अक्तूबर है। पुष्पों में पत्तों से अधिक सुगन्धी होती है। काफी प्रयास करने पर भी इसकी कोई पहचान सम्पूर्ण नहीं हो पाई है। कितने ही बोटानिस्ट व वैज्ञानिकों ने प्रयास किया और इसकी प्रजाति से आगे इसका नाम नहीं निकल पाया। हमारे परिवार में चिकित्सकों के नाम राम के नाम से प्रारम्भ होते हैं। अतः हमने इसका नाम 'बिन्दल रामगन्धा बूटी' रखा है।

यह स्वाद में तिक्त (कड़वी), किंचित चरपरी, कसैली व कर्पूरसम सुगन्धित होती है। सूखने पर इसके काफी गुण उड़ जाते हैं, इस बूटी में व फूलों में ¼ से ½% तक उड़नशील अति सुगन्धित तेल होता है।

यह प्रभाव में गर्म, उतेजक, पाचक, क्षुधावर्धक, उदर दर्द, शारीरिक दर्द, कब्ज, वात व ज्वर नाशक है। कफ नाशक, मूत्र प्रर्वतक व कभी-कभी मासिक भी खोलकर लाती है।

वायु निस्सारक, रक्त रोधक व बवासीर नाशक है, बवासीर के साथ होने वाले कई प्रकार के उपद्रवों को दूर करती है। आंतड़ियों को बल देती है, आंत्र के कृमियों का भी नाश करती है, आंत्रशोथ व गुदा के शोथ व दर्द को निवारण करती है। बवासीर नाशक गुण इसमें विशेष तौर पर पाया जाता है। अधिकतर रोगियों को बवासीर से सम्पूर्ण मुक्ति दिलाती है।

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि Artemisia प्रजाति की किसी भी प्रजाति में बवासीर नाशक गुण कहीं भी विश्व के किसी भी ग्रन्थ में वर्णित नहीं है। हमने बड़े से बड़े ग्रन्थों का अध्ययन किया है।

उपरोक्त उड़नशील तैल व गुण उड़ जाने के कारण इसके प्रयोग करने में बड़ी कठिनाई आती है। ताजी तो हर समय मिल नहीं सकती और खाने में भी कठिनाई होती है। अतः लम्बे अनुसंधान के बाद हमने इसका इस प्रकार से सत्व हरी बूटी का निकाला है कि इसकी सुगन्ध व तैल न उड़े और सारे गुण इसमें विद्यमान रहें और द्रवीय रूप में इसे तैयार करके प्रयोग कर रहे हैं और इसका नाम भी 'दवाई बवासीर' रखा है।

वैद्य राम कुमार बिन्दल
वैद्याचार्य एम.डी. पी.एचडी. (ए.एम)
वैद्य रमेश कुमार बिन्दल
आयुर्वेद रत्न, एम.डी. (एच.)
वैद्य बालमुकन्द आरोग्य धाम
पुराना बस स्टैंड, सोलन (हि.प्र.)

बैद्यनाथ
आयुसिड
अम्लपित्त, उदरशूल एवं कब्जियत दूर करने की दवा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद जगत् की गतिविधियां

"शतायु की ओर" पत्रक का लोकार्पण आयुर्वेद औषधियां प्रकृति की अनमोल देन हैं

---- श्री विष्णुकान्त शास्त्री

लखनऊः 17 फरवरी, 2004

उत्तर प्रदेश के राज्यपाल, श्री विष्णुकान्त शास्त्री ने कहा है कि पूरे विश्व में प्रतिदिन आयुर्वेदीय औषधियों का यश व महत्व बढ़ रहा है । उन्होंने कहा कि आयुर्वेदिक दवाएं सभी मनुष्यों के अनुकूल होती हैं, यदि उनका किसी को किसी कारणवश लाभ नहीं होता है तो हानि भी नहीं होती है । उन्होंने कहा कि मानव को शतायु की ओर अग्रसर कराने के लिए आयुर्वेद औषधियों के फायदे, गुणों, उपयोगों को जनसामान्य तक पहुँचाने के साथ ही औषधीय पौधों का संरक्षण व संवर्धन किया जाये ।

यह उद्‌गार श्री विष्णुकान्त शास्त्री ने आज यहाँ राजभवन स्थित नीलकुसुम कक्ष में आयोजित धन्वन्तरि वाटिका की तृतीय वर्षगांठ पर धन्वन्तरि वाटिका राजभवन द्वारा प्रकाशित "शतायु की ओर" पत्रक के लोकार्पण के अवसर पर व्यक्त किये । उन्होंने कहा कि आयुर्वेद औषधियॉ प्रकृति की अनमोल देन हैं । उन्होंने कहा कि प्रतिस्पर्धा के इस युग में आवश्यकता इस बात की है कि हमारे देश में फल, शाकभाजी, जड़ी-बूटी, फूलों आदि औषधि पौधों के उत्पादन में मात्रा तथा गुणवत्ता दोनों ही दृष्टियों से वृद्धि करने का प्रयास किया जाय । उन्होंने कहा कि औषधीय पौधों की वृद्धि हेतु वैज्ञानिक रीति तथा बीजों एवं उर्वरकों की नई से नई किस्मों का प्रयोग करने हेतु प्रेरणा दिये जाने की महती आवश्यकता है । उन्होंने कहा कि आयुर्वेद औषधियों के शोध एवं प्रमाणीकरण के उपरान्त ही हम विश्व स्तर पर आयुर्वेद औषधियों का प्रचार-प्रसार कर सकते हैं ।

इस लोकार्पण कार्यक्रम में राज्यपाल के अनुज श्री श्रीकान्त शास्त्री, प्रमुख सचिव राज्यपाल, श्री शम्भु नाथ, प्रमुख सचिव वन, श्रीमती सुरजीत कौर सन्धु, प्रमुख वन संरक्षक, श्री के० प्रसाद, विशेष सचिव, श्री आर०के० ओझा, विशेष सचिव एवं वित्त नियंत्रक, श्री के०पी० सिंह, विधि सलाहकार, श्री पी०के० दुबे, विशेष कार्याधिकारी,

राज्यपाल श्री विष्णुकान्त शास्त्री राजभवन में दिनांक 17 फरवरी, 2004 को धन्वन्तरि वाटिका की तृतीय वर्षगांठ पर "शतायु की ओर" के तृतीय पत्रक का लोकार्पण करते हुए । बाएँ से दाएँ खड़े हैं श्री के.प्रसाद, प्रमुख वन संरक्षक, उ.प्र., श्रीमती सुरजीत कौर सन्धू, प्रमुख सचिव वन, श्री शम्भुनाथ, प्रमुख सचिव श्री राज्यपाल, महामहिम के. अनुज, श्रीकान्त शास्त्री, महामहिम श्री विष्णुकान्त शास्त्री, राज्यपाल उ०प्र०, वैद्य शिवशंकर त्रिपाठी, चिकित्साधिकारी (आयुर्वेद), राजभवन चिकित्सालय एवं प्रभारी अधिकारी धन्वन्तरि वाटिका, राजभवन, उ.प्र. डा० एम.एम. सिन्हा, निदेशक, उद्यान, उ०प्र०, डा०आर०के० पाठक, निदेशक, केन्द्रीय उपोष्ण संस्थान, लखनऊ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री आर०के० सक्सेना, निदेशक उद्यान, डा० एम०एस० सिन्हा, निदेशक, केन्द्रीय उपोष्ण संस्थान डा० आर०के० पाठक, नरेन्द्र देव विश्वविद्यालय के डा०जे० प्रसाद आदि के अलावा अनेक आयुर्वेद चिकित्सक एवं सिमैप व एन०बी०आर०आई० के वैज्ञानिक उपस्थित थे ।

इस अवसर पर प्रमुख सचिव वन, श्रीमती सुरजीत कौर सन्धु ने राज्यपाल को अवगत कराया कि पूरे प्रदेश में वन विभाग औषधीय पौधों के रोपण पर विशेष ध्यान दे रहा है । उन्होंने कहा कि पूरे प्रदेश में संरक्षित व संवर्धन की जा रही है ।

राजभवन में स्थापित धन्वन्तरि वाटिका के प्रभारी अधिकारी आयुर्वेदाचार्य, डा० शिव शंकर त्रिपाठी, चिकित्साधिकारी, आयुर्वेद ने बताया कि 'शतायु की ओर' पत्रक धन्वन्तरि वाटिका की वर्षगांठ पर प्रति वर्ष प्रकाशित किया जाता है । इस तृतीय अंक में दीर्घायु प्राप्ति के लिये आयुर्वेद मनीषियों द्वारा वर्णित आहार, निद्रा एवं ब्रह्मचर्य का उल्लेख किया गया है । साथ ही स्वास्थ्य प्रति एवं संरक्षण में आयुर्वेदीय रसायनों के महत्व पर प्रकाश डाला गया है । आंवला एवं हरड़ के द्वारा निर्मित रसायनों के सेवन से हम किस प्रकार जरा (वृद्धावस्था) एवं व्याधियों से मुक्त रहकर शतायु को प्राप्त कर सकते हैं, का भी पत्रक में उल्लेख किया गया है । इस पत्रक का निःशुल्क वितरण आगामी 21 एवं 22 फरवरी, 2004 को राजभवन में आयोजित होने वाली प्रादेशिक पुष्प प्रदर्शनी में धन्वन्तरि वाटिका द्वारा लगाये जाने वाले आयुर्वेदीय औषधि प्रदर्शन के स्टाल से किया जायेगा ।

गुजरात

जूनागढ़-गुजरात-सरकारी आयुर्वेद कॉलेज द्वारा आयुर्वेद चिकित्सा शिविर की स्थापना

गुजरात के जूनागढ़ शहर में सरकारी आयुर्वेदिक कॉलेज एवं हॉस्पिटल के अधीक्षक, डा० पाठक, डा० पुरोहित, डा०पंडया, डा० राठौड़, डा० वोरा, डा० सावलिया एवं अन्य चिकित्सक गण के सहयोग से आयुर्वेदिक चिकित्सा कैम्प का आयोजन किया गया, इनमें 376 रोगियों ने लाभ उठाया । माननीय केन्द्रीय मंत्री एवं जूनागढ़ के सांसद भावनाबेन चिखलीया द्वारा आयुर्वेदिक कैम्प एवं औषधिय वनस्पति प्रदर्शन का उद्घाटन किया गया । इस समारोह में जिला प्रशासन के अधिकारी एवं राजकीय सदस्यों एवं भारी-भारी संख्या में लोगों ने बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया ।

जामनगर - गुजरात - गुलाब कुंवरबा आयुर्वेद महाविद्यालय द्वारा आयोजित त्रिदिवसीय आयुर्वेद निदान चिकित्सा, औषधि वनस्पति प्रदर्शन ।

जामनगर, गुजरात के प्रदर्शन मैदान में दि० 14-15 और 16 फरवरी 2004 को लोक स्वास्थ्य मेले का आयोजन गुजरात आयुर्वेद यूनिवर्सिटी द्वारा संचालित - गुलाब कुंवरबा आयुर्वेद कॉलेज द्वारा सर्वरोग निदान चिकित्सा शिविर का आयोजन एवं योग, निसर्गोपचार द्वारा सभी रोगों में चिकित्सा का कार्यक्रम निःशुल्क किया गया । इस समारोह में एवं शिविर में गुलाब कुंवरबा आयुर्वेद महाविद्यालय के सभी चिकित्सक गण एवं कर्मचारियों ने बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया एवं जामनगर की ग्राम्य जनता ने इसका भली-भांति लाभ उठाया ।

अहमदाबाद गुजरात-सरकारी अखंडानंद आयुर्वेद कॉलेज एवं हॉस्पिटल द्वारा आयोजित निःशुल्क आयुर्वेदीय निदान चिकित्सा शिविर का आयोजन ।

अहमदाबाद स्थित सरकारी आयुर्वेदिक कॉलेज एवं चिकित्सालय द्वारा आयोजित निःशुल्क निदान चिकित्सा यज्ञ का उद्घाटन केन्द्रीय मंत्री श्री हरिन पाठक ने किया । इस समारोह में संस्था के अधिक्षक डा० परमार एवं चिकित्सालय के सभी चिकित्सक गण तथा NSS Unit विद्यार्थी संघ एवं अहमदाबाद स्थित कई संगठनों ने इस समारोह में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया । इस निदान चिकित्सा कैम्प में कैन्सर, एड्स, डायबिजीज, स्त्री रोग, अर्श-भगंदर, बाल-रोग, अस्थिभंग के रोगी पुंसवन एवं त्वचा विकार आदि के मरीजों ने इसका लाभ लिया ।

हास्य समारोह आयोजित

अहमदाबाद- गुजरात स्थित ऐशोसियेशन ऑफ इन्डीयन सिस्टम ऑफ मेडिसीन द्वारा आयोजित हास्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समारोह 22-02-04 के दिन आयोजित किया गया, सभी पदाधिकारी एवं संगठन के मित्रों ने बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया । इस समारोह का उद्घाटन गुजरात के गृह राज्य मंत्री श्री अमित शाह के द्वारा किया गया ।

कार्यक्रम आयोजित

अहमदाबाद स्थित अमराईवाडी के आयुर्वेद संगठन द्वारा दि० - 28/02/04 को आयोजित CME कार्यक्रम में बड़ी भारी संख्या में मित्रों ने हिस्सा लिया । यह समारोह जलधारा रिसोर्ट में अध्यक्ष डा० जयेश पटेल द्वारा आयोजित किया गया ।

राजकोट वैद्य सभा - गुजरात

श्री राजकोट वैद्य सभा द्वारा आयोजित धनवंतरि मंदिर के वार्षिकोत्सव में समाज लक्ष्मी आयु० व्याख्यान माला का सुंदर आयोजन दि०- 22.02.04 इतवार के दिन सुबह 10.00 बजे से अरविन्द भाई मणीयार टोला, ज्युबीली बाग, राजकोट में किया गया । समारोह उद्घाटन प.पू. वैद्य श्री घनश्याम जी महाराज (पीठासीन भुवनेश्वरी मंदिर गोंडल, गुजरात) के कर-कमलों से दीप प्रज्वलित करके किया गया । समारोह के अध्यक्ष वैद्य श्री कबुभाई मावाणी (कुलपति श्री सौराष्ट्र युनिवर्सिटी, राजकोट, गुजरात) अतिथि विशेष वैद्य श्री हितेश जानी (मंत्री श्री भाजपा, गुजरात) एवं वैद्य श्री डाह्या भाई पटेल (बान फार्मेसी, राजकोट, गुजरात) ने उपस्थित रहकर कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई ।

इस समारोह में रिटायर्ड डायरेक्टर ओम आयुर्वेद वैद्य, श्री कस्तुरेजी एवं वैद्य श्री बी.डी. नंदुरबारकर, वैद्य श्री देवेन्द्र शाह (मंत्री, गुजरात प्रदेश आयुर्वेद सम्मेलन) वैद्य श्री टी.एल. स्वामी (अधीक्षक, सरकारी मणिबेन आयुर्वेद हॉस्पिटल, अहमदाबाद) वैद्य श्री दिनकर आणेकर, अहमदाबाद, वैद्य श्री अनूप डाकर (प्राध्यापक, गुज. आयु. युनि. P.G. Dept., जामनगर) ने इस वार्षिकोत्सव में अलग-अलग विषयों पर लोकोपयोगी विविध रोगों की जानकारी देकर लोगों को लाभान्वित किया । इस समारोह का अभिवादन राजकोट वैद्य सभा के अध्यक्ष वैद्य श्री कान्तिभाई जानी, मंत्री श्री जे० अवस्थी, डा० यतिन, वैद्य डा० दिनेश त्रिवेदी एवं सभी वैद्य मित्रों ने काफी बढ़-चढ़ कर समारोह को सफल बनाने के लिये अपना सहयोग दिया ।

Dr. Pandya is No More
Death condoled

Born on Nov. 30-1972 Dr. (Miss) Parul Pandya who Joined as Lecturer at Shri Gulabkunwarba Ayurved Mahavidyalaya, Jamnagar on Aug. 1. 2000 passed away on Jan 29-2004. In a condolence meeting held on Jan 30-2004 in the University the staff prayed God to give peace to the departed soul heavenly & give strength to the bereaved family to bear the irreparable loss. Graduated in 1994 & P.G. in 1998. Dr. Parul Pandya has submitted Ph. D. thesis in April 2003. She was admired by her student & patients being an excellent teacher & physician. She had developed expertise in Ksharsutra specialised treatment for ano-rectal diseases. Our deepest condolence to the bereaved family (Editor)

Conference on Teaching and Training Methods in Ayurveda

Jammu Institute of Ayurveda & Research is going to organise another conference of teaching & training methods in Ayurveda in the month of Sept. 2004 in Jammu (J&K). For further details contact Professor Kulwant Singh (Director, Jammu Institute of Ayurveda & Research Nardni (Bantalab Road) Jammu.

Indian Association for the study of Traditional Asian Medicine (Iastam - India) :

As decided in the General body meeting held on 4th mar. 2004. special meeting of the General body will be held on Saturday, the 10th April 2004 at 2.30 p.m. at Bombay office.

APTA SUHRUD PARISHAD :

A group of renowned & dedicated Ayurvedic Physician of Gujarat as a part of their multidimensional activities Apta Parishad was held on 27-28-29 Feb. 2004 at Hotel Miramar (Devka Beach, Daman, U.T.). An excellent audio visual presentation of Panchkarma treatment & friendly interaction with drug manufacturer & various yoga & meditation therapy was presented by experts.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दन्त यज्ञ सम्पन्न

अहमदाबाद स्थित सरकारी अखंडानंद आयुर्वेद कॉलेज एवं हॉस्पिटल में 4-5 मार्च 2004 को दो दिवसीय निःशुल्क आयुर्वेदीय जालधर वैद्य द्वारा दन्त निर्मूलन शिविर का आयोजन किया गया, इस शिविर में शल्य शालाक्य विभाग के प्राध्यापक वैद्य श्री हरिन्द्र दवे एवं अन्य वैद्य गणों ने शिविर को सफल बनाया ।

गोंडल (गुजरात) में आयुर्वेदीय निःशुल्क शिविर

गोंडल सिद्ध संप्रदाय सेवाश्रम में आयुर्वेदीय रस शास्त्र की रस परिषद् एवं । दिवसीय निःशुल्क चिकित्सा शिविर का आयोजन सिद्ध संप्रदाय सेवाश्रम मंडल द्वारा किया गया । शिविर में बड़ी भारी संख्या में लोगों ने हिस्सा लिया और शिविर को सफल बनाया ।

महाराष्ट्र

द्रव्यगुण असोसिएशन ऑफ महाराष्ट्र (DAM)की स्थापना

दिनांक 31 जनवरी 2004 को महाराष्ट्र आरोग्य विज्ञान विद्यापीठ नासिक द्वारा तिलक आयुर्वेद महाविद्यालय पूणे में संपन्न द्रव्यगुण अभ्यासक्रम कार्यशाला में द्रव्यगुण असोसिएशन ऑफ महाराष्ट्र (DAM) की स्थापना की गई । अध्यक्ष डॉ० धनंजय व्ही. कुलकर्णी, उस्मानाबाद, उपाध्यक्ष - डॉ० ई.एम. मोहोड गुरूकुंज आश्रम, अमरावती, कोषाध्यक्ष - डॉ० तनुजा एम. नेसरी, पुणे, सेक्रेटरी - डॉ० दासरी, नासिक, कार्यकारिणी सदस्य - डॉ० चन्द्रकांत बा. सोनारे, डॉ० मीनल लाड, आकुर्डी, पुणे, डॉ० व्ही.ए. महाजन, सावंतवाडी, नागपुर, डॉ० रामटेके (मुम्बई) आदि सदस्य मनोनीत हुए ।

इसमें महाराष्ट्र के विभिन्न प्रभाग में स्थित वनौषधियों का सर्वेक्षण करना, द्रव्यगुण असोसिएशन की website को कार्यान्वित करना, उसपर विभिन्न प्रभागों में द्रव्यगुण क्षेत्र में कार्यरत अनुसंधानकर्ताओं के अनुसंधान को जगत के समक्ष प्रस्तुत करना सम्मिलित है । अन्य प्रदेशों में वनौषधि सर्वेक्षण हेतु भ्रमण कार्यक्रमों का आयोजन करना, सेमिनार वर्कशाप के आयोजन द्वारा अनुसंधान कर्ताओं को मंच प्रदान करना तथा आदान-प्रदान करना आदि उपक्रम सम्मिलित है ।

उपरोक्त कार्यशाला का आयोजन महाराष्ट्र आरोग्य विज्ञान विद्यापीठ, नासिक के मार्गदर्शन पर तिलक आयुर्वेद महाविद्यालय, पुणे के द्रव्यगुण विभाग द्वारा किया था । इस कार्यशाला के आयोजन का उद्देश्य द्रव्यगुण विषय का अध्ययन पूरे महाराष्ट्र के आयुर्वेद महाविद्यालयों में एक समान तरीके से किया जाना चाहिए तथा प्रात्य० परीक्षा तथा लिखित परीक्षा में गुणविभजन हेतु समानता रहे, इस हेतु किया गया था । इस कार्यशाला के उद्घाटक महाराष्ट्र आरोग्य विज्ञान विद्यापीठ के आयुर्वेद विभाग के अधिष्ठाता डॉ० प्र०शि० पवार ने की । अतिथि - डॉ वि०वि० डोईफोर्ड, अधिष्ठाता (आयुर्वेद)पुणे विद्यापीठ, अध्यक्षता डॉ एस०एन० परचुरे (राष्ट्रीय शिक्षण मंडल, पुणे सदस्य, सी.सी.आय्.एम.) तथा डॉ० श्याम सुंगारे, अधिष्ठाता, शिवाजी विद्यापीठ कोल्हापुर, प्राचार्य डॉ० दी०प्र०पुराणिक, तिलक आयुर्वेद महाविद्यालय, पुणे, कार्यशाला समन्वयक - डॉ० डी०व्ही०कुलकर्णी, संयोजक - डॉ० तनुजा नेसरी आदि व्यासपीठ पर विराजमान थे ।

सूत्र संचालन - डॉ० अपूर्वा संगोराम ने किया । प्रथम सत्र में - डॉ० धनंजय व्ही. कुलकर्णी, विभाग प्रमुख, शासकीय आयुर्वेद कॉलेज, उस्मानाबाद ने मार्गदर्शन किया । द्वितीय सत्र के समन्वयक प्रख्यात वनौषधिविद डॉ० चन्द्रकांत बा० सोनारे विभाग प्रमुख, द्रव्यगुण, भा०सा० आयुर्वेद कॉलेज, सावंतवाडी, महाराष्ट्र थे । इन्होंने द्रव्यगुण प्रात्यक्षिक विषय पर मार्गदर्शन किया । इस सत्र में डॉ० अपूर्वा संगोराम, डॉ० सरयू कोरे, डॉ० तनुजा नेसरी, डॉ० मीनल लाड, डॉ० मिसाक इन्होंने अपने-अपने विचार प्रस्तुत किये । तृतीय सत्र में डॉ० कुलकर्णी ने द्रव्यगुण असोसिएशन की स्थापना पर प्रकाश डाला । चतुर्थ सत्र में डॉ० दासरी एस.एल. ने मार्गदर्शन किया तथा डॉ० चंद्रकांत सोनारे, डॉ० शिरोडकर ने अपने विचार प्रस्तुत किए । पांचवे सत्र में डॉ० तनुजा नेसरी ने द्रव्यगुण में Pharmacology को किस प्रकार पढ़ाया जाना चाहिए, इस संदर्भ में मार्गदर्शन किया । प्रमाण-पत्र वितरण तथा आभार प्रदर्शन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के बाद कार्यक्रम का समापन हुआ ।

द्रव्यगुण असोसिएशन ऑफ महाराष्ट्र का विस्तार द्रव्यगुण असोसिएशन ऑफ इंडिया करने का आगे विचार है ।

संपर्क :-
ayurvedadoctor@hotmail.com
avinashkulkarni 57@hotmail.com

दिल्ली

फर्जी विश्वविद्यालय चलाने वालों को एक लाख रु० जुर्माने की सजा का प्रावधान

(अखिल भारतीय आयुर्वेद समाचार सेवा, दिल्ली-110034)

नई दिल्ली, केन्द्र सरकार के फर्जी विश्वविद्यालय चलाने वालों के लिए कैद की सजा तथा एक लाख रू० तक जुर्माना करने का प्रावधान करने पर विचार कर रही है । विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष ने इस आशय का एक प्रस्ताव कुछ समय पूर्व कानूनी पहलुओं की जांच के लिए इसे विधि एवं न्याय मंत्रालय को भेजा है ।

आयोग के अध्यक्ष ने बताया कि फर्जी विश्वविद्यालयों की समस्या हल करने के लिए मौजूदा सरकार के पास फिलहाल कोई कानून नहीं है । फर्जी विश्वविद्यालयों की संख्या में तेजी से वृद्धि होना आयोग के लिए गंभीर चिन्ता का विषय है । स्वयंभू संस्थाओं ने अपने नाम के साथ यूनिवर्सिटी अथवा विश्वविद्यालय शब्द जोड़ा हुआ है और वे यह प्रचार करते हैं कि उच्चतर शैक्षिक पाठ्यक्रमों के लिए छात्रों को डिग्री देने के लिए वे अधिकृत हैं ।

फर्जी विश्वविद्यालयों में सर्वाधिक दस उत्तर प्रदेश में हैं और राजधानी दिल्ली में भी ऐसे तीन फर्जी विश्वविद्यालय हैं । आयोग ने फर्जी विश्वविद्यालय की जो सूची जारी की है "अखिल भारतीय आयुर्वेद सेवा संघ, रिषी नगर, दिल्ली-34 से मुफ्त मंगवाई जा सकती है । कुछ विश्वविद्यालय डाक्टरी की जाली डिग्रियां भी बेच रहे हैं ।

अनुभव के आधार पर होम्योपैथी में पंजीकरण बन्द

(अखिल भारतीय आयुर्वेद समाचार सेवा -दिल्ली-110034)

नई दिल्ली, केन्द्रीय होम्योपैथी परिषद् के रजिस्ट्रार एवं सचिव की एक प्रेस विज्ञप्ति द्वारा जनता को सूचित किया जाता है कि होम्योपैथी केन्द्रीय परिषद् अधिनियम 1973 के प्रावधानों के अन्तर्गत ब्रिटिश इन्स्टीच्यूट आफ होम्योपैथी, चूना मन्डी, पहाड़गंज, नई दिल्ली होम्योपैथी में किसी प्रकार का पाठयक्रम चलाने अथवा बिहार बोर्ड आफ होम्योपैथी सिस्टम आफ मेडिसन, पटना या किसी अन्य राजकीय बोर्ड से अनुभव के आधार पर सूचीकरण/पंजीकरण दिलवाने के लिए प्राधिकृत नहीं है ।

सभी को पुन: सूचित किया जाता है कि होम्योपैथी केन्द्रीय परिषद् अधिनियम 1973 के प्रावधानों के विभिन्न राज्यों में केन्द्रीय सरकार द्वारा लागू करने के पश्चात् अनुभव के आधार पर होम्योपैथी (बायोकेमिक) में चिकित्सा व्यवसाय करने हेतु पंजीकरण दिलवाने के लिए प्राधिकृत नहीं है ।

फर्जी संस्थाओं की सूची जो सरकार ने जारी की है, अखिल भारतीय आयुर्वेद सेवा संघ, रिषी नगर, दिल्ली-110034 से मुफ्त मंगवाई जा सकती है । पत्राचार द्वारा यदि कोई संस्था मेडिकल डिग्री-डिप्लोमा देती है तो उसे अमान्य/अनधिकृत समझा जाए । दूसरे एक राज्य के पंजीयन को दूसरे राज्य में स्थानांतरित करने का कोई प्रावधान नहीं है ।

प्रधान वैद्य वीरेन्द्र
अखिल भारतीय आयुर्वेद सेवा संघ
24, रिषी नगर, दिल्ली - 110034

बिहार

"APACON 2004" आयोजित

बिहार राज्य आयुर्वेद चिकित्सक संघ के तत्वावधान में दिनांक 22 फरवरी 2004 को स्थानीय समाहरणालय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थित कारगिल विजय सभा भवन, बेगूसराय में APACON 2004 आयोजन किया गया । उद्घाटन सत्र में जिलाधिकारी श्री संदीप पौंडारिक, मुख्य अतिथि के रूप में दीप प्रज्जवलित कर धन्वन्तरि माल्यार्पण किया । विशिष्ट अतिथि उपविकास आयुक्त श्री व्रज किशोर पाठक ने आयुर्वेद को पूर्णतः वैज्ञानिक बताते हुए सर्वजन हित में इसकी उपयोगिता को बतलाया । सभाध्यक्ष डा० भूदेव सिंह, प्राचार्य राजकीय अयोध्या शिवकुमारी आयुर्वेद महाविद्यालय, बेगूसराय ने अपने उद्गार में सम्मेलन की उपयोगिता की चर्चा की । मुख्य अतिथि जिलाधिकारी ने आयुर्वेद को विश्वव्यापी तथा जोर शोर से प्रचार-प्रसार पर बल दिया । उद्घाटन सत्र में अपर जिला सत्र न्यायाधीश श्री अमरेश कुमार लाल एवं मो० खुरशीद आलम ने भी अपने उद्गार प्रकट किए । डा० अमर कुमार वर्मा, अध्यक्ष ने प्रस्तावना की जानकारी दी तथा सचिव डा० एन०के० सिंह ने कार्यकलापों के बारे में बताया । आयुर्वेद चिकित्सक संघ के भूतपूर्व अध्यक्ष तथा APACON 2004 के आयोजक सचिव वरिष्ठ चिकित्सक डा० लाल कौशल कुमार ने आगत अतिथियों का स्वागत करते हुए धन्यवाद ज्ञापन किया तथा उन्होंने राज्य के अन्य जगहों से आए डेलीगेट सदस्यों से प्रत्येक जिला में आयुर्वेद चिकित्सक संघ की गतिविधियों को बढ़ाने, सम्मेलन आयोजित कर एक साथ आगे चलने का आह्वान किया, जिससे आयुर्वेद आंदोलन की शुरूआत तथा गति दी जा सके ।

शैक्षणिक सत्र में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रो० चन्द्रभूषण झा, विभागाध्यक्ष, रसशास्त्र ने रसशास्त्र पर सारगर्भित व्याख्यान दिया । प्रख्यात हृदयरोग विशेषज्ञ डा०एस०के० लाल FRCP etc. ने देहाती क्षेत्र में हृदयाघात से बचाने की तकनीक पर बेहद ज्ञानवर्धक व्याख्यान दिया जिससे चिकित्सकों ने काफी ध्यान से सुना ।

समारोह में झारखंड राज्य के प्रतिनिधि प्रा० हरिहर प्र० सिंह, सिवान के डा० अरविन्द चौरसिया, डा० हरिनंदन, डा० कुमार शंभु, डा० विजय कंदू, डा० राजेश कुमार, डा० अनूप मिश्र, डा० श्याम सुंन्दर शर्मा, डा० कामेश्वर झा आदि ने विचार व्यक्त किये ।

धन्वन्तरि वंदना राजकीय अयोध्या आयुर्वेद कॉलेज की छात्राओं ने प्रस्तुत किया । सांस्कृतिक कार्यक्रम श्रीमती राखी जी के सानिध्य में सुश्री रश्मि, नेहा, कुणाल, विशाल, सुमीत, गीताजंलि तथा रविमोहन ने बेहर आकर्षक तथा भव्य प्रस्तुत किया जिसे श्रोताओं ने भरपूर मनोरंजन किया ।

दवा कम्पनियों के प्रतिनिधियों श्री रमेश कुमार मिश्रा, वैद्यनाथ आयुर्वेद, चरक के दिलीप राय, हिमालया रूसी फार्मा, पैन्जिया तथा लिसेरो फार्मा के प्रतिनिधि ने अपनी भागीदारी से लोगों का दिल जीत लिया ।

ए०पी०ए० कोन 2004 के आयोजन सचिव तथा बिहार राज्य आयुर्वेद चिकित्सक संघ के भूतपूर्व अध्यक्ष डा० लाल कौशलकुमार ने शीघ्र ही बेगूसराय में राष्ट्रीय अधिवेशन आयोजित करने की घोषणा की ।

उत्तर प्रदेश

अधिवेशन/चुनाव सम्पन्न

राजकीय आयुर्वेदिक एवं यूनानी फार्मेसिस्ट एसोसियेशन उत्तरांचल, शाखा जनपद-टिहरी गढ़वाल का द्विवार्षिक अधिवेशन दि० 13.02.04 को टाउन हाल नरेन्द्रनगर में श्री बी०एम०भट्ट प्रांतीय संरक्षक की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ । अधिवेशन का शुभारंभ मुख्य अतिथि डा० ए०एन०बहुगुणा, क्षेत्रीय आयुर्वेदिक एवं यूनानी अधिकारी, टिहरी गढ़वाल एवं विशिष्ट अतिथि श्री एस०पी०सेमवाल अध्यक्ष आ० एवं यू० फार्मेसिस्ट एसो० उत्तरांचल द्वारा संयुक्त रूप से द्वीप प्रज्वलित कर किया गया । अधिवेशन का मुख्य विषय "उत्तरांचल में आयुर्वेद का विकास एवं इसमें फार्मेसिस्टों का योगदान" पर अधिवेशन में वक्ताओं ने अपन विचार व्यक्त किये । तत्पश्चात श्री बी०एम०भट्ट की अध्यक्षता में एवं श्री एस०पी०सेमवाल प्रांतीय अध्यक्ष की पर्यवेक्षता में जिला कार्यकारिणी का चुनाव सम्पन्न हुआ जिसमें निम्नलिखित निर्वाचित सदस्य निर्विरोध निर्वाचित हुए ।

1. संरक्षक : श्री आर०सी०एस० गुंसाई
   रा०आ०चि०, ढालवाला टिहरी, गढ़वाल ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

2. अध्यक्ष : श्री जर्नादन प्रसाद सेमवाल
रा०आ०चि०, गूलर टिहरी, गढ़वाल ।
3. वरिष्ठ उपाध्यक्ष : श्री चिंतामणि अन्थवाल
रा०आ०चि०, कठूड़ (हिंदाव) टि०ग० ।
4. उपाध्यक्ष 1. श्री रमेश चन्द्र बड़ोनी
रा०आ०चि० पंगरियाणा, टि०ग० ।
2. श्री विजय प्रकाश सेमवाल
रा०आ०चि०, चंबा, टिहरी गढ़वाल ।
3. श्री शंकर प्रसाद तिवारी
रा०आ०चि०, ललूरीखाल, टि०ग० ।
5. मंत्री श्री हरिवल्लभ सेमवाल
रा०आ०चि०, नरेन्द्रनगर, टिहरी गढ़वाल ।
6. संयुक्त मंत्री: 1. श्री सुरेन्द्र सिंह धिरवाणा
रा०आ०चि०, जाजल, टिहरी गढ़वाल ।
2. श्री विरेन्द्र दत्त सेमवाल
रा०आ०चि०, सिराई, टिहरी गढ़वाल ।
7. कोषाध्यक्ष श्री रमेश चन्द्र सती
रा०आ०चि०, हिन्डोलाखाल, टिहरी गढ़वाल ।
8. आय-व्यय निरीक्षक श्री सुन्दर लाल बिजल्वाण
रा०आ०चि०, मुनिकीरेती, टिहरी गढ़वाल ।
9. प्रचार मंत्री श्री बलवंत सिंह सजवाण
रा०आ०चि०, चाका, टिहरी गढ़वाल ।
10. कार्यालय मंत्री श्री रामकृष्ण भट्ट
रा०आ०चि०, ज्ञानसू/कार्यालय, टिहरी गढ़वाल ।
11. सम्मानित सदस्य 1. श्री श्रीकृष्ण शर्मा
(चीफ फार्मेसिस्ट) नगर चि०, नरेन्द्रनगर ।
2. श्री लक्ष्मी प्रसाद, चमोली
रा०आ०चि०, पोखरी, टिहरी गढ़वाल ।
3. श्री जयसिंह नेगी
रा०आ०चि०, नागरी, टिहरी गढ़वाल ।
4. श्री शेखरानंद थपलियाल
रा०आ०चि०, भवान टिहरी गढ़वाल ।
5. श्री वासुदेव भट्ट
रा०आ०चि०, दिल्ली, टिहरी गढ़वाल ।

इस अवसर पर मांग से सम्बन्धित निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किये गये :-

1. वित्तीय वर्ष में दो बार फार्मेसिस्टों की बैठक विभागीय स्तर पर आहूत की जाय एवं ताकि इसी दिन फार्मेसिस्ट अपनी भविष्य विधि पासबुक एवं सेवा पुस्तिका का अवलोकन करके हस्ताक्षर कर सके ।

2. जिन फार्मेसिस्टों को उक्त अवधि की सेवा उपरांत प्रोन्नत वेतनमान का लाभ मिलता है उन्हें अविलम्ब उक्त प्रोन्नत वेतनमान का लाभ दिया जाये व जिन फार्मेसिस्टों का उक्त वेतनमान का एरियर शेष है अविलम्ब भुगतान किया जाये ।

3. प्लान के चिकित्सालयों में कार्यरत फार्मेसिस्टों को महीनों से वेतन नहीं मिल पा रहा है । उनके लिए अविलम्ब पूर्व के शेष वेतन का भुगतान किया जाये व उनको आगे से प्रतिमाह यथा समय पर वेतन भुगतान किया जाये ।

4. फार्मेसिस्ट के पहचान पत्र यथाशीघ्र जारी किये जांये व पहचान पत्र हेतु आवश्यक जानकारी व फोटो की उपलब्धता के सम्बन्ध में अविलम्ब सभी फार्मेसिस्टों को अपने स्तर से सूचित किया जायें ।

5. नजदीकी चिकित्सालय जहां पर चिकित्सा अधिकारी व फार्मेसिस्ट दोनों उपलब्ध हों वहां से प्रभारी हेतु फार्मेसिस्ट की व्यवस्था चिकित्सालय के चिकित्साधिकारी द्वारा हो सकती है । इस व्यवस्था से आकस्मिक अवकाश पर जाने वाले फार्मेसिस्ट का समय तो बचेगा ही उसे मानसिक पीड़ा से भी छुटकारा मिलेगा जो कि व्यावहारिक होगा ।

इस सम्बन्ध में प्रत्येक चिकित्सालय में चिकित्साधिकारी व फार्मेसिस्ट को उक्त व्यवस्था हेतु अपने स्तर से सरकुलर जारी करें एवं प्रभार लेने वाले फार्मेसिस्टों को नियमानुसार यात्रा भत्ता दिया जाये ।

चतुर्थ श्रेणी के मामलों में जैसे उनकी कार्यक्षमता का आंकलन, उनके भविष्य निधि ऋण का औचित्य, आकस्मिक अवकाश पर जाने का औचित्य आदि कारणों से फार्मेसिस्ट भी विज्ञ रहता है । अत: उनके प्रकरण फार्मेसिस्ट द्वारा टिप्पणी व आख्या सहित अग्रसारित कराकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्साधिकारी द्वारा आपको प्रेषित किये जाये । उक्त वाकरण से चिकित्सालय स्टाफ में समन्वय तो होगा ही आप भी सही जानकारी से अवगत होंगे व स्वच्छ प्रक्रिया का पालन होगा ।

फार्मेसिस्टों द्वारा जो अल्प बचत योजना के अन्तर्गत जो धनराशि जमा की जाती है आवर्ती पास बुक को फार्मेसिस्टों द्वारा मांगने पर उनको अवलोकित कराया जाये ।

फार्मेसिस्ट को चिकित्सालय में प्रयुक्त होने वाली आवश्यक औषधि का ज्ञान होता है । इस हेतु फार्मेसिस्ट द्वारा औषधि मांग पत्र मांगकर उसके अनुरूप ही वर्णित औषधि एवं फार्मेसी की औषधियां चिकित्सालय में आपूर्ति की जाये ।

निदेशालय/शासन स्तर की मांगों के सम्बन्ध में

1. आयुर्वेद चिकित्सा विभाग में फार्मेसिस्ट विभाग में रीढ़ है व फार्मेसिस्ट कतिपय चिकित्सालयों में प्रभारी के पद पर भी कार्य करते हुए चिकित्सालय का संपूर्ण कार्य कर जनता की सेवा कर रहे हैं एवं विभाग की लोकप्रियता को बढ़ा रहे हैं । वर्तमान में विभाग में फार्मेसिस्टों के कई पद रिक्त चल रहे हैं । चिकित्सालय में फार्मेसिस्ट जनता के स्वास्थ्य लाभ से सीधे जुड़े होते हैं । इस प्रकार फार्मेसिस्ट विहीन चिकित्सालयों में जनता को आयुर्वेदिक चिकित्सा का संपूर्ण लाभ नहीं मिल पा रहा है । फार्मेसिस्टों की उपयोगिता को दृष्टिगत रखते हुए शीघ्रातिशीघ्र उत्तरांचल के एकमात्र आयुर्वेद फार्मेसिस्ट प्रशिक्षण केन्द्र विद्यापीठ जनपद रूद्रप्रयाग को पुनर्जीवित किया जाये ।

2. फार्मेसिस्टों की कमी से आयुर्वेद चिकित्सालय बिना फार्मेसिस्टों के शिथिल पड़े हुए हैं व उत्तरांचल के बेरोजगार फार्मेसिस्ट विभाग में सेवा करने के लिए लालायित हैं । इस हेतु चिकित्सालयों की उचित व्यवस्था एवं जन-मानस में आयुर्वेद की लोकप्रियता बरकरार रखने के लिए बेरोजगार फार्मेसिस्टों को तत्कालिक आधार पर विभाग में नियुक्ति दी जाये ।

3. कतिपय चिकित्सालयों में फार्मेसिस्ट प्रभारी के पद पर कार्य करते हुए चिकित्सालयों में बहिरंग कक्ष में रोगियों की चिकित्सा एवं आवश्यक रोगी को चिकित्सालय में भर्ती कर अन्तरंग कक्ष में रोगी की चिकित्सा करता है । कपितय रोगियों को चिकित्साकाल का चिकित्सा प्रमाण-पत्र की आवश्यकता होती है । लेकिन विभाग द्वारा फार्मेसिस्ट को चिकित्सा प्रमाण-पत्र न देने का अधिकार होने के कारण जनता को कठिनाई का सामना करने के साथ-साथ आम जनता में चिकित्सालय के प्रति अच्छा संदेश नहीं जाता है जिस कारण विभागीय लोकप्रियता में हानि होती है । इस हेतु प्रभारी फार्मेसिस्ट को जनहित एवं विभाग हित के मध्यनजर चिकित्सा प्रमाण-पत्र निर्गत करने का अधिकार दिया जाये ।

4. आयुर्वेद चिकित्सालय शहरी एवं अधिकतम दूर-सुदुर क्षेत्रों में कार्य कर जनता में लोकप्रिय है । किन्तु आकस्मिक चिकित्सा हेतु आवश्यक औषधियां व उपकरण उपलब्ध न होने के कारण इस अवस्था में रोगियों को निराश होना पड़ता है । जबकि चिकित्सालयों में आकस्मिक चिकित्सा का ज्ञान चिकित्साधिकारी एवं फार्मेसिस्ट दोनों को होता है । इस हेतु जनहित को दृष्टिगत रखते हुए चिकित्सालयों में आकस्मिक चिकित्सा की व्यवस्था की जाये एवं प्रत्येक चिकित्सालय के उचित रख-रखाव के लिए आवश्यक बजट उपलब्ध कराया जाये ।

5. आयुर्वेद की आज विश्व में अपनी विशिष्ट पहचान है । आयुर्वेद चिकित्सा के विकास के लिए कतिपय राज्य, जैसे - कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, केरल आदि राज्य प्रभावशाली कदम उठा रहे हैं । उत्तरांचल राज्य अपने आप में आयुर्वेद का अथाह भंडार है । फार्मेसिस्ट की विभाग हित में अहम भूमिका है । आयुर्वेद विकसित राज्यों की तरह उत्तरांचल में आयुर्वेद चिकित्सा के विकास हेतु फार्मेसिस्टों को पुर्नबोध प्रशिक्षण कराकर आयुर्वेद को राज्य में बढ़ावा दिया जाये ।

अपस्मार की सफल चिकितत्सा प्रारम्भ

''आरोग्यम् क्लीनिक'' दुल्हापुर-टाँण्डा जनपद-मुरादाबाद, पिन-244602 (उ०प्र०) फोन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

0591-2244709 मोबाईल न० - 9412242709 में अपस्मार (EPILEPSY) मिर्गी दौरा की सफल चिकित्सा आयुर्वेद द्वारा की जा रही है । जो रोगी हो, सम्पर्क कर सकते हैं । औषधि-डाक द्वारा भेजनी की व्यवस्था भी है । एक बार रोगी को स्वयं आना पड़ता है । भगवान धन्वन्तरि की कृपा से इलाज के बाद रोगी आरोग्य की प्राप्ति करता है ।

राजस्थान

किशोर युवतियां व सांवला रंग पर गोष्ठी सम्पन्न

जयपुर

आयोजनकर्त्ता :- डा० गोपाल चड्ढा निर्माणाध्यक्ष चड्ढा ट्रेडर्ज (रजि०) । नगरोटा बगवां जिला- कांगड़ा, हि०प्रदेश 176047 । गोष्ठी में बडी संख्या में चिकित्सक-7 सौन्दर्य विशेषज्ञ 3 त्वचा रोग विशेषज्ञ- महिला रोग विशेषज्ञों ने भाग लिया । डा० तरेहन ने कहा कि त्वचा को श्रृगांरिक सामग्री द्वारा बदलना असम्भव है । डा० अरोड़ा त्वचा रोग विशेषज्ञ ने कहा त्वचा रोगों के कारण आई किशोर अवस्था में काली व विवर्ण त्वचा को द्वारा कर आभा युक्त व सौन्दर्य बनाया जा सकता है जैसे मुख पर होने वाले दाद-चम्बल-एक्जिमा-ऑवलिक पिन्डलियाँ-चेहरे के काले दाग व आंखों के नीचे पड़ने वाले काले घेरे। सौन्दर्य विशेषज्ञ सूद ने कहा कि किशोरियां व किशोर चेहरे को सौन्दर्य व गोरा करने के चक्र में Chemical श्रृंगारिक सामग्री प्रयोग कर नाना प्रकार के रोग लगता लेते हैं जैसे चेहरे की त्वचा का वदरंग होना-खुरदरा होना व काले भिन्न-भिन्न प्रकार के बड़े व छोटे दाग पड़ना एवं Chemical श्रृंगारिक सामान के प्रयोग से रोम कूप बन्द हो जाते हैं जिससे त्वचा में अलर्जी हो जाती है । डा० गोपाल चड्ढा ने कहा कि प्रतिदिन प्रातः सायं आमलकी रसायन लेने व दूध में रूई को डालकर निचोड़ कर मुखपर मलकर अच्छी प्रकार मुख साफ करना चाहिए ।

मध्य प्रदेश

डाक्टर गोपाल चड्ढा के विशेष यत्नों से भोपाल में विश्व हर्वो 2004 कांफ्रैस सफल

इस कांफ्रैस में बड़ी संख्या में चिकित्सक-डाक्टर -प्रोफैसर-सांईसिस्ट-किसानों व औषध निर्माताओं ने भाग लिया । 8 सत्रों में 100 से अधिक शोध पत्र पढ़े गये जो औषध गुणवत्ता-हर्व उत्पादन-औषध मूल द्रव्यों का विवेचन-हर्बल औषध और विश्व व्यापार-विश्व हर्व औषध में भारत की सम्भावनायें आयुर्वेद औषध और भारत व्यापार-मूल द्रव्य के विश्लेषण से सम्बन्धित थे ।

इस कांफ्रैस में 15 देशों - चीन - मास्को आस्ट्रेलिया - श्रीलंका आदि ने भाग लिया ।

इस सत्र के आरम्भ में डाक्टर गोपाल चड्ढा ने कहा कि इस प्रकार के साइंटिफिक सम्मेलन मानव व जीव-जन्तु कल्याण में विशेष महत्व रखते हैं । जब देवताओं पर आस्था खत्म होती है तब चिकित्सकों पर आस्था आरम्भ होती है । इसका आधार औषध है यदि औषध गुणवत्ता युक्त नहीं है तो रोगी रोग मुक्त नहीं हो सकता । इसलिये औषध गुणवत्ता आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है । इस पर कार्य होना चाहिए ।

इस कांफ्रैस का उद्घाटन के M.P. पर्यावर्ण मंत्री एवं वनमंत्री ने किया । इस अवसर पर डा० गोपाल चड्ढा के विशेष यत्नों को सराहा । आयुर्वेद औषध सेल विश्व में बड़ी तीव्र गति से बढ़ रही है ।

बैद्यनाथ

त्रिफला चूर्ण

कब्ज, पांडु, कामला, शोथ, नेत्र विकार आदि को दूर करता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection; Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

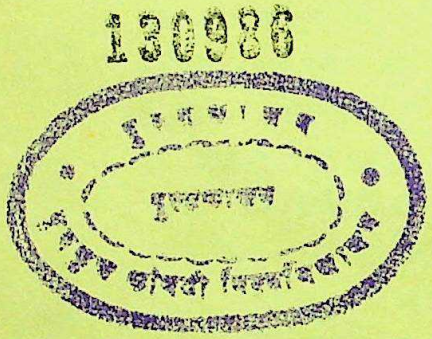

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri